CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

U8.445213 1598
152 A
Sharma, Narayanpati
Kashikhandabhasa.

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

~~2715~~

U8.445213
152 A

C.NO-1598

SHRI JAGADGURU VISHWARADHYA JNANAMANDIR
(LIBRARY)
JANGAMAWADIMATH, VARANASI

Please return this volume on or before the date last stamped
Overdue volume will be charged 1/- per day.

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

SRI JAGADGURU VISHWARADHYA
JNANA SIMHASAN JNANAMANDIR
LIBRARY.
Jangamwadi Math, VARANASI.
Acc No. 2774.....1598

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्रीशौ वन्दे ।

॥ श्रीगणेशजी ॥

ढुण्ढिराजः प्रियः पुत्रो, भवान्याः शंकरस्य च ।
तस्य पूजनमात्रेण, त्रयोऽपि वरदाः सदा ॥ १ ॥ (काशीरहस्य)
स्रवन्मदघटासक्तसंगुञ्जदलिसंकुलः ।
लसत्सिन्दूरपूरोऽसौ, जयति श्रीगणाधिपः ॥२॥ (मत्पूर्वजरामानन्दस्य)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

U8.445213
152 A

SRI JAGADGURU VISHWARADHYA
...ANA SIMHASAN JNANAMANDIR
LIBRARY
Jangamawadi Math, Varan...
Acc. No. 1598

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्रीशौ वन्दे ।

॥ श्रीमहादेवजी ॥

मेध्यत्र विश्वेशो, भवानी तत्कुटुम्बिनी ।
भ्यःकाशिसंस्थेभ्यो,मोक्षभिक्षां प्रयच्छति॥१॥ (का-खं-अ-६१श्लो-३२)
न्तिकन्थालसत्कण्ठो, मनःस्थालीमिलत्करः ।
पुरारिपुरद्वारि, कदा स्यां मोक्षभिक्षुकः ॥ २ ॥ (प्राचीन)

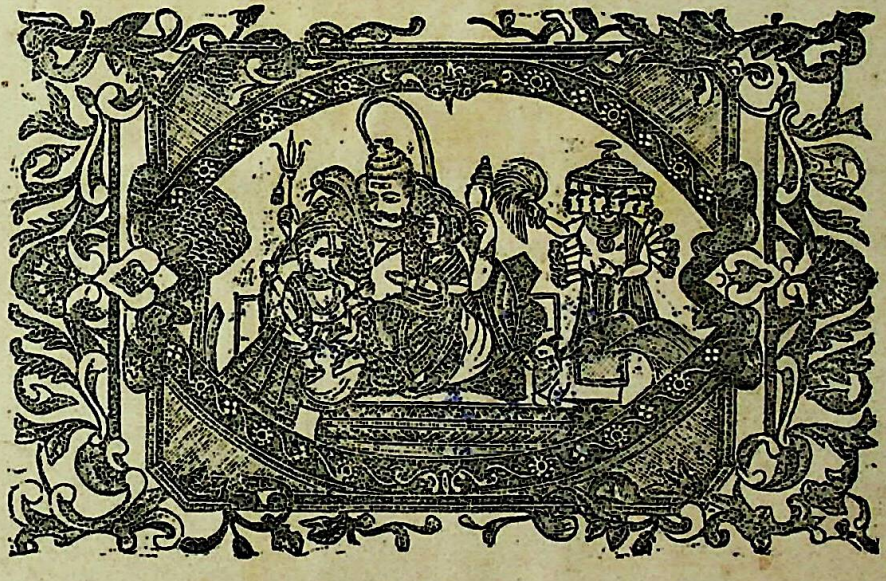

इहँ गृहस्थ विस्वेस हैं, घरनी मातु भवानि ।
कासिवासि सब लोगहित, मुक्ति भीखकी दानि ॥ १ ॥
सांतिरूप कथरीको ओढौं, अथवा कंठ लपेटौं,
मनसरूप बटलोही भीतर, कबहुँ न हाथ समेटौं ॥
श्रीत्रिपुरारिराजकी नगरी, फाटक ऊपर जैहौं,
कब धौं भीख मुक्तिकी पैहौं, भिच्छुक रूप बनैहौं ॥२॥ (अनुवाद)

(काशीखण्ड प्रायः समस्तग्रन्थ)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्रीशौ वन्दे ।

॥ श्रीदुर्गादेवीजी ॥

पुष्पवृष्टिं प्रकुर्वन्तः, प्राप्ता देवा महर्षिभिः ।
तुष्टुवुश्च महादेवीं, महास्तुतिभिरादरात् ॥ ३४ ॥
अद्य प्रभृति मे नाम, दुर्गेति ख्यातिमेष्यति ।
दुर्गदैत्यस्य समरे,पातनादतिदुर्गमात् ॥७१॥ (का०खं०अ०७२)

वरषत पुष्प देवगन आये, साथ महाऋषि लीन्हे;
अति आदर करि महादेविकी, असतुति बहुविधि कीन्हे ।
कहेउ अंब आजुते मोरा, दुर्गा नाम कहैये,
दुर्गम रन दुर्गासुर पातन,कारन याहि बतैये ॥ १ ॥ (अनुवाद)

(काशीखण्ड ७०।७१।७२अ०)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्रीशौ वन्दे ।

॥ ध्रुवको श्रीविष्णुभगवानका दर्शन ॥

प्रोद्यत्कादम्बिनीमध्य-, विद्युदामसमानरुक् ।
पुरः पीताम्बरः कृष्ण-, स्तेन नेत्रातिथिः कृतः ॥ ९६ ॥
नभोनिकषपाषाणो, मेरुकाञ्चनरेखितः ।
यथा तथा ध्रुवेणैक्षि, तदा गरुडवाहनः ॥ ९७ ॥
सुनीलगगनं यद्वद्, भूषितं तु कलावता ।
पीतेन वाससा युक्तं, स ददर्श हरिं तदा॥९८॥(का०खं०अ०२०)

उठति घटा घन बीच बिज्जुसम, सुंदर कांति लसोहै,
आगे कृष्ण पितांबरधारी, पाहुन नैन बसोहै ।
जनु आकास कसौटी ऊपर, सुवरन रेख खिंचोहै,
देखि गरुडवाहनको ठाढे, ध्रुव आनंद सिंचोहै ॥ १ ॥
जैसे नील अकासमें, सोहत चन्द ललाम ।
तैसहि ध्रुव हरिको लख्यौ, पीतवसन तन स्याम ॥२॥ (अनुवाद)
(काशीखण्ड-अ०१९।२०।२१)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्रीः ।

श्रीविश्वनाथजीका सुवर्णमन्दिर ।

"मोक्षलक्ष्मीविलासस्य, कलशो यैर्निरीक्षितः ।
निधानकलशस्तन्तु, न मुञ्चति पदेपदे ॥
दूरतोऽपि पताकापि, मम प्रासादमूर्द्धगा ।
नेत्रातिथीकृता यैस्तु, नित्यं तेऽतिथयो मम ॥"

(काशीखंड.)

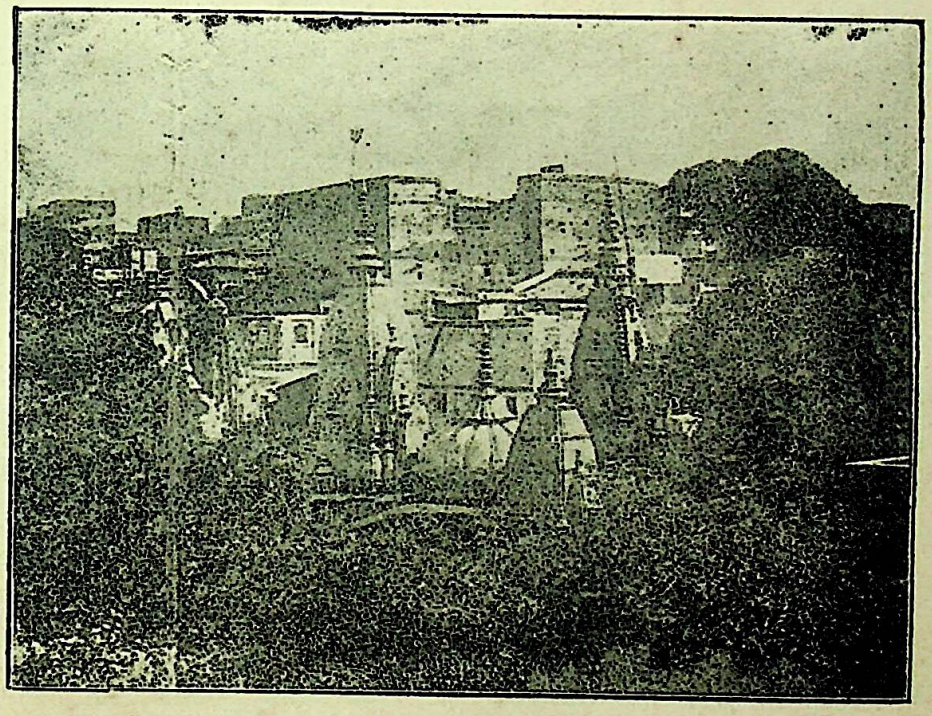

जो विस्वेस्वर मन्दिर ऊपर विसद कलस लखिपावै,
ताहि निधानकलस नहिं छाडै पग पगमें अरुझावै ।
जबै दूरते लखै पताका सिव पाहुन बनिजावै,
विस्वनाथ मन्दिरके देखे जगमें धन्य कहावै ॥ १ ॥

(अनुवाद.)

(काशीखण्ड ९९ वां अध्याय.)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्रीः ।

॥ दशाश्वमेधघाट ॥

"ततो भगीरथेनैव, ह्यानीतानन्दकानने ।
गङ्गा देवी ततो जाता, काश्यामुत्तरवाहिनी ॥
तदैव शूलटङ्कस्य, दक्षिणे यमुना नदी ।
पूर्वाभिवाहिनी जाता, तत्र गुप्ता सरस्वती ॥
पूर्वे गङ्गापरं पारं, दक्षिणे दशहरेश्वरात् ।
पश्चिमेऽगस्त्यकुण्डाच्च, ह्युत्तरे सोमनाथकात्" (शिवरहस्य.)

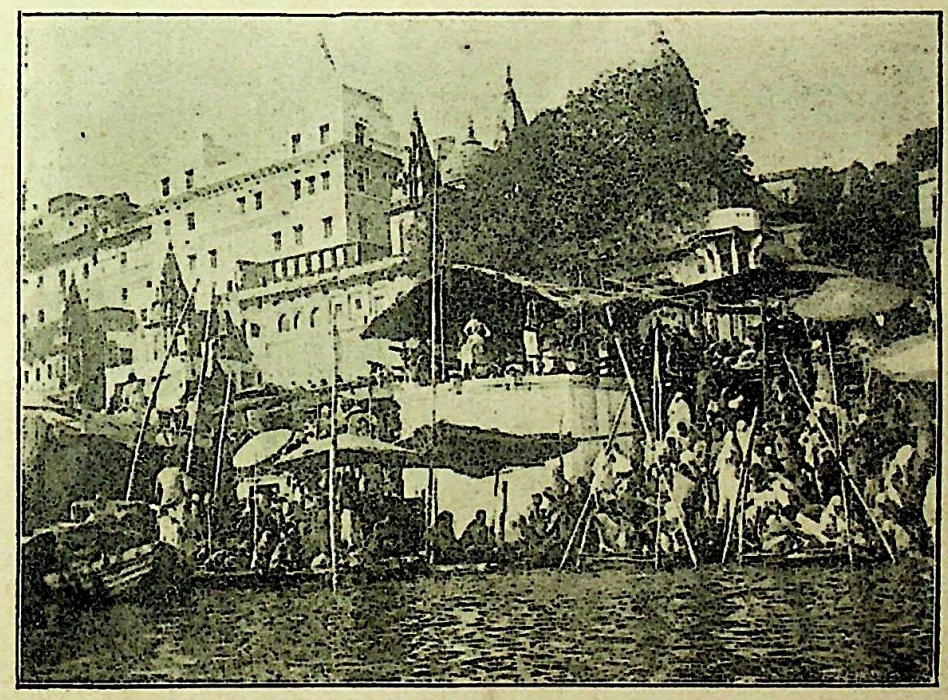

जब भूप भगीरथके रथ साथहिं, आनँदकानन मध्य सिधारी,
तब ह्वै सुचि उत्तरवाहि नि गंग, उसंगमें रुद्रसरोवर धारी ।
तहँ पूरववाहिनि ह्वै जमुना नदि, सूलटँकेस्वर दक्खिन चारी,
जहँ गुप्त सरस्वति आइ मिली, यह कासि-प्रयाग कहात विचारी॥ १ ॥
पूरव गंगा पारलों, दक्खिन दसहरनाथ ।
अगसकुंडलों पच्छिमैं, उत्तर सोमकनाथ ॥ २ ॥ (अनुवाद.)

(काशीखण्ड ९२ वां और ९१ वां अध्याय.)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्रीः ।

॥ पंचगंगाघाट ॥

" किरणा धूतपापा च, पुण्यतोया सरस्वती ।
गङ्गा च यमुना चैव, पञ्चनद्योऽत्र कीर्तिताः ॥
अतः पञ्चनदं नाम, तीर्थं त्रैलोक्यविश्रुतम् ।
तत्राप्लुतो न गृह्णीया,देहं ना पाञ्चभौतिकम्" ॥ (काशीखण्ड.)
"देवनद्यर्द्धभागाच्च, पञ्चगङ्गेश्वरावधि ।
किरणस्रोतसस्तद्व, द्धूतपापेश्वरावधि " ॥ (पद्मपुराण.)

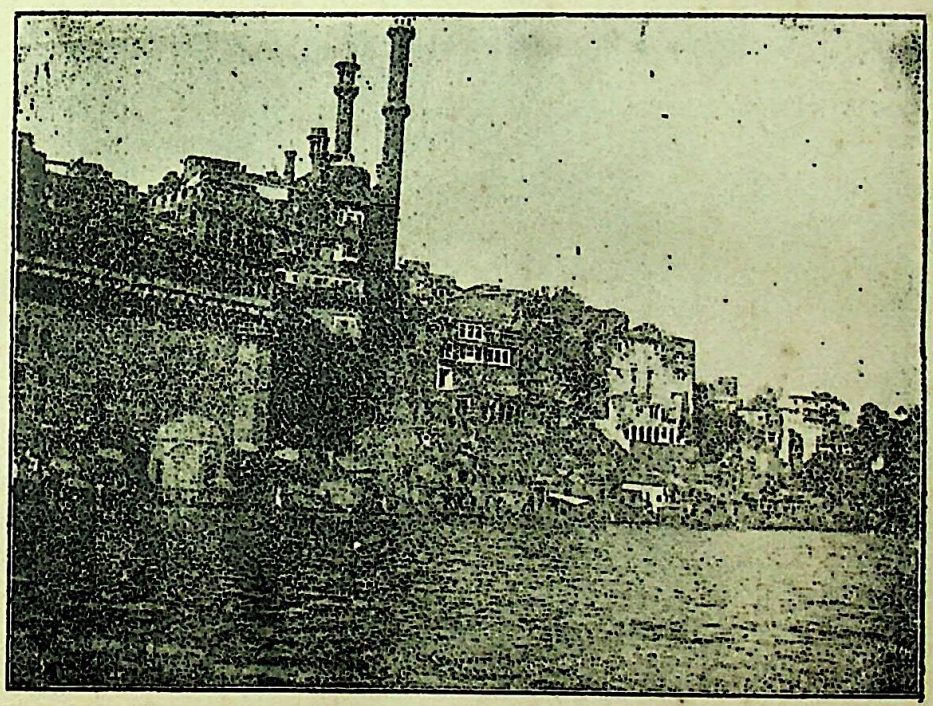

किरना धौपापा तहाँ, सुरसति पावन नीर ।
गंगा जमुना पांच नदि, मिलि हरतीं भवपीर ॥ १ ॥
यह पचगंगाघाट है, तीन लोक विख्यात ।
पंचभूत तनु नहिं धरै, जो नर तहाँ नहात ॥ २ ॥
आधी गंगा पूरव ओरे । पँचगंगेस्वर पच्छिम छोरे ॥
दक्खिन किरना सोती सोहै । धौपापेस्वर उत्तरको है॥ ३॥

(अनुवाद.)

(काशीखण्ड ५९ वां ६० वां और ८४ वां अध्याय.)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्रीः ।

॥ मणिकर्णिकाघाट ॥

" किमु निर्वाणपदस्य भद्रपीठं, मृदुलं तल्पमथो नु मोक्षलक्ष्म्याः ।
अथवा मणिकर्णिका स्थली, परमानन्दसुकन्दजन्मभूमिः ॥
चराचरेषु सर्वेषु, यावन्तश्च सचेतनाः ।
तावन्तः स्नान्ति मध्याह्ने, मणिकर्णीजलेऽमले ॥
आगंगाकेशवाच्चैव, आहरिश्चन्द्रमण्डपात् ।
आमध्याद्देवसारितः, स्वर्द्वारान्मणिकर्णिका " ॥ (काशीखण्ड.)

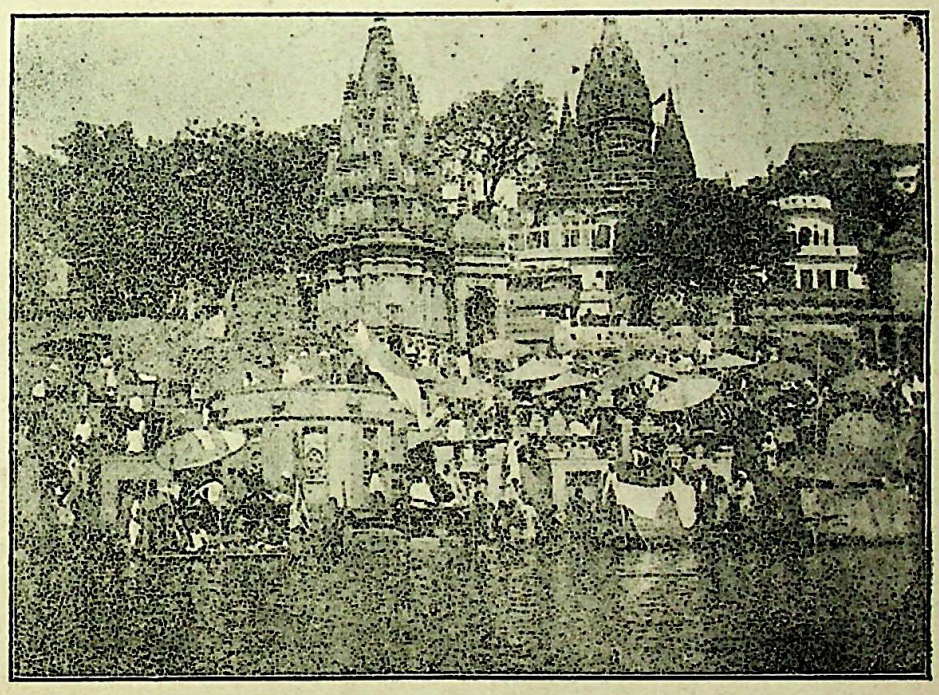

यह कैवल्य राजसिंहासन कीधौं सुघट बनो है,
कीधौं मुक्तिलक्ष्मिकै डासन कोमल पलँग तनो है ।
अथवा पावनि मनिकनिकाकी सुन्दर थली सुहाई;
जो जग परमानन्दकन्दकी जन्मभूमि सुखदाई ॥ १ ॥
सकल चराचरमें विदित, जतिक सचेतन लोग ।
मनिकनिका सुचि नीरमें, न्हात मध्यदिन जोग ॥ २ ॥
गंगाकेसव आदिते, हरिश्चन्द सिव थान ।
अर्धगंग स्वरद्वारलों, मनिकनिका परिमान ॥ ३ ॥ (अनुवाद)

(काशीखंड–२१ । २६ । ३४ । ४४ । ६१ । ८४ । वें अध्यायोंमें वर्णनहै.)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्रीः ।

(काशीखण्ड ५२ वां अध्याय ५० श्लोक)

" विश्वेशानुग्रहेणैव, त्वयैषा पाल्यते पुरी ।
एकस्याप्यवनात्काश्यां, त्रैलोक्यमवितं भवेत् " ॥

श्री ५ मन्महाराजाधिराज द्विजराज काशिराज महाराज बहादुर सर-

श्रीप्रभुनारायणसिंह जू के० सी० यस्० आई.

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्रीः ।

नारायणपतिश्शर्म्मा, काशीखण्डानुवादकः ।
आत्मानं चित्ररूपेण, निवेदयति पाठकान् ॥ १ ॥

श्रीमत्काशीखण्डके भाषानुवादक—
त्रिपाठ्युपनामक पण्डित—
श्रीनारायणपतिशर्मा
काशी.

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्रीशौ वन्दे ।

श्री ५ मन्महाराजाधिराज द्विजराज काशिराज हिज्. हाइ-
नेस. महाराजबहादुर. सर श्रीप्रभुनारायणसिंहजू
के. सी. यस. आइ. की सेवामें.

समर्पण.

श्रीमन्महाराज !

" मन्ये धन्यतरोऽसि त्वं, बहुजन्मशतार्जितैः ।
सुकृतैः पासि यत्काशीं, विश्वभर्तुः परां तनुम् ॥"

(का. अ. ५२ श्लो. ४८)

श्रीमान् काशीपुरीके नरनाथ हैं और हम लोग काशीके साधारण प्रजागण हैं, अतएव यह काशीका प्रमाणस्वरूप काशीखण्ड—भाषानुवाद प्रजाधर्मके अनुसार श्रीमान्के करकमलोंमें आदर—उत्साह—हर्ष—एवं भक्ति के सहित समर्पित है । क्योंकि इस ग्रंथके निर्माता भगवान् वेदव्यासजी भी श्रीमानहीके दुर्ग (किला) में विराजमान हैं । फिर मेरे पूज्यपाद पितृव्य पण्डित चन्द्रशेखर त्रिपाठीजी "शिवचरणपरिचर्या" की संस्कृत-टीका बनाय कैलासवासी श्रीदाऊजी महाराजको समर्पण करके जो प्रथा निकाल चुकेहैं वही हमलोगोंकोभी सर्वथा अनुसरणीय है ।

आशा है कि श्रीमान् अपनी कृपादृष्टिसे इसे अवश्य ही स्वाकार करेंगे, क्योंकि—

"त्वदीयं वस्तु गोविन्द ! तुभ्यमेव समर्पये !"

॥ शुभमस्तु ॥

भवदीय-करपल्लवच्छायासुखासीन,

अति विनीत

अनुवादक—पं०नारायणपति त्रिपाठि शर्मा.

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्रीशौ वन्दे।

श्रीकाशीखण्डके भाषानुवादको देखकर जिन जिन महानुभावोंने पत्रद्वारा अपनी सम्मतियां प्रकट कीहैं, वे आदरपूर्वक इस ग्रंथके साथ प्रकाशित कर दी गई हैं, और इस उदारताके लिये उन लोगोंको अनेक धन्यवाद हैं। और महाशय लोग भी जो कुछ अपनी सम्मति प्रकट करेंगे, वे सब भी सहर्ष स्वीकार करके यथावकाश प्रकाशित कर दी जावेंगी—इत्यलम्।

निवेदक—

श्रीत्रिपाठि—नारायणपतिशर्मा,

काशी.

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

काशीके जगत्प्रसिद्ध "विद्यामार्त्तण्डादि" विविध उपाधियोंसे विभूषित दरभंगापाठशालाके प्रधानाध्यापक "महामहोपाध्याय" पण्डित श्रीशिवकुमारमिश्र शर्माजीका सम्मतिपत्र।

श्रीकाशीविश्वेश्वरो विजयतेतराम्।

स्कन्दपुराणान्तर्गतस्य काशीखण्डस्य देशभाषायामनुवादः पण्डित श्रीनारायणपतित्रिपाठिना काशीवास्तव्येन कृतो मया किञ्चिदवलोकितः। अयमनुवादः सरलः शुद्धो रमणीयसन्दर्भो यथास्थितमूलार्थप्रकाशकः काशीमहिमजिज्ञासूनामभिमतसिद्धिहेतुभूतोऽस्तीति प्रकाशयति॥

म० म० पं० शिवकुमारशर्ममिश्रः काशीस्थः।

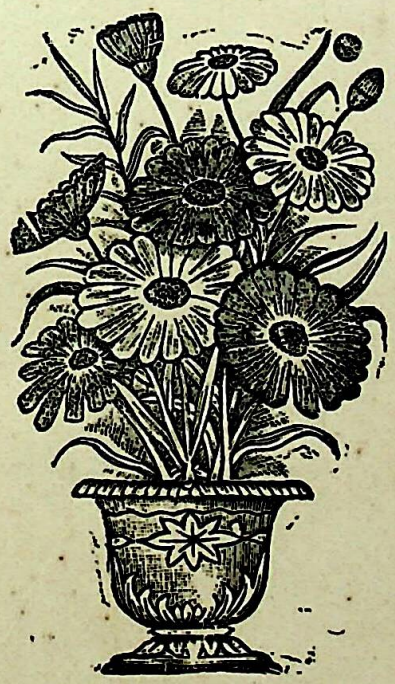

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

काशी गवर्नमेण्ट संस्कृतकालेजके प्रधान ज्यौतिषाध्यापक नागरी-प्रचारिणी सभाके सभापति अनेक ग्रन्थोंके रचयिता "महामहोपाध्याय पण्डित श्रीसुधाकरद्विवेदिशर्माजीका सम्मतिपत्र।

श्रीः।

मैंने पण्डित श्रीनारायणपति त्रिपाठीका काशीखण्ड भाषानुवाद देखा भाषा सरल और अनुवाद बहुत शुद्ध है इसके प्रचारसे बहुत ही लोकोपकार होगा।

८।१२।०७

सुधाकरद्विवेदी।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

काशीके प्रसिद्ध रईस काशिराजकुलजात बाबू श्रीइन्द्रनारायणसिंह एम्. ए. आनरेरी मजिस्ट्रेटका सम्मतिपत्र.

श्री—अनेक विद्या विशारद सकल सद्गुणालङ्कृत पंडित श्रीनारायण-पतिजीकी सेवामें।

श्रीः।

प्रणाम!

आपका श्रीकाशीखण्डका अनुवाद देखनेसे अत्यन्त हर्ष हुआ, अवश्यमेव इस समय पुराणोंके ऐसे ही अनुवादकी अत्यन्त आवश्यकता है जिसमें प्राचीन महर्षिका विना लोन मिर्च मिलाहुआ तात्पर्य जाना जाय, जहाँतक हम इसको पढते जाते हैं चित्त प्रसन्न होता जाताहै, काशी विषयक कई पौराणिक लेखोंका अनुवाद हमने देखा है पर मूलसे जैसा आपके अनुवादका मेल है ऐसा कहीं भी नहीं दिखाई पडा क्याही अच्छा होता यदि आप काशीपर एक स्वतन्त्र लेख लिखते क्योंकि प्राचीन जो कुछ इसके विषयमें है उसका ज्ञाता आपसे बढकर किसीको होना कठिन है। और आधुनिक विषय व्यवस्थाके खोज करनेके लिये आपसे बढके और दूसरा कोई नहीं होसकता। किमधिकं विज्ञेषु॥

श्रीइन्द्रनारायणसिंह.

जगद्गञ्ज—बनारस.
१३—१०—०८

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

काशीके सुविख्यात ज्योतिर्विद् पण्डित श्यामाचरणशर्माजीके पुत्र त्रिपाठ्युपनामक श्रीपण्डित अयोध्यानाथजी शर्मा ज्यौतिषाध्यापक (उपनाम अवधेशकविजी) का सम्मतिपत्र।

श्रीः।

श्रीजानकीवल्लभो विजयते।

चौपैया-छन्द।

स्कन्दपुराण महामुनि वेदव्यासरचित जग सोहै,
ता महँ काशीखण्ड अनूपम काशीचरित लसो है।
सुरभाषामहँ जदपि तासु बुधवन्दित तिलक रचेहैं,
पै ताके सुभ सरस कथासों प्राकृत मनुज बचेहैं॥ १॥
याते पूज्य त्रिपाठि रमापति तनुज कासिका वासी,
नारायनपति शुभनाम जासु हिय विस्वनाथ अविनासी।
ताको भाषा तिलक बनायो अति सुन्दर अनुवादहिं,
जाके पढत व्यासवानीको रस पैये अविषादहिं॥ २॥
ठौर ठौर याकी वररचना हौं बहुभांति लखी है।
सुचि अनुवाद सुलेखचातुरी यामें सुथल रखीहै॥
इहि अवसर ऐसे ग्रन्थनकी आवस्यक अति ही है।
अनुवादकको सफल परिस्रम यह रचनाहुँ सही है॥ ३॥
व्यासवचन रविकर सम भासत कासीचरित ससी सो।
उभय एक ढिग करत अमावस अबुध लखहिं इमि हीसो॥
यह सुचि टीका दीपमालिका सम परकासित ह्वैकै।
हरिहै जन अज्ञान जनित तम सबहि महामुद दैकै॥ ४॥
संवत सर रस नन्द भू, दीपावलि सनिवार।
नारायनपति मीत हित, किय अवधेस विचार॥ ५॥

सं १९६९ दीपावली.

अयोध्यानाथशर्म्मा (अवधेश)
नई बस्ती-बनारस।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

काशी लहरीप्रेसके प्रोप्राइटर अनेक रोचक हिन्दी उपन्यासोंके रचयिता बाबू श्रीदेवकीनन्दनजी खत्रीका सम्मतिपत्र ।

३१-१०-१९०८

श्रीयुत नारायणपति त्रिपाठीजी
काशी ।

प्रणाम,

आपका अनुवाद कियाहुआ काशीखण्ड पढकर मुझे बडी ही प्रसन्नता हुई, विशेष करके यह देखकर कि आपने पृथक् २ अंक देकर श्लोकोंका पूरा पूरा और सच्चा अनुवाद कियाहै, कहीं भी घटाये बढाये जानेका धब्बा इसमें नहीं लगायाहै जिससे कम संस्कृत जानने वालोंको भी बहुत लाभ पहुँच सकता है। आजकल पुराणोंके जैसे अनुवाद देखे जातेहैं सुखसागर और देवीभागवतकी तरह कथाभागमें गोलमाल तथा श्लोकोंके अर्थमें अनर्थ जो कुछ हुआहै वैसा आपके इस काशी-खण्डके अनुवादमें नहीं दिखाई देता और न और अनुवादोंकी तरह भाषाकी टाँग तोडनेवाले शब्द "जाते भये और करते भये" की बहार दिखाई देतीहै । काशीखण्ड कैसा उपयोगी और उत्तम खण्ड है इसके विषयमें मुझे कुछ भी नहीं कहना है और न इसकी प्रशंसा करनेकी मुझमें सामर्थ्य है अगर कुछ कहना है तो केवल एकही बात सो भी आपसे नहीं बल्कि संस्कृतके और अनुवादक महाशयोंसे और वह यह कि वे लोग कृपाकर आपकी इस अनुवादशैलीका अनुकरण करें और आपहीकी तरह सुन्दर और शुद्ध भाषामें पुराणोंका सच्चा अनुवाद करके देशका उपकार करें ।

मैं ईश्वरसे प्रार्थना करताहूं कि वह आपके द्वारा इसी तरह अन्य अन्य ग्रन्थोंका अनुवाद कराकर सर्वसाधारण तथा हमारे प्राचीन और नवीन साहित्यका मंगल किया करें ।

D. NANDAN
(Sd)
(देवकीनन्दन)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri.

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

धन्यवाद।

यद्यपि हमारे श्रीवेङ्कटेश्वर स्टीम् प्रेस द्वारा बहुतसी पुस्तकें मूल और भाषा-टीका या केवल भाषा में प्रकाशित हुई हैं और निरन्तर प्रकाशित होती जाती हैं, परन्तु बहुत दिनोंसे एक ऐसी पुस्तकके प्रकाशित होनेकी आवश्कता थी, जिसमें काशीकी यात्रा तथा काशीतीर्थसम्बन्धी प्रयोजनीय सब विषयोंका सविस्तर वर्णन हो, आज इसी अभावको हमारे माननीय श्रीमान् विद्वद्वर त्रिपाठी उपनामक पं०नारायणपति शर्माजीने दूर कर अर्थात् इस काशीखण्डका भाषानुवाद कर चित्रों-सहित हमें सदाके लिये छापने तथा प्रकाशितकरनेका पूर्ण अधिकार दियाहै। अतएव हम उक्त पण्डितजीको अंतःकरणसे धन्यबाद देतेहैं और आशा करतेहैं कि वे सदैव ऐसे २ परोपकारी कार्य्य करें और अत्यन्त उपयोगी पुस्तकोंको लिखकर हमें छापने तथा प्रकाशित करनेका अधिकार देवें। इस महत् कार्य्यके लिये उक्त पण्डितजीको हम जो कुछ धन्यबाद देवें सब थोडाहै।

अतएव सर्व साधरण को विदित होवे कि इस काशीखण्ड भाषानुवादको जिस का वर्णन भूमिका और ऊपरके धन्यबाद में कियागयाहै, कोई महाशय हमारी आज्ञा विना न छापें या प्रकाशित करें अन्यथा छापने और प्रकाशित करनवाले आईनके अनुसार लाभके स्थानमें हानि उठावेंगे।

निवेदक—

खेमराज श्रीकृष्णदास,

मालिक—"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस—मुम्बई.

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्रीशौ वन्दे ।

श्रीगणेशाय नमः ।

भाषाकाशीखण्डकी भूमिका ।

काशीखण्ड स्कान्दमहापुराणके चतुर्थ खण्डका नाम है जैसे तीनों गुणोंसे परे होनेसे काशी तुरीय है अथवा जैसे–

"अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, काञ्ची, अवन्तिका ।
पुरी द्वारावती चेति, सप्तैता मोक्षदायिकाः॥"

सातों मोक्षपुरियोंमें प्रधान होनेके कारणहीसे काशी मध्यमें कहीगईहै, उसी रीतिसे यह **काशीखण्ड** भी सात खण्डोंके मध्यमें चतुर्थही रक्खागयाहै । इस ग्रंथमें पुराणोपयोगी सभीबातें उत्तम रीतिसे निवेशित हैं । अष्टादश पुराणोंके रचयिता भगवान्कृष्ण द्वैपायन जिनका "वेदव्यास" नाम आपामर प्रसिद्ध है वही इस ग्रंथकेभी प्रणेता हैं ।

इस अनूठे ग्रंथकी लेखप्रणाली जैसी अमृतवर्षिणी है, वैसीही मधुर कविताभी बहुत चढी वढी है, क्या प्राचीन क्या नवीन कहीं भी इस ढर्रेकी मनोहर कविता स्यात्(शायद) ही देखपडेगी । क्योंकि "श्रीहर्ष" तथा "माघ" इत्यादि महाकवियोंने भी इसके भावोंको कौन कहे श्लोकोंहीको अपने बडे बडे काव्योंमें केवल छन्द बदलकर ज्योंका त्यों लिखदियाहै

(यथा–"काशीखण्ड" अध्याय ९८ श्लोक ११७)

"याचमानमनोवृत्ति–पूरणे यस्य नो जनिः ।
तेन भूर्भारवत्येषा समुद्रागद्रुमैर्नहि ॥"

(यही "नैषधचरित" काव्यके पांचवें सर्गका ८८ वां श्लोक यों है ।)

"याचमानजनमानसवृत्तेः पूरणाय बत जन्म न यस्य ।
तेन भूमिरतिभारवतीयं न द्रुमैर्न गिरिभिर्न समुद्रैः ॥"

(दूसरा उदाहरण (नमूना) यथा "काशीखण्ड" अध्याय ७ श्लोक ११०)

"युगेयुगे द्वारवत्या रत्नानि परितो मुषन् ।
अब्धी रत्नाकरोऽद्यापि लोकेषु परिगीयते" ॥

(इसीका सांचा "माघने" अपने "शिशुपालवध" नामक प्रसिद्ध काव्यमें तीसरे सर्गके ३८ वें श्लोकमें उतारहै)

"वणिक्पथे पूगकृतानि यत्र भ्रमागतैरम्बुभिरम्बुराशिः ।
लोलैरलोलद्युतिभाञ्जि मुष्णन् रत्नानि रत्नाकरतामवाप" ॥

इसी भांति यदि परिश्रम उठाया जावे तो बहुतेरे उदाहरण मिल सकेंगे रहा इस ग्रंथकी कविताका आनन्द सोतो सहृदय पाठक लोग आपसे आप लूटले सकतेहैं. उसका उदाहरण ग्रंथभरमें सर्वत्रही बिथरा पडाहै, अतएव उसका दिखलाना कुछ आवश्यक नहीं जान पडता ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इस अलौकिक ग्रंथमें केवल आख्यायिका और उपाख्यानोंहीकी भरमार नहीं है, बरन वेद–वचनोंके प्रमाण, मन्वादि स्मृतियोंके कथित आचारादि विषयोंका निर्णय, दर्शनशास्त्रोंके परम निगूढतत्त्व, वेदान्तका सर्वस्व, सामुद्रिक शास्त्रका निचोड, सती स्त्री तथा सदाचारी पुरुषोंके कर्तव्य, बौद्धधर्मका सार–एवं काशीपुरी, भगवान् विश्वनाथ और कलिकलुषहारिणी भगवती गंगाजीका इतिहास माहात्म्य और रहस्य यथास्थान विस्तारपूर्वक वर्णन कियागयाहै ।

इस काशीखण्डको केवल साधारण पुराणही नहीं समझना चाहिये, यह ग्रंथ धर्मशास्त्रोंमें भी बहुतही प्रामाणिक मानाजाताहै **"निर्णयसिन्धु"** इत्यादि निर्णयविषयक ग्रंथोंमें इसके बहुतेरे वचन प्रमाणरूपसे उद्धृत किये गये हैं । एवं व्रतादिकोंका वर्णन तथा निर्णय भी इस ग्रंथमें पायाजाता है ।

यद्यपि काशीका वर्णन और माहात्म्य **"यजुर्वेदके" "जाबालोपनिषद्"** तथा **"राम तापनी"** इत्यादि स्थलोंपर, तथा **"लिखितस्मृति" "शङ्खस्मृति"** और **"पराशरस्मृति"** इत्यादि स्मृतियोंमें–एवं **महाभारत**के–

"वनपर्व ८४ वां अध्याय"
"भीष्मपर्व २४ वां अध्याय"
"कर्णपर्व ९ वां अध्याय"–एवं
"अनुशासन पर्व ३० वां अध्याय"–इत्यादिमें विस्तारपूर्वक कथित है, तो पुराणोंके विषयमें यही कहदेना कि प्रायः सभी पुराणोंमें पायाजाताहै, कोई युक्तिहीन नहीं होसकता क्योंकि– **"शिवपुराण" "लिङ्गपुराण"** तथा (प्राचीन) **"ब्रह्मवैवर्तपुराण"** में तो इसका वर्णन एक छोटेसे काशीखण्डहीके समान है परन्तु–

नारदीय पुराणके उत्तर खंडमें २९ अ० एवं ४८ से ९१ अ०लों
आदि ब्रह्मपुराण के ११ वां अध्याय,
कूर्मपुराणके ब्राह्मी संहिता में ३१ अ० से ३९ अ० लों,
मत्स्यपुराण के १८० अ० से १८९ अध्याय तक,
पद्मपुराण के सृष्टिखंडमें १४ वां अध्याय,
,, स्वर्गखंडमें ३३ अ० से ३७ अध्यायतक,
,, और भूमिखंडमें ९१ वें. अध्याय,
वामन पुराण के ३ अध्याय,
अग्नि पुराण के ११२ अध्याय, एवं–
मार्कण्डेयपुराण के ८ अध्यायमें विशेष रूपसे कहागयाहै एवं इन्हीं सबोंमें इतस्ततः फुटकर वर्णन भी पाया जाताहै–फिर इन सबोंके अतिरिक्त **"वायुपुराण" "सौरपुराण" "भविष्यपुराण" "शिवरहस्य" "रामायण" "भागवत" "देवीभागवत" "सनत्कुमारसंहिता" "त्रिस्थलीसेतु"** अथवा **"नैषधचरित"** प्रभृति उत्तम काव्योंमें भी सर्वत्र ही दृष्टि गोचर होताहै यदि इन सब उक्त ग्रंथोंके प्रकरणोंका एकत्र संग्रह कियाजावे तो संभवहै कि काशीखण्डका दूना किंवा तिगुना बडा ग्रंथ बनजावेगा क्योंकि–

काशीरहस्य (प्राचीन ब्रह्मवैवर्तपुराणका)
काशीमाहात्म्य (पद्म पुराणका १ मत्स्य पुराणका २, रसमय सिद्धकृत ३ पं. ईश्वरीदत्तकृत ४) ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

काशीदर्पण (श्रीकृष्णचन्द्रकृत)
काशीप्रकाश (पूर्वार्ध तथा उत्तरार्ध दो भाग)
काशीस्थिति चन्द्रिका (प्राचीन ग्रंथ)
काशीमुक्ति विवेक (प्राचीन ग्रंथ)
काशीतत्त्वविवेक (प्राचीन ग्रंथ)
काशीविनोद (नवीन ग्रंथ)
काशीयात्राप्रकाश (आधुनिक)
काशीकुतूहल (मेरे पूर्वज पं० रामानन्दत्रिपाठीका बनाया हुआ)

इत्यादि अनेक छोटे बडे ग्रंथ आजभी काशीके विषयमें वर्तमान दीखतेहैं—एतद्भिन्न बहुतेरे ऐसे भी हैं जिनमें "नित्ययात्रा" अथवा "पंचक्रोशीयात्रा" आदिका वर्णन पाया जाताहै और संस्कृत, हिन्दी, उर्दू अथवा अंग्रेजीमें भी अनेक ग्रंथ इतिहास इत्यादिके आधार पर लिखेगयेहैं जो आज दिन प्रचलित हैं—पर इन समस्त ग्रंथोंका आचार्य "काशीखण्ड" ही है—वास्तवमें काशीखण्डसे बढकर काशीके विषयमें सर्वांगपूर्ण दूसरा कोई ग्रंथ आजतक नहीं देखपडा अतएव इस "काशीखण्ड" को काशीका प्रमाणपत्र (**कबाला**) कहाजावे तो स्यात् कुछ अनुचित नहीं होगा;—क्योंकि इसमें काशीकी चतुस्सीमा (**चौहद्दी**) भी निवेशित (**मुन्दर्ज**) करदी गईहै।

यद्यपि इस काशीखण्डके लिखेजानेका समय मैं अपनी तुच्छ बुद्धिके अनुसार स्थिर नहीं करसकता, पर इतना अवश्य कहूंगा कि इस ग्रंथमें काशीका केवल माहात्म्यही नहीं वरन पूरा पूरा इतिहास भी यहांतक लिखागयाहै कि—इतने घाट, इतने कुंड अथवा कूप, इतने देवमन्दिर, इतने शिवलिंग इतने इतने अमुक अमुक देव देवी—अर्थात् इतने राम, इतने कृष्ण, इतने नृसिंह, इत्यादि एवं इतनी संख्याके ब्राह्मणलोग काशीमें वर्तमान थे, तथा अमुक अमुक तीर्थ अथवा स्थानोंका यह वृत्तान्त किंवा माहात्म्य है। और विश्वेश्वरके मन्दिरके खंभोंमें जडाऊ पुतरियोंका वर्णन एवं ज्ञानवापीके माहात्म्यमें कलावतीके चित्रपट (**तसवीर-नकशा**) वर्णनसे उस कालके शिल्प और चित्र विद्याका भी बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त होजाताहै। यद्यपि यह आजकलके इतिहासोंकी चाल पर (सन व तारीख) नहीं लिखागयाहै पर इसे पुराने ढर्रेका इतिहास अवश्यही मानना पड़ेगा, क्योंकि इस ग्रंथके लिखे जानेकी वेला क्या जाने किसीका संवत् चलता था अथवा नहीं यह कौन बतासकताहै?

इस ग्रंथमें द्रौपदादित्य प्रभृतिकी कथा भविष्य कहकर लिखीगईहै इससे स्पष्ट है कि महाराज युधिष्ठिरके संवत् चलनेके पूर्वहीमें यह काशीखण्ड लिखागयाहै—पर कितने पूर्वमें बना और फिर कितने समयके अनंतर लिखकर प्रचलित हुआ इसके ठीक कहनेकी क्षमता मुझमें नहीं है।

इस ग्रंथमें सबसे बडी यह बात है कि जैसे शैवलोगोंके "**शिवपुराण**" वैष्णवोंके "**भागवत**" अथवा "**नारदपंचरात्र**" शाक्तोंके "**देवीभागवत**" इत्यादि ग्रंथोंमें केवल ग्रंथनायक (अर्थात् जिन जिनके नामानुसार पुराण लिखागयाहै उन्ही) का माहात्म्य सबसे अधिक लिखा रहताहै वैसे ही यह ग्रंथ भी चाहे काशीको सर्वश्रेष्ठ सिद्ध करदेताहै, पर शिव और विष्णुके विषयमें वैसाही लिखता है जैसा कि "**कूर्मपुराण**" का मत है, किंवा जैसे यह किसी प्राचीन कविका श्लोक कहता है—

"उभयोः प्रकृतिस्त्वेका प्रत्ययभेदेन भिन्नवद्भाति।
पश्यति कश्चनमूढो हरिहरभेदं विना शास्त्रम्॥"

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इससे यह बात निश्चित होजाती है कि यह "**काशीखण्ड**" कुछ शैवोंहीका ग्रंथ नहीं है, वरन् इस पांचभौतिक शरीरके शुद्ध करदेनेवाली पांचदैविक आराधनाका स्पष्ट रूपसे उपदेश करदेताहै।

जो हो पर इतना तो मैं अवश्य (ताली ठोंककर) कहसकताहूं कि जो आस्तिक हिन्दूलोग काशीमें रहतेहैं, या जो लोग काशीवास करना चाहतेहैं वा अन्य स्थानके रहनेवालेभी जो सज्जनगण "**काशी विश्वनाथ गंगा**" का तत्त्व समझना चाहतेहैं उनपर अपनी आस्था बनाये रहतेहैं, उनकी प्राप्तिका उपाय सोचा करतेहैं, किंवा उत्तमोत्तम उपाख्यानोंसे बढियां उपदेश ग्रहण करनेकी अभिलाषा रखतेहैं, अथवा--काशीही क्यों मुक्तिक्षेत्र है ? किंवा मोक्षही क्योंकर मिलसकताहै ? इन सब बातोंके जानलेनेको उत्सुक हैं, या जिन लोगोंको शिव और विष्णुमें कुछ भेद दीखताहो, वे लोग कष्ट उठाकर, समय लगाकर, चित्त देकर, पक्षपात छोडकर, आग्रह रहित होकर एक बार इस "काशीखण्ड" को आद्योपान्त पढजावें-फिर देखें कि मेरी बात अक्षरशः सत्य है वा नहीं ?

इस ग्रंथमें यह एक और भी विचित्रता है कि जिस काशीका नाम "**अन्नपूर्णाक्षेत्र**" सर्वत्र प्रसिद्ध है, और लोकमें यह भी ख्याति है कि-"काशीमें अन्नपूर्णा ही सब किसीको भोजन पहुँचा देतीहैं जिससे कोई भूँखा नहीं रहने पाता-" उस जगज्जननी "अन्नपूर्णा" महारानीका नाम इस ग्रंथमें कहीं भी नहीं देखपडता, जब कि भगवान् शिवजी काशीमें "विश्वनाथ" रूपसे विराजमान हैं तो भगवतीका "अन्नपूर्णा" रूप होरहना बहुतही आवश्यक है-क्योंकि अन्नसे पूर्ण हुए विना विश्वका काम ही कैसे चलसकता है ? और इस प्राचीन श्लोकमें तो दूसरी ही बात कही गई है-

"**स्वयं पञ्चाननः पुत्रौ गजाननषडाननौ ।**
दिगम्बरः कथं जीवेदन्नपूर्णा न चेद्गृहे ? ॥" ❀ ॥

इस ग्रंथमें अन्नपूर्णाशब्दके स्थानपर भवानी शब्दका प्रयोग कियागयाहै, वरन **'मात ! भवानि !'** (अ० ६१ श्लोक ३७) इत्यादि- श्लोक तो मंत्ररूपसे लिखागयाहै । पर काशीखंडके जोडका जो "**काशी रहस्य**" नामक छोटा ग्रंथ है उसमें इन्हीं वेदव्यासजीने अन्नपूर्णाशब्दहीको वारंवार लिखाहै-

यथा-"**मात ! विशालाक्षि ! भवानि ! सुन्दरि !**
त्वामन्नपूर्णे ! शरणं प्रपद्ये !"-(अ० २ श्लो० १०२)

और भी उदाहरण-

"**जयजयान्न पूर्णे ! अन्न प्रदाननिरते !**
अन्नार्थि संग्रहपरे ! अन्ध बधिरपंगु-
पतितमहापापि शरणागतत्राणनिरते !"-इत्यादि-(अ० २० श्लो० ११०)

इसका मुख्य कारण तो मैं नहीं जानसकता एक पर इतना समझ पडताहै कि बडे बडे ग्रंथोंमें किसी विशेष संकेतसे कभी कोईशब्द अवश्य छोडदिया जाताहै, अथवा किसी नियमित शब्दका अवश्यमेव प्रयोग कियाजाताहै । क्योंकि इन्हीं "व्यासजीने" जैसे "काशी खण्डमें" अन्नपूर्णा शब्दको वचायरक्खाहै वैसे ही "**श्रीमद्भागवत**" में भी "**राधा**" शब्दको नहीं आने दियाहै । पर "**ब्रह्मवैवर्त**"-इत्यादि पुराणोंमें "**राधा**" शब्दहीकी-

---

१ काशीखण्डके ७०वें अध्यायके अन्तमें इसका अनुवाद इत्यादि देखिये ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भरमार मचादीहै । यह प्रथा केवल व्यासजीकी ही नहीं है, आदिकवि महर्षि "**वाल्मीकिजी**"-नेभी अपने बनायेहुए "**रामायण**"में "**रामचन्द्र**" पदका कहीं भी उल्लेख नहीं कियाहै पर प्रत्येक सहस्र श्लोकोंपर गायत्रीके अक्षरोंका क्रमशः प्रयोग कियाहै योंही और और काव्योंमें भी—

"**महाकवि**" "**श्रीहर्षने**" "**नैषधचरितमें**" "**आनन्द**" शब्द
" "**भारविने**" "**किरातार्जुनीयमें**" "**लक्ष्मी**" शब्द एवं
" "**माघने**" "**शिशुपालवधमें**" "**श्री**" शब्दका प्रयोग प्रत्येक सर्गके अन्तिम श्लोकोंमें स्पष्टरूपसे दिखादियाहै । **जैसेकि तुलसीकृतरामायणकी** प्रत्येक चौपाइयोंमें भी रकार वा मकार प्रायः पाया जाताहै, इससे यही बात सूचित होतीहै कि बडे बडे ग्रंथकारोंकी यह प्रणालीही है जो वे लोग या तो किसी एक प्रधान शब्दका प्रयोग नहीं करेंगे अथवा किसी नियमित शब्दको यथास्थान पर अवश्य ही लाकर धर देवेंगें अस्तु "व्यासजी"ने चाहे जो सोचकर "श्रीअन्नपूर्णा देवीका" नाम न लिखाहो पर हम लोगोंको आज कल ऐसे कठोर दुर्भिक्षके कालमें एकमात्र "**अन्नपूर्णा**" माताही का स्मरण और भरोसा रखना एवं कदापि भूलना नहीं चाहिए वरन एकमन होकर उन्हींसे वारंवार यह प्रार्थना करनी उचित है कि, "अम्ब ! अब तू इस भूखे भारत-संतान पर कृपादृष्टि फेर कर और यहांसे अन्य देशोंकी यात्राको त्यागकर इस (विचारे) दीन देशको अन्न—पूर्ण करदे!!"

इस "काशी खण्ड" पर "**यतीन्द्र रामानन्द स्वामीजी**" की संस्कृत—टीका प्राचीन और प्रसिद्ध है एवं वह टीका भी बहुत उत्तम बनी है—इस भाषानुवादमें जहाँ तहाँ उसी टीकासे कथा वा श्लोक भी उद्धृत किये गये हैं । टीकामें प्रत्येक अध्यायोंके आदिमें एक श्लोक लिखकर अध्यायभरकी सार सूचना दीगईहै, उसी प्रथाके अनुसार इस अनुवादमें भी प्रत्येक अध्यायोंके अन्तमें कुछ एक पद्योंसे अध्यायभरकी कथाका आभास झलकाया गया है और कहीं कहीं बीचमें भी उपयुक्त श्लोकों का पद्यानुवाद पाठकोंके थोडासा मनफेर करलेनेके लिये लिखदिया गया है ।

सभी पुराणोंका प्रादुर्भाव संस्कृत भाषाहीमें हुआ है, इसी कारणसे अब इस देशके वे लोग जो कि संस्कृत पढनेका श्रम नहीं उठाते यहांकी बहुतेरी पुरानी बातोंको अर्थात् धर्मविषयक, इतिहास-विषयक, एवं रहन, सहन, मिलन, और वर्तन इत्यादिको अच्छी रीतिसे नहीं जानने पाते । इसीका फल यह होताहै कि इस देशके व्यवहारोंको छोडकर विदेशीय वर्ताव और चाल ढाल पर चलने लगतेहैं, और धीरेधीरे यहां तक होताजाता है कि पुराणोंकी कथायें गप्प कहाने लगीं, लोग उनके पढने सुननेमें अपना अमूल्य समय रत्न खोनेसे किसी बढियां उपन्यास वा (शुकबहत्तरी जैसे किस्सा) कहानीकी पुस्तकोंको दोचार दिन नहाना खाना छोडकर भी पढडालना उचित समझने लगे—जो हो—पर मेरी तुच्छ समझमें तो जब तक किसी विषयका मर्म नहीं समझलिया जाता तबतक कदापि उसका आनन्द नहीं मिल सकता है ।

पर हां—यदि कोई परिश्रम उठाकर सभी पुराणोंकी कथाओंको जानलेवे, तो संभव है कि उसे इस देशकी बहुतेरी प्राचीन रीतियां आपसे आप ज्ञात होजावेंगी । यद्यपि मैंने पुराण बाँचनेवाले कुछ-एक व्यास लोगोंकी इच्छाके विरुद्ध इस अनुवादके लिखनेका साहस कियाहै—क्योंकि उन महात्माओंका यही कथन है, कि—"पुराणोंमें वेदकी भी बहुतेरी ऋचायें—किंवा मंत्र आजातेहैं जो केवल अधिका-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

रियोंहीके पढने सुननेके योग्य होतेहै-वेसबलोगोंके लिये नहीं हैं"-वास्तवमें यह बात सर्वथा माननीय है कि, हिन्दीमें ग्रंथका अनुवाद होजाने पर केवल हिन्दी जाननेवाले भी उन विषयोंको पढले सकते हैं-तथापि इस झगडेका न्याय (फैसला) "गोस्वामी तुलसीदासजीने" "अध्यात्मरामायण" का अनुवादरूप अपना जगत् प्रसिद्ध "मानसरामायण" लिखकर निपटा दियाहै-फिर यह बात भी बहुत ठीक है कि, ईश्वरके स्मरण करनेका अधिकार प्रत्येक जनको सब प्रकारसे सर्वदैव और सर्वत्रही समान है, जैसा कि कहाभीहै-

"जाति पाँति पूछै नहिं कोई ।
हरिको भजै सो हरिका होई ॥"

एक बात और भी है-भक्ति रखनेवाले श्रद्धालुजनोंसे परम गोप्य विषय भी प्रकट करदिया जाता है, तो मेरे इस अनुवादके पढनेसे यदि किसीको कुछभी लाभ पहुंचा अथवा कोई उपकारही होसका तो मेरे दोषोंका प्रायश्चित्त अनायासही होजावेगा, वरन काशीके विषयमें कथाओंके जाननेकी इच्छा रखनेवाले किंवा काशीवास करनेवाले, अथवा किसी बिगडैल अधिकारीहीको इससे कुछ भी सहायता मिलसकी तो मेरा परिश्रम अक्षरशः सफल होजावेगा इसमें कुछभी सन्देह नहीं है ।

तिस पर भी यावच्छक्य उक्त दोषोंके दूर करनेकी चेष्टा कीगई है-और अनुवादमें इसी इच्छा से श्लोकाङ्क भी लगाया गयाहै कि जो लोग इसे मूलसे मिलाकर पढेंगे उन्हें ये सब बातें यथार्थ रीतिसे विदित होजावेंगी ।

इस काशीखण्डका "महाराष्ट्री" "गुजराती" "तैलंगी" और "बंगला" इत्यादि भारतवर्षकी अवांतर भाषाओं में गद्य और पद्यके अनेक अनुवाद होचुकेहैं वरन् एक अनुवाद "फारसी" में भी (शायद राजा पटनी-मल्लका बनाया हुआ) है, पर काशीपुरीकी प्रचलित हिन्दी भाषामें अभीतक कोई पूर्ण अनुवाद मुझे नहीं देखपडा-यों तो अध्यायोंकी कथामात्रका भावार्थ लेकर एक अनुवाद दोहा चौपाइयों में ३९ अध्याय तक "जयनारायणजीका" बनाया हुआ कलकत्तेमें छपाथा पर वैसे अनुवादसे ग्रंथके प्रत्येक श्लोकोंका भाव नहीं समझाई पड सकता, हां, कथाका कुछ आभास अवश्य ही झलक जा सकता है । बस "हिन्दी" ऐसी प्रधान भाषामें ऐसे अलौकिक ग्रंथका अनुवाद नहीं दिखाई पडने पर कतिपय सज्जन सुहृदोंके अनुरोधसे यह अनुवाद: शुद्ध हिन्दी (अर्थात् उर्दूरहित) भाषामें अपनी मन्दबुद्धिके अनुसार लिखा गया है-इसी कारणसे इसमें बहुतेरे दोषोंके पडे रहनेकी विशेष संभावना है पर साथ ही यह आशा भी दृढ है कि सुधारक लोग अपने कर्तव्यमें कभी कोई त्रुटि नहीं होने देवेंगे और मेरी भूल चूकोंको अवश्य ही सुधार देनेकी अपार दया दरसावेंगे-क्योंकि-

"काल सुभाव कर्म बरिआई । भलेउ प्रकृति बस चूक भलाई ॥
सो सुधारि हरिजन जिमि लेहीं । दलि दुख दोष विमल जस देहीं" ॥ (तु०रा०)

फिर इस परम पवित्र श्रीवेदव्यासोक्त "काशीखण्ड" की अनुगामिनी होजानेसे मेरी टूटी फूटी भी हिन्दी भाषा अवश्यमेव स्वीकारके योग्य होजावेगी, क्योंकि-

"धूमहु तजै सहज करुआई ।
अगर प्रसंग सुगंध बसाई ॥" (तु०रा-)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

और भी किसीने यह बहुत ठीक कहाहै कि–

"कहा न होत सुसंगते, देखहु तिल अरु तेल।
मोल तोल सब फिरिगयो, पायो नाम फुलेल॥"

अन्तमें मैं केवल इतना ही कहकर चुप होरहता हूं कि–

"छमिहहिं सज्जन मोरि ढिठाई।
सुनिहहिं बालवचन मनलाई॥" (तु०रा०)

इस ग्रंथके प्रायः प्रत्येक अध्यायोंकी कथायें और और पुराणोंसे भी बहुत मिलतीहैं–जैसे कि लोकोंका वर्णन प्रायः सभी पुराणोंमें वर्तमान हैं। सदाचारादिका निरूपण "मनुस्मृति" इत्यादि धर्मशास्त्र एवं "पद्मपुराण" से विशेष मिलजाताहै, योंही काशीके अवान्तर तीर्थ जैसे कपालमोचनकी कथा प्रायः "वामनपुराण" और "नारदीयपुराण" एवं और भी बहुतेरे पुराणोंके समान ही वर्णितहै–गंगाजीका "दशहरा" स्तोत्र "नारदीयपुराणमें" ज्योंका त्यों है–फिर "ब्रह्माण्डपुराणके–उपसंहार पादमें" और "स्कान्दमहापुराणके–प्रभास खण्डमें" शैवपुर–अविमुक्त क्षेत्रका वर्णन एकसा है–इसी रीति पर भगवान् विश्वेश्वरको कौन कहे काशीके अनेकानेक तीर्थ और शिवलिंगोंका माहात्म्य प्रायः पूर्वोक्त तथा अन्यान्य पुराणादिकोंसे बहुत कुछ मिलजाताहै–यदि परिश्रम उठायाजावे तो यथेष्ट संभव है कि काशीखण्डके प्रत्येक अध्यायोंकी कथाओंका पुराणान्तरसे मिलान करदिया जा सकताहै।

एक बात और भी निवेदनीय है–मैंने यह अनुवाद अपने घरकी(सं.१६७६ज्येष्ठकृ०११की) लिखित पुस्तकके पाठानुसार लिखाहै, पर उस प्राचीन काशीखण्डमें श्लोकांक कहीं भी नहीं हैं, अतएव अंकगणना बंबईके "गणपतकृष्णाजीके" छापेहुए ग्रंथसे लीगयीहै, इससे यदि कहीं कोई श्लोक दूसरे पुस्तकोंसे घटबढ जावे तो पाठक गण उसेठीक करके सुधार लेवें क्योंकि कुछ पाठभेद होजाना कोई असंभव नहीं है, पर प्रयत्न तो ऐसाही कियागयाहै–जिसमें कोई भ्रम नहीं पडनेपावे।

अब एक बहुत आवश्यक बात यह है कि इस काशीखण्डमें जिस काशीकी महिमा विस्तारपूर्वक वर्णन कीगई है उसका दूसरा नाम "वाराणसी" है और उसीका अपभ्रंश अब "बनारस" प्रसिद्धहै इसी रीति पर समयके फेरफारसे एवं विधर्मी यवनराजादिकोंके अत्याचारसे इस ग्रंथके अनुसार बहुतेरे देवस्थान और तीर्थादिकोंमें कुछ उलटपलट होकर प्रायः अन्तर पडगयाहै, औरोंकी बात तो दूर जाने दीजिए स्वयं भगवान् विश्वेश्वरहीका मन्दिर इस ग्रंथके अनुसार ज्ञानवापीके उत्तर ओर था पर अब वह स्थान जहांपर भगवान् विराजमान हैं, ज्ञानवापीसे दक्षिणदिशामें वर्तमान है–इसी रीतिसे जहाँतक स्थानके परिवर्तन अथवा अंतरकी व्यवस्था ज्ञात होसकीहै उसका कुछ थोडा सा वर्णन कहीं कहीं अध्यायोंके अन्तमें वा कथाके अन्तमें जनादिया गया है, पर इस विषय का सविस्तर वृत्तान्त तथा काशीकी वर्तमान अवस्था एवं देवस्थानोंके अतिरिक्त दर्शनीय अन्य विषयोंका संग्रह और छानबीन होरहीहै आशाहै कि आजकलके नव्य और प्राचीन दोनों शैलीके लोगोंके उपयुक्त एक छोटासा ग्रंथ बनजावेगा–और उसीमें "उत्तरकाशी" अथवा "गुप्तकाशी" इत्यादिके विषयमें भी जो कुछ वक्तव्य है लिखाजायगा, क्योंकि इस ग्रंथसे उन सब काशियोंका कोई संबन्ध नहीं है।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अन्तमें केवल यही निवेदनहै कि इस "काशीखण्ड" का तत्त्व निचोडकर किसी प्राचीन विद्वानने यह बहुत ठीक लिखरक्खाहै—यथा—

"असारे खलु संसारे सारमेतच्चतुष्टयम् ।
काश्यां वासः सतां संगो गंगाम्भः शिवपूजनम् ॥"

इत्यलं पल्लवितेनेति शम् ।

श्रीकाशी-
गङ्गासप्तमी
भानुमती
सं० १९६४,

निवेदक
विनीत
त्रिपाठि नारायणपतिशर्मा.

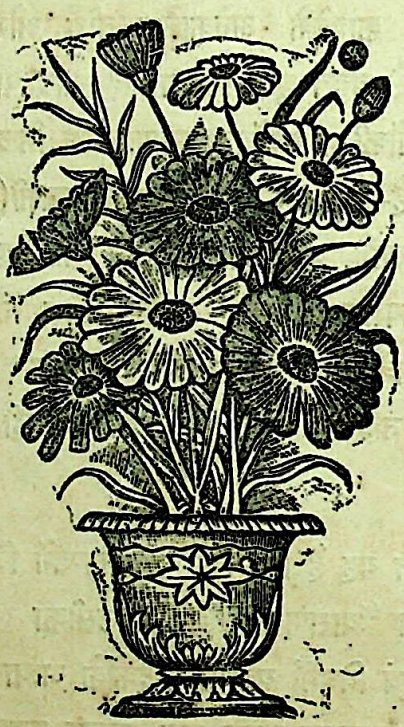

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्रीशौ वन्दे।

भाषा काशीखण्डपूर्वार्द्धकी सूची।

अध्याय. विषय.

१ विंध्याचलका वर्णन, विंध्य और नारदका संवाद, विंध्यवर्धन।
२ सूर्यकी गतिका रोंक, देवताओंका सत्यलोकगमन, ब्रह्माकी आज्ञासे देवताओंका अगस्त्य ऋषिके दर्शनार्थ काशीकी यात्रा।
३ देवताओंका अगस्त्याश्रममें जाना और उसका वर्णन करना।
४ परम पतिव्रता लोपामुद्राका वर्णन।
५ देवताओंकी प्रार्थनासे पत्नीके सहित अगस्त्य मुनिका काशीसे प्रस्थान।
६ परोपकारकी प्रशंसा, लोपामुद्रासे अगस्त्यका तीर्थ माहात्म्य वर्णन करना।
७ काशी इत्यादि सातों मुक्तिपुरियोंका वर्णन और उसी प्रसंगसे शिवशर्माके उपाख्यानका उपक्रम।
८ पिशाच, गुह्यक, गंधर्व, विद्याधर और यमराजके लोकोंका वर्णन।
९ अप्सराओंके लोकका वर्णन तथा सूर्यलोकवर्णन।
१० इन्द्रलोक वर्णन, अग्निलोककी कथा, और पुत्रप्रद वीरेश्वरका अभिलाषाष्टक नामक स्तोत्र।
११ विस्तारपूर्वक अग्निलोकका वर्णन, और वर प्राप्ति पूर्वक वैश्वानरकी उत्पत्ति।
१२ निर्ऋतिलोकका वर्णन, एवं वरुणलोककी कथा।
१३ वायुकी गंधवती पुरीका वर्णन और कुबेरकी अलकापुरीकी कथा।
१४ ईशानलोकका वर्णन, और चन्द्रलोककी कथा।
१५ नक्षत्रलोकका वर्णन, तथा बुधलोककी कथा।
१६ शुक्रलोकका वर्णन।
१७ मंगल, बृहस्पति, और शनैश्चरके लोकोंका वर्णन।
१८ सप्तर्षिमण्डलका वर्णन।
१९ ध्रुवलोकका वर्णन।
२० ध्रुवकी तपस्याका वर्णन।
२१ ध्रुवरचित भगवत्स्तुति, और ध्रुवको ध्रुवलोककी प्राप्ति।
२२ महर्जन, तप और सत्यलोकका वर्णन, एवं ब्रह्माकी कीहुई काशीकी स्तुति।
२३ भूलोकसे लेकर कैलास पर्यन्तका अंतर कथन, और ब्रह्माण्डके आधिपत्य पर विष्णुका अभिषेकोत्सव।
२४ शिवशर्माकी निर्वाणप्राप्तिका वर्णन।
२५ लोपामुद्राके साथ अगस्त्यऋषिको स्कन्दका दर्शन, स्कंद और अगस्त्यका संवादआरम्भ।
२६ काशीका आविर्भाव, मणिकर्णिकाका आख्यान, उसका मणिकर्णिका नाम पडनेका कारण, एवं अविमुक्त, आनन्दकानन, और काशी इत्यादि नामोंके कारणका वर्णन।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२७ वाराणसीनामके कारणवश गंगाकी महिमाका वर्णन और दशहरास्तोत्रका कथन ।
२८ वाहीकाख्यानपूर्वक पुनः गंगाका माहात्म्यवर्णन ।
२९ गंगासहस्र नामस्तोत्र।
३० धनंजयकी कथाके सहित काशीका रहस्य वर्णन एवं वाराणसी, महाश्मशान, और रुद्रावास इन तीनों नामोंका कारण निर्देश वर्णन ।
३१ कालभैरवका माहात्म्य. उनका प्रादुर्भाव, कालराज, कालभैरवादि नामोंका निर्वचन, कपालमोचनतीर्थकी उत्पत्ति ।
३२ दंडपाणिके प्रादुर्भावप्रसंगसे हरिकेशकी उत्पत्ति कथा ।
३३ ज्ञानवापीकी उत्पत्ति, और उसका माहात्म्य वर्णन ।
३४ ज्ञानवापीकी प्रशंसा ।
३५ चारोंही वर्ण और आश्रमोंका सदाचार निरूपण ।
३६ गृहस्थाश्रमका सदाचार वर्णन ।
३७ स्त्रीलक्षण निरूपण (सामुद्रिकविषय) ।
३८ आठों प्रकारके विवाह और ब्रह्मयज्ञादि सदाचारका वर्णन ।
३९ वाराणसी दिवोदास, और अविमुक्तेश्वरकी महिमाका वर्णन ।
४० निषेध और विधिगोचर गृहस्थधर्मका वर्णन ।
४१ वानप्रस्थ और यतियोंका धर्मनिरूपण तथा योगवर्णन ।
४२ कालवंचनके उपाय सहित काशीके माहात्म्यका वर्णन ।
४३ राजादिवोदासके प्रतापका वर्णन ।
४४ विरहाक्रांत विश्वेश्वरका काशीवर्णन, और दिवोदासके निकालनेके लिये योगिनियोंका प्रेषण ।
४५ काशीमें योगिनियोंका प्रवेश, और उनके नाम ।
४६ लोलार्कका माहात्म्यवर्णन ।
४७ उत्तरार्कका माहात्म्य (बकरियाकुंडकी कथा) ।
४८ साम्बादित्यकी महिमाका वर्णन ।
४९ द्रौपदादित्य और मयूखादित्यके माहात्म्यका वर्णन ।
५० खखोल्कादित्य, और तार्क्ष्येश्वरकी कथायें ।

इति पूर्वार्धभाषाकाशीखण्डकी सूची ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भाषा काशीखण्ड उत्तरार्द्धकी सूची।

५१ अरुणादित्य, वृद्धादित्य, केशवादित्य, विमलादित्य, गंगादित्य और यमादित्यकी कथायें।
५२ मंदराचलसे ब्रह्माका काशीमें पहुँचना और दशाश्वमेधका वर्णन।
५३ गणोंका काशीमें भेजाजाना और काशीकी महिमा।
५४ पिशाचमोचनकी कथा और कपर्दीश्वरका माहात्म्य।
५५ काशीका वर्णन, पिंगलादिकृत लिंगाराधन और गणेशका प्रेरण।
५६ काशीमें गणेशका प्रवेश, और गणकरूपसे मायाका प्रपंच।
५७ ढुंढिराजका स्तोत्र, ढुंढिनामका कारण, और छप्पन विनायकोंकी कथा।
५८ मंदराचलसे विष्णुकी काशीयात्रा (बौद्धधर्मनिरूपण) और राजा दिवोदासकी मुक्ति।
५९ पंचनद (पंचगंगा) के प्रकट होनेकी कथा और माहात्म्य।
६० बिन्दुमाधवकी कथा और अग्निबिन्दुका तप--वर्णन।
६१ विष्णुतीर्थोंका माहात्म्य और केशवादि चौवीस मूर्तिभेदोंके लक्षणोंका वर्णन।
६२ महादेवका काशीमें प्रवेश तथा कपिलधारा तीर्थकी कथा।
६३ ज्येष्ठेश्वर और जैगीषव्येश्वरकी कथा।
६४ (काशीवासी ब्राह्मणोंकी संख्या—और उन्हीं लोगोंसे) काशीका माहात्म्य और रहस्यवर्णन।
६५ कन्दुकेश्वर और व्याघ्रेश्वरकी कथा एवं अन्य बहुतेरे लिंगोंका वर्णन।
६६ शैलेश्वर इत्यादि लिंगोंकी कथा।
६७ रत्नेश्वरका माहात्म्य और उनके प्रकट होनेकी कथा।
६८ गजासुरके वधकी कथा और कृत्तिवासेश्वरका प्रादुर्भाव।
६९ (भिन्नदेशस्थित) अडसठ आयतनोंका काशीमें समागम और लिंगोंका विवरण।
७० (काशीकी रक्षाके लिए, वेतालादि परिवारगणके सहित नवकोटि) देवियोंके स्थानोंका वर्णन।
७१ देवीके दुर्गानाम पडनेके प्रसंगसे दुर्गासुर और देवीके युद्धका वर्णन।
७२ शक्तिनाम कथनपूर्वक दुर्गादेवीका विजयवर्णन और वज्रपंजर कवचका कथन।
७३ ओंकारेश्वरका माहात्म्यवर्णन और ओंकारेश्वरादि चतुर्दश लिंगोंकी गणना।
७४ इतिहासपूर्वक सविस्तर पुनः ओंकारेश्वरका माहात्म्य।
७५ त्रिलोचनका माहात्म्य।
७६ पारावतके इतिहास सहित त्रिलोचनका माहात्म्य।
७७ केदारेश्वरका माहात्म्य वर्णन।
७८ धर्मेश्वर लिंगकी उत्पत्तिकी कथा।
७९ धर्मेश्वरका उपाख्यान।
८० धर्मेश्वरके प्रसंगसे, विश्वभुजा गौरी तथा आशाविनायक देवतावाली मनोरथ तृतीयाके व्रतका कथन।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

८१ राजा दुर्दमकी कथाके सहित धर्मेश्वर (और धर्मकूप) का आख्यान ।
८२ वीरेश्वरके आविर्भाव और राजा मित्रजित्के पराक्रमका वर्णन ।
८३ पुत्रप्रद अभीष्ट तृतीयाके व्रतकी विधि, और वीरेश्वरका माहात्म्य ।
८४ वीरेश्वरके प्रसंगसे तीर्थों (घाटों) का वर्णन ।
८५ दुर्वासाऋषिको वरदान और कामेश्वरकी उत्पत्तिकथा ।
८६ विश्वकर्मेश्वरके प्रकट होनेकी कथा ।
८७ दक्षेश्वरके प्रसंगवश दक्षप्रजापतिके यज्ञकी कथा ।
८८ दक्षके यज्ञमें सती देवीके देहत्यागकी कथा ।
८९ दक्षके यज्ञका विध्वंस और दक्षेश्वरकी उत्पत्ति
९० पार्वतीश्वरलिंगकी कथा ।
९१ गंगेश्वरके स्थापित होनेकी कथा ।
९२ नर्मदेश्वरके प्रकट होनेकी कथा ।
९३ सतीश्वरलिंगकी उत्पत्तिकी कथा ।
९४ अमृतेश्वर, करुणेश्वर, और ज्योतीरूपेश्वरादि लिंगोंके उत्पन्नहोनेकी कथायें ।
९५ वेदव्यासका भुजस्तम्भन ।
९६ व्यासशापविमोचन, कृच्छ्रादिव्रतोंका वर्णन, और व्यासजीका निकासाजाना ।
९७ क्षेत्रके (लिंगरूप) तीर्थोंका वर्णन ।
९८ मुक्तिमंडपमें विश्वेश्वरका प्रवेशमहोत्सव ।
९९ श्रीविश्वेश्वरलिंगका माहात्म्य ।
१०० अध्यायोंकी अनुक्रमणिका, पंचतीर्थी इत्यादि यात्राओंका क्रमवर्णन, और इस ग्रंथकी फलश्रुति ।

इति भाषाकाशीखण्डका सूचीपत्र समाप्त ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्रीशौ वन्दे ।

श्रीकाशीयात्राकी-सूची ।

१ यात्राकी विधि और आवश्यकता ।

२ नित्ययात्रा अथवा आवश्यक यात्रा ।

३ एकतीर्थीसे लेकर सप्ततीर्थी पर्यंतकी यात्रायें ।

४ एकायतनसे सप्तायतन तककी यात्रायें ।

५ वार्षिक यात्रायें और शृंगारोत्सव ।

६ अयनयात्रा अथवा पंचक्रोशीयात्रा और अन्तर्गृहयात्रा ।

७ ऋतुयात्रा ।

८ मासयात्रा और पक्षयात्रा ।

९ तिथियात्रा (इसीमें नवगौरी, ५६ विनायक, अष्टायतन, नवदुर्गा, तीनों ही चतुर्दशायतन, एकादश महारुद्र और त्रिकोण इत्यादि यात्रायें वर्णितहैं)।

१० वारयात्रा-(इसमें द्वादशादित्य और अष्टभैरवोंकी भी यात्रा है) ।

११ स्फुट (फुटकर) यात्रा-(इसीमें थोड़ा बहुत ग्रहण इत्यादिका भी वर्णन है) ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रार्थना।

जैसे काशीकी सब यात्राओंका शास्त्रानुसार करना कठिन है; वैसेही उसकी पूर्ण विधिका लिखडालना भी बड़ाही दुर्घट है। मैंने अपनी तुच्छ बुद्धिके अनुसार अनेक पुराण और अन्यान्य ग्रंथोंसे जहांतक होसकाहै संग्रह करके इस काशीयात्रा को लिखाहै, यथासंभव काशीखंडके अध्याय और श्लोकोंका अंक भी लगादिया है जिसमें देखनेवालोंको विशेष सुविधा हो अस्तु यह काशीयात्रा शीघ्रतामें लिखी गई और अनेक ग्रंथोंसे संगृहीत है, इसलिये इसमें किसी उपयुक्त बातका छूटजाना अथवा अतिरिक्त विषयका आजाना कोई आश्चर्यकी बात नहींहै। अतएव विज्ञ लोगोंसे यह प्रार्थना है कि इसके भूलचूकोंको सुधार कर यदि मुझे सूचना देदेवेंगे तो यह पुस्तक शुद्धरूपसे कुछ और भी बढ़ाकर फिरसे मुद्रित होजावेगी।

इत्यलं पल्लवितेनेति शम्।

विनीत—

श्रीत्रिपाठि नारायणपति शर्म्मा।

काशी.

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्रीशौ वन्दे

काशीयात्रा ।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

विश्वेश्वरं माधव ढुण्ढिराजौ, श्रीदण्डपाणिं सह भैरवेण ।
काशीं गुहां देवधुनीं ग्रहेशं, वन्दे भवानीं मणिकर्णिकाञ्च ॥ १ ॥

श्रीकाशीखण्डमें काशीकी प्रायः सबी यात्रायें कही गई हैं, पर इन यात्राओंका विशेष रूपसे वर्णन अन्य अन्य पुराणादिकोंमें भी पाया जाताहै । यद्यपि काशीके यात्राविषय पर अनेक छोटे बड़े ग्रंथ बने और छपेहैं, पर सबी ग्रंथ सर्वांगपूर्ण नहीं देखपड़ते—इसीलिये यह एक छोटी सी यात्राविधि संक्षेपरूपसे लिखदीगई है, जिसमें यात्राभिलाषी लोगोंको बहुत ढूंढ़ेविनाही सामान्य विधि प्राप्त होजावे । क्योंकि जो लोग अन्यदेशसे काशीकी यात्रा करनेके लिये आते हैं वे स्वयं यात्राके विषयोंमें अनभिज्ञ (अनजान) होते हैं, और यात्रा करानेवाले यात्रावाल लोग भी प्रायः अपठित एवं आलसी होनेके कारण शुद्ध रीतिसे यात्रा नहीं कराते—इस लिये इस क्षुद्र पुस्तिकासे यदि उन लोगोंको कुछ सहायता मिलसके तो इसका लिखाजाना सफल होवे।

श्रीकाशीखण्डके सबे अध्यायमें यात्राओंकी विधि विहित है, (देखिये) यथा—

" न वन्ध्यं दिवसं कुर्याद्विना यात्रां क्वचित्कृती । "

अर्थात् पुण्यवान् जन बिना यात्राके कभी दिनको व्यर्थ नहीं होनेदेवे अतएव काशीवास करनेवालोंको प्रतिदिन यात्रा करनी चाहिये क्योंकि काशीखंडहीमें यह भी लिखाहै कि—

" यस्य वन्ध्यं दिनं यातं, काश्यां निवसतः सतः ।
निराशाः पितरस्तस्य, तस्मिन्नेव दिनेऽभवन् ॥ "

अर्थ—काशीवास करनेवाले जिस सज्जनका दिन व्यर्थ बीत जाताहै उस दिन उसके पितरगण निराश होजाते हैं (इसके विस्तार लिखनेकी आवश्यकता नहीं है, का० खं० १०० वां अध्याय देखलीजिए)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अब विदेशीय यात्रियोंको काशीयात्रा करनेके लिये तीर्थविधिके अनुसार अर्थात जब यात्रा करनी हो तो अपने घरमें गणेशादिपूजन और घृतश्राद्धादिक कर श्राद्धशेष घृत प्राशन पूर्वक कार्पटिक वेष धारण करके यात्राके लिये अपना ग्राम गोंठकर प्रस्थान करना चाहिए—फिर तीर्थमें पहुँचकर—उपवास, मुंडन, स्नान, श्राद्ध, दान एवं अवांतर तीर्थयात्राओंको करनाचाहिए, यात्राओंमें यान (सवारी) उपानह, छत्र, (जूता, छाता) इत्यादिका यथाशक्ति—परित्याग ही करना उचित है।

(स्त्रियोंको मुंडन नहीं कराना चाहिए क्योंकि उन लोगोंको केवल तीन अंगुल चोंटीका अग्रभाग ही कटादेनेकी विधि है)।

इन बातोंको प्रायः यात्री लोग जानतेहैं इससे इसका विस्तार नहीं लिखागया।

जो कोई अपने इष्ट—मित्र अथवा बन्धु—बांधवोंकी कुशमूर्ति बनाकर तीर्थमें नहवाताहै, उसे भी अष्टमांश फल होताहै एवं स्वयं काशीवास करनेकी अपेक्षा किसी कर्मनिष्ठ ब्राह्मणके, वास करानेमें और भी अधिक पुण्य होताहै जैसा कि "काशी-रहस्य" का वचन है—

"वस्तुः कोटिगुणं पुण्यं, काश्यां वासयितुर्ध्रुवम्।
आत्मानं तारयेद्वस्ता, तौ द्वौ वासयिता यतः॥"

अर्थ—काशीमें स्वयं वास करनेवालेसे वास करानेवालेको कडोर गुना पुण्य अधिक होता है, क्योंकि वासकरनेवाला तो केवल अपने ही को तारताहै, पर वासयिता अपनेको तथा जिसे वास कराताहै उसे—दोनोंहीका उद्धार करदेताहै (यही बात यात्राके विषयमें भी समझनी चाहिए)।

काशीसे मृत्तिका भी बाहर नहीं लेजाना चाहिए क्योंकि "काशीरहस्य" में उसका भी निषेध लिखाहै—

"काशीतो मृत्तिकान्यत्र, नेतुमिच्छति यः पुमान्।
कुलं वै पतितं तस्य, रौरवे चातिभैरवे॥"

अर्थ—जो कोई काशीसे मट्टी (भी) बाहर लेजाया चाहताहै, उसका कुल भयंकर रौरव नामक नरकमें गिरताहै—इस प्रकारके बहुतेरे वचन "विष्णुधर्मोत्तर" पुराण, एवं "सौभरीसंहिता" इत्यादिमें भी पाये जाते हैं।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यात्री लोगोंको अपना नित्य नियम समाप्त करके यथाविधि यात्रा करनी चाहिये यात्राके समयमें मौन होकर मनहीमन अपने इष्टदेवका नाम स्मरण करते रहना चाहिए—

अथवा काशीवासी लोगोंकी प्रथाके अनुसार एक साथ गोल बांध उच्चस्वरसे—

"हर ! हर ! महादेव ! शम्भो ! काशी विश्वनाथ गङ्गाः !"

इस वाक्यको कहते रहना चाहिये, क्योंकि अकेला यात्री तो सुखपूर्वक मौन रहसकता है, पर जब भीडभाडमें यात्रा करनी पडतीहै तो चुपके रहना कठिन होजाताहै, अत एव उक्त वाक्यको काशीवासी यात्रीगण मंत्ररूपसे उच्चस्वरमें कहते रहते हैं यह प्राचीन रीति है।

यात्रामें जहां जहां स्नान मार्जन तर्पण देवपूजन और दान इत्यादिक विहित है यात्रियोंको अपनी शक्तिके अनुसार अवश्यमेव करना चाहिये।

यात्राओंका वर्णन।

काशीखण्डमें कहा है कि गंगा—विश्वनाथकी यात्रा प्रतिदिन करनी चाहिये यथा

"यात्राद्वयं प्रयत्नेन, कर्तव्यं प्रतिवासरम् !
आदौ स्वर्गतरङ्गिण्या, स्ततोविश्वेशितुर्ध्रुवम् (का० १०० अ०)"

अर्थ—प्रतिदिन प्रयत्नपूर्वक दो यात्रायें अवश्य करनी चाहियें—पहिले तो गंगाजी (में स्नान) की और तब विश्वेश्वर (के दर्शन पूजन इत्यादि) की। अतएव इसे प्रधान यात्रा अथवा नित्यकर्म समझना चाहिये क्योंकि "काशीरहस्य" में भी ऐसाही वचन पाया जाताहै। यथा—

"चक्रपुष्करिणीतीर्थे, स्नातव्यं प्रतिवासरम्।
पत्रैः पुष्पैः फलैस्तोयैः, पूज्यो विश्वेश्वरः सदा॥"

अर्थ—प्रतिदिन मणिकर्णिका तीर्थमें स्नान करना चाहिये, और सदैव फल, फूल, जल, एवं (बिल्व) दलसे विश्वनाथकी पूजा करनी चाहिये। इस यात्राके करनेसे जो फल प्राप्त होता है, अथवा जिसे इसके करनेकी आवश्यकताहै वह बात भी "सनत्कुमार संहिता" के इस वचनसे स्पष्ट होजावेगी—

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यथा–"स्नात्वा मुमुक्षुर्मणिकर्णिकायां, मृडानि ! गङ्गाहृदये त्वदास्ये।
विश्वेश्वरं पश्यति योपि कोऽपि, शिवत्वमायाति पुनर्न जन्म॥"

अर्थ–जो कोई मोक्षार्थी श्रीगंगाजीके हृदयस्वरूप, और तुम्हारे मुखरूप (गौरीमुख) श्रीमणिकर्णिकातीर्थमें नहाकर भगवान् विश्वेश्वरका दर्शन करताहै, वह शिवरूप होजाताहै, हे पार्वति ! फिर उसका जन्म नहीं होता। यही यात्रा "काशीखंड"के अनुसार "एकायतनयात्रा" भी कहीगईहै यथा–अ० १००–

"दृश्यो विश्वेश्वरो नित्यं, स्नातव्या मणिकर्णिका।"

अर्थ–नित्य ही विश्वनाथका दर्शन और मणिकर्णिकाका स्नान करना चाहिए–यद्यपि मणिकर्णिकाकुंड गंगाजीके पश्चिमतट पर विराजमान है और उसमें ब्रह्मनालेका द्रव भी होता रहताहै, पर गंगाजीमें उस तीर्थके बहुत कुछ भाग मिलजानेसे वह मणिकर्णिका घाट कहाजाताहै–इसीलिये "सनत्कुमारसंहिताके" श्लोकमें–"गंगाहृदये" विशेषण भी दियाहै इससे मणिकर्णिकामें स्नानकरनेके जो वचन मिलेहैं उनमें गंगास्नानका विरोध नहीं समझना चाहिए–वरन इसी प्रकारसे दशाश्वमेधघाटमें रुद्रसरोवर अथवा ब्रह्मकुंड एवं पंचगंगाघाटमें धर्महृद भी गंगाहीमें मिलगयाहै–उसका पृथक् कोई चिह्न नहींहै–मणिकर्णिकामें प्रातःकालकी अपेक्षा मध्याह्नकालमें स्नानका विशेष माहात्म्य पायाजाताहै–इसके उदाहरण "काशीखंडमें" बहुतहैं–तथा "लिंगपुराण" में ऐसा कहाहै–

"प्रातः पञ्चनदे स्नात्वा, मध्याह्ने मणिकर्णिकाम्।"

अर्थ–प्रातःकाल पंचगंगा और दोपहरको मणिकर्णिकामें स्नान करे–योंही "शिवरहस्य" में भी यही बात मिलतीहै–यथा–

"प्रातर्दशाश्वमेधे च, मध्याह्ने मणिकर्णिकाम्।"

अर्थ–प्रातःकाल दशाश्वमेध एवं मध्याह्नमें मणिकर्णिकाका स्नान करना चाहिए।

केवल मणिकर्णिका स्नानका नाम एकतीर्थी यात्रा, पंचगंगा और मणिकर्णिकाके स्नानका नाम द्वितीर्थी यात्रा, एवं दशाश्वमेध, पंचगंगा और मणिकर्णिका स्नानका नाम त्रितीर्थी यात्रा कही गईहै–इसका प्रमाण "लिंगपुराण" में यथा–

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

काश्यां तीर्थत्रयी श्रेष्ठा, नित्यं सेव्या प्रयत्नतः।
आदौ स्नात्वा प्रयागे तु, पंचगंगां ततः परम् ॥
ततः पुष्कारिणीतीर्थे, स्नात्वा मुच्येत बन्धनात्[1]" ॥

अर्थ—काशीमें तीन तीर्थ (घाट) प्रधान हैं, पहिले तो प्रयाग (दशाश्वमेध) फिर पंचगंगा, तदनंतर मणिकर्णिका—इन सबोंमें स्नान करनेसे (मनुष्य भव) बंधनसे छूट जाताहै। (अथवा का० खं० अ० ६१ में ४३ से ४६ श्लो० तक)

योंही चतुस्तीर्थी यात्रा भी "काशीदर्पण"में काशीखण्डहीके अनुसार लिखी गईहै—यथा अ० ७५—श्लो. ४७ से ५५ लों—

"पुण्ये पिलिपिलाती[2]र्थे, त्रिसरित्परिसेविते।
स्नात्वा गृह्योक्तविधिना, तर्पणीयान्प्रतर्प्य च ॥
ततः पंचह्रदे स्नात्वा, मणिकर्णीह्रदे ततः।
ततो ज्ञानोदवाप्यां तु[3], स्नात्वा विश्वेशमर्चयेत् ॥
प्रायश्चित्तमिदं प्रोक्तं, महापापविशोधनम्।"

अर्थ—(गंगा, यमुना, सरस्वती अथवा नर्मदा—इन) तीन मिलीहुई नदियोंसे सेवित पुण्यमय पिलिपिलातीर्थ (त्रिलोचनघाट) में गृह्यसूत्र—इत्यादिकी कहीहुई विधिके अनुसार स्नान एवं पितरगणका तर्पण कर फिर पंचगंगा और मणिकर्णिकामें नहावे, तदनंतर ज्ञानवापीमें स्नान करके श्रीविश्वनाथजीकी पूजा करे, इस (यात्रा) को बड़े बड़े पापोंका शोधनेवाला प्रायश्चित्त कहाहै ॥

इसी प्रकारसे पांचभौतिक शरीरके शुद्ध करनेके लिये पंचतीर्थी यात्रा भी काशीखंडके ८४ अध्यायमें १०७—११४ श्लोक तक कहीगईहै; यथा—

" प्रथमं चासिसंभेदं तीर्थानां प्रवरं परम्।
ततो दशाश्वमेधाख्यं सर्वतीर्थनिषेवितम् ॥
ततः पादोदकं तीर्थं मादिकेशवसन्निधौ।
ततः पञ्चनदः पुण्यः स्नानमात्रादघौघहृत् ॥

---

१ इन तीनों प्रधान घाटोंके चित्र (फोटो) भी काशीखंडके अध्यायोंकी अंक सूचना—और तीर्थसीमाके परिमाण वचनोंके सहित इसी ग्रंथमें लगे हैं—[उन्हें देखलीजिए]। २ नाम्नि। ३ "ततो विश्वेशमभ्यर्च्य प्राप्नोति सुकृतं महत्।" काशीखंडमें यही पाठ है—यहांपर पाठान्तर हीं स्वीकृत और अपेक्षित है—।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

एतेषामपि तीर्थानां चतुर्णामपि सत्तमम्।
पञ्चमं मणिकर्ण्याख्यं मनोवाक्कायशुद्धिदम्॥
पञ्चतीर्थ्यां नरः स्नात्वा न देहं पाञ्चभौतिकम्।
गृह्णाति जातुचित्काश्यां पञ्चास्यो वाभिजायते॥"

अर्थ—प्रथम तो समस्त तीर्थोंमें परम श्रेष्ठ असिसंगम है, तब सब तीर्थोंसे सुसेवित दशाश्वमेध है। फिर आदि केशवजी (वरनासंगम) के पासहीमें पादोदक तीर्थ है, तदनंतर स्नानमात्रसे समस्त पापपुंजोंका हरण करनेवाला पवित्र पंचनद (पंचगंगा) तीर्थ है। इन चारोंही तीर्थोंसे बहुत उत्तम पांचवां (पंचस्वरूप) मणिकर्णिका तीर्थ है, जो मन वचन और शरीरको भी शुद्ध करदेता है। मनुष्य काशीके इन पांचों तीर्थोंमें नहालेनेसे फिर कभी पंचभूत-रचित देहको नहीं ग्रहण करता, यदि (कुछ) होताहै तो साक्षात् पंचमुख शिवही बनजाता है। (यह यात्रा काशीमें बहुतही प्रचलित है प्रायः पर्वोंमें इसे बहुत लोग नौकापर चढ़कर करतेहैं।) इसी यात्रामें गौरीकुंड केदारघाट और पिलिपिलातीर्थ त्रिलोचनघाटको भी मिलादेवे तो यही पंचतीर्थीसे सप्ततीर्थी यात्रा होजातीहै, इस रीतिसे यह एकतीर्थीसे लेकर सप्ततीर्थी पर्यन्तकी यात्रायें हुई।

अब आयतन यात्रायें लिखी जाती हैं।

इनकी विधि यह है कि,कहीं भी गंगा इत्यादि तीर्थमें स्नान करके भगवान् विश्वेश्वरका दर्शन पूजन करलेवे तो उसका नाम एकायतन यात्राहै जैसा कि, पूर्वमें सप्रमाण लिखा गया है, इसलिये "नन्दिपुराणोक्त" द्वियायतनयात्राकी यह विधि है, यथा—

"मणिकर्ण्यां नरः स्नात्वा मणिकर्णीशमर्चयेत्।
ततो वाप्यां नरः स्नात्वा विश्वेशं पूजयेत्तु यः॥
सर्वपापविनिर्मुक्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते।" (१)

अर्थ—मणिकर्णिकामें स्नान कर जो नर मणिकर्णिकेश्वरका पूजन करे, फिर ज्ञानवापीमें नहाकर विश्वेश्वरकी पूजा करे तो वह मनुष्य ब्रह्मस्वरूप होजाताहै।

इसी भांति त्र्यायतनयात्रा भी "लिङ्गपुराण" में कहीगईहै—

"अविमुक्तञ्च स्वर्लीनं तथा मध्यमकं पदम्।
एतल्लिङ्गत्रयं देवि! दृष्ट्वा पापानि नंक्ष्यति"॥ (१)

(१) इन सब लिंगोंके स्थानादिका पता चतुर्दशायतन यात्राकी विधिमें देखना चाहिये जो चतुर्दशीके प्रकरणमें लिखीगई है।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अर्थ—हे देवि! अविमुक्तेश्वर, स्वर्लीनेश्वर, और मध्यमेश्वर इन तीनोंही लिंगोंके दर्शनसे समस्त पाप नष्ट होजाते हैं। योंही चतुरायतन एवं पंचायतन यात्रा भी उक्त 'लिंगपुराण'हीमें पाईजातीहैं, यथा—

"शैलेशं सङ्गमेशञ्च, स्वर्लीनं मध्यमेश्वरम्।
दृष्ट्वा न जायते मर्त्यः, संसारे दुःखसागरे॥" (१)

अर्थ—शैलेश्वर, संगमेश्वर, स्वर्लीनेश्वर, और मध्यमेश्वर—इन (चारों लिंगों) के दर्शन करलेनेसे मनुष्य दुःखके सागररूप संसारमें (फिर) नहीं उत्पन्न होता। पञ्चायतनयात्रा यथा—

"कृत्तिवासो मध्यमेश, ओङ्कारश्च कपर्दिकः।
विश्वेश्वर इति ज्ञेयं पञ्चायतनमुत्तमम्"॥ (१)

अर्थ—कृत्तिवासेश्वर, मध्यमेश्वर, ओंकारेश्वर, कपर्दीश्वर और विश्वेश्वर—इन्हींको उत्तम पंचायतन समझना चाहिए। इसी पंचायतनमें केदारेश्वर और त्रिलोचनेश्वरको मिलादेनेसे सप्तायतन यात्रा होजातीहै, जैसा कि सप्ततीर्थीके विषयमें कहाजाचुकाहै। यद्यपि बहुतेरी यात्राओंके लिये तिथि वार इत्यादिके भी नियम कहेगयेहैं, जो कि यथाक्रम आगे लिखेजावेंगे, पर यात्रार्थी लोगोंको उचित है कि जभी श्रद्धा होवे तभी सब यात्राओंको यथाशक्ति करड़ालें—हां; पर्वइत्यादि पर लिखित यात्राओंके करनेसे अवश्य विशेष पुण्य—लाभ होताहै। पर इन उक्त पंचतीर्थी—अथवा पंचायतन इत्यादि यात्राओंके लिये तिथ्यादिके कोई विशेष नियम नहीं कहे हैं, अतएव इन सबोंको लोग प्रायः सर्वदैव करते रहते हैं।

अब वर्ष, अयन, ऋतु, मास, पक्ष, तिथि, वार एवं नक्षत्र—योगादिककी यात्रायें यथाक्रम लिखीजातीहैं।

इन यात्राओंमें पहिले वार्षिकयात्रायें चैत्रमासके शुक्लपक्ष वर्षारंभ दिनसे क्रमपूर्वक लिखीजाती हैं। (ये यात्रायें जो लिखीजाती हैं प्रायः दिनमें स्नानोत्तर की जातीहैं पर फाल्गुन और श्रावण इत्यादि—मासोंमें प्रायः विश्वेश्वरादि देवस्थानोंमें वार्षिक शृंगारोत्सव भी होताहै जिसमें प्रायः रातहीमें दर्शन किया जाताहै पर वे सब शृंगारोत्सव शिष्टाचारके अनुसार होतेहैं अतएव उनका वर्णन इस वार्षिकयात्रामें यद्यपि छोड़दियागयाहै पर पृथक् करके थोड़ासा लिख भी दिया गया है।)

१इन सब लिंगोंके भी स्थानादिकाका पता चतुर्दशीके प्रकरणमें चतुर्दशादि आयतनोंमें वर्णन कियागयाहै।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देवयात्रा नाम.	स्थानादि (पता).	मासतिथि.	पुराण–प्रमाण.
श्रीदुर्गादेवी	दुर्गाकुंड	चैत्र शु. १ से ९ तक	का. खं. ७२ अ. ८३ श्लो.
मंगलागौरी	लक्ष्मणबाला घाटपर	चैत्र शु. ३	का. खं. ४९ अ. ८० श्लो.
चित्रघण्टा	चौकसे पूर्व, चन्दूकी गलीमें	,,	का. खं. ७० अ. ४१ श्लो.
पार्वतीश्वर	त्रिलोचनके समीप	,,	का. खं. ९० अ. २२ श्लो.
अन्नपूर्णादेवी	विश्वनाथके पास प्रसिद्ध	चैत्र शु. ८	का. खं. ६१ अ. १२६ श्लो. एवं (शिवपुराणखंड ६ अ. १)
महामुण्डा	जेत पुराके समीप	,,	का. खं. ६६ अ. १६ श्लो.
मध्यमेश्वर	गनेसगंज (कंपिनीबाग)	,,	का. खं. ९७ अ. १९० श्लो.
सुभद्रादेवी	चन्द्रकूपके समीप	,,	नन्दिपुराण (अप्रचलित)
राम (जन्म)	रामघाट	चैत्र शु. (राम) ९	का. खं. ८४ अ. ६९ श्लो.
कामेश्वर	मछोदरीके पासही गलीमें	चैत्रशु. १३ (शनि-प्रदोष)	का. खं. ८५ अ. ७५ श्लो. तथा का. खं. ९७ अ. ९७ श्लो.
पशुपतीश्वर	इसी नामका महाल है	चैत्रशु. १४	का. खं. ६१ अ. १०९ श्लो.
कृत्तिवासेश्वर	हरतीरथ–वृद्धकालपर	चैत्री पूर्णिमा.	का. खं. ६८ अ. ५१ श्लो. एवं (शिवपुराणखंड ५ अ. ५५)
चन्द्रेश्वर	सिद्धेसरी–चन्द्रकूप	,,	का. खं. १४ अ. ६१ श्लो.
पंचमुद्रादेवी	पंचगंगा घाट	वैशाख कृ. ८	नन्दिपुराण (अप्रसिद्ध)
त्रिलोचन	तिलोचनघाट	वैशाखशु.(अक्षय) ३	का. खं. ७५ अ. ६७ श्लो.
परशुरामेश्वर	नंदनसाहु	,,	का. खं. ८३ अ. ७५।७६ श्लो.
ओंकारेश्वर	मछोदरीके उत्तर, महाल हुक्काले-सन प्रसिद्धहै	वैशाखशु. १४	का. खं. ७४ अ. १०० श्लो. (कूर्मपु. ब्राह्मीसंहिता अ. ३। शिवपु. लिंगपुराणादि)
नृसिंह	पहलादघाट	,,	का. खं. ६१ अ. वा शिष्टाचार (नृसिंहलीलाभी होतीहै)
ज्येष्ठविनायक	कासीपुरा (कर्णघंटा)	ज्येष्ठशु. ४	का. खं. ५७ अ. १०३ श्लोक चतुर्दशी कहीहै।
ज्येष्ठागौरी	,,	ज्येष्ठशु. ८	का. खं. ६३ अ. १४ श्लो.
दशाश्वमेधेश्वर	दसासुमेधघाट	ज्येष्ठशु. १ से १० लों	का. खं. ५२ अ. ९२ श्लो. (शिवपुराणखंड ६ अ. ९)
गंगेश्वर	ज्ञानवापीके पूर्व पीपरतर.	ज्येष्ठशु. १०	का. खं. ९१ अ. ५ श्लो.
ज्येष्ठेश्वर	कासीपुरा (कर्णघंटा)	ज्येष्ठशु. १४	का. खं. ६३ अ. ९ श्लो.
रथयात्रा	१ राजातालावपर २ बेनीरामका बगीचा ३ सूरजकुंड।	आषाढशु. २ से ४ पर्यन्त	शिष्टाचारप्रमाणसे जगन्नाथ दर्शनका बहुत बडा मेला।
आषाढीश्वर	कासीपुरा राजाबेंतियाके घेरेमें शिवालयके पीछे	आषाढशु. १४ अथवा १५	का. खं. ५५ अ. २९ श्लो.
व्यासेश्वर	करनघंटापर	आषाढीपूर्णिमा	का. खं. ९५ अ. ७४ श्लो.
वृद्धकाल	दारानगरमें प्रसिद्ध	श्रावणके प्रति रविवारको	का. खं. २४ अ. में कथाहै

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देवयात्रा नाम	स्थानादि (पता)	मासतिथि.	पुराण-प्रमाण.
केदारेश्वर	केदारघाट	श्रावणके प्रति सोमवारको	का. खं. ७७ अ. एवं शिवरहस्य में उक्त दिनकी यात्रा है.
सारनाथ	प्रसिद्ध	,,	शिष्टाचार (मेला)
दुर्गादेवी	दुर्गाकुंड	श्रावणके प्रति मंगलादिकवार	देवीभागवत तथा शिष्टाचार
नागयात्रा (वा) वासुकीश्वर	नागकूंआ (अथवा) कर्कोटकवापी	श्रावणशु. ५ (नाग पंचैया)	का. खं. ६६ अ. १० श्लो. तथा (वाराहपुराण अ. २४ भविष्यपु. अ. ३०।३४ और शिवरहस्य इत्यादि)
(आदि) महादेव	त्रिलोचनके पास	श्रावणशु. १४	का. खं. ६९ अ. ३५ श्लो. (पवित्रारोपण)
विशालाक्षी	धरमकूपके समीप	भाद्रकृ. ३	का. खं. ७० अ. ९ श्लो.
आग्नीध्रेश्वर	इसरगंगीपर प्रसिद्ध (जागेश्वर)	भाद्रकृ. ६	शिष्टाचार।
कृष्ण (जन्म)	आदिकेशवसे बिन्दुमाधवलों (गोपालमंदिर इत्यादि)	भाद्रकृ. ८ (जन्माष्टमी)	का. खं. ६१ अ. में विष्णुतीर्थ कहेहैं। शिष्टाचार।
ऋणमोचन	हनुमानफाटक	भाद्रकृष्ण १५	शिष्टाचार।
मंगलागौरी	लक्ष्मणबालाघाट	भाद्रशु. ३	,,
गणेश	बडेगनेस	भाद्रशु. ४	शिवरहस्य तथा गणेशपुराण।
लोलार्क	भदैनीमें प्रसिद्ध	भाद्रशु. ६	का. खं. ४६ अ. में अगहन मास कहाहै। शिष्टाचार।
महालक्ष्मी	लछिमीकुंड	भाद्रशु. ८ से आश्विनकृ. ८ तक	का. खं. ७० अ. ६७ श्लो. (एवं भविष्योत्तरपुराण)
कुलस्तंभ	लाटभैरोपर	भाद्रशु. १५	का. खं. १०० अ. ९९ श्लो.
ललितादेवी	ललिताघाट	आश्विनकृ. २	का. ख. ७० अ. २० श्लो.
लक्ष्मीगोपाल	लक्ष्मीकुंडसे उत्तर-बीहट्टामें	आश्विनकृ. ८ (सोरहियामेला)	वायुपुराणकी लक्ष्मी संहितामें वर्णनहै।
मातृदेवी	ललापुर-माताकुंड	आश्विनकृ. ९	का. खं. ९७ अ. २४५-४६ श्लो.
पित्रीश्वर	पितरकुंडा	पितृपक्षमें पिताकी मरणतिथीको	का. खं. ९७ अ. २३५ श्लो. (शिष्टाचार)
विश्वभुजागौरी	धरमकूपके पास	आश्विनशु. १ से ९ तक नवरात्रभर	का. खं. ७० अ. २३ श्लो. (तथा का. खं. ८० अ. ३० श्लो. शुक्ला तृतीयाकी कथाहै)
दुर्गादेवी	दुर्गाकुंड	,,	का. खं. ७२ अ. ८७ श्लो.
नवदुर्गा (१)	भिन्न भिन्न ९ स्थान	,,	देवीभा. और बाराहपुराणादिक।
चतुष्षष्टी (२)	चौंसठी घाटऔर कुछ स्थान भिन्न भिन्न हैं	,,	का. खं. ४९ अ. ४८ श्लो.

(१) नवमीकी यात्रा देखिये। (२) चैत्रकृ. १ की यात्रा देखिये।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देवयात्रा नाम.	स्थानादि (पता).	मासतिथि.	पुराण-प्रमाण.
हनुमान्	हनुमानघाट इत्यादि	कार्तिक. कृ. १४	शिष्टाचार
यमेश्वर	जमघाट	कार्तिकशु. २	का.खं.९१अ.११० श्लो. (पर—यमद्वितीया नहीं कहीहै)
धर्मेश्वर	धरमकूपपर	कार्तिकशु. ८	का. खं. ७८ अ. ९९ श्लो.
बिन्दुमाधव	पंचगंगाघाट	कार्तिकशु. ११ से १५ पर्यन्त (भीष्मपंचकभर)	का. खं. ९९ और ६० अ. एवं पद्मपुराणादि।
विश्वेश्वर	प्रसिद्ध	कार्तिकशु.१४ (वैकुंठचतुर्दशी)	का. खं. २१ अ. ११० श्लो.
काशीमहायात्रा	काशीभर सर्वत्र	कार्तिकी पूर्णिमा	का खं. २१ अ. १०९ श्लो.
स्वामिकार्तिक	केदारघाट पर	,,	का. खं. ६१ अ. १२० श्लो.
कालभैरव	प्रसिद्ध भैरवनाथ	अगहनकृ. ८	का. खं. ३१ अ. १४६ श्लो.
मालतीश्वर	वृद्धकालके घेरेमें	अगहनशु. ६	का. खं. ९७ अ. १३५ श्लो.
कालमाधव	भैरवनाथके पास	अगहनशु. ११	का. खं. ६१ अ. १८७ श्लो.
पादोदकतीर्थ	वरनासंगमके पास	अगहनशु. ११ से पूर्णिमा १५ तक	नन्दिपुराण।
कपर्दीश्वर	पिशाचमोचन	अगहनशु. १४	का. खं. ५४ अ. ७७ श्लो. वामनपु. ३अ.। एवं सनत्कुमार संहिता—इत्यादि (लोटाभंटा-मेला)।
गोपीगोविन्द	लालघाट	अगहनशु. १५	का. खं. ६१ अ. १९ श्लो.
नगरप्रदक्षिणा	(वरनाका) चौकाघाट	,,	काशीरहस्य।
उत्तरार्क	अलईपुर	पौषके रविवार	का. खं. ४७ अ. ५७ श्लो. (यह बकरियाकुंडकी यात्रा लुप्त होकर जेठके रविवारको गाजीमीयांके ब्याहके नामसे प्रसिद्ध है)
विधीश्वर	अगस्तकुंडाके पास	पौषकी सप्तमी	नन्दिपुराण (अप्रसिद्ध)
नरनारायण	महथाघाट	पौषशु. १५	का. खं. ६१ अ. १६ श्लो.
गणेश	बडेगनेस प्रसिद्ध	माघकृ. ४	का.खं.१००अ. ७३।७४श्लो.
ढुंढिराज	विश्वेश्वरके पासप्रसिद्ध	माघशु. ४	का. खं. ५७ अ. ४८ श्लो. लिंगपुराण, कूर्मपुराण, एवं त्रिस्थलीसेतु।
मुखप्रेक्षणिका	मंगलागौरीके पास	,,	लिंगपुराण (अप्रचलित) (का. खं. ९७ अ. १८८ श्लो.)
लोलार्क	भदैनीमें प्रसिद्ध	माघशु. ७	का. खं. ४६ अ. ५५ श्लो. (वामनपुराण १५ अ.)
केशवादित्य	वरनासंगम	माघशु. सप्त. ७	का.खं.५१अ. ७६।७७ श्लो.

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

काशीवासी लोग प्रायः अगहन और फाल्गुनमासमें इस यात्राको करतेहैं। फाल्गुनमें ठाकुरजी भी पंचक्रोशीयात्रा करतेहैं—इससे प्रत्येक निवास स्थानोंपर रामलीला, कृष्णलीला और गाना बजाना भी होता जाताहै। प्रायः अधिमास (लवन) में विशेष बाहरी यात्री भी आजातेहैं—पर यों तो सबी मासोंमें यात्रीलोग पंचक्रोशी करतेही रहतेहैं। वास्तवमें जब जी चाहे तभी यात्रा करडालना चाहिये, क्योंकि "काशीरहस्य" में ऐसा ही वचन भी मिलता है यथा—

"यथा कथञ्चिद्देवेशि! पञ्चक्रोशप्रदक्षिणम्।
कुर्यादेव न मासादि, चिन्तयेद्धर्मकोविदः॥
स एव शुभदः कालो, यस्मिञ्श्रद्धोदयो भवेत्।"

अर्थ—जैसे बनपड़े वैसे ही पंचक्रोशकी प्रदक्षिणा करे धार्मिक जन मास इत्यादिकी कुछ भी चिंता नहीं करे, क्योंकि वही काल शुभप्रद है जब कि (चित्तमें) श्रद्धाका उदय होजावे। इसी भाँतिसे इस पंचक्रोशीयात्राकी चाल भी प्रचलितहै। और उसका माहात्म्य—"काशीरहस्य" में अधिक वर्णित है। एवं "नारदीयपुराण"का यह श्लोक पंचक्रोशीयात्राका प्रयोजन भी बतलारहाहै यथा—

"काशीप्रदक्षिणा येन, कृता त्रैलोक्यपावनी।
सप्तद्वीपा साब्धिशैला, कृता तेन प्रदक्षिणा॥"

अर्थात् जिसने त्रैलोक्यपावनी काशीपुरीकी प्रदक्षिणाको करलिया, वह सातों द्वीप, समुद्र और पर्वतोंके सहित (भूमंडलभरकी) प्रदक्षिणा करचुका।

यद्यपि "काशीरहस्य"में एक दो तीन और चार दिनोंका वास पंचक्रोशीके मार्गमें कहाहै, एवं "शिवरहस्य"में सात दिनोंतककी आज्ञाहै, पर प्रायः लोग तीन अथवा पांच निवास करते हैं। इस यात्रामें देवदर्शन इत्यादिके लिये ऐसा जाना और लौटकर आना चाहिये जिसमें प्रदक्षिणामें तिलमात्र भी भूमी छूटने नहीं पावे। यात्रीको पंचक्रोशीमें ब्रह्मचर्यसे रहना और सीमाके बाहर मलमूत्रका त्याग करना उचितहै इसका विशेष वर्णन उक्त "काशीरहस्य"के दसवें अध्यायमें लिखाहै एवं यात्राका प्रकार भी यों कहाहै—

पंचक्रोशी यात्राविधि।

यात्रीगण पंचक्रोशी जानेसे एक दिन पूर्वही गंगास्नान और नित्य यात्रा कर मुक्तिमंडप (ज्ञानवापी) में जाय संकल्पपूर्वक ढुण्डिराजका पूजन करें। हो सके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तो उस दिन अन्तर्गृही यात्रा भी करडालें। एक बार हविष्य भोजन करें, फिर दूसरे दिन स्नान एवं नित्य नियम समाप्तकर, मुक्तिमंडपमें जाय इस प्रकारसे प्रतिज्ञा करें कि "मानसिक वाचिक कायिक ज्ञात और अज्ञात पापोंके शुद्ध्यर्थ एवं पुण्यलाभार्थ, पंचक्रोशात्मक ज्योतिर्लिङ्गस्वरूप विश्वनाथ, अन्नपूर्णा लक्ष्मीनारायण ढुंडिराजादि छप्पन विनायक, द्वादश आदित्य, नृसिंह केशव (तीन) राम कृष्ण कूर्म मत्स्यादि अवतारोंसे युक्त विष्णु, अनेक शिव, और गौरी इत्यादि समस्त देवतोंसे परिपूर्ण इस क्षेत्रकी प्रदक्षिणा हम करतेहैं-"इसी रीतिसे संकल्प कर विश्वेश्वरसे यह प्रार्थना करें-

"पञ्चक्रोशस्य यात्रां वै, करिष्ये विधिपूर्वकम्।
प्रीत्यर्थं तव देवेश! सर्वाघौघप्रशान्तये॥"

अर्थ—हे महादेव! मैं आपकी प्रसन्नता और समस्त पापपुंजके शान्त्यर्थ विधिपूर्वक पंचक्रोशीयात्राको करूंगा। ऐसी प्रार्थना कर, मौन हो फिर ढुंडिराजको पूजा करके उनसे आज्ञा मांगें यथा—

"ढुण्ढिराज! गणेशान! महाविघ्नौघनाशन!
पञ्चक्रोशस्य यात्रार्थं, देह्याज्ञां कृपया विभो!"

अर्थ—हे ढुंढिराज गणेश! आप बडे बड़े विघ्नसमूहोंके विनाशक हैं, अत एव हे विभो! कृपाकरके मुझे पंचक्रोशकी यात्राके लिये आज्ञा दीजिए। इसके उपरांत विश्वेश्वरको तीन प्रदक्षिणा और साष्टांग प्रणाम करके मोदादि पंच विनायक, दण्डपाणि और कालभैरवका पूजन एवं फिरसे विश्वेश्वरकी पूजा कर मणिकर्णिका पर जाय पुनः स्नान करके परिक्रमाके लिये चलना चाहिए—मार्गमें इन सब देवतोंका दर्शन और (यथासंभव) पूजन करना उचित है।

देवतोंके नाम.				स्थान.
मणिकर्णिकेश्वर...	...	...	...	मनिकनिकाघाट।
सिद्धिविनायक ...	...	...	...	"
गंगाकेशव ...	...	...	...	ललिताघाट।
ललितादेवी ...	...	...	...	"
जरासन्धेश्वेर ...	...	...	...	मीरघाट।
सोमनाथ ...	...	...	...	मानमंदिरघाट।
दालभ्येश्वर ...	...	...	...	"
शूलटंकेश्वर ...	...	...	...	दशाश्वमेधघाट।
(आदि) वाराहेश्वर ...	...	...	...	"

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दशाश्वमेधेश्वर...	...	...	...	दशाश्वमेध--शीतलाके मंदिरमें।
बन्दीदेवी	...	...	...	प्रयागेश्वरके मन्दिरमें।
सर्वेश्वर	...	...	...	पांडे घाटके पासमें।
केदारेश्वर	...	...	...	केदारघाट।
हनुमदीश्वर	...	...	...	हनुमानघाट।
सङ्गमेश्वर	...	...	...	अस्सीसंगम।
अर्कविनायक	...	...	...	लोलार्कके समीप
लोलार्क	...	...	...	भदैनीमें प्रसिद्ध।
दुर्गाकुण्ड	...	...	...	प्रथम निवास लिखाहै पर-अब लोग वहाँ नहीं टिकते कँदवा चले जातेहैं। पर नगवामें एक धर्मशालाहै।
दुर्गाविनायक	..	...	...	दुर्गाकुंड।
दुर्गादेवी				प्रसिद्ध, (यहांपर ब्राह्मणोंको पायस और लड्डू खिलाना चाहिये एवं इस मंत्रसे दुर्गाजीकी प्रार्थना करनी चाहिए)

"जय दुर्गे! महादेवि! जय काशिनिवासिनि!।
क्षेत्रविघ्नहरे! देवि! पुनर्दर्शनमस्तु ते॥"

अर्थ--हे महादेवि दुर्गे! जय, हे काशीनिवासिनि! जय, देवि! आप क्षेत्रके विघ्नोंको हरलेतीहो, (अतः आपसे प्रार्थना है कि,) फिर आपका दर्शन होवे। (यह कहकर आगे चले--)

विष्वक्सेनेश्वर	...	मार्गके करमैतापुर गांवमें।
कर्दमेश्वर	...	कँदवाँ गांव, (पंचव्रीहि और तिल चढ़ावै)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कर्दमतीर्थ	...	कँदवाँका पोखरा (में नहावे)
कर्दमकूप	...	(में अपना मुख देखे)
सोमनाथ	...	कंदवामें
विरूपाक्ष	...	,,
नीलकंठेश्वर	...	,, कंदवांमें अब पहिली टिकान होतीहै, (कइक धर्मशालायेंहै, बाजार भी है-)

कर्दमेश्वरसे यह प्रार्थना करनी चाहिये-

"कर्दमेश ! महादेव ! काशिवासिजनप्रिय!
त्वत्पूजनान्महादेव ! पुनर्दर्शनमस्तु ते ॥"

(इसका अर्थ बहुत स्पष्ट है—इससे आगे लिखतेहैं

नागनाथ	...	...	अमरागांवमें ।
चामुंडादेवी	...	...	अवड़ेगांवमें ।
मोक्षेश्वर	...	...	,,
करुणेश्वर	...	...	,,
वीरभद्रेश्वर	...	...	देलहनागांवमें ।
विकटादुर्गा	...	...	,,
उन्मत्तभैरव	...	...	देउरागांवमें ।
नीलगण	...	...	,,
कालकूटगण	...	...	,,
विमलादुर्गा	...	...	,,
महादेव	...	...	,,
नन्दिकेश्वर	...	...	,,
भृंगिरिटिगण	...	...	,,
गणप्रिय	...	...	,,
विरूपाक्ष	...	...	गौरागांवमें ।
यज्ञेश्वर	...	...	चक्कमातलदेई ।
विमलेश्वर	...	...	पयागपुरमें ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मोक्षदेश्वर	...	...	"
ज्ञानदेश्वर	...	...	"
अमृतेश्वर	...	...	अस्सवारीगांवमें।
गन्धर्वसागर	...	...	भीमचंडी (गांव) वालापोखरा।
भीमचंडीदेवी	...	...	(यहींपर अब दूसरा बास होताहै) (अनेक धर्मशालायें और बाजार भी है)
(भीम) चंडविनायक		...	" (तालुकाजाक्खिनीमें)
रविरक्ताक्षगंधर्व	...	...	"
नरकार्णवतारणशिव		...	" (उक्त भीमचंडीकी प्रार्थना यह है)

"भीमचण्डि! प्रचण्डानि, मम विघ्नानि नाशय।
नमस्तेऽस्तु गमिष्यामि, पुनर्दर्शनमस्तु ते॥"

अर्थ स्पष्टहै।

एकपादगण	...	...	कचनार गांवमें (तिल अक्षत चढ़ावे)
महाभीम	...	...	हरैंका तालाब (हरपुरगांव)
भैरवनाथ	...	...	हरसोसगांवमें।
भैरवीदेवी	...	...	"
भूतनाथेश्वर	...	...	दीनदासपुरा।
सोमनाथेश्वर	...	...	"प्रसिद्ध, (लंगोटिया हनुमानजी)
सिन्धुरोधसतीर्थ	...	...	सिन्धुसागर पोखरा प्रसिद्धहै,(यहां भी एक धर्मशाला है)
कालनाथ	...	...	जनसागांव।
कपर्दीश्वर	...	...	" (आगेक्रमसे)
कामेश्वर	...	...	चौखंडी गांव।
गणेश्वर	...	...	"
वीरभद्रगण	...	...	"
चारुमुखगण	...	...	"
गणनाथेश्वर	...	...	भटौली गांव।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देहलीविनायक	... ...	प्रसिद्ध (इनको लड्डू लावा ऊंख और सत्तू चढ़ावे) यहांपर सात दिनकी यात्रावाले टिकतेहैं (एक धर्मशाला भी है)
षोडशविनायक	... ...	डेवढिया विनायकके पासहीमें है।
उद्दण्डविनायक	... ...	आंगे मार्गमें (भुइलीगांव)
उत्कलेश्वर	... ...	हीरामपुरगांवमें।
रुद्राणीदेवी	... ...	आगे मार्गमें।
तपोभूमी	... ...	मार्गमें (रुद्राणीदेवीकी तपोभूभीहै)
वरणानदी	... ...	रामेसरगांवमें (वहां स्नान तर्पण करे)
रामेश्वर	... ...	प्रसिद्धहैं (श्वेततिलबिल्वपत्रसे पूजा करे)
सोमेश्वर	... ...	रामेश्वरके पासहीमें।
भरतेश्वर	... ...	"
लक्ष्मणेश्वर	... ...	"
शत्रुघ्नेश्वर	... ...	"
यावाभूमीश्वर	... ...	"
नहुषेश्वर	... ...	"रामेश्वरमें प्रधान वास है एकही वास करनेवाले भी यहीं टिकतेहैं यहांपर कईएक धर्मशालायें हैं. रामेश्वरसे प्रार्थनाका यह मंत्रहै--

"श्रीरामेश्वर ! रामेण, पूजितस्त्वं सनातन !
आज्ञां देहि महादेव ! पुनर्दर्शनमस्तु ते" ॥

अर्थ—हे रामेश्वर ! आप सनातन देव हैं आ
श्रीरामचन्द्रजीसे पूजितहैं, हे महादेव ! आप
आज्ञा देवें कि, फिर आपका दर्शन होवे—(ऐ
प्रार्थना कर वरना पार जाना—पुल बंधा है)

असंख्यात तीर्थ लिंग	...	वरनापार (भुलनीवारी) के आसपास
देवसंघेश्वर	...	करोमागांव—

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(विशेष--जैसे दुर्गाकुंडका वास छूटगयाहै वैसेही शिव-पुरमें जहांपर द्रौपदीकुंडके समीप पंचपांडवोंके नामांकित पांच लिंग विराजमान हैं, चतुर्थ निवास होताहै बरन यहांपर नगरवाले अपने घरके यात्रियोंसे मिलनेके लिये शिवपुर जाते हैं, अनुमानसे यही सिद्ध होताहै कि इसी कारणसे वहां टिकान होगयाहै--यहांपर कइएक धर्मशाला--बाजार पोखरा इत्यादि हैं--पर इस निवासकी चर्चा "काशीरहस्य" इत्यादिमें नहीं है--और ठाकुरजी तो आगे बढकर सारंगतालाव पर भी एक दिन टिकते हैं)।

पाशपाणिगणेश ... सदर बाजार (लैन) के पास।

पृथिवीश्वर ... खजुरीगांव (पिसनहारियाके कुँआके पास)।

स्वर्गभूमी ... वही स्थान, (इसीके आगे ठाकुरजीका पंचम निवास सारंग तालाव पर होताहै वहां एक छोटीसी धर्मशाला भी है पर और यात्री लोग नहीं टिकते शिवपुरसे सीधे कपिलधारा चले जाते हैं)।

यूपसरोवर (तीर्थ)... दीनदयालपुरामें।

कपिलधारातीर्थ ... (पंचवाँवासस्थान अनेक धर्मशालायें और बाजार इत्यादि हैं.) (काशीखंड ६२ वां अध्याय)

वृषभध्वजेश्वर ... कपिलधारा (गांव) प्रसिद्धस्थान। अंतिम निवास। प्रार्थना मंत्र यों है--

"वृषभध्वज ! देवेश ! पितृणां मुक्तिदायक !
आज्ञां देहि महादेव ! पुनर्दर्शनमस्तु ते ॥"

अर्थ स्पष्ट है--यह पितरोंका बड़ा प्यारा और मुक्तिदायक तीर्थ है, काशीमें जैसे सब तीर्थोंका वास है वैसे यहांपर गयातीर्थ रहताहै, इसीसे इसका नाम "शिवगया" प्रसिद्ध है, यहांपर तर्पणश्राद्ध और ब्राह्मणभोजनादि यथाशक्ति कराना चाहिये।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ज्वालानृसिंह	... ...	कोटवां गांव।
वरणासंगम	... ...	फुटहीकोटके नीचे, यहां नदी बंधजाने पर सूखी रहतीहै नहीं तो नावसे वरनापार होना चाहिए, संगम पर स्नान अथवा मार्जन अवश्य करे।
आदिकेशव	... ...	वरनासंगमके समीप फुटहीकोटके कोन पर।
संगमेश्वर	... ...	आदिकेशवसे नीचेके मन्दिरमें।
खर्वविनायक	... ...	फुटहीकोट (वा किला) के भीतर-(यहांसे गंगा के तटमें जव छींटनेकी विधिहै)
प्रह्लादेश्वर	... ...	पहलादघाट।
त्रिलोचनमहादेव...	...	तिलोचनघाट।
पंचगंगातीर्थ	... ...	पचगंगाघाट।
बिन्दुमाधव	... ...	(बेनीमाधो) वा (माधोराय) प्रसिद्ध।
गभस्तीश्वर	... ...	प्रसिद्ध (लक्ष्मणबालाघाट)।
मंगलागौरी	... ...	उसीमंदिरमें प्रसिद्धदेवी।
वशिष्ठेश्वर	... ...	संकटाघाटपर।
वामदेवेश्वर	... ...	"
पर्वतेश्वर	... ...	आत्मावीरेश्वरके समीप।
महेश्वर	... ...	मनिकनिकाघाट।
सिद्धिविनायक...	...	" प्रसिद्ध।
सप्तावरणविनायक	...	ब्रह्मनालमें (" जवविनायक " प्रसिद्धहै)।
मणिकर्णिकामहातीर्थ	...	" यहां पर परिक्रमा पूर्ण होजातीहै। स्नान करके विश्वनाथजीके पूजनार्थ जावे।

श्रीविश्वनाथजी—के मन्दिरमें जाय प्रणामपूर्वक पूजन करे, उनको वारंवार दण्डवत्-णाम करके मुक्तिमंडपमें जाय (अन्नपूर्णा) विष्णु, दण्डपाणि, ढुंढिराज, भैरव, आदित्य और (मोदादिक) पंचविनायकोंका पुनः पूजन करना चाहिए। फिर पंचक्रोशी प्रदक्षिणाके (उक्त) समस्त देवतोंको स्मरण करे (और अक्षत छोडताजावे) पश्चात् विश्वेश्वर भगवानसे इसभाँति पर प्रार्थना करे।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जय विश्वेश ! विश्वात्मन् ! काशीनाथ ! जगद्गुरो !
त्वत्प्रसादान्महादेव ! कृता क्षेत्रप्रदक्षिणा ॥
अनेकजन्मपापानि, कृतानि मम शङ्कर !
गतानि पञ्चकोशात्म–लिङ्गस्यास्य प्रदक्षिणात् ॥
त्वद्भक्तिकाशिवासाभ्यां, सहैवापापकर्मणा ।
सत्सङ्गश्रवणाद्यैश्च, कालो गच्छतु नः सदा ॥
हर ! शम्भो ! महादेव ! सर्वज्ञ ! सुखदायक ।
प्रायश्चित्तं सुनिर्वृत्तं, पापानां त्वत्प्रसादतः ॥
पुनः पापरतिर्मास्तु, धर्मबुद्धिस्सदास्तु मे ।"

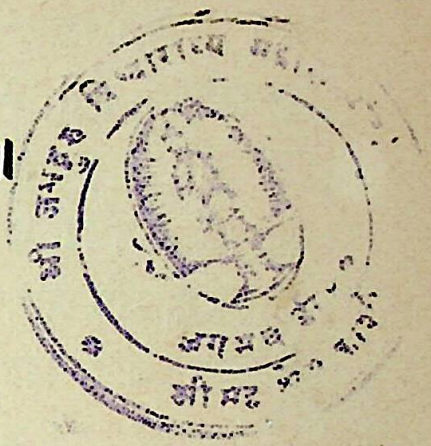

अर्थ–हे काशीनाथ ! जगद्गुरो ! विश्वात्मन् ! विश्वेश्वर ! जय, हे महादेव ! आपहीके प्रसादसे मैंने (काशी वा वाराणसी) क्षेत्रकी प्रदक्षिणा की । हेशंकर ! मेरे कियेहुए अनेक जन्मके पाप इस पंचक्रोशात्मक लिंगके प्रदक्षिण करनेसे गत होगये । आपकी भक्ति, काशीवास, और पापरहित कर्मोंके साथ एवं सत्संग (और पुराण) श्रवण इत्यादिसे हमलोगोंका काल सदा बीताकरे । हे हर ! शंभो ! महादेव ! सर्वज्ञ ! सुख दायक ! आपहीके प्रसादसे (मेरे) पापोंका–प्रायश्चित्त समाप्त होसका । अब फिर मेरी रुचि पापमें न होवे, और धर्मकी बुद्धि सदैव बनीरहे । इस प्रकारसे प्रार्थना कर ब्राह्मणोंको यथाशक्ति दक्षिणादे हाथ जोड इस मंत्रको कहे ।

"पञ्चक्रोशस्य यात्रेयं, यथावद्या मया कृता ।
न्यूनं सम्पूर्णतां यातु, त्वत्प्रसादादुमापते !" ॥

अर्थ–हे उमापते ! यह जो पंचक्रोशकी यात्रा मैंने यथाविधि की (इसमें जो कुछ कर्म) न्यून रहगया हो वह आपके अनुग्रहसे संपूर्ण होजावे ।

इस प्रकारसे प्रार्थनादिक करके अपने घरपर जाय ब्राह्मण तथा कुटुम्बियोंको भोजन करायकर तब स्वयं भोजनादिक करे । इस रीतिसे साधारणरूपकी पंचक्रोशी यात्रा होतीहै । और उसकी विधि भी अपनी बुद्धिवैभव तथा "काशीरहस्य" और "काशीदर्पण" इत्यादिग्रंथोंके आधारपर यथासंभव संक्षेप करके लिखदीगई । विशेष विधिको यात्री लोग स्वयं विचारपूर्वक ढूंढलेवें ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यह पंचक्रोशी यात्रा मणिकर्णिका किंवा मुक्तिमंडपसे आरंभ होतीहै, और वहीं पर (आकर) समाप्त की जाती है—यद्यपि "काशीखंडमें" इस यात्राकी विधि इत्यादि विस्तारपूर्वक जैसी कि "काशीरहस्यमें" है नहीं कही है, पर इन सब देवस्थानोंका वर्णन और माहात्म्य विशेषरूपसे कथित है। मणिकर्णिकासे कर्दमेश्वर (कंदवाँ) ३ कोस, भीमचंडी ८ कोस, रामेश्वर १५ कोस, शिवपुर १९ कोस, कपिलधारा २२ कोस, और मणिकर्णिका २३½ कोस पर है—फिर १½ कोस देवदर्शनके लिये जो हटकर जाना पड़ताहै और वहां लौटना पड़ताहै, इस रीतिसे यह पंचक्रोशी यात्रा सब मिलाकर २५ कोसोंकी होतीहै—इसमें मणिकर्णिकासे अस्सीसंगम और वरना संगमसे मणिकर्णिका तक गंगाजीके तीर तीर जाना पड़ताहै, वरसातमें लोग गंगाजीके बढ़जानेसे नाव पर जातेहैं (नाव पर जानेका दोष नहीं होता) बाकी सर्वत्र ही कच्ची सड़कहै (जो कि अब पक्की बननेवालीहै) जिसपर दाहिनी ओर देवमंदिर, बड़बड़े पेडोंका लखरावँ और कुंआ इत्यादि सुशोभितहैं, प्रत्येक चट्टी वा ठिकानों पर बाजारोंमें खानेपीनेकी वस्तु मिलतीहैं।

इसी प्रकारसे वार्षिक और शारदीय दोनों नवरात्रोंमें दुर्गायात्रा एवं भादों तथा माघ मासकी चतुर्थीमें गणेशयात्राओंको भी अयनयात्रा ही में समझना चाहिए।

यदि दोनों अयनोंमें पंचक्रोशीयात्रा न होसके तो वर्षमें एकबार अवश्य ही करनी चाहिए क्योंकि क्षेत्रमें जो पापादिक होते हैं, उनका प्रायश्चित्त यही पंचक्रोशी यात्रा है अत एव काशीवासियोंको यह अवश्य कर्तव्य है।

योंही अन्तर्गृहकी यात्रा अवकाशवालोंको तो प्रतिदिन करनी चाहिए ऐसा काशीखंडमें लिखाहै—यथा—"अन्तर्गृहस्य यात्रा वै, कर्तव्या प्रतिवासरम्" पर प्रतिदिन नहोसके तो प्रत्येक चतुर्दशीको करना उचित है वह भी नहीं बनपडे तो प्रत्येक अयन वा वर्षमें भी करडालनेसे अनेक प्रकारके पापोंकी शान्ति होजातीहै अब काशीखंडके १००वें अध्यायके अनुसार "अन्तर्गृही" यात्रा लिखी जाती है।

पहिले प्रातःस्नान कर मोद १ प्रमोद२ दुर्मुख ३ सुमुख ४ एवं गणनायक ५ इन पांचों गणेशोंको प्रणाम कर मुक्ति मंडपमें जाय भगवान विश्वेश्वरको दण्डवत्प्रणाम करे फिर "मैं समस्त पापोंके शान्त्यर्थ अन्तर्गृहकी यात्रा, करूंगा" ऐसा संकल्प कर वहांसे मौन होकर मणिकर्णिका पर जावे, वहां स्नानादि करके मणिकर्णिकेश्वरका पूजन करे-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देवनाम	स्थाननोंके नामादिक।
मणिकर्णिकातीर्थ, ...	प्रसिद्ध।
मणिकर्णिकेश्वर	गोमठके पास वर्दवानकी कोठीमें।
(सिद्धिविनायक)	(यहां भी लोग दर्शन करलेते हैं)
कंबलाश्वतरेश्वर	गोमठके समीप।
वासुकीश्वर	संकटाघाट।
पर्वतेश्वर	"
गंगाकेशव	ललिताघाट।
ललितादेवी	"
जरासन्धेश्वर	मीरघाट।
सोमनाथ	मानमन्दिरघाट।
(आदि) वाराहेश्वर ...	"
(दालभ्येश्वर)	" (मार्गस्थ होनेसे दर्शन किया जाताहै)
ब्रह्मेश्वर	बालमुकुंदका चौहट्टा।
अगस्तीश्वर	अगस्तकुंडा (गोदौरियाके पास)
कश्यपेश्वर	जंगमबाडी।
हरिकेशवनेश्वर	"
वैद्यनाथ (वैद्येश्वर)	कोदईकी चौकी।
ध्रुवेश्वर	इसी नामसे महाल प्रसिद्धहै।
गोकर्णेश्वर	कोदईके चौकीके पास।
हाटकेश्वर	हड़हा (प्राचीन स्थान गुप्तहै)
अस्थिक्षेपतडाग	" वेनियाँ (में मिलकर लुप्तप्रायहै)
क्रीकसेश्वर	राजा दरवाजेके भीतर।
भारभूतेश्वर	गोविंदपुरामें (मछरहट्टाके पास)
चित्रगुप्तेश्वर	मछरहट्टामें।
चित्रघंटादेवी	चौकके पूर्व चन्दूकी गलीमें।
पशुपतीश्वर	महालका भी वही नाम प्रसिद्धहै।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पितामहेश्वर	...	...	शीतलागलीमें (ये अंधेरे गड़हेमें हैं इनके दर्शन वर्षभरमें शिवरात्रहीके दिन होताहै)।
कलसेश्वर	...	...	" कलसेश्वरीकी ब्रह्मपुरी।
चन्द्रेश्वर	...	...	सिद्धेश्वरीके मन्दिरमें चन्द्रकूपपर
वीरेश्वर	...	...	वीरतीर्थ (सेंधियाघाट) के ऊपर "आत्म वीरेश्वर" प्रसिद्ध हैं (यहां और भी बहु देवते हैं)
विघ्नेश्वर	...	...	नीमवाली ब्रह्मपुरी।
अग्नीश्वर	...	...	अग्नीश्वर (नया) घाट उपशांत शिव समीपवाले दूसरे मंदिरमें।
नागेश्वर	...	...	भोंसलाघाटके समीपमें सटेहुए।
हरिश्चन्द्रेश्वर	...	...	संकटाघाटपर।
चिंतामणिविनायक	...	...	"
सेनाविनायक	...	...	"
वसिष्ठेश्वर	...	...	"
कामदेवेश्वर	...	...	"
सीमाविनायक	...	...	"
करुणेश्वर	...	...	महाल लहाउरी टोलामें
त्रिसंध्येश्वर	...	...	"
विशालाक्षी	...	...	" प्रसिद्ध।
धर्मेश्वर	...	...	" प्रसिद्ध धर्मकूप।
विश्वभुजादेवी	...	...	"
आशाविनायक	...	...	" मीरघाटके पास।
वृद्धादित्य	...	...	"
चतुर्वक्त्रेश्वर	...	...	सकरकंदकी गली।
ब्राह्मीश्वर	...	...	"
मनःप्रकामेश्वर	...	...	साखीविनायक।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ईशानेश्वर	...	...	कोतवालपुरा।
चण्डिकादेवी	...	...	कालिकागली।
चण्डीश्वर	...	...	"
भवानी-शंकर	...	...	" शुक्रकूपकेसमीप।
(अन्नपूर्णादेवी)	...	...	(काशीखंडमें नहीं लिखाहै पर यात्रा होतीहै)
ढुंढिराजगणेश,	...	...	प्रसिद्धमहाल।
राजराजेश्वर	...	...	जवाविनायकके समीप।
लाङ्गलीश्वर	...	...	खोवाबाजार।
नकुलीश्वर	...	...	विश्वेश्वरके पास हनुमानजीके पीछे।
परान्नेश्वर	...	...	दंडपाणिके सामने ज्ञानवापीके पीछे।
परद्रव्येश्वर	...	...	"
प्रतिग्रहेश्वर	...	...	"
निष्कलंकेश्वर	...	...	"
मार्कण्डेयेश्वर	...	...	"
अप्सरेश्वर	...	...	" उत्तर फाटकके पास।
गंगेश्वर	...	...	पीपलके नीचे महजिदके सामने (मूर्तिगुप्तहै)
ज्ञानवापी	...	...	प्रसिद्ध (यहां स्नान वा मार्जन करे)
नन्दिकेश्वर	...	...	" ज्ञानवापीके पास नांदिया।
तारकेश्वर	...	...	गौरीशंकरकी मूर्तिके नीचे स्थानहै।
महाकालेश्वर	...	...	उक्त स्थानके पास।
दण्डपाणि	...	...	ज्ञानवापीके पच्छिम घेरेसे बाहर।
महेश्वर	...	...	" नैर्ऋत्यकोण--पीपलके नीचे।
मोक्षेश्वर	...	...	वहींपर स्थान है।
वीरभद्रेश्वर	...	...	" वायुकोणपर।
अविमुक्तेश्वर	...	...	अब विश्वेश्वरके मन्दिरमें हैं पर--पुराना स्थान ज्ञानवापीके उत्तर फाटकपर है।
मोदादिपंचविनायक--	...	...	ज्ञानवापीके पास (औरंगजेबके मन्दिर तोड़नेसे यहांके अनेक देवते लुप्त होगयेहैं, पर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

महजिदके नीचे चारों ओर प्राचीन देवस्थानों
पर पूजनादिक कियाजाताहै।)

श्रीविश्वनाथजी... ... ...प्रसिद्ध। वहां जाकर दर्शन, पूजन कर मौन
व्रतको त्याग (हाथ जोड) यह मंत्र कहे-

"अन्तर्गृहस्य यात्रेयं, यथावद्या मया कृता।
न्यूनातिरिक्तया शम्भुः, प्रीयतामनया विभुः॥"

अर्थ—यथाविधि मेरी कीहुई इस अन्तर्गृहकी यात्रासे जो
वह न्यून (कमती) हो अथवा अतिरिक्त (अधिक
होगई हो भगवान विश्वेश्वर प्रसन्न होवें।

ऐसी प्रार्थना कर मुक्तिमंडपमें विश्रामकरनेके अनंतर यात्री अपने घर पर चलाजावे
जो कुछ बनपडे ब्राह्मणको दक्षिणा भोजन इत्यादि अपनी शक्ति और भक्तिके अनुसार
देवे जिसमें यात्राकी सांगता पूर्ण होजावे। इस "अन्तर्गृहीयात्रा"के करनेसे मनुष्य
निष्पाप और पुण्यभागी होजाताहै।

॥ इत्ययनयात्रा॥

ऋतुयात्रा।

ऋतुका नाम.	तीर्थयात्रा नाम.	स्थान.
वर्षाऋतु	द्वारकापुरी	संखूधारा।
शरदऋतु	विष्णुकांचीपुरी	पंचगंगाप्रांत।
वसंतऋतु	मथुरापुरी	(अलईपुरमें) उत्तरार्कसे (लेक वरनातीर नक्खीघाटलों)
ग्रीष्मऋतु	अयोध्यापुरी	रामेश्वर (पंचक्रोशीके रमेश्वर वरनातटपर)
हेमंतऋतु	अवंतिकापुरी	हरतीर्थ पर वृद्धकालेश्वरसे कर्दि वासेश्वर पर्यंत।
शिशिरऋतु	मायापुरी	अस्सी संगमपर।
प्रत्येकऋतुमें	काशीपुरी	ललिताघाट पर।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ये सातों मोक्षपुरियोंकी यात्रायें हैं, इनमें यथाशक्ति स्नान पूजन श्राद्ध और दानादिक करनेसे उक्त पुरियोंकी यात्राका फल प्राप्त होताहै—काशीखंडके सातवें अध्यायमें इन पुरियोंका माहात्म्य विस्तारपूर्वक वर्णितहै। काशीमें सब तीर्थ और देवतोंका सदैव वास रहताहै अत एव काशीवासी लोगोंके यात्रार्थ ये सब सातों पुरियां यहां टिकी रहतीं हैं। इसी यात्राको ऋतुयात्रा वा सप्तपुरी यात्रा भी कहतेहैं।

मासयात्रा।

मास नाम.	तीर्थ और देवतोंका नाम.	कर्तृनामादिक और स्थान.
चैत्र	कामकुंडमें स्नान कामेश्वरका पूजन।	इस यात्राको देवतोंने कियाहै। (कामकुंड लुप्त है) महाल त्रिलोचन।
वैशाख	विमलकुंड स्नान—विमलेश्वरका पूजन।	इसे दैत्योंने कियाहै, कुंड लुप्तहै—जंगमवाडी।
ज्येष्ठ	रुद्रावासतीर्थ-रुद्रावासेश्वर	देवतोंने यह यात्रा कीहै तीर्थ गंगामें है, मणिकर्णिका घाट।
आषाढ़	लक्ष्मीकुंड-लक्ष्मीदेवी,	इसे गंधर्वोंने कियाहै प्रसिद्ध।
श्रावण	कामाक्षाकुंड-कामाक्षादेवी	इसे विद्याधरोंने किया है, कमच्छा।
भाद्रपद	कपालमोचनतीर्थ-कुलस्तंभ (कोल्हुआ वा लाटभैरव)	यहकिन्नरोंकी यात्रा है—लाटभैरो प्रसिद्ध।
आश्विन	मार्कण्डेयतीर्थ-मार्कण्डेयेश्वर,	पितरोंने इसे किया है तीर्थ गुप्तहै। ज्ञानवापीके पास।
कार्तिक	पंचगंगातीर्थ-बिन्दुमाधव,	ऋषिकृत। प्रसिद्ध।
मार्गशीर्ष	पिशाचमोचन-कपर्दीश्वर	विद्याधरकृत। प्रसिद्ध।
पौष	धनदकुंड-धनदेश्वर	गुह्यककृत। कुंडलुप्त-अन्नपूर्णाके मंदिरमें कुबेरेश्वरहैं।
माघ	कोटितीर्थ-कोटिलिंगेश्वर,	यक्षकृत। तीर्थगुप्त; साखी विनायक।
फाल्गुन	गोकर्णकुंड-गोकर्णेश्वर	पिशाचोंने इसे कियाहै, गोकर्ण कूपको कुंड कहाहै। कोदई की चौकी।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ये सब मासयात्रायें "लिंगपुराणमें" कथित हैं; तीर्थोंमें स्नान मार्जन और अधिष्ठाता देवोंका दर्शन पूजन करना चाहिये "लिंगपुराणमें" तो मासभर प्रतिदिनकी यही विधि कहीगई है पर पूरे मासभर न होसके तो यथाशक्ति अवश्य करनी चाहिये। यद्यपि "काशीखंडमें" इस क्रमसे नहीं कहींहैं पर सबी देवतोंके नामादिक माहात्म्यके सहित यथास्थानमें वर्णित हैं।

इन मासकथित यात्राओंको प्रायः बहुत लोग नहीं करते इससे ये अप्रचलित हैं परन्तु वैशाखभर मणिकर्णिकास्नान, कार्ति भर पंचगंगास्नान एवं माघभर दशाश्वमेधस्नानको बहुतेरे लोग करतेहैं पाठक गण विचार कर जो बनपडे यथासम्भव करें।

इसी प्रकारसे पक्षयात्राकोभी समझलेना चाहिये क्योंकि पक्ष मासोंके भीतर आजाते हैं पर उनमें भी जहां कहीं आधिक्य है लिखदिया जाताहै।

यथा—ज्येष्ठे मासि सिते पक्षे, पक्षं रुद्रसरे नरः।
कुर्वन् वै वार्षिकीं यात्रां, न विघ्नैरभिभूयते ॥ ९३ ॥

(काशीखं० अ० ५२)

अर्थात्—जेठमासके शुक्लपक्षमें पक्षभर रुद्रसरोवर (दशाश्वमेध) की वार्षिकी यात्राका करनेवाला मनुष्य विघ्नोंसे अतिक्रान्त नहीं होनेपाता। अतएव जेठके शुक्लपक्षभर दशाश्वमेधस्नानकी यात्रा कहीगईहै योंही श्रावणके शुक्लपक्षमें दुर्गाकुंडपर श्रीदुर्गाजीके दर्शन पूजनकी यात्रा और प्रायः वैष्णवस्थानोंपर जैसे गोपालमन्दिर अथवा रामनगर रामबाग इत्यादिमें दोलायात्रा (हिंडोरा—वा झूला) का दर्शन सन्ध्याकालमें होता है। यह दर्शनयात्रा वा मेला भी है।

इसी भाँति आश्विनमासके कृष्ण (पितृ) पक्ष में भी लोग गंगाजीके घाटोंपर अथवा पितरकुंडा इत्यादि पवित्र तीर्थोंपर पक्षभर स्नान तर्पण श्राद्धादिक कर्मोंसे पितृगणकी यात्रा करते हैं। (का० ख० अ० ९७ वें के २३५-३६ श्लोकोंमें माहात्म्य लिखाहै।)

फिर कार्तिकमासके शुक्लपक्षभर (रवि और मंगलवारको छोड़कर) प्रायः वर्गीचोंमें सकुटुम्ब जाय धात्री (आंवलावृक्ष) का पूजनकर, ब्राह्मणभोजन कराय स्वयं इष्टजनोंके सहित भोजन करके योगिराज राजर्षि "भर्तृहरिके" इस पद्यको सार्थक बनाकर दिखादेतेहैं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

"उद्यानेषु विचित्रभोजनविधिस्तीव्रातितीव्रं तपः,
कौपीनावरणं सुवस्त्रमभितं भिक्षाटनं मण्डनम्।
आसन्नं मरणञ्च मङ्गलसमं यस्यां समुत्पद्यते,
तां काशीं परिहृत्य हन्त! विबुधैरन्यत्र किं स्थीयते?॥"

(वैराग्यशतक)

अर्थात्—जहां पर बगीचोंमें नानाप्रकारके भोजन बनाकर खानेकी विधि (चाल) है, फिर कठिनसे भी कठिन तप जहांपर होजाताहै, योंही जहां कौपीन (लंगोटी) का पहिरनाही उत्तम वस्त्र (समझाजाता) है, फिर भीखमांगना ही जहांपर भूषण है, एवं जिसमें मृत्युका पहुँचजाना ही (परम) मंगलके समान (होता) है, उस काशी-पुरीको छोडकर पंडित लोग दूसरे स्थानोंपर क्यों रहतेहैं?

इसी प्रकारसे कुछ लोग अगहनमासके शुक्ल पक्षमें कदंबवृक्षका पूजन और उसके समीप भोजनादिकभी बगीचोंमें जाकर करतेहैं।

माघमासके शुक्लपक्षभर काशीवासियोंकी वेदव्यासयात्रा गंगाजीके पार "व्यासपुरा" (गांव) तथा श्रीमान् काशिराजके दुर्ग (किला) में होतीहै। लोग व्यासजीका (जो शिवलिंगरूपसे हैं) दर्शन पूजन करतेहैं, फिर बहुतेरे लोग रामनगरसे पोखरेपर चलेजाते हैं वहां खाना पीना इत्यादि करके रात्रिके समय अपने अपने घर पर लौट आते हैं। माघमासमें भगवान् वेदव्यासजीका दर्शन करना बहुत आवश्यक समझतेहैं वरन् दक्षि-णदेश इत्यादिके यात्रीगण भी गंगापार "व्यासकाशी" की यात्राके लिये प्रायः जाते हैं।

इन यात्राओंमें सबी यात्रा पक्षभरकी नहींहैं दशाश्वमेध—और पितृपक्ष भर तो सबी को पूरी यात्रा वा तर्पणादिक करना चाहिए—और अवशिष्ट यात्राओंमें जैसे श्रावण कार्तिक अगहन और माघमासके शुक्लपक्ष भर जब जिसकी रुचि होती है, अपने मनो-नुकूल एक दो दिन यथावकाश करलेताहै। यद्यपि ये सब यात्रायें अब मेला समझी-जातीं हैं पर इनकी जड़ यात्राही है।

तिथियात्रा।

यद्यपि वार्षिक यात्राओंमें भी बहुतेरी तिथियोंकी यात्रायें आजातीं हैं, तथापि नियमित रूपसे जिन जिन तिथियोंमें जो जो यात्रायें "काशीखण्ड" इत्यादिमें कहीं गई हैं उनकाभी संक्षेपतः वर्णन लिखदिया जाताहै। प्रत्येक शुक्ल तृतीयामें गौरीयात्रा करनी चाहिए, यथा—

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

"अतः परं प्रवक्ष्यामि, गौरीयात्रामनुत्तमाम् ।
शुक्लपक्षतृतीयायां, यात्रेयं विश्वगृद्धिदा ॥"

अर्थ--अब (नव) गौरियोंकी परमोत्तम यात्रा कहताहूं, शुक्लपक्षकी तृतीया (तीज) को यह यात्रा (करनेसे) बडी समृद्धि देती है । तीर्थोंके सहित नवगौरियोंके नाम धामादिक इस प्रकारसे हैं ।

गौरीनाम.	तीर्थनाम.	स्थाननाम (पता).
मुखनिर्मालिका गौरी,	गोप्रेक्ष (गायघाट)	हनुमानजीके मंदिरमें घाटके ऊपर।
ज्येष्ठागौरी,	ज्येष्ठावापी (गुप्तहै)	कर्णघंटामहालमें ज्येष्ठेश्वरके पास।
सौभाग्यगौरी,	ज्ञानवापी,	विश्वनाथजीके मंदिरमें वायुकोण-परकी पार्वतीजी ।
शृङ्गारगौरी,	"	विश्वेश्वर--मंदिरके ईशानकोणकी-अन्नपूर्णाजी ।
विशालाक्षी गौरी,	विशालतीर्थ (मीरघाट)	अपने नामसे प्रसिद्ध हैं ।
ललितागौरी,	ललितातीर्थ,	ललिताघाट पर प्रसिद्ध ।
भवानीगौरी,	भवानीतीर्थ,	कालिकागलीमें शुक्रेश्वरके पास।
मंगलागौरी	बिन्दुतीर्थ (पंचगंगाघाट)	प्रसिद्ध (गभस्तीश्वरके मंदिरमें)।
महालक्ष्मीगौरी	लक्ष्मीकुंड	प्रसिद्ध महाल ।

यह नवगौरीयात्रा हुई ।

अब प्रत्येक कृष्णपक्षकी चतुर्थी (चौथ) को (छप्पन ५६) विनायकोंकी यात्रा कहीगई है । यदि चतुर्थी तिथिको मंगलका वार पडजावे तो वह तिथि (तिहवार) यात्रा विशेष फलदायक होती है--

"कुर्यात्प्रतिचतुर्थीह, यात्रां विघ्नेशितुः सदा ।
ब्राह्मणेभ्यस्तदुद्देशा, देया वै मोदका मुदे ॥"

अर्थ--प्रत्येकचतुर्थी (चौथ) को गणेशजीकी यात्रा करनी चाहिए.और उन्हींके उद्देशसे ब्राह्मणोंको लड्डू देना चाहिए । (एकही दिन५६ विनायकोंकी समग्र यात्रा करना असंभव है, अत एव यथाशक्ति प्रत्येक चतुर्थीको यात्रा करलेना उचितहै सातों आवरणोंके ८।८। की गणनासे ५६ विनायकोंके नामादि काशीखंडके ५७ अध्यायमें इस क्रमसे कहेगयेहैं--

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विनायकनाम.	स्थान (पता)
१ अर्कविनायक, ...	... लोलार्क कुंडके समीप गंगाके तटपर।
२ दुर्गविनायक, ...	... दुर्गाकुंडपर।
३ भीमचंडविनायक, ...	... भीमचंडी गांव (पंचक्रोशीमें)।
४ देहलीविनायक, ...	... प्रसिद्ध (पंचक्रोशीमें)।
५ उद्दण्डविनायक, ...	... भुइलीगांवमें रामेश्वरके समीप।
६ पाशपाणिविनायक, ...	... महाल-सदरबाजार (लैनमें)।
७ खर्वविनायक, ...	... वरनासंगम पर आदिकेशवसे पश्चिम।
८ सिद्धिविनायक, ...	... मनिकर्निकाघाट पर अमेठीके शिवालयके समीपहीमें।

येही आठों प्रथमावरण (घेरे) के विनायक हैं।

९ लम्बोदरविनायक, ...	... केदारजीके पास "चिंतामणिविनायक"के नामसे प्रसिद्ध हैं।
१० कूटदन्तविनायक, ...	... महाल कमिकुंड।
११ शालकंटकविनायक, ...	... मडुआडीह (बाजार)।
१२ कूश्माण्डविनायक, ...	... फुलवरिया गांव चण्डीश्वरके पास।
१३ मुण्डविनायक, ...	.... त्रिलोचनके पास वाराणसीदेवीके मंदिरमें।
१४ विकटदंतविनायक, ...	... धूपचंडी देवीके पिछवाडे।
१५ राजपुत्रविनायक, ...	... फुटहीकोट राजघाट।
१६ प्रणव विनायक, ...	... त्रिलोचनघाट हिरण्यगर्भेश्वरकी मढीमें।

द्वितीयावरणके विनायक।

१७ वक्रतुण्डविनायक, ...	... चौंसट्ठी घाटपर रानामहलमें "जो सरस्वतीविनायक" कहेजातेहैं।
१८ एकदन्तविनायक, ...	... बंगालीटोला (पुष्पदंतेश्वरमें)।
१९ त्रिमुखविनायक, ...	... सिंगिरापर (इन्हें वानर, सिंह और हस्तीके मुख हैं)।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२० पश्चास्यविनायक, ... पिशाचमोचन-तालाबपर।
२१ हेरम्बविनायक, ... पिशाचमोचन-वाल्मीकका टीला।
२२ विघ्नराजविनायक, ... चित्रकूटके पोखरेपर बगैचेमें।
२३ वरदविनायक, ... राजघाटसे पहलादघाटकी सडकपर।
२४ मोदकप्रियविनायक, ... त्रिलोचनपर आदिमहादेवके मंदिरमें।

तृतीयावरणके विनायक।

२५ अभयदविनायक, ... दशाश्वमेध घाटपर शूलटंकेश्वरके मंदिरमें
२६ सिंहतुण्डविनायक, ... बालमुकुन्दके चौहट्टाकेपास ब्रह्मेश्वरमें
२७ कूणिताक्षविनायक, ... लक्ष्मीकुंडपर।
२८ क्षिप्रप्रसादनविनायक, ... पितरकुंडापर।
२९ चिन्तामणिविनायक, ... इसरगंगीपर।
३० दन्तहस्तविनायक, ... बडे गनेसके घेरेमें (इनको "हस्तदन्त" भी कहा जाता है)
३१ पिचण्डिल विनायक, ... पहलादघाटपर।
३२ उद्दण्डमुण्डविनायक, ... त्रिलोचनकेघेरामें वाराणसीदेवीके मंदिरमें

चतुर्थावरणके विनायक।

३३ स्थूलदन्तविनायक, ... मानमंदिरघाट—सोमेश्वरके द्वारपर।
३४ कलिप्रियविनायक, ... साक्षीविनायकपर—मनःप्रकामेश्वरके मंदिरमें।
३५ चतुर्दन्तविनायक, ... ध्रुवेश्वरके मन्दिरमें कोदईकी चौकीके पास
३६ द्वितुण्डविनायक, ... सूर्यकुंड साम्बादित्यके मंदिरके दलानमें (इनको "द्विमुखगणेश" कहते हैं)
३७ ज्येष्ठविनायक, ... महाल काशीपुरा कर्णघंटाके पास ज्ये श्वरके समीपमें।
३८ गजविनायक, ... मछरहट्टामें भारभूतेश्वरके मन्दिरमें इस नाम "राजविनायक" प्रसिद्ध है।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

३९ कालविनायक, ... रामघाटपर।
४० नागेशविनायक, ... घोंसलाघाट पर नागेश्वरके मंदिरमें।

पंचमावरणके विनायक।

४१ मणिकर्णविनायक,... ... मनिकनिकापर चौकीके पास।
४२ आशाविनायक, ... मीरघाट—हनुमानजीके मंदिरमें।
४३ सृष्टिविनायक, ... कालिकागलीमें।
४४ यक्षविनायक, ... ढुंढिराजके पास पश्चिमफाटक पर।
४५ गजकर्णविनायक, ... बांसके फाटक—कोतवालपुरामें ईशानेश्वरके समीपमें।
४६ चित्रघंटविनायक, ... चांदनीचौक—पूरवके फाटकमें।
४७ स्थूलजंघविनायक,... ... पंचगंगापर मंगलागौरीके पास इन्हें "मित्रविनायक" भी प्रायः कहते हैं।
४८ मंगलविनायक, ... आत्मावीरेश्वरके मंदिरमें।

षष्ठावरणके विनायक।

४९ मोदविनायक ... ... ज्ञानवापीके दक्खिन ओर।
५० प्रमोदविनायक ... ... " विश्वनाथकी कचहरीमें हैं।
५१ सुमुखविनायक ... ... " "
५२ दुर्मुखविनायक ... ... " "
५३ गणनाथविनायक ... ... " "
५४ ज्ञानविनायक ... ... " ज्ञानवापीपर।
५५ द्वारविनायक ... ... " द्वारदेशपर।
५६ अविमुक्तविनायक ... ... " अविमुक्तेश्वरकेपास।

सप्तमावरणके विनायक।

प्रत्येक पञ्चमी तिथिको यात्राके प्रेमी लोग सप्तऋषि यात्राको करते हैं—इन देवतोंके नाम "काशीखण्ड" में हैं पर यात्राकी विधि शिष्टाचारसे प्राप्तहै। सप्तऋषियोंकी कथा "काशीखंडके" १८ वें अध्यायमें कहीहै।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देवताके नाम	का.खं.अ.श्लो.	स्थान (पता)
कश्यपेश्वर		जंगमबाडीकी सडकपर (का. खं०में इस स्थानपर आंगिरसेश्वरका नाम १८ अध्यायके २० श्लोकमें है)
अत्रीश्वर	(१८।१६)	कोदईकी चौकी—गोकर्णेश्वरसे—पश्चिम इनका स्थान गुप्तहै।
मरीचीश्वर	(१८।१८) (९७।११६)	नागकूवाँ।
गौतमेश्वर	(९७।२३८)	गोदौलियापर महाराज काशीनरेशके शिवालाके घेरेमें। (का. खं. १८ अ. २१ श्लोकमें क्रत्वीश्वरलिखेहैं)।
पुलहेश्वर	(१८।१९)	मनिकनिका—स्वर्गद्वारपर (पच्छिमओर
पुलस्त्येश्वर	(१८।१९)	" " " वहीं
वशिष्ठेश्वर	(१८।२१)	संकटाघाट पर (यहीं अरुंधतीश्वरका भी दर्शन करना चाहिये, काशीखंडमें इनका स्थान वरनाके तटपर कहाहै)

इस यात्राको सप्तर्षियात्रा कहतेहैं।

प्रत्येक अष्टमीको भैरवीयात्रा, दुर्गायात्रा, अष्टायतनयात्रा, त्रिलोचनयात्रा, स्वमेश्वरीयात्रा, मत्स्योदरीयात्रा और ज्ञानवापीयात्रा, काशीखण्डमें कथितहै—पर इन सब यात्राओंमें अष्टायतनयात्राकी प्रधानता है और वही विशेष प्रचलित है। भैरवयात्रा और दुर्गायात्राको लोग प्रायः भौमवारहीको करते हैं, अतएव उसका वर्णन वारयात्रामें कियागया है (वहां देखलीजिए)। त्रिलोचनका माहात्म्य काशीखंडके ७५।७६ अध्यायमें है। स्वमेश्वरीका वर्णन ७० वें अध्यायके अन्तमें है। मत्स्योदरीकी कथा ओंकारेश्वरके वर्णनमें ७३ वें आध्याय की है। योंही ज्ञानवापीका माहात्म्य ३३।३४ वें अध्यायमें देखना चाहिये। अष्टमीकी प्रायः सभी यात्रायें चतुर्दशीको भी की गई हैं। इसलिये यात्रार्थी लोग अपनी सुविधाके अनुसार जब चाहें करसकतेहैं

(का०खं०.१०० वें० अ० में) अष्टायतनयात्रा यथा—

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

का.खं.की क.अध्यायांक	देवनाम	स्थान (पता)
८९	दक्षेश्वर	वृद्धकाल—कूपके उत्तर बडे शिवालयमें।
९०	पार्वतीश्वर	त्रिलोचनपर आदिमहादेवके पास।
६१	पशुपतीश्वर	इसी नामसे महाल प्रसिद्ध है।
९१	गंगेश्वर	ज्ञानवापीके पूर्व पीपरके पास स्थानहै।
९२	नर्मदेश्वर	त्रिलोचन—मंदिरसे पूर्व ओरके शिवालामें।
४९	गभस्तीश्वर	मंगलागौरीजीके मन्दिरमें।
९३	सतीश्वर	वृद्धकालकी सड़कपर—रत्नेश्वरके समीप।
६१	तारकेश्वर	ज्ञानवापीके पूर्व गौरीशंकरके नीचे स्थानहै मूर्ति—गुप्तहै।

प्रत्येक नवमीको नवदुर्गा अथवा नवचण्डीकी यात्रा कहीगई है—जैसा कि "लिंगपुराणका" वचन है—

"नवम्यामथवाष्टम्यां, चण्डीयात्रा शुभावहा।"

अर्थ—नवमी अथवा अष्टमी तिथिको चण्डिकाकी शुभकारिणी यात्रा करनी चाहिए। इसके आगे नवचण्डियोंका नाम भी लिखाहै यथा—दक्षिणमें—दुर्गा, नैर्ऋत्यकोणमें—उत्तरेशी, पश्चिममें—अङ्गारेश्वरी, वायव्यकोणमें—भद्रकाली, उत्तरमें—भीष्मचण्डी, ईशानकोणमें—महामुण्डा, पूर्वदिशामें—शङ्करी, अग्निकोणमें—ऊर्द्धकेशी, तथा क्षेत्रके मध्यमें—चित्रघण्टादेवी। पर यह यात्रा बहुतही अप्रचलित है, किन्तु दोनों नवरात्रकी नवमियोंको अथवा प्रतिपदासे आरंभ करके क्रमसे नवमीपर्यन्त नव दिनोंमें भी नवदुर्गाकी यात्रा बहुतेरे लोग करते हैं, नवदुर्गाओंके नामादिक "वाराहपुराणोक्त" देवीकवचके अनुसार कहेजाते हैं।

देवियोंके नाम.	स्थान (पता)
१ शैलपुत्रीदुर्गा, ...	वरनाके तटपर मढ़ियाघाटके पास—शैलेश्वरके मन्दिरमें।
२ ब्रह्मचारिणीदुर्गा, ...	पंचगंगाके पास दुर्गाघाटपर प्रसिद्ध हैं।
३ चित्रघंटादुर्गा, ...	चौकके पूर्व चन्दूकी गलीमें।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

४ कूष्माण्डादुर्गा, ... दुर्गाकुंड पर दुर्गाजी प्रसिद्धहैं।
५ स्कन्दमातादुर्गा, ... जैतपुरामहालमें प्रसिद्ध वागीश्वरीजी।
६ कात्यायनीदुर्गा, ... आत्मावीरेश्वरके मन्दिरमें।
७ कालरात्रीदुर्गा, ... कालिका गलीमें कालिकामाई।
८ महागौरीदुर्गा, ... अन्नपूर्णाजी, (पंचगंगापर) मंगलागौरी और संकटाजी—इन तीनों देवियोंका दर्श अपने मतके अनुसार लोग करते हैं—अन्नपूर्णाजीमें विशेष भीड़भाड़ यात्रियोंकी होतीहै।
९ सिद्धिदात्रीदुर्गा, ... बुल्लानालामहालमें सिद्धमाताकी गलीमें (कोईकोई चन्द्रकूपके घेरेमें सिद्धेश्व देवी जिनकेनामसे वह महाल है, दर्श करतेहैं)।

यद्यपि यह नवरात्रकी यात्रा लिखीगई है पर काशीखंडके—१०० वें अ० ७ वें श्लोकमें प्रतिअष्टमी वा नवमीको दुर्गायात्रा विहितहै।

फिर ७२ वें अध्यायके८९।९०।९१श्लोकोंके अनुसार आठों दिशाओंकी आ एवं मध्यकी एक—इस प्रकारसे नव अधिष्ठात्री देवी और भी कहीगई हैं. उन नामादि ग्रंथमें देखलीजिए।

एवं—"सनत्कुमारसंहिता" में व्यासेश्वरकी यात्राभी कहीहै—

यथा—"दृष्ट्वा व्यासपुरीमेतां, नवम्यां चापि पर्वणि।
उपवासीह जागर्ति, व्यासमाराध्य सन्निधौ॥
प्रातर्व्यासेश्वरं दृष्ट्वा, सर्वपापैः प्रमुच्यते।"

अर्थ (कर्णघंटापर) नवमी अथवा (पौर्णिमा इत्यादि) पर्वपर व्यासपुरी दर्शन कर उपवासी हो जो कोई व्यासेश्वरकी आराधना करके उनके समीपहीमें रा भर जागरण करताहै और फिर प्रातःकाल व्यासेश्वरका दर्शन (पूजन) करताहै सब पापोंसे छूटजाताहै। (किसी किसीका मतहै कि, उक्त "व्यासपुरी" गंगापार "व्यासपुरा" गांवका नामहै, वहां पर भी व्यासेश्वरका स्थान और मंदिर प्राचीन है—पर काशीखंडके ९५ वें अध्यायमें व्यासेश्वरका वर्णन कर्णघंटाही पर कियाहै)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रत्येक एकादशी तिथिको विष्णुतीर्थोंमें भगवान् विष्णुकी यात्रा करनी उचितहै, काशीखंडके ६१ वें अध्यायमें विष्णुतीर्थोंका वर्णन है। और यही बात "वायु-पुराण" की "लक्ष्मीसंहिता"में भी यों कहीगईहै—

यथा—"तत्र तीर्थान्यनेकानि, लिङ्गानि मुनिसत्तम!
तत्रतत्र हरेर्मूर्तिर्वर्तते मुक्तिदायिका॥
पञ्चक्रोशेषु सर्वत्र, बहिरन्तरमेव च।
तत्तत्तीर्थादिनाम्ना वै, स्थितो विष्णुः सनातनः॥"

अर्थ—काशीमें अनेक तीर्थ और अनेक लिंग हैं। वहां २ (जहां तीर्थ और लिंग हैं) हे मुनिसत्तम! विष्णुकी भी मोक्षदेनेवाली मूर्ति विराजमान है। फिर पांच क्रोशके बाहर अथवा भीतर सर्वत्र ही उन उन तीर्थोंके नामसे सनातन, विष्णु वर्तमान रहते हैं।

काशी शिवपुरी होनेपर भी हरिहरात्मिका है क्योंकि हरिहरमें कुछ भी अन्तर नहीं है अतएव सभी लोगोंको यह वचन मान्य है—

"सम्प्राप्य वासरं विष्णोर्विष्णुतीर्थेषु सर्वतः।
यात्रा कार्या प्रयत्नेन, महाफलसमृद्धये॥"

अर्थात्—विष्णुवासर (एकादशी तिथि) को प्रयत्न पूर्वक समस्त विष्णुतीर्थोंमें बड़े फलकी समृद्धिके लिये यात्रा करनी चाहिये। पंचगंगापर बिन्दुमाधवादिक एवं गोपालमन्दिर इत्यादि भगवान् विष्णुके स्थान शिवलिंगोंके समान काशीमें अगणित हैं, अतएव यात्री लोग अपने मनोनुकूल यथेष्ट यात्रा करें।

काशीखंडके ८१वें अध्यायके २९वें श्लोकमें एकादशीको शंखोद्धार तीर्थ (संखधारा) पर भी स्नानका माहात्म्य कहाहै।

प्रत्येक द्वादशीको काशीदेवीकी यात्रा "काशीरहस्य" में लिखीहै, यथा—

"द्वादश्यां प्रातरेवाद्यां, काशीं यः पूजयेत्सुधीः।
तस्य पापे न रमते, बुद्धिर्धर्मे प्रवर्तते॥"

अर्थ—द्वादशीके प्रातःकाल (ललिताघाटपर) काशीदेवीका पूजन जो बुद्धिमान् जन करताहै उसकी बुद्धि पापमें नहीं रमती, बरन् धर्ममें प्रवृत्त होती है। उक्त तिथिको ज्ञानवापीकी यात्रा करनेमें भी बडा फल होताहै जैसा कि "काशीखंड" के ३३ वें अध्यायमें लिखाहै।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रत्येक त्रयोदशीको प्रदोषका व्रत करके सायंकालमें महादेवकी पूजा करनी चाहि जैसा कि "ब्रह्मोत्तरखण्ड" में कहा, है, यथा—

"पक्षद्वये त्रयोदश्यां, निराहारो भवेद्दिवा।
घटीत्रयादस्तमयात्पूर्वं स्नानं समाचरेत्॥
शुक्लाम्बरधरो भूत्वा, वाग्यतो नियमान्वितः।
कृतसन्ध्याजपविधिः, शिवपूजां समाचरेत्॥"

अर्थ—(कृष्ण और शुक्ल) दोनों पक्षोंकी त्रयोदशी तिथिको दिनमें निराहार (र कर व्रत) करे, फिर सूर्यके अस्त होनेसे तीन घडी पहिले ही स्नान करे। तदनं शुक्ल वस्त्र पहिन, मौनावलंबनपूर्वक नियम युक्त हो (नित्यकी) संध्या और जपादि कृत्योंको कर महादेवकी पूजा करे।

यह प्रदोषव्रत संध्यासमयमें जब त्रयोदशी मिलती है तब कियाजाताहै। दिनम उपवास करके सायंकालमें शिवके पूजन करनेके उपरांत रात्रिमें भोजन करनेका निषे नहीं है। जब कभी शनैश्चर अथवा सोमवारको प्रदोष होताहै तब उसका विशे माहात्म्य कहागयाहै। इसी शनिप्रदोषको कामेश्वरकी (त्रिलोचन पर) प्रधान यात्र काशीखंड ८५ वें अध्यायके ७५ से ७७ श्लोकोंमें वर्णित है। और ९४ वें अ. ४ वें श्लो०में चन्द्रेश्वरका भी पूजन लिखाहै, पर लोग सोमप्रदोषमें चन्द्रेश्वर अथवा सोमे श्वरकी पूजा करतेहैं। इससे भिन्न अन्य—प्रदोषोंमें जहां सुगम पडे अपनी रुचि अनुसार शिवजीका पूजन करना चाहिए। इस व्रतसे सन्तान संपत्तिका फललाभ सर्व ही प्रसिद्ध है, काशीमें स्त्रियां इस (उक्त) प्रदोष व्रत और पूजनको बहुतायतसे करतीहैं

यद्यपि चतुर्दशीकी बहुतेरी यात्रायें अष्टमीके यात्राप्रसंगमें कही जाचुकीहैं प्रतिपदासे आरंभ करके चतुर्दशी पर्यन्त अथवा प्रति चतुर्दशीहीको तीनों चतुर्द आयतनोंकी यात्राका विशेष माहात्म्य वर्णित है। यदि तीनों चतुर्दशायतनों यात्रा नहीं होसके तो एकही एक चतुर्दशायतनकी अथवा एकादश महारुद्रों यात्रा यथाशक्ति अवश्य करनी चाहिए। काशीखंडके १०० वें अध्यायमें ४ से लेकर ६६ वें श्लोक तक इन यात्राओंकी विधि लिखी है। (जिन्हें यात्रा करनेकी इच्छा हो वे लोग देखलेवें, विशेष वचन होनेसे यहां उद्धृत नहीं कियेगये)।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शिवलिंगोंके नाम.	स्थान (पता)	काशीखंडकेअध्याय.
ओंकारेश्वर,	मछोदरीके उत्तर महाल हुक्कालेसन, (कोयला बजारके पास)।	७३। ७४वें अ. में (कूर्म पु. ब्राह्मीसंहिता ३१अ.)
त्रिलोचनेश्वर,	तिलोचनघाट पर।	७५। ७६। वें अ. में
आदिमहादेव,	त्रिलोचनके मंदिरसे पूर्व ओर।	६९ वें अ. के २६से ३५ श्लोकोंतक.
कृत्तिवासेश्वर,	वृद्धकालके पास हरतीर्थपर।	६८वां अ. शिवपुराणके ५वें खंडके ५५वें अ. में भी यह कथाहै.
रत्नेश्वर,	वृद्धकालकी सड़कपर	६७वां अ. (शिवपु. ६ वां खंड२१। २२अ.)
चन्द्रेश्वर,	सिद्धेसरीके मंदिरमें।	१४वें अ. में।
केदारेश्वर,	केदारघाट (हाड़ाकाबाग)।	७७वां अ. (शिवरहस्य)
धर्मेश्वर,	मीरघाट पर धरम कूप।	७८।७९।८०।८१वेंअ
वीरेश्वर,	संकटाघाटपर आत्मावीरेश्वर,।	८२।८३। ८४वें अ.।
कामेश्वर,	मछोदरीके दखिन सड़कपर।	८५वां अ.।
विश्वकर्मेश्वर,	हनुमानफाटकके पास ग्वालगड्डापर।	८६वां अ.।
मणिकर्णिकेश्वर	मनिकनिकाघाटके ऊपर गोमठके सामने काकारामकी गलीमें वर्दवानकी कोठीके घेरेमें नीचे।	६१वें अ. के ४। ५ श्लोकोंमें।
अविमुक्तेश्वर,	विश्वनाथजीके मंदिरमें।	३९वां अ.।
विश्वेश्वर,	प्रसिद्ध (काशीके राजा विश्वनाथ (बाबा)।	९९ वें अ.।

येही ओंकारेश्वरादि चतुर्दश लिंग काशीखण्डके ८६वें अ.में १०८से १०श्लोकोंमें कहे हैं और येही प्रथम चतुर्दशायतन कहे जाते हैं।

अमृतेश्वर,	सरगदुआरीसे आगे कुंजबिहारीजी गंगापुत्रके घरमें।	९४वें अ.में।आदिसे १९ श्लोकोंतक।
तारकेश्वर,	ज्ञानवापीके पूर्व स्थान है(मूर्ति गुप्तहै)	६९वें अ. ५३ से ५६ श्लोकोंतक।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शिवलिंगोंके नाम.	स्थान (पता)	काशीखंडकेअध्याय.
ज्ञानेश्वर,	लाहौरीटोलामें धनीरामखत्रीके आंगनमें नीचे।	८१वें अ. के ४७ श्लोकमें। एवं ८ अ. के ५८ वें श्लोक
करुणेश्वर,	ललिताघाटके ऊपर पं० रमापति तिवारीजीकी हवेलीके समीपमें।	९४ वें. अ. में २०-२ श्लोकोंतक।
मोक्षद्वारेश्वर,	" " वहींपर।	९७ अ. २२३ श्लो फिर ९४वें अ. में २ वें श्लोकोंमें दोनों लिंगोंका वर्णन है।
स्वर्गद्वारेश्वर,	ब्रह्मनालके पास सरगदुआरीपर (बच्चासिंहके घरमें)	" "
ब्रह्मेश्वर,	बालमकुंदका चौहट्टा।	५२वें अ. में ७३वां श्लो. ५३वें अ. के ९७वें श्लो.
लांगलीश्वर,	पांचोंपंडवाकेपास खोवा बाजारके कोनेपर।	९७ वें अ. के २१४ १६ श्लोकोंमें वर्णितहैं।
वृद्धकालेश्वर,	दारानगरमें "विधकाल" प्रसिद्धहैं।	२४ वें अ. में।
वृषेश्वर,	गोरखटीलाके भीतर महालमदाकिनपर।	६९ वें अ.में ९२ श्लो.
चण्डीश्वर,	(वरनाके) इमिलियाघाटके पास।	६९ वें अ. में ५७-५८ श्लोक।
नन्दिकेश्वर,	ज्ञानवापीपर।	९७वें अ. में २८।२९ श्लोक (और २२१ श्लोकमें भी)।
महेश्वर,	मनिकनिकापर मढीमें।	३३अ.के७वें श्लोकमें।
ज्योतीरूपेश्वर,	मणिकर्णिकेश्वरके समीप एक गृहकी दलानमें।	९४ वें अ. में ३० ३४ श्लोकोंतक।

येही अमृतेश्वरादि चौदहों लिंग द्वितीय चतुर्दशायतन कहेजाते हैं।

शैलेश्वर,	(वरनाके मढियाघाट पर)	६६वें. अ.में ३३श्लोक से अध्यायके अंतलों।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शिवलिंगोंके नाम	स्थान (पता)	काशीखंडकेअध्याय.
सङ्गमेश्वर,	वरना संगम पर आदिकेशवके समीप।	९७ वें अ. में १६ वां श्लोक।
स्वर्लीनेश्वर,	राजघाट और पहलादघाटके बीचमें गंगाके तटपर।	९७ वें. अ.में ३६ वां श्लो.
मध्यमेश्वर,	मदाकिन पर गनेसगंजमें।	९७वें. अ. ४९से ५४ श्लो. (तथा लिंगपुराण ९२ वा अ.)
हिरण्यगर्भेश्वर,	तिलोचनघाटके उत्तर मढीमें।	८४वें अ.के३७वें श्लो. में इनका तीर्थ कहा है.
ईशानेश्वर,	बांसके फाटक पर कोतवालपुरामें।	१४वें. अ. में आदिसे १२श्लो.एवं९१वें.अ.में ९३।९४ श्लो.
गोप्रेक्षेश्वर,	लालघाटपर गोपीगोविन्दजीके मन्दिरमें गौरीशंकर प्रसिद्ध।	९७वें अ. ९ से ११ श्लोकलों।
वृषभध्वजेश्वर,	कपिलधारा पर प्रसिद्ध।	६२वां अ.(लिंगपु.९२ अ. एवं—शिवपु. ६ वां खंड१७वां अ.)
उपशान्तशिव,	अग्नीश्वर (नया) घाटके ऊपर गलीमें	९७वां अ. ४८से ५० श्लोकतक वर्णन है।
ज्येष्ठेश्वर,	काशीपुरामें कर्नघंटाके पास।	६३ वें अ. में आदिसे २० श्लोकलों।
निवासेश्वर,	काशीपुरामें भूतभैरोके मंदिरसे पच्छिम-ओर। (का. खं. में चतुस्समुद्रेश्वर-भी लिखे हैं)	६३वें अ. में १६।१७ श्लोक, तथा९७वें. अ. १६७वां श्लोक।
शुक्रेश्वर,	कालिकागलीमें।	१६वां अध्याय।
व्याघ्रेश्वर,	काशीपुरामें भूतभैरोके नैर्ऋत्यकोनपर।	६५वें अ.में ४४श्लो.से अंततकवर्णन है।
जम्बुकेश्वर,	बडेगनेसके पास।	९७वां अ. १५९ वां श्लोक।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ये चौदहों लिंग तृतीय आयतनके देवताहैं।

इस प्रकारसे तीनों चतुर्दशायतनोंको मिलाकर ४२ लिंग होते हैं।

एकादशमहारुद्र।

आग्नीध्रेश्वर,	इसरगंगीपर "जागेश्वर" नामसे प्रसिद्ध हैं।	१००वें अ. में ६३वां श्लोक।
उर्वशीश्वर,	औसानगंजके गोलाबागमें।	" " "
नकुलीश्वर,	विश्वनाथजीके पास महावीरजीके मंदिरमें अक्षयवटके नीचे।	६९वें अ. में १६।१७ श्लो०।
आषाढीश्वर,	काशीपुरामें राजा बेंतियाके घेरेमें बडे-मंदिरके पिछवाडे।	५५वें अ. में २७।२९श्लोकलों, और ९७वें अ. में १७७वां श्लोक।
भारतभूतेश्वर,	राजा-दरवाजा-गोविन्दपुरामें म. म. पं. शिवकुमारशास्त्रीजीके घरके समीप	५५वें अ. में १३।१४ श्लोकोंमें एवं ९७वें अ. में १७८ वां श्लोक।
लाङ्गलीश्वर,	पांचों पंडवाके आगे खोवाबाजारमें।	५५वें अ. में२०-२१ श्लोक और ९७वें अ. के२१४से २१६श्लो।
त्रिपुरान्तकेश्वर,	सिगिराके टीलापर।	६९वें अ.में७३वें श्लोक से ७४½ और ९७ अ. के २३२वें श्लो.में भी।
मनःप्रकामेश्वर,	साखीविनायकपर प्रसिद्ध।	१००वें अ. में ६५वें श्लोक।
प्रीतिकेश्वर,	कालिकागलीके बाडामें।	९७वें अ. में २१८और २१९श्लोक।
मदालसेश्वर,	कालिकागलीके सामने।	९७वें अ. में २३०वें श्लोक।
तिलपर्णेश्वर,	दुर्गाकुंडपर।	५३वें अ. में १२२वें श्लोक।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यह एकादश-आयतनकी यात्रा कहीगईहै। कोई कोई यात्राके प्रेमीलोग इसे एकादशीको भी करते हैं। पर काशीखंडमें एकादशीकी कोई विशेष विधि नहीं है।

त्रिकोणयात्रा।

प्रथम दुर्गाकुंडमें स्नानकर दुर्गादेवीका पूजन करे, फिर वहांसे लक्ष्मीकुंडमें आकर मार्जन करके महालक्ष्मीका पूजन करे तदनन्तर जैतपुरामें जाकर वागीश्वरी देवीकी पूजा करे (यहांपर भी पूर्वमें कुण्ड था जो अब पटकर लुप्त होगयाहै) येही तीनों स्थान महाकाली महालक्ष्मी और महासरस्वतीके हैं, और ये तीनोंही काशीके तीन कोनोंमेंहैं अर्थात् दक्षिणदिशा-भदैनी गांवमें दुर्गाजी पश्चिमदिशा, रामापुरा गांवमें लक्ष्मीजी, और उत्तर दिशा-जैतपुरा गांवमें वागीश्वरी देवी विराजमान हैं। इन तीनों देवियोंके गाँवोंमें प्राचीन ब्राह्मणोंकी बस्तियां हैं और प्रायः समस्त नगरकी पुरोहिती उन्हीं ब्राह्मणोंकी है (कालानुसार यवन लोग उन्हीं स्थानोंके थोड़े अन्तरपर बसतेगयेहैं जो मदनपुरा ललापुरा--और अलईपुराके नामसे महाल प्रसिद्ध हैं, येही यवन बनारसी साडी दुपट्टोंके बनानेवाले तन्तुवाय (जोलाहे) हैं)।

यह यात्रा प्रायः मंगलवार वा चतुर्दशी युक्त मंगलको देवीजीके भक्त लोग करतेहैं।

प्रत्येक पौर्णमासीको [काशीखंडके १४ वें अध्यायके ४२। ४३ श्लोकोंके आधार पर] चन्द्रेश्वर (सिद्धेश्वरीके मन्दिरमें) की यात्रा करनी चाहिए।

प्रत्येक अमावास्याको [काशीखंड ६२ वें अध्यायके ६६वें श्लोकमें] कपिलधारा पर (वृषभध्वजकी यात्रा और) श्राद्ध तर्पण इत्यादिका बड़ा माहात्म्य कहाहै।

इस प्रकारसे तिथि यात्रा निरूपित हुई। यात्रार्थी लोगोंको यथासम्भव इनको संपादन करना चाहिए।

वारयात्रा।

प्रति रविवारको सूर्यनारायणकी यात्रा प्रधानरूपसे करनी चाहिए। काशीमें द्वादश (१२) आदित्योंके स्थानादिक सप्रमाण लिखेजातेहैं। (रविवारको भैरवकी यात्रा भी कही है जो भौमवारकी यात्रामें लिखीगईहै, पाठकलोग वहीं देखलेवें)।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सूर्यके नाम	धाम (पता)	काशीखंडकी कथाके अध्यायका अंक।
लोलार्क	भदैनीमें असीसंगमके पास प्रसिद्ध लोलारककुंड।	४६ वां, (१५ वामन पुराण)।
उत्तरार्क	अलईपुरमें बकरियाकुंडपर	४७ वां.
साम्बादित्य,	सूरजकुंड पर प्रसिद्ध।	४८ वां.
द्रौपदादित्य,	विश्वनाथजीके समीप हनुमानजीके मंदिरमें अक्षयवटके नीचे।	४९ वां.
मयूखादित्य,	पंचगंगाके पास मंगलागौरीजीके मन्दिरमें।	४९ वां.
खखोल्कादित्य	तिलोचनपर कामेश्वरके घेरेमें। (इन्हीका नाम विनवादित्यभी है)।	५० वां.
अरुणादित्य	त्रिलोचनके मन्दिरमें।	५१ वां.
वृद्धादित्य	मीरघाट पर हनुमानजीके मंदिरके पास एक घरमें।	५१ वां.
केशवादित्य	वरनासंगमपर आदिकेशवजीके मन्दिरमें।	५१ वां.
विमलादित्य	गोदौरियाके पास जंगमबाडीमें।	५१ वां.
गंगादित्य	ललिताघाट पर।	५१ वां.
यमादित्य	जमघाट (संकटाघाट) पर।	५१ वां.

यही द्वादशादित्य यात्रा है। षष्ठी अथवा सप्तमी तिथिको रविवार पडनेसे भानु षष्ठी किंवा भानुसप्तमीको पद्मक योग होताहै, उस दिन इन आदित्योंकी यात्रा बहुत फलदायक होतीहै। क्योंकि यह पद्मकयोग सहस्र सूर्यग्रहणके समान मानागयाहै

प्रत्येक सोमवारको काशीखंडके १४ वें अध्यायमें चन्द्रेश्वरकी यात्रा; ३३ अध्यायके अनुसार ज्ञानवापीकी यात्रा, ६२ अध्यायमें सोमवती अमावस्याको कपि लधारातीर्थपर श्राद्ध, और ८४ वें अध्यायके २० से २८ श्लोकों तक करुणेश्वरकी भी यात्रा लिखी है। पर इन सब यात्राओंमें प्रधानयात्रा विश्वनाथजीकी है, जो लोग प्रतिदिन दर्शन नहीं करसकते, वे प्रायः सोमवारहीको दर्शन-यात्रा करते हैं। जैसा कि उक्त ३३वें अध्यायमें ज्ञानवापीके माहात्म्यमें वर्णन कियाहै। श्रावणमासके प्रथ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सोमवारको प्रायः विशेष यात्रा होती है, क्योंकि सोमप्रदोषका व्रत करके लोग सायं कालमें स्नान और शिवपूजन इत्यादि करते हैं, इसमें जिसे जहां सुगम पडताहै वहीं पूजनादिक करलेताहै, पर सारनाथ जो नगरसे प्रायः तीनकोस उत्तरदिशामें है (जहां पर भगवान् विष्णुने बौद्धधर्मका उपदेश कियाथा—काशीखंडका ५८ वां अध्याय देखिए) मेला लगताहै और नगरमें केदारघाटपर स्नानकी भीड होती है जैसा कि, "शिवरहस्यमें" कहाहै—

"काश्यामन्यमिहस्थानं, केदाराभिधमुत्तमम्।
तस्य केदारनाथस्य, श्रावणे सोमवासरे॥
पूजा कार्या विशेषेण, साधनैर्विविधैः शुभैः॥"

अर्थ—काशीमें केदारनामक एक बडा उत्तम दूसराही स्थानहै, सावनमासके सोमवारको उन केदारनाथजीकी अनेक प्रकारकी शुभ सामग्रियोंसे विशेषरूपकी पूजा करनी चाहिए।

प्रत्येक मंगलवारको (काशीखंडके ७२ वें अध्यायके ८२ वें श्लोकमें) दुर्गाजीकी यात्रा कहीहै। (३१ वें अध्यायके १५५ श्लोकमें) भैरवकी यात्रा लिखीहै। और (७० वें अध्यायके ४८ वें श्लोकमें) बन्दीदेवीकी यात्रा विहितहै। योंहीं (१७ वें अध्यायमें आदिसे २१ श्लोकोंतक) मंगलवारको यदि चतुर्थी हो तो और भी उत्तम है अंगारकेश्वरकी यात्रा भी कहीहै—इन सबसे भिन्न आजकलके शिष्टाचारानुसार हनुमानजीकी एक यात्रा विशेष यात्रा प्रचलित है।जब कभी भौमवारको प्रदोष अथवा अमावास्या पडतीहै तो उक्त केदारेश्वरकी यात्रा और गौरीकुंड पर श्राद्धादिकका [काशीखंडके ७७ वें अध्यायके ५९ वें श्लोकमें] विशेष माहात्म्य लिखाहै। यदि चतुर्थीको मंगलवार पडे तो गणेशजीकी यात्रा भी अवश्य कर्तव्य है। योंही चतुर्दशी पडनेपर कलशेश्वरकी यात्रा और भरणीनक्षत्र मिलनेसे यमघाटपर स्नान तर्पण और श्राद्धादिकका भी [का. खं. के ५१ वें अध्यायके १११वें श्लोकमें] विशेष फल कहा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

है। श्रावणमासके प्रत्येक मंगलवारको दुर्गाकुंडपर दुर्गाजीके दर्शन पूजनका बडाभारी मेला होताहै। "शिवरहस्य" में कामाक्षा (कमच्छापर) के पूजनका भी बडा माहात्म्य पायाजाताहै। [का. खं. ७२ वें अ. के ९३श्लोकमें] अष्टभैरवोंके ये नाम हैं।

अष्टभैरव।

नाम.		धाम.
रुरुभैरव	...	हनुमानघाटके समीप।
चण्डभैरव	...	दुर्गाकुंड, दुर्गाजीके घेरेमें कालीजीके मन्दिरमें।
असितांगभैरव	...	वृद्धकालके घेरेमें अमृतकुंडसे पूर्व ओर।
कपालभैरव	...	प्रसिद्ध "लाटभैरो"।
क्रोधनभैरव	...	कामाच्छापर "बटुकभैरो" प्रसिद्धहैं।
उन्मत्तभैरव	...	पंचक्रोशीमें भीमचंडीकी सड़कपर देवरागांवमें।
संहारभैरव	...	तिलोचन गंजके पाठन दरवाजेके निकट।
भीषणभैरव	...	कासीपुरामें "भूतभैरो" के नामसे प्रसिद्ध हैं, वरन इसी नामसे वह महाल भी कहाजाता है।

पर इन सब लोगोंके कोतवाल कालभैरव हैं और प्रधान भैरवकी यात्रा भैरवनाथहीकी लोग करते हैं [का०खं०के ३१ वें अध्यायमें इनकी कथाहै] इनसे भिन्न और भी कईएक भैरवोंके स्थान प्रसिद्धहैं जैसे रामघाटके ऊपर गलीमें "आनन्दभैरव" चौकसे आगे नीची बागकी सडकपर "मोहनभैरव" और विश्वनाथजीके पश्चिम द्वारपर "द्वारभैरव" इत्यादि विराजमान हैं।

प्रत्येक बुधवारको काशीखंडके १५ वें अध्यायके आधारपर बुधेश्वरकी (जो आत्मावीरेश्वरके घेरेमें मंगलेश्वरके समीपमें हैं) यात्रा करनी चाहिए। यदि बुधवारको अष्टमी पडे तो वह एक पर्वदिन होजाताहै, उस बुधाष्टमीको स्नान दानका विशेष फल होताहै। योंही बुधवार द्वादशी तिथि और श्रवण नक्षत्र इन तीनोंहीके मिलनेसे वरणा-संगम पर स्नान दान और श्राद्धादिक करनेसे अधिक पुण्यलाभ होताहै।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रत्येक बृहस्पतिवारको [का० खं० के १७ वें अध्यायके अनुसार] बृहस्पतीश्वर [जो आत्मा वीरेश्वरके पासमें हैं उन] की यात्रा करनी चाहिये, यदि बृहस्पतिवारको पुष्य नक्षत्र मिलजावे तो उस गुरुपुष्य योगमें वहाँकी यात्रा उक्त अध्यायके ६० वें श्लोकके अनुसार अधिक फलदायक कहीहै. योंही गुरुपुष्य शुक्लाष्टमी और व्यतीपात योग—इन सबके एकत्र प्राप्त होनेपर ज्ञानवापीमें श्राद्ध करनेसे गयाश्राद्धका कोटिगुण फल लिखाहै। (का० खं० ३३ वें अ० के ३६ वें श्लोकमें यह बात पाई जातीहै)

प्रत्येक शुक्रवारको [काशीखंडके १६ वें अध्यायके अनुसार] शुक्रेश्वर [जो कालिकागलीमें हैं उन] की यात्रा करनी चाहिये। आज कलके शिष्टाचारके अनुसार शुक्रवारको लक्ष्मीकुण्डपर महालक्ष्मीजी, संकटा घाटपर संकटादेवी, और जैतपुरामें वागीश्वरी देवीका भी दर्शन करते हैं, पर इसके लिये कोई प्रमाण नहीं मिलता। श्रावणके शुक्रवारको इन स्थानोंके अतिरिक्त दुर्गाकुण्डपर दुर्गाजीके दर्शन-पूजनका बड़ाभारी मेला होताहै।

प्रत्येक शनिवारको काशीखंडके १६ वें अध्यायके अनुसार [विश्वनाथजीके घेरेमें पश्चिम-दक्षिण कोणपर] शनैश्चरेश्वरका दर्शन पूजन लिखाहै। शनिवारको प्रदोष पड़ने पर कामेश्वर [त्रिलोचनपर] की यात्रा पूर्वकथित है। शनिवारको भी मीरघाट शिवालाघाट, हनुमानघाट और संकटमोचन इत्यादि हनुमान्‌जीके स्थानोंपर यात्रा प्रचलितहै।

येही सब वारयात्रायें कही जाती हैं।

इसी भांति नक्षत्रयात्राके इच्छुक लोगोंको [काशीखण्ड १५ वें अध्यायके आदिसे १९ श्लोकपर्यन्त] नक्षत्रेश्वरकी कथा अवश्य देखनी चाहिये। नक्षत्रेश्वरका स्थान वरनासंगमके पास आदिकेशवजीके घेरेके बाहर दक्षिण ओरके मन्दिरमें है. नक्षत्रादिककी शान्तिके लिये उनका दर्शन पूजन करना उचित है।

नवों ग्रहोंकी शान्तिके लिये कालभैरवके पूर्व गलीमें कालदंडके समीपहीमें नवग्रहेश्वरका पूजन आवश्यक है। और व्यतीपातादिक दुष्ट योगोंके शान्त्यर्थ वहींपर व्यतीपातेश्वरका दर्शन-पूजन बहुत ही उपयोगी है।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जैतपुरा महालमें प्रसिद्ध वागीश्वरीदेवीके समीप सिद्धेश्वरके मन्दिरसे छुटेहुए शिवालयमें ज्वरहरेश्वरनामक लिंग है, इनको दुधभंगा चढानेसे प्रायः ज्वर छूट जाताहै और [काशीखंड ९७ वें अध्यायके १३।१४ श्लोकोंमें] विज्वरनामक लिंग माहात्म्य भी मिलताहै।

वृद्धकाल पर मृत्युंजय (भतखौआ)महादेव प्रसिद्ध हैं, जिनकी चर्चा [काशी खंड ९७ वें अध्यायके १२९ वें श्लोकमें] मृत्वीशनामसे लिखी है, इनकी आराधना लोगोंका बहुत उपकार होताहै और बहुतेरे लोगोंकी ओरसे—महामृत्युंजयका जप करनेके लिये अनेक ब्राह्मण प्रतिदिन इनके छोटेसे मन्दिरमें भरे रहते हैं।

वृद्धकालके अमृतकुंडमें स्नान करनेसे अबतक बहुतेरे लोगोंकी कठिनसे कठिन व्याधियां और कुष्ठ इत्यादिक छूट जाते हैं, योंहीं लोकार्क, और सूर्यकुंड भी इन बातोंके लिये सेवन किया जाताहै। और आराधकोंकी कामनायें प्रायः सिद्ध हो जाती हैं।

ये सब यात्रायें कामिक वा नैमित्तिक कही जातीहैं अर्थात् जब जिसे जो आवश्यक होतीहै तब वह ऐसी यात्राओंको करताहै, पर काशीखंडमें और भी बहुत यात्रायें नैमित्तिक अथवा आगन्तुक रूपसे लिखीहैं जिनका कुछ थोडासा उदाहरण लिख दिया जाताहै।

जब कभी ग्रहण लगताहै तो काशीमें बहुत बडी भीड़भाड़ होजातीहै यद्यपि सूर्य ग्रहणमें सबसे बड़ा मेला कुरुक्षेत्रका होताहै, पर चन्द्रग्रहणमें काशीहीमें विशेष यात्री गण देशदेशांतरसे आजाते हैं, क्योंकि काशीक्षेत्रमें गंगाजीका विशेष माहात्म्य "भविष्यपुराणमें" यों कहा है—

"कुरुक्षेत्रसमा गङ्गा, यत्र कुत्रावगाहिता।
कुरुक्षेत्राद्दशगुणा, यत्र विन्ध्येन सङ्गता॥
ततः शतगुणा प्रोक्ता, यत्र पश्चिमवाहिनी।
तस्मात्सहस्रगुणिता, काश्यामुत्तरवाहिनी॥"

अर्थ—गंगामें कहीं पर भी (गंगोत्रीसे लेकर समुद्रके संगम पर्यंत) स्नान करना कुरुक्षेत्रके समान (पुण्य) होता है। फिर जहांपर विन्ध्याचलसे मिली है।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

JNANA SIMHASAN JNANAMANDIR
LIBRARY
Jangamawadi Math, Varanasi
Acc. No. 1598

कुरुक्षेत्रका दसगुना फल मिलताहै। और जहाँपर पश्चिमवाहिनी होगई हैं वहां सौगुना एवं काशीमें उत्तरवाहिनी गंगा सहस्रगुना अधिक फलदात्री कहीगई हैं। अतएव "ग्रहणेषु काशी" प्रसिद्ध है। यद्यपि ग्रहणमें समुद्रस्नानका भी बडा माहात्म्य "सौरपुराणादिकमें" पाया जाताहै पर "व्यासस्मृतिका" यह वचन विशेष प्रचलित है यथा—

"इन्दोर्लक्षगुणं पुण्यं, रवेर्दशगुणं ततः।
गङ्गातोये तु संप्राप्ते, इन्दोः कोटी रवेर्दश॥"

अर्थ—साधारण स्नानकी अपेक्षा चन्द्रग्रहणमें लाख गुना और सूर्यग्रहणमें दस लाखगुना विशेष फल होताहै, पर गंगाके जल प्राप्त होजाने पर चन्द्रग्रहण करोरगुना और सूर्यग्रहण दसकरोर गुना अधिक पुण्यप्रद होजाताहै।

जो हो पर काशीमें ग्रहणके दिनोंमें इतने मनुष्य आजातेहैं कि रहनेका स्थान नहीं मिलता—सूर्यग्रहणमें काशीवासी लोग प्रायः दुर्गाकुंडके समीप "कुरुक्षेत्र" नामक पोखरेमें स्नान करके तब गंगाजीमें स्नान करते हैं और [काशीखंडके ६१वें अध्यायके ३२वें श्लोकमें] स्पष्ट लिखाहै कि काशीके दशाश्वमेध घाटपर सूर्यग्रहणमें कुरुक्षेत्रका दसगुना फल प्राप्त होताहै। इन्हीं कारणोंसे काशीमें सबसे बडी और प्रधान स्नानयात्रा प्रत्येक घाटोंपर ग्रहणोंमें होतीहै। उसमें भी मणिकर्णिकाघाट पर तो अपार भीड होजातीहै। ग्रहणपर प्रायः सभी देवमन्दिर बन्द रहतेहैं, उस बेला कोई भी दर्शन पूजन नहीं करने पाता।

इसी विधिसे वारुणी इत्यादि औरभी छोटे बड़े बहुतेरे पर्वोंपर काशीमें विशेष मेला होजाता है, जिनमें कभी कभी देशान्तरके तथा प्रान्तके भी यात्री गण आजाया करतेहैं। उन सब पर्वोंका सूचीपत्र बनानेसे ग्रंथके बहुत विस्तार होजानेकी संभावनाहै अतएव धार्मिक लोग स्वयं उन्हें समझलेवें—और ग्रंथोंकी कौन बात है—(खास) इसी काशीखंडकी कितनीही यात्रायें जोकि आजकल अप्रचलित हैं, छोड़दी गई हैं जैसे [९७वें अध्यायके ४६वें श्लोकमें] पूर्वभाद्रपद नक्षत्रसे युक्त पौर्णमासी होनेपर भद्रह्रदकी यात्रा, एवं [उक्त अध्यायके ९० वें श्लोकमें] आर्द्रा नक्षत्रसे युक्त चतुर्दशी तिथि होने पर रुद्रकुंडकी यात्रा कहीहै पर उक्त ग्रंथके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लिखित कितनेही कुंड, देवस्थान. और देवमूर्तियां कालके फेरफार एवं विधर्मी म्लेच्छ महाराजों (मुसलमान बादशाहों)के अत्याचारसे नष्ट—भ्रष्ट और लुप्त—गुप्त होगयी हैं—इन्ही सब कारणोंसे अब ग्रंथोक्त सभी यात्रायें प्रचलित नहीं हैं। बहुतेरी यात्रायें आज कल मेला (तमाशा) के रूपमें बदल गई हैं, पर यात्राके प्रेमी लोग अपने कर्तव्यका पूर्णरुपसे निर्वाह करही लेते हैं, अत एव इस विषयको बहुत बढ़ाकर लिखनेकी कोई विशेष आवश्यकता नहीं जान पडती।

काशीतीर्थ अपने ठीक ठिकानेपर वर्तमानहै क्योंकि काशीखंडमें जहां जहां स्रोतोंके वर्णन है, वहां वहां अबतक सोतियां बराबर चलाकरतीहैं, जैसे दशाश्वमेधके वर्णनमें [६१वें अध्यायके ३३वें श्लोकमें] जो यमुनाको पूर्ववाहिनी लिखाहै सो शूलटंकेश्वरके दक्षिण ओर (पोटियाघाटसे सटके) पहिले गोदौलियाका नाला बहता था, अब नाला पाटकर उसके ऊपर सडक चलतीहै, और नीचेसे नलहै पर जहां यमुनाका संगम लिखाहै वहांपर बारहों मास पत्थरकी सीढ़ीके ऊपरसे एक सोती बहाकरतीहै जोकि उक्त श्लोकके अनुसार ठीक पूर्वओरसे बहकर गंगामें गिरतीहै और गंगा यमुनाके संगमको स्पष्ट करती हुई दिखाईपडती है।

योंही मणिकर्णिकाके कुण्डमें ब्रह्मनालसे ब्रह्मद्रव (का जल) गोमुखीके द्वारा बराबर आया करता है। जैसा कि उक्त ग्रंथके ६१वें अध्यायके १५१वें श्लोकमें कहाहै। इसी सोतीसे मणिकर्णिकाके उत्तर सेंधियाघाट (जोकि वीरतीर्थ है) धँसकर टूटगयाहै। कहा जाताहै कि घाट बांधने वालोंने अज्ञतावश उस ब्रह्मस्रोतके निकासको बन्द करदियाथा जिससे वह घाट धँसकर बैठगया, जो हो पर वहांपर एक सोती स्वयं बहा करतीहै (जो दत्तात्रेयके मन्दिरके नीचे गंगामें मिली है)।

इसी प्रकारसे पंचगंगा घाटपर जटारके मन्दिर और लक्ष्मणबालाजीके मन्दिरके मध्यसे जो मार्ग (रास्ता) आताहै जिसके ऊपर गभस्तीश्वरका स्थानहै उसीके नीचे एक सोती बहाकरतीहै जिसको काशीखंडके ५९वें अध्यायके १०९वें श्लोकमें किरणा नदी कहकर लिखाहै, वह सोती अबतक बहा करतीहै। इसी भाँति पंचगंगापर और भी कईएक सोतियां देख पडतीहैं. जिनसे उस स्थानका पंचगंगा नाम पड़ना कोई अनुचित नहीं कहा जासकता।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इसी रीतिके अनुसार [का०खं०के९७वें अध्यायके२५३वें श्लोकमें] असी नदीको शुष्का नदी कहाहै जोकि आजकल भी वर्षा ऋतु बीतजाने पर सूख जातीहै। इन बातोंसे यह स्पष्ट होजाताहै कि काशीखंडके कहेहुए देवस्थान इत्यादि चाहे किसी कारणसे नष्ट भ्रष्ट होकर हट बढ़गयेहैं, पर ये सब सोतियां अथवा वरना और असी नदी यथास्थान पर रहकर उक्त स्थानोंका ठीक ठीक प्रमाण (सबूत) सिद्ध करदेती हैं। जोकि काशीखंडके लिखेजानेके समयसे आज तक अपने स्थानपर सुशोभित हैं।

काशीमें "आठ वार नव तिवहार" की कहावत बहुत ही प्रसिद्ध है, वास्तवमें काशीकी यात्राओंको पूर्णरीतिसे लिखदेना बड़ाही कठिन काम है, क्योंकि "शिवरहस्य" की कथाहै कि "एक बार ब्रह्मा और विष्णु इत्यादि देवगण काशीकी पञ्चक्रोशीयात्राका संकल्प करके चले, बीस वर्षमें भीमचंडीके समीप पहुंचे तब विचार करने लगे कि यह यात्रा विधिवत् कैसे पूर्ण होसकेगी ? क्योंकि इतने दिन बीत जाने परभी अभी यात्राका बहुत भाग अवशिष्ट (बाकी) है, फिर किसी प्रकारसे यात्रा समाप्त करके अपने अपने लोकोंमें चलेगये। पंचक्रोशी यात्राको पूर्णरीतिसे एक बार महाबली नन्दी, गणेश और भैरवही करसके हैं"... तो अब विचारना चाहिए कि जब देवतोंकी यह गति हुई तो कामादिक छवों शत्रुओंसे पराभूत शक्तिहीन मनुष्य (बिचारा) क्योंकर यात्रा करसकताहै ? अतएव यथाशक्ति और पूर्णभक्ति होकर जहां तक बनपड़े इन यात्राओंको करना चाहिए—क्योंकि ये सब यात्रायें तो साधारण रूपसे लिखीहैं इनसे भिन्न और भी कितनीही यात्रायें शास्त्रोक्त अशास्त्रीय और शिष्टाचार इत्यादिसे प्रचलित हैं, कितनी ही नीच अन्त्यज और विधर्मियोंकी भी यात्रायें (तिवहार) होतीं है। फिर कितनेही देवतोंके वार्षिक (शृंगार) उत्सव और रामलीला कृष्णलीला इत्यादिभी होतीहैं जिनके कारण काशीवासियोंका एक दिनभी व्यर्थ नहीं जाने पाता। यदि उन सब बातोंका भी उल्लेख किया जावे तो यह यात्राकी पुस्तिका एक बहुत भारी ग्रंथ बनजावेगी अतएव इन सब बातोंका संग्रह हो जाने पर एक स्वतन्त्र ग्रंथ लिखदिया जावेगा।

काशी—एक प्रधान तीर्थस्थान है, यद्यपि इसका रूप एक बडे नगरके समान है, पर वास्तवमें यह शुद्ध तीर्थभूमी ही है। अतएव यहांपर देवदर्शन, मन्दिरोंकी रचना और घाटोंकी छटा ही मुख्य दर्शनीय वस्तु है, पर विदेशीय लोगोंके मन प्रसन्न करनेको और भी बहुतेरे उत्तमोत्तम दृश्यस्थान हैं जिनका नामादिक संक्षेपरूपसे लिखदेना स्यात् (शायद) अनुचित नहीं होगा।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१ असीसे राजघाटलों घाटोंकी शोभा जिनके ऊपर प्रायःमन्दिर, तथा लोगोंके भवन भी शोभायमान हैं।

२ श्रीदुर्गाजीका मन्दिर, दुर्गाकुंडपर।

३ पानीघर (पंपस्टेशन) भेलूपुर।

४ सन्ट्रेल हिन्दूकालिज कमाच्छा।

५ महाराज बनारसका शिवाला गोदौरिया।

६ श्रीविश्वनाथजीका सुवर्णमन्दिर।

७ श्रीअन्नपूर्णादेवीजीका मन्दिर।

८ टौनहाल, कोतवाली, (जो अब "भैरोनाथ" महालमें बनीहै।)

९ कंपनीबाग, यह मन्दाकिनी तीर्थ है—अब "मदाकिन" प्रसिद्ध है, इसीके पूर्व-दक्षिण कोन पर "काशीनागरी प्रचारिणी सभाका भवन और पुस्तकालय है।

१० प्रिंस आफ वेलस् अस्पताल (जिसके समीपमें ईश्वरीअस्पताल स्त्रियोंके लिये है

११ गवर्न्मेन्ट कालिज (इसमें पत्थर खोदकर बनवानेवालोंके नामादिक विवि भाषाओंमें लिखे हैं)।

१२ विक्टोरिया पार्क, यह 'बेनियांबाग' प्रसिद्ध है, यही अस्तिक्षेप तडागतीर्थ है—इसमें स्वर्गीया महारानी विक्टोरियाकी मूर्ति वर्तमान प्रिन्स आफ वेल्ससे स्थापि कराई गई है।

१३ माधवरायका " धरहरा " यह औरंगजेबकी बनाई हुई मसजिद है इसमें ऊपर तक सीढियां लगीहैं।

१४ सारनाथका " धमेष " यहां पर बौद्ध लोगोंके समयकी बहुतेरी प्राचीन वस्तु सरकारकी ओरसे खोदवाकर रक्खीगई हैं।

१५ रामनगरका किला—गंगापार काशीनरेशका किला है इसके भीतर बुर्ज वेदव्यासजीका मन्दिर है।

(योंही और भी बहुतेरे दर्शनीय स्थान हैं जो स्वतंत्र रूपसे दूसरे ग्रंथमें लिखे जावेंगे।)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अन्तिमप्रार्थना।

जिस काशीका माहात्म्य काशीखंड इत्यादि ग्रंथोंमें भराहै उसीकी यात्रा और चित्रादिक इस ग्रंथमें लगाये गयेहैं। चित्रोंमें घाटोंकी शोभा अद्भुत देख पडतीहै, पर चित्रसे चरित्रमें बहुत ही अन्तर (फर्क) रहताहै, समयके फेरफारसे अब लोगोंके घाट वा मन्दिर इत्यादिके विषयमें धन लगानेकी इच्छा नहीं होती—काशीमें कितने ही घाट और बडे बडे मन्दिर राजों महाराजोंके बनाये वर्तमान हैं पर अब उनके वंशधर राजे महाराजे उन पर तनिक भी चित्त नहीं देते हैं उन लोगोंसे तथा अन्यान्य धर्मप्राण उदार दानवीरोंसे यही प्रार्थना है कि जो घाट सुगमतापूर्वक स्नानादिकके लिये बनेथे वे टूटकर ऐसे होगये हैं कि अनजान यात्री लोग उनमें गिरकर चोट खाजातेहैं। घाटोंके भीतर बडी बडी पालें पडगयीं हैं जिनके भीतर जा रहने पर फिर बाहर होना असंभव है इन दिनों घाटोंकी इन दुर्दशाओंके कारण कइक मनुष्य डूबकर मरचुके हैं। ग्रहण इत्यादि मेलोंमें सरकारकी ओरसे बांस बांधा जाताहै जिसमें कोई यात्री धक्का खाकर खड्डोंमें नहीं चलेजावें। यही दशा बहुतेरे मन्दिरोंकीभी होगई है, कितने ही प्राचीन स्थान लोगोंके घर बनगये हैं, कितनेही देवते दो चार पुरुष (पोरसा) नीचे पडगये हैं, कितनेही मन्दिर टूट फूट कर जीर्ण शीर्ण होरहे हैं, कितने ही मन्दिरोंमें पूजादिक कुछ भी नहीं होताहै, अतएव वर्तमान कालके राजों महाराजोंसे एकमात्रयही प्रार्थना है कि वे लोग अपने पूर्वजोंकी अटलकीर्तिका जीर्णोद्धार कराकर अक्षय पुण्य लूटें। और उदार लोगोंको चाहिए कि नवीन शिवालय इत्यादिका बनवाना रोककर यथाशक्ति प्राचीन स्थानोंहीका जीर्णोद्धार करावें क्योंकि काशीरहस्यमें नवीनकी अपेक्षा प्राचीन देव स्थानोंके जीर्णोद्धार (मरम्मत) करनेका विशेष पुण्य लिखाहै यथा—

"खण्डस्फुटितसंस्कारमत्र कुर्वन्ति ये नराः
ते रुद्रलोकमासाद्य, मोदन्ते सुखिनः सदा॥"

फिर काशीखण्डमें भी यही बात कही है।

"कालेन भङ्गमापन्नं, जीर्णोद्धारं करोति यः।
इह तस्य फलस्यान्तः, प्रलयेऽपि न जायते॥"

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अतएव काशीमें एक "जीर्णोद्धारिणी" सभा स्थापित हुई है, जिसके उद्योगसे कुछ एक स्थानोंका जीर्णोद्धार हुआहै, पर अभी बहुत विशेष अंश (बाकी) पडे हैं। यदि धार्मिक लोग उसकी सहायता करेंगे तो आशाहै कि बहुत कुछ उत्तम कार्य होसकेंगे इति।

नारायणपतिश्शर्म्मा, काशीखण्डानुसारतः।
ग्रन्थाननेकानालोच्य, काशीयात्राविधिं व्यधात्॥

इति श्रीत्रिपाठिनारायणपतिशर्मलिखित श्रीकाशीयात्रा समाप्त।

शुभमस्तु।

सूचना—इस काशीयात्रा ग्रंथमें जो काशीखंडके अध्याय और श्लोकोंके अंक लगे हैं, वे इसी यंत्रालयके छपे हुए उक्त ग्रंथके अनुसार हैं—अन्यसे भेद होनेपर मिलान करलेना उचित है।

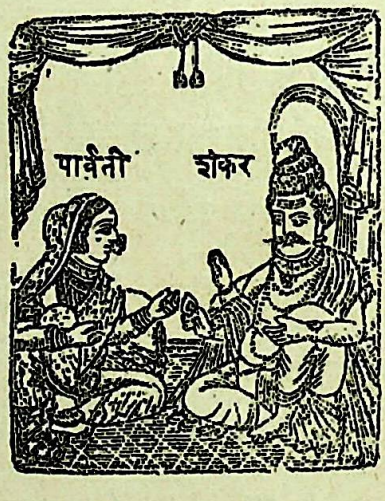

पुस्तक मिलनेका पता—खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस—बम्बई.
(अथवा) श्रीवेंकटेश—बुक्डीपो, काशी.

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्रीशौ वन्दे ।

काशीखण्ड—भाषा ।

पूर्वार्द्ध ।

प्रथम अध्याय ।

विंध्यपर्वतकी वृद्धि ।

"विश्वेशं माधवं ढुण्ढिं दण्डपाणिं च भैरवम् ॥
वन्दे काशीं गुहां गङ्गां भवानीं मणिकर्णिकाम् ॥
प्रणमत करिपतिवदनं शुभसदनं महाप्रत्यूहकदनम् ।
सिद्धिबुद्धिहृन्मदनं भक्तेष्टददनमेकरदनम् ॥ १ ॥
यत्सत्तालवलेशमात्रमखिलं ब्रह्माण्डभाण्डोदरं
मिथ्याप्येतदतीव सत्यसदृशं विज्ञायतेऽज्ञानिभिः ॥
यद्ज्ञत्वा न निवर्ततेऽमृतपदं यत्सेवयापाद्यते
सोमः सोमधरोऽवतान्निजजनाञ्छ्रीविश्वनाथो विभुः ॥ २ ॥
हे ढुण्ढिराज मणिकर्णि सुरापगेऽन्नपूर्णे गुहेऽम्ब गुह भैरव दण्डपाणे ॥
काशि ग्रहेश्वर रमापतिविश्वनथौ कार्य्या स्वपादरजसा मम वाक् पवित्रा ॥३॥
श्रीचन्द्रशेखरमहं स्वगुरुं पितृव्यं तातं रमापतिमथो निजमातरञ्च ॥
लक्ष्मीपतिं स्वकसहोदरमग्रजातं विद्यापतिं समभिवन्द्य लिखामि भाषाम्॥४॥
काशीखण्डे मनोज्ञे सद्धृदयहृदयैः पेयवाक्याम्बुराशौ
गंगास्तोत्रादिवीचौ विधिहरिगिरिजेशोक्तिपूतप्रतीरे ॥
शक्यो भाषानुवादः प्रचलितवचसा सेतुरूपो न बद्धुं (कर्तुं)
व्याजेनैतेन शम्भोर्गुणकथनधिया साहसं मेऽस्त्वनिन्द्यम् ॥ ५ ॥
नेत्रर्तुनिधिभू (१९६२) वर्षे श्रीगंगासप्तमीतिथौ ॥
गुरुपुष्यसमायोगे काश्यां प्रारभ्यते मया ॥ ६ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विद्वद्रमापतेस्सूनुर्नारायणपतिर्द्विजः ॥
भाषानुवादं तनुते काशीखण्डे यथामति ॥ ७ ॥

श्रीमहादेव पार्वतीके प्रियपुत्र, गजेन्द्रमुख, त्रिविधतापरहित, उस सुप्रसिद्ध, महाप्रभु, गणाधिराजका हम सब ध्यान करतेहैं ॥ १ ॥ जो भूतलमें विराजमान रहनेपरभी स्वयं भूमी नहीं है, जो अधोभागमें स्थितहोनेपरभी स्वर्गके ऊपरही है, जो स्वयं भूमण्डलमें बद्ध होनेपरभी मुक्तिका दान करतीहै, फिर जिसमें मृतहोनेवाले प्राणीमात्र अमृतपदके अधिकारी होजातेहैं एवं जिसे त्रैलोक्यपावनी गंगाके तीरपर सदैव देवगण सेवते रहतेहैं, वही त्रिपुरान्तककी राजधानी श्रीकाशी अज्ञानरूप विपत्तिसे जगत्की रक्षा करे ॥ २ ॥ जिस परमात्माके सृष्टि—स्थिति—प्रलयरूप संध्याके व्याजसे त्रैलोक्यपति ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र निरंतर गमनागमन करते रहतेहैं उस महेश्वर भगवान्को नमस्कार है ॥ ३ ॥ अष्टादशपुराणोंके रचयिता, सत्यवतीनन्दन व्यास सूतके सन्मुख समस्त पातकहारिणी (काशीखण्डकी) कथाको कहने लगे ॥ ४ ॥ श्रीव्यासजी बोले—एकबार श्रीमान् नारदऋषि निर्मल नर्मदाके जलमें स्नानकर समस्त देहधारियोंको सर्वस्व देनेवाले (अमरकंटक क्षेत्रके अधिष्ठाता) श्रीमान् ओंकारेश्वर भगवान्का पूजन करनेके उपरान्त ॥ ५ ॥ चलते हुए सन्मुखही संसार—संताप—संहारक नर्मदाके जलसे परिष्कृत, विन्ध्यनामक पर्वतको देखने लगे कि ॥ ६ ॥ वह पर्वत शोभासंपन्न स्थावर और जंगम दोनों प्रकारके अपने वसुमय स्वरूपसे इस पृथिवीके वसुन्धरा नामको वास्तवमें सार्थक कररहाहै ॥ ७ ॥ वह रसाल (आम) के वृक्षोंसे रसालय, अशोकोंसे शोकहारी और ताल, तमाल, हिंताल और सालोंसे सर्वत्रही शोभायमान होरहा है ॥ ८ ॥ बडे बडे सोपाडीके पेडोंसे आकाशको ढाँपलेता, बेलोंसे श्रीफलसा सुशोभित, अगरके वृक्षोंसे बडा सुगन्धित एवं केतोंसे बानरसा पिंगलवर्ण होरहाहै ॥ ९ ॥ वह पर्वत वनदेवीके कुचाकार लकुचों (लकुटों) से मनोहर, तथा अमृतसमान फलवाले केलोंसे परिभासित है ॥ १० ॥ वह सुन्दर—रँगीली नारंगियोंसे शोभाके रंग मंडपसा, बेंत, नींबू और बिजौरा आदिसे परिपूर्ण है ॥ ११ ॥ वायुसे कंपित कंकोल (गहुआफल) लताके रासक्रीडासा करताहुआ वह विन्ध्य, लवली (लवा) लतिकाओंकी छोटी छोटी लीलाओंसे नाचघरके समान शोभायमान है ॥ १२ ॥ वह पर्वत कुछ कुछ हिलते हुए कपूरी—केलोंके पत्तोंसे संकेत करके थकेहुए पथिकोंको मानो विश्राम करलेनेके लि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बुलारहा है ॥ १३॥ फिर वह नागरिक जनसा चंचल नागकेसरके पल्लवरूप अपने करपल्लवोंसे वेलाकी कलियोंके गुच्छारूपी स्तनको मानो स्पर्श कर रहाहै ॥ १४ ॥ वह पर्वत फटेहुए अनारके फलोंहीसे अपने अनुरागभरे हृदयको दिखाताहुआ (सून-सान) जंगलमें स्वामीरूपसे माधवीलताको लिपटारहाहै ॥१५॥ विन्ध्याचल, अनंत फलकी मालाको पहिनेहुए गगनस्पर्शी गूलर वृक्षोंके द्वारा, चारोंओरसे करोडों ब्रह्मा-ण्डोंको धारण कियेहुए अनंत भगवान्के समान भासमान होरहाहै ॥ १६ ॥ वनस्थली की नासिकाके तुल्य कटहलोंसे और विरहियोंके मांस खाने (जी दुखाने) के कारण जिनके पत्तेभी झरगये हैं ऐसे सुग्गोंके ठोर सदृश परासोंसे वह घिराहुआहै ॥ १७ ॥ अपनेको कदंब कहनेवाले नीपवृक्षोंके देखनेहीसे जिनके रोंगटे खडे हो उठेहैं ऐसे बहुतेरे कदम्बोंसे वह चतुर्दिक शोभासंपन्न होरहाहै ॥ १८ ॥ सुमेरु पर्वतके ऊंचे शृंगोंके समान रुद्राक्ष—वृक्ष, प्यारमेवा, और धतूर—इत्यादिसे तो वह कामीलोगों-के मन्दिरकी नाईं विराजित है ॥ १९ ॥ कहीं कहीं पर तो वह बडे बडे बरगदके पेडोंसे डेरोंके ऐसा घिराहुआहै, और कोरैयाके गुच्छोंसे बैठेहुए बकुलोंसा शोभा पारहाहै ॥ २० ॥ वह पर्वत करौंदा करीर (टेंटी) करंज और कुलंबके वृक्षोंद्वारा याचकोंके लिये मानो सहस्रकर बनकर अपने हाथोंको उठायेहुए है ॥ २१ ॥ राज-चंपककी (पीली) कलियोंसे तो मानो उत्तम दीपोंद्वारा उसकी आरती होरहीहै।फिर वह पुष्पोंसे लदेहुए सेमरोंसे पद्माकरों(सरोवरो)की शोभाकोभी जीतेलेताहै ॥२२॥ वह पर्वत कहीं तो ऊँचे २ पीपल कहींपर सुवर्णकेतकी और कहीं २ मालाबद्ध नक्तमालोंसे बहुतही शोभायमान होरहा है॥२३॥योंही वैर,दुपहरिया, और पतरजीवा आदिसे विराजित वह पर्वत तेन्दुआ, इंगुआ, और करना आदिके पौधोंसे करुणाका स्थान बनारहाहै॥२४॥ वह विंध्य झरतेहुए महुआके फूलों (अंडों) से धरारूपधारी महादेव अर्थात् पा-र्थिवेश्वरकी रात्रिदिन अपने हाथोंसे चढाई हुई मोतियोंके द्वारा मानो पूजा कररहा है ॥ २५ ॥ साखू सहिजना, अर्जुन और बीज इत्यादि मानो उसे पंखा झलरहेहैं एवं नारियर और खजूर इत्यादि वृक्ष मानो आकाशमें छाता लगायेहुएहैं ॥ २६ ॥ सुन्दरनीव, परजाता, कचनार, पांडर (गुलाब) इमली, झरवैरिया, शाखोट, भैनफल ॥ २७ ॥ बेडबडे सेहुंड, रेंड, महुआ, मौलसिरी और तिलकके वृक्षोंसे तो वह स्पष्टही माथेपर तिलक लगायेहुए सा जान पडरहाहै ॥ २८ ॥ वह पर्वत बहेडा, पाकर, सलई, देवदारु, हरदी इत्यादि तथा अन्यान्य सदा फल

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

फूल देनेवाले वृक्ष और लताओंसे हराभरा है ॥ २९ ॥ वह पहाड इला
यची, लवंग, मरिच, और कुलंजन इत्यादिके वनोंसे घिरे रहनेपर भी जामुन, अमड़ा,
भेलावां, लसोडा और खंभारी आदिसे रंगबिरंग होरहाहै ॥ ३० ॥ साग, शाल,
चन्दन और रक्तचन्दनोंसे परम रमणीक विन्ध्य हरैं, कठचंपा और आंवलोंके वनों
से विभूषित होरहाहै ॥ ३१ ॥ वह दाख (अंगूर) ताम्बूल और पीपल इत्यादि
लताओंसे आवृत एवं बेला, (बेइल) जूही, कुन्द और मदयन्ती आदिसे सुगंध संयुक्त
होरहाहै ॥ ३२ ॥ मालतीके फूलोंपर भ्रमणशील भ्रमरपंक्तियोंसे गोपियोंके साथ क्रीड़ा
करनेके लिये भ्रमरके छलसे आयेहुए श्रीकृष्णकी नाईं वह अलंकृत होरहाहै ॥ ३३ ॥
विन्ध्याचल भाँतिभाँतिके मृगगणोंसे भरपूर, नानाजातिके पक्षियोंके कूजनसे प्रतिध्व
नित, और बहुतेरी नदी—सरोवर—झरना और तलैयोंसे आवृत है ॥ ३४ ॥ अनेकानेक
देवगण तुच्छ सौन्दर्यवाली स्वर्गभूमिको छोडकर मानो पूर्ण भोगकरनेकी इच्छासे उस
पर्वतपर आकर वास कररहेहैं ॥ ३५ ॥ वह पहाड इधर उधर झरतेहुए पत्र और
पुष्पोंसे मानों अर्घ्य देता और मयूरोंके केकारवसे तो वह मानो दूरहीसे स्वागत (प्रश्न)
कररहाहै ॥ ३६ ॥ तदनंतर वह विन्ध्याचल सैकडों सूर्यके समान कांतिमान् उज्ज्वल
ताम्बर नारद ऋषिको आकाशपथमें देखकर दूरहीसे उनकी अगवानी करनेकेलिये
चलपडा ॥ ३७ ॥ ब्रह्माके पुत्र नारदऋषिके शारीरक तेजसे अपनी कन्दराओंके
अन्धकारके दूर होतेही उनको आतेहुए देखकर उस पर्वतने अपने मानसिक अन्ध
कारकोभी दूरही त्यागदिया ॥ ३८ ॥ नारदके ब्रह्मतेजके प्रभावसे संभ्रमयुक्त
होनेपरभी सज्जन सत्कारमें तत्पर उस पाषाणस्वभाव पर्वतने अपनी कठिनताको त्यागकर
कोमलताको धारण करलिया ॥ ३९ ॥ तब तो देवर्षि नारदभी उसके दोनों रूप
(अर्थात् पर्वतरूप तथा मूर्ति) में कोमलताको देखकर बहुतही आनन्दित हुए
क्योंकि साधुओंका चित्त तो विनयके वशीभूत होताही है ॥ ४० ॥ जो कोई स्व
बडा होनेपरभी स्वगृहागत बडे अथवा छोटेको देखकर नम्रता करताहै वही महा
समझाजाताहै कुछ बडा होनेहीसे बडप्पन नहीं होता ॥ ४१ ॥ वह गिरिवर, अत्यु
उन्नत शिखर होनेपरभी प्रणतकन्धरहो, भूतलपर माथाटेककर उस महामुनिको प्रणाम
करनेलगा ॥ ४२ ॥ तब तो नारदऋषिभी उसे अपने हाथोंसे उठाय, आशीर्वादसे
अभिनन्दित कर, विन्ध्यके दियेहुए मनसेभी ऊंचे सिंहासनपर जा विराजे ॥ ४३ ॥
तदनंतर विन्ध्यने—दधि, मधु, घृत, जलसे ओदे अक्षत, दूब, तिल, कुश, और पुष्प

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इस अष्टाङ्ग अर्घ्यसे उनकी पूजा की ॥ ४४ ॥ मुनिराजके अर्घ्यग्रहण करनेपर, विन्ध्यने थकेहुए नारदको पाँवचापने आदि सेवाओंसे श्रमरहित देखकर नम्रतापूर्वक (यह) कहा ॥ ४५ ॥ हे मुने ! आपके चरणरजसे मेरा रजोगुण तो दूर होहीगया पर आपके शारीरक तेजसे मेरा आंतरिक तमभी तुरन्त जातारहा ॥ ४६ ॥ हे मुनिनाथ ! आज मेरी समृद्धि सफल हुई, अहा ! आज मेरा कैसा सुदिनहै जो मेरे चिरकालके उपार्जित प्राक्तन पुण्य आज फलीभूत हुए ॥ ४७ ॥ आजसे पर्वतोंमें मेराभी धराधरत्व मानयोग्य होगा यह बात सुनकर नारदमुनि उसघडी कुछ ऊँची (ठंढी) श्वास लेकर चुपरहगये ॥ ४८ ॥ तब तो उस गिरिश्रेष्ठने संभ्रान्तचित्त होकर फिर—कहा—हे सर्वार्थविज्ञ ! ब्रह्मन् ! आप इस उसाँस लेनेका कारण बतलाइये ॥ ४९ ॥ त्रैलोक्यभरमें जो कुछ प्रार्थनीयहै वह सब तो आपका देखाही हुआहै कोईभी वस्तु अदृष्ट नहीं है, मैं आपके पैरों पडताहूं यदि मुझपर आपकी कृपाहै तो इस बातको कहदीजिये ॥ ५० ॥ आपके आगमन—जनित आनन्द संदोहसे गद्गद स्वर होनेके कारण यद्यपि मैं सब बातें नहीं कहसकता, पर एकबातको कहेविना नहीं रहाजाता ॥ ५१ ॥ (यह जो) पूर्व पुरुषलोग सुमेरु इत्यादिके विषयमें पृथिवीके धारण करनेका सामर्थ्य वर्णन करतेहैं, यह बात उन सबोंके समुदायसेहै पर मैं अकेलाही इस धराको धारण करसकताहूं ॥५२॥ रहा एक हिमालय वहभी शिष्टलोगोंका मान्य है क्योंकि वह पार्वतीका पिता पर्वतोंका राजा, और महादेवका संबन्धी(श्वशुर) है ॥ ५३ ॥ पर सुवर्णसे पूर्ण, अथवा रत्नशिखर, किंवा देवतोंका निवासस्थान होनेसे सुमेरुको तो मैं कुछभी नहीं मानता ॥ ५४ ॥ इस संसारमें क्या सैकडोंही पृथिवीके धारणकी लीला करनेवाले पर्वत सज्जनोंके मान्य नहीं है ? पर वे सब अपनेही अपने स्थानोंपर माननीयहैं ॥ ५५ ॥ मन्देह नामक राक्षसोंके देहका सन्देहही कर देनेसे उदयाचल एक दयाका आश्रित बनाहै, और निषध पर्वत तो ओषधियोंसे रहितहीहै, एवं अस्ताचलकी प्रभा अस्तमितही रहतीहै ॥५६ ॥ नीलगिरि नीली (लील) का निलयहै, मन्दरका प्रकाश मन्दहै, मलयाचल सर्पोंहीका आलयहै, और रैवतक पर्वत तो धनको कुछ समझताही नहीं॥५७॥फिर हेमकूट, त्रिकूट इत्यादि पर्वतोंके उत्तर पदमें कूट (झूठ)ही है रहे किष्किंध, क्रौंच, एवं सह्य इत्यादि सो वे सब तो भूमिके भारसहनेयोग्यही नहीं हैं॥५८॥इस प्रकारसे विन्ध्यका वचन सुनकर नारदऋषि अपने मनमें विचारनेलगे कि इतने बडे अहंकारके करनेहीसे बडप्पन नहीं होसक्ता ॥ ५९ ॥ क्या इसी भूमिपर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

निर्मल शोभावाले श्रीशैलप्रभृति पर्वत नहीं हैं; ? जिनके शिखरमात्रका दर्शन सज्जनोंकी मुक्तिका कारण होताहै ॥ ६० ॥ आज इस पर्वतकाभी बल देखलेना चाहिए ऐसाही विचार कर नारदमुनि कहने लगे, पर्वतोंका सामर्थ्य दिखलाते हुए तुमने जो कुछ कहा है वह तो ठीकहीहै ॥ ६१ ॥ पर समस्त पर्वतोंमें शैलेन्द्र सुमेरुने तुम्हारा अपमान करताहै, इसीपर मैंने श्वास लियाथा, सो तुमसेभी निवेदन करदिया ॥६२॥अथवा मुझसे साधुलोगोंको इन बातोंकी कौन चिन्ताहै ? तुम्हारी स्वस्ति हो ऐसा कहकर वे आकाशमार्गमें चलेगये ॥ ६३ ॥ नारदमुनिके चलेजानेपर अत्यन्त उद्विग्नचित्त, वन्ध्यमनोरथ वह विन्ध्य बडी चिन्ताको प्राप्त होकर अपनेको धिक्कारने लगा ॥ ६४ ॥ विन्ध्यने कहा—शास्त्रकलाके ज्ञानसे हीन जनके जीवनको धिक्कारहै, निरुद्यम होकर जीते रहनेको धिक्कारहै, जाति भाइयोंसे पराजित होकर जीनेवालेको धिक्कारहै एवं व्यर्थमनोरथवालेके जीनेको भी धिक्कारहै ! ॥ ६५ ॥ अहो ! (भला) वह कैसे दिनमें खाता और रातमें सोता एवं एकान्तमें सुखसे रहताहै ? जो शत्रुसे पराजित होजाताहै ॥ ६६ ॥ वह दावानलकी ज्वालाभी मुझे वैसी पीडा नहीं देसकती, जैसा कि चित्तमें चिन्ता—संतापका समूह बाधा देरहा है ॥ ६७ ॥ पुराने लोगोंने यह बहुतही ठीक कहाहै कि चिन्ताकी मूर्ति बडीही भयावनीहै क्योंकि औषध, लंघन अथवा अन्य उपायोंसेभी उसकी शान्ति नहीं होती ॥ ६८ ॥ यह चिंतारूपी ज्वर निस्सन्देह मनुष्योंके क्षुधा, निद्रा, बल, रूप, उत्साह, बुद्धि, शोभा और जीवनकोभी हरलेता है ॥ ६९ ॥ छः दिन बीतजानेपर ज्वरको जीर्णज्वर कहाजाताहै किन्तु यह तीव्र चिंताज्वर प्रतिदिन नयाही हुआ करताहै ॥ ७० ॥ इस चिंताज्वरके विषयमें धन्वन्तरिभी धन्यवाद नहीं पाते, इसमें चरकाचार्यभी नहीं चलसक्ते एवं दोनों अश्विनी कुमारभी असमर्थही होजातेहैं ॥७१॥ क्या करूं ? कहां जाऊं ? क्योंकर सुमेरुको जीतलूं, ? मैं तो उछल (फाँद) कर उसके शिखरपर कूदपडता, पर इसीकारणसे नहीं कूदसकता कि ॥ ७२ ॥ पूर्वकालमें किसी मेरेही गोत्रवालेने इन्द्रको क्रोधित कराके हमलोगोंके पक्ष कटवादियेहैं, अतएव मुझसे पक्षहीनकी अभिलाषाको धिक्कारहै ॥ ७३ ॥ अथवा वह सुमेरुही ऊँचे होनेसे क्योंकर मुझसे डाह करताहै ? (हाँ ठीकहै) प्रायः भूमिके बोझा ढोनेवाले भाँति भरेही रहतेहैं ॥ ७४ ॥ नहीं तो सत्यलोकनिवासी ब्रह्मचारी वेदज्ञाता, नारदकेभी विषयमें झूठ बोलनेकी सम्भावना भला कैसे कीजासकतीहै ? ॥ ७५ ॥ फिर युक्ति

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

युक्तका विचार मेरे ऐसोंको नहीं शोभता, क्योंकि जो पराक्रममें असमर्थहैं उन्हींका मन विचारमें गोताखाताहै ॥ ७६ ॥ अथवा इन सब व्यर्थ चिन्तनोंसे कौन फलहै ? मैं विश्वके कर्ता भगवान् विश्वनाथहीके शरणागत क्यों न होऊं?वेही मुझे बुद्धि देंगे॥ ७७॥ क्योंकि विश्वनाथही सब अनाथोंके नाथ कहे जातेहैं, विन्ध्यने क्षणभर विचारकर मनमें ऐसेही निश्चय करलिया कि ॥ ७८ ॥ "मैं यही करूंगा" कालका बिताना अच्छा नहीं है, क्योंकि बुद्धिमानोंको बढतेहुए शत्रु और रोगकी उपेक्षा नहीं करनीचाहिये ॥ ७९ ॥ ग्रह और नक्षत्रगणके सहित भगवान् सूर्य अवश्य सुमेरुको अधिक बलशाली मानकरही नित्य प्रदक्षिणा करतेहैं ॥ ८० ॥ सुमेरुपर क्रुद्ध वह विन्ध्याचल इसप्रकारसे निश्चयकर, असीम गगनपथके अन्तकरदेनेवाले अपने शिखरोंसे बढनेलगा ॥८१॥ कहींभी किसीके साथ किसीको विरोध नहीं करना चाहिये, और यदि करनाही पडे तो ऐसा प्रयत्न करे जिसमें कोई उपहास न करसके ॥८२॥ अनंतर वह महापर्वत सूर्यनारायणके मार्गको रोककर कृतकृत्यकी नाईं स्वस्थचित्त होगया, क्योंकि प्राणियोंका होनहार सर्वथा ईश्वरहीके अधीन रहताहै ॥ ८३ ॥ आज यमराजके पिता सूर्यदेव जिसके दाहिनीओरसे घूमकर चलेजावेंगे वही (सब पर्वतोंमें) कुलीन, श्रीमान्, महान् और पूजित होगा ॥ ८४ ॥ समर्थभी जबलों कहींपर अपनी शक्तिको नहीं दिखलाता, तबलों काष्ठके अन्तर्गत अग्निके समान वह सभीसे लंघ्य (दब्बू) बना रहताहै ॥ ८५ ॥ इसभाँतिसे चिन्ताके बडे भारको उतारकर स्थिरसंकल्प हो वह विन्ध्यगिरि ब्राह्मणके समान भगवान् भास्करके उदयकी प्रतीक्षा करताहुआ (दृढतापूर्वक) खडा रहा ॥ ८६ ॥

आदिशक्ति विन्ध्येश्वरी, बसहिं निरंतर यत्र ।
सो विन्ध्याचल शक्ति निज, कस न दिखावहिं तत्र ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषाटीकायां विन्ध्यपर्वतवृद्धिवर्णनं नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

द्वितीय अध्याय ।

सत्यलोकवर्णन ।

व्यासजी बोले–इस जगत्के आत्मा, बैठेहुए अन्धकारके शत्रु सूर्यदेव अपने पवित्र फैलतेहुए किरणोंसे ॥ १ ॥ सन्मार्ग गामियोंके धर्मोंको बढाते, तामसी स्थिति-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

को दूरभगाते, रात्रिमें मुकुलितमुखी अपनी प्यारी कमलिनीको प्रफुल्लित करते ॥२॥ देवता आदिके हव्य, कव्य और भूत–बलि आदि कर्मोंको प्रवर्तित कराते, पूर्वाह्ण, अपराह्ण और मध्याह्न–प्रभृति क्रिया कालको प्रकट करते ॥ ३ ॥ दुष्ट लोगोंके हृदय और मुखोंमें अन्धकारको रहनेका स्थान बतलाते, एवं निशाकालके कवलित जगत्को फिरसे जीवन दान करतेहुए उदयाचलपर उदित हुए ॥ ४ ॥ सूर्यके उदय होनेहीसे समस्त धार्मिक जनोंकाभी पूर्ण उदय होजाताहै ! अहा!(देखो)परोपकार तुरंतही फलने लगताहै यदि ऐसा न होता तो॥ ५॥ जो सूर्य सायंकालमें अस्तमित होजातेहैंफिर वे (प्रातःकालमें) क्योंकर जीवित (उदित) होसकते ? अनंतर वे खण्डिता नायिका पूर्व दिशाको अनुरागसे भरेहुए अपने करस्पर्शसे आश्वासित कर ॥ ६ ॥ मानों विरहानलहीसे जलतीहुई अग्निदिशाको प्रहरभर सम्भोग कर । लवंग, इलायची, कस्तूरी, कर्पूर और चन्दनसे चर्चितांगी ॥ ७ ॥ ताम्बूली लताओंके रंगसे लाल अधरोष्ठवाली, अंगूरोंके (दाखोंके) गुच्छारूप सुन्दर कुचाग्रसे युक्त, लवलीलतारूप हस्तवल्लीसे विराजित, अशोकपल्लव समान अंगुलियोंसे भूषित ॥ ८ ॥ मलयाचलके वायुरूप श्वासको लेतीहुई, क्षीरसमुद्रहीको वस्त्रके सदृश पहिने, त्रिकूटपर्वतके सुवर्ण और रत्नोंको अपने अंगोंपर धारणकिये सुबेल गिरिरूप नितम्बसे शोभित ॥ ९ ॥ कावेरी और गोदावरीरूप जंघासे सुसज्जित चोलदेशरूप चोलियासे आवृत, सह्य और दर्दुर (पर्वत) रूप वक्षोजसे अलंकृत एवं कांचीपुरीरूपी करधनीसे विभूषित ॥ १० ॥ अत्यंतकोमल महाराष्ट्ररमणियोंके वाग्विलाससे (परम) मनोहारिणी, सद्गुणशालिनी अद्यावधि (कोलापुराधीश्वरी) महालक्ष्मीकी अधिष्ठानभूमि ॥ ११ ॥ सुचतुर दक्षिण–दिशाकी ओर (जब) दिगंगनाओंके स्वामी सूर्यदेव जानेलगे (तब) उनके घोडे समस्त आकाशमण्डलको खेलसे नाँघते हुए ॥ १२ ॥ आगे जानेके लिये नहीं बढसके, (इतनेमें सूर्यके सारथि) अनूरुने निवेदन किया ॥ १३ ॥ अनूरु बोले–हे भानुदेव ! विन्ध्याचल मानसे उन्नतहो, गगनमार्गको छेककर खडाहै, और आपकी दीहुई प्रदक्षिणा पानेकी इच्छासे सुमेरुके साथ स्पर्द्धा कररहाहै ॥ १४ ॥ सारथिकी बात सुनकर सूर्यदेव मनहीमन सोचनेलगे कि यह तो बडाही आश्चर्यहै ! जो इसने आकाश मार्गकोभी रोकदिया ॥ १५ ॥ व्यास कहनेलगे–समर्थ होनेपरभी बीचमार्गमें खडेहोकर सूर्य क्या करें ? बडाशीघ्रकारी होनेपरभी कोई अकेलेही रुँधे हुए मार्गको कैसे नाँघ जासकताहै ? ॥ १६ ॥ जो सूर्य राहुके बाहुग्रस्त होनेपर व्यग्र

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

होकरभी क्षणमात्र नहीं ठहरते, (आज) शून्यमार्गमें रोकलिये जानेपर वे क्या करैं ? विधिही—बलवान्‌है जो सूर्य दो सहस्र दोसौ दो योजन, जनके आधे ॥ १७ ॥ निमेषमें चलेजातेहैं, (आज) उनकोभी बहुत विलंबतक ठहरना पडा ॥ १८ ॥ बहुत समय बीतजानेपर पूर्व और उत्तर देशके निवासीलोग प्रचंड मार्तण्डके किरणजालोंके गिरते रहनेके संतापसे व्याकुल होकर बहुतही घबडाने लगे ॥ १९ ॥ और पश्चिम तथा दक्षिणके रहनेवाले निद्रासे आँखे मूदेहुए सोतेही सोते तारा और ग्रहोंके साथ आकाशकी ओर ताकने लगे ॥ २० ॥ (और यह सोचने लगे कि) सूर्यके न रहनेसे यह दिन नहीं है, और रात्रिभी नहीं है क्योंकि चन्द्रभी नहीं है, फिर आकाशमें बहुतेरे नक्षत्रोंके अस्त होजानेसे यह कौनसा कालहै ? कुछभी समझाई नहीं पडता ॥ २१ ॥ क्या बिना अवसरही यह ब्रह्माण्ड लय होजावेगा ? नहीं—ऐसा होता तो अबतक ये सब प्रलयार्णव इधर उधरसे ब्रह्माण्डको बहाडालते ॥ २२ ॥ (उस वेला) स्वाहा—स्वधा—वषट्‌कारसे रहित इस पृथिवीमंडलपर पंचयज्ञोंकी क्रियाओंके लोपहोजानेसे तीनोही लोक काँप नेलगे ॥ २३ ॥ सूर्यके उदय होनेहीसे यज्ञादिक समस्त क्रियायें प्रारम्भ होतीहैं, और उन्हीं क्रियाओंके द्वारा यज्ञभोजी देवतोंकी तृप्ति होतीहै, अतएव इन सबके कारण सूर्यनारायणही हैं ॥ २४ ॥ चित्रगुप्त आदि सभीलोग सूर्यहीसे समयका निर्णय करतेहैं । इसलिये सूर्यही सृष्टि, स्थिति और प्रलयके एकमात्र कारणहैं ॥ २५ ॥ (तब) उन्हीं सूर्यकी गति रुकजानेसे त्रैलोक्यभर सब स्तम्भित होगया, सभी कोई जो जहाँथा सो वहीं पर चित्रलिखितसा रहगया ॥ २६ ॥ एकओर रात्रिके घोर अंधकार और दूसरी ओर दिनके प्रचंड घामसे कितनोंहीका प्रलय होगया (सारा) संसार भयसे व्याकुल होकर घबडाउठा ॥ २७ ॥ इसप्रकारसे सुर—असुर, नर—नाग, सभी लोगोंके बडे व्यग्र होनेपर, "ओह ! अनायासही यह क्या होगया !" कहतेहुए प्रजागण (हाय ! हाय ! कर) रोने और इधर उधर भागने पराने लगे ॥ २८ ॥ इसके अनंतर देवतालोग यह सब देखकर ब्रह्माके शरणागत हुए, और "रक्ष, रक्ष" कहतेहुए अनेक स्तोत्रोंसे उनकी स्तुति करनेलगे ॥ २९ ॥ देवतोंने कहा—विराट्‌स्वरूप, हिरण्यगर्भरूप, अविज्ञात स्वरूप, मोक्षरूप, एवं आनन्दस्वरूप, ब्रह्मदेवको नमस्कारहै ॥ ३० ॥ जिसे देवतालोगभी भलीभाँतिसे नहीं जानसकते, एवं मनभी जिसके विषयमें कुंठित होजाताहै अथवा जहाँपर वाणीभी नहीं फैलसकती ऐसे चैतन्य—घनको नमस्कारहै ॥ ३१ ॥ योगी लोग (चित्तकी) एकाग्रतासे निश्चल होकर आकाशसम शुद्ध अन्तःकरणमें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जिसे ज्योतिस्वरूप देखते हैं उस श्रीमान् ब्रह्मदेवको प्रणामहै ॥ ३२ ॥ जो काल भिन्न होनेपरभी कालस्वरूपहैं, जो अपनी इच्छाके अनुसारही पुरुष होजातेहैं, अथ तीनों गुणोंकी मूर्ति प्रकृति स्वरूपहैं उन्हींको नमस्कारहै ॥ ३३ ॥ जो सत्त्वगुणके आश्र यसे विष्णुरूप होकर पालन, और रजोगुणके अवलंबनसे ब्रह्मारूप हो सृष्टि, एवं तमो गुणको धरकर रुद्ररूपसे संसारका संहार करते हैं, उन्हींको प्रणामहै ॥ ३४ बुद्धिस्वरूप वैकारिक—तैजस—तामस त्रिविध अहंकारके रूप, (शब्द, स्पर्श, रूप, र गंध) पंचतन्मात्र स्वरूप (गुद उपस्थ, हस्त, पाद, वचन,) पंचकर्मेन्द्रियोंके आपको प्रणामहै ॥ ३५ ॥ मनःस्वरूप (कर्ण—त्वचा—नेत्र—जिह्वा—नासिका आदि पांचों बुद्धिके इन्द्रियोंके रूप,(पृथ्वी जल, अग्नि, वायु, आकाश)पंचभूतस्वरूप एवं स्थू विषयात्मक ब्रह्माको नमस्कारहै ॥ ३६ ॥ जो स्वयं ब्रह्माण्ड स्वरूप होनेपरभी उस मध्यवर्ती कार्यरूपहैं उनको प्रणामहै । जो वर्तमान एवं पराचीन विश्वरूपहैं, उन्हें बारंबार नमस्कारहै ॥ ३७ ॥ अनित्य और नित्यके स्वरूप तथा सत् और असत् एकमात्र पति आपको प्रणामहै हे समस्तभक्तोंपर कृपाकर स्वेच्छानुसार शरीरधा करनेवाले॥ ३८॥तुम्हारा निश्वासही वेदहै, तुम्हारेही स्वेदजल (पसीने) से यह सम्प जगत् उत्पन्न हुआहै समग्र भूतगण तुम्हारे पदतलहैं और स्वर्ग तुम्हारेही मस्तक उत्पन्न हुआहै॥ ३९ ॥तुम्हारी नाभिसे आकाशकी उत्पत्तिहै और तुम्हारेही लोम वनस्प हुएहैं । हे प्रभो ! तुम्हारेही मनसे चन्द्रमा और नेत्रोंसे सूर्य उत्पन्न हुएहैं ॥ ४० हे देव ! तुम्हीं सब कुछ हो, और यह सब कुछ तुम्हारेही अन्तर्गत है, इस संसा स्तुतिकर्ता, स्तोत्र और स्तुत्यभी एकमात्र तुम्हींहो, हे नाथ ! यह समग्र लोक तुम्हें बासितहै, अतएव आपको बारंबार नमस्कार है ॥ ४१ ॥ देवगण इसप्रका ब्रह्माकी स्तुतिकर भूतलपर दण्डवत् लोटगये।तब ब्रह्माने संतुष्ट होकर देवतोंसे कहा॥४२ ब्रह्मा बोले—हे विनीतदेवगण ! (तुमलोगोंकी) इस यथार्थ स्तुतिसे मैं बडा संतुष्ट तुमलोग उठतेजाओ, और मैं प्रसन्नहूं, अतः अभिलषित वर माँगो ॥ ४३ ॥ कोई पवित्र होकर श्रद्धापूर्वक इस स्तोत्रसे प्रतिदिन मेरी, महादेवकी, किंवा विष्णु स्तुति करेगा हम सब लोग उसपर सदैव संतुष्ट रहेंगे ॥ ४४ ॥ और उसको उस सब मनोरथ पुत्र, पौत्र, पशु, धन, सौभाग्य, आयुष्य, निर्भयत्व और संग्राम विजय देंगे ॥ ४५ ॥ वह स्तुतिकर्ता, लौकिक और पारमार्थिक भोग, अक्षयधर्म एवं जो जो उसका इष्टतम होगा उन सबको प्राप्त करेगा ॥ ४६ ॥ अतएव

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रयत्नोंसे इस उत्तम स्तोत्रका पाठ करना चाहिये । यह सर्व सिद्धिप्रद स्तोत्र अभीष्टद नामसे प्रसिद्ध होगा ॥ ४७ ॥ देवतोंके प्रणामकर उठ खडे होनेपर ब्रह्माने उनसे फिर कहा, कि तुमलोग अब स्वस्थ हो बैठो, यहांपर भी क्यों घबडाये हुए हो॥ ४८॥ (देखो) ये मूर्तिमान् चारों वेदहैं, ये सब चौदहों विद्यायें हैं, ये दक्षिणासे पूर्ण (अग्निष्टोमादिक) यज्ञहैं, यह सत्यहै, यह धर्म है, यह तपस्याहै, यह दमहै ॥ ४९ ॥ यह ब्रह्मचर्यहै, यह करुणाहै, यह भारतीहै, ये सब श्रुति स्मृति और पुराणोंके अर्थसे कृतार्थ जन (गण) हैं ॥ ५० ॥ यहांपर, काम, क्रोध, लोभ, मोह, मात्सर्य, अधीरता, भय, हिंसा, कुटिलता, अहंकार, निन्दा, असूया और अपवित्रता कहींभी नहीं है ॥ ५१ ॥ जो ब्राह्मण वेदाध्यायी, तपोनिष्ठ, तपोधन और एकमास, षण्मास एवं चातुर्मास्यादिक उत्तम व्रतोंको करताहै ॥ ५२ ॥ तथा जो पतिव्रता धर्मकी पालन करनेवाली स्त्रियां हैं, और जो दूसरे ब्रह्मचारी लोगहैं किंवा जो पराई स्त्रियोंके लिये नपुंसक बनेरहतेहैं, हे देवगण ! देखो ये सब वेही लोगहैं ॥ ५३॥ ये लोग माता-पिताके भक्तहैं, ये सब गाय—गोहारमें प्राणदेनेवाले हैं, और ये लोग व्रत, दान, जप, यज्ञ, स्वाध्याय, ब्राह्मणतर्पण, भोजन ॥ ५४ ॥ तीर्थयात्रा, तपस्या, परोपकार और सदाचार आदि सत्कर्मोंमें जिनकी बुद्धि कुछ फलपानेकी अभिलाषा नहीं रखती वेही लोग हैं ॥ ५५ ॥ गायत्रीके जप करनेमें तत्पर, अग्निहोत्रमें दृढ—नियम, दोमुँही (व्यातीहुई) गौओंके दाता, कपिलाके दान कर्ता ॥ ५६ ॥ स्पृहारहित, सोमपानकर्ता, ब्राह्मणोंके चरणोदक पीनेवाले, सारस्वत (प्रभासआदि) तीर्थमें मरेहुए, ब्राह्मणगणके शुश्रूषक ॥ ५७ ॥ दानलेनेमें समर्थ होनेपरभी दानसे पराङ्मुख और तीर्थ—प्रतिग्रहसे दूर रहनेवाले, ये सब ब्राह्मण मेरे बडेही प्यारेहैं ॥ ५८ ॥ जिन लोगोंने शुद्ध हृदय होकर माघमास अर्थात् सूर्यके मकरराशिमें जानेपर तीर्थराज प्रयागमें प्रातःकाल स्नान कियाहै, ये सब वेही सूर्यसम तेजस्वी पवित्रजन हैं ॥ ५९ ॥ वाराणसी पुरीके पंचनद (पंचगंगा) तीर्थमें जिन लोगोंने कार्तिकमासमें तीनदिनभी स्नान कियाहै, ये सब परमनिर्मल, पवित्रशरीर, वेही पुण्यभागी जनहैं ॥ ६० ॥ जो लोग मणिकर्णिकामें नहाकर बहुत धनोंसे ब्राह्मणोंको प्रसन्न करसकेहैं, ये सब वेही लोग समस्त भोगोंसे पूर्ण रहकर कल्पभर मेरे लोकमें वास करेंगे ॥ ६१ ॥ तदनंतर उसी पुण्यके प्रभावसे (फिर) काशीमें प्राप्त होकर विश्वेश्वरकी दयासे अवश्यही मोक्षको प्राप्त होंगे ॥ ६२ ॥ (कारण) जो मनुष्य अविमुक्त क्षेत्रमें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

थोडासाभी सत्कर्म करतेहैं, उसका पकाहुआ फल दूसरे जन्ममें मोक्षही होताहै ॥६३॥ अहा ! विश्वनाथकी नगरीमें तो मरनेका कोई डरही नहीं है वहांपर तो सभी कोई मृत्युको अपने प्यारे पाहुन (अतिथि) की नाईं जोहतेही रहते हैं ॥

अहो ! शंभुके नगरमें, मरनहुते डर नाहिं ।
प्यारे पाहुनसे जहां, मृत्युहि जोहत चाहिं ॥ ६४ ॥

जिन लोगोंने कुरुक्षेत्रमें शुद्ध धनदान कियाहै, ये सब निर्मल शरीरवाले वेही लोग मे समीपमें विराजमान हैं ॥ ६५ ॥ गयातीर्थके पितामहेश्वरमें पहुँचकर जिन ब्राह्मणके मुखमें अपने पितामहोंको तृप्त करदिया है ये सब उन्हींके पितामह (पुर्व लोग हैं ॥ ६६ ॥ हे देवगण ! यह मेरा लोक न तो स्नानसे, न दानसे, न जा और न पूजाहीसे प्राप्त होसकताहै (तब) यदि मिलताहै तो केवल ब्राह्मणोंहीके सन्तु करनेसे ॥ ६७ ॥ जिन लोगोंने मूसल, ओखरी, और शय्या इत्यादि गृहस्थी सामग्रियोंसहित गृहोंका दान कियाहै ये सब उन्हींकी अटारियां हैं ॥ ६८ ॥ जो लो पाठशाला बनवाते, वेद पढवाते, विद्याओंका दान करते पुराणकी कथा सुनवा ॥ ६९ ॥ पुराणोंका दान, धर्मशास्त्रोंका दान, अथवा अन्य पुस्तकोंका दान कर यहांपर मेरे पुरमें वेही लोग वास करतेहैं ॥ ७० ॥ जो कि ब्राह्मणको, यज्ञके अ विवाहके निमित्त अथवा व्रत-विधानके लिये कामभर पूरा पूरा धन दे वे यहाँपर अग्निके समान तेजस्वी बनेरहतेहैं ॥ ७१ ॥ जो कोई वैद्यको जीवि वृत्ति देकर आरोग्यशाला (अस्पताल) स्थापित करताहै वह सब भोगोंसे भर होकर कल्पभर यहाँपर वासकरताहै ॥ ७२ ॥ जो लोग (करआदि) दुष्ट रुकावट तीर्थोंको छुडादेतेहैं वे यहाँपर मेरे अन्तःपुरमें औरसपुत्रके समान माननीय होतेहैं ॥ ७३ ब्राह्मणही, विष्णुके, शिवके और मेरे बडे प्यारेहैं (क्योंकि) उन्हींकी द्वारा हम सब महीतलपर साक्षात् विचरण करते हैं ॥ ७४ ब्राह्मण और गौ ये दोनों एकही कुलके दो भाग कियेगये हैं (क्योंकि एकमें तो मन्त्रोंकी स्थिति है, और दूसरेमें हवि (घी) रहताहै

एकहि कुलकी शाख दो, ब्राह्मण औरहु गाय ।
रहैं एकमें मंत्र सब, अनतहि हवि ठहराय ॥ ७५ ॥

ब्राह्मण लोगही सार्वभौमिक जंगम तीर्थ बनायेगयेहैं, कारण—उन्हीं लोगोंके वच रूप जलसे मलिनजन शुद्ध होतेहैं ॥ ७६ ॥ गायें परमपवित्र होतीहैं, गायोंके स

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कोई उत्तम मंगल नहींहै, क्योंकि उनके खुरकी उडीहुई धूलि गंगाजलके समान (पवित्र) होतीहै ॥ ७७ ॥ उसके शृंगपर समग्र तीर्थ, खुरके अग्रभागमें समस्त-पर्वत, और दोनों सींगोंके बीचमें साक्षात् महेश्वरी गौरी—वास करतीहैं ॥ ७८ ॥ गौको दान होते देखकर (दाताके) पितरगण हर्षसे नाचने लगतेहैं, ऋषिलोग प्रसन्न होजातेहैं और सब देवतोंके साथ हमलोगभी सन्तुष्ट होतेहैं ॥ ७९ ॥ (पर) दरिद्रता और व्याधियोंके सहित पापगण बहुत रोने लगतेहैं । सब लोगोंका पालन करनेवाली गायें सर्वथा माताहीके समानहैं ॥ ८० ॥ जो कोई गौओंकी स्तुति, प्रणाम, प्रदक्षिणा करताहै, उसे सप्तद्वीपा वसुंधराके प्रदक्षिणा करनेका फल मिलजाताहै ॥ ८१ ॥ जो सब भूतोंकी लक्ष्मीहै और जिसकी व्यवस्था (गिनती) देवतोंमें कीगईहै, वह धेनुरूपा देवी मेरे पापोंको दूर करे ॥८२ ॥ जो लक्ष्मी विष्णुके वक्षस्थलपर रहतीहै जो अग्निदेवकी स्वाहाहै , एवं जो पितृप्रधानोंकी स्वधारूपाहै वही धेनु (हमलोगोंको) सदैव वरदान करै ॥ ८३ ॥ जिनका गोमय (गोबर) साक्षात् यमुनाहै, और मूत्र पवित्र नर्मदाके समानहै, एवं जिनका दुग्ध गंगाके सदृशहै उनसे बढकर और क्या पवित्रहो सकताहै ? ॥ ८४ ॥ जिस कारणसे गौओंके अंगोंमें चौदहों भुवन वास करतेहैं, उसी कारणसे (गौओंके द्वारा) इस लोक और परलोकमें मेरा कल्याण होवे॥८५॥ जो कोई इस मंत्रको उच्चारण करके अनेक अथवा एकभी गोदान उत्तम ब्राह्मणको करदेताहै वह सब लोगोंमें विशेष समझाजाताहै ॥ ८६ ॥ मैं—विष्णु,शिव और महर्षियों के सहित गओंके गुणोंको विचारकर नित्यही यह प्रार्थना करता रहताहूं (कि)॥ ८७ ॥ गायें मेरे सन्मुख रहें, गायें मेरे पीछे रहें, गायें मेरे हृदयमें रहें, और मैं गौओंहीके बीचमें वास करूं ॥ ८८ ॥ जो भाग्यवान् गौओंके पूँछसे अपने शरीरको पोंछता (मार्जित करता) है, उसके अंगोंसे दरिद्रता, कलह और रोग दूर भाग जातेहैं ॥ ८९ ॥ गौ, ब्राह्मण, वेद, सती स्त्री, सत्यवादी, निर्लोभ और दानशील—इन्हीं सातोंके भरोसे पृथिवी थमी रहतीहै ॥ ९० ॥ मेरे इस लोकके ऊपर जो लोकहै, वह वैकुण्ठ कहाजाताहै, उसके ऊपर कुमारलोकहै, उसकेभी ऊपर उमालोकहै ॥ ९१ ॥ उसके उपरांत शिव-लोकहै, उसके पासमें गोलोकहै, वहां पर जो सुशीला आदि गोमातायें हैं, वे महादे-वको बहुतही प्रियहैं ॥ ९२ ॥ गौओंकी सेवाकरनेवाले तथा गौओंके दाता मनुष्य इन्हीं लोकोंके मध्यसे किसीएक लोकमें सब समृद्धियोंसे परिपूर्ण होकर वास करतेहैं ॥ ९३ ॥ जहाँपर दूधकी धारा बहनेवाली नदियाँहैं, और जहाँ पायस (खोआ)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

का कीचड बना रहताहै फिर जहाँपर जरा (बुढापा) कुछ बाधा नहीं देसकती गोदा करनेवाले लोग वहांहींपर जातेहैं ॥ ९४ ॥ श्रुति, स्मृति और पुराणके अभिप्र तथा तदनुसार आचार निर्वाह करनेवालेही यथार्थ ब्राह्मण कहेजातेहैं, और दूसरे केवल नाममात्रके ब्राह्मणहैं ॥ ९५ ॥ वेद और धर्मशास्त्र—ये दोनों तो नेत्र, औ पुराण हृदय कहलाताहै, अतएव जो ब्राह्मण श्रुति—स्मृतिसे हीन होताहै, वह अन्ध और जो एकहीसे रहित हो वह कानाहै ॥ ९६ ॥ पर पुराणके अनभिज्ञ हृदयशू जनसे काने और अन्धे दोनोंही अच्छेहैं, (कारण—) श्रुति—स्मृति दोनोंके कथि धर्म पुराणमें कहेजातेहैं ॥ ९७ ॥ अतएव सर्वत्र सुखाभिलाषी जनको उचितहै कि ऐसेही श्रुति—स्मृति—पुराण (पूर्वोक्त) उत्तम ब्राह्मणको गोदान करे, नामधारी द्विजको नहीं देना चाहिये । क्योंकि ऐसा करनेसे दाताकीभी अधोगति होतीहै ॥ ९८ ॥ जिसक इच्छा धर्म जाननेकी हो, किंवा जिसे पापसे बडा डर लगताहो, उसे सब धर्मोंकी ज पुराणोंको अवश्य सुनना चाहिये ॥ ९९ ॥ चतुर्दश विद्याओंमें पुराणही सर्वोत्त दीपकहै क्योंकि उसके प्रकाशसे अंधाभी संसाररूपी समुद्रमें कभी नहीं गिरेगा ॥ १०० ॥ जो लोग मेरे लोककी प्राप्ति चाहतेहों, उनको पुराणोंका श्रवण, गंगा तटपर वास और ब्राह्मणोंका सन्तोष, अवश्य करना चाहिये ॥ १ ॥ हे देवगण ! म तो मैंने प्रसंगवश इस सत्यलोककी व्यवस्था कह सुनायी, यह तो भयातुर लोगों लिये एक निर्भय स्थानहै, अब तुम लोग कुछभी मतडरो ॥ २ ॥ विन्ध्यपर्वत सु रुसे स्पर्द्धा करके सूर्यका मार्ग रोकेहुएहै, उसीके लिये तुमलोग आयेहो, सो मैं उस उपाय तुम सबको बतलादेताहूं ॥ ३ ॥ ब्रह्माने कहा—जहाँपर भगवान् विश्वेश तारकमंत्रके उपदेश करनेको स्वयं विराजमान रहतेहैं सब किसीके मुक्तिके एकमा कारण, उसी अविमुक्त महाक्षेत्रमें मित्रावरुणके पुत्र परमतपस्वी अगस्त्यमुनि विश्वेश विभुमें चित्तलगाकर घोर तपस्या कररहेहैं ॥ ४—५ ॥ वहां जाकर उनसे प्रार्थ करो, वेही तुमलोगोंके कार्यको सिद्ध करेंगे, एकबार वातापी और इल्वल नामक रा सोंको भक्षणकर वे समस्त लोगोंकी रक्षा करचुकेहैं ॥ ६ ॥ वहाँपर मित्रावरुण नन्द अगस्त्यमुनिमें सूर्यसेभी अधिक तेजहै तभीसे लोकमें अगस्त्यमुनिसे कौन नहीं भ खाताहै ? ॥ ७ ॥ इतना कहकर ब्रह्माजी अन्तर्धान होगये, और वे सब देवता लो प्रसन्न मुख होकर परस्पर कहनेलगे कि, अहो ! हमलोग परमधन्यहैं ॥ ८ ॥ जो प्रार वश काशी और काशीपति, महादेव—पार्वतीका दर्शन पाजावेंगे, "अहो ! बहुत दिनों

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हम सबका मनोरथ सफल हुआ ॥ ९ ॥ वेही चरण धन्यहैं, जो काशीकेलिये प्रस्थान करतेहैं, आज हमलोगोंने ब्रह्माकी कहीहुई इस कथाको सुनाहै, बस इसीके श्रवणकरनेका यह पुण्यहै, जो काशीको चलरहेहैं । जब बहुतभारी पुण्य रहताहै, तभी एक कर्मसे दो प्रयोजन सिद्ध होतेहैं" । इसप्रकारसे काशीयात्राके लिये दृढसंकल्प हो विकसित नयनकमल, प्रसन्नवदन, सुकृतार्थी, देवगण, परस्पर (आपसमें) बातचीत करतेहुए काशीमें जापहुँचे ॥ १०-११-१२ ॥ व्यास बोले—इस परमपवित्र कथाको. जो मनुष्य सुनेंगे, वे इसलोकमें समस्त सुखोंको भोग, अपना वंश स्थापन कर, स्त्री पुत्रके सहित समग्र पापोंसे छूट, अन्तमें चिरकाल पर्यंत सत्यलोकमें वासकर, तदनंतर शाश्वत (परम) पदको प्राप्त होवेंगे ॥ १३—११४ ॥

करहिं सत्य यहि लोक जे, तप जप व्रत उपवास ।
गोदानादिक ते लहहिं, सत्यलोकमें वास ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषाटीकायां सत्यलोकवर्णनंनाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

तृतीय अध्याय ।

देवतोंका अगस्त्यके आश्रमपर जाना ।

सूतबोले—हे भगवन्! आप भूत और भव्यके स्वामी, समस्त ज्ञानोंके परमनिधि, एवं साक्षात् अच्युतरूपहैं, देवगणने काशीमें पहुँचकर क्या किया? आप उसे कहें ॥ १ ॥ इस दिव्यकथाके श्रवण करनेसे तो मेरी तृप्तिही नहीं होती, देवतोंने तपोनिधि अगस्त्यमुनिसे क्योंकर प्रार्थना की? ॥ २ ॥ फिर वैसा ऊँचा विन्ध्याचलही किसप्रकारसे अपने पूर्वभावको प्राप्तहुआ? मेरा चित्त आपके वचनामृतरूप समुद्रमें स्नानकरनेको उकता रहाहै ॥ ३ ॥ पराशरमुनिके पुत्र भगवान् वेदव्यास इसप्रकारके सब (प्रश्नों) को सुनकर, अपने परमश्रद्धाशील शिष्य सूतसे (उत्तर) कहनेलगे ॥ ४ ॥ व्यासने कहा—हे महाबुद्धे ! सूत ! तुम भक्ति और श्रद्धासे परिपूर्ण होकर (इसे) श्रवण करो, और शुकदेव और वैशंपायन आदिक ये सब लडकेभी सुन रक्खें ॥ ५ ॥ तदनंतर देवतालोग महर्षियोंके साथ वाराणसीपुरीमें पहुँचकर, पहिले झटपट मणिकर्णिकामें विधिपूर्वक ॥ ६ ॥ सचैल स्नान करनेके उपरांत सन्ध्यादिक नित्यकर्मोंको

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कर, कुश, गंध, तिल और जलसे देवपितरोंका तर्पण करके ॥ ७ ॥ रत्न, सुवर्ण वस्त्र, आभरण, घोडा, गौ, सोने चांदीके चित्र विचित्र बर्तन, अमृतके समान स्वादि पकवान, मिश्री मिलीहुई खोवाकी मिठाइयाँ ॥ ८ ॥ ९ ॥ गोरसके सहित अन्न अनेकप्रकारके धान्य, गन्ध, चन्दन, कपूर, ताम्बूल, सुन्दर चामर, ॥ १० तोशकके साथ पलंग, दीयट, दर्पण, आसन (बिछौना) पालकी, दास, दासी, विमा (तामजान) पशु, गृह ॥ ११ ॥ चित्र, ध्वजा, पताका, चन्द्रके समान सुन्द चन्दवा, गृहस्थीकी समाग्रियोंके साथ वर्षभरके भोजनके वस्तु ॥ १२ ॥ जू (पनही) और खडाऊं इत्यादि समस्त वस्तुओंके दानसे समस्त तीर्थवासियों पृथक् पृथक् संतुष्ट कर, संन्यासी और तपस्वीलोगोंकोभी यथायोग्य पटवस्त्र विवि भाँतिके कम्बल ॥ १३ ॥ दण्ड, कमण्डलु, मृगछाला, कौपीन, ऊँचीचौकी, सेवकोंके वेतनार्थ सुवर्ण ॥ १४ ॥ मठ, विद्यार्थीलोगोंके लिये अन्न; अतिथियों हेतु बहुत धन, बडे बडे पुस्तकोंकी ढेर, लेखकोंकी जीवन वृत्ति ॥ १५ ॥ बहुतसे औषधालय अनेक सदावर्त, गर्मीमें पौसराके लिये धन, जाडामें अंगेठी औ ईंधन आदिके लिये द्रव्य ॥ १६ ॥ वर्षाऋतुके योग्य छावनी और छप्परका राति पढनेके लिये दीपकका एवं पाँवकी लतरी इत्यादिका व्यय दे सन्तुष्ट कर ॥ १७ प्रत्येक देवमन्दिरोंमें पुराणबाँचनेवालोंको प्रचुर धनसे सन्तोषित कर देवालयों अनेक भाँतिके नृत्य गीतादिकको कराय ॥ १८ ॥ बहुतेरे देवस्थानोंको चूने छुहवाय, अनेकोंका जीर्णोद्धार कराय, कहींपर चित्रकारी लिखनेका मूल्यदे और मा माला आदिसे सजवाय ॥ १९ ॥ आरती, गुग्गुल इत्यादि दशांग, धूप, कपूर, बत्ती एवं अनेक भाँतिकी देव पूजनकी सामग्रियाँ ॥ २० ॥ पंचामृत और सुगंधि जलोंके स्नान, देवतोंके हेतु मुखवास. एवं पूजार्थ पुष्पवाटिका ॥ २१ ॥ त्रिपु लकी महापूजामें माला आदि गूंथनेके लिये धनदान शिवालयमें शंख नगाडा, मृदं इत्यादि बाजे ॥ २२ ॥ घंटा गडुआ घडा इत्यादि स्नानके उपयुक्त पात्र, श्वेतवस्त्र पोंछनेके वस्त्र, सुगन्धित यक्षकर्दम जो कपूर कस्तूरी अगर और कंकोलसे बनत ॥ २३ ॥ जप, होम, स्तोत्रपाठ,एवं उच्चस्वरसे महादेवका नामोच्चारण, एवं रासक्री (रुद्र—ताण्डव) के सहित चलने और प्रदक्षिण ॥ २४ ॥ इत्यादि विविधभाँति क्रिया कलापोंसे पाँचरातका वास और बहुतेरी तीर्थयात्राओंको समाप्त कर ॥ २५ भगवान् विश्वनाथको प्रणाम; एवं दीन और अनाथलोगोंको दान कर, ब्रह्मचर्य्यादि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नियमोंसे तीर्थविधिको साधनकर ॥ २६ ॥ वारंवार विश्वेश्वरका दर्शन, स्तोत्रपाठ, एवं प्रणाम कर वे सब (देवता) लोग परोपकारके लिये वहाँ गयेजहाँ पर अगस्त्य मुनि अपने नामानुसार (अगस्तीश्वर) शिवलिंगकी स्थापना और उसके आगे (अगस्त्य) कुण्ड बनाकर दृढचित्तहो, शतरुद्रिय सूक्तका जप करतेहुए विराजमानथे ॥ २७ ॥ २८ ॥ देवतालोग उनको दूरहीसे दूसरे सूर्यके समान तथा धधकतीहुई अग्निकी ज्वालाकी नाईं अंगोंसे उज्ज्वल, देखकर यह सोचनेलगे कि ॥ २९ ॥ क्या यह साक्षात् वडवानल मूर्ति धरकर तपस्या कररहाहै ? जो ठूंठे पेडकी नाईं अत्यंत स्थिरहै, जैसे सज्जनोंका मन निर्मल होताहै ॥ ३० ॥ अथवा सब तेज इस ब्राह्मण शरीरका आश्रयण कर शांतपद (मोक्षकी) प्राप्तिके लिये प्रशांत परमधामका ध्यान कररहे हैं ॥ ३१ ॥ अहा ! इनकी तपस्याके तेजसे सूर्यभी बडे संतापित, और अग्निदेव दग्ध होरहेहैं फिर विचारी बिजुरीने तो अपना चपलापन ही छोडदियाहै ॥ ३२ ॥ यहांपर इनके आश्रमके चारोंओर घातुक जन्तूभी अपने स्वाभाविक वैरको विसारकर सत्त्वगुणसे परिपूर्ण दीखतेहैं ॥ ३३ ॥ (देखो) हाथी निर्भय होकर अपने सूंडसे सिंहको खुजला रहाहै, और सिंहभी अपने केसरों (अयालों) को फटकारकर शरभके गोदमें सोरहाहै ॥ ३४ ॥ खडे रोमवाला सूकर बलवान् होनेपरभी मोथा घासकी ओर ताकताहुआ अपने जूथको छोडकर बनैले कुत्तोंके मध्यमें विचरण कररहाहै ॥ ३५ ॥ वह भूदार होनेपरभी वहांकी भूमिको जैसा कि और स्थानोंमें खोदताहै नहीं खोदता; क्योंकि काशीकी सब भूमि लिंगरूपहै बस इसीभयसे वह जकडाहुआहै ॥ ३६ ॥ तेन्दुआ सूकरके बच्चोंको गोदमें लेकर खिलारहाहै (वह) हरिणका बच्चा वाघके बच्चोंको हटाकर वाघिनको ॥ ३७ ॥ पोंछ हिला हिलाकर अपने फेनैले मुँहसे पी रहाहै (वानर) अपनी अँगुरियोंसे वीन वीनकर बडे रोंआंवाले सोतेहुए भालूके ॥ ३८ ॥ जुओंको देख देखकर दांतके अग्रभागसे खारहाहै । वे सब लालमुख और काले देहवाले बड़े पोंछके यूथनायक लंगूर ॥ ३९ ॥ जातिसुलभ अपनी स्वाभाविक मत्सरताको त्यागकर एकही स्थानपर क्रीड़ा करहरहैं । शशकगण (खरहे) हुंडारोंकी पीठपर वारंवार लोटकर खेलरहेहैं ॥ ४० ॥ मूसभी मुँह हिलाता हुआ बिलारके कानोंको खुजला रहाहै, (फिर) बिलारभी मोरकी पोंछों के पूटमें बडे सुखसे सोरहा है ॥ ४१ ॥ वह साँप मोरके गलेपर अपना गला रगडरहाहै नेउरभी अपने कुलोचित वैरको विसराकर सर्पके फनपर खेलसे उछल कूदकर लोटरहाहै । सर्पभी क्षुधान्ध

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

होकर मुखके आगे घूमतेहुए मूसेको देखनेपरभी नहीं पकडता है और वह चूहाभी उससे कुछ नहीं डरताहै । व्यातीहुई हरिनीको देखकर वाघ दयादृष्टिसे उसके दृष्टिपथको छोडताहुआ दूर चला जा रहाहै । अहा ! वाघिन तो वाघके चरित्रको और मृगी मृगकी चेष्टाको परस्पर सखियोंकी भाँति दोनों प्रसन्नतापूर्वक कहरहींहैं ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ । ४४ । ४५ ॥ ढींठा शंबर मृग बहुत बडे धनुषको लियेहुए शबर (व्याधा) को देखकरभी मार्गपरसे नहीं हटता और वह व्याधभी उसे सुहरारहाहै ॥ ४६ ॥ रोहित मृग निराकुल होकर बनैले भैंसेसे टकरा रहाहै, फिर वह चमरी मृगी (सुरहगाय) शबरीकी चोंरीसे अपने पोंछका मिलान कररहीहै ॥ ४७ ॥ (देखो) गवय मृग (गवा) और साही—दोनोंही अपने बहुत बडे डाहको छोड, मुनिराजके तेजसे बद्ध होकर एकही स्थानपर बैठेहुए हैं ॥ ४८ ॥ मेढे (हुंडार) मुंड युद्धमें जीत चाहतेहुए सुसज्जित नहीं होतेहैं । सियारभी हरिनके बच्चेको हाथसे धीरे धीरे सुहरारहाहै ॥ ४९ ॥ मांसभोजनको धिक्कारहै ! क्योंकि वह इस लोक आर परलोकमेंभी दुःखदायक, एवं समस्त आपत्तियोंका आस्पदहै, (बस) इसी विचारसे व्याघ्र इत्यादि श्वापद जन्तुभी घास—पातको खारहेहैं ॥ ५० ॥ जो कोई पापसे मोहित होकर अपने लिये मांस पकाताहै, वह उस पशुके देहमें जितने रोयें हैं उतनेही (वर्ष) नरकमें वास करताहै ॥ ५१ ॥ जो दुर्बुद्धि लोग दूसरोंके प्राणसे अपने प्राणका पोषण किया चाहतेहैं, वे सब कल्पभर नरकोंको भोग भोगकर फिर यहींपर उन (मारेगयेजीवों) से खायेजातेहैं ॥ ५२ ॥ प्राणके कण्ठगत होनेपरभी कदापि मांसभोजन नहीं करना चाहिये, यदि खानाहीहै तो अपनाही मांस भक्षण करना उचितहै—दूसरेका नहीं ॥ ५३ ॥ मित्रावरुणिके पुत्र अगस्त्यजीके सेवनसे ये सब श्वापदही बहुत अच्छेहैं, क्योंकि इनकी बुद्धि हिंसा करनेमें

---

१ सवैया—गज प्यार करै करसी हरिको हरि सोय रह्यो शरभै परसो (परसो—१ ऊपर वह ।
फनि देत मयूर गलेपै गला, नहिं ताहि भगावत सो परसा । २ पंखमे ।
अहिसो कुल—वैर नहीं तनिको, वहि नेउरके उरसो परसो । ३ छुवागयाहै ।
ऋषि—आश्रमहींके प्रतापते ह्यां, परताप न होइसकै परसो ॥ १ ॥ ४दूसरेसे (चार अर्थ)
लखिकै मुखके ढिग घूमत मूसहिं भूखहु सर्प न चित्त चलावत ।
कह वाघिनि वाघ चरित्र सबै, हरिनी मृगकी कहनीहि सुनावत ।
चमरी, शबरी—कवरीहिं लखैं, पुनि पोंछिकै पोंछसो मेल मिलावत ।
मुनिराज अगस्त्यको आश्रम है, यह देखतही सबके मन भावत ॥२॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विमुख होगईहै, न कि वे मनुष्य जो हिंसनहीमें लगे रहतेहैं ॥ ५४ ॥ बकुलाभी गडहेमें सामनेही घूमतीहुई मछरियोंको नहीं खाताहै, और न तो बडे बडे मच्छही छोटी छोटी मछलियोंको खातेहैं ॥ ५५ ॥ "एक ओर सब जीवोंके मांस और दूसरी ओर मत्स्यका मांस" यह बात जो धर्मशास्त्रमें कहीगयीहै सो मानों इन सब बकुलोंके स्मरणहै, इससे वे मछलियोंका खाना छोडदियेहैं ॥ ५६ ॥ यह बाज पक्षी भी बटेरको देखकर पराङ्मुख हो बैठाहै, पर बडा आश्चर्य तो यह है कि, यहाँपरभी मलिन आशयवाले मधुप (भौंरे) लोग भ्रमण कररहेहैं ॥ ५७ ॥ जो लोग मदिरा-पानके लम्पट (आदती) होतेहैं, वे सब बहुत दिनोंतक नरकभोग कर वारंवार भ्रांति शील मधुपही होते रहतेहैं ॥ ५८ ॥ इसीलिये सब पुराणोंमें यह गाथा (कहावत) कहीजातीहै; जिसे पुराणके पण्डितोंने महादेवका तत्त्व विचारकर स्पष्टार्थ करदियाहै कि ॥ ५९ ॥ कहां मांसभोजन और कहां शिवमें भक्ति ? कहाँ मद्यपान और कहां शिवका पूजन ? (क्योंकि) महादेव तो मद्य—मांसके सेवनकरनेवालोंसे दूरही रहतेहैं ॥ ६० ॥ महादेवके प्रसाद विना भ्रांति किसीप्रकारसे नष्ट नहीं होसकती, इसीकार-णसे ये सब भौंरे शिवके तत्त्वज्ञानसे हीन होकर घूमरहेहैं ॥ ६१ ॥ इस भ्रांतिसे आश्रमवासी पशु—पक्षियोंको मुनियोंके समान देखकर, देवतोंने समझलिया कि यह क्षेत्र—जनित प्रभावहै ॥ ६२ ॥ (क्योंकि) यहांके रहनेवाले पशु—पक्षी इत्यादि जीवोंकोभी मरणके अवसरपर भगवान् विश्वेश्वर तारकमन्त्रके उपदेशसे मोक्ष करदेतेहैं ॥ ६३ ॥ जो कोई क्षेत्रकी महिमाको समझ दृढसंकल्प होकर यहांपर वासकरताहै, भगवान् विश्वेश्वर उसे जीवतेही अथवा मृतहोनेपर तार देतेहैं ॥ ६४ ॥ ज्ञानी मनुष्य अविमुक्त—क्षेत्रके रहस्यको जानलेनेपर जैसे मुक्त होतेहैं; तिर्यक्—योनिवाले जीव-लोगभी काशीके माहात्म्यको बिनाजानेही यहाँ पर शरीर त्याग करनेसे निष्पाप होकर वैसाही मुक्तिको प्राप्त करलेते हैं ॥ ६५ ॥ देवतालोग इसप्रकारसे आश्चर्यान्वित होतेहुए अगस्त्य—मुनिके आश्रमपर जबतक पहुँचे, इसीके बीच पक्षिगणको देखकर पुनर्वार बहुतही प्रसन्नहुए (देखे कि) ॥ ६६ ॥ सारस—पक्षी सारसीके गलेपर गला रखकर ऐसा निश्चल होगयाहै जैसे जानपडताहै कि सोता नहीं, बरन् विश्वनाथका ध्यान कररहाहै ॥ ६७ ॥ हंसी अपने चोंचके अग्रभागोंसे खुजला कर कामा-भिलाषी हंसको पक्षोंके फटकारसे निवारण कर (फटकारवता) रहीहै ॥ ६८ ॥ चकई चकवाके छेंक लेनेपर मानो अपनी झेंकित भाषामें कहरहीहै कि, "हेकामुकश्रेष्ठ !

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

क्या यहां भी कामवासना लगीहीहै ? " ॥ ६९ ॥ कुंजमें बैठाहुआ कपोत कंठ उठाकर, मनोहर गूँजरहाहै, पर कपोती "ध्यान स्थित मुनि सुनलेवेंगे " (बस) इसी कारणसे निवारण कररहीहै ॥ ७० ॥ मयूरभी उसी (ध्यानभङ्गके) भयसे अपना कूकना छोडकर चुप हो बैठाहै, और चकोर तो चन्द्रिकाभोजी होकर मानो नक्त व्रतही कररहाहै ॥ ७१ ॥ अहो ! सारिका (मैना) भी इसी सार—वचनको पढतीहुई सुग्गेको समझारही है कि—"जिस संसार—सागरका पारावार नहीं है उसके पार उतरनेवाले (एक) महादेवहीहैं " ॥ ७२ ॥ कोकिलभी कुहूकताहुआ अपने कोमल आलापोंसे यही कहरहाहै कि, "कलि और काल काशीवासियोंका कुछ नहीं बिगाड सकता " ॥ ७३ ॥ देवतालोग (वहांके) पशु—पक्षियोंकीभी ऐसी चेष्टा देखकर असमय च्युतहोनेके संकष्टसे भरेहुए स्वर्गकी बडीनिन्दा करनेलगे ॥ ७४ ॥ देवतोंकी अपेक्षा ये सब काशीवासी पशु—पक्षी और मृग और मृगगण बहुत अच्छे हैं क्योंकि इनका पुनर्जन्म नहीं होता, पर देवतोंको तो पुनर्जन्मका दुःख भोगनाही पडताहै ॥ ७५ ॥ हमलोग स्वर्गवासी होनेपरभी काशीवासी पतितोंकी तुल्यता कभी नहीं करसकते, कारण—काशीमें पतन होनेका भय नहीं है, पर स्वर्गमें पतनका बहुत बडा डर बनारहता है ॥ ७६ ॥ दूसरे स्थानपर विचित्र छत्रकी छायामें निष्कंटक राज्यभोग करनेसे काशीपुरीमें मासभर उपवास करकेभी रहना पडे तो बहुत उत्तमहै ॥ ७७ ॥ (क्योंकि) काशीमें शशक किम्वा मशककोभी जो पद अनायास सही मिलजाता है, अन्यत्रपर अष्टांगयोग—साधनेवाले योगियोंकोभी वह नहीं प्राप्त होता ॥ ७८ ॥ काशीवासी रंकभी (हमलोगोंसे) बहुत अच्छाहै क्योंकि वह तो यमराजसेभी निःशंक रहताहै, पर हम सब तो त्रिदशकहाकरभी एक पर्वतके कारण इस दुर्दशाको भोगरहेहैं ॥ ७९ ॥ ब्रह्माके एक प्रहरमें, लोकपाल, सूर्य, चन्द्र, ग्रह और ताराओंके सहित इन्द्रका पद विनष्ट होजाताहै ॥ ८० ॥ पर ब्रह्माके सौवर्ष बीत जानेपरभी काशीवासी जीवका विनाश नहीं होता, अतएव सब प्रकारके प्रयत्नको उठाकर काशीमें उत्तमही कर्मका आचरण करे ॥ ८१ ॥ काशीवास करनेमें जो सुख यहांपर होताहै वह समस्त ब्रह्माण्ड मंडपमें कहींभी नहीं है यदि चेत् कहीं होता तो क्यों सभीलोग काशीवासकी अभिलाषा करते ? ॥

कतहुं न सो ब्रह्मांड भरि, जो सुख काशीवास ।
जौ होतो तौ क्यों सबै, चाहत तेहि करि आस ॥ ८२ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सहस्रों जन्मके उपार्जित पुण्यराशिके परिवर्तन (बदले) से इस काशीपुरीमें वास मिलताहै ॥ ८३ ॥ फिर काशीमें वास होजानेपरभी यदि भगवान् त्रिलोचन अप्रसन्न होजावें तो सिद्धि नहीं मिलसक्ती, अतएव सर्वदैव शरणागत—वत्सल श्रीविश्वेश्वरके शरणमें जारहे ॥ ८४ ॥ धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष—ये चारोंही पुरुषार्थ पूरे पूरे जैसे काशीमेंहैं, वैसे और कहींभी नहीं मिलसक्ते ॥ ८५ ॥ आलस्य करकेभी जो कोई अपने घरसे विश्वनाथके मन्दिरतक जावे तो उसे पद पदमें अश्वमेध यज्ञसे अधिक पुण्य प्राप्त होताहै ॥ ८६ ॥ (पर) जो मनुष्य उत्तरवाहिनी गंगामें स्नान कर बड़ी श्रद्धासे विश्वेश्वरके दर्शनको जाताहै, उसके पुण्यका अन्तही नहींहै ॥ ८७ ॥ स्वर्धुनी (गंगा) के दर्शन, स्पर्शन, स्नान, आचमन, सन्ध्योपासन, जप, तर्पण, देवपूजन ॥ ८८ ॥ पंचतीर्थका दर्शन, तदनंतर विश्वेश्वरका दर्शन श्रद्धापूर्वक स्पर्शन, पूजन, धूप—दीप इत्यादि के दान ॥ ८९ ॥ प्रदक्षिणा, स्तोत्रपाठ, जप, नमस्कार, नर्तन तथा देवदेव ! महादेव ! शम्भो ! शिव ! शिव ! ॥ ९० ॥ धूर्जटे ! नीलकंठ ! ईश ! पिनाकिन् ! शाशिशेखर ! त्रिशूलपाणे ! विश्वेश्वर ! रक्षाकरो रक्षाकरो—ऐसे कथन ॥ ९१ ॥ फिर मुक्तिमंडपमें आधे निमेषभरभी बैठना, तथा वहांपर धर्मकथाकी चर्चा, पुराणश्रवण ॥ ॥ ९२ ॥ अन्यान्य नित्यकर्मोंका अनुष्ठान, अतिथिपूजन एवं परोपकार इत्यादिके करनेसे उत्तरोत्तर धर्म होताहै ॥ ९३ ॥ जैसे शुक्लपक्षमें चन्द्रमा कलाकला बढताहै उसीप्रकारसे काशीमें रहनेवालोंकी धर्मराशिभी पदपदमें बढाकरतीहै ॥ ९४ ॥ धर्मरूपी वृक्ष सबलोंगोंको सेवनीयहै इस धर्मवृक्षका बीज श्रद्धाहै और वह ब्रह्मणोंके चरणोंदकसे सींचागयाहै, इसीकी शाखायें चतुर्दश विद्यायें प्रसिद्धहैं, इसके पुष्प न्याय पूर्वक उपार्जित धन है, एवं इष्ट वृक्षके स्थूल और सूक्ष्म, काम तथा मोक्ष दोनोंही फलहैं, ॥ ९५ ॥ इस काशीधाममें सब अर्थोंको पूर्ण करनेवाली भवानी अन्नपूर्णाहैं समस्त कामनाओंके सिद्ध करनेवाले ढुंढिराज गणेशहैं एवं भगवान् विश्वनाथ अन्तसमयमें सब जन्तुओंको कानमें मंत्र देकर (भव—बन्धनसे) मुक्त करदेतेहैं॥९६॥ काशीमें धर्म अपने चारों पैरोंसे खडाहै अर्थभी काशीमें अनेक प्रकारसे वर्तमानहै, फिर काशीमें काम तो समस्त सौख्योंका एकमात्र आश्रय होरहाहै, वस्तुतः ऐसी कौनसी श्रेयस्कर वस्तुहै जो काशीमें नहींहै ॥ ९७ ॥ भला जहाँपर धर्म, अर्थ, काम, और मोक्षके देनेहींके लिये मूर्तिमान् होकर भगवान् विश्वेश्वर स्वयं विद्यमानहैं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तहांपर यह कौन आश्चर्यकी बात है ? क्योंकि वे विश्वनाथ अखंड सच्चिदानन्द साक्षात् विश्वरूपहैं इसीसे त्रैलोक्यभर काशीके समान नहीं है ॥ ९८ ॥ देवतालोग योंही बातचीत करतेहुए, होम और धूपके सुगन्धसे परिपूर्ण और बहुतेरे (वेदाध्यायी) बटुकोंसे भरीहुई अगस्त्य-मुनिकी पर्णशालाको देखनेलगे ॥ ९९ ॥ तदनंतर सांवाके अंजुरी पानेकेलिये मुखमें उपग्रहरूप कुशको लेकर ऋषिकन्याओंके पीछे पीछे घूमतेहुए अनेक मृगशावकोंसे अलंकृत ॥ १०० ॥ एवं वृक्षकी शाखामें लटकतेहुए और देववल्कलके कौपीनोंसे मानो विघ्नरूपी मृगोंको फाँसनेके लिये सब दिशाओंमें जालोंसे घिरेहुए ॥ १ ॥ अथच पतिव्रताओंकी मुकुटमणि लोपामुद्रा देवीकी चरणरूप मुद्रासे मुद्रित उस पर्णकुटीके उत्तम आँगनको देखतेही प्रणाम करनेलगे ॥ ॥ (इसके अनंतर) समाधिका विसर्जनकर; सुमिरनीको कानके ऊपर धर, योगासनपर विराजमान, साक्षात् ब्रह्माके समान श्रेष्ठ (तम) ॥ ३ ॥ मुनिवर अगस्त्यको सन्मुख देख इन्द्रादिक समस्त देवगण प्रसन्नवदन हो बडे ऊँचे स्वरसे "जय हो, जयहो" ऐसा कहने लगे ॥ ४ ॥ तब ऋषिराज उठ सर्व देवतोंको यथोचित "स्थानपर" बैठाय, आशीर्वादोंसे अभिनन्दित कर, आगमनका कारण पूँछनेलगे ॥ ५ ॥ व्यासने कहा-भक्तिपूर्वक इस परमपवित्र कथाके सुननेसे अथवा व्रतनिष्ठ श्रद्धाशील लोगोंके आगे पढनेसे किंवा पढवानेसे ॥ ६ ॥ मनुष्य, ज्ञानकृत, और अज्ञानकृत समस्त पापोंको दूर हटाकर हंसवर्ण यान (विमान) पर चढ, अवश्यही शिवपुरको जाताहै ॥ १०७ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषाटीकायां देवानां अगस्त्याश्रमगमनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

चतुर्थ अध्याय ।

पतिव्रताका आख्यान ।

सूतबोले—हेभगवन् ! अगस्त्य मुनिके ऐसे पूछनेपर सब लोगोंके हितार्थ उन देवतोंने तब क्या कहा? हेमहामुने ! उसे वर्णन कीजिये ॥ १ ॥ श्रीवेदव्यासने कहा—देवतालोग अगस्त्यकी बात सुनकर बडे आदरके साथ बृहस्पतिके मुखकी ओर ताकने लगे ॥ २ ॥ बृहस्पति कहनेलगे—हेमहाभाग ! अगस्त्य ! देवतोंके आनेका कारण श्रवण करो, हेमुने ! तुम धन्यहो, तुम कृतकृत्यहो, एवं बडेलोगोंके भी तुम्हीं मान्य

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नीयहो ॥ ३ ॥ हेमुनिवर ! प्रत्येक आश्रम प्रतिपर्वत और प्रतिवनमें क्या तपोधन लोग नहींहैं ? पर तुम्हारी मर्यादा कुछ औरही (निराली है ॥ ४ ॥ तुमपर तपोलक्ष्मी और ब्रह्मतेज स्थिररूपसे विराजमान हैं, पुण्यश्रीभी उत्कृष्टरूपसे तुमपर शोभित है फिर उदारता और मनस्विताभी तुम्हींमें वर्तमानहै ॥ ५ ॥ जिसकी कथासे लोकमें पुण्य मिलताहै, वही तुम्हारी सहधर्मिणी कल्याणी यह पतिव्रता लोपामुद्रा तुम्हारे शरीरकी छायाके समान तुम्हारे साथ है ॥ ६ ॥ अरुंधती, सावित्री, अनसूया, शांडिल्या, सती, लक्ष्मी; शतरूपा ॥ ७ ॥ मेनका, सुनीति, संज्ञा और स्वाहा इत्यादि पवित्रताओंमें जैसी कि यह लोपामुद्रा श्रेठ कहीजातीहै वैसी दूसरी कोईभी नहींहै, यह बात निश्चितहै ॥ ८ ॥ हेमुने ! तुम्हारे भोजन करलेनेपर यह खातीहैं तुम्हारे बैठजानेपर बैठती है; फिर तुम्हारे सोजानेपर यह सोती और तुमसे पहिलेही जाग उठतीहै ॥ ९ ॥ अलंकार आदिको बिना पहिने तुम्हारे सामने नहीं होती, कायवश तुम्हारे चलेजानेपर कभी अपना शृंगार नहीं करती ॥ १० ॥ तुम्हारे आयुष्य बढनेकी इच्छासे तुम्हारा नाम नहीं लेती, और दूसरे पुरुषका तो नाम कभी लेतीही नहीं ॥ ११ ॥ क्रुद्धहोकर गालीदेनेपरभी यह तुम्हारा उत्तर नहीं देती, और क्या मारदेनेपरभी प्रसन्नही रहतीहै, "यह कामकरो" तुम्हारे इस कहनेपर, "हेस्वामिन् ! उसे कियाही हुआ समझिये" ऐसा कहतीहै ॥ १२ ॥ तुम्हारे बुलानेपर घरके सब काम—काजको छोडकर तुरंत (दौडतीहुई) चलीआती, और कहतीहैं कि—"नाथ दासीको किसलिये पुकाराहै, ? आज्ञा देकर अनुगृहीत कीजिये" ॥ १३ ॥ न तो बहुत विलम्बतक द्वारपर ठहरती और न बैठतीही है, फिर तुम्हारे दिलाये बिना किसीको कुछभी नहीं देती ॥ १४ ॥ तुम्हारे कहनेके बिनाही पूजाकी समग्र सामग्री स्वयं जुटाये रहती है, नियमोदक कुश, पत्र, पुष्प और अक्षतादिक ॥ १५ ॥ जिसकी जब आवश्यकता पडतीहै, तदनुसार अवसर जोहतीहुई स्थिरतापूर्वक प्रसन्न चित्तसे उसे उपस्थित करदेतीहै ॥ १६ ॥ यह भर्ताके जूंठन मिठाई, अन्न, और फलादिका सेवन करती, एवं स्वामीकी दीहुई वस्तुको महाप्रसाद कहकर लेलेती है ॥ १७ ॥ देवता, पितर, अतिथि, सेवकवर्ग, गौ और भिखारियोंको दियेबिना यह (कभी) भोजन नहीं करती ॥ १८ ॥ लोपामुद्रा, गृहस्थीकी सामग्री और भूषणादिको सुसज्जित रखती एवं दक्षतापूर्वक प्रसन्न होकर व्यय नहीं बढाती, और तुम्हारी आज्ञा पायेबिना उपवास और व्रत इत्यादि कभी नहीं करती ॥ १९ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

समाज अथवा उत्सवका देखना तो यह दूरहीसे त्याग देतीहै, फिर तीर्थयात्रा, कि विवाहादिक देखनेकेलिये भी कभी कहीं नहीं जाती ॥ २० ॥ जब कि पति (तु सुखसे सोते अथवा सुखसे बैठे किंवा स्वेच्छानुसार किसीप्रकारके विहारमें आन रहे तब अंतरंग कार्य होनेपरभी कभी नहीं उठती ॥ २१ ॥ रजस्वला होनेपर दिनतक अपना मुख नहीं दिखलाती और जबतक स्नान करके शुद्ध नहीं हो ले अपना वचनभी नहीं सुनाती ॥ २२ ॥ ऋतु—स्नानके अनंतर अपने स्वामीहीक मुख देखतीहै कदापि दूसरे किसीकाभी मुख नहीं देखती, (दैवात् पतिके कहीं र जानेपर) मनहींमन स्वामीका ध्यान करतीहुई सूर्यका दर्शन करलेतीहै॥ २३॥ भर्त दीर्घ आयुष्यकी कामनासेही यह पतिव्रता हरदी, केसर, सेंदुर, काजल, चोलि ताम्बूल उत्तम सौभाग्यके भूषण, ॥ २४ ॥ केशोंका झारना चोटीका बाँधना ह और कान आदिमें गहनोंका पहिरना इन सबको कभी नहीं त्यागती ॥ २५ ॥ सती , रजकी, सत्कर्मके विरुद्ध तर्ककरनेवाली, पाखंडिनी और दुर्भगा स्त्रियोंसे क सखीभाव नहीं रखती ॥ २६ ॥ पतिसे विद्वेष रखनेवाली स्त्रीसे तो यह कभी बात तक नहीं करती न कभी अकेलीही रहती, और न नग्न होकर कभी नहातीहै ॥ २७ यह साध्वी कभी ओखरी, मूसल, बढनी (झाडू) सील, जांता, और डेवढी इत्य पर नहीं बैठतीं ॥ २८ ॥ संभोगसमयको छोडकर कभी ढिठाई नहीं कर और जिस जिस बातमें पतिकी रुचि रहतीहै यह सदैव उसेही प्रेमसे चाहतीहै ॥२ स्त्रियोंका एकमात्र यही व्रत, यही परमधर्म, और यही देवतापूजन है जो वह पति वचनका उल्लंघन नहीं करें॥ ३०॥ 'एक धरम एक व्रतनेमा, कायवचन मन पतिपदमे (तु०रा०) क्लीब (हिंजडा) दुरवस्थाको प्राप्त, रोगग्रस्त, वृद्ध, एवं सुस्थ, व दुःस्थ चाहे कैसाभी क्यों न होवे पर, स्त्री उसे कदापि उल्लंघन नहीं करे ॥ ३१ ॥ वृद्ध वश जड धनहीना, अंध बधिर क्रोधी अतिदीना ॥ ऐसेहु पतिकर किय अपम नारि पाव जमपुर दुखनाना॥ तु०स्वामीके हर्षित रहनेपर प्रसन्न, औरविषण्णमुख होने विषादित होनेवाली सती रमणी सम्पत् और विपत्में सदैव एकरूप बनी रहे ॥ ३२ ॥ घी, नोन, तेल—इत्यादिके चुकजानेपरभी पतिव्रता नारी, "नहींहै" कहकर पतिको आयास (तरद्दुद) के कामोंमें नहीं लगाती ॥ ३३॥ स्त्री जब भी स्नानकी इच्छा करै तो पतिके चरणोंको धोकर उसीजलको पी लेवे क्योंकि स्त्री तिके लिये महादेव और विष्णुसेभी बढकर केवल एकस्वामीही होताहै ॥ ३४

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जो स्त्री पतिकी बात टालकर व्रत अथवा उपवास आदिका नियम करलेतीहै, वह अपने पतिका आयुष्य हरती और अन्तमें नरकगामिनी होतीहै ॥ ३५ ॥ जो नारी स्वामीके कुछ कटुवचन कहनेपर क्रोधवश उसका उत्तर दे बैठतीहै, वह फिर गाँवमें कुतियां अथवा निर्जन वनमें सियारिन होतीहै ॥३६॥ स्त्रियोंके लिये सबसे बडा एक यही नियम कहागयाहै जो वे दृढसंकल्पपूर्वक पतिके चरणोंकी सेवा करके तब भोजन करें ॥ ३७ ॥ स्त्रीलोगोंको, ऊंचे आसनपर बैठना, परायेके घरपर जाना, अथवा लज्जा उपजानेवाली बातोंका कहना सर्वथा अनुचित है ॥३८॥ कभी किसीको अपवाद नहीं लगाना चाहिये और कलहको तो दूरहीसे त्यागदेना उचित है, अथवा बडे लोगोंके पासमें ऊंचे स्वरसे बोलना अथवा हँसनाभी नहीं चाहिये ॥ ३९ ॥ जो दुर्बुद्धि कामिनी स्वामीको छोडकर कुकर्म करातीहै वह दूसरे जन्ममें पेडके खोढरेमें सोनेवाली दुष्ट उलूकी होतीहै॥४०॥जो स्त्री स्वामीके मारदेनेपर उसेभी मारनेकी इच्छा करतीहै वह वाघिन अथवा बिलारी होतीहै, और जो परपुरुषपर कटाक्ष करती वह कैकराक्षी (ऐंचीतानी) होतीहै ॥ ४१ ॥ जो नारी स्वामीको छोडकर अकेले अपनेही मिष्टान्न खातीहै, वह ग्राम्यसूकरी अथवा अपनी विष्ठाखानेवाली चमगादर होतीहै ॥ ४२ ॥ जो कोई भर्ताको तू कहकर रेरी मारतीहै वह अवश्यही गूँगी होतीहै, और जो सवतसे सदैव डाह किया करतीहै, वह वारंवार दुर्भगा होतीहै ॥ ४३ ॥ जो कि पतिकी दृष्टि बचाकर परपुरुषकी ओर ताकती है, वह परजन्ममें कानी कुमुखी, और कुरूपा होतीहै ॥ ४४ ॥ जो नारी पतिको बाहरसे आताहुआ देख प्रेमपूर्वक तुरंत जल, आसन, ताम्बूल, पंखा आदिक वस्तु, और पाँव दाबना इत्यादि सेवा, तथा खेद दूरकरनेवाले मधुर वचनोंसे यथासमय प्रसन्न करतीहै वह समस्त त्रैलोक्य-को प्रसन्न करचुकी ॥ ४५–४६ ॥ पिता, भ्राता, और पुत्र–ये सब परिमित सुखके देनेवाले होतेहैं, अतएव अपरिमित सुखके दाता भर्ताहीका सदैव पूजन करे "मातु पिता भ्राता हितकारी ॥ मितसुखप्रद सुनु राजकुमारी ॥ अमित दानि भरता वैदेही । अधम सो नारि जो सेव न तेही" तु० रा० । माता भ्राता सुत पिता, परिमित सुख सब देहि । देत अपरिमित सुख पती, सबविधि सेवै तेहि ॥ ४७ ॥ स्त्रियोंका भर्ताही देवता, गुरु, धर्म, तीर्थ, और व्रत इत्यादि सब कुछ है, अतएव सबकिसीको छोडकर एकमात्र स्वामीहीका सेवन करना चाहिये ॥ ४८ ॥ जिसभाँतिसे जीवसे अलग होतेही तुरन्त शरीर अपवित्र होजाताहै, वैसेही भर्तासे हीन स्त्रीभी चाहे स्नान

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

करलिये हो पर सदैव अशुद्धही रहती है ॥ ४९ ॥ समस्त अमंगलोंसे बढ़
अमंगलकी मूर्ति विधवा स्त्रीही होतीहै (क्योंकि) किसीकार्यके प्रारम्भमें यदि विध
दिखाई पडजावे तो चाहे कहींपर हो फिर वह काम कभी नहीं सिद्ध होता ॥ ५०
पण्डितजन, सब अमंगलोंसे रहित एकमात्र माताको छोडकर और विधवाके
आशीर्वादको भी सर्पके समान जानकर परित्याग देवें ॥ ५१ ॥ कन्याके
विवाह की वेला द्विजलोग यही (आशीर्वाद) पढतेहैं कि, पतिके जीतेजी अथ
मरजानेपरभी (तुम) सहचरी बनीरहो ॥ ५२ ॥ जिसप्रकारसे परछांही देह
जैसे चन्द्रिका चन्द्रमाकी और जिसभाँति बिजुरी मेघकी सहचरी होतीहै, स्त्रीक
वैसेही पतिकी सदैव अनुगामिनी होनी चाहिये ॥ ५३ ॥ जो नारी पतिके
साथ सहमरणके उद्देशसे अर्थात् सतीहोनेकी इच्छासे हर्षपूर्वक घरसे श्मशानमें
स्वामीका अनुगमन करतीहै, उसे पदपदमें निस्सन्देह अश्वमेध यज्ञका फल
होताहै ॥ ५४ ॥ व्यालग्राही (मदारी) जैसे बलपूर्वक साँपको बिलसे खींचले
उसीभाँति पतिव्रताभी यमराजके दूतोंसे छीनकर अपने प्राणनाथको स्वर्गमें लेजाती
॥ ५५ ॥ यम किंकर लोग सतीस्त्रीको देखतेही उसके घोर पापीभी पतिको छोड़
दूर भागजाते हैं ॥ ५६ ॥ "हम सब यमदूत लोग पतिव्रताको आतीहुई देख
जैसा भय खातेहैं, वैसा तो अग्नि अथवा बिजुरीसेभी नहीं डरते" (यमके दूत
कहाकरते हैं)॥ ५७॥ पतिव्रताके तेजको देखकर तपनदेव(सूर्य)तापित और दहन (अ
भी दग्ध होने लगताहै, एवं (उसके आगे) सभी प्रकारके तेज थर्राने लगजाते हैं ॥ ५८
पतिव्रता अपने शरीरमें जितने रोमहैं, उतने अयुत—कोटि वर्षतक पतिके साथ वि
करतीहुई स्वर्गका सुख भोग करती है॥ ५९॥ इस संसारमें धन्य वह माता और धन्य
पिता एवं परमधन्य वह श्रीमान् पतिहै, जिसके घरमें पतिव्रता विराजमान रहती है॥ ६०
पिताके वंशके और माताके वंशके एवं पतिके वंशके तीन तीन पुरुषा पतिव्रताके पु
बलसे स्वर्गका सुखभोग करतेहैं ॥ ६१ ॥ दुश्चरित्रा नारी अपने शील—भंगके दो
पिताके माताके, और पतिके तीनोंही कुलोंको पतित करदेतीहै, और स्वयंभी
लोक और परलोकमें दुःखही भोगतीहैं ॥ ६२ ॥ भूमीपर जहाँ २ पतिव्रताके च
पड़तेहैं, वहाँ २ पृथिवी अपनेको पवित्र और भाररहित समझने लगती है ॥ ६३
सूर्य, चन्द्र और वायुभी डरतेही डरते पतिव्रताका स्पर्श केवल अपनेको पवित्र करने
इच्छासे करतेहैं, और कोई दूसरा प्रयोजन नहींहै॥ ६४॥ जलभी सदैव पतिव्रताके शरीर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

स्पर्श चाहा करते हैं कि "आज हमारी जडता दूरहुई और आज हमलोग भी दूसरोंके पवित्रकरने योग्य होगये" ॥६५॥ रूप और लावण्यसे गर्विता स्त्रियां तो घर घर हैं, पर पतिव्रता नारी विश्वेश्वरकी भक्तिहीसे मिलसक्तीहै॥६६॥भार्याही गृहस्थ होनेकी जड है, और सब सुखका मूल भी भार्याही है फिर समस्त धर्मोंके फल मिलनेका कारण एक भार्याही होतीहै एवं भार्याहीके द्वारा वंशकी भी वृद्धि होसक्तीहै ॥ ६७ ॥ एकमात्र भार्याहीकी सहायतासे यह लोक और परलोक दोनोंही जीते जाते हैं, (क्योंकि) भार्याहीन गृहस्थ देवकार्य, पितृकार्य, और अतिथिसत्कारादि कोईभी कर्म करनेका अधिकारी नहीं होसकता ॥ ६८ ॥ जिसके घरमें पतिव्रता नारी वर्तमान है, वास्तवमें वही गृहस्थहै, और नहीं तो दूसरी स्त्री जरा राक्षसी की नाईं पगपगपर पतिको ग्रसा करती है ॥ ६९ ॥ गंगास्नान करनेसे शरीर जैसे पवित्र होताहै उसीभांति पतिव्रताकी शुभदृष्टि पडजानेसेभी देह पावन होजाताहै ॥ ॥ ७० ॥ स्त्री यदि दैवात् किसी कारणसे पतिके साथ सती नहीं होसके तोभी उसे शुद्धरीतिसे अपने शीलकी रक्षाही करनी चाहिये क्योंकि चरित्रके भ्रष्ट होजानेसे तो वह परमपतित होजातीहै ॥ ७१ ॥ (फिर वह अकेलीही नहीं पतित होती वरन्) उसीके दोषसे उसका पति, पिता, माता, और भ्रातृवर्गभी स्वर्गसे च्युत होजातेहैं, इसमें कुछ अन्यथा नहीं है ॥ ७२ ॥ परन्तु पतिके मरजानेपर जो नारी यथार्थरीतिसे वैधव्य—व्रतका पालन करतीहै, वह पुनः परलोकमें पतिके साथ स्वर्गके, सुखोंको भोगतीहै ॥ ७३ ॥ रंडा स्त्रीके चोटी बांधनेसे भर्ताको बँधना पडताहै, इसलिये विधवाको सर्वदा शिरके बार मुडवादेने चाहिये ॥ ७४ ॥ विधवाको रातदिनमें सदैव एकहीबार भोजन करना उचितहै, दुबारा कभी नहीं खाना चाहिये विधवा नारी त्रिरात्र, पंचरात्र, अथवा पक्षव्रत ॥ ७५ ॥ मासोपवास, चान्द्रायण, प्राजापत्य, पराक एवं तप्तकृछ्र इत्यादि व्रतोंको करती रहे ॥ ७६ ॥ जबतक प्राण आपसे आप नहीं निकलजावे, तबतक जव इत्यादि अन्न, फलाहार, शाक (साग) भक्षण, किंवा दुग्धपानभर करके जीवनयात्राका निर्वाह करे॥७७॥ पलंगपर सोनेवाली विधवा पतिको पतित करदेती है, इसलिये पतिके सुखाभिलाषसे उसे भूतलहीपर सोना चाहिये ॥७८॥ विधवाको कभी अपने शरीरमें (तेल) उबटन अथवा किसीप्रकारके सुगन्ध द्रव्योंका व्यवहार नहीं करना चाहिये॥७९॥वह प्रतिदिन अपने पतिका, तथा उसके पिता और पितामहका नाम—गोत्र कहकर कुश—तिल—जलसे तर्पण करे ॥८०॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

फिर केवल पतिबुद्धिसे विष्णुभगवान्‌की पूजा करे, और विष्णुरूपी हरिको पति समझकर ध्यान करे ॥ ८१ ॥ संसारमें जो जो वस्तु अपनेको प्रियहो, किं वा उसका स्वामी चाहता रहाहो, उन सब द्रव्योंको पतिहीके प्रीति–हित गुण ब्राह्मणको दान करे ॥ ८२ ॥ विधवा नारी, वैशाख, कार्तिक और माघमासमें विशेष नियमोंको धारण करे. अर्थात् स्नान, दान, तीर्थयात्रा और वारंवार विष्णु नामोच्चारण करे ॥ ८३ ॥ वैशाखमें जलसे पूर्ण घडोंका दान, कार्तिकमें (देवों पर) घृतके दीपदान, एवं माघमासमें धान्य और तिलोंका दान करनेसे लोकमें विशेष सुखलाभ होताहै ॥ ८४ ॥ विधवा स्त्री वैशाखमासमें पौंसरा, देव ऊपर जलधरी, जूता, पंखा, छाता, सूक्ष्म (महीन) वस्त्र, चन्दन ॥ ८५ ॥ युक्त ताम्बूल, फूल, भाँतिभाँतिके जलपात्र, पुष्पमंडप ॥ ८६ ॥ विचित्र रसी पानीयवस्तु एवं दाख (अंगूर) और केला आदि फल, केवल इसी इच्छासे ब्राह्मणोंको दान करे कि "मेरे प्राणपति प्रसन्न होवें" ॥ ८७ ॥ वह कार्तिक जब अथवा कोईभी एकही अन्नको भोजन करे, एवं भंटा, सूरन, और सेम (की की तरकारी नहीं खावे ॥ ८८ ॥ कार्तिकमें तैलको त्याग देवे, कार्तिकभर मधु(म नहीं खावे, कार्तिकमासमें कांस्य (कांसा–फूल) के पात्रोंका व्यवहार न करे कार्तिकमें अंचारभी नहीं भोजन करे ॥ ८९ ॥ यदि कार्तिक मासमें मौन-व्र नियम करे तो उत्तम घंटादान देवे, और जो कोई पतरीपर खाताहो उसे कांस्यका पात्र देना उचितहै ॥ ९० ॥ भूमिशयन व्रत करनेपर बहुत कोमल सहित शय्यादान करे, फल छोडनेपर फल, और रस त्यागदेनेपर वही रस (दान करे ॥ ९१ ॥ योंही जो धान्य त्यागे हो वही धान्य अथवा शालि (चावल) देवे, फिर बडे प्रयत्नसे अलंकार और सुवर्णके सहित धेनु (गौ) का (अवश्य) करै ॥ ९२ ॥ एक ओर सब दान और दूसरी ओर दीपदान, क मासमें कोईभी दान दीपदानके षोडशांशको नहीं पहुँचसकते ॥ ९३ ॥ सूर्यके उदय होनेतक माघ–स्नान करडाले, एवं माघ नहानेवाला यथाशक्ति सब नि पालन करे ॥ ९४ ॥ ब्राह्मण, संन्यासी और तपस्वीलोगोंको पक्वान्न, लड्डू, बडा; इंडारिका इत्यादि ॥ ९५ ॥ घृतपक्व मारिचपूरित शुद्ध कर्पूरसे वासित, भीतर शक्करसे भरेहुए, नयनसुखद सुगन्धित द्रव्योंको भोजन करावे ॥ ९६ ॥ शीत दूरकरनेकेलिये सूखे इन्धनोंके बोझे, रुईभरेहुए पहिरनेके कपडे, दोपट्टे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तोषक ॥ ९७ ॥ मँजीठके रँगेहुए सुन्दर वस्त्र रुईभरीहुई रजाई, जायफल और लवंग डालेहुए बहुतसे ताम्बूल ॥ ९८ ॥ विचित्र कम्बल, निर्वातगृह, कोमल पादत्राण, एवं सुगंधित उबटन इत्यादि दान करे ॥ ९९ ॥ फिर महास्नानकी विधिको कर (बदरीनारायणके आश्रममें प्रसिद्ध,) घृतनिर्मित कंबल पूजाओंसे, तथा कालागुरु इत्यादिके द्वारा देवालयोंके भीतर धूप दान करनेसे ॥ १०० ॥ मोटी बत्तीके दीपोंका दान और भाँति भाँतिके नैवेद्योंसे "पतिरूपी भगवान् प्रसन्न होवें" ऐसा कहे ॥ १ ॥ इन प्रकारके विविध नियम और व्रतादिके द्वारा विधवा नारी वैशाख, कार्तिक, और माघके मासोंको बितावे ॥ २ ॥ प्राणके कंठमें लगजानेपर भी बैलपर न चढे, एवं चोलिया अथवा रंग बिरंगके कपडेभी नहीं पहिने ॥ ३ ॥ पतिव्रता विधवा पुत्रोंसे विना पूछे कुछभी न करे, इसप्रकारके आचारोंको करनेवाली रंडास्त्री भी उत्तमही समझी जातीहै ॥ ४ ॥ इसप्रकारसे धर्मानुष्ठानमें तत्पर रहनेवाली विधवा भी पतिव्रताही होतीहै, वह कभी दुःखभागिनी नहीं होती, और अन्तमें पतिके लोकमें चलीजातीहै ॥ ५ ॥ जो नारी पतिदेवताहै उसमें और गंगामें कुछभी भेद नहीं रहता वह तो साक्षात् शिव-पार्वतीके समान होजातीहै, अतएव विज्ञजनोंको उचितहै कि उसका पूजन करै ॥ ६ ॥ बृहस्पति (फिर) कहनेलगे-हेलोपामुद्रे ! महामातः ! तुम पतिके चरणारविन्दोंहीको देखती रहतीहो, हेदेवि ! आज तुम्हारा दर्शन होजानेसे गंगास्नान करनेका फल मिलगया ॥ ७ ॥ सर्वार्थविशारद देवगुरु इस प्रकारसे परमपतिदेवता महाभागा राजपुत्री लोपामुद्राकी स्तुति (बडाई) कर प्रणामके अनंतर फिर अगस्त्यमुनिसे कहनेलगे॥ ८॥ हेमहामुने ! तुम प्रणवरूप, और यह (लोपामुद्रा) श्रुतिरूप है; तुम साक्षात् तप और यह क्षमा है, एवं यही सत्क्रिया, और तुम फल हो, सुतराम् तुम्हीं परम धन्यहो ॥ ९ ॥ यह तो साक्षात् पातिव्रत्य तेजहै और तुम स्वयं ब्रह्मतेज हो, तिसपरभी यह (उग्र) तपस्याका तेज तब भला तुम्हे क्या असाध्य होसकताहै ? ॥ ११० ॥ यद्यपि तुमसे तो कुछभी छिपा नहींहै, तथापि मैं निवेदन करदेताहूँ, हेमुनिवर ! ये सब देवतालोग जिस अर्थसे यहां आयेहैं, उसे श्रवण करो ॥ ११ ॥ ये सौ अश्वमेधोंके कर्ता और वृत्रासुरके निहन्ता श्रीमान् इन्द्रदेवहैं, इनका आयुध वज्रहै, इन्हीके द्वारपर अणिमादिक आठों सिद्धियां (इनके) ताकदेनेकी कृपाको जोहती रहती हैं ॥ १२ ॥ इन्हींकी (अमरावती) नगरीके घेरेमें कामधेनुओंका झुंड चरता रहताहै, जिसके पुरवासी लोग नित्यही कल्पवृक्षकी छायामें सुखसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शयन करतेहैं ॥ १३ ॥ इन्हींके पुरमें सडकोंपर प्रसिद्ध चिंतामणि नाम रत्नोंका कंकड पीटा जाताहै, फिर ये जगत्भरके योनिरूप अग्निदेव हैं, और ये भी राजहैं ॥ १४ ॥ योंहीं ये सब निर्ऋति, वरुण, वायु, कुबेर, और रुद्र प्रभृति देवता हैं, जोकि समस्त कामनाओंकी सिद्धिहीके लिये लोकमें समर्थ होनेहीसे आराधित कियेजातेहैं ॥ १५ ॥ सो ये सबलोग जगत्के उपकारार्थ आपके पास प्रार्थना करनेको आयेहैं, और वह संसारभरका हित कार्य केवल आपके वचनमात्र उद्यत साध्यहै ॥ १६ ॥ किसी एक विन्ध्यनामक पर्वतने, सुमेरुगिरिसे डाहकर अपनी वृद्धिसे सूर्यनारायणका मार्ग रोकदियाहै, सो आप उसका बढना बंद करदीजिये॥ १७ ॥ जो लोग स्वभावहीसे कठिनहैं, अथवा मार्गके अवरोधक होगयेहैं किंवा डाहसे बढाचाहतेहैं उन सबकी वृद्धिको बढनेदेना अच्छा नहीं होता ॥ १८ ॥ बृहस्पतिके वचनको सुन उन महामुनि अगस्त्यने बिना कुछ सोचे विचारेही क्षणमात्र मौन रहनेके उपरांत "तथास्तु" कहदिया ॥ १९ ॥ "मैं आपलोगोंके कार्यको साधूंगा" यह करकर अगस्त्यऋषिने देवतोंको विसर्जित (बिदा) किया, और आप चिन्तामग्नहोकर फिर ध्यान लगादिया ॥ १२० ॥ वेदव्यासने कहा—इस पतिव्रताध्यायको जो स्त्री अथवा पुरुष सुनेगा, वह पापरूपी कंचुक (केंचुरी) को छोडकर इन्द्रलोकमें चलाजावेगा ॥ १२१ ॥

चौ०—करहिं पतिव्रत जे जगमाहीं । पतिसमेत ते सुरपुर जाहीं ।
होइ लोकमें जस अरु नामा । अन्तकाल पावहिं परधामा ॥ १ ॥

सो०—जदपि अपावनि नारि, करहिं पतिव्रत जे कठिन ।
निज पितरनको तारि, पतियुत भोगहिं स्वर्गसुख ॥ २ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषाटीकायां
पतिव्रताख्यानं नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

पञ्चम अध्याय ।

अगस्त्यका प्रस्थान ।

वेदव्यासने कहा हेसूत ! इसके अनन्तर मुनीश्वर अगस्त्य ध्यानके द्वारा विश्वेश्वरका दर्शन कर उस पवित्र लोपामुद्राके प्रति यह वचन कहनेलगे ॥ १ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वरारोहे ! देख, यह क्या उपस्थित हुआ कहाँ तो वह कार्य्य और कहाँ मुनि मार्गानुसारी हमलोग ? ॥ २ ॥ जिस गिरिभेत्ता इन्द्रने खेलसे समस्त पर्वतोंका पक्ष काटडाला भला आज वह अकेले विन्ध्यपर्वतके दमन करनेमें क्यों कुंठितसामर्थ्य होनेलगा ॥ ३ ॥ जिसके आंगनमें कल्पवृक्षहै जिसका अस्त्र वज्रहै और जिसके द्वारपर सिद्धियां विराजमानहैं, वही इन्द्र ब्राह्मणके प्रति सिद्धिके लिये प्रार्थना करे ॥ ४ ॥ बडा आश्चर्य्यहै ! जिस दावानलके योगसे अशेष शैल सदा व्याकुल किये जातेहैं (आज) विन्ध्यकी वृद्धि रोकनेमें पावककी वह शक्ति कहां चली गयी ? ॥ ५ ॥ समस्त भूतोंके नियन्ता जो दण्डधर प्रभु (यमराज) हैं क्या वहभी एकमात्र पर्वतको दण्डदेनेमें समर्थ नहींहैं ? ॥ ६ ॥ आदित्यगण, वसुगण, रुद्रगण, तुषितगण, मरुद्गण, विश्वेदेवगण, दोनों अश्विनीकुमार और अन्यान्य देवगण, ॥ ७ ॥ जिनके दृष्टिपात मात्रसे चौदहो भुवन पतित होतेहैं, हे कान्ते ! क्या वे लोग इस पर्वतके वृद्धि निवारण करनेमें समर्थ नहींहैं ? ॥ ८ ॥ ओः! कारण सञ्ज्ञा—काशीके उद्देशसे तत्त्वदर्शी मुनियोंने जो कहाहै वह सुन्दर बात मुझे स्मरण होगयी ॥ ९ ॥ "मुमुक्षुगण कदापि काशीका परित्याग न करें परन्तु वहां निवास करनेवाले सज्जनोंको अनेक विघ्न प्राप्त होते रहेंगे" ॥ १० ॥ (यही मुनिवाक्यहै) हे कल्याणि ! मेरे काशीवासमें यह बडा विघ्न उपस्थित हुआ मैं इसे अन्यथा नहीं करसकता क्योंकि विश्वेश्वरही विमुख होगयेहैं ॥ ११ ॥ ब्राह्मणगणके आशीर्वादसे जब कि काशी प्राप्त हुई तो कौन मोक्षाभिलाषी उसे परित्याग किया चाहेगा ? अहो ! वह विमूढबुद्धि अपने करस्थित मनोहर ग्रासको फेंककर केवल हाथ चाटना चाहताहै ॥ १२ ॥ अहो ! लोग पुण्यराशिस्वरूप इस काशीको मूर्खोंके सदृश किस प्रकारसे त्याग देसकतेहैं ? क्या प्रत्येक गोतेमें कमलकन्द हाथ लगताहै ? वैसेही क्या यह काशीभी प्रतिवार सुलभहै ? ॥ १३ ॥ तो भी जन्मान्तरके सञ्चित पुण्यपुञ्जकी मूर्ति वाराणसीका तत्त्व अवगत होनेपर तथा परम कष्टसे उस काशीको प्राप्त करके मोहवश दुर्गति लाभके हेतु अन्यत्र जानेकी इच्छा कौन करे ? ॥ १४ ॥ परमात्माके पदको दिखलादेनेवाली काशी कहां, और सर्वतोरूपसे दुःखदेनेवाले दूसरे प्रकारके कार्य्य कहां ? तब पंडित जन काशीको त्यागकर अन्यत्र क्यों जावेंगे ? क्या कोहँडेका फल कभी बकरेके मुखमें प्रविष्ट होसकताहै ? ॥ १५ ॥ अतिनश्वर मनुष्य परमपुण्यप्रकाशिका इस काशिकाको क्यों परित्याग करताहै ? मेरे चित्तमें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यही आताहै कि हा ! उसके पुण्यका क्षय होगया ।। १६ ।। जिसकी अन्यत्र निवा
सकी प्रवृत्ति नहीं होती वही मनुष्य समस्त जन्तुकी सहायभूता सुकृतैकराशि काशीमें
जानेका प्रयत्न नहीं करता, और जो कोई इस काशीवासको त्याग नहीं करत
वही संसाररोगसे मुक्तिलाभ करता है दूसरे नहीं ।। १७ ।। पापविनाशिनी
देवगणोंकोभी दुर्लभ, सततगङ्गासङ्गता, संसारपाशच्छेदिनी, शिव पार्वतीसे अधि
मुक्त त्रिभुवनसे अतीत मोक्षजननी काशीपुरीको मुक्तपुरुषगण कभी परित्याग
नहीं करते ।। १८ ।। हंहो मनुष्यगण ! तुमलोग निश्चयही पापपुञ्जसे परिपू
होकर वञ्चित हुए हो बडे पुण्यधनसे लभ्य इस काशीको अति प्रयत्नसे पाक
फिरभी कहां जानेको उद्यत होतेहो ? ।। १९ ।। ओः ! लोगोंकी कैसी मूर्खताहै
कि वे सब पवित्र गंगाके जलसे मनोहर और प्रलयकालमेंभी महादेवके त्रिशूलाग्र
भागपर स्थित इस काशीको त्यागतेहुए अन्यत्र जानेकी अभिलाषा करतेहैं ।। २०।
ओरे लोगो ! मोक्षपदके विरोधी पापोंको दूर करनेवाली काशीरूपी नौकाको छोड
शोकरूपी जलसे भरेहुए इस पापमय संसारमें क्यों गिरतेहो ? ।। २१ ।। वेदविहि
कर्मोंके आचरण, अथवा योगाभ्यास, किम्वा दान, और उग्र तपस्या इत्यादिसे
काशीधामकी प्राप्ति नहीं होती । केवल ब्राह्मणगणके आर्शीर्वाद अथवा विश्वनाथ
प्रसाद मात्रसे वह सुलभा होसकतीहै ।। २२ ।। किसी स्थानमें प्रचुरधन व्ययकरके धर्म लाभ
होताहै, और कहीं पर बहुतेरे दान भोगोंके द्वारा अर्थ और कामकी प्राप्तिभी होसकती
है चाहे किसी स्थानमें ये सब पायेजांय परन्तु वह एक मोक्ष जैसा काशीमें
वैसा अन्यत्र कहींभी नहीं प्राप्त होता ।। २३ ।। श्रुति स्मृति पुराणादिके अनुशासना
नुसार इस, अविमुक्तक्षेत्रके समान पवित्र स्थान दूसरा नहीं है । अतएव अविमुक्तकी
शरणागत होना यही परम पुरुषार्थ (कर्तव्य) है ।। २४ ।। जगत्प्रसिद्ध जाबालि
ऋषिने कहाहै—"हे आरुणे ! असी नदी इडानाडी और वरुणा नदी पिंगलनाडी कह
गयीहै इन्हीं दोनोंके मध्यमें वह अविमुक्त क्षेत्र काशीहै ।। २५ ।। वही काशी सुषु
म्णा नाडीहै, इन्हीं तीनों नाडियोंकी यह वाराणसीहै, इसी वाराणसीमें समस्त जीवों
प्राणप्रयाणसमयमें भगवान् विश्वेश्वर, कानमें ।। २६ ।। तारक ब्रह्मका उपदेश
करतेहैं, उसीसे जीवगण ब्रह्मस्वरूप होजातेहैं" ऐसा यह एक श्लोक (मसल) है जिसे
वेदवादीगण कहतेहैं ।। २७ ।। इस काशिकाक्षेत्रमें भगवान् भूतभावन अन्तकाल
तारक ब्रह्मका उपदेश देकर अविमुक्त क्षेत्रमें स्थित जन्तुओंको मुक्तिदेतेहैं इसमें सन्दे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नहींहै ॥ २८ ॥ अविमुक्तके तुल्य दूसरा क्षेत्र नहींहै, न अविमुक्त समान कहीं गतिहीहै, अविमुक्तेश्वरके सदृश दूसरा शिवलिंगभी नहीं है, यह बात वारंवार सत्यही सत्यहै ॥ २९ ॥ अविमुक्तको त्यागकर जो अन्यत्र निवास किया चाहताहै वह अपने करतलसे मुक्तिको फेंककर दूसरी किसी सिद्धिका अन्वेषण (खोज) करताहै ॥ ३० ॥ इस प्रकारसे महात्मा मुनिश्रेष्ठ अगस्त्यऋषिने वेद पुराण आदिके द्वारा श्रीमद्विश्वनाथके सदृश शिवलिंग और काशीकी समान पुरी त्रैलोक्यमें दूसरी नहींहै ऐसा क्षेत्रका माहात्म्य निश्चय करके ॥ ३१ ॥ तदन्तर कालभैरवके समीप जाकर प्रणामपूर्वक विज्ञापन किया कि हे कालराज ! आप इस काशीपुरीके स्वामी हैं, इसी हेतुसे मैं यहां आपसे पूछने आयाहूं ॥ ३२ ॥ हाय कालराज ! मैंने (तो) प्रति चतुर्दशी प्रति अष्टमी प्रतिमङ्गलवार और प्रति रविवारको फल—मूल—पुष्प—आदिसे क्या आपकी आराधना नहीं की मैं तो अपनी ओरसे निरपराधहूं तो भी मुझे क्यों अपराधी स्थिर करतेहो ? ॥ ३३ ॥ हाय हाय हे कालभैरव ! आप उत्कट पापनाशिनी विकटमूर्तिको धारण करके—"मत डरो" ऐसा कहतेहुए अपना हाथ फैलाकर काशीवासी भयार्त जीवगणकी सर्वतोभावसे क्या रक्षा नहीं करते ? ॥ ३४ ॥ (तदनन्तर दण्डपाणिके आगे विलाप करने लगे—) हे यक्षराज ! हे चन्द्रसमान सुन्दर शरीर ! हे पूर्णभद्र नन्दन ! हे नायक ! हे काशीवासिरक्षक ! हे दण्डपाणे ! आप तो समस्त तपस्याओंके क्लेशोंको जानतेहीहैं, तब फिर मुझे (काशीसे) बाहर क्यों निकलातेहैं ? ॥ ३५ ॥ हे देव ! आपही काशीवासियोंके अन्नदाता, प्राणदाता, ज्ञानदाता और मोक्षदाताभी हैं, और आपही भुजगेन्द्रहार तथा जटाकलाप इत्यादिसे लोगोंके अन्तिम कालोपयुक्त भूषणको (सजा) देतेहैं ॥ ३६ ॥ आपके संभ्रम और उद्भ्रम नामक दोनों गण यहां के निवासी लोगोंके समस्तवृत्तान्तके जाननेमें विशारदहैं, वेही लोग बडा मोह उत्पादन करके दुर्जनोंको क्षणमात्रमें इस मुक्तिक्षेत्रसे बाहर करदेतेहैं ॥ ३७ ॥ (इसके अनन्तर ढुंढिराज गणेशके प्रति विलाप करना प्रारम्भ किया—) हे प्रभो ढुण्ढि विनायक ! मेरी बात आप सुनलेवें, मैं अनाथकी नाईं विलप रहाहूं समस्त विघ्न आपहीके शासनाधीन हैं, पापीलोगही विघ्नसे परिभूत होते हैं, तो क्या मैंभी यहां दुर्वृत्तोंहीके सदृश अवस्थितहूं ॥ ३८ ॥ चिन्तामणि विनायक, कपर्दी विनायक, आशाविनायक, गजविनायक और सिद्धि विनायक, ये पांचों विनायक मेरी प्रार्थना सुनैं ॥ ३९ ॥ मैंने कभी किसीकी निन्दा नहीं की, न किसीका अपकारही किया

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

और परद्रव्य एवं परस्त्रीपरभी कभी मेरी मति नहीं हुई, तो फिर यह किस कर्मक विपाकफल उपस्थित हुआहै ? ॥ ४० ॥ मैंने तो त्रिकाल गंगास्नान किया, सर्वदा श्रीविश्वनाथका दर्शन किया और प्रत्येक पर्वोंपर सब प्रकारकी यात्राओंकोभी करता रहा तो फिर मुझे विघ्नहेतु यह विपाक क्यों उपस्थित हुआ ॥ ४१ ॥ हे मातः विशालाक्षि ! हे भवानि ! हे मंगले ! हे समस्त सौभाग्य विधान सुन्दरि ! ज्येष्ठेशि ! विश्वे ! हे विधे! हे विश्वभुजे ! हे श्रीचित्रघंटे ! हे विकटे ! हे दुर्गे ! तथा अन्याय देवी गण ! आप लोगोंको नमस्कारहै ॥ ४२ ॥ जो जो येही काशीस्थ देवता साक्षीहैं, वे सब श्रवण करैं मैं स्वार्थवश होकर काशीसे कहीं अन्यत्र नहीं जाता देवगणसे प्रार्थित होनेपर मैं क्या करूं, परोपकारके लिए क्या नहीं कियाजा ॥ ४३ ॥ पूर्वकालमें दधीच मुनिने दूसरेके उपकारार्थ अपना अस्थि प्रदान कियाथ दानवेन्द्र बलिने याचकको त्रैलोक्य देडाला, मधुकैटभ नामक दोनों असुरोंनेभी अप मस्तक कटवादिया और पक्षिराज गरुडभी विष्णु भगवान्के वाहन हुए ॥ ४४ अनन्तर मुनीश्वर अगस्त्यने समस्त काशीनिवासी मुनिगण तथा बाल वृद्ध जन अं अशेष तृण वृक्ष लता इत्यादि सभीसे बिदाहोकर काशीपुरीकी प्रदक्षिणा कर वहांसे बाहर निकले ॥ ४५ ॥ सकल शुभलक्षणरहित नीचपथवर्तीभी कोई मनु चन्द्रशेखरका दर्शन करके यदि यात्रा करे तो अवश्यही अभीष्टसिद्धिका लाभ प्राप्त ॥ ४६ ॥ काशीमें तृण गुल्म वृक्ष होना बहुत उत्तमहै क्योंकि न तो वे पाप कर नहीं बाहरही जातेहैं—परन्तु हाय ! जङ्गम जीवोंमें सर्वोत्तम होकरभी हमलोगों धिक्कारहै, जो हम सब काशीको परित्याग करके अन्यत्र चले जा रहेहैं ॥ ४७ वारंवार असीनदीके जलको स्पर्श करते हुए और काशीपुरीकी बडी बडी अटारियों मालाको देखते हुए अगस्त्य ऋषिने अपने नेत्रोंके प्रति कहा हे दोनों सरलनयन ! इस काशीपुरीको अच्छे प्रकारसे देखलो हाय ! इसके अनन्तर कहां तुम और क यह काशीनगरी (रहेगी) ॥ ४८ ॥ आज इस काशीके सीमाचारी भूतगण वारं ताली बजाकर और हाथसे हाथ मिलाकर यथेष्ट हास्य करैं मैं तो सुकृतैकराशि काश को छोडकर जाही रहाहूं ॥ ४९ ॥ अहो ! पत्नीके सहित वे अगस्त्यमुनि प्रकारसे क्रौंचपक्षीके जोडेके सदृश बहुत विलाप करते हुए "हे काशि ! हे काशि फिर आओ दर्शन दो "विरहीके नाईं योंही बकते बकते बडी मूर्च्छाको प्राप्त हो ॥ ५० ॥ क्षणकाल मूर्च्छित रहकर मूर्च्छा भङ्ग होनेपर अगस्त्य ऋषि "शिव !

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शिव" ऐसा कहते हुए बोले हे प्रिये ! चलो चलैं (देखो) ये देवगण बडेही कठिनहैं, त्रिभुवनके सुखदाता कामदेवको त्र्यंबक भगवान्के पास भेजकर जो कुछ इनलोगोंने किया क्या वह तुमें स्मरण नहीं है ? ॥ ५१ ॥ स्वेद (पसीना) जल बिन्दुकी कणिकाओंसे भालदेशको व्याप्त करते हुए जबतक खेदसे अगस्त्य मुनि तीन चार पदमात्र गमन करैं, तबतक पृथ्वी "इनकी अगवानी न करनेसे मेरा विनाश होजावेगा" मानो इसी भयसे आर्त होकर संकुचित होगयी ॥ ५२ ॥ मुनिने तपरूपी यान पर चढकर आधे निमेषमें आकाश मण्डलके मार्गको रोकेहुए समुन्नत विन्ध्यगिरिको आगे देखा ॥ ५३ ॥ वह विन्ध्यपर्वतभी वातापी और इल्वलके विनाशक सहधर्मिणीके सहित अगस्त्य मुनिको सन्मुखवर्ती देखकर तुरत कांप उठा ॥ ५४ ॥ तप क्रोध—और काशीके विरहसे उत्पन्न हुए त्रिविध अग्नियोंसे प्रलयानलके समान तीव्र जाज्वल्यमान अगस्त्यभगवान्को देख ॥ ५५ ॥ अत्यन्त छोटा (बवना) होकर मानो भूमिमें प्रवेशकी इच्छा करता हुआ वह पर्वत बोला—"मैं किंकर हूं मुझे आज्ञा देकर अनुगृहीत कीजिए" ॥ ५६ ॥ अगस्त्य ऋषिने कहा—हे विज्ञ विन्ध्य ! तुम सज्जनहो और मुझेभी भलीभांतिसे जानतेहो—जबतक मैं फिर लौटकर न आऊं तबलों योंही छोटे बने पडे रहो ॥ ५७ ॥ तपोनिधान अगस्त्यमुनिने ऐसा कहकर उस पतिव्रता के साथ अपने चरणविन्यासोंसे दक्षिणदिशाको सनाथ किया ॥ ५८ ॥ उस मुनिवरके चलेजाने पर वह कंपायमान शैल अत्यन्त उत्कंठितके समान देखनेलगा, कि यदि ऋषि चलेगयेहों तभी कुशलहै ॥ ५९ ॥ आज मेरा पुनर्जन्म हुआ, जो ऋषिने मुझे शाप नहीं दिया, मेरे सादृश कोई धन्य नहींहै उस गिरिने ऐसाही निश्चय किया ॥ ६० ॥ उसी समय कालज्ञ सूर्यके सारथि अरुणने घोडोंको चलाया (हांका) और पूर्ववत् सूर्य्यदेवके किरणोंके संचारसे जगत् स्वस्थताको प्राप्त हुआ ॥ ६१ ॥ आज कल वा परसों मुनि निश्चय आवेंगे इसी प्रकारके चिन्ताभारसे दबाहुआ मानों वह विंध्याचल स्थिरभावसे बैठरहा ॥ ६२ ॥ न तो आजतक मुनिवर लौटतेहैं और न आजलों वह पर्वत बढताहै—जैसे दुर्ज्जनोंका मनोरथरूपी वृक्ष नहीं बढने पाता ॥ ६३ ॥ जो नीच दूसरेसे डाह करके अपनी वृद्धि करनेकी इच्छा करताहै उसके वृद्धिकी बात तो दूर रहै पूर्व (सम्पादित) वृद्धिहीके रहनेमें सन्देहहै ॥ ६४ ॥ खलगणके मनोरथ (पहिले तो) सिद्धही नहीं होते, दैवात् सिद्धिको प्राप्त हुए तो ध्रुवकरके विनष्ट होजातेहैं। इसीसे विश्वेश्वरके पालित इस विश्वका कुशल (होता) है ॥ ६५ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(बाल) विधवाओंके स्तन जिस प्रकार उठकरभी फिर हृदयहीमें विली होजाते हैं ऐसेही दुष्टोंके मनोरथ भी हृदयमें उठ उठकर ध्वस्त होजाते हैं। ॥ ६६ ॥ जैसे कुत्सित नदियां थोडीही वृष्टिसे कूलंकषा (करारतोडनेवाली होजातीहैं, वैसेही असज्जनकी सम्पत्तिभी कुछही वर्षमें अपने कुलको नाश डालतीहै ॥ ६७ ॥ जो कोई दूसरेके सामर्थ्यको विना समझेही अपनी शक्ति दि लाने लगताहै उसीके सदृश यह विंध्यगिरिभी केवल उपहासके योग्य बनगया ॥६८ वेदव्यासने कहा—अगस्त्यमुनि रमणीय गोदावरीके तटपर विचरण करते रहने पर उनका काशीविरहसे उत्पन्न संतापसे शान्त नहीं होसके ॥ ६९ ॥ वे ऋषि उ दिशासे बहते आते वायुकोभी हाथ फैलाकर आलिङ्गन करते हुए काशीका मा पूछतेहैं ॥ ७० ॥ हेलोपामुद्रे ! काशीकी ऐसी रचनाकी परिपाटी तो और कहीं भूतलमें दृष्टिगोचर नहीं होती फिर हो कैसे ? जगत्के स्रष्टा ब्रह्माकी सृष्टिमें तो सिरजीही नहीं गईहै ॥ ७१ ॥ अगस्त्यऋषि काशीके वियोगमें कहीं ठहरते कहीं ही आप कुछ कहते किसी स्थलमें दौडते कहीं लरखराते और कहींपर बैठते हुए उधर भ्रमण करने लगे ॥ ७२ ॥ तदनन्तर भाग्यवान् जैसे सुसमृद्धिका दर्शन उसीप्रकारसे पुण्यराशि तपोनिधि अगस्त्यऋषिको भ्रमण करते करते उदय होते शतचन्द्रके समान भासमान महालक्ष्मी आगेही देखपडीं ॥ ७३ ॥ निज किरण सूर्यको जीतकर दिनहीमें उदय होती हुई अपने (आगस्त्यके) चित्तके ताप समूह बुझाती हुई ॥७४॥ ऐसी सुचिरस्थित महालक्ष्मीको अगस्त्य ऋषिने वहां देखा ॥७५ रात्रिमें कमल संकुचित होजातेहैं और अमावास्या तिथिमें चन्द्रमाभी कहीं क जाताहै, क्षीरोद समुद्रमें मन्दरमंथनका भय बना रहताहै इन्हीं कारणोंसे अ इन पूर्वोक्त स्थानोंको त्यागकर मानो महालक्ष्मी यहां पर निवास करती हैं ॥ ७६ जिस समयसे माधवने पृथिवीको धारण किया तबसे मानवती होकर लक्ष्मी सपत्नीके प्रति (सवत) ईर्षावशही यहां पर स्थिर निवास करने लगी ॥ ७७ सूकर रूपसे त्रैलोक्यके भयंकर महासुरका विनाश करके महालक्ष्मी इसी कोल्हापुर नामक नगरमें अधिष्ठान करतीहै ॥ ७८ ॥ ततः पर उसी महालक्ष्म निकट हृष्टचित्तसे उपस्थित होकर मुनिवर्य्य अगस्त्यऋषि अभीष्ट फलदेनेवाली मा माताको प्रणामकर इष्ट वचनावलीसे सन्तुष्ट करने लगे ॥ ७९ ॥ अगस्त्य बोले—हे कमलसदृशविशालनेत्रे ! श्रीविष्णुहृदयकमलवासिनि ! जगज्जनी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मातः कमले ! मैं तुमको प्रणाम करताहूं । हे क्षीरोदजे ! कोमल कमलगर्भ समान गौरवर्णे ! प्रणतशरण्ये ! लक्ष्मि ! आप सदा प्रसन्न होवें ॥ ८० ॥ हे मदनमातः ! विष्णुके सदनमें श्री आपहीहैं, हे चन्द्रसुन्दरमुखि ! आपही चन्द्रमामें ज्योत्स्ना, (चन्द्रिका) हैं सूर्य्यमण्डलमें प्रभा, और त्रैलोक्यमें शोभाहैं हे प्रणतपालिनि ! लक्ष्मि ! आप सर्वदा प्रसन्न होवें ॥ ८१ ॥ हे देवि ! आपही अग्निमें दाहिकाशक्ति हैं, ब्रह्मा आपहीके साधकतासे इस विचित्र जगत्सृष्टिको रचतेहैं, और विश्वम्भरभी आपहीके साहाय्यसे समस्त संसारका पालन करतेहैं हे सदाशरणार्तिहरे लक्ष्मि ! आप प्रसन्न होवें ॥ ८२ ॥ हे अमले ! आपके इस जगत्को त्यागदेनेही पर रुद्र देवभी इसका संहार करतेहैं अतएव आपही सृष्टि—स्थिति—विनाश करनेवालीहैं, आपही कार्य्यकारणरूपा हैं, हे लक्ष्मि ! आपहीको पाकर नारायणभी पूजनीय हुएहैं; हे शरणागतवत्सले ! आप निरन्तर प्रसन्न होवें ॥ ८३ ॥ हे शुभे ! जिस व्यक्तिपर आपका करुणा कटाक्ष पडजावे सकल लोकमें केवल वही शूर वही गुणवान् वही पण्डित वही धन्य वही मान्य वही पवित्र और कुल शील कलाकलापके द्वारा वही पुरुषहै ॥ ८४ ॥ हे सर्वस्वरूपे आप जहाँपर क्षणमात्रभी रहजातीहैं, पुरुष, गज, अश्व, स्त्रीसमूह, तृण, सरोवर, देवकुल, गृह, अन्न, रत्न, पक्षी, पशु, शय्या और भूमि, ये सब सश्रीक होजातेहैं, और नहीं तो दूसरे लोग जगत्में श्रीमान् नहीं होसकते ॥ ८५ ॥ हे लक्ष्मि ! आपके छूदेनेहीसे समस्त वस्तु संसारमें पवित्रताको प्राप्त होतेहैं और जिसे आप छोडदेतीहैं वेही द्रव्य अशुद्ध होजातेहैं, हे विष्णुपत्नि ! कमलालये ! कमले ! जिस स्थानमें आपका नामहै वहीं पर सुमंगल विराजमानहै ॥ ८६ ॥ लक्ष्मी, श्री, कमला, कमलालया, पद्मा, रमा, नलिनयुग्मकरा, मा, क्षीरोदजा, अमृतकुम्भकरा, इरा (इन्दिरा) और विष्णुप्रिया, इन द्वादश नाम जपनेवालोंको दुःख कहांहै ॥ ८७ ॥ इस प्रकारसे सपत्नीक अगस्त्यऋषिने हरिप्रिया भगवती महालक्ष्मीकी स्तुति करके साष्टाङ्ग दण्डवत्प्रणाम किया ॥ ८८ ॥ लक्ष्मी बोली हे मित्रावरुणपुत्र ! अगस्त्य ! उठो उठो, तुम्हारा कल्याण होवे, शुभव्रते ! पतिव्रते ! लोपामुद्रे ! तुमभी उठो ॥ ८९ ॥ इस स्तुतिसे मैं प्रसन्नहूं जो हृदयका अभीष्ट हो उसे प्रार्थना करो (वरमांगो) हे महाभागे ! पवित्रे ! राजपुत्रि ! तुम यहांपर बैठ जाओ ॥ ९० ॥ पातिव्रत्यादि सूचक तुम्हारे इन अङ्ग लक्षणोंसे और परम पवित्र व्रतोंसे असुरास्त्रसे सन्तापित अपने इस शरीरको शीतल किया चाहतीहूं ॥ ९१ ॥ विष्णु-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रिया लक्ष्मी ऐसा कह, उस मुनिपत्नीको आलिंगन कर, प्रीतिपूर्वक अनेक सौभाग्य
प्रद भूषणोंसे अलंकृत करने लगीं ॥ ९२ ॥ लक्ष्मीने फिर कहा हे मुने ! तुम्हा
हृदयसन्तापके कारणको; मैं जानतीहूं । काशीका विरहानल सचेतन (प्राणी
मात्रको व्यथित करताहीहै ॥ ९३ ॥ पूर्वकालमें जब देवदेव विश्वेश
मन्दराचलको गयेथे, तो उस समय काशीके वियोगसे उनकीभी ऐसीही दश
होगयीथी ॥ ९४ ॥ शूलपाणिने पुनः काशीके वृत्तान्त जाननेके लि
क्रमशः ब्रह्मा केशव प्रथमगण गणेश और अन्य देवतोंको प्रेषण कियाथा ॥ ९५
वे सब देवगण वारंवार काशीके गुणोंको विचार कर आजतक वहांसे फिर क
नहीं गये (वस्तुतः) वैसी नगरी और कहांहै ? ॥ ९६ ॥ इस बातको सुन महाम
अगस्त्यने प्रणामकर भक्तिपूर्वक महालक्ष्मीके प्रति कहा ॥ ९७ ॥ यदि आप
वरदिया चाहतीहैं और यदि मैंभी वरदानके योग्यहूं तो मुझे पुनः वाराणसीकी प्र
होवे, यही वर दीजिए ॥ ९८ ॥ जो कोई मत्कृत इस आपके स्तोत्रको भक्तिपू
पढें उन लोगोंको कभी सन्ताप दारिद्रता, ॥ ९९ ॥ प्रियवियोग, और सम्पत्ति
न होवे, सर्वत्र उनलोगोंको विजय लाभ होवे और (कभी) वंशविच्छेद न हो
॥ १०० ॥ लक्ष्मी बोली—हेमुने ! जो कुछ तुमने कहा वह सब होवेगा, इस स्तो
त्रके पाठ करनेसे मैं सन्निहित होऊंगी ॥ १०१ ॥ जिस घरमें यह स्तोत्र
जावेगा वहां दारिद्रता और कालकर्णी कभी प्रवेश न करेगी, हाथी घोडा और
आदिके शान्त्यर्थ सर्वदा इस स्तोत्रको पढनाचाहिये ॥ १०२ ॥ यह स्तोत्र भोज
पर लिखकर कंठदेशमें पहिनादेनेसे बालग्रहोंसे ग्रस्त बालकोंका परम शान्ति
कारक होताहै ॥ १०३ ॥ यह मेरा बीज रहस्य यत्नपूर्वक रक्षणीयहै, श्रद्धाहीन
जनको यह स्तोत्र कभी न देवे, और न अशुचि व्यक्तिको देवे ॥ १०४ ॥ हे दि
न्द्र ! और सुनो, भावी उनतीसवें द्वापरयुगमें तुम निश्चयही व्यास होंगे ॥ १०५
तब वेदोंका विभाग और पुराण धर्मशास्त्रोंका उपदेश करके तथा वाराणसीमें
होकर अपनी अभीप्सित (इच्छित) सिद्धिका लाभ करोगे ॥ १०६ ॥ सम्प्रति
तुम्हारा एक हित कहतीहूं उसे करो, यहांसे कुछ (थोडा) आगे चलकर कालि
भगवान्को देखोगे ॥ १०७ ॥ हे ब्रह्मन् ! वे षण्मुख प्रभु यथावत् शिवभक्त
वाराणसीका रहस्य कहेंगे, जिससे तुम्हारा सन्तोष होवेगा ॥ १०८ ॥ अगस्त्य

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ऋषिने इस प्रकारसे वरदान पाकर महालक्ष्मीको प्रणाम करके जहांपर मयूरवाहन कुमार निवास करतेहैं वहांकी यात्रा की ॥ १०९ ॥

लखि अगस्त्यको आवते, विंध्याचल तजि गर्व ।
करि विनती चरनन परचौ, भयो दीर्घते खर्व ॥ १ ॥

इति श्रीस्कंदपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषाटीकायां अगस्त्यप्रस्थान वर्णनंनाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

षष्ठ अध्याय ।

तीर्थप्रकरण ।

वेदव्यास बोले हे महाभाग सूत ! श्रवणमनोहारिणी कथा सुनो, जिसे मनमें रखकर मनुष्य संसारमें समस्त पुरुषार्थका भागी होताहै ॥ १ ॥ सहधर्मिणीसहित अगस्त्य ऋषि महालक्ष्मीके दर्शनानन्दरूप अमृतधारावाहिनी नदीमें स्नान करके परम हर्षको प्राप्त हुए ॥ २ ॥ हे अग्निकुण्डसम्भूत ! निर्मल हृदय ! सूत ! पुरातत्त्वके वेत्ताओंकी कही हुई एक कथा सुनो ॥ ३ ॥ जिन सज्जनोंके हृदयमें परोपकार जागरूक रहताहै उनकी आपत्तियां विनष्ट होजातीहैं और पद पदमें सम्पत्तियां प्राप्त होतीहैं ॥ ४ ॥ उपकारसे जो पवित्रता और फल प्राप्त होताहै वह शुद्धि तीर्थस्नानसे नहीं होती और न वह फलही बड़ेदान अथवा उग्र तपस्याके द्वारा पायाजाताहै ॥ ५ ॥ परोपकाररूप धर्म और दानादिसे उत्पन्न धर्मको विधाताने एकत्र तौल किया तो पहिलाही (उपकार) धर्म भारी हुआ ॥ ६ ॥ समस्त (शास्त्रीय) वाग्जाल मथन करके केवल यही निश्चय किया गयाहै, कि परोपकारसे बड़ा कोई धर्म नहीं और परापकारसे बढ़कर कोई पाप नहींहै ॥ ७ ॥ (देखो) उपकारपरायण अगस्त्यमुनिही उसके उदाहरण हैं, कहां तो वह काशीके वियोगका दुःख और कहां (साक्षात्) महालक्ष्मीके मुखका दर्शन ? ॥ ८ ॥ जीवन और नानाप्रकारका धन हस्तिकर्णके अग्रभाग ऐसा चंचलहै, अतः बुद्धिमान्को एक परोपकारही करना चाहिए ॥ ९ ॥ जिस लक्ष्मीके केवल नामहीकी प्राप्तिसे सामान्य मनुष्यभी जगत्में अतुलनीय होजाताहै, अगस्त्य ऋषि उसी महालक्ष्मीका प्रत्यक्ष दर्शन करके कृतकृत्य होगये (यह कहना बाहुल्य मात्रहै) ॥ १० ॥ इसके अनन्तर स्वेच्छासे विचरण

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

करते हुए मुनिवरने दूरहीसे श्रीशैलको देखा, जहांपर साक्षात् श्रीत्रिपुरा (तारका
न्तक देव निवास करतेहैं ॥ ११ ॥ प्रसन्न चित्त मुनिने अपनी पत्नीसे कहा हे कान्ते
तुम यहीं स्थित होकर अत्यन्त मनोहर शोभायुक्त ॥ १२ ॥ श्रीशैलके शिखरको
देखो, जिसके दर्शन करनेसे इस संसारमें मनुष्योंको कभी पुनर्जन्म नहीं ग्रहण करना
पड़ता ॥ १३ ॥ यह पर्वत चौरासी योजन विस्तृतहै, यह समस्त पर्वत शिवलिंगमय
इसलिये इसकी प्रदक्षिणा करनी चाहिए॥ १४ ॥ लोपामुद्रा बोली हे नाथ ! यदि आपकी
आज्ञाहो तो मैं कुछ पूछा चाहतीहूं, क्योंकि जो स्त्री पतिके आज्ञाविना बोलतीहै, वह पतिघ्नी
है ॥ १५ ॥ अगस्त्य ऋषिने कहा हे देवि ! क्या कहा चाहतीहो ? तुम निःशंक होके
कहो, तुम्हारीसी स्त्रियोंकी बातसे पतिको (कभी) खेद नहीं होता ॥ १६ ॥ तदनन्तर
लोपामुद्रा देवीने मुनिवरको प्रणाम करके सब लोगोंके हितार्थ और अपने सन्देहको दूर
करनेके लिये अति नम्रता पूर्वक प्रश्न किया ॥ १७ ॥ लोपामुद्राने कहा श्रीशैल शिखरके
दर्शनसे पुनर्जन्म नहीं होता, यदि यह सत्यहै तो (फिर) काशीवासकी इच्छा क्यों
की जातीहै ॥ १८ ॥ अगस्त्य बोले हे सुन्दरि ! तुमने बहुतही ठीक पूछा, हे
निर्मले ! इस विषयमें तत्त्वचिन्तक मुनियोंने बारंबार जो निर्णय कियाहै उसे सुनो
॥ १९ ॥ मुक्तिके अनेक स्थानहैं, उस सम्बंधमेभी उन लोगोंने जो स्थिर
रक्खाहै उन सबको मैं कहताहूं, क्षणमात्र दत्तचित्ता हो ॥ २० ॥ प्रथम तो
प्रसिद्ध तीर्थराज प्रयागहैं, जो समस्त तीर्थोंमें कामनापूरक और धर्म अर्थ
मोक्षका दाताहै ॥ २१ ॥ नैमिषारण्य, कुरुक्षेत्र, गंगा (हर) द्वार, अवन्ती, अयोध्या
मथुरा, द्वारका, गंगा ॥ २२ ॥ सरस्वती, सिंधुसंगमस्थल, गंगासागर संगम, कांची
ब्रह्मगिरि, सप्तगोदावरी, ॥ २३ ॥ कालंजर, प्रभास, बदरिकाश्रम, महालय, अम
कंटक, जगन्नाथपुरी, ॥ २४ ॥ गोकर्ण, भृगुकच्छ, भृगुतुंग, पुष्कर, श्रीपर्वत, धा
तीर्थ इत्यादि बाह्यतीर्थ ॥ २५ ॥ और सत्यादिक मानस तीर्थहैं, हे प्रिये ! ये सब तीर्थ
मोक्षप्रदहैं इसमें सन्देह नहीं है ॥ २६ ॥ (शास्त्रमें) जो गया नामक तीर्थहै
पितरोंको मुक्ति देनेवालाहै, (वहां पर श्राद्ध करके) पितृ पितामहके ऋणसे उ
पुत्र पौत्रभी मुक्तहोतेहैं ॥ २७ ॥ ऋषिपत्नीने कहा महामते ! जो जो मानसती
कहेगयेहैं, वे सब कौन कौन है ? उन्हेभी कहनेकी आज्ञा कीजिए ॥ २८ ॥ अ
स्त्य मुनि बोले हे अनघे ! समस्त मानसतीर्थोंको कहताहूं, श्रवण करो, जि
स्नान करके मनुष्य परम गतिको प्राप्त होताहै ॥ २९ ॥ सत्य; क्षमा, इन्द्रियनि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

समस्त भूतोंपर दया, आर्जव (सीधाई) दान, दम (निषिद्ध विषयोंसे बाह्येन्द्रियोंकी सर्वथा निवृत्ति) सन्तोष, ब्रह्मचर्य्य, प्रियवादिता, ज्ञान, धैर्य्य, और तपस्या प्रभृति प्रत्येक तीर्थहैं, और मनकी परम शुद्धिही तीर्थोंकाभी तीर्थहै ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ॥ ३२ ॥ केवल जलमें डुबानेहीका नाम स्नान नहीं है, जो बाह्येन्द्रियोंका दमन रूप स्नान करता है वही स्नान है, जिसका हृदय निर्मल है वही पवित्र है ॥ ३३ ॥ जो व्यक्ति लोभी, निन्दक, झूर, दाम्भिक, और विषयान्ध है, वह सब तीर्थोंमें नहानेपरभी पापी और मलिनही बना रहताहै ॥ ३४ ॥ मनुष्य केवल शरीरकी मैल धोकर शुद्ध नहीं होता, जब मनके मलको त्याग देताहै तबही यथार्थ निर्मल होताहै ॥ ३५ ॥ जोंकें जलहीमें उत्पन्न होतीं और जलहीमें मरजातीहैं, परन्तु वे तो स्वर्ग नहीं जातीं, क्योंकि उनकी चित्तशुद्धि नहींहै ॥ ३६ ॥ विषयोंमें अत्यन्त अनुरागहीका नाम मानस मलहै, और विषयका विरागही मनकी निर्मलता कही गयीहै, ॥ ३७ ॥ चित्त अन्तर्गत वस्तुहै वह दुष्ट होनेपर तीर्थस्नानसे शुद्ध नहीं होता, सैकडों बार जलसे धोये गये मद्यपात्रकी नाईं (सर्वदा) अपवित्रही बना रहताहै ॥ ३८ ॥ दान, यज्ञ, तपस्या, शौच, तीर्थसेवा, और (धर्मकथा) श्रवण, ये सब मनोभाव शुद्ध न होनेसे क्या तीर्थ होसक्तेहैं ? ॥ ३९ ॥ जितेन्द्रिय पुरुष चाहे जहां रहै उसके लिये कुरुक्षेत्र, नैमिषारण्य और पुष्कर इत्यादि तीर्थ वहांहीपर वर्तमानहैं ॥ ४० ॥ ध्यानसे पवित्र; रागद्वेष रूप मलको दूर करनेवाले ज्ञान जलसे पूर्ण मानस तीर्थमें जो स्नान करताहै वेही परम गतिको प्राप्त होताहै ॥ ४१ ॥ हेदेवि ! तुमसे मैंने यह सब मानस तीर्थका लक्षण कहा, अब भौम तीर्थोंकी पवित्रताके कारणको सुनो ॥ ४२ ॥ जैसे शरीरके कोई २ अंश परम पवित्र होतेहैं, उसी प्रकारसे पृथिवीके भी कोई कोई प्रदेश अति पुण्यमयहैं ॥ ४३ ॥ भूमिके विचित्र प्रभाव जलके तेज, और मुनिगणके निवासादि परिग्रह येही सब तीर्थोंकी पुण्यताके कारणहैं ॥ ४४ ॥ अतएव जो कोई भौम तीर्थ और मानस तीर्थ इनदोनोंमें स्नान करताहै वह परमोत्तम गतिको प्राप्त होताहै ॥ ४५ ॥ जो मनुष्य त्रिरात्रोपवास व्रत, तीर्थयात्रा, सुवर्ण दान और गोदान नहीं करता वह जन्मान्तरमें दरिद्र होताहै ॥ ४६ ॥ तीर्थसेवनसे जो फल प्राप्त होताहै, प्रचुर दक्षिणा देकर अग्निष्टोमादिक यज्ञ करनेपरभी वह फल नहीं मिलता ॥ ४७ ॥ जिसके हाथ, पांव, मन, सुसंयत (स्थिर) रहतेहैं, जो विद्या,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तपस्या और कीर्तिसे युक्त होताहै वही तीर्थफलको भोग करताहै ॥ ४८ ॥ जो लेनेसे निवृत्त रहताहै, जो येन केन प्रकारेण सन्तुष्ट होजाताहै, जो अहंकार करता, वही मनुष्य तीर्थफलभागी होताहै ॥ ४९ ॥ दम्भसे हीन, कर्म रहित, लघु भोजनसे सन्तुष्ट जितेन्द्रिय और संपूर्ण संगतियोंसे विमुक्त जो वही तीर्थ फलका भोक्ताहै ॥ ५० ॥ जो क्रोधी नहींहै, जिसकी बुद्धि शुद्ध सत्यवादी, दृढव्रत, और अपनेही समान सब भूतोंपर समदर्शीहै, वही (यथार्थ फलको भोगताहै ॥ ५१ ॥ जो धीरता, श्रद्धा, और एकाग्रताके साथ पर्य्यटन करताहै; वह पापीभी होतो विशुद्ध होजाताहै, पुण्यवान्को कहनाही ॥ ५२ ॥ तीर्थसेवी मनुष्य पशुपक्षी इत्यादि योनियोंमें जन्म नहीं कुदेशमें उत्पन्न नहीं होता, और दुःखभागी नहीं होता, बरन स्वर्गलाभ, और पायकी प्राप्ति करताहै ॥ ५३ ॥ श्रद्धाहीन, स्वभावतः पापपरायण, नास्तिक, चित्त और हेतुवादी ये पांच प्रकारके लोग (कभी) तीर्थफलके भागी नहीं ॥ ५४ ॥ जो लोग शीत—उष्ण, सुख—दुःख, आदि समस्त द्वन्द्वको सहकर, विधिसे तीर्थ यात्रा करतेहैं; वेही धीर नर स्वर्गलोकके भोक्ता होतेहैं ॥ ५ तीर्थ यात्राभिलाषी मनुष्य पूर्वदिन गृहमें उपवास करके गणेशपूजन, पित्र ब्राह्मणभोजन, साधुसेवनको यथाशक्ति करे ॥ ५६ ॥ फिर—पारणकर नि धारणपूर्वक हृष्ट चित्तसे यात्रा करे, लौटने पर पुनः श्राद्धकरे तब तीर्थका संपूर्ण भागी होताहै ॥ ५७ ॥ तीर्थमें ब्राह्मणकी परीक्षा न करे, जो अन्नार्थी हो उसे करावे, सत्तू, मांडसे रहित भात, अथवा पायस (खोवा) का पिंडदान करे ॥ ५ गुड और पिसीहुई तिलीकाभी पिण्डदान ऋषियोंका सम्मतहै, तीर्थमें अर्घ्य आवाहनसे रहित श्राद्ध अवश्य करे ॥ ५९ ॥ शास्त्र विहित कालहो चाहे अ कालहो, परन्तु तीर्थमें पहुंचनेके साथही श्राद्ध और तर्पण करडाले विलंबसे न होने पावे ॥ ६० ॥ किसी प्रयोजन वशभी तीर्थमें पहुंच जावे तो तीर्थस्नान लेवे,इससे स्नानजन्य फल प्राप्त होताहै, किन्तु तीर्थ यात्राका फल नहीं ॥ ६१ ॥ तीर्थमें जानेसे पापियोंकेभी पापका शमन होजाताहै, परन्तु श्रद्ध यात्रा करनेवाले मनुष्यको तो यथोक्त फलकी प्राप्ति होतीहीहै ॥ ६२ ॥ जो लिये तीर्थ गमन करताहै वह (पुण्यके) सोलहवें भागको पाताहै, और जो कार्य्यवश जाताहै उसे आधाफल प्राप्त होताहै ॥ ६३ ॥ जिसकी कुशकी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बनाकर तीर्थ सलिलमें डुबोवै—उसेभी अष्टमांश फल मिलताहै ॥ ६४ ॥ तीर्थमें जाकर उपवास, और शिरका मुंडन करना चाहिये, क्योंकि मुडवादेनेसे शिरोगत सब पाप दूरहो जातेहैं ॥ ६५ ॥ जिस दिन तीर्थमें पहुंचनाहो उसके पूर्व (पहिलेही) दिनमें उपवास करलेवे और उस दिन श्राद्ध करे ॥ ६६ ॥ तीर्थके प्रसंगसे तीर्थयात्राका अङ्ग-कार्य्यभी मैंने तुम्हारे आगे कहा, यही स्वर्गसाधन और मोक्षका उपायहै ॥ ६७ ॥ काशी, काञ्ची, मायापुरी, अयोध्या, द्वारवती, मथुरा, और अवन्तिका; येही सातो नगरियां संसारमें मोक्ष देनेवालीहैं ॥ ६८ ॥ फिर, समस्त श्रीशैल मोक्षप्रदहै, केदार (क्षेत्र) उससेभी अधिकहै, श्रीशैल और केदारसेभी विशेष मुक्तिदायक प्रयाग है ॥ ६९ ॥ तीर्थराज प्रयागसेभी विशिष्ट अविमुक्त क्षेत्रहै, जैसी (सायुज्यादि) मुक्ति अविमुक्त क्षेत्रमें मिलतीहै वैसी अन्यत्र कहीं नहीं है, यह निश्चयहै ॥ ॥ ७० ॥ और सब दूसरे मुक्तिक्षेत्र काशीहीकी प्राप्ति करातेहैं, काशीकी प्राप्ति होनेहीसे निर्वाण पद मिलताहै, अन्यथा करोडों तीर्थ सेवनसेभी नहीं प्राप्त होता ॥ ७१ ॥ इस विषयमें विष्णुके गणोंने जो शिवशर्म्मा द्विजसे कहाथा, वह पुरातन इतिहास कहताहूं ॥ ७२ ॥ जो मनुष्य इस तीर्थाध्यायको सावधान चित्तसे सुनताहै अथवा जो ब्राह्मण श्रद्धा भक्तिसे युक्त विप्रोंको ॥ ७३ ॥ धर्म परायण क्षत्रियोंको सत्पथवर्ती वैश्योंको और द्विजातिभक्त शूद्रोंकोभी सुनाताहै, वह निष्पाप होजाताहै ॥ ७४ ॥

लोपामुद्रासे कही, श्रीअगस्त्य मुनिराय ।
तीरथ यात्राकी विधी, सब प्रकार समुझाय ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषाटीकायां तीर्थप्रकरण-वर्णनं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

सप्तम अध्याय ।

सप्तपुरीवर्णन ।

अगस्त्य ऋषि बोले—मथुरापुरीमें ब्राह्मणोंमें उत्तम कोई एक ब्राह्मणथा, जिसका पुत्र महातेजस्वी शिवशर्मा प्रसिद्ध हुआ ॥ १ ॥ वेदाध्ययन कर, उसके तत्त्वार्थको जान, धर्मशास्त्रोंको पढ, पुराणोंको समझ, ॥ २ ॥ वेदके छवो अंगोंका अभ्यास

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कर, तर्क शास्त्रको मथ, पूर्व-उत्तर दोनों मीमांसाओंकी आलोचना, धनुर्वेद विलोडन ॥ ३ ॥ आयुर्वेदका विचार, नाट्य (गांधर्व) वेदमें परिश्रम, अर्थशास्त्रोंकी प्राप्ति, अश्व गज चेष्टाका अभिज्ञान करके ॥ ४ ॥ चौंसठों कला निपुणता, मन्त्रशास्त्रमें विलक्षणता, अनेक देशोंकी भाषाओंका और विदेशीय लेख ज्ञान संपादन करनेके उपरांत ॥ ५ ॥ धर्मपूर्वक अर्थोंका उपार्जन कर भोगोंको भोग, सुन्दर गुणशाली पुत्रोंको उत्पादनकर और उन सबको धन ॥ ६ ॥ यौवनकी अस्थिरता विचार, लोकप्रसिद्ध कर्ण समीप श्वेत केश वृद्धताको देख, द्विजोत्तम शिवशर्मा बडी चिन्ताको प्राप्त हुआ ॥ ७ ॥ "श्रवण भये सितकेशा, मनहुं चौथ पन अस उपदेशा" तु. रा.।पढते पढते और धनोपार्जन मेरा समय (काल) बीतगया, पर कर्मोंके क्षयकरनेवाले महेश्वरकी आराधना होसकी ॥ ८ ॥ समस्त पापोंके हरनेवाले सर्वव्यापी हरिकोभी मैंने सन्तुष्ट किया । मनुष्योंके सर्वार्थ सिद्धिप्रद गणेशकीभी पूजा नहीं की ॥ ९ ॥ अन्धका समूहको विनाश करनेवाले सूर्य्यदेवकोभी मैंने अर्चित नहीं किया, संसार विमोचिनी महामाया जगद्धात्रीकाभी ध्यान नहीं किया ॥ १० ॥ समृद्धिदाता गणकोभी समस्त यज्ञोंके द्वारा तृप्त नहीं किया, पापोंके शान्त्यर्थ तुलसीवनकी सेवा नहीं की ॥ ११ ॥ यहां और परलोकमेंभी विपत्तियोंसे पार लगानेवा ब्राह्मणोंको मिष्टान्न और मधुर रसोंसे मैंने संतुष्ट नहीं किया ॥ १२ ॥ बहु पुष्प फलसे संपन्न, स्निग्ध पल्लव, सुंदर छाया युक्त वृक्षोंकी पंक्तिभी मार्गमें लगाई जो इसलोक और परलोक उभयत्र बडे फलको देतीहै ॥ १३ ॥ मैं काल और परकालमें सुंदर वासदेनेवाली (निजपितृ गृहस्थित युवति कन्या सुवासिनियोंको उनके मनोनुकूल दुकूल (वस्त्र) चोलिया और प्रत्यंग भूषणादिक अलंकृत नहीं करसका ॥ १४ ॥ मैंने यमलोकहारिणी उर्वरा (उपजाऊ) भू ब्राह्मणको दान नहीं की, और न परम पापहारी सुवर्णही वर्णोत्तम (विप्र) दिया ॥ १५ ॥ मैं इस जन्ममें शीघ्र पापहंत्री और सातजन्मपर्य्यन्त सुख देनेवा अलंकृता और वत्सके सहित गौ सत्पात्रको नहीं समर्पण करसका ॥ १६ ॥ फिर मात ऋणसे उद्धार होनेके लिये जलाशय नहीं खुदवा सका, और न स्वर्गमार्गप्रद अतिथिहीका सन्तोषसाधन करसका ॥ १७ ॥ मैंने यमपुरी यात्राके अर्थ स्वर्गमा सुखप्रद छाता, उपानत (जूता) कमंडलु (लोटा) आदि पथिकोंको

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दिया ॥ १८॥ यहां सुख प्राप्ति, और परलोकमें स्वर्गीय कन्यालाभके लिये मैंने कभी कन्याके विवाहार्थ धनभी नहीं अर्पणकिया ॥ १९ ॥ उभयत्र अत्यन्त मिष्टान्न पान देनेवाले वाजपेय यज्ञके अवभृथस्नानकोभी लोभवश मैं नहीं करसका ॥ २० ॥ जिस लिंगके स्थापनसे समस्त विश्वके स्थापनका फल प्राप्तहोताहै, मैंने देवालय बनाकर उसमें शुभप्रद शिवलिंगकी स्थापनाभी नहीं की ॥ २१ ॥ समग्र संपत्ति देनेवाला विष्णुका मन्दिर नहीं बनवाया, और सूर्य्यगणेशकी प्रतिमाभी नहीं निर्माण कराई ॥ २२ ॥ जिनकी मूर्ति बनानेसे (बनवानेसे) कुरूप और दुर्भाग्यशाली नहीं होना पडता, ऐसी पार्वती और महालक्ष्मीको चित्रपटमेंभी नहीं लिखवाया ॥ २३ ॥ ब्राह्मण गणको दिव्यवस्त्रके प्राप्तिका हेतुभूत अति सूक्ष्म उज्ज्वल विचित्र वस्त्रभी नहीं दान दिया ॥ २४ ॥ समग्र पापोंके क्षयार्थ सुसमिद्ध हुताशन(अग्नि) में मन्त्र कथनसे पवित्र घृतसंयुक्त तिलका हवनभी नहीं किया॥ २५॥ श्रीसूक्त, पावमानी मन्त्र, ब्राह्मण मन्त्र, मण्डल मन्त्र, पुरुषसूक्त, और शतरुद्रिय इन सब पापनाशक वेदमन्त्रोंको (गृहस्थ ब्राह्मण होकरभी) मैं नहीं जपसका, ॥ २६ ॥ पीपल वृक्षकी सेवाभी जो रविवार और शुक्रवार तथा त्रयोदशी और रात्रिभागको छोडकर सद्यः पाप हरण करनेवाली है नहीं करनेपाया ॥ २७ ॥ अशेष भोगकी समृद्धियोंकी देनेवाली, मृदुल तोषक और दीवट दर्पणसे युक्त शय्या-काभी दान नहीं कर सका ॥ २८ ॥ अज (बकरा) अश्व, भैंस, भेंडी, दासी, कालामृगचर्म, तिल, दधियुक्त सत्तू, जलपूर्ण घट, आसन, कोमल पादुका, ॥ २९ ॥ पादाभ्यंग, दीप प्रज्वालन, विशेष पौंसरा चलाना, पंखा, वस्त्र, तांबूल तथा अन्य मुखसुगन्धि संपादक वस्तु ॥ ३०॥ नित्यश्राद्ध, भूतबलि, और अतिथि पूजन, इत्यादि तथा अन्य उत्तमदान, इन सब द्रव्योंके दान और कर्मोंके अनुष्ठान करनेसे पुण्यभागी लोग यमपुरीमें प्रवेश, यमराज और यमदूतोंका दर्शन, तथा यमयातनाके भोगोंको नहीं पाते–(सो) मुझसे यह सब कुछभी नहीं करते बन पडा॥ ३१॥ ३२॥ कृच्छ्र चान्द्रायण और नक्तव्रत प्रभृति शरीरकी शुद्धि करनेवाले व्रतोंकाभी मैंने कभी नहीं अनुष्ठान किया ॥ ३३ ॥ मैंने न तो प्रतिदिन गोग्रासही दिया न गौका शरीरही खुजलाया, न गोलोकमें सुखदात्री गौको पंकमेंसे उद्धारही किया ॥ ३४ ॥ प्रार्थनानुसार अर्थ देकर मैंने अर्थियोंको भी कृतार्थ नहीं किया, (हाय !) दूसरे जन्ममें "देओदेओ" ऐसा बकनेवाला (दीन भिक्षुक) होऊंगा ॥ ३५॥ वेद, शास्त्र,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

धनसम्पति, स्त्री, पुत्र, क्षेत्र (खेत) हर्म्य (महल) ये सब कोईभी परलोक में मेरे साथी नहीं होंगे ॥ ३६ ॥ शिवशर्म्माने इसप्रकारसे चिन्तन कर, विषयोंसे बुद्धिको बटोर, (एकाग्र) मनसे यही निश्चय किया, कि "इसी मेरा बडा कल्याण होवेगा ॥ ३७ ॥ जबतक मेरा शरीर स्वस्थहै, जबलों इन्द्रि असमर्थ नहीं होजातीं तबतक अपने मंगलकी हेतु जडरूपा तीर्थयात्राको मैं कर ॥ ३८ ॥ उस बुद्धिमान् ब्राह्मणने यहीं स्थिरकर पांच छ दिन गृहमें बिताने शुभथिति शुभवार, शुभलग्नबलमें प्रस्थान किया ॥ ३९ ॥ " तीर्थपर्य्यटनमें न्या पूर्वक व्यवहार करनेवाले सभी प्राणियोंकी मुक्ति सोपान (सींढी) परंपरा ती यात्राहीहै" ऐसा पूर्वही निश्चय कर, यात्रासे पूर्व एकरात्रिमें उपवासीहो, प्रातःक श्राद्धकर गणेशादि देवता और ब्राह्मण गणको पूजन प्रणामादिसे संतुष्ट कर पार अनन्तर यात्रा की ॥ ४० ॥ ४१ ॥ इसके अनन्तर कुछ दूर मार्गचल, मुहूर्त विश्राम करके वह ब्राह्मण सोचनेलगा कि, "पहिले कहां जाऊं ? ॥ ४२ ॥ पृथ्वी अनेक तीर्थहैं, आयुष्यभी अस्थिरहै, और मन परम चंचलहै, तो फिर पहिले पुरीकी यात्राकरूं क्योंकि वहांपर समस्त तीर्थ वर्तमान रहतेहैं" ॥ ४३ ॥ (विचारके अनुसार शिवशर्म्मा) अयोध्यापुरीमें पहुंच सरयूमें स्नान तदन्तर प्रत्येक तीर्थोंमें तर्पण पिण्डदान आदिकरता हुआ ॥ ४४ ॥ पंचरात्र निवास त ब्राह्मणभोजनादि कर्म सुसंपादन कर अतिप्रसन्नचित्तसे तीर्थराज प्रयागमें प्राप्त ॥ ४५ ॥ (माघस्नानकी इच्छासे पहिले तीर्थराजको न जाकर शिवशर्म्मा अयो हीको गया फिर प्रयागलौटा) जहांपर देवगण दुर्लभ सितासित (गंगायमुना) प्रधान नदियां विद्यमानहै, मनुष्य जिनमें स्नान कर परंब्रह्मको प्राप्त होताहै ॥ ४ वह प्रजापतिका क्षेत्र सब किसीको दुर्लभहै, परम पुण्यपुंजहीसे प्राप्तहोत अन्यथा धनराशि व्यय करनेपरभी तीर्थराजका समागम नहीं घटता ॥ ४७ कलि और कालको दमन करतीहुई शुभावहा कलिन्दजा यमुनामें परमपुण्यज स्वर्गतरंगिणी गंगा जहांपर आकर मिलीहैं ॥ ४८ ॥ समस्त यागों (यज्ञों) प्रकृष्ट होनेहीसे जो प्रयाग ऐसा कहलाताहै—उसी प्रयागके जलमें स्नानरूप करनेवालोंका पुनर्जन्म नहीं होता ॥ ४९ ॥ जहांके अधिष्ठाता भगवान् शूलप श्वर वहां स्नान करनेवाले जन्तुओंको (प्राणियोंको) मोक्षमार्गका स्वयं देतेहैं ॥ ५० ॥ वहींपर अक्षयवटभी है जिसकी जड सप्त

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पर्य्यन्त गईहै, और प्रलय कालमेंभी जिसके अवलम्बनसे मार्कण्डेय ऋषि निवास करतेहैं ॥ ५१ ॥ उसे वटरूपधारी साक्षात् हिरण्यगर्भ (ब्रह्मा) ही जानना चाहिए—और उसके समीपमें ब्राह्मणोंको भोजन करानेसे अक्षय पुण्य लाभ होताहै ॥ ५२ ॥ जहांपर साक्षात् लक्ष्मीपति वैकुण्ठधामसे आकर मनुष्योंको श्रीमाधव स्वरूपसे विष्णुके परंपद (मोक्ष) को पहुंचातेहैं ॥ ५३ ॥ जिस प्रयागके संबंधमें वेदोनेभी यह कहांहै कि, "सितासित (स्वेत—श्याम, गंगा—यमुना) दोनो नदियाँ, जहांपर मिलीहैं, वहां अवगाहन करनेसे निश्चयही अमृतपद (मुक्ति) प्राप्त होताहै" ॥ ५४ ॥ शिवलोक, ब्रह्मलोक, उमालोक, कुमारलोक, वैकुण्ठलोक, सत्यलोक, तपोलोक, जनलोक, महर्लोक, स्वर्गलोक, भुवर्लोक, भूलोक, नागलोक, अधिक क्या(कहैं)समस्त ब्रह्माण्डके चतुर्दिग्से प्रत्येक भुवनवासी गण, हिमालय प्रभृति पर्वत और कल्पद्रुमादि वृक्ष-गण, माघमासके अरुणोदय कालमें स्नान करनेके लिये प्रयागमें समागत होतेहैं॥ ५५॥ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ दिगंगना गण प्रयाग वायुओंकीभी प्रार्थना करती और कहतीहै ॥ "वे (प्रयागके वायु)आकर क्या हम सबोंको पवित्र करेंगे ? क्या करैं हम लोग तो पंगु (लूली) हैं ॥ ५८ ॥ अश्वमेधाधिक यज्ञ और प्रयागकी धूलिको ब्रह्माने पूर्वमें तौल कियाथा, परन्तु वे सब यज्ञ उस धूलिके समान नहीं हुए ॥ ५९ ॥ बहुजन्म संचित अस्थिके अन्तर्गतभी पापपुञ्ज प्रयागका नाम सुनतेही अत्यन्त विह्वल होकर क्षय होनेलगतेहैं ॥ ६० ॥ यह प्रयागही धर्मतीर्थ, अर्थतीर्थ, कामतीर्थ और मोक्षतीर्थहै—इस विषयमें सन्देह नहीं ॥ ६१ ॥ ब्रह्महत्यादिक पाप तभीतक शरीरधारियोंके ऊपर गर्जते रहतेहैं, जबतक वे कलुषविभंजक प्रयागजलमें माघस्नान नहीं कर (पा) ते ॥ ६२ ॥ "विष्णुके उस परम पदको ज्ञानीगण सदा देखतेहैं" इस अभिप्रायका सूचक जो मन्त्र वेदमें बारंबार पढाजाताहै उसका तात्पर्य्य प्रयागही (से) है ॥ ६३ ॥ (क्यों न हो) रजोगुण रूपा सरस्वती, तमोगुणात्मिका यमुना, और सत्त्व गुणमयी गङ्गा—ये तीनों जहां निर्गुण ब्रह्म प्राप्त कराती हैं ॥ ६४ ॥ वही त्रिवेणी चाहे श्रद्धापूर्वक अथवा अश्रद्धाहीसे (क्यों न हो) एकवार गोतामार (लेनेसे) प्राणी-मात्रको शुद्ध शरीरकर ब्रह्ममार्गके प्राप्तिकी सीढी होजातीहै ॥ ६५ ॥ काशीनाम्नी एक कोई स्त्री त्रैलोक्यमें विदित है, जिसके लोलार्क और केशव दोनों चंचल नयन हैं, वरुणा और असी ये दोनों नदियाँ उसकी बाहुयुगलहैं, और यह त्रिवेणी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जो कहीगयीहै, यही अक्षय सुखप्रदात्री उसकी वेणी (चोटी) है ॥ ६६
अगस्त्यमुनि कहनेलगे—हे सुधर्मिणि ! समस्त तीर्थोंद्वारा संसेवित तीर्थराज प्र
गकी गुणावलीको संसारमें कौन वर्णन करसकताहै ! ॥ ६७ ॥ पापीलोगोंके
खिल पाप जो दूसरे तीर्थोंमें बलात् प्रक्षालित होतेहैं, विशेष करके इसीलिये
तीर्थ अपने संचित पापोंके दूरकरनेको प्रयागका सेवन करतेहैं ॥ ६८ ॥
सुबुद्धि ब्राह्मण प्रयागके गुणोंको विचार वहां माघमासभर निवास कर वाराणशी पुरी
प्राप्त हुआ॥६९॥काशीमें प्रवेश करतेही उसने देहलीविनायकका दर्शन कर भक्तिपू
घृताक्त सिन्दूरसे उनको अनुलिप्त किया॥७०॥बडे बडे उपद्रव वर्गसे अपने भक्त जनों
रक्षा करनेवाले गणेशको पाँचमोदक (लड्डू) निवेदन कर तदनंतर क्षेत्रके भीतर प्रवेश कि
॥ ७१ ॥ मणिकर्णिकापर आय, उत्तरवाहिनी स्वर्गतरंगीणीको जो शिवगणके स
पाप और पुण्यकर्मसे रहित लोगोंसे भरीहुई थी देखा ॥ ७२ ॥ हेनिर्मलचित्त! गृह
शुद्धबुद्धि शिवशर्माने सचैल उस निर्मल (गंगाके) जलमें स्नानकर, देवऋषि मनु
दिव्यपितर और निज पितृ पितामहादि पितृगणका तर्पण किया, फिर वह कर्मका
वेत्ता ब्राह्मण ॥ ७३ ॥ प्रथम पंचतीर्थी यात्रा और यथाविभव श्रीविश्वेश्वर
आराधना कर वारंवार त्रिपुरान्तक भगवान्की राजधानी काशीपुरीको देख, "
स्थानको मैंने कभी देखाहै या नहीं" यही विचारताहुआ विस्मित होनेलगा ॥ ७४
वाराणसीको देख शिवशर्मा कहनेलगा—क्या तत्त्व विचार क्या व्यवहार, च
किसीभी प्रकारसे हो पर स्वर्गपुरीकाशीकी समता (बराबरी) नहीं करसकती, क
कैसे ? स्वर्गपुरी तो विधाताकी सृष्टिहै,और काशी स्वयं ईश्वरहीकी सृष्टिहै, सामा
मणिरत्नोंसे स्वर्गकी रचना हुईहै, और अत्यन्त बहुमूल्य रत्नावलियोंसे काशी
निर्माण हुआहै, स्वर्गमें नानाविध भवबंधनहै, पर काशीमें वह सबकुछभी नहींहै
फिर काशीकी समता स्वर्गपुरीसे कैसे दीजावे ? असत् शास्त्र और ब्रह्मप्रतिपा
शास्त्रमें जैसा भेदहै वैसाही काशी और स्वर्गमेंभी है, चित्रगुप्तकी लिखीहुई ललाट
लिपीकोभी काशीही खंडित करतीहै, क्योंकि यहाँ पुनर्जन्म नहीं होनेपाता ॥ ७५
इस काशीके जलकी शक्तिभी अचिन्तनीयहै, स्वर्गमें देवगण जिस अमृतका
करतेहैं वह तो व्यर्थहीहै; क्योंकि काशीका जल एकबारभी पीलेनेसे फिर मा
स्तनका दुग्ध नहीं पीनापडता (अर्थात् पुनर्जन्म नहीं होता) किन्तु अमृतपा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तो यह फल नहीं प्राप्त होसकता ॥ ७६ ॥ नीतिप्रवर्तक महादेवके चिन्तनद्वारा त्रिविधतापसे रहित सत्कर्मकर्ता गण इस काशीमें अल्पभी सत्कर्म विश्वेश्वरको बिना समर्पणकिये कोई कार्य्य नहीं करते—अतः वे सबलोग शिवके पारिषद नन्दी भृङ्गी आदिके सदृश सद्यः (सर्वतोरूपसे) होजातेहैं ॥ ७७ ॥ फलदानोन्मुख प्राक्तन पुण्यभारहीके बलसे इस काशीमें स्थित प्राणियोंको अन्तकालमें स्वयं चन्द्रशेखर महादेव प्रणवका उपदेश करतेहैं अतएव इस काशीकी महिमा कौन नहीं करता ? ॥ ७८ ॥ संसारियोंके चिन्तामणिरूप भगवान् शिव मरणकालमें अत्रस्थ लोगोंके कर्णिका (कान) में सहसा तारकब्रह्मका उपदेश करतेहैं, इसीलिये यह मणिकर्णिका कहलातीहै ॥ ७९ ॥ यह स्थान मोक्षलक्ष्मीके महापीठ काशीमें मणिस्वरूप है एवं मोक्षलक्ष्मीके चरणकमलकी कर्णिका है अतः लोग इसे मणिकर्णिका कहतेहैं ॥ ८० ॥ इस पुरीके निवासी जरायुज, अंडज, उद्भिज्ज और स्वेदज प्राणिगणभी देवतोंकी अपेक्षा अच्छेहैं, क्योंकि इन सबोंकी मुक्ति हाथपर रहतीहै, और देवगण मुक्तिलाभसे वञ्चितहैं ॥ ८१ ॥ मैं बडा दुष्कर्मा और जडबुद्धि हूं, इतने दिनतक मेरा जन्म व्यर्थही गया, जो मुक्तिप्रकाशिका काशिका दर्शन नहीं किया ॥ ८२ ॥ शिवशर्मा उस विचित्र पवित्र क्षेत्रको वारंवार नेत्रगोचर करते रहनेपरभी तृप्तिलाभ नहीं करसका ॥ ८३ ॥ उसने चित्तमें स्थिरकिया "यद्यपि सर्वोत्कृष्ट निर्वाणपद (मुक्ति) की देनेवाली वाराणसीही सातों पुरियोंमें परमश्रेष्ठहै, यह मैं जानताहूं, ॥ ८४ ॥ परंतु अन्य चार पुरियोंको अबतक मैंने नहीं देखा, उन सबोंकाभी प्रभाव समझकर तब फिर मैं यहां चलाआऊंगा" ॥ ८५ ॥ वह ब्राह्मण एक वर्षपर्य्यन्त प्रतिदिन तीर्थयात्रा करते रहनेपरभी काशीके समस्ततीर्थोंमें नहीं पहुँचसका कारण—काशीमें तिलतिलपर तीर्थ विराजमानहैं ॥ ८६ ॥ अगस्त्यमुनि बोले—देवि ! लोपामुद्रे ! कैसा आश्चर्य्यहै, शिवशर्मा अनेक प्रमाणोंसे काशीक्षेत्रकी महिमा जानकर और अन्तर्निष्ठ होनेपरभी निकलही गया ॥ ८७ ॥ हे सुन्दरि ! सप्रमाण शास्त्र क्या करै, महामाया भवितव्यताको कौन निवारण करसकताहै ॥ ८८ ॥ उच्चलितचित्त और जलको विपरीत पथसे कौन चलासकताहै ? क्योंकि ऊँचे स्थानमें स्थित होनेपरभी उन दोनोंका स्वभाव तो चंचलही रहताहै ॥ ८९ ॥ अनन्तर शिवशर्मा क्रमशः देश—देशान्तरोंमें भ्रमण करताहुआ, कलिकालसे रहित महाकालपुरीमें जा पहुँचा ॥ ९० ॥ जो कल्प कल्पमें अपनी लीलासे अखिल ब्रह्माण्डको लयकरताहै, उस कालकेभी लयकरनेवाले

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

महादेवका नाम महाकाल पडाहै ॥ ९१ ॥ पापसे परित्राण करनेके कारण उ
नगरीका नाम अवन्ती कहाजाताहै, युगयुगमें महाकाल पुरीका नाम परिवर्तित हो
(बदलजाने) से कलियुगमें वह उज्जयिनी कहलातीहै ॥ ९२ ॥ जिस उज्जयिनी
प्राणी मरके शव (मुर्दा) होनेपरभी न तो दुर्गन्धको प्राप्त होता और न सडताहै
॥ ९३ ॥ जिसमें यमदूत कभी प्रवेश नहीं करते, और वहाँपर (उस पुरीमें) करो
शिवलिंग पदपदपर वर्तमानहैं ॥ ९४ ॥ एकही ज्योतिर्लिङ्ग हाटकेश, महाकाल, अ
तारकेश्वर, इन तीनरूपोंसे त्रैलोक्यमें व्याप्त होकर स्थितहै ॥ ९५ ॥ जो द्विजो
गण उस उज्जयिनी सिद्धवटमें ज्योतीरूप ज्योतिर्लिंग अथवा श्रीमहाकालका द
करतेहैं, वे पुण्यराशि परंज्योतिको देखलेतेहैं ॥ ९६ ॥ जिन संसारके दुःखि
कभी महाकालके उस लिंगका दर्शन करपायाहै, उन्हें न तो महापाप छूतेहैं, और
यमदूतगणही ताकतेहैं ॥ ९७ ॥ आकाशमें सूर्य्य—रथके घोडे महाकालकी पताक
अग्रभागोंसे अपनी पीठके स्पर्शहोनेपर अरुणसारथिके कशाघात कष्ट (चाबुक
चोटें) को क्षणमात्र दूर करलेतेहैं ॥ ९८ ॥ "महाकाल—महाकाल—महाका
ऐसा निरंतर स्मरणकरनेवाले प्राणीको स्मरके पिता (विष्णु) और शत्रु (शिव)
दोनोंही स्मरण करतेरहतेहैं ॥ ९९ ॥ शिवशर्मा ब्राह्मण इस (यथोक्त) वि
भगवान् भूतभावन महाकालकी आराधना कर, तदनंतर त्रिभुवनकमनीया कांचीपु
प्राप्तहुआ ॥ १०० ॥ जहांपर साक्षात् लक्ष्मीकान्त (विष्णु) निवासी लोग
स्वयं यहां और परकालमें निश्चय करके श्रीकान्तही बनादेतेहैं ॥ १ ॥ कांति
लोगोंद्वारा निषेवित परमकान्तिमती उस काञ्चीनगरीको देख शिवशर्माभी कान्ति
होगया क्योंकि वहाँ कोईभी कान्तिहीन नहीं रहता ॥ २ ॥ सर्व (धर्म) कर्म
वह द्विज वहांपर जो कुछ कर्तव्यकर्म थे उनको पूर्णकर और सातदिन निवास कर
अनन्तर द्वारकापुरीकी यात्राको चला ॥ ३ ॥ तत्त्ववेत्तादि विद्वानोंके द्वारा
चतुर्वर्गके द्वार चारों ओर वर्तमान रहनेसे द्वारवती कहीजातीहै ॥ ४ ॥ अहो !
पर जन्तुओंकी अस्थियाँभी चक्रचिह्नसे अंकितहैं, वहांके अधिवासी लोग यदि
चक्रादिसे चिह्नित करकमल होवें तो क्या आश्चर्य्यहै ? ॥ ५ ॥ यमराज
अपने दूतोंको ऐसा सिखलाया करतेहैं, कि, "जो लोग द्वारवतीका नामभी लेतेहों
छोडदेनाही उचितहै ॥ ६ ॥ द्वारकाके गोपीचन्दनमें जो सुगन्धहै श्रीखंड (चन्द
में वह कहांहै ? उसमें जो वर्ण (रंग) है वह (भला) सुवर्णमें कहां मिलसकता

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

द्वारकाके गोपीचन्दनमें जो पवित्रताहै अन्यतीर्थमें उसप्रकारकी कहां है ? ॥ ७ ॥ हे दूतगण ! सुनो, जिसका मस्तक गोपीचन्दनसे चिह्नितहो, उसे जलतेहुए अंगारके समान यत्नपूर्वक दूरहीसे परित्याग करदो ॥ ८ ॥ हे भटलोगो ! जो लोग तुलसीसे भूषित, तुलसीके नाम जपनेमें तत्पर, और तुलसीवनके रक्षक होवें उन्हेंभी दूरहीसे त्यागदो (प्रणामकरो") ॥ ९ ॥ समुद्र युगयुगमें द्वारकाकी रत्नावलियोंको उपहरण करते करते आजभी जगत्में रत्नाकर कहलाताहै ॥ ११० ॥ जो प्राणी कालवश द्वारकामें मरतेहैं, वे वैकुण्ठमें पीताम्बर पहिन चतुर्भुज (विष्णु) होजातेहैं ॥ ११ ॥ शिवशर्म्माने आलस्य रहित हो द्वारकामें और उसके प्रत्येक तीर्थोंमें स्नान कर देवऋषि और पितरोंका तर्पण किया ॥ १२ ॥ तदनन्तर वह पापकारियोंसे दुष्प्राप मायापुरीमें पहुँचा, जहांपर वैष्णवी–माया मायापाशसे फिर नहीं बन्धन करती ॥ १३ ॥ इस स्थानको कोई कोई हरिद्वार कहतेहैं दूसरे मोक्षद्वार बतलातेहैं, अन्यलोग गंगाद्वार कहतेहैं, और कोई कोई मायापुरीके नामसे पुकारतेहैं ॥ १४ ॥ गङ्गा इसीस्थलसे निकलकर पृथ्वीमें भागीरथी नामसे प्रसिद्ध हुई हैं, जिनके केवल नाम लेनेहीसे पापराशि सहस्रधा विदीर्ण होजातीं हैं ॥ १५ ॥ लोग इस हरिद्वारको वैकुण्ठकी अकेली सीढी कहतेहैं, यहांपर स्नान करनेवाले मनुष्य विष्णुके उस प्रसिद्ध परमपद (मोक्ष) को प्राप्त होतेहैं ॥ १६ ॥ द्विजसत्तम शिवशर्म्मा वहांपर तीर्थोपवास और रात्रिका जागरण प्रातःकाल गंगामें स्नान और तर्पणीय पितरादिकोंका संपूर्णरूपसे तर्पणकर ॥ १७ ॥ ज्योंही पारणकरना चाहा त्योंही शीतज्वरसे आक्रान्त होकर वह बडी आतुरतासे काँपने लगा ॥ १८ ॥ एक तो अकेला विदेशी दूसरे ज्वरसे अत्यन्त पीडित होकर वह ब्राह्मण बडाही चिन्तामग्न होगया और विचारने लगा कि–यह क्या उपस्थित हुआ ? ॥ १९ ॥ अगाध महासमुद्रमें पोतभङ्ग हो (जहाज टूट) जानेसे सांयात्रिक (जहाजी तिजारती) की नाईं चिन्तार्णवमें निमग्न होकर वह ब्राह्मण जीवन और धनसे निराश होगया ॥ १२० ॥ मेरा वह क्षेत्र (खेत) कलत्र, पुत्रगण और धन–कहांहै ? मेरा वह विचित्र हर्म्य (महल) ही कहांहै ? और वह पुस्तकोंका संभारभी कहाँ है ? ॥ २१ ॥ अबतकभी मेरी आयुष्य पुरी नहीं हुई और न बालही पकेहैं परन्तु यह दारुणज्वर उपस्थित होगया मेरे लिये यह कैसा भयंकर समयहै ? ॥ २२ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मस्तकपर मृत्यु वास कररहीहै और मेरा गृह यहांसे अत्यन्त दूरहै, जो हो
आग लगनेपर क्या कुआ खोदनेसे काम चल सकताहै ? ॥ २३ ॥ अत्यन्त
करनेवाले इन व्यर्थ चिन्तनोंसे मुझे कौन फलहै ? इसघडी मैं हृषीकेश और
प्रद महादेवको स्मरण करूं ॥ २४ ॥ अथवा मैंने एक उत्तम मोक्षके उपा
अनुष्ठान किया जो इन सातों मोक्षप्रदायिनी पुरियोंका दर्शन करलिया ॥ २५
विद्वान् लोग स्वर्ग अथवा मुक्तिका साधन कर रखतेहैं, इन दोनोंका साधन नहीं
लेनेसे, पश्चात्तापसे सन्तप्त होना पडताहै ॥ २६ ॥ अथवा मुझे इस व्यर्
धारावाहिनी चिन्ताका कौन प्रयोजनहै ? यद्यपि संग्राममें मृत्यु श्रेयस्करहै, पर
ऐसा तीर्थमें मृत्युको प्राप्त होना तो बहुतही अच्छाहै ॥ २७ ॥ मैं आज मन्
ग्योंसा कहीं मार्गमें तो मरताही नहीं हूं,—बरन्, गङ्गा (के गोद) में मररहाहूं
फिर मूर्खोंके सदृश क्यों चिन्ता करूं ? ॥ २८ ॥ अस्थि—चर्म—मय इस शरी
त्यागसे मुझे अवश्यही नैश्रेयसी सिद्धि मिलेगी ॥ २९ ॥ इसप्रकारकी चिन्
ग्रस्त शिवशर्म्माको अतिदारुण दुःख उपस्थित हुआ, कोटिवृश्चिक दंशन (बिच्छू
रने) से जो अवस्था होतीहै, शिवशर्म्मा उसी दशाको प्राप्त हुआ ॥ १३० ॥
णीय सभी बातें भूलगयीं—"मैं कहांहूं कौनहूं" यह ज्ञानभी उसका जातारहा ।
दिन इसीप्रकारसे रहनेपर शिवशर्म्मा पंचत्वको प्राप्त हुआ ॥ ३१ ॥ उसी
वैकुण्ठसे अत्यंत ऊँचा गरुडध्वजसे चिह्नित किंकिणीजालसे मण्डित अतिदि
विमान आकर उपस्थित हुआ ॥ ३२ ॥ उस (दिव्य) विमानपर, कौशेय व
पहिन हाथमें चामर और पंखाको धारण कियेहुए सहस्रों सुरसुन्दरियोंसे युक्त
शील एवं सुशील ये दोनोंहीं विष्णुके पारिषद प्रसन्नवदन, चतुर्बाहुरूपसे विराज
थे ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ शिवशर्मा तुरंत इस पार्थिव (भौतिक) देहको त्याग,
विमानपर चढ, दिव्यभूषणोंसे भूषितहो, पीतांबर पहिन, चतुर्भुजरूपसे आकाशम
अलंकृतकरनेलगा ॥ १३५ ॥

वरनी सातों पुरिनके, मोक्ष—दानकी बात ।
तेहिप्रसंग शिवशर्मकी, कही कथा विख्यात ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषाटीकायां सप्तपुरी
वर्णनंनाम सप्तमो ध्यायः ॥ ७ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अष्टम अध्याय।

पिशाचलोकसे यमलोकपर्य्यन्त वर्णन।

लोपामुद्रा बोली—हेजीवितनाथ! आपके श्रीमुखद्वारा कथित इस पुण्यपुरी-विषयिणी पवित्र कथाको सुनकर मेरी उत्कंठा शान्त नहीं होती ॥ १ ॥ हे प्रभो! द्विजोत्तम शिवशर्म्मा मुक्तिदायिनी मायापुरीमें प्राणत्याग करनेपरभी मोक्षको नहीं प्राप्त हुआ, इसका कारण कहिये ॥ २ ॥ अगस्त्य मुनि कहने लगे—प्रियवादिनी! इन सब पुरियोंमें साक्षात् मोक्ष नहीं मिलता, इसी विषय पर (एक) प्राचीन इतिहास मेरा सुनाहुआ है ॥ ३ ॥ हे प्रिये! (उससमय) पुण्यशील और सुशीलके द्वारा शिवशर्माके प्रति कहीगयी विचित्रअर्थसे युक्त, पाप-प्रणाशिनी कथाको सुनो ॥ ४ ॥ शिवशर्माने कहा—हे कमलदललोचन! पवित्र विष्णुके दोनों गण! मैं हाथजोडकर कुछ पूँछनेकी इच्छा करताहूं ॥ ५ ॥ (साक्षात्संबन्धसे तो) मैं आपलोगोंका नाम नहीं जानता, पर आकृतिके द्वारा ज्ञात होताहै कि, आपलोगोंका नाम पुण्यशील और सुशील होनेके योग्य है ॥ ६ ॥ गणोंने कहा—आपसदृश भगवद्भक्तजनोंको क्या अविदित रहसकताहै? श्रीमान् (आप) ने जोकहाहै हम दोनोंका वही नामहै ॥ ७ ॥ हेमहाप्राज्ञ! आपको औरभी जो कुछ पूँछना हो वह निःशंक होकर पूछिये, प्रीतिपूर्वक हम दोनों उसे कहेंगे ॥ ८ ॥ इस प्रकार भगवद्गणोंका कथित,हृदयंगम, और अति प्रीति-कर वचन सुन उन दोनोंसे कहने लगा ॥९॥ दिव्यब्राह्मण बोला—यह अल्पशोभायुक्त क्षीणपुण्यजनोंसे पूर्णरूप कौन लोकहै? और विकृताकार ये सब कौन है? मेरे आगे यह सब कहिये ॥ १० ॥ गणोंने कहा—यह पिशाचलोकहै, यहांपर मांसभोजी पिशाचलोग रहते हैं, जो दानकरनेपर पछतातेहैं, और जो नहीं नहीं करके दानभी देते हैं ॥ ११ ॥ फिर जो प्रसंगवश कहींपर एकबार महादेवकी पूजा अशुद्धचित्तसे करलेते हैं, हे सखे! वेही अल्पपुण्य, अल्पशोभासंपन्न ये सब पिशाचगण हैं ॥ १२ ॥ तदनन्तर शिवशर्माने जाते जाते एक और लोक देखा; जो तोंदइल (तुंदिल) बडे मुख और गंभीरनादी ॥ १३ ॥ श्यामलांग लोभसे व्याप्त हृष्टपुष्ट लोगोंसे भराहुआथा—पूँछा, ये लोग कौन हैं? इसलोकका क्यानाम है?, किसपुण्यसे प्राप्त होताहै? ॥ १४ ॥ गणोंने कहा—यह गुह्यक लोक हैं, और ये सब गुह्यक कहलाते

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हैं, जो लोग न्यायपूर्वक धनउपार्जन करके पृथिवीमें गाड़देते हैं ॥ १५ ॥ अपने धर्ममार्गमें स्थित रहते धनसे पारिपूर्ण होनेपरभी शूद्रोंसा वर्तते, पर निजकुटुम्बिय विभागकरके भोजनकरते और क्रोध डाहसे हीन रहते ॥ १६ ॥ एवं तिथि वार सं संक्रांतिआदि पर्वदिन तथा धर्म अधर्म, इन सबको कुछभी नहीं जानते ॥ १७ ॥ सदाके सुखी ये सब केवल एक कुलपूज्य ब्राह्मणको जानते, और उसे गोदान क तथा उसीके वाक्यको प्रमाण मानते हैं ॥ १८ ॥ उसी पुण्यके बलसे यहां समृद्धिशाली होकर ये गुह्यक गण देवतोंकी नाईं निर्भय रूपसे स्वर्गका सुख भोगते ॥ १९ ॥ अनन्तर शिवशर्माने नेत्रसुखप्रद एक स्थानको देखकर, हे गणलोग ! ये कौ जन हैं और इसलोकका क्या नाम है ? (यह पूँछा) ॥ २० ॥ गणोंने कहा— गन्धर्वलोक है, और इसमें गन्धर्वगण निवास करते हैं, जो उत्तमधर्माचारी, देवतो गायक (गवैये) चारण (कत्थक) और स्तुस्तिपाठक (बन्दीजन) हैं ॥ २१ ॥ संगीतनिपुण ये सब (मनुष्ययोनिमें) सुन्दरगीतोंसे राजोंको सन्तुष्ट करते, और क लोभसे मोहित होकर धनाढ्योंकी स्तुति गाते हैं ॥ २२ ॥ राजोंकी प्रसन्नतासे सुन्दरक धन, और कर्पूरादिक अनेक सुगन्ध द्रव्योंको पाकर ॥ २३ ॥ ब्राह्मणोंको समर्पण क और अहर्निश गीतही गाते रहते हैं फिर ये सब नाट्यशास्त्रके पारिश्रमी स्वरोंहीमें चि लगाये रहते हैं ॥ २४ ॥ गानविद्याद्वारा उपार्जित धनसे ब्राह्मणोंको सन्तुष्ट करनेहीं पुण्यसे उन गन्धर्वलोगोंका यह उत्तम गन्धर्वलोक है ॥ २५ ॥ गीतविद्याहीके प्रभा से देवऋषि नारद वैष्णवलोकमें महामान्य और श्रीशंभुके परमप्रिय हुएहैं ॥ २६ ॥ तुंबुरु और नारद ये दोनोंहीं देवतोंके बडेही माननीय हैं, क्योंकि शिव तो साक्षा नाद (स्वर) रूपी हैं, और ये दोनों नादतत्त्वके परमवेत्ता हैं ॥ २७ ॥ यदि श्रीमा विष्णु एवं महादेवके समीपमें कहीं गीत गायागया तो उसका फल मोक्ष अथ हरिहरका सान्निध्यही होता है, ऐसा कहा है ॥ २८ ॥ (उत्तम) गायक यदि गीतके द्वारा परमपदको प्राप्त नहीं होता तोभी रुद्रदेवका अनुचर होकर उनके साथ आनन्द भोग करता है ॥ २९ ॥ उस लोकमें सदैवसे यह स्मृति (कहा वत) कहीजाती है कि, गीतहीकी मालाओंसे हरिहर देव सदा पूजनीय हैं ॥ ३० ॥ इसप्रकारसे श्रवणकरतेहुए क्षणमात्रमें एक दूसरे मनोहर स्थानमें पहुँचकर फिर शिव शर्माने पूँछा कि इस नगरकी क्या संज्ञा है ? ॥ ३१ ॥ विष्णुगण बोले—यह विद्याथ लोकहै, नानाविद्याओंके विशारद ये लोग विद्यार्थियोंको अन्न वस्त्र कंबल उपान

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(जूता) ॥ ३२ ॥ और उनकी पीडाओंकी शान्ति करनेवाली ओषधियाँ देतेहैं तथा विद्यागर्वसे रहित होकर नानाप्रकारकी कलाओंको सिखलातेहैं ॥ ३३ ॥ शिष्यको पुत्रके समान देखतेहैं, वस्त्र तांबूल और भोजन आदिसे अलंकृत कर धर्म पूर्वक (धर्मबुद्धिसे) सत्कन्याओंका विवाह करवादेतेहैं ॥ ३४ ॥ कामनाकी सिद्धिके लिये नित्यही अपने इष्टदेवतोंकी पूजा करतेहैं, इन्ही सब पुण्योंसे ये सब विद्याधरवर यहांपर निवास करतेहैं ॥ ३५ ॥ जबतक यह वार्तालाप होरहाथा, तबतक देवतोंके नगाडेसे (डंकेसे) शब्दायमान, संयमिनीपुरीके अधिष्ठाता भगवान् धर्मराज (वहांपर) प्राप्त हुए ॥ ३६ ॥ जो सौम्य (शान्त) मूर्तिको धारणकिये, धर्मके ज्ञाता और सेवाकर्ममें बडेही चतुर तीनचार भृत्योंके साथ विमानपर विराजमान थे ॥ ३७ ॥ धर्मराजने कहा—हे महाबुद्धे ! द्विजोत्तम ! शिवशर्मन् ! साधु साधु (वाह वाह) आपने ब्राह्मणोंके कुलोचित (कर्मको) संपादन किया ॥ ३८ ॥ पूर्वमें वेदाभ्यास किया, गुरुगणको सन्तुष्ट किया फिर धर्मशास्त्र और पुराणोंमें आदरणीय धर्मका अवलोकन किया ॥ ३९ ॥ शीघ्र विनश्वर कलेवरको मुक्तिपुरियोंके जलसे धोदिया अतएव आपही जीवन और मरण दोनोंहीके कोविद (ज्ञाता) हैं ॥ ४० ॥ सदैव दुर्गन्धसे भरे और अपवित्रताके पात्र शरीरको आपने सुन्दरतीर्थके पुण्यरूपी विक्रेयद्रव्यसे परिवर्तितकर (बदल) लिया ॥ ४१ ॥ इसीलिये विद्वान्गण पांडित्यका आदर करतेहैं, और हितसाधनमें वे बुधलोग एकक्षणमात्रभी दिनको व्यर्थ नहीं जाने देते ॥ ४२ ॥ मर्त्यलोकमें प्राणीगण पाँचही छः निमेष जीतेहैं । यह ध्रुवहै, उसमेंभी गर्हित अधकर्ममें प्रवृत्त नहीं होना चाहिये ॥ ४३ ॥ शरीर तो सदैव निश्चित रूपसे विनाशशीलहै और मरणमें धनसे कोई रक्षा नहीं हो सकती, तब फिर मूढबुद्धिलोगभी महत्कार्य्य अर्थात मोक्षसाधनमें आपही की नाईं कैसे प्रयत्न कर सकतेहैं ? ॥ ४४ ॥ आयुष्य तो शीघ्रतासे बीती जारहीहै, और संसारभी शोकसन्तापसे व्याकुलही रहताहै अतएव धार्मिकोंको आपके ऐसी धर्ममें बुद्धि करनी चाहिये ॥ ४५ ॥ सत्कर्मका परिणाम (फल) यहीहै, जो आपके और मेरेभी वन्दनीय ये दोनों भगवान्के भक्तगण आपके मित्रभावको प्राप्त होगये हैं ॥ ४६ ॥ अच्छा तो अब मुझे आज्ञा दीजिये कि मैं आपकी कौनसी सहायता करूं, क्योंकि मेरे ऐसोंको जो करना चाहिये वह तो आपहीने स्वयं कररक्खाहै ॥ ४७ ॥ आज मैं परमधन्य हूं जो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यहांहीपर ये दोनों भगवद्गण दृष्टिपडे, श्रीमद्वैकुण्ठनाथके चरणोंमें सदैव मेरी सेवा करने योग्यहै ॥ ४८ ॥ इसके अनन्तर उन दोनोंगणोंसे विदाहोकर यमराजने अपनी पुरी प्रवेश किया, और यमराजके चलेजानेपर उस ब्राह्मणने गणोंसे पूछा ॥ ४९ शिवशर्मा बोले—ये तो साक्षात धर्मराज हैं परमसौम्यरूपवान् है; और इनके वचन मनको प्रसन्न करते एवं धर्मसे पूर्णहैं ॥ ५० ॥ फिर यह संयमनीपुरीभी अत्यन्त शुभलक्षणाहै, जिसका नाम सुनते मात्र पापीलोग बहुत डरने लगतेहैं ॥ ५१ मृत्युलोकमें तो सब लोग यमराजका रूप दूसरेही रूपसे वर्णन करतेहैं, परन्तु मैं तो अन्यथाही देखा, हे गण ! इसका कारण कहिये ॥ ५२ ॥ कौन लोक इसलोक (यमपुरी) को नहीं देखते, ? तथा यहां कौन लोग रहतेहैं, और इसका यही रूप कि दूसरा कोईभी है, ? इन सब बातोंको कहिये ॥ ५३ ॥ गणोंने कहा—हे सौम्य सुनो ये (यमराज) यहांपर आपके समान शंकारहित पुण्यात्माओंको स्वभावसे परमसौम्य धर्ममूर्ति दृष्टिगोचर होतेहैं ॥ ५४ ॥ परन्तु येही यमराज, पिंगलनेत्र क्रोधसे रक्तनयनकोण, बडेबडे दाँतोंसे विकरालमुख, बिजुलीसी जिह्वासे भयंकर ॥ ५५ ॥ ऊर्ध्वकेश, अत्यन्त काले अङ्गवाले प्रलय मेघसदृश निःस्वन, हाथ उठाके कालदंडको लिऐ, भृकुटीसे कुटिलमुख होकर ॥ ५६ ॥ हे दुर्दम ! इसे लाओ इसे पटको, उसे बाँधो, इस दुराचारीको शिरपर तीव्र लोहके मुँगरोंसे पीटो ॥ ५७ ॥ इस पापीके दोनों पाँवोंको पकडकर पत्थरपर पटको, 'तुम' इसके गलेपर चरण रखके दोनों आँखें निकाललो ॥ ५८ ॥ इसके फूलेहुए दोनों गालोंको छूरेसे काटडालो इसके कंठमें फांसी बाँधकर वृक्षमें लटकादो ॥ ५९ ॥ इसका मस्तक लकडीकी नाई आरासे चीरडालो, इसका मुख कठोर एडीकी चोटोंसे (ठोकरोंसे) चूर चूर करडालो ॥ ६० ॥ इस अधीके पराई स्त्रीपर फैलनेवाले हाथको काटलो, परस्त्रीके घरपर जानेवाले इसके पैरोंको तोडदो ॥ ६१ ॥ परस्त्रीके अङ्गमें नखपंक्तियोंके गडानेवाले इस दुरात्माके संपूर्ण शरीरके रोमगर्तोंमें सूईयाँ गोददो ॥ ६२ ॥ परस्त्रीका मुख सूँघनेवाले इस दुष्टके मुँहमें (खखारकर) थूँकसे, और इस परनिन्दकके मुखमें तीक्ष्ण कील ठोंकदो ॥ ६३ ॥ हे विकटवक्र ! तुम इस परसंतापकारीको भरसांयमें चनेके सदृश तप्तवालुकाके खपडोंमें भूँजडालो ॥ ६४ ॥ हे क्रूरलोचन ! निर्दोषपर सदा दोषारोपण करनेवाले इस पापीका मुख रक्तमांसके कीचडमें डुबादो ॥ ६५ ॥ हे उत्कट ! बिना दियेहुए दूसरेकी वस्तु लेलेनेवाले इस

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(चोट्टे) का हाथ तेलसे चुभाचुभा कर तप्त अंगारपर पकाडालो ॥ ६६ ॥ हे भीषण ! इस गुरुनिन्दक देवतोंके अपवादकर्ताके मुखमें जलतीहुई लोहेकी शलाका डालदो ॥ ६७ ॥ दूसरेके मर्मभेदक तथा परच्छिद्रके प्रकाशक उसके समस्त संधियों (जोडो) में तप्तलोहेकी कीलें जडदो ॥ ६८ ॥ हे दुर्मुख ! दानकरनेमें दूसरेको मना (वर्जन) करनेवाले और परायेकी जीविका (वृत्ति) के छेदनकरनेवाले इस पापकारीकी जीभ काटलो ॥ ६९ ॥ हे क्रोडास्य ! देवधन और ब्राह्मणधनके भक्षक इस पापीका पेट फाडकर विष्टाके कीडोंसे भरदो ॥ ७० ॥ हे अन्धक ! जो कभी देवताके अर्थ ब्राह्मणके निमित्त अथवा अतिथिके लिये भोजन नहीं पकाया इस स्वार्थपाकीको कुम्भीपाकमें चुराओ ॥ ७१ ॥ हे उग्रास्य ! इस बालहिंसक विश्वास-घाती कृतघ्नको शीघ्रतासे रौरव और महारौरव (नरक) में, पहुँचादो ॥ ७२ ॥ इस ब्रह्मघ्नको अंधतामिस्र (नरक) में मद्यपको पूयशोणितमें, सुवर्णचौरको काल-सूत्रमें और गुरुदाराभिगामीको अवीचिनामक नरकमें ॥ ७३ ॥ इनपापियोंके साथीको एकवर्षपर्य्यन्त असिपत्रवन नरकमें (डालदो–तदनंतर) इन (पांचो) महा-पातकियोंको जलतेहुए तेलके कडाहेमें ॥ ७४ ॥ चलाचला चुराओ फिर हे दुर्दृष्ट्र ! लोहके चोंचवाले डोम कौओंसे नोचवातेहुए इन सब पापिष्ठोंको कल्पमात्र नित्य निवास कराओ ॥ ७५ ॥ स्त्रीके मारनेवाले, गोहिंसक और मित्रघातीको कालेसे-मरके वृक्षमें ऊपर पैर और नीचे मुखकरके चिरकाल पर्य्यन्त लटकादो ॥ ७६ ॥ हे महाभुज ! तुम इस मित्रपत्नीके आलिंगनकरनेवाले पापीकी त्वचा सडसीयोंसे तोडदो (खाल खींचलो) और शीघ्रही इसकी भुजायें उखाडलो ॥ ७७ ॥ ज्वाला कील महाघोर नरकमें इस आगसे दूसरेका खेत और परायेका घर जलानेवालेको डालदो ॥ ७८ ॥ विषदेनेवाले और झूठी साक्षी (गवाही) कहनेवालेको कालकू-टमें, तथा झूठा बटखरा और झूठी तुला (डांडी) वालेको कंठमोटमें ढकेलदो ॥ ७९ ॥ उत्तम दर्शनयोग्य तीर्थोंमें थूँकनेवालेको लालापीवमें, और गर्भविनाशकको आमपाकमें, तथा दूसरेको संतापदेनेवालेको शूलपाक (नरक) में लेजाओ ॥ ८० ॥ रस बेंचनेवाले ब्राह्मणको इक्षुयंत्र (कोल्हू) में पेरडालो, और प्रजाओंके पीडाकारी राजाको अंधकूपमें गिरादो ॥ ८१ ॥ हे हलायुध ! गौ तिल और घोडाके बेंचनेवाले ब्राह्मणाधमको और भांग एवं मद्यके विक्रेता ॥ ८२ ॥ वैश्यको ओखरीमें मूसलसे वारंवार कूटडालो द्विजोंका अपमानकरनेवाले और द्विजातिके आगे पलँग (मांचा)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पर बैठनेवाले इस शूद्रको ॥ ८३ ॥ हे दीर्घग्रीव ! अधोमुख नरकमें अत्यंत पीड़ा करो ॥ ८४ ॥ ब्राह्मणविजयी शूद्र, विप्राभिमानी वैश्य, याजक (यज्ञकरानेवाले) क्षत्रिय, वेदसे रहित ब्राह्मण ॥ ८५ ॥ लोह, लवण, मांस, तैल, विष, घृत, शस्त्र, गुड इत्यादि इक्षुविकारके विक्रेता द्विजाधमको ॥ ८६ ॥ हे पाशपाणे ! कशाघात इन सबोंका पैर दृढ बाँध कशा (चाबुक) से पीटकर जलतेहुए कीचडमें डाल जाओ ॥ ८७ ॥ इस कुलकल्मषा पुंश्चली स्त्रीको जलतेहुए लोहेके बनेहुए जारके साथ लिपटायदो ॥ ८८ ॥ जो अजितेन्द्रिय स्वयं नियमोंको ग्रहणकर छोड देवे, उस दुराधर्षको बहुभ्रमरदंशक (नरक) में पहुँचादो ॥ ८९ ॥ इसप्रकार रकी आज्ञा कहतेहुए यम दुर्वृत्तोंको दूरहीसे सुनाई पडते हैं और (वही धर्मराज) अ कर्मसे शंकित पापियोंको अत्यन्त भयंकर दिखाई पडतेहैं ॥ ९० ॥ जो इसलो अपने औरसपुत्रके समान प्रजाओंका पालन करतेहैं, और धर्मानुसार दण्ड देते राजालोग इन (यमराज) के सभासद होतेहैं ॥ ९१ ॥ जिनके राज्यमें (चा वर्ण और आश्रम अपने कर्मका अनुष्ठान करतेहैं, काल पाकर मृत्युको प्राप्त भूपालगण इनके सभ्य होतेहैं ॥ ९२ ॥ जिनके राष्ट्र (देश) में, दीन, दुर्वृत्त (दु चारी) आपत्तिग्रस्त और शोकातुर नहीं दिखलाई पडते वे नरपतिगण इन यमरा सभासद (मुसाहिब) होतेहैं॥९३॥ सर्वदा अपने धर्ममें तत्पर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वै और दूसरेभी संयमी लोग संयमनीके निवासी होतेहैं ॥ ९४ ॥ उशीनर, सुधन्वा, वृष जयद्रथ, रजि, सहस्रजित्, कुक्षि, दृढधन्वा, रिपुंजय॥९५॥ युवनाश्व, दंतवक्र, ना रिपुमंगल, करंधम, धर्मसेन, परमर्दक और परांतक ॥ ९६ ॥ आदि राजे तथा अ दूसरे नीतिमार्गानुसारी, धर्म और अधर्मके विचारमें निपुण भूपालगण सुधर्म (यमराजकी सभा) में बैठते हैं ॥ ९७ ॥ एक अन्य प्रकारके और लोग हैं, जो यमराज तथा दण्डपाशयुक्त हस्त, उग्रमुख, यमदूतोंको कभी नहीं देखते उनक हम लोग कहदेतेहैं, ॥९८॥ हे गोविन्द ! माधव ! मुकुन्द ! हरे ! मुरारे ! शम्भ शिव ! ईश ! शशिशेखर ! शूलपाणे ! दामोदर ! अच्युत ! जनार्दन ! वासुदे (१४) हे दूतगण ! जो लोग ऐसा सदा मनन करते रहतेहैं वे त्याज्यहैं ॥ ९९ हे गंगाधर ! अंधकारिपो ! हर ! नीलकंठ ! वैकुण्ठ ! कैटभारिपो ! कमठ ! अब्जपा भूतेश ! खंडपरशो ! मृड ! चण्डिकेश ! (१२) हे गणलोग ! जो इसम सतत जपते रहतेहैं उन्हें त्यागनाही उचितहै ॥ १०० ॥ हे विष्णो ! नृसिं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मधुसूदन ! चक्रपाणे ! गौरीपते ! गिरिश ! शंकर ! चन्द्रचूड ! नारायण ! असुरनिबर्हण ! शारंगपाणे ! (११) इस विधिसे जो निरंतर कहाकरतेहैं हे दूतो ! वे त्यागदेने योग्यहैं ॥ १ ॥ हे मृत्युञ्जय ! उग्र ! विषमेक्षण ! कामशत्रो ! श्रीकान्त ! पीतवसन ! अम्बुदनील ! शौरे ! ईशान ! कृत्तिवसन ! त्रिदशैकनाथ ! (११) योंही जो नित्य भजा करतेहैं हे भटगण ! वे परित्याज्य हैं ॥ २ ॥ हे लक्ष्मीपते ! मधुरिपो ! पुरुषोत्तम ! आद्य ! श्रीकंठ ! दिग्वसन ! शांत ! पिनाकपाणे ! आनन्दकन्द ! धरणीधर ! पद्मनाभ ! (११) इसरीतिसे जो लोग चिन्तनकरते (रहते) हैं वे कभी स्पर्शके योग्य नहींहैं ॥ ३ ॥ हे सर्वेश्वर ! त्रिपुरसूदन ! देवदेव ! ब्रह्मण्यदेव ! गरुडध्वज ! शंखपाणे ! त्र्यक्ष ! उरगाभरण ! बालमृगांकमौले ! ॥ ९ ॥ हे दूतो ! सदा ऐसा कथन करनेवालोंसे दूरही रहनाचाहिये ॥ ४ ॥ हे श्रीराम ! राघव ! रमेश्वर ! रावणारे ! भूतेश ! मन्मथरिपो ! प्रमथाधिनाथ ! चाणूरमर्दन ! हृषीकपते ! मुरारे ! (१०) इसविधिसे सर्वदा भाषणकरनेवालोंका हे भटलोगो ! परित्यागही उचितहै ॥ ५ ॥ हे शूलिन् ! गिरीश ! रजनीशकलावतंस ! कंसप्रणाशन ! सनातन ! केशिनाश ! भर्ग ! त्रिनेत्र ! भव ! भूतपते ! पुरारे ! जो सतत ऐसा आमनन क्रियाकरतेहैं हे गणलोग ! वे त्याज्यहीहैं ॥ ६ ॥ हे गोपीपते ! यदुपते ! वसुदेवसूनो ! कर्पूरगौर ! वृषभध्वज ! भालनेत्र ! गोवर्धनोद्धरण ! धर्मधुरीण गोप ! यों जोलोग भजन करतेहों हे दूतो ! उनसे दूरही हटेरहना (सर्वथा) योग्यहै ॥ ७ ॥ हे स्थाणो ! त्रिलोचन ! पिनाकधर ! स्मरारे ! कृष्ण ! अनिरुद्ध ! कमलाकर ! कल्मषारे ! विश्वेश्वर ! त्रिपथगार्द्रजटाकलाप ! इसविधानसे जो ध्यान किया करतेहैं, हे दूतगण ! उन्हें सर्वदा छोडदेना उचितहै ॥ ८ ॥ अहो द्विज शिवशर्मन् ! सुन्दरनामके एकसौ आठ ललित पदरूपी रत्नसमूहोंसे गुंथीगयी, प्रशस्त हार मध्यमणि (सुमेर) से शोभित, दृढगुण (डोरा) युक्त इस (नाम) मालाको जो कंठ स्थित करे वह यमराजको न देखे ॥ ९ ॥ हे द्विजेन्द्र ! इसप्रकारसे वह धर्मराज पृथिवीपर जानेवाले अपने भृत्यगणोंकी सदैव शिक्षाकरते रहते हैं कि—अहो ! भूतलमें और भी जो कोई विष्णु अथवा शिवके चिह्नको धारणकियेहों उन्हें दूरहीसे परिवर्जन कर देना उचितहै ॥ ११० ॥ अगस्त्य बोले—जो कोई धीर नर धर्मराजकी विरचित, ललित प्रबंधोंसे युक्त, समस्त पापबीजोंकी विनाशिनी इस हरिहरात्मिका नामावालीको यहां नित्यही जपे वह माताके स्तनरस (दुग्ध) को फिर न पीवे ॥ ११ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हे प्रिये ! प्रसन्नवदन वह शिवशर्मा (ब्राह्मण) इस प्रकारसे पापहारिणी कथाको सुनताहुआ सन्मुखही अप्सराओंकी नगरीको देखनेलगा ॥ १२ ॥

दुर्जनको यमराज जो, सो सज्जन हित धर्म ।
देत शुभाशुभ फल सबै, जाकर जैसो कर्म ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषाटीकायां पिशाचलोकमार्ग यमलोकवर्णनंनाम अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

नवम अध्याय ।

अप्सरालोक और सूर्यलोकका वर्णन ।

शिवशर्मा बोला—रूपलावण्यसौभाग्यशालिनी दिव्यभूषणधारिणी स भोगसे परिपूर्ण ये रमणियां कौनहैं ? ॥ १ ॥ गणोंने कहा—ये सब अप्सरा इन्द्र देवगणकी प्रीतिपात्र वेश्यायें हैं, गानमें अभिज्ञ नृत्यमें कुशल और बाजा बज बडी चतुर हैं ॥ २ ॥ कामकेलिकलामें कुशल, द्यूतकर्ममें दूरदर्शिता, रसिक मनोगत भावका ज्ञान, समयोचित वाक्प्रयोगचातुरी ॥ ३ ॥ अनेक देश विशे अभिज्ञान, नानाभाषाओंमें पाण्डित्य और संकेतवृत्तान्तमें निपुणता इत्यादि गु परिपूर्ण ये सब दलबद्ध होकर हर्षपूर्वक स्वच्छन्द भ्रमण करती हैं ॥ ४ ॥ शृं क्रिया और क्रीडा कौतुक (खेल—खेलवाड) में चतुर और मधुरालापमें पंडित सब अप्सरायें अपने हाव भावोंसे जवानोंके मनको हरणकरलेती हैं ॥ ५ ॥ पूर्वक क्षीरसमुद्रके मथनसे निकली उत्पन्न हुई यह अप्सरायें त्रिलोकविजयी काम मोहनास्त्रस्वरूपहैं ॥ ६ ॥ उर्वशी, मेनका, रंभा, चन्द्रलेखा, तिलोत्तमा, वपु कांतिमती, लीलावती, उत्पलावती ॥ ७ ॥ अलंबुषा, गुणवती, स्थूलकेशी, व वती, कलानिधि, गुणनिधि, कर्पूरतिलका, उर्वरा ॥ ८ ॥ अनंगलतिका, म मोहिनी, चकोराक्षी, चन्द्रकला, मुनिमनोहरा, ॥ ९ ॥ ग्रावद्रावा, तपोद्वेष्ट्री, चारुल सुकर्णिका, वारसंजीविनी, सुश्री, क्रतुशुक्रा, शुभानना ॥ १० ॥ तपश्चु तीर्थशुक्रा, दानशुक्रा, हिमावती, पंचाश्वमेधिका, राजसूयार्थिनी ॥ ११ ॥ अग्नि होमिका और वाजपेयशतोद्भवा आदिक प्रधान प्रधान अप्सरायें साठसहस्र हैं ॥ १२ उस अप्सरालोकमें स्थिरयौवना एवं सदैव अस्खलित लावण्या औरभी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सुन्दरियां निवास करतीहैं ॥ १३ ॥ वे सबभी दिव्यवस्त्र, दिव्यमाला, दिव्यगंधका अनुलेपन और दिव्य भोगोंसे सुसंपन्न होकर स्वेच्छानुसार शरीर धारण करसकतीहैं ॥ १४ ॥ जो स्त्रियां मासोपवास व्रत करके दैवयोगसे एकवार दोवार अथवा तीनवार तक ब्रह्मचर्य्यसे भ्रष्ट होजातीहैं ॥ १५ ॥ वही दिव्यभोगवाली, रूप लावण्यकी संपत्तिमती और सबकामोंसे परिपूर्ण नारियां इस अप्सरोलोकमें वसतीहैं ॥ १६ ॥ विधिपूर्वक सांगोपांग कामव्रतके अनुष्ठान करनेसे इसलोकमें प्राप्त होकर स्वैरचारिणी देवभोग्या होजातीहैं ॥ १७ ॥ हे द्विज ! जो पतिव्रता नारियां बलवान् पुरुषसे बलपूर्वक पकडे (धरे) जानेपर भर्ताहीकी बुद्धिसे उसकेसाथ कदाचित् संभोग करलेतीहैं, वेही यहांपर आकर रहती हैं ॥ १८ ॥ स्वामीके प्रवास करनेपर जो सदैव ब्रह्मचर्य्यका पालन करतीहैं परन्तु दैवयोगसे कहीं एकबार ब्रह्मचर्यसे भ्रष्ट होजातीहैं वेही वामलोचनायें इस अप्सरोलोकमें निवास करतीहैं ॥ १९ ॥ जो वरवर्णिनी अनेक सुगन्धिपुष्प, सुवासित चन्दन, सुश्वेत कर्पूर, अतिसूक्ष्म वस्त्र ॥ २० ॥ एकमेल, बडे पुराने कडे, अग्रभागसे युक्त, सुवर्णवर्ण, मोटे और नीले नसवाले॥ २१ ॥ सुगन्ध द्रव्यादिसे भूषित पान (ताम्बूल) के पत्तें, विचित्र आभरणोंसे शोभित शय्या और रतिमन्दिरोपयुक्त ॥ २२ ॥ बहुतसे कौतुक वस्तु—इत्यादिके द्वारा द्विज दम्पतीकी पूजा कर इस काम्यभोग दानको प्रत्येक सूर्यकी संक्राति ॥ २३ ॥ अथवा प्रति व्यतीपात योगपर एकवर्षपर्यन्त, "कोदात्" इत्यादि मन्त्रसे करतीहै ॥ २४ ॥ और "कामरूपधारी देव प्रसन्न होवें" ऐसा कहतीहै, हे द्विजोत्तम ! वह अंगना अप्सरोंके बीच श्रेष्ठ होकर यहांपर कल्पपर्य्यन्त निवास करतीहै ॥ २५ ॥ जो कोई स्त्री कन्यावस्थामें कभी किसी देवताके भोग करलेनेपर उस समयसे ब्रह्मचारिणी होकर ॥ २६ ॥ उस पूर्ववृत्तान्तका ध्यान करतीहुई यथाकाल मृत्युको प्राप्त होतीहै वह तो दिव्यरूपधारिणी और स्वर्गीय भोग भोगिनी होकर इस अप्सरोलोकमें समागत होतीहै ॥ २७ ॥ द्विजाग्रगण्य शिवशर्मा इस प्रकारसे अप्सरोलोककी प्राप्तिके कारणोंको सुनताहुआ तदनंतर क्षणमात्रमें विमानके द्वारा सूर्यलोकमें प्राप्त हुआ ॥ ॥ २८ ॥ जिस प्रकारसे कदंबका पुष्प केसरसमूह (जीरों) के द्वारा सर्वतोभावसे व्याप्त रहताहै, उसी प्रकारसे यह सूर्यलोकभी सूर्य्यके किरण जालसे चतुर्दिक्में देदीप्यमान (रहता) है ॥ २९ ॥ नवसहस्र योजन परिमित, सप्ताश्वचालित, अश्वरश्मि (घोडेकी वाग) पकडेहुए अरुणके द्वारा संमुख अधिष्ठित, अप्सरा, मुनि,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गंधर्व, सर्प, यक्ष और राक्षसोंके आश्रय, अतिवेगगामी विचित्र एक चक्रके रथ आरूढ और दोनों हाथोंमें दो रक्तकमलोंको धारण कियेहुए सूर्यभगवान्को पहिले शिवशर्माने हाथ जोडकर (दण्डवत्) प्रणाम किया ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ रविदेवभी उस प्रणामको भ्रूभंगके द्वारा स्वीकार कर क्षणमात्रमें अतिदूर आकाश मार्गको अतिक्रमण करगये ॥ ३३ ॥ अत्यंत सुखी शिवशर्मा द्युमणिके अतिदूर होजानेपर दोनों भगवद्भक्तोंके प्रति बोला किस पुण्यके द्वारा सूर्यलोककी प्राप्ति होतीहै ? ॥ ३४ ॥ मैं यह सुना चाहताहूं, आपलोग मेरे आगे बन्धुताके अनुरोधसे वर्णन करें, क्योंकि सप्तपद एकत्र गमन करनेहीसे सज्जनोंकी मैत्री होजातीहै ॥ ३५ ॥ विष्णुके दोनों पारिषदोंने कहा हे महाप्राज्ञ ! द्विज ! सुनो तुमारे निकट हमें कुछभी अवक्तव्य नहींहै, क्योंकि सज्जनके संग होनेहीपर साधुगणकी सत्कथाका प्रसंग प्रारम्भ होताहै ॥ ३६ ॥ जो सब भूतोंका एकमात्र नियन्ता, परमकारण नाम, गोत्र, और रूपादिसे रहित है ॥ ३७ ॥ जगत्की उत्पत्ति और प्रलय जिसके भ्रूभंगहीका फलहै—वेही सर्वात्मा वेदपुरुष निरंतर स्पष्टरूपसे यही कहतेहैं कि ॥ ३८ "जो आदित्यमंडलवर्ती पुरुषहै वही मैं हूं, जो लोग अन्यकी उपासना करतेहैं वे अंधतमसमें प्रविष्ट होतेहैं" ॥ ३९ ॥ हे द्विजोत्तम ! इसी निश्चितार्थाश्रुतिके द्वारा ब्राह्मणगण पुनः पुनः स्थिरकरके एकमात्र उसीआदित्यरूप ब्रह्मकी उपासना करते ॥ ४० ॥ जो द्विजाति यथासमय गायत्रीका उपदेश पाकर त्रिकाल (प्रातः मध्यान्ह सायान्ह) में उसका जप नहीं करता वह एकसप्ताहके मध्य पतित होजाताहै, इसमें कुछ सन्देह नहींहै ॥ ४१ ॥ प्रातःकाल सूर्यके अर्द्धोदय पर्य्यन्त आदित्यके संमुख (खडे होकर) सावित्रीका जप करे; और सायंकालमें आसनपर बैठकर नक्षत्रोदयपर्यन्त सूर्याभिमुख जप करे ॥ ४२ ॥ ठीक मध्यान्हकालमें अर्थात् जबतक सूर्य अस्तमनोन्मुख होवे मध्यान्हसन्ध्या सूर्यकी ओर मुखकरके करे; कालका लोप न होनेदेवे अतएव समयकी प्रतीक्षा करे ॥ ४३ ॥ कालहीपर समस्त ओषधियाँ फलतीहैं, सभी वृक्ष कालहीसे फूलतेहैं, मेघगणभी कालहीपर बरसतेहैं अतएव कालका लंघन नहीं करनाचाहिये ॥ ४४ ॥ मन्देह नामक राक्षसगणके देहविनाशार्थ रविदेव उदय और अस्तके समय द्विजोंकी दीहुई मंत्रसहित तीन अंजिल जलकी आकांक्षा करतेहैं ॥ ४५ ॥ जो जन यथाकाल गायत्री मन्त्रसे पूत तीन अंजली जल सूर्यको देताहै, उसे त्रैलोक्यभरके दानका फल होजाताहै ॥ ४६ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सूर्यनारायण कालपर सम्यक् प्रकारसे उपासनाकिये जावें तो क्यानहींदेते ? वे आयुष्य, आरोग्य, ऐश्वर्य, धनराशि, पशुवृन्द ॥ ४७ ॥ पुत्र, मित्र, कलत्र, विविधक्षेत्र, (सुगंध, स्त्री, वस्त्र, गीत, तांबूल, भोजन, वाहन, मंदिर, इस) अष्टविध भोग, स्वर्ग और मोक्षकोभी प्रदान करतेहैं ॥ ४८ ॥ अठारह प्रकारकी विद्याओंमे मीमांसा सबसे बडीहै, उससे (मीमांसासे) भी तर्कशास्त्रश्रेष्ठहै, तर्कशास्त्रसेभी पुराण गुरुतरहैं ॥ ४९ ॥ हे द्विज ! धर्मशास्त्र पुराणोंसेभी श्रेष्ठहैं; और धर्मशास्त्रोंसे-भी वेद परमश्रेष्ठहै, वेदोंमेंसे भी उपनिषद् श्रेष्ठहै और गायत्री उन उपनिषदोंसेभी अधिक है ॥ ५० ॥ प्रणवसे समन्वित गायत्री संपूर्णमन्त्रोंमें परमदुर्लभ है, क्योंकि तीनों वेदोंमें गायत्रीसे बढकर और कुछभी नहीं कहागयाहै ॥ ५१ ॥ गायत्रीके समान मंत्र नहीं, काशीके सदृश पुरी नहीं और विश्वेश्वरके तुल्य लिङ्ग नहीं यह वारंवार सत्यही सत्यहै ॥ ५२ ॥ गायत्री वेदकी मातांहै, गायत्रीही ब्राह्मणोंकी जननीहै, अपने गानकरनेवालेके परित्राण करनेके कारणसे "गायत्री" कही जातीहै ॥ ५३ ॥ गायत्री और सूर्यका परस्पर वाच्यवाचक संबन्धहै, (गायत्रीके) साक्षात् वाच्य ये सवितांहैं और गायत्री (सविताकी) वाचिकांहै ॥ ५४ ॥ जितेन्द्रिय विश्वामित्र क्षत्रिय होनेपरभी (इसी) गायत्रीके प्रभावसे राजर्षिपदको परित्यागकर ब्रह्मर्षित्वको प्राप्तहुए ॥ ५५ ॥ और उन्होंने (इसी गायत्रीके प्रभावसे) अन्यभुवनकी सृष्टिकरनेका सामर्थ्यभी प्राप्तकिया, सम्यक्प्रकारसे उपासित होनेपर यह गायत्री क्या क्या नहीं देती ॥ ५६ ॥ वेदके पाठकरने अथवा शास्त्रके अध्ययनसे ब्राह्मण नहीं होता;—केवल गायत्रीदेवीके त्रिकाल अभ्यास करनेहीसे ब्राह्मण होताहै, दूसरे किसीप्रकारसे नहीं होसकता ॥ ५७ ॥ गायत्रीही परमविष्णु गायत्रीही परमशिव और गायत्रीही परमब्रह्मांहै—अतएव गायत्रीही ब्रह्मविष्णुशिवात्मिका वेदत्रयी है ॥ ५८ ॥ वेही किरणजालभूषित दिवाकर देव ब्रह्मा विष्णु और महेशके स्वरूपहैं और वेही संपूर्ण तेजोंके राशि, काल, एवं कालकेभी प्रवर्तकहैं ॥ ५९ ॥ सारासारके विवेकी हमलोगोंके वैकुण्ठलोकनिवासीगण सूर्यदेवके उद्देशसे इस श्रुतिको कीर्तन किया करतेहैं ॥ ॥ ६० ॥ "हे मनुष्यगण ! येही देव समस्त दिशा, विदिशा, ऊर्द्ध्व, अधः और तिर्यक् प्रदेशोंको व्याप्तकरके वर्तमानहैं, येही अनादिनिधन उत्पन्नहुए, येही माताके गर्भमें अवस्थित होकर उत्पन्न हुए (होते हैं और उत्पन्न होंगे) फिर प्रत्येक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पदार्थोंमें येही वर्तमानहैं, और येही देव सर्वतोमुखहैं" ॥ ६१ ॥ हेविप्र ! जो भक्त गण निरालस्य होकर सूर्यसूक्त द्वारा इसीरूपसे सर्वदा सूर्यकी उपासना करते और प्रणाम करते हैं. वे सूर्यतुल्य होकर इस सूर्यलोकमें वास करतेहैं ॥ ६२ हे द्विज ! पुष्यनक्षत्रयुक्त रविवार एवं हस्त, मूल, उत्तराषाढ, उत्तरभाद्रपद और उत्त फाल्गुनी—इन नक्षत्रोंसे युक्त आदित्यवारको जो कुछ कियाजाताहै वह फली होताहै—अन्यथा नहीं होता ॥ ६३ ॥ जो कोई श्रद्धावान् एकभोजी, कामको रहित हो व्रतधारणकर पौषमासके आदित्यवारको सूर्योदयकालमें स्नान करके का दान, होम, जप और पूजन करता है, वह दीप्तिमान् और भोगसंपन्न होके अप्सराओंके साथ इस सूर्यलोकमें निवास करता है ॥ ६४॥६५ ॥ अयन, (मक कर्क संक्राति) विषुव (तुला—मेष) षडशीतिमुख, (धनु—मिथुन—कन्या—मीन और विष्णुपदी (वृष—वृश्चिक—सिंह—कुंभ) संक्रांतियोंमें जो सुव्रत महादान ॥ ६६ ॥ सघृत तिलका होम करें, ब्राह्मण भोजन करावे, और जो पितृ उद्देशसे उक्तदिनोंमे श्राद्ध करें ॥ ६७॥ महापूजा करें महामन्त्रोंको जपें, वे सब दि गण इस वैकर्तनलोकमें सूर्यसमान होकर वास करतेहैं ॥ ६८ ॥ संक्रांतिके दि जो लोग सूर्यदेवकी आराधना करते हैं वे कभी दरिद्रदुःखार्त, रोगसे पीडित, कुरू और दुर्भाग्ययुक्त नहीं होते ॥ ६९ ॥ जो लोग संक्रातियोंपर दान, तीर्थजल स्नान, कपिला गोघृतसे युक्त तिलका विशेष होम नहीं करते॥ ७० ॥ वे सब—नेत्रहीन मुखविहीन, जीर्ण मलिनवस्त्र, होकर द्वार द्वार पर "दोदो" ऐसा बकते हुए—दीसल पडतेहैं ॥ ७१ ॥ जो कुशली पुरुष सूर्यग्रहण पर कुरुक्षेत्रमें एक गुंजा (घुँघुची भरभी सुवर्णदान करताहै वह पुण्यभागी यहाँ सूर्यलोकमें निवासी होताहै ॥ ७२ दिवाकरके राहुग्रस्त होनेपर सभी जल गंगाजलके समान, सभी द्विज साक्षात् ब्रह्म सदृश और सभी देय वस्तु सुवर्णके तुल्य होजातेहैं ॥ ७३ ॥ सूर्यग्रहण समय पर जो कुछ दान, जप, होम, स्नान आदि सत्कर्म किये जावें वेही सूर्यसांनिध्य कारण हैं ॥ ७४ ॥ रविवारको संक्रांति अथवा ग्रहण होवे तब जो कु पुण्य उपार्जित कियाजावे वह यहां अक्षय होजाताहै ॥ ७५ ॥ ज षष्ठी अथवा सप्तमी तिथिको रविवार होवे तो, उसदिन जो पुण्यकार्य किय मयाहो उसका फल इसी सूर्यलोकमें भोगाजाताहै ॥ ७६ ॥ हंस, भानु, सहस्रांशु तपन, तापन, रवि, विकर्तन, विवस्वान्, विश्वकर्मा, विभावसु ॥ ७७ ॥ विभाकर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विश्वकर्ता, मार्तण्ड, मिहिर, अंशुमान्, आदित्य, उष्णगु, सूर्य्य, अर्यमा, ब्रध्न, दिवाकर ॥ ७८ ॥ द्वादशात्मा, सप्तहय, भास्कर, अहस्कर, खग, सूर, प्रभाकर, श्रीमान्, लोकचक्षु, ग्रहेश्वर, ॥ ७९ ॥ त्रिलोकेश, लोकसाक्षी, तमोरि, शाश्वत, शुचि, गभस्तिहस्त, तीव्रांशु, तरणि, सुमहोरणि, ॥ ८० ॥ द्युमणि, हरिदश्व, अर्क, भानुमान्, भयनाशन, छन्दोश्व, वेदवेद्य, भास्वान्, पूषा, वृषाकपि, ॥ ८१ ॥ एकचक्ररथ, मित्र, मन्देहारि, तमिस्रहा, दैत्यहा, पापहर्ता, धर्म, धर्मप्रकाशक, ॥ ८२ ॥ हेलिक, चित्रभानु, कलिघ्न, तार्क्ष्यवाहन, दिक्पति, पद्मिनीनाथ, कुशशेयकर, हरि, ॥ ८३ ॥ घर्मरश्मि, दुर्निरीक्ष्य, चण्डांशु, कश्यपात्मज,—येही सब सत्तर संख्यक (७० सूर्यके पवित्र नामहैं) ॥ ८४ ॥ इन प्रत्येकनामोंमें चतुर्थी (विभक्ति) के एकवचनका रूप बना आदिमें प्रणव और अन्तमें नमःपद लगाकर प्रतिनामोच्चारणके साथ सूर्यदेवको देखदेखकर ॥ ८५ ॥ दोनों हाथोंसे गृहीत, जलसे परिपूर्ण, अतिनिर्मल, ताम्रपातके मध्यमें ॥ ८६ ॥ करवीर (कनइल) आदि (रक्त) पुष्प रक्तचंदन, दूर्वांकुर, अक्षत (और कुश) को रखकर ॥ ८७ ॥ परमपूजनीय सूर्यभगवान्को शिरकेपास हाथोंको लाय जानुओंसे भूमिको छूकर ध्यानपूर्वक नयन और मनको स्थिरकर अर्घ्य देवे ॥ ८८ ॥ और उदय तथा अस्तके समय प्रत्येक मन्त्रोंका उच्चारण करताहुआ इन सप्ततिसंख्यक परमगोपनीय महामन्त्रोंके द्वारा नमस्कार करे ॥ ८९ ॥ जो मनुष्य इस अनुष्ठानको करताहै वह कभी दरिद्री अथवा दुःखभागी नहीं होता, जन्मान्तरार्जित पापोंके फलरूप घोर व्याधियोंसे ॥ ९० ॥ बिना औषध, बिना-वैद्य, और बिना पथ्य धारणके वह निर्मुक्त होजाताहै, और फिर कालवश मृत्युको प्राप्त होकर आदरपूर्वक सूर्यलोकमें वास करताहै ॥ ९१ ॥ हे सत्तम ! यह तो सूर्यलोकका एक अंश (कुछ थोडासा वृत्तान्त) कहागयाहै अहो ! इन महातेजोनिधिकी विशेषता कौन जानसकताहै ? ॥ ९२ ॥ शिवशर्मा इस पवित्र कथाको सुनताहुआ क्षणमात्रमें इन्द्रदेवकी महापुरीको देखने लगा ॥ ९३ ॥ अगस्त्यमुनि बोले—अप्सरालोक और सूर्यलोककी इस कथाके श्रवण करनेसे मनुष्य कभी दरिद्री नहीं होता, और अधर्ममेंभी प्रवृत्त नहीं होनेपाता ॥ ९४ ॥ ब्राह्मणोंको तो सर्वदा यह आख्यान सुनना आवश्यकहै क्योंकि वेदपाठकरनेसे जो पुण्य प्राप्त होताहै यह (आख्यान) भी, उसीपुण्यका फलदायक है ॥ ९५ ॥ ब्राह्मण, क्षत्रिय,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

और वैश्यलोग इस उत्तम अध्यायके श्रवणकरनेसे इसलोकमें पातकसमूहसे छूटे अत्युत्तम गतिको प्राप्त होवेंगे ॥ ९६ ॥

काल कर्म ओ जगतके, जोहैं कारण एक ।
तेहि सूरजके भजनसे, मंगल होंहिं अनेक ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखंडे पूर्वार्द्धे भाषाटीकायां अप्सर-स्सूर्यलोकवर्णनं नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

दशमअध्याय ।

अमरावती और ज्योतिष्मतीका वर्णन ।

शिवशर्मा बोला—अत्यन्त मनोभिरामा नेत्रोंको परम सुखदेनेवाली इस उत्तमपुरीका क्या नामहै ? और इसका स्वामी कौनहै ? ॥ १ ॥ विष्णुके गणोंने कहा—हे महाभाग शिवशर्मन् विप्र ! यह इन्द्रकी पुरी अमरावतीहै । यहांपर सुतीर्थ सेवनसे फलित वृक्षोंके समान लोगही क्रीडा करतेहैं ॥ २ ॥ इसे विश्वकर्माने बडेही तपोबलसे बनायीहै यहांपर दिनमेंभी चन्द्रिका अटारियोंकी शोभाका आश्रयण किये रहतीहै॥ ३ ॥ चन्द्रमा जब कभी अमावास्या अथवा अन्य किसी समय अदृश्य रहताहै, तबभी वह अपनी प्यारी ज्योत्स्नाको इन्हीं सौधोंमें छिपाजाताहै ॥ ४ ॥ इस नगरीके स्वच्छ भीतमें अपनाही प्रतिबिम्ब (परछांही) देखकर मुग्धा नायिका (स्वामीकी लाई गयी) दूसरी स्त्रीकी शंकासे चित्रशालामें शीघ्र प्रवश नहीं करती यह कैसा आश्चर्यहै ? ॥ ५ ॥ इसीपुरीमें अन्धकार नीलमके बने हुए बडे बडे सुन्दर मन्दिरोंमें अपनी नीलिमा (कालिख) को रखकर दिनमें भी निर्भय हो बैठाही रहताहै ॥ ६ ॥ यहां (इस पुरी) के लोग चन्द्रकान्त नामक मणिके शिलासमूहसे स्रवतेहुए निर्मल जलको घडोंघडों भरलेनेपर फिर दूसरे जलकी इच्छा नहीं करते ॥ ७ ॥ इस पुरीमें न तो तन्तुवाय (कोरी—जोलहा) ही रहतेहैं और न सुवर्णकार (सोनार) ही वास करतेहैं, क्योंकि यहांपर कल्पवृक्षही वस्त्र आभूषण (गहना—और कपडोंका) समर्पण किया करताहै ॥ ८ ॥ इस नगरीमें चिन्ताविद्याके विशारद ज्योतिषी लोग नहींहै—कारण—यहां साक्षात चिन्तामणिही सभी किसीके चिन्ताको झट जानजाते ॥ ९ ॥ इस स्थानपर पाककर्मके आचार्य सूपकार लोग (रसोंयांदार) भी नहीं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

क्योंकि एक कामधेनुके द्वाराही समग्र रस दोहन करलिये जातेहैं ॥ १० ॥ जिसकी कीर्ति उत्तमतासे श्रवण कीजातीहै, और जो संपूर्ण वाजिराजियोंमें रत्नहै, वह महाबली उच्चैःश्रवा नामक घोडाभी इसीपुरीमें वर्तमान है ॥ ११ ॥ स्फटिकसा उज्ज्वल दूसरे जंगम कैलासके समान चारदांतवाला कारिवर ऐरावतभी यहांही विराजमानहै ॥ १२ ॥ इस लोकमें वृक्षरत्न पारिजात, स्त्रीरत्न प्रसिद्ध उर्वशी, वनरत्न नन्दन, और जलरत्न मन्दाकिनी विद्यमानहै ॥ १३ ॥ वेदकथित तैंतीस कडोर देवगण यहींपर प्रतिदिन इन्द्रकी सेवाका अवसर जोहतेरहतेहैं ॥ १४ ॥ स्वर्गमें इन्द्रपदसे बडा और कुछभी नहींहै, त्रैलोक्यभरका समस्त ऐश्वर्य्यभी इसके तुल्य नहीं होसकता ॥ १५ ॥ सहस्र अश्वमेध यज्ञोंके परिवर्तनसे जिसका लाभ होताहै, (भला) उसके समान पवित्र और महान् दूसरा क्या होसकताहै ? ॥ १६ ॥ अर्चिष्मती, संयमिनी, पुण्यवती, अमलावती, गंधवती, अलका और ऐसी सप्तदिक्पालोंकी ये सातों पुरियां भी महासमृद्धिके द्वारा अमरावतीके समान नहींहैं ॥ १७ ॥ यही सहस्राक्ष, यही दिवस्पति, और यही देवराज शतक्रतुहैं, ये सब नाम और किसीके नहींहैं ॥ १८ ॥ दूसरे सातों लोकपालभी इन्हींकी उपासना करतेहैं और नारदादि मुनिगणभी आशीर्वादोंके द्वारा इन्हींकी स्तुति गातेहैं ॥ १९ ॥ इन इन्द्रहीकी स्थिरतासे त्रैलोक्यकी स्थिरता होतीहै, और इन्द्रहीके पराजयसे त्रैलोक्यभरका पराजय होजाताहै ॥ २० ॥ इसी इन्द्रपदके लाभकी अभिलाषासे दैत्य, दानव, मनुष्य, गन्धर्व, यक्ष और राक्षस, सभी लोग उग्र संयमपूर्वक तपस्या करतेहैं ॥ २१ ॥ अश्वमेधयज्ञोंके कर्ता सगरादिक भूपालगणने इसी इन्द्रपदप्राप्तिकी इच्छासे बडे बडे प्रयत्न किये ॥ २२ ॥ जो कोई व्यक्ति जितेन्द्रिय होकर पृथिवी पर एकसौ अश्वमेध यज्ञ निर्विघ्न समाप्त करपाताहै, अमरावतीमें वही इन्द्राणीको प्राप्त करताहै ॥ २३ ॥ जिसका शतयज्ञ समाप्त नहीं होता ऐसे राजे महाराजे और ज्योतिष्टोम आदि यागोंके कर्ता द्विजातिलोग इस अमरावती नगरीमें निवास करतेहैं ॥ २४ ॥ तुलापुरुष १ हिरण्यगर्भ २ ब्रह्माण्ड ३ कल्पतरु ४ गोसहस्र ५ हिरण्यकामधेनु ६ हिरण्याश्व ७ हिरण्याश्वरथ ८ हिरण्यहस्तिरथ ९ पंचलांगल १० धरादान ११ विश्वचक्र १२ कल्पलता १३ सप्तसागर १४ रत्नधेनु १५ और महाभूत घट १६ इन षोडशमहादानोंके कर्ता निर्मलात्मागण इस अमरावतीको प्राप्त करतेहैं ॥ २५ ॥ अकातरवचनोंके वक्ता, युद्धमें पीठको न दिखलानेवाले, वीरशय्याके शायी, धीर,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शूर, भूपालगण इस स्थानमें स्थितिकरतेहैं ॥ २६ ॥ यज्ञविद्याके विशारद भी
यजूकगणभी यहांही निवास करतेहैं। प्रसंगवश हमलोगोंने इस इन्द्रपुरीकी स्थिति
(आपसे) वर्णन की ॥ २७ ॥ (अब) अर्चिष्मती नाम्नी मंगलरूपा इस अग्निपुरीमें
देखिये, अग्निदेवके उपासक सुव्रतलोग यहाँपर निवास करतेहैं ॥ २८ ॥ जो
दृढसत्त्व, जितेन्द्रिय, पुरुषगण अथवा जो दृढसत्त्वसंपन्ना स्त्रियाँ अग्निमें प्रवेश करतीहैं,
वे सब अग्निसमान तेजस्वी होकर इस अग्निलोकमें निवास करतेहैं ॥ २९ ॥ जो
ब्राह्मण अग्निहोत्र तत्परहैं, अथवा साग्निक ब्रह्मचारीहैं, तथा पंचाग्निव्रतपरायणहैं, वे
सब अनलसम तेजोधारी होकर इस वह्निलोकके निवासी होतेहैं ॥ ३० ॥ जो
कोई शीतकालमें शैत्य दूरकरनेकेलिये काठके बोझोंका (इन्धन) देताहै, और
अग्निकुंड बनवादेताहै, वह अग्निके समीप अवस्थान करताहै ॥ ३१ ॥ जो व्यक्ति
श्रद्धापूर्वक अनाथलोगोंकी अग्निदाहादिक क्रिया करदेताहै अथवा स्वयं अशक्त
होनेपर दूसरे किसीसे करवादेताहै वह अग्निलोकमें पूजित होताहै ॥ ३२ ॥ जो
कोई जठराग्निकी वृद्धिके लिये मन्दाग्निजनको अग्निवर्द्धक औषध देताहै वह बहुकाल
पर्य्यन्त अग्निलोकमें निवास करताहै ॥ ३३ ॥ यज्ञकी सामग्री अथवा यज्ञकरनेके
हेतु धन जो यथाशक्ति देताहै वह इस अर्चिष्मतीमें वास करताहै ॥ ३४ ॥ यह
अग्निही द्विजातियोंके परमपद दाताहै, वही द्विजोंके गुरु, देवता, व्रत और तीर्थ
सबकुछहैं—यह निश्चयहै ॥ ३५ ॥ सभी अपवित्रवस्तु अग्निके संसर्गसे क्षणमात्रमें
पवित्र होजातेहैं इसीसे अग्निका नाम पावक कहाजाताहै ॥ ३६ ॥ जो ब्राह्मण वेदको
जानकरभी अग्निको छोडकर अन्यत्र अनुराग करताहै, वह वास्तवमें वेदवेत्ता नहींहै॥ ३७ ॥
ये अग्निही साक्षात् अन्तरात्मा निश्चितहैं, वेही उदरस्थहोकर मांसादि ग्रासोंको
पकातेहैं, परन्तु स्त्रियोंके गर्भस्थ बालकोंको कोई उपाधि नहीं करते ॥ ३८ ॥ ये
प्रत्यक्ष दहनात्मिका ईश्वरकी तैजसी मूर्तिहैं, और येही सृष्टि स्थिति और प्रलयके
विधायकहैं, इनसे भिन्न जगत्में और क्या दृष्टिगोचर होताहै ? ॥ ३९ ॥ यह
चित्रभानु साक्षात् महादेवके नेत्रहैं, घोर अंधकारमय इस संसारमें इनसे भिन्न
दूसरा कौन प्रकाशकहै ? ॥ ४० ॥ स्वर्गमें सभी देवगण इन्हीं अग्निका भुक्त धूप
दीप, नैवेद्य, दूध, दही और ऊंखका मीठा आदि सेवन करतेहैं ॥ ४१ ॥ शिवजी
मैंने कहा—ये कृशानु कौनहैं ? और किसके पुत्रहैं ? फिर किसप्रकारसे इनने यह
अग्निपद प्राप्तकियाहै इसे मेरे आगे वर्णनकरिये ॥ ४२ ॥ गणोंने उत्तरदिया—

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

महाप्राज्ञ ! श्रवणकरो, यह जो हैं, और जिसके पुत्रहैं, तथा जिसप्रकारसे इस ज्योतिष्मती पुरीको प्राप्त कियेहैं, यह सब कथा यथाक्रम वर्णन करतेहैं ॥ ४३ ॥ पूर्वकालमें नर्मदाके सुहावन तीरपर नर्मपुरनामक नगरमें विश्वानर नाम, शांडिल्यगोत्रके एक पुण्यात्मा शिवभक्त मुनिथे ॥ ४४ ॥ नर्मदा वेदाध्ययनरूप ऋषियज्ञमें तत्पर, ब्रह्मतेजोमय, जितेन्द्रिय, पवित्र, ब्रह्मचर्य्याश्रमनिष्ठ, वे मुनि ॥ ४५ ॥ समस्त शास्त्रार्थ ज्ञान, और लौकिकाचारके चातुर्य्यको लाभकर एकबार हृदयमें महादेवका ध्यान करतेहुए चिन्ता करनेलगे ॥ ४६ ॥ चारों आश्रमोंमें सज्जनोंका परमकल्याणकारी आश्रम कौनहै ! जिसके प्रतिपालन करनेसे यहां और परलोकमें भी सुखलाभ होताहै ॥ ४७ ॥ "यह श्रेयस्कर है नहीं यह श्रेयस्करहै, यह सुकरहै," इसीप्रकारसे सभी आश्रमोंका विचारकर, वे गृहस्थाश्रमहीकी प्रशंसा करनेलगे ॥ ४८ ॥ ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ और भिक्षुक–इन चारों आश्रमोंके बीच गृहस्थही सबकिसीका आधारस्वरूपहै क्योंकि उसके बिना इन सबका निर्वाह नहीं होसकता ॥ ४९ ॥ प्रतिदिन गृहस्थहीके द्वारा देवता, पितर, मनुष्य और पशुपक्षिजातिकीभी जीविका चलतीहै इससे गृहाश्रमीही सबसे श्रेष्ठहै ॥ ५० ॥ जो गृहस्थ स्नान, हवन और दान, विनाकियेही भोजन करलेताहै, वह देवतादिकोंका ऋणी होकर नरकमें पडताहै ॥ ५१ ॥ जो गृही विना स्नानके भोजन करताहै, वह मलभोजीहै, और बिना जपादिकिये पूयशोणित खाताहै, एवं होमहीन रहनेसे कृमिभोक्ता होताहै, तथ दानसे रहित होकर भक्षणशील होनेपर विष्ठाभक्षक होताहै ॥ ५२ ॥ कल्पनामात्रसे परित्यक्त ब्रह्मचर्य्य जैसा गृहस्थाश्रमहै (भला) स्वभावतः चंचलचित्त ब्रह्मचारीसे कहां होसकताहै ? ॥ ५३ ॥ आग्रहवशहो, चाहे लोकभयसे हो, अथवा स्वार्थहीके कारणहो, ब्रह्मचर्य्य ग्रहण करके यदि उसके विरुद्ध कोई कर्म चित्तमेंभी सोचाजावे तो वह ब्रह्मचर्य्य करनेपरभी नहीं करनेके समानही है ॥ ५४ ॥ परस्त्रीके परित्याग और स्वदाराहीसे संतोष एवं ऋतुकालमें गमन–इन्हीं कर्मोंसे गृहस्थ ब्रह्मचारी कहलाताहै ॥ ५५ ॥ जिसे राग द्वेष नहीं है, कामक्रोधसे रहित वही साग्निक सपत्नीक गृहस्थ वानप्रस्थकी अपेक्षा उत्तमहै ॥ ५६ ॥ जो कोई वैराग्यवश होकर गृहपरित्याग करनेपर फिर हृदयमें गृहधर्मोंको स्मरण करताहै वह न तो वानप्रस्थ हुआ न गृहस्थ हुआ किन्तु उभयतो भ्रष्टहै ॥ ५७ ॥ जो गृही

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बिनामांगे प्राप्त वस्तुकी वृत्तिद्वारा अपनी जीविका निर्वाह करताहै, और जिसकि
उपायसे सन्तुष्ट होरहताहै, वह गृही भिक्षुकसेभी श्रेष्ठहै ॥ ५८ ॥ जो यो
दुर्लभ वा सुलभ किसी वस्तुकी प्रार्थना करे, और भोजनसे तृप्त न होवे, तो वह
संन्यासी पतितहै ॥ ५९ ॥ उस विश्वानर द्विजने चारों आश्रमोंका गुणदो
भलीभाँतिसे विचार कर अपने अनुरूप कुलकी कन्यासे यथाविधि विवाह किया
॥ ६० ॥ वेद अग्निसेवन और पंचयज्ञमें तत्पर होकर, पठन, पाठन, यजन, याज
दान, और प्रतिग्रह इन नित्य छहों कर्मोंको करतेहुए, देवता, पितर, और अतिथि
गणके प्रीतिपात्र हुए, ॥ ६१ ॥ वे धीरचित्तहोकर यथाकाल परस्पर अविरु
दंपतिके अनुकूल धर्म, अर्थ और कामको उपार्जन करनेलगे ॥ ६२ ॥
कर्मकाण्डके ज्ञाता वे ब्राह्मण पूर्वाह्णमें देवकर्म, मध्याह्नमें मनुष्यकृत्य, और अप
ह्णमें पितृकार्योंको संपादन करनेलगे ॥ ६३ ॥ इसीप्रकारसे बहुतकाल बीतजाने
रतिके समान सुव्रता उस ब्राह्मणकी पत्नी, शुचिष्मती ॥ ६४ ॥ स्वर्गप्राप्तिके सा
वंशके अंकुरकोभी न देखकर, निजपतिहीको कल्याणकर्ता विचार, प्रणामकर निवे
करनेलगी ॥ ६५ ॥ शुचिष्मती बोली—हेमहामते ! प्रियव्रत ! प्राणनाथ ! आर्यपु
आपके श्रीचरणोंके पूजनसे इस जगत्में मुझे कुछभी दुर्लभ नहीं है ॥६६॥ स्त्रि
लिये जो जो भोग उपयुक्तहैं, आपके प्रसादसे अलंकृत होकर मैंने उन सबका भो
किया, प्रसंगवश उनकोभी मैं कहती हूँ ॥ ६७ ॥ सुन्दरवस्त्र, उत्तमगृह, कोमलशय्
अच्छीदासी, माला, तांबूल, अन्न और पान स्वधर्मनिष्ठलोगोंके इन आठों भोगों
मैंभोगचुकी ॥ ६८ ॥ नाथ ! मेरे हृदयमें गृहस्थोंके उपयुक्त एक पार्थना
दिनोंसे वर्तमानहै, आप उसे पूर्णकरदेवें ॥ ६९ ॥ विश्वानर बोले—हे पतिहितैषिणि
सुनितम्बिनि ! तुमको क्या अदेय है? हे महाभागे ! जो चाहो मांगो, मैं शीघ्र
तुम्हारी प्रार्थना पूर्ण करूंगा ॥ ७० ॥ हे कल्याणि ! सर्वकल्याणकर्ता महादेव
प्रसादसे यहां और परलोकमेंभी मुझे कुछ दुर्लभ नहीं है ॥ ७१ ॥ पतिदेव
शुचिष्मती पतिका यह वचन सुन प्रसन्नमुखी होकर बोली—यदि मुझको वर
मिले ॥ ७२ ॥ और मैं वरके योग्यहूं, तो मैं दूसरा वर नहीं चाहती, हेनिष्पा
शिवभक्त ! आप महेशके समान पुत्र मुझे देवैं ॥ ७३ ॥ पवित्रव्रती वह
शुष्चिमतीके इस वचनको सुन क्षणकाल चित्तमें समाधि लगाकर यह चिन्ता क
लगे ॥ ७४ ॥ ओः ! इस कृशाङ्गीने तो मनोरथ पथसेभी दूरवर्ती, अतिदुर्लभ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कैसी प्रार्थना की ? जो हो वेही (शिव) सब कुछ करनेवाले हैं ॥७५॥ वेही महेश्वर वाक्स्वरूपसे इसके मुखमें बैठकर यह बात बोलेहैं इससे अन्यथा करना किसके साध्यहै ? यही होवेगा ॥ ७६ ॥ तदनन्तर एकपत्नीव्रतधारी श्रीमान् विश्वानरमुनिने पत्नी शुचिष्मती प्रति कहा—"प्रिये ! वही होगा" ॥ ७७ ॥ इसप्रकारसे पत्नीको आश्वासन दे, वे मुनि तपस्याके लिये जहांपर साक्षात् काशीनाथ विश्वेश्वर स्थितहैं वहीं चले गये ॥७८॥ अनंतर वे शीघ्रही काशीमें पहुंच, मणिकर्णिकाको देखतेही, सैकडों जन्मके संचित त्रिविधतापसे मुक्त होगये ॥ ७९ ॥ विश्वेश्वर प्रभृति लिंगोंका दर्शनकर, सकलकुंड, वापी, कूप, और सरोवरोंमें नहाय ॥ ८० ॥ अशेष गणेश और देवियोंको प्रणाम कर, अघनाशक कालराज भैरवको सम्यक् प्रकारसे पूज ॥ ८१ ॥ दण्डपाणि आदि गणमुख्योंकी पयत्नपूर्वक स्तुति कर, आदिकेशव प्रमुख विष्णुमूर्तियोंको सन्तुष्ट कर ॥ ८२ ॥ लोलार्क इत्यादि सूर्य देवोंको वारंवार नमस्कार कर, निरालस्य हो संपूर्ण तीर्थोंमें पिंडदान कर ॥ ८३ ॥ भोजनादिद्वारा सहस्र सन्यासी और सहस्र ब्राह्मणों का तृप्तिसाधन कर, भक्तिपूर्वक महापूजोपचारसे समस्त शिवलिंगोंको पूज ॥ ८४ ॥ वारंवार चिन्ता करेनलगे कि, कौनलिंग शीघ्र सिद्धिप्रदहै ? जिसमें यह मेरी पुत्रकामनाकी तपस्या निश्चलताको प्राप्त होवे (अर्थात् किस लिंगके समीप तप करनेसें फिर दूसरे लिंगके पास न जानापडेगा)॥८५॥ श्रीमान् ओंकारेश्वर, कृत्तिवासेश्वर, कालेश, वृद्धकालेश्वर, कलशेश्वर ॥८६॥ केदारेश्वर, कामेश्वर, चन्द्रेश्वर, त्रिलोचन, ज्येष्ठेश, जंबुकेश, जैगीषव्येश ॥८७॥ दशाश्वमेधेश्वर, ईशानेश्वर, द्रुमिचंडेश्वर, दक्षेश, गरुडेश, गोकर्णेश्वर, गणेश्वर ॥८८॥ ढुंढिगणेश, आशागज गणेश, सिद्धिगणेश, धर्मेश्वर, तारकेश्वर, नन्दिकेश्वर, निवासेश्वर, पत्रीश्वर, प्रीतिकेश्वर, ॥ ८९ ॥ पर्वतेश्वर, पशुपतिनाथ, ब्रह्मेश्वर, मध्यमेश्वर, बृहस्पतीश्वर, तिलविभाण्डेश्वर, ॥ ९० ॥ मारभूतेश्वर, महालक्ष्मीश्वर, मरुत्तेश, मोक्षेश, गङ्गेश्वर, नर्मदेश्वर, ॥ ९१ ॥ मार्कण्डेश्वर, मणिकर्णीश, रत्नेश्वर, अथवा साधक सिद्धिप्रदयोगिनीपीठ, ॥ ९२ ॥ यमुनेश्वर, लांगलीश्वर, श्रीमान् विभु विश्वेश्वर, अविमुक्तेश्वर, विशालाक्षीश्वर ॥ ९३ ॥ व्याघ्रेश्वर, वराहेश, व्यासेश, वृषभध्वज, वरुणेश, विधीश, वशिष्ठेश्वर, शनैश्चरेश्वर ॥९४॥ सोमेश्वर, इन्द्रेश्वर, स्वर्लीनेश्वर, संगमेश्वर, हरिश्चन्द्रेश्वर, हरिकेशेश्वर ॥ ९५ ॥ त्रिसन्ध्येश्वर, महादेव, उपशान्ति शिव, भवानीश, कपर्दीश्वर, कन्दुकेश्वर, यज्ञेश्वर ॥ ९६ ॥ और मित्रावरुणेश्वर, इन सबलिंगोंमें शीघ्र पुत्रप्रद कौनहै ? परमबुद्धिमान्

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विश्वानर मुनि क्षणमात्र ऐसा विचारकर (कहनेलगे) ॥ ९७ ॥ ओः ! स्मर
हुआ मैं तो भूलही गयाथा, अब (इतनेदिनोंपर मेरा) मनोरथ सफल हुआ, सिद्ध
णसेवित सर्वसिद्धिकर्ता एक परम (उग्र) लिंगहै ॥ ९८ ॥ जिसके दर्शन–स्पर्श
मनमें वडा आनन्द प्राप्त होताहै, उसी लिंगके पूजनार्थ देवतागण इन्द्रकी आज्ञा से
सदैव स्वर्गद्वारको खुला रखतेहैं ॥ ९९ ॥ जहाँपर प्रसिद्धविकटादेवी, सिद्धिरूपसे
हुईहै और साक्षात् सिद्धिविनायक जहांके निवासी लोगोंके विघ्नोंको दू
सर्वसिद्धियोंको प्रदान करतेहैं ॥ १०० ॥ १ ॥ वही सर्वप्राणि
सिद्धिप्रद, पंचमुद्रामहापीठ, अविमुक्तमहाक्षेत्रमें परमासिद्धिक्षेत्रहै ॥ २
महागुह्यतम वीरेश्वर लिंग वहांहीपर विराजमानहै, (यद्यपि) काशीके किसी स्थ
एक तिलमात्रभी भूमि विनालिंगके नहींहैं ॥ ३ ॥ परन्तु वीरेश्वरके समान आशुफ
प्रद एवं सम्यक्प्रकारसे शीघ्र धर्म, अर्थ, काम और मोक्षका दाता दूसरा लिंग नह
॥ ४ ॥ काशीमें जैसा कि वीरेश्वर लिंगहै (वास्तवमें) वैसा अन्यालिंग (सि
प्रद) नहीं है यह निश्चितहै । पूर्वकालमें पंचस्वरनामक गंधर्व ॥ ५ ॥ सु
वियनामक विद्याधर, और वसुपूर्णनामा यक्षराज–ये सब इसी शिवके समीप पर
द्धिको प्राप्तहुएथे । पूर्वसमयहीमें अपने भक्तिभावसे नृत्य करतीहुई, कोकिला
नाम्नी, उत्तम अप्सरा सशरीर इसीस्थानपर लिंगमें लयहोगयीथी । पूर्वकालमें
शिरा नामक ऋषि शतरुद्रिय मन्त्रका जप करते करते ॥ ६ ॥ ७ ॥ इसी ज्यो
र्मय लिंगमें सशरीर प्रवेश करगये । चन्द्रमौलि और भरद्वाज नामक दोनों पर
॥ ८ ॥ वीरेश्वरका पूजन कर गान करते करते लीन होगये । सर्पराज शं
रात्रिकालमें अपने फनकी मणियोंसे ॥ ९ ॥ बहुबार आरती करताहुआ इसी स्थ
पर छमासमें सिद्धिको प्राप्त हुआ । यहांहीपर हंसपदी नामिका किन्नरी,
भर्ता वेणुप्रियके साथ ॥ ११० ॥ सुस्वर गान करतीहुई परममुक्तिपदको प्राप्त हुई
असंख्य सहस्र सहस्र सिद्धगणोंने इसीस्थानपर सिद्धिलाभ कियाहै ॥ १११
इसी कारणसे जगत्में वीरेश्वर परमसिद्धलिंग प्रसिद्धहै ॥ ११२ ॥
हवंशीय जयद्रथराजाने राज्यभ्रष्ट होजानेपर (इसी) वीरेश्वर लिंगकी आरा
कर शत्रुगणको मार निष्कंटक राज्य प्राप्तकिया ॥ ११३ ॥ मगधदेशाधिपति जितें
विदूरथ भूपाल, अपुत्रहोनेसे इसी वीरेश्वरके प्रसादसे पुत्रवान् हुआ ॥ ११४
वसुदत्त और रत्नदत्त नामक वणिक्ने एकवर्षपर्य्यंत इसीस्थानपर वीरेश्वरकी पू

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कर देवकन्याके तुल्य कन्यारत्नको पाया ॥ १५ ॥ मैंभी त्रिकाल वीरेश्वर लिंग-की पूजा कर पत्नीके अभिलाषानुरूप पुत्रको लाभ करूंगा ॥ १६ ॥ धैर्यगुणसम्पन्न सुकृती विश्वानर मुनिने निश्चयकर, चन्द्रकूपके जलसे नहाय, नियमोंको ग्रहण किया ॥ १७ ॥ एकमास पर्य्यन्त एकाहार, एकमास नक्तभोजन, एकमास, अयाचिताशन (विनामांगे प्राप्तभोजी) एकमास निराहार ॥ १८ ॥ एकमास दुग्धपान एकमास शाक—फल—भोजन, एकमास मुट्ठीभर तिलका आहार,एकमास केवल जलपान॥ १९॥ एकमास पंचगव्य भोजन, मासभर चान्द्रायणव्रत, एकमास कुशाग्रजलपान, और फिर मासपर्यन्त वायुभक्षणसे व्यतीत किया ॥ १२० ॥ इसके अनन्तर वे विश्वानर द्विज तेरहवें मासके प्रथमदिन प्रातःकाल गंगाजलमें स्नान कर ज्योंही वीरेशके समीप पहुँचे ॥ २१ ॥ त्योंही उस तपोधनने लिंगके बीचमें विभूतिसे भूषित आठवर्ष की अवस्थाके एक सुन्दर बालकको देखा कि ॥ २२ ॥ जिसके नेत्र कर्णपर्यन्त पूर्ण सुन्दर रक्तवर्ण ओष्ठाधर, रुचिर पिंगल जटासे मस्तक मण्डितहै, हँसता मुख, नग्नवेष ॥ २३ ॥ बालोचित भूषणोंको धारण किये, हुए वह मनोहर, वेदसूक्तों-को पढता और स्वेच्छापूर्वक हँसरहाहै ॥ २४ ॥ उस एतादृश बालकको देख हर्ष-के कारण रोमकंचुकित हो वे मुनि गद्गदस्वरसे वारंवार नमस्कार कर स्तुति करनेलगे ॥ २५ ॥ विश्वानर बोले—सत्य सत्य एक अद्वितीय ब्रह्मही सबहै, जगत्में अनेक (नाना) कुछभी नहीं है, (वेदमें ऐसाहै कि) एक रुद्रहीहैं, दूसरा नहीं; अतएव आपही एक अद्वितीय महेश्वर ब्रह्महैं; मैं आपका भजन करताहूं ॥ २६ ॥ हे शम्भो ! एक आपही समस्त (संसार) के कर्ताहैं, जैसे सूर्य्य एक होनेपरभी नानाजलमें प्रतिबिम्बित होकर अनेक प्रतीत होतेहैं, तद्वत् निराकार आप एकरूप होकरभी अनेक विध वस्तुओंमें नानारूपसे भासित होतेहैं,अतएव हे ईश ! आपके भिन्न अन्य किसीको भी मैं भजन नहीं करता ॥ २७ ॥ जिसप्रकारसे रज्जु, शुक्ति, और मरीचिकाका ज्ञान होजानेपर रज्जुसे सर्पभ्रम, शुक्तिसे रजतभ्रम, और मरीचिकासे जलराशिका भ्रम दूर होजाताहै, उसी भांतिसे जिसके जानलेनेपर यह ब्रह्मांड व्यापी जगत्का प्रपंचभ्रम अपगत होजाताहै, मैं उसी महेश्वर देवके शरणमें प्राप्त होताहूं ॥ २८ ॥ आपही जो जलमें शैत्य, अग्निमें दाहिकाशक्ति, सूर्य्यमें सन्ताप, चन्द्रमामें प्रसाद, (प्रसन्नता) पुष्पमें गन्ध, और दुग्धके मध्यमें घृत हैं; उसी आपको मैं भेजता हूं ॥ ॥ १२९ ॥ आप कर्णसे रहित हैं, पर शब्दोंको सुनतेहैं, आपको नासिका नहीं है,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तथापि सूंघलेते हैं; आप चरणहीनहैं, पर दूरसे आगमन करते हैं, यद्यपि आपको जो नहीं है, तथापि (सब कुछ) देखते हैं, आपको जिह्वा नहीं है, किन्तु सब कु ज्ञाताहैं, अतएव आपको संपूर्ण रूपसे कौन जानसकताहै ? मैं आपका शरणागतहूं ॥

"बिन पग चले सुनै बिनु काना, बिनुकर कर्म करै विधिनाना ।
आनन रहित सकल रस भोगी, बडज्ञानी वक्ता बड जोगी ॥ तु.रा."

हे ईश ! वेदभी आपको साक्षात् संबन्धसे (यथार्थरूपसे) नहीं जानता, न वि न अखिल (लोकके) विधाता ब्रह्मा, न योगीन्द्रगण और न इन्द्रादि देवताग आपको जानतेहैं, केवल भक्तही जानतेहैं,—अतएव आपके शरणहूं ॥३१॥ हे यद्यपि आपका गोत्र नहीं, जन्म नहीं, नाम नहीं, रूप नहीं, शील नहीं, और दे नहींहै, तथापि आप त्रैलोक्यके ईश्वर और लोगोंके सर्वविध कामनाओंके पू अतएव आपके शरणजाताहूं ॥ ३२ ॥ हे स्मरारे ! आपहीसे सबकुछ (उत्प हुआहै, और आपही सबहैं; आप गौरीशहैं, आप नशहैं, और आप परमशा आपही वृद्ध युवा एवं बालकहैं, (अधिक क्या कहूं) जो आप नहींहै ऐसा औ है ? अतएव आपको प्रणाम करताहूं ॥ ३३ ॥ ज्योंही उस विप्र विश्वानरने, अ हृष्टचित्तसे इसरीतिपर स्तुति कर भूतलमें दण्डवत्प्रणाम किया, त्योंही समस्त वृ वृद्ध वह बालक बोला—"हे ब्राह्मण ! वरकी प्रार्थना करो" ॥ ३४ ॥ तद कुशल विश्वानर मुनिने प्रसन्न अन्तःकरणहो, उठकर उत्तर दिया;—प्रभो ! आप ज्ञहैं, (भला) आपको क्या अविदितहै ? ॥ ३५ ॥ भगवन् ! आप सर्वान्त सर्वस्वरूप और सर्वाभीष्टके दाताहैं, आप ईश्वरहैं, मुझे दैन्यकारिणी याञ्चाके क्यों नियुक्त करते हैं ? ॥ ३६ ॥ बालरूपी उस देवदेवने पवित्र पुण्य (पु व्रती विश्वानरका यह वचन सुन पवित्र हास्य कर तुरंत प्रत्युत्तर दिया ॥ ३ बालक बोला—"हे पवित्र ! तुमने शुचिष्मतीके प्रति जो अभिलाष हृदयमें कि थोडेही दिनोंमें वह निस्सन्देह पूर्ण होगा ॥ ३८ ॥ हे महामते ! मैं शुचिष्म गर्भमें सर्वदेवप्रिय पवित्र और गृहपति नामसे प्रसिद्ध होनेवाले तुम्हारे पुत्ररूपसे होऊंगा ॥ ३९ ॥ तुमारा कहा हुआ यह पवित्र अभिलाषाष्टक स्तोत्र वर्षप शिवके समीप त्रिकाल पाठ करनेसे सर्वकामनाओंको पूर्ण करताहै ॥ १४ इस स्तोत्रका पाठ पुत्र, पौत्र, धनका दाता, समस्त शान्तियोंका कर्ता, अखिल त्तियोंका हर्ता ॥ ४१ ॥ स्वर्ग और मोक्षसंपत्तियोंका विधाता है, इसमें सन्देह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जो पुत्रहीन नर एकवर्षलों प्रातःकाल सोक्य उठते स्वच्छतासे नहाय, शिवलिंगकी पूजा कर इस स्तुतिको पढे वह पुत्रवान् होवे । वैशाख, कार्तिक, और माघमासमें विशेष नियम धारणकर ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ जो स्नानके समय इस स्तोत्रको पढे उसे समस्त फल प्राप्त होवे । मैं अव्यय (निर्गुण) होकरभी (इसी) कार्तिकमासके प्रसादसे ॥ ४४ ॥ तुम्हारे पुत्रत्वको प्राप्त होऊंगा; और दूसरा जो कोई इसे पढेगा (उसेभी पुत्र होगा) यह अभिलाषाष्टक जोई हो उसेही न देना चाहिए ॥ ४५ ॥ प्रयत्नपूर्वक इसे गुप्तही रखना उचितहै; इस स्तुतिके पाठकरनेसे महावन्ध्याओंकोभी सन्तान उत्पन्न होताहै; स्त्रीहो अथवा पुरुषहो एकवर्ष पर्य्यन्त नियमपूर्वक लिंगके समीप ॥ ४६ ॥ इस स्तोत्रका पाठ करे, तो निश्चयही उसे पुत्र होवे । यह कहकर वह बालक (उसीलिंगमें) अन्तर्धान होगया, और वे ब्राह्मण (विश्वानरमुनि) भी गृहको चले गये ॥ १४७ ॥

इन्द्रपुरी अमरावती, वरनी प्रथम विशेष ।
पावककी ज्योतिष्मती, कही सविस्तर देख ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषाटीकायां अमरावती—ज्योतिष्मतीवर्णनं नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

एकादश अध्याय ।

अग्निकी उत्पत्ति ।

अगस्त्य बोले—हे सुभगे सुश्रोणि ! पुण्यशील और सुशीलने शिवशर्माके प्रति वैश्वानरकी उत्पत्ति कथा जैसे कही उसे सुनो ॥ १ ॥ अनन्तर यथासमय यथाविधि गर्भाधान कर्म सम्पादित हुआ विश्वानरकी स्त्री शुचिष्मती गर्भवती हुई ॥ २ ॥ पश्चात् पण्डित विश्वानरने गर्भस्फुरणके पूर्वही (प्रायः तीसरे—मासमें) पुंस्त्ववृद्धिकेलिये गृह्योक्तविधिके अनुसार सम्यक् प्रकारसे पुंसवन क्रियाको सुसंपन्न-किया ॥ ३ ॥ फिर उस क्रियाकुशल विश्वानरने सुखपूर्वक प्रसव होने और गर्भस्थ बालकके रूप समृद्धयर्थ अष्टममासमें सीमन्तोन्नयन कर्म संपादन किया ॥ ४ ॥ तदनन्तर उत्तम नक्षत्र, केन्द्रस्थ बृहस्पति, सर्वशुभग्रह पंचम नवम इत्यादि विषम (अयुग्म) स्थान स्थित और शुभलग्न; ऐसी वेलामें विश्वानरकी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पत्नी शुचिष्मतीके गर्भसे सब अरिष्टोंका नाशक, चन्द्रसमान सुन्दरमुख पुत्र उत्पन्न हुआ, उसके भूमिष्ठ होतेही उसीकी प्रभासे सूतिकागृह (सौरी) होगया ॥ ५ ॥ ६ ॥ उसीक्षण भूमी भुव और स्वर्गके निवासी लोगोंको सुख प्राप्तहुआ, दिग्वधुओंके मुखोंको सुवासित करनेवाले सुगन्धसे परिपूर्ण बहनेलगे ॥ ७ ॥ मेघमण्डलने सुगंधित पुष्पोंकी वृष्टि की देवतोंका दुन्दुभी बजनेलगा, दिशायें सर्वतोरूपसे प्रसन्न होगईं ॥ ८ ॥ समस्त नदियां चित्तके साथ २ निर्मल होगयीं, तमोगुण अज्ञानरूप अंधकार विनष्ट हुआ रजोगुणकी धूलिराशिभी विलीन होगयी ॥ ९ ॥ जीव (प्राणि) और वीर्यसे युक्तहोचले, पृथिवीभी उस घडी मंगलमयी होगई, सब प्रीतिवर्द्धिनी कल्याणी वाणी सर्वत्र कहीगयीं ॥ १० ॥ तिलोत्तमा, उर्वशी प्रभा, वित्प्रभा , शुभा, सुमंगला, शुभालापा, और सुशीला आदि अप्सरायें प्रसृत मुक्ताफलोंसे परिपूर्ण, कर्पूर, अगुरु कस्तूरी और कक्कोलके कर्दम ॥ १२ ॥ हीरा–वैदूर्यके दीपोंसे समन्वित, हरिद्रासे अनुलिप्त, मरकतमणि के समान, शंख, शुक्ति दधिसे पूरित ॥ १३ ॥ पद्मराग, प्रवाल, गोमेद, इन्द्रनील और रत्नकुंकुम प्रभृति मणिमालासे भूषित, कणत्कंकणमें हाथमें लेलेकर वहांपर उपस्थित हुईं ॥ १४ ॥ सहस्रशः विद्याधरी, किन्नरी देवाङ्गनायें चामर ढुलाती ढुलाती मांगलिक द्रव्योंको हाथमें लिएहुए वहां ॥ १५ ॥ सुन्दर स्वरसंपन्ना गंधर्व, नाग और यक्षोंकी अनेक सुवासिनियां लित गीत गातीहुई वहांपर आकर उपस्थित हुईं ॥ १६ ॥ मरीचि; अत्रि, पुलस्त्य, क्रतु, अंगिरा, वसिष्ठ, कश्यप, मैं (अर्थात् अगस्त्य) विभाण्डक, ॥ १७ ॥ लोमश, लोमचरण, भरद्वाज, गौतम, भृगु, गालव, गर्ग, जा पराशर ॥ १८ ॥ आपस्तम्ब, याज्ञवल्क्य, दक्ष, वाल्मीकि, मुद्गल, लिखित, शिलाद, शंख, उंछभुक् ॥ १९ ॥ जमदग्नि, संवर्त, मतंग, अंशुमान्, व्यास, कात्यायन, कुत्स, शौनक, सुश्रुत, शुक ॥ २० ॥ दुर्वासा, रुचि, नारद, तुंबुरु, उत्तंक, वामदेव, च्यवन, सित, देवल, ॥ शालंकायन, हारीति, विश्वामित्र, भार्गव, पुत्र (मार्कण्डेय) के सहित दाल्भ्य, उद्दालक ॥ २२ ॥ धौम्य, उपमन्यु, वत्स प्रभृति मुनिसमाज मुनिकन्यागण उस (बालक) के शान्त्यर्थ धन्य (तम) विश्वानरमुनिके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

आपहुँचे ॥ २३ ॥ बृहस्पतिके सहित ब्रह्मा, देवश्रेष्ठ गरुडध्वज (विष्णु) और नन्दी भृङ्गीसे युक्त गौरीके साथ वृषभध्वज (महादेव) ॥ २४ ॥ इन्द्रप्रभृति देवतागण और पातालवासी नागगण एवं नदियोंके सहित समस्तसमुद्रगण, बहुतसे रत्नोंको लेकर ॥ २५ ॥ तथा सहस्र सहस्र स्थावर पर्वतादि जंगमरूप धारण कर उस महामहोत्सवमें आकर उपस्थितहुए, उसवेला वहांपर (मानो) अकालचन्द्रिका फैलगयी ॥ २६ ॥ पितामह देवने स्वयं उस लडकेका जातकर्म किया, फिर जातकर्मकी प्रतिपादिका श्रुतिको विचारकर "इस बालकका नाम गृहपति" ॥ २७ ॥ ऐसा देनेयोग्य नाम इग्यारहवें दिन नामकर्मकी रीतिसे तदर्थ वेदमन्त्रोंका उच्चारण करतेहुए उस (बालक) को दिया ॥ २८ ॥ वे वेदमन्त्र- "अयमग्निर्गृहपतिः" ॥ २९ ॥ और दूसरी शाखाके "अग्नेगृहपते" इत्यादि चतुर्वेदोक्त मन्त्रों और आशीर्वादोंसे अभिनन्दन कर ॥ ३० ॥ सब लोगोंके पितामह ब्रह्मा बालकके उचित रक्षाकार्य करदेनेपर हरि और हरके सहित हंसपर आरोहणकर वहांसे चलेगये ॥ ३१ ॥ अहो ! उस बालकका कैसा रूप ? कैसा तेज? और कैसा सर्वाङ्गलक्षणहै ? अहो शुचिष्मतीका कैसा भाग्यहै ? कि स्वयं महेश्वर आविर्भूत हुए ! ॥ ३२ ॥ अथवा शिवभक्तजनोंके निकट यह कौन विचित्र बातहै जो स्वयं शिव प्रकटहुए ? क्योंकि शिवभक्त तो स्वयं रुद्रही हैं ॥ ३३ ॥ रोमाञ्चित शरीरहो परस्पर इसीप्रकार बडी बडाई करतेहुए वे सब लोग विश्वानरमुनिसे मिलकर (विदाहो) यथास्थानको चलेगये ॥ ३४ ॥ गृहस्थाश्रमवासी लोग इसी- कारणसे पुत्रकी कामना करतेहैं (जैसे कि) यह सनातन श्रुतिहै—"पुत्रके द्वारा सकल लोकोंका जयहोताहै ॥ ३५ ॥ पुत्रसे शून्यव्यक्तिका गृह शून्यहै, पुत्रहीनका उपार्जन करना वृथाहै, अपुत्रका वंश नहीं है, पुत्ररहितकी अपेक्षा और कुछ अपवित्र नहींहै ॥ ३६ ॥ पुत्रलाभसे अधिक परमसुखकर वस्तु दूसरी नहींहै, और इसलोक एवं परलोकमें पुत्रकी अपेक्षा परममित्रभी कोई नहीं है, ॥ ३७ ॥ औरस, क्षेत्रज, क्रीत, दत्तक, स्वयं प्राप्त पुत्रिका पुत्र (दौहित्रनाती) और विपन्नक्षित, येही सातप्रकारके पुत्र यहांपर कहेगये हैं ॥ ३८ ॥ पण्डित (समझदार) गृहस्थ इन सप्तविध पुत्रके मध्यसे कोईभी पुत्र सम्पादन करे, इनमें प्रत्येक पूर्वपुत्र यथाक्रम श्रेष्ठ और उत्तरोत्तर निकृष्टहै ॥ ३९ ॥ गर्गोंने कहा—पिता विश्वनरने चतुर्थमासमें गृहसे इस पुत्रका निष्क्रमणकर्म किया, छठवेंमासमें अन्नप्राशन और प्रथमही वर्षमें चूडाकरणभी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

करदिया ॥ ४० ॥ इसके पीछे उस कर्मविज्ञने श्रवणनक्षत्रमें कर्णवेध ब्रह्मतेजकी वृद्धिकेलिये पांचवें वर्षमें यज्ञोपवीत किया ॥ ४१ ॥ तदनन्तर विश्वानरने उपाकर्मनामक श्रावणी क्रियाके पश्चात् वेदोंको पढाया, तीन वर्षमें अंग, पद, क्रमके सहित चारों वेद ॥ ४२ ॥ और समस्त विद्याओंको उस बालकने विनयादिगुणोंको प्रकट करतेहुए साक्षिमात्रगुरुके मुखसे ग्रहण किया ॥ तत्त्वज्ञानी स्वेच्छाचारी देवर्षि नारदने विश्वानरके पुत्र गृहपतिको नवमवर्षकी में मातापिताके शुश्रूषणमें तत्पर देख ॥ ४४ ॥ विश्वानरमुनिके आश्रममें हो उनके दियेहुए अर्घ्य आसन आदिको क्रमानुसार वहां स्वीकार कर, किया ॥ ४५ ॥ नारदमुनि कहने लगे हे महामाग ! विश्वानर ! हे शुभव्रते यह गृहपति बालक तुम दोनोंकी आज्ञाका पालन करताहै ॥ ४६ ॥ माता वचनके व्यतीत पुत्रको और अन्यतीर्थ नहीं है, देवता नहीं है, गुरु नहीं है, नहीं है और अन्य धर्म भी नहीं है, ॥ ४७ ॥ त्रिभुवनमें पुत्रकेलिये माता अधिक और कुछभी नहीं है, गर्भमें धारण और पोषण करनेके कारण माता भी बडी है ॥ ४८ ॥ जननीके चरणोदकसे अपना शरीर अभिषिक्त करनेसे पुण्यजलस्नानसेभी अधिक पवित्रता प्राप्त होतीहै ॥ ४९ ॥ समस्तकर्मोंका संन्यासी पितासेभी वन्दनीयहै, परन्तु सर्ववन्द्य होनेपरभी यतिको माताकी प्रयत्नपूर्वक करनी चाहिये ॥ ५० ॥ मातापिताका परितोष करनाही अत्युत्तम परमव्रत, और सर्वोत्कृष्ट धर्महै ॥ ५१ ॥ मुखाकारहीसे विनीत यह बालक तुम दोनोंका जैसा संमान करताहै दूसरा नीच बालक वैसा न करेगा, यह भाँतिसे समझताहूं ॥ ५२ ॥ हे वैश्वानर ! आओ, मेरे गोदमें बैठो तो लक्षणोंकी परीक्षा करूंगा, दहिना हाथ तो दिखलाओ ॥ ५३ ॥ देवर्षि कहनेपर वह श्रीमान् बालक, मातापिताकी आज्ञा पाय, भक्तिपूर्वक नम्रहोकर ॥ ५४ ॥ अनंतर महामुनि नारदने इसके समस्त अंग तालु, जिह्वा और भी देखकर, फिर कुंकुमसे रंजित (रँगागया) त्रिगुणकिये हुए सूत्र (डोरे) लाकर ॥ ५५ ॥ महादेव पार्वती और गणेश्वरको स्मरणकर मुनिवरने खडे (खड) उस डोरेसे बालकका पादसे मस्तक पर्य्यंत नापकिया ॥ (फिर उनने कहा) हे द्विज ! जो बालक दोनों हाथ फैलाकर ऊंचाईमें समान एकसौ आठ अंगुलका होवे वह लोकपाल होवे जैसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पुत्रहै ॥ ५७ ॥ जिसके पांच स्थान छोटे, पांच बडे, सात रक्त, छः उन्नत (ऊंचे) तीन भारी, तीन हलके (लघु ह्रस्व) तीन गहिरे, होवें वह पुरुष बत्तीसों लक्षणसे पूर्ण होताहै ॥ ५८ ॥ तुम्हारे इस दीर्घायु पुत्रके दोनोंभुजा, दोनोंनेत्र हनु (दाढी) जानु और नासिका ये पांचो अंग जैसे दीर्घ (लम्बे) हैं वेही प्रशंशनीयहैं ॥ ५९ ॥ ग्रीवा, जंघा, और लिंग ये तीनों इसके ह्रस्व, (छोटे—नाटेहैं) स्वर अन्तःकरण और नाभि इसके इन तीनोंके गंभीर (गहिरे) होनेसे यह बालक शुभलक्षणहै ॥६०॥ त्वचा, केश, अंगुलि, दंत, अंगुलियोंके पर्व (पोर) ये पांचो इसके ऐसे सूक्ष्म (छोटे महीन) हैं, जैसेकि दिक्पाल पदभागीके होवें ॥६१॥ इस बालकके वक्ष, उदर, ललाट, स्कन्ध, हस्त, और मुख, ये छहो स्थान ऐसे ऊंचेहैं जिससे यह बडा ऐश्वर्य्य शाली होवे॥६२॥दोनों हाथोंकी हथेली, दोनों आँखोंके कौने, तालु, जीभ, नीचेका ओठ, और नख, इन सातोंके रक्तवर्ण (लालरंग) होनेसे राज्यसुखलाभ प्राप्तहै ॥ ६३ ॥ इस लडकेका ललाट (माथा) कटि (कमर) और वक्षःस्थल (छाती) ये तीनों ऐसे विस्तीर्णहैं, जिनके द्वारा यह अवश्य सर्वतेजोऽतीत ऐश्वर्य्यको प्राप्त होगा अन्यथा नहीं होगा ॥ ६४ ॥ इस शिशुके विना कामकाज कियेही कछुएकी पीठ ऐसे कठोर (कडे) दोनोंहाथ, और मार्गाविषयक (परिभ्रमणमें) अतिकोमल चरणद्वय, राज्यलाभके हेतु है ॥ ६५ ॥ जिसके होनेसे दीर्घायु होताहै, इस बालककोभी वही पूरी (पुरी) तर्जनीकी जडसे लेकर कनिष्ठा अंगुलीके पृष्ठमणितक चलीगयी रेखा देखाई पडतीहै ॥ ६६ ॥ अतिमांसल, रक्ततल सम (सूधें) अतिस्थूल (मोटे) नहीं, सुन्दर, समानघुटिकावाले, स्वेदसे रहित, और चिकने, इसके दोनों चरणभी ऐश्वर्य्य सूचकहैं ॥ ६७ ॥ (तुम्हारा यह लडका) आरक्त (लाल) और स्वल्प (थोडी) हस्तरेखाओंके द्वारा सदा सुखी होगा, और कृश एवं ह्रस्व (पतला और छोटा) लिंग होनेसे राजराज होवेगा ॥ ६८ ॥ इसके गुल्फ (एडी) और कटिके मांसपिण्ड ऊँचे आसनके योग्यहैं, और इसकी नाभिभी गोल दक्षिणावर्त और रक्त-वर्णहै, ये सबभी महत् ऐश्वर्य्यको सूचित करतेहैं ॥ ६९ ॥ यदि इस बालककी मूत्रधारा दहिनीओर जावे और वीर्य्यमें मछली और मधु (सहत) का गंध होवे तो यह नरपाल होवेगा ॥ ७० ॥ इसके विस्तीर्ण, मांसल, स्निग्ध (चिकने) दोनों कटिप्रोथ सुखसूचकहैं, और सुन्दरगठन, आजानुलम्बित भुजयुगल, दिक्पालके योग्यहैं ॥ ७१ ॥ श्रीवत्स, (एकमणि) वज्र, चक्र, कमल, मत्स्य, धनुष और

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दण्ड, इन सबके चिह्नसे इसकी हस्तरेखा ऐसी संपन्नहै जिनसे यह बालक
(स्वर्ग) का अधिपति होवे ॥ ७२ ॥ इसके बत्तीस दन्त, और हस्तीके
सदृश सुवलित एवं शंखकीनाईं तीन रेखाओंसे अंकित ग्रीवा, तथा क्रौंच दुंदुभि
हंसमेघके तुल्य स्वर—इन सबलक्षणोंसे निश्चयहै कि, यह लडका समस्त राजा
जोंमें विशेष होगा ॥ ७३ ॥ इसके नेत्र मधु (सहत) के सदृश पिंगल (
पीलारंग) वर्ण है, इसे लक्ष्मी कभी परित्याग नहीं करेगी, और इसका ललाट
रेखाओंसे अंकितहै एवं उदरभी सिंहके उदर समानहै इन सबसे यह बालक
शुभलक्षणहै ॥ ७४ ॥ इसके पादतलमें ऊर्द्ध्व रेखाहै और श्वास लेनेमें पद्मका
आताहै, एवं सब अंगुलियोंको मिलाकर हाथ फैलाने (पसारने) पर कहींभी
नहीं पडता, और नखभी सुन्दरहैं, यह बालक तो सभी उत्कृष्ट महालक्षणोंसे
॥ ७५ ॥ परन्तु सर्वगुणोंसे पूर्ण और समस्त लक्षणोंसे लक्षित होनेपरभी
कलाओंसे पारिपूर्ण चन्द्रमाके सदृश इस बालकको विधाता स्यात (हो न हो)
करें ॥ ७६ ॥ अतएव सब प्रकारसे प्रयत्नपूर्वक यह बालक रक्षणीयहै,
विधाताके वक्र (टेढे) होजानेपर गुणभी दोषताको प्राप्त होजाताहै ॥ ७७ ॥
लडकेको बारहवें वर्षमें वैद्युत अग्निके द्वारा विघ्न पडनेकी मुझे शंकाहै, ऐसा
बुद्धिमान् नारदमुनि यथागत चलेगये ॥ ७८ ॥ पत्नीके सहित विश्वानर मुनिने
षिका यह वचन सुन उसीघडी दारुण वज्रपातका दुःख मानलिया ॥
विश्वानर "हा हतोऽस्मि" कहतेहुए छाती पीटने लगे, और (भावी) पुत्र
व्याकुल होकर बडी मूर्छाको प्राप्तहुए ॥ ८० ॥ शुचिष्मतीभी अत्यन्त
इन्द्रियोंसे दुःखार्त होकर हाय ! हाय ! करतीहुई आर्तस्वरसे अतीव दुःसह रोद
लगी ॥ ८१ ॥ हा शिशो ! हा गुणनिधे ! हा पिताके आज्ञापालक ! हाय ! मुझसी
नीके जठरमें तुम क्यों आये ॥ ८२ ॥ हे बेटा ! मुझे तुम्ही एकमात्र पुत्रहो; तुम्हारे
तरङ्गोंसे भरेहुए शोकसागरमें निपतित (गिरी) मुझको तुम्हारे बिना दूसरा
रक्षा करेगा ॥ ८३ ॥ हा बाल ! (हाय बच्चे) हा सुपवित्र ! हा कमलसम
(विस्तृत) नयन ! हा लोकलोचनरूपी चकोरके चन्द्र ! हा तात ! हा
नेत्ररूपी कमलके सूर्य ! हा माताके (मेरे) सहस्रों उत्सव सुखके एकमात्र
॥ ८४ ॥ हा पूर्ण चंद्रमुख ! हा कोमल नख अंगुलिवाले ! प्रियवचन सुधाम
अहह बच्चा गृहपते ! मैंने कितने दुःख उठाकर तुमको पाया और तुमारे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

क्या क्या नहीं किया ? ॥ ८५ ॥ हाय बेटा—तुमारे हेतु किन किन देवतोंकी पूजा नहीं की, किन किन तीर्थोंमें वास नहीं किया, अरे पुण्यमात्रसेलभ्य बच्चे ! तुम्हारेलिये कौन नियम, औषध, मंत्र और यंत्रोंकी साधना नहीं की ॥ ८६ ॥ अरे संसारसागरके नौकारूप पुत्र ! दुःखके भारको हरण करो, हे सुखसमुद्र ! (अपना) मुखचंद्र दिखलाओ, बेटा ! तुम्ही हम लोगोंके पुन्नाम—नरकरूपी समुद्रके सोखनेवाले वडवानलहो, अपने वचनरूप अमृतसेचनेसे निजपिताको जिलावो ॥ ८७ ॥ हाय ! इस भावी अमंगलको जानकरभी क्यों सब देवगण तुम्हारे जन्ममहोत्सवमें एकसाथ मिले ? और फिर क्यों एकही स्थानमें सकल गुण, शील, कलाकलाप, सौन्दर्य और सुलक्षणोंकी परीक्षा कर परमहर्षित हुए ? ॥ ८८ ॥ हे शम्भो ! महेश ! करुणाकर ! शूलपाणे ! आपको वेदज्ञानी लोग मृत्युञ्जय कहतेहैं, (तब) आपके दियेहुए बालक पुत्रको यदि कालका घात होवे तो कहो संसारमें किसका निपात न होवेगा ॥ ८९ ॥ हाय ! हाय ! हे विधाता ! आपने बडे प्रयत्नसे उस संसारके तापहारी बालकको अगाध मध्य, उत्तम रत्नसार, प्रबल विशाल गुणसागर (और मेरा समीपवर्ती) क्यों निर्माण किया ? ॥ ९० ॥ हे काल ! क्या तुम्हारी रानी पुत्रवती नहीं है ? अथवा उसके पुत्रवती होनेपरभी पुत्रका मुखचंद्र तुम्हारी कालता (अंधकार—नाशकत्व) को नहीं दूर करसकता, नहीं तो हे वज्रसमनिष्ठुर ! कमलदण्डके सदृश अतिकोमलांग बालकपर कठोर कुठारतुल्य दंष्ट्राघात क्यों करते ? ॥ ९१ ॥ शुचिष्मतीने अनेकबार इसीप्रकारसे विलाप किया, उसके नेत्राश्रुकी धारासे सैकडों नदियाँ निकलकर उत्ताल तरंगसे पूर्ण होगयीं; अहो इसके अनन्तर वह अतिगर्म्म और दीर्घ निःश्वास परित्याग करती करती सूखने लगी ॥ ९२ ॥ उसके उस करुणाविलापको सुन (मानो) तरुलतागणभी वायुके कंपन छलसे वारंवार शिर हिलातेहुए एवं पुष्परूप अश्रुबिन्दुओंको गिराते हुए पक्षिओंके कूजनस्वरूप-आर्तस्वरसे प्रायः रुदन करनेलगे ॥ ९३ ॥ शुचिष्मती इतना अधिक मुक्तकंठहो (गलाफाड) आर्तस्वरसे रोयी कि पर्वतकी कन्दरायेंहैं मुखरूप जिनकी ऐसी समस्त दिशायेंभी पशुपक्षियोंके आवागमनसे शून्य हो, (मानो) उसके दुःखसे कातर बनकर प्रतिध्वनिके छलसे उसके साथ उच्चस्वरसे रोदन करनेलगीं ॥ ९४ ॥ विश्वानर मुनिभी वह आर्तविलाप सुन, मूर्छाको छोड "यह क्या यह क्या" मेरा बहिस्थप्राण, अन्तरात्माका स्थान, सकलइन्द्रियोंका स्वामी, गृहपति कहांहै ? उच्चस्वरसे ऐसा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कहतेहुए उठबैठे ॥ ९५ ॥ अगस्त्यऋषिने कहा—इसके पश्चात् गृहपतिने मा
पिताको अत्यन्त शोकाकुल देख कुछ मुस्कुरायकर कहा, हे मातः ! इतना भय अ
लोगोंको कहांसे होगया ? ॥ ९६ ॥ आपलोगोंके चरणधूलिरूप कवचको धारण क
लेनेपर मुझे साक्षात् कालभी क्योंनहो नहीं मारसकता, अतिक्षुद्र (बेचारी,
बिजुरीकी क्या बातहै ॥ ९७ ॥ आप दोनोंजन मेरी प्रतिज्ञा सुनलेवें,—यदि मैं अ
लोगोंका पुत्रहूं तो सर्वज्ञाता सज्जनोंके सर्वाभीष्टदाता, कालकूटनामक महाविष
भोक्ता, कालकेभी काल, महाकाल मृत्युञ्जयकी आराधना कर ऐसा कर्म करूंगा कि
विद्युतभी मुझसे डरने लगेगी ॥ ९८–९९ ॥ वृद्ध द्विजदंपती, अकालकी अमृतवृष्टि
के तुल्य पुत्रका वचन सुन, संतापसे शान्तहोकर उससमय कहने लगे ॥ १०० ॥
यह विनामेघकी वर्षा, विना क्षीरसमुद्रके अमृतकी उत्पत्ति (निकलना) और वि
चन्द्रमाके कौमुदीकान्ति, कहांसे हमलोगोंको अत्यन्त सुखानुभवी बना रहे
॥ १ ॥ "क्याकहा, क्याकहा, फिरकहो फिरकहो" क्या कालभी नहीं
सकता अतिक्षुद्र विद्युत्की क्या बातहै ? ॥ २ ॥ (सचमुच) हमलोगोंके तापना
नार्थ यह देवदेव मृत्युञ्जयकी आराधनारूप बडाभारी उपाय तुमने बतलाया ॥ ३ ॥
बेटा ! तो फिर मनोरथपथसे अतीत फलदाता, कालविनाशी, महादेवहीके शरणजाने
इससे बढकर हितकर दूसरा कुछभी नहीं है ॥ ४ ॥ हे तात ! पूर्वकालमें त्रिपुरा
कालपाशमें बद्ध श्वेतकेतुकी जिसरूपसे रक्षाकीथी, क्या तुमने नहीं सुनाहै ? ॥ ५ ॥
आठवर्षकी अवस्थाके बालक मृत्युग्रस्त शिलाद मुनिके पुत्रको भगवान् शि
रक्षितकर जगदानंदी नन्दीको अपना पारिषद बनालिया ॥ ६ ॥ क्षीरसमुद्रके मथन
उत्पन्न प्रलयाग्निके सदृश घोर हालाहल (महा) विषको पानकर उनने त्रिभुवन
बचालिया ॥ ७ ॥ त्रैलोक्यकी सम्पत्तिके हर्ता महाभिमानी जालं
नामक असुरको जिनने चरणांगुष्ठकी रेखासे उत्पन्न चक्रके द्वारा काटडाल
॥ ८ ॥ (फिर) जिस धूर्जटीदेवने विष्णुको बाणरूप बनाकर उसी एक बा
गिरनेसे उठेहुए अग्निकेद्वारा पूर्वयुगमें त्रिपुरको दग्ध करादिया ॥ ९ ॥ त्रैलोक्यल
ऐश्वर्य्यमदसे मूढ अंधक नाम दैत्यको जो त्रिशूलके अग्रभागमें प्रोत (हो
कर दश सहस्रवर्ष पर्य्यंत सूर्यके घाममें सुखलाते रहे प्रोत ॥ १० ॥
जिसने त्रैलोक्य विजयसे दर्पित कन्दर्प (काम) देवको ब्रह्मादि देवगणके देखते
केवल दृष्टिपातहीसे अनंग करदिया ॥ ११ ॥ हे पुत्र ! ब्रह्मादिकेभी एकमात्र वि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मेघवाहन, अच्युत और संसार रक्षणके महामणि उसी शिवके शरणापन्नहो ॥ १२ ॥ गृहपति मातापिताकी इस आज्ञाको पाकर, उन दोनोंके चरणोंपर प्रणाम कर, फिर उनकी प्रदक्षिणा करके और बहुत आश्वासन दे बाहर हुए ॥ १३ ॥ ब्रह्मा और नारायणादिक देवतोंकोभी दुर्लभ, प्राकृत प्रलयसंभूत सन्तापसे विश्वेश्वर जिसकी रक्षा कियाकरते हैं ॥ १४ ॥ फिर विचित्र गुणोंसे सम्पन्न हिमहारके समान स्वेतवर्णा गंगा हारलताके सदृश जिसके कण्ठदेशमें शोभायमानहैं ॥१५॥ जो संसारके बडे सन्तापसे क्लेशित जनोंके पुनर्जन्मको वरणानदीके द्वारा निवारण करतीहुई, असि (नदी) की धारासे छेदन करतीहै ॥ १६ ॥ अतिदृढ अष्टाङ्गयोगके द्वारा जो मुक्ति प्राप्त होतीहै उसे स्पष्टरूपसे प्रकटकरदेनेवाली तिसका काशी ऐसा नाम पंडितलोग कहतेहैं ॥ १७ ॥ उसी काशीमें प्राप्त होकर वह गृहपति संसारके दुःखोंसे संतप्त, कर्णपर्य्यन्त फैलेहुए नेत्रोंसे दर्शन करता करता प्रथमही मणिकर्णिकापर जापहुँचा ॥ १८ ॥ उसने वहाँपर यथाविधि स्नानकर, त्रैलोक्यमात्रके प्राणियोंके त्राणकर्ता, विभु विश्वेश्वरका दर्शन कर प्रणाम किया ॥ १९ ॥ गृहपति उस लिंगको देखदेखकर हृदयमें बहुतही संतुष्ट हुआ—उसने निश्चयकिया कि, यही प्रकट परमानन्दके मूल हैं ॥ १२० ॥ सचराचर त्रिभुवनमें मेरी अपेक्षा दूसरा कोईभी धन्य नहींहै, कारण यह जो कि मैंने आज विभु विश्वनाथका दर्शनकर पाया ॥ २१ ॥ निश्चयही यह त्रैलोक्यका सार सर्वस्व पिंडरूपसे शोभायमानहै ? अथवा क्षीरसागरसे उत्पन्न (निकलाहुआ) यह अमृतपिण्डहै ? ॥ २२ ॥ क्या यह आत्मज्ञानकी ज्योतिका प्रथम अंकुरहै ? अथवा ब्रह्मानन्दका उत्तम कन्द (मूल—जड) है ? कि ब्रह्मरसायन है ? ॥ २३ ॥ योगिजनके हृदयकमलमें स्थित जो आनन्दरूप निराकार ब्रह्म कहाजाता है क्या वही (तो नहीं) लिंगरूपके छलसे साक्षात्कारको प्राप्त होगयाहै ॥२४॥ अथवा यह क्या ब्रह्माण्डका आधारस्वरूप अनेकविध रत्नसमूहोंसे पूर्णभांड (पात्र) है ? किंवा यह लिंग मोक्षवृक्षका फलहै, ? इसविषयमें कुछसंदेह नहींहै ॥ २५ ॥ अथवा निर्वाण लक्ष्मीका सुंदर पुरुषोंसे युक्त केशपाशहै ? किंवा (होनहो) यह कैवल्यरूपिणी मल्लिका (वेला) लताके पुष्पोंका (गुच्छाहै जो) स्तुतितत्पर भक्तजनोंके अभीष्ट अर्थका देनेवालाहै ? ॥ २६ ॥ (नहीं जीव ! यह तो) मोक्षलक्ष्मीका आनन्दक्रीडन कन्दुक (खेलनेका गेंदा) है ? अथवा यह अपवर्गरूपी उदयाचलसे उदित सुधाकरहै? ॥ २७ ॥ किंवा संसारके मोहरूपी अन्धकारका विध्वंसकर्ता दिवाकर (सूर्य) है ?

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अथवा कल्याणमयी रमणीके सुन्दर शृंगारका दर्पणहै ? ॥ २८ ॥ ओः (ठीक
अब) समझा, और कुछ नहीं है—सब देहधारियोंके बहुतर कर्मबीजोंका आश्रय,
अद्भुत बीजपूरका फल (बिजौरानींबू) है ॥२९॥ क्योंकि इस निर्वाण (मुक्ति)
लिंगमें कर्मनामक समस्त विश्ववीजोंका लय होजाताहै, अतएव यह "विश्वबीज
कहलाताहै ॥ १३० ॥ मेरा बडा भाग्योदय हुआ जो महर्षि नारदने आ
वह बात कही, मैं तो (आज) उसीके द्वारा कृतार्थ होगया ॥ ३१
वह गृहपति इसप्रकार आनंदरूपी अमृतरसोंके पानसे पारणकर शुभ दिनमें
किसीको हितप्रद लिंगकी स्थापना कर ॥ ३२ ॥ अजितेंद्रिय लोगोंके
घोरतर नियमोंको ग्रहण करने लगा वह पवित्रात्मा प्रत्यहं एकसौ आठ घडोंमें गंगा
भर वस्त्रसे छान शिवलिंगको स्नान करवाय ॥ ३३ ॥ एक सहस्र आठ (१०
नीलकमलके पुष्पोंसे गुंथीहुई माला समर्पण करनेलगा फिर वह छःमास पर्य्यंत
भर (साढेसातदिनमें एकबार) कंदमूल और फलमात्र भोजन करनेलगा॥३४-
फिर छमासतक प्रतिपक्षमें (एकबार) केवल सूखकर गिरेहुए पत्तोंको खा
तत्पश्चात् छःमासलों वायुभोजी और फिर छःमास पर्य्यन्त जलका बिंदुमात्रपान
लगा ॥ ३६ ॥ इसप्रकारसे तपकरतेहुए,उसके दो वर्ष व्यतीतहुए (अब) गृह
जन्मसे बारहवें वर्षमें नारदके कहेहुए उस वचनको ॥३७॥ मानो पूरा करनेहीं
वज्रधर इन्द्र उसके पास आये और बोले—" वर माँगो, जो कुछ तेरे मनमें
मैं देताहूं ॥ ३८ ॥ हे विप्र ! मैं साक्षात् शतक्रतुहूं, तुम्हारे शुभ व्रतों
प्रसन्नहूं । " वह धीर मुनिकुमार महेन्द्रकी यह बात सुन ॥ ३९ ॥ सुगंधी
मधुरअक्षरोंसे भरेहुए मीठे वचनोंसे कहनेलगा,—हे वृत्रासुरशत्रो ! मघवन् ! मैं
वज्रहस्त जानताहूं ॥ ४० ॥ परन्तु आपसे मैं वर नहीं माँगा चाहता; मेरे
शंकरहैं (मोंहि देनेवाला एक शम्भु बैलवालाहै) ॥ ४१ ॥ इंद्र कहने लगे—
मुझसे भिन्न दूसरा कोई शंकर (कल्याणकर्ता) नहीं है, मैंही सब देवतों
(स्वामी) हूं; अतएव तू लडकपन त्यागकर मुझसे वरकी प्रार्थना कर ॥
ब्राह्मण (बालक)ने कहा—हे अहल्याके जार ! असाधो ! गोत्रशत्रो ! पाक
जाओ; मैं तो स्पष्टही कहरहाहूं, कि पशुपतिके भिन्न अन्य किसी देवतासे
प्रार्थना नहीं करना चाहता ॥ ४३ ॥ इंद्रने बालकके इस वचनको सुनतेही
रक्तनेत्र हो घोर (भयंकर) वज्र उठाकर उस लडकेको डरवा दिया ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वह बालक सैकडों बिजुरीके ज्वालासे परिपूर्ण वज्रको देख नारदके वचनको स्मरण करताहुआ भयसे विह्वलहोकर मूर्च्छित होगया ॥ ४५ ॥ तदनन्तर तमोविनाशी गौरीपति भगवान् शम्भु, "उठ, उठ, तेरा मंगल (भला) होवे" ऐसा कहते और हस्तस्पर्शके द्वारा मानो उसे संजीवित करतहुए, वहांपर प्रकट होगये ॥ ४६ ॥ बालकने रात्रिमें सोतेहुएके सदृश कमलोपम नेत्रोंको खोल, उठकर, आगेही सैकडों सूर्यसेभी अधिक प्रकाशमान शम्भु भगवान्का दर्शन पाया ॥ ४७ ॥ ललाटलोचन, नीलकण्ठ, वृषभध्वज, जटाजूटसे मण्डित, चंद्रशेखर, त्रिशूल—पिनाक प्रहरणधारी, उज्वल कर्पूरसम गौराङ्ग, गजचर्मपरिधान एवं वामाङ्गमें पार्वती आसीन—ऐसा रूप देख ॥ ४८—४९ ॥ गुरुवाक्य और शास्त्रसे महादेवको पहिचान, हर्षबाष्पाकुल, रुद्धस्वर, रोमांचितशरीर ॥ १५० ॥ एवं अपनेहीको भूलकर वह क्षणमात्र कठपुतलीकी नाईं निस्तब्धभावसे (चुपचाप) खडा रहा ॥ ५१ ॥ तदनंतर वह बालक जब स्तुति करने, नमस्कार करने और कुछ निवेदन करनेमेंभी समर्थ नहीं हुआ तब शंकरने कुछ मुसकुराकर कहा ॥ ५२ ॥ ईश्वर बोले—बच्चे अहो ! गृहपति ! उद्यत वज्रपाणि शक्रसे तुम डरगयेहो, यह मैं जानताहूं अब मतडरो; यह तो मैंने तुमारी परीक्षाकी थी ॥ ५३ ॥ मेरे भक्तके ऊपर इन्द्र, वज्रको कौन कहे साक्षात् यमराजकाभी प्रभुत्व नहीं है, मैंनेही इन्द्ररूपसे तुमको डरवायाथा॥ ५४ ॥ हे भद्र ! मैं तुम्हें वरदेताहूं, (आजसे तुम अग्निपदके भागी हो, और तुम्हीं सब देवतों के मुख होगे ॥ ५५ ॥ हे अग्ने ! तुम सब भूतोंके अन्तश्चारी होगे, धर्मराज और इन्द्रके मध्यवर्ती दिक्पाल होकर तुम राज्यलाभ करो ॥ ५६ ॥ तुम्हारा स्थापित कियाहुआ यह लिंग सर्वतेजोऽभिवर्द्धक होकर तुम्हारे नामानुसार "अग्नीश्वर" नामसे प्रसिद्ध होवेगा ॥ ५७ ॥ जो कोई अग्नीश्वरका भक्त होगा, उसे कभी बिजुरीके अग्निका भय न होगा, न मन्दाग्निका डर रहेगा, और अकाल मृत्युभी कभी नहीं होगी ॥ ५८ ॥ काशीमें समस्त सिद्धिके दाता अग्नीश्वरकी पूजा करनेपर दैवात् यदि कहीं मरे तो अग्निलोकमें सादर निवास प्राप्त करताहै ॥ ५९ ॥ उस कल्पके बीतनेपर फिर काशीमें प्राप्त होकर मुक्तिलाभ करताहै, वीरेश्वरके पूर्व और गंगाके पश्चिमतटपर ॥ १६० ॥ अवस्थित अग्नीश्वरकी आराधना करनेसे मनुष्य अग्निलोकमें वास करता है। हे दिक्पाल ! तुम माता, पिता, मित्र, बन्धु और स्वजनों सहित इस विमानपर चढकर योंही चले जाओ ॥ ६१ ॥ शिव, यह कह उनके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बन्धुबांधवोंको लाकर मातापिताके सन्मुख गृहपतिको दिक्पालपदपर अभिषि
कर, उसी लिंगमें प्रवेश करगये ॥ ६२ ॥ विष्णुगणोंने कहा—हे शिवशर्मन् ! यह
तुमसे अग्निका स्वरूप वर्णन किया, और क्या सुनाचाहतेहो सो कहो, हम दोनों
भी कहेंगे ॥ १६३ ॥

भये प्रकट जेहि भाँतिसे, कीन तपस्या घोर ।
पावक गृहपति रूपधरि, सो सब वरनि अथोर ॥ ११ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषाटीकायां
अग्न्युत्पत्तिवर्णनं नाम एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

द्वादशअध्याय ।

नैर्ऋत और वरुणलोकोंका वर्णन ।

शिवशर्मा बोले—हे श्रीविष्णुचरणकमलधूलिधूसरितकेशपाश ! दोनों पुरुषो
क्रमसे नैर्ऋतादि सब लोकोंका वृत्तान्त वर्णन करिये ॥ १ ॥ विष्णुभगवान्के
पार्षदोंने कहा—हे महाभाग ! श्रवण करो, संयमनीपुरीके अनन्तर पुण्यजनोंसे अ
दिक्पाल निर्ऋतकी यह पवित्र नगरीहै ॥ २ ॥ परद्रोहसे पराङ्मुख राक्षस लोग
इसमें निवास करतेहैं ये लोग जातिमात्रसे तो राक्षसहैं, पर सदाचारके द्वारा
॥ ३ ॥ जो लोग नीचवर्णमें उत्पन्न होकरभी श्रुति स्मृति विहित पथपर च
और धर्मशास्त्रके विरुद्ध अन्नपानादिकको कभी ग्रहण नहीं करतेहैं ॥ ४ ॥
जातिमें जन्मलेनेपरभी परस्त्री, परद्रव्य, और परद्रोहसे पराङ्मुख होकर धर्म
होतेहैं ॥ ५ ॥ जो लोग ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यकी सेवाके द्वारा प्राप्तधनो
पालन पोषण करतेहैं, और द्विजातिके संग वार्तालाप करनेमें जो सदा संकुचि
(हो) रहतेहैं ॥ ६ ॥ आह्वान करनेपर (बुलाने पर) जो मुखपर वस्त्र डालकर
जीव, भगवन् ! नाथ ! स्वामिन् !" ऐसा कहतेहुए द्विजातिके समीप बोलतेहैं
जो लोग नित्यही तीर्थमें स्नान और देवपूजन कियाकरतेहैं, एवं स्वनामक
द्विजगणको प्रणाम करतेहैं ॥ ८ ॥ दम' दान, दया, क्षमा, शौच
निग्रह, अचौर्य्य, सत्य और अहिंसा ये सब प्राणिमात्रकेलिये धर्मके कारणहैं
अवश्यकर्तव्यधर्ममें जो लोग सदा उद्योगी बनेरहतेहैं वे चाहे कहींभी (

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

क्यों न जन्म लेवें, पर वे सब संपूर्णभोगोंसे परीपूर्ण होकर इस उत्तमनगरमें निवास करतेहैं ॥ १० ॥ म्लेच्छगणभी यदि मुक्तिदायिनी काशीको छोडकर दूसरे किसी उत्तमतीर्थमें बिना आत्मघातकिये मरैं तो, वेभी यहांपर भोगपातेहैं ॥ ११ ॥ जो लोग आत्मघाती होते हैं, वे अन्धतमनामक नरकमें प्रवेश करतेहैं, फिर सहस्रों नरकका भोग करके ग्रामवासी सूकर होतेहैं ॥ १२ ॥ अतएव विद्वान्को चाहिये कि कदापि आत्महत्या न करे, क्योंकि आत्महिंसकोंको इसलोक और परलोकमेंभी शुभगति नहीं प्राप्तहोती ॥ १३ ॥ कोई कोई तत्त्वज्ञानी केवलसमस्ततीर्थोंके राजा और सब किसीके अभिलाषके दाता केवल प्रयागमें इच्छानुसार मरणकी बात कहतेहैं ॥ १४ ॥ दयाधर्मके अनुयायी और परोपकारमें निष्ठारखनेवाले म्लेच्छलोगभी (परकालमें) श्रेष्ठरूपसे इसलोकमें निवास करतेहैं॥ १५॥अब इस दिक्पालका वृत्तान्त वर्णन करतेहैं, क्षणमात्र सुनो, पूर्वकालमें विन्ध्याचलके जंगलमें निर्विंध्यानाम नदीके तीरपर शबरोंके गाँवका स्वामी और शबरालय स्थित जनोंमें मुखिया बडा पराक्रमी पिंगाक्ष नामसे (एकजन) प्रसिद्ध था—वह बडा शूरहोनेपरभी क्रूरकर्मोंसे सदा विमुखही रहताथा ॥ १६ ॥ १७ ॥ वह दूर रहनेपरभी पथिकगणके पारिरोधक व्याघ्र आदि दुष्टजीवोंको प्रयत्नपूर्वक वधकरताथा ॥ १८ ॥ यद्यपि वह अपनी जीविका निर्वाह व्याध धर्महीसे करताथा, तथापि उस (वृत्ति) मेंभी वह बडाही दयालु रहता था, विश्वाससे परचे, सोते, पलुआ, ॥ १९ ॥ जलपीतेहुए बच्चे और गर्भलक्षणयुक्त पशुपक्षियोंको दूसरे शबरजातिके सदृश धर्मसे पराङ्मुख होकर वह कभी नहीं मारता था ॥ २० ॥ वह व्याध थके मांदे पथिकोंको विश्राम देता, भूखोंको भोजन और विना पादत्राण (जूता) वालोंको उपानत् (जूता) देताथा ॥२१॥ जिनके पास वस्त्र नहीं उन्हें कोमल हरिणकी त्वचा (खाल) समर्पण करता, और उस प्रान्तके दुर्गसमागेमें पथिकगणके साथ साथ जाकर पहुँचा देताथा ॥ २२ ॥ उन लोगोंसे कुछ धन लेनेकीभी इच्छा नहीं करताथा, बरन उन पथिकोंको अभयदान कर कहदिया करताथा कि समस्त विंध्याटवीके बीच चाहे जहाँहो मेरा नाम लेलेनेसे दुष्टलोगोंका कोई भय नहीं रहेगा ॥ २३ ॥ वह सर्वदा समस्त कार्पटिकोंको (वस्त्रधारी गोसाईं) पुत्रके समानदेखताथा, और वे सब भी प्रतितीर्थस्थानोंमें उसके लिये आशीर्वाद करतेथे ॥ २४ ॥ पिंगाक्षके इसप्रकार वर्ताव करनेसे वह जंगल नगरके सदृश होगया, पिंगाक्षके भयसे कोई दुष्ट पथिक अथवा अन्य कोई पथिक लोगोंपर आक्र-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मण नहीं करसकताथा ॥ २५ ॥ एकबार समीपके गाँवमें रहनेवाले उस पिंगाक्षके पितृव्य (चचा) ने धनसे संपन्न चीरधारी तपस्वियोंके झुंडका बडा कोलाहल सुनपाया ॥ २६ ॥ उस क्षुद्र लुब्धकने उनके धनकी लालचसे उस झुंडके मारनेका उद्योग किया—उसने आगे जाकर गुप्तरूपसे उन सबके मार्गको रोकदिया ॥ २७ ॥ उन पथिकोंकी आयुष्य अवशिष्ट थी, इसीलिये पिंगाक्ष मृगया अहेर (शिकार) के कारण उसी वनमें उसीमार्गके समीप जाकर रात्रिमें टिकाथा ॥ २८ ॥ परायेके प्राणापहारी पुरुषके मनोरथ कभी सिद्ध नहीं होते, क्योंकि जगदीश्वर परिरक्षित यह जगत् उन्हींकी कृपासे कुशलान्वित रहताहै ॥ २९ ॥ इसलिये विद्वान् व्यक्ति कभी किसीकी अनिष्टचिंता न करे, क्योंकि विधाताने जो कुछ स्थिरकर रक्खाहै वही होताहै; अनिष्ट चिंता करनेसे केवल पापहीका संचय होता ॥ ३० ॥ अतएव अपने लिये सुखकी इच्छा रखनेवाले मनुष्यको इष्ट और अनिष्ट चिंता नहीं करनी चाहिये, यदि (मन न माने) चिंताही करता है, तो मोक्षका उपाय चिंतनीयहै; दूसरा कुछभी न सोचे ॥३१॥ रात्रिबीते प्रभात होनेपर बडा कोलाहल होनेलगा,—अरे भटगण ! मारतेजाओ, गिरातेजाओ, झटपट छोडकर कर देतेजाओ " ॥३२॥ "अरे भटगण ! हमलोग चीरधारी गोसांई हैं, हमलोग मत मारो, हमारी रक्षाकरो, विनाप्रयास हमें लूटलो, हम सबके पास जो कुछहै ले जाओ ॥ ३३ ॥ हमलोग विश्वनाथके सेवक अनाथ पांथगणहैं, विश्वनाथ हम सबके नाथहैं; हमारेही दुरदृष्टके कारण मानो वहभी इसघडी दूरवर्ती होगये हाय! इस अरण्यपथमें प्राणभिक्षुक हमलोगोंका और कौन नाथ है ? ॥ ३४ ॥ हमलोग तो पिंगाक्षके भरोसेपर सदैव आयाजाया करतेहैं, पर (आज) वहभी वनसे दूर चलागयाहै ॥ ३५ ॥ वह योद्धा पिंगाक्ष चीरधारी पथिकोंका यह वचन सुनतेही,—दूरहीसे " तुमलोग मत डरो, मत डरो, " यह कहताहुआ आनेलगा ॥ ३६ ॥ वह तापसप्रिय भिल्ल, उन सबके कर्मसूत्रमें मानो बद्ध होकर उनके मृत्यु आयुष्यके सदृश क्षणकालमें वहांपर आकर उपस्थित हुआ॥ ३७॥ अरे यह कौन ? यह कौन दुराचारीहै ?—जो मुझ पिंगाक्षके जीतेजी मेरे प्राणके समान इन पथिकोंका धन लटलेनेका अभिलाषी हुआ है ? ॥ ३८ ॥ पिंगाक्षका चचा पापिष्ठ था, पिंगाक्षके इन वाक्योंको सुन, धनलोभके वश हो पिंगाक्षहीके प्रति पापचिंता लगा ॥ ३९ ॥ " यह कुलपांसन अपना कुलधर्म परित्यागकर वर्तमान है

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दिनोंसे मैंने विचार कियाथा, आज मैं इसे अवश्यही मारडालूंगा " ॥ ४० ॥ इसप्रकार विचारकर वह दुष्टात्मा क्रोधसे अपने भृत्यगणको आज्ञा देनेलगा; कि पहिले तुम लोग इस पिंगाक्षहीको मारो, तब फिर इन कार्पटिक तापसोंकाभी वध करो ॥ ४१ ॥ इस बातपर ताराक्षके दुराचारी भृत्यगण सब मिलकर उस अकेले पिंगाक्षके साथ युद्धकरने लगे, वह पिंगाक्षभी युद्ध करते करते किसीप्रकारसे उन पथिकोंको अपने गांवके समीप लेआया॥ ४२॥ परंतु उस अकेले योद्धाका धनुष बाण और कवच उन भटोंके शरजालसे कटगया, (भला अनेकके संग एकका युद्ध कबतक चलसकताहै ?) " यदि मैं राजा होता तो इन सबको निर्मूलही करडालता ॥ ४३ ॥ ऐसेही अभिलाषा करतेहुए उस व्याधने परायेके अर्थ अपना प्राण परित्याग किया, और वे सब कार्पटिकभी पिंगाक्षके गाँवपर पहुँचकर निर्भय होगये ॥ ४४ ॥ अन्त-काल (मरणसमय) में जैसी बुद्धि रहतीहै परलोकमें उसीके अनुरूप गति मिलतीहै, इसी कारणसे उस पिंगाक्षने नैर्ऋतोंका राजा होकर निर्ऋति (दक्षिण) दिशाके दिक्पाल पदको प्राप्त किया ॥ ४५ ॥ हम दोनोंने यह नैर्ऋतेश्वरका स्वरूप (वृत्ता-न्त) तुमसे कहसुनाया, इसके उत्तरमें यह वरुणका अद्भुत लोकहै ॥ ४६ ॥ जो लोग न्यायसे उपार्जित धनके द्वारा कूंआ बावली तलाव इत्यादिका निर्माण करातेहैं, वे लोग इस वरुणलोकमें वरुणके सदृश होकर सादर निवास करतेहैं ॥ ४७ ॥ निर्ज-लस्थानमें जो लोग जलदान करते हैं, और दूसरोंका सन्ताप हरण करतेहैं, याच-कोंको उत्तम छाता और लोटा (इत्यादि) दान करतेहैं ॥ ४८ ॥ जो लोग अनेक (भक्ष्य) सामग्रीके सहित (पौंसरा) चलातेहैं और सुगंधित जल (गुलाबआदि) से परिपूर्ण धर्मघट दानकरतेहैं ॥ ४९ ॥ जो लोग पीपलके वृक्षको सींचतेहैं, मार्गके पासमें वृक्षोंको रोपतेहैं लखरांव (लगातेहैं) मार्गमें थकेपथिकोंकी थकावट दूर-करनेको विश्रामशाला बनवादेतेहैं, श्रान्तोंका संताप दूरकरतेहैं ॥ ५० ॥ जो लोग ग्रीष्मकालमें (गर्मीमें) उष्णतानिवारक मोरके पोंछ इत्यादिसे बनेहुए चित्रविचित्र पंखा वितरण करतेहैं ॥ ५१ ॥ ग्रीष्मऋतुमें जो लोग रसयुक्त सुगंधित और शीतल पानक प्रयत्नसे तृप्तिभर दान करतेहैं (गुलाबजल और बर्फ डालाहुआ शर्बत देतेहैं) ॥ ५२ ॥ जो लोग ऊखके खेतोंको संकल्प करके ब्राह्मणोंको दान करदेते हैं, तथा औरभी नानाप्रकारके बहुतसे ऊखके बनेहुए पदार्थों (जैसे वह मिश्री चीनी गुड शक्कर चोंटा जूसी इत्यादि) को दानदेतेहैं ॥ ५३ ॥ जो लोग गोरसों (जैसे घी—दूध दही

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मंठाआदि) के दाताहैं, अथवा गौ भैंसके दानकर्ताहैं, योंही जो धाराकूप (फुहारा) के बनवादेनेवालेहैं, तथा छायामण्डपके कर्ताहैं ॥ ५४ ॥ देवालयोंमें लोग बहुत धाराकी (अनेक छेदसे जलझरनेवाली) जलधरी चढादेतेहैं और लोग तीर्थोंसे कर (टेक्स) उठवादेतेहैं, एवं तीर्थोंके मार्गोंका परिष्कार करते ॥ ५५ ॥ (योंही) भयातुरोंके प्रति जो लोग हाथ उठाकर अभयदान करतेहैं, सब इस वरुणलोकमें निर्भय होकर वासकरतेहुए क्रीडा करतेहैं ॥ ५६ ॥ दुर्वृत्त लो जिनके गलेमें फाँसी लगादेतेहैं, उनकी फाँसी छोडदेनेवाले (पुण्यजन) इस पाशभृ (वरुण) के लोकमें अकुतोभय होकर अवस्थिति करतेहैं ॥ ५७ ॥ हे द्विज! लोग पथिकगणको नौका आदि उपायोंसे नदी इत्यादिसे पार उतरवादेतेहैं, अ दुःखसागरहीसे किसीप्रकार उत्तीर्ण करादेतेहैं वे लोग इस वरुणपुरीमें नागरिक (वासी) होकर वास करतेहैं ॥ ५८ ॥ जो नर जलार्थीलोगोंके सुभिधाकेलिये न इत्यादिसे पवित्र नदी आदिमें घाटोंको बँधवादेतेहैं, वे सब इस वरुणलोकमें भोग तेहैं ॥ ५९ ॥ जो पुण्यात्मा लोग ठंढेजलसे पिपासितोंकी प्यास दूरकरतेहैं, वे वरुणलोकमें सुखसंततिके भागी होतेहैं ॥ ६० ॥ यही जलजन्तुओंके स्वामी (वरुण) समग्र जलाशयोंके मुख्यतम अधिपति और सबकर्मोंके साक्षी (देव) ॥ ६१ ॥ (सखे !) इस महात्मा लोकपाल वरुणकी उत्पत्ति सुनो कर्दम प्र तिका शुचिष्मान् मुनि नामसे विख्यात एकपुत्र था वह अप्रमेयबुद्धि, अतिवि एवं स्थिरता, मधुरता, धीरता, और हितैषिता, आदि गुणोंसे सम्पन्न था ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ एकबार वह बालकोंके साथ अच्छोदनामक सरोवरमें स्नान करने जलक्रीडा परायण उस मुनिकुमारको शिशुमार (सूइस—जलजन्तुविशेष) ने ह करलिया ॥ ६४ ॥ उस मुनिशिशुके हृत होजानेपर अतिअनिष्ट भाषक उसके ऋषिबालकोंने आकर उसके पिता कर्दमके आगे उस वृत्तान्तको कहा ॥ ६५ शिवपूजन पर बैठेहुए समाधिमें निश्चलचित्त उन कर्दम प्रजापतिने, बालक पु विपत्ति सुननेपरभी अपने मनको शिवसे नहीं हटाया ॥ ६६ ॥ प्रत्युत वे त्रिलोचन भगवान्का औरभी चित्त देकर ध्यान करनेलगे, ध्यान करतेकरते उनने समीपमें चौदहों भुवन ॥ ६७ ॥ ब्रह्माण्डके अन्तर्गत, नानाप्रकारके भूतसमूह, सूर्य, राशि, नक्षत्र, पर्वत, नदी, वृक्ष ॥ ६८ ॥ समुद्र, अन्तरीय, अरण्य, नानादेवयोनि, अनेकदेवपुरी ॥ ६९ ॥ बहुतेरी वापी, कूप, तडाग, कृत्रिम क्षुद्र

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(बनौआनहर) पुष्करिणी (पोखरी) आदिको देखा उन्हींके मध्य किसीएक सरोवरमें जलक्रीडामें आसक्त ॥ ७० ॥ गोतामारते उतरातेहुए और हाथकी पिचकारीसे छुटीहुई जलधाराका अभिषेक कराते ॥ ७१ ॥ योंही पानीमें हाथ पटककर दिङ्मुखनिनादी शब्द करते जलके खेलोंमें परायण बहुतेरे मुनिकुमार बालकोंको देखा ॥ ७२ ॥ इसके अनंतर उन समाधिस्थित कर्दम प्रजापतिने उन बालकोंके मध्यवर्ती अत्यन्तविह्वल अपने पुत्रको खींचकर लियेजातेहुए शिशुमारकोभी देखा ॥ ७३ ॥ तिसके पीछे कोई जलदेवी उस क्रूरजलजन्तुके पाससे-बलपूर्वक उस लडकेको लेकर समुद्रको देआई यहभी कर्दमने देखा ॥ ७४ ॥ तत्पश्चात् प्रजापतिने देखाकि—किसी एक त्रिशूलधारी रुद्ररूपी व्यक्तिने क्रोध (रोष)से रक्तमुख होकर सरित्पतिकी भर्त्सना करतेहुए कहा ॥ ७५ ॥ हे जलाधिप ! महाभाग, बुद्धिमान्, शिवभक्त कर्दमप्रजापतिके बालकको इतने समयतक (अपनेपास) क्यों रख छोडा ? क्या तुम्हें शिवका सामर्थ्य ज्ञात नहीं है ? उसकी बातें सुन भयसे त्रस्त समुद्रने॥ ७६ ॥ ७७ ॥ उस बालकको रत्न और अलंकार आदिसे भूषितकर एवं उस शिशुमारको बाँध, महादेवके चरणसरोजके समीप लाकर समर्पणकिया॥ ७८॥ और प्रणाम करके कहा—हे विभो ! अनाथोंके नाथ ! विश्वनाथ ! आप भक्तोंके विपत्तिविभंजकहैं; इसविषयमें मेरा कोई अपराध नहींहै ॥ ७९ ॥ हे भक्तकल्पद्रुम ! शम्भो ! यही दुष्ट जलजन्तु इस (लडके) को लेगयाथा, हे नाथ ! मैं शिवभक्तजनके बच्चेको नहीं (बहा) लेजासकता ॥ ८० ॥ उस रुद्रगणने महेश्वरके मनोगतभावको समझ उस जलजन्तुको पाशसे बाँधकर उस शिशुके हाथमें देदिया ॥ ८१ ॥ "हे वत्स ! अपने भवनको जाओ, मुने!तुम अपने इस पुत्रको ग्रहणकरो" महादेवकी आज्ञानुसार उस रुद्रगणके ऐसा कहने पर उस उदारबुद्धि कर्दमऋषिने ॥ ८२ ॥ समाधिकालमें यह सब सुन समाधिका परित्यागकर ॥ ८३ ॥ ज्योंही आँखें खोलकर सन्मुख ताका त्योंही पासमें लडका देखपडा वह बालक शिशुमारको पकडेहै, उसके दोनों कान भूषितहैं, ॥ ८४ ॥ उसके शिरपरके काकपक्ष (चोंटी) का अग्रभाग जलसे ओदाहै नेत्रके कोणप्रान्त आरक्तवर्ण हैं, शरीर रूक्ष होगयाहै, और देहके (चमडा) मेंभी सिकुडन पडगयीहै, और चित्त घबडाया हुआहै ॥ ८५॥ लडकेके प्रणाम करनेपर उसके मुखकमलको सूँघते और वारंवार देखते हुए कर्दम प्रजापति उस बालकको फिरसे उत्पन्न हुआ समझने लगे ॥ ८६ ॥ शिवभगवान्की

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पूजाकर करतेकरते समाधिमें निश्चल उस कर्दममुनिको पांचसौ वर्ष व्यतीत होगये ॥ ८७ ॥ किन्तु कर्दमऋषिने उतने (बडे–दीर्घ) कालकोभी क्षणमात्रही समझ रक्खाथा, क्योंकि महाकालके आगे भला कालकी क्या प्रभुताहै ? ॥ ८८ ॥ इसके अनंतर पुत्र शुचिष्मान् पिताकी अनुमति ले और उनको प्रणाम कर, तपस्याकरनेके लिये सत्वर श्रीमती काशीपुरीमें प्राप्त हुआ ॥ ८९ ॥ वहांपर एक शिवलिंग स्थापन कर घोरतर तपके अनुष्ठानमें पांचसहस्रवर्षपर्य्यन्त पाषाणके समान निश्चल खडारह ॥ ९० ॥ तत्पश्चात् महादेव उसकी तपस्यासे संतुष्ट होकर वहांपर प्रकट हुए और कहनेलगे–हे कर्दमनन्दन ! "बोलो, कौनसा उत्तम वर तुमको देवें ?" ॥ ९१ ॥ कर्दम के पुत्रने कहा–हे भक्तोंके अनुकम्पक नाथ ! यदि आप मुझपर प्रसन्नहैं तो मुझे समस्त जल और जलचर जन्तुओंका आधिपत्य प्रदान कीजिये ॥ ९२ ॥ भक्त के मनोरथपूरक महेश्वर प्रभुने यह बात सुनकर उसको परमउत्कृष्ट वरुणपदपर अभि षिक्त करादिया ॥ ९३ ॥ और कहा–समुद्रके उत्पन्न समस्तरत्न, सागर, नदी सरोवर, गडहा, (पोखरी) बावली, जलके सोते (अर्थात् झरना इत्यादि) ॥ ९४ ॥ समस्त जलाशयोंके और पश्चिमदिशाके अधीश्वरहोवो और तुम सभी देवतोंके प्रिय होंगे एवं पाश तुम्हारे हस्तका शस्त्र होवेगा ॥ ९५ ॥ फिर सब किसीका हितकारक एकवर तुमको और भी देतेहैं, तुम्हारा स्थापित यह शिवलिंग तुम्हारेही नामके अनुसार ॥ ९६ ॥ वरुणेश्वर नामसे वाराणसीमें प्रसिद्ध होगा और बडी सिद्धिको देवेगा मणिकर्णिकेश्वर लिंगके नैर्ऋत्यकोणमें अवस्थित ॥ ९७ ॥ इस लिंगकी निरन्तर आराधना करनेसे पुरुषादिकोंकी सभी जडता दूर होजावेगी, एवं जो लोग वरुणेश्वरके भक्त होगें कभी उन्हें जलसे भय नहीं होगा ॥ ९८ ॥ और न संतापका त्रास होवेगा न कहीं अपाय मरण होगा, न जलोदर रोगका डर रहेगा, न कभी तृषासे भय होवे ॥ ९९ ॥ नीरसभी अन्नपानादिक वरुणेश्वरके स्मरणसे सरस (स्वादयुक्त) हो जावेगे–इसमें सन्देह नहींहै ॥ १०० ॥ हे द्विज ! शम्भुदेव इन वरदानोंको कहकर अन्तर्धान होगये तभीसे कर्दमके पुत्र वेही शुचिष्मान् वरुण होकर अपने बन्धु–बान्धवोंके सहित इस लोकको अलंकृत करतेहुए यहांपर निवास करनेलगे ॥ १ ॥ यह वरुणलोकका स्वरूप (वृत्तान्त) हमलोगोंने तुमसे निरूपण किया, इस कथाके श्रवण करनेसे मनुष्य कभी अपमृत्युसे ग्रस्त नहींहोता ॥ १०२ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

परउपकार करै जो कोई । नीच ऊंच चाहे जो होई ।
सो उत्तम पदकै अधिकारी । जस पिंगाक्ष निर्ऋत पदधारी ॥ १ ॥

कर्दममुनिके सुअनने, कीन्ह्यो तप अति उग्र ।
लह्यो वरुण दिकपालपद, शिवप्रसाद समुदग्र ॥ २ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां नैर्ऋत–
वरुणलोकवर्णनं नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

त्रयोदश अध्याय ।

वायुलोक–और कुबेरलोक वर्णन ।

विष्णुके दोनों पार्षदोंने कहा–हे महाभाग्यनिधिद्विज ! वरुणलोकके उत्तरभागमें वायुकी गन्धवती नाम इस पवित्र नगरीको अवलोकन करो॥ १॥ इस पुरीमें प्रभञ्जन नाम दिगीश्वर वायु अवस्थितहैं, वे श्रीमहादेवकी आराधना कर दिक्पालपदको प्राप्त हुएहैं ॥ २ ॥ पूर्वकालमें कश्यपमुनिके पुत्र पूतात्मा नामसे प्रसिद्धथे, उन महाभागने शिवकी राजधानी वाराणसी पुरीमें अत्यन्त 'पावन पवनेश्वरनामक लिंग स्थापनकर दशलक्ष वर्षपर्य्यन्त विपुलतपश्चर्य्या की ॥ ३–४ ॥ जिस शिवलिंगके केवल दर्शनहींसे मनुष्य पूतात्मा होजाताहै, और अन्तमें पापके कंचुकको छोड पवनपुरमें वास प्राप्त करताहै ॥ ५ ॥ अनन्तर अनंततपोंके फलदाता महेश्वर शिव उस पवनके उग्र तपोबलके द्वारा उसी लिंगसे ज्योतिरूप प्रकटहुए ॥ ६ ॥ दयामृतसिंधु शिवने प्रसन्न-चित्त होकर कहा–हे पूतात्मन् ! उठो उठो, हे सुव्रत वरदानकी प्रार्थना करो ॥ ७ ॥ हे पूतात्मन् ! इस उग्रतपस्या और लिंगके आराधनसे, सचराचर त्रैलोक्यमें तुमको अदेय कुछभी नहीं है ॥ ८ ॥ पूतात्मा बोले–हे देवतोंके अभयप्रद ! देवदेव ! महादेव ! आपही ब्रह्मा विष्णु और इंद्रादि सभी देवगणके पददाताहैं ॥ ९ ॥ हे प्रभो ! समग्र वेद नेति नेति कहतेहुये आपका स्वरूप कीर्तन करतेकरते शतपथत्वको पहुँचजातेहैं फिरभी आप कीदृश (किमात्मक) हैं, यह नहीं जानसकते ॥ ॥ १० ॥ हे प्रभो ! जो ब्रह्मा विष्णु और वाचस्पतिके भी वचनगोचर नहीं हैं, (भला) उन प्रमथनाथ आपकी स्तुति करनेमें मेरे ऐसा सामान्य जीव क्यों कर समर्थ होसकताहै ॥ ११ ॥ हे ईश ! केवल भक्तिही बलात्कारद्वारा मुझे स्तुति

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कर्ममें प्रवृत्त करतीहै, हे जगन्नाथ ! क्या करूं मेरी इंद्रियां वशमें नहीं हैं ॥ १२
विश्व और आप, इन दोनोंमें कोई भेद नहीं है, क्योंकि आप सर्वव्यापी एकही
स्तुतिपात्र, स्तवकर्ता और स्तोत्ररूप एवं सगुण और निर्गुण सब कुछ आपहीहैं
॥ १३ ॥ सृष्टिके पूर्व नाम-रूपसे रहित एक आपही थे योगी लोगोंनेभी यथा
रूपसे आपके तत्त्वको नहीं जानाहै ॥ १४ ॥ हे स्वेच्छाविहारिन् ! प्रभो ! जबतक
आप अकेले क्रीडा नहीं करसकते, उस घडी जो: आपकी इच्छा उत्पन्न हुई वह
आपकी सेवनयोग्य शक्ति होगई ॥ १५ ॥ आप अकेले हैं, पर शिव-शक्तिके भेद
द्वित्व (द्वैत) को प्राप्त हुएहैं; आपही ज्ञानरूप भगवान् (शिव) हैं, और आपकी
इच्छाही शक्ति स्वरूपिणी है ॥ १६ ॥ शिवशक्ति स्वरूप आपही दोनोंने ही
लीलानुसार क्रिया शक्तिको उत्पन्न किया,(फिर) वहीसे यह समस्त जगत् है ॥ १७
हे ईश ! ज्ञान शक्तितो आपही हैं, और उमा इच्छाशक्तिहैं, एवं यह विश्व (की
क्रिया शक्तिहै-अतएव आपही इस संसारके कारणहैं ॥ १८ ॥ विधाता आप
दक्षिण अङ्ग और विष्णु आपके वाम अङ्गहैं, चन्द्र सूर्य और अग्नि ये तीनों आप
नेत्र हैं; एवं आपका निश्श्वासही तीनों वेदहैं ॥ १९ ॥ आपहीके स्वेदसे ये सब भूत
(उत्पन्न) हुएहैं, वायु आपका कर्णहै, दशों दिशायें आपके बाहु समूहहैं और
ब्राह्मण आपके मुख (रूप) हैं ॥ २० ॥ आपकी दोनों भुजाओंसे क्षत्रिय
और ऊरू देशसे वैश्यगण उत्पन्न हुएहैं; हे ईशान ! आपके चरणयुगलसे शूद्र
और हे प्रभो ! मेघजाल आपके केशकलापहैं ॥ २१ ॥ पूर्वकालमें आपहीने आप
पुरुष रूपसे ब्रह्माण्डकी और ब्रह्माण्डके अन्तर्गत इस चराचर संसारकी सृष्टि
है ॥ २२ ॥ हे जगन्मय ! इसी कारणसे आपसे भिन्न (बिलग) कुछभी नहीं
आपमें समस्त भूत वर्तमानहैं; और आपभी सर्व भूतमयहैं, ऐसीही मेरी-समझ
॥ २३ ॥ आपको नमस्कार, नमस्कार, नमस्कार, वारंवार नमस्कारहै; हे नाथ
मुझे यही वर मिले, कि आप पर मेरी बुद्धि स्थिर बनी रहे ॥ २४ ॥ पूर्वोक्त
इस कहने पर देवेश्वर प्रभुने उनको अपनी (अष्ट) मूर्तिके अन्तर्गत करके दिग्
पदपर नियुक्त किया ॥ २५ ॥ (और कहा) मेरे रूपसे तुम सर्वत्रगामी
समग्र तत्त्वोंके ज्ञाता (अवबोधक) एवं सब किसीके आयुष्यरूप होंगे ॥ २६
जो मनुष्यलोग तुम्हारे द्वारा प्रतिष्ठित इस दिव्यलिंगका दर्शन करेंगे वे सब
समस्त भोगोंसे परिपूर्ण होकर अन्तमें तुम्हारे लोगके सुखभागी होवेंगे ॥ २७

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मानुष, जन्मभरमें एकवारभी पवमानेश्वर लिंगका सुगन्धित जलसे स्नान एवं सुगंधि चन्दन—पुष्पादिके द्वारा यथोक्तविधिसे पूजन करकै मेरे लोकमें सम्मान सहित वास करता है। ज्येष्ठेश्वरके पश्चिम भागमें और वायुकुण्डसे उत्तर॥ २८—२९॥ पावमानेश्वर लिंगकी आराधना करनेसे (लोकमें) तत्क्षणात् पवित्र होजाताहै। देवदेव इन सब वरोंको देकर उसी लिंगमें लीन होगये ॥ ३० ॥ दोनों विष्णुगण बोले—गन्धवतीपुरीका वृत्तान्त तो तुमसे निरूपण किया, (अब) इसके पूर्व दिशामें कुबेरकी यह शोभामयी अलकापुरीहै ॥ ३१ ॥ इस नगरीके नाथने भक्तिके प्रभावसे महादेवकी मित्रता पाई और शिवहीके आराधना बलसे वे पद्मप्रभृति निधियोंके दाता और भोक्ता हुएहैं ॥ ३२ ॥ शिवशर्मा कहनेलगे—यह कौनहैं ? किसके पुत्रहैं ? सदाशिव पर इनकी कितनी भक्तिहै, जिससे ये देवदेव धूर्जटी भगवान्के सखा होगये ॥ ३३ ॥ आप लोगोंके वचनामृत पानसे परितृप्त होकर स्थिरताको प्राप्त मेरा मन इस कथाके सुननेके लिये (उत्कंठित होकर) कर्ण कुहरोंमें प्रवेश कररहाहै ॥ ३४ ॥ गणोंने कहा—हे महाप्राज्ञ ! विशुद्धात्मन् ! सुन्दर तीर्थ (जल) में अशेष जन्मके संचित पापराशिको क्षालित करनेवाले शिवशर्मन् ! ॥ ३५ ॥ तुम हम लोगोंके प्रेमसंपन्न सुहृत् (मित्र) हो (भला) तुमसे अवक्तव्य क्याहै ? विशेष करके सज्जनोंके साथ वार्तालापकरनेसे सर्व विधके मंगलकी वृद्धिही होतीहै ॥ ३६ ॥ कांपिल्य नगरमें, यज्ञविद्याका विशारद, (वैदिक) सोमयाजि कुलोत्पन्न, यज्ञदत्त दीक्षितनामा एक ब्राह्मणथा ॥ ३७ ॥ वह वेदके अङ्ग (षट्) शास्त्र और वेदार्थका ज्ञाता, एवं वेद विहित आचार पालनमें निपुण, राजमान्य, बडाधनाढ्य, उदार, दाता, और कीर्तिभाजनथा ॥ ३८ ॥ वह सदा अग्निशुश्रूषामें निरत, एवं वेदाध्ययनमें तत्पर रहा करताथा, चन्द्रबिम्बके समान मूर्तिमान गुणनिधि नामक उसे एक पुत्रथा ॥ ३९ ॥ यज्ञोपवीत होजाने पर वह गुणनिधि अनेक विद्याओंका अभ्यास करने लगा, परन्तु थोडे दिनके पीछे वह पिताके अनजानते (चोरी चोरी) द्यूतकर्म (जुआ खेलने) में आसक्त होगया ॥ ४० ॥ वह माताके पाससे धन लेले कर अनेकवार जुआडिओंको देनेलगा और उन सबोंसे मैत्रीभी करली॥ ४१ ॥ (धीरे धीरे) वह ब्राह्मणाचारको छोड, स्नान संध्यासे हीन होगया, और वेद, शास्त्र, देवता, एवं ब्राह्मणोंका निन्दक बनबैठा ॥ ४२ ॥ धर्मशास्त्रोंका आचार तो उसमें रहाही नहीं, केवल गानेही बजानेके आमोद प्रमोदमें रहने लगा, (अब)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नट पाखंडी और भांड इत्यादिसे उसका बडाही प्रेम बंधगया ॥ ४३ ॥ माताके भेजनेपरभी वह कभी पिताके समीप नहीं जाता, गृहके दूसरें कार्योंमें व्यग्र दीक्षित (अपनी स्त्री) दीक्षितायिनीसे ॥ ४४॥जब जब पूछैं कि " अरे ! बेटा गुणनिधिको मैं गृहमें (कभी) नहीं देखता, वह कहां जाता और क्या करता है ॥ ४५ ॥ तब तब वह यही कहाकरै " स्नानकरने पर इतनी बेलातक देवतोंका पूजन और वेदाध्ययन करके पढनेके लिये वह दो तीन मित्रजनोंके साथ अभी बाहर गयाहै, उसके अकेले पुत्र होनेसे माता पतिसे प्रतारणा करतीथी ॥ ४६–४७ ॥ दीक्षित पुत्रका कर्म और (चरित्र चालचलन) कुछभी नहीं जानतेथे, उनने सोलहवें वर्षकी अवस्थामें उसका "केशान्त" कर्म समाधान कर ॥ ४८ ॥ गृह्योक्त विधिसे उसका विवाह करादिया । स्नेहसे आर्द्रचित्ता उसकी माता प्रतिदिन पुत्र गुणनिधिको कोमलतासे ॥ ४९ ॥ सिखलाया करती थी, (देखो बेटा) तुम्हारे पिता बडेही क्रोधीहैं, (बबस) (समझरक्खो) यदि वे तुम्हारा चरित्र जानजावेंगे तो तुम्हें और मुझेभी ताडना देंगे ॥ ५० ॥ मैं नित्यही तुम्हारे पितासे इन सब तुम्हारी कुत्सित चेष्टाओंको छिपाया करतीहूं, तुम्हारे पिता कुछ धनसे नहीं, केवल सदाचारहीसे लोकमें माननीय (गिने जाते) हैं ॥ ५१ ॥ हे बेटा ! उत्तम विद्या और सज्जनोंकी संगतिही ब्राह्मणोंका धन है, तुम्हारे पूर्व पितामहादि सांग आख्या सहित वेदाध्यायी सच्छ्रोत्रिय, और सोमायजी दीक्षित ॥ की प्रसिद्धिको प्राप्त हुएथे अतएव तुम दुष्टोंकी संगति त्यागकर साधु समागममें तत्पर होवो ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ उत्तम विद्याओंमें मन लगाओ, ब्राह्मणोंके आचारको (धारण) करो, गुणनिधे ! तुम्हारी उन्नीस वर्षकी अवस्था हुई, और मधुर भाषिणी साध्वी इस तुम्हारी पत्नीका सोलहवां वर्षहै रूप, वयः, क्रम, कुल और शील आदिमें यह [सब प्रकारसे] तुम्हारे अनुरूप है ॥५४॥५५॥इस शुद्धचरित्राके साथ रहकर सुखी हो, पिताकी भक्ति करो, तुम्हारे श्वशुरभी अपने गुण और शीलसे सर्वत्रही माननीयहैं ॥ ५६ ॥ क्या उनसेभी तुम नहीं लज्जित होते बच्चे ! (अब भी तो) दुष्टता छोडदो, (देखो) बेटा ! तुम्हारे मातुल (मामा) लोगभी विद्याशीलस्वभाव और कुलादिसे अतुलनीयहीहैं ॥५७॥ क्या तुम उनलोगोंसे भी नहीं डरते ? (भैया !) तुम तो दोनों वंशसे शुद्धहो (फिर ऐसे क्यों हुए अरे) घर घर इन ब्राह्मणोंके कुमारोंको देखो ॥ ५८ ॥ (दूर कहां को जातेहो अपनेही) घरमें अपनेही पिताके अतिविनम्र इन शिष्योंकी ओर देखो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बेटा ! जबकि राजाभी तुम्हारा यह नीच चरित्र सुन पावेंगे ॥ ५९ ॥ तो तुम्हारे पिताके ऊपरसे श्रद्धा हटाकर वृत्ति (जीविका) को (अवश्यही) बन्द करदेवेंगे अबतक लोक तुम्हारे इन कामोंको लड़कपनही कहतेहैं ॥ ६० ॥ परन्तु इसके अनन्तर हँसी करेंगें और कहेगें " (वाह वाह) अच्छी दीक्षिताई है " तब सबी कोई तुम्हारे पिताको और मुझे भी दोषी ठहरावेंगे ॥ ६१ ॥ " पुत्रतो माताही की चाल सीखता है, उसके पिताके श्रुति स्मृति मार्गानुसारी होने परभी पापिष्ठहै," इनीदुर्वाच्यों (बदनामी) से तिरस्कृत करेगें ॥ ६२ ॥ मैं तुम्हारे पिताहीके चरणमें दत्तचित्ताहूं, इस मेरे बातकी साक्षी वही महेश्वरहैं, मैंने तो ऋतुस्नान करने परभी किसी दुष्टका मुख नहीं निहारा ॥ ६३ ॥ ओः दैवही (विधिही) बलवान्‌है उसीने आप सरीखे (कुलांगार) को उत्पन्न किया । " माताके क्षण क्षण योंही सिखलाते रहने परभी अतिदुर्मद॥६४॥नीच गुणनिधिने उस असत्कर्मको नहीं छोडा क्योंकि व्यसनी (आदती) समझानेसे नहीं मानते । अहेर, मद्य, पिशुनता, (चुगलखोरी) वेश्या, चोरी, जुआ ॥ ६५ ॥ और परस्त्रीगमन इन सब कुव्यसनोंसे संसारमें किस का सर्वनाश नहीं होता ? । वह दुर्बुद्धि घरमें जो कुछ बर्तन कपडा इत्यादि देखपाता (चट)॥ ६६ ॥ ले जाकर जुआडिओंको सौंप देता । एकवार पिताकी नवरत्नकी अंगूठी सूती हुई माताके हाथसे उतारकर जुआडीके हाथमें देआया । ततः परं एकदिन दीक्षित राजभवनसे लौटे आतेथे॥६७॥६८॥इसीमें दैवयोगसे एक द्यूतकार-के हाथमें अपनी अंगूठी देखकर चीन्ह गये और उससे कहने लगे कि "तुमने यह अंगूठी कहांसे पाई ? " सानुरोध (जिद्दन) वारंवार योंही पूछनेपर उस जुआके नालियानें कहा ॥ ६९ ॥ हे ब्राह्मण ! मेरे उपर इतना आक्षेप क्यों करतेहो ? क्या मैंने चोरी करके अंगूठी पाई है ? (अरे) तुमारे बेटेहीने तो यह मुझे दीहै ॥ ७० ॥ अभीतो कलही तुम्हारा बेटा मेरी माताकी एकठो साडी जीतकर लेगयाहै, उसने केवल मुझीको यह अंगूठी नहीं दीहै ॥ ७१ ॥ औरभी कितनेही जुआरिओं-को बहुतसा द्रव्य देडालाहै, रत्न, स्वर्ण, रजतभिन्नधन, वस्त्र, झारी, (गडुआ) इत्यादि ॥ ७२ ॥ और कांसे तामेके विचित्र बर्तन, आदि सबी देदियेहैं, उसेतो प्रतिदिन जुआरी लोग नंगा करके ये सब वस्तु बांधलेतेहैं ॥ ७३ ॥ उसके सदृश पृथ्वीमंडलमें कोईभी पासा फेंकनेवाला खेलाडी नहीं हैं, हे विप्र ! आजतक तुमने अविनय और अत्याचारके पंडित जुआचोरोंके शिरोमणि ॥ ७४ ॥ अपने पुत्रको क्यों

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नहीं जाना ? दीक्षित यह सुन लज्जाके मारे मस्तक नीचे झुका ॥ ७५ ॥ कपडासे शिर ढांपकर अपने घरमें चले गये । तिसके अनंतर परम पतिव्रता अपनी पत्नीसे बोले ॥ ७६ ॥ दीक्षितायिनि ! तुम कहांहो ? और तुम्हारा बेटा गुणनिधि कहांहै ? अथवा रहनेदो उससे मुझे कौन कामहै ? मेरी वह उत्तम अंगूठी (मुंदरी) कहां है ॥ ७७ ॥ जिसे तुमने उपटन लगाते समय मेरी अंगुलीसे निकाल लियाथा, उस नवरत्नकी अंगूठीको लाकर मुझे अभी दो ॥ ७८ ॥ दीक्षितायिनी उनकी यह बात सुनकर बहुत डरगई बोली इस घडी आप मध्याह्नके कर्मोंको संपादन करें ॥ ७९ ॥ देवपूजनकी सामग्री जुटानेमें मैं व्यग्रहूं, हे प्रियातिथे ! अतिथियोंकाभी समय बीता जारहाहै ॥ ८० ॥ अभी पकवान बनानेमें व्यग्र होकर मैंने उसे कहीं किसी बर्तनमें रखदियाहै, पर भूलगईहूं स्मरण नहीं पडतीहै ॥ ८१ ॥ दीक्षित कहने लगे—ओहो ! सुपात्रपुत्रकी जननी ! नित्यही सत्य वचन बोलतीहो ! मैंने जब जब तुमसे पूछा "कि लडका कहां गयाहै ?" ॥ ८२ ॥ तब तब तुम यही कहती गई कि, "नाथ ! यहांपर पढकर दो तीन मित्र जनके साथ पढनेहीके लिये अभी बाहर गयाहै ॥ ८३ ॥ हे पत्नि ! मजीठकी रंगी वह साडी जो मैंने तुमको दीथी, जो इस खूंटी (अरगनी) पर लटकतीथी कहां है ? भय छोडकर सच सच कहो ॥ ८४ ॥ वह मणिमण्डित झारीभी अब नहीं देखाई पडती, पट्टसूत्रकी बनी राजाकी दीहुई वह त्रिपटी (चादर) कहां है ? ॥ ८५ ॥ वह दक्षिण देशकी (दखिनहिया) कांसी (लोटिया) और वह गौड देशवाला तामेका घट (गगरा) कहां है ? सुख और कुतूहल देनेवाली हाथीदांतकी वह मचियाही कहां है ? ॥ ८६ ॥ पर्वतदेशकी चन्द्रकान्तमणिकी बनीहुई हाथोंको उठाकर अग्रभागमें दीप ग्रहण करनेवाली भूषित वह पुतली कहां है ॥ ८७ ॥ हे कुलजे ! बहुत बकवादसे क्या होगा ? तुम्हारे ऊपर हमारा क्रोध करनाभी वृथाहै, मैं जबलो दूसरा विवाह न करलूंगा भोजनभी नहीं करूंगा ॥ ८८ ॥ मैं उस कुलदूषक दुष्टसे निःसन्तानहूं उठो कुश जल लादो मैं उसे तिलांजलि देदूं ॥ ८९ ॥ कुलपांसन कुपुत्रहोनेकी अपेक्षा मनुष्यका अपुत्रक होना वरन अच्छाहै यह नीति सनातनसे चली आई है कि कुलभरके कल्याण हेतु एक जनको त्यागदेना ॥ ९० ॥ दीक्षितने स्नानोत्तर नित्यकृत्य समाप्तकर उसी दिन किसी एक श्रोत्रियकी कन्यासे विवाह करलिया ॥ ९१ ॥ दीक्षितका पुत्र गुणनिधि यह सब समाचार सुन अपने अदृष्टकी निंदा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

करता हुआ, देख भालकर किसी दिशामें निकलगया ॥ ९२ ॥ और उसे बडी चिन्ता व्यापी सोचने लगा कहां जाऊं ? क्या करूं ? नतो मैंने विद्याही पढी और न मेरे पास धनहीहै ॥ ९३ ॥ परदेशमें तो धनी अथवा विद्वान्ही सुख पाताहै, तिसमें भी धनवान्को तो चोर (डांकू) का भय रहताहै, पर पंडितजन सर्वत्रही निर्भय बना रहताहै ॥ ९४ ॥ कहां तो मेरा याज्ञिक ब्राह्मणवंशमें जन्म और कहां यह (नीच) व्यसन ! (आकाश पातालका भेद) भावी कर्मके संघटका विधाताही बलवान्है ॥ ९५ ॥ मैं नतो भीखही मांगने जानताहूं और न कोई मेरा पारिचित (चिह्नार) ही यहां है, पासमें धन भी कुछ नहीं है, फिर इस दशामें मेरी रक्षा कैसे होगी ? ॥ ९६ ॥ सूर्यके उदय होनेसे पहिलेही मेरी माता मुझे मिठाई जलपान देतीथी, उसके लिये आज यहां किससे प्रार्थना करूं (और फिर) मा तो यहांपर हैही नहीं है॥९७॥गुणनिधिके योंही चिन्ता करते करते सूर्य अस्ताचलको चलदिये, ठीक उसी समय पर कोई शैव मनुष्य ॥ ९८ ॥ शिवरात्रि व्रतका उपवासी होनेसे महादेवकी पूजा करनेको बहुतसी सामग्री लेकर नगरसे बाहर जानेलगा ॥ ९९ ॥ वह भूखा गुणनिधि, पकवानका गंध सूंघकर उसके पीछे होचला और सोचने लगा, रात्रिमें शिवनिवेदित यह अन्न मैं लेलूंगा ॥ १०० ॥ वह इसी आशामें पडकर शिवालयके द्वारपर बैठाहुआ उस भक्तके द्वारा अनुष्ठित महापूजाको देखता रहा ॥ १ ॥ (पूजा होजाने पर) भक्तलोग नृत्य गीतादिक करके क्षणमात्रके लिये जब सोगये, तब उसी वेला नैवेद्य ग्रहण करनेकेलिये वह दीक्षितका पुत्र मन्दिरके भीतर घुसा ॥२॥उसने दीपकको अति मंद प्रभाका देख पकवानही देखनेकी इच्छासे अपने वस्त्रका अंचल फाडकर बत्ती बना दियेको उद्दीपित करदिया ॥ ३ ॥ पश्चात् पकवान लेकर शीघ्रतासे बाहर निकलते हुये उसके पैरका धक्का लगजानेसे कोई एक मनुष्य जाग उठा ॥ ४ ॥ "अरे यह कौनहै कौनहै ! जो शीघ्रतासे भागा जाताहै, यह तो चोरहै इसे पकडो" उस मानुषके यह कहतेही पुररक्षको (प्रहरी—पहरेदार) ने आकर ॥ ५ ॥ भागे जाते हुए उस गुणनिधिको ऐसा मारा कि वह क्षण कालमें मृत्युको प्राप्त होगया, भावी शिवरात्र व्रतके पुण्यबलसे वह शिवका नैवेद्य नहीं खासका ॥ ६ ॥ अनन्तर पाश मुद्गरधारी विकट स्वरूप यमदूत गण आकर उसे संयमिनी नामक यमपुरीमें ले जानेके हेतु बांधने लगे ॥ ७ ॥ इसीमें शिवके पारिषदगण गुणनिधिको लेजानेके लिये किंकिणीजालसे मंडित दिव्य

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विमान लेकर वहां उपस्थित हुये, उन यमकिंकरोंने शंभुगणोंको देख अतिभीत (चकित) हो, प्रणामपूर्वक निवेदन किया—हे शम्भुगण ! यह ब्राह्मण तो बडाही दुर्वृत्तहै॥८॥९॥ यह कुलाचारके विपरीत चलनेवाला, माता पिताके आज्ञा पालनसे विमुख, सत्य (के लेश) से हीन, शौचभ्रष्ट, सन्ध्या स्नानसे रहित है ॥ ११० ॥ इसके और कर्मोंकी बातें तो दूर जाने दीजिये—देखिये—यहांही पर प्रत्यक्षही यह शिवनिर्माल्यका चोरहै, यह तो आप ऐसे लोगोंके स्पर्श करने योग्यभी नहीं है ॥ ११ ॥ शिवनिर्माल्य भक्षक, शिवनिर्माल्य लंघक, और शिवनिर्माल्य दाताओंका स्पर्शभी पुण्य विनाशकहै ॥ १२ ॥ विष घोरतर पीलेना, अथवा बहुत अनशन (भोजन न करना) अच्छाहै, परन्तु प्राण कंठगत होने परभी शिवस्वका सेवन करना कदापि उचित नहीं है ॥१३॥ धर्मके विषयमें आपलोग जैसे प्रमाणहैं हमलोग (कभी) नहींहैं तब हे शिवगण ! यदि इसको लेशमात्रभी धर्म हो तो हम लोगभी सुनलेवें॥१४॥ यमदूतोंकी यह बात सुनकर शिवगण बोले—हे यमकिंकर ! जो सूक्ष्म शिवधर्म हैं, वे तुम्हारे ऐसे ॥१५॥ स्थूल दर्शियोंको क्यों कर दिखाई पडेंगे ? वे तो सूक्ष्मदृष्टियोंसेही लक्ष्य होतेहैं, इस पापरहित जनने जो (सत्) कर्म यहां कियाहै उसे सुनो ॥ १६ ॥ इसने रात्रिमें अपने वस्त्रका अंचरा फाड बत्ती बनाया दीपमें लगाकर लिंगके शिरपर पडती हुई दीपकी छायाको निवारण कियाहै ॥ १७ ॥ इसका एक औरभी उत्कृष्ट धर्म शिवालयमें संचित हुआ है, हे यमकिंकर गण ! प्रसङ्गवश भक्तोंके मुखसे निःसृत शिवके नामोंको सुनाहै ॥ १८ ॥ और विधिपूर्वक भक्तोंसे क्रियमाण शिवकी पूजाको देखाहै, एवं स्थिरचित्त होकर इसने शिवचतुर्दशीमें उपवासभी कियाहै ॥ १९ ॥ हे दूतो ! अब पापपुञ्जसे रहित यह द्विजवर कलिंग देशका राजा होगा, तुम लोग 'जैसे आये हो चले जाओ' ॥ १२० ॥ शिवपरिषदोंके द्वारा यमदूतोंसे इस प्रकार छोडाये जाने पर वह द्विज, कलिंग देशाधिपति अरिन्दमका पुत्र दमनामसे उत्पन्न हुआ ॥ २१ ॥ क्रमशः युवा होकर उस (दम) ने पिताके शान्त होनेपर राज्य प्राप्त किया । हे द्विज ! वह दुर्दम भूपति दम सब शिवालयोंमें दीपदानके भिन्न दूसरा कोई धर्म नहीं जानताथा । (राज्य पातेही) उसने अपने राज्यस्थित समस्त ग्रामाधीशोंको (जमींदारोंको) बुलाकर यह आज्ञा प्रचारित करदी । कि—जिसके जिसके गांवमें जितने जितने शिवालयहैं वही वही ग्रामाध्यक्ष उन उन शिवालयोंमें प्रति-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दिन दीयावालेसे, इस विषयमें कोई कुछ विचार न करे, जो कोई मेरी आज्ञा भङ्ग करेगा, वह मेरा दण्डनीय होगा, मैं अवश्य उसका शिर काटलूंगा ॥ २२ ॥ २३ ॥ ॥ २४ ॥ २५ ॥ इसी कारणसे प्रत्येक शिवालयोंमें उसके भयसे दीया बरने लगे, इसी धर्मके प्रभावसे यावज्जीवन वह राजा दम ॥ २६ ॥ बड़ीधर्म सम्पतिको भोगकर (यथासमय) कालधर्मके वशंगत हुआ, वह राजा दम, दीपदानहीके संस्कारवश दूसरे जन्ममें शिवालयोंमें बहुत अधिक दीपदान कर ॥ २७ ॥ (उसी पुण्य बलसे अब) रत्नदीप शिखावलियोंका आश्रय अलकापुरीका स्वामी हुआ है, शिवके निमित्त अत्यल्प कार्यभी करदेनेसे काल पाकर वह योंही महत्फलको देताहै ॥ २८ ॥ यह विचार कर आत्मसुखाभिलाषी जनको शिवका भजन (सेवन) करना चाहिये, कहां तो वह दीक्षितका सन्तान, सर्व धर्म कर्मसे रहित हो अपने अर्थवश दीपकमें बत्ती लगाकर लिंगके ऊपरके अंधकारको दूरकरताथा ? और कहां (उसी पुण्य प्रभावसे) सदा धर्मनिष्ठ कलिंगदेशका राजा हुआ ॥ २९ ॥ १३० ॥ तिसपर फिर पूर्वजन्म की वासनाके उदय होजानेसे शिवालयोंमें दीप प्रज्वलित करके देखो शिवशर्मन् ! वही गुणनिधि यहांपर मनुष्यधर्मा (कुबेर) होकर संप्रति जिस दिक्पाल पदका भोग कररहाहै। यह कहां है ? (क्याथा क्या होगया) ॥ ३१ ॥ विष्णुके गणोंने (फिर) कहा—हे विप्र ! इन कुबेरने जिस प्रकारसे शिवके साथ सर्वदाके निमित्त सखित्व पाया उसे भी कहतेहैं एकाग्रमनसे श्रवण करो ॥ ३२ ॥ हे विप्र ! पूर्वकालमें जब पाद्मकल्प था तभी ब्रह्माके मानस पुत्र पुलस्त्यसे विश्रवा उत्पन्न हुए—उनके पुत्र वैश्रवण हुए॥ ॥ ३३ ॥ अत्युग्र तपस्याके द्वारा त्रिलोचन देवकी आराधना करके उन (वैश्रवण) ने पहिलेही विश्वकर्माकी रचित इस अलकापुरीका भोग किया ॥ ३४ ॥ इसके पीछे उस (पाद्म) कल्पके व्यतीत होकर मेघवाहन कल्प प्रवृत्त होनेपर, वही यज्ञदत्तका पुत्र गुणनिधि कुबेर होकर ॥ ३५ ॥ प्राक्तन दीपकके उसकाने मात्रके फलसे शिवके भक्तिप्रभावको विचार आत्मतत्त्वबोधिनी काशीमें प्राप्त होकर अत्यन्त दुःसह तपस्या करने लगे ॥ ३६ ॥ (कुबेरने पूर्वदीया उसके देनेके माहात्म्यको स्मरणकर इसवार) सद्भावरूप पुष्पसे पूजित शिवलिंगको स्थापन करके समीपहीमें चित्तरूप रत्नदीपको प्रज्वलित किया । इस दीपकमें शिवही बत्ती, शिवमें अनन्य भक्तिही तेल, शिवके तेजका ध्यानही निश्चलताहै ॥ ३७ ॥ शिवके साथ एकत्व (सोऽहं) ज्ञानही दीपकका बडा पात्रहै, यह दीपक तपस्यारूपी अग्निसे बारा गयाहै और यहां

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

से कामक्रोधादि महाविघ्नरूपी पतङ्गोंके पतनसे भी बचा रक्खागयाहै ॥ ३८ ॥ प्राण वायुके रुकावटसे इसमें वायुका संचारभी नहींहै, भावनारहित ज्योति दर्शनसे निर्मल रूपहै ॥ ३९ ॥ उसने (इसी प्रकारके दीपकसे आर्तिरूप) तपस्याको दश लक्ष वत्सर पर्य्यन्त करके अपने शरीरको अस्थि चर्मावशिष्ट करडाला ॥ १४० ॥ अनंतर देवी विशालाक्षीके साथ स्वयं विश्वेश्वरदेव अलकाधिपतिको लिंगमें मन लगाये उस स्थाणु (ढूंढावृक्ष) रूपसे स्थित देखकर प्रसन्न चित्तसे बोले—हे अलकाधीश्वर ! (बस !) तपस्या होचुकी वर देताहूं ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ उस तपोधनने ज्योंही आँखें खोलकर देखा ताकना चाहा, त्योंही उगते हुये सहस्र सूर्यसे भी अधिक तेजस्वी, उमापति, चन्द्रशेखर, श्रीकंठ भगवान्, पर उसकी दृष्टि जापडी, नेत्रोंमें तुरत चकचौंधी छागयी और वे बन्द होगये ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ तब वे मनोरथपथके दूरवर्ती महादेवसे कहने, लगे हे नाथ ! आप निज चरणोंके दर्शनकी सामर्थ्य मुझको दीजिये ॥ ॥ ४५ ॥ हे स्वामिन् ! मुझे यही वरदान होवे, हे ईश ! यदि आपको साक्षात् देख सकूं तो दूसरे वरका कौन काम है ? हे शशिशेखर ! आपको नमस्कारहै ॥ ॥ ४६ ॥ देवदेव उमापतिने कुबेरका यह वचन सुन करतलसे स्पर्श कर उनको दर्शनका सामर्थ्य प्रदान किया ॥ ४७ ॥ तब कुबेर दृष्टि फैलाकर पहिले उमादेवीहीको देखने लगे, "शिवके समीपहीमें यह कौन सर्वांगसुन्दरी रमणीहै ? ॥ ४८ ॥ क्या इसने मुझसे भी अधिक तपस्या की है ? (इस सुन्दरीका) कैसा रूप ! कैसा प्रेम ! कैसी असामान्य सौभाग्यलक्ष्मी है (वाह वाह धन्य २) ॥ ४९ ॥ यह कहते हुए वारंवार क्रूरदृष्टिसे वामनेत्र द्वारा देवीको देखते रहनेहीसे उनकी बायीं आंख फूटगयी ॥ १५० ॥ अनन्तर देवीने महादेवसे कहा—"यह दुष्ट तपस्वी, वारंवार, क्यों मुझे निहारकर, मेरे तपके प्रभावपर अधिक्षेप करता हुआ, (निहोराकर) बकवाद कररहाहै ॥ ५१ ॥ मेरे रूप, प्रेम, और सौभाग्य संपत्तिसे डाह करता हुआ अब फिर दाहिनी आंखसे वारंवार ताक रहाहै" ॥ ५२ ॥ देवीकी यह बात सुनकर प्रभुने हँसकर उनसे यह कहा—"हे उमे ! यह तुमारा पुत्र है, दुष्ट दृष्टिसे नहीं ताकताहै तबी तुम्हारे तपोलक्ष्मीका आधिक्य वर्णन कर रहाहै" ईश्वर पार्वतीसे यह कहकर फिर कुबेरके प्रति बोले ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ हे वत्स मैं तुम्हारी इस तपस्यासे सन्तुष्ट होकर तुमको ये सब वरदान करताहूं, तुम सब निधियोंके स्वामी, और गुह्यकोंके अधीश्वर हो ॥ ५५ ॥ हे सुव्रत ! यक्षोंके किन्नरोंके और राजोंके राजा, पुण्यजनों

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(राक्षसों) के, अधिपति और सब किसीके धनदाता हो ॥ ५६ ॥ मेरे साथ तुम्हारा सखित्व (मैत्री) हुआ, हे मित्र ! तुम्हारे प्रीतिवर्द्धनार्थ मैं, तुम्हारे निकटस्थ स्थानमें अलकाके समीपही सर्वदा निवास करूंगा ॥ ५७ ॥ आओ, इस (उमा)के चरणों पर गिरो, यह (तो) तुम्हारी जननीहै, महादेव इस प्रकारसे कुबेरको ये सब वरदान कर पुनः पार्वतीसे कहने लगे, हे देवेश्वरि ! इस तपस्वी पुत्र पर प्रसन्न होओ (प्रसाद करो) ॥ ५८ ॥ भगवती बोली—बेटा ! सर्वदा तुम्हारी भक्ति शिवपर निश्चल (अटल बनी) रहे, "फूटे हुए वामनेत्रके कारण तुम एकपिंग नामसे प्रसिद्ध होवो" ॥५९॥ देवदेव ने जो ये सब वर तुमको दियेहैं वे तदनुसारही होवें (परन्तु) हे पुत्र ! मेरे स्वरूपकी ईर्ष्या करनेसे तुम " कुबेर " नामसे विख्यात होगे ॥ १६० ॥ तुम्हारा स्थापित यह शिवलिंग साधकोंका परम सिद्धिप्रद और पापहर एवं तुम्हारे नामसे विदित होगा ॥ ६१ ॥ जो कोई मनुष्य कुबेरेश्वर लिंगका दर्शन करेगा उसे धनसे हीनता न होगी, न मित्रसे वियोग होगा, और न कभी (स्वजनका) विच्छेदही प्राप्त होगा ॥ ६२ ॥ जो मनुष्य विश्वेश्वरके दक्षिण भागमें स्थित इस कुबेरेश्वरलिंग का पूजन करेगा,वह (कभी) नतो पापसे, न दरिद्रतासे और न दुःखहीसे लिप्त होगा ॥६३॥ इस रीतिसे उमादेवीके सहित भगवान् महेश्वर देव कुबेरको ये सब वर देकर पश्चात् अपने पर धामको चलेगये ॥ ६४ ॥ गणोंने कहा—इन धनद (कुबेर) ने इस रूपसे महादेवके परम सखित्वको प्राप्त किया ! और अलकाके समीपमें यही कैलास पर्वत शंकरका आलय निवासस्थान है ॥ ६५ ॥ यक्षेश्वरादिककी नगरीका स्वरूप वृत्तान्त (कथा) क्रमसे वर्णन किया, इस (वैश्रवणकी कथा) के श्रवणमात्रसे मनुष्य निस्सन्देह समस्त पापोंसे निर्मुक्त होजाताहै ॥१६६॥

गंधवती अलकापुरी, प्रथम वायुको लोक ।
पुनि कुबेरके नगरकी, कथा हरत सब शोक ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां वायुलोककुबेरलोकवर्णनं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चतुर्दश अध्याय ।

ईशानलोक और चन्द्रलोकका वर्णन ।

विष्णुके दोनों गण कहने लगे—इस अलकाके आगेके भागमें यह महोदया ईशान पुरी है । इसमें सर्वदा शिवभक्त तपोधन लोग निवास करते हैं ॥ १ ॥ जो लोग शिवके स्मरणमें लगे रहतेहैं, जो लोग शिवव्रतमें दीक्षितहैं, जो अपने समस्त कर्मोंको शिवार्पण कियेहैं, और नित्यही शिवपूजनमें तत्पर रहते हैं ॥ २ ॥ वे सब मनुष्य "हमको स्वर्गभोग यहांही पर प्राप्त होवे," इस कामनासे तपस्या करनेवाले रुद्ररूपधारी लोग इस रम्य रुद्रपुरमें निवास करते हैं ॥ ३ ॥ अज, एकपाद, अहिर्बुध्न्य प्रभृति हाथमें त्रिशूल धारण किये हुये—एकादश रुद्र इस स्थानके प्रभुहैं ॥ ४ ॥ ये श्रेष्ठ रुद्रगण, उक्त अष्ट पुरियोंकी दुष्टोंसे और देवद्रोहियोंसे सदा रक्षा करते हैं और शिवभक्त जनोंको वरप्रदान करते हैं ॥ ५ ॥ ये लोगभी वाराणसी पुरीमें प्राप्त होकर, शुभप्रद ईशानेश्वरनामक महालिंग स्थापित कर तपस्या करा चुकेहैं ॥ ६ ॥ ईशानेश लिंगके प्रसादसे ईशान दिशाके दिक्पाल ये ग्यारहों रुद्र सदा सहचर और जटामुकुटसे मण्डित रहतेहैं ॥ ७ ॥ ये सब (के सब) भालनेत्र, नीलकंठ गौर शरीर, और वृषभध्वज हैं, पृथिवीपर जो असंख्य सहस्र सहस्र रुद्रगणहैं ॥ ८ ॥ वे सब समस्त भोगकी समृद्धिको प्राप्त होकर इसी ईशान पुरीमें वास करते हैं । काशीमें ईशानेश्वरका पूजन करनेपर यदि देशान्तरमें भी ॥ ९ ॥ जो लोग मृत्युको प्राप्त होतेहैं तो वे उसी पुण्यके बलसे यहां पर पुरोहित होतेहैं । जो लोग अष्टमी और चतुर्दशी तिथि पर ईशानेश्वरकी पूजा करतेहैं ॥ १० ॥ वे यहां और परलोकमें अवश्य रुद्र होते हैं । ईशानेश्वरके समीपमें किसीभी चतुर्दशीको रात्रिमें उपवास और जागरण करनेसे मनुष्य फिर गर्भमें वास नहीं करता । स्वर्ग मार्गमें विष्णुगण कथित इस कथाको श्रवण करते हुये ॥ ११—१२ ॥ शिवशर्माने सब इन्द्रियोंके सहित मनको अत्यन्त आह्लादित करती हुई यथेष्ट चन्द्रकी चन्द्रिकाको दिनहीमें ॥ १३ ॥ अत्यन्त चमकित होकर शिवशर्माने प्रश्न किया । "हे विष्णुगणद्वय ! यह कौन लोक है !" उन दोनोंने उस ब्राह्मणसे कहा ॥ १४ ॥ विष्णुके दोनों गण बोले—हे महाभाग ! शिवशर्मन् ! जिसके अमृतवर्षी किरणजालसे जगत् परितृप्त होताहै उसी कलानिधिका यह लोकहै ॥ १५ ॥ हे विप्र ! पूर्वकालमें प्रजा सृष्टिके विधानेच्छु

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ब्रह्माके मनहीसे इस चन्द्रके पिता भगवान् अत्रि ऋषि उत्पन्न हुए ॥ १६ ॥ हम लोगोंने ऐसा सुना है कि, उसी अत्रिऋषिने पहिले दिव्य परिमाणसे तीन सहस्र वर्ष अनुत्तर नामक सर्वोत्कृष्ट तपश्चर्या कीथी ॥ १७ ॥ उस वेलामें अत्रिमुनिका ऊर्ध्वगत-रेत सोमत्वको प्राप्त होकर दिङ्मंडलको प्रकाशित करता हुआ उनके दोनों नेत्रोंसे दश वार क्षरित हुआ ॥ १८ ॥ तदनन्तर ब्रह्माकी आज्ञानुसार दशो दिग्देवियोंने मिल-कर उसे धारण किया पर न रखसकीं ॥ १९ ॥ जब कि वे दिशायें उस गर्भको धारण नहीं कर सकीं तो उन सबके साथ चन्द्र भूतलपर निपतित हुआ ॥ २० ॥ लोकपितामह ब्रह्माने चन्द्रको गिराहुआ देखकर त्रैलोक्यके हित साधनेच्छासे उसे रथपर चढा लिया ॥ २१ ॥ ब्रह्माने उसी चन्द्रको रथपर प्रधान बनाकर इक्कीस बार इसको समुद्रान्त समस्त पृथिवीका प्रदक्षिण कराया ॥ २२ ॥ उसका च्युवित जो तेज पृथिवीमें गिरा उसीसे ये सब ओषधियां उपजीं, जिनके द्वारा जगत्का धारण होता है ॥ २३ ॥ हे महाभाग ! स्वयं ब्रह्मासे वर्धित भगवान् चन्द्र तेज पानेपर परम पावन अविमुक्त क्षेत्रमें प्राप्त होकर, और स्वनामानुसार चन्द्रेश्वरनामक अमृतलिंग स्थापनापूर्वक एक सौ पद्म प्रमाण वर्ष पर्य्यन्त तपस्याही करते रहे ॥ ॥ २४ ॥ २५ ॥ देवदेव पिनाकी विश्वेश्वरके प्रसादसे बीज, औषधि, जल और ब्राह्मणोंके राजा हुए ॥ २६ ॥ चन्द्रने तपोनुष्ठानहीके समय वहांपर एक अमृतोद-नामक कूप प्रस्तुत कियाथा, जिसके जल पान और स्नान करनेसे मनुष्य अज्ञानसे छुटकारा पाजाता है ॥ २७ ॥ स्वयं महादेवने सन्तुष्ट होकर जगत्संजीवनीनामक उस चन्द्रकी एक कलाको लेकर अपने शिरपर धारण करलिया ॥ २८ ॥ यह चन्द्र दक्ष प्रजापतिके शापवश मासके अन्तमें क्षय प्राप्त होने पर भी फिर शिवके शिरोधृत उसी कलाके द्वारा परिपूर्ण होजाताहै ॥ २९ ॥ सोमयज्ञकर्ताओंमें श्रेष्ठ उस चन्द्रने इसप्रकारसे बडा राज्य पाकर सहस्र शत दक्षिणासे पूर्ण राजसूय यज्ञ आरम्भ किया ॥ ३० ॥ हे द्विज ! हम लोगोंने ऐसा सुना है कि, चन्द्रदेवने उन प्रधान ब्रह्मर्षियों और सदस्योंको तीनों लोक दक्षिणामें देडाले ॥ ३१ ॥ उस यज्ञमें स्वयं ब्रह्माही ब्रह्मा थे, अत्रि, भृगु, मरीचि आदि मुनिगण ऋत्विक् थे और ऋषिमण्डली परिवृत भगवान् हरि सभासद (बने) थे ॥ ३२ ॥ सिनीवाली, कुहू, द्युति, पुष्टि प्रभा, वसु, कीर्ति, धृति औ लक्ष्मी (शोभा) येही नव देवी चन्द्रकी सेवा करती थीं ॥ ३३ ॥ चन्द्रने उमाके सहित रुद्र देवको यज्ञकर्मके द्वारा परितृप्त कर उमासहित

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शिवकी दी हुई "सोम" इस ख्यातिको प्राप्त हुए ॥ ३४ ॥ सोमने काशीमें चन्द्रेश्वर के सन्मुख ही परम दुष्कर तपश्चर्या और राजसूय यज्ञ सम्पादन किया ॥ ३५ ॥ उसी स्थानपर ब्राह्मणोंने प्रसन्न होकर चन्द्रको यह कहा कि—त्रैलोक्यकी दक्षिणाके दाता यही सोम हम ब्राह्मण लोगोंके राजा है ॥ ३६ ॥ चन्द्र वहांही पर महादेवके (त्रिलोचनके) (त्राम) नेत्रस्थानको प्राप्त हुए—अत्यन्त प्रसन्नचित्त शिवने त्रिभुवनके आह्लाद निमित्तक ॥ ३७ ॥ (चन्द्रसे कहा) अपने तपोबलसे तुम मेरीही दूसरी मूर्ति हो, संसार तुमारे उदयसे सुखी होगा ॥ ३८ ॥ तुमारे अमृतमय किरणजालके स्पर्श-मात्रसे, सूर्यके तापसे व्याप्त यह चराचर जगत् बडी ग्लानिको छोड देवेगा ॥ ३९ ॥ महेश्वर यह कहकर सहर्ष औरभी अनेक वर प्रदान करने लगे, वे बोले—हे द्विजराज! इस काशीमें जो तुमने यह बडी उग्र तपस्या की है ॥ ४० ॥ और यह जो यज्ञ-क्रिया (का फल) मुझे समर्पण करदिया है और फिर यह जो चन्द्रेश्वरनामक मेरा लिंग स्थापित किया है ॥ ४१ ॥ इन्ही सब कारणोंसे उमाके सहित अर्द्धचन्द्र रूपधारी मैं सर्वव्यापी होने परभी तुम्हारे नामयुक्त इस लिंगमें प्रतिमासकी पूर्णमासी को ॥ ४२ ॥ त्रिभुवनके ऐश्वर्य सहित रात्रिदिन विशेषरूपसे वास करूंगा, अतएव पूर्णिमा तिथिमें यहांपर जो कुछ जप, होम, पूजन, ध्यान, दान और ब्राह्मणभोजन आदि सत्कर्म बहुत थोडा कियाजाय वह सब मेरे प्रीत्यर्थ निश्चय महापूजाका फल दाता होगा ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ जीर्णोद्धार आदिका संपादन, नाच, वाजन (नौबत) प्रभृतिका अनुष्ठान, ध्वजारोपण और तपस्वी यों यतियोंका तृप्तिसाधन ॥ ४५ ॥ ये सब कर्म चन्द्रेश्वरमें करनेसे अनंत (फलजनक) होते हैं। कलानिधि ! एक दूसरी गुप्त बात कहताहूं सुनो ॥ ४६ ॥ अभक्त, नास्तिक और वेदद्रोहीसे यह (रहस्य कथा) नहीं कहनी चाहिए—हे सोम ! सोमवारके दिन जब अमावास्या (तिथि) होवे ॥ ४७ ॥ तब सज्जन लोग सादर चतुर्दशीमें उपवास करें, सुनो सोम ! त्रयो-दशीको नित्यकृत्य समाप्त करके ॥ ४८ ॥ उसी तिथि त्रयोदशीमें शनिवारके दिन प्रदोष कालमें इस चन्द्रेश्वरसंज्ञक लिंगका पूजन करनेपर नक्त (दिनभर उपवास करके रात्रिमें भोजन) कर नियम ग्रहणपूर्वक ॥ ४९ ॥ चतुर्दशीको उपवास कर रात्रिमें जागरण करे, (फिर) प्रातःकाल सोमवती अमावस्या योगमें चन्द्रकूपके जलसे स्नान ॥ ५० ॥ विधिवत्संध्या और तर्पणादि समस्त उदक क्रियाओंको समाप्त कर, चन्द्रोद (कूप) तीर्थके समीपहीमें सविधि श्राद्ध आरम्भ करे ॥ ५१ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इस (तीर्थश्राद्ध) में आवाहन और अर्घ्यदान न करे, वसु, रुद्र और आदित्यस्वरूप पिता, पितामह, प्रपितामह, इन तीनों पुरुषोंको प्रयत्नपूर्वक पिंडदान करे ॥ ५२ ॥ इसी प्रकारसे मातामहादिक पुरुषत्रय तथा और भी सगोत्र, गुरु, श्वशुर एवं बन्धुगणका नामोच्चारण करता हुआ पिंड देवे ॥ ५३ ॥ इस तीर्थमें श्रद्धापूर्वक श्राद्ध करनेसे सबका उद्धार होजाता है, गयामें पिंडदान करनेसे पूर्वजोंकी जैसी तृप्ति होतीहै ॥ ५४ ॥ इस चन्द्रकूपपर भी श्राद्ध करनेसे पूर्व पुरुषोंकी वैसीही तुष्टि होतीहै मनुष्य जैसे गयाके पिण्डदान करनेसे समस्त पितृऋणसे छूटजाता है ॥ ५५ ॥ वैसेही चन्द्रकूपमेंभी पिंडदान कर पितृऋणसे मुक्त होताहै, जब कोई नरोत्तम चन्द्रेश्वरके दर्शनार्थ चलता है ॥ ५६ ॥ तो उस घडी उसके पूर्वपुरुष प्रपितामह प्रभृति (हर्षसे) नृत्य करने लगते हैं । (कहते हैं कि) "यह चन्द्रकूप तीर्थमें हमलोगोंका तर्पण करेगा ॥ ५७ ॥ यदि हमी सबके दुर्भाग्यवश तर्पण न करेगा तो क्या हुआ, उस तीर्थका जल तो स्पर्श करेगा, उसीसे हमलोगोंकी तृप्ति होजावेगी ॥ ५८ ॥ यदि मूर्खतावश जलभी न छूवेगा तो उसे देखेगा तो (सही) फिर उसीसे हमारा सन्तोष होजावेगा" व्रती नर उक्त विधिसे श्राद्ध संपन्न कर पश्चात् चन्द्रेश्वरका दर्शन–स्पर्शनके अनन्तर ब्राह्मण और यतिगणको भोजनादिके द्वारा सन्तुष्ट होनेपर तब (अपने व्रतका) पारण करे ॥ ५९ ॥ हे मृगांक ! काशीमें इस विधिसे सोमवती अमावास्यापर व्रत करनेसे, मेरेही अनुग्रहके कारण–देवऋण, ऋषिऋण, एवं पितृऋणसे वह मुक्त होजाता है ॥ ६० ॥ काशीक्षेत्र निवासियोंको चित्रा नक्षत्रयुक्ता चैत्रमासकी पूर्णिमाको तारक ज्ञानके लाभार्थ, क्षेत्रविघ्नविध्वंसिनी (महा) यात्रा करना आवश्यक है ॥ ६१ ॥ यदि कोई, चन्द्रेश्वर लिंगका पूजन करके अन्यत्र भी जाकर मृत्युको प्राप्त होवे, तो पापपुञ्जकी पंक्तिको भेदकर चन्द्रलोकमें पहुंच जाता है ॥ ६२ ॥ कलिकालमें भाग्यहीन लोग चन्द्रेश्वरकी महिमाको नहीं जान सकतेहैं, हे निशापते ! एक बात परम गुह्यतम होनेपरभी तुमसे कहताहूं ॥ ६३ ॥ यह स्थान सिद्ध योगीश्वरपीठ है, और साधकगणको सिद्धिप्रद है, सुर, असुर, गन्धर्व, नाग, विद्याधर, ॥ ६४ ॥ राक्षस, गुह्यक, यक्ष, किन्नर, और मनुष्यगणके मध्यसे सात करोड साधक, मेरे सन्मुख यहांपर सिद्ध होचुके हैं ॥ ६५ ॥ छः मास पर्य्यन्त नियत आहार (विहार) पूर्वक विश्वेश्वरीका ध्यान करनेसे, चन्द्रेश्वर लिंगकी पूजार्थ समा-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गत यहांपर सिद्धगणको देखने लगता है ॥ ६६ ॥ साक्षात् सिद्ध योगेश्वरी देवी उसको वरदान करती हैं, सिद्ध योगीश्वरीहीके दर्शनसे तुमकोभी बडी सिद्धिका लाभ हुआ है ॥ ६७ ॥ यद्यपि भूतलमें साधकोंके सिद्धिप्रद अनेक पीठ हैं, परन्तु इस योगीश्वरी पीठके—समान दूसरा स्थान शीघ्रही सिद्धिदान करनेवाला क्षितितल पर वर्तमान नहीं है ॥ ६८ ॥ हे शशिन् ! जहांपर तुमने यह चन्द्रेश्वरलिंग प्रतिष्ठित किया है, यही वह अजितेन्द्रिय लोगोंसे अदृश्य पीठ है ॥ ६९ ॥ जितकाम, जितक्रोध, जितलोभ और जितस्पृह लोगही मेरी परमशक्ति उस योगीश्वरी देवीका दर्शन प्राप्त कर सकते हैं ॥ ७० ॥ जो लोग प्रति अष्टमी और प्रति चतुर्दशी (तिथि) में इस सिद्ध योगीश्वरी पीठस्थानपर ॥ ७१ ॥ अदृष्टरूपा, सुभगा, सकल सिद्धिप्रदात्री, पिंगला देवीका धूप, दीप, नैवेद्य आदिके द्वारा भक्तिभावसे पूजन करेंगे उन लोगोंके समक्ष वह देवी प्रकट होवेगी ॥ ७२ ॥ हे द्विज ! महादेव उस विश्वेश्वर नगरीमें चन्द्रमाको ये सब वरदान करके उसी स्थानपर अन्तर्धान होगये ॥ ७३ ॥ तभीसे द्विजराज चन्द्रमा अपने फैलते हुए किरणोंसे दिङ्मंडलको अन्धकारहीन करते हुए इस लोकमें आधिपत्य कर रहेहैं ॥ ७४ ॥ सोमवारके व्रतकर्ता और सोम (लता) के पानमें तत्पर नगरण, सोमप्रभ विमानसे जाकर (इसी) सोमलोकमें निवास करते हैं ॥ ७५ ॥ जो मनुष्य चन्द्रकी उत्पत्ति और उनके तपस्या प्रकरणको भक्तिपूर्वक श्रवण करेगा वह (इस) चन्द्रलोकमें पूजित होगा ॥ ७६ ॥ अगस्त्य बोले—विष्णुके दोनों पारिषद, स्वर्गमार्गमें शिवशर्मासे इस कल्याणकारिणी सकल श्रमहारिणी और शुभदायिनी कथाको कहते हुए वहांसे नक्षत्र लोकमें चलेगये ॥ ७७ ॥

ईशानेशहिं वरनिकै, चन्द्रेश्वरहिं बखानि ।
चन्द्रकूप—महिमा कही, सकल सुमंगल खानि ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां ईशानलोक-चन्द्रलोकवर्णनं नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पञ्चदश अध्याय ।

नक्षत्रलोक और बुधलोकका वृत्तान्त ।

अगस्त्य मुनि बोले—महाभागे ! सहधर्मिणि ! पत्नि ! लोपामुद्रे ! विष्णुदेवके दोनों पारिषदोंने शिवशर्मासे जो कथा कही थी उसे श्रवण करो ॥ १ ॥ शिवशर्माने पूँछा—हे गणद्वय ! यह चन्द्रमाकी कथा तो बडीही विचित्र सुननेमें आई ओ (बाहर) आप लोग समस्त आख्यानोंके पंडित हैं, अतएव इस नक्षत्रलोकका वृत्तान्तभी कीर्तन कीजिए ॥ २ ॥ गणोंने कहा—पूर्वकालमें प्रजाओंकी सृष्टिके अभिलाषी स्रष्टा भगवान्-के अंगुष्ठपृष्ठसे प्रजासर्जनमें दक्ष, (निपुण) दक्षप्रजापति उत्पन्न हुए ॥ ३ ॥ उसी दक्षकी तपरूपी लावण्यसे भूषित समस्त कल्याणकारिणी रोहिणी प्रभृति साठ शुभ कन्यायें उत्पन्न हुई ॥ ४ ॥ वे सब विश्वनाथपुरीमें प्राप्त होकर तीव्र तपस्याके द्वारा उमासहित चन्द्रभूषण महादेवकी आराधना करने लगीं ॥ ५ ॥ जब महादेव तुष्ट होकर वर देनेको आये और प्रसन्न चित्तसे बोले—"तुम सब उत्तम वरकी प्रार्थना करो" ॥ ६ ॥ तब उन कुमारिकाओंने शिवके वचनको सुनकर कहा—हे शंकर ! यदि हम लोगोंको वर देना है और हम सब वरदानके योग्य हैं ? (तो) ॥ ७ ॥ हे महा-देव ! हम लोगोंको यही वरदान होवे कि—जो आपसे भी अधिक संसारका सन्ताप हर्ता और रूपमें भी आपहीके समान होवे वही हम लोगोंका भर्ता हो ॥ ८ ॥ उन सबोंने वरणानदीके रम्य तटपर संगमेश्वरके समीपहीमें नक्षत्रेश्वर नामक बहुत बडा लिंग स्थापन करके ॥ ९ ॥ देवपरिमाणके अनुसार पुरुषायितसंज्ञक महातपस्या करती थी जो कि पुरुषोंसेभी दुष्कर है तदनन्तर सन्तुष्ट हो विश्वेश्वर भगवान्ने उन सबको एकही पर दत्तचित्ता और एकपत्नी होनेकी अभिलाषिणी देखकर ये सब उत्तम वरदान किये ॥ १० ॥ ११ ॥ श्रीमद्विश्वेश्वर देव बोले—पूर्वकालमें दूसरी किसी अबलाने ऐसी अत्युग्र तपस्या (न क्षान्त) सह्य नहीं की थी—अत एव यहां तुम सब का नाम नक्षत्र (निर्धारित) हुआ ॥ १२ ॥ इस समय तुम सबोंने जो यह पुरुषा-यितनामक तपस्या की है इसलिये तुम सब स्वेच्छानुसार पुरुषत्वको प्राप्त होगी ॥ ॥ १३ ॥ इस समग्र ज्योतिश्चक्रमें तुम लोग अग्रगामिनी होगी और मेष आदि राशियोंकी उत्तम योनि (उत्पत्तिक्षेत्र) भी तुमहीं सब होगी ॥ १४ ॥ हे सुमुखियो! जो ओषधियोंका, सुधा (अमृत) का और ब्राह्मणोंका पति है—उसी पतिके द्वारा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तुम सबभी पतिमती होवोगी ॥ १५ ॥ तुम लोगोंके स्थापित इस नक्षत्रेश्वरसंज्ञक लिंगकी पूजा करनेसे, मनुष्य तुम लोगोंके उत्तम लोकमें जावेगा ॥ १६ ॥ चन्द्रलोकके ऊपर तुम लोगोंका निवासोपयोगी लोक होगा और तुम सब समस्त तारा-ओंमें माननीय होगी ॥ १७ ॥ जो लोग नक्षत्रोंके पूजक और नक्षत्रोंहीके अनुसार व्रताचरण करनेवाले हैं वे सब नक्षत्रोंहीके समान देदीप्यमान होकर तुम सबोंके लोक में बसेंगे ॥ १८ ॥ जो लोग काशीमें नक्षत्रेश्वरका दर्शन करेंगे, उन लोगोंको कभी नक्षत्र ग्रह और राशियोंकी पीडा नहीं होवेगी ॥ १९ ॥ अगस्त्यने कहा—विष्णुदेव स्थिरचित्त उन दोनों गणोंके योंही नक्षत्र लोककी सत्कथा वर्णन करनेपर, कियत क्षणके अनन्तर बुध लोक शिवशर्माके नेत्रोंका अतिथि (पाहुन) हुआ ॥ २० ॥ शिवशर्मा पूछने लगा हे श्रीभगवान्के दोनों गण ! यह अतुलनीय किसका लोक है ? जो चन्द्रलोकके समान मेरे चित्तको हर्षित कर रहा है ॥ २१ ॥ विष्णुगणोंने कहा शिवशर्मन् ! स्वर्गमार्गके विनोदार्थ इस पापापहारिणी तापत्रय विनाशिनी कथाको श्रवण (गोचर) करो ॥ २२ ॥ हम लोगोंने जिस साम्राज्य पदको प्राप्त महाकान्तिमान् द्विजराजकी कथा तुम्हारे सन्मुख कुछ पूर्व वर्णन की है ॥ २३ ॥ जिसने राजसूय यज्ञमें त्रिभुवन भर दक्षिणामें दे डाला था, जिसने शत पद्म वर्ष पर्यन्त अत्युग्र तप कियाथा ॥ २४ ॥ जो अत्रिके नेत्रसे उत्पन्न हुआ, और जो स्वयं ब्रह्माका पौत्र है, फिर जो समग्र ओषधियोंका नाथ, एवं सकल ज्योतियोंका अधिपति है ॥ २५ ॥ जो निखिल निर्मल कलाओंका निधि कहलाता है, जो उदय (मान) होकर अपने करोंसे दूसरोंके सन्तापको मानो गलेमें धक्का देकर निकाल देताहै ॥ २६ ॥ जो (उदयको प्राप्त होतेही) जगत्के साथ कुमुदिनी (कोई) को आनन्द दान करताहै और जो दिगंगनाओंके सुन्दर शृंगार आदि देखनेको दर्पण स्वरूप है ॥ २७ ॥ अन्य गुणावलीके वर्णनका कौन प्रयोजन है ? (जब कि) सर्वज्ञ महादेवही उसकी एक कलाको अपने उत्तमांग (भाल)में भूषण बनाये हैं तो भला अब उसचन्द्रके समान और कौन होसकताहै ॥ २८ ॥ उसी रूपवान् विधुने, ऐश्वर्यमदसे मोहित होकर गुरु, पुरोहित, चचेरे भाई, अंगिरा ऋषिके पुत्र, बृहस्पतिकी भार्या परम रूपवती ताराको देवतों और देवर्षियों द्वारा अनेकवार निवारित होनेपर भी बलपूर्वक हरण करलिया ॥ २९ ॥ ३० ॥ इसमें उस कलानिधि द्विजराजका कोई दोष नहीं है, (क्योंकि) त्रिलोचनको छोडकर कामने किसका मन खंडित नहीं किया ॥ ३१ ॥ विशेषतः इस चारों ओर फैलते

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हुए तम (अन्धकार) के शमन निमित्तक विधाताने दीप और सूर्यके किरणआदि-रूप महौषध बनाये हैं, परन्तु आधिपत्यजनित तमके दूर करनेके लिये कुछभी नहीं बनाया है ॥ ३२ ॥ (क्यों कि) आधिपत्य (प्रभुत्व) मदमोहित जनको कोईभी हितवार्ता यहां लों कि हितकारिणी हरिकथाभी स्पर्श नहीं करती, जैसे कि विपरीतचित्त, दुर्जन व्यक्तिको तीर्थमें स्नान करने परभी शुद्धबुद्धि स्पर्श नहीं करती इसेभी वैसाही समझना चाहिये ॥ ३३ ॥ क्यों कि (जिसके कारणसे) विपत्तिके मारे हुए पदसे कुटिल नेत्रोंके द्वारा क्षणमात्र चकराती हुई चकचौंधी लगी हुई दृष्टि—की नांई विपरीत ही देखपडता है, उस बडी संपत्तिके चेष्टितको बारंबार धिक्कार है (अर्थात् अहितहीको हित मानता है) ॥ ३४ ॥ अहो ! कामदेवने पुष्पायुध होनेपरभी त्रिभुवनके बीचमें किसे नहीं जीतलिया ? कौन क्रोधके वशीभूत नहीं हुआ ? लोभने किसे मोहित नहीं किया ? कामिनियोंके लोचनरूपी भालासे हृदयके विदीर्ण होनेपर कौन आपत्तिमें नहीं पडा ? और ऐसाही कौन है जो राज्यश्रीको पाकर सुन्दर आंखें रहतेभी अन्धेकी पदवीपर नहीं विराजमान हुआ ? ॥ ३५ ॥ आधिपत्य ऐश्वर्य्य लक्ष्मी अत्यन्त चंचला है, उसे प्राप्त कर इस संसारमें सत् असत् (भला बुरा) जो चाहे वही उपार्जित कर ले सकता है फलभी अवश्यही तदनुरूप मिलेगा अतएव सच्चरित्र लोगोंको जो अपना हितकर होवे वही करना चाहिये ॥ ३६ ॥ जब चन्द्रने उद्धत होकर बृहस्पतिके लिये ताराको नहीं छोडा तब रुद्रदेव पिनाक धनुष लेकर बृहस्पतिके पृष्ठ पोषक (सहायक) हुए ॥ ३७ ॥ तब तो बडे बली चन्द्रमाने ब्रह्मशिरनामक घोर अस्त्रको महादेवके ऊपर फेंका तदनन्तर उन (रुद्र) नेभी उस अस्त्रको विनष्ट करडाला ॥ ३८ ॥ परस्पर उन दोनोंका घोर तारकामय संग्राम होने लगा—यह देखकर विधाता अनवसरही ब्रह्माण्डके विनाश होजानेसे अत्यन्त भीत हुए ॥ ३९ ॥ तब स्वयं पितामहने प्रलयानलतुल्य तेजस्वी रुद्रदेवको समरसे निवृत्त कर ताराको बृहस्पतिके अधीन करदिया ॥ ४० ॥ ततःपरं बृहस्पतिने ताराके अन्तर्गत गर्भको देखकर उससे कहा—"मेरे क्षेत्रमें तू दूसरेका (बीजरूप) गर्भ कभी नहीं धारण कर सकती ॥ ४१ ॥ तब तो ताराने इषीकास्तंब (काशके जुट्टे) पर जाकर गर्भको परित्याग करदिया उस भगवान्‌के उत्पन्न होतेही देवतोंका शरीर प्रभाहीनसा होगया ॥ ४२ ॥ तत्पश्चात् प्रधान देवतोंने संशयमें पडकर तारासे पूछा, "सच कह, यह गर्भ किसका

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

है ? सोमका अथवा बृहस्पतिका " ॥ ४३ ॥ किंतु देवतोंके (बहुत) पूछने परभी जब तारा मारे लज्जाके कुछभी नहीं बोलसकी, तब वह अतितेजस्वी कुमार उसे अभिशाप (गाली) देने लगा ॥ ४४ ॥ तब फिर ब्रह्माने कुमारको रोककर तारासे उस संशयको पूँछा, ताराने हाथ जोडकर ब्रह्मासे कहा "चन्द्रका" ॥ ४५ ॥ इसके पीछे प्रजापति और उस राजा (चन्द्र) ने ताराके गर्भोद्भूत उस बुद्धिमान् बालकका मस्तक, सूंघकर उसका नाम "बुध" रक्खा ॥ ४६ ॥ अनन्तर समस्त देवतोंकी अपेक्षा अधिक तेज, रूप, और बलसे सम्पन्न बुधने तपस्याके निमित्त निश्चयकर चन्द्रमाकी अनुमति पाय ॥ ४७ ॥ विश्वेश्वरसे पालित निर्वाण (मुक्ति) राशि, काशीधाममें पहुंच, वहांपर अपने नामसे बुधेश्वरलिंगकी प्रतिष्ठा कर ॥ ४८ ॥ हृदयमें बालचन्द्रतिलकधारी मंगलकारी उमाविहारीका ध्यान करते हुए दश सहस्र वर्ष पर्यन्त घोर तपस्याका अनुष्ठान सम्पन्न किया ॥ ४९ ॥ पश्चात् विश्वपति, विश्वभावन, महोदय श्रीमान् विश्वनाथ देव उसी बुधेश्वरनामक महालिंगसे प्रकट हुए ॥ ५० ॥ उस ज्योतीरूप महेश्वरने प्रसन्न मनसे कहा—हे महाबुद्धे देवोत्तम बुध ! वरकी प्रार्थना करो ॥ ५१ ॥ महासौम्य ! तुम्हारे इस तप और लिंग सेवनसे मैं प्रसन्न हूं, तुमको अदेय (मुझे) कुछभी नहीं है ॥ ॥ ५२ ॥ बालक बुधने अवर्षणसे मुरझाते हुए सस्य (धान्य) समूहके संजीवन जलके सदृश, मेघनिर्घोषके समान इस वचनको सुनकर ॥ ५३ ॥ ज्योंही दोनों आंखें खोल सन्मुख देखा, त्योंही उसी लिंगमें चन्द्रशेखर त्रिलोचन भगवान् देखाई पडे ॥ ५४ ॥ बुध स्तुति करने लगे—हे पवित्रात्मन्! आपको नमस्कार है, हे ज्योतीरूप आपको नमस्कार है विश्वस्वरूप, आपको नमस्कार है हे रूपातीत! आपको नमस्कार है ॥ ५५ ॥ हे प्रणतजन सर्वार्तिभंजन आपको नमस्कार है, हे शिवात्मन सर्वज्ञ ! आपको नमस्कार है, हे सर्वकारक आपको नमस्कार है ॥ ५६ ॥ हे दयालो ! आपको नमस्कार है, हे भक्तिमात्रलभ्य ! आपको नमस्कार है, हे तपस्याफलदायक तपोरुप ! आपको नमस्कार है ॥ ५७ ॥ हे शम्भो ! शिव ! शिवाकान्त ! शान्त ! श्रीकंठ ! शूलभृत् ! शशिशेखर ! शर्व ! ईश ! शंकर ! ईश्वर ! धूर्जटे ! ॥ ५८ ॥ पिनाकपाणे ! गिरिश ! शितिकंठ ! सदाशिव ! महादेव! आपको नमस्कार है, हे देव देव आपको नमस्कार है! ५९ ॥ हे स्तुतिप्रिय ! मैं स्तुति करने नहीं जानता, हे महेश्वर ! आपके चरणकमल-युगलमें मेरी निर्द्वन्द्व भक्ति होवे ॥ ६० ॥ हे नाथ ! हे ईश्वर ! यदि आप मुझपर प्रसन्न हैं,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तो यही वरदान दीजिए—हे करुणा—मृत—सागर ! मैं आपसे दूसरा वर नहीं मांगना चाहता ॥ ६१ ॥ अनन्तर महादेवने बुधकी स्तुतिसे परितुष्ट होकर कहा—हे रौहिणेय! (चन्द्रके प्रधानपुत्र होनेसे सबके रोहिणी आदिके पुत्र यही हुए—इसी बातके पुष्ट-करनेको यह संबोधन दिया गया है) महाभाग ! सौम्य ! मधुरवचनाकर ! (बुध !) ॥ ६२ ॥ नक्षत्रलोकके ऊपर तुम्हारा लोक होगा, और तुम सब ग्रहोंमें उत्तम पूजा पावोगे ॥ ६३ ॥ हे सौम्य ! तुम्हारा स्थापित यह (शिव) लिंग सभी लोगोंको बुद्धिदायक और दुर्बुद्धिहारक, एवं तुम्हारे लोकमें वास देनेवाला होवेगा ॥ ६४ ॥ ऐसा कहकर शम्भु भगवान् उसी स्थानपर (लिंगमें) अन्तर्धान होगये और बुधभी देवदेवके प्रसादसे अपने लोकको चलेगये ॥ ६५ ॥ गणोंने कहा—काशीमें बुधेश्वर महादेवके पूजनेसे लब्धबुद्धि नर, अगाध संसारसागरमें गिरकरभी गोते नहीं खाता और साधुजनके नेत्रोंमें चन्द्रमाके तुल्य कान्तिमान् एवं सुन्दरवदन होकर इस बुध-लोकमें निवास करता है ॥ ६६ ॥ चन्द्रेश्वर शिवके पूर्वभागमें स्थित बुधेश्वर लिंगके दर्शन करनेसे कभी कोई जन्तु अन्तकालमें भी बुद्धिसे हीन नहीं होता ॥ ६७ ॥ जबलों वे दोनों विष्णुगण इस बुधलोककी कथाको कह रहेथे, तब तक विमान अत्युत्तम शुक्रलोकमें जा पहुंचा ॥ ६८ ॥

सकल नछत्रनकी कथा, पुनि बुधलोक वृत्तांत ।
बहु प्रकार वरनन किये, जो सुख देत नितांत ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां नक्षत्रलोक-बुधलोक वृत्तान्तवर्णनं नाम पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

सोलहवाँ अध्याय ।

शुक्रलोक और शुक्रकी कथा ।

विष्णुके गण बोले—महाबुद्धे शिवशर्मन् ! यह शुक्रलोक अद्भुत है, यहांपर दैत्य दानवोंके गुरु कवि रहते हैं ॥ १ ॥ जिसने अतिदुःसह कणधूम (फूंसीका धुआं) सहस्र वत्सर पर्यन्त पीकरके श्रीमहादेवसे मृत्युसंजीवनी नामक महाविद्या प्राप्त की है॥ ॥ २ ॥ इस अति दुष्कर (कठिन अलभ्य) विद्याको देवाचार्य बृहस्पतिभी नहीं जानते, केवल महादेव पार्वती स्वामिकार्तिक और गणेश ही जानते हैं (अन्य कोई

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भी नहीं जानता) ॥ ३ ॥ शिवशर्माने पूँछा वह कौन हैं जो शुक्र नामसे विख्या
है ? जिनका यह उत्तम लोक है ? और क्योंकर उसने मृत्युंजय देवसे मृतसंजीवि
विद्या प्राप्त की है ॥ ४ ॥ हे प्रभु देवद्वय ! यदि मुझपर प्रीति है तो यह कहि
कि अनंतर वे दोनों विष्णुदूत देवता शुक्रकी उत्कृष्ट कथा कहने लगे ॥ ५ ॥ जिसे श्रद्ध
सहित सुननेसे अपघात मृत्यु नहीं होता और न भूत प्रेत पिशाचादिका भयही रह
पाता है ॥ ६ ॥ "गणोंने कहा" अनिर्भेद्य–गिरिव्यूह और वज्रव्यूहके स्थि
अंधक और अंधकारिके युद्ध प्रवृत्त होनेपर ॥ ७ ॥ एकवार अन्धक रणभूमि
निकल रथसे उतर शुक्रके पास जाकर यह बोला ॥ ८ ॥ भगवन् ! हम लोग आ
के आश्रय (भरोसे) से सानुचर रुद्र उपेन्द्र इत्यादि देवतोंकोभी तृणके तुल्य मा
हैं ॥ ९ ॥ हे गुरो ! आपहीके अनुग्रहसे देवतागण हमलोगोंसे वैसेही डरते हैं
कि सिंहोंसे हस्तिगण अथवा गरुडोंसे सर्पसमूह डरतेहैं ॥ १० ॥ तापार्दित
जैसे ह्रद (तालाव) में प्रविष्ट होते हैं वैसेही दैत्य दानवगण प्रथम सेनाको कंपा
अभेदनीय वज्रव्यूहमें प्रवेश किये बैठे हैं ॥ ११ ॥ हे ब्राह्मणेन्द्र ! हम सब आप
रक्षक पाकर पर्वतोंके सदृश निश्चलरूपसे घोरसंग्राममें स्थित होकर निःशंकभा
घूमते फिरतेहैं ॥ १२ ॥ हम लोग पुत्रकलत्रके सहित विश्वस्तभावसे सुखप्रद आ
के दोनों चरणोंकी शुश्रषा दिनरात किया करतेहैं ॥ १३ ॥ हे विप्र ! प्रसन्न हो
इन शरणागत लोगोंकी सर्वतो भावसे रक्षा कीजिये, देखिये, हुंड, तुदुंड, कुजंभ,
॥ १४ ॥ पाक, कार्तस्वन, विपाक, पाकहारी, चन्द्रदमन; शूर और वीर अमरविदारण
॥ १५ ॥ इत्यादिकको मृत्युजेता घोरपराक्रमी प्रमथगण आक्रमण कर, द्राविड
जैसे चन्दनको काटते और गिरादेतेहैं (वैसेही पतित और घातित कररहेहैं) ॥ १६
पूर्वकालमें आपने जो तुष धूम पानकर सहस्रवर्ष पर्यंत उत्कृष्ट विद्या प्राप्त की
(आज) उसके (प्रकट करनेका) समय आपहुंचाहै ॥ १७ ॥ दैत्योंको जिला
हुए आपके उस विद्याके फलको आज सकल प्रथमगण इन आपके जिलायेहुए दैत्
(रूपमें) देखलेवें ॥ १८ ॥ स्थिरबुद्धि भार्गवमुनि, अंधकके इस वचनको सुन,
हँसकर दानवेश्वरसे कहने लगे ॥ १९ ॥ हे दानवराज ! तुमने जो कुछ कहा
सत्य है मैंने इस विद्याका उपार्जन दानवोंहीके निमित्त कियाहै ॥ २० ॥ सहस्रव
पर्यन्त अतिअसह्य कणधूम पानकर मैंने बांधवगणको सुख देनेवाली यह विद्या
देवसे प्राप्त कीहै ॥ २१ ॥ मैं इस विद्यासे रणस्थलमें प्रमथगणसे निहत असु

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सुखतेहुए धानोंको जलधर (मेघ) के सदृश उठाकर खडा करदूंगा ॥ २२ ॥ राजन् ! इसी मुहूर्तमें मृत दानवोंको, अक्षत, व्यथाविहीन स्वस्थ मानो सोकर जाग उठेसे देखोगे ॥ २३ ॥ कवि, दैत्येन्द्रसे यह कहकर एक एक दैत्यके उद्देशसे उस मन्त्रको जपने जपनेलगे ॥ २४ ॥ संप्रदायके उच्छिन्न होजानेसे विस्मृतहुआ भी पुनः सदअभ्याससे जैसे वेद अभिव्यक्त (स्पष्ट) होजातेहैं और पूर्वके विलुप्त जलद-गण जैसे वर्षाऋतुमें पुनः उदित होजातेहैं, एवं श्रद्धापूर्वक ब्राह्मणादिको प्रदत्त धन जैसे बडी विपत्तिकी वेलामें दाताओंके फलदानार्थ उठ खडे होतेहैं वैसेही वे दैत्यगण अस्त्रधारणपूर्वक उठउठकर खडे होनेलगे ॥ २५ ॥ हुतुंड इत्यादि महासुरोंको पुनः जी उठते देखकर वे सब दैत्यगण जलपूर्ण मेघोंकी नाईं गर्जनेलगे ॥ २६ ॥ (और) प्रमथगणेश्वर लोग उन दानवोंको शुक्रके द्वारा पुनरुज्जीवित होते देख परस्पर कहने लगे कि, यह समाचार देवदेवसे निवेदन करदेना चाहिये ॥ २७ ॥ तदनंतर प्रथमा-धिपोंके आश्चर्यरूप उस युद्धयज्ञके आरम्भ होजानेपर, भार्गवके उस कर्मको देख क्रोधित होकर शिलादके पुत्र नंदी महेशके निकट गये ॥ २८ ॥ अनंतर नंदीने जय-शब्दोच्चारणपूर्वक जयके कारणरूप महादेवसे कहा—हे देव ! इन्द्रादिदेवतोंसेभी दुष्कर कनकसदृश शुद्ध रणकर्म जो हम सब गणनायकोंने कियाहै ॥ २९ ॥ उसे भार्गवने एकएकके उद्देशसे मृतजीवनदात्री विद्याकी आवृत्ति करके समरनिहत विपक्षगणको जिलाजिलाकर आज सलील (खेलवाडमें) ही वृथा करादियाहै ॥ ३० ॥ तुहुंड, हुंड, कुजंभ, जंभ, विपाक और पाकादि महासुरेन्द्रगण, यमालयसे लौट आकर आज फिर प्रमथोंको विद्रावित करतेहुए घूम रहेहैं ॥ ३१ ॥ यह भार्गव यदि योंही मृत-दैत्योंको वारंवार जीवितही करतारहेगा तो हे महेश ! यहांपर हमलोगोंका जय क्यों कर होगा ? सुतरांगणनायकोंकी सुखशांतिही कैसे होगी ? ॥ ३२ ॥ प्रमथनायक नन्दीके ऐसा कहनेपर प्रमथाधिपराज महेश्वरने हँसकर उस सब गणाध्यक्षेश्वर नन्दीसे यों कहा ॥ ३३ ॥ हे नन्दिन् ! अतिमात्र शीघ्रतासे जाओ, जैसे श्येन (बाज) लावक (लवा) पक्षीको झपटकर पकडलेताहै, वैसेही दैत्योंके मध्यसे उस ब्राह्मणप्रवरको उठालाओ ॥ ३४ ॥ वृषभध्वजके ऐसा कहतेही वे वृषसिंहनादी नन्दी गर्जने लगे और तुरंत जहाँपर भृगुवंश प्रदीप शुक्र स्थित थे सेनामें घुसकर (सेना को ढहोरते हुए) वहाँ जा पहुँचे ॥ ३५ ॥ समस्त दैत्योंके द्वारा पाश, खड्ग, वृक्ष, पाषाण और पर्वतादि हाथमें लेकर, रक्षाकियेजातेहुए उस काव्यको, दैत्यगणको विशो-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भितकर, बलवान् नन्दी शरभ जैसे हाथीको उठालेजाताहै वैसेही छोर लाये ॥ ३
उस स्खलित वस्त्र, विच्युतभूषण, विमुक्तकेश महाबली नन्दीसे ग्रहण कियेगये
छोडालेनेहीके प्रयोजनसे मानो दैत्यगण सिंहनाद करतेहुए नन्दीके पीछे पीछे
लगे ॥ ३७ ॥ उस घडी दानवेन्द्रगण मेघमंडलके समान (चहूं ओरसे)
श्वरके ऊपर वज्र,शूल खड्ग, कुठार, बहुतसे चक्र, पाषाण और कंपनास्त्र (कँपा
ढेलवास) आदिको बडे वेगसे वर्षण करनेलगे ॥ ३८ ॥ वे गणाधिनायक
प्रवृद्ध देवासुरसंग्राममें शत्रुसैन्यको व्यथितकर मुखाग्निकेद्वारा सैकडों अस्त्रोंको
करतेहुए उस भार्गवको पकडेहुए महादेवके पास जाकर उपस्थित हुए ॥ ३
और उनने तुरतही शिवसे निवेदन किया—"हे भगवन् ! यही वह शुक्रहै"
देवदेवने पवित्रव्यक्तिके द्वारा निवेदित उपहारकी भाँति उस शुक्रको ग्रहण क
॥ ४० ॥ उन भूतपतिने बिना कुछ कहे (सुने) कवीन्द्र शुक्रको फलके
मुखमें डालदिया, तब तो समस्त दैत्यगण उच्चैस्स्वरसे निरंतर "हां हां—हाय
इत्यादिरूप हाहाकार करनेलगे ॥ ४१ ॥ गिरिजापतिसे शुक्रके निगलेजानेपर
वृन्द जयकी आशासे विमुख होगये, तब जैसे बिना सूंडके हाथी—शृङ्ग रहित
वृषभेन्द्र ॥ ४२ ॥ शरीरसे हीन जैसे जीवसंघ, यथा अध्ययनविहीन द्विज
एवं उद्यमविवर्जित प्राणियोंके गण, योंही भाग्यविरहित उद्योग ॥ ४३ ॥ जैसे
वियुक्त रमणीगण, अथवा पक्षहीन बाणसमूह जैसे पुण्यसे क्षीण आयुष्य, वा अ
पुरुषका शास्त्रादि पठन ॥ ४४ ॥ और फिर जैसे एकवैभवशक्तिके बिना
क्रियाकलाप निष्फल होजातेहैं, उसी प्रकारसे दैत्यगण उस द्विजवर्यके बिना
जयकी आशासे रहित होगये ॥ ४५ ॥ जब नन्दी शुक्रको उठाय लाये और
हल विषके पीनेवाले शिव उनको निगलगये, तब रणोत्साहविहीन असुरगण
विषाद करनेलगे ॥ ४६ ॥ उन सबको निरुत्साह देखकर अंधक बोला—पर
पूर्वक शुक्रको उठा लेजानेवाले नन्दीसे हम लोग ठगेगये ॥ ४७ ॥ उस (नंदी
आज हम सब लोगोंके शरीरके बिना प्राण, धैर्य, वीर्य, गति, कीर्ति, उत्साह
पराक्रमादि ॥ ४८ ॥ सब कुछ एकबारही भार्गवको हरण करके लेलिया, जो
कुलपूज्य, विप्रकुलश्रेष्ठ, सर्वसमर्थ आपत्तिकालमें रक्षाकरनेवाले एकगुरुकोभी
नहीं करसके, अतएव हमलोगोंको धिक्कारहै ॥ ४९ ॥ (अस्तु जो होनाथा
अब तो यहांपर धैर्यका अवलंबन करके शत्रुओंके साथ युद्ध करतेजाओ, मैं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

साहित इन समस्त प्रमथगणको मारूंगा ॥ ५० ॥ आज इन्द्रादि देवतोंकेसहित इन
सबको विवशकर और मार, भार्गवको ऐसे छुडालाऊंगा जैसे योगी कर्मबन्धनसे जीव-
को विमुक्त करदेताहै ॥ ५१ ॥ और यदि (कहीं) वह योगी प्रभु योगबलके द्वारा
शिवके शरीरसे स्वयं निकल आवेगा तो अवशिष्ट हमलोगोंकी (अन्तमें) रक्षा
करेगा ॥ ५२ ॥ अंधकके ऐसे वचनको सुन मेघगंभीर निर्घोष दानवगण, मरणका
निश्चय कर प्रमथगणको अर्दित करनेलगे ॥ ५३ ॥ "जबतक आयुष्यहै तबतक
ये प्रमथगण, बलसे मारही नहीं सकते, फिर हाँ यदि आयुष्यही नहीं है तो निज
स्वामीको युद्धमें छोड भागनेहीसे क्या फलहै ? ॥ ५४ ॥ जो बडे मानधन लोग
रणक्षेत्रमें स्वामीको त्यागकर भागजातेहैं वे अवश्यमेव अंधतामिस्रगृह (नरक) में
पडतेहैं ॥ ५५ ॥ बहुत बडी सुख्यातिको अपयशरूपी तमसे (अंधकारसे) मलिन
करके जो लोग समरांगणसे भग्न होजातेहैं वे इसलोक और परलोकमें कहींभी सुखी
नहीं होते ॥ ५६ ॥ पुनर्जन्मरूप मलके विनाशक रणक्षेत्र (अस्त्रधारा) रूप तीर्थमें
जिसने स्नान करालिया, उसे क्या दान क्या तप अथवा तीर्थस्नानसे क्या प्रयोजन
॥ ५७ ॥" दैत्यदानवगण परस्पर यही स्थिरकर समरके डंकोंपर चोट लगा
युद्धमें प्रमथगणको मथनेलगे ॥ ५८ ॥ वहाँपर प्रमथ और दैत्यगण परस्पर बाण,
तलवार, वज्रसमूह, कटंकट बोलनेवाला शिलायन्त्र, भुशुण्डी, ढेलबांस, शक्ति, भाला,
मुठार ॥ ५९ ॥ खट्वाङ्ग, पट्टिश, शूल, लकुट (लकडी) और मुशलके द्वारा
आघात प्रतिघात करतेहुए घोर कदन (मारकाट) करनेलगे ॥ ६० ॥ खिंचेजाते
हुए धनुषोंके और गिरतेहुए बाणोंके एवं भिंदिपाल और भुशुंडी तथा सिंहनादके शब्द
होनेलगे ॥ ६१ ॥ युद्धके डंकोंके निनाद, हाथियोंके अनेक बृंहित (गर्जन) और
घोडोंके हिनहिनाहटसे बडा (भारी) कोलाहल मचगया ॥ ६२ ॥ पृथिवी और
आकाशका बीच प्रतिध्वनियोंसे परिपूर्ण होगया, वीरोंको और डराकूओंकोभी अत्यन्त
रोमांच होनेलगा ॥ ६३ ॥ दोनों पक्षके सैनिकलोगोंका हाथी घोडोंके बडे शब्दसे
कान फटनेलगे, ध्वजा पताका आदि गिरनेलगे और शस्त्रभी अल्पावशिष्ट टूटतेटूटते
बहुतही क्षीण होगये ॥ ६४ ॥ घोडा हाथी और रथ सभी रुधिरोद्गारसे चित्रित
होगये और वे सबके सब प्यासके मारे मूर्छित होनेलगे ॥ ६५ ॥ तब स्वयं अंधक,
पथोंसे इधर उधर भगाईजातीहुई अपनी सेनाको देख रथपर चढ दौडने लगा ॥
॥ ६६ ॥ अब तो वे प्रमथगण, वज्राघातोंसे पर्वतोंकी नाईं अथवा प्रचण्ड वायुवेगसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

निर्जल मेघोंके सदृश उस अंधकासुरके वज्रोपम बाणके प्रहारोंसे विनष्ट होनेलगे ॥ ६७ ॥ फिर उसकालमें अंधक आते, जाते, दूरस्थित और निकटवर्त्ती सभीको देख भालकर प्रत्येकको रोमसंख्याके अनुसार बाणोंसे वेधनेलगा ॥ ६८ ॥ महाबल गणेश, कार्तिकेय, नन्दी, सोमनन्दी, नैगमेय, शाख, विशाख ॥ ६९ ॥ इत्यादि अत्युग्रगणनायकोंनेभी त्रिशूल शक्ति और बाणसमूहको वृष्टिकी धाराके तुल्य वर्षा करतेहुए अंधकासुरकोभी अन्ध करडाला ॥ ७० ॥ इसके अनन्तर प्रमथगण और असुरसैन्यका महान् कोलाहल होनेलगा, उस बडे शब्दसे शिवके उदरमें स्थित भृगु ॥ ७१ ॥ बाहर होनेकी इच्छासे छिद्र अन्वेषण (खोज) करते करते आश्रयहीन वायुकी नाईं घूमते हुए,उसी रुद्रके जठरमें,पातालके सहित सातोलोकोंको देखा ॥ ७२ ॥ ब्रह्मा, नारायण, इन्द्र, आदित्य और अप्सराआदिकोंके विचित्र भुवनोंको एवं प्रमथ असुरके वर्तमानयुद्धकोभी देखा ॥ ७३ ॥ वह सौवर्षपर्य्यन्त महादेवके कुक्षिमें रहा ओर घूमते रहनेपरभी, खल जैसे पवित्रव्यक्तिके रन्ध्रको नहीं देखपाता, वैसे यह वहां छिद्र नहीं देखसका ॥ ७४ ॥ तदनंतर भार्गवने शैवयोगबलके द्वारा रेत (वीर्य) रूपसे स्खलित होकर महादेवको प्रणाम किया—शिव बोले ॥ ७५ ॥ हे नन्दन ! तुम जो शुक्रके सदृश निकले इस कर्मके कारण तुम्हारा नाम शुक्र है और तुम मेरे पुत्रहुए अच्छा तो अब जाओ ॥ ७६ ॥ शुक्रके उदरसे निकलजाने महादेवभी बडे प्रसन्न हुए कि यह बहुत अच्छाहुआ जो यह ब्राह्मण घूमता घूमता पेटहीमें नहीं मरगया ॥ ७७ ॥ महादेवके ऐसा कहनेपर सूर्यके समान भास्वर शुक्र, जैसे घनघटामें चन्द्रमा घुसतेहैं—दैत्यसेनामें प्रविष्ट हुए ॥ ७८ ॥ वह दानव सेना शुक्रोदयहोनेसे वैसीही प्रसन्न हुई जैसे चन्द्रके उदयसे तरंगमालायुक्त समुद्र हर्षित होताहै ॥ ७९ ॥ अंधक और अंधकान्तक शिवके युद्ध होतेरहनेके समय भार्गवनंदनने इसप्रकारसे "शुक्र" नाम पाया ॥ ८० ॥ हे सुव्रत ! अब जिसरीतिसे शुक्रने शिवके अनुग्रहसे मृतसंजीवनी नाम्नी महाविद्याको प्राप्त किया—उसका वृत्त सुनो ॥ ८१ ॥ दोनोंगण बोले पूर्वकालमें इस भृगुनंदनने अडंज स्वेदज उद्भिज्ज और जरायुज इन चतुर्विध प्राणियोंको गतिदेनेवाली वाराणसीपुरीमें जाकर ॥ ८२ ॥ शिवलिंग स्थापना और उसके आगे कूपनिर्माण (खोद) कर, प्रभु विश्वेश्वरका ध्यान करते हुए बहुतकालतक तपस्या की ॥ ८३ ॥ राजचंपक, धतूर, कनईल, कमल, मालती, कर्णिकार, कदंब, मौलसिरी, श्वेतपद्म ॥ ८४ ॥ वेला, शतपत्री, सिंदुवार,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अशोक, कानो, पुंनाग, नागकेशर, ॥८५॥ छोटी माधवी, पाटला (गुलाब) वेल, चंपा, नवमल्लिका, विचकिल, कुंद, कुंदुरू, ॥ ८६ ॥ मंदार, बेलपत्र, द्रोण, मैनफल, गुम्मा (वक) ग्रंथिपर्ण, दौना, दमनक, सुरभू, आमका बौर ॥ ८७ ॥ तुलसी, देवगंधारी, बृहत्पत्री, कुशका अंकुर, तगर, अगस्त्य, साल, देवदारु ॥ ८८ ॥ कचनार, कुरुबक, कुरंटक, (कोरैया) और दूर्वाका अंकुर, इन सब पुष्पों पत्रों ॥ ८९ ॥ तथा अन्यप्रकारके सैकडों सहस्रों भांतिभांतिके पुष्प और दलोंसे एक एक करके वह शंकरकी पूजा करनेलगा॥९०॥९१॥द्रोणपरिमाण पंचामृत और सुगंधजल आदिके द्वारा महादेवको लाखोंवार स्नान कराया। फिर देवेश्वरको सुगन्धोद्वर्तनकर (इत्रलगा) यक्षकर्दम और चन्दनादि द्रव्योंको सहस्रशः यत्नपूर्वक अनुलेपन, करनेलगा फिर उसने नृत्यगीतादिक उपहार और वेदोक्त स्तुतियोंसे तथा अन्य सहस्रनामादि विविध स्तोत्रोंसे शिवका बडा स्तव किया ॥ ९२ ॥ शुक्रने इसविधसे पांचसहस्रवर्षपर्य्यन्त महादेवकी आराधना की ॥९३॥ तिसपरभी जब महेश्वरको कुछभी वरदानोन्मुख नहीं देखा तो, अन्यप्रकारका दुःसह घोर नियम ग्रहण किया ॥ ९४ ॥ इन्द्रियगणके सहित चित्तकी चंचलतानामक महामलको (शिव) भावनारूप जलसे वारंवार धोकर ॥९५॥ निर्मला चित्तरूपी रत्नको पिनाकीदेवके लिये समर्पण कर, सहस्रवत्सरपर्यन्त शुक्रने भूंसीके धूमको पान किया ॥ ९६ ॥ तब महात्मा भार्गवके ऊपर महादेव प्रसन्न हुए—साक्षात् दाक्षायणीके पति विरूपाक्ष, सहस्रों सूर्यसेभी अधिक तेजोमय रूपसे उसी लिंगसे निकलकर बोले—हे तपोनिधे ! भार्गव ! (अब) मैं प्रसन्नहूं वर वराओ (मांगो) ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ कमलनयन वह ब्राह्मण, शिवभगवान्के इस वचनके श्रवणानन्दसे रोमांचितशरीर ॥ ९९ ॥ और प्रफुल्लनेत्र हो, माथेपर हाथोंको जोड, जयजय कहताहुआ संतोषपूर्वक अष्टमूर्ति महादेवका स्तव करनेलगा ॥ १०० ॥ भृगुनन्दन बोले—हे जगदीश्वर ! आपही इस प्रभाजालसे समस्त अन्धारको दूरकर निशाचरोंके सभी अभीप्सित वस्तुओंको अस्त (ध्वस्त) करदेतेहैं और त्रिभुवनके हितार्थ दिनमणि (सूर्य) रूपसे आकाशमण्डलमें देदीप्यमान होतेहैं, अतएव आपको (मेरा) प्रणामहै ॥ १ ॥ हे सुधासमूहपरिपूर्ण हिमांशु (चन्द्र) रूप ! आपही लोकमें समस्त अंधकारको विनाशित कर, असीम महातेजके द्वारा कुमुदका प्रमोद और समुद्रका आमोद (हर्ष) संपादन करतेहैं, आप अतीव शोभनहैं, अतएव आपको नमस्कारहै ॥२॥ हे भुवनजीवन! आपही सदागति (वायु) रूपसे वेदमार्गमें उपासनीयहैं, जगतमें आपके विना कौन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जी सकताहै ! हे अनम्रप्रभंजन ! हे सर्वजन्तुविवर्द्धक ! हे सर्पकुलके संतोषक आपको प्रणतिहै ॥ ३ ॥ हे भुवनैकपावन ! अमृत ! जगदन्तरात्मन् ! केवल आप की पावन (पाचक) शक्तिके विना यह देवता—इन्द्रिय—पंचभूतमय जगत्‌रक्षाको नहीं पाता अहो ! अतएव हे पावक (अग्नि) रूप ! शान्तिप्रदाता आपको प्रतिक्षण प्रणाम है ॥ ४ ॥ हे जगत्पवित्र ! विचित्र सुन्दर चरित्र ! पानीयस्वरूप ! परमेश्वर ! विश्वनाथ ! आपही इस अद्भुत संसारको पान और स्नानकेद्वारा भीतर और बाहर निश्चयही पवित्र तथा निर्मल करदेतेहैं—अतएव आपके सन्मुख (चरणों पर) मैं प्रणत हूं ॥ ५ ॥ हे सदय ईश्वर ! आकाशरूपिन् ! आपही बाह्य और अभ्यन्तर (बाहर भीतर) अवकाश देतेहैं, इसीसे यह ब्रह्माण्ड प्रफुल्ल रहता है, आपके द्वारा यह सदा श्वासलेता और आपहीके स्वभावसे संकोचको प्राप्त होजाताहै अतएव आपको नमस्कार करता हूं ॥ ६ ॥ हे तमोविनाशक ! विश्वंभरा (पृथिवी) त्मक प्रभो ! विश्वनाथ ! इस विश्वमें आपके भिन्न इसका भरण पोषण कौन करताहै हे गौरीविभूषित ! भुजगभूषण ! भला शान्तिप्रधान पुरुषोंमें दूसरा और कौन स्तुति करने योग्यहै ? अतएव हे परात्पर ! आपको नमस्कार करताहूं ॥ ७ ॥ हे आत्म स्वरूप ! (यजमानरूप) सर्वान्तरात्मनिलय ! हर ! आपके रूप परंपराद्वारा यह चराचर संसार व्याप्तहै, प्रत्येक लिंगशरीरमें आप चिदाभासरूपसे भासमान (वर्तमान) हैं अतएव हे परमात्मरूप ! अष्टमूर्ते ! आपको मैं नित्यही प्रणाम करताहूं ॥ १०८ ॥ हे पार्वतीके अभिवन्दनीय ! वन्द्यके भी वन्द्य ! सर्वजनहितमूर्ते ! भक्तजनमात्रसुलभ भव ! आप सकल अर्थसमूहके मध्यमें परमार्थ हैं, आपकी इन अष्टमूर्तियोंसे समस्त ब्रह्माण्ड व्याप्तहै, अतएव आपको नमस्कारहै ॥ ९ ॥ भार्गव, इस अष्टमूर्त्यष्टक स्तोत्रके द्वारा महादेवकी अभिलाषारूप स्तुति कर भूमिपर मस्तक लगाय बारंबार (साष्टाङ्गदण्डवत्) प्रणाम करनेलगा ॥ ११० ॥ बडे तेजस्वी भार्गवकी ऐसी स्तुतिकरनेपर, महादेव उस प्रणतब्राह्मणको निज करकमलयुगलके द्वारा पकडकर पृथिवीपरसे उठाय ॥ ११ ॥ दन्तप्रभासे दिगन्तरको प्रद्योतित करते बोले—अपर किसीसे अनाचरित तुम्हारी इस उग्रतपस्या ॥ १२ ॥ लिंगस्थापन पुण्य लिंगकी आराधना, स्थिर पवित्र (निर्मल) चित्तरूपी रत्नके उपहार दान ॥ १३ ॥ और अविमुक्त महाक्षेत्रमें पवित्र आचरणके द्वारा तुमको मैं आत्म दोनों पुत्रोंके समान देखताहूं, तुम्हारेलिये मुझे अदेय कुछभी नहींहै ॥ १४ ॥ तुम

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इसीशरीरसे मेरे उदररूप कुहर (गुफा) में प्रवेशकर मेरे पुरुषेन्द्रियमार्गसे बाहर होकर मेरे पुत्रजन्मत्वको प्राप्त होगे ॥ १५ ॥ पार्षदोंसेभी दुष्प्राप एक अन्य वरदान करते हैं, मैंने इसे ब्रह्मा, विष्णुसेभी प्रायः गुप्त रक्खाहै ॥ १६ ॥ मैंनेही बडे तपोबलसे जिसे बनायाथा, वह मृतसंजीवनी नाम मेरी निर्मल विद्या है, ॥ १७ ॥ हे महाशुचे ! मन्त्ररूप उस विद्याको आज तुमको देताहूं, हे पवित्रतपोनिधे ! उस विद्याके ग्रहणकरनेकी तुम्हारी योग्यताहै ॥ १८ ॥ हे विश्वेश्वर श्रेष्ठ ! जिस जिसके उद्देशसे इस मंत्ररूपा विद्याको संयतभावसे जप आवृत्ति करोगे वह वह अवश्य जी जावेगा ॥ १९ ॥ आकाशमंडलमें तुमारा तेज, सूर्य, अग्नि और तारागणको अतिक्रमण कर अत्यन्त देदीप्यमान होगा, अतएव तुम ग्रहोंमें श्रेष्ठ होगे ॥ १२० ॥ तुम्हें सन्मुख कर जो नर—नारीगण यात्रा करेंगे, तुम्हारी दृष्टि पडजानेसे उनके सब कार्य प्रनष्ट होजावेंगे ॥२१॥ हे सुव्रत ! तुम्हारे उदय होजानेपर, लोकमें मनुष्योंके विवाहादिक समग्र शुभकार्य धर्म कर्म अनुष्ठित होनेसे सफल होंगे ॥ २२ ॥ सकल मन्दतिथिगण तुम्हारे संयोगसे शुभफलप्रद होंगे, और तुम्हारे भक्तगण बहुवीर्य और बहु सन्तानसम्पन्न होवेंगे ॥ २३ ॥ तुम्हारे स्थापित शुक्रेश्वर नामक इस लिंगकी पूजा जो मनुष्य करेंगे, उनकी सर्वत्र सिद्धि होगी ॥ २४ ॥ जो लोग, एकवर्षपर्यन्त प्रतिशुक्रवारको नक्तव्रत करके उसीदिन शुक्रकूपमें सर्वविध जलक्रियाओंको संपादन करेंगे॥२५॥ और शुक्रेश्वरका पूजन करेंगे, उनका फल सुनो, वे सब नर, निश्चयही अवंध्यवीर्य, पुत्रवान् बडे वीर्यशाली और पुरुषत्व सौभाग्यसे पूर्ण रहेंगे ॥ २६ ॥ उन सबको कोई विघ्न न होगा, और (अन्तमें) सुखपूर्वक (शुक्रलोकमें) वास करेंगे इन सब वरोंको देकर महादेव उसी लिंगमें लीन होगये ॥ २७ ॥ गणोंने कहा—जो लोग शुक्रेश्वरके भक्तहैं वेही शुक्रलोकमें वास करतेहैं; हे परन्तप ! विश्वेश्वरके दक्षिण शुक्रेश्वर लिंग विद्यमानहै ॥ २८ ॥ जिसके दर्शनमात्रसे (मनुष्य) शुक्रलोकमें सादर वास करताहै । हे महामते ! यह शुक्रलोककी स्थिति (तुमसे) कहीगयी ॥२९॥अगस्त्य बोले—हे सुव्रते ! सहधर्मिणि ! वह ब्राह्मण (शिवशर्मा) इसप्रकारसे शुक्रलोककी कथा सुनते सुनते(कियत्क्षणके अनन्तर)मंगललोकको देखने लगा॥ १३० ॥

शुक्रलोक औ शुक्रकी, वरनी कथा ललाम ।
शुक्रेश्वर सेवन किये, पुरवत निजजन काम ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां शुक्रलाक—शुक्रकथावर्णनं नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सप्तदश अध्याय ।

मंगल—बृहस्पति-और शनिलोक कथा ।

शिवशर्माने कहा—हे दोनोंदेव ! शुक्रसंबंधिनी कथा तो मैंने सुनी, इसके श्रवणमात्रसे मेरे दोनों कान बडेही संतुष्ट होगये ॥ १ ॥ इस घडी पारिदृश्यमान यह शोकहारी निर्मललोक. किस पुण्यनिधिका है ? मुझसे इसे कहनेको आपलोग प्रवृत्त होवें ॥२॥ आप लोगोंके मुखसे सुखपूर्वक उद्गत अमृततुल्य वचनोंको कर्णरूपी पुटपात्रसे पानकरनेपरभी मेरी तृप्ति नहीं होतीहै ॥ ३ ॥ दोनोंगण बोले—हे शिवशर्मन् ! इसे लोहितांग मंगलका लोक समझना चाहिए यह जैसे भूमिके पुत्र हुए, वह सब इनका वृत्तान्तभी कहते हैं ॥ ४ ॥ पूर्वकालमें दाक्षायणी (सती) देवीके वियोगसे तपस्या करतेहुए शम्भुके भालस्थलसे एक बिन्दु स्वेद (पसीना) भूमितलपर गिरपड़ा ॥ ५ ॥ (बस) उसीके द्वारा महीतलसे एक लोहितांग कुमार उत्पन्न हुआ और धरित्रीहीने धात्री (धाई) रूपसे स्नेहपूर्वक उसकुमारका लालन पालन किया॥ ६ ॥ इसीकारणसे लोहितांग, "भौम माहेय" इस परम सुख्यातिको सदा प्राप्त हुए हैं, हे अनघ ! इसके अनन्तर उनने शिवपुरीमें पहिले घोर तप किया ॥ ७ ॥ जहांपर कि जगत्की हितकारिणी असि—और वरुणा ये दोनों शोभन नदियां उत्तर वाहिनी गंगामें मिलीहुई हैं ॥ ८ ॥ सर्वत्रव्यापी होनेपरभी जहां विश्वेश्वर यथाकाल मृत्युको प्राप्त समस्त जन्तुओंको मुक्तिदेनेके लिए नित्यही विशेष रूपसे अधिष्ठित रहते हैं ॥ ९ ॥ जिस स्थानमें विश्वनाथके परम अनुग्रह पानेसे सबही देहधारी मृत होजानेपर अमृतपदको प्राप्त होतेहैं ॥ १० ॥ जिस अविमुक्त क्षेत्रमें सांख्य, योग, और विविध व्रतादिकोंके विनाही शरीरत्याग करनेवाले फिर कभी जन्म लेकर शरीरधारण नहीं करते ॥ ११ ॥ उसी काशीके पांचमुद्र नामक महापीठमें, कंबल और अश्वतर इन दोनों नागोंके उत्तरप्रान्तमें, अंगारकने अपने नामसे विधिपूर्वक अंगारकेश्वरलिंगकी स्थापना कर ॥ १२ ॥ जितने दिनतक उनके शरीरसे जलते हुए अंगारेके समान तेज नहीं निकसा (ला) तबतक वे महात्मा तपश्चर्याही करते रहे ॥ १३ ॥ इसीकारणसे समग्रलोकमें वह अंगारकनामसे प्रसिद्ध हैं, महादेवने प्रसन्न होकर उन्हें महाग्रहकी पदवी दी ॥ १४ ॥ जो उत्तम नर मंगलवारकी चतुर्थी तिथिको उत्तरवाहिनी गंगामें स्नानकर अंगारकेश्वरकी पूजा करके फिर प्रणाम करतेहैं ॥ १५ ॥ उन लोगोंको कहींपर कभी कोईभी ग्रहजनित पीडा नहीं होती । मंगलवारको यदि चतुर्थी मिलजावे तो ॥ १६ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कालज्ञ पंडितगण उसे ग्रहणके तुल्य पर्व कहतेहैं, उसमें दान, हवन, जप आदि सब अक्षय होजाता है ॥ १७ ॥ जो लोग अंगारकचतुर्थी पर्वमें श्रद्धासे श्राद्ध करतेहैं, उनके पितृगण इसी एकही श्राद्धसे बारहवर्षपर्यन्त तृप्त बने रहते हैं ॥ १८ ॥ पूर्व कालमें इसी अंगारकचतुर्थीमें गणेश्वर उत्पन्न हुए थे, इसीकारणसे वह पर्व पुण्य—समृद्धिके अर्थ कहागया है ॥ १९ ॥ इस अंगारकी चतुर्थीमें एकभक्तव्रतपूर्वक गणनायककी पूजाकर गणेशके उद्देशपर कुछ दान करदेनेसे विघ्नोंके द्वारा कभी अभिभूत नहीं होजाता ॥ २० ॥ वाराणसीमें अंगारकेश्वर शिवलिंगके भक्त जो उत्तम नर हैं, वे इस अंगारकलोकमें परम संपत्तिसम्पन्न होकर निवास करतेहैं ॥ २१ ॥ (इति मंगललोककथा) अगस्त्य बोले—भगवान्‌के दोनों गणोंने इस रमणीय पुण्यवती कथाको कीर्तन करते करते बृहस्पतिलोकको अपने नेत्रोंका अतिथि (पाहुन) बनाया ॥ २२ ॥ ततःपर शिवशर्मा उस नेत्रानंदकरी आचार्यवर्यकी पुरीको देखकर पूछने लगा—"यह किसकी उत्तम पुरीहै ?" ॥ २३ ॥ विष्णुपारिषद कहने लगे—हे सखे ! तुमसे तो कुछ अवक्तव्य नहीं है, मार्गजनित खेद दूरकरनेके लिए, हम लोग पुनः इस पुरीकी कथा सुखपूर्वक कहतेहैं ॥ २४ ॥ पूर्वकालमें आनन्दपूर्वक त्रिभुवनविधानेच्छुक ब्रह्माके मरीचि, अत्रि, अंगिरादिक आत्मसदृश सात मानसिक पुत्र उत्पन्न हुए ॥ २५ ॥ वे सब सृष्टिके चलानेवाले हुए, उनमेंसे प्रजापति अंगिराके आंगिरस नामक देवोत्तम एक पुत्र थे ॥ २६ ॥ वे बुद्धिमें सकल देवमंडलीके प्रधान थे और शांत, दांत, (जितेन्द्रिय) क्रोधरहित, मृदुभाषी, निर्मलाशय ॥ २७ ॥ वेदवेदार्थके तत्त्वज्ञ, चौसठों कलाओंमें कुशल, अज्ञानरूप मलसे हीन, समग्र शास्त्रोंके पारदर्शी, नीतिवेत्ताओंमें अग्रगण्य ॥ २८ ॥ हितोपदेश कर्ता, सदा हितकारी, अहितके अतिक्रमण करनेवाले, रूपवान्, शीलसंपन्न, गुणवान्, देशकालके अभिज्ञ ॥ २९ ॥ समस्त शुभलक्षणोंसे परिपूर्ण गुरुवत्सल, दिव्य तेजस्वी और महातपस्वी थे उन आंगिरसने काशीमें महत् शिवलिंगको प्रतिष्ठित कर, बहुत बडी तापसी वृत्तिको धारण करतेहुए एकाग्रचित्त हो दिव्य परिमाणसे छः सहस्र वर्षपर्य्यन्त तपस्या की ॥ ३०—३१ ॥ तदनन्तर विश्वभावन भगवान् विश्वनाथ प्रसन्न होकर उसी लिंगसे तेजोराशि रूप प्रकट हुए और बोले ॥ ३२ ॥ "मैं प्रसन्नहूं तुमारे मनमें जिस वरकी इच्छाहो कहो" तब आंगिरस शम्भुदेवका दर्शन पातेही आनन्दित हो इस प्रकारसे स्तुति करनेलगे— ॥ ३३ ॥ आंगिरस बोले—हे शंकर !

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हे शान्त ! हे चन्द्रप्रभ ! हे ईप्सितार्थप्रद ! हे सर्व ! (पुरुषार्थ चतुष्टय) दानिन् ! हे सर्वशुचे ! आप पवित्रजनदत्त महा उपहारके ग्रहण करनेवालेहैं और भक्तगणके प्रबल संताप समूहके हरण कर्ताहैं, आपका जयहो ॥ ३४ ॥ हे वरदगणनमस्कृत ! आप सभी लोगोंके हृदयाकाशमें व्याप्त रहतेहैं, और प्रणतजनके पापरूपी महावनके दाहक हैं, एवं विविध चरित्रमय शरीरके कर्ता और सुन्दर शरीरधारी हैं हे धैर्यनिधे ! आपही अनंगके बाणविशोषक हैं, आपका जयहो ॥ ३५ ॥ हे निधनादिविवर्जित ! आपसे प्रणत पंडितजन जोई मनोरथ चाहतेहैं आप उसे पूर्ण करदेते हैं, हे सर्पधर ! आपने गिरिजा देवीको अपना वाम अङ्ग (शरीर) समर्पण कर दियाहै, और आपही अपनी अष्टमूर्तिके द्वारा समस्त संसारको परिपूरित किये रहतेहैं,आपका जयहो॥ ३६॥ हे त्रिजगन्मयरूप ! हे विरूप ! हे सुन्दरनेत्र ! आपही नेत्रको खोलकर प्रलयानलको उत्पन्न करतेहैं, हे भव ! हे भूतपते ! हे प्रमथप्रधानपते ! आप पतित जनोंकोभी हस्तावलंबनके दाताहैं आपका जय हो ॥ ३७ ॥ हे सकलभूतलव्यापक ! प्रणवध्वनिही आपका सौध (आश्रय) है, हे चन्द्रधर ! चिद्रूपा (परमा) गिरिराजकुमारी आपको सर्वतः संतुष्ट किया करतीहैं हे कल्याणस्वरूप ! मैं आपको प्रणाम करताहूं ॥ ३८ ॥ हे शिव ! हे देव ! हे गिरीश ! (नगेश) हे महेश ! हे विभो ! हे विभवप्रद ! हे गिरिश ! (कैलासशायिन्) हे पार्वतीपते ! हे मृड ! आप भक्तिविघातकों (काम क्रोधादि अथवा त्रिपुरान्धकादि दैत्यों) के यंत्रणा (पीडा) कर्ताहै, हे तारापतिधारिन् ! आप त्रैलोक्यको सुखी करें ॥ ३९ ॥ हे अमोघमते ! मैं यमराजका भी भय नहीं करता, हे हर ! आप शीघ्रही मेरे महापाप (पुंजको) हरण करें, मैं तो महादेवके चरणोंमें प्रणामकी अपेक्षा किसी दूसरे मतांतरको मंगलमय नहीं समझता अतएव आपको प्रणाम करताहूं॥ ४०॥ इस विस्तृत निखिल ब्रह्माण्डमें शिवका सन्तोष (प्रसन्न) करनाही अघनाशक और परम मुख्य गुणवत्वहै अतः हे ईश ! निर्गुण ईश्वर, नागराजके महाकंकणधारी प्रलय कालमें सर्वसंहारक, आपको नमस्कार करताहूं ॥ ४१ ॥ अंगिराके पुत्र इस प्रकारसे महादेवकी स्तुतिकर विरत (चुप) होगये, और महेश्वरने भी स्तुतिसे सन्तुष्ट होकर बहुतसे वरदान किये ॥ ४२ ॥ श्रीमहादेव बोले—हे द्विज ! इस बृहत् तपस्याके प्रभावसे तुम बृहतों (बडों) के अर्थात् इन्द्रादि देवोंकेभी पति (श्रेष्ठ-गुरु) होवो, और इसी कारणसे ग्रहोंके मध्यमें बृहस्पति नामसे पूजनीय होवो ॥ ४३ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इस लिंगकी नित्यपूजाके प्रभावसे तुम मेरे जीवस्वरूप होगयेहो, इसीसे तीनों लोकोंमें (तुम) "जीव" नामसे विख्यात होगे ॥ ४४ ॥ यतः प्रपंचरहित मुझे तुमने सुन्दर (श्रवण सुखद) वाक् प्रपंचसे संस्तुत कियाहै, अतः इस वाक्प्रपंचके अधिपति तुम वाचस्पति (नामधारी) होवो ॥ ४५ ॥ इस स्तोत्रको तीन वर्षलों भक्तिपूर्वक त्रिकाल पाठ—अथवा श्रवण करने वालेकी वाणी संस्कृत (शुद्ध) होजातीहै॥ ४६॥ जो कोई इस वायव्यनामक स्तोत्रको प्रतिदिन पढेगा वह बहुत बडे कार्य उपस्थित होने परभी बुद्धिसे हीन (कभी) नहीं होगा ॥ ४७ ॥ मेरे समीप नियमानुसार इस स्तोत्रके पाठ करनेसे, अविवेकी मनुष्योंकीभी दुर्वृत्ति (नीचकर्म) में प्रवृत्ति (रुचि-इच्छा) नहीं होगी ॥ ४८ ॥ प्राणी इस स्तोत्रके पाठसे कदापि ग्रहजनित पीडाको प्राप्त नहीं होगा, इसीलिये यह स्तोत्र मेरे आगे पढ़ना चाहिये ॥ ४९ ॥ जो मानव, नित्यही प्रातःकाल स्नान कर उठतेही इस स्तुतिका पाठ करेगा, मैं उसकी अति दारुण बाधाओंकोभी हरण करूंगा ॥ ५० ॥ प्रयत्नपूर्वक तुमारे प्रतिष्ठित इस लिंगकी पूजाकर जो कोई इस स्तोत्रका पाठ करेगा, उसकी मनोवांछा परिपूर्ण होवेगी ॥ ५१ ॥ शिवने आंगिरसको ये सब वर देकर फिर इन्द्रादि देवगण, यक्ष, किंनर और भुजंगादि सबके सहित ब्रह्माको आह्वान किया (बुलाया) ॥ ५२ ॥ महादेवने सबको समागत देखकर ब्रह्मासे कहा—"हे विधे ! निज गुणोंहीके द्वारा गुरु (श्रेष्ठ) इस वाचस्पतिमुनिको मेरे कथनानुसार समस्त देवेन्द्रोंका गुरु बनाओ और सब किसीके प्रीत्यर्थ इसको विधानपूर्वक देवाचार्यके पदपर अभिषिक्त करदो ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ मेरा प्रीतिपात्र यह मुनि अत्यन्त धिषणाधिपति (बुद्धीश्वर) होगा।" ब्रह्माने "महाप्रसाद" (बडी कृपा) कह तुरत महादेवकी उस आज्ञाको शिर पर रखकर ॥ ५५ ॥ उन सुरज्येष्ठ (विधि) ने उसीक्षण अंगिराके उन पुत्रको सुराचार्य बनादिया, तब देवदुंदुभियां बजने और अप्सरायें नाचने लगीं ॥ ॥ ५६ ॥ सकल देवगण, प्रसन्नवदन हो, गुरुपूजा करने लगे, वशिष्ठादि महर्षियोंने मन्त्रपूत जलसे बृहस्पतिका अभिषेक किया ॥ ५७ ॥ गिरीशने फिर वाचस्पतिको औरभी दूसरा वरदिया, (कहा) हे धर्मात्मन् ! कुलनंदन ! देवपूज्य ! आंगिरससुनो ॥ ५८ ॥ तुमारा स्थापित यह सुबुद्धिपारिवर्द्धक लिंग, काशीमें बृहस्पतीश्वर नामसे प्रसिद्ध होवेगा ॥ ५९ ॥ मनुष्यगण पुष्य नक्षत्र युत बृहस्पतिवारको इस लिंगका पूजन करके जो कुछ करेंगे वह सब सिद्धिको प्राप्त होवेगा ॥ ६० ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कलियुगमें मैं इस बृहस्पतीश्वर लिंगको गुप्तकर रक्खूंगा (क्योंकि) इस लिंगके दर्शन-हीसे प्रतिभा प्राप्त होजातीहै ॥ ६१ ॥ चन्द्रेश्वरके दक्षिण और वीरेश्वरसे नैर्ऋत्य-कोणमें अवस्थित बृहस्पतीश्वर लिंगके पूजन करनेसे बृहस्पतिलोकमें सादर निवास मिलताहै ॥ ६२ ॥ छमास इस लिंगके सेवन करनेसे गुरुपत्नी गमन सम्भूत पापभी अवश्यही सूर्योदयसे अंधकारके सदृश विनष्ट होजाताहै ॥ ६३ ॥ इसी कारणसे यह महापातक विनाशक बृहस्पतीश्वर लिंगका फल गुप्तही रखना उचितहै, जिसी-सेहो उसीसे न कहदेना चाहिए ॥ ६४ ॥ देवदेव इन सब वरोंको देकर उसी लिंगमें लीन होगये, ब्रह्मा, इन्द्र, विष्णु और बृहस्पतिके साथ साथ इस लोकमें आकर बृहस्पतिको ॥ ६५ ॥ इस लोकमें अभिषेक एवं इन्द्रादि देवतोंको विसर्जित कर विष्णुकी अनुमति पाय, अपने लोकमें जाय शोभित हुए ॥ ६६ ॥ अगस्त्य बोले—हे लोपामुद्रे ! शिवशर्मा बृहस्पति लोक अतिक्रमण कर, प्रभामंडलसे मण्डित शनिलोकको देखने लगा ॥ ६७ ॥ हे शुचिस्मिते ! उस वेला द्विजवर शिवशर्माके पूछने पर, दोनों गण-श्रेष्ठोंने उस पुरीका विवरण उस विप्रवरसे कहना आरम्भ किया ॥ ६८ ॥ दोनों गणोंने कहा हे द्विज ! मरीचितनय कश्यपने दाक्षायणीके गर्भसे सूर्यको उत्पन्न किया, और त्वष्टा प्रजापतिकी कन्या संज्ञा उनकी भार्या हुई ॥ ६९ ॥ सुदीप्त तपसे समन्वित रूपयौवनशालिनी संज्ञा पतिकी अत्यन्त प्रियतमा हुई ॥ ७० ॥ वह सूर्य-मंडलका तेज और आदित्यका उष्णरूप शरीरसे ग्रहण तो करती थी, परन्तु उसका देह धीरे धीरे मन्दसा होने लगा ॥ ७१ ॥ यह अंडस्थित बालक (कहीं) मर न जावे, कश्यपने स्नेहपूर्वक यह कहा, तबहीसे जगत्में सूर्यका नाम मार्तंड कहाने लगा ॥ ७२ ॥ तीक्ष्ण किरणधारी वह मार्तण्ड जिसके द्वारा त्रैलोक्यको अतितापित करतेहैं, वह अभ्यधिक तेज संज्ञाकोभी असह्य होगया ॥ ७३ ॥ हे ब्रह्मन् ! तेजो-निधि आदित्यने उस संज्ञाके गर्भसे तीन संतान उत्पन्न किये दो प्रजापति, और एक कन्या ॥ ७४ ॥ ज्येष्ठ पुत्र वैवस्वत मनु एवं कनिष्ठ यमराज और यमुना कन्याका नाम इसके अनन्तर, वह संज्ञा जब सूर्यके तेजोमय रूपको सहनेमें अत्यन्त असमर्थ हुई ॥ ७५ ॥ तब अपनेहीसे उसने मायामयी सवर्णा छायाको निर्माण किया अनन्तर छायाने हाथ जोड, प्रणाम कर, संज्ञासे कहा ॥ ७६ ॥ "देवि ! मैं आपकी आज्ञाकारिणी हूं क्या करनेका आदेश मुझे मिलता है" तब संज्ञाने कहा हे (मदीय) सवर्णे सुन्दरि ! सुनो ॥ ७७ ॥ मैं अपने पिता विश्वकर्माके गृहपर जाऊंगी और

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हे कल्याणि ! तुम मेरी आज्ञासे निःशंकचित्त होकर यहांपर गृहमें निवास करो ॥ ७८ ॥ इस मनु और इन यमल (एक साथ उत्पन्न हुए) यम यमुनाको अपनेही बच्चोंकी आंखसे तीनो लड़कोंको तुमें देखना चाहिए ॥ ७९ ॥ हे शुचिस्मिते ! यह वृत्तान्त स्वामीके निकट तुम प्रकट मत करना" ऐसा सुनकर छाया विश्वकर्माकी पुत्री संज्ञादेवीसे बोली ॥ ८० ॥ देवि ! जबतक मेरे शिरपरके बाल न पकडे जावेंगे, अथवा शापकी संभावना न होगी, तबतक यह आपका चारित्र मैं न कहूंगी, आप सुखपूर्वक गमन करें ॥ ८१ ॥ इस रीतिसे छायाको आज्ञा देकर, और छायाके स्वीकार करलेनेपर वह संज्ञा विश्वकर्मा पिताके पास जाय प्रणाम कर बोली ॥८२॥ "हे पिता ! मैं महात्मा तेजोनिधि आर्यपुत्र काश्यपके तीव्रतेजको नहीं सहन कर सकतीहूं" ॥ ८३ ॥ उसकी बात सुनकर, पिताने बहुत धिक्कार करके वारंवार यही आदेश कहा कि "भर्ताहीके पास चली जाओ" ॥८४॥ उसघडी संज्ञा घोर चिन्तामें निमग्न होकर "स्त्रियोंकी चेष्टाको धिक्कारहै" यह कहती हुई, अपनी और स्त्री जन्मकी बहुत प्रकारसे निंदा करने लगी ॥ ८५ ॥ स्त्रीलोगोंको कभी स्वतंत्रता नहीं प्राप्त होती, ऐसे पराधीन जीवनको धिक्कारहै, क्योंकि लडकपनमें पिता, जवानीमें भर्ता, और बुढापेमें पुत्रसे भय बनाही रहताहै॥८६॥ ओः ! विना विचारेही मैंने मूर्खतावश स्वामिगृहको छोडदिया, और पतिनेभी अभी मुझे नहीं जानाहै, यदि अब मैं पतिके घर चलीजाऊं तो ॥ ८७ ॥ वहांपर परिपूर्ण मनोरथ सवर्णा विद्यमानही है, और यदि पिताके तिरस्कार करने परभी मैं यहांही रहजाऊं ॥ ८८ ॥ तब तो अतिप्रचंड चंडांशु (सूर्य) मेरे माता पितापर भयंकर क्रोध करेंगे, अहो ! लोग जैसी लोकोक्ति (कहावत) कहतेहैं वह यहीहै ॥ ८९ ॥ आज मैंने उसे स्पष्टही देखलिया कि-अपने हाथ अंगारा खींचा (ज्वलत् अंगार कर्षण—अपनेही हाथ पांवमें कुल्हाडी मारी) मूढ़तासे पतिगृह तो विनष्ट हुआही, पिताके घरमेंभी रहनेसे कुशल नहीं है ॥ ९० ॥ सुन्दर प्रथम (युवा) अवस्था त्रिलोककांक्षित रूप, सभीका लोभनीय स्त्रीत्व, अत्यंत निर्मलकुल ॥ ९१ ॥ तिसपर वैसे सर्वज्ञाता, लोकचक्षु, तमोविनाशक, समग्र कर्मोंके साक्षी, सर्वस्वरूप और सर्वत्रगामी (मेरे) पति देवहैं ॥ ९२ ॥ "फिर मेरा कल्याण किस प्रकारसे होगा" ? वह अनिन्दिता संज्ञा ऐसीही चिन्ता करतीहुई तपस्या करनेके लिये, बड़वा (घोडी) रूपधारण कर चली गई ॥ ९३ ॥ सूखे तृण (घास) को चरतीहुई वह उत्तरकुरु देशमें पहुंच, और हृदयमें पतिको रख-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कर तीव्र तपस्या इसी विचारसे करने लगी कि—तपस्याहीके बलसे पतिके उस तेजको सह सकूंगी—बस ॥ ९४ ॥ उधर (वहां) सूर्य ने उसी सवर्णा छायाहीको संज्ञा जानकर उसके गर्भसे अत्युत्तम अष्टम मनु सावर्णि ॥ ९५ ॥ दूसरे शनैश्चर, और तीसरी कन्या भद्रा (तपती) को उत्पादन किया, छाया अपने इन लडकोंपर जैसा स्नेह करती थी चाहे सवतिया डाहसे हो अथवा स्त्रीस्वभावके दोषसे हो ॥ ९६ ॥ उ पूर्वज लडकोंपर वैसा प्रेम नहीं रखतीथी, जेठे मनुने तो वह सब सहलिया; परंतु छो यमने भोजन, भूषण, लालन, पालन, आदिमें ॥ ९७ ॥ सावर्णिप्रभृति कनिष्ठों अधिकता देखकर, एक दिन, लडकपनसे अथवा भवितव्यता (होनहार) के गौरव रोषवश ॥ ९८ ॥ संज्ञाकी सरूपिणी छायाको पांवसे मार तर्जन किया, तब तो सा र्णिकी माताने क्रोधपूर्वक यमको शाप दिया ॥ ९९ ॥ अत्यंत दुःखित होकर क "अरे पाप ! तूने मेरे मारनेकेलिए जिस पांवको उठायाहै वह तेरा पाद शीघ्रही गि जावे" ॥ १०० ॥ माताके शापभयसे भीत यमभी "रक्षा करो रक्षा करो" (बच ओ २) ऐसा कहते हुए, पिताके आगे जाकर सब वृत्तान्त कहने लगे ॥ १ माताको सभी लडकोंके साथ एक समान वर्ताव करना चाहिए, (पर वह ऐसा न करती) इसीसे मैंने उसके देहपर पादमात्र उठाया पर मारा नहीं ॥ २ ॥ यह अप राध मेरे लडकपनसे हुआहो चाहे मोहवश मैंने कियाहो आप इसे क्षमा करदेवें, हे गोपते ! माताके शापसे मेरा यह पैर (पांव) गिर न पडने पावे ॥ ३ ॥ सूर्य बोले हे बाल (बेटा) ! सहस्रों अपराध करने परभी माता पुत्रको शाप नहीं देती, अतए इस विषयमें कोई कारण अवश्य होगा ॥ ४ ॥ जिससे उसने तुम्हारे सदृश धर्मज्ञा सत्यवादीको क्रोधसे शाप दे दियाहै, माताके शापको कभी कोई अन्यथा नहीं क दे सकता ॥ ५ ॥ तुम्हारे इस पांवका मांस लेकर कीडे भूतल पर जावेंगे इसी री पर तुम्हारी माताका शाप चरितार्थ होगा, और तुमभी सुरक्षित होगे ॥ ६ ॥ इ प्रकारसे पुत्रको समाश्वासन देकर रवि अन्तःपुरमें गये, विलंबसे अपनी उस पत्नीक देखकर सविताने यह वचन कहा ॥ ७ ॥ "हे भामिनि ! लडके तो सभी समानहै फिर तुम इन छोटे सावर्णि आदिपर अधिक स्नेह क्यों करतीहो" ॥ ८ ॥ सूर्यने ऐसे पूछनेपरभी छायाने कोई उत्तर नहीं दिया तब आत्मसमाधान करके सवितान सब बातोंको जानलिया ॥ ९ ॥ जब कि सूर्य भगवान् शाप देनेको उद्यत हुए, तब छायाने सब वृत्तान्त ठीकठीक ज्योंका त्यों कह सुनाया, इसपर भगवान्भी संतुष्ट

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हुए॥११०॥ सब बातें सच सच कहदेनेसे सूर्यने छायाको निर्दोष जानकर शाप नहीं दिया, पर क्रोधित होकर विश्वकर्माके पास गये ॥ ११ ॥ विश्वकर्माने क्रोधसे दग्ध करदेने चाहते, तीक्ष्ण तेजस्वी, सूर्यको पहिले सान्त्वना करतेहुए सहर्ष उनका पूजन किया, तब फिर उनके अभिप्रायको समझकर तुरत उनसे कहा ॥ १२ ॥ विश्वकर्मा बोले—हे रवे ! संज्ञा आपके अत्यंत तेजसे भीत हो उत्तर कुरुमें जाकर बडवा रूप धर शाद्वल (घासके) वनमें चर रहीहै ॥ १३ ॥ तेज और नियमके बलसे सभी भूतों (प्राणियों) के द्वारा अधृष्या, आर्यचारिणी अपनी भार्याको आज आप देखेंगे ॥ १४ ॥ विश्वकर्माने सूर्यको उनकी अनुमतिके अनुसार यत्नपूर्वक कूंद (शान) पर चढाकर छिलदिया जिससे वे बहुत सुन्दर होगये ॥१५॥ अनन्तर श्वशुरकी आज्ञा ले सविताने झट (पट) उत्तर कुरुदेशमें जाकर, बडी तपस्याका आचरण करती हुई, साक्षात् तपोमयी लक्ष्मी ॥ १६ ॥ वडवानल समान तेजस्विनी, वडवारूपिणी, उसे योगमायाके द्वारा केवल सूखे घासोंको चरतीहुई देखा ॥१७॥ सूर्यने अश्वरूपिणी उस विश्वकर्माकी पुत्रीको निरपराधिनी विचारकर स्वयंभी अश्वरूप धारण कर उसके मुखमें संगम किया ॥१८॥ उस अश्विनीरूपा संज्ञाने चारों ओरसे त्वरायुक्त होकर परपुरुषके शंकासे सूर्यके वीर्यको नासिका पुटके द्वारा वमन कर (उगिल) दिया ॥ १९ ॥ उसीसे देवतोंके वैद्यवर दोनों अश्विनीकुमार उत्पन्न हुए, फिर सूर्यने अपना यथार्थ (असली) रूप उसे दिखलाया ॥१२०॥ तब तो वह पतिव्रताभी, हृदयके संतापहारी, नयनोंके आनन्दकारी, सुन्दर रूपधारी, अपने पति सूर्यको देख अत्यंत संतुष्ट हुई ॥ २१ ॥ और बडे आनन्दको प्राप्त हुई । (सच है) तपस्याके द्वारा क्या दुर्लभहै ? तपस्याही परम मंगलहै, और तपस्याही उत्तम धनहै ॥ २२ ॥ तपस्याहीको देवता होनेका मुख्य कारण मानाहै, हे शिवशर्मन् ! आकाशमें ऊपर नीचे यह जो अति दीप्तिमत् ज्योतिश्चक्रका स्वरूप देखरहेहो इन सबको तपस्याहीका बडा भारी तेज समझना चाहिए ॥ २३—२४ ॥ इस प्रकार सवर्णा छायाके गर्भसे सूर्यके पुत्र शनैश्चर उत्पन्न हुए, पश्चात् वह सर्व देववन्दिता वाराणसी पुरीमें जाकर ॥ २५ ॥ अतिविपुल तपश्चर्या एवं शिवलिंगकी प्रतिष्ठा कर, महादेवके समर्चनसे इस उच्चलोक तथा ग्रहपदको प्राप्त हुएहैं ॥ २६ ॥ काशीमें सुशोभन शनैश्चरेश्वर लिंगके दर्शन और शनिवारको उस लिंगके पूजनसे शनैश्चरकी (ग्रह) पीडा नहीं होती ॥ २७ ॥ विश्वेश्वरके दक्षिण और शुक्रेश्वरके उत्तर भागमें शनैश्चरेश्वर लिंगकी पूजा करनेसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(मनुष्य) इस शनि लोकमें आनन्द लाभ करताहै ॥ २८ ॥ काशीमें निवास करते हुए जो कोई इस पुण्यमय अध्यायको श्रवण करेगा, उसे न तो ग्रहजनित पीड़ा होगी, और न उपसर्गोंकाही भय (कभी) होगा ॥ १२९ ॥

भौम बृहस्पति मन्दकी, वरनि प्रथम उत्पत्ति ।
ग्रह पदवी पुनि जिमि लही, कही सो तप सम्पत्ति ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां मंगल, बृहस्पति, शनिलोककथावर्णनं नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

अष्टादश अध्याय ।

सप्तर्षि लोक वृत्तान्त ।

अगस्त्य बोले मुक्तिपुरीमें सुस्नात, हरिद्वारमें प्राण त्यागकरनेवाला मथुरावासी शिवशर्मा, विष्णु पुरीके दर्शन प्रभावसे अन्तमें विष्णुलोकको गमन करता हुआ इस कथाको सुनते सुनते सप्तर्षि मंडलको दृष्टि गोचर करने लगा ॥ १–२ ॥ चारण और मागध गण शिवशर्माकी बडाई करनेलगे, दवकन्यायें "इस स्थान पर क्षणभर ठहर जाइये ठहर तो जाइये" ऐसी प्रार्थना करनेलगीं ॥ ३ ॥ फिर तिस पर ऊंची सांस लेकर उन सबोंके खडीहोकर इस कहनेके पीछे कि "हम लोग बडीही मन्दभाग्याहैं (देखो) यह बडाही पुण्यभागी नरहै जो परम पवित्र लोकमें जा रहाहै" ॥४॥ विमान स्थित शिवशर्मा उन सबोंके मुखसे ये सब बातें सुनता हुआ उन विष्णुपारिषदोंसे पूछने लगा हे देव ! यह तेजोमय अनुपम शुभलोक किसका है ? ॥ ५ ॥ द्विजके इन वचनोंको सुन दोंनो गणसत्तम कहने लगे, हे शिवशर्मन् ! विधाताके नियुक्त निर्मित सप्तर्षि प्रजाओंकी सृष्टिके निमित्त इस स्थानपर सदा वास करतेहैं मरीचि, अत्रि, पुलह, पुलस्त्य, क्रतु, अंगिरा, और वसिष्ठ, ये सातो महाभाग ब्रह्माके मानस पुत्रहैं, सब पुराणमें सप्तब्रह्मा कहकर निश्चित किये गयेहैं ॥ ६–७–८ ॥ संभूति, अनसूया, क्षमा, प्रीति, सन्नति, स्मृति और अरुंधती ये सातों क्रमानुसार उन सप्तर्षियोंकी पत्नियांहैं और येही (सातो) लोक मातायें भी हैं ॥ ९ ॥ इन्ही सप्तर्षियोंके तपोबलसे त्रिभुवन रक्षितहै, पूर्वकालमें ब्रह्माने इन लोगोंको उत्पादन करके कहा ॥ १० ॥ "हे पुत्रो ! प्रयत्नपूर्वक नानारूपके प्रजाओंकी सृष्टि करो" अनन्तर तपस्

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

र्थ कृतनिश्चय सप्तर्षिगण ब्रह्माको प्रणाम कर ॥ ११ ॥ सब जन्तुओंके मुक्तिजन्य शिव जहांपर विराजमान रहतेहैं उसी क्षेत्रज्ञ ईश्वरके अधिष्ठित अविमुक्त क्षेत्रमें पहुंचकर ॥ १२ ॥ वे सब अपने अपने नामसे अंकित शिवलिंगोंकी स्थापना कर शिवपर प्रगाढ़ भक्तियोगसे अत्युग्र तपस्या करनेलगे ॥ १३ ॥ शिवने उन सबके तपश्चर्यासे सन्तुष्ट होकर उनलोगोंको प्रजापतिका पदप्रदान किया, काशीमें अत्रीश्वरादिक लिंगोंको यत्नपूर्वक देखनेसे ॥ १४ ॥ यहां इस प्रजापतिलोक (सप्तर्षिमंडल) में उज्ज्वल तेजसे सम्पन्न होकर वास मिलताहै, गोकर्णेश्वर सरोवरके पश्चिम तीरपर प्रतिष्ठित ॥ १५ ॥ अत्रीश्वर लिंगके दर्शनसे ब्रह्मतेजकी वृद्धि होतीहै, कर्कोट वापीके ईशान कोण पर मरीचिका उत्तम कुंडहै ॥ १६ ॥ मनुष्य वहां पर भक्तिपूर्वक स्नान करके सूर्यके नाईं दीप्तिमान् होताहै और उसी स्थानपर मरीचीश्वर नामक लिंग प्रतिष्ठितहै ॥ १७ ॥ हे विप्र ! उस लिंगके दर्शनसे मरीचि लोककी प्राप्ति होतीहै, और वह पुरुषश्रेष्ठ (जो दर्शन करता है) मरीचिमाली (सूर्य) के समान कान्तिमान् होजाता है ॥ १८ ॥ पुलहेश्वर और पुलस्त्येश्वर ये दोनों लिंग स्वर्गद्वारके पश्चिम ओर अवस्थितहैं, मनुष्य उनके दर्शनसे प्रजापति लोकमें संमानित होकर वास करताहै ॥ १९ ॥ हे विप्र ! रम्यतर हारिकेश वनमें आंगिरसेश्वर लिंगके अवलोकन करनेसे, तेजके द्वारा परिपूर्ण होकर इसलोकमें वास प्राप्त होताहै ॥ २० ॥ वरणा नदीके रमणीय (सोहावन) तटपर स्थित वशिष्ठेश्वर एवं क्रत्वीश्वरका दर्शन करनेपरभी इसी प्राजापत्य लोकमें वसति प्राप्त होतीहै ॥ २१ ॥ यदि कोई कल्याणकी अभिलाषासे काशीमें इन लिंगोंका सेवन करे तो ये सब सेवकोंकी ऐहिक और पारलौकिक दोनों प्रकारकी मनोवांछाओंको परिपूर्ण करदेतेहैं ॥ २२ ॥ गणोंने कहा—महाभाग शिवशर्मन् ! यहां पर वह महा पुण्यवती, पतिव्रत परायणा, सुन्दरी अरुंधती निवास करतीहैं ॥ २३ ॥ जिसके स्मरण मात्रसे गंगास्नानका फल प्राप्त होताहै और अन्तःपुरचारी दो तीन पवित्र व्यक्तियोंके साथ विभु ॥ २४ ॥ नारायण देव पातिव्रत्यधर्मसे परम संतुष्ट होकर सर्वदैव जिसकी कथा (चर्चा) हर्षपूर्वक लक्ष्मी देवीके सन्मुख कियाही करतेहैं ॥ २५ ॥ हे कमले ! पतिव्रताओंके मध्यमें अरुंधतीका जैसा निर्मल आशयहै, हे भामिनि ! अन्य किसी रमणीका वैसा शुद्ध अन्तःकरण कहींभी नहींहै ॥ २६ ॥ हे देवि ! न वह रूप, न वह शील, न वह कौलीन्य, न वह कलाओंमें कुशलता, न वह पतिका शुश्रूषण ॥ २७ ॥ न वह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

माधुर्य्य, न वह गाम्भीर्य, और न वह गुरुजनका परितोषण, हे प्रिये ! ये सब (गुण) जैसे अरुंधतीमें हैं, कहींपर और किसी स्त्रीमें नहीं पाये जाते ॥ २८ ॥ जो स्त्रि वार्ता प्रसङ्ग पडनेपरभी अरुंधतीका नाममात्र लेलेतीहैं, संसारमें वे सब शुद्धबुद्धि सौभाग्यती रमणियां धन्यहैं ॥ २९ ॥ मेरे गृहमें जब कभी पतिव्रताओंकी क उठतीहै तो यही सती अरुंधती सबसे प्रथम रेखाको अलंकृत करतीहै ॥ ३० ॥ प्रकारसे हर्षप्रद कथनोपकथन करते हुए वे दोनो वैष्णवगण, आकल्प सत्यमय लोकको दृष्टिगोचर करनेलगे ॥ ३१ ॥

अति पुनीत सप्तर्षिके, मण्डलकी छबि देख ।
शिवशर्मा हरिदूत सम, भयहु प्रसन्न विशेष ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां सप्तर्षिलोक-वर्णनं नाम अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

उन्नीसवाँअध्याय ।

ध्रुवोपाख्यानमें ध्रुवका गृहत्याग ।

शिवशर्मा कहने लगे—हे दोनों सत्तम ! एक पदको मोडे (एक पांवसे खडा) वह मय अनेक रज्जु (डोरी) के खींचनेमें व्याकुल हस्ताग्र, चंचलनेत्र यह कौन पु रहा है ? ॥ १ ॥ यह तेजसे व्याप्त, त्रैलोक्य मंडपके स्तम्भ सदृश पुरुष, तो मान (तुला) तराजू पर अतुलनीय ज्योती राशिको तौल रहाहै ॥ २ ॥ (अथवा) सू धार (नट) के नाईं आकाश विस्तारको मा (ना) परहाहै वा गगनांगणमें उत्थि (खडाहुआ) त्रिविक्रम (विराट्) भगवान्का चरणहै ? ॥३॥ अथवा हो न हो क आकाशरूपी सरोवरके सारयूप (खम्भा, लाट,) हीका सरूप धारण कियेहैं, हे देव यह कौनहै ? बडी कृपाकर मुझसे कहिए ॥ ४ ॥ विमान स्थित दोनों देवद (विष्णुगण) अपने मित्रके इस वचनको सुनकर प्रणयवश ध्रुवके चिरस्थायी होनेके वृत्तान्त कीर्तन करने लगे ॥ ५ ॥ दोनो गण बोले—स्वायंभुव मनुके उत्तानपा नामक एक पुत्रथे, हे विप्र ! उस राजाके दो पुत्र उत्पन्न हुए ॥ ६ ॥ सुरुचि ज्येष्ठपुत्र उत्तम, और सुनीतिके दूसरे पुत्र ध्रुव हुए—एकबार सभाके मध्यमें राजा विराज मानथे ॥ ७ ॥ सुनीतिने अपने पुत्र ध्रुवको वेष भूषणसे सुसज्जित कर राजाकी गो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

में भेजा, विनयतत्पर ध्रुवने धात्रीके बालकोंके साथ ॥ ८ ॥ राजसभामें उपस्थित होकर राजा उत्तानपादको प्रणाम किया, उस घडी सुनीतिके पुत्र ध्रुवने ऊँचे सिंहासन पर बैठेहुए पितामहाराजके गोदमें उपविष्ट उत्तमको देखा। बाल्य चापलताके कारण आपभी उसपर चढना चाहा ॥ ९ ॥ १० ॥ सुरुचिने ध्रुवको राजाके गोदमें बैठनेका अभिलाषी देखकर कहा, रे दुर्भगापुत्र ! लडके ! तैं क्या लडकपनकी बुद्धिसे महराजके गोदमें चढा चाहताहै ? अरे अभागिनीगर्भसंभूत ! इस सिंहासन पर बैठनेका तूने पुण्य नहीं कियाहै ॥ ११ ॥ १२ ॥ यदि कुछभी पुण्य किये होता तो दुर्भगाके उदरसे क्यों उत्पन्न होता इसी अनुमानके द्वारा अपने अल्प पुण्यताका विषय विचार देख ॥ १३ ॥ कि, राजकुमार होनेपरभी तू मेरे गर्भको अलंकृत नहीं करसका, सुन्दर कुक्षि (कोंख—गर्भ) से उत्पन्न हुए परमोत्तम उत्तमको देख ॥ १४ ॥ महीपतिके गोदमें (जांघोंपर) बैठकर आदर और गौरवके साथ कैसा वर्द्धित होरहाहै, यदि इस ऊंचे सिंहासनपर बैठनेकी रुचिथी, तो ॥ १५ ॥ सुरुचिके शोभन गर्भको छोड़कर दूसरीके उदरमें क्यों वसा (रहा) ? राजसभाके बीच सुरुचिने उस बालकध्रुवको बहुतही डपटा (धिक्कारा) ? ॥ १६ ॥ पर ध्रुव गिरतेहुए अश्रुजलको पीकर धैर्यवश कुछ नहीं बोला और महिषी सुरुचिके सौभाग्य गौरवसे जकडे (नियन्त्रित) हुए भूपालनेभी उचित अनुचित कुछभी नहीं कहा। बालक ध्रुवभी सभादर्शनको छोड, बालोचित चेष्टाओंके द्वारा शोकको छिपा राजाको प्रणाम कर अपने घर चलागया, सुनीतिभी नीतिशाली उस (अपनें) बालकको देखकर ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ मुखश्रीके द्वाराही ध्रुवको अपमानित समझगयी, सुनीतिने तुरंत समीप जाकर वारंवार उसका मस्तक सूंघ ॥ २० ॥ मानो कुछ कुम्हिलाये हुए (म्लान) ध्रुवको सांत्वना करती (चुमकारती) हुई हृदयसे लगालिया पश्चात् सुनीतिको निर्जन अन्तःपुरमें अकेली देखकर ॥ २१ ॥ ध्रुव बडी लंबी सांस लेकर माताके आगे रोदन करनेलगा, माताने अश्रुपूर्णनेत्र पुत्रको समझाय और ॥ २२ ॥ कोमलहस्तसे, मृदुल वस्त्रके अंचलोंसे उसके मुखको पोंछकर पूछा—कहो (तो सही) क्यों रोतेहो ? बेटा ! राजाके विद्यमान रहतेही किसने तुम्हारा अपमान किया ॥ २३ ॥ इसके अनंतर जलसे कुल्लाकर पान ले (खाय) माताके सहठ पूछनेपर ध्रुव उससे कहनेलगा ॥ २४ ॥ माता ! मैं तुमसे पूछता हूं मुझसे ठीक ठीक कहना, तुम और सुरुचि दोनोंही जनी जब महाराजकी एकही रीतिकी भार्य्या

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हो तो वह सुरुचिही क्यों प्रियतमाहै ? ॥ २५ ॥ और हे माता ! तुम क्यों भूपतिकी प्यारी नहीं हो ? समान राजकुमार होनेपरभी क्यों तो उत्तम उत्तमहै, और मैं अधम त्तमहूं, क्यों तुम मंदभाग्याहो ? और सुरुचि क्यों सुकुक्षिहै क्यों राजाका सिंहासन उत्तमके योग्यहैं पर मेरे योग्य नहीं है, क्यों मेरा पुण्य तुच्छहै और उत्तमका उत्कृष्टहै ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ राजनीतिविशारदा सुनीतिने नीतिमान् बालक ध्रुवके इ वाणीको सुन धीरे धीरे कुछ लंबी सांस लेकर लडकेकी कोपकी शांति निमित्त ॥ २९ सापत्न्य प्रतिपक्षता (सवतियाडाह) को छोडकर स्वभावतः मधुरवचन कहना आरं किया ॥ ३० ॥ सुनीति बोली—आर्ये ! महाबुद्धे ! तात (भैया) ! मैं तुमसे विशुद्ध अन्तःकरणसे सब बातें निवेदन करतीहूं, इससे मनमें अपमान मत करना ॥ ३१ । उस (सुरुचि) ने जो कुछ कहा वह सब बहुत ठीकहै, कुछ झूठ नहीं है, वह पतिकी महिषीहै, और सब रानियोंमें राजाकी बडी प्रेयसी है ॥ ३२ ॥ बाबा ! उसने पूर्व जन्ममें जो पुण्य संचित कियाहै, उसीके प्रकृष्टफलसे भूपति सुरुचि पर बडीही सुरुचि बनाये रखतेहैं ॥ ३३ ॥ मेरे ऐसी मन्दभाग्या राजाके सामान्यस्त्रियोंमें गिनीजातीहैं केवल (नाममात्रको) राजपत्नी कहलातीहैं परन्तु इन सबपर राजाकी वह रुचि नहीं है ॥ ३४ ॥ उत्तमने बडे पुण्यसंभारोंसे पुण्यमयी माताके उत्तमगर्भमें निवास कियाहै अतएव वह सिंहासनके योग्य हुएहैं ॥ ३५ ॥ चन्द्रप्रभ छत्र, शुभ (भ्र) दो चामर वैसा ऊंचा राजसिंहासन, मदमत्तहाथियां ॥ ३६ ॥ शीघ्रगामी घोडे, आधिव्याधि रहित जीवन, निष्कंटक उत्तम राज्य, सर्व श्रेष्ठ हरिहरका पूजन ॥ ३७ ॥ विपुल विद्याओंका ज्ञान, अध्ययन, अपराजय, कामक्रोधादि अरि षड्वर्गका जय, स्वभावसिद्ध सात्त्विकी बुद्धि ॥ ३८ ॥ कारुण्यपूर्ण दृष्टि, मधुरवचन, कार्योंमें निरालसता, गुरुजनमें प्रणति (नम्रता) ॥ ३९ ॥ सर्वत्र पवित्रता सर्वदैव परोपकार, औदार्यवती (तेजस्विनी) मनोवृत्ति, निरंतर अदीनवादिता ॥ ४० ॥ सभाके मध्य पाण्डित्य, रणाजिरमें ढिठाई बंधुवर्ग पर सरलता (सिधाई) क्रयविक्रयमें कठिनता ॥ ४१ ॥ स्त्रियोंके व्यवहारमें कोमलता, प्रजाओंपर वत्सलता, ब्राह्मणगणसे सदा भीरुता, सदाचारवृत्तिसे जीवन निर्वाह ॥ ४२ ॥ भागीरथी (गंगा) के तटपर वास, किसी तीर्थक्षेत्र अथवा रणक्षेत्रमें मरण, याचकोंसे विमुख न होना, विशेषतः शत्रुगणसे मुँह न मोडना ॥ ४३ ॥ परिजनोंके सहित (सुखादि) भोग, दानादिकेद्वारा दिनका सफल करना, नित्यहि विद्याकी व्यसनिता, सर्वदा माता पिताका सेवन ॥ ४४ ॥ प्रतिदिन यशका संचय

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सदैव धर्मका उपार्जन, स्वर्ग और मोक्षकी सिद्धि, निरंतर सद्वृत्तका आचरण ॥ ४५ ॥ सदा सज्जनोंकी संगति, पिताके मित्रोंके साथ मित्रता, इतिहास पुराणआदिके श्रवण (करने) की उत्कंठा ॥ ४६ ॥ विपत्ति पडनेपरभी बडी धीरता, संपत्तिमिलनेपरभी स्थिरता, वाग्विलासमें गंभीरता, पात्रपाणि भिक्षुकोंपर उदारता ॥ ४७ ॥ और तप नियम तथा यमके द्वारा शरीरमें एकप्रकारकी उत्कृष्ट कृशता, तपस्यारूपी वृक्ष इन्हीं मनोरथमय फलोंसे फलतेहैं ॥ ४८ ॥ अतएव हे महामते ! तुम और मैं अधिक तपस्या नहीं करसकी क्योंकि राजसांनिध्य पानेपरभी राजलक्ष्मीके भागी (पात्र) नहीं होसकी ॥ ४९ ॥ इसलिये मान और अपमानके कारण अपनेही अपने कर्म हैं, ब्रह्माभी निजकृत कर्म फलको अन्यथा नहीं करसकते अतः हे बेटा ! तुम शोच मत करो, भाग्यही इष्टवस्तुकोभी समर्पण करताहै ॥ ५० ॥ सुनीतिके इन नीतिमय वाक्योंको सुनकर सुनीतिके पुत्र ध्रुवने उत्तर देना आरम्भ किया ॥ ५१ ॥ ध्रुव बोले—हे जननि ! सुनीति ! मेरी बात स्थिरहोकर सुनो, हे तपस्विनि ! (कष्टभोगिनि) मुझे लडका जानकर, अपमान मत करो ॥ ५२ ॥ (मा !) यदि मैं अत्यन्त पावन मनुवंशमें उत्पन्न हुआहूं और महाराज उत्तानपादका औरस पुत्रहूं तथा तुम्हारे गर्भसे उत्पन्न हूं तो ॥ ५३ ॥ हे माता ! यदि तपस्याही सब संपत्तियोंका कारणहै, तो दूसरोंसे परम दुर्लभ पदकोभी प्राप्तही जानो ॥ ५४ ॥ हे माता ! मोहमें न पडकर तपस्या करनेकी आज्ञा मुझे दो, और आशीर्वादोंके द्वारा मुझे अभिनन्दित करो (बस) यही एक सहायता तुम्हारीहै ॥ ५५ ॥ वह सुनीति निजगर्भसंभव कुमारको महावीर्य्यशाली और परमउत्साही विचारकरभी उससे कहने लगी ॥ ५६ ॥ हे स्तन्यपायिन् ! पुत्र ! आजभी तुम्हारी अवस्था नववर्षकी पूरी नहीं हुईहै, मैं तो तुमको इसविषयमें संमति नहीं देसकती पर कहती हूं ॥ ५७ ॥ सवतके वचनरूपी भालोंसे बहुत फटेहुए मेरे हृदयमें तुम्हारे बाष्पवृंदके जल क्षणकालभी नहीं ठहरतेहैं मैं क्या करूं ? ॥ ५८ ॥ हे बच्चा ! मानो वेही सब जल मेरे नेत्रोंके मार्गसे निरंतर झररहेहैं, और वेही दुःखावह जलसेपूर्ण नदी बनाया चाहतेहैं ॥ ५९ ॥ भैया ! मेरे तुम्हीं अकेले पुत्रहो, तुम्हीं मेरे जीवनके एकमात्र आधारहो;—तुम्हीं मुझ अंधीकी लकडीहो मेरे नेत्र तुम्हारेही मुखपर आसक्त रहतेहैं ॥ ६० ॥ अभीष्ट देवतोंसे कितनी प्रार्थना करके तब बडे कष्टसे तुमको पायाहै, तात! तुम्हारे मुखचन्द्रको देखकर मेरा हृदयरूपी, क्षीरसमुद्र ॥ ६१ ॥ आनन्ददुग्धसे परिपूर्ण होकर कुचरूप वेला स्थलको अतिक्रम कर-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ताहै, तुम्हारे अंग संगतिसे उत्पन्न सुखसन्दोहसे शीतल ॥ ६२ ॥ हो रोमांचरूप
(तोषक) को बिछाकर मैं सुखपूर्वक पलंगपर सोतीहूं, तिसपरभी हे चन्द्रवदन ! कुछ
कर पानको खाय, तुम्हारे मुखके ओष्ठपुट रूपी क्षीरसागरसे समुत्थित, अमृतके पीने
स्भी मेरी अभिलाषा नहीं मिटती ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ तुम्हारा शीतल आलाप जब
कर्णपथमें पहुँच जाताहै तो सवतके कटुवचनकी व्यथा उस क्षण मिटजातीहै ॥ ६५
बच्चा ! जब तुम बहुत विलंबलों सोते रहतेहो तो मैं मनही मन यह सोचतीहूं
सूर्य उदयहोनेपर कमलके सदृश तुम कब निद्रादरिद्र (प्रफुल्ल) होगे ! ॥ ६६ ॥
वत्स ! तुम जब अपने संगियोंके साथ लडिक खेलोंको खेलकर घरआतेहो तो उसीस
मेरे दोनों वक्षोज मानो तुम्हें अमूल्य अर्घ्य देनेहीकेलिये उन्मुख होजाते हैं ॥ ६७ ॥ जब
अटारी परसे बाहर चले जातेहो तब पद्मरेखासे अंकित तुम्हारा चरणचिह्न देखकरही मेरे
कलते हुए प्राण अवलंबन पाकर रुकजातेहैं ॥ ६८ ॥ जबजब तुम तीनचार पद बाहर
जातेहो, मेरा प्राणभी तबतक कंठमें जाकर टिकरहताहै ॥ ६९ ॥ बेटा ! सुधावर्षी मेघके
तुम्हारे बाहर विलंबकरनेपर, मेरा मनरूपी चातक पक्षीभी आश्चर्यरूपसे जानेहीं
शीघ्रता करताहै (अथवा—अमृतधारावर्षी चन्द्रके समान तुम्हारे बाहर विलंब करनेपर मे
हृदयरूपी चकोर (पक्षी) भी (उड़कर वहीं) जानेकी त्वरा करताहै यह आश्चर्यहै
॥ ७० ॥ अच्छा तो तुम्हारे तपश्चर्याकेलिये चलेजानेपर मेरे कठिन प्राणभी अति
तप्तरूपसे कंठ-काननके प्रान्तमें जाकर अपनी अवस्थिति करें ॥ ७१ ॥ ध्रुवने
प्रकारपर माताकी आज्ञा पाकर उसके चरण कमलयुगलको अपने केशपाशरू
काचडसे लपेट यात्रा की ॥ ७२ ॥ उसनेभी उसीवेला नेत्ररूप इन्दीवर (कमल
की माला धैर्यसूत्रमें गुँथकर भेंट दिया ॥ ७३ ॥ माता सुनीतिने उसके मार्गमें
करनेकेलिये दूसरोंसे जिनकी रुकावट न होसके ऐसे सैकडोंसे अधिक आशीर्विदों
उसके पीछे जानेकेलिये नियुक्त करादिया ॥ ७४ ॥ बडा पराक्रमी, वह बाल
अपनी अटारीसे निकल कर, अनुकूल वायुके द्वारा मार्ग दिखलाये जानेपर वन
ओर चलपडा ॥ ७५ ॥ वनसे, वायु कंपित वृक्षशाखओंके प्रसारण मिषसे मानो बुलायजाने
उसने वनमें प्रवेश किया ॥ ७६ ॥ माता मात्र जिसकी देवताहै ऐसा वह ध्रुव केव
राजपथको जानताथा, वनके मार्गको तो चीन्हताही नहीं था, इसीकारणसे क्षण
चिन्ता करनेलगा ॥ ७७ ॥ तिसके पीछे ज्योंही ध्रुवने आँखें खोलीं त्योंही
आगे उपस्थित, अतर्कितगति सप्तर्षियोंका दर्शन पाया ॥ ७८ ॥ असहाय,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लोगोंका सहाय भाग्यही होताहै अरण्यमें रणमें और गृहमें सर्वत्र भाग्यही कारण होताहै ॥ ७९ ॥ कहां तो वह बालक राजकुमार, और कहां यह गहनवन ? धन्य भवितव्यते ! तुम बलपूर्वक सभी किसीको अपने अधीन करलेतीहो—तुमको प्रणामहै ॥ ॥ ८० ॥ जिसका जहांपर शुभ किंवा अशुभ होनेवाला रहताहै, भाविनीपाश, खींच-कर उसे वहांही देदेताहै ॥ ८१ ॥ मनुष्य अपने बुद्धिवैभवसे जैसा किया चाहताहै, भगवती भवितव्यता उसे दूसरेही विधिसे करादेतीहै ॥ ८२ ॥ अवस्था, विचित्र कार्यसंपादन करनेकी शक्ति, बल, और उद्योग, ये सब पुरुषका कुछभी हितसाधन नहीं करसकते उसका कारण प्राक्तन कर्महींहै, यह आश्चर्यहै ! ॥ ८३ ॥ इसके अनन्तर मानो उसीके भाग्यरूपी सूत्रजालसे आकृष्ट (आकर्षित) होकर प्राप्तहुए सूर्यके समान तेजस्वी उन सप्तऋषियोंको देख ध्रुव अत्यन्त प्रमुदित हुआ ॥ ८४ ॥ जिनके विशाल भालमें तिलक, अंगुलियोंमें कुशोंकी ग्रंथी (पवित्री) बैठनेका आसन कृष्णाजिन, (मृगचर्म) पहिरनेका अलंकार यज्ञोपवीत, ॥ ८५ ॥ हाथमें (सुमिरिनी) नेत्र कुछ कुछ (अधखुले) पहिरने ओढनेका उत्तम धौत काषाय वस्त्र था ॥ ८६ ॥ ओः ! जो अनवसरमेंभी विपत्तिमग्न प्रजागणके उद्धार करनेको मानो सातों समुद्र एकत्रित हुएहों ऐसे उन सातों महाभागोंके पास ॥ ८७ ॥ जाकर ध्रुवने प्रणामपूर्वक कंधा झुकाये और हाथोंको जोडेहुए इस ललित वचनको कहा ॥ ॥ ८८ ॥ ध्रुवबोले—हे मुनिश्रेष्ठगण ! आपलोग यह जानलेवें—मैं उतानपादका पुत्र, सुनीतिके गर्भसे उत्पन्न खिन्नहृदय ध्रुवहूं ॥ ८९ ॥ आप सबके चरणोंसे सनाथ इस वनमें मैं आगयाहूं, मैं सब प्रकारसे समस्त विषयोंमें (अनजान) हूं क्योंकि आज-तक तो मेरा चित्त राजसंपत्तिहीमें लगारहा ॥ ९० ॥ उन सप्तर्षियोंने उस बडे तेजस्वी और सहज मधुर मूर्ति तथा अमूल्य नीतिज्ञानसे अलंकृत एवं मृदुगंभीर भाषी बाल-कको देख ॥ ९१ ॥ उसे अपने समीप बैठाकर अत्यन्त विस्मित हो पूछा—अहो विशालाक्ष बालक ! महाराजकुमार ! ॥ ९२ ॥ हमलोगोंने तो विचार करनेपर भी खेदका कारण नहीं समझा, तुम्हीं कहो—अभी तो तुम्हारे मनमें अर्थ चिन्ता नहीं है, माताके घरमें रहतेही अपमानकीभी कोई संभावना नहींहै ॥ ९३ ॥ शरीरमें कोई रोगभी नहींहै, तो फिर निर्वेदका कौनसा कारणहै ? जिन लोगोंका मनोरथ सिद्ध नहीं होता, उन्हींके चित्तमें वैराग्य उत्पन्न होताहै ॥ ९४ ॥ किन्तु तुम सप्तद्वीपाधि-पतिके राजकुमारहो, तुम्हारे विषयमें तो वह बात आयी नहीं सकती फिर सबकी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रकृति स्वभाववश भिन्न भिन्न है, इसीलिये यहांपर (संसारमें) क्या युवा, वृद्ध, क्या बालक, किसीका मनोगत भाव नहीं जानाजाता । उन लोगोंका सहज परिपूर्ण यह वचन सुनकर ॥ ९५–९६ ॥ वह मनोरथसंपन्न शिशु ध्रुव कहने लगा ध्रुव बोले–हे मुनीश्वरो ! माताने राजसेवाके लिये मुझे सभा (दरबार) में भेजदिया ॥ ९७ ॥ तदनंतर मेरे राजाके गोदमें जा बैठनेके अभिलाषी होनेपर विमाता चिने मुझे झिझकारदिया मुझे और मेरी माताको धिक्कारतीहुई अपनी और अपने उत्तमके उत्तमताकी बडी प्रशंसा की (बस) यही मेरी ग्लानिका कारण है, वे गण लडकेकी इन बातोंको सुन परस्पर एक दूसरेको अवलोकन करनेलगे ॥ ९८–९९ ॥ उन लोगोंने क्षत्रियत्वकी बडाई करते कहा–अहो ! क्षत्रियके लडके तनिकभी क्षमा नहीं है ! ॥ १०० ॥ ऋषियोंने कहा–हम लोग तुम्हारा क्या सकते हैं ? और तुम्हारा कौनसा मनोरथहै, अहो (भला) ज्ञात तो होवे, लोगोंको तुम सुनाओ तो सही ॥ १ ॥ ध्रुवने कहा–हे ऋषिगण ! मेरे भाई उत्तम उत्तम पिताके दिये हुए उस उत्तम सिंहासनपर (बैठे) राजकरे ॥ २ ॥ सुव्रतगण ! मैं आपलोगोंके निकट इसी सहायताकी प्रार्थना करताहूं कि मैं बात निवेदन करताहूं उसका उपाय उपदेश कीजिये–क्योंकि मैं–तो बाल होनेके कारण प्रायः कुछभी नहीं जानता ॥ ३ ॥ जिसे पूर्वकालमेंभी किसी राजाने भोग न कियाहो, जो सब (पदों) से ऊंचा हो और जो इन्द्र इत्यादि देवतोंकोभी दुर्लभ हो, वह दुरासद पद क्योंकर मिलसकताहै ॥ ४ ॥ मैं पिताका दिया हुआ नहीं लिया चाहता, मैं अपनी ही भुजाओंके बलसे अर्जितपदकी आकांक्षा करताहूं, जो कि पिताकेभी मनोरथपथसे अतीत होवे ॥ ५ ॥ जो लोग पिताकी सम्पत्ति भोगतेहैं, प्रायः करके वे यशके भागी नहीं होते, परन्तु जो कोई पिताकी अपेक्षा अपनी अधिकता दिखालाताहै, वही नरोत्तम जानाजाताहै ॥ ६ ॥ और जो कोई पिताके उपार्जित, प्रसिद्ध यश अथवा धनको विनष्ट करताहै, उन दुर्वृत्तचित्तवालोंके (जीनेसे) मरजानाही अच्छाहै ॥ ७ ॥ मरीचि आदि मुनिगण ध्रुवके इस नीतिगत बातको सुनकर, उसको इसप्रकारसे यथार्थ उत्तरदेने लगे ॥ ८ ॥ (प्रथमतः) मरीचिऋषिने कहा–ऐ बाल ! तुमने जैसा पूछाहै मैंभी वैसाही उत्तर देताहूं, मैं मिथ्या नहीं कहता, (भला) बिना अच्युतके चरणारविन्दकी आराधना किये ऐसा पद क्योंकर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मिलसकताहै ॥ ९ ॥ अत्रिमुनि बोले—गोविन्दके चरणकमलकी धूलिका रस विना चीखे, यह मनोरथके पथसे अतीत सुन्दर पद कोईभी नहीं पा सकता ॥ ११० ॥ अंगिरामुनि कहनेलगे—जो कोई कमलाकान्तके कमनीय चरणकमलोंका सुशीलन करताहै उसे यहांपर समस्तसंपत्तियोंका पद अदूरवर्ती है ॥ ११ ॥ पुलस्त्यजीने कहा-हे ध्रुव ! जिसके स्मरणमात्रसे समस्त पापसमूह एकबारही विनाशको पहुँचजातेहैं वेही विष्णु भगवान् सबकुछके दाताहैं ॥ १२ ॥ श्रीपुलह बोले—पंडितलोग जिसे प्रकृति और पुरुषसेभी परवर्ती परमब्रह्म कहतेहैं, और जिसकी मायाने समग्र ब्रह्मांडको छोप लियाहै, वही नारायण सब कुछ देवेंगे ॥ १३ ॥ क्रतुऋषिने कहा—जो वेदनिवेदित, यज्ञपुरुष इस जगत्का अन्तरात्माहै वह सर्वव्यापी जनार्दन संतुष्ट होकर क्या नहीं देसकता ? ॥ १४ ॥ वसिष्ठमुनि बोले—राजकुमार ! जिसकी भृकुटी घूमजानेसे आठों (अणिमादि) सिद्धियाँ (अनायासही) प्राप्त होजातीहैं, उस हृषीकेशकी आराधना करनेपर मोक्षभी दूर नहीं रहजाता ॥ १५ ॥ तब ध्रुवने कहा—मुनीश्वरगण ! आप लोगोंने विष्णुभगवान्की आराधनाके विषयमें बहुत ठीक कहाहै, परन्तु उनकी सेवा किस प्रकारसे करनीचाहिये उसकी भी विधि मुझे उपदेश कीजिये ॥ १६ ॥ मुनियोंने कहा—ठहरते, चलते, सोते, जागते, चाहे सोयाहो अथवा बैठाहो सर्व कालमें नारायणहीको जपता रहे ॥ १७ ॥ चतुर्भुज विष्णुदेवका ध्यान करता हुआ, वासुदेवात्मक द्वादशाक्षर मंत्रका जप करके कौन नहीं सिद्धिको प्राप्त हुआ ? ॥ १८ ॥ अतसी (तीसी) पुष्पके समान, पीतांबर परिधान अच्युत भगवान्को क्षणमात्र सर्वात्मक रूप ध्यान धर देखकर कौन पृथिवीतलमें सिद्ध नहीं हुआहै ? ॥ १९ ॥ मनुष्य वासुदेवका जपकरके अनेकशः पुत्र, कलत्र, मित्र, राज्य, स्वर्ग, और अपवर्ग, यह सबकुछ निःसन्देह पाताहै ॥ १२० ॥ वासुदेवके जपासक्त चित्त पापीलोगोंकोभी दारुण विघ्न अथवा यमदूतगण नहीं छूसकतेहैं ॥ २१ ॥ महासमृद्धिसंपन्न वैष्णव (श्रेष्ठ) तुम्हारे पितामह (दादा) स्वायंभव मनुनेभी राज्य-कामनासे इसी महामन्त्रकी उपासना कीथी ॥ २२ ॥ हे सत्तम ! तुमभी इसी मंत्रको ग्रहणकर वासुदेव परायण हो इच्छानुरूप सम्पत्तिको शीघ्रही पावोगे ॥ २३ ॥ ऐसा कहनेपर वे सब महात्मा मुनीश्वरलोग अन्तर्धान होगये, और ध्रुवभी वासुदेवमें एकाग्रमन होकर तपस्याकेलिये चलदिये ॥ १२४ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अतिविचित्र ध्रुवकी कथा, वरनी करि विस्तार ।
राजपाट तजि जिमि भयो , वह राजर्षि कुमार ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्धे भाषायां ध्रुवोपाख्यान-ध्रुवगृहत्यागवर्णनं नाम एकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

विंश अध्याय ।

ध्रुवकी तपस्या और विष्णुका दर्शन ।

विष्णुके गणोंने कहा—हे द्विज ! उत्तानपादका पुत्र ध्रुव, उस वनसे निकलकर
नाके तीरपर बडे सुन्दर (रमणीय) मधुवनमें जाकर पहुँचा ॥ १ ॥ जो (मधु
कि भगवान् मधुसूदनका पवित्र आदिम (निवास) स्थानहै, और जहाँ जाकर प्रा
प्राणीभी निश्चयही निष्पाप होजाताहै ॥ २ ॥ वह ध्रुव सर्वोपद्रव—रहित वासु
नामक परब्रह्मका जपकरता हुआ ध्यानसे निश्चल लोचन होकर समस्त विश्व
विष्णुमय देखने लगा ॥ ३ ॥ (उसने देखा कि) सकल दिङ्मंडलमें हरिही हैं
देवके किरण जालोंमेंभी हरिहीहै, वनमें शृगाल, मृग, सिंह इत्यादिरूपोंसे हरिही अ
स्थितहैं ॥ ४ ॥ योंही जलमेंभी मेढ़क, कच्छप आदिरूपसे भगवान् हरिही वर्तमा
फिर राजाओंके अश्व, बलमेंभी वेही हरि अश्वरूपसे विद्यमानहैं ॥ ५ ॥ वेही
पातालमें अनंतरूप और गगनमें अनंतनामसे विराजमानहैं एकही होनेपरभी अ
रूप भेदसे अनंतताको प्राप्त हुएहैं ॥ ६ ॥ वेही देवतोंके मध्य वास करतेहैं, और
देवतोंकी वसतिभी हैं, इसीकारणसे वे वासुदेवहैं, और फिर, वासनाके वश अर्थ
अविद्या (माया)के संगसे सर्वत्र देवन (क्रीडा)करतेहैं, अतएव उनका नाम वासु
पडाहै॥ ७॥इन सर्वव्यापक भगवान्का नाम विष्णुहै,विष्लृ धातु व्याप्तिअर्थमें है इनके
विष्णुनाममें उस धातुका अर्थ सफल हुआहै ॥ ८ ॥ वे सर्वत्रस्थित परमेश्वर, सम
इन्द्रियोंके ऐश्वर्य्य करनेहींसे हृषीकेश नामसे विख्यातहैं ॥ ९ ॥ महाप्रलयके समय
उनके भक्तगण च्युत (पतित) नहीं होते—इसीसे अखिललोकमें वेही एक सर्वत्रगा
अव्ययपुरुष, अच्युत कहलातेहैं ॥ १० ॥ वेही इस चराचर निखिल विश्वको नि
लीलानुसार स्वरूप संपत्तिके द्वारा भरण करनेसे संसारमें विश्वम्भर नामसे पुकारेजा
हैं ॥ ११ ॥ उस ध्रुवके दोनों नेत्र विष्णुपदके अतिरिक्त अन्य कुछभी नहीं देखते
क्योंकि इसनियमके अनुसार केवल पुंडरीकाक्षही दर्शनीयहैं और कोईभी नहीं॥ १

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(योंही) उसक दोनोंही कान, केवल मुकुन्द, गोविन्द, दामोदर, चतुर्भुज, इसप्रकारके शब्दोंको छोड़कर दूसरे किसीएक शब्दको ग्रहणही नहीं करतेथे ॥ १३ ॥ शंख और चक्रसे चिह्नित उसके दोनों हाथभी गोविन्दकी चरणपूजाके प्रयोजनीय कार्य अथवा केवल भगवान्के प्रियकर्मोंके व्यतीत अन्य किसी कृत्यमें नहीं लगतेथे ॥ १४ ॥ उस ध्रुवका चित्त दूसरी सब चिन्ताओंको त्यागकर केवल वासुदेवके निर्द्वन्द्व दोनों चरणोंहीका चिन्तन करते करते क्रमशः निश्चलताको प्राप्त होनेलगा ॥ १५ ॥ विपुल तपश्चर्याके कर्ता उस ध्रुवके दोनोंही चरण विष्णु भगवान्के शरण होकर केवल नारायणमन्दिरके आँगनको छोड़ अन्यत्र कहींभी विचरण नहीं करतेथे ॥ १६ ॥ मौनावलम्बी, महासार तपस्यातत्पर वह ध्रुव केवल गोविन्द—गुणगानहीमें अपनी वाणीको स्थान देताथा ॥ १७ ॥ उस ध्रुवकी रसना (जिह्वा) कमलाकान्तके नामामृत रसपानकरनेसे दूसरे रसोंके स्वादकी इच्छाही नहीं करतीथी ॥ १८ ॥ उसकी नासिका पद्मामोदसे प्रमोदित श्रीमुकुन्दके चरणकमलयुगलगंधके सूँघनेसे अन्य गंधका आघ्राणही नहीं करतीथी ॥ १९ ॥ उस राज कुमारकी त्वचा मधुसूदनके पदद्वयका स्पर्शकर पावनीय सुखस्पृश्य वस्तुओंके आनंदको अनुभव करनेलगी ॥ २० ॥ ध्रुवकी सभी इन्द्रियाँ साररूप दामोदरको अपने अपने विषयशब्दादिकोंका आश्रय पाकर परम कृतार्थ होनेलगीं ॥ २१ ॥ त्रैलोक्यप्रकाशक उस ध्रुवके तपोरूपी सूर्यके उदय होजानेपर चन्द्र, सूर्य, अग्नि, और ग्रह नक्षत्रादि समग्र तेज विलुप्त होचले ॥ २२ ॥ इन्द्र, चन्द्र, पवन, वरुण, यमराज, कुबेर, अग्नि, और नैर्ऋतेश्वर आदि अपने अपने पदसे शंकित होनेलगे ॥ २३ ॥ वसु इत्यादि अन्यान्य विमानचारी देवगणभी " कहीं ध्रुव हमारा पद न लेलेवे " इस दुश्चिन्ताके द्वारा ध्रुवसे बहुतही डरने लगे ॥ २४ ॥ ध्रुव, पृथिवी तलपर जहाँ जहाँ पैर रखताथा वहाँ वहाँ भूमि उसके भार (बोझ) से दबकर झुकी पडतीथी ॥ २५ ॥ अहो ! उसीके भयसे तदीय अङ्गसङ्गी जलराशिभी जडता छोड़कर अन्यत्र उत्तम रससम्पन्न जलपदस्थ होगया ॥ २६ ॥ संसारमें जितने सिद्ध रूप गुणतेजहैं वे सबके सब तपश्चर्यातेजके प्रभावसे ध्रुवके नेत्रातिथि हुए ॥ २७ ॥ क्याही आश्चर्यहै ! वायुका चाहे जहाँपर कैसाभी स्पर्श क्यों न होवे, और क्या, दूरदेशान्तरकाभी स्पर्श सुख वह अपनी त्वगिंद्रियकेद्वारा सर्वदा अनुभवकरनेलगे ॥ २८ ॥ शब्दगुणवाला आकाशभी ध्रुवकी सेवा बुद्धिहीसे (उसके मनाकरतेही) समस्त शब्द—समूहको उसके कर्णगोचर करानेलगा ॥ २९ ॥ इसप्रकारसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अतिदिन पृथिवी इत्यादि पंचभूतोंसे आराधित होनेपरभी वह ध्रुव, गोविन्दहीमें चि
समर्पण करके तपस्याहीको परमपदार्थ मानने लगा ॥ ३० ॥ वह राजपुत्र, कौस्तु
मणि शोभित वक्षस्स्थल, पीत कौशेय वस्त्र, भगवान्के ध्यानप्रभावसे इस विश्वको तेज
मय देखनेलगा ॥ ३१ ॥ ध्रुवकी घोर तपश्चर्या देख भयत्रस्त होकर इन्द्रदेव इस
चिन्तामें डूबनेलगे, कि—"जो कहीं इस ध्रुवने मेरे पदको चाहा तो अवश्यही लेलेग
॥ ३२ ॥यद्यपि अप्सरायें संयमियोंके संयमको भङ्गकरसकतीहैं, पर उनका प्र
तो जवानोंहीपर पड़सकता है इस लडकेके विषयमें मैं क्या करूं ? ॥ ३३ ॥ तपि
योंकी तपस्या भङ्गकरनेमें काम और क्रोध येही दोनों मेरे सहायक होतेहैं, परन्तु
बालक ध्रुवके ऊपर तो वे दोनोंही असमर्थहैं॥ ३४॥ तब फिर इस लड़केपर मेरा क
उपाय चलसकता है कि, इसके डरानेके लिये भयंकररूपा भूतावली इसके पास भे
॥ ३५॥बालकहोनेसे यह भूतोंके द्वारा डरायेजानेपर अवश्यमेव तपस्या छोड़देवेगा,
इन्द्रने योंही निश्चय करके ध्रुवके समीप भूतगणोंको प्रेरणकिया ॥ ३६॥ कोई एक भू
सर्वाङ्ग तो भालूके सदृश और ऊंटके समान लम्बग्रीव तथा बडे बडे दान्तोंसे भयंकर
वह उस बालकपर दौड़नेलगा ॥ ३७ ॥ वाघके सदृश भयंकर मुख और हस्ती
समान ऊच देह विकटाननको बायकर कोई प्रेत वारंवार गरजताहुआ उसपर
पड़ा ॥ ३८ ॥ विकटदंष्ट्रा संपन्न कोई एक भूत वेगसे सडा मांस भोजन करताहु
क्रोधसे देखदेखकर ध्रुवको तर्जन करता दौडने लगा ॥ ३९ ॥ कोई भूत वृषभ
होकर अतितीक्ष्ण शृंगोंके अग्रभागसे ऊंची तटभूमिको खोदताहुआ और खु
भागसे भूतलको विदलित करताहुआ उस ध्रुवके प्रति गर्जने लगा ॥ ४० ॥ कोई
फन फैलायेहुए भयंकर सर्पकी मूर्ति धारणकर चंचल दो जीभें निकालकर उसके
पहुँच फुफूकारनेलगा ॥ ४१ ॥ दूसरा कोई भूत भैंसेका रूप धारणकर सींग
पर्वतोंको फेंकता और पूँछको पृथिवीपर पटकते पटकते वेगसे हांफताहुआ उसपर
पड़ा ॥ ४२ ॥ दावानलसे दग्ध खजूरके सदृश दोनों जंघेवाला कोई प्रेत मुँह बाय
उसे डरवानेलगा ॥ ४३ ॥ किसी भूतकी चोटी मेघोंमें रगड खारहीथी और उस
पेट अत्यन्त दीर्घ और कृशथा एवं खोंढराई हुई पीली आँखोंसे वह ध्रुवको भय दिख
लगा ॥ ४४ ॥ दाहिने हाथमें कृपाण, और बायेमें मनुष्यकी खोपडीलिये भयङ्क
कोई एक भूत प्रचंड सिंहनाद करताहुआ उस बालककी ओर दौडचला ॥ ४५
कोई बडाभारी सारखूका वृक्ष लेकर किलकिलाशब्द करताहुआ, उसके प्रति यों दौ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जाताथा जैसे दण्डलिये हुए यमराजही होवें ॥ ४६ ॥ अन्धकारके संकेत मन्दिर, कालके कंदरा समान बडे मुखविवरको व्यादान कर कोई भूत उसपर टूटपड़ा ॥ ४७॥ फिर कोई भूत उल्लूका स्वरूप धारणकर हृदयकंपानेवाले अतिदारुण अपने फुफूकारोंसे उसे डरानेलगा ॥ ४८ ॥ कोई यक्षिणी, किसीके रोतेहुए बच्चेको उठालाई और उसका पेट फाडकर रक्तपान एवं मृणालकी नांई हाड चबानेलगी ॥ ४९ ॥ और यह कहनेलगी—हे ध्रुव ! इस लडकेका हाड चबाकर प्यासी होनेपर आज ऐसेही तेराभी रुधिर पीऊंगी ॥ ५० ॥ कोई यक्षिणी, तृणकाष्ठोंको बटोर चारों ओर उसे बिछा दावानल प्रज्वालितकर बवंडरसे उसे बढानेलगी ॥ ५१ ॥ कोईएक यक्षिणी, वेतालीका रूप बन पर्वत वृक्षोंको तोड़ ध्रुवको कंपित करनेके लिये आकाशमार्गको रोकने लगी ॥ ५२ ॥ दूसरी यक्षिणी (ध्रुवकी माता) सुनीतिका स्वरूप धारणकर दूरहीसे ध्रुवको देख अत्यन्त दुःखार्तकी नांई छाती पीटकर वारंवार रोदन करनेलगी ॥ ५३ ॥ और वह अत्यन्त दीनतासे मानो वात्सल्यभाव प्रकट करतीहुई बहुतसी मायामय चाटु (प्रिय) वाणी कहने लगी ॥ ५४ ॥ शरणागतवत्सल ! बेटा ध्रुव ! तुमी मेरे एक मात्र रक्षकहो, हाय ! मृत्यु मेरा प्राण लियाही चाहती है, मैं मररहीहूं मेरी रक्षाकरो रक्षाकरो ॥ ५५ ॥ तुम्हारे देखनेहींके लिये मैं गाँव गाँव, नगर नगर, पथ पथ, वन वन, आश्रम आश्रम, पर्वत पर्वत, घूमतीहुई थकगयी ॥ ५६ ॥ अरे बच्चा ! जिसदिनसे तुम तपस्या करनेको घरसे बाहर निकसे, मैंभी उसीदिनसे तुम्हारे देखनेकेलिये निकली ॥ ५७ ॥ बेटा ! जैसे तुम मेरी सवतके उन उन दुर्वचनोंसे पीडित हुएहो, मैंभी उसीप्रकारसे उसके वचनरूपी अग्निसे अत्यन्त व्यथित होरहीहूं ॥ ५८ ॥ इस घड़ी मैं न तो सोतीहूं न जागतीहूं, न खातीहूं, न पीतीहूं, मैं तो तुम्हारेही बिछोहसे योगिनीके सदृश होकर केवल तुम्हारीही चिन्तामें निमग्न रहतीहूं ॥ ५९ ॥ मेरे नेत्र तो निद्रासे दरिद्रहीहैं फिरभी यदि मुझे निद्रा आजावे तो उस वेला मुझ अभागिनीको सब प्रकारसे आनंददायक तुम्हारा मुख स्वप्नमें भी दिखलाई पडजाता ॥ ६० ॥ हे ध्रुव ! तुम्हारे विरहसे कातर होकर मैंने सताप दूर करनेकी अभिलाषासे तुम्हारे मुखके प्रतिनिधि उदय होतेहुए चन्द्रकोभी अवलोकन नहीं किया ॥ ६१ ॥ तुम्हारे आलापके तुल्य कोकिलभी अपनी कालकी बोली बोलताहै, यह जानकर मैं अपने कानोंको बालोंसे ढाँपकर उसका बोलनाभी नहीं सुनती ॥ ६२ ॥ हे ध्रुव ! तुम्हारे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

स्नेहसे अतिमात्र संतप्त होकर, किसीस्थानमें विश्रामकरनेकेलिये बैठजानेपर, तुम्हा
अंगस्पर्शके समान मधुर (मलय) वायुका भी सेवन मैंने नहीं किया ॥ ६३ ॥ म
ध्रुव ! मैंने राजपत्नी होनेपरभी तुम्हारे कारण, कौन देश कौनसी नदी और कौनकौन
पर्वत पैदलही नहीं लंघनकिये ? ॥६४॥मैं सब स्थानोंको ध्रुवसे हीन देखतीहुई अ
होगयी बेटा ! अब तो तुम्ही इस अन्धी माताकी लकडी (छडी) बनकर मेरी र
करो ॥६५॥ हे नरश्रेष्ठ ! कहाँ तो ये सब तुम्हारे अतिकोमल अंग, और कहाँ कठि
अंगवाले पुरुषोंसे साधनीय यह कठोर तपस्या ?॥६६॥हे वत्स ! इस(कठोर) तपस्य
द्वारा निष्पाप तुम राजपुत्र होनेकी अपेक्षा अधिक और क्या पावोगे ? उसे तो
बतलाओ ॥ ६७ ॥ बच्चे ! इस वयसमें तुमको खिलौना लेकर अपने समौ
लडकोंके साथ रातदिन खेलना चाहिये ॥ ६८ ॥ तत्पश्चात् किशोर अवस्था
होनेपर तुमको अध्ययनमें तत्पर होकर समस्त विद्याओंका पारदर्शी होना उचि
॥ ६९ ॥ तदनंतर यौवन प्राप्त होनेपर इन्द्रियार्थोंको कृतार्थ करतेहुए, स्त्री, मा
चंदन, इत्यादि अनेक भोगोंको करना ॥ ७० ॥उस घड़ी धर्मवत्सल गुणवान्, अ
पुत्रोंको उत्पादन कर और अपनी राजलक्ष्मीको उन सबके अधीन कर तब तुम तप
करने बैठना ॥७१॥ इस बाल्यअवस्थाहीसे तपश्चर्यामें प्रवृत्त होनेसे कितना पा
है? भला पैरके अँगूठेका करीषाग्नि (कस्सीकी आग) मस्तकपर कबतक पहुँचेगा ?॥७
शत्रुसे विजित, अपमानित, श्रीभ्रष्ट, ऐसेही लोगोंके मध्यसे कोई व्यक्ति तपस्या
ताहै, पर तुम इन सबमें कौनहो ? ॥ ७३ ॥ "अपमानित जनको तपस्या
उचितहै" यह बात सुनकर ध्रुव, एक लंबी उष्ण निःश्वास लेकर फिर हृदयमें भग
न्का ध्यान करने लगा ॥ ७४ ॥ मातासे कुछ वार्तालाप बिना कियेहीं भूतादि
भयको छोड़ ध्रुव फिर अच्युतके ध्यानसे तत्पर होगया ॥ ७५ ॥ और अति
षण—भूषित वह भतावली ध्रुवके भयदिखलानेके लिये उसके समीप जाकर
चारोंओर सुदर्शनचक्रको देखने लगी ॥ ७६ ॥ जोकि सूर्यके परिवेष मंडलके
उसके चतुर्दिक् देदीप्यमान था, और जिसे स्वयं भगवान् नारायणने राक्षसग
हाथसे रक्षाकरनेकेलिये वहांपर नियुक्त कियाथा ॥ ७७ ॥ वह भूतावली, ध्रु
चहूँओरसे घेरकर रक्षण करनेमें तत्पर, ज्वालमालाओंसे संकुल अत्युज्ज्वल तीव्र
र्शन चक्रका दर्शनकर ॥ ७८ ॥ और, अत्यन्त स्थिराचित्त, गोविन्दमें अर्पित ह
मानो पृथिवीको भेदकर तपरूपी वृक्षके उगतेहुए अंकुर सदृश ध्रुवनिश्चयवाले

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ध्रुवको देखकर आपही भयभीत होगयी । इसके अनंतर व्यर्थ मनोरथहो ध्रुवको नमस्कार कर यथास्थान चलीगयी ॥ ७९ ॥ ८० ॥ जैसें आकाशव्यापिनी गरजतीहुई मेघमाला अल्प मात्र वायुके चलतेही कहीं उधिराजातीहै ॥ ८१ ॥ हे द्विज! इसके अनंतर भयभीत समस्त देवता लोग इन्द्रके सहित, परामर्शकर शीघ्रही जाय ब्रह्माके शरणापन्न हुए ॥ ८२ ॥ उन सब देवतोंके प्रणाम और स्तुतिकरनेके अनंतर फिर ब्रह्माके आगमनका कारण जिज्ञासा करनेपर बोलनेका अवसर पाय वे लोग प्रार्थना करनेलगे ॥ ८३ ॥ देवतोंने कहा—"हे विधातः ! बडे तेजस्वी उत्तानपादके पुत्रकी कठोर तपस्याके तेजसे समस्त त्रैलोक्यतलवासी लोग सन्तप्त होरहे हैं ॥ ८४ ॥ हे पितामह ! हमलोग सम्यक् प्रकारसे ध्रुवके मनोगत भावको नहीं जानसके कि वह महातपस्वी हम सबलोगोंके मध्यसे किसका पद छीनलिया चाहताहै" ॥ ८५ ॥ देवतोंद्वारा इस प्रकारसे जनाये जानेपर चतुराननने हँसकर ध्रुवसे भीतचित्त उनदेवतोंके प्रति यों कहा ॥ ८६ ॥ ब्रह्मा बोले—"हे देवगण ! नित्य (ध्रुव) पदके अभिलाषी ध्रुवसे तुम लोगोंको कुछभी नहीं डरना चाहिये निश्चिन्त होकर तुम लोग जातेजाओ वह तुमलोगोंका पद नहीं चाहता ॥ ८७ ॥ उस भगवद्भक्तसे किसीको कहींभी भय नहीं खानाचाहिये, क्योंकि यह निश्चित (बात) है कि, जो लोग विष्णुके भक्त होतेहैं वे कभी दूसरेके सन्तापकारी नहीं होते ॥ ८८ ॥ वह विष्णु भगवान्की आराधना कर और उन्हींसे अपना कांक्षित वरदान पाय तुम लोगोंके पदोंको भी और दृढ़ करदेगा" ॥ ८९ ॥ देवतोंने ब्रह्माके कथित इस वचनको सुन, परम प्रसन्न हो, ब्रह्मदेवको प्रणाम कर, अपने अपने स्थानको प्रस्थान किया ॥ ९० ॥ अनंतर नारायणदेव ध्रुवको दृढ़चित्त और अनन्यभक्त देखकर, गरुडरथसे वहांपर जाकर बोले ॥ ९१ ॥ श्रीविष्णुने कहा—हे बालक ! बहुत दिनोंसे तुम तपश्चर्यामें कष्ट पारहेहो, अब इससे निवृत्त होवो, हे महाभाग ! मैं प्रसन्नहूं, हे सुव्रत ! वर माँगो ॥ ९२ ॥ ध्रुवने इस अमृत समान वचनको सुन, दोनों आँखें खोल, इन्द्रनीलमणिकी ढेरको सन्मुख देखा ॥ ९३ ॥ उसने देखाकि, मानो आकाश और पृथिवीका एक सरोवर है, जो नवविकसित नीलकमलके समूह द्वारा शोभा पारहाहै ॥ ९४ ॥ तब ध्रुवने फिर देखा कि, स्वर्ग और पृथिवीके अन्तर्गत समस्त स्थान लक्ष्मीदेवीके कटाक्षवृन्दोंसे पारिपूर्ण होरहेहैं ॥ ९५ ॥ नव-नील-जलदजालके मध्यगत सौदामिनीके समान कांतिमान्, पीताम्बर भगवान् कृष्णको उसने सन्मुख

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अवलोकन किया ॥ ९६ ॥ सुमेरूकी कांचनरेखासे युक्त आकाशरूपी कमलके समान गरुडयान भगवान पीतांबरको ध्रुवनें उस वेला देखा ॥ ९७ ॥ ध्रुवने उस पीतवसनधारी चन्द्रभूषित सुनील गगनमंडलके सदृश, हरिका, दर्शन किया ॥ ९८ दुःखित शिशुपुत्र, जैसे बहुत दिनोंके अनन्तर अपने पिताको देखकर (सुसुक् सुसुकर) रोवे, बालक ध्रुव उसीप्रकारसे उसवेला भगवान्‌को देखतेही दंडवत्प्रणाम चारोंओर लौटकर रोनेलगा ॥ ९९ ॥ नारद, सनक, सनंदन और सनत्कुमार इत्य अनेक अन्य योगियोंसे संस्तुत, योगीश्वर ॥ १०० ॥ चक्रधरने, करुणामय सलिलके द्वारा कमलनयनोंको आर्द्रकर हाथ पकड ध्रुवको उठायालिया ॥ १ ॥ भगवा नित्यही शस्त्र धारणके कारण अत्यन्त कठोर अपने दोनों हाथोंसे धूलिसे धूसर अंगका स्पर्श किया ॥ २ ॥ उन देवदेवके स्पर्शमात्रसे उस ध्रुवके मुखसे (स्व अति संस्कृतमयी वाणी प्रवृत्त हुई, अनंतर वह हरिकी स्तुति करने लगा ॥ १०३

तप बलका नाहिं होसकै, तप फल यह संसार ।
लहि हरि दर्शन ध्रुव भये, प्रमुदित अपरंपार ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां ध्रुवतपस्या—विष्णु-दर्शनं नाम विंशतितमोऽध्यायः ॥ २० ॥

एकविंश अध्याय ।

ध्रुवकृत विष्णुस्तुति और ध्रुवकी वरदान प्राप्ति ।

ध्रुवने कहा—सर्व सृष्टिकारी, हिरण्यगर्भ रूपी, हिरण्यरेता निर्मल ज्ञानके ब्रह्मात्मक आपको प्रणाम है ॥ १ ॥ भूतसंहारकर्ता, महाभूतात्मा, भूतपति हरि आपको नमस्कार है ॥ २ ॥ पालन परायण, विष्णुरूप, महाभारके सहिष्णु, तृप्त सर्व प्रभु कृष्णको प्रणाम है ॥ ३ ॥ दैत्यकुल महावनके दावानल रू आपको नमस्कार है, दानव वृक्षसमूहके कुठाररूपी आपको प्रणाम है ॥ ४ हे गदाधर ! कौमोदकी गदा आपके हस्ताग्रमें उद्यत रहती है, हे नन्दक नामक ख धारिन् ! महादानवविनाशक ! आपको नमस्कार है ॥ ५ ॥ आपही वराह रूपसे पृ वीके उद्धारकर्ता हैं, चक्रधर परमात्मा श्रीपतिको प्रणाम करताहूं ॥ ६ ॥ जि करकमलमें कमल और वक्षःस्थलमें कौस्तुभमणि शोभित है, उस मत्स्यादि हरा कमलावल्लभको नमस्कार है ॥ ७ ॥ वेदान्तवेद्य आपको नमस्कार है,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नामक चिह्नधरको प्रणति है, त्रिगुणात्मक गुणत्रय वर्जित, गुण स्वरूप आपको नमस्कार है ॥ ८ ॥ पांचजन्य शंखके धारण कर्ता पद्मनाभको प्रणाम है, हे देवकी-नन्दन ! वासुदेव ! आपको नमस्कार है ॥ ९ ॥ आपही प्रद्युम्न हैं मैं आपको प्रणाम करता हूं, अनिरुद्ध रूप आपको नमस्कार है; आपही कंसध्वंसी और चाणूरमर्दी हैं आपको प्रणाम है ॥ १० ॥ हे दामोदर ! हृषीकेश ! गोविन्द ! अच्युत ! माधव ! उपेन्द्र ! कैटभरिपो ! मधुसूदन ! अधोक्षज ! ॥ ११ ॥ हे नरकान्तक ! पापापहारिन्! नारायण! वामन! आपको नमस्कार है, हे हरे! शौरे! आपको प्रणाम है॥ १२॥ अनंतरूप, अनंतशायी, रुक्मिप्रमथन, रुक्मिणीपति, आपको नमस्कार करता हूं ॥ १३ ॥ हे शिशुपालविनाशक ! दानवारिपो ! असुरारे ! मुकुन्द ! परमानन्द ! नन्दगोपप्रिय ! आपको प्रणाम करता हूं ॥ १४ ॥ हे दनुजेन्द्र निषूदन ! पुंडरीकाक्ष ! मेरा प्रणाम है, वांसुरी मधुरधुनि (ध्वनि) कारी गोपालरूपधारी आपको नमस्कार करता हूं ॥ १५ ॥ आपही गोपियोंके प्रियतमहैं केशिविनाशी, गोवर्द्धन गिरिके धारणकर्ता हैं, आपही राम रघुनाथ राघव हैं आपको वारंवार प्रणाम है ॥ १६ ॥ हे रावणरिपो ! विभीषणके शरणदाता ! रणांगणविचक्षण ! जयस्वरूप ! अज ! आपको मैं नमस्कार करताहूं ॥ १७ ॥ आप क्षणादि कालके रूप, अनेक अवतारधारी, शार्ङ्गधर हैं, आपही गदाधर, चक्रपाणि, दैत्यवर्गविनाशी हैं आपको मेरा प्रणाम है ॥ १८ ॥ हे बलदेव ! बलभद्र ! बलाराति (इन्द्र) प्रिय ! बलियज्ञप्रमथन ! भक्तजन वरप्रद ! प्रणाम है ॥ १९ ॥ हे हिरण्यकशिपुदैत्यके वक्षःस्थल विदारक ! समरप्रिय ! गोब्राह्मणहितकारिन् ! ब्रह्मण्यदेव ! आपको नमस्कार करता हूं ॥ २० ॥ धर्मरूप आपको प्रणाम, सत्त्वगुणस्वरूप आपको नमस्कार, सहस्रशीर्षा परम पुरुष आपको मेरा प्रणाम है॥ २१ ॥ हे सहस्राक्ष ! सहस्रपाद ! सहस्रकिरण ! सहस्रमूर्ते ! यज्ञपुरुष ! श्रीकान्त ! आपको प्रणति करता हूं ॥ २२ ॥ आपका स्वरूप वेदहीसे वेदनीय है और आपको वेद परम प्रिय है, आपही वेदके वक्ता, एवं वेदमूर्ति हैं, आपही (वेदके द्वारा) सदाचार पथके प्रवर्तक हैं, आपको मैं नमस्कार करता हूं ॥ २३ ॥ हे वैकुंठ ! आपको प्रणाम है, हे वैकुंठवासिन् ! आपको नमस्कार है, हे गरुडवाहन ! विष्टरश्रवा ! आपको प्रणाम है ॥ २४ ॥ हे विष्वक्सेन ! जगन्मय ! जनार्दन ! आपको नमस्कार है हे सत्य! सत्यप्रिय ! त्रिविक्रम ! आपको प्रणाम है ॥ २५ ॥ हे वेदगायक ! मायामय ! केशव ! आपको नमस्कार है, हे तपोरूप ! आपही तपस्याके फलदाता हैं, आपको प्रणाम

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

है ॥ २६ ॥ आप स्तुतिके योग्य, स्तोत्रस्वरूप, और भक्तस्तवमें तत्पर हैं, श्रुतिस्मृ
एवं श्रुतिकथित आचारके प्रेमी आपको मेरा नमस्कार है ॥ २७ ॥ अण्डज, स्वे
जरायुज, और उद्भिज्ज प्राणिमात्रके स्वरूपधारी आपको अनेक नमस्कार करत
॥ २८ ॥ आप देवगणके मध्य इन्द्ररूप हैं, ग्रहगणमें सूर्य स्वरूप हैं, समस्त लोक
सत्यलोक हैं, और सब समुद्रोंमें क्षीरसागर हैं ॥ २९ ॥ आप नदियोंमें गंगा, प
रोंमें मानससर, पर्वतोंमें हिमालय, और गौओंमें कामधेनु हैं ॥ ३० ॥ आप
ओंमें सुवर्ण, पत्थरोंमें स्फटिक, पुष्पोंमें नीलकमल और गुल्मवृक्षोंमें तुलसी हैं ॥३
आप सर्व पूजनीय शिलासमूहमें शालग्रामकी शिला, मुक्तिक्षेत्रोंमें काशी और तीर्थ
णीमें तीर्थराज प्रयाग हैं ॥ ३२ ॥ आप सब वर्णों (रंगों) में स्वेतवर्ण, द्विपद प्र
योंमें ब्राह्मण, पक्षियोंमें गरुड, और हे ईश ! लौकिक व्यवहार विषयमें (आप्त
वचनरूप हैं ॥ ३३ ॥ आप वेदोंमें उपनिषत् स्वरूप हैं मन्त्रोंमें प्रणव हैं अक्ष
अकार हैं और यज्ञकर्ताओंमें चन्द्र हैं ॥ ३४॥ आप प्रतापशालियोंमें अग्नि, सहन
लोंमें सर्वसहा (पृथिवी), दाताओंमें पर्जन्य (मेघ), और पवित्र वस्तुओंमें
हैं ॥ ३५ ॥ आप सकल शस्त्रोंमें धनुष, वेगवानोंमें वायु, इन्द्रिय वर्गमें मन,
अभयदानियोंमें हस्त हैं ॥ ३६ ॥ आप व्यापकोंके मध्य आकाश, सकल आ
ओंके मध्य परमात्मा ; और हे देव ! समस्त नित्य कृत्योंके मध्य सन्ध्योपासन
हैं ॥ ३७ ॥ आप यज्ञोंमें अश्वमेध, दानोंमें अभय (दान), सब लाभोंमें
लाभ, और ऋतुगणमें वसंत है ॥ ३८॥ आप युगोंमें सत्ययुग, तिथियोंमें कुहू (अ
वस्या विशेष) नक्षत्रगणमें पुष्य, और सब पर्वोंमें संक्रांति है ॥ ३९ ॥ आप यो
व्यतीपात, तृणोंमें कुश और हे प्रभो ! उद्यम रूप चतुर्वर्गमें आपही मोक्ष हैं ॥ ४०
हे अज ! समस्त बुद्धियोंमें आप धर्मबुद्धि हैं समग्र वृक्षोंमें पीपल हैं और
लताओंमें सोमलता हैं ॥ ४१ ॥ आप निखिल पवित्र साधनोंमें प्रा
याम, और समस्त शिवलिंगोंमें सर्वाभीष्टदाता श्रीमान् विश्वेश्वर हैं ॥ ४२
हे नारायण ! आप स्वजन मित्रोंमें पत्नी हैं और सब बन्धुगणमें धर्म हैं, इस च
संसारमें आपके व्यतीत और तो कुछभी नहीं है ॥ ४३ ॥ आपही माता, आ
पिता, आपही मित्र, आपही परमधन, आपही सुखसंपत्ति, और जीवनेश्वर आयु
आपही हैं ॥ ४४ ॥ जिसमें आपका नाम हो वही कथा (कथा) है, जो आ
समर्पित हो वही मन (मन) है, जो आपके निमित्त किया जावे वही कर्म (क

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

है, और जिसमें आपका स्मरण होवे वही तप (तप) है ॥ ४५ ॥ धनिकोंका वही धन शुद्ध है जो आपके लिये व्यय किया जावे, हे जिष्णो ! वही काल सफल है जिसमें आप पूजित होते हैं ॥ ४६ ॥ तभीलों जीवन श्रेयस्कर है जबलों हृदयमें आप वर्तमान रहें, आपके चरणोदक सेवनहीसे सकल रोग शान्त हो जाते हैं ॥४७॥ हे गोविन्द ! आपके "वासुदेव" इस नामके कीर्तन करतेही अनेक जन्मके संचितभी महापापपुंज उसी क्षण विनिष्ट होजाते हैं ॥ ४८ ॥ अहो ! मनुष्योंका कैसा महामोह है ! ओहो ! मनुष्योंकी कैसी भूल है, जो कि वे सब वासुदेवका आदर न करके अन्यत्र परिश्रम करते हैं ॥ ४९ ॥ यही मंगलकारक, और यही धनोपार्जन, तथा यही जीवनका साफल्य है, जो कि दामोरका नाम कीर्तन किया जाता है ॥ ५० ॥ अधोक्षजसे भिन्न कोई धर्म, नारायणके व्यतिरिक्त कोई अर्थ, केशवसे व्यतीत कोई काम, और हरिके विना कोई मोक्ष नहीं है ॥ ५१ ॥ जो वासुदेवका स्मरण नहीं बन पडा, यही बडी हानि, यही भारी उपद्रव, और यही परम अभाग्य है ॥ ५२ ॥ अरे ! हरिकी आराधनासे पुरुषका क्या क्या सिद्ध नहीं होता ? यह तो पुत्र, मित्र, कलत्र, अर्थ, राज्य, स्वर्ग और मोक्ष पर्य्यन्त दे देती है ॥ ५३ ॥ यही हरिकी आराधना पापको हरती, आधि और व्याधियोंको ध्वंस करती, एवं धर्मको बढाती और मनोरथाके तुरत पूर्ण कर देती है ॥ ५४ ॥ एकाग्ररूपसे भगवान्के चरण युगलका ध्यान बडाही उत्तम है, यदि कोई पापीभी प्रसंगवश ध्यान करे तो उसका परमहित साधन होवे ॥ ५५ ॥ भगवान्का एकाग्रचित्तसे ध्यानसहित नामोच्चारणही, पापियोंका पाप क्या महापापकोभी हरण करलेता है ॥ ५६ ॥ जैसे अग्निकण अज्ञानवशभी छूजानेसे दहन कर (जराय) देता है, वैसेही हरिनाम जैसे होठपुटपर आतेही समस्त अघको हर लेता है ॥ ५७ ॥ जो कोई क्षणभरभी कमलाकान्तमें एकान्त और प्रशांत चित्तको समाधान कर उनका ध्यान करे, तो (चंचलाभी) कमला उसके पास अचला होकर निवास करें ॥ ५८ ॥ विष्णुपादोदकका पीनाही परमधर्म, परमतप और सर्वोत्तम तीर्थ है ॥ ५९ ॥ हे यज्ञपुरुष ! आपके प्रसादरूप नैवद्यका जो कोई भक्तिपूर्वक सेवन करता है, वही महाबुद्धिमान् (परम पवित्र देवभक्ष्य) पुरोडासके सेवनका फल पा जाता है ॥ ६० ॥ जो व्यक्ति विष्णुपादोदकको शंखमें रखकर उससे स्नान करता है, उसे (यज्ञान्तके) अवभृथस्नान और गंगाजलके स्नानका फल प्राप्त होता है ॥ ६१ ॥ जिस किसीने तुलसीदलके द्वारा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शालग्राम शिलाका पूजन किया, वह देवलोकमें पारिजातकी मालाओंसे संपूजित है ॥ ६२ ॥ ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र अथवा अन्य कोई जाति हो विष्णु भक्तिसे समायुक्त होनेहीसे उसे सर्वोत्तम जानना चाहिये ॥ ६३ ॥ जिसके दोनों भुजाओंपर (गोपीचन्दनसे) शंखचक्रका चिह्न होवे, मस्तकपर तुलसीकी कंठी (खोंसी) हो, और सब अंग गोपीचन्दनसे अनुलिप्त हों, तो उसके दर्शनहीसे पराय जाता है ॥ ६४ ॥ जो कोई प्रतिदिन द्वारकाचक्रके सहित बारह शालग्राम शिलाका पूजन करे, वह वैकुंठमें सादर निवास पाता है ॥ ६५ ॥ जिसके प्रतिदिन तुलसीकी पूजा होती है, उसके गृहमें यमदूत कभी नहीं जाते ॥ ६६ जिसके मुखमें हरिनाम, ललाटमें गोपीचन्दनका तिलक और छातीपर तुलसी माला रहती है उसे यमराजके अनुचरगण छू नहीं सकते ॥ ६७ ॥ गोपीचन्दन, तुलसी, शंख, शालग्राम, और द्वारका (गोमती) चक्र, ये पांचो जिसके घरमें होवें उसे पाप भय कहां है ? ॥ ६८ ॥ विना विष्णुस्मरणके जो सब मुहूर्त, क्षण, काष्ठा, दिन बीतते जाते हैं, उनी सबमें यह मनष्य यमराजके द्वारा ठगा जाता है ॥ ६९ ॥ तो ज्वलन्त अग्नि (अंगार) के समान दोअक्षरोंका हरिनाम, और कहां स्त्रीके ऐसी बडी पातकराशि ? ॥ ७० ॥ मैं गोविन्द परमानन्द मुकुन्द मधुसूदनको कर न दूसरेको जानूं, न भजूं और न स्मरण करूं ॥ ७१ ॥ विना हरिके किसी मैं न नमस्कार करता, न स्तुति करता, न नेत्रोंसे देखता, न छूता, न गाता हूं विना हरिमन्दिरके कहीं जाताभी नहीं हूं ॥ ७२ ॥ मैं तो जल, स्थल, पाताल अनिल, अनल, पर्वत, विद्याधर, असुर, सुर, किन्नर, वानर, नर ॥ ७३ ॥ तृण, (स्त्रीसमूह) पाषाण, वृक्ष, गुल्म, लता, इत्यादिमें सर्वत्रही उस श्यामसुन्दर श्रीवत्सभूषित वक्षःस्थल श्रीकृष्णहीको देखता हूं ॥ ७४ ॥ आप सबहीके हृदयमें साक्षात् साक्षी हैं, आपसे भिन्न भीतर बाहर सर्वव्यापक अन्य किसी मैं नहीं जानता ॥ ७५ ॥ हे शिवशर्मन् ! ध्रुव ऐसा कहकर उस घडी चुप हो और भगवान् विष्णुदेवने प्रसन्नदृष्टि होकर ध्रुवसे कहा ॥ ७६ श्रीभगवान् बोले—अयि विशालाक्ष ! बाल ! अनघ ! ध्रुवबुद्धे ! ध्रुव ! मैं तु हृदयस्थ मनोरथको अच्छीरीतिसे जान चुका हूं ॥ ७७ ॥ हे ध्रुव ! सकल भूतोंकी उत्पत्ति होतीहै और वह अन्न वृष्टिसे उत्पन्न होताहै, एवं उस कारण सूर्य हैं—उनकेभी आधार तुम होवो ॥ ७८ ॥ निरंतर आकाश

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चारों ओर घूमते हुए ग्रह नक्षत्र इत्यादि समग्र ज्योतिश्चक्रके आधार तुमी होवो॥ ७९॥ तुम मेढ़ीरूप होकर वायुपाशसे नियंत्रित समस्त ज्योतिर्गणोंको घुमाते हुए कल्पभर इस पदपर अधिष्ठित रहो ॥ ८० ॥ मैंने पूर्वकालमें श्रीमहादेवकी आराधनाकरके जो इस पदको प्राप्त कियाथा(सो आज)तुमारे तपोबलसे तुमको दियेदेताहूं॥ ८१॥ हे ध्रुव ! कोई तो चतुर्युगभर और कोई मन्वंतरपर्य्यन्त अपने पदपर रहतेहैं, परन्त तम कल्पान्तावधि इस पदाधिकारका पालन करोगे ॥ ८२ ॥ वत्स ध्रुव ! अन्य मानवोंकी कौन बातहै ? स्वयं मनुनेभी जिस पदको नहीं प्राप्तकिया, इन्द्रादि देवतोंकेभी दुर्लभ उस पदको मैंने तुमारे आधीन करदिया ॥ ८३ ॥तुमारी इस स्तुतिसे संतुष्ट होकर औरभी अनेक वर तुमको देताहूं—तुमारी माता सुनीतिभी तुमारी समीपचारिणी होवेगी ॥ ८४ ॥ जो मनुष्य स्थिरचित्त होकर इस उत्तम स्तोत्रका पाठ तीनों वेला करेगा, उसका पाप आपही क्षय हो जावेगा ॥ ८५ ॥ लक्ष्मी उसका गृह कभी न छोडेंगी, और उसे माताका वियोग न होवेगा, और न बन्धुवर्गके साथ कलह होगा—यह निश्चत है ॥ ८६ ॥ यह ध्रुवकृत स्तुति पुण्यमयी और महापातक नाशिनी है, इसके पाठ करनेसे ब्रह्मघातीभी शुद्ध होजाताहै,इतर पापियोंकी क्या बात है॥ ८७॥यह स्तुति महा-पुण्यसंपादिनी, महासंपत्तिदायिनी, महोपसर्गशमनी एवं महाव्याधिविनाशिनीहै ॥ ८८॥ जो निर्मलचित्त पुरुष, मुझपर परमभक्तिरखता होवे, वह मेरी प्रीतिकारिणी इस ध्रुवरचित स्तुतिका पाठ करे ॥ ८९ ॥ मनुष्य अशेष तीर्थ स्नानसे जो फल पा सकता है प्रेमपूर्वक इस स्तुतिके पाठ करनेसे इसकेद्वारा उसे समस्त तीर्थ स्नानका पूर्णफल प्राप्त होजाता है ॥ ९० ॥ मुझे प्रसन्न करदेनेवाले अनेक स्तोत्र हैं परन्तु इस ध्रवस्तुतिके सोलह अंशोंमें एक अंश (एक रुपयेमें एक आनाके बराबर) की योग्यताभी किसीमें नहीं है ॥ ९१ ॥ मनुष्य सहर्ष परम श्रद्धासहित इस स्तुतिके केवल श्रवण करनेहीसे उसी क्षण पातकोंसे मुक्त होकर महत् पुण्यको प्राप्त करताहै ॥ ९२ ॥ इस ध्रुवस्तुतिके कीर्तन करनेसे अपुत्र पत्रको पाताहै, निर्धन धनसंपन्न होताहै, और भक्तिहीन नरको भक्ति मिलती है ॥ ९३ ॥ अनेक दानोंको देकर, और विविध व्रतोंको कर मनुष्य जिन अभीष्ट लाभोंको पासकताहै वे सब इस स्तुतिपाठसे मिल सकते हैं ॥ ९४ ॥ सब कर्मोंको त्याग, और समग्र जपनीयोंको छोड़, सब कामनाओंकी देनेवाली इस ध्रुवस्तुतिका पाठ करनाही सर्वथा उचित है ॥ ९५ ॥ श्रीभगवान्‌ने कहा—हे महाबुद्धे ! ध्रुव ! तुमारा हित कहताहूं मनदेकर सुनो, जिसके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

द्वारा तुमारा यह पद सम्यक्प्रकारसे स्थिर हो जावेगा ॥ ९६ ॥ मैं तो
आनेके पहिलेही शुभा वाराणसीपुरीमें जानेका इच्छुक था, जहांपर मोक्षके
साक्षात् विश्वेश्वर विराजमान रहते हैं ॥ ९७ ॥ जिस काशीमें स्वयं विश्वेश्वर,
प्राणियोंके कर्णमें कर्मके निर्मूलन करनेमें समर्थ (तारक मंत्रका) उपदेश करते
॥ ९८ ॥ समस्त उपद्रवोंके दाता इस संसार दुःखका एक मात्र निस्तारोपाय
न्दभूमी काशीही है ॥ ९९ ॥ 'यह रम्य है, यह रम्य नहीं है' इसी प्रकारसे
और अप्रियका जो ज्ञान है वही दुःखरूप बडे वृक्षका बीजहै, आनंदवनादि
द्वारा उस (बीज) के दग्ध होजानेपर फिर दुःखका अवसर कहां है ? ॥ १००
जिसकेद्वारा प्रधान प्रापणीय पदार्थ पायाजाताहै, और फिर संसारकष्टके लिये
नहीं करना पडता, एवं जो परमआनन्दका स्थान है, वह यही आनंदकाननहै ॥ १
जो कोई इस अमृतायन (मुक्तिक्षेत्र) शिवके आनंद काननको छोड़कर अन्यत्र
करताहै (भला) उसके सुखका उदय क्योंकर होगा ? ॥ २ ॥ वरन काशी
चांडालोंके घरकी गलियोंमें भीख मांगनेकेलिये मट्टीकी परई लेकर घूमना अच्छा
पर अन्यत्र निष्कंटक राज्य करनाभी भला नहीं है ॥ ३ ॥ मैं जगत्पूज्य वि
श्वरकी पूजा करनेके लिए उनसेभी पूजित काशीमें वैकुण्ठनगरसे नित्यही आ
हूं ॥ ४ ॥ मुझमें यह जो त्रैलोक्य रक्षणमें समर्थ परमाशक्ति है, उसके कार
महेश्वरही हैं, क्योंकि वेही मेरे सुदर्शन चक्रके दाता हैं ॥ ५ ॥ पूर्वकालमें मेरे
भयप्रद जालंधर दैत्यको महेश्वरने अपने पादांगुष्ठकी अग्ररेखासे उत्पन्न चक्रको बनाक
माराथा ॥ ६ ॥ सो वह दैत्य चक्रका विमर्दक सुदर्शन नामक चक्र मैंनें विभु विश्वेश्व
पूजनमें अपने नयनरूपी कमलके अर्पण करनेसे पायाहै ॥ ७ ॥ उसी परम भूत विश्वा
सुदर्शन चक्रको मैंने पहिलेही तुमारी रक्षाकेलिए भेज दियाथा, तदनंतर मैं यहां आय
॥ ८ ॥ इस वेला मैं विश्वेश्वरके दर्शनार्थ काशी जाताहूं, (क्योंकि) आ
कार्तिकी पूर्णिमाकी बडी पुण्यप्रदात्री यात्रा (वहां) है ॥ ९ ॥ कार्तिक मास
चतुर्दशी तिथिमें जो पुरुष उत्तर वाहिनी गंगामें स्नानकर विश्वेश्वरका दर्शन करता
उसका पुनर्जन्म नहीं होता ॥ ११० ॥ विष्णु यह कथा कह, आनन्दपूर्ण ध्रुवको
गरुडपर चढाकर स्मरहरकी वासभूमी काशीको क्षणमात्रमें प्राप्तहुए ॥ ११ ॥
जनार्दन देव पंचक्रोशीके सीमापर पहुंच, गरूडपरसे उतर फिर ध्रुवको हाथसे पक
तदनन्तर ॥ १२ ॥ मणिकर्णिकामें स्नान और विश्वेश्वरका पूजनकर, भगवा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विष्णुने ध्रुवके हित करनेकी इच्छासे उससे कहा ॥ १३ ॥ इस अविमुक्त क्षेत्रमें यत्नपूर्वक लिंग स्थापन करो, जिससे कि त्रैलोक्य स्थापनका पुण्य तुमारा अक्षय होवे ॥ १४ ॥ अन्यत्र दस लाख शिवलिंगके स्थापन करनेसे जो पुण्य होता है, इस काशीमें वही पुण्य केवल एकही लिंगके स्थापनसे प्राप्त होता है ॥ १५ ॥ यहांपर कालवश टूटे फूटे देवालयोंका जो कोई जीर्णोद्धार कर (वा) देताहै, उसके फलका प्रलयमेंभी अन्त नहीं होता ॥ १६ ॥ जो मनुष्य वित्तशाठ्य (कृपणता) परित्याग कर यहां पर शिवालय बनवादेवे, उसे नियुत योजन समस्त सुमेरुपर्वत दानका फल प्राप्त होवे ॥ १७ ॥ जो कोई इस स्थानपर कूप, वापी, तडाग आदि यथा शक्ति बनवा देता है, उसे अन्यत्र बनवानेसे कोटिगुण अधिक पुण्य लाभ होता है ॥ १८ ॥ जो मनुष्य इस काशीमें पूजनके लिये रमणीय पुष्पवाटिका निर्माण करता है, उसे प्रतिपुष्पमें सुवर्ण पुष्पसे अधिक फल मिलता है ॥ १९ ॥ इस क्षेत्रमें ब्रह्मपुरी बनाकर जो ब्राह्मणोंको एकवर्षके भोजनसहित दान करदेता है उसके पुण्यका फल सुनो ॥ १२० ॥ चाहे समुद्रके जल सूख जावें, और पृथिवीके त्रसरेणु चाहे क्षय होजावें, पर शिवलोकमें प्राप्त उस जनका पुण्य कभी क्षयको नहीं प्राप्त होता ॥ २१ ॥ जो कोई इस काशीधाममें मठोंको बनवाकर जीवनो पायके सहित तपस्वियोंको देताहै, उसेभी पूर्ववत् कथित फल मिलता है ॥ २२ ॥ यहां पर बडेबडे पुण्योंको संचय करके जो विश्वेश्वरको समर्पण करदेताहै, उसका इस घोर संसार सागरमें पुनरागमन नहीं होता ॥ २३ ॥ इस जगत्में मेरा नाम 'अनंत' ऐसा कीर्तित होताहै, पर मैंभी काशीके गुणावलीका अन्त नहीं पाताहूं ॥ २४ ॥ अतएव हे ध्रुव ! काशीमें यत्नपूर्वक धर्म, कर्मका अनुष्ठान करना चाहिये, क्योंकि काशीमें अनुष्ठित धर्मका फल, अक्षयरूप हो रहताहै ॥ २५ ॥ गणोंने कहा—इसके पीछे गरुडध्वजने ध्रुवको इस प्रकारसे उपदेश देकर गमन किया, ध्रुवनेभी वैद्यनाथके समीप लिंग स्थापन करके ॥ २६ ॥ और बहुत बडा प्रासाद बनवा उसके आगे कुण्ड निर्माण करा, विश्वेश्वरका पूजन कर, कृतार्थ हो गृहको गमन किया ॥ २७ ॥ जो मनुष्य ध्रुवेश्वरका पूजन और ध्रुवकुण्डमें स्नानादि जल क्रियाओंको सम्पादन करताहै—वह भोगोंसे समन्वित होकर ध्रुव लोकमें वास करता है ॥ २८ ॥ जो कोई ध्रुवके इस परम आख्यानको पाठ करे वा पाठ करावे वह विष्णुलोकमें प्राप्त होकर विष्णुका प्रीतिपात्र हो जाताहै ॥ २९ ॥ जो नर इस ध्रुव-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चरितका प्रसंगवशभी स्मरण करताहै वह कभी पापोंसे अभिभूत नहीं होता और महा पुण्यको लाभ करताहै ॥ १३० ॥

"ध्रुव सग्लानि जप्यो हरिनामू । पायो अनुपम अचल सुठामू॥" (तु. रा.

स्तुति पवित्र करि जिमि लहेहु, ध्रुव ध्रुव पद अधिकार ।
थापि ध्रुवेशहिं काशिमें, कीह्नेहु निज निस्तार ॥ १ ॥
है महाल विख्यात यह, जासु ध्रुवेश्वर नाम ।
सूर्यकुण्डके पूर्व है, काशीमें वह ठाम ॥ २ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां ध्रुवकृतविष्णुस्तुति-ध्रुववरदानप्राप्तिर्नामैकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

द्वाविंश अध्याय ।

तीर्थ माहात्म्य ।

शिवशर्माने कहा—हे गणद्वय ! इस महापातक नाशक, अतिविचित्र, पवित्र, एवं ध्रुवोपाख्यानको सुनकर मैं (परम) सन्तुष्ट हुआ ॥ १ ॥ अगस्त्य बोले—जब ल द्विज शिवशर्मा यह बात कह रहाथा, इतनेमें वायुवेगके समान चलनेवाला वि विमान, स्वर्गलोककी अपेक्षा परम अद्भुत महर्लोकमें जा पहुंचा ॥ २ ॥ अतःपर ल विप्रने सर्वतः तेजसे व्याप्त उसलोकको देखकर विष्णुगणोंसे कहा कि, यह कौन मनोहर लोकहै ? ॥ ३ ॥ तदंनतर उन दोनोहीने कहा—हे महामते ! सुनो, यह स्वर्ग कसे परम अद्भुत महर्लोकहै, ॥ ४ ॥ तपस्याके द्वारा जिनकी पापराशि धो जातीहै वेही आकल्पजीवी (भृगु आदि) ऋषिगण, विष्णुके स्मरणसे सकल क्लेश समूहसे विमुक्त होकर ॥ ५ ॥ निर्बीज समाधिके द्वारा जगत्को तेजोमय देख, महायोग संपन्न सुरोत्तम गण यहांपर वास करतेहैं ॥ ६ ॥ हे प्रिये ! लोपामुद्रे ! भगवद्गणोंके इस कथाके कहते रहनेके मध्यहीमें एक आधे क्षणके बीच वह विमान उन सबको जनलोकमें लेगया ॥ ७ ॥ जहां पर ब्रह्माके मानस पुत्र सनंदनादिक निर्मल योगीन्द्र गण निवास करतेहैं, जो सबके सब उर्ध्वरेताहैं ॥ ८ ॥ और दूसरेभी अस्खलित ब्रह्मचर्य्य, सुख—दुःखादि सर्व द्वन्द्वसे विमुक्त, मल रहित, (विकार हीन) योगी गण वास करतेहैं ॥ ९ ॥ मनोवेगगामी उस विमानने जनलोकसे आगे तपोलोकको आ सबका नयन गोचर कर दिया ॥ १० ॥ वैराज देवगण और जिनका वासुदेवमें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मनोयोग रहताहै, एवं जो लोग समस्त कर्मोंको भी वासुदेवहीको समर्पण किये हैं, वेही सब लोग दाहसे विवर्जित होकर इस तपोलोकमें रहतेहैं ॥ ११ ॥ जितेन्द्रियगण, निष्काम भावसे तपोद्वारा गोविन्दको सन्तुष्टकर, इस तपोलोकमें आकर वास करतेहैं १२॥ जो लोग (अन्नादिको कण कण विनकर,) शिलोंच्छ वृत्तिके द्वारा जीवन निर्वाह करतेहैं, जो लोग दांतहीके द्वारा ओखरीका कार्यकर लेनेसे दन्तोलूखलिकहै, जो लोग पत्थरसे तोडकर भोजन करनेसे अश्मकुट्ट वृत्तिवालेहैं, जो मुनिगण गलित पत्रभोजी हैं ॥ १३ ॥ जो लोग ग्रीष्म ऋतुमें पंचाग्नि तापतेहैं, वर्षामें भूमिशयन करतेहैं, समस्त हेमन्त और आधा—शिशिर ऋतु जलमें बैठकर बितातेहैं ॥ १४ ॥ जो यतिगण तृषार्त होने परभी कुशाग्र स्थित बिन्दुमात्र पान करतेहैं, और अत्यन्त क्षुधित होकर वायुमात्र भोजन करतेहैं, एवं जो लोग केवल पैरके अंगुष्ठाग्रभागसे पृथिवीको स्पर्श किये हुये तपस्या करतेहैं ॥ १५ ॥ जो लोग उर्ध्वबाहु रहतेहैं, वा सूर्यमें अर्पित दृष्टि होते हैं, अथवा एक पदसे स्थाणु, (ठूठे वृक्ष) की नांई निश्चल खड़े रहतेहैं, एवं दिनभर सांस नहीं लेते, तथा जो मास भर बीतने पर तब श्वांस छोडतेहैं ॥ १६ ॥ जो लोग एक मास पर्य्यन्त उपवास व्रत करतेहैं, जो चातुर्मास्य व्रती हैं, जो प्रत्येक ऋतुके अन्तमें केवल जलपान करतेहैं, जो छमास पर्यन्त उपवासी रहतेहैं ॥ १७ ॥ जो लोग वर्षभर पर तब निमेष (पलक) गिरातेहैं, जो, केबल वर्षाहीके धारा जलको पीतेहैं, जो लोग स्थाणुकी तुल्यता प्राप्तकर मृगोंको देह खुजलानेका सुख देतेहैं ॥ १८ ॥ जिन लोगोंके जटाजूटरूपी गहन खोंढ़रेके भीतर पक्षिगण अपना खोंता बनाये रहतेहैं, जिनके अंगोपर विमौड़ छाये रहतेहैं, जिनके हाड़नसोंसे नढ़े रहतेहैं ॥ १९ ॥ जिनके अङ्ग चारो ओरसे लता प्रतानोंकेद्वारा वेष्टित रहतेहैं, जिनके अंगोपर बहुत दिनोंके घासपात जमे रहतेहैं ॥ २० ॥ इन सब प्रकारके तपस्याओंसे जिन लोगोंने अपने शरीरको क्षीण करडालाहै, ऐसे ऐसे तपोधनगण ब्रह्माके समान आयुष्य प्राप्तकर इस तपोलोकमें अकुतोभयरूपसे वास करतेहैं ॥ २१ ॥ वह पुण्यात्मा ब्राह्मण जबलों इसप्रकारसे उन दोनो विष्णु पारिषदोंके मुखसे यह कथा सुन रहाथा, इतनेहीमें बडा उज्ज्वल सत्यलोक उनके नेत्रोंका अतिथी हुआ ॥ २२ ॥ तुरत वे दोनों विष्णुदूत, शिवशर्माके सहित विमान परसे उतर सब लोगोंके सृष्टिकर्ता ब्रह्माको प्रणाम करनेलगे ॥ २३ ॥ ब्रह्मा बोले—गणो ! यह ब्राह्मण, बुद्धिमान्, वेदवेदांगका पारगामी, स्मृति विहित आचारोंके पालनमें तत्पर, और पापकर्मोंमें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विमुख रहनेवालाहै ॥ २४ ॥ अये महाप्राज्ञ विप्र शिवशर्मन् ! मैं तुमको जानताहूं वत्स ! उत्तम तीर्थमें प्राणत्यागकर तुमने बहुतही अच्छा किया ॥ २५ ॥ तुम ये सब (मार्गमें भूर्लोकसे इस सत्यलोकलों) जो कुछ देखेहैं, वे सब शीघ्रही विनाश जानेवाले हैं, प्रतिदिन प्रलयके कारण मैं वारंवार सिरजा करता हूं ॥ २६ ॥ रुद्रदेव, प्रतिपद विराट्पर्यन्तका संहार करते हैं, तो फिर मशक समान मरणधर्मी मनुष्योंकी कौन बातहै ॥ २७ ॥ जरायुज, अंडज, उद्भिज्ज, और स्वेदज इन चारोंप्रकारके भूतग्राममें मनुष्योंका एकमात्र यही गुण है कि वे उस बडी कर्मभूमि भारतवर्षमें ॥ २८ ॥ मनके सहित चंचल इन्द्रियोंको अच्छी रीतिसे जीत, और समस्त गुणगणके वैरी लोभका परित्याग कर ॥ २९ ॥ धर्मकुलध्वंसी, अर्थसंहारी विनाशी, जरापलितकारी, कामको विचारसे दूरकर ॥ ३० ॥ धीरता पूर्वक तपस्या कीर्ति, संपत्ति, और निज शरीरके नाशक, एवं तामस गतिके प्रापक क्रोधको जीत ॥ ३१ ॥ सदा प्रमादके एकमात्र कारण मदको छोड, और प्रमादके अकेले आकर संपत्तियोंके निवारक, ॥ ३२ ॥ सर्वत्र लघुताके हेतु, अहंकारको हटाय, एवं, सज्जनों परभी दोषारोपण करनेमें प्रयत्नशील ॥ ३३ ॥ महाद्रोहरोपक, मतिघाती, अत्यन्त अंधकर्ता अंधतामिस्र नरकके दर्शक मोहको त्याग॥ ३४ ॥ श्रुति स्मृति पुरणोक्त महाजनोंसे आचरित, धर्मकी सीढी ऊपर चढ इस सत्यलोकमें विना प्रयासही चलेआवैं ॥ ३५ ॥ हे द्विज ! सभी स्वर्गवासी गण (इस) कर्मभूमीके प्राप्तिकी इच्छा करतेहैं क्योंकि ये लोग कर्मभूमिमें जोजो उपार्जन करतेहैं उसीका फल उत्कृष्ट और अपकृष्ट स्थानोंमें भोग पातेहैं ॥ ३६ ॥ आर्यावर्तके समान देश, काशीके सदृश पुरी और विश्वेश्वरके तुल्य लिंग किसीभी ब्रह्मांड मंडलमें नहींहै ॥ ३७ ॥ दुःखरहित, सुकृतके एकमात्र फल स्वरूप, सर्व समृद्धि संपन्न, अनेकविध, स्वर्ग हैं ॥ ३८ ॥ इस ब्रह्माण्डगोलकमें स्वर्गसे बढकर अधिक रम्य दूसरा लोक नहींहै, क्योंकि सभी लोग तपस्या दान और व्रतादिके द्वारा स्वर्गभोगहीका प्रयत्न करतेहैं ॥ ३९ ॥ नारदने पातालसे आकर (एकवार) स्वर्गवासियोंके मध्यमें कहाथा कि पाताल स्वर्गलोकसे रमणीय है॥ ४० ॥ जिस पातालमें आह्लादकारी सुन्दर प्रभावाले श्वेत मणिगण, नागोंके अंगाभरणोंमें गुथेहैं वह पाताल किसलोकसा होसकताहै ! ॥ ४१ ॥ इधर उधर दैत्यदानवकी कन्याओंसे शोभायमान—पातालमें किस विमुक्तकीभी प्रीति नहीं होजाती ? ॥ ४२ ॥ जहांपर दिनमें सूर्यके किरण केवल प्रभा देतेहैं, घामका संताप नहीं होता, और रात्रिमें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चन्द्ररश्मि शीत न करके चन्द्रिकाका प्रकाशमात्र करतेहैं ॥ ४३ ॥ जहांके निवासी दनुजादिक समय बीतजानेपरभी नहीं जानते, जिसमें रम्य वन नदी विमलजल सरोवर ॥ ४४ ॥ अव्यक्त मधुर पुंस्कोकिलका कुहूकना, अतिशुद्ध वस्त्र, मनोहर भूषण, सुगंधयुक्त अनुलेपन (उबटन—इत्र) ॥ ४५ ॥ वीणा वेणु (वंशी) मृदंगादिके श्रुतिसुखद ध्वनि, एवं सर्वकामप्रद, हाटकेश्वर महालिंग विराजमान है ॥ ४६ ॥ इसके अतिरिक्त औरभी अनेक रम्य उपभोग्य वस्तुओंको पातालान्तरवासी दानव उरगादिगण भोग करतेहैं ॥ ४७ ॥ हे द्विज ! फिर पातालसेभी रमणीय इलावृत्त वर्ष है, वह चतुर्दिक्से सुमेरु पर्वतका आश्रयण करके अवस्थित है॥४८॥ हे विप्र ! जिस स्थानमें पुण्यकर्ता गण सर्वदा समस्त भोग्यवस्तुओंका भोग करते हैं, और जहांपर मृगनैनियां नित्यही नवयौवन सम्पन्न रहती हैं ॥४९॥ वह भोगभूमी कहाती है, तपःफलके बदलेसे यह मिलती है, जो लोग तुमारे ऐसा तीर्थमें देहत्याग किये हैं ॥५०॥ अदीन वचन बोलतेहैं, पुत्रकलत्रादिसे रहितहो, अपने सुख, आयुष्य, और धनराशिका क्षयकरके परोपकार करते हैं, वेही यहां भोगकरनेमें समर्थ होतेहैं ॥ ५१ ॥ महोदधिके अंतर स्थित अनेक द्वीप हैं, उनमें जंबूद्वीपके समान दूसरा कोईभी द्वीप भूतलपर नहीं है ॥ ५२ ॥ इस जंबूद्वीपमें नवठों वर्ष हैं, उनमें भारतवर्ष सबसे उत्तम है, यह देवतोंकोभी दुर्लभ कर्मभूमी कहलाता है ॥५३॥दूसरे आठो वर्ष किंपुरुषादि नामोंसे प्रसिद्ध हैं, वे सब देवभोग्य हैं, उनमें स्वर्गवासीगण स्वर्गसे आकर भोग (क्रीडा) करते हैं ॥ ५४ ॥ इस भारतवर्षका विस्तार नवसहस्र योजन हैं, यह जंबू द्वीपका प्रथम वर्ष सुमेरुपर्वतके दक्षिणभागमें है ॥ ५५ ॥ इसमेंभी हिमालय और विन्ध्य पर्वतोंके मध्यका देश परं पुण्यप्रद है, उसमेंभी गंगा और यमुनाके बीचकी अन्तर्वेदी भूमि परम उत्कृष्ट है ॥ ५६ ॥ कुरुक्षेत्र समस्त क्षेत्रोंमें अधिक है, उससेभी बढकर नैमिषारण्य उत्तम स्वर्गका साधन है ॥ ५७ ॥ इस समस्त क्षितिमंडलमें नैमिषारण्य तथा अपर सकल तीर्थोंसे तीर्थराज विशिष्ट है ॥ ५८ ॥ वह स्वर्ग मोक्ष और समस्त काम (ना) ओंका फलदाता महाक्षेत्र तीर्थराजही प्रयाग कहा गयाहै ॥ ५९ ॥ पूर्व कालमें मैंने समग्र याग और कामपूरण करनेसे कामिक, रम्य इस तीर्थराजको तौलाथा हे द्विज ! ॥ ६० ॥ दक्षिणादिसे पुष्ट सब यागोंसे इसे प्रकृष्ट देखकर, हरिहरादि देवोंने इसका नाम प्रयाग रक्खा ॥ ६१ ॥ जो कोई प्रयागका त्रिकाल केवल नामही स्मरणकरे, तो उसके शरीरमें कहींभी पाप कभी वास नहीं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

करसकता ॥६२॥ यद्यपि पापसे बचानेवाले अनेक तीर्थहैं, परन्तु संचित पापराशिके नाशक इस प्रयागसे अधिक कोईभी नहींहै ॥ ६३ ॥ असंख्य जन्मान्तरके संचित पापगण जो कि व्रत, दान, तप और जपादिकेद्वारा कभी दूर नहीं किये जा सके ॥ ६४ ॥ वे सब, प्रयाग गमनोद्यत शुभ जन्मी नरके अंगोमें वायुसंहत वृक्षके सदृश थरथराके कांप उठतेहैं ॥ ६५ ॥ पश्चात् प्रयाग यात्रामें दृढचित्त पुरुष जो आधामार्ग चला जाताहै, तो वे सब पाप उसके शरीरसे निकस भागनेकेलिये दूसरा स्थान ढूँढने लगतेहैं॥६६॥फिर तो भाग्यवश तीर्थराजके दर्शन होतेही सकल पाप(आप आप) ऐसे पराते हैं जैसे सूर्योदय होतेही अन्धकार शीघ्रतर भाग जाताहै ॥ ६७ सप्तधातुमय शरीरमें जोजो पाप हैं, बे सब केशोंपर जा बैठते हैं, मुंडन करादेनेसे वे नहीं रहजाते ॥ ६८ ॥ इस प्रकारसे निष्पाप होकर जो सितासित तीर्थ (गंगायमुनाके संगम) में स्नान करता है, वह जो जो कामना करे सभीको निस्सन्देह पावे ॥ ६९ ॥ जो कोई सकाम स्नान करता है वह उस पुण्यबलसे विपुल पुण्यगण यथेच्छित पवित्र भोग, और स्वर्गको पाता है, एवं जो निष्काम नहाताहै, वह मोक्ष प्राप्त करता है ॥ ७० ॥ अन्यकामनाओंको त्याग केवल मोक्षहीकी आकांक्षा जो स्नान करे वहभी कामदतीर्थ राजसे मोक्ष लाभ करता है ॥७१॥ भारतवर्षमें तीर्थराजको छोड दूसरे तीर्थसे जो कोई कामना सिद्धिकी इच्छा करता है, वह निश्चय करके कामना फलको नहीं पाता ॥ ७२ ॥ हे द्विज ! मैं सत्यलोक और प्रयागमें क्या अंतर है, यह नहीं जानता, क्योंकि प्रयागमें जो शुभकर्म करने वाले लोग हैं वे सब मेरे सत्यलोकके निवासी हैं ॥ ७३ ॥ भूमंडल पर तीर्थाभिलाषी मनुष्यको तीर्थराज प्रयागसे भिन्न इतर किसी तीर्थका सेवन नहीं करनाचाहिये ॥ ७४ ॥ हे द्विजश्रेष्ठ ! राजा और इतर सेवकमें जितना अंतर है;—प्रयाग एवं तद्भिन्न तीर्थोंमेंभी वही है यह एक दृष्टान्तमात्र कथन कियागया है ॥ ७५ ॥ जो कोई इस प्रयाग तीर्थमें किसी प्रकारसे प्राणत्याग करता है, उसे आत्मघातका दोष नहीं होता और इष्ट फलोंकोभी पाताहै ॥ ७६ ॥ जिस भाग्यवान्की अस्थि (हाड) प्रयागमें (पड़ी) रहजातीहै, वह किसीजन्ममेंभी दुःखका लेश नहीं पाता ॥ ७७ ॥ जिसे ब्रह्महत्यादि पापोंके प्रायश्चित करनेकी इच्छा हो, उसे निस्सन्देह ब्राह्मणके आज्ञानुसार विधिपूर्वक प्रयागहीका सेवन करना उचित है॥७८॥हे विप्रेन्द्र ! बहुत क्या कहें ? जिसे अत्यन्त उन्नतिकी इच्छा होवे, वह भूतलमें सर्वोत्तम सितासित तीर्थहीकी सेवा करे ॥ ७९

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

समस्त भुवनोंमें तीर्थेश्वर प्रयागसेभी अधिक काशीमें शरीर त्याग होनेसे अनायासही मुक्ति मिलजाती है ॥ ८० ॥ अतएव अविमुक्त क्षेत्र प्रयागसेभी परमरम्य हैं, क्योंकि वहांपर साक्षात् विश्वेश्वर स्वयं वर्तमान हैं ॥ ८१ ॥ विश्वेशाधिष्ठित अविमुक्त महाक्षेत्रसे अधिक रम्य ब्रह्मांड मंडलमें कहींभी कुछ नहीं है ॥ ८२ ॥ यह अविमुक्त क्षेत्र यद्यपि ब्रह्मांडके अन्तर्गतहै, पर वह पंचक्रोश प्रमाण ब्रह्मांडके मध्यवर्ती नहीं होता ॥ ८३ ॥ प्रलयकालमें ज्यों ज्यों एकार्णवका जल बढता जाताहै, महादेव त्यों त्यों उस क्षेत्रको ऊपर उठाते रहतेहैं ॥ ८४ ॥ हे द्विज ! यह क्षेत्र शिवके त्रिशूलाग्र भागपर अंतरिक्षमें संस्थित है, पृथिवीपर नहींहै, मूढबुद्धिगण इसे नहीं देख सकते ॥ ८५ ॥ इस विश्वेश्वरके आश्रममें नित्यही सत्ययुगहै, सर्वदैव महापर्व है, एवं यहांपर ग्रहोंके उदय और अस्तहोनेका दोष (कभी) नहीं होता ॥ ८६ ॥ जहांपर भगवान् विश्वनाथकी स्थितिहै, वहां सदैव सौम्यायन और महोदयपर्व तथा मंगल विराजमान रहताहै ॥ ८७ ॥ भूतलमें जैसे सहस्रशः पुरियां हैं, हे विप्र ! काशीकोभी वैसीही नहीं मानना चाहिये, यह तो एक लोकोत्तर नगरीहै ॥ ८८ ॥ मैंने तो चौदहों भुवनोंकी सृष्टि कीहै, परन्तु हे विप्रेन्द्र ! इस पुरीके निर्माण कर्ता स्वयं प्रभु विश्वेश्वरही हैं ॥ ८९ ॥ पूर्वकालमें यमराजने बहुतसमयतक अतिदुष्कर तपस्या कर, केवल वाराणसीपुरीको छोड त्रैलोक्यका आधिपत्य पायाथा ॥ ९० ॥ चित्रगुप्तभी, समस्त चराचरके कर्मोंको गोचर करते हैं, पर काशीवासियोंके कृतकर्मको नहीं जानसकते ॥ ९१ ॥ महादेवके गणोंद्वारा परिरक्षित काशीपुरीमें कहींभी यमदूतोंके प्रवेशका कभी अधिकार नहींहै, हे द्विजोत्तम ! ॥ ९२ ॥ काशीमें देहत्यागियोंके नियन्ता स्वयं विश्वेश्वर हैं, और वहांपरभी पापकर्ताओंके शासक काल भैरवहैं ॥ ९३ ॥ अतएव वहांपर कभी पाप नहीं करना चाहिये, क्योंकि केवल रुद्रयातना तो दारुण हुईहै पर समस्त नरकोंसे दुःसह रुद्रपिशाचत्वभी प्राप्त होताहै, ओह ! ॥ ९४ ॥ 'पापही कर्तव्य है,'—यदि ऐसीही बुद्धिहै, तो इतनी बडी पृथिवी पडीहै, (काशीको छोडकर) अन्यत्र सुख पूर्वक करणीयहै ॥ ९५ ॥ प्राणी कामातुर होनेपरभी एक माताको बंचाताहै, वैसेही पापी होनेपरभी मोक्षार्थीको अकेली काशी तो सर्वथा वराय देनीचाहिये ॥ ९६ ॥ जिसे दूसरेकी निन्दाकरनेका अभ्यास पडगया है, और जो परस्त्री गमनकी अभिलाषा रखताहो, उसे कभीं काशीका सेवन करना उचित नहींहै, क्योंकि कहां तो परमपदप्रदात्री काशी और कहां नरकसम वह नर ? ॥ ९७ ॥ जो लोग दानकेद्वारा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यहां धनादि उपार्जन किया चाहते हैं, अथवा कपटकरके परायेका धनादिक लि
चाहते हैं ऐसे मनुष्योंको काशीका सेवन नहीं करना चाहिये ॥ ९८ ॥ काशीमें
त्यही परपीडाकर कर्मको त्याग देवे, यदि वही करना है तो, वैसे दुरात्माओं
काशीवास करनेका क्या प्रयोजन है ? ॥ ९९ ॥ जो लोग विश्वनाथकी भ
त्यागकर दूसरे देवतोंमें भक्तिभाव रखतेहों उन्हें कभीं पिनाकपाणिकी राजधानीमें
रहनाचाहिये ॥ १०० ॥ हे विप्र ! लोग अर्थकी सिद्धि चाहनेवाले हों, अथ
कामार्थी हों, उन्हें इस अविमुक्तकी सेवा नहीं करनी चाहिये क्यों कि यह तो मोक्षदे
है ॥ १ ॥ जो लोग महादेवके निन्दक वा वेदकी निन्दामें तत्पर हों, अथ
वैदिक आचारके विरुद्ध चलतेहों, उन सबको वाराणसीका सेवन करना उचित
है ॥ २ ॥ जो लोग परद्रोहबुद्धिवाले हैं, परायेकी ईर्ष्या (डाह) करते
एवं दूसरोंको सन्ताप देते हैं, उनकी सिद्धि काशीमें नहीं होती ॥ ३ ॥ जो
द्धिगण, चित्तसेभी काशीकी बडाई नहीं करते, उन दुर्वृत्त चित्तोंकी मोक्षवार्ताभी दू
है ॥ ४ ॥ भूतलपर विना ज्ञानके कहींभी मोक्ष नहीं है, वह ज्ञान चान्द्रायण
व्रतोंसेभी नहीं मिल सकता ॥ ५ ॥ न श्रद्धासहित उत्तम देश और कालमें वि
पूर्वक सत्पात्रोंमें प्रतिपादित तुलापुरुष प्रभृति दानोंसे ॥ ६ ॥ न यमोंसे,
ब्रह्मचर्य्यादि नियमोंसे, न पूजादिकसे, न शरीर शोषक उग्रतपस्याओंसे, हे द्विजवर
॥ ७ ॥ न गुरुके प्रतिपादित महामंत्रोंके जपसे, न यथोक्त स्वाध्यायोंसे, न अ
अग्निशुश्रूषणसे, ॥ ८ ॥ न गुरुलोगोंकी सेवासे, न (पितरोंके) श्राद्धोंसे न देवतों
पूजनसे, न अनेक तीर्थयात्राओंहींसे, वह ज्ञान प्राप्त होसकताहै ॥ ९ ॥ बिना योग (साध
के ज्ञान कभी होताही नहीं है, और वह योग तत्त्वार्थ शीलनहीसे प्राप्त होताहै वह (शील
केवल गुरूपदिष्ट मार्गसे एवं सर्वदा अभ्यास वशसे लाभ किया जा सकताहै ॥ ११०
उसकेभी सुदूर श्रवण प्रभृति बहुतसे विघ्न पडजाते हैं, इसी कारणसे (प्रायः) एक
जन्ममें योगके द्वारा ज्ञानकी प्राप्ति नहीं संघटित होती ॥ ११ ॥ हे सुव्रत ! वि
तप, जप, इत्यादिके और विनाही योगके, काशीमें तो एकही जन्ममें (अनायास
मुक्ति प्राप्त होजातीहै ॥ १२ ॥ हे द्विजोत्तम ! शुद्धबुद्धिसे तुमने काशीमें जो श्रे
उपार्जन कियाहै, उसका परिणाम बहुतही उत्कृष्ट है ॥ १३ ॥ उन दोनों सुनन्दा
विष्णुगणोंके सन्मुख योंही कहकर ब्रह्मदेव विरत (चुप) होगये और वह महामना
शिवशर्माभी (यह सब सुनकर) बडाही प्रमुदित हुआ ॥ ११४ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तीरथराज प्रयागहै, यद्यपि सब कुछ देत।
मैं काशी सम नहिं कहूं, उत्तम मुक्ति निकेत ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां तीर्थमाहात्म्यवर्णनं नाम द्वाविंशतितमोऽध्यायः ॥ २२ ॥

त्रयोविंश अध्याय।

विष्णुका अभिषेकोत्सव।

शिवशर्मा बोला—हे सत्यलोकस्वामिन्! सर्वप्राणिप्रपितामह! विधे! मैं कुछ निवेदन करनेकी इच्छा करताहूं, पर भयवश नहीं कहते बनता ॥ १ ॥ ब्रह्माने कहा—हे विप्र! जो तुम पूँछा चाहतेहो, तुम्हारे मनोगत उस भावको मैंने समझ लिया, तुम निर्वाणके विषयमें पूँछना चाहतेहो, सो येही दोनों गण तुमसे कहेंगे ॥ २ ॥ इन दोनों विष्णुगणोंको यहाँपर कुछभी अगोचर नहींहै, ब्रह्माण्डमंडलमें जो कुछ हैं उसे ये दोनोंही भलीभाँतिसे जानते हैं ॥ ३ ॥ ब्रह्माने यह कहकर उन भगवान्के गणादिकोंका सत्कार किया और वे सबभी लोककर्ता ब्रह्माको प्रणाम कर हृष्टान्तःकरण हो प्रस्थित हुए॥ ४ ॥ फिर अपने विमानपर चढ वे वैकुंठकी ओर चले, गमनकालमें शिवशर्माने वहांपर फिर उन दोनों गणोंसे प्रश्न किया॥ ५॥ शिवशर्मा बोला-हमलोग कितनी दूर आये? और अभी कितनी दूर हमलोगोंको चलनाहै? हे भद्र! आपलोगोंसे औरभी एक बातकी जिज्ञासा करताहूं, प्रीतिपूर्वक उसेभी कहिये ॥ ६ ॥ कांची, अवंती, द्वारवती, काशी, अयोध्या, मायापुरी और मथुरा, ये सातोंही पुरियाँ मुक्तिदायिनी हैं ॥ ७ ॥ तन्मध्ये अन्य छहों पुरियोंको छोड काशीहीमें मुक्तिको विश्वस्रष्टाने प्रतिष्ठित कहीहै, तो क्या अभीभी मेरी मुक्ति नहीं हुई? ॥ ८ ॥ आपलोग प्रसन्नतापूर्वक इन सब बातोंका यथार्थ उत्तर मेरे आगे कहें, दोनों गणोंने शिवशर्माकी यह बात सुनकर सादर कहा ॥ ९ ॥ दोनोगण बोले—हेअनघ! तुमने जो प्रश्न किया, उसका ठीक ठीक (यथार्थ) उत्तर देते हैं, हमलोगोंको विष्णुके प्रसादसे भूत भविष्य और वर्तमान सब कुछ ज्ञात हैं ॥ १० ॥ हे विप्र! चन्द्र और सूर्यके किरण जहाँतक आकाश पहुंचाते हैं वहांतक समुद्रपर्वत और वनोंसहित भूलोक कहाजाता ॥ ११ ॥ और उसके ऊपर आकाश मंडलभी वैसही विस्तृत है, भूमिसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सूर्य नियुत योजनपर ऊंचे स्थितहैं ॥ १२ ॥ सूर्यके निकटसे लक्षयोजनके ऊ
चन्द्रमा दिखलाई पडते हैं, और चन्द्रसे एक लक्ष योजन ऊंचे पर नक्षत्रमंड
शोभित है ॥ १३ ॥ वहांसे दोलाख योजनके अनंतर बुधहैं, बुधसेभी दोहीलाख
योजनपर शुक्र, और फिर शुक्रसे दो लाख योजन ऊपर मंगलहैं ॥ १४ ॥ बृहस्प
मंगलसे बीसलाखके दूरीपरहैं, और बृहस्पतिसे दोलाख योजनकी उंचाईपर शनैश्च
॥ १५ ॥ शनिसे एकलक्षके उर्ध्व सप्तर्षिमंडल है, और सप्तर्षियोंसे फिर एकलक्ष
ध्रुव स्थितहैं ॥ १६ ॥ धरणीमंडलमें जो कुछ पैरोंसे चलने योग्य समुद्र, द्वीप, प
और कानन सहित स्थानहैं वह सब भूलोक नामसे विख्यातहै ॥ १७ ॥ भूलोक
लेकर सूर्यपर्यन्त भुवर्लोक, और सूर्यसे ध्रुवतक स्वर्लोक कहाजाताहै, (हे विप्र
॥ १८ ॥ भूमिसे एककोटि योजनके उपरि महर्लोकहै, और फिर उ
ऊपर दोकोटि योजनपर जनलोकको जनलोगोंने कहाहै ॥ १९ ॥ पृथिवीसे
कोटि योजन प्रमाणपर तपलोकहै और आठकोटि योजनके ऊपर सत्यलोक है॥
और सत्यलोकसे परे वैकुण्ठलोक है, जो पृथिवीसे सोलह कोटि योजन प्रमाण
गयाहै ॥ २१ ॥ जहाँपर सबके अभयदाता साक्षात् कमलापति विराजमान
वहाँसे सोलहगुने उंचाईपर महादेवका स्थान कैलास अवस्थित है ॥ २२ ॥
कैलासपर सर्वस्वरूप सर्वश्रेष्ठ भगवान् शिव पार्वती, गणेश, स्वामिकार्तिक, नन्दी आ
सहित निवास करतेहैं ॥ २३ ॥ यह दृश्यमान समस्त प्रपंच उनका खेलमात्र
अपनी लीलासे मूर्ति धारण करते हैं, वेही विश्वेश्वर नामसे प्रसिद्धहैं और यह
उन्हींका आज्ञाकारी है ॥ २४ ॥ वही सब किसीके शास्ताहैं, उनका शासक
नहीं है, वह स्वयं भूतोंकी सृष्टि पालन और प्रलय करते हैं ॥ २५ ॥ अकेले
सर्वज्ञ हैं, उनकी चेष्टा स्वेच्छाधीन रहती है, उनका प्रवर्तक और निवर्तक
नहीं है ॥ २६ ॥ जो वेदविहित अमूर्त और समूर्त परब्रह्म है, वह वेही
सर्वव्यापी, सनातन नित्य, सत्यस्वरूप और द्वैतरहितहै वहभी वेही हैं ॥ २
वही महदादि कारणोंसे जो प्रधानहैं, वे उससेभी परेहैं, जिसे समस्त श्रुतियां
आनन्द कहतीहैं ॥ २८ ॥ जिसे न तो सब वेद, न विष्णु, न ब्रह्माही
जाननेमें असमर्थ होकर जहाँसे वाणी मनके सहित लौट पडती है ॥ २९ ॥
स्वयं वेदनीय, परंज्योति, सर्वान्तःकरणनिवासी, योगिगणगम्य, अनाख्येय
प्रमाणोंसे एकही गोचर होते हैं ॥ ३० ॥ जो अनेक रूप होकरभी रूपरहित

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

व्यापक होनेपर भी किसीके गोचर नहीं, स्वयं अनन्त होनेपर औरोंके अन्तक मूर्ति, एवं सर्वज्ञाता होकरभी कर्मवर्जित हैं ॥ ३१ ॥ उनका ईश्वररूप ऐसा है—खंडचन्द्र अवतंस, तमालके तुल्य श्यामल गल, कपालमें तृतीय लोचन विस्फुरित ॥ ३२ ॥ शरीरमें वामार्धभाग नारीरूपसे शोभित, शेषभगवान् उनके अंगद (बिजायठ—भुजबंध), गंगातरंगके सत्संगसे सदैव निर्धौत जटातट ॥ ३३ ॥ सर्वाङ्ग अनंग भस्मसमूहसे पूजितोज्ज्वल, विचित्रगात्र महाव्याल भूषणोंसे विभूषित॥ ३४॥ महावृषभरथगामी, अजगव (पिनाक) नामक धनुर्धारी, गजासुरके चर्मका ओढना (दुपट्टा) ओढे, पंचमुख, शुभमय ॥ ३५ ॥ महामृत्युञ्जय, महाबल प्रमथगणसे वेष्टित शरणागतोंके त्राणकर्ता प्रणतजनोंके मोक्षदाता, मनोरथपथातीत वरप्रदान परायण (सदा विराजमान) हैं ॥ ३६ ॥ भो द्विज ! तत्त्वस्वरूप, रूपातीत, उस ईश्वरका सगुण और निर्गुण रुद्ररूप सर्वविश्वव्यापी हो रहाहै ॥ ३७ ॥ निराकार होनेपरभी साकार वेही शिव मुक्ति और भुक्तिकेभी कारणहैं, शिवसे पृथक् अन्य कोईभी मोक्षदाता नहीं है ॥ ३८ ॥ उस निर्गुण ईश्वरने जैसे इस दृश्य अदृश्य चराचर विश्वको पार्वतीपति (सगुण ईश्वर) के अधीन रक्खाहै ॥ ३९ ॥ वैसेही उमापति भगवान् इस समस्त जगत्को विष्णुके आधीन कर, हे विप्र ! आप स्वच्छन्द लीलासे क्रीडा करते रहतेहैं ॥ ४० ॥ जैसही शिवहैं, तैसही विष्णुहैं, और जैसे विष्णु हैं वैसेही शिवहैं, शिव-विष्णुमें तनिक भी भेद नहीं है ॥ ४१ ॥ पुराकालमें महादेवने ब्रह्मादिक समस्त देवतागणोंको और विद्याधर, उरग, सिद्ध, गन्धर्व, चारणप्रभृतिको बुलाकर ॥ ४२ ॥ अपने सिंहासनके समान सुन्दर सिंहासन बनवाय उसपर विष्णुको बैठाय, मनोहर, ॥ ४३ ॥ अतिरम्य, कोटि शलाका (तिल्ली) युक्त, विश्वकर्माद्वारा निर्मित, पांडुरवर्ण, रत्नमय दण्डसमन्वित, बडी बडी मोतियोंकी लटकतीहुई झालरोंसे शोभित ॥ ४४ ॥ ऊपरके भागमें विचित्र कलशसे विराजमान, सहस्रयोजन विस्तृत, सर्वरत्नमय, सर्वोत्तम ॥ ४५ ॥ पट्टसूत्रमय चामरोंसे परिष्कृत, छत्रका निर्माण कराय, राज्याभिषेक योग्य सर्वौषधादि द्रव्योंके द्वारा युक्त ॥ ४६ ॥ पंचकुम्भस्थित, सरसो अक्षत और दूर्वामिश्रित प्रत्यक्ष तीर्थके जलोंसे तथा स्वयं उपस्थित (वेद) मन्त्रोंसे ॥ ४७ ॥ देवता, ऋषि, सिद्ध, और नागोंकी सोलह सोलह मंगलहस्ता कन्याओंको लाकर॥ ४८॥ वीणा-मृदङ्ग, शंख, भेरी, डमरु, डिंडिम, (दुग्गी) झांझ, आनक और कांस्यताल आदि वाद्यन, एवं ललित गान ॥ ४९ ॥ और वेदके महाध्वनिसे आकाश अंगनके परि-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पूर्ण होजानेपर, ताराबल एवं चन्द्रबल समन्वित शुभ तिथि शुभलग्नमें क्षणमें ॥ ५
आबद्धमुकुट, रमणीय (वेश) कृत कौतुकमंगल, पार्वती रचित शृंगार शोभा
लक्ष्मी संयुक्त ॥ ५३ ॥ विष्णुदेवको ब्रह्माड मंडपपर स्वयं अभिषिक्त
अनन्य भोग्य योग्य अपना समस्त ऐश्वर्य देदिया ॥ ५२ ॥ अनंतर महेश्व
प्रमथोंके साथ शार्ङ्गपाणिकी स्तुति की और लोककर्ता ब्रह्मासे यह वचन कहा॥५३
यह विष्णु मेरेभी वन्दनीय हैं, तुम इनको प्रणाम करो, रुद्रने ऐसा कहकर गरुडध्वज
प्रणाम किया ॥ ५४ ॥ तब तो समस्त गणेश्वर, ब्रह्मा, देवतागण, सनकादि यो
वृन्द, सिद्ध देवर्षि समूह ॥ ५५ ॥ विद्याधर, गन्धर्व, यक्ष, रक्ष, अप्सरोगण, गुह्य
चारण, शेष, वासुकि, तक्षक प्रभृति नाग, ॥ ५६ ॥ पक्षिगण, एवं किन्नरादिक
स्थावर, जंगम, "जयजय" और "नमोस्तु नमोस्तु" कहने लगे ॥ ५७ ॥ तद
परम प्रकाशक महादेवने उसबेला देवतोंकी सभामें इन रम्य महाशब्दोंसे विष्णुकी
की ॥ ५८ ॥ तुम्ही सर्व भूतोंके कर्ता पालयिता, और संहर्ता हो, और तुम्ही सब
जगत्के पूजनीय एवं जगदीश्वर हो ॥ ५९ ॥ तुम्ही धर्म अर्थ कामके दाता,
अन्यायकारियोंके शास्ता हो, एवं संग्राममें तो तुम मेरेभी अजेय होगे ॥ ६०
उत्तम इच्छाशक्ति, क्रियाशक्ति, और ज्ञानशक्ति, हे विष्णो ! मेरेद्वारा प्रापित इन
शक्तियोंको ग्रहण करो ॥ ६१ ॥ हरे ! जो तुमारे द्वेष्टा होंगे उनका मैं यत्न
अवश्यही शासन करूंगा, और तुम्हारे भक्तोंको मैं उत्तम मोक्ष दूंगा ॥ ६२ ॥
सुरोंसे दुष्पारिहार्य इस मायाकोभी लो, जिसके मोह पाशमें बंधकर विश्व कुछभी
जानसकेगा ॥ ६३ ॥ मेरे वाम बाहु तुम हो, और दक्षिण बाहु यह ब्रह्मा हैं।
तुम इस ब्रह्माकेभी पालक एवं जनक होगे ॥ ६४ ॥ इस प्रकारसे स्वयं हरिको
ण्ठका ऐश्वर्य्य देकर कैलासपर स्वेच्छानुरूप प्रमथगणके साथ उमापति भगवान्
क्रीडा करते रहते हैं ॥ ६५ ॥ तभीसे शार्ङ्गधन्वा, गदाधर, दानवोंके अन्तकर्ता वि
देव, अखिल त्रैलोक्य (राज्य) का शासन कररहे हैं ॥ ६६ ॥ हे विप्र ! यह
तुमसे समग्र लोकोंकी परिस्थिति वर्णन की, अब तुम्हारे मुक्तिके कारणको कहत
॥ ६७ ॥ जो कोई इस उत्कृष्ट उपाख्यानको मनलगाकर सुने, वह स्वर्गलोकमें ज
फिर काशीमें मुक्ति पावे ॥ ६८ ॥ यज्ञ, उत्सव, विवाह, सब मंगलकार्य, राज्याभि
ककी वेला, देवस्थापन कर्म ॥६९॥ सर्वाधिकार दान, और नये गृहके प्रवेश इत्यादि
उन कार्योंके सिद्ध्यर्थ सयत्न इसे पढे ॥ ७० ॥ इसके पाठसे अपुत्र पुत्रवान्

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

धनवान्, रोगी नीरोग, और बद्ध बन्धनसे मुक्त होजाता है।।७१।।अतएव मंगलार्थीजन यत्नपूर्वक सदा इसे जपे, यह आख्यान अमंगल शमन और हरिहरका प्याराहै।।७२।।

हर हरिको प्रतिनिधि कियो, दीन्हेंहु सब कुछ काज ।
आप रमत स्वछन्द ह्वै, उमासहित महाराज ।। १ ।।

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां विष्णुअभिषेकोत्सववर्णनं नाम त्रयोविंशतितमोऽध्यायः ।। २३ ।।

चतुर्विंश अध्याय ।

शिवशर्माका परमपदलाभ ।

दोनों विष्णुदूतोंने कहा—शिवशर्मन् ! हम दोनोंही तुम्हारे भावी सुकृतके फलको कहते हैं, श्रवण करो, तुम इस वैकुण्ठलोकमें बहुतेरे भोगोंको भोगकर ।। १ ।। ब्रह्माके पूर्ण एकवर्ष पर्य्यन्त अप्सरागणके साथ रमणकरतेहुए—उत्तम तीर्थमरणसे प्राप्त पुण्यके अवशिष्ट भागके द्वारा फिरभी ।। २ ।। नन्दिवर्धन नगरमें राजा होगे । और असपत्न, बलवाहनादिसे समृद्ध ।। ३ ।। हृष्टपुष्टशरीर—सुन्दर सुवर्णभूषणधारी, नित्यही इष्टापूर्त धर्मकर्मोंके अनुष्ठाता, पण्डितगणसे परिपूर्ण।। ४ ।। सर्वदैव सस्य, सम्पन्न उपजाऊ खेतोंसे हरेभरे सुदेश, उत्तम प्रजागणसे युक्त सुस्थ, सुतृणपूर्ण, बहुगोधन ।। ५ ।। और देवमन्दिरोंकी मालाओंसे विराजमान राज्यको पाओगे । जिस राज्यमें समस्त ग्राम यज्ञके स्तंभोसे युक्त और बडी धनसंपत्तिसे शोभित रहेंगे ।। ६ ।। जहाँ कृत्रिम उद्यान (बगीचा) सुन्दर पुष्पोंसे भूषित, और सदा फलप्रद (फलिन्द) वृक्षोंसे शोभायमान होगे एवं जहाँकी भूमि कमलिनी संयुत सरोवरोंसे अलंकृत होगी ।। ७ ।। जहाँकी नदियाँ (सदंभा) स्वच्छ और स्वादुजलसे पूर्ण रहेंगी, पर कहींभी अधिक जनसमूह दंभसे युक्त न होगा, जहाँपर वंशही कुलीन होंगे, अन्यायोपार्जित धन पृथिवीमें लीन (गडे) न रहेंगे ।। ८ ।। जहां नारियोंमें विभ्रम (एकहाव) होगा पर विद्वानोंमें विशेष भ्रम नहीं होगा । जहाँकी नदियाँही टेढी चलेंगी, पर प्रजागण नहीं ।। ९ ।। जहांके कृष्णपक्षकी रातेंही तमोयुक्त होंगी, न कि वहांके मनुष्य तामस होंगे, और जहांकी स्त्रियांही रजस्वला होंगी, पर धार्मिक नर रजोगुणी (कभी) न होंगे ।। १० ।। जहांके लोगोंका मन धनोंके द्वारा अनंध (अंधा नहीं) होगा, पर भोजन अंध (भात) के सहित होगा । जहां रथही अनय (लोहसे रहित—सुवर्णादि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

रचित) होगा, न कि राजपुरुष अन्यायी होंगे ॥ ११ ॥ जहां फ
कुदार चँवर (पंखा) और छाता इत्यादिमें दंड (दंडा) लगेगा
क्रोध अथवा अपराधके कारण अन्यत्र कहीं भी न पायाजावेगा ॥ १२
जिसमें जुआडियोंकेही स्थानमें परिदेवन (क्रीडा—खेलवाड) होगा, तद्भिन्न
कहींभी प्रलाप (वतझड) न होगा, जहाँ जुआडियोंहीके हाथमें पाश (फा
दिखलाई पडेगा दूसरोंके हाथमें पाश (फांस-रज्जु) न रहेंगे ॥ १३ ॥ ज
जलोंहीमें जडता, अन्य किसीमें मूर्खता नहीं, स्त्रियोंके कटिस्थलही दुर्बल (क्ष
क्षीण) होंगे और कोई दुर्बल नहींरहेगा, और नारियोंकीही छाती कठोर होगी
मनुष्य कठोरहृदय न रहेंगे ॥ १४ ॥ जहाँ औषधहीमें कुष्ट (कुट्ट) पायाजावेगा
मनुष्योंमें कुष्ठरोग (कोढा) न रहेगा, जिसमें रत्नोहींमें वेध (छेद) होगा, पर मनु
में वेध (ताडन) न होगा, मूर्तियोंके हाथोंहीमें शूल (त्रिशूल) रहेगा पर मनुष्
शूलरोग न होगा ॥ १५ ॥ जहां सात्विकभावहीसे कंप होगा, नकि कभी
किसीको कंपहो, एवं काम जनितही संताप होगा नकि धनादिकका संतापहो, पाप
दरिद्रता (अभाव) होगी नकि अन्य किसी वस्तुकी हो—ऐसा होगा ॥ १६
जहां सदैव पापमय वस्तुहीकी दुर्लभता होगी नकि पुण्यमय वस्तुकी, हाथियाँ
(पागल-मस्त) होंगे नकि मनुष्य, जलाशयोंमेंही तरंगोंका युद्ध होगा नकि लो
॥ १७ ॥ हस्तियोंकीही दान (मदजल) हानि होंगी नकि जनोंकी दान
(दानका बंदहोना) होगी, वृक्षोंहीमें कंटकहोंगे मनुष्य कंटक (दुःखप्रद) न
मनुष्योंहीमें विहार होगा, पर किसीका वक्षस्थल हारसे रहित न रहेगा ॥ १
बाणोंहीमें गुणविश्लेष (डोरीसे छुटना) होगा लोगोंमें गुणोंका विच्छेद न
दृढबंधनपुस्तकोंहीका होगा नकि मनुष्योंका, जहां पाशुपत (शैव) परमहंसोंमेंही
स्नेह(ममता) का त्याग होगा नकि निवासीजनोंमें स्नेह (दया) का त्याग
॥ १९ ॥ जहांपर संन्यासियोंहीकी दंडवार्ता होगी, अन्यकी नहीं, धनुषोंहीमें
(बाण) मिलेंगे, पर अन्यत्र मार्गण (भिक्षुक) नहीं रहेंगे, और ब्रह्मचारीही
भिक्षुक होगें दूसरे भिक्षुक नहीं रहेंगे ॥ २० ॥ जहांपर अर्हन् उपासक
(बौद्ध) ही लोग मलधारी होंगे और कोई नहीं एवं भ्रमरगणही प्रायः चंचल
होंगे लोग वैसे न रहेंगे ॥ २१ ॥ इन सब गुणोंसे परिपूर्ण उस देशमें शौंडीर्य
शाली सौभाग्यभाक् स्वरूपवान् शूरता उदारतादि गुणोंमें भूषित राजधर्मके ज्ञाता

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

धर्मपूर्वक राज्यशासन करने पर लावण्यवती रमणीय दशसहस्र रमणियाँ तुम्हारी रानी होंगीं और तीनसौ राजकुमार उत्पन्न होंगे । तुम प्रचण्ड परपुरञ्जय वृद्धकाल नामसे प्रसिद्ध होंगे ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४॥ तुम अनेक समरोंके विजेता, भिक्षुकोंको धनसे तृप्ति करनेवाले, बहुत गुणोंसे परिपूर्ण, पूर्णचन्द्र समान द्युतिमान् ॥ २५॥ निरंतर अवभृथ (यज्ञान्तस्नान) से आर्द्रकेश, प्रजापालनमें परमसंपन्न, राजोंमें सर्वोत्तम, और कोश (खजान) के द्वारा ब्राह्मणगणके प्रीतिकर्ता ॥ २६ ॥ एवं निरालस्य होकर गोविन्दके पादारविन्दको हृदयमें ध्यान करतेहुए रातदिन वासुदेवहीके कथालापमें व्यतीत करने लगोगे ॥ २७ ॥ हे द्विज ! तुम्हारेही भाग्यवश कहींसे किसीसमयपर काशीक्षेत्रसे आयेहुए कुछ एक यात्री राजसभामें तुमको विराजित देख अनेक आशीर्वाद देतेहुए इसप्रकारसे कहेंगे, हे राजशार्दूल ! जिससे तुम उसवेला बडे आनन्दित होंगे ॥ २८ ॥ २९ ॥ समस्त जगतोंके गुरु काशीनाथ श्रीमान् विश्वेश्वर देव तुम्हारी कुमतिको दूर करें ॥ ३० ॥ जो स्मरणमात्रसेभी मुक्तिसंपत्ति दान करते हैं वेही काशीनाथ तुमको निर्मल ज्ञानका उपदेश करें ॥ ३१ ॥ जिस पुण्यबलसे तुमने इस अकंटक बहुत बडे राज्यको प्राप्त किया है उसी पुण्यके शेषभागद्वारा तुम्हारी बुद्धि विश्वनाथमें अर्पित होवे ॥ ३२ ॥ जिस विश्वनाथके प्रसादसे आयुष्य, पुत्र, वर, अंगना, समृद्धियाँ, स्वर्ग, एवं मोक्षभी सुलभ है, वेही विश्वेश्वर (तुमपर) प्रसन्न होवें ॥ ३३ ॥ जिनके केवल नाम सुनतेही महापातकोंका विनाश होजाताहै, वेही विश्वेश्वर तुम्हारे हृदयमें वास करें ॥ ३४ ॥ इस आशीर्वादके परंपराको सुन, तुम वृद्धकाल भूपालरूपमें रोमांचितशरीर होकर उस घडी इस वृत्तान्तको स्मरण करोगे ॥ ३५ ॥ फिर आकारको छिपा, उन सबको बहुतसा धन देकर सुमुहूर्तमें पुत्रको राज्य समर्पण कर ॥ ३६ ॥ राज्ञी अनंगलेखाके सहित काशीको जावोगे, (वहां) अनेक दानोंको दे याचकजनोंको सन्तुष्ट कर ॥ ३७ ॥ अपने नामसे प्रसिद्ध मुक्तिदाता शिवलिंगकी स्थापना कर उसपर बहुतही ऊंचा शिवालय बनवाय उसके आगे उत्तम कूप रचना कराय ॥ ३८ ॥ विधिवत् वहाँपर कलशारोपणादि व्यवहार कर मणिमाणिक्य, सुवर्ण, वस्त्र, हस्ती, घोडा, गौ, धन ॥ ३९ ॥ महाध्वज, पताका, छत्र, चामर, दर्पण, एवं अनेक देवोपकरण (पुजहाई आदि) अकृपणाचित्तसे देकर ॥ ४० ॥ व्रत, उपवास, और नियमके द्वारा अतिक्षीण कलेवर होनेपर तुम वहां निर्जनस्थानमें दोपहरकी वेला एक तपोधनको देखोगे ॥ ४१ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वह अतीव जीर्णशरीर, पिंगलजटाजूटसे शोभित, तपस्वी, उन्नत मूर्तिधारी, अपने समान लोगोंके मनकी श्रद्धाका आस्पद ॥ ४२ ॥ अपने शरीरयष्टिके भारको छडीपर रखेहुए, शिवमन्दिरके भीतरसे निकल बाहर सभामंडपमें आय ॥ ४३ ॥ तुम्हारे समीपमें बैठ इस क्रमसे पूछने लगेगा; तुम कौनहो ? यहांपर क्यों आयेहो (तुम्हारे ऐसा) यह दूसरा और कौनहै ? ॥ ४४ ॥ यह शिवालय किसने बनवायाहै यदि जानतेहो तो बतलाओ इस लिंगका क्या नामहै ? प्रायः वृद्धताके कारण मैं नहीं जानसका ॥ ४५ ॥ तब उस वृद्धतपस्वीके इसप्रकारसे पूँछनेपर तुम कहोगे कि मैं वृद्धकाल नामक ॥ ४६ ॥ दक्षिणदेशका राजाहूं, इस अपनी सहधर्मिणीके साथ यहाँ आयाहूं, और इसी लिंगका ध्यान करता रहताहूं, पर कुछभी प्रार्थना नहीं करता ॥ ४७ ॥ हे जटिल ! इस शिवालयके बनवानेवाले स्वयं महादेवहैं, किंवा रूपसे मैं इस लिंगका निश्चित नाम नहीं जानता ॥ ४८ ॥ वह जटाधारी राजाका ऐसा वचन सुनकर कहेगा, कि "तुमने एक बात ठीक कहा जो लिंगका नाम नहीं जानते" ॥ ४९ ॥ मैं तुमको नित्यही (यहां) स्थिररूपसे बैठे देखताहूं, अतः (संभव है कि) तुमने यह सुना होगा कि, यह शिवालय किससे बनवायाहै ?॥ ५० ॥ यदि ठीक ठीक जानते हो तो मेरे सन्मुख उसे कहो" उस तपस्वीकी यह बात सुनकर तुम फिर कहोगे ॥ ५१ ॥ "क्या मैं झूठ कहताहूं ! कि कर्ता और कारयिता महादेवही हैं;" अथवा हे विभो ! तपस्विन् ! इस चिन्तासे मुझे कौन प्रयोजन है ! ॥ ५२ ॥ इसप्रकार कहकर तुम्हारे चुप होजानेपर वह वृद्धतापस फिर कहेगा "बहुत प्यासाहूं मुझे पानी लाकर शीघ्रही दो" ॥ ५३ ॥ उसके ऐसी प्रार्थना करनेपर तुम कूपसे जल लाकर उस वृद्धतपस्वीको पिलाओगे(बस)वह तुरत॥ ५४ ॥उस पानीके पीनेसे पूर्णिमाके चन्द्रमा प्रभासंपन्न सुन्दररूप तरुण हो जावेगा, जैसे केंचुलीके छोडेपर सर्प फिर नवीन होजाताहै ॥ ५५ ॥ तब तुम आश्चर्यमें आकर उससे फिर कहोगे कि—"भगवन् ! यह कौनसा प्रभावहै ? जिसकेद्वारा आप फिर ॥ ५६ ॥ यहाँ बुढौतीको छोड संप्रति नव जवान होकर शोभायमान होरहेहैं ? हे तपोधन ! यदि आपको अवकाश हो तो कहिये ॥ ५७ ॥ तपोधन बोलेंगे हे महामतिमन् नरश्रेष्ठ वृद्धकाल ! मैं तुमकों जानताहू, और तुम्हारी इस पतिव्रता पत्नीको भी जानताहूं ॥ ५८ ॥ हे राजन् ? यह इस जन्मके पूर्व तुर्वसु नामक ब्राह्मणकी परम चारवती सुमुखी कन्या थी ॥ ५९ ॥ तुर्वसुने इसे महात्मा नैध्रुवको विवाह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दान करदिया, फिर वह नैश्रुव यौवन विना प्राप्तहुएही कालधर्मके वश होगया॥ ६० ॥ यह सच्चरित्रा वैधव्य (व्रत) का पालन करतीहुई अवंतीपुरीमें मरगयी, उसी पुण्यसे पाण्डय राजाकी बेटी हुई ॥ ६१ ॥ राजन् (अब) इस पतिव्रताका तुमने विवाह किया और यह तुम्हारे साथ यहाँ आकर उत्तम मुक्तिको पावेगी ॥ ६२ ॥ हे नृप ! अयोध्या, अवंतिका, मथुरा, द्वारवती, कांची, अथवा मायापुरी (हरद्वार) में ॥ ६३ ॥ जो पातकी लोग यथाकाल मरजातेहैं, वे सब स्वर्गसे हो आकर यहां काशीमें मोक्षको प्राप्त होतेहैं ॥ ६४ ॥ हे नृपते ! मैं तुमको (भलेही) जानताहूं, तुम पूर्व जन्ममें मथुराके निवासी शिवशर्मा नामक ब्राह्मण थे, तुम हरद्वार (मायापुरी) में मृत्युको प्राप्त हुए ॥ ६५ ॥ उसी पुण्यबलसे वैकुंठमें प्राप्त हो, मनोरम भोगोंको भोगकर फिर उसी पुण्यके शेषांशसे नन्दिवर्द्धनके राजा हुए ॥ ६६ ॥ हे वृद्धकाल महिपाल ! उसी सुकृतसे इस मोक्ष क्षेत्र काशीमें प्राप्तहुए और उत्तममुक्तिको प्राप्त करोगे ॥६७॥ हे राजेन्द्र ! और फिर यह सुनो, जोकि तुमने यह कहा कि—"इस शिवालयके बनाने और बनवानेवाले महादेवहैं" सो बहुतही ठीकहै॥६८॥ कभीभी जो कुछ पुण्यकर्म करे उसे किसीसे नहींकहनाचाहिये, क्योंकि "मैंने किया" ऐसा कहतेही उसीक्षणमें पुण्यकाक्षय होजाताहै ॥६९॥ अतएव बडे प्रयत्नसे पुण्यको धनके निधिकी नांई छिपायेही रहना चाहिये, क्योंकि, कहदेनेसे पुण्य भस्ममें दीहुई आहुतिके सदृश व्यर्थ होजाता है॥ ७० ॥ हे अनघ! निश्चयरूपसे तुमने विश्वनाथहीके द्वारा प्रेरित और कृतकृत्य होकर इस शिवमंदिरका निर्माण कराया है, यह मैं (भले) जानताहूं ॥ ७१ ॥ हे महीपते ! यह समझलो कि, यह वृद्धकालेश्वर नामक अनादिसिद्ध लिंग है, परन्तु तुम इसके केवल निमित्त मात्र हुएहो ॥ ७२ ॥ इस वृद्धकालेश्वर लिंगके दर्शन, स्पर्शन, पूजन, श्रवण, और प्रणामसे सकल वांछित अर्थ प्राप्त होते हैं ॥ ७३ ॥ यह कालोदक नामा कूप जरा (वृद्धता) और व्याधियोंका विघातक है, इसके जलपान करनेसे फिर माताके स्तनका दूध नहीं पीना पडता ॥ ७४ ॥ इस कूपके जलसे स्नान कर इस लिंगका पूजन करनेवाला नर एकवर्षमें अपने मनोभिलषित सिद्धिको प्राप्त करता है ॥ ७५ ॥ इस कालदमकूपके जल पीने अथवा स्पर्श करनेसे कोढ विस्फोटक (शीतला) रंघणी ओदी खजुली और कफपीडा आदि रोग नहीं रहने पाते ॥ ७६ ॥ अग्निमन्दता, शूल (दर्द—हुक्क), प्रमेह, संग्रहणी, मूत्रकृच्छ्र (करकमुत्ती—पथरी) पामा (खजुरी) आदि रोग इस कूपजलके सेवनसे दूर हो जाते हैं ॥ ७७ ॥ और इसी कूपोदकके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सेवनसे जोकि भूतज्वर हैं एवं जितने प्रकारके विषमज्वर हैं, वे सब बहुतही शीघ्र शान्त होजाते हैं ॥ ७८ ॥ तुम्हारेही आगे मेरी जरा और पलित (बालोंकी शुक्लता) इस कूपके जलपान करनेहीसे विनष्ट होगया, और मैं क्षणमात्रमें नया बनगया ॥ ७९ ॥ इस वृद्धकालेश्वर लिंगकी सेवा करनेसे दरिद्रता, उपसर्ग, रोगगण, पाप और पापजन्य फल नहीं होते ॥ ८० ॥ वाराणसी क्षेत्रमें सिद्धिलाभार्थियोंको प्रयत्नपूर्वक कृत्तिवासेश्वरके उत्तरभागमें वृद्धकालेश्वर लिंगका दर्शन करना चाहिये ॥ ८१ ॥ वह तपोधन यह कह अनंगलेखा राज्ञीके सहित उस महिपालका हाथ पकडकर उसीलिंगमें अन्तर्द्धान होजावेगा॥ ८२॥ मनुष्य—"महाकाल ! महाकाल ! महाकाल" इतना कीर्तन करनेहीसे सैकडों प्रकारके पापोंसे छूटजाता है इसमें कुछभी विचार नहीं करना चाहिये ॥ ८३ ॥ इसी विधिसे विष्णुभगवान्के दर्शन करनेपर उत्तम वैकुण्ठ पुरमें अनेक भोगोंको भोग कर अन्तमें तुम्हारी मुक्ति होजावेगी ॥ ८४ ॥ अनंतर वह ब्राह्मण शिवशर्मा उन भगवद्गणोंके मुखसे अपने भावी वृत्तान्तको सुन पुलकितशरीर होकर कोटिसूर्यके समान रमणीय विष्णुलोकका दर्शन करने लगा ॥ ८५॥ अगस्त्य ऋषि कहा—लोपामुद्रे ! वह विप्रेन्द्र मायापुरीमें प्राणत्याग करनेके पुण्यबलसे मनोज्ञ भोगोंको प्राप्तकर ॥ ८६ ॥ वैकुंठलोकसे नंदिवर्द्धन पत्तन (देश-नगर) में आकर भूतलके भोगोंको भोग, सुन्दर पुत्रोंको उत्पन्न कर ॥ ८७ ॥ फिर उन सबको राज्यका भार रख, वाराणसी नरगीमें पहुंच विश्वेश्वरकी आराधना कर मोक्षपदको प्राप्त हुआ ॥ ८८ ॥ शिवशर्मा ब्राह्मणके इस परम पुण्य उपाख्यानके श्रवण करनेसे मनुष्य समस्त पापोंसे निर्मुक्त होकर उत्कृष्ट ज्ञानको प्राप्त करता है ८९ ॥

लही मुक्ति शिवशर्म जिमि, करि वैकुण्ठ निवास ।
वृद्धकाल नृप रूपते, पुनि करि काशी वास ॥ १ ॥
सावनमें रविवारको, मेला होत विशेष ।
वृद्धकालके स्नानते, छुटत रोग बहु देख ॥ २ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां शिवशर्मापरमलाभवर्णनं नाम चतुर्विंशतितमोऽध्यायः ॥ २४ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पंचविंश अध्याय.

अगस्त्यको कार्तिकेयकादर्शन।

व्यास बोले—हे सूत ! श्रवण करो, मैं कुम्भयोनि अगस्त्य ऋषिकी कथा कीर्तन करताहूं, जिसे सुनकर मनुष्य रजोगुणसे रहित और ज्ञानका भाजन होजाताहै ॥ १ ॥ पत्नीके सहित अगस्त्य मुनिने श्रीशैलकी प्रदक्षिणा कर विशाल और परमरम्य स्कन्दवनका दर्शन पाया ॥ २ ॥ यह वन सर्वदा सब ऋतुओंके पुष्पोंसे हराभरा सरस फलपूर्ण वृक्षोंसे युक्त सुखपूर्वक सेवन योग्य कन्दमूलोंसे परिपूर्ण एवं कोमल वल्कलवाले वृक्षोंसे व्याप्त रहताहै ॥ ३ ॥ जो वन हिंसक जन्तुओंसे रहित, नदी तडागादिके सहित एवं स्वच्छ और गंभीर पोखरोंसे व्याप्त समस्त भूतलका उत्तम सार स्वरुप है ॥ ४ ॥ जो नानाविध पक्षिगणोंसे निनादित, अनेक मुनिजनका निवासस्थान मानो तपस्याके संकेतका गृह, और सर्व संपत्तियोंका एक मात्र आश्रयहै ॥ ५ ॥ उसी स्थानपर सुवर्णगिरिके समान लोहितनामक एक पर्वतहै, जिसकी कन्दरा, झरना, सानु और शिखर सबी मनोहर हैं ॥ ६ ॥ मानो कैलास पर्वतका एक ऊंचा शृंग (खंड) अनेक आश्चर्य्यकर वस्तुओंके सहित इस कर्मभूमिमें तपस्या करनेहीके निमित्त आगया है ॥ ७ ॥ वहांहीपर मुनिवर अगस्त्यने साक्षात् षण्मुख स्कन्द भगवान्का दर्शन पाया, तब वे महातपस्वी पत्नीके सहित भूमिपर दण्डवत्प्रणामकर ॥ ८ ॥ दोनो हाथोंको जोड वेदोक्त सूक्तोंसे तथा निज निर्मित स्तुतियोंके द्वारा गिरिजासुवन कार्तिकेयकी स्तुति करने लगे ॥ ९ ॥ अगस्त्य बोले—देवतागणके वन्दनीय चरणकमल, सुधाकरके समान परमानन्दकर, अपरिमितपराक्रम, गौरीके हृदयानन्दजनक षण्मुख देवको नमस्कार है ॥ १० ॥ प्रणत जनोंके दुःख विघातक, समस्त मनोरथोंके संपादक, परवंचकोंको वेंत लगानेवाले, प्रचण्ड तारकासुरके घातक (नाशक) आपको नमस्कारहै ॥ ११ ॥ अमूर्तमूर्त—पंचभूत स्वरूप, सहस्रमूर्ति विराट्रूप सत्वरजस्तमोगुणत्रयात्मक, प्रशस्त गुणान्वित, श्रेष्ठोंके प्रधान अगम्यसीमा, मायाके द्वारा कार्यकारणरूप, मयूरवाहन आपको नमस्कारहै ॥ १२ ॥ ब्रह्मज्ञानियोंमें सर्वश्रेष्ठ, दिगंबर, आकाशसंस्थित, सुवर्णवर्ण, सुवर्णभूषितबाहु, स्वयं हिरण्यस्वरूप, हिरण्यरेता आपको नमस्कार है ॥ १३ ॥ तपस्याकी मूर्ति, तपोधन, तपश्चर्याफलोंके प्रतिपादक, सर्वदा (पांछवर्षके) कुमार, कामदेवके विजयी एवं तृणीकृत ऐश्वर्य होनेसे परम विरागी आपको नमस्कारहै ॥ १४ ॥ हे विभो ! शरवणमें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(सरपतके वनमें) जन्म ग्रहण करनेवाले, प्रभात सूर्यके समान अरुणवर्ण दंतपंक्ति शोभित, बालस्वरूप, विशाल पराक्रमशील, अत्यंत अनातुर (दक्ष), षाण्मातु आपको नमस्कारहै ॥ १५ ॥ कामनावालोंके फलदायकोंमें श्रेष्ठ, भावि फलोंके दाता, आपको नमस्कारहै, गणोंके अधिपति गणस्वरूप आपको नमस्कारहै, जन्म एवं जरासे रहित आपको नमस्कारहै, सुन्दर शक्तिसे शोभितपाणि, विशाखमूर्ति आपको नमस्कारहै ॥ १६ ॥ सर्व (विश्व) नाथके कुमार (कुंवर), क्रौंचके शत्रु, तारकासुरके निहन्ता, स्वाहाके पुत्र, गंगाके सुत, कृत्तिकाके सुवन, पार्वतीके नन्दन आपको निरंतर नमस्कार है ॥ १७ ॥ अगस्त्यमुनि इस रीतिसे कार्तिकेयकी स्तुति कर "नमो नमोस्तु" कहते हुए दो तीन (पांच) वार परिक्रमा करके सन्मुख खड़े होगये, फिर कुमारके "हे मुनीश ! बैठो" ऐसा कहनेपर जा बैठे ॥ १८ ॥ कार्तिकेय बोले—देवतोंके एकमात्र सहायक कुम्भजमुने ! क्षेमहै ? विन्ध्याचलकी उन्नति और इसीकारणसे तुमारा यहांका आगमन मैं जानताहूं ॥ १९ ॥ त्रिलोचनके पालित अविमुक्त क्षेत्रका कुशल क्या पूछूं, क्योंकि जहांपर आयुष्य बीतनेपर साक्षात् विरूपाक्षही मोक्षकेभी दाताहैं (तो वहां सदैव कुशलही है) ॥ २० ॥ हे मुने ! भूलोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, पातालतल, और ऊर्ध्व लोकमें भी मैंने वैसा क्षेत्र कहींभी नहीं देखा ॥ २१ ॥ हे ऋषे ! मैं यहांपर एकचर होकर उसी क्षेत्रके प्राप्त्यर्थ तपस्याओंको कररहाहूं, पर आजलों मेरे मनोरथ सफल नहीं हुए ॥ २२ ॥ वह क्षेत्र पुण्य, दान, तप, जप, और विविध यज्ञादिकोंसे कभी नहीं प्राप्त होता, वह तो केवल ईश्वरके अनुग्रह होनेहीपर मिलताहै ॥ २३ ॥ हे मुने ! अतिदुर्लभ काशीवास एकमात्र विश्वेश्वरकी दया होनेहीपर सुलभ होजाताहै नहीं तो कोटिशः सुकृत करनेपरभी निश्चय नहीं मिलता ॥ २४ ॥ वह तो ब्रह्माकी सृष्टिसे भिन्न दूसरीही कोई सृष्टि है, क्योंकि स्वयं ईश्वरभी उस क्षेत्रके गुणकथनमें समर्थ नहीं हैं ॥ २५ ॥ अहो कैसी बुद्धिकी दुर्बलता है ! कैसी भाग्यकी दुर्विधता है ! कैसा मोहका माहात्म्य है ! जो काशीका सेवन नहीं बन पडता ॥ २६ ॥ यह शरीर तो नित्यही जीर्ण हुआ जाता है पर इन्द्रियां उसकेभी पूर्व जीर्णताको प्राप्त होजाती हैं, फिर यह आयुष्यरूपी मृग मृत्युरूपी व्याधका लक्ष्य बनी चुकाहै ॥ २७ ॥ तब संपत्तिको आपत्तिसे युक्त एवं इस कायको अपायग्रस्त, और आयुको चपलाके समान चंचल जानकर (चाहिये कि) काशीका आश्रयण करे ॥ २८ ॥ जबतक आयुका अन्त न होवे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तबतक, कभी काशीको न छोडे, क्योंकि काल, कलाके लवमात्र समयको भी गिनती करनेमें नहीं चूकता ॥ २९ ॥ व्याधियां जराके निकट निक्षेप करके अत्यन्त पीडा देरहीं हैं, तोभी शरीर अनेक प्रकारके व्यापारहीमें लगा रहताहै, पर काशीसेवन नहीं करता ॥ ३० ॥ तीर्थस्नान, जप और परोपकारक वचनोंके द्वारा विना अर्थहीके धर्म होताहै, और धर्मसे अर्थ तो स्वयं होताहीहै ॥ ३१ ॥ अर्थके उपार्जनोपायके विनाभी धर्महीसे अर्थ निश्चय होताहै, इसलिये अर्थकी चिन्ताको छोडकर एकमात्र धर्महीका आश्रय लेना चाहिये ॥ ३२ ॥ धर्मसे अर्थ, अर्थसे काम, एवं कामसे समस्त सुखोंका उदय होताहै, (अधिक क्या कहें) धर्मसे स्वर्गभी सुलभ है, पर केवल एक काशीही दुर्लभ है ॥ ३३ ॥ महादेवने सब प्रकारसे निर्णय करके पार्वतीसे मोक्षके साधन तीनही उपायोंका कथन कियाथा ॥ ३४ ॥ प्रथमतो पाशुपत योग, द्वितीय प्रयाग तीर्थ और तृतीय उससेभी अनायास मुक्तिप्रद एक (वही) अविमुक्तक्षेत्र है ॥ ३५ ॥ (यद्यपि) श्रीशैल, हिमालयपर्वत, अनेक अन्य आयतन, त्रिदंड धारण, समस्त कर्मोंका संन्यास ॥ ३६ ॥ नानाविधकी तपस्यायें, व्रत, यम, नियम, नदियोंका संगम, अनेक (दंडक—नैमिषादिक) अरण्य ॥ ३७ ॥ (धृति-क्षमादिक) मानसतीर्थ, भूतलके धारातीर्थादिक, (कालंजर—वटेश्वर, प्रभृति नव) ऊषर, (बिन्ध्यक्षेत्रादि) समस्त पीठ, अविच्छिन्न वेदपाठ ॥ ३८ ॥ मन्त्रोंका जप, अग्निमें हवन, विविध दान, नाना यज्ञ, देवतोंकी अनेक रूपसे उपासना ॥ ३९ ॥ त्रिरात्रोपवास, पंचरात्र व्रत, सांख्य और योगादि शास्त्र, तथा विष्णुकी आराधना, ये सब मुक्तिके साधन कहे गये हैं ॥ ४० ॥ अयोध्यादि पुरियां भी मृत जन्तुको मोक्षदात्री कहीगई हैं, ये सब अवश्यही मोक्षके कारण निश्चय होते हैं ॥ ४१ ॥ परन्तु ये सब जितने कहेगये हैं सबके सब काशीही प्राप्त करानेवाले हैं, (क्योंकि) जन्तु काशी प्राप्त होनेहीपर मुक्त होता है अन्यत्र कहींभी नहीं ॥ ४२ ॥ अतएव वह पवित्र क्षेत्र अति विचित्र और ब्रह्मांड मंडलमें विश्वेश्वरका नित्यही परम प्रियहै ॥ ४३ ॥ तुम उसी क्षेत्रसे आरहेहो यही प्रश्नका कारण है, आओ आओ, हे सुव्रत ! अपने शरीरका स्पर्शसुख मुझे दो ॥ ४४ ॥ मैं तो यहां बैठ काशीसे आतेहुए वायुकेभी स्पर्शकी अभिलाषा नित्यही करता रहताहूं, किन्तु तुमतो वहांहीसे चले आरहेहो ॥ ४५ ॥ जो लोग तीनदिनभी नियतेन्द्रिय होकर काशीमें वास करते हैं उनके चरणरेणुके स्पर्श करनेसेती पवित्रता

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

होजाती है ॥४६॥ और तुमतो उसी काशीमें वास कर अत्यन्त पुण्य संचय करते
उत्तरवाहिनी गंगामें नहाते नहाते शिरके बालोंको पीला बनाडालेहो ॥ ४७ ॥ हे मुनि
उसी काशीमें अगस्त्येश्वरके समीप जो तुह्मारा (अगस्त्य) कुण्ड है, उसमें जो स्नान
पान और समस्त तर्पणादि उदक क्रिया कर ॥ ४८ ॥ श्रद्धापूर्वक श्राद्धविधिसे पित
रोंको पिंड देवे, वह जन्तु कृतकृत्य हो काशीका फल प्राप्त करे ॥ ४९ ॥ स्कन्द इस
प्रकारसे कह कुम्भोद्भव मुनिके समग्र शरीका स्पर्श कर अमृत सरोवरके जलावगाहनका
सुख अनुभव करनेलगे ॥ ५० ॥ अतःपर स्वामिकार्तिकेय नेत्रोंको मूंद "नमः
विश्वेश" कहकर स्थाणुके सदृश निश्चल हो, कुछएक क्षण ध्यानमें लीन रहे ॥ ५१ ॥
पश्चात् स्कन्दके ध्यान छोडनेपर उन्हे सुप्रसन्नमनोमुख देख, बोलनेका अवसर विचार
अगस्त्यने पूंछा ॥५२॥ अगस्त्य बोले—स्वामिन् ! स्कन्द ! भगवान् महादेवने भगवती
गिरिराजकुमारीसे जो वाराणसीकी महिमा वर्णन कीथी ॥ ५३ ॥ और आपने माता
पार्वतीके गोदमें बैठेबैठे जिसे सुनाथा, हे षण्मुख ! उसे कहिए, क्योंकि यह क्षेत्र मुझे
बहुतही रुचता है ॥ ५४ ॥ कार्तिकेयने कहा—हे अगस्त्य ! पूर्वकालमें मेरी माता
के सन्मुख भगवान्ने जो उस अविमुक्त क्षेत्रका माहात्म्य कहाथा ॥ ५५ ॥ और
माताके गोदमें बैठकर जिसे मैंने स्थिर चित्तसे सुनाथा, हे अनघ मुने ! उसे
मैं वर्णन करताहूं, तुम श्रवण करो ॥ ५६ ॥ इस लोकमें अविमुक्त क्षेत्र
परम गुह्य कहाजाताहै, क्योंकि वहांपर सिद्धि सन्निहित है और सर्वदैव शिव
वहांही अवस्थान करतेहैं ॥ ५७ ॥ वह क्षेत्र भूलोकमें लगाहुआ नहीं है
किन्तु अंतरिक्षमें स्थित है, उसे जोलोग योगी नहीं हैं कदापि नहीं देखसक
पर जो योगी हैं वे तो देखेतेही रहतेहैं ॥ ५८ ॥ हे विप्र ! जो कोई संयतात्मा
होकर स्थिर चित्तसे वहांपर वास करताहै, वह त्रिकाल भोजन करकेभी वायुभोजी
ऋषिके समान (होताहै) ॥ ५९ ॥ जो निमेष मात्रभी ब्रह्मचर्य
धारण कर भक्तिमान्हो अविमुक्त क्षेत्रमें वास करे, उसने बडीभारी तपस्याका अनु
ष्ठान किया ॥ ६० ॥ जो धीर एक मासभर लघुभोजी और जितेन्द्रिय होकर रहे
वह समस्त दिव्य पाशुपत व्रतका आचरण करचुका ॥ ६१ ॥ जो क्रोध और इन्द्रि
योंको जीत, अपनेही धनसे अपना पालन पोषण निर्वाह करताहुआ, परायेका अन्न
और निन्दाको छोड, कुछ दान देताहुआ, एकवर्ष पर्यन्त वहां वास करे उसे अन्यत्र
पर सहस्र वर्ष तप करनेका फल प्राप्त होवे ॥ ६२–६३ ॥ जो नर क्षेत्र महिमाको

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जानकर यावत् जीवन वास करे, वह जन्म और मृत्युके भयसे रहित होकर, परम गतिको लाभ करे ॥ ६४ ॥ अन्य स्थानमें सौ जन्म पर्यन्त योगाभ्यास करनेसे भी जो गति नहीं प्राप्त होती, यहांपर ईश्वरके प्रसादसे वही गति अनायासहीं प्राप्त होतीहै ॥ ६५ ॥ यदि दैववश कोई ब्रह्मघाती मनुष्यभी काशीपुरीमें पहुंच जावे तो उस क्षेत्रके प्रभावसे ब्रह्महत्याभी छूट जातीहै ॥ ६६ ॥ जो व्यक्ति मरण पर्यन्त काशीको नहीं छोडता, उसकी केवल ब्रह्महत्याही नहीं वरं प्रकृतिभी निवृत्त होजातीहै ॥ ६७ ॥ जो अनन्य चित्त होकर उस क्षेत्रका त्याग नहीं करता, वह जरा मृत्युसे युक्त अति दुःसह गर्भवासमें मुक्तहोजाताहै ॥ ६८ ॥ जो बुद्धिमान् मनुष्य पृथ्वीपर पुनर्वार जन्म ग्रहणकी इच्छा न रखताहो, वह देव ऋषि गण सेवित इस अविमुक्त क्षेत्रका सेवन करे ॥ ६९ ॥ संसारभय मोचन अविमुक्तको पाकर फिर कभीं न छोडे क्योंकि विश्वेश्वरके पाजानेहीसे पुनर्जन्म नहीं होता ॥ ७० ॥ सहस्रों पाप कर यहांपर पिशाच होना बहुत अच्छाहै, परन्तु सैकडों यज्ञके द्वारा प्राप्य स्वर्गभी काशी पुरीके विना [illegible] नहींहै ॥ ७१ ॥ अन्तकालमें जब कि मनुष्योंके मर्मस्थान फटने लगतेहैं, और [illegible] शरीर छटपटाने लगता है तो उस वेलापर स्मरण शक्तिनहीं रहजाती ॥ ७२ ॥ [illegible] काशीमें प्राण निकलनेके समय साक्षात् विश्वेश्वर स्वयं तारक ब्रह्मका उपदेश [illegible]हैं, जिससे मनुष्य ब्रह्ममय होजाता है ॥ ७३ ॥ अत्यंत पापमय इस मनुष्यजन्मको [illegible]नित्य जानकर संसारभयनाशक अविमुक्त धामहीका सेवन करे ॥ ७४ ॥ [illegible]विघ्नोंमें पडकरभी जो अविमुक्त क्षेत्रको नहीं छोडता, वह मुक्ति लक्ष्मीको पाकर [illegible] दुःखोंका अन्तलाभ करता है ॥ ७५ ॥ कौन ऐसा बुद्धिमान् है जो महा पापौघनाशिनी, पुण्यवर्द्धिनी भुक्ति मुक्ति प्रदायिनी, काशीका अन्तमें आश्रयण न करे ? ॥ ७६ ॥ यह विचारकर बुद्धिमान् नर काशीको कभीं न छोडे क्योंकि अविमुक्तहीके प्रसादसे वह विमुक्त होजाता है ॥ ७७ ॥ (भला) जिस अविमुक्त क्षेत्रका माहात्म्य सहस्रमुख अनंतदेव (शेषनाग) भी यथार्थ रूपसे वर्णन नहीं करसकते, उसे मैं इन छःमुखोंसे कैसे कह सकताहूं ? ॥ ७८ ॥

लोपामुद्राके सहित, जिमि अगस्त्य मुनिजाय ।
षटमुखके दरशन लह्यो, कथा कही सो गाय ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां अगस्त्यस्य कार्तिकेयदर्शनं नाम पंचविंशतितमोऽध्यायः ॥ २५ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

षड्विंश अध्याय ।

काशीका विवरण और मणिकर्णिकामाहात्म्य ।

अगस्त्य बोले—हे भगवन् ! स्कन्द ! यदि आप प्रसन्न हैं और यदि आपकी उत्तम प्रीति है, तो जो बात बहुत दिनोंसे मेरे हृदयमें अवस्थित कहिए ॥ १ ॥ किस कालसे यह अविमुक्त क्षेत्र पृथिवीपर परम प्रसिद्ध हुआ किस प्रकारसे यह मोक्षप्रद हुआ ? ॥ २ ॥ क्योंकर त्रैलोक्य भरके पू तीर्थका नाम मणिकर्णिका पडा ? और वहांपर जब गंगा नहीं थी तो क्या स्वामिन्! ॥ ३ ॥ इस अविमुक्त क्षेत्रका वाराणसी, काशी, रुद्रावास, (औ कानन आदि) नाम क्यों पडा, हे प्रभो ! ॥ ४ ॥ शिखिध्वज ! यह महाश क्यों कहलाकर प्रसिद्ध हुआहै ? मैं यह सब सुना चाहताहूं, आप मेरे सन्देह कीजिए ॥ ५ ॥ स्कन्द बोले—हे कुम्भयोने ! तुमने यह जो प्रश्नभार कहा है इसी विषयको अंबिकानेभी महादेवसे पूंछाथा ॥ और जिस रीतिसे जगन्माता पार्वतीसे देवदेव सर्वज्ञ भगवान्ने कीर्तन किया सब मैं तुमसे कहताहूं ॥ ७ ॥ महा प्रलयके समय जब कि स्थावर जंगम होगये थे तब सूर्य ग्रह तारागणसे शून्य सब तमोमय था ॥ ८ ॥ अहोरात्रसे रहित अग्नि वायु भूतल विवर्जित दूसरे तेजोंसे हीन अप्रधा आकाश था ॥ ९ ॥ उस वेला न तो कोई द्रष्टा श्रोता आदि था और न गंध, स्पर्श, शब्द, यही सब थे, एवं पूर्व पश्चिम इत्यादि दिग् विभागभी ॥ १० ॥ इस प्रकारसे सूचीभेदन मात्र अवकाशसे रहित (केवल ब्रह्म भेदनीय आवरणात्मक) घोर अंधकारमय होजानेपर "तत् सत् ब्रह्म" इस अद्वितीय एकही जो प्रतिपादित होता है ॥ ११ ॥ जो मनका गोचर नहीं, वाणीका विषय नहीं, नाम, रूप, वर्णसे रहित, जो स्थूल (मोटा) नहीं, कृश (दुर्बल-पतला) नहीं ॥ १२ ॥ ह्रस्व (छोटा) नहीं, दीर्घ (बडा) नहीं, लघु और गुरु (हलका भारी) भी नहीं है । जिसकी न कभी वृद्धिही होतीहै, न क्षय (ह्रास) ही होताहै ॥ १३ ॥ वेदभी जिसे चकित होकर "अस्ति" (है) इतनाहीभर वारंवार कहता जो सत्य, ज्ञान, अनंत, आनंद, एवं परंज्योति है ॥ १४ ॥ जो अप्रमेय, अनाधार अविकार आकृतिरहित, निर्गुण, योगिजनप्राप्य, सर्वव्यापक, एक कारणरूप है ॥ १५ ॥ जो विकल्परहित, आरम्भहीन, मायाशून्य और उपद्रवविवर्जित है,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सब प्रकारकी संज्ञायें जिस संज्ञाविहीन ब्रह्मकी विकल्पित: कीजाती हैं ॥ १६ ॥ उसी एकचर (अद्वैत) ब्रह्मको द्वितीयकी (द्वैत) की इच्छा हुई, (तब) उस निराकारने निज लीलाके द्वारा अपनी साकार कल्पना करदी ॥ १७ ॥ तब संपूर्ण ऐश्वर्य्योंसे युक्त, समस्त ज्ञानसे पूर्ण, शुभरूपा, सर्वगामिनी, सर्वस्वरूपा, सर्वदृष्टि, सर्वकारिणी ॥ १८ ॥ सब किसकी एकमात्र वन्दनीया, सबकी आदिरूपा, सर्वदात्री, सर्व चेष्टा स्वरूपा शुद्धरूपिणी ईश्वरी मूर्तिकी कल्पना कर ॥ १९ ॥ वह सर्वव्यापक अव्यय परंब्रह्म अन्तर्धान होगया ॥ २० ॥ हे प्रिये ! उसी निराकार परब्रह्मकी साकार मूर्ति मै हूं, और मुझीको आधुनिक एवं प्राचीन बुधगण ईश्वर कहतेहैं ॥ २१ ॥ अनंतर अकेला मैंने स्वच्छन्द विहरण करताहुआ निजमूर्तिसे स्वशरीरकी अव्यभिचारिणी मूर्ति को स्वयं सृजन किया ॥ २२ ॥ प्रधान, प्रकृति, गुणमयी, बुद्धितत्त्वकी जननी विकार विवर्जित उत्कृष्ट मायारूपा वही मूर्ति, तुम हो ॥ २३ ॥ शक्ति रूपिणी तुमारे सहित कालस्वरूपी आदिम पुरुष मैंने एकसाथ (युगपत्) इस क्षेत्रका निर्माण किया ॥ २४ ॥ स्कन्द बोले—हे घटोद्भव ! वही शक्ति प्रकृति कहीजातीहै, और वही परमेश्वर पुरुष हैं, स्वचरण तल विनिर्मित परमानन्दरूप पंचक्रोश परिमाण वह क्षेत्र, हे मुने ! विहरण परायण परम आनंदमय उन महादेव पार्वतीके द्वारा प्रलय कालमें भी कभी विमुक्त न होनेसे अविमुक्त नामक कहा जाताहै ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ जब कि नतो भूमिबलय था, न जलोंहीकी उत्पत्ति हुई थी तभी ईश्वरने विहार करनेके निमित्त इस क्षेत्रको बनाया था ॥ २८ ॥ हे कुम्भज ! क्षेत्रके इस रहस्यको कोईभी नहीं जानता चर्म दृष्टि नास्तिकसे कभी इसकी चर्चा नहीं करनी चाहिए ॥ २९ ॥ श्रद्धालु, विनम्र, त्रिकालज्ञान दर्शी, शिवभक्त, शांतस्वभाव मुमुक्षु जनसे कहना उचितहै ॥ ३० ॥ तभीसे यह क्षेत्र अविमुक्त नामसे कहाजाताहै, यह शिवा शिवका पर्यंकरूप निरंतर सुखास्पद है ॥ ३१ ॥ मूढलोग जब शिव और पार्वतीकेभी अभावकी कल्पना कर लेतेहैं, तब मुक्तिप्रद इस क्षेत्रकाभी अभाव मानलेवें ॥ ३२ ॥ (परंतु) योगादिक उपायके विज्ञभी चाहेंकि विना महेश्वरकी आराधना और काशी लाभ कियेही मोक्ष पावें तो यह कदापि नहीं होसकता ॥ ३३ ॥ यह क्षेत्र मोक्षस्वरूप आनंदका कारण है, इसीलिए पूर्व कालमें पिनाकीने इसका नाम आनन्दकानन रक्खाथा, पश्चात् इसका नाम अविमुक्त पडा ॥ ३४ ॥ उस आनंदवनमें जहां तहां समस्त लिंगोंहीको आनंदकंद बीजोंके अंकुरका

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

रूप समझना चाहिए ॥ ३५ ॥ हे अगस्त्य ! मुने ! इस प्रकारसे यह क्षेत्र अविमु
और आनंदकानन नामसे प्रसिद्ध हुआ, अब जैसे मणिकर्णिका नाम पडा वह
वर्णन करता हूं ॥ ३६ ॥ हे कलशज ! पूर्वकालमें उसी आनन्द काननमें
करतेहुए शिव और शिवाकी यह इच्छा हुई कि, एक किसी अन्यकी
सृष्टि करनी चाहिए ॥ ३७ ॥ कि जिसमें यह समस्त महाभार उसके ऊपर
कर हम दोनों स्वच्छन्द होकर केवलकाशीमें मरनेवालोंको मोक्ष दान कियाकरें॥ ३८
वही सृष्टवस्तु सर्वैश्वर्य निधि होकर सृजन पालन एवं अन्तमें संहार करता
॥ ३९ ॥ चिन्ता तरंगोंसे आंदोलित (लहराता) सत्वरूप रत्नोंसे पूर्ण तमोरूप
दिसे संकुल, रजोगुण स्वरूप मूंगासे (मंडित) चित्तसमुद्रको स्थिरकरके ॥ ४०
उसीके प्रसादसे आनन्दकाननमें सुखपूर्वक रहें, क्योंकि चंचल चित्त चिन्तातुर
सुख कहांहै ? ॥ ४१ ॥ जगत्के विधाता विभु धूर्जटिने चित्स्वरूपा जगद्धात्रीके
इस प्रकारसे विचारको स्थिर कर तदनंतर ॥ ४२ ॥ अमृतवर्षिणी दृष्टिको
बाम अंगपर फेरा, पश्चात् एक त्रैलोक्य सुन्दर पुरुष उत्पन्न हुआ ॥ ४३ ॥ हे मुने
वह पुरुष शान्त सत्त्वगुण विशिष्ट, गंभीरतामें समुद्रजेता, क्षमाशील, उपमारहित॥ ४४
इन्द्रनीलद्युति, श्रीयुक्त, पुंडरीकसम नयन, सुवर्णवर्ण सुन्दर वस्त्र युगलधारी ॥ ४५
शोभायमान प्रचंड भुजदंड द्वयसे विराजित, नाभिगर्तस्थित कमलके उत्तम सुगंध
व्याप्त ॥ ४६ ॥ समस्त सद्गुणोंका अकेला स्थान, सकल कलाओंका एकसी
एवं एकमात्र सर्वोत्तम होनेसे जो " पुरुषोत्तम " (कहाजाता) है ॥ ४७ ॥ त
तर उस महामहिमभूषण महापुरुषको देखकर, महादेवने यह कहा—हे अच्युत !
महाविष्णुहो ॥ ४८ ॥ सब वेद तुमारे निःश्वास हैं उनीके द्वारा तुम सब कुछ
सकोगे, वेद दृष्ट मार्गसे समस्त कार्योंको यथोचित रूपसे संपादन करो ॥ ४९ ॥ महे
ने बुद्धितत्त्व स्वरूप उस पुरुषसे यह कहकर शिवादेवीके सहित आनन्दकाननमें
किया ॥ ५० ॥ तत्पश्चात् भगवान् विष्णु उस आज्ञाको मस्तकपर धारण कर
कालपयत ध्यानमें स्थित हो, तपश्चर्याहीपर मनोयोग दियेरहे ॥ ५१ ॥ हरिने
सुदर्शन चक्रसे उसी स्थानपर रमणीय पुष्करिणी (पोखरी) खनकर, निज
निर्गत स्वेद जलसे उसे परिपूर्ण कर दिया ॥ ५२ ॥ (फिर) उसी चक्र पुष्करि
के तीरपर स्थाणुसमान आकार होकर वे पचास सहस्र वर्षपर्यन्त उग्र तपस्या
रहे ॥ ५३ ॥ अनंतर महादेव पार्वतीके सहित उने तपस्याके द्वारा प्रज्वलित, निज

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

निमीलित नयन, देखकर ॥ ५४ ॥ वारंवार मस्तक हिलातेहुए हृषीकेशसे कहने लगे, अहो तपस्याका कैसा महत्त्व है ! चित्तका कैसा धैर्य है ! ॥ ५५ ॥ कैसा आश्चर्य है ! जो यह विना ईंधनका अग्नि निरंतर कैसा जल रहा है महा विष्णो ! और तपस्याका कोई प्रयोजन नहीं है, हे सत्तम ! वरकी प्रार्थना करो ॥ ५६ ॥ चतुर्भुज दोतीन वार कहेगये इस वचनको महादेवका वाक्य जानकर, कमलनेत्रोंको खोल उठ खडे होगये॥ ५७॥ श्रीविष्णु बोले—हे देवेश ! देवदेव ! महेश्वर ! यदि आप प्रसन्न हैं तो, यही वर दीजिये कि, भवानीके सहित आपको सर्वदा देख सकूं ॥ ५८ ॥ हे चन्द्रशेखर ! सब स्थानपर समस्त कर्मोंमें आपहीको आगे भ्रमण करता हुआ देखूं ॥ ५९ ॥ मेरा चित्तरुपी भ्रमर आपके चरणकमल-मकरंदमधु पानमें समुत्सुक होकर, भ्रांतिको छोड स्थिर होबैठे ॥ ६० ॥ श्री शिवने कहा—हे ऋषीकेश ! जनार्दन ! जो तुमने कहा वैसाही होवे और भी दूसरा वर तुमको देताहूं, हे सुव्रत ! उसे श्रवण करो ॥ ६१ ॥ जो मैंने तुमारी तपस्याकी अतिशय वृद्धिको देख सर्परूप कर्णभूषण युक्त मस्तकको कंपाया ॥ ६२ ॥ उसी आन्दोलनके कारण मेरे कानसे मणिकर्णिका गिरपडी अतएव इस (तीर्थ) का नाम मणिकर्णिका होवे ॥ ६३ ॥ हे शंखचक्र गदाधर ! पूर्वकालमें तुमारे चक्र सुदर्शनके द्वारा खोदेजानेसे इस पवित्र तीर्थका नाम "चक्रपुष्करिणी" पडाथा ॥ ६४ ॥ (अब) जबसे मेरे कानसे यह मणिकर्णिका (रत्नकुंडल) गिरी है, अतएव आजसे यहांपर लोकमें मणिकर्णिका नाम प्रसिद्ध होवेगा ॥ ६५ ॥ श्रीविष्णु बोले गिरिजावल्लभ ! आपके मुक्तामय (मोतीके) कुंडलके गिरजानेसे तीर्थोंमें श्रेष्ठ यह तीर्थ इसलोकमें मुक्तिक्षेत्र होवे ॥ ६६ ॥ हे विभो ! इस स्थानमें अकथनीय उस परंज्योतिके प्रकाश पानेसे इस तीर्थका और एक नाम काशी पडे ॥ ६७ ॥ हे जगत्के रक्षक प्रवर ! शिव ! मैं औरभी एक वरकी प्रार्थना करताहूं, उसे आप परोपकारार्थ विना विचारेही वितरणकर दीजिए ॥ ६८ ॥ सृष्टिके जरायुजादि चारों प्रकारके भूतग्रामोंमें आब्रह्म स्तंब पर्यंत (समस्त) जो कुछ जन्तु संज्ञक है वह सब काशीमें मुक्ति लाभ करे ॥ ६९ ॥ शंभो ! जो महाप्राज्ञ आयुको क्षणविनाशी विपत्तिको विपुल और संपत्तिको क्षणभंगुर विचारकर इस तीर्थश्रेष्ठ मणिकर्णिकापर, स्नान संध्या, जप, होम, उत्तम वेदपाठ तर्पण पिंडदान, देवतोंका पूजन, तथा गो, भूमि, तिल, सुवर्ण, अश्व (घोडा) अन्न, वस्त्र, भूषण, कन्या दानादिक एवं अनेक अग्निष्टोम प्रभृति यज्ञ व्रतोद्यापन वृषोत्सर्ग और लिंग वा प्रतिमा आदिकी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

स्थापना करे इस कर्मका फल (उसे) एकमात्र अक्षय मोक्ष होवे ॥ ७० ॥ ७१
॥ ७२ ॥ ७३ ॥ हे ईशान ! आत्मघात और प्रायोपवेशन (निरशन व्रत)को छोड़
यहांपर अन्य जो कुछ शुभकर्म श्रद्धापूर्वक कियाजावे, ॥ ७४ हे जगदीश्वर !
सब मुक्ति लक्ष्मीका हेतु होवे, जिस कर्मको कर कालान्तरमेंभी पश्चात्ताप नहीं
पडे और न किसीसे ख्यापन करे ॥ ७५ ॥ हे ईश ! आपके अनुग्रहसे वह
ताको प्राप्त होवे हे ईश ! उसके सब कर्म आपहीके प्रसादसे अक्षय होजावें ॥ ७६
सदाशिव ! यावत् तीर्थ वर्तमान हैं वा होचुके हैं अथवा होंगे उन सबसे यह
शुभोदय होवे ॥ ७७ ॥ हे सदाशिव ! जैसे आपसे अधिक मंगल और कोई नहीं
वैसेही इस आनंदवनसे बढकर कोईभी क्षेत्र कहींपर न होवे ॥ ७८ ॥ सांख्यके
आत्मदर्शन, व्रत, तप, दान, आदिके विनाही इस स्थलमें प्राणिओंका कल्याण
॥ ७९ ॥ शशक, मशक, कीट, पतंग, तुरग, उरग, इत्यादिभी पंचक्रोशी
जो मरें, वे निर्वाण पदको प्राप्त करें ॥ ८० ॥ केवल काशीके नाम लेनेवालोंके
सदैव पापक्षय होवे ॥ ८१ ॥ काशीवासी सज्जनोंके लिये सर्वदैव सत्ययुग होवे
उत्तरायण रहे, और नित्यही महोदय पर्व बना रहे ॥ ८२ ॥ हे त्रिलोचन
सदाशिव ! जितने वेद विहित पवित्र क्षेत्र हैं, उन सबसे यह क्षेत्र अधिकतर
होवे ॥ ८३ ॥ चारों वेदोंके अध्ययन करनेसे जो पुण्य प्राप्त होताहै,
लक्ष गायत्री जपमात्रसे वह फल मिलजावे ॥ ८४ ॥ अष्टांग योग साधनसे जो
होताहै वही पुण्य अधिकताके सहित काशी सेवनसे प्राप्त होवे॥८५॥कृच्छ्र चान्द्रायण
व्रतोंसे जो श्रेय उपार्जन किया जाता है, आनन्दवनमें केवल एकही उपवास
वह पुण्य लाभ होवे ॥ ८६ ॥ अन्य स्थानमें एकसौ वर्ष तपस्या करके जो
होता है काशीमें एकवर्ष मात्र भूमिशय्या व्रतसे वह फल मिलजावे ॥ ८७ ॥
आजन्म मौनव्रत करनेका जो फल है, वह काशीमें एक पक्षभर सत्य संभाषण
प्राप्त होवे ॥ ८८ ॥ अन्यत्र सर्वस्व दान करदेनेसे जो पुण्य कहागयाहै, काशीमें
(ब्राह्मण)भोजन करादेनेहीसे वह दश सहस्रसेभी अधिक फलप्रद होवे ॥ ८९ ॥
मुक्तिक्षेत्रोंके सेवन करनेसे जो फल प्राप्त होताहै, काशीमें पांच रात्रि मणिकर्णि
सेवनसे वही फल मिले ॥ ९० ॥ प्रयाग स्नानसे जो पुण्य मंगलप्रद होताहै
काशीके दर्शन मात्रसे वही पुण्य प्राप्त होवे ॥ ९१ ॥ अश्वमेध तथा राजसूय
करनेसे जो पुण्य लाभ होताहै, काशीमें संयमपूर्वक त्रिरात्र वास करनेहीसे वही

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्राप्त होजावे ॥९२॥ सम्यक् प्रकारसे तुलापुरुष दान करनेसे जो पुण्य मिलता है, श्रद्धापूर्वक काशीके दर्शन मात्रसे वही पुण्य प्राप्त होवे ॥ ९३ ॥ देवदेव विश्वनाथने विष्णुके इन वरदानोंकी प्रार्थना सुन प्रसन्न हृदय होकर कहा हे मधुसूदन ! "तथास्तु" ॥९४॥ श्री महादेव बोले—अये महाबाहो ! जगत्प्रभो!विष्णो ! तुम वेदके कथनानुसार विविध विधकी सृष्टि रचना करो ॥९५॥ पिताके सदृश समस्त भूतोंकी धर्मपूर्वक रक्षा करो और धर्मके विध्वंस करनेवालोंका विविध विधानसे तुम विध्वंस करो॥९६॥ अधर्म मार्गानुसारियोंके नाश करनेमें तुम एक हेतुमात्र होवो, क्योंकि वे सब तो अपने कर्म-हीके द्वारा निहत हैं ॥ ९७ ॥ जैसे पकेहुए अन्न फलादिक आपसे आप वृन्तसे टूटकर गिरपडतेहैं, तैसेही फलोन्मुख पापात्मागण स्वयं पतित होवेंगे ॥ ९८ ॥ हरे ! जो लोग अपने तपोबलसे दर्पित होकर तुम्हारा अपमान करेंगे, उन सबके संहार करनेको मैं उद्यत होऊंगा ॥ ९९ ॥ जो लोग उपपातकी अथवा महापातकी हैं, वे सबभी काशीमें पहुंचतेही निष्पाप होजावेंगे ॥ १०० ॥ यह पांचकोश परिमित स्थान मेरा परम प्रिय क्षेत्र है यहांपर मेरीही आज्ञा चलने पावेगी, दूसरे किसीकी आज्ञा यहां बलवती न होसकेगी ॥ १॥ हे शुभनेत्रे ! पार्वती ! मैंने फिर विष्णुसे कहा, त्रिभुवनमें विभ्रम करनेवाला मैं ही अतिघोर तपके तेजसे भ्रमण करते हुए॥२॥अविमुक्त निवासी पापी जन्तुओंको शासन करूंगा, हे विष्णो ! उन सबका दूसरा कोई शासक नहीं होने पावेगा॥ ३॥सौयोजनके दूर पर स्थित भी जोकोई हृदयमें अविमुक्तका स्मरण करेगा,वह अनेक पापोंसे पूर्ण होनेपरभी पापोंके द्वारा कभी बाधित नहीं होनेपावेगा॥ ४॥ दूरदेश स्थितभी जो अधी प्राण प्रयाणकालमें यदि मेरे प्रिय अविमुक्तक्षेत्रका स्मरण करे ॥५॥वह पापपुंजको त्यागकर स्वर्गभोगोंको प्राप्त होताहै, काशीके स्मरण जनित पुण्य बलसे जब वह स्वर्ग भोगकर भ्रष्ट होताहै ॥६॥ तब भूतलमें एक प्रधान राजाहो एवं अनेक भोगोंको भोगकर उसी पुण्यके प्रभावसे अविमुक्तमें पहुंच अन्तमें मोक्ष पदका भागी होवेगा ॥ ७ ॥ हे शुचिस्मिते ! जो इन्द्रियके सहित मनका निग्रह कर, बहुत कालतक इस स्थानमें रहे यदि दैवयोगसे कहीं अन्यत्र जाकर मरजावे तो ॥ ८ ॥ वहभी स्वर्ग सुखको भोग, क्षितिपतीश्वर होय, पुनर्वार काशी प्राप्तकर तदनंतर मोक्ष लक्ष्मीको (अवश्य) पावेगा ॥ ९ ॥ हे विष्णो ! इस अविमुक्त क्षेत्रका निवास सर्वथा कर्मोंके निर्मूलन करनेमें समर्थ है अतएव दोही तीन पवित्र लोगोंके निर्वाण सिद्ध्यर्थ इस लोकमें प्राप्त होताहै ॥ ११० ॥ विष्णुने पूछा—देवेश ! जो कोई इस

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

क्षेत्रके यथार्थ माहात्म्यको नहीं जानता, अथवा विना श्रद्धाके यहां मरजाता है तो मरण
के अनन्तर उसकी कौन गति होतीहै ! ॥ ११ ॥ शिव बोले—हे सुव्रत ! जनार्दन
जो अन्य स्थानमें बहुत बडे घोरपापोंको कर, श्रद्धारहित एवं तत्त्वज्ञानसे
विनाही यहांपर मरजाताहै ॥ १२ ॥ अथवा जो इस क्षेत्रके महिमाको
नहीं जानता, उसकी जो गति कहीगयी है, उसे श्रवण करो ॥ १३ ॥ पंचक्रोशीके भीतर
प्रवेश करतेही उसकी पातकावली बाहर रहजातीहै, कभी भीतर नहीं पैठसकती
॥ १४ ॥ काशीके सीमाचारी (सीमाके रखवार) त्रिशूल पाशपाणि गणोंके भयसे
उसके पातक समूहके बाहरही रहजानेपर ॥ १५ ॥ वह प्रवेश करतेमात्र समस्त
पापोंसे निर्मुक्त निष्पाप होकर, मणिकर्णिकामें नहाय सर्वोत्तम पुण्यको प्राप्त करताहै
॥ १६ ॥ समस्त तीर्थोंमें स्नान करनेसे जो पुण्य लाभ होताहै, वही पुण्य सम्यक्
प्रकारसे मणिकर्णिकामें एक बुडकी लगानेसे प्राप्त होताहै ॥ १७ ॥ मट्टी, गोबर, कुश,
दूर्वा, चिचिढा और दर्भ इत्यादिके द्वारा निज शाखोक्त वरुणमन्त्रोंसे श्रद्धापूर्वक यथाविधि
स्नान करनेसे ॥ १८ ॥ सकल तीर्थस्नान, समस्त वस्तु दानके पुण्य फलको मणिकर्णिकामें
नहानेसे वह प्राप्त करताहै ॥ १९ ॥ विना श्रद्धाकेभी जो विधिपूर्वकमणिकर्णिका स्नान करताहै
वहभी स्वर्ग प्राप्तिकर उत्कृष्ट पुण्यको पाजाताहै ॥ १२० ॥ श्रद्धापूर्वक विधानसे स्नानकर
जो तिल जव और कुशोंसे देवादिकोंका तर्पण करता है, वह समस्त यज्ञोंके फलको
प्राप्त होता है ॥ २१ ॥ जो श्रद्धालुजन विधिपूर्वक स्नानके अनंतर समस्त
उदक क्रियाओंको कर जप करताहुआ देवतोंकी पूजा करे वहभी समस्त मन्त्रोंके
जपका फल लाभ करै ॥ २२ ॥ हे शिवे ! जो कोई जितेन्द्रिय होकर मौन
धारणपूर्वक विश्वेश्वरका दर्शन करे वह मौनी सकल व्रत करनेके पुण्यको प्राप्त होता
॥ २३ ॥ स्नान, देवपूजन, जप, होम, दन्तधावन, और मलमूत्रके त्यागते समय यत्न
पूर्वक मौनावलंबन करे ॥ २४ ॥ उत्तम उपचारोंसे विधिपूर्वक एकबारभी विश्वेश्वरका पूजन
करलेनेसे यावज्जीवन शिवपूजाका फल मिलता है ॥ २५ ॥ हे देवेशि ! मेरे इस
अविमुक्त क्षेत्रमें न्यायोपार्जित अल्पभी धन दान करदेनेसे फिर कभी दरिद्र नहीं होना
पडता ॥ २६ ॥ जो कोई विविध विधके धन रहनेपरभी अविमुक्तमें दान नहीं करता
वह मूढ मनुष्य निधन (मृत्यु) को प्राप्त होकर परलोकमें सर्वदैव शोच करता रहता
है ॥ २७ ॥ जितनेही रमणीय रत्न, गो, गज, अश्व, वस्त्र इत्यादि हैं, उन सबको
अविमुक्त निवासियोंके कल्याण निमित्तही विधाताने बना रक्खे हैं ॥ २८ ॥ जो कोई

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विश्वेश्वरके प्रसन्नतार्थ काशीमें धन अथवा निधनको (मृत्युको) न्यायपूर्वक (संपादन) करे वही धर्मज्ञ और वही परम धन्य है उमे ! काशीपुरीमें यह जो विश्वेश्वर देव लिंगरूप धरकर साक्षात् बैठे हैं वही मेरे परमश्रेयके आस्पद हैं ॥ ३० ॥ पंचक्रोश परिमाण जो अविमुक्त नामक महाक्षेत्र है, उसे एकही विश्वेश्वर संज्ञक ज्योतिर्लिंग जानना चाहिए ॥ ३१ ॥ जैसे सूर्यदेव एकदेशमें स्थित रहनेपरभी सबकिसीको सर्वव्यापी दिखलाई पडतेहैं, वैसेही काशीमें विश्वनाथ सर्वत्रही स्थित हैं ॥ ३२ ॥ अन्यस्थानोंमें अनेक जन्मार्जित निर्विघ्न योगके द्वारा जो फल प्राप्त किया जाताहै, काशीमें केवल शरीरके त्यागहीसे वह फल मिलजाता है ॥ ३३ ॥ अन्यत्र बहुकाल जितेन्द्रिय होकर सर्व प्रकारकी तपस्या करनेसे जो फल लाभ होताहै, काशीमें एकरात्रमात्रसे वही फल हस्तगत होजाता है ॥ ३४ ॥ जो मनुष्य क्षेत्रकी महिमा नहीं जानता एवं श्रद्धाहीन रहनेपर भी कालवश काशीमें प्रवेश करता है वह निष्पाप होकर मृत होतेही अमृत पद (मोक्ष) को प्राप्त करता है ॥ ३५ ॥ घोरतर पापोंको कर कालवश काशीमें पहुंच, जो मेरे प्रसादसे शरीर त्याग करता है, वह मुझको प्राप्त करताहै ॥ ३६ ॥ विना मेरे प्रसादके कौन काशीको प्राप्त होसकताहै ? हे विशालाक्षि ! सूर्यके भिन्न दूसरेको किसे दिनकर कहाजावे ॥ ३७ ॥ हे देवि ! काशीको विना पाये कौन निरन्तर सुखी होसकताहै ? क्योंकि ब्रह्मादिक देवगणभी प्रकृतिके पाशमें सर्वदा बन्धेही रहतेहैं ॥ ३८ ॥ महदादि चौबीस पाश, धर्म अर्थ कामादि क्रियाओंसे दृढ़, सत्व रज तमो रूप तीनों गुणोंके द्वारा कंठमें बंधे हुए लोग विना काशीके कैसे विमुक्त होसकतेहैं ? ॥ ३९ ॥ योगतो अनेक विघ्नोंसे भराहुआ है, और तपस्या बडीही कष्टसाध्य है, अतः योग एवं तपस्यासे भ्रष्ट होकर बारंबार गर्भका क्लेश सहना पडताहै ॥ ४० ॥ यदि काशीमें पाप करके फिर काशीहीमें मरजावे तो, रुद्रपिशाच होकर तदनंतर मुक्तिको प्राप्त होताहै ॥ ४१ ॥ पापकर्ता गण भी यदि दैवात् काशीमें मृत होवें तो, उन्हैं नरक पतन नहीं होता, क्योंकि उन सबका शासक मैंही हूं ॥ ४२ ॥ शरीरको अवश्य विनाशी एवं गर्भकी दुःसह पीडाको स्मरण कर बहुत बडाभी राज्य छोड़कर निरंतर काशी सेवन करना उचित है ॥ ४३ ॥ अत्यंत दारुण यमदूतगण अतर्कित रूपसे आकर पाशोंसे बाँध मारेंगे यह सोचकर तुरत काशीका आश्रयण करे ॥ ४४ ॥ जहांपर पापोंसे यमराजसे और गर्भवाससे भय नहीं है उस काशीको ऐसा कौन है जो नहीं आश्रयण करे ? ॥ ४५ ॥ चाहे आजही वह अथवा कल परसोंमें मरण तो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अवश्यही होगा, तब जितनाही काल मिले उसीमें काशी सेवन करलेना चाहिए ॥ ४६ ॥ मरजाने पर फिर जन्म लेना और फिर मरना (यही लगा रहता है) अतएव पंडितको चाहिए कि जिस स्थानपर मरनेसे फिर जन्म ग्रहण नहीं करना पडता, उस काशीको सेवे ॥ ४७ ॥ पुत्र, क्षेत्र, कलत्र नामक जन्मान्तरमें अनर्थ रूपी विष्णुमायाको त्यागकर भवनाशिनी काशीकाही आश्रय ग्रहण करे ॥ ४८ ॥ स्कंदने कहा—मैं अभी युवा हूं, मेरी मृत्यु दूरहै, इस चिन्ताको कभी मनमें न लावे (बरन) निश्चल रूपसे यमराजके वाहन महिषके गलबद्ध घंटाका शब्द श्रवण करे, अतः वार्द्धक्यके पूर्वही प्रकट उत्कट श्रम समूहके विना पायेही पुरानी झोपडीको छोड़ झटपट बुद्धिमान् जन शिवपुरीमें चलाजावे ॥ ४९ ॥ व्यास बोले—हे सूत ! स्कन्दजी अगस्त्यसे इस सर्व पापनाशिनी कथाको कहकर फिर बोले ॥ १५०

विवरन काशीकर कियो, कह्यो नामके भेद ॥
पुनि मनिकर्निकाकी कही, महिमा जो हरुखेद ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखंडे पूर्वार्द्धे भाषायां काशीविवरण—मणिकर्णिकामाहात्म्यवर्णनं नाम षड्विंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

सप्तविंश अध्याय ।

श्रीगंगाकी महिमा और दशहरास्तोत्र ।

स्कन्द बोले—यह आनन्दकानन जिस प्रकारसे वाराणसी नामसे प्रसिद्ध हुआ और उसके विषयमें महादेवने जैसा कहा वही मैंभी कहताहूं ॥ १ ॥ ईश्वर बोले—त्रैलोक्य सुन्दर ! महाबाहो ! विष्णो ! यह अविमुक्तक्षेत्र जिसरीतिसे वाराणसी नामसे प्रसिद्धिको प्राप्त हुआ उसे सुनो ॥ २ ॥ सूर्यवंशका महातेजस्वी परम धार्मिक राजा भगीरथ, अश्वमेध यज्ञके घोडासहित अपने पूर्वपुरुष सगरके पुत्रोंको कपिलदेवके क्रोधानलसे भस्म हुए सुनकर गंगाकी आराधना करनेके निमित्त तपस्यामें निश्चय किया ॥ ३ ॥ ४ ॥ राज्यभारको मन्त्रीके ऊपर रख, वह यशोराशि राजा अपने पितामहोंके उद्धार करनेकी इच्छासे पर्वतश्रेष्ठ हिमालयपर चलागया ॥ ५ ॥ हे विष्णो ! अग्निशापाग्निसे दग्ध और महा दुर्गतिको प्राप्त प्राणियोंको स्वर्ग लेजानेमें गंगासे भिन्न दूसरा कौन समर्थ होसकताहै ? ॥ ६ ॥ वह (गंगा) तो मेरीही शिवात्मिका जलरूपा दूसरी मूर्ति है, परम प्रकृति गंगा अनेक ब्रह्माण्डोंकी आधारस्वरूपा है ॥ ७ ॥ वह शुभ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विद्यारूपा त्रिशक्तिमयी करुणात्मिका आनन्दामृतरूपा एवं शुद्ध धर्मस्वरूपिणी है ॥ ८ ॥ मैं इस जगत्धात्री परब्रह्मस्वरूपिणी गंगाको संसारके रक्षण निमित्त अपनी लीलासे धारण करताहूं ॥ ९ ॥ त्रैलोक्यमें जितने तीर्थ हैं जो जो पुण्य क्षेत्र हैं सर्वत्र जो सब धर्म हैं, दक्षिणाके सहित जितने यज्ञ हैं ॥ १० ॥ हे विष्णो ! जो सब तपस्यायें हैं, छओ अंग शास्त्रोंके सहित जो चारों वेद हैं, मैं, तुम ब्रह्मा और जितने देवतागण हैं, ॥ ११ ॥ जो सब पुरुषार्थ हैं, एवं जितनीही विविध प्रकारकी शक्तिपां हैं, ये सबकी सब गंगामें सूक्ष्मरूपसे विराजमानरहती हैं ॥ १२ ॥ वह जन समस्त तीर्थोंमें नहाचुका, सब यज्ञोंमें दीक्षित होगया, और संपूर्ण व्रतोंको पूर्ण कर चुका, जो एक गंगाका सेवन करताहै ॥ १३ ॥ जो कोई गंगासेवी है, वह सकल तपस्याओंका आचरण समस्त प्रकारके दान, और निखिल योगाभ्यासके नियमोंको प्राप्त होचुकाहै ॥ १४ ॥ जो गंगास्नायी है वह मनुष्य समस्त वर्ण आश्रम, वेदाध्यायी, और शास्त्रार्थ पारगामी लोगोंसे विशेष माननीय होताहै ॥ १५ ॥ मन, वचन और शरीरके बहुविध दोषोंसे दुष्टभी पुरुष इस लोकमें केवल गंगाके दर्शनहीसे पवित्र होजाताहै इसमें कुछभी सन्देह नहीं है॥ १६ ॥ सत्ययुगमें सर्वत्रही तीर्थ थे, त्रेतामें केवल पुष्करही तीर्थथा, द्वापरमें कुरुक्षेत्र मात्र तीर्थ था और कलिकालमें एक गंगाही तीर्थ है ॥ १७ ॥ हे हरे ! मनुष्य पूर्व जन्मान्तरके अभ्यास वासना वशसे और मेरी परमानुकंपासे गंगातटमें निवास पाताहै ॥ १८ ॥ सत्ययुगमें मोक्षका कारण ध्यानही था, त्रेतामें ध्यान और तप ये दोनों थे, द्वापरमें ध्यान तप यज्ञ ये तीनों कारण होतेथे और कलियुगमें केवल गंगाही मोक्षका कारण हैं ॥ १९ ॥ जो कोई मरणावधि (देहपतनावधि) गंगातीरका त्याग नहीं करता, वही जन वेदांतवेत्ता योगी और सदा ब्रह्मचारी है ॥ २० ॥ कलिकालमें पापमय हृदय, परद्रव्यपरायण चित्त, विधिहीन क्रियाओंके कर्ता लोगोंकी विना गंगाके गति नहीं है ॥ २१ ॥ "गंगागंगा" इस प्रकारके जप करनेसे दरिद्रता कालकर्णी (अलक्ष्मी) दुःस्वप्न और दुश्चिंता निकट नहीं आसकती ॥ २२ ॥ विष्णो ! सदा सर्वजगत्की हितकारिणी गंगा, भावानुसार समग्र भूतोंको ऐहिक और पारत्रिक फल देती हैं ॥ २३ ॥ हे हरे ! कलिमें यज्ञ, दान, तपस्या, योग, जप, नियम और यम इत्यादि गंगासेवनके सहस्रांश फलकोभी नहीं प्राप्त करसकते ॥ २४ ॥ अष्टांग योग, तपस्या और यज्ञोंसे कौन फल है ? केवल गंगातीरपरका वासही ब्रह्मज्ञानका कारण होता है ॥ २५ ॥ गोविन्द ! यदि गंगासे दूरस्थि-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तभी कोई व्यक्ति गंगामाहात्म्यका विज्ञ होवे तो, उस अयोग्यजन परभी गंगा प्रसन्न होती हैं ॥ २६ ॥ श्रद्धाही परम सूक्ष्म धर्म, श्रद्धाही ज्ञान श्रद्धाही परंतप है एवं श्रद्धाही स्वर्ग और मोक्ष है, अतएव वह श्रद्धासेही प्रसन्न रहती हैं॥ २७॥ अज्ञान राग लोभादिक द्वारा विमोहित चित्त, मनुष्योंकी श्रद्धाधर्ममें नहीं होती विशेषतःगंगापर औरभी नहीं होनेपाती ॥ २८ ॥ जैसे बाहरहीका जल नारियर फलके भीतर वर्तमान रहता है तैसेही ब्रह्माण्डके बाह्य स्थित परब्रह्म स्वरूप जलही जाह्नवी है ॥ २९ ॥ मोक्ष प्राप्तिके समान दूसरा कोईभी लाभ नहीं है, अतएव गंगाहीकी उपासना कर्तव्य है क्योंकि गंगाही परम पुरुष (रूपा) है ॥ ३० ॥ हरे ! पंडित, गुणी और दानशील होनेपरभी शक्ति रहते यदि गंगास्नान न करे तो उसका जन्म निरर्थक हीहै ॥ ३१ ॥ जो कोई इस लोक और कलिकालमें गंगाको नहीं भजता, उसका कुल, विद्या, यज्ञ तप और दानादिक सब वृथा है ॥ ३२ ॥ गुणवान् पात्रके पूजामें वैसा फल नहीं है, जैसाकि विधिवत् गंगाजलमें स्नान एवं पूजन करनेसे फल प्राप्त होता है॥ ३३॥ क्योंकि गंगा मेरे तेजोरूप अग्निको गर्भमें धारण करती है, और मेरेही वीर्यसे सम्पन्न है (अर्थात् मेरे समानहीं है) यह समस्त दोषोंको भस्म करनेवाली एवं सर्व पाप विनाशिनीहै ॥ ३४ ॥ गंगाके स्मरण मात्रसे पापपुंजरूप पंजर(पिंजडा)वज्राहत पर्वतके सदृश सैंकडों टुकडे होकर उधिरा जाताहै ॥ ३५॥ यदि कोई एकजन गंगा यात्रा करनेको जाताहो और दूसरा भक्ति पूर्वक उसका अनुमोदन करे तो उन दोनोहींको समान फल कहागयाहै-इस विषयमें भक्तिही कारणहै ॥ ३६ ॥ चलते (उठते), बैठते, जपते ध्यानकरते, खाते,जागते,सूतते बोलते हुए जो कोई निरंतर गंगाको स्मरण करतारहे वह (अवश्यही) भवबन्धनसे मुक्त होजाताहै ॥ ३७॥ जो कोई पितरोंके उद्देशसे भक्तिपूर्वक मधु, घृत, गुड, तिल, सहित पायस (खिचडी) गंगाके जलमें निक्षेप करे ॥ ३८ ॥ उसके पितृगण सौवर्षके लिये तृप्त योजाते और हे हरे ! वे पितामहादिक सन्तुष्ट होकर उस कर्मकर्ताके विविध कामनाओंको पूर्ण करदेतेहैं ॥ ३९ ॥ जैसे एक लिंगहीके पूजन करनेसे समस्त जगत्की पूजा होजातीहै, तैसेही केवल गंगास्नानसे समस्त तीर्थोंका फल प्राप्त होजाताहै ॥ ४० ॥ जो नर नित्य गंगास्नान करके लिंगका पूजन करताहै वह एकही जन्ममें परममोक्षका निश्चय प्राप्त होताहै॥ ४१ ॥ अग्निहोत्र, यज्ञ, व्रत, दान और तपस्यायें ये सब गंगास्नान पर लिंगपूजाके कोटि अंशमें एकभागकेभी समान नहीं है॥ ४२॥ गंगा यात्राका निश्चय कर तीर्थगमन निमित्तक श्राद्ध गृहमें संपादन करके बैठेहुए जनके दृढसंकल्पसे उसके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पूर्व पुरुषगण परमानन्दित होतेहैं ॥ ४३ ॥ उसके पापगण तुरत "हायकहांजावेंगे" यह कहकर रोदन करने एवं लोभ मोहादिकके साहित वारंवार यह विचार करने लगतेहैं कि ॥ ४४ ॥ जैसे होसके तैसे यह गंगास्नानको न जानेपावे, ऐसा विघ्न हमलोग करें, क्योंकि यदि यह गंगातक पहुंचगया तो हम सब लोगोंका विनाशही करडालेगा ॥ ४५ ॥ गंगास्नानके लिये घरसे बाहर निकलतेही पदपदमें पापपुंज निराश होकर यात्रीके, शरीरसे निकल जातेहैं ॥ ४६ ॥ हरे ! पुण्यवान जन पूर्व जन्मकृत पुण्योंहीसे लोभादिकोंको छोड विघ्नसमूहोंको दूर हटा गंगामें पहुंच सकताहै ॥ ४७ ॥ कामसक्त नर भी चाहे किसीके संग वश, अथवा कुछ मूल्य लेकर वा वाणिज्यके कारण तथा सेवा (नौकरी) के वश होकर भी गंगास्नान करनेसे स्वर्गको प्राप्त ॥ ४८ ॥ इच्छाके विनाभी स्पर्श करनेसे अग्नि जैसे जलादेताहै तैसेही अनिच्छापूर्वकभी स्नान करनेसे गंगा समस्त पापोंको दहन करदेतीहैं ॥ ४९ ॥ जन्तु जबलों गंगाका सेवन नहीं करता तभीलों संसारमें घूमता रहताहै जब गंगाकी सेवा करचुका तो फिर संसारके क्लेशोंको नहीं देखता ॥ ५० ॥ जो कोई संशयहीन होकर भक्तिपूर्वक गंगाजलमें स्नान करता है, वह मनुष्य चर्मसे ढका हुआ देवताही है इस विषयमें सन्देह नहीं है ॥ ५१ ॥ जो कोई गंगास्नानार्थ गृहसे यात्रा कर यदि मार्गहीमें मृत्युको प्राप्त होवे तो, वहभी निःसन्देह गंगास्नानके फलको पाता है ॥ ५२ ॥ जोलोग गंगाका माहात्म्य पढतेहैं, अथवा सुनते हैं, वे सबभी समस्तमहापापोंसे मुक्त होजाते हैं, इसमें सन्देह नहीं ॥ ५३ ॥ विष्णो ! जो लोग दुर्बुद्धि दुराचार कुतार्किक एवं संशयात्मक हैं वे सब मोहवश गंगाको अन्य नदियोंके समान देखते हैं ॥ ५४ ॥ जन्मान्तर कृत दान, तप, नियम, व्रत इत्यादिके प्रभावसे इस जन्ममें मनुष्योंकी भक्ति गंगापर होजाती है ॥ ५५ ॥ ब्रह्माने गंगाके भक्तिमानोंके निमित्त इन्द्रादि लोकोंमें सुरम्य भोगोंसे युक्त अटारियां बना रक्खी हैं ॥ ५६ ॥ अणिमादिक सिद्धियाँ, प्रत्यक्ष सिद्धिप्रद लिंग, अनेक स्पर्श (पारस) लिंग, रत्न रचित शिवालय, और चिन्तामणिके समूह ॥ ५७ ॥ कलिकल्मषके भयसे गंगाजलके भीतर रहते हैं अतएव कलिकालमें इष्टसिद्धिदात्री गंगाही संसेवनीय है ॥ ५८ ॥ सूर्योदयमें अन्धकारगण, वज्रपातके भयसे पर्वतगणगरुडके दर्शनसे सर्पगण, वातसे आहत मेघगण ॥ ५९ ॥ तत्वज्ञानसे मोह, सिंहको देख मृगसमूहके समान समस्त पापगण गंगाके दर्शन मात्रसे क्षय होजाते हैं ॥ ६० ॥ जैसे उत्तम

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

औषधके सेवनसे रोग समूह, जैसे लोभसे गुणगण, जैसे ग्रीष्मकी उष्णता अ
जलाशयमें स्नान करनेसे ॥ ६१ ॥ एवं जैसे रुईका पहाड अग्निकणसे तुरत
होजाता है, उसी प्रकारसे समस्त दोष गंगाजलके स्पर्श करनेहीसे अवश्यमेव
होजाते हैं ॥ ६२ ॥ जैसे क्रोधसे तपस्या, कामसे बुद्धि, अनीतिसे संपत्ति, अ
मानसे विद्या ॥ ६३ ॥ और दंभ कुटिलता एवं मायादिके द्वारा धर्मका नाश होज
है. इसी प्रकार गंगाके दर्शनमात्रसे सकल पाप विनष्ट होजाते हैं ॥ ६४ ॥ वि
रीके स्फुरण समान चंचल दुर्लभ मनुष्यके जन्मको पाकर जो गंगाका सेवन क
है वही इस लोकमें बुद्धिकी पराकाष्ठाको प्राप्त हुआ है ॥ ६५ ॥ जो मनुष्य पा
रहितहैं वे इसी पृथ्वीहीपर गंगाको सहस्रसूर्यसदृशी परंज्योतिःस्वरुपिणी देखतेहैं॥६
पापसे प्रतिहतनेत्र नास्तिक गण गंगाको साधारण जलसे पूर्ण और सामान्य नदीके स
अवलोकन करतेहैं॥६७॥मैंने दयापूर्वक लोगोंको संसारबंधनसे छोडानेके लिए गं
तरंगरूपसे स्वर्गकी सीढीं बनायी हैं॥६८॥ श्रीमती जह्नुनन्दिनीके तीरपर समस्त
अशेष देश मंगलमय है और सबीलोग दानपात्र हैं ॥ ६९ ॥ जैसे यज्ञोंमें अश्व
पर्वतोंमे हिमवान्, व्रतोंमें सत्य, दानोंमें अभय ॥ ७० ॥ तपस्याओंमें प्राणा
मन्त्रोंमें प्रणव, धर्मोंमें अहिंसा, काम्यवस्तुओंमें उत्तमलक्ष्मी, ॥ ७१ ॥ विद्या
आत्मविद्या, स्त्रियोंमें पार्वती हे पुरुषोत्तम ! समस्त देवतागणोंमें तुम ॥ ७२ ॥
पात्रोंमें शिवभक्त, जैसे सर्व प्रधान हैं, वैसेही समस्त तीर्थोंमें गंगा तीर्थही सर्वश्रे
॥ ७३ ॥ हरे ! जो कोई महामति हम तुममें भेद नहीं मानता उसेही शिवभक्त
महापाशुपत जानना उचितहै ॥ ७४ ॥ यह पुण्यवाहिनी गंगा पापरूप धूलिके
नेको बडी भारी आंधी है, एवं पापरूप वृक्षके काटनेको कुल्हाडी है और पापरूप
ठोंके जलानेमें वनाग्निके तुल्य है ॥ ७५ ॥ नानारूपधारी पितृगण इस गाथ
सर्वदा गाया करतेहैं कि " क्या हमलोगोंके वंशमें भी कोई गंगास्नायी होगा ॥ ७
जो देवता और ऋषियोंको तृप्त कर दीन अनाथ एवं दुःखितोंको श्रद्धापूर्वक वि
स्नान कर जलांजलि देवेगा ॥ ७७ ॥ क्या हम लोगोंके वंशमेंभी शिव विष्णु
समान दृष्टि, रखनेवाला, एवं भक्तिपूर्वक शिव विष्णुका मन्दिर निर्माता, अथवा
मन्दिरोंका झाडने बटोरने वाला कोई होवेगा " ॥ ७८ ॥ इच्छासे हो अथवा
च्छासे हो गंगामें चाहे तिर्य्यक् योनि हो वा मनुष्यही हो मृत्यु पाजानेपर फिर न
को नहीं देखता ॥ ७९ ॥ जो लोग गंगातीरपर रहकर दूसरे तीर्थोंकी प्रशंसा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हैं और गंगाका परम आदर संमान नहीं करते, वे नरकगामी होतेहैं ॥ ८० ॥ जो पुरुषाधम मुझसे तुमसे और गंगासे द्वेषरखता है, वह अपने पुरुषोंके साथ नरकमें पडता है ॥ ८१ ॥ साठ सहस्र गण सर्वदैव गंगाकी रक्षा करते रहते हैं; वे सब अभक्त एवं पापियोंके निवासमें विघ्न करतेहैं ॥ ८२ ॥ वे सब काम क्रोध महामोह और लोभादि रूप तीक्ष्ण बाणोंसे लोगोंके चित्तको मारतेहैं, और गंगावासभी नहीं होने देते ॥ ८३ ॥ जो कोई गंगाका समाश्रयण करे, वही मुनि और पंडित है; उसी जनको धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष—इन चारों पुरुषार्थोंमें कृतार्थ समझना योग्य है ॥ ८४ ॥ एकबारभी गंगामें स्नान करे तो अश्वमेध यज्ञके फलको पावे, और गंगामें पितरोंका तर्पण करे तो उने नरकार्णवसे उद्धार कर देवे ॥ ८५ ॥ जो पुण्यवान् एकमासभर निरंतर गंगास्नान करता है, वह अपने पूर्वजोंके सहित जबलों इन्द्रदेव हैं,तबलों इन्द्रलोकमें निवास करता है ॥८६॥ जो पुण्यभागी नर एकवर्षपर्यंत प्रतिदिन(बेनागे)गंगामें नहाता है वह विष्णुलोकमें प्राप्त होकर सुखसे वास करताहै॥८७॥ जो कोई प्रतिदिन जन्मभर गंगाहीमें स्नान करताहै, उसे (जीतेजी) जीवन्मुक्त समझना चाहिए और शरीरान्त होने पर तो वह मुक्त होईचुकाहै ॥८८॥तिथि नक्षत्र पर्व इत्यादिकी अपेक्षा जाह्नवी जलमें नहीं करना चाहिए क्योंकि गंगातो स्नानमात्रसे बटोरेहुए पापको विनाश करदेतीहैं ॥ ८९ ॥ जोकि सुखपूर्वक सेवनीय भागीरथी तीरका आश्रय नहीं करता, वह पंडित होनेपरभी मूर्ख और शक्तिमान् होकरभी शक्तिहीनही है ॥ ९० ॥ यदि गंगाकी सेवाही न बनपड़ी तो, नीरोग जीवनसे क्या फल मिला ? अथवा खिलतीहुई संपत्तिहीका कौनसा प्रयोजन है ? किंवा निर्मल बुद्धि-ही लेकर क्या होगी ? ॥ ९१ ॥ जो नर गंगाकी प्रतिमा स्थापनके लिये मन्दिर बनवादेवे वह विविध भोगोंको भोगकर मरनेपर गंगाके लोकमें वास पाताहै ॥ ९२ ॥ जो लोग नित्य गंगाकी महिमा सादर सुनकर वाचकको धनके द्वारा सन्तुष्ट करदेतेहैं, उनको गंगास्नानका फल होताहै ॥ ९३ ॥ जो कोई पितरोंके उद्देशसे गंगाजलके द्वारा शिवलिंगको स्नान करावे तो उसके पितृगण महा नरकमें पड़े रहनेपरभी तृप्ति लाभ करतेहैं ॥ ९४ ॥ पंडितगणने आठबार मंत्र जपकर वस्त्रसे छानेहुए सुगंधयुक्त गंगाजलके स्नानको घृत स्नानसे अधिक कहाहै ॥ ९५ ॥ जो कोई वक्षमाण आठों-द्रव्योंके सहित गंगाजलको एकबार भी मागध प्रस्थ परिमाण (साढेबारह पल—पचास रुपयेभर) ताम्रपात्रमें रखकर ॥ ९६ ॥ सूर्य नारायणको अर्घ देवे वह अपने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पितरोंके साथ अत्यन्त तेजोमय बिमानके द्वारा सूर्य लोकमें सादर निवास करते
॥ ९७ ॥ जल, दुग्ध, कुशाग्र, घृत, मधु, गोदधि, रक्त कनईल एवं रक्तकमल
॥ ९८ ॥ हे विष्णो ! यही अष्टांग अर्घ कहलाताहै इससे सूर्यदेव अतीव संतु
होतेहैं, अन्यजलोंकी अपेक्षा गंगाजलको योगसे इसका कोटि गुण फल
होताहै ॥ ९९ ॥ जो सुबुद्धि जन गंगातीरपर देवालयको अपनी शक्ति
अनुसार बनवादेताहै, उसे अन्य तीर्थसे कोटिगुण फल प्राप्त होत
॥ १०० ॥ अन्यत्र पीपर, बड, आम्र इत्यादि वृक्षोंके रोपने तथा कुंआ बाव
तडाग (तालाव) के बनवाने, एवं पौसरा और सदावर्तके चलाने ॥ १ ॥ अथ
पुष्पवाटिकादिकके लगानेसे जो पुण्य होताहै, वह गंगाके केवल दर्शनहीसे प्राप्त होत
ताहै, और गंगाके जल स्पर्शमें उससेभी अधिक फल मिलता है ॥ २ ॥ जो पु
कन्यादानसे होताहै और जो पुण्य गोदान एवं अन्न दानसे मिलताहै, व
चिल्लू गंगाजल पीनेसे उसका सौगुना पुण्य लाभ होताहै ॥ ३ ॥ जनार्दन
सैकडोंही चान्द्रायण व्रत करनेमें जो पुण्य है, गंगाऽमृत पान करनेसे त
पेक्षा अधिक फल प्राप्त होताहै ॥ ४ ॥ हरे ! भक्तिपूर्वक गंगा स्नानका दूसरा कौन
फल कहाजावे, अक्षय स्वर्गवास अथवा निर्वाण (मोक्ष) यही दोनों फल हैं ॥ ५
जो नर गंगादेवीके दोनों पादुकाओंकी पूजा नित्यही करताहै, उसे आयुष्य, पुण्य, य
बहुपुत्र, स्वर्ग एवं मोक्ष प्राप्त होताहै ॥ ६ ॥ हरे ! गंगाके समान कलिकल्मषनाश
अन्य कोईभी तीर्थ नहीं है, और न अविमुक्तके तुल्य मुक्तिप्रद दूसरा क्षेत्रही है ॥ ७
यमराजके किंकरगण गंगास्नान परायण मानवको देखतेही सिंहको देख मृगोंके समान
दशों दिशाओंमें भागजातेहैं ॥ ८ ॥ गंगा भजन तत्पर और गंगातट निवासी मनु
ष्यकी यथोचित पूजा करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल लाभ होताहै ॥ ९ ॥ भक्तिपूर्व
पवित्र गंगातटपर गौ भूमि और सुवर्ण आदिके दान करनेसे मनुष्य दुःखसंकट संसा
रमें पुनर्जन्म ग्रहण नहीं करता ॥ ११० ॥ वस्त्र दानसे दीर्घायु, पुस्तक दानके द्वार
ज्ञान, अन्न दानसे संपत्ति, और कन्या दानके द्वारा यशोवृद्धि प्राप्त होतीहै ॥ ११
हरे ! अन्य स्थानमें व्रत, दान, जप, तप, आदिके करनेकी अपेक्षा गंगातटपर यह सब
कोटिगुण (फलप्रद) होजातेहैं ॥ १२ ॥ विष्णो ! जो कोई गंगातटपर सवत्सा धेनुको
विधानसे दान करे, वह कामधेनु दानके प्रभावसे पितृगण सुहृत् और बांधवोंके सहित
सर्व कामोंको भोगताहुआ, अशेष रत्नोंसे विभूषित, समस्त संपत्तियोंसे संपन्न होकर गौके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

रोम संख्यक युगोंभर गोलोक अथवा मेरे लोकमें देवतागणकेभी अलभ्य नानाविध अनेक दिव्य भोगोंको भोगकर ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ फिर धन धान्यसे पूर्ण, रत्न सुवर्ण आदिसे संपन्न, शीलविद्या समन्वित सत्कुलमें जन्म ग्रहण करताहै ॥ १६ ॥ वहांभी पुत्र पौत्रोंके सहित विपुल भोगोंका सुख लेकर पूर्वजन्मके वासनावश पुनः काशीधाममें उत्तरवाहिनी गंगाको प्राप्त हो विश्वेश्वरकी आराधना कर यथाकाल देहान्त होजानेसे विदेह कैवल्यको प्राप्त होजाताहै ॥ १७ ॥ १८ ॥ जो नर भागीरथीके तटपर भक्तिसे दो विवर्तन परिमाण (चारहाथका दंड, तीस दंडका एक विवर्तन) भी भूमि दान करता है उसका पुण्यफल सुनो ॥ १९ ॥ उस भूमिके जितनेही त्रसरेणु (धूलि कणिका) हैं, उतने हीं युग परिमाण (से), इन्द्र और चन्द्र लोकमें मनोवांछित भोगोंको भोगकरके ॥ १२० ॥ फिर महाधर्मपरायण सप्त द्वीपाधिपति हो नरक निवासी समस्त पितरोंको स्वर्गमें पंहुचा देवे, और हे हरे ! ॥ २१ ॥ स्वर्गवासी सकल पितृगणको मुक्त कर वह महातेजस्वी स्वयं अन्तमें ज्ञानरूपी तलवारसे पंचभूतमयी अविद्या (अज्ञान—मोह) को काट ॥ २२ ॥ परम वैराग्य पाय, उत्तम योगाभ्यास करताहुआ अविमुक्त क्षेत्रमें जाकर परंब्रह्मपद (मोक्ष) को प्राप्त करताहै ॥ २३ ॥ हरे ! जो कोई भागीरथीके तटपर सुवर्णमात्र (अस्सीरत्ती—१०मासे अर्थात् एक रुपयाभर) सुवर्ण (सुन्दररंगका—चोखा) सुवर्ण (सोना) सुवर्ण (उत्तमवर्ण—ब्राह्मण) को दान करताहै ॥ २४ ॥ हे विष्णो ! वह ब्रह्मांड मंडलके अन्तर्गत समस्त लोकोंमें सर्व पूजित एवं अशेष ऐश्वर्यसे युक्त हो, सुवर्ण रत्न खचित सर्वत्रगामी शुभ विमानपर चढ़ महा प्रलयकाल पर्यन्त मनोरम भोगोंको भोग अनन्तर जम्बूद्वीपमें प्रतापशाली एक छत्री राजा होकर पश्चात् अविमुक्त क्षेत्रके लाभ करनेपर मोक्षपदको प्राप्त होताहै ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ जन्म नक्षत्रके दिन भक्तिपूर्वक गंगामें स्नान करनेसे; आजन्म संचित पापसमूहसे उसी क्षण छूटजाताहै ॥ २८ ॥ वैशाख, कार्तिक, और माघ मासमें गंगास्नान अतिदुर्लभ है, अमावास्यामें सौगुना संक्रांतिमें सहस्रगुणा ॥ २९ ॥ चन्द्र सूर्यके ग्रहणमें लक्षगुण और व्यतीपात योगमें अनंतगुण फल होताहै । एवं विषुव संक्रान्तिमें अयुतगुण और दोनो अयन संक्रान्तियोंमें नियुत गुण है ॥ १३० ॥ यदि सोमवारको चन्द्रग्रहण तथा रविवारको सूर्यग्रहण होवे तो वह चूडामणि पर्व होजाताहै, उस (चूडामणि) योगमें गंगा स्नान करनेसे असंख्यगुण फल होताहै ॥ ३१ ॥ विष्णो ! इस भूलोकमें भागी-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

स्थीके तटपर स्नान, दान, जप, होम, जो जो चूडामणि योगमें कियाजावे वह
अक्षय होताहै ॥ ३२ ॥ श्रद्धा भक्तिके सहित विधानपूर्वक गंगास्नान करनेसे
घातीभी शुद्ध होजाताहै दूसरे पातकियोंकी कौन बातहै ? ॥ ३३ ॥ जाह्नवी त
कृमि, कीट, पतंग आदि जोई प्राणी मरतेहैं अथवा जो वृक्षादिक कूल (करार)
गिरपडतेहैं; वे सब परम गतिको प्राप्त होतेहैं ॥ ३४ ॥ हे हरे ! जेष्ठ मासके
पक्षमें हस्त नक्षत्र संयुक्त दशमी तिथिको सुबुद्धि नर अथवा नारी, गंगा तटपर भक्ति
भावसे ॥ ३५ ॥ रात्रिमें जागरण करे और दिनमें दश प्रकारके पुष्प सुगंध
दशविध फल ॥ ३६ ॥ दश दीपक दशांग धूप आदिके द्वारा यथाविधि श्रद्धा
हित दशबार गंगाकी पूजा करे ॥ ३७ ॥ दश प्रसृति (पसर) सघृत तिल गंगा
जलमें डालदेवे, और वक्षमाण मन्त्रसे गुड सत्तूके बने दश पिंडे चढ़ा देवे ॥ ३८
पूर्वमें " नमः शिवायै " तिसपर " नारायण्यै " पद है, अनंतर " दशहरायै "
फिर " गंगायै " इनी पदोंसे यह मंत्र होजाताहै ॥ ३९ ॥ इसके अन्तमें "स्वाहा
और आदिमें " प्रणव " लगादेनेसे यह बीस अक्षरका मन्त्र होताहै—इसी मंत्र
पूजा, दान, जप, होम, सब कुछ कहागया है ॥ १४० ॥ सोना रूपा यथाशक्ति क
गंगाकी मूर्ति बनाय फिर वस्त्रसे मुख ढंपे जलपूर्ण घटके ऊपर ॥ ४१ ॥ प्रतिष्ठित
पंचामृतसे नहवाय देवीकी पूजा करे और तब उनका ध्यान करे—गंगा चतुर्भु
त्रिनेत्रा नदी नद निषेविता हैं ॥ ४२ ॥ उनके शरीर यष्टिमें सौंदर्य्य अमृतका
घूम रहा है उनके उत्तम चारों हाथोंमें पूर्ण कुम्भ, श्वेत कमल, वर और अभय
जमान है ॥ ४३ ॥ वह अत्यंत सौम्यरूपा, अयुत चन्द्रसमान कान्ति, चामर
वीजिता एवं श्वेत छत्रसे शोभिता हैं ॥ ४४ ॥ वह अमृत सिंचनसे भूतलको प्लावि
करती हैं, दिव्य गंधको अनुलेपन कियेहैं, त्रैलोक्य भरमें उनका चरण पूजित
और देवता एवं ऋषिगणसे स्तुति की जारही हैं ॥ ४५ ॥ इस प्रकारसे ध्यान
पूर्वोक्त मन्त्रके द्वारा धूप दीपादि उपहारसे पूजन कर, प्रतिमाके आगे चंदन
अक्षतसे निर्मित मेरी, तुमारी, ब्रह्माकी, सूर्यकी, हिमालयकी और भगीरथकी
करे ! पश्चात् दशजन ब्राह्मणोंको सादर दश प्रस्थ तिल दान देवे ॥ ४६ ॥ ४७
पल (एकमुट्ठी धान) कुडव, प्रस्थ, आढक और द्रोण, इन सबको धान्य परिमा
नुसार क्रमशः एकसे दूसरेको चतुर्गुण अधिक जानना चाहिए ॥ ४८ ॥ मत्स्य
कच्छप, मंडूक, मकर (मगर) इत्यादि जलचर जन्तु एवं हंस कारंडव (कडरुआ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बक चक्रवाक टिट्टिभ (टिटिहरी) सारस आदि जलपक्षियोंको ॥ ४९ ॥ यथाशक्ति सुवर्ण रूपा तामा आदिके पत्तलपर चन्दनादिसे बनाय गंध पुष्पसे पूजन कर व्रतीजन उन सबको गंगामें डाल देवे ॥ ५० ॥ वित्त शाठ्यसे विवर्जित होकर इस विधानसे उपवास करनेपर वह जन इन दश प्रकारके पापोंसे छूटजाता है ॥ ५१ ॥ विना दिये हुए किसीके वस्तुको लेलेना १, यज्ञादि विधिके विना हिंसा २, परस्त्री सेवन ३, ये तीनो शारीरक पाप हैं ॥ ५२ ॥ कठोर वचन १, असत्य भाषण २, सब प्रकारकी पिशुनता (चुगुली) ३, निष्प्रयोजन प्रलाप (बकवाद) ४ यह चारोंही वाचिक पाप हैं ॥ ५३ ॥ परद्रव्योंपर अभिध्यान १, मनहीमन अनिष्ट चिंतन २, और असत्य वस्तुओंमें आग्रह ३ ये तीनों मानसिक पाप हैं ॥ ५४ ॥ हे गदाधर ! इन दश जन्मार्जित दशविध पापोंसे निश्चय मुक्त होजाताहै यह वारंवार सत्य है ॥ ५५ ॥ और इस दशमीके व्रतसे दश पूर्व और दश नीचेके पुरुषोंको घोर नरकसे उद्धार करे यदि श्रद्धापूर्वक इस वक्षमाण स्तोत्रको गंगाके आगे जपे ॥ ५६ ॥ शिवस्वरूपा मंगलदात्री गंगाको वारंवार नमस्कारहै, विष्णुस्वरूपा आपको नमस्कार है, ब्रह्मरूपिणी आपको नमस्कारहै ॥ ५७ ॥ (१) रुद्रस्वरूपा ! आपको नमस्कार, शांकरीको नमस्कार, सर्वदेवस्वरूपिणी संसाररोगकी औषधि मूर्ति आपको नमस्कारहैं ॥ ५८ ॥ (२) सब किसीके सकल व्याधिनाशनमें उत्तम वैद्यरूपा आपको नमस्कार है, स्थावर जंगमसे उत्पन्न विष विनाशिनी आपको नमस्कारहै ॥ ५९ ॥ (३) संसार विष विघातिनी जीवनरूपा आपको नमस्कारहै, दैहिक दैविक भौतिक त्रिविध तापहंत्री प्राणकी ईश्वरी आपको वारंवार नमस्कारहै ॥ ६० ॥ (४) शांतिसंतानकारिणी शुद्धमूर्ति आपको नमस्कारहै, प्राणिमात्र सब किसीकी शुद्धि विधायिनी पापोंकी शत्रुस्वरूपा आपको नमस्कारहै ॥ ६१ ॥ (५) भुक्ति मुक्ति प्रदायिनी कल्याणकर्त्रीको नमस्कार है ऐहिक और पारलौकिक भोग एवं उपभोगोंकी दात्री भोगवती नाम्नी पातालगंगारूपा आपको नमस्कार है ॥ ६२ ॥ (६) मन्दाकिनी रूपा स्वर्गगाको नमस्कारहै, स्वर्गदात्री आपको नमस्कारहै, त्रैलोक्यभूषणमूर्ति आपको नमस्कारहै, त्रिमार्गगामिनी (आप) को वारंवार नमस्कारहै ॥ ६३ ॥ (७) गंगाद्वार प्रयाग और सागरसंगम इन तीनों उज्ज्वल स्थानोंमें विशेष स्थिति शालिनी आपको नमस्कारहै, क्षमावतीको नमस्कारहै, गार्हपत्य दक्षिण और आहवनीय नामक तीनों अग्नियोंकी वासभूमी तेजस्वतीको नमस्कार है ॥ ६४ ॥ (८) अलकनन्दा, शिवलिंगधारिणी, अमृत

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

स्रोतःस्वरूपाको नमस्कारहै, ब्रह्मांडश्रेष्ठाको नमस्कारहै, रेवती नक्षत्ररूपाको नमस्कारहै ॥ ६५ ॥ (९) परिपूर्ण (बृहती) को नमस्कारहै, लोकधात्रीको नमस्कारहै, संसारमात्रकी मित्ररूपा आपको नमस्कारहै, नन्दिनीको वारंवार नमस्कार ॥ ६६ ॥ (१०) पृथिवीस्वरूपा निर्मलजला, उत्तम धर्ममूर्ति आपको नमस्कार सैकडौंहीं ब्रह्मादि देवगणपर एवं अस्मदादि अपर गणसे सेविता, तारिणी, आपको अनेक नमस्कारहैं ॥ ६७ ॥ (११) (संसारके) पाशजालको काटनेवाली, भेदोंसे हीन, आपको नमस्कारहै, परमशान्ता, सर्वश्रेष्ठा, वरदायिनी आपको नमस्कार ॥ ६८ ॥ (१२) उग्रस्वरूपा सुखभोग कारिणी, संजीवनीरूपा आपको नमस्कार है, आप ब्रह्मिष्ठा मुक्तिदायिनी एवं दुरितविनाशिनी हैं. आपको वारंवार नमस्कार है ॥ ६९ ॥ (१३) प्रणतजनकी दुःख हारिणी, जगत्की माता आपको नमस्कारहै, समस्त आपत्तियोंकी शत्रु, मंगलमूर्ति आपको वारंवार नमस्कार है ॥ १७० ॥ (१४) हे नारायणि ! देवि ! शरणमें प्राप्त दीन दुःखियोंके रक्षा करनेमें तत्पर हो, आप सबकिसीके दुःखोंको हरण करती हो आपको नमस्कार है ॥ ७१ ॥ (१५) लेप (अविद्या) रहिते; दुर्गविनाशिनि परमदक्षे ! सर्वोत्तमोत्तमे ! मुक्तिप्रदे ! गंगे आपको वारंवार नमस्कार है ॥ ७२ (१६) गंगे ! आप मेरे सन्मुख रहें, गंगे आप मेरे पीछे स्थिति करें, गंगे ! आप मेरे दोनों ओर बनीरहें, गंगे मेरा निवास आपहीमें होवे ॥ ७३ ॥ (१७) भूतलवासिनि ! शिवे ! आदि अन्त और मध्यमें सबकुछ आपही हो, आपही मूल प्रकृति और आपही परमपुरुष हैं, गंगे ! आपही परमात्मा शिव हैं, शिवे ! आपको नमस्कार है ॥ ७४ ॥ (१८) जो कोई श्रद्धापूर्वक इस स्तोत्रको पढे अथवा सुने, वह कायिक वाचिक और मानसिक (उक्त) दशविध पापोंसे उन्मुक्त होजावे ॥ ७५ ॥ (१९) रोगीका रोग जातारहे, विपन्नकी विपत्ति हटजावे; बद्ध (बन्धन आ) का बंधन छूटे, और डरेहुएका भय दूर होवे ॥ ७६ ॥ (२०) (इसके पढनेसे) समस्त कामनाओंको प्राप्त करे, और मरकर स्वर्गगामी होवे, दिव्य विमानपर चढाकर अप्सरायें उसे चमर ढरावें ॥ ७७ ॥ (२१) यह लिखित स्तोत्र जिसके गृहमें सदारहे, वहांपर अग्नि चोर एवं सर्पादिका भय कभी न होवे ॥ ७८ ॥ (२२) ज्येष्ठ मासके शुक्लपक्षकी बुधवार और हस्तनक्षत्र युक्त दशमी तिथि त्रिविध पापको हरण करती ॥ ७९ ॥ (२३) उसी दशमी तिथिपर इस स्तोत्रको गंगाजलमें खडा होकर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पूर्वोक्त विधानानुसार गंगाकी पूजा कर प्रयत्न पूर्वक दशबार पढे तो चाहे दरिद्र हो अथवा असमर्थ हो पर पूर्वकथित फलको वहभी पाजाताहै ॥ ८० ॥ ८१ ॥ (२४ ॥ २५) जैसी गौरी है वैसीही गंगाहैं, अतएव गौरी पूजनमें जो विधि विहित है गंगापूजनमें भी उसे ज्योंकात्यों समझना चाहिए ॥ ८२ ॥ (२६) हे विष्णो ! जैसा मैंहूं वैसाही तुम हो, एवं जैसे तुम हो वैसीही गौरी हैं और जैसी गौरीहैं वैसीही गंगा हैं, इन चारोंही रूपोंमें कोई भेद नहीं है ॥ ८३ ॥ (२७) जो कोई विष्णु और रुद्रमें, अथवा लक्ष्मी और पार्वतीमें, तथा गंगा और गौरीमें भेद कहता है वह मूढबुद्धि है ॥ ८४ ॥ (२८)

कायिक वाचिक मानसिक, दशविध पातक होत ।
हरत दशहरा स्नानते, गंगा तेहि निज सोत ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां गंगामहिमा—दशहरास्तोत्रवर्णनं नाम सप्तविंशतितमोऽध्यायः ॥ २७ ॥

अष्टाविंश अध्याय ।

वाहीकाख्यानसहित गंगाकी महिमा ।

पार्वती बोलीं—नाथ ! मैं अपना सन्देह हटानेके अर्थ कुछ पूछना चाहतीहूं, हे त्रिकालज्ञानकोविद ! यदि आपको कष्ट न होवे तो कहिए ॥ १ ॥ जब कि चक्रपुष्करिणीके तीरपर विष्णु तपस्या कररहेथे तब राजा भगीरथ कहां थे और भागीरथी कहां थीं ? ॥ २ ॥ महादेवने कहा—सदाशुद्धे ! विशालाक्षि ! इस विषयमें सन्देह न करना चाहिए, (क्योंकि) श्रुति—स्मृति और पुरणोंमें भूत भविष्य एवं वर्तमान ये तीनोंही काल सर्वदा समानरूपसे कहेजातेहैं (भविष्यमें भूतके समान और वर्तमानमेंभी भूतके तुल्य व्यवहार कल्पभेदादि कारणोंसे होसकता है) अतः व्यर्थका संशय मत करो, इस कहनेके पश्चात् फिर शिव, गंगाकी महिमा कीर्तन करनेलगे ॥ ३ ॥ ४ ॥ अगस्त्यने कहा—पार्वतीनन्दन ! फिर महेश्वरदेवने विष्णुसे गंगाकी महिमा जिस प्रकारसे वर्णन की उसे आप कहें ॥ ५ ॥ स्कन्दने कहा—हे अगस्त्यमुने ! देवदेवने पापघ्न गंगामाहात्म्य जैसे भाषण कियाथा, इसघडी उसीको सुनो ॥ ६ ॥ जो कोई त्रिपथगा गंगामें एकबार पिंडदान करताहै, वह तिल जलके द्वारा अपने पितरोंको भवसागरसे उद्धार करदेताहै ॥ ७ ॥ गंगातटपर मनुष्यलोग पितृकार्यार्थ जितने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तिलको ग्रहण करतेहैं, तितनेही सहस्र वर्ष पितृगण स्वर्गवास करतेहैं ॥ ८ ॥ गण एवं पितृगण गंगामें सर्वदा निवास करतेहैं, अतएवं, वहांपर उन सबका आ हन वा विसर्जन नहीं होता ॥ ९ ॥ " जोलोग पितृवंशमें मरेहैं अथवा मातृकु मरेहैं, तथा गुरु श्वशुर बन्धुके वंशमें मरेहैं एवं अन्य मृत बांधव ॥ १० ॥ विना दाँत निकसेही मरेहैं, वा जो गर्भहीमें पीडासे मरगयेहैं, जो आग लगके बिजुरीके गिरने, वा चोरोंसे मारेगयेहैं, अथवा जिने बाघ या दूसरेही दंष्ट्री जन्तु ग गयेहैं ॥ ११ ॥ जो फांसी लगाकर मरगये, पतित होगये आत्मघाती हुए, आ विक्रयी हुए, चोर और जो अयाज्य याचक हुए ॥ १२ ॥ जो रस विक्रयी औरभी दूसरे पाप, रोगीलोग, अथवा आग लगादेनेवाले, विष(खिला) देनेवाले, गोहत्य इन सब प्रकारके निजपूर्वज ॥ १३ ॥ एवं जो असिपत्रवन नरकमें पड़ेहैं, कुंभीपा पकरहेहैं, रौरव तामिस्र और कालसूत्र नरकोंमें जो प्राप्त होचुकेहैं ॥ १४ ॥ लोग अपने कर्मानुसार सहस्रों जातियोंमें घूमरहेहैं, अथवा जो पक्षी, मृग, कीट, लता आदिके ॥ १५ ॥ असंख्य नामोंसे अगणित योनियोंमें प्राप्त हुएहैं, एवं लोगोंको अतिघोर यमकिंकरोंने यमपुरीमें पहुंचादियाहै ॥ १६ ॥ जो बान्धव नहींहै, वा जो बान्धव हैं, एवं जो अन्य जन्ममें बांधव रहेहैं, जिन लोगों नाम नहीं ज्ञातहै, वा जो अपुत्रक निज गोत्रज गण हैं ॥ १७ ॥ जो विषके मरेहैं वा जिन्हें सिंघैले पशुओंने मारडालाहै, अथवा जो कृतघ्न, गुरुघाती और स्त्री द्रोही रहेहैं ॥ १८ ॥ जो स्त्रियोंके एवं बालकोंके घातक हैं, वा जो विश्वासघाती जो असत्य तत्पर, हिंसापरायण, सदा पापनिरत हैं ॥ १९ ॥ जो अश्वविक्रयी जो परद्रव्यके अपहर्ता हैं, जो अनाथ, कृपण, दीन, मनुष्य जन्म पानेमें असमर्थ ॥ २० ॥ यह सब एकबारभी विधिपूर्वक मनुष्यके तपर्ण करनेसे तृप्त होकर स्व प्राप्त होतेहैं एवं स्वर्गगामीगण मोक्षलाभ करतेहैं " ॥ २१ ॥ इन मन्त्रोंका उच्चा कर जो कोई पितृतर्पण श्राद्ध वा पिंडदान करे इस जगत्में वही विधिज्ञ कहलात ॥ २२ ॥ त्रैलोक्यमें जितनेही कामप्रद तीर्थ हैं वे सब काशीमें उत्तर वाहिनी गंगा सेवन करतेहैं ॥ २३ ॥ विष्णो ! यद्यपि गंगा सर्वत्रही पावनी और ब्रह्महत्यादि पा हारिणी हैं परन्तु काशीमें जहांपर उत्तरवाहिनी हुईहैं वहांकी विशेष महिमाहै ॥ २ देवगण ऋषिगण और पितृगण यही गाथा गायाकरते हैं कि, " काशीमें उत्तरवाहि हमलोगोंकी दृष्टिगोचरा होवें ॥ २५ ॥ जहांके जलसे सन्तुष्ट हो, त्रिविध ता

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

छोड़, विश्वनाथके प्रसादसे मुक्तिपदहीको प्राप्त करें" ॥ २६ ॥ हरे ! सब प्रकारसे मुक्तिकेलिए केवल गंगाही निर्णीत हुईहैं, (उसमें भी) मेरे अधिष्ठान (निवास) के गौरवसे अविमुक्तक्षेत्रमें बडी विशेषताहै ॥ २७ ॥ कलियुगको घोर समझकर गंगाकी भक्ति छिपादी गईहै, अतएव सबलोग एकमात्र मुक्तिमार्गकी देनेवाली गंगाको नहीं जानते ॥ २८॥ अनेक जन्म नियुत समस्तयोनियोंमें भ्रमण करताहुआ कौन जन इस-लोकमें गंगाके भजन विना निवृत्तिको प्राप्त कर सकताहै ? ॥ २९ ॥ विष्णो ! पापसे विक्षिप्त चित्त, अल्प बुद्धि, भवरोगी, मनुष्यगणको गंगाही परम आषधै हैं ॥ ३० ॥ हरे ! जो कोई गंगाके तीरपर (घाट वा शिवाला आदि) टूटे फूटेका संस्कार (मरणमत—मरम्मत) करदेता है, मेरे लोकमें बहुत कालतक उसे अक्षय सुख प्राप्त होता है ॥ ३१ ॥ जो जन परार्थ क्या स्वार्थ गंगा यात्राका उद्देशकर फिर मोहवश नहीं जाता वह पितृगणके सहित पतित होता है ॥ ३२ ॥ हरे ! जिन प्राणियोंका समस्त कार्य गंगाजलहीसे होता है, वे भूतलस्थित मर्त्य होनेपरभी देवता-हीहैं ॥ ३३ ॥ जो कोई बहुतसे पापोंको कर चरम (वृद्धा) अवस्थामें भी गंगाका सेवन करताहै उसेभी शुभगति प्राप्त होती है॥ ३४॥ मनुष्य आदिकी अस्थि (हड्डी) जितनेदिनलों गंगाजलमें पडी रहजाती है. तितने सहस्र वर्षलों स्वर्गलोकमें सादर निवास करता हैं ॥ ३५ ॥ विष्णुने पूछा—त्रैलोक्य हितकर ! देवदेव ! प्रभो ! जग-न्नाथ ! निर्मल गंगाजलमें यदि अकालमृत, दुराचारी दुरात्माकी अस्थि गिरपडे तो उसकी कैसे परमगति होवे ? हे ईश ! इसे कहिए ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ महेश्वरने उत्तरदिया—हे अधोक्षज ! विष्णो ! इस विषयमें पुरातन, वाहीक नामक द्विजका इतिहास वर्णन करताहूं, एकाग्र चित्त होकर (उसे) श्रवणकरो ॥ ३८ ॥ पूर्वकालमें कालिंग देशके मध्य, वाहीक नामक केवल यज्ञोपवीतधारी, लवणविक्रयी एक ब्राह्मण था, वह संध्या स्नानसे रहित और वेदाक्षर ज्ञानसे हीनथा, अथ च उसने एक नवीन वयस्का विधवा कौविन्दी (तन्तुवायपत्नी—कोरिन्—जोलहिन) अपनी भार्या बनायी थी ॥ ३९ ॥ ४० ॥ अनंतर दुर्भिक्षसे पीडित उस वृषली पति (शूद्रास्वामी) ने प्राण धारणके उपायको न पाय उस देशसे दूसरे देशकी यात्रा की॥ ४१ ॥ क्षुधासे कातर हो निःसहाय वह वाहीक, मार्गमें दण्डकारण्यके बीच मनुष्य मांस लोलुप व्याघ्रके द्वारा वहांपर मारागया ॥ ४२ ॥ एक गिद्ध उसका वामपद लेकर वहांसे उडा, मांसार्थी दूसरे गिद्धसे आकाशहीमें उसका युद्ध हुआ ॥ ४३ ॥ आमिषा-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भिलाषी उन दोनों गिद्धोंके परस्पर जयमें तत्पर होनेपर वह पैरकी घुड़ी उस
गिद्धके चंचुपुटसे गिरपड़ी ॥ ४४ ॥ युद्ध करते हुए उन दोनोंही गिद्धोंसे छूट
बाघसे मारे गये उस वाहीक ब्राह्मणका पादगुल्फ दैवयोगसे गंगाके मध्यमें गिर
॥ ४५ ॥ (इधर) ज्योंही व्याघ्रने अरण्यमें स्थित वाहीकको मारा, त
पाशपाणि यमके क्रूर किंकरोंने आकर उसे बांधलिया ॥ ४६ ॥ और
कशाओं (चाबुकों) से बहुत मारा और आरासे चहुंओर चीरडा
वह मुखसे रुधिर वमन करताहुआ, यमराजके सन्मुख उपस्थित कियागया ॥ ४७
हे माधव ! इसके अनंतर धर्मराजने चित्रगुप्तसे पूछा कि "इस ब्राह्मणका धर्म
विचारकर शीघ्रतासे कहो" ॥ ४८ ॥ समस्त प्राणियोंके सर्वकर्मोंके सर्वदा जाननेवाले वि
बुद्धि चित्रगुप्त वैवस्वतके पूछनेपर यमुनाके भ्रातासे दुराचारी (दुष्ट) द्विज वाहीक
आजन्मका अशुभ वृत्तान्त यों निवेदन करनेलगे ॥ ४९ ॥ ५० ॥ चित्रगुप्तने कह
हरे ! पूर्वमें किसीने इसका गर्भाधान आदि कर्म नहीं किया, न इसके अज्ञ
गर्भजनित पाप नाशनके कारण और समस्त आयुष्य सुखप्रद जातकर्मही किया,
इग्यारहवेंदिन विधिपूर्वक इसका नाम करणही कियागया ॥ ५१ ॥ कि जिस विधान
करनेसे बालक सर्वत्रविख्यात एवं सर्वविधिमें पावन होताहै इसके मन्दबुद्धि पिताने, वि
गमन निवारक गृह निर्गगन संस्कार चौथे मासके शुभ तिथि आदिमें नहीं किया न छ
मासमें इसका विधिपूर्वक अन्नप्राशन ही किया ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ जिस कर्मके
सूर्यके उदय होतेही प्रतिदिन मिष्टान्न खानेको मिलताहै ! फिर कुलाचारानु
नियमित वर्षमें इसका चूडाकरण (मुंडन) भी नहीं हुआ ॥ ५५ ॥ जिस कर्म
संपादन करनेसे केशावली सुस्निग्ध एवं पुष्पवर्षिणी होतीहै ! फिर इसके पि
शुभ समयमें इसका कर्णवेधभी (तुंडन) नहीं किया ॥ ५६ ॥ जि
द्वारा कर्णयुगल सुश्रवण संपादक और सुवर्णग्राही होते हैं ! हे हरे ! ब्रह्मवर्च
वृद्ध्यर्थ एवं वेदग्रहणका हेतुभूत मौंजीबंधन (यज्ञोपवीत—जनेव) संस्कारभी इ
अष्टम वर्ष व्यतीत होनेपर नहीं हुआ ॥ ५७ ॥ फिर इसके जनकने समावर्तन कर्म
बातभी नहीं की जिस कृत्यके होजानेपर श्रेष्ठ गृहस्थाश्रम प्राप्त होताहै ॥ ५८
अनंतर ज्यों त्यों करके इस परदारापहारी वृषली (शूद्रा) पतिने एक कुलटा कुमार्ग
गामिनी पत्नीसे विवाहभी करडाला ॥ ५९ ॥ पांचही वर्षकी अवस्थासे यह दु
चारी परस्व तस्कर (चौर) एवं द्यूततत्पर (जुआडी) हो गयाथा ॥ ६० ॥ इस द्वि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लवणके खानिसे समीप (सिन्धुदेश)में रहते समय एकबार मोटे दंडसे नोनको चाटतीहुई एक वर्षकी बछियाको ऐसा मारा कि वह मरगयी ॥६१॥ इसने अनेकबार माताको पैरोंके चोटसे माराहै और कभीभी पिताके वचनका पालन नहीं किया॥६२॥ इस झगडालूने बहुत बार (आत्मघातकी इच्छासे, विष खाया, औ दूसरेको राजद्वारमें फसानेके अभिप्रायसे स्वयं अपना पेट चीरडालाहै ॥ ६३ ॥ और केवल खेलबाड़के झगड़ा पड़नेपरभी इस दुर्बुद्धिने बहुधा धतूर कनइल इत्यादि उपविषोंको खाडालाहै ॥६४॥ हे सूर्यनन्दन! इस शिष्टनिन्दित दुष्ट पापिष्ठने अपनेको आगमें जलादिया, कुत्तोंसे चोंथवादिया,शृंगी पशुओंके शृंगाग्रभागसे चहुंओर अनेकबार गोदवा लिया सर्प आदिसे बहुतही कटवालिया और लकडी ईंटा एवं चक्का इत्यादिसे सर्वदैव (अपनेको) पिटवा लियाहै ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ इस दुरात्माने वारंवार अपना शिर पीटा जिस उत्तमांगसिरको सज्जनगण सदा अनेक प्रकारसे पूजते (संवारते) रहते हैं ॥ ६७ ॥ यह मन्द ब्राह्मण गायत्रीभी नहीं जानता और इस दुर्मतिने अकेलेही मनमाना मांस मछरी खायाहै ॥ ६८ ॥ इसने अनेकबार अपनेही लिये पायस (खीर—खोआ) का पाक बनायाहै, इस मूढने सर्वदा लाह, नोन, मांस, दूध, दही, घी, विष, लोहा, शस्त्र, दासी, गौ, घोडा, रोआं और चमडा इत्यादि वस्तुओंको बेंचाहै ॥ ६९ ॥ ७० ॥ इस दुरात्माका शरीर शूद्रहीके अन्नसे पलाहै यह दिनमें और पर्वोंपरभी मैथुन करताथा, यह देवकर्म और पित्र्यकर्मसे सदा पराङ्मुखही रहा ॥ ७१ ॥ इसने सैकडोंसे अधिक पशु पक्षियोंको मारा, अकारणही पेडोंको काटडाला, इसका चित्त सर्वदा निर्दय रहा॥७२॥ यह अपने बंधुजनको भी नित्यही उद्वेग उत्पन्न करनेवाला, सदा असत्य वादी और निरंतर हिंसा परायण रहा ॥ ७३ ॥ इसने कभी दान नहीं किया, पिशुनता इसका धर्म है यह शिश्न और उदरहीके सेवामें तत्पर रहा, हे सूर्यतनय ! मैं बहुत कहांतक कहूं-यह व्यक्ति साक्षात् पातकमूर्ति है ॥ ७४ ॥ रौरव १, अंधतामिस्र २, कुंभीपाक ३, अतिरौरव ४, कालसूत्र ५, कृमिभोजन ६, पूयशोणितकर्दम ७, असिपत्रवन, ८, घोर यंत्रपीड ९, सुदंष्ट्रक १०, अधोमुख ११, पूतिगंध १२, विष्ठागर्त्त १३, श्वभोजन ॥ १४ ॥ सूचीभेद्य १५, संदंश १६, लालापान १७, और क्षुरधार १८, इन प्रत्येक नरकोंमें इसे एक एक कल्पकी संख्यानुसार पातित करना चाहिए ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ धर्मराजने चित्रगुप्तके मुखसे यह सुनकर उस दुराचारीको बहुतही धिक्कारा और भ्रूभंगीके द्वारा अपने किंकरोंको आज्ञादी ॥ ७८ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तदनंतर जहांपर पापियोंका रोमहर्षण उच्च आर्तनाद की चिल्लाहट मचीथी यमदूतोंने वाहीकको बांधकर उसी नरकालयमें पहुंचादिया ॥७९॥ ईश्वरने कहा—तब वाहीक अतितीव्र यातनामें पडनेपर, तत्क्षण पुण्य फलके दायक निर्मल गंगाके जलमें ॥ ८० ॥ गिद्धके मुखसे उस वाहीक द्विजका अस्थिखंड गिरपडा । हे हरे ! उसी क्षण घंटावित, दिव्य सैकडों स्त्रियोंसे संकुल दिव्य विमान देवलोकसे आपहुंचा । हरे ! अस्थि पतनके कारणसे वह वाहीक द्विज दिव्य वेष धारण और दिव्य गंधानुलेप कर तुरत विमानपर चढ अप्सरा गणके व्यजन वायुका सुख भोग करताहुआ स्वर्गलोकको चलागया ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ स्कन्द बोले—हे कुम्भसम्भव इस वस्तुशक्तिका विचार कुछ अद्भुतही है, यह गंगा सदाशिवकी द्रवरूपा अकथनीय परमा शक्ति है ॥ ८४ ॥ करुणामृतपूर्ण भगवान् महादेवने जगत्के उद्धार निमित्त इस गंगाको प्रवर्तित करदिया है ॥ ८५ ॥ संसारमें जैसे दूसरी सहस्रशः नदियां जलसे पूर्ण वर्तमान हैं, वैसेही त्रिपथगामिनी गंगाको सज्जनगण न समझें ॥ ८६ ॥ मुने ! गंगाधर शंभुने दयादृष्टिसे वेदाक्षरोंको निचोडकर उसीके द्रवों (रसों) से इस गंगाका निर्माण किया है ॥ ८७ ॥ शंकरने सब जन्तुओंपर कृपाकर योग और तप निषदोंके सारको लेकर उसीसे इस सरिद्वराको बनाया है ॥ ८८ ॥ जिन (जिन) देशोंमें यह सुरधुनी नही हैं, वे सब देश चन्द्रसे हीन रात्रि और पुष्प रहित वृक्षोंके तुल्य हैं ॥ ८९ ॥ विष्णो ! गंगाके जलधारासे विहीन समस्त देश और दिशायें न्यायरहित संपत्ति और दक्षिणासे हीन यज्ञके समान हैं ॥ ९० ॥ सूर्यसे रहित जैसे आकाशांगण हो; और रात्रिमें जैसे बिना दीपकका गृह हो, एवं जैसे वेदवर्जित ब्राह्मण हो उसी प्रकारसे गंगाहीन दिशायेंभी (व्यर्थही) हैं ॥ ९१ ॥ यदि कोई देह शोधनके लिये सहस्र चान्द्रायण व्रत करे, और कोई गंगाका जलही पीये तो उन दोनोंमें गंगाजल पीने वालाही श्रेष्ठ (समझा जाता) है ॥ ९२ ॥ जो कोई शत सहस्र वर्षलों एक पादसे खडा रहकर तपस्या करे और दूसरा कोई एकवर्षमात्र गंगाजल पीये तो उन दोनोंमेंभी गंगाजल पान कर्ताही अधिक है ॥ ९३ ॥ हरे ! जो मनुष्य सैकडों वत्सर अधःशिरा होकर लटकता रहे उसकी अपेक्षा गंगाके वालुका रूप शय्यापर शयन करनेवाला (सर्वथा) श्रेष्ठ है ॥ ९४ ॥ इस लोक और कलिकालमें पातक एवं संतापोंसे दग्ध जीवोंका पाप ताप हरण जैसा जाह्नवी गंगा करती हैं वैसा अन्य कोईभी नहीं करसकता ॥ ९५ ॥ जैसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गरुडके दर्शनमात्रसे सर्पगण विषरहित होजाते हैं, तद्रूप केवल गंगाका दर्शन होतेही पापपुंज निष्प्रभ होजाते हैं ॥ ९६ ॥ जो नर गंगातटोद्भूत मृत्तिकाको मस्तकपर धारण करताहै, वह निश्चय करके तमोनाशनके लिए सूर्यबिम्बहीको धारण किये रहताहै ॥ ९७ ॥ व्यसनोंसे अभिभूत एवं धनहीन और पापी जनकी एक मात्र गंगाही गति ह, अन्य विधकी कोई दूसरी गति नहीं कहीगयीहै ॥ ९८ ॥ माहात्म्यादि श्रवण-स्नानादिकी अभिलाषा; दर्शन, स्पर्शन पान, और अवगाहन, करनेसे गंगा पुरुषके उभय वंशको तारदेती हैं, इसमें सन्देह नहींहै ॥ ९९ ॥ गंगाके कीर्तन, दर्शन, स्पर्श, जल, पान, और स्नान करनेसे पुण्य संचय और पातक क्षय यथाक्रम दशगुण अधिक (प्राप्त) होताहै ॥ १०० ॥ गंगाकी प्राप्ति होनेसे जो पुण्य लाभ होताहै, वह मनुष्यको पुत्र, धन, आर दूसरे अनेक सत्कर्मोंके द्वारा कभी नहीं मिलसकता ॥ १ ॥ जो लोग शक्ति रहते मुक्तिगर्भिणी गंगामें स्नान नहीं करते, वे सब जन्मान्ध, पंगु, और जीवन्मृतक हैं ॥ २ ॥ हरे ! गंगामाहात्म्य वादिनी निश्चितार्था श्रुतिको सुनो, इसे सुनकर उत्तम नर गंगाका आश्रयण करे ॥ ३ ॥ "ऐरावती मधुमती, पयस्विनी, अमृतरूपा, ऊर्जस्वती, इन पांचों नदियोंकी भेदात्मिका स्वर्ग संभूता गंगाका जो आश्रयण करतेहैं, वे त्रिदिव (स्वर्ग-वा-मोक्ष) को प्राप्त होतेहैं ॥ ४ ॥ जो लोग ऋषियोंसे सेवित, अति पुण्यधारा पुरातनी विष्णुपदी जाह्नवीको इस लोकमें सर्वात्मना मनसे प्राप्त होतेहैं, वे सब ब्रह्मलोकमें चलेजातेहैं ॥ ५ ॥ माता जैसे पुत्रादिकोंको सुखसे रखतीहै, तैसेही सर्व गुणशालिनी वही गंगा समस्त लोगोंको ऐहिक—और, स्वर्ग सुखका भागी बनातीं हैं अतः इष्ट ब्रह्मपदके अभिलाषी जितेन्द्रिय गणको उसी गंगाकी उपासना सदा करनी योग्यहै ॥ ६ ॥ आत्मविशुद्धि कामनावाला मनुष्य, देवगण सेविता, स्कन्दकी जनयित्री, इरावती, (सजला) शिष्टोंसे सेवनीया, अमृतमयी विश्वरूपा ब्रह्मकान्ता गंगाका आश्रय लेवे ॥ ७ ॥" मनुष्य ब्रह्मचारी और एकाग्रचित्त होकर गंगामें स्नान करनेसे पापरहित होताहै एवं वाजपेय यज्ञका फल प्राप्त करताहै ॥ ८ ॥ अशुभ कर्मोंसे ग्रस्त, महा समुद्रमें डूबतेहुए और नरकमें गिरतेहुए लोगोंको भी आश्रित होजानेपर गंगाही सर्वदा उद्धार करदेतीहैं ॥ ९ ॥ जैसे समस्त लोकोंमें ब्रह्मलोक उत्तम है, वैसे सकलनदी और सरोवरोंमें गंगाही श्रेष्ठ हैं ॥ ११० ॥ अन्य किसी स्थानमें सम्यक् प्रकारसे संकल्पकर तीनवर्ष तपस्या करनेसे जो फल होता है, भक्तिपूर्वक आधी घटिकामें वही फल गंगातटपर प्राप्त होजाता है ॥ ११ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मनुष्योंको—रात्रिमें चन्द्रोदय होनेपर गंगाके तीरमें जो आनन्द आता है, अथवा सुखको भोगतेहुए स्वर्गवासीको भी वह प्रीति नहीं होती ॥ १२ ॥ जरा और रोगोंसे पूर्ण अपने मृतक शरीरको गंगाके जलमें धीरतासे तृणके समान फेंकदेनेसे अमरावतीमें प्रवेश करे ॥ १३ ॥ चन्द्रमंडल, जिस गंगाके जलराशिसे निरंतर प्लावित होकर दिन बीतनेपर फिर अत्यधिक शोभाको धारण करलेता है ॥ १४ ॥ जिसके जलमें स्नान करनेसे सद्यःपातक विनष्ट होते हैं और तत्क्षण बडे कल्याणकी प्राप्ति होजाती है ॥ १५ ॥ हे अच्युत ! जिसके जलमें स्ववंशज पुरुषोंके द्वारा श्रद्धापूर्वक पितरोंको दियेहुए उदक तीन वर्षके लिये पूरी तृप्ति करदेते हैं ॥ १६ ॥ विष्णो ! जो पृथिवीपरके मनुष्योंको और पातालादि अधःस्थित सर्पादिकोंको एवं स्वर्गके स्वर्गवासियोंको तार देती हैं इसी कारणसे उस गंगाका नाम त्रिपथगा (प्रसिद्ध) है ॥ १७ ॥ वह समस्त तीर्थोंमें उत्तम तीर्थ है और संपूर्ण नदियोंमें उत्तम नदी है, अथ च वह गंगा समग्र जन्तुओंको यहांलोंकि महापातकीको भी स्वर्गमें पहुंचा देतीहैं ॥ १८ ॥ विष्णो ! स्वर्ग भूतल एवं आकाशमें जो करोडहों तीर्थ वर्तमान हैं वे सबके सब गंगामें अवस्थित हैं ॥ १९ ॥ जो कोई बिना आत्मघातके, ज्ञान पूर्वक हो (अथवा अज्ञान—हींसे क्यों न हो) यदि गंगामें पंचत्वको प्राप्त होवे, तो वह स्वर्गवासी होता और नरकोंको नहीं देखता ॥ १२० ॥ गंगाही समस्त तीर्थ हैं, गंगाही तपोवन हैं और गंगाही सिद्धि क्षेत्र हैं इस विषयमें विचार नहीं करना चाहिये ॥ २१ ॥ धर्मध्रुव ! जहांपर वृक्षगण कामफल दाता हैं, और जहांकी भूमि सुवर्णमयी है, गंगाके स्नान करनेवाले लोग वहांहीपर निवास करते हैं ॥ २२ ॥ जो कोई सुशीला पयस्विनी सवत्सा धेनु वस्त्र रत्नादिसे भूषित कर गंगातीर पर ब्राह्मणको दान करता है ॥ २३ ॥ हे मुने ! उस धेनुके अथवा उसके सन्ततिके शरीरमें जितने रोम हैं, उतने सहस्रवर्ष वह जन स्वर्गका सुख भोगी होता है ॥ १२४ ॥

को जगमें वाहीकसम, होइ है पापी आन ? ।
गंगा ताहूतारिकै, राखेनि अपनी वान ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां वाहीकाख्यानसहित-गंगामहिमवर्णनं नाम अष्टाविंशतितमोऽध्यायः ॥ २८ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

एकोनत्रिंश अध्याय।

गंगासहस्रनाम स्तोत्र

अगस्त्यने पूछा—विना गंगास्नानके मनुष्यका जन्म निरर्थकहै, तब क्या कोई दूसरा उपायभीहै जिसके द्वारा स्नानका फल मिलसके ॥ १ ॥ अशक्त, पंगु, आलस्यग्रस्त, और दूरदेशस्थ लोगोंको गंगास्नानका फल किस प्रकारसे प्राप्त होसकताहै ? ॥ २ ॥ हे षण्मुख ! जिसमें गंगास्नानका फल होवे, ऐसा दान, व्रत, मंत्र, स्तोत्र, जप, अन्य तीर्थाभिषेक अथवा देवताकी उपासना इत्यादि यदि कोईभी अन्य कर्म होवे, तो मुझ प्रणतसे कीर्तन कीजिये ॥ ३—४ ॥ हे महाबुद्धे ! स्कन्द ! आप गंगाके गर्भसे उत्पन्नहैं, अतः स्वर्ग तरंगिणीकी महिमा आपसे अधिक दूसरा कोई नहीं जान सकता ॥ ५ ॥ स्कन्दने उत्तर दिया—मुने ! इस संसारमें पुण्यजल संपन्न अनेक सरोवर और नदियांहैं, स्थान स्थान पर जितात्मा लोगोंसे अधिष्ठित कितनेहीं तीर्थभी हैं ॥ ६ ॥ जो प्रत्यक्ष फल जनक एवं बडेही महिमावाले होनेपर भी गंगाके कोट्यंश समान नहींहै ॥ ७ ॥ हे कलशोद्भव ! मैं अधिक क्या कहूं, इसी अनुमानके द्वारा समझलो, कि स्वयं देवदेव शम्भुने गंगाको अपने मस्तक पर धारण कियाहै ॥ ८ ॥ (देखो) लोग दूसरे तीर्थोंमें भी स्नान करनेकी समय गंगाहीको जपतेहैं, (भला) इस विष्णुपदी गंगासे भिन्न और कौन पाप मोचन करनेमें समर्थ होसकताहै ? ॥ ९ ॥ ब्रह्मन् ! गंगाके स्नानका फल केवल गंगाहीमें पाया जासकताहै, जैसे द्राक्षा (दाख—अंगूर) के फलका स्वाद द्राक्षाहीमें मिल सकताहै, दूसरे वस्तुमें तो नहीं प्राप्त होता ॥ १० ॥ परन्तु हे मुने ! केवल एकही उपायहै, जिसके द्वारा अविकल (ज्यौंका त्यौं) गंगास्नानका फल प्राप्त होसकताहै, किन्तु वह अत्यन्तही गोपनीयहै ॥ ११ ॥ जो शिवभक्त, शांत, विष्णुभक्तितत्पर, श्रद्धालु, आस्तिक एवं गर्भवाससे मुमुक्षु होवे, उसीसे ॥ १२ ॥ इस महापातक नाशन, परम रहस्य विषयको कहना चाहिये, कभी अन्य किसीसे कहींभी इसे प्रकाश नहीं करनाहीं उचितहै ॥ १३ ॥ यह महाकल्याणकर, पुण्यमय, परम मनोरथ पूरक, गंगाका प्रीति वर्द्धक एवं शिवका अतिसन्तोष कारक ॥ १४ ॥ स्तवराजोंमें शोभन गंगाका सहस्र नामहै, जपनीयोंमें परम जप्य और वेदके उपनिषदोंके समान इस सहस्र नामको ॥ १५ ॥ प्रयत्न पूर्वक मौन धारणकर, पवित्र स्थानोंपर अत्यंत स्पष्ट अक्षरोंसे वाचकके विना (अर्थात् स्वयं) पवित्र भावसे जप करना योग्यहै ॥ १६ ॥ स्कन्दने कहा—श्रीगंगादेवीके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नमस्कारहै । ॐकाररूपिणी, अजरा, अतुला, अनंता, अमृतस्रवा, अत्युदारा, अभया, अशोका, अलकनंदा, अमृता (१०) अमला ॥ १७ ॥ अनाथवत्सला, अमोघा, अपांयोनि, अमृतप्रदा, अव्यक्तलक्षणा, अक्षोभ्या, अनवच्छिन्ना, अपरा, अजिता (२०) ॥ १८ ॥ अनाथनाथा, अभीष्टार्थसिद्धिदा, अनंगवर्धिनी, अणिमादिगुणा, आधारा, (अधारा) अग्रगण्या, अलीकहारिणी ॥ १९ ॥ अचिंत्यशक्ति, अनघा, अद्भुतरूपा (३०) अघहारिणी, अद्रिराजसुता, अष्टांगयोगसिद्धिप्रदा, अच्युता ॥ २० ॥ अक्षुशक्ति, असुदा, अनंततीर्था, अमृतोदका, अनंतमहिमा, अपारा (४०) अनंत सौख्यप्रदा, अन्नदा ॥ २१ ॥ अशेषदेवतामूर्ति, अघोरा, अमृतरूपिणी, अविद्याजालशमनी, अप्रतर्क्यगतिप्रदा ॥ २२ ॥ अशेषविघ्नसंहर्त्री, अशेषगुणगुंफिता, अज्ञानतिमिरज्योति (५०) अनुग्रहपरायणा ॥ २३ ॥ अभिरामा, अनवद्यांगी, अनन्तसारा, अकलंकिनी, आरोग्यदा, आनन्दवल्ली, आर्त्तिविनाशिनी ॥ २४ ॥ आश्चर्यमूर्ति, आयुष्या, आढ्या, आद्या, आत्मा आर्यसेविता, आप्यायिनी, आप्तविद्या, आख्या, आनन्दा, आश्वासदायिनी ॥ २५ ॥ आलस्यघ्नी (७०) आपदांहन्त्री, आनंदामृतवर्षिणी, इरावती, इष्टदात्री, इष्टा, इष्टापूर्तफलप्रदा ॥ २६ ॥ इतिहासश्रुतीड्यार्था, इहामुत्र फलप्रदा, इज्या शीलसमिज्येष्ठा, इन्द्रादिपरिवन्दिता (८०) ॥ २७ ॥ इलालंकारमाला, इद्धा, इन्दिरा रम्यमन्दिरा, इत, इन्दिरादिसंसेव्या, ईश्वरी, ईश्वरवल्लभा ॥ २८ ॥ ईतिभीतिहरा, ईड्या, ईडनीय चरित्रभृत्, (९०) उत्कृष्टशक्ति; उत्कृष्टा, उडुपमंडलचारिणी, उदिताम्बरमार्गा, उस्रा, उरगलोकविहारिणी, उक्षा, उर्बरा, उत्पला, उत्कुंभा (१००) उपेन्द्रचरणद्रवा ॥ २९ ॥ ३० ॥ उदन्वत्पूर्तिहेतु, उदारा, उत्साहप्रवर्धिनी, उद्वेगघ्नी, उष्णशमनी, उष्णरश्मि सुताप्रिया ॥ ३१ ॥ उत्पत्तिस्थितिसंहारकारिणी, उपरि चारिणी, ऊर्जवहन्ती (१०) ऊर्जधरा, ऊर्जावती, ऊर्मिमालिनी ॥ ३२ ॥ ऊर्ध्वरेतः प्रिया ऊर्ध्वोध्वा, ऊर्मिला । ऊर्ध्वगतिप्रदा, ऋषिवृन्दस्तुता, ऋद्धि, ऋणत्रयविनाशिनी (२०) ॥ ३३ ॥ ऋतंभरा, ऋद्धिदात्री, ऋक्षस्वरूपा, ऋजुप्रिया, ऋक्षमार्गवहा, ऋक्षार्चि, ऋजुमार्गप्रदर्शिनी ॥ ३४ ॥ एधितखिलधर्मार्था, एका, एकामृतदायिनी, (३०) एधनीयस्वभावा, एज्या, एजिताशेषपातका ॥ ३५ ॥ ऐश्वर्य्यदा, ऐश्वर्यरूपा, ऐतिह्य, ऐन्दवीद्युति, ओजस्विनी, ओषधीक्षेत्र, ओजोदा (४०) ओदनदायिनी ॥ ३६ ॥ ओष्ठामृता, औन्नत्यदात्री, औषधं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भवरोगिणां, औदार्यचंचुरा, औपेन्द्री, औग्री, औमेयरूपिणी ॥ ३७ ॥ अंवरा-ध्ववहा, अंवष्ठा (५०) अंबरमाला, अंबुजेक्षणा, अंबिका, अंबुमहायोनि, अंधोदा, अंधकहारिणी ॥ ३८ ॥ अंशुमाला, अंशुमती, अंगीकृतषडानना, अंधतामिस्रहंत्री, (६०) अन्धु, अंजना, अंजनावती ॥ ३९ ॥ कल्याणकारिणी, काम्या, कमलोत्पलगन्धिनी, कुमुद्वती, कमलिनी, कान्ति, कल्पितदायिनी (७०) ॥ ४० ॥ कांचनाक्षी, कामधेनु, कीर्तिकृत्, क्लेशनाशिनी, ऋतुश्रेष्ठा, ऋतुफला, कर्मबंधविभेदिनी ॥ ४१ ॥ कमलाक्षी, क्लमहरा, कृशानु तपनद्युति, (८०) करुणार्द्रा, कल्याणी, कलिकल्मषनाशिनी, ॥ ४२ ॥ कामरूपा, क्रियाशक्ति, कमलोत्पलमालिनी, कूटस्था, करुणा, कान्ता, कूर्मयाना (९०) कमलावती ॥ ४३ ॥ कमला, कल्पलतिका, काली, कलुषवैरिणी, कमनीयजला, कम्रा, कपर्दिसुकर्पदगा ॥ ४४ ॥ कालकूट प्रशमनी, कदंबकुसुमप्रिया, (२००) कालिंदी, केलिलालिता, कलकल्लोलमालिका, कांतलोकत्रया, कण्डू, कण्डूतनयवत्सला, खड्गिनी, खड्गधाराभा, खगा, खण्डेन्दुधारिणी (१०) ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ खेखेलगामिनी, खस्था, खण्डेन्दुतिलकप्रिया, खेचरी, खेचरीवंद्या, ख्याति, ख्यातिप्रदायिनी ॥ ४७ ॥ खण्डितप्रणताघौघा, खलबुद्धिविनाशिनी, खातैनःकंदसन्दोहा, (२०) खड्गखट्वांगखेटिनी ॥ ४८ ॥ खरसंतापशमनी, खनिःपीयूषपाथसाम्, गङ्गा, गन्धवती, गौरी, गन्धर्वनगरप्रिया ॥ ४९ ॥ गम्भीरांगी, गुणमयी, गतातंका (३०) गतिप्रिया, गणनाथांबिका, गीता, गद्यपद्यपरिष्टुता ॥ ५० ॥ गांधारी, गर्भशमनी, गतिभ्रष्टगतिप्रदा, गोमती, गुह्यविद्या, गौ, (४०) गोप्त्री, गगनगामिनी ॥ ५१ ॥ गोत्रप्रवर्धिनी, गुण्या, गुणातीता, गुणाग्रणी, गुहांबिका, गिरिसुता, गोविन्दांघ्रिसमुद्भवा ॥ ५२ ॥ गुणनीयचरित्रा (५०) गायत्री, गिरिशप्रिया, गूढरूपा, गुणवती, गुर्वी, गौरववर्द्धिनी ॥ ५३ ॥ ग्रहपीडाहरा, गुन्द्रा, गरघ्नी, गानवत्सला ॥ ६० ॥ धर्महन्त्री, घृतवती, घृततुष्टिप्रदायिनी ॥ ५४ ॥ घंटारवप्रिया, घोराघौघविध्वंसकारिणी, घ्राणतुष्टिकरी, घोषा, घनानन्दा, घनप्रिया ॥ ५५ ॥ घातुका (७०) घूर्णितजला, घृष्टपातकसंतति, घटकोटिप्रपीतापा, घटिताशेषमंगला ॥ ५६ ॥ घृणावती, घृणनिधि, घस्मरा, घूकनादिनी, घुसृणापिंजरतनु, घर्घरा (८०) घर्घरस्वना ॥ ५७ ॥ चन्द्रिका, चन्द्रकान्तांबु, चंचदापा, चलद्युति, चिन्मयी, चितिरूपा, चन्द्रायुतशतानना ॥ ५८ ॥ चारुचंपेयलोचना, चारु (९०) चार्वंगी, चारुगामिनी,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चार्या, चारित्रनिलया, चित्रकृत्, चित्ररूपिणी ॥ ५९ ॥ चंपू, चन्दनशुचर्चनीया चिरस्थिरा (३००) चारुचंपकमालाढ्या, चमिताशेषदुष्कृता ॥ ६० चिदाकाशवहा, चिन्त्या, चंचच्चामरवीजिता, चोरिताशेषवृजिना, चरितशेषमंडला ॥ ६१ ॥ छेदिताखिलपापौघा, छद्मघ्नी (१०) छलहारिणी, छन्न त्रिविष्टतला, छोटिताशेषबंधना ॥ ६२ ॥ छुरितामृतधारौघा, छिन्नैना, छंदगामिनी, छद्मकृतमरालौघा, छटीकृतनिजामृता ॥ ६३ ॥ जाह्नवी, ज्या, (२०) जगन्मातजय्या, जंघालवीचिका, जया, जनार्दनप्रीता, जुषणीया, जगद्धिता ॥ ६४ ॥ जीवजीवनप्राणा, जगत् (३०) ज्येष्ठा, जगन्मयी, जीवजीवातुलतिका, जन्मिजन्मनिर्हिणी, ॥ ६५ ॥ जाड्यविध्वंसनकरी, जगद्योनि, जलाविला, जगदानंदजननं जलजा, जलजेक्षणा (४०) ॥ ६६ ॥ जनलोचनपीयूषा, जटातटविहारिणी, जयन्ती, जंजपूकघ्नी, जनितज्ञानविग्रहा ॥ ६७ ॥ झल्लरीवाद्यकुशला, झलज्झाल जलावृता, झिंटीशवंद्या, झांकारकारिणी, झर्झरावती (५०) ॥ ६८ ॥ टीकिखिलपाताला, टंकिकैनोद्रिपाटने, टंकारनृत्यकल्लोला, टीकनीयमहातटा, ॥ ६९ डंबरप्रवहा, डीनराजहंसकुलाकुला, डमड्डुमरुहस्ता, डामरोक्तमहांडका ॥ ७० ढौकिताशेषनिर्वाणा, ढक्कानादचलज्जला, (६०) ढुंढिविघ्नेशजननी, ढणढ्ढणितपातक ॥ ७१ ॥ तर्पणी, तीर्थतीर्था, त्रिपथा, त्रिदशेश्वरी, त्रिलोकगोत्री, तोयेशी, त्रैलोक्यपरिवन्दिता ॥ ७२ ॥ तापत्रितयसंहर्त्री, (७०) तेजोबलविवर्धिनी, त्रिलोकतारिणी, तारा, तारापतिकरार्चिता ॥ ७३ ॥ त्रैलोक्यपावनी, पुण्या, तुष्टिदा, तुष्टिरूपिणी, तृष्णाछेत्री, तीर्थमाता, (८०) त्रिविक्रमपदोद्भवा ॥ ७४ ॥ तपोमयी तपोरूपा, तपस्तोमफलप्रदा, त्रैलोक्यव्यापिनी, तृप्ति, तृप्तिकृत्, तत्त्वरूपिणी ॥ ७५ त्रैलोक्यसुन्दरी, तुर्या (९०) तुर्यातीतफलप्रदा, त्रैलोक्यलक्ष्मी, त्रिपदी, तथ्या तिमिरचन्द्रिका ॥ ७६ ॥ तेजोगर्भा, तपःसारा, त्रिपुरारिशिरोगृहा, त्रयी, स्वरूपिणी तन्वी (४००) तपनांगजभीतिनुत् ॥ ७७ ॥ तारि, तरणिजामित्र, तर्पितार्पूर्वजा, तुलाविरहिता, तीव्रपापतूलतनूनपात् ॥ ७८ ॥ दारिद्र्यदमनी, दक्षा दुष्प्रेक्षा, दिव्यमंडना, (१०) दीक्षावती, दुरावाप्या, द्राक्षा मधुरवारिभृत ॥ ७९ दर्शितानेककुतुका, दुष्टदुर्जयदुःखहृत, दैन्यहृत्, दुरितघ्नी, दानवारि पदाब्जजा ॥ ८० ॥ दंदशूकविषघ्नी, दारिताघौघसंतति (२०) द्रुता, देवद्रुमच्छन्ना, दुर्वारा विघातिनी ॥ ८१ ॥ दमग्राह्या, देवमाता, देवलोकप्रदर्शनी, देवदेवप्रिया, देवी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दिक्पालपददायिनी ॥ ८२ ॥ दीर्घायुःकारिणी (३०) दीर्घा, दोग्ध्री, दूषणवर्जिता दुग्धाम्बुवाहिनी, दोह्या, दिव्या, दिव्यगतिप्रदा ॥ ८३ ॥ द्युनदी, दीनशरण, देहिदेह-निवारिणी (४०) द्राघीयसी, दाघहंत्री, दितपातकसंतति ॥ ८४ ॥ दूरदेशान्तर-चरी, दुर्गमा, देववल्लभा, दुर्वृत्तघ्नी, दुर्विगाह्या, दयाधारा, दयावती (५०) ॥ ८५ ॥ दुरासदा, दानशीला, द्राविणी, द्रुहिणस्तुता, दैत्यदानवसंशुद्धिकर्त्री, दुर्बुद्धिहारिणी, ॥ ८६ ॥ दानसारा, दयासारा, द्यावाभूमिविगाहिनी, दृष्टादृष्टफलप्राप्ति, (६०) देवतावृन्दवन्दिता ॥ ८७ ॥ दीर्घव्रता, दीर्घदृष्टि, दीप्ततोया दुरालभा, दंडयित्री, दण्डनीति, दुष्टदंडधरार्चिता ॥ ८८ ॥ दुरोदरघ्नी, दावार्चि, (७०) द्रवद्रव्यैक-शेवधि, दीनसंतापशमनी, दात्री, दवथुवारिणी ॥ ८९ ॥ दरीविदारणपरा, दान्ता, दान्तजनप्रिया, दारिताद्रितटा, दुर्गा, (८०) दुर्गारण्यप्रचारिणी ॥ ९० ॥ धर्म द्रवा, धर्मधुरा, धेनु, धीरा, धृति, ध्रुवा, धेनुदानफलस्पर्शा, धर्मकामार्थमोक्षदा ॥ ॥ ९१ ॥ धर्मोर्मिवाहिनी, (९०) धुर्या, धात्री, धात्रीविभूषणा, धर्मिणी, धर्म-शीला, धन्विकोटिकृतावना ॥ ९२ ॥ ध्यातृपापहरा, ध्येया, धावनी, धूतकल्मषा (५००) धर्मधारा, धर्मसारा, धनदा, धनवर्धिनी ॥ ९३ ॥ धर्माधर्मगुणच्छेत्री धत्तूरकुसुमप्रिया, धर्मेशी, धर्मशास्त्रज्ञा, धनधान्यसमृद्धिकृत् ॥ ९४ ॥ धर्मलभ्या (१०) धर्मजला, धर्मप्रसवधर्मिणी, ध्यानगम्यस्वरूपा, धरणीधातृपूजिता ॥ ॥ ९५ ॥ धूर्, धूर्जटिजटासंस्था, धन्या, धी, धारणावती, (२०) नंदा, निर्वाण जननी, नन्दिनी, नुन्नपातका ॥ ९६ ॥ निषिद्धविघ्ननिचया, निजानन्दप्रकाशिनी नभोंगणचरी, नूति, नम्या, नारायणी (३०) नुता ॥ ९७ ॥ निर्मला, निर्मला-ख्याना, नाशिनी, तापसंपदा, नियता, नित्यसुखदा, नानाश्चर्यमहानिधि ॥ ९८ ॥ नदीनदसरोमाता, नायिका (४०) नाकदीर्घिका, नष्टोद्धरणधीरा, नंदनानन्द-दायिनी ॥ ९९ ॥ निर्णिक्ताशेषभुवना, निःसंगा, निरुपद्रवा, निरालंबा, निष्प्रपंचा, निर्णाशितमहामला (५०) ॥ १०० ॥ निर्मलज्ञानजननी, निःशेषप्राणि-तापहृत्, नित्योत्सवा, नित्यतृप्ता, नमस्कार्या, निरंजना ॥ १ ॥ निष्ठावती, निरातंका, निर्लेपा निश्चलात्मिका (६०) निरवद्या, निरीहा, नीललोहितमूर्धगा ॥ २ ॥ नन्दिभृंगिगणस्तुत्या नागा, नन्दा, नगात्मजा ॥ निष्प्रत्यूहा, नाकनदी, निरयार्णव-दीर्घनौः (७०) ॥ ३ ॥ पुण्यप्रदा, पुण्यगर्भा, पुण्या, पुण्यतरंगिणी, पृथुः, पृथुफला पूर्णा, प्रणतार्तिप्रभंजनी ॥ ४ ॥ प्राणदा, प्राणिजननी (८०) प्राणेशी, प्राणरूपिणी,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पद्मालया, पराशक्ति, पुराजित्परमप्रिया ॥ ५ ॥ परापरफलप्राप्ति, पावनी, पु
स्विनी, परानंदा (९०) प्रकृष्टार्था, प्रतिष्ठा, पालनी, परा ॥ ६ ॥ पुराणपद्धि
प्रीता प्रणवाक्षररूपिणी, पार्वती, प्रेमसंपन्ना, पशुपाशविमोचनी (६००) ॥ ७
परमात्मस्वरूपा परब्रह्मप्रकाशिनी, परमानन्दनिष्पन्दा, प्रायश्चित्तस्वरूपिणी ॥ ८
पानीयरूपनिर्वाणा, पारित्राणपरायणा, पापेन्धनदवज्वाला, पापारि; पापनामनुत् ॥ ९
परमैश्वर्यजननी (१०) प्रज्ञा, प्राज्ञा, परापरा, प्रत्यक्षलक्ष्मी, पद्माक्षी, परव्योम
मृतस्रवा ॥ ११० ॥ प्रसन्नरूपा, प्रणधि, पूता, प्रत्यक्षदेवता (२०) पिनाकि
परमप्रीता, परमेष्ठिकमंडलु ॥ ११ ॥ पद्मनाभपदार्घ्येण प्रसूता, पद्ममालि
परर्धिदा, पुष्टिकरी, पथ्या पूर्ति, प्रभावती ॥ १२ ॥ पुनाना (३०) पीतगर्भ
पापपर्वत नाशिनी, फलिनी, फलहस्ता, फुल्लाम्बुजविलोचना ॥ १३ ॥ फालिनि
महाक्षेत्रा, फणिलोकविभूषणा, फेनच्छलप्रणुन्नैना, फुल्लकैरवगंधिनी ॥ १४
फेनिलाच्छाम्बुधाराभा, (४०) फुडुचाटितपातका, फाणितस्वादुसलिला, फांटपद
जलाविला ॥ १५ ॥ विश्वमाता, निश्वेशी, विश्वा, विश्वेश्वरप्रिया, ब्रह्मण्या, ब्र
कृत्, ब्राह्मी (५०) ब्रह्मिष्ठा, विमलोदका ॥ १६ ॥ विभावरी, विरजा, विक्रान्तो
विष्टपा, विश्वमित्रा, विष्णुपदी, वैष्णवी वैष्णवप्रिया ॥ १७ ॥ विरूपाक्षप्रियकरी (६
विभूति, विश्वतोमुखी, विपाशा, वैबुधी, वेद्या, वेदाक्षररसस्रवा, ॥ १८ ॥ वि
वेगवती, वंद्या, बृंहणी (७०) ब्रह्मवादिनी, वरदा, विप्रकृष्टा, वरिष्ठा, विशोदि
॥ १९ ॥ विद्याधरी, विशोका, वयोवृन्दनिषेविता, बहूदका, बलवती (८
व्योमस्था, विबुधप्रिया ॥ १२० ॥ वाणी, वेदवती, वित्ता, ब्रह्मविद्या तरंगि
ब्रह्माण्डकोटिव्याप्ताम्बु, ब्रह्महत्यापहारिणी ॥ २१ ॥ ब्रह्मेशविष्णुरूपा, बु
(९०) विभववर्धिनी, विलासिसुखदा, वैश्या, व्यापिनी, नृषाराणि ॥ २२
वृषांकमौलिनिलया, विपन्नार्तिप्रभंजिनी, विनीता विनता, ब्रध्नतनया, (७०
विनयान्विता ॥ २३ ॥ विपंची, वाद्यकुशला, वेणुश्रुतिविचक्षणा, वचस्करी,
करी, बलोन्मूलितकल्मषा ॥ २४ ॥ विपाप्मा, विगतातंका, विकल्पपरिवर्जि
(१०) वृष्टिकर्त्री, वृष्टिजला, विधि, विच्छिन्नबन्धना ॥ २५ ॥ व्रतरूपा, वि
रूपा, बहुविघ्नविनाशकृत्, वसुधारा, वसुमती, विचित्रांगी (२०) विभा
॥ २६ ॥ विजया, विश्वबीज, वामदेवी, वरप्रदा, वृषाश्रिता, विषघ्नी, विज्ञानोर्म्यु
मालिनी ॥ २७ ॥ भव्या, भोगवती (३०) भद्रा, भवानी, भूतभाविनी भूतधा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भयहरा भक्तदारिद्र्यघातिनी ॥ २८ ॥ भुक्तिमुक्तिप्रदा, भेशी, भक्तस्वर्गापवर्गदा भागीरथी (४०) भानुमती, भाग्य, भोगवती भूति ॥ २९ ॥ भवप्रिया, भवद्वेष्ट्री, भूतिदा, भूतिभूषणा, भाललोचनभावज्ञा, भूतभव्यभवत्प्रभु (५०) ॥ १३० ॥ भ्रांतिज्ञानप्रशमनी, भिन्नब्रह्माण्डमण्डपा, भूरिदा, भक्तिसुलभा, भाग्यवद्दृष्टिगोचरी ॥ ३१ ॥ भंजितोपप्लवकुला, भक्ष्यभोज्यसुखप्रदा, भिक्षणीया, भिक्षुमाता, भावा (६०) भावस्वरूपिणी ॥ ३२ ॥ मन्दाकिनी, महानन्दा, माता, मुक्ति-तरंगिणी, महोदया, मधुमती, महापुण्या, मुदाकरी ॥ ३३ ॥ मुनिस्तुता (७०) मोहहन्त्री, महातीर्था, मधुस्रवा, माधवी, मानिनी, मान्या, मनोरथपथातिगा ॥ ३४ ॥ मोक्षदा, मतिदा, मुख्या, (८०) महाभाग्यजनाश्रिता, महावेगवती, मेध्या, महा-महिमभूषणा ॥ ३५ ॥ महाप्रभावा, महती, मीनचंचल—लोचना, महाका-रुण्यसंपूर्णा, महर्द्धि (९०) महोत्पला ॥ ३६ ॥ मूर्तिमत्, मुक्तिरमणी, मणि-माणिक्यभूषणा, मुक्ताकलाप नेपथ्या, मनोनयन नन्दिनी ॥ ३७ ॥ महापातक-राशिघ्नी, महादेवार्धहारिणी, महोर्मिमालिनी, मुक्ता, (८००) महादेवी, महोन्मनी, ॥ ३८ ॥ महापुण्योदयप्राप्या, मायातिमिरचन्द्रिका, महाविद्या, महामाया, महा-मेधा, महौषध ॥ ३९ ॥ मालाधरी, महोपाया, (१०) महोरगविभूषणा, महा-मोहप्रशमनी, महामंगलमङ्गला ॥ १४० ॥ मार्तण्डमण्डलचरी, महालक्ष्मी, मदो-ज्झिता, यशस्विनी, यशोदा, योग्या, युक्तात्मसेविता, (२०) ॥ ४१ ॥ योग-सिद्धिप्रदा, याज्या, यज्ञेशपरि पूरिता, यज्ञेशी, यज्ञफलदा, यजनीया, यशस्करी ॥ ४२ ॥ यमिसेव्या, योगयोनि, योगिनी, (३०) युक्तबुद्धिदा, योगज्ञानप्रदा, युक्ता, यमाद्यष्टांगयोगयुक् ॥ ४३ ॥ यंत्रिता वौघसंचारा, यमलोकनिवारिणी, यातायातप्रशमनी, यातनानामकृंतनी ॥ ४४ ॥ यामिनीशहिमाच्छोदा, युगधर्मविव-र्जिता (४०) रेवती, रंतिकृत, रम्या, रत्नगर्भा, रमारतिः ॥ ४५ ॥ रत्नाकरप्रेमपात्र, रसज्ञा, रसरूपिणी, रत्नप्रासादगर्भा (५०) रमणीयतरंगिणी ॥ ४६ ॥ रत्नार्ची, रुद्ररमणी, रागद्वेषविनाशिनी, रमा, रामा, रम्यरूपा, रोगिजीवातुरूपिणी, ॥ ४७ ॥ रुचिकृत, रोचनी (६०) रम्या, रुचिरा, रोगहारिणी, राजहंसा, रत्नवती, राजत्क-ल्लोलराजिका ॥ ४८ ॥ रामणीयकरेखा, रुजारी, रोगरोषिणी, राका (७०) रंकार्तिशमनी, रम्यारोलंबहारिणी ॥ ४९ ॥ रागिणी, रंजितशिवा, रूपलावण्य-रोवधि; लोकप्रसू, लोकवंद्या, लोलत्कल्लोलमालिनी ॥ १५० ॥ लीलावती, (८०)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लोकभूमि, लोकलोचनचन्द्रिका, लेखस्रवन्ती, लटभा, लघुवेगा, लघुत्वहृत्, ॥ ५१ ॥
लास्यत्तरंगहस्ता; ललिता, लयभंगिगा, लोकबन्धु, लोकधात्री, लोकोत्तरगुणोर्जिता॥५२॥
लोकत्रयहिता, लोका, लक्ष्मी, लक्षणलक्षिता, लीलालक्षितनिर्वाणा, लावण्यामृत-
वर्षिणी ॥ ५३ ॥ वैश्वानरी (९००) वासवेड्या, बन्ध्यत्वपरिहारिणी, वासुदेवांघ्रि-
रेणुघ्नी, वज्रिवज्रनिवारिणी ॥ ५४ ॥ शुभावती, शुभफला, शान्ति, शान्ति-
वल्लभा, शूलिनी, शैशववया, (१०) शीतलामृतवाहिनी ॥ ५५ ॥ शोभावती,
शीलवती, शोषिताशेषकिल्विषा, शरण्या, शिवदा, शिष्टा, शरजन्मप्रसू, शिव-
॥ ५६ ॥ शक्ति (२०) शशांकविमला, शमनस्वसृसंमता, शमा, शम-
मार्गघ्नी, शितिकंठमहाप्रिया ॥ ५७ ॥ शुचि, शुचिकरी, शेषा, शेषशायि-
पदोद्भवा, श्रीनिवासश्रुति (३०) श्रद्धा, श्रीमती; श्री, शुभव्रता, ॥ ५८ ॥ शुद्धिदा,
शुभावर्ता, श्रुतानन्दा, श्रुतिस्तुति, शिवेतरघ्नी, शवरी (४०) शाम्बरीरूपधारिणी॥५९॥
श्मशानशोधनी, शान्ता, शश्वत्, शतधृतिष्टुता, शालिनी, शालिशोभाढ्या, शिति-
वाहनगर्भभृत् ॥ १६० ॥ शंसनीयचरित्रा, शातिताशेषपातका (५०) षड्गुणैश्वर्य-
सम्पन्ना, षडंगश्रुतिरूपिणी ॥ ६१ ॥ षंढताहारिसलिला, ष्ट्यायन्नदनदीशता, सर्व-
द्वरा, सुरसा, सुप्रभा, सुरदीर्घिका ॥ ६२ ॥ स्वःसिन्धु, सर्वदुःखघ्नी (६०) सर्व-
व्याधिमहौषध, सेव्या, सिद्धि, सती, सूक्ती, स्कन्दसू, सरस्वती ॥ ६३ ॥ संसा-
रिणी, स्तुत्या, स्थाणुमौलिकृतालया (७०) स्थैर्यदा, सुभगा, सौख्या, सर्व-
सौभाग्यदायिनी ॥ ६४ ॥ स्वर्गनिःश्रेणिका, सूक्ष्मा, स्वधा, स्वाहा, सुधाजल-
समुद्ररूपिणी (८०) स्वर्ग्या, सर्वपातकवैरिणी ॥ ६५ ॥ स्मृताघहारिणी, सीता-
संसाराब्धितरंडिका, सौभाग्यसुन्दरी, सन्ध्या, सर्वसारसमन्विता ॥ ६६ ॥ हरिप्रिया,
हृषीकेशी (९०) हंसरूपा, हिरण्मयी, हृताघसंघा, हितकृत्, हेला, हेलाधगर्वघ्नी
॥ ६७ ॥ क्षेमदा, क्षालिताघौघा, क्षुद्रविद्रावणी, क्षमा (१०००) हे कलशोद्भव
गंगाके इस सहस्रनाम कीर्तन करनेसे, नर गंगास्नानके सम्यक् फलको प्राप्त करलेताहै
॥ ६८ ॥ यह सहस्रनाम सर्वपाप विनाशक, समस्तविघ्ननिवारक, समग्र स्तो-
पाठसे श्रेष्ठ, एवं अशेष पवित्रोंका भी पावन है ॥ ६९ ॥ श्रद्धापूर्वक पाठ करने
यह अभीष्ट फलका दायक और चतुर्वर्गके समृद्धिका कारकहै हे मुने ! इसका एकवा
पाठ करनेसे एक यज्ञका फल (प्राप्त) होताहै ॥ १७० ॥ जो सब तीर्थोंमें स्नान
और सब यज्ञोंमें दीक्षितहो, उसके लिये जो फल निर्दिष्टहै, वही फल इस स्तोत्र

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

त्रिकाल पढनेसे प्राप्त होताहै ॥ ७१ ॥ ब्रह्मन् ! समस्त व्रतोंके पूर्णरूपसे आचरण करनेमें जो फल होताहै, नियम पूर्वक इस स्तोत्रके त्रिसन्ध्य पठनसे भी वही फल मिल जाताहै ॥ ७२ ॥ मुने ! कहीं किसीभी जलाशयमें स्नान करनेके समय यदि कोई इसे पढे तो त्रिपथगा गंगा वहां पर अवश्यही प्राप्त होजातीं हैं ॥ ७३ ॥ इस स्तोत्रके पाठसे कल्याणेच्छु जनको कल्याण, धनार्थीको धन, कामनावालेको मनोरथ और मुमुक्षुको मोक्षका लाभ होताहै ॥ ७४ ॥ पवित्रचित्त होकर श्रद्धा पूर्वक एकवर्ष त्रिकाल पाठसे अपुत्र जनभी ऋतुकालमें संगम करनेसे पुत्रवान् होजाताहै ॥ ॥ ७५ ॥ ऋषे ! जो कोई श्रद्धासे इस गंगा सहस्रनामका जप करे, उसे न अकाल मृत्यु होवे, न अग्नि चोर और सर्पादिका भय प्राप्त होवे ॥ ७६ ॥ गंगाके सहस्र नामका जप करके ग्रामान्तरमें यात्रा करनेसे, वहां पर यात्रीकी कार्यसिद्धि होतीहै और निर्विघ्नता पूर्वक अपने घरको लौट आताहै ॥ ७७ ॥ जब मनुष्य इस स्तोत्रका पाठ करके किसी दूसरे स्थानको जावे तो तिथि, वार, नक्षत्र और योगका दोष कुछ भी नहीं कर सकता ॥ ७८ ॥ यह गंगाका सहस्रनाम, पुरुषोंका आयुष्यवर्द्धक, आरोग्य जनक, सर्वोपद्रव नाशक एवं समस्त सिद्धि कारकहै ॥ ७९ ॥ सहस्र जन्मान्तरोंके उपार्जित पाप, गंगाके सहस्रनाम जपनेहीसे क्षय होजातेहैं ॥ १८० ॥ मुने ! ब्रह्मघाती, मद्यप, सुवर्णचोर, गुरुदाराभिगामी, इन चारों पापियोंका संसर्गी, भ्रूण (बाल) हंता, मातृघाती, पितृहा ॥ ८१ ॥ विश्वासघाती, विषदाता, कृतघ्न, मित्रघाती, आगलगानेवाला, गोवधकर्ता, गुरुद्रव्यतस्कर ॥ ८२ ॥ कोईभी सब महापातकोंसे युक्त अथवा उपपातकोंसे परिपूर्ण क्यों न हो, परन्तु श्रद्धापूर्वक इस गंगासहस्रनामके पाठ करनेसे उन सबसे मुक्त होजाताहै ॥ ८३ ॥ आधि व्याधियोंसे प्रपीडित, घोर तापसे ग्रस्तभी मनुष्य, इस स्तवके कीर्तन करनेसे समग्र दुःखोंसे छूट जाताहै ॥ ८४ ॥ एकाग्रचित्त और भक्तितत्पर होकर वर्षमात्र इस स्तोत्रके पाठ करनेसे अभीष्ट सिद्धिको पाताहै और समस्त पापोंसेभी छूट जाताहै ॥ ८५ ॥ सन्देह ग्रस्त चित्त, धर्मविद्वेषी, दांभिक और हिंस्रक जनकाभी अन्तःकरण धर्म परायण हो जाताहै ॥ ८६ ॥ वर्णाश्रम पथाचारी और कामक्रोधसे रहित [illegible] जो फल लाभ करताहै, इस स्तोत्रके कीर्तन करनेसे भी वही फल प्राप्त हो[illegible] ८७ ॥ दशसहस्र गायत्री जप करनेमें जो फल मिलताहै, इस स्तोत्रके [illegible] एक बार पढनेहीमें वह सब फल प्राप्त होजाताहै ॥ ८८ ॥ सुव्र[illegible]को

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गोदान करके जो पुण्य प्राप्त करतेहैं वह समस्त पुण्य इस स्तवराजके एकबार मात्र
करनेसे प्राप्त होताहै, ऐसा (शास्त्रोंमें) कहा गयाहै ॥ ८९ ॥ पुरुषश्रेष्ठ, यावज्जी
गुरुकी शुश्रूषा करके जो पुण्य उपार्जन करताहै, वर्षभर त्रिकाल इसस्तोत्रके जपसे
उसी पुण्यका भागी होताहै ॥ १९० ॥ वेद पारायण करनेका जो पुण्य शास्त्रोंमें
कहा जाताहै, वही पुण्य छःमास पर्यन्त त्रिसन्ध्य इस स्तोत्रके परिकीर्तनसे प्राप्त होता
है ॥ ९१ ॥ प्रतिदिन इस गंगा स्तवराजके अनुशीलन करनेसे शिवकी भक्ति मिलती
है, अथवा विष्णुका भक्त होजाताहै ॥ ९२ ॥ जो कोई प्रत्यह गंगाके सहस्रनाम
पाठकरे, तो गंगादेवी सर्वदा उसके समीपमें सहचरी होकर रहें ॥ ९३ ॥ इस जाह्न
स्तोत्रके पाठ करनेसे (मनुष्य) सर्वत्र पूज्य, सर्वत्र विजयी और सर्वत्र सुखभो
होताहै ॥ ९४ ॥ जो व्यक्ति इस स्तुतिका कीर्तन करे, उसे सदाचारी, सर्वदा पवि
और समस्त देवतोंका पूजक समझना चाहिये ॥ ९५ ॥ उस जनकी तृप्ति करनेमें
जाह्नवी स्वयं तृप्त होजातीहैं, इसमें सन्देह नहींहै, अतएव सब प्रकारसे गंगाके भक्त
समर्चन करना चाहिये ॥ ९६ ॥ जो कोई इस गंगा स्तवराजको श्रवण करे, लिखे
पाठ करे, अथवा दंभलोभसे रहित होकर गंगाके सेवकोंको सुनावे ॥ ९७ ॥
कायिक वाचिक मानसिक इन त्रिविध पापोंसे छूट कर तुरत निष्पाप होजाताहै और
पितृगणका प्रेमपात्र होताहै ॥ ९८ ॥ और भी समस्त देवतोंका प्रिय होताहै, एवं
ऋषिगण उसे मानने लगतेहैं, अन्तमें वह विमानपर चढ स्वर्गीय शतशः स्त्रियोंसे
वृतहोकर ॥ ९९ ॥ दिव्य भूषणोंको पहिर एवं दिव्य भोगोंसे सम्पन्न होकर नन्द
प्रभृति वनोंमें स्वेच्छानुसार देवतोंके समान प्रमुदित होताहै ॥ २०० ॥ विशेष
श्राद्धके समय जब पात्रीय ब्राह्मणभोजन करने लगें तब पितरोंके तृप्तिकारक इस
स्तोत्रके जप करते रहनेसे ॥ १ ॥ पात्रमें जितनेही अन्नकण एवं जलकण गि
रहतेहैं, उतने वर्षपर्यन्त स्वर्गलोकमें पितरलोग आनन्द करते हैं ॥ २ ॥ गंगा
पिंडदान करनेसे पितृगण जैसे तृप्त होतेहैं, श्राद्धमें इस स्तोत्रके श्रवणसेभी वैसीही
लाभ करतेहैं ॥ ३ ॥ जिसके गृहमें यह स्तोत्र लिखित होकर पूजाजाताहै वहां
पापका भय नहीं रहता और वह भवन सर्वदैव पवित्र रहताहै ॥ ४ ॥ अगस्त्यजी
बहुत कहां तक कहें, मेरा यह निश्चित वचन सुनो, इस विषयमें सन्देह नहीं करना
चाहिये; क्योंकि सन्देह युक्त मनुष्यको फल नहीं मिलता ॥ ५ ॥ पृथिवीमें
सब नाना प्रकारके स्तोत्र और मन्त्रजालहैं वे सबी इस गंगास्तवराजके सम

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(कदापि) नहींहै ॥ ६ ॥ जो कोई जन्मभर इस गंगा सहस्र नामका पाठ करें, तो वह मगध देशमेंभी मरनेपर फिर गर्भमें प्रवेश नहीं करें ॥ ७ ॥ जो व्यक्ति, नित्य नियमपूर्वक इस उत्तम स्तोत्रका पाठ करे, वह अन्यत्र कहींभी मृत्यु पाने पर गंगातीरमें मृत्युगत (प्राणी) के समान होवे ॥ ८ ॥ पूर्व कालमें भगवान् शिवने निजभक्त विष्णुसे मुक्तिके बीजरूप अक्षरोंके आश्रय इस रमणीय स्तोत्रराजको कहाथा ॥ ९ ॥ (भगवती भागीरथी) गंगाके स्नानका प्रतिनिधि वही स्तोत्र मैंने (आज तुमसे) कहा, अतएव जो बुद्धिमान् जन गंगास्नानकी अभिलाषा रखताहो वह इसी स्तोत्रका पाठ करे ॥ २१० ॥

चौ०–अति पवित्र गंगाके नामा। हैं सहस्र जे पूरक कामा ॥
अकारादि क्रमते ते वरने। कहत सुनत सब पातक हरने ॥ १ ॥

दोहा–सहस नाम नहिं लखि पडैं, कतहुँ पुरानन माहिं।
गंगाके हैं जो कहे, जेहि सुनि पाप पराहिं ॥ २ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां गंगासहस्रनामस्तोत्र-वर्णनं नामैकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥

त्रिंशतम अध्याय।

धनंजय कथा सहित काशी रहस्य।

स्वामि कार्तिक बोले–हे महाभाग! अगस्त्य! श्रवण करो, राजर्षि प्रवर वह राजा भगीरथ, ब्रह्मशापानलमें दग्ध अपने पितरोंके उद्धारकी इच्छासे श्रीमहादेवकी आराधना कर घोर तपस्याके द्वारा इस भूमिपर त्रिपथगाको ले आये ॥ १ ॥ २ ॥ तत्पश्चात् तीनोंही लोकोंकी हितकामनासे उस नरपतिने जहां मणिकर्णिकाथी वहां पर गंगाका आनयन किया ॥ ३ ॥ जो लीलामात्रसे मोक्षका दाता शम्भु भगवान्का आनन्द कानन, विष्णुदेवकी चक्र पुष्करिणी और परब्रह्म स्वरूपका एकमात्र प्रधान क्षेत्रहै ॥ ४ ॥ एवं निर्वाण पदके प्रकाशन करनेसे जो काशी नामसे प्रसिद्ध नगरीहै, दिलीपनन्दन भगीरथने अग्रसर होकर उस गंगाको वहां पर पहुंचादिया ॥ ५ ॥ मुने! कभींभी महादेवके त्यागन करनेसे वह अविमुक्त क्षेत्र पूर्वहीसे अमूल्यथा, फिर गंगाके प्राप्त होजानेसे तो मानो उत्तम (चोखे) सुवर्णमें वारितर (आबदार) हीराका संगम होगयाहै (तब

CC0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

क्या पूछनाहै ?), (उसमेंभी) चक्रपुष्करिणी तीर्थ पूर्वहीसे कल्याणोंका स्थान
॥ ६ ॥ ७ ॥ अनंतर शिवके मणिमय कर्णभूषणसे और भी अधिक श्रेष्ठ होगया, स
एव उस शिवसदन आनन्द कानन अविमुक्त क्षेत्रमें ॥ ८ ॥ सर्वदैवसे मुक्ति
सिद्धि रहने परभी गंगाके संगमसे तो औरभी अधिक होगयी, जबसे गंगा (जो
मणिकर्णिकामें समागत हुई; ॥ ९ ॥ तबसे वह क्षेत्र, देवतोंकोभी दुर्लभ हो
है । जीव अनेक प्रकारके शुभ और अशुभ कर्मोंको कर ॥ १० ॥ काशीमें
त्याग करनेसे क्षणमात्रमें कर्मबंधनको काट मोक्षपदको प्राप्त होजाताहै । वह
वेदांत वेद्य ब्रह्मके निदिध्यासनके विना ॥ ११ ॥ और विनाही सांख्य योगके क
मरणमात्रसे मुक्ति लाभ होताहै । कुम्भज ! वहांतो कर्मबन्धनके उच्छेदक (तत्
ज्ञानकाभी कोई प्रयोजन नहींहै ॥ १२ ॥ क्योंकि भगवान् चन्द्रशेखरके प्रसा
काशीमें मृत होतेही अमृत पद प्राप्त होजाताहै । चाहे प्रयत्न पूर्वकहो, अ
अनायासही क्यों नहो; कालधर्मानुसार शरीर त्याग करके ॥ १३ ॥ तारक म
उपदेशसे काशीमें मरा कि मुक्त हुआ । अनेक जन्मोंके संसिद्ध प्रकृति जनित
रूपी बंधनमें फंसा हुआभी (जीव) ॥ १४ ॥ असि (अस्सीनदी—तलवार
संगमके योगप्राप्त होनेहीसे काशीमें मरकर मोक्षको प्राप्त करलेताहै । इस क
देह त्यागही दान, देहत्यागही तपस्या, और देह त्यागही योगहै, (क्योंकि)
पर इसीसे मोक्ष लाभ होताहै । काशीमें बहुत बडाभी पातकी उत्तर वाहिनी गं
पाकर ॥ १५–१६ ॥ खेलवाडसे अपने शरीरको त्यागतेही विष्णुके परमपदको
होजाताहै । पूर्वकालमें यम इन्द्र और अग्नि प्रभृति देवतोंने सबी लोगोंको
मार्गके ओर उन्मुख देखकर काशीपुरीका इस प्रकारसे रक्षण विधान किया । (
उन देवगणने असद्बुद्धि विनाशिनी, दुष्टप्रवेश निवारिणी महातलवार
असिनदीको बनाया और क्षेत्र विघ्न विदारिणी, एवं दुर्वृत्तजनकी बडी प्रवृत्तिको रो
वाली वरणा नदीका निर्माण करके क्षेत्रके दक्षिण और उत्तर भागमें स्थापन कर
॥ १७–१८–१९–२० ॥ इस रीतिपर क्षेत्रके मुक्तिदानकी रक्षा करके
परम प्रसन्न हुये । अनन्तर भगवान् शशिशेखरने स्वयं काशीक्षेत्रके
(पश्चिम) भागकी रक्षा करने लिये देहली विनायकको आज्ञा दी ये लोग (
वरणा और देहली विनायक) जिने स्वयं कृपाशील विश्वेश्वर प्रवेशकी आ
देतेहैं, उनीकों काशीमें आने देतेहैं; दूसरोंको कभी घुसने नहीं देते । इस लि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पर काशीके ऊपर भक्तिवर्द्धक, परम आश्चर्यकर एक पुराना इतिहास मैं कहताहूं (उसे श्रवण करो) ॥ २१–२२–२३ ॥ स्कन्दने कहा–(अगस्त्यजी) दक्षिण समुद्रके तटपर सेतुबंधके समीपहीमें माताकी भक्तिसे पूर्ण एक धनंजय नामक बनियां रहताथा ॥ २४ ॥ वह कृष्णका परम सेवक, पुण्यमार्गानुसार धन उपार्जन करता हुआ धनके द्वारा अर्थिगणका सन्तोष साधन करताथा, और याचक लोग अपने अभीष्ट लाभसे सन्तुष्ट होकर उसके यशोराशिको फैलाते रहे ॥ २५ ॥ धनंजय, बडी सम्पत्तिसे समुन्नत होनेपरभी विनयसे अवनतकन्धर, और समस्त गुणग्रामोंका आकर होकरभी गुणिगणमें अपना आकार छिपाये रखताथा ॥ २६ ॥ रूप और सम्पत्तिके द्वारा उदार होनेपरभी वह परदारामें पराङ्मुखथा, एवं समस्त कलाओंसे परिपूर्ण रहनेपर भी उसमें सदैव किञ्चिन्मात्र कलंक नहींथा ॥ २७ ॥ यद्यपि उसकी सच्चझूठ मिलीहुई वाणिज्य वृत्तिथी, पर वह प्रायः सत्यहीको प्यार करताथा, स्वयं हीनवर्ण होकरभी वह संसारमें उत्तमवर्णोंके द्वारा वर्णन किया जाताथा ॥ २८ ॥ सुकृती धनंजन सदाचरणगामी होनेपरभी सुखयानहीपर विचरण करता था यद्यपि वह मेधावी स्वयं (धनसे) दरिद्र नहींथा परन्तु उसकी बुद्धि पापमें दरिद्रहीथी ॥ २९ ॥ ऐसे गुणसम्पन्न धनंजयकी अत्यन्त वृद्धा माता व्याधियोंसे पीडितहो, कदाचित् काल पाकर मृत्युको प्राप्तहुई ॥ ३० ॥ उसकी माताने (शरत्ऋतुके) मेघच्छायाके समान अतिचंचल एवं वर्षाकालीन नदीके ओघसदृश अस्थिर यौवन अवस्था पाकर अपने पतिको वंचित कियाथा ॥ ३१ ॥ जो नारी दो चार दिन रहनेवाले यौवन मदमें मत्तहोकर मोहवश भर्ताको वंचित करतीहै, वह अक्षय नरकमें पडतीहै ॥ ३२ ॥ स्त्रियोंके शीलभंग होनेसे धर्मात्माभी उसका स्वामी बडे दुःखसे उपार्जित स्वर्गसे पतित होजाताहै, अंतएव स्त्रियोंको अपने चारित्र्य दोषकी रक्षा करना उचितहै ॥ ३३ ॥ (नहीं तो) वह दुर्बुद्धिमती स्त्री विष्ठागर्त नामक नरकमें गिरतीहै, तदनंतर प्रलय पर्यन्त ग्रामसूकरी होतीहै ॥ ३४ ॥ अथवा वृक्षमें अधोमुख लटकनेवाली, चमगेदुरी होके अपनीही विष्ठा खातीहै, किंवा पेडके खोंढरेमें रहनेवाली दिनमें अंधी उलूकी होतीहै ॥ ३५ ॥ इस लिये स्त्रीको बडेही प्रयत्न पूर्वक सुखके आभासमात्र परपुरुषके दुःस्पर्शसे पुण्य भाजन अपने इस शरीरकी सर्वथा रक्षा करनाही विधेयहै ॥ ३६ ॥ क्या पतिव्रता नारीने भर्ताके आधीन किये हुए अपने इसी (भौतिक) शरीरसे आज्ञा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देकर उदय होते हुए सूर्यनारायणको नहीं रोक दियाथा ? * ॥ ३७
अत्रिमुनिकी पत्नी परम पतिव्रता अनसूयाने भर्ताहीके भक्ति प्रभावसे क्या वेदवि
स्वरूप सोम, दत्तात्रेय, एवं दुर्वासाको अपने गर्भमें नहीं धारण किया ? ॥ ३८
स्त्री सतीत्वबलसे इस लोकमें विपुल कीर्ति तथा स्वर्गमें अक्षय वास, एवं लक्ष्मी देवी
साथ सखीभावको प्राप्त करतीहै ॥ ३९ ॥ सो वह धनंजयकी जननी दुर्वृत्तिसे
तन पतिव्रता धर्मको तिलांजलि देकर स्वैरचारिणी होनेसे मरनेपर नरकगामि
हुई ॥ ४० ॥ मुनिवर ! धनञ्जय (ऐसी दुश्चरित्राका पुत्र होने परभी भाग्यव
किसी शिवयोगीकी सङ्गति पाकर तपोबलसे वैसा धर्म तत्पर होगयाथा ॥ ४१
अनंतर माताकी मृत्यु होजानेपर जननीभक्तिपरायण धर्मात्मा धनंजय अ
माताके हड्डियोंको लेकर ॥ ४२ ॥ पहिले तो उसे पंचगव्यसे धोकर पंचामृतो
वाया, फिर यक्ष कर्दमका लेपनकर उत्तम पुष्पोंसे पूजा किया॥ ४३॥ अनन्तर नैनूमें
पट्टवस्त्रसे बांधा, फिर कपासके कपडेसे वेष्टित कर मजीठके रंगे हुए वस्त्रका वेष्टन लगाया
उसके ऊपरसे नैपाली कंबलसे ढांपकर शुद्ध मृत्तिकासे लिप्तकर उस बनियाने मा
हड्डियोंको एक तामेके संपुट (डब्बा) में रखकर गंगामें प्रक्षेप करनेके
सेतुबंधसे उत्तरदिशाके मार्ग द्वारा प्रस्थान किया ॥ ४५ ॥ वह मार्गमें नी
तियोंका छूआछूत बंचाता हुआ पवित्रतापूर्वक, रात्रिमें भूमिशयन इत्यादि
रहा इससे धनञ्जयको ज्वर आगया ॥ ४६ ॥ तब तो उन सब सामग्रियोंको
अकेले मार्गका चलना कठिन (दुष्वार) समझ उचित बेतन देकर एक भार
(मजूर) को संग लेलिया, हे कुंभज ! बहुत कहांतक कहें बडे कष्टसे वह
पहुंचा ॥ ४७ ॥ अनन्तर धनंजय वहां पहुंच जानेपर अपने वस्तुओंके
उसी भारवाहीको नियुक्तकर आप आपण (हाट बाजार) में कुछ भोजन इत्यादि

---

* टीका—एकबार राजपुरुषलोग चोरोंके पीछे दौडते हुए मांडव्य ऋषिके आश्रममें गये वहांसे चोरोंके
मौनव्रतधारी तपस्वी मांडव्यको भी पकडलाकर राजाकी आज्ञासे सूली पर चढादिया, अनंतर रातमें
भिलाषी अपने पतिको कांधेपर लेकर उस वेश्याके घर पहुंचानेको जाती हुई किसी पतिव्रता स्त्रीके
जानते टक्कर लगजानेसे पीडित होकर ऋषिने कहा कि जिसके प्रियकरनेकी इच्छासे तूने ऐसा किया
सूर्योदय होते हुए मरजावे, तब उस सतीने कहा कि यदि मैं पतिव्रता होऊंगी तो सूर्यही कैसे उदय
फिर उसकी आज्ञानुसार सूर्य उदय नहीं हुए, तदनंतर सूर्योदय न होनेसे सृष्टिलोप देखकर ब्रह्मा विष्णु
अत्रिमुनिकी पत्नी अनुसूयासे उनके गर्भमें पुत्र होना स्वीकार कराया उस पतिव्रताकोप्रसन्न कर सूर्यको
कराया—मार्कण्डेय पुराणकी कथाहै ॥ ३७ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सामग्री लेनेके लिये चला गया ॥ ४८ ॥ इसी अवसरमें वह भारवाही निर्जन (निराला) देखकर उसकी गठरीमेंसे वही तामेका डब्बा लेकर उसे (बहुमूल्य) धन समझ भाग गया ॥ ४९ ॥ पश्चात् वह वणिक धनञ्जय वासस्थान (डेरा) पर आकर उस भारवाहीको न देख झटपट अपनी गठरीको देखने लगा तो उसे तामेके डब्बेसे शून्य पाया ॥ ५० ॥ तब तो वह हाय ! हाय ! करता हुआ छाती पीटकर कातरभावसे बहुतही रोदन करनेलगा, अन्ततो गत्वा भारवाही (कूली) को इधर उधर अच्छी रीतिसे ढूंढ ढाँढ कर फिर उसके घरकी ओर लौट पडा ॥ ५१ ॥ धनञ्जय, गंगाका स्नान और विश्वनाथका दर्शन बिनाकिये ही उस बोझियाके घर पर जापहुंचा ॥ ५२ ॥ इधर बोझियाभी काशीसे चलकर गहन वनमें जाय, उस डब्बेको खोलकर उसमें हड्डीके टुकडोंको देख मनमुआ होकर उन सबको फेंक अपने घरकी ओर चला गया ॥ ५३ ॥ प्यासके मारे कंठ ओठ तालुको सुखाता हुआ बनियाभी उसके घर पर पहुंच, वहां झोपडेके ऊपर डब्बेके बेठनका एक टुकडा कपडा देखकर ॥ ५४ ॥ आशा बद्धहो, बोझियाकी स्त्रीसे धीरेमें पूछने लगा, "अरे ! सच् कह, तुझे कोई डर नहींहै, हम निश्चय तुझे औरभी धन देंगे ॥ ५५ ॥ तेरा भर्ता कहां गयाहै ! हमारी माताकी हड्डियां देदे, हेरे भिल्लिन् ! हम लोग कार्पटिकहैं, किसी प्रकारका कष्ट नहीं देते ॥ ५६ ॥ तेरा स्वामी अज्ञानवश लोभमें पडकर हाडका संपुट उठालाया, शबरी ! इसमें उसका कुछ दोष नहींहै, मेरी माताहीका वैसा कर्मथा (जिससे ऐसी घटना होगयी) ॥ ५७ ॥ अथवा माताकाभी कोई दोष नहीं यह सब मेरेही मन्दभाग्यका फलहै हे भीलिन ! माताके लिये पुत्रको जो कर्म करना चाहिए वह मेरे भाग्यहीमें नहीं है ॥ ५८ ॥ मैंने तो यथासाध्य बडा उद्यम किया पर अदृष्टवश वह नहीं सिद्ध हुआ, (तो क्या करूं ?) अस्तु मैं सच् कहताहूं वनेचर चलाआवे कोईभी डर न करे ॥ ५९ ॥ उन हाडोंको मुझे शीघ्रही दिखलादेवे, मैं उसे औरभी बहुत रूपया दूंगा, उसके इस प्रकारसे समझा देनेपर भिल्लीने अपने पतिसे कहा ॥ ६० ॥ अनंतर वह बोझिया भिल्ल लज्जा-के मारे शिर झुकाये हुए आकर धनंजयसे सब वृत्तान्त कहगया अन्ततः उस बडे वनमें उसे लिवालेगया ॥ ६१ ॥ मुने ! दैववश वनेचर उस स्थानको भूल गया, वह दिशाभ्रम होजानेसे वनमें इधर उधर घूमकर चक्कर देने लगा ॥ ६२ ॥ भ्रांतचित वह भिल्ल एकवनसे दूसरे वनमें वारंवार घूमता हुआ जब थक कर शिथिल होगया

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तब ॥ ६३ ॥ धनञ्जयको उसी घोरवनमें छोड अपने पुरवासें भागगया, अनन्
वह वणिक् सत्तम दोतीन दिनलों उसी वनमें परिभ्रमण करके ॥६४॥ अन्तमें क्षु
कातर और तृषासे शुष्क कंठोष्ठ होजाने पर हाहाकार ध्वनिसे सन्ताप करता हु
अत्यंतम्लानमुखहोकर वह बनियां फिर काशीपुरीमें लौट आया ॥ ६५ ॥
फिर वहां पर लोगोंके मुखसे पापहीके कारण माताकी मन्दभाग्यता सुनकर
और प्रयागमें तीर्थकार्य करके अपने देशको चलागया ॥ ६६ ॥ अगस्त्यमुने
(देखो, उस व्यभिचारिणी) धनञ्जयके माताकी हड्डियां काशीमें आजाने पर
विश्वेश्वरकी आज्ञा न होनेसे उसीक्षण बाहर निकाल दीगईं ॥ ६७ ॥ इसी प्रकार
पापी जन प्राक्तन पुण्यवश काशीक्षेत्रमें प्रवेश करने परभी क्षेत्रके फलको कदा
नहीं पासकताहै बरन तुरंतही वहांसे बाहर निकास दिया जाताहै ॥ ६८ ॥ इन
सब कारणोंसे यह निश्चय होताहै कि काशीमें निवास करनेके लिये भगवान् विश्
श्वरकी आज्ञाही प्रधान मूलहै, क्योंकि यहांपर असि और बरणा ये दोनोंही नदि
रक्षाही करनेके हेतु बनाई गईहैं ॥ ६९ ॥ हे महामुने ! असि और बरणाके संग
पानेहीसे यह काशी पुरी "वाराणसी" नामसे विख्यात हुईहै ॥ ७० ॥ इस संस
रमें वाराणसी साक्षात् करुणामयी अलौकिक मूर्तिहै, क्योंकि जहां पर प्राणिगण
सुखपूर्वक देहत्यागकर उसी समय विश्वेश्वरको ज्ञानरूप ज्योतिमें प्रवेश करके
कैवल्य पदको धारण करलेताहै ॥ ७१ ॥ वाराणसी यह कहा करतीहै कि-
जन्तो ! तुम संसारमें अनेकबार उत्पन्न हुए और बहुतसे तीर्थोंमें नहाकर मृत्यु
वशंगत हुए परन्तु कभीभी तुमको शान्ति सुख नहीं मिला, (अस्तु) यदि अब
मेरे बलसे मृत होसकोतो अमृतत्व लाभ करके महादेव होजाओ ॥ ७२ ॥ अन्यत्र
तीर्थजलमें शरीरत्याग करनेसे केवल द्विजही देवादि पदत्वको प्राप्त करसकताहै, परन्तु
काशीमें वैसा नहींहै यहां तो यह बडी विचित्रताहै कि ब्राह्मण क्या यदि चाण्डाल
मनुष्यभी मरजावे तो पुनरावृत्तिसे रहित मुक्तही होजाताहै ॥ ७३ ॥ यह काशी
पुरी (अपार) संसार रूपी पारावार (समुद्र) की पार स्वरूपाहै (क्योंकि) जहां
पर पुरान्तक भगवान् त्रिपुरारि, पुरवासी जनके परंपराको इच्छानुसार परम पुरुषार्थकी
सिद्धिको प्राप्त करादेतेहैं ॥७४॥ मनुष्य दूसरे तीर्थोंमें वारंवार स्नान करनेसे कलुषित
शरीरको छोडकर स्वर्गमें देवशरीर धारण करताहै, परन्तु इस वाराणसीके प्रान्तभूमिमें
कहींपर देहत्याग करनेसे फिर देहधारण करनेमें सन्देह भागीही होजाताहै (अर्थात्

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रायः विदेह कैवल्यही प्राप्त होताहै सारूप्यादितो थोडही मिलताहै—टीकाका भावहै) ॥ ७५ ॥ सबी जनोंकी त्रितापहन्त्री यह वाराणसी, योगाभ्यास रहित मनुष्य लोगोंको (मृत्युके समय) जीवात्मा और परमात्मा (जीवब्रह्म) के एक समान करने वाले तत्त्वज्ञानके बिनाही प्रसिद्ध तारक मन्त्रको श्रवणगोचर करातीहुई उस पर-ब्रह्मका साक्षात्कार करादेतीहै जिसके द्वारा पुनर्जन्मही नहीं होता ॥ ७६ ॥ अभीष्ट पद (मोक्ष) की आशासे जो कोई धर्मार्थकामोंके निलय अपने शरीरको वाराणसीके प्रान्तस्थानमें त्याग न करके अत्यंत हर्षित होताहै, उसके ऊपर बडाही खेदहै ! क्योंकि उसका इष्ट लाभतो दूरही रहे, मूल शरीरभी न रहगया और वह कुछभी न हुआ ॥ ७७ ॥ आः ! काशीवासी मनुष्योंका समूह भगवान् भालनेत्र अर्धनारीश्वर विश्वनाथके द्वारा सुकृतोंके पात्र इष्ट शरीरको लेकर (उसके बदलेमें) पुनर्जन्मसे रहित एकमात्र निर्वाण दानकरके निश्चय वंचित कर दिया गयाहै ॥ ७८ ॥ वाराणसी, प्रज्वलित असीम गुणोंकी अकेली भूमीहै, क्योंकि जहांपर स्थित देहधारी मात्र भगवान् चन्द्रशेखरके प्रभावसे सबी गलेमें गरल, भालमें लोचन और वामार्ध शरीरमें वामाङ्गीसे भूषित होकर अन्तमें विदेह (मुक्त) होजातेहैं ॥ ७९ ॥ (काशीक्षेत्र तो) पूर्वहीसे सुखप्रद आनन्दवनथा, उसमेंभी चक्रपुष्करिणी मणिकर्णिका, तिसपर स्वर्गसिन्धु गंगाका संगम सबसे अधिक भगवान् विश्वेश्वरका प्रधान आश्रय स्थान, तो यहां पर वह क्याहै जो विमुक्तिके लिये समर्थ न होवे ? ॥ ८० ॥ इस जगत्में असि और वरणा इन दोनोंही नदियोंके संगमसे अतिश्रेष्ठा, एवं समस्त भेदोंके खेदकी जननी सुरनदीसे अत्यन्त शोभायमान वाराणसीही विशुद्ध मोक्षलक्ष्मीका स्थिर विश्राम स्थानहै, हाय ! मूढबुद्धि जन्तुगण ऐसी भूमीको त्यागकर अन्यत्र क्यों वृथा कष्ट उठा रहेहैं ? ॥ ८१ ॥ अहह ! ! मूढ जीवको अवश्यही गर्भकी यंत्रणा और कृतान्त दूतोंका बंधन ताडन आदि दुःख विस्मृत होगयाहै, नहीं तो महादेवके अनुग्रह प्राप्त होनेहीसे लभ्य, करस्थित मुक्तिस्वरूपा काशीको छोडकर अन्यत्र क्यों जाता ॥ ८२ ॥ पान स्नान पूजन विधान और शरीर त्यागादि करनेसे अपरापर समस्त तीर्थ सद्यः पापहरण करतेहैं, बहुतेरे कल्याणोंको देतेहैं, एवं स्वर्गपर्यन्त पहुंचा देनेमें समर्थ होतेहैं, किन्तु यह वाराणसीतो जन्मग्रहणका मूलोच्छेदनहीं करदेतीहै ॥ ॥ ८३ ॥ काशीपुरीके परिसर (प्रान्तभूमी) में मणिकर्णिका पर देहधारी गण देहको त्याग, अज्ञानरहित होकर ललाटमें नेत्र गलेमें नीलशोभा एवं वामांगमें सुन्दर

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

वधूसे शोभित देहको धारण करतेहैं ॥ ८४ ॥ जो कोई अतुलनीय प्रभावको
कर मणिकर्णिका पर अपवित्र (मलमय) रक्तादि गंधसे परिपूर्ण शरीरको त्याग
है, वह जीव उसी क्षण उत्तम आत्मज्ञानरूप तेजके साथ मिलकर ऐसा होजाताहै
कल्पान्तरोंमें भी उस तेजसे पृथक् नहीं होता ॥ ८५ ॥ राग (द्वेष) आदि दोष
परिपूर्ण चित्तेन्द्रिय पापियोंहीको अनुपम दिव्य महाप्रभावा काशीपुरी दूसरे तीर्थ
समान समझाई पडतीहै ऐसे लोगोंके साथ बातचीतभी करना उचित नहींहै ॥ ८६
रे मूढ (नर) ! भगवान् स्मरहरकी प्रियतमा राजधानी वाराणसीको छोडकर
दिग् दिगन्तरोंमें घूम रहाहै ? ब्रह्मादि देवतोंसेभी दुर्लभ स्थिर मोक्ष लक्ष्मीको पाकर
चपल स्वभावा लक्ष्मीकी कामना क्यों वृथाही करताहै ? ॥ ८७ ॥ इस संसार
उद्यम शील मनुष्यको विद्या धन (जन) भवन, गज, अश्व, सेवक, माल्य, चन्द
नितांत रमणीय रमणियां एवं स्वर्गभी अलभ्य नहीं है, परन्तु कीटपतंगोंको भी मुक्ति
देनेवाली केवल वाराणसीही (एकमात्र) दुर्लभ है ॥ ८८ ॥ (एकबार) विधाता
तौलकरके परीक्षा लेनेके लिए वैकुंठ आदि लोकोंको एक ओर और काशीको दूसरी
ओर पलरापर रक्खा, वे सब लोक तो लघुता (हलुकाई) के कारण ऊपरको उठ
गये परन्तु काशीपुरी चारों पुरुषार्थोंके बोझसे भारी (गुरु) होजानेपर यहां नीचेही
पंडी रहगई ॥ ८९ ॥ विश्वेश्वरकी दयासे काशीपुरीमें रहजानेवाला क्या मनुष्य
क्या अन्य जन्तु, सबीकोई केवल रुद्रदेवके समान माननीय होजाताहै (क्योंकि
वह अनेक उपसर्ग जनित एवं स्वाभाविक दुःखभारोंसे आक्रांत होने परभी कर्मबंधनको
काटकर परमात्म ज्योतिमें प्रवेश करताहै ॥ ९० ॥ अहह !! यह परम मूढ जन्तु
अवश्य विनश्वर, जनन मरणादि क्लेशोंके भवन इस शरीरको काशीमें त्यागकर उसके
विनिमय (बदले) में परमानन्दका सदन तेजोमय रूप क्यों नहीं ग्रहण करलेता
जैसे फुटहा कांसेका वर्तन परिवर्तित (बदल) कर लिया जाताहै ॥ ९१ ॥ अहो
बडाही आश्चर्यहै कि जहांपर मरण कालमें स्वयं भगवान् शिव कानमें कुछ ऐसा कह
देतेहैं जिसके द्वारा फिर माताके उदररूपा दरीमें वासकरनेका दुःख दूरही होजाता
है उस काशीपुरीके इस भूतल पर वर्तमान रहतेही लोग क्यों हतबुद्धिहोकर नित्य
मृत्यु दृढतर धननाश आदि विपत्ति समूहोंसे अभिभूत बन शोक सहरहेहैं ? हन्त !
॥ ९२ ॥ यदि कोई काशीवासी होकर, दिनमें दो तीनबार भोजन करे और स्वेच्छा
चारी होरहे, तो भी वह वायुभोजी और जितेन्द्रिय, वानप्रस्थसे बहुतही विशेष

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वहै ॥९३॥ इस काशीमें मरनेपर पुण्यात्मा और पापात्माके गति भेदमें कोई विशेष अंतर नहींहै, क्योंकि इस ऊषर क्षेत्र भूमी पर उन सबके कर्मोंसे उत्पन्न समस्त बीज, हरकी नेत्रज्वालासे दग्धहोकर, अंकुरित नहीं होने पाते ॥ ९४ ॥ हे गिरिजे ! खरहा, मसा, वकुला, सुग्गा, गौंरैया हुंडार सियार घोडा सांप बन्दर और मनुष्य चाहे कोईभी काशीमें मरे उसे मुक्ति मिली जातीहै ॥ ९५ ॥ हे नगेन्द्रनन्दिनि ! जो लोग सर्वदा काशीमें वास करतेहैं, वे शोभन रुद्राक्षकी मालारूप सर्प भूषणसे भूषित और त्रिपुण्ड्ररूप अर्धचन्द्रधारी भूतलस्थित मेरे पारिषदोंमें गणना किये जातेहैं ॥ ॥ ९६ ॥ इस काशीपुरीमें जितने जलचर स्थलचर मत्स्य और शृगाल प्रभृति जीव वास करतेहैं, वे सब मेरी कृपासे रुद्ररूप धारण कर देहान्त होनेपर मुझमें लीन हो जातेहैं ॥ ९७ ॥ अयि प्रिये ! देवि ! जोकि स्वर्गमें वर्षेषु नामक, अन्तरिक्षमें वातेषु नामक, एवं पृथिवीमें अन्नेषु नामक रुद्रगण अवस्थितहैं ॥ ९८ ॥ और जो पूर्व पश्चिम दक्षिण उत्तर दिशाओंमें दश दश संख्यक रुद्र विराजमान रहतेहैं, एवं ऊर्ध्व-स्थित जिन रुद्रोंका वर्णन वेदपाठी लोग करतेहैं ॥ ९९ ॥ और जो असंख्य सहस्र रुद्रगण पातालमें रहतेहैं उन सबकी अपेक्षा काशीमें वास करनेवाले रुद्ररूपी जन्तु गण अधिक श्रेष्ठहैं ॥ १०० ॥ हे घटोद्भव ! इसी कारणसे अविमुक्त काशीक्षेत्र "रुद्रावास" कहलाताहै, अतएव काशीस्थित समस्त वर्ण अथवा इतर जाति गण किंवा अखिल आश्रमियोंका श्रद्धा पूर्वक ईश्वर बुद्धिसे पूजन करके मनुष्य रुद्रपूजाका फलभागी होताहै ॥ १–२ ॥ मुने ! शब्दोंके अर्थवेत्ता लोग श्मशब्दका अर्थ शव (मुर्दा) और शानशब्दका अर्थ शयन कहकर श्मशान शब्दका अर्थ शवोंका शयन-स्थान कहतेहैं ॥ ३ ॥ प्रलयकाल प्राप्त होनेपर महाभूतगणभी यहां पर शव होकर शयन करतेहैं, इसी लिये काशीको "महाश्मशान" भी कहतेहैं ॥ ४ ॥ प्रलयकालके उपस्थित होनेपर इसी काशीक्षेत्रमें भूमी जलमें, जल तेजोराशिके मुखरूपी उग्र-कन्दरामें, महातेज वायुमें और वायु आकाशमें विलीन होजाताहै ॥ ५ ॥ एवं आकाशभी अहंकारतत्वमें और (पंचज्ञानेन्द्रिय, पंचकर्मेन्द्रिय मन एवं पंचभूत, इन) षोडश विकारोंके सहित, अहंकार (तत्त्व) भी बुद्धिसंज्ञक महत्तत्त्वमें और महत्तत्त्वभी प्रकृतिके मध्यमें लय होजाताहै ॥ ६ ॥ तदनंतर वह त्रिगुणात्मिका प्रकृतिभी निर्गुण पुरुषमें लीन हो बैठती है और यही परम पुरुषमें पचीसवां (महत्) तत्त्व एवं देह-रूप गेहका एकमात्र अधिपति जीवहै ॥ ७ ॥ इसीको प्राकृत प्रलय कहतेहैं, इसमें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ब्रह्मा विष्णु और रुद्र कोईभी विद्यमान नहीं रहते, पश्चात् महाकालमूर्ति परमेश्व
उस जीवको अपने (रूप) में अन्तर्हित करलेते हैं ॥ ८ ॥ पंडितगण उसी महाकाल
मूर्ति परमेश्वरको महाविष्णु कहतेहैं, उसीको महादेवभी कहतेहैं, वही आदि अन्त
और मध्यसे रहित शिवहैं, एवं वही लक्ष्मीपति (माधव) और पार्वतीपति (उमापति
हैं ॥ ९ ॥ दैनंदिन प्रलयमें उस समयकी अस्थिमालासे विभूषित भगवान् हि
अपनी काशीपुरीको त्रिशूलके अग्रभागपर उठाकर रक्षित करतेहैं, इसीसे कहे
(काशीमें) कलि और कालका वश नहीं चलता ॥ ११० ॥ स्कन्दने कहा—हि
वर ! देवदेव शंकरने पूर्वकालमें पार्वतीदेवी और विष्णुके सन्मुख अविमुक्त क्षेत्र
वाराणसी काशी, रुद्रावास, एवं आनन्द कानन नामसे इसी प्रकारपर कहाथा, औ
मैंने (ऐसाही) श्रवण कियाथा, सो सब काशीका परम रहस्य तुम्हारे आगे
दिया ॥ ११ ॥ १२ ॥ इस पवित्र अध्यायके पाठ करनेसे महापातकोंका वि
होजाताहै और द्विजातियोंको यथाविधि सुनानेसे शिवलोकमें आदर प्राप्त होताहै
॥ १३ ॥ हे कुम्भज ! इसके उपरान्त (काशीके विषयमें) और क्या सुनने
इच्छाहै, उसे कहो, क्योंकि मुझेभी काशीका वृत्तान्त कहनेमें बडा आन
आरहाहै ॥ ११४ ॥

दोहा—कथा धनंजयकी कही, काशीतत्त्व समेत ।
यह रहस्य अतिगूढहै, जानत विरल सचेत ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां धनंजयकथासहित-
काशीरहस्यवर्णनं नाम त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥

एकत्रिंशत्तम अध्याय ।

कालभैरवका प्रादुर्भाव और माहात्म्य ।

अगस्त्यने कहा—हे सर्वज्ञके हृदयनन्दन ! तारकासुर सूदन ! स्कन्द ! वाराणसी
कथा सुनते हुये मुझे तो सन्तोषही नहीं होता ॥ १ ॥ अतएव यदि मुझपर आप
कृपाहै, और यदिचेत् मैं श्रवण करनेके योग्य होऊं तो हे नाथ ! काशीमें भैरव
कथा वर्णन कीजिए ॥ २ ॥ इस काशीनगरीमें यह भैरव नामसे कौन
स्थितहैं ? उनका रूप किस प्रकारकाहै ? कर्म क्याहै ? एवं उनके कौन कौन
नामहैं ? ॥ ३ ॥ वह आराधना करने पर किस प्रकारसे साधकोंको सिद्धि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

और वह भैरव किस समय पर आराधित होनेसे झटपट इष्टकी सिद्धि करतेहैं ॥ ४ ॥ स्कन्दने कहा महाभाग ! वाराणसीके प्रति जैसा तुम्हारा प्रेम वर्तमानहै, वैसातो मैं दूसरे किसीका भी नहीं समझता, अतएव महापातकनाशन भैरवका प्रादुर्भाव कीर्तन करताहूं जिसके श्रवण करनेसे काशीवासका फल निर्विघ्न प्राप्त होजाताहै ॥ ५–६ ॥ जो परिपक्व बडे आम्रफलके समान इस समस्त ब्रह्मांड मण्डलको दोनों हाथोंसे दृढता पूर्वक चहुंओरसे घुलघुला (दबादवा) कर वारंवार दूरपर फेंकते हुए उसका रस पीते रहतेहैं और उसी रसपान करनेसे उन्मत्त (पागल) की नांई उद्धत नाचकरते रहतेहैं वही महाभैरव अपाय (नाश) से त्रैलोक्यकी रक्षाकरें ॥ ७ ॥ कुंभयोने ! विष्णु चतुर्भुज और विधाता चतुर्मुख होनेपरभी महादेवकी महिमाको नहीं जानते ॥ ८ ॥ हे भूदेव इसमें कोई आश्चर्य नहींहै, कारण यह कि शिवकी माया सर्वथा दुर्लंघ्यहीहै, उसी मायासे मोहित होकर सब लोग उस परमतत्त्वको नहीं जान सकते ॥ ९ ॥ यदि वेही परमेश्वर स्वयमेव अपनेको जनादेवें तबी ब्रह्मादिक देवगण उने जान सकतेहैं नहीं तो अपनी इच्छानुसार (कभी) नहीं जानने पाते ॥ १० ॥ उस स्वात्माराम महेश्वरको सर्वव्यापी होनेपरभी कोई नहीं देखसकता, मूढगण उस वाङ्मनोतीत महेश्वरको सामान्य देवतोंके समान समझतेहैं ॥ ११ ॥ हे विप्रवर ! पूर्वकालमें सुमेरुपर्वतके शृंगपर महर्षियोंने लोकेश्वर ब्रह्माको प्रणाम करके यह पूछा कि, एकमात्र कौनसा तत्त्व अव्यय (नाशरहित) है ? ॥ १२ ॥ तिसपर लोकस्रष्टा पितामह शांभवी मायासे मोहित होकर परमतत्त्वको बिना समझे अपने आपहीको श्रेष्ठ कहकर इस रूपसे उत्तर देने लगे ॥ १३ ॥ "मैंही जगद्योनि, विधाता, स्वयंभू, अकेला ईश्वर, और अनादि ब्रह्मस्वरूपहूं, मेरी पूजा नहीं करनेसे (कभी कोईभी) मुक्त नहीं होसकता ॥ १४ ॥ त्रैलोक्य भरका प्रवर्तक (उत्पादक) एवं निवर्तक (संहारक) मैंहीहूं, सत्यही मुझसे अधिक कोईभी नहींहै, मैंही समस्त देवतोंमें सर्व श्रेष्ठहूं" ॥ १५ ॥ ब्रह्माकी इनबातोंको सुनकर नारायणके अंशसे उत्पन्न यज्ञने हास्य करते हुए रोषवश रक्तनेत्र होकर कहा ॥ १६ ॥ "तुम परमतत्त्वको बिना जानेही यह क्या कहने लगे ? तुम्हारे ऐसे योगीको इस प्रकारका अज्ञान उचित नहींहै ॥ १७ ॥ समस्त लोकोंका कर्ता मैं यज्ञ और परात्पर नारायणहूं, विधे ! अज ! मेरा अनादर करके समग्र जगत्का, जीवित रहना असम्भवहीहै ॥ १८ ॥ मैंही परमज्योति एवं परमगतिहूं, मेरेही नियुक्त करदे-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नेसे तुम इस सृष्टिकार्यको सम्पादन करतेहो ॥ १९ ॥" इसी रीतिसे मोहवश पा
विजयकी इच्छासे विद्वेषी होकर ब्रह्मा और यज्ञ प्रमाणमें विज्ञ चतुर्वेदसे पूछने
॥ २० ॥ ब्रह्मा और ऋतुने कहा—"वेदगण ! आप लोगोंकी सर्वत्रही प्रमाण
बडी प्रतिष्ठाहै, इसमें कुछभी सन्देह नहींहै, अतएव कहिये, किसे परमतत्त्व जान
॥ २१ ॥ श्रुतिगणने उत्तर दिया—"हे सृष्टि स्थिति कारक व्यापक दोनों देव !
हमी लोगोंको माननेके योग्य समझते हो तो आपलोगोंके सन्देह भेदक प्रमा
कहतेहैं" ॥ २२ ॥ श्रुतिगणकी यह बात सुनकर ब्रह्मा और यज्ञने कहा आ
लोगोंका कथन प्रमाणहै, इसलिये परम तत्त्व क्या है ? इसे भली भांतिसे कहिये॥
प्रथम ऋग्वेदने कहा—"जिसके भीतर समस्त भूतगण अवस्थितहैं, जिससे यह
प्रवर्त्तित होताहै जिसे पण्डितगण "तत्" शब्दके द्वारा कहतेहैं, वही एकमात्र
तत्त्वहैं" ॥ २४ ॥ यजुर्वेद बोला—"जो समस्त याग एवं योगोंके द्वारा आराधि
रहतेहैं, और जिनके बलसे हमलोग प्रमाण स्वरूप माने जातेहैं, वही
शिव परं तत्त्वहैं" ॥ २५ ॥ सामवेद कहने लगा—"जो इस विश्वमंडलको
कराते रहतेहैं, जिन्हैं योगिगण चिन्तन करते रहतेहैं, एवं जिनके ज्योतिसे
प्रकाशमान रहताहै केवल वेही त्र्यंबक परमतत्त्वहैं" ॥ २६ ॥ अनंतर अथर्व वे
कहा—"जिस देवाधिदेवको अनुग्रही जन भक्तिसाधनके द्वारा देख सकतेहैं, वेही
दूर कारक कैवल्य स्वरूप, केवल शंकरही परम तत्त्व कहे गयेहैं" ॥ २७ ॥ मू
इस प्रकारसे वेदोंके वचनोंको सुनकर मायासे अत्यंत विमोहित होनेके कारण
न्धताको प्राप्त वे दोनोंही यज्ञ और ब्रह्मा कुछ हंसकर कहने लगे ॥ २८ ॥
तो यह धूलिसे धूसर, प्रमथोंका नाथ, श्मशानपर दिगम्बर होकर सर्वदा शिवा
विहार क्रीडामें आसक्त जटाजूट लपेटे, बैलपर चढा, सर्पोंका भूषण
विकटवेश धरे, रहताहै (भला) वह संगरहित (अद्वितीय) उस परं ब्र
क्योंकर पासकताहै ? ॥ २९—३० ॥ अनंतर उन दोनोंहीके (अज्ञानमय
वचनको सुन सदातन प्रणव स्वरूप मूर्तिरहित होनेपरभी मूर्त्तिमान् होकर हा
उन दोनोंसे कहने लगा ॥ ३१ ॥ प्रणव बोला—"लीलारूपधारी रुद्रमूर्ति ये
हर अपनी आत्मासे भिन्न दूसरी शक्तिके साथ कभीभी क्रीडा नहीं करते ॥
यह भगवान् ईश्वर स्वयं सनातन ज्योतिःस्वरूपहैं, और यह शिवाभी उनकी
दरूपा शक्तिहै, कभी, उनसे भिन्न नहीं होती" ॥ ३३ ॥ उस घडी प्रणव

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कहनेपरभी श्रीकंठहीकी मायावश ब्रह्मा और यज्ञपुरुषका अज्ञान दूर नहीं हुआ ॥ ३४ ॥ तब उन दोनोंहीके बीचमें अपनी प्रभासे आकाश और भूमीके मध्य भागको परिपूर्ण करतीहुई एक बडीभारी ज्योति प्रकट हुई ॥ ३५ ॥ उस ज्योतिर्मण्डलके मध्यमें एक पुरुषका आकार दिखलाई पडा, उसे देखतेही ब्रह्माका पंचम मस्तक मारे क्रोधके लित होगया ॥ ३६ ॥ अनन्तर ब्रह्मा ज्योंही हमलोगोंके बीचमें पुरुषाकृतिधारी यह कौनहै ? यह तर्क मनही मन करनेलगे, त्योंही त्रिशूलपाणि, भालनयन, सर्प और चन्द्रसे विभूषित नीललोहित महापुरुषको देखसके ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ पश्चात् हिरण्यगर्भने उस पुरुषसे कहा कि चन्द्रशेखर ! मैं तुमको (भली भांतिसे) जानताहूं, पूर्वकालमें तुमीतो मेरे भालस्थलसे रुद्ररूप उत्पन्न हुएथे ॥ ३९ ॥ (बहुत) रोनेके कारणसे मैंने तुम्हारा रुद्रनाम रक्खाथा, (अस्तु) बेटा ! अब तुम मेरे शरणागत होजाओ मैं तुम्हारी रक्षा करूंगा ॥ ४० ॥ इसके अनंतर ईश्वरने पद्मयोनिकी इस गर्वभरी वाणी-को सुनकर क्रोधहीसे एक भैरवाकृति पुरुषको उत्पन्नकर ॥ ४१ ॥ उससे कहा— "हे कालभैरव ! तुम इस पंकजजन्मा (ब्रह्मा) का शासन करो, साक्षात् कालके समान विराजमान होनेसे तुम "कालराज" (नामक) होगे ॥ ४२ ॥ तुम विश्वके भरण करनेमें सर्वथा समर्थहो अतः तुम्हारा नाम "भैरव" होगा, तुमसे कालभी डरेगा इसलिये तुम्हारा नाम "कालभैरव" भी प्रसिद्ध होगा ॥ ४३ ॥ तुम संतुष्ट होकर दुष्टात्माओंका मर्द्दन करोगे, इसी कारणसे तुम सर्वत्र "आम-र्दक" नामसे विख्यात होगे ॥ ४४ ॥ और भक्तगणके पापोंको तत्क्षणात् भक्षण करलोगे इसीसे तुम्हारा नाम "पापभक्षण" भी पडेगा ॥ ४५ ॥ हे कालराज ! मेरी सबसे बडी मुक्तिपुरी जो काशीहै, उसमें सर्वदा तुम्हाराही आधिपत्य रहेगा ॥ ॥ ४६ ॥ वहांके पापियोंका शासन भार तुमीको करना पडेगा, क्योंकि चित्रगुप्त काशीवासियोंके शुभाशुभ कर्मोंको न लिखेंगे ॥ ४७ ॥ इसके अनन्तर महादेवसे इन सब वरदानोंको पाकर कालभैरवने तुरत अपने बांये हाथकी अंगुलिके नखाग्रभागसे ब्रह्माका शिर काटलिया ॥ ४८ ॥ जो अंग अपराधकरे उसीका शासन करना उचितहै, इस लिये ब्रह्माने जिस अङ्गसे निन्दा की वही पंचम शिर काटलिया गया ॥ ॥ ४९ ॥ यह देखतेही यज्ञमूर्तिधारी विष्णुने शंकरकी स्तुति करनी आरम्भकरदी और हिरण्यगर्भभी भयभीत होकर "शतरुद्रिय" का जप करने लगे ॥ ५० ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तबतो प्रणतवत्सल महादेवने प्रसन्न होकर ब्रह्मा और विष्णुको आश्वासन दी
अपनी दूसरी मूर्ति कपर्दी भैरवसे कहा ॥ ५१ ॥ हे नीललोहित ! यह यज्ञमू
और ब्रह्मा (दोनोंही) तुम्हारे माननीयहैं, तुम ब्रह्माका यह कपाल धारणको
॥ ५२ ॥ और ब्रह्महत्याके दूर करनेको कापालिक व्रत ग्रहणकर लोगोंको शि
देनेके लिये अपना व्रत दिखलाते हुए सर्वदा भिक्षा मांगते हुए घूमो, यह कहका
तेजोरूपी सनातन भगवान् शिव अन्तर्धान होगये ॥ ५३ ॥ अनंतर शिवभी
वर्ण, रक्तांबरधारिणी, रक्तमाला पहिने, रक्तचन्दन लेपन किये, दंष्ट्राओंसे करालमु
लपलपाती हुई जीभसे बडीही भयंकर, आकाशहीमें एक पादके अग्रभागको उ
बहुत रुधिर पान करती हुई, हंसुआ और खप्परको हाथोंमें लिये, चमकती हुई फि
तारकाओंसे ताकती महावेगवती, गर्जती हुई भैरवको भी भयभीत करनेवाली ब्र
हत्या नाम्नी एक कन्याको बनाकर—"हे उग्ररूपिणि ! भीषणे ! जबलों यह कालभै
दिव्य वाराणसी पुरीसे (न) जावेगा, तबलों तू इसके पीछे पीछे घूमाकर, तेरी
वाराणसीपुरीको छोडकर और सब स्थानोंमें होगी" इस प्रकारसे उसे आदेश दे
स्वयं अन्तर्हित होगये ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ उस ब्र
हत्याके सांनिध्यसे कालके भी काल भैरव काले पडगये, महादेवके आज्ञानु
कापालिक व्रत धारणकर ॥ ५९ ॥ विश्वमात्रके आत्मा होनेपर भी हाथमें का
लेकर त्रिभुवनमें विचरण करने लगे, परन्तु उस अतिदारुण ब्रह्महत्याने उनको
छोडा ॥ ६० ॥ त्रिभुवनपालक त्रैलोक्यनायक व्रतधारी उग्ररूप भैरव भी सत्यलो
वैकुण्ठ, एवं इन्द्रादि देवतोंके नगरियोंमें ॥ ६१ ॥ और प्रत्येक तीर्थोंमें परिभ्र
करते रहने परभी उस ब्रह्महत्यासे विमुक्त नहीं होसके ॥ ६२ ॥ हे कुम्भज !
अनुमानसे ब्रह्महत्याके हटानेवाली काशीकी महिमा समझलो ॥ ६३ ॥ य
अनेक तीर्थ बहुतसे क्षेत्र त्रैलोक्यमें पडेहीहैं, परन्तु वे सब काशीकी षोडशी कल
भी समान नहीं हैं ॥ ६४ ॥ ब्रह्महत्यादि पापगण तभीतक अत्यंत गर्जते रहें
जबतक वे सब पातक पर्वतकी वज्ररूपा काशीका नाम नहीं सुन पाते ॥ ६५
अतःपरं प्रमथगणोंके द्वारा सेव्यमान कापालिक व्रतधारी भगवान् कालभैरव त्रैलोक्य
विचरण करते हुए नारायणके निकेतन (श्वेतद्वीप) में जापहुंचे ॥ ६६ ॥ अ
गरुडध्वजने सर्पकुंडलधारी त्रिलोचन भयंकर स्वरूप महादेवके अंशभूत महाक
भैरवको आते हुए देखकर भूमीपर दण्डवत् प्रणाम किया, (यह देख) चारों ओ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देवता मुनि और देवनारी गणभी इनको प्रणाम करने लगे फिर कमलापतिहरिने प्रणत-रूपसे शिरपर अंजलि बांधकर विविध विधके स्तोत्रोंसे स्तुतिकर, क्षीरसमुद्रके मथनसे उत्पन्न पद्मालया (लक्ष्मी) से कहा—अयि प्रिये ! कमलनेत्रे ! देखो, तुम आज धन्य हो, हे सुभगे ! अनघे ! सुश्रोणि ! देवि ! मैंभी धन्यहूं, क्योंकि हम दोनोंही आज त्रिजगत्पतिको देखरहेहैं, यही धाता विधाता, लोकोंके प्रभु ईश्वर अनादि, शरण, शान्त, परात्पर और परमात्माहैं, यही सर्वज्ञ सर्वयोगीश्वर, सर्वभूतैकभावन, समस्त भूतोंके अंतरात्मा, सब किसीके सर्वदा सर्वाभीष्ट दाताहैं, जिसे शान्त योगिगण, तन्द्राहीन निरुद्धश्वास और ध्यानपरायण होकर ज्ञानचक्षुसे हृदयमें देखतेहैं, उसे आज देखलो, जितेन्द्रिय वेदतत्वज्ञ योगिगण जिसे जान सकें, वेही सर्वव्यापी रूप रहितभी भगवान् रूप धारणकर ये आरहेहैं, अहो ! भगवान् परब्रह्मकी विचित्रही लीलाहै ॥ ६७—६८—६९—७०—७१—७२—७३—७४—७५ ॥ जिसका नाम नित्य कीर्तन करनेसे देह धारण नहीं करना पडता, आज वेही देहधारण किये हुएहैं, जिसके दर्शन करनेसे मनुष्यको पृथिवीपर फिर जन्म नहीं मिलता ॥ ७६ ॥ वही चन्द्रशेखर भगवान् त्र्यंबक ये आरहेहैं, आज मेरे कमलदलके तुल्य विशाल दोनों नयन सफल हुए (जो लीलारूपधारी भगवान्का दर्शनकर धन्य होरहाहूं) ॥ ७७ ॥ देवतोंके पदको धिक्कारहै, जो भगवान् शंकरका दर्शन पाने परभी समस्त दुःखोंके विनाशक निर्वाण पदको नहीं पाता ॥ ७८ ॥ देवलोकमें देवत्वसे अशुभ और कुछभी नहींहै क्योंकि समस्त देवतोंके स्वामीको देखकरभी हमलोग मुक्ति लाभ नहीं कर सकतेहैं ॥ ७९ ॥ आनंदसे पुलकित शरीर होकर हृषीकेशने लक्ष्मीसे ये बातेंकर, प्रणामपूर्वक वृषभध्वज महादेवसे यह कहा ॥ ८० ॥ सर्वपापहर ! अव्यय ! विभो ! आप देवदेव सर्वज्ञ और त्रैलोक्यके विधाता होने परभी यह क्या कररहेहैं ? ॥ ८१ ॥ हे देवेश्वर ! महामते ! त्रिलोचन ! क्या यही आपकी क्रीडाहै ? हे काममर्दन ! विरूपाक्ष ! आपके इस आचरणका कारण क्याहै ? ॥ ८२ ॥ हे शक्तिपालक ! भगवन् ! शंभो ! आप क्यों भिक्षा मांगते फिरतेहैं ? हे जगन्नाथ ! आपतो प्रणत जनोंको त्रैलोक्यका राज्य देनेवालेहैं, अत एव इस विषयमें मुझे बडा सन्देह उत्पन्न होरहाहै ॥ ८३ ॥ विष्णुके इस कहनेपर शम्भु उनसे बोले कि—विष्णो ! मैंने अंगुलिके नखाग्रसे ब्रह्माका मस्तक काट दियाथा ॥ ८४ ॥ उसी पापके निवृत्त्यर्थ इस शुभव्रतका आचरण कररहाहूं महेश्वरके ऐसा कहनेपर पुंडरी-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

काक्षने ॥ ८५ ॥ शिरझुकाय मुसकुराकर, फिर यों निवेदन किया, हे सर्वलोकनाथ ! आपकी जैसी इच्छाहो वैसीही क्रीडा करें ॥ ८६ ॥ परन्तु हे महादेव ! मुझसे अपनी मायासे ढांप देना आपके योग्य नहीं है, हे ईश ! आपहीके आज्ञाबलसे अपने नाभिकमलके कोशसे कल्प कल्पमें कोटिशः ब्रह्माओंका सृजन करताहूं सो हे विभो ! मूढलोगोंसे दुस्तर इस मायाको छोड दीजिये ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ हे देवदेव ! हम लोग तो सबी कोई आपकी मायासे मोहितहैं, उमापते इसीसे मैं आपका खेलवाड (भलेही जान सकाहूं ॥ ८९ ॥ हे हर ! आ (कि) आप प्रलयकालके उपस्थित होनेपर समस्त देवता मुनि और वर्णा श्रम धर्मवालोंको संहार करेंगे ॥ ९० ॥ हे महादेव ! तब आपकी यह ब्रह्महत्या आदि कहां रहेंगी ? हे शम्भो ! आप किसीके पराधीन नहींहैं अतएव जो चाहे सो करें "(परम स्वतंत्र न शिरपर कोई चाहे मनहि करहु जोइ सोई" तु. रा. ॥ ९१ ॥ अनघ ! कितनेही अतीत (भूतपूर्व) ब्रह्माओंकी हड्डियोंकी माल आपके गलेमें शोभायमानहै, तो भला उसबेला आपकी ब्रह्महत्या कहांचलीगई ॥ ९२ ॥ जो कोई बडे बडे पापोंके करने परभी भक्तिभावसे जगत्के आद ईश्वर आपको स्मरण करताहै, उसके पापविलयको प्राप्त होजातेहैं ॥ ९३ जैसे सूर्यके समीप अन्धकार नहीं ठहर सकता, वैसही आपके भक्तका पाप क्षय होजाताहै ॥ ९४ ॥ जो पुण्यात्माजन आपके दोनों चरणकमलों ध्यानमात्र करताहै, उसके ब्रह्महत्यादिकभी पातक क्षयको प्राप्त होजातेहैं ॥ ९५ हे जगत्पते ! जिस किसीकी वाणी आपके नामकी अनुरागिणी होजातीहै, तो पर्वत शृंगके समान भी पातक कुछ बाधा नहीं देसकते ॥ ९६ ॥ हे शिव ! रजोगु और तमोगुणसे परिवर्द्धित, सन्तापदायक पाप कहां, और संसाररूपी रोग विनाशक एवं सबी लोगोंका जीवनौषध आपका मंगलमय (शिव) नामही कहां ॥ ९७ ॥ अन्धकरिपो ! यदि कभी मनुष्यके ओष्ठपुटसे—"शिवशंकर चन्द्रशेखर इत्यादि आपके नाम निकसपडे तो उसे फिर वारंवार संसारमें न उत्पन्न होन पडे ॥ ९८ ॥ हे ईश ! आप परमात्मा, परमधाम, और स्वेच्छानुरूपमूर्तिधारीहैं यह सबतो आपका कौतूहलहै, नहीं तो भला ईश्वरमें पराधीनता कहां है ॥ ९९ ॥ हे देवेश ! आज मैं धन्यहूं, जो कि योगियोंको भी जिसका दर्श नहीं प्राप्त होता, उसी अक्षय (अविनाशी), जगत्के मूल परमेश्वरको (साक्षात्

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देखरहाहूं ॥ १०० ॥ आज मुझे परम लाभ हुआ, आज मेरा बडाही मंगलहै, जो आपके दर्शनरूप अमृतसे सन्तुष्ट होकर मैं स्वर्ग और अपवर्ग दानकोभी तृणसा मानरहाहूं ॥ १ ॥ विष्णुके इस कहनेके अनंतर स्वयं लक्ष्मी देवीने महादेवके भिक्षापात्रमें शुद्ध मनोरथवती नामकी भिक्षा डालदी ॥ २ ॥ तब तो भैरवदेवभी बडी प्रसन्नताके साथ भिक्षाटन करनेके लिये वहांसे चलदिया अनंतर जनार्दनने ब्रह्महत्याको उनके पीछे पीछे जातीहुई देख बुलाकर उससे कहा कि त्रिशूलीको छोडदे ॥ ३ ॥ ब्रह्महत्या बोली—मैं इसी मिष (बहाने) से वृषभध्वजकी सेवाकर अपनेको पवित्र करतीहूं क्योंकि फिर मुझे शिवका दर्शन कहां मिलेगा ? ॥४॥ विष्णुके कहनेपरभी ब्रह्महत्याने भैरवका पीछा नहीं छोडा, अनन्तर मुसकुराते हुए शम्भुने विष्णुसे इस शुभ वचनको कहा ॥ ५ ॥ हे बहुमानद ! गोविन्द ! मैं तुम्हारे वाक्यामृतके पानकरनेसे परम सन्तुष्ट हुआहूं, सो हे अनघ ! मैं तुमको वरदेताहूं, तुम वरमांगो ॥ ६ ॥ भिक्षुकगणभी अत्यंत विधिसे बनाये हुए भक्ष्य द्रव्योंसे वैसे कभी नहीं सन्तुष्ट होते, जैसे कि आदररूपी अमृतके पीनेसे उनका भिक्षाटनरूप ज्वर उतर जाताहै ॥ ७ ॥ महाविष्णु कहने लगे—मेरा यही वर परम प्रशंसनीय है, जो मैं समस्त देवतोंके अधिपति, मनोरथ पथके अतीत देवदेव आपका दर्शन पारहाहूं ॥ ८ ॥ हे हर ! आपका दर्शन तो सज्जन लोगोंके लिये बिना मेघकी सुधावृष्टि, अनायास महान् उत्सव, और बिना प्रयत्न निधिलाभके समानहै ॥ ९ ॥ देव ! आपके चरणयुगलसे मेरा कभी वियोग न होवे, शम्भो ! यही मेरी प्रार्थनाहै, दूसरा और कोई वर मैं नहीं चाहता ॥१०॥ श्रीभैरवने कहा—हे महामते ! अनन्त ! जो तुमने कहा वही तुमको प्राप्त होवेगा, और तुम स्वयं समस्त देवतोंके वरदायक होगे ॥ ११ ॥ विष्णु भगवान्को इस वरदानसे अनुगृहीतकर कालभैरव ब्रह्मा एवं इन्द्रआदि लोकोंमें भ्रमण करते हुए मुक्तिजननी काशीपुरीकी यात्राको चले ॥ १२ ॥ जिस काशीमें निवास करनेवाले जन्तुओंकी षोडशी कलाके समानभी विपत्तियोंके आकर ब्रह्मादि देवतोंके भी पद कभी नहीं होसकते ॥ १३ ॥ उस वाराणसी नगरीमें जटाधारी, मुण्डित मुण्ड अथवा दिगम्बर (नग्न) ही रहनेवाला बहुत अच्छाहै, परन्तु अन्यस्थानमें एकच्छत्र ससमुद्र वसुधा मण्डलाधिपति होना भला नहींहै ॥ १४ ॥ वाराणसीमें भिक्षाटन करकेभी निवास करना सर्वथा उत्तमहीहै, परन्तु अन्यत्र

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लक्षाधिपति होना अच्छा नहींहै, क्योंकि लखपतीकोभी गर्भमें प्रवेश करनाही पड़ेगा पर वाराणसीमें भीख मांगके खानेवालेको गर्भ यन्त्रणा कदापि न भोगनी पडेगी॥ १५॥ जहां पर आंवलेके फल समानभी भिक्षा भिक्षुकोंको देनेसे वह सुमेरु पर्वतसेभी अधि होजातीहै ॥ १६ ॥ काशीमें जो कोई दरिद्र कुटुम्बीको वर्षभरका भोजन व दान करताहै, वह जितने वर्षके लिये देताहै उतनेही युग परिमाणसे स्वर्गमें देवतो पूजित होता रहताहै ॥ १७ ॥ जो मनुष्य वाराणसी क्षेत्रमें निरुपाय जनको भोज्य दान करताहै, उसे कभीभी क्षुधा एवं तृषाका दुःख भोगना नहीं पडता ॥१८ काशीधाममें स्वयं वास करनेसे जो पुण्य प्राप्त होताहै, वही अविकल (ज्योंका त्यों फल दूसरे किसीके वासकरादेनेसेभी प्राप्त होजाताहै ॥ १९ ॥ जिसके केवल नाम ले लेनेसे ब्रह्महत्यादिक पातक पापीजनको छोड भागतेहैं, इस संसारमें उस काशीकी उपमा किससे दीजावे ? ॥ १२० ॥ इसके अनन्तर भयंकर स्वरूप भैरवके काशी क्षेत्रमें प्रवेश करते मात्र ब्रह्महत्या हाय ! हाय ! कह कर पातालतलमें घुसगयी ॥ २१ ॥ उनके हाथसे ब्रह्माका कपाल सब किसीके देखते गिरपडा, इसी कारण भैरव भगवान् परम आनन्दित होकर नृत्य करने लगे ॥ २२ ॥ भैरवके ना स्थानोंमें भ्रमण करते रहने परभी जो दुःसह कपाल उनके हाथको नहीं छोडता काशीमें पहुंचतेही क्षणमात्रमें वह गिर गया ॥ २३ ॥ योंही जिस ब्रह्महत्याने भ भी उनका संग नहींछोडा, वह काशीमें आतेही क्षणमात्रमें विनष्ट होगयी, तो (फि वह) काशी कैसे नहीं दुर्लभहै ? ॥ २४ ॥ अत एव इस पुण्यपुरीकी प्रदक्षि और पूजा करनी बहुतही उचितहै ॥ २५ ॥ जो जन्तु जन्मभर त्रिकाल "वा णसी—काशी" इस नाम मन्त्रको जपताहै, उसे फिर जन्म नहीं लेना पडता ॥ २६ यदि कोई दूरदेशान्तरमें स्थित होकरभी अविमुक्त महाक्षेत्रको मरणकालमें स्म करके प्राणत्याग करे तो उसेभी कदापि पुनर्जन्म न लेना पडे ॥ २७ ॥ जिस कि का चित्त सर्वदा आनन्दकाननमें लगा रहताहै, उस क्षेत्रके नाम श्रवणमात्रसे वह फिर कभी जन्म नहीं लेता॥२८॥ जो नर नियतचित्तसे रुद्रावासमें नित्य वास क है वह पापका बोझ उठाये रहने परभी काल पाकर मुक्त होजाताहै ॥ २९ ॥ दैवात् कोई महाश्मशानमें आकर मृत्युको प्राप्त होवे तो फिर कभी उस पुरुषको स्मशा पर शयन न करना पडे ॥ १३० ॥ जो मनुष्य काशीमें (स्थित) कपालमो शिव) को स्मरण करेंगे, उनका जन्म जन्मान्तरका पातक शीघ्रही विनष्ट होजाय

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

॥ ३१ ॥ अन्यत्रसे काशीमें आकर जो (इस) कपालमोचन तीर्थप्रवरमें विधानसे स्नानकर देवता पितरोंका तर्पण करेगा वह ब्रह्महत्यासे छूट जावेगा ॥ ३२ ॥ जो लोग इस सबको अनित्य विचारकर वाराणसीमें वास करतेहैं, देहके अन्तकालमें भगवान् शंकर उने "तत्" पदवाच्य परम ज्ञान देही देतेहैं ॥ ३३ ॥ विप्रवर ! यह काशीपुरी साक्षात् रुद्रदेवकी अकथनीय परमानंदमयी दूसरी मूर्तिहै, शिवविरोधियोंको यह अलभ्यहीहै ॥ ३४ ॥ इस काशीका तत्व मैं जानताहूं अथवा जो परम शिवभक्त होगा वह जानेगा, इसी स्थानमें योगबलसे योगियोंके समान सबी जन्तु अनायासही मुक्तिलाभ कर सकतेहैं ॥ ३५॥ यह काशीही परमपदहै, यही पुरी परमानन्दहै, यही सर्वोत्कृष्ट ज्ञानस्वरूपाहै, मोक्षकी आकांक्षा रखनेवालोंको यही (सर्वथा) सेवनीयहै ॥ ॥ ३६ ॥ इस काशीमें रहकरभी जो शिवभक्तोंको पीडा देताहै, अथवा पुरीकीही निन्दा करताहै उस मूर्खको न यहांही गति मिलतीहै न किसी दूसरेही स्थानमें सद्गति मिलसकतीहै ॥ ३७ ॥ तदनंतर कालभैरव कपालमोचन तीर्थको सन्मुख कर भक्तोंके पाप समूहको भक्षण करते हुए वहांही पर विराजमान होगये ॥ ३८ ॥ पापभक्षणकारी भैरवके समीप जाकर सैकडोंही पापकरने परभी कालभैरवका सेवक पापोंसे कहां डरताहै ? ॥ ३९ ॥ ये पापपुंज और दुष्टोंके मनोरथोंको मर्दन करदेतेहैं अतः इन कालभैरवका नाम आमर्दक विख्यात हुआहै ॥ ४० ॥ यह काशीनिवासियोंके कलि और कालभयको निवारण करतेहैं, इसलिये इनका कालभैरव नाम बहुतही प्रसिद्ध हुआहै ॥ ४१ ॥ जिनके भक्तोंसे अतिदारुणभी यमदूत सदैव भयभीत बने रहते हैं, इसीसे इनका नाम भैरव पडाहै ॥ ४२ ॥ इन कालभैरवके निकट अगहन मासकी कृष्णाष्टमीको उपवासपूर्वक रात्रिमें जागरण करनेसे मनुष्य महापापोंसे भी छूट जाताहै ॥ ४३ ॥ कालभैरवके दर्शनसे जो कुछ अशुभ कर्म मानवबुद्धिसे किया गयाहो वह सब भस्म होजाताहै ॥ ४४ ॥ इन कालभैरवके दर्शन करनेसे (काशीमें) अनेक जन्मका संचित समस्त जन्तुओंका अघसमूह अतिशीघ्रही विलीन होजाताहै ॥ ४५ ॥ अगहन मासके कृष्णाष्टमी तिथिको बडी सामग्रियोंसे जो नर विविध पूजा करताहै, उसका वार्षिक विघ्न दूर होजाताहै ॥ ४६ ॥ रवि और मंगलवार तथा अष्टमी एवं चतुर्दशी तिथिको कालभैरवकी यात्रा करनेसे समस्त पापोंसे छूट जाताहै ॥ ४७ ॥ जो मूढजन सदा काशीनिवासी कालभैरवके भक्तोंपर विघ्नका आचरण करताहै उसे दुर्गति प्राप्त होतीहै ॥ ४८ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जो कोई विश्वेश्वरकाभी भक्त होवे, पर कालभैरवपर भक्ति न रखता हो तो
काशीमें पदपद पर विघ्न मिलताहै ॥ ४९ ॥ कालोदकतीर्थमें स्थिरतापूर्व
स्नान तर्पण करके फिर कालराजका दर्शन करनेसे मनुष्य अपने पितरोंका न
कसे उद्धार करदेताहै ॥ १५० ॥ जो नर प्रतिदिन पापभक्षणकी आठ प्रदक्षिणा
करताहै, वह वाचिक, मानसिक एवं कायिक पापोंसे कदापि लिप्त नहीं हो
॥ ५१ ॥ साधक पुरुष उस आमर्दक पीठ पर छमास पर्यन्त अपने इष्टदे
ताका जपकरनेसे भैरवकी आज्ञानुसार सिद्धिको प्राप्त करताहै ॥ ५२ ॥
कोई वाराणसीपुरीमें निवास करके भैरवनाथका भजन नहीं करता, उसके पाप
शुक्लपक्षमें चन्द्रमाके सदृश बढा करतेहैं ॥ ५३ ॥ विविध बलि, पूजा,
उपहारोंसे जो जन कालभैरवकी सेवा करताहै, वह अपनी जिस जिस कामना
चाहताहै, उसे उसे प्राप्त करताहै ॥ ५४ ॥ काशीमें जो पुरुष प्रत्येक चतुर्दशी
अष्टमी और मंगलवारको कालराजका भजन नहीं करता उसका पुण्य ऐसे क्षी
होताहै जैसे कृष्णपक्षमें चन्द्रमा (काक्षय होताहै) ॥ ५५ ॥ ब्रह्महत्याविनाश
भैरवोत्पत्ति संज्ञक इस पवित्र अध्यायके श्रवण करनेसे मनुष्य समस्त पापोंसे मु
होजाताहै ॥ ५६ ॥ जो कोई कारागार (जेहलखाना) में पडाहो अथवा कु
तही बडी विपत्तिमें पडाहो, वह यदि भैरव (नाथ) के प्रादुर्भावकी कथा सुने
उसका संकट कटजावे ॥ १५७ ॥

दोहा—भैरोंनाथ महालमें, भैरवनाथ प्रसिद्ध ।
जिनकी सेवाके किये, होत सिद्ध पर सिद्ध ॥ १ ॥
एहि कलिकाल करालमें, काशीके कोतवाल ।
कोतवाली अजहूं वहीं, तुवढिग भैरवकाल ॥ २ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखंडे पूर्वार्द्धे भाषायां कालभैरवप्रादुर्भाव-
माहात्म्यवर्णनं नामैकत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३१ ॥

द्वात्रिंश अध्याय ।

दण्डपाणिका प्रादुर्भाव ।

अगस्त्य कहने लगे—मयूरवाहन ! अब हरिकेशकी उत्पत्ति कथाको वर्णन
काजिये, यह कौनहैं ? किसके पुत्रहैं ? इनकी वैसी कौन बडी तपस्याहै जिससे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

द्वारा ऐसे श्रीमान् हुये ? ॥ १ ॥ किस प्रकारसे देवदेवके परम प्रिय हुये ? और क्योंकर काशीवासी लोगोंके हितकर्ता दण्डनायक हुये ? ॥ २ ॥ एवं कैसे ये महामति अन्नदाताके पदको प्राप्त हुए ? क्षेत्रद्वेषी मनुष्योंके भ्रम उत्पन्न करनेवाले संभ्रम और विभ्रम ये दोनोंगण कहांसे इनके अनुगामी होगये ? विभो ! मैं यह सब सुना चाहताहूं, कीर्तनकर मुझे अनुगृहीत कीजिये ॥ ३ ॥ ॥ ४ ॥ स्कन्द बोले—महर्षे ! कुम्भसम्भव ! आपने बहुत उत्तम बात पूछी, दण्डपाणिकी यह कथा काशीवासियोंके लिये बडीही हितकारिणी है ॥ ५ ॥ हे प्राज्ञ ! इसके श्रवण करनेसे मनुष्य विश्वनाथके अनुग्रहसे काशीवासके फलको निर्विघ्न प्राप्त करलेताहै ॥ ६ ॥ पूर्वकालमें गन्धमादन पर्वतपर सुकृती श्रीसम्पन्न रत्नभद्र नामक एक यक्ष रहताथा ॥ ७ ॥ वह पूर्णभद्र नामक पुत्रको पाकर पूर्णमनोरथ हुआ, पश्चात् वह यथेष्ट समस्त विषय भोगकर, वृद्धावस्थामें ॥ ८ ॥ प्रशान्तसर्वेन्द्रिय शान्तचित्त होकर शैव योगके बलसे पार्थिव शरीरको त्याग शान्तिमय शिवत्वको प्राप्त होगया ॥ ९ ॥ अनन्तर पिताके देहान्त होजानेपर बडा यशस्वी पूर्णभद्र पुण्य प्राप्य अतुल समृद्धिके द्वारा सांसारिक संभोगोंका भोगभागी हुआ ॥ १० ॥ उसने समग्र मनोरथोंको तो प्राप्त किया परन्तु स्वर्गका एकमात्रसाधन, गृहस्थाश्रमका भूषण, पितरोंका बडा पथ्य, ॥ ११ ॥ संसारके सन्तापोंसे तप्त अंगोंके लिये अमृतकण, और बडेभारी दुःखरूपी समुद्रमें गिरे लोगोंको पोत (जहाज—नौका) स्वरूप सन्तानको नहीं पाया ॥ १२ ॥ अनन्तर पुत्रमुखके न देखनेसे, बालकके मधुर आलापसे रहित उसका सर्वसुन्दर मन्दिर मंगलसे ही नही रहा ॥ १३ ॥ दरिद्रोंकेहृदय सदृश शून्य, अथवा जीर्ण अरण्यके समान जान पडताथा, एवं छायादिहीन पटपर मार्गमें पथिकके तुल्य वह अपुत्र होनेसे बहुतही खिन्न हुआ ॥ १४ ॥ घटोद्भव ! अनन्तर उस पूर्णभद्र यक्षने यक्षिणीश्रेष्ठा गृहिणी कनककुंडलाको बुलाकर यह कहा ॥ १५ ॥ कान्ते ! मेरी यह अटारी (महल) जिसके भीतर सुन्दर दर्पण लगेहैं, मोतियोंके झरोखे कटेहैं, चन्द्रकान्तकी शिलायें आंगनमें जडीहैं ॥ १६ ॥ कोठे पद्मराग (लाल) एवं नीलमणिकी चमकसे शोभायमान होकर प्रतिध्वनित होरहेहैं, खम्भे मूंगोंके बने विराजितहैं, भीतें चमकते हुए स्फटिककी बनीहैं ॥ १७ ॥ पताकायें फरहरा रहीहैं मणिमाणिक्यकी मालाओंसे भूषितहै, (चहुंओर) कालागुरु महाधूपके बडे सुगंधसे आमोदितहै ॥ १८ ॥ बहुमूल्य आसनोंसे (मोढोंसे) युक्तहै रमणीय पलंग सुसज्जित (रक्खी) है,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सुंदर अगरी और केवाडियोंसे परिपूर्ण है, मण्डप पर वस्त्रका चन्दवा टंगाहै ॥ १९ ॥ सुरम्य रतिशालासे भरपूरहै, घोडोंके झुंड बन्धेहैं, सैकडों दास दासियोंसे भरीहै, (इस सबके) छोटीछोटी घंटियोंके शब्दसे शब्दायमान होरहीहै ॥ २० ॥ नूपुरके शब्दसे उत्कंठित होकर मयूरगण केकाध्वनि कर रहेहैं कबूतरकी गोलें कूजरहीहैं, सुग्गा मैना बातचीत कर रहेहैं ॥ २१ ॥ हंसका जोडा खेल रहाहै, चकोरोंसे शोभायुक्त होरहीहै मालाओंके गन्धसे उडे आते हुये भ्रमरोंके मधुर गुंजनसे व्याप्त होरहीहै ॥ २२ ॥ कर्पूर कस्तूरी आदि गंधोंसे पूर्ण वायुके द्वारा वीजित होरहीहै, (देखो इस) खेलते वानरके दांतोंपर मानिकका अनार शोभायमानहै ॥ २३ ॥ अनार बीजोंहीके धोखे सुग्गे चोंचमें मोतियोंको लेरहेहैं, लक्ष्मीदेवीके दूसरे भवनके समान धन धान्य समृद्धहै ॥ २४ ॥ प्रिये ! कनककुण्डले ! यह लक्ष्मीके हर्षरूप गर्भको धारणकिये तौभी गर्भरूपके विनाहीहै, हाय ! मैं कैसे पुत्रका मुख देखूंगा ? ॥ २५ ॥ यदि कोई उपाय हो तो कहो, हाय ! अपुत्रके जीवनको धिक्कारहै ! विना पुत्रके यह सम्पन्न गृह शून्यहीसा भासताह ॥ २६ ॥ अयि प्रियतमे ! अपत्यके विना इस सौध (उज्ज्वल गृह) की सुन्दरताको धिक्कारहै !! इस धनके संचयको धिक्कारहै !! और हम दोनोंके जीनेको धिक्कारहै !!! ॥ २७ ॥ पतिको इस प्रकारसे ऊच्चस्वरमें प्रलाप करते देखकर वह पतिव्रता कनककुण्डला यक्षिणी भीतरही भीतर एक लंबी सांस लेकर कहने लगी ॥ २८ ॥ कनककुंडलाने कहा—कान्त ! आप ज्ञानवान् होकर क्यों खेद करतेहैं इस संतानप्राप्तिकेलिये उपाय मैं कहतीहूं आप विश्वास पूर्वक सुनिये ॥ २९ ॥ उद्योगी पुरुषको इस चराचरमें क्या दुर्लभहै ? ईश्वरमें चित्त समर्पण करनेवालोंके मनोरथगण आगेहीसे सिद्ध हुए रहतेहैं ॥ ३० ॥ नाथ ! कापुरुष लोगही प्रायः दैवको कारण बतलातेहैं, परन्तु पूर्वजन्मकृत कर्मसे भिन्न दैव स्वयं कोई दूसरा पदार्थ नहीं है ॥ ३१ ॥ अत एव प्राक्तन कर्मकी शान्तिके निमित्त पौरुषका अवलंबन करके समस्त कारणोंके कारण ईश्वरके शरणागत होनाही उचितहै ॥ ३२ ॥ सन्तान, धन, स्त्री, भूषण, भवन, अश्व, गज, सुखसमूह, स्वर्ग और मोक्ष ये सब शिवभक्तिसे विमुख नहीं रहते ॥ ३३ ॥ हे प्रिय ! जिस किसीकी शंभुपर भक्तिहै उसके समस्त मनोरथ और आठों सिद्धियां गृहद्वारपर सेवा करती रहतीहैं, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है ॥ ३४ ॥ (अधिक क्या कहें) सर्वान्तर्यामी जगन्नाथ भगवान् नारायण भी श्रीकण्ठकी सेवाहीसे चराचर संसारके पालनकर्ता हैं ॥ ३५ ॥ उनी भगवान् शंभुने अपने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

को सृष्टिकर्ता बनाया, उनी महादेवके अनुग्रहसे इन्द्रादि देवगण लोकपाल हुए ॥ ३६ ॥ शिलादमुनिने निस्सन्तान होनेपर भी मृत्युके जीतनेवाले (मृत्युंजय पुत्रको पाया, श्वेतकेतुने भी कालपाशमें बद्ध होकर इनीकी दयासे जीवनलाभ किया ॥ ३७ ॥ उपमन्युने तो क्षीरसमुद्रका आधिपत्यही प्राप्त करालिया, अंधकनामा असुरभी भृंगी होकर प्रमथगणका नायक होगया ॥ ३८ ॥ इनी शंभुकी सेवासे दधीचि ऋषिने युद्ध में विष्णुभगवान्‌को भी जीत लियाथा, दक्षभी शंकरहीकी आराधनासे प्रजापति हो गये ॥ ३९ ॥ महादेव यदि दृष्टिगोचर होजावें, तो क्षणमात्रमें वह पद देदेतेहैं जो समस्त मनोरथोंके पथसे परेहैं और जहां वाणीकी भी गति नहीं है ॥ ४० ॥ अशेष देहधारियोंके सर्वाभीष्टदाता इन महेश्वरकी आराधना विना किये इस लोकमें कोईभी कहींपर किसी प्रकारसे मनोरथकी सिद्धिको नहीं पासकता यह निश्चितहै ॥ ४१ ॥ अत एव हे स्वामिन् ! यदि आप सर्वजनके हितकर प्रियपुत्रके लाभकी वांछा रखते हैं तो सर्व प्रयत्नसे उनी शंकरके शरणागत होइये ॥ ४२ ॥ इस प्रकारसे पत्नीका वचन सुनकर संगीत कुशल यक्षराज दृढव्रत (वह) पूर्णभद्र गीतविद्यासे श्रीमहादेव-की आराधना करके ॥ ४३ ॥ थोडेही दिनोंमें अपनी पत्नीके गर्भमें ऊंची पुत्रका-मनाको प्राप्तकर परिपूर्ण मनोरथ हुआ ॥ ४४ ॥ काशीमें नादेश्वर शिवकी उपासना कर किस किसने अपना अभीष्ट नहीं प्राप्त किया ? अत एव सब मनुष्योंको प्रयत्न पूर्वक नादेश्वर भगवान्‌की सेवा करनी चाहिये ॥ ४५ ॥ द्विजवर ! अनंतर काल-क्रमसे उसकी पत्नीने गर्भवती होकर पुत्रको प्रसव किया, पिता पूर्णभद्रने उस पुत्रका नाम "हरिकेश" रक्खा ॥ ४६ ॥ अगस्त्यजी ! अनंतर पूर्णभद्रने पुत्रका मुख देखनेसे प्रसन्न होकर बहुत कुछ प्रीतिदाय (इनाम) दिया और कनककुंडलाभी परमानंदित हुई ॥ ४७ ॥ मदनोपम पूर्णचन्द्र मुख वह बालकभी शुक्लपक्षमें चन्द्रमाके समान प्रतिक्षण बढने लगा ॥ ४८ ॥ इस प्रकारसे वह बच्चा हरिकेश आठवर्षकी अवस्था होते न होते सर्वदैव शिवको छोड और कुछभी नहीं जानताथा ॥ ४९ ॥ वह पांशुक्रीडाके समयभी धूलिहीका शिवलिंग बनाता और हरीहरी कोमल दूर्वोंसे सकौतुक उसका पूजन करताथा ॥ ५० ॥ वह अपने समस्त मित्रोंको शिवहीके नामसे पुकारताथा—यथा—चन्द्रशेखर भूतेश मृत्युंजय मृड ईश्वर ॥ ५१ ॥ धूर्जटी खंडपरशु मृडानीश त्रिलोचन भर्ग शम्भु पशुपति पिनाकी उग्र शंकर ॥ ५२ ॥ श्रीकंठ नीलकंठ ईश स्मरारि पार्वतीपति कपाली भालनयन शूलपाणि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

महेश्वर ॥ ५३ ॥ चर्माम्बर दिगंबर गंगाधर विरूपाक्ष सर्पभूषण इनी सब (शिवके नामोंको लेकर ॥ ५४ ॥ अपने समौरिया लोगोंको बडे प्यारसे वारंवार पुकार करताथा । उसके दोनोंही कान केवल महादेवको छोड दूसरोंका नाम सुनतेही नहीं ॥ ५५ ॥ उसके चरण शिवालयको छोड अन्यत्र पडतेही नहींथे, उसके नेत्र कृ रूप देखतेही नहींथे॥ ५६ ॥ उसकी रसना हरके नामामृतहीका स्वाद लेतीथी, उस नासिका शिवके पादपद्मसे भिन्न दूसरा सुगंध सूंघतीही नहीं थी॥ ५७॥ उसके हाथ शिव के कौतुककार्यमें लगतेथे,मन दूसरी ओर जाताही न था,वह सद्बुद्धिमान् समस्त खाद्य पय वस्तुओंको महादेवहीके निवेदन करनेपर तब खाता और पीताथा । वह सर्वत्रही अवस्थाओंमें शिवके बिना और कछभी नहीं देखताथा ॥ ५८–५९ ॥ क्या जाते, क्या गाते, क्या सोते, क्या उठते, क्या स्वप्नदेखते, क्या खाते, क्या पीते, सबी समय चारोंओर त्रिलोचनहीको देखता था, दूसरा भावतो वह जानताही नहीं था ॥ ६० ॥ वह बालक, रात्रिकालमें निद्रित होनेपरभी–"हे त्रिलोचन ! कहां जाते हो क्षणभर (थोडा) ठहर जाओ" यही कहता हुआ जाग जाताथा ॥ ६१ ॥ हरिकेशके पिता उसकी इस चेष्टाको स्पष्टरूपसे देखकर पुत्रको सिखलाने लगे–"बेटा घरका काम काज सम्भालो" ॥ ६२ ॥ ये सब घोडे, बछेडे, विचित्र वस्त्र कंबल दुशाले (दूकूल) खानिके शुद्ध (असली) अनेक जातिके रत्नसमूह, विविध भांतिके सोना चान्दीसे भिन्न धन, बडाभारी गोधन, रूपा कांसा आदिके बहुत पात्रादि, नाना देश देशान्तरके बिक्रीके वस्तु, उत्तमोत्तम चामर, अनेकशः गंध द्रव्य,–ये सब और अपरिमित धान्यराशियां,–ये चारों ओरकी समस्त वस्तु सम्पत्तियां सब तुम्हारीहीहैं, बेटा ! अर्थोपार्जन (वाणिज्य) की समग्र विद्याओंको सीखो ॥ ६३–६४–६५–६६–६७ ॥ धूलिसे धूसर दरिद्रोंकी इन चेष्टाओंको छोडो (प्रथम) समस्त विद्याओंका अभ्यासकर, एवं उत्तम भोगोंके सुखसे दिन बिताओ ॥ ६८ ॥ वृद्धावस्था प्राप्त होनेपर तब भक्तियोगका आचरण करना," इस प्रकारसे पिताने उसे वारंवार सिखलाया पर हरिकेशने एकभी नहीं माना ॥ ६९ ॥ एक बार कहीं पिताकी दृष्टि रूखी (बदलीहुई) देखकर वह उदार बुद्धिमान् बालक घरसे डरकर निकल भागा ॥ ७० ॥ जाते जाते उसे दिशाभ्रम होगया, तब सोचने लगा कि–"हाय ! मैंने लडिकबुद्धिसे क्यों घर छोडदिया ? ॥ ७१ ॥ शम्भो ! अब कहां जाऊं ? कहां रहनेसे मेरा कल्याण होगा ? अब तो मैं अपने पिताका कि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मुआ होरहाहूं, मुझे कुछभी नहीं समझाई पडता (कि क्या करूं) ? ॥ ७२ ॥ पहिलेकी बातहै कि, मैं एकबार पिताके गोदमें बैठाथा, तो बातचीतमें किसी (साधु) ने यह वचन स्पष्टरूपसे कहाथा, जिसे मैंनेभी सुनाथा ॥ ७३ ॥ (कि) माता, पिता, और निजबन्धु बांधव गण जिसे परित्याग करदेतेहैं, एवं जिनकी कहींभी गति नहीं होती उनकी भी गति वाराणसीहीहै ॥ ७४ ॥ जिने वृद्धत (जरा) ने धर दबायाहै, और जो लोग व्याधियोंके मारे विकल होगयेहैं, एवं जिनको और कहीं पर ठेकाना नहीं है उन सबकी गति वाराणसीके भिन्न अन्यत्र नहींहै ॥ ७५ ॥ जो लोग पदपदमें विपदोंसे पददलित हुएहैं, पापराशियोंसे आक्रान्तहैं, दरिद्रतासे अभिभूतहैं, संसारके भयसे भीतहैं, कर्मबन्धनोंसे बंधगयेहैं, श्रुति स्मृतिसे हीनहैं, शौचाचारोंसे रहितहैं, योगसे भ्रष्ट होचुकेहैं, तप दानसे शून्यहैं, इन सबकी अन्यत्र कहींभी गति नहीं होती उनकी केवल वाराणसीही गतिहै ॥ ७६—७७—७८—७९—८० ॥ जिन लोगोंका बन्धुजनके मध्यमें पदपदपर अपमान होताहै, विश्वेश्वरका आनन्दकाननही एकमात्र उनको आनन्ददायकहै ॥ ८१ ॥ (क्योंकि) विश्वनाथके अनुगृहीत जिन निवासी सज्जनोंकी रुचि आनन्दकाननमें बनी रहतीहै उनीके लिये निरंतर वहांपर आनन्दका उदय होता रहताहै ॥ ८२ ॥ इस महाश्मशानमें निवास करनेसे समस्त कर्मरूपी बीज विश्वेश्वररूप अग्निसे भुंजकर (भस्महो) जातेहैं इसी कारणसे वहां अगतियोंकी भी परमगति होतीहै ॥ ८३ ॥ हरिकेशने यह सब विचारकर, जहांपर महादेवके प्रसादसे इस पार्थिव शरीरके त्याग करनेपर फिर देहसम्बन्ध नहीं होता उसी आनन्दवन अविमुक्तक्षेत्र काशीपुरीमें गमनकर, तपस्याका शरण लिया ॥ ८४—८५ ॥ उसके अनन्तर कुछकाल बीत जानेपर एकबार भगवान् शम्भु आनन्दकाननमें प्रवेशकर पार्वतीको अपना उत्तम उद्यान (बाग) दिखलाने लगे ॥ ८६ ॥ (प्रिये ! देखो, कैसी उद्यानकी शोभाहै ?) इस उद्यान (वाटिका) में मन्दार, मालती, नवमल्लिका, चूत, चंपक, कोविदार, करवीर, केतकी, कुरबक, विचकिला, बकुल, अशोक पुन्नाग और पाटल इत्यादि विकसित होकर कैसे दशों दिशाओंको परम सुगंधित कर रहेहैं ! इस नवमल्लिका (बेला) के परिमलामोदसे मत्त होकर भ्रमरगण गूंज रहेहैं ॥ ८७—८८—८९—९० ॥ बहुतसे स्थानोंपर भ्रमरपंक्ति मालाकार होकर भूतलमें लंबमान होरहींहै; इन हिलती हुई चन्दनवृक्षकी शाखाओंके अग्रभागपर कोकिलगण (कहूकुहू कहकर) क्रीडा कर-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हेहैं ॥ ९१ ॥ इस विशाल अंगरके द्वारा उत्तम जातिके विहंगगण मदमत्त हो
हेहैं, यह नागकेसरकी शाखापर स्थित शालभंजिका (पुतरी मनको) विनोदित कि
देतीहैं॥९२॥इस सुमेरुके समान ऊंचे नमेरु (रुद्राक्ष) वृक्षकी छायामें बैठे किन्नर
विहार कर रहेहैं, और किन्नरीका जोडा ऊंचे (गांधार) स्वरमें गारहाहै; किंशु
(परास) पर शुकगणभी गान कररहेहैं ॥ ९३ ॥ इधर (इन) कदमवृक्षके कुं
पर भौंरोंके जोडे गूंज रहेहैं, यह सुवर्णकेभी वर्णसे उत्तम (गहिरा) करना, विरा
मानहै ॥ ९४ ॥ (इन सब शाल ताल तमाल हिन्ताल और लबुटोंकी भरमारहै,
छितवनका सुगंध उड रहाहै, खजूरकी पंक्तियोंसे राजित, नारियर वृक्षोंसे आच्छादि
नारंगियोंके रंगसे रंगीला, ॥ ९५ ॥ बिजौरा नीबुओंसे हराभरा, महुओंपर मधुप
शोभित, नींबके बडे वन एवं सेमरकी ठंढी छायासे पूर्ण ॥ ९६ ॥ मधुर सुगंधवा
दौनोंसे छिपा, मरुवक (मयना) के वनसे प्रकाशित, लवली (हरफारेवडी)
लोल लीलाओंके कारण मन्द मारुतसे आन्दोलित होरहाहै ॥ ९७ ॥ भीलिनि
बाजनके समान झींगुरोंके झंकारसे शब्दायमानहै, कहींपर सरोवरके किनारे (सं
भूमीमें) वराहके दल क्रीडा कर रहेहैं ॥ ९८ ॥ उस मरालीके गलनालीव
मृणालकी अभिलाषासे मराल आसक्त होरहाहै, आनंदित चकवाके जोड
क्रीडामें केंकार शब्दोंसे सुन्दरसा जान पडताहै ॥ ९९ ॥ बकुलोंके
घूमरहेहैं, सारस सारसी पर आसक्त होरहाहै, मदसे मत्त होकर मयूर
पिहक रहेहैं, कपिंजल पक्षियोंके झुंडोंसे आकुल होरहाहै ॥ १०० ॥
जीवितो मानो जिलाये देतेहैं, (वह) कडरुआ कैसा उत्कट बोल रहाहै, बाक
जलमें संचार करनेसे शीतल वायु (मानो) पंखा झलरहाहै ॥ १ ॥ मन्दगति
हिलते हुए कमलोंकी धूलिसे चतुर्दिक् पीतवर्ण होरहाहै, (इस उद्यानके) विकसि
पंकजही (मानों) मुखमंडल, नीलकमलही लोचन, ॥ २ ॥ तमालही जटाजू
फटाहुआ अनार दंतपंक्ति, भ्रमरावलीही (काली कुटिल) भ्रूरेखा, सुग्गोंके ठोर
नासिका ॥ ३ ॥ बडेबडे कूपही कान, दूबोंकी ढेरही दाढी, कमलोंका सुगन्ध
निःश्वासवायु, कुन्दरुही ओठ ॥ ४ ॥ सुन्दर पद्मपत्रही वस्त्र, करनाका फूलही दि
षण, कमनीय शंखही उत्तमकंठ, ठूंठे वृक्षही स्कन्धके ऊंचे नीचे भाग ॥ ५
चन्दन वृक्षोंमें लिपटे हुए भुजंगराजही मंडित भुजदंड, अशोकके पल्लवही अंगूठे (
लियां), केतकी पुष्पही नख ॥ ६ ॥ शोभायमान सिंहही वक्षःस्थल, पहाडसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पत्थरके ढोंकेही बडा उदर, जलकी भंवारियांही नाभि, बडेबडे वृक्षही दोनों जंघायें ॥ ७ ॥ और स्थलारविंदही चरणके स्थानपर शोभा पारहेहैं, मत्त मातंगके समान इसकी गति जान पडतीहै, कोमल केराओंकी कियारियोंमें कदली दलहीका मानो चीनियां वस्त्र पहिन लियाहै ॥ ८ ॥ चारों ओरसे नानाविधके पुष्पमालाओंकी मानो माला डाल लियेहैं इसमें कंटैले वृक्ष नहीं हैं महिष और हिंस्र जन्तुगण (वैर छोडकर) भरेहैं ॥ ९ ॥ अहा !! चन्द्रकान्तमणिकी शिलापर सोकर कृष्णसार मृग मानो चन्द्रमाको कलंकित बना रहाहै अहा !! वृक्षोंके द्वारा विकीर्ण इन कुसुमोंने तो स्वर्गके तारोंकी शोभा जीत लीहै इसी प्रकारसे पार्वती देवीको उद्यानकी छटा दिखलाते हुये महादेवने (उस) वनमें प्रवेश किया ॥ ११० ॥ देवदेव बोले—अयि सर्वसुन्दरि ! देवि ! जैसे तुम मेरी परम प्रियतमा हो वैसेही यह आनन्द वनभी मुझे बहुतही प्रियहै ॥ ११ ॥ देवि ! इस आनन्दवनमें कालधर्मको प्राप्त करनेवाले जीवोंकी देह मेरे अनुग्रहसे अमृत पदको पाजातीहै और फिर उने जन्मभी नहीं लेना पडता ॥ १२ ॥ जितने जन्मधारी वाराणसीमें मृत्युगत होतेहैं, मेरी आज्ञासे श्मशानके प्रज्वलित अग्निमें उनके कर्मबीज भस्म होजातेहैं ॥ १३ ॥ गिरिराजकिशोरि ! जो लोग महाश्मशानमें दीर्घनिद्रा लेतेहैं फिर वे कभी गर्भमें शयन नहीं करते ॥ ॥ १४ ॥ जन्तुगण ब्रह्मज्ञान होनेहीसे मुक्त होतेहैं, प्रयागतीर्थ हो चाहे यह ब्रह्मज्ञानका क्षेत्र (काशी) हो कहींभी विना ब्रह्मज्ञानके मोक्ष होई नहीं सकता ॥ १५ ॥ इसी लिये मैं काशीवासियोंको अन्तकालमें वही ब्रह्मज्ञान रूप तारक (मंत्र) उपदेश करदेताहूं जिसके द्वारा वे सब उसी क्षण मुक्त होजातेहैं ॥ १६ ॥ जो लोग काशीमें मरनेवालोंकी निन्दा करतेहैं, वे तो पापकर्मोंको लेलेतेहैं और जो कि बडाई करतेहैं वे पुण्योंको ग्रहण करतेहैं, फिर वह जीव पापपुण्यसे शून्य होकर मुक्त होजाता है ॥ १७ ॥ देवि ! कलिके द्वारा उपहतबुद्धि और स्वभावतः चंचलेन्द्रिय मनुष्योंको ब्रह्मज्ञान कहांसे होसकताहै ? इसी कारणसे मैं इस स्थानपर उस ब्रह्मका उपदेश करताहूं ॥ १८ ॥ योगिगण ऐश्वर्यसे मोहित होनेपर योगभ्रष्ट होकर पतित होजातेहैं, परन्तु काशीमें पतित होकर फिर कभी संसारमें पतित नहींहोते ॥ १९ ॥ बहुतसे योगसाधनोंको करने परभी एकही जन्ममें तत्वज्ञान नहीं प्राप्त होता, परन्तु काशीमें देहान्त होनेसे मनुष्य एकही जन्ममें मोक्ष पाजाताहै ॥ १२० ॥ गिरिजे ! जीव मेरे अनुग्रहसे इस अविमुक्त महाक्षेत्रमें जैसा मुक्तिलाभ करताहै वैसा अन्यत्र कहींभी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नहीं (पासकता) ॥ २१ ॥ योगी अनेक जन्ममें योगाभ्यास करने परभी
पावे वा न पावे, परन्तु काशीमें तो मरतेही मात्र एकही जन्ममें मुक्ति मिल जातीहै
॥ २२ ॥ कलिकालमें न तो योगही सिद्ध होताहै, न तपस्याही सिद्ध होती
केवल न्यायपूर्वक अर्जित धनका दाता मनुष्य सिद्धिको तुरत प्राप्त कर सकताहै
॥ २३ ॥ व्रत, तप, यज्ञ, जप और देवपूजन (आदिकर्म) कलियुगमें मुक्तिके मा
नहीं होते एकमात्र दानही मुक्तिका कारण होताहै, क्योंकि काशी दानोंहीके
प्राप्त होतीहै ॥ २४ ॥ घोरकलिकालमें विश्वनाथही एकमात्र देवता; वाराणसीही मोक्ष
केवल भागीरथी गंगाही पुण्यप्रवाहिणी नदी और दानही एकमात्र विशेष धर्म है ॥२
काशीमें उत्तरवाहिनी गंगा और मेरा विश्वेश्वर लिंग—(बस) येही दोनों मुक्ति
दाताहैं, परन्तु कलियुगमें तो ये दोनों दानहीके बलसे प्राप्त होसकतेहैं ॥ २६
हे देवेश्वरि ! मेरे इस क्षेत्रकी सेवा करनेसे पुण्यवान् अथवा पापीहो वह जीव मु
होईजाताहै, इसमें कुछभी विचारना व्यर्थहै ॥ २७ ॥ मनुष्योंके शतजन्मार्जित
पुण्य पाप इस अविमुक्त क्षेत्रके माहात्म्यसे कर्मद्वारा कभी समर्थ नहीं होसक
॥ २८ ॥ अत एव, हे देवि ! मुमुक्षुजन वारंवार सैकडों विघ्न बाधाओंसे ठोकर
परभी कभी इस अविमुक्त क्षेत्रको न छोडे ॥ २९ ॥ जो लोग क्षेत्रसंन्यास
यहांपर वास करतेहैं, वे सब जीवन्मुक्तहैं, देवि ! मैं उनके विघ्नोंको हटाया करताहूं
॥ १३० ॥ योगियोंके हृदयाकाश कैलास वा मन्दर पर्वतपर मेरा रहनेका अभ्
वैसा नहींहै जैसा कि काशीमें प्रेमपूरण रहताहै ॥ ३१ ॥ काशीवासी जन
मेरेही गर्भमें निवास करतेहैं, अतएव मैं अन्तकालमें उनका मोचन करदेताहूं क्यों
यह तो मेरी प्रतिज्ञाहीहै मैं (प्रलयमें) तामसी प्रकृति धारणकर कालमूर्ति बन चरा
विश्वको लीलानुसार ग्रासकर जाताहूं किन्तु काशीकी प्रयत्नपूर्वक रक्षा करताहूं
॥ ३३ ॥ तपोधने ! गौरि ! देवि ! तुम और आनन्दभूमी काशी येही दोनों
नितांत प्रेमपात्रहैं, दूसरा नहीं ॥ ३४ ॥ काशीके विना मुझे स्थान नहींहै, कर
भिन्न कहींभी मेरा अनुराग नहीं है, काशीको छोड अन्यत्र कहींपर मुक्ति
नहीं है, यह मैं सत्य सत्य कररहाहूं ॥ ३५ ॥ इस ब्रह्मांड गोल
मध्य काशीमें मुक्ति जैसे अनायास व्यवस्थितहै, दूसरे स्थानपर अष्टांग
गाभ्यास करनेपरभी वैसी नहीं है ॥ ३६ ॥ देवदेव देवीसे योंही वार्ता
करते हुए, वनके बीच अशोक तरुके मूलमें स्थित तपस्या करते हुए हरिकेश

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देखने लगे (कि) ॥ ३७ ॥ उसकी नसें सूखगयीहैं पर उनीसे अस्थिसमूह बन्धेहैं, शरीर निश्चलहै, विमौरके कीडे चारों ओर रक्त और नसोंको सुखा दिये हैं ॥ ३८ ॥ हड्डियोंपर कहीं मांस नहींहै, वे सब स्फटिक शिलाके समान स्थिर पडीहैं, उनकी शोभा शंख, कुन्द, चन्द्र, हिम और महाशंखके समान होरहीहै ॥ ३९ ॥ प्राण अन्तःकरणके अवलंबनसे रहगयाहै, आयुः शेषही, (जीवनकी) रक्षा कर रहाहै, श्वास वायुके निकलने पैठनेहीसे जीवित होनेकी सूचना मिल रहीहै ॥ १४० ॥ पलकके गिरने और उठनेहीसे जान पडताहै कि जन्तुहैं, पिंगल तारासे शोभित नेत्रोंके उज्ज्वल (चमकतीहुई) ज्योतिसे दिशा प्रकाशित होरही हैं, ॥ ४१ ॥ उसके तपरूप अग्निशिखाको स्पर्श करनेवाले बनके वृक्ष झुरझुरा गयेहैं, (परन्तु) उसकी सौम्य दृष्टिरूपा सुधावृष्टिसे समस्त वृक्ष सींचे जारहेहैं ॥ ४२ ॥ उसके देखनेसे बोध होताहै—मानों निराकार निराकांक्ष साक्षात् तपही भक्तिवश मनुष्यका रूप धारण कर तपस्या कर रहाहै ॥४३॥ उसके चारों ओर मृगोंके बच्चोंका झुंड घूम रहाहै, और बडे भयंकर मुखवाले सिंहगण चतुर्दिक् रक्षा कर रहेहैं ॥ ४४ ॥ भगवती पार्वतीने उसको वैसी अवस्थामें देख महादेवसे निवेदन किया—ईश ! आप पर एकाग्रचित्त, आपहीके आधीन जीवन, आपही एकमात्र कर्म, आपहीके केवल आश्रय, (आपहीके) उग्र तपस्याओंसे परिशुष्क शरीर, निजभक्त, इस तपस्वी यक्षको वरदानकर अनुगृहीत कीजिये ॥ ४५–४६ ॥ (यह सुन) महादेवने नन्दीका हस्तावलंबन कर, पार्वतीके सहित वृषभवाहन परसे उतर दयार्द्रचित्तहो, समाधिके कारण निमीलितनेत्र हरिकेशको हाथसे सुहरा दिया ॥ ४७ ॥ तदनन्तर उस यक्षने अपने नेत्रोंको खोल सम्मुखही उदय होतेहुए सहस्रसूर्यके समान भगवान् त्रिलोचनको आगे देख, मारे हर्षके घबडाकर, गद्गद स्वरसे कहा ॥ ४८ ॥ हे ईश ! शम्भो ! गिरिजेश ! शंकर ! त्रिशूलपाणे ! शशिखण्डशेखर ! आपका जयहो, कृपालो ! आपके करकमल स्पर्शसे मेरी यह शरीरलता सुधासिक्त होगई ॥ ४९ ॥ (फिरतो) महेश्वर उस महातपोनिधि धीर भक्तकी द्राक्षा (अंगूरदाख) की समताको प्राप्त मधुर वाणीको सुन, प्रसन्नहो, वरोंकी ढेर देनेलगे ॥ १५० ॥ हे यक्ष ! मदीय वरसे तुम इस मेरे प्रियक्षेत्रके दण्डधर होकर आजके दिनसे यहांपर स्थिररहो दुष्टोंका शासन और शिष्टोंका पालन करो, एवं मेरे प्रेमपात्र होवो ॥ ५१ ॥ अब मेरी आज्ञासे तुम्हारा नाम "दण्डपाणि" पडेगा, और तुम इन उत्कट गणोंके नियमका व्यवहारकरो, एवं मनुष्योंमें यथार्थनामधारी संभ्रम

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

और उद्भ्रम ये दोनोंगण तुम्हारे अनुगामी होंगे ॥ ५२ ॥ तुम काशीवासियोंके अन्तकालमें इस प्रकारसे भूषितकरो कि, गलेमें नीलरेखा, हाथोंमें सर्पराज कंकण, भालमें सुन्दरनेत्र, पहिरनेको गजचर्मका वस्त्र, वामभाग वामनयनासे लक्षित, ॥ ५३ ॥ मस्तकपर पिंगल जटाजूट, एवं चन्द्रकलासे शोभायमान, सर्व शरीरमें पवित्र भस्मका अनुलेपन, और वृषभराजकी लीलागतिका मन्द गमन होवे (ऐसा संवारदो)॥ ५४ ॥ काशीनिवासी लोगोंके अन्नदाता, प्राणदाता, ज्ञानदाता एवं मुखके सुन्दर उपदेशके द्वारा मोक्षदाता अकेले तुम्ही होगे, और निश्चल उत्तम निर्वा (विधान) करोगे ॥ ५५ ॥ पिंगल ! पापियोंको बडे बडे विघ्नोंसे परिपीडित कर उन्हें संभ्रम उत्पादन पूर्वक क्षेत्रसे बाहर निकालदोगे, और भक्तजनोंको क्षणमात्र बहुत दूरसे भी (बुला) लाकर परम मोक्ष दोगे ॥ ५६ ॥ यक्षराज ! यह क्षेत्र सर्व प्रकारसे तुम्हारे आधीन होताहै, यहांपर बिना तुम्हारी आराधना किये कौन मुक्तिका पात्र बन सकताहै ? अतएव मेरे भक्तमात्र प्रथम तुम्हारी पूजा करके तब पीछे मेरा समर्चन करें ॥ ५७ ॥ तुम मेरे इस पुरमें अध्यक्ष होकर ग्राम वासके दाता और दंडनायक हो ओ, काशीके शत्रु दुष्टोंको उखाड कर सर्वदा सहर्ष इस काशीपुरीकी रक्षा करो ॥ ५८ ॥ हे पूर्णभद्रसुत ! दंडनायक ! यक्ष ! पिंगल ! हरिकेश ! तुम त्रिलोचनबन, काशीवासियोंके अन्न ज्ञान एवं मोक्षके दाता और समस्त गणोंके अग्र गण्य होवो ॥ ५९ ॥ मेरी भक्तिसे युक्त होनेपरभी मनुष्य विना तुम्हारी भक्ति काशीमें निवास न प्राप्त कर सकेगा, दंडपाणे ! तुम समस्त गण और देवदानवोंमें अग्र मान्य होगे ॥ १६० ॥ ज्ञानवापी तीर्थमें स्नान तर्पणादि क्रियाओंको कर जो तुम्हारी आराधना करेगा, हे गणश्रेष्ठ ! वह पुण्यवान् इस लोकमें मेरे अतुल अनुग्रहसे कृतकृत्यताको प्राप्त होगा ॥ ६१ ॥ दण्डपाणे ! तुम मेरे सामने (सम्मुख) दक्षिण दिशामें दुष्टोंको दंड और निजजनोंको अभयदान करतेहुए यहांपर अपना निज विधान सम्पादनकरो ॥ ६२ ॥ स्कन्द बोले—हे विप्र ! भगवान् गिरीश दंडपाणिको इस प्रकारसे वर प्रदान कर, वृषभराज पर चढ आनन्दवनमें चले गये ॥ ६३ ॥ कुम्भोद्भव ! तबसे यक्षराज दंडनायक आदेशानुसार वाराणसी पुरीकी पूर्णरीति शासन कर रहेहैं ॥ ६४ ॥ मैंभी उनीकी डाहसे यहांपर निवास करता पडाहूं, क्योंकि जब मैं काशीमें रहताथा तो उस घडी उनकी मर्यादाका पालन नहीं कर सका ॥ ६५ ॥ मुनिवर ! मेरी समझमें आप ऐसे जितेंद्रिय पुरुषको भी जो काशी छोडदेनी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उसकाभी कारण उनका अपमान (बिगाड) ही होसकताहै ॥ ६६ ॥ द्विजवर ! हरिकेश काशीमें यदि तनिकभी विरुद्ध आचरण देख पावें तो फिर वहांका रहना और सुख भोगना कहां (से होसकताहै) ॥ ६७ ॥ दंडपाणिकी आराधना न करनेसे किसी भांति सुख प्राप्तिकी सम्भावना नहींहै, मैं तो बहुत दूरपर रहकरभी काशीमें प्रवेश करनेकी इच्छासे (सदा) उनका भजन करता रहताहूं ॥ ६८ ॥ (कि) हे रत्नभद्रके पुत्र ! पूर्णभद्रके तनयश्रेष्ठ ! यक्ष ! शिव प्राप्ति (मोक्ष) के लिये निर्विघ्न-रूपसे मेरा काशीवास करा दीजिये ॥ ६९ ॥ महामते ! दंडपाणे ! वह पूर्णभद्र यक्ष धन्यहै, और वह कांचन कुंडलाभी धन्यहै, जिन दोनोंके जठरपीठसे आपने जन्म ग्रहण कियाहै ॥ १७० ॥ हे यक्षराज ! आपही सर्वोत्कृष्टहैं, पिंगलनयन ! आपका जय हो; हे पिंगल जटाभार ! आपसे उत्तम और कोईभी नहींहै, हे दंडमहायुध ! आपका (सर्वदा) जय होवे ॥ ७१ ॥ हे अविमुक्त महाक्षेत्रके सूत्रधार ! उग्र तापस ! दंडनायक ! भीममुख ! विश्वेश्वरप्रिय ! आपका जयहो ॥ ७२ ॥ हे सौम्योंके प्रति सौम्यवदन ! एवं भीषणोंके लिये भयानक ! आप क्षेत्रमें पापबुद्धि करने वालोंके कालहैं, और महाकालके परम प्रेमपात्रहैं ॥ ७३ ॥ हे प्राणप्रद ! यक्षेन्द्र ! आपही काशीमें बास अन्न और मोक्षके भी दाताहैं, आपका शरीर महार-त्नोंके चमकते हुए किरण जालोंसे चर्चितहै, आपका जयहो ॥ ७४ ॥ आप (तो सर्वदेव) अभक्त लोगोंके संभ्रांति जनक और उद्भ्रान्ति दाताहैं, एवं भक्तवर्गके संभ्रम और उद्भ्रमके नाशकहैं ॥ ७५ ॥ हे अन्तिम शृंगारचतुर ! ज्ञाननिधिप्रद ! आपका जयहो, हे गौरीचरणकमल भ्रमर ! मोक्षकाल ज्ञाननिपुण ! आपका (सदा) जय हो ॥ ७६ ॥ हे अगस्त्यमुने ! काशीके प्राप्ति निमित्त मैं त्रिकाल इस पवित्र यक्ष-राजाष्टक (स्तोत्र) को नित्यही जपा करताहूं ॥ ७७ ॥ जो कोई बुद्धिमान् जन इस दंडपाणिके अष्टकका श्रद्धा पूर्वक पाठ करताहै, वह कभीभी विघ्नोंमें नहीं पडता, और काशीवासका फलभी प्राप्त करताहै ॥ ७८ ॥ इस दंडपाणिके उत्पत्तिकी कथा सुनने एवं स्तोत्रके पाठ करनेसे अन्यत्र मरनेपरभी जन्मान्तरमें काशी प्राप्त होतीहै ॥ ७९ ॥ दंडपाणि प्रादुर्भाव नामक इस पवित्र अध्यायके पाठकरने पाठकराने और सुननेसे कभी विघ्नकी बाधायें नहीं होतीं ॥ १८० ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दोहा—भये प्रकट हरिकेश जिमि, दंडपाणि पद पाय ।
अतिपुनीत तिनकी कथा, कही षडानन गाय ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां दण्डपाणिप्रादुर्भाववर्णनं नाम द्वात्रिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ३२ ॥

तेतीसवां अध्याय ।

ज्ञानवापीवर्णन ।

अगस्त्यने कहा—हे स्कन्द ! संप्रति आप ज्ञानोदतीर्थका माहात्म्य कीर्तन कीजि क्यों कि स्वर्गवासी देवगणभी ज्ञानवापीकी बडी प्रशंसा करते हैं ॥ १ ॥ स्क (जी) बोले—महाप्राज्ञ ! घटोद्भव ! (अच्छा तो) अब मैं पापहारिणी ज्ञानवापी उत्पत्तिकथा कहताहूँ आप सुनिये ॥ २ ॥ हे मुने ! जब कि पूर्वकालमें सत्य वर्तमान हुआ तो अनादिसिद्ध इस संसारमें, मेघ जलकी वृष्टि नहीं करतेथे, नदियें नहीं बहतीं थीं, फिर उस समयमें स्नान पान आदि कर्मोंमें लोग जलको चाहते नहींथे, तब लवणाकर वा महोदधि, समुद्रोंहीमें जलका दर्शन होताथा और पृथिवी जहां तहां (कहीं कहीं) मनुष्योंका संचार वर्तमान होगयाथा, उसी कालमें ह नामक दिग्पाल कहींसे योंही इधरउधर घूमते फिरते वहां जापडे ॥ ३–४-५ जहां मोक्षलक्ष्मीका क्षेत्र, महाश्मशान, समस्त कर्मबीजोंकी ऊसरभूमी, महामो सोतेहुए जन्तुओंका प्रतिबोधक, संसारसागरके भंवरियोंमें चक्कर खाकर डूबते लोगों अवलंबनरूपा महानौका (जहाज) ॥ ६–७ ॥ आवागमनसे बहुतही थके जीवोंका विश्राममंडप, अनेक जन्मके संचित कर्मसूत्रका काटनेवाला छूरा ॥ ८ सुखसंतानका जनक मोक्षके साधनोंकी सिद्धियोंका दाता सत् चित् आनन्दका घ परब्रह्म रसायन, श्रीआनन्दकानन विराजमान है ॥ ९ ॥ तब शोभायमान त्रिन निर्मल किरणसमूहोंसे व्याप्त उस जटाधारी ईशानने इस क्षेत्रमें प्रवेशकरके ॥ १० उस महालिंगको देखा जो ब्रह्मा और विष्णुके (श्रेष्ठत्व विचारकी) बडी अहम काके समयहीसे प्रकट हुआ था ॥ ११ ॥ जिसके चतुर्दिक् ज्योतिर्मयी मालायें वेष्टितथीं देवता, ऋषि प्रमथ सिद्ध, एवं योगियोंके गण निरंतर प्रतिक्षण जि पूजा कररहेथे गंधर्वलोग गान करतेथे, चारणगण स्तुति कररहेथे ॥ १२–१३ अप्सरायें बहुधा नाचकर सेवा कररहीथीं, नागकन्यायें मणिके दीपकोंसे सतत

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उतारहीथीं ॥ १४ ॥ विद्याधरी और किन्नरियां त्रिकाल शृंगार बनाया करतीथीं देवाङ्गनायें इधर उधर चामरोंको दुरा रहीं थी ॥ १५ ॥ इस ईशान दिक्पालकी उस वेलापर उस लिंगके दर्शनसे यह इच्छा होगई कि इस महालिंगको कलशके शीतल जलसे स्नान करवाऊं ॥ १६ ॥ तब रुद्रमूर्ति ईशानने त्रिशूलसे दक्षिणदिशामें अति समीपही प्रचंडवेगसे एक कुण्ड खोदा ॥ १७ ॥ मुनिवर ! अनंतर उसमेंसे पृथिवी-मंडलके आवरणरूप और भूमिप्रमाणसे दसगुने अधिक होकर जिनके द्वारा यह वसुधा घिरी हुईहै वेही जल निकलपडे ॥ १८ ॥ कुंभयोने ! तब उस ईशानदिक्पालने अन्य शरीरधारियोंसे अस्पृष्ट, अत्यंत शीतल, जडतापहारक, पापावली नाशक॥ १९॥ सज्जनोंके चित्त सदृश स्वच्छ, आकाशमार्गके समान कुछ नीलवर्ण चन्द्रिकाके ऐसे धवल, शम्भुनामोंकी नाईं पावन ॥ २० ॥ अमृतसम स्वादिष्ट, गौओंके अङ्गतुल्य सुखस्पर्श, निष्पाप बुद्धिमानोंके समान अगाध (धीर गंभीर) पापियोंके ऐसे चंचल ॥ २१ ॥ कमल एवं पाटलाके सुगन्धोंसे परिपूर्ण, अदृष्टपूर्व लोगोंके नयन मनोहारी ॥ २२ ॥ अज्ञानरूप संतापसे तप्त प्राणियोंके एकमात्र प्राणरक्षक, पंचामृतके कलश स्नानसेभी अधिक फलप्रद ॥ २३ ॥ श्रद्धापूर्वक आचमन करनेवालोंके हृदयमें लिंग त्रितयके कारण (जनक), अज्ञानतिमिरके सूर्यतुल्य, ज्ञान दानके निदान ॥ २४ ॥ उमाके स्पर्शसुखकी अपेक्षा विश्वेश्वरके अत्यंत सुखकारी, बडे अवभृथस्नानसेभी अधिक शुद्धिविधायक ॥ २५ ॥ उन जलोंके द्वारा सहस्रधार कलशोंसे प्रसन्नचित्त होकर सहस्रबार स्नान कराया ॥ २६ ॥ अनंतर विश्वविलोचन भगवान् विश्वात्मा प्रसन्न होकर उस रुद्रमूर्ति ईशानसे कहनेलगे ॥ २७ ॥ "हे सुव्रत ! ईशान ! अन्य किसी-के अपूर्वकृत और मेरे परमप्रीतिकर, इस बडे (भारी) तुम्हारे कर्मसे, मैं प्रसन्नहूं ॥ ॥ २८ ॥ अतएव, हे तपोधन ! जटिल ! ईशान ! तुम वरको कहो, हे महोद्यम-परायण ! आज तुम्हारे लिये कुछभी अदेय नहीं है" ॥ २९ ॥ ईशानने कहा— 'देवेश ! यदि आप प्रसन्न हुएहैं" और यदि मैंभी वरदानका पात्र होगयाहूं, तो हे शंकर ! यह तीर्थ आपके नामसे अतुलनीय होजावे" ॥ ३० ॥ विश्वेश्वर बोले— त्रिभुवन और भूर्भुवः स्वर्लोकमें जितने तीर्थ स्थित हैं, उन समस्त तीर्थोंसे यह शिव-तीर्थ श्रेष्ठ है ॥ ३१ ॥ शिवशब्दके अर्थचिन्तक लोग शिवका अर्थ "ज्ञान" ही कहतेहैं, इस तीर्थमें वही ज्ञान मेरी महिमाके बलसे द्रवरूप होगयाहै ॥ ३२ ॥ इस लिये यह तीर्थ ज्ञानोदनामसे त्रैलोक्यभरमें प्रसिद्ध होताहै, इसके दर्शनमात्रसे समस्त

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पाप छूटजातेहैं ॥ ३३ ॥ इस ज्ञानोदतीर्थके स्पर्श करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल
स्पर्शन एवं आचमनसे राजसूय और अश्वमेध इन दोनोंही यज्ञोंका फल प्राप्त होजा
है ॥ ३४ ॥ फल्गुतीर्थमें स्नान और पितरोंका तर्पण करके मनुष्य जो फल पावे
यहांपर श्राद्धकरनेसेभी वही फल मिलताहै ॥ ३५ ॥ गुरुवार, पुष्यनक्षत्र, शुक्लप
अष्टमीतिथि, एवं व्यतीपात योग जब होवे, तब यदि कोई यहांपर श्राद्ध करे तो फ
श्राद्धसे कोटिगुण अधिक फल प्राप्त होवे ॥ ३६ ॥ पुष्करतीर्थमें पितृतर्पण करे
जो फल मिलताहै, इस ज्ञानतीर्थमें केवल तिलजलके द्वारा तर्पण करनेसे उस
अपेक्षा कोटिगुण फल अधिक प्राप्त होताहै ॥ ३७ ॥ रामह्रद कुरुक्षेत्रतीर्थमें सू
ग्रहणपर्वपर पिंडदान करनेसे जो फल होताहै, इस ज्ञानोदतीर्थमें प्रतिदिन वही फल
॥ ३८ ॥ जिन लोगोंके पुत्रोंने इस ज्ञानतीर्थमें पिंडदान करदियाहै, वे सब ब्रह्म
वधि शिवलोकमें आनन्द भोगकरते रहतेहैं ॥ ३९ ॥ यदि कोई नरोत्तम अष्टमी औ
चतुर्दशीको उपवासी होकर इस तीर्थमें प्रातःस्नान एवं जलपान करे, तो उसका अन
करण (शिव) लिंगमय होजावे ॥ ४० ॥ जो कोई एकादशीको व्रतकर इस
तीन चिल्लू जल पीलेताहै, उसके हृदयमें निस्सन्देह तीन (शिव) लिंग उत्पन्न
जातेहैं ॥ ४१ ॥ जो कोई विशेषतः सोमवारको इस ईशानकृत तीर्थमें स्नान, दे
ऋषि और पितरोंका तर्पण और यथाशक्ति दान करके ॥ ४२ ॥ तदनंतर बडे
विस्तारसे विश्वेश्वरकी पूजा और वहांपर भी नाना प्रकारके द्रव्योंको वितरण करे
वह नर कृतकृत्य होजावे ॥ ४३ ॥ यथाकाल सन्ध्या न करनेसे कालले
जो पाप होताहै इस ज्ञानोदतीर्थमें सन्ध्योपासन करनेसे वह पाप क्षणमात्रमें दू
जाताहै, और द्विजाति ज्ञानवान् होजाताहै॥ ४४ ॥ यही शिवतीर्थ, यही शुभ
तीर्थ, इसीका नाम तारक तीर्थ और यही निश्चयरूपसे मोक्षतीर्थ कहागयाहै ॥ ४५
इस ज्ञानोदतीर्थके स्मरणमात्रसे पापराशि विनष्ट होजातीहै, और इसके दर्शन स्प
स्नान पान करनेसे धर्मादि पुरुषार्थके चतुर्वर्गका फल लाभ होसकताहै ॥ ४६ ॥
शिवतीर्थके जल देखनेहीसे डाकिनी, शाकिनी, भूत, प्रेत, वेताल, राक्षस, ग्रह, कूष्म
झोटिंग, कालकर्णी, बालग्रह, ज्वर, अपस्मार (मृगी) विस्फोटक (चेचक-शीतल
अंतरिया, चौथिया, आदि सब शान्त होजाते हैं ॥ ४७–४८ ॥ जो बुद्धिमान्
ज्ञानोदतीर्थके जलसे शिवलिंगको नहवाताहै, उसे समस्त तीर्थोदकसे स्नान करनेका
फल अवश्यही प्राप्त होजाताहै ॥ ४९ ॥ इस स्थानपर ज्ञानरूपी मैंही ब्रह्ममूर्ति

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कर लोगोंकी जडताका नाश और ज्ञानोपदेश करता रहूँगा ॥ ५० ॥ इस प्रकारसे वरदान करके भगवान् शंभु वहांही पर अन्तर्धान होगये, और उस त्रिशूलधारी, जटिल, रुद्रमूर्ति, ईशाननेभी अपनेको कृतार्थ माना, एवं उस परम (उत्तम) जलको पानकर उत्कृष्ट ज्ञान लाभ किया, जिसके द्वारा ब्रह्मानंद प्राप्त हुआ ॥ ५१ ॥५२॥ स्वामिकार्तिकेय कहने लगे—कलशोद्भव ! इस ज्ञानवापी पर एकबार विचित्र घटना होगईथी, उसका पुरातन इतिहास कहताहूं, श्रवण कीजिये ॥ ५३ ॥ पूर्वकालमें हरिस्वामी नामक एक ब्राह्मण काशीमें रहतेथे, उनको एक कन्या उत्पन्नहुई जो पृथिवीपर सौंदर्यमें अनुपम थी ॥ ५४ ॥ उसके समान शीलसंपत्तिशालिनी (उस समय) भूतलपर कोईभी नहींथी, वह समस्त कलाओंमें चतुर, और कोकिलसेभी अधिक सुरीली बोली बोलतीथी ॥ ५५ ॥ न कोई नारी, न देवी, न किन्नरी, न विद्याधरी, न नागकन्या, न गन्धर्वकन्या, न दैत्यकन्या,—कोईभी उसके समान थी ॥ ५६ ॥वह समस्त सुन्दरताकी भूमि और शुभलक्षणोंकी खानि होगईथी, मानों अंधकार सूर्यके भयसे उसके माथेपर केशोंमें जा छिपाथा ॥ ५७ ॥ मुख देखनेसे जान पडताथा, मानों अमावास्यामें नाश होजानेके डरसे चन्द्रमा उसके मुखका शरणागत हुआहै, और वह दिनमेंभी चंडरश्मि (सूर्य) के भयसे वहांही पडारहता है ॥ ५८ ॥ उसकी भ्रू मानों भ्रमरपंक्तिके समान गंडपत्रलताके मध्यमें ऊपर नीचे उडनेका अभ्यास कररहीथी ॥ ५९ ॥ उसके सुन्दर नयनरूपी खेतमें दो खंजन विचरण करतेहुए स्वेच्छानुसार सर्वदैव शरद ऋतुका आनन्द भोग कर रहेथे ॥ ६० ॥ उस सुदतीके दंतपंक्तिरूपी पत्रोंपर मानो पंचबाणने सुनहुली रेखा खींच रक्खीथी, क्योंकि चन्द्रमामेंभी ऐसी रेखा कहांहै ! ॥ ६१ ॥ प्रवाल (मूंगा) के समान रंगीले उसके ओष्ठाधर तो मानों मदन भूपालके प्रासादपरके रत्नोंहीसे सुशोभित होरहेथे ॥ ६२ ॥ उसके कंठकी तीनों रेखाओंके व्याज (बहाने) से मानो कामदेव यह शपथ करताथा कि स्वर्ग, मर्त्य, पाताल कहींपरभी किसी स्त्रीके कंठमें यह रेखा नहीं है ॥ ६३ ॥ उसके दोनों कुचोंको देख मनमें यही शंका होतीथी कि—मनोज महाराजके बहुमूल्य रत्नकोशोंसे परिपूर्ण सुशोभित दोठो पटमंडप(डेरे—खडे)हैं "मानो मढे सुलतानी बनातमें शाह मनोजके गुंमज दोऊ"—ऐसाही भाव टपकताहै ॥ ६४ ॥ विधाताने उस नतभ्रूके अदृश्य मध्यदेशमें कामदेवके स्थान परिचयार्थ, रोमावलीरूपा लक्षित करानेवाली मानो ऊंची छडीही बनादीथी ॥ ६५ ॥ उसकी नाभिरूपा गुफामें पडकर मानों कंदर्प

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अंगहीन (अनंग) होगया और वही वहांपर बैठ फिर अंग पानेके लिये घोर तपस्या
कररहा है ॥ ६६ ॥ उसके गुरु नितम्बने मन्मथके महामन्त्र दीक्षाद्वारा जपके
किन किन जवानोंके नेत्रकी टक्टकी नहीं बंधवादी ॥ ६७ ॥ उसके बडेही सुंदर
ऊरुरूपी गोलखम्भेसे किस मुनिजनकाभी सच्चरित्र चित्त स्तम्भके समान स्थिर
नहीं होगया ? ॥ ६८ ॥ हे मुने ! उस मृगनयनीके चरणांगुष्ठके नखज्योतिकी प्रभा
किसकी विवेकजनित प्रभा विध्वंस नहीं होगईथी ॥ ६९ ॥ वह कन्या प्रतिदिन
ज्ञानवापीमें स्नानकर एकाग्रचित्त हो शिवालयमें संमार्जनादि (झाडू बोहाडू) नि
करतीथी ॥ ७० ॥ उस (कन्या) के चरणकी परछांहीमें रेखारूप तृणांकुर
चरपानेसे आनंदवनके नव जवानोंका मनोमृग उसे छोड दूसरे वनमें नहीं जाया चाहता
था ॥ ७१ ॥ युवकोंकी नेत्ररूप भ्रमरमाला उसके कमलमुखको छोड सुगन्धसे
भरी और पुष्पोंसे लदीहुई दूसरी लताका सेवन नहीं करतीथी ॥ ७२ ॥ वह कन्या
विशालनेत्र होनेपरभी किसी पुरुषका मुख नहीं देखती और सुन्दरकर्णा होने पर भी
किसी पुरुषका वचन नहीं सुनतीथी ॥ ७३ ॥ वह शीलसंपन्ना, सुशीला, उस
विरहसे आतुर सुन्दर रूपवान् पुरुषोंसे गुप्तरीतिपर विवाहकी प्रार्थना कियी जानेपर
अभिलाषवती नहीं हुई ॥ ७४ ॥ जवानोंने उसके पितासेभी बहुत धन देनेकी प्रतिज्ञा
कर विवाहकी प्रार्थना की परन्तु वहभी उस सुचारित्रशोभासंपन्न सुशीलाको अपने
हाथमें नहीं देसका ॥ ७५ ॥ उस कालमें वह सुशीला कुमारी ज्ञानोदतीर्थकी प्राप्ति
करनेके कारणसे बाहर और भीतर सब जगत् लिंगमयही देखतीथी ॥ ७६ ॥ एक
बार कोई विद्याधर उसे घरके आंगनमें सूतीहुई देख उसके रूप लावण्यसे मोहित
होकर उसे हरलेचला ॥ ७७ ॥ (आगे चलकर) आकाश मार्गमें रात्रिकी देवी
जबतक वह उसे मलयपर्वतपर लेजाया चाहताथा इसी बीचमें नरकपालका कुंडल
पहिने, वसा (चरबी) और रुधिर सर्वांगमें पोते, बडा दढियल, पिंगललोचन, भयं
करमूर्ति विद्युन्मालीनाम राक्षस वहां पर पहुँचगया ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ और कहने
लगा—"अरे विद्याधरकुमार ! बहुत दिनपर तुझे देख पायाहै, आज तुझे इस की
साथ यमके घर भेजदेताहूं" ॥ ८० ॥ इस वचनके सुनतेही वह कन्या
बाघके सूंघनेपर हरिणीके समान अत्यन्त भयभीत होकर वारंवार केलाके पत्ते
कांपनलगी ॥ ८१ ॥ (उधर) राक्षसने त्रिशूलसे उस विद्याधरको मारा, अत
मधुरमूर्ति, महाबली वह विद्याधरकुमारभी उसके भीषण त्रिशूलके आघातसे विह्वल

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वक्षःस्थल होकर, मनुष्यके मांस और वसासे मत्त उस विद्युन्मालीको युद्धमें वज्रपातके सदृश मुष्टिप्रहारसे मारनेलगा. अनंतर वह राक्षस मुक्कोंकी चोटसे चकनाचूर होकर भूतलपर गिरपडा और मृत्युके वशंगत होगया (इधर) विद्याधरभी उसके शूलाघातसे विकल और घूर्णितनयन होकर गद्गदस्वरसे बोला—"प्रिये ! तुमको व्यर्थही लाया सुश्र !" (बस) इसी आधे नामको कहता और सर्वतोभावसे अपनी प्रियाको स्मरण करताहुआ उस वीरने रणमें प्राणत्याग करदिया॥ ८२—८३—८४—८५—८६—८७॥ अतःपर उस कन्यानेभी अनन्यपूर्व स्पर्शसुखके अनुभव करनेसे उसीको पति मानकर शोकानलमें देहको डालदिया ॥ ८८ ॥ एकओर तो वह राक्षस लिंगत्रयशरीरिणी उस कन्याके सान्निध्यवश मरनेपर दिव्यदेह धारणकर स्वर्गको चलागया ॥ ८९ ॥ दूसरी ओर वह विद्याधरकुमारभी रणमें प्राणपणकर अन्तमें प्रियाके स्मरण करनेसे मलयकेतुका पुत्र हुआ ॥ ९० ॥ और वह कन्याभी विद्याधरकुमारका ध्यान करती हुई विरहानलमें प्राणत्याग करनेसे कर्णाटदेशमें उत्पन्न हुई ॥ ९१ ॥ कुछ काल बीतनेपर मलयकेतुका पुत्र, मदनसुन्दर, उस माल्यकेतुने पिता कर्णाटेश्वरसे दीगई कलावतीसे विवाह करलिया ॥ ९२ ॥ वह सहजसुन्दरी पतिव्रता, कलावती, पूर्वजन्म के संस्कारबलसे शिवलिंगके पूजनमें तत्पर होकर, चन्दनको छोड विभूतिहीको श्रेष्ठ समझनेलगी ॥ ९३ ॥ योंही मोती वैडूर्य (लहसुनिया) माणिक, पुष्पराग (पोखराज) आदि रत्नोंकी अपेक्षा रुद्राक्षहीका शृंगार अमूल्य माननेलगी ॥ ९४ ॥ परम सती कलावतीने माल्यकेतुको पति पाकर दिव्यभोगोंकी समृद्धियोंका सुख और तीन सन्तान लाभ किया ॥ ९५ ॥ एकबार उत्तरदेशके निवासी किसी एक चित्रकारने माल्यकेतु नरपालको एक विचित्र चित्रपट (तसवीर—नकसा) दिखलाया ॥ ९६ ॥ अनंतर राजाने उस चित्रपटीको लेकर कलावतीको समर्पण किया, वह उस रम्य चित्रपटीमें अपने प्राणदेवताको एकान्तमें वारंवार देखती देखती आनन्दसे पुलकित हो समाधिमें बैठीहुई योगिनीकी नांई अपनेकोभी भूलगई ॥ ९७—९८ ॥ अनेक क्षणके अनंतर आँखें खोलकर चित्रपटीको देखतीहुई, तर्जनी अंगुलिके अग्रभागको रखरखकर अपनेको समझानेलगी ॥ ९९ ॥ यह लोलार्कके समीप असीनदीका संगमहै, आगेकी ओर आदिकेशवके पदतलमें यह सरिद्वरा वरणा नदीहै ॥ १०० ॥ स्वर्गमें देवतागणभी जिसके स्पर्शकी लालसा कियाकरतेहैं यह वही स्वर्गतरंगिणी उत्तर दिशामें बहरहीहैं ॥ १ ॥ सज्जनोंके विमुक्त्यर्थ जो वेदान्तशास्त्रमें अलक्ष्य मोक्ष

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लक्ष्मी कहीजातीहै यह वही श्रीमती मणिकर्णिका है ॥ २ ॥ (अहा ! हा !! जहांके
मरना मंगल और जीवन सफल होताहै जिसके सामने स्वर्गभी तृणके समान
यह वही श्रीमती मणिकर्णिका है ? ॥ ३ ॥ जहांपर लोग मृत्युकी कामना
समग्रसम्पत्तिके संभारको दानकर, कंदमूलभोजी हो, पतिव्रतावलंबनपूर्वक रहतेहैं
॥ ४ ॥ जिस भूमिमें भगवान् हर अपने मस्तक स्थित बालचन्द्रके प्रकाशसे मुक्ति
मार्गको दिखलातेहुए त्रिमार्गगा गङ्गाके (तटमें) मृत लोगोंको अन्वेषण करते रहते
॥ ५ ॥ जिस स्थलपर स्वयं शंकर दुर्वार संसार सागरसे पार उतार देतेहैं, मनुष्य
जिनको कर्णधार (खेवैया) पाकर मृत होनेपरभी अमृत (मुक्त) होजातेहैं ॥ ६
जहां कि, करुणासागर महेश्वरके कर्णेजप होजानेसे संसाररूपी दृढमार्ग अत्यन्त
नहीं रहजानेपाता ॥ ७ ॥ जहाँपर लोग अनेक जन्मके संचित बडेही पुण्यबल
अन्तकालमें भवतापहारी भगवान् भवानीपतिको कर्णेजप (गुरु) पाजातेहैं ॥ ८
जिसके प्रभावसे बडे बुद्धिमान् जन, क्षेत्रसंन्यास लेकर यमराजकोभी तृणवत् मान
लगतेहैं यह वही श्रीमणिकर्णिका है ॥ ९ ॥ जहांपर राजर्षिसत्तम हरिश्चन्द्रने
त्नीक अपने शरीरको तृणवत् बेंचडालाथा यह वही स्थानहै ॥ १० ॥ वैकुंठका
लोगभी जहांके वालुकाको कोमल शय्याके सदृश चाहते रहतेहैं ॥ ११ ॥ जहां
जीवगण अनेक जन्मजनित कर्मसूत्रके बंधनको काटकर मुक्त होजातेहैं ॥ १२
एवं सत्यलोकके निवासी लोगभी जिस स्थानको महानिद्रा (मृत्यु) के लिये निरंतर
प्रार्थना करतेही रहतेहैं यह वही मणिकर्णिका विराजमानहै ॥ १३ ॥ यह वही कुछ
स्तंभ (कोहुआ—वालाट) है जहांपर श्रीकालभैरव, दारुण यातना दिखलातेहुए क्षेत्र
में पाप करनेवालोंका शासन करतेहैं ॥ १४ ॥ दूसरे स्थानोंका कियाहुआ
काशीके देखतेही विनष्ट होजाताहै, परन्तु काशीमें कियेहुए पापोंके लिये यह
भैरवी यातना भोगनीही पडतीहै ॥ १५ ॥ यह तो वही पवित्र कपालमोचन तीर्थ
जहांपर भैरवके हाथसे ब्रह्माका कपाल गिरपडाथा ॥ १६ ॥ जहांपर स्नान करके
उत्तम नर देव ऋषि और पितृऋणसे मुक्त होजातेहैं, यह वही देहशोधन ऋणमोचन
तीर्थ है ॥ १७ ॥ प्रणवनामक परंब्रह्म जहांपर नित्यही प्रकाशमान रहतेहैं, पंचायतन
के सहित अद्भुत (शक्तिमान्) यह भगवान् ओंकारेश्वरहै ॥ १८ ॥ जहांपर अकार
उकार मकार नाद और बिन्दु ये पांचों (ओंकारमध्यवर्ती) पंचात्मक परब्रह्म नित्य
प्रकाशित रहतेहैं ॥ १९ ॥ यह वही सम्य मत्योदरी तीर्थहै जिसमें स्नान करनेसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उत्तम मनुष्यगण फिर कभी माताके उदर—दरीमें प्रवेश नहीं करते यह बात निश्चितहै ॥१२०॥ देशांतरमें स्थितभी निज भक्तजनको त्रिलोचन बनानेवाले कृपालु भगवान् यही त्रिलोचनहैं ॥२१॥ यह कामेश्वर देवहैं, जो सज्जनोंके सकल कामोंको पूराकरते हैं;जहांपर दुर्वासा ऐसे क्रोधी ऋषिनेभी अपनी कामनाके महोदयको प्राप्त कियाथा॥२२॥ यहांपर महेश भक्तजनोंकी कामना सिद्धिके लिये स्वयं लीन हो बैठेहैं, अतएव इस शिवलिंगका नाम स्वर्लीनेश्वर पडाहै ॥ २३ ॥ वाराणसीमें क्षेत्राभिमानी भगवान् महादेव जो पुराणोंमें पढेजातेहैं यह उन्हींका विचित्र प्रासाद (दृष्टिपडता) है ॥ २४ ॥ यह स्कन्देश्वर देव हैं, श्रद्धापूर्वक जिनका दर्शन करनेसे मनुष्य आजन्म ब्रह्मचर्य्य करनेका फल लाभ करताहै ॥ २५ ॥ यह वही सर्वसिद्धिदाता विनायकेश्वर देव हैं जिनके सेवन करनेसे मनुष्यके समस्त विघ्न दूर भागजातेहैं ॥ २६ ॥ यह साक्षात् मूर्तिमती वाराणसी देवी है, जिसके दर्शनसे मानवगण फिर गर्भकी यंत्रणा नहीं भोगकरते ॥ २७ ॥ यह पार्वतीश्वर लिंगका बडा मन्दिर है, जहांपर भगवती पार्वतीके सहित भगवान् शिव नित्यही मुक्तिदान करते रहतेहैं ॥ २८ ॥ यह महापातकनाशन श्रीमान् भृंगीश्वर हैं, जिस लिंगके सेवनसे भृंगी जीवन्मुक्त होगयेहैं ॥ २९ ॥ चतुर्मुखधारी सर्वोत्पादक यह चतुर्वेदेश्वर हैं, जिसके दर्शन करनेसे ब्राह्मण चतुर्वेदाध्ययनका फल लाभ करताहै ॥ १३० ॥ इस लिंगको यज्ञोंने स्थापित कियाहै, और जिसका पूजन करके मनुष्य समस्त यज्ञोंका महत्फल पाताहै यह वही यज्ञेश्वर हैं ॥ ३१ ॥ जिसके दर्शनसे अठारहों विद्याओंका ज्ञाता होजाता है, यह वही अठारह अंगुलि परिमाणका पुराणेश्वर नामक लिंग है ॥ ३२ ॥ समग्र स्मृतियोंके द्वारा प्रतिष्ठित यह धर्मशास्त्रेश्वर हैं, जिसके दर्शनसे स्मृतिपाठका फल प्राप्त होताहै ॥ ३३ ॥ सर्वविध जडताके नाश करनेवाला यह सारस्वत लिंग है, और यह सद्यः विशुद्धिदायक सर्वतीर्थेश्वरका लिंग है ॥ ३४ ॥ (अहा !) यह तो शैलेश्वर लिंगका समस्त रत्नोंसे परमशोभायमान अतिविचित्र मण्डप है॥ ॥ ३५ ॥ यह मनोहर लिंग सप्तसागर संज्ञक है, इसके दर्शनसे मनुष्य सातों समुद्रोंके स्नानका फल पाजाताहै ॥ ३६ ॥ पूर्वयुगमें सप्तकोटि मन्त्रोंके स्थापित और मंत्रजाप्यके फलदाता यही श्रीमान् मन्त्रेश्वर हैं ॥ ३७ ॥ त्रिपुरेश्वर लिंगके सन्मुख त्रिपुरारिका परमप्रिय और त्रिपुरासुरोंका खोदाहुआ यह बड कुंड विद्यमान है॥ ॥ ३८ ॥ बाणासुरके द्विभुज होनेपरभी उसके सहस्रबाहु होनेका कारण, एवं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सहस्रभुज पूजित यह बाणेश्वर लिंग है ॥ ३९ ॥ प्रह्लाद केशवसे आगे यह [illegible]
चनेश्वर हैं, यह बलिकेशव और यह नारदकेशव हैं ॥ १४० ॥ आदिकेशवके [illegible]
(और) यह आदित्यकेशव हैं, इनका नाम भीष्मकेशव है यह दत्तात्रेयेश्वर [illegible]
॥ ४१ ॥ इनके पूर्वभागमें यह आदिगदाधर हैं, यह भृगुकेशव, और यह वाम
केशव हैं ॥ ४२ ॥ ये दोनों नरनारायणहैं, यह यज्ञवाराह केशवहैं, यह [illegible]
नारसिंह और गोपीगोविन्द (देव) हैं ॥ ४३ ॥ प्रह्लादने जिसके प्रसादसे इ
पदको प्राप्त किया था, उसी लक्ष्मीनृसिंहका यह रत्नकेतन मन्दिरहै ॥ ४४
पुरुषोंकी अखर्व (बडी) सिद्धिके दाता यह खर्वविनायक है, आगे शेषक
स्थापित यह शेषमाधव हैं ॥ ४५ ॥ जिसके भक्त प्रलयानलसेभी दग्ध नहीं
शंखासुरको मारकर यहांपर यह शंखमाधव अवस्थित हैं ॥ ४६ ॥ यह प
रसायन सरस्वतीका सोता है, जहांपर महानदी गंगासे सरस्वतीका संगम हुआ है
॥ ४७ ॥ यहांपर स्नान करनेसे मनुष्यको फिर भूतलपर जन्म नहीं लेना प
यह श्रीबिन्दुमाधव हैं जो सर्वश्रेष्ठ और साक्षात् लक्ष्मीपति हैं ॥ ४८ ॥
श्रद्धापूर्वक जिनको प्रणाम करके न तो गर्भागारमें वास करता न दरिद्रताको
होता, और न व्याधियोंहीसे (कभी) पीडित होताहै ॥ ४९ ॥ यमराजभी
माधवके भक्तको प्रणाम करते हैं, जो नारद बिन्दुस्वरूपी एकमात्र प्रणवात्मा
॥ १५० ॥ और जो अमूर्त परब्रह्म हैं, यह वही बिन्दुमाधव हैं, पंच
संज्ञक यह पंचनद तीर्थ है ॥ ५१ ॥ जहांपर स्नान करनेसे पंचभूतमय
धारण नहीं करना पडता, मनुष्य जिसके प्रसादसे काशीमें इस लोक और पर
परममंगल प्राप्त करता है, यह वही मंगलागौरी हैं; यह अज्ञानरूपी अंधकारके
मयूखादित्य संज्ञक सूर्य (नारायण) है ॥ ५२–५३ ॥ दिव्यतेजके
गभस्तीश्वरका यह महालिंग है, इसी स्थानपर मार्कण्डेय मुनिने अपने
आयुष्यप्रद लिंग स्थापन करके पूर्व कालमें बडी तपस्या कीथी; यह त्रैलो
विश्रुत किरणेश्वर लिंग है ॥ ५४–५५ ॥ जो एकबारभी प्रणाम करनेसे
लोकमें पहुँचादेता है, यह पातकोंका धोदेनेवाला धौतपापेश्वर लिंग है ॥ ५६
भक्तोंके निर्वाणकारण यह निर्वाण नरसिंह हैं; यह महामणि विभूषण मणि
नाग हैं ॥ ५७ ॥ इनके पूजन करनेसे मनुष्य कभी सर्पोंसे पीडित नहीं होता;
कपिलऋषिका स्थापित कपिलेश्वर लिङ्ग है ॥ ५८ ॥ इसके दर्शनसे नरको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

कहे वानर भी मुक्त होजातेहैं; यह प्रियव्रतेश्वरका बडा लिंग प्रकाशमान है ॥ ५९ ॥ जिसके अर्चन करनेसे प्राणी सर्वजन्तुओंका प्रिय होजाता है, कलि और कालके दुःखहारी श्रीमान् कालराजका मणिमाणिक्य रचित यह उत्तम मन्दिर है, जो कालभैरव पापभक्षण होकर अपने भक्तजनोंकी पापसे रक्षा करते रहतेहैं और क्षेत्रके विघ्नकर्त्ता पापियोंको सैकडोंही पीडादेकर बाहर करदेतेहैं; यह रमणीय मन्दाकिनी यहांपर तपस्या करनेको आई परन्तु काशीवासके: सुखको पाकर आजतक स्वर्गमें फिर नहीं जानाचाहती, इसमें यथाविधि स्नान और पितृतर्पण एवं श्राद्ध करनेसे ॥ १६०—६१—६२—६३ ॥ पापीनरकोभी (नरक) नहीं देखना पडता; काशीमें जो सहस्रशः लिंगहैं ॥ ६४ ॥ उनमें रत्नभूत यह रत्नेश्वर नामक लिंग है; रत्नेश्वरकी दयासे अनेकशः रत्नोंका भोगकर ॥ ६५ ॥ पुरुषार्थोंमें महारत्न निर्वाणपद किसने नहीं पाया (है) ? यह कृत्तिवासेश्वरके बडे शिवालयकी रचनाहै ६६ ॥ मनुष्य जिसे दूरसेभी देखकर शिवपदको प्राप्त करताहै, यही कृत्तिवासेश्वर समस्त लिंगोंके शिरोरूप हैं ॥ ६७ ॥ ओंकारेश्वरही शिखा, त्रिलोचनही लोचन, गोकर्णेश्वर और भारभूतेश्वर दोनों कर्ण ॥ ६८ ॥ विश्वेश्वर और अविमुक्तेश्वर येही (दोनों) दक्षिण हस्त, और धर्मेश्वर और मणिकर्णिकेश्वर ये दोनों (दोनों) वाम कर ॥ ६९ ॥ कालेश्वर और कपर्दीश्वर दोनों निर्मलचरण, ज्येष्ठेश्वर नितम्ब, मध्यमेश्वर नाभि ॥ १७० ॥ महादेव जटाजूट, श्रुतीश्वर शिरोभूषण, चन्द्रेश्वर हृदय, केवल पीरेश्वर आत्मा ॥ ७१ ॥ केदारेश्वरलिंग, और शुक्रेश्वर शुक्र (वीर्य), कहेगये हैं, इनसे भिन्न दूसरे जो सैकडों करोडोंसे अधिक लिंग हैं ॥ ७२ ॥ उन्हें शरीरके नख लोम और भूषण (रूपसे) समझना चाहिये, और ये जो दोनों दक्षिण हस्तहैं वे मोहसागरमें गिरतेहुए जीवोंको अभय देकर सर्वदा हितकारक और निर्वाणदायक हैं । यह भगवती दुर्गाहैं, यह श्रेष्ठ पितृलिंग हैं॥ ७३ ॥ ॥ ७४ ॥ यह चित्रघंटा देवी हैं, यह घण्टाकर्ण ह्रद है, यह ललितागौरी, और यह अद्भुत विशालाक्षी हैं ॥ ७५ ॥ यह आशाविनायक हैं, यह विचित्र धर्मकूप है, जहांपर पिंडदान करनेसे मनुष्य पितरोंको ब्रह्मपदपर पहुँचादेताहै ॥ ७६ ॥ विश्वमात्रकी एक जननी सर्वश्रेष्ठा यह विश्वभुजा देवी हैं, और यह नित्य त्रैलोक्यवन्दिता महादेवी वन्दी हैं ॥ ७७ ॥ जो स्मरण करतेही निगड (बेडी) में बँधेहुए लोगोंको भी पाश (फन्दे) से छोडादेती हैं, त्रिभुवन पूजित यह दशाश्वमेध तीर्थ है ॥ ७८॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जहांपर केवल तीनही आहुतिसे अग्निहोत्र करनेका फल प्राप्त होताहै, यह अशो नामक स्रोत समस्त तीर्थोंमें उत्तमोत्तम है ॥ ७९ ॥ यह अशोकतीर्थ है, यह केशव हैं, यही श्रेष्ठ मोक्षद्वार है, और इसे स्वर्गद्वार कहते हैं ॥ १८० ॥

दोहा—सुनत ज्ञानवापी-कथा, उपजत ज्ञान विशेष ।
सहित ज्ञान सोपानके, राजत सो द्रव भेष ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां ज्ञानवापीवर्णनं नाम त्रयस्त्रिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ३३ ॥

चौतीसवाँ अध्याय ।

ज्ञानवापीकी प्रशंसा ।

स्कन्दने कहा—कुम्भजमुने ! वह कृशांगी कलावती (प्रथम समस्त तिर्थ देखकर) फिरसे (दूसरीबार) स्वर्गद्वारके पुरोभागमें श्रीमती मणिकर्णिकाको देखने लगी ॥ १ ॥ यहांपर स्वयं शंकर संसारसर्पके डँसेहुए प्राणियोंके (दक्षिण) कर्ण दक्षिणहस्तसे स्पर्श करतेहुए तत्त्वज्ञानका उपदेश देते रहतेहैं ॥ २ ॥ जो गति की योग वा सांख्य योग अथवा व्रतानुष्ठानोंसे भी नहीं मिलती, यह मोक्षभूमी उसेभी दे देतीहै ॥ ३ ॥ विष्णुभवान् वैकुंठलोकमें विष्णुके भक्तगणभी मुक्तिके लिये निरंतर श्रीमती मणिकर्णिकाको जपा करतेहैं ॥ ४ ॥ द्विजोत्तमगण यावज्जीवन अग्निहोत्र हवन कर, एवं वेदोंको पढ विधिवत् ब्रह्मयज्ञमें तत्पर हो अन्तमें भूमिपर मुक्ति करनेके लिये जिसका आश्रयण करते हैं, यह वही श्रीमणिकर्णिका है ॥ ५-६ नृपालगण दक्षिणादानसे परिपूर्ण यज्ञोंको कर धन्य हो इसी मणिकर्णिकापर अति श्रेयःप्राप्तिके लिये शरणागत होजातेहैं ॥ ७ ॥ सदा पतिव्रत धर्ममें परायण स्त्रियां मोक्षकी आशासे पतिके साथ सती होकर इसी मणिकर्णिकाका आश्रय लेतीहैं ॥ ८ न्यायपूर्वक संपत्तिको उपार्जित करनेवाले वैश्यलोगभी सत्पात्र साधुओंको धनका दा कर अन्तमें इसी मणिकर्णिकाका सेवन करतेहैं ॥ ९ ॥ सत्पथावलंबी सज्जन शूद्रभी स्त्रीपुत्रादिको छोडकर निर्वाण प्राप्तिके निमित्त मणिकर्णिकाहीको भजतेहैं ॥ १० यावज्जीवन ब्रह्मचर्य व्रत करनेवाले जितेन्द्रिय लोगभी निःश्रेयस लाभके लिये मणि कर्णिकाहीका आश्रय ग्रहण करतेहैं ॥ ११ ॥ पंचयज्ञमें तत्पर गृहस्थाश्रमी जन अतिथियोंको यथेष्ट संतुष्टकर इस मणिकर्णिकाको (कभी) नहीं त्यागते ॥ १२

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. eGangotri

वानप्रस्थ आश्रमवाले लोगभी मोक्षका साधन जान इन्द्रियग्रामको संयत कर इसी मणिकर्णिकाकी उपासना करतेहैं ॥ १३ ॥ एक दंडधारी मुमुक्षुगण भी अनेक प्रकारके शास्त्रोंसे मुक्तिको दूसरे उपायोंसे असाध्य विचार इसी मणिकर्णिकाको सेवते (रहते) हैं ॥ १४ ॥ त्रिदण्डी जन मन वचन और कायको नित्य दण्डित करनेपरभी कैवल्य सिद्धचर्थ मणिकर्णिकाहीके आश्रित होते हैं ॥ १५ ॥ अखिल कर्मोंके संन्यासी गणभी एकदंडव्रती हो चंचल मनको संयतकर मोक्षके प्राप्त्यर्थ मणिकर्णिकाकोही भजतेहैं ॥ १६ ॥ शिखाधारी, मुण्डी, जटी, कौपीनी, अथवा दिगंबर, चाहे जो हो मोक्षाभिलाषी होकर मुक्तिदात्री मणिकर्णिकाका कौन नहीं सेवन करता? ॥ १७ ॥ जो तपस्या करनेमें अशक्त हैं, दान देनेमें असमर्थ हैं, योगाभ्याससे रहित हैं, उन सबको यही मुक्ति देतीहै ॥ १८ ॥ मुनिवर ! मुक्तिके लिये सहस्रशः उपाय वैसे नहीं हैं, जैसी कि, यह मणिकर्णिका खेलवाडमें मुक्ति देदेतीहै ॥ १९ ॥ चाहे निर्जलव्रती हो अथवा त्रिकालभोजी हो, दोनोंहीको अन्तमें यह मणिकर्णिका एक समान मुक्तिदान करतीहै ॥ २० ॥ एक यथोक्त विधिसे निष्ठापूर्वक, पाशुपत व्रतका आचरण करे, और दूसरा सर्वदा इस मणिकर्णिकाको स्मरण करतारहै तो ॥ २१ ॥ इन दोनोंहीके शरीरपात होनेपर यहां एकसी गति दिखलायी पडतीहै, अतएव शीघ्रतासे सबको छोडकर इस मणिकर्णिकर्णिकाका सेवन करना उचित है ॥ २२ ॥ जो लोग मणिकर्णिकामें अवगाहन करके स्वर्गद्वारमें प्रवेश करतेहैं, उनका पाप धोजाताहै और स्वर्गभी कहीं दूर नहीं रहता ॥ २३ ॥ यह स्वर्गद्वारही स्वर्गभूमि और मणिकर्णिका मोक्षभूमि है, अतएव स्वर्ग एवं अपवर्ग दोनों यहांहीपर हैं, ऊपर अथवा नीचे नहीं हैं ॥ २४ ॥ जो लोग मणिकर्णिकामें स्नान और अनेक दानोंको कर स्वर्गद्वारमें प्रवेश करजातेहैं, वे कभी नरकमें गमन नहीं करते ॥ २५ ॥ पंडितोंने स्वर्ग और अपवर्ग शब्दका यह अर्थ निरूपण कियाहै, (कि) स्वर्ग तो सुख है और अपवर्ग महासुख है ॥ २६ ॥ (क्योंकि) मणिकर्णिकापर बैठेहुए सज्जनको जो सुख प्राप्त होताहै, सिंहासनपर उपविष्ट देवराजको भी वह सुख कहां (मिलता) है ? ॥ २७ ॥ समाधिकी अवस्थामें अपनेको भूलेहुए योगियोंको जो महासुख संघटित होताहै, श्रीमती मणिकर्णिकापर वह सहजही प्राप्त होजाताहै ॥ २८ ॥ स्वर्ग द्वारसे आगे (पूर्व) और गंगाके पश्चिमभागमें सौभाग्य और भाग्यकी एक-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मात्र निधि कोई एक बडी अकृत्रिम भूमि है ॥ २९ ॥ सूर्यके किरण-स
जितने वालुकाके कणा उद्भासित होतेहैं, उतने ब्रह्मालयको प्राप्त होचुके (अ
परन्तु यह मणिकर्णिका जैसीथी वैसीही बनी है ॥ ३० ॥ मणिकर्णिकाके
र्दिक् (चौगिर्द) उतने तीर्थ वर्तमानहैं, जिनसे तिलमात्रभी भूमि शून्य (खाली
नहीं है ॥ ३१ ॥ जिसके कुलमें कोई एक भी मणिकर्णिकापर पहुँच (देहत्या
कर मुक्त होगयाहै, उसके वंशमें उत्पन्न सन्तानगणभी उसी प्रभावसे स्वर्गवासी
तोंके मान्य होजाते हैं ॥ ३२ ॥ मणिकर्णिकापर जाकर जिसने पि
तर्पण किया उसने ऊपर और नीचेके सात सात पुरुषोंका उद्धार करादिया ॥ ३
गंगाके मध्यभागसे लेकर स्वर्गद्वारपर्यन्त (पूर्वसे—पश्चिम) और हरिश्चन्द्रघ
लेकर गंगाकेशवपर्यन्त (उत्तरसे दक्षिण) मणिकर्णिकाका परिमाण है ॥ ३
त्रिभुवनभी इस मणिकर्णिकाकी धूलिकणाके तुल्य नहींहै, त्रैलोक्यस्थित स
जन्मधारी इसीकी प्राप्तिका प्रयत्न करतेहैं ॥ ३५ ॥ इसीप्रकार कलावती
चित्रपटी (छवि—तसवीर—नक्सा) को वारंवार देखतीहुई, विश्वेश्वरके दक्षि
भागमें ज्ञानवापीको देखने लगी ॥ ३६ ॥ जिसके जलकी दंडपाणि और
संभ्रम विभ्रम दोनों गण बडी भारी भ्रान्ति उत्पादनकर कुकर्मियोंसे सदा रक्षा
रहते हैं ॥ ३७ ॥ पुराणादिमें जो अष्टमूर्ति महादेव पठित हैं, यह उन
जलमयी मूर्ति ज्ञानदात्री ज्ञानवापी है ॥ ३८ ॥ कलावती ज्ञानवापीको दृष्टि
करतेही क्षणमात्रमें कदंबपुष्पके समान रोमांचित शरीर होगई ॥ ३९ ॥
सब अंग काँपने लगे; कपालपर बहुत पसीना छागया, और दोनों नेत्र आ
श्रुसे डबडबा आये ॥ ४० ॥ शरीर निश्चल होगया मुखका रंग फिरगया
रुकजानेसे स्वर गद्गद होगया, और वह पटी उसके हाथसे गिरपडी ॥ ४१
क्षणभरके लिये वह अपनेकोभी भूलगई कि, मैं कौन हूं—कहां हूं—यहभी
स्मरण न रहा; सूतनेकी अवस्थामें केवल परमात्माके समान निश्चलभावमें पड़
॥ ४२ ॥ अनंतर उसकी परिचारिकायें (टहलुइने) इधरसे उधर त्वरा कर
"अरे ! यह क्या हुआ, यह क्या हुआ," यही कहती हुई परस्पर एक दू
पूँछने लगीं ॥ ४३ ॥ (उनमेंसे) चतुरचित्त दासियोंने सात्विकभावोंसे
अवस्थाको देख विचारकर परस्पर यह कहा—कि, ॥ ४४ ॥ इनने जन्मा
किसी प्रेमपात्रको देखलिया है, यही कारण है कि, बहुत दिनके अनंतर संगति

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

होनेहीसे इनको सुखकी मूर्च्छा आगई है ॥ ४५ ॥ यदि यह बात न होती तो यह सहसा (बेमोके) अत्यंत सुन्दर चित्रपटीको एकान्तमें देखती देखती क्यों ऐसी मूर्छित होजातीं ॥ ४६ ॥ उन सबोंने इसी प्रकारसे उसकी मूर्छाके कारणको विचार कर अच्छी स्थिररीतिसे अत्यंत शांत उपचार आरंभ किया ॥ ४७ ॥ उन सबोंमेंसे कोई तो केलाका पंखा झुलनेलगी, कोई हाथ आदिमें मृणालका कडा पहिराने लगी ॥४८॥दूसरी कोई शीतल सुगंधित चन्दनका लेपनही करनेलगी, कोई अशोकके पत्तोंसे उसका शोक दूर करने लगी ॥ ४९ ॥ कोई प्रियवस्तुके विरहसे मुर्झुराती हुई उसकी तनुलतापर फुहाराकी धारा सींचने लगी ॥ ५० ॥ किसीने जलके ओदे कपडेसे उसकी देह ढांपदी दूसरीने कपूरके चूर्णका उसको लेपन करदिया ॥ ५१ ॥ किसीने उसकेलिये कमल दल (पंखुरी) की कोमल शय्या बनायी, कोई कोई उसके अंगोंपरसे हीराके भूषण उतारकर ॥ ५२ ॥ वक्षोजमंडलपर मुक्ताहार पहिनाने लगी, और कोई चन्द्रमुखी, स्रवतेहुए ठंढे जलसे शीतल चन्द्रकांतमणिके शिलातलपर ॥ ॥ ५३ ॥ उस कृशांगीको सुलाने लगी, इसी प्रकारसे उन सबोंको उपचार करतीहुई देखकर बुद्धिशरीरिणी ॥५४ ॥ नामकी किसी सखीने अत्यंत संतप्त होकर उन सखियोंसे कहा, मैं इसके ताप दूरकरनेकी परम ओषधि जानतीहूं ॥ ५५ ॥ तुम लोग इन सब उपचारोंको दूर हटादो, मैं इनें अभी मूर्छारहित कियेदेती हूं, टुक कौतुक (जरा तमाशा) तो देखती जाओ ॥ ५६ ॥ यह इसी चित्रपटीको देखकर अभीविह्वल होगयी हैं, तो यह निश्चय है कि इसीमें इनकी कोई प्रेमभूमी है ॥ ५७ ॥ अत एव इसी चित्रपटीके स्पर्श करादेनेसे यह सन्ताप त्यागदेवेंगी, अनंतर बुद्धिशरीरिणीके कहनेसे उसकी दासियोंने ॥ ५८ ॥ उसके सन्मुख रखकर कहा सखि कलावति ! यह चित्रपटी देखो, जिसमें तुम्हारे आनन्दकर इष्ट देवता (वर्तमान) हैं ॥ ५९ ॥ वह इष्टदेवताका नाम सुनने और उस पटीके देखनेसे अमृतधाराके द्वारा मानो सिक्त होकर तुरत मूर्छा छोड (चैतन्य हो) उठ बैठी ॥ ६० ॥ सूर्यके तापसे मुर्झुराई हुई ओषधियोंपर वृष्टिकी धारा होनेसे जैसे वे हरीभरी होजातीहैं, वैसीही प्रफुल्ल हो, ज्ञानदात्री ज्ञानवापीको वह देखनेलगी ॥ ६१ ॥ अनन्तर उस कलावतीने चित्रस्थितभी ज्ञानवापीका स्पर्श करके पूर्वजन्ममें जैसी थी उस जन्मान्तरके ज्ञानको प्राप्त किया ॥ ॥ ६२ ॥ और वह मनहीमन ज्ञानवापीका माहात्म्य विचार करनेलगी—अहो ! क्याही विचित्रता है कि चित्रगतभी इस ज्ञानवापीने स्पर्श करनेसे ॥ ६३ ॥ मेरे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जन्मान्तरके समुद्भूत ज्ञानको उत्पन्न करदिया अनंतर वह सुन्दरी उन सब (सखियों) के आगे ज्ञानवापीके प्रभावसे उत्पन्न अपने पूर्वजन्मका वृत्तान्त हर्षित होकर कहने लगी, कलावती बोली इस जन्मसे पूर्व मैं ब्राह्मणकी कन्या थी ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ काशीमें विश्वेश्वरके समीप ज्ञानवापीपर मुदित होकर खेला करतीथी मेरे पिताका नाम हरिस्वामी और माताका नाम प्रियंवदा था ॥ ६६ ॥ मेरा नाम सुशीला था, मुझे को एक विद्याधरने हरण करलिया, अनंतर अर्द्धरात्रके समय मार्गहीमें मलयाचल संनिकट ॥ ६७ ॥ एक राक्षसने उस वीरको मारा, और उसनेभी उस राक्षसका वध किया, वह राक्षस तो शापसे छूट दिव्यदेहधारी होकर चलागया ॥ ६८ ॥ और वही विद्याधर इस घडी येही मलयकेतुके पुत्र हुएहैं, एवं मैंभी कर्णाटक देशके राजाकी बेटी कलावती हुई हूं ॥ ६९ ॥ ज्ञानवापीके दर्शन करनेसे क्षणमात्रमें यह ज्ञान मुझे उत्पन्न हुआ है इस प्रकारसे उसका वचन सुनकर वह बुद्धिशरीरिणी ॥ ७० ॥ और अपरापर दासियां तुरत प्रसन्नवदन होगयीं, अनन्तर उस पुण्यशीला कलावतीके प्रणामकर बोलीं ॥ ७१ ॥ "अहो ! ज्ञानवापीका कैसा (अद्भुत) प्रभाव है ! (भला) वह किस प्रकारसे प्राप्त होसकती है ? जिन लोगोंने ज्ञानवापीको नहीं देखा इस लोकमें उनके जन्म (लेने) को धिक्कार है !!! ॥ ७२ ॥ कलावति ! हम तुम्हारे चरणों पडती हैं, हम लोगोंका अभिलाष पूर्णकरो, तुम महाराजसे प्रार्थना कर हम सबको वहां लेचलो और (हम लोगोंका) जन्म सार्थक करो ॥ ७३ ॥ (राज्ञि ! कलावति !) हम सब आजसे प्रतिज्ञा करलेती हैं, कि उस ज्ञानवापीको देखकर (तबी) महाभोगोंका उपभोग करेंगी ॥ ७४ ॥ उसका नाम ज्ञानवापी पडना अवश्यही उचित है, जिसने चित्रगत होनेपरभी तुमको यह (विचित्र) ज्ञान दान कियाहै ॥ ७५ ॥ इसके पीछे कलावती उन सबोंसे हामीभर और अपना आकार छिपाकर (एक दिन) राजाके प्रिय कर्मोंके समाप्त करनेपर उचित अवसर देख (उनसे) प्रार्थना करनेलगी ॥ ७६ ॥ कलावती बोली—"जीवितेश ! आपसे बढकर कहींभी मेरा प्रियतर वस्तु नहीं हैं, आपको पति पाकर मेरे समस्त मनोरथ पूर्ण होचुके हैं ॥ ७७ ॥ आर्यपुत्र ! केवल एकही मेरी कामना प्रार्थनीय है, विचार पूर्वक देखनेसे वह आपको भी महाहितकर जान पडेगी ॥ ७८ ॥ मुझे तो वह आपके आधीन होनेसे बहुतही दुष्प्राप्य है, परन्तु आप ऐसे स्वाधीन वृत्तिका मनोरथ भी सिद्धप्रायही रहताहै ॥ ७९ ॥ प्राणनाथ ! बहुत क्या कहूं, यदि मेरे प्राणोंसे कुछ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रयोजन है तो मेरा वह मनोरथ पूर्ण कीजिये, नहीं तो प्राण चलेही जावेंगे" ॥८०॥ राजा प्राणसेभी परम प्रिया उस कलावतीके वचनको सुनकर उसकी और अपनीभी हितकर वाणी कहनेलगा ॥ ८१ ॥ राजाने कहा–प्रिये ! भामिनि ! मैं इस संसार-में तुमको देनेयोग्य न होवे ऐसा कुछभी नहीं देखता तुमने (तो अपने) शील कला और गुणोंसे मेरे प्राणोंकोभी क्रीत (खरीद) कर लिया है ॥ ८२ ॥ कलावति (जो हो उसे) झटपट कहदो और उसे हुआही समझो, मेरे जान तो तुम्हारी ऐसी पतिव्रताओंको कुछभी दुर्लभ नहीं है ॥ ८३ ॥ अयि प्रिये ! कलावति ! किसके पास किस वस्तुकी प्रार्थना करनी है, ? अथवा प्रार्थयिता ही कौन है ? (क्यों कि) मेरा तुम्हारा वर्ताव तो साधारणलोगोंके समान नहीं है ॥ ८४ ॥ भामिनि ! यह राज (पाट) कोश सैन्य दुर्ग और अन्य जो कुछ है, वह सब तुम्हाराही है, मेरा तो कुछभी नहीं है, मैं तो नाममात्रका स्वामी (बना बैठा) हूं ॥ ८५ ॥ प्राणेश्वरि ! वह मेरा प्रभुत्वभी तुमसे भिन्न अन्य सबपर है, अयि मानिनि ! तुम्हारे कहनेसे मैं राज्यकोभी तृणवत् त्यागदेसकता हूं ॥ ८६ ॥ इस प्रकारसे माल्यकेतु राजाके वाक्यको सुन कलावती गंभीर स्वरसे कहने लगी ॥ ८७ ॥ कलावतीने कहा–नाथ विधाताने पूर्वमें नानाभांतिके प्रजागणकी सृष्टि की फिर उन सबके हितार्थही धर्म अर्थ काम और मोक्ष इन (चारों पुरुषार्थोंको बनाया) ॥ ८८ ॥ उन पुरुषार्थोंसे हीन होनेपर जलके बुल्लासा यह जन्म निरर्थक है, अतएव उन चारोंमेंसे उभय लोकके कल्याणनिमित्त अन्ततः एक पुरुषार्थकाभी साधन करलेना उचित है ॥ ८९ ॥ जहां पर स्त्रीपुरुष दोनोंमें सद्भाव रहताहै, वहांपर त्रिवर्गकी वृद्धि ही होती रहती है, ऐसा जो प्राचीन विज्ञलोग कहते हैं, वह यथार्थ ही दिखलाई पडता है ॥ ९० ॥ आपके भवनमें मुझसी सैकडों दासियां विद्यमान हैं, परन्तु स्वामीका मुझपर बहुतही घनिष्ट प्रेम दृष्ट होताहै ॥ ९१ ॥ आपकी दासी होनाभी बडे सौभाग्यकी बात है, फिर अंक-शायिनीका कहनाही क्या है ? उसपरभी सन्तान रत्नकी सम्पत्ति और स्वाधीनभर्तृता (सुतरां मेरे समझमें तो मुझसी सौभाग्यवती दूसरी विरल ही स्त्री होगी) ॥ ९२ ॥ विद्वान् इष्टापूर्त कर्मके अर्थ, तपस्या करनेके निमित्त निर्विघ्न आयुष्य और अपत्य लाभार्थही स्त्रीका संग्रह करतेहैं ॥ ९३ ॥ प्रियतम ! विश्वेश्वरके अनुग्रहसे यह सबी कुछ आपको प्राप्त होचुकाहै, नाथ ! यदि आप मेरी अभिलाषा पूर्ण करनेयोग्य समझतेहैं तो मैं निवेदन करतीहूं आप सुनें ॥ ९४ ॥ (वह यही है कि) मुझे शीघ्रतासे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

काशीपुरीमें भेजवादीजिये—(क्यों कि मेरे प्राण तो पूर्वहीसे वहां जाचुके हैं यहांपर तो केवल शरीरमात्र रहगया है ॥ ९५ ॥ माल्यकेतु राजाने कलावतीके इस रूक्ष वचनको सुन, क्षणमात्र अपने मनमें विचारकर, उस प्रियासे कहा ॥ ९६ ॥ प्रिये कलावति ! यदि तुमको अवश्य जानाही है तो तुमसे विहीन इस चंचल राज्यलक्ष्मी से मुझे कौन प्रयोजन है ? ॥ ९७ ॥ यह सातों अंगोंके सहित जो राज्यहै वह राज्य नहीं कहलाता, प्रियतमा ही निश्चय राजलक्ष्मी है, अतएव तुम्हारे विना यह राज्य मेरे लिये तृणके समान तुच्छ है ॥ ९८ ॥ प्रिये ! मैंने निष्कंटक राज्य किया निरं तर भोगोंका सुख भोगकर इन्द्रियोंके विषयभी कृतार्थ करदिये और चारों ओरसे कीर्ति भी धारण करलिया ॥ ९९ ॥ अपत्यभी उत्पन्न होचुके अब संसारमें मुझे क्या कर्तव्य (शेष) है ? अवश्यही हम दोनोंजनको वाराणसी पुरीमें चलना योग्य है ॥ ॥ १०० ॥ माल्यकेतुने इस प्रकारसे पत्नीको समझाकर जानेका निश्चय कर, ज्योतिषियोंको बुलवा, (शुभ मुहूर्त स्थिर किया) अनंतर पुरवासी और अमात्यादिकों संमानितकर ॥ १ ॥ पुत्रके हाथमें राज्यका भार सौंप और उनीसे कुछ धन एवं रत्नादिक लेकर काशीकी यात्रा की ॥ २ ॥ राजा माल्यकेतु विश्वनाथपुरीको देखतेही रोमांचित होकर अपनेको संसारसागरके पारंगतसा कृतार्थ बोध करने लगा ॥ ३ ॥ उस रानी कलावतीने भी पूर्वजन्मकी वासनाके योगसे समीपहीके ग्रामसे आगत जनके सदृश आपसे आप पुरीके समस्त मार्गोंको जानालिया ॥ ४ ॥ इसके अनंतर (वे दोनों) मणिकर्णिकामें स्नान, प्रचुर धनका दान अनेकविध रत्न समूहोंसे विश्वेश्वरका पूजन ॥ ५ ॥ और रत्न, गज, अश्व, धेनु व्रज, विचित्र अनेकशः पूजोपकरण ॥ ६ ॥ सुवर्ण और रूपेके कलस, दीवट, दर्पण, चामर, छत्र दंड, पताका, विचित्र चन्द्रातप (चन्दवा) इत्यादि वस्तुओंका वहांपर दानकर ॥ ७ ॥ प्रदक्षिणाके अनन्तर मुक्तिमंडपमें जा बैठे; वहांपर धर्मकथाको श्रवणकर उत्तम धन दानकर ॥ ८ ॥ सायंकालकी महापूजा फिरसे समाप्तकर, नृत्य गीत वाद्य महोत्सवके द्वारा रात्रिभर जागरणकर ॥ ९ ॥ पुनः प्रातःकाल उठ शौच (कुल्ला आदि क्रियाओंसे निवृत्त हो रानीके बतलायेहुए मार्गसे वह राजा ज्ञानवापीमें गया ॥ ११० ॥ नरपतिने कलावतीके सहित वहांपर प्रसन्नचित्तसे स्नान किया फिर पिंडदान कर श्रद्धापूर्वक पितरोंका तर्पण किया ॥ १११ ॥ पश्चात् सत्पात्रोंको रूप्य सुवर्ण (रुपया—अशर्फी) वितरण करतेहुए, दीन अंध कृपण और अनाथ लोगोंको बहुधन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

रत्नजातोंसे ॥ १२ ॥ संतुष्ट कर अनंतर स्वयं पारण किया और कलावती ज्ञान-वापीकी सीढियोंको रत्नोंसे बंधवाकर ॥ १३ ॥ पतिके सहित उसपर बडीही भक्ति करनेलगी, फिर वह तपस्विनी कभी एकांतर उपवास कभी तीन दिन ॥ १४ ॥ छ दिन, सप्ताह, पक्ष और एक मास काल (पर्यन्त) उपवास आदि ॥ १५ ॥ एवं कृच्छ्र चान्द्रायण प्रभृति व्रतानुष्ठान और पतिकी (सेवा) शुश्रूषाओंसे निष्पाप हो जीवनके शेषभागको क्षणकालके सदृश बितानेलगी ॥ १६ ॥ एकबार प्रातःकाल ज्ञानवापीमें स्नानकर ज्योंही वे दोनों (बाहर आ) बैठे, त्योंही एक जटाधारीने आकर उनके हाथमें विभूति देदी ॥ १७ ॥ और प्रसन्नमुख हो आशीर्वाद देकर कहा, तुम दोनों उठो और अभी महाशृंगार करो ॥ १८ ॥ तुम दोनोंको यहांपर क्षणमात्रमें तारकोदय (मोक्ष) की प्राप्ति होवेगी । इस प्रकारसे वह जटाधारी जबलों उन दोनोंके आगे यह वचन कहरहाथा ॥ १९ ॥ इसी समयमें सब लोगोंके सन्मुख किंकिणीगणसे निनादित विमान आपहुंचा, अनंतर भगवान् चन्द्रमौलिने उस विमानसे ॥ १२० ॥ उतरकर उनके कर्णपुटमें स्वयं कुछ उपदेश करदिया । उसी क्षण अनाख्येय परंज्योति प्रकट होकर उडगई ॥ २१ ॥ भगवान्भी आकाशमार्गको उद्दीपित करतेहुए निजस्थानको प्रस्थानित हुए । स्कन्द बोले–मुने ! तबीसे यह ज्ञानवापी संसारमें समस्त प्रधानतीर्थोंसे श्रेष्ठ और प्रत्यक्ष ज्ञानदात्री मानीजाती है, यह ज्ञानवापी सर्वज्ञानमयी, सर्वलिंगमयी ॥ २२ ॥ २३ ॥ ज्ञानकारिणी शुभमयी साक्षात् शिवमूर्ति है, यद्यपि सद्यःशुद्धि करनेवाले अनेक तीर्थ वर्तमान हैं ॥ २४ ॥ परन्तु वे सब ज्ञानवापीकी षोडशी कलाके सदृशभी नहीं होसकते । जो कोई मनोयोग देकर ज्ञानवापीकी उत्पत्ति कथाको श्रवण करेगा, उसका मरणकालमेंभी ज्ञानभ्रंश कहीं भी न होगा ॥ २५ ॥ यह पवित्र महाख्यान, महापातकनाशक और महादेव तथा पार्वतीका महाप्रीतिवर्द्धक है ॥ २६ ॥ ज्ञानवापीके इस शुभ उपाख्यानको श्रद्धापूर्वक पठन पाठन और श्रवणकरनेसे (मनुष्य) शिवलोकमें माननीय होता है ॥ १२७ ॥

सो०–जेहि समान नहिं आन, कछु नहिं जेहि विन बनिपडै ॥
सकल ज्ञानकी खान, वही ज्ञानवापी विदित ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां ज्ञानवापीप्रशंसावर्णनं नाम चतुस्त्रिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ३४ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पैंतीसवाँ अध्याय ।

सदाचार निरूपण ।

अगस्त्य कहनेलगे—अविमुक्त महाक्षेत्र (तो) परम निर्वाणका कारण है, समस्त क्षेत्रोंमें परमक्षेत्र और समग्र मंगलोंकाभी मंगलस्वरूप है ॥ १ ॥ सब श्मशानोंके मध्यमें (यही) सर्वश्रेष्ठ महाश्मशान, अशेष पीठस्थानोंमें परम पीठ और सब ऊषर (क्षेत्रों) में बडा ऊषरहै ॥ २ ॥ मयूरवाहन ! (यह क्षेत्र तो) धर्माभिलाषी बुद्धिवालोंका परम धर्मराशिसंपादक एवं अर्थप्रार्थियोंका परमार्थप्रकाशक है ॥ ३ ॥ (यह) कामीलोगोंका कामोत्पादक, मुमुक्षुगणका मोक्षदाता है, आपके कथनमें जहां ही सुनो वहांही यह क्षेत्र परममोक्षप्रद सुनाई पडता है ॥ ४ ॥ हे गौरीहृदयनन्दन ! इस अविमुक्तक्षेत्रके एकदेशवर्तिनी ज्ञानवापीकी उत्तम कथा सुनकर मैं यही मानताहूं कि ॥ ५ ॥ काशीके मध्यमें अणु प्रमाणभी जो भूमी है वह मुक्तिसिद्धिके लिये सर्वोत्तमाही है, मुक्तिसे शून्य तो कोई स्थानही नहीं है ॥ ६ ॥ इस अखिल महीतलमें कितने तीर्थ नहीं पडे हैं ? परन्तु उन सबोंमें काशीकी धूलिकणाकीभी तुल्यता कहां है ? ॥ ७ ॥ समुद्रको आनन्दित करनेवाली कितनीही नदियां पडी हैं, परन्तु काशीमें गंगाकी समानता कौन करसकती है ? ॥ ८ ॥ हे षण्मुख ! इस पृथिवीपर कितनेही मुक्तिक्षेत्र वर्तमान हैं, परन्तु मेरी समझमें वे सब अविमुक्तक्षेत्रके कोटि—अंशकीभी योग्यता नहीं रखते ॥ ९ ॥ जहांपर (साक्षात) गंगा विश्वेश्वर एवं काशी ये तीनोंही जागरूक होरहे हैं, वहांपर यदि मोक्षलक्ष्मीका लाभ होजावे तो इस विषयमें आश्चर्य क्या है ? ॥ १० ॥ हे स्कन्द ! मनुष्यगण—विशेषतः कलियुगमें अत्यन्त चंचलेन्द्रिय लोग इस मूर्तित्रयीको कैसे अवश्य प्राप्त करसकते हैं ? ॥ ११ ॥ कलियुगमें तादृश तपस्या कहांहै ? अथ च तादृश योगाभ्यासही कहां होता है ? एवं वैसा व्रत अथवा दानही कहां (बन पडता) है ! तब कलियुगमें मोक्ष कैसे प्राप्त होसकता है ? ॥ १२ ॥ हे षडानन ! स्कन्द ! विना तपस्या, विना योगाभ्यास, विना व्रत और विनैव दानके आपने काशीमें मोक्षकी प्राप्तिको कहा है ॥ १३ ॥ हे कार्तिकेय ! कौन कौनसे आचार करनेसे काशी प्राप्त होसकतीहै, आप उने कहें, मैं तो यही मानता हूं कि, विना सदाचारके (कभी) मनोरथ नहीं सिद्ध होते ॥ १४ ॥ आचार ही परम धर्म और आचारही महातपश्चर्या है, (क्यों कि) आचारसे आयुष्यकी वृद्धि होती है, एवं आचरहीसे पापोंका क्षय होजाता है ॥ १५ ॥ अतएव हे षड्वदन !

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मतः आचारहीको वर्णन कीजिये, जैसा कि देवदेवने आपके आगे कहा था, तदनुसार आपभी कीर्तन करें ॥ १६ ॥ स्कन्द बोले—हे मित्रावरुणनन्दन ! मैं सज्जनोंके हितकर सदाचारको निरूपण करताहूं, जिसके आचरण करनेसे मनुष्य नित्यही समस्त कामोंको प्राप्त करताहै ॥ १७ ॥ स्थावर, कृमि, जलचर, पक्षी, पशु, एवं मनुष्य—ये सब यथाक्रम (पूर्वपूर्वसे उत्तरोत्तर अधिक) धार्मिक होतेहैं, इनसे भी देवतागण अधिक धार्मिक होतेहैं ॥ १८ ॥ (इन सबोंमें) क्रमानुसार एकसे दूसरे सहस्र अंशमें एक अंश होते हैं, परन्तु ये सब महाभाग मुक्तिपर्यन्त समान आश्रयवाले हैं ॥ १९ ॥ मुने ! स्वेदज, अंडज, उद्भिज एवं जरायुज इन चतुर्विध भूतोंमें चेष्टाशील प्राणिगण अतीव उत्तम हैं, उन प्राणियोंसेभी समस्त बुद्धिशाली जीव श्रेष्ठ होते हैं ॥ २० ॥ उन ज्ञानवान् जीवोंमें मनुष्य सर्वश्रेष्ठ हैं मनुष्योंमेंभी ब्राह्मण लोग सर्वोत्तम हैं, ब्राह्मणोंमें भी विद्वान्गण प्रधान हैं, एवं विद्वान् लोगोंमेंभी (शास्त्रविहित व्यापारोंमें) निश्चित बुद्धिवाले लोगही श्रेष्ठतम होते हैं ॥ २१ ॥ निश्चितबुद्धिके लोगोंमेंभी तदनुसार कर्म करनेवालेही उत्तम हैं, एवं कर्मकर्ताओंमेंभी ब्रह्मनिष्ठ लोगही सबसे श्रेष्ठ हैं,हे कुम्भज ! त्रैलोक्यमें उन लोगोंका पूजनीय कोईभी नहीं है ॥ २२ ॥ (ज्ञानमय) तप एवं (ब्रह्म) विद्याके अविशेषतासे वे लोग (स्वयं) परस्परके अर्चक होतेहैं । क्यों कि ब्रह्माने ब्राह्मणहीको समस्त भूतोंका प्रभु बनायाहै ॥ २३ ॥ अतएव ब्राह्मणही जगत्में स्थित समस्त वस्तुपानेके योग्य होताहै, दूसरा कोईभी नहीं परन्तु सदाचारी ब्राह्मणही सर्वाधिकारी है आचारच्युत कदापि नहीं होसकता, अतः ब्राह्मणको सर्वदैव आचारशील होना उचित है ॥ २४ ॥ हे मुने ! विद्वान्लोग रागद्वेषसे रहित होकर जिस कर्मका अनुष्ठान करते हैं, पंडितगण उसीको धर्मका मूल सदाचार कहते हैं ॥ ॥ २५ ॥ लक्षणोंसे हीन मनुष्यभी डाहको छोड श्रद्धापूर्वक यदि पूर्णरीतिसे आचारमें तत्पर होवे तो वह (अवश्यही) शतवर्ष पर्यन्त आयुष्य लाभ करे ॥ २६ ॥ (मनुष्य) आलस्य रहित होकर अपने अपने कर्मोंमें श्रुतिस्मृतिके कथित पुण्यके कारण सदाचारका सेवन करे ॥ २७ ॥ (क्यों कि) दुराचारी पुरुष लोकमें निन्दनीय, सदा व्याधिग्रस्त, अल्पायु और बडादुःखभागी होता है ॥ २८ ॥ सदैव पराधीन कर्मका त्याग और स्वाधीन कर्मका करनाही उचित है, क्यों कि पराधीन सर्वदा दुःखी और स्वाधीन सुखी रहता है ॥ २९ ॥ (उसमेंभी) जिस कर्मके करनेमें अन्तरात्मा प्रसन्न होताहै, वही करनाचाहिये और उसके विपरीत कर्मको कभी न करे ॥ ३० ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यम नियमही धर्मके प्रथम सर्वस्व कहेगयेहैं, इसलिये धर्माभिलाषीको उनीपर प्रय
कर्तव्य है ॥ ३१ ॥ सत्य, क्षमा, सिधाई, ध्यान, अक्रूरता, अहिंसन, इन्द्रियों
दमन, प्रसन्नता, मधुरता और कोमलता, ये ही दश यम हैं ॥ ३२ ॥ शौच,
तप, दान, मौन, यज्ञ, अध्ययन, व्रत, उपवास और उपस्थानादि इन्द्रियोंका संय
येही दशविध नियम कहलाते हैं ॥ ३३ ॥ काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्स
इन छओं शत्रुओंको जीतकर सर्वत्र विजयी होवे ॥ ३४ ॥ परपीडासे पराङ्मु
होकर धीरेधीरे वल्मीकके शृङ्गसम परलोकके सहायी धर्मका संचय करता रहे॥३५
(क्यों कि) परलोकमें (तो) एकमात्र धर्मही सहायक होताहै, पिता, माता, पु
भ्राता, पत्नी एवं बन्धुजन प्रभृति, तथा हाथी, घोडा, घर इत्यादि पारिच्छदवर्ग को
भी वहां सहायता नहीं देता ॥ ३६ ॥ प्राणी अकेलाही उत्पन्न होता और अकेलाही
मरता है, अकेलाही पुण्यको भोगता है, एवं अकेलाही पापभी भोगता है ॥ ३७
मृतक शरीरको पृथिवीपर काष्ठ लोष्टके समान फेंककर बन्धुजन फिरजातेहैं, केवल
ही उस गमनशीलके पीछे पीछे चलाजाता है ॥ ३८ ॥ अत एव कृतीजन, परलो
के सहायक धर्मका संचय करे, क्यों कि धर्महीकी सहायता पानेसे इस दुस्तर संसार
पार होसकता है ॥ ३९ ॥ बुद्धिमान् जन अधर्मोका संबन्ध छोडकर सर्वदा उन
हीसे (संबंध) करे इसी प्रकारसे अपने कुलकी उत्कर्षता प्राप्तकरे ॥ ४०
उत्तमोंसे संबंध करने एवं नीचोंका संबन्ध त्यागनेहीसे ब्राह्मण श्रेष्ठ होजाता है
इसके विरुद्ध आचरण करनेसे शूद्रताको प्राप्त होताहै ॥ ४१ ॥ अध्ययनहीन, स
चाररहित, आलसी और अभक्ष्यभोजी ब्राह्मणको मृत्यु पीडित करती है ॥ ४२
इन सब कारणोंसे द्विजको यत्नपूर्वक नित्य ही सदाचारका अभ्यास करना चाहिये
(क्यों कि) तीर्थगणभी सदाचारी लोगोंके समागमकी अभिलाषा करते रहते हैं
॥ ४३ ॥ रात्रिके अन्तिम प्रहरका अर्द्धभाग (चारघडी रात शेष रहते) ब्राह्म मु
कहाजाताहै, प्राज्ञजन सर्वदैव उसी कालमें उठकर अपना हितचिंतन करे ॥ ४४
निद्राका परित्यागकर प्रथम तो गणेशका स्मरण करे, फिर अंबिकाके सहित भ
श्वर, लक्ष्मीके सहित नारायण, ब्रह्माणीके समेत ब्रह्माका स्मरण करना चाहिये॥४५
अनंतर इन्द्रादि समस्त देवगण, वसिष्ठ प्रभृति मुनि गंगा इत्यादि नदी, श्रीशैल
निखिल पर्वत ॥ ४६ ॥ क्षीरोदादि (सातों) समुद्र, मानस इत्यादि सरोवर, नै
आदिक वन, कामधेनु प्रभृति धेनु ॥ ४७ ॥ कल्पवृक्षादिवृक्ष, सुवर्णादि धा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उर्वशी प्रभृति दिव्यस्त्री, गरुडआदि पक्षी ॥ ४८ ॥ शेष नाग आदि सर्प, ऐरावत इत्यादि गज, उच्चैःश्रवा प्रभृति अश्व, कौस्तुभादि शुभ मणि ॥ ४९ ॥ अरुंधती प्रभृति पतिव्रता रमणी, नैमिषादिक अरण्य, काशीइत्यादि पुरी ॥ ५० ॥ विश्वेश्वरादिक लिंग, ऋग् प्रभृति (चारों) वेद, गायत्री इत्यादि मंत्र, सनकादि योगिगण ॥ ॥ ५१ ॥ प्रणवादि महाबीज, नारदादि वैष्णव, बाणासुर प्रभृति शिवभक्त, प्रह्लाद आदि दृढव्रत ॥५२॥ दधीच आदि उदार साता, हरिश्चन्द्र इत्यादि भूपति और समग्र तीर्थोंसे परमोत्तम माताके चरणयुगलका स्मरण कर ॥ ५३ ॥ प्रसन्नचित्तहो पिता एवं गुरुजनका हृदयमें ध्यानकरे । इसके अनंतर आवश्यक मलत्यागादि करनेको नैर्ऋत्य कोणकी ओर चले ॥ ५४ ॥ ग्रामसे एकसौ धनुष और नगरसे चारसौ धनुष (पग) की दूरीपर जाना चाहिये, वहांपर तृणोंसे भूभागको ढांपकर शिरको वस्त्रसे बांधलेवे ॥ ५५ ॥ दहिने कानपर जनेऊ चढाय, मौनहो दिनमें और दोनों सन्ध्याओंमें उत्तरमुख एवं रात्रिमें दक्षिणमुख (बैठ) कर मलमूत्रका त्यागकरे ॥ ५६ ॥ खडा रहकर जलमें, ब्राह्मण, गौ, अग्नि और वायुके संमुख होकर जोते हुए खेतमें एवं गलीमें बैठने उठनेके स्थानमें मलमूत्रका त्याग न करे ॥ ५७ ॥ दिशाके भागोंको, ताराचक्रको आकाशमंडलको एवं मलको न देखे, (निवृत्त होकर) अनंतर बांये हाथसे शिश्न पकडकर सावधानतापूर्वक वहांसे उठे ॥ ५८ ॥ फिर जंतु और कंकरीके सहित, एवं मूषक और नेउर की खोदीहुई तथा शौचोच्छिष्ट, मृत्तिकाको छोड शुद्ध मृत्तिका लेकर ॥ ५९ ॥ उसे एकबार शिश्नमें, बीचबीचमें जलसे धोकर पांचबार गुदमें, दशबार वामहस्तमें, फिर दोनों हाथोंमें सातबार ॥ ६० ॥ एक एक बार दोनों पैरोंमें और फिर तीनबार दोनों हाथोंमें (मट्टी) लगा (कर धो) वे इस प्रकारसे गृहस्थ जबतक दुर्गंध और (मट्टीके) लेपनका क्षय न होजावे शौच करता रहै ॥ ६१ ॥ ब्रह्मचारी आदि तीनों आश्रमी यथाक्रम द्विगुण शौचकरें, अर्थात् गृहस्थका दूना ब्रह्मचारी, उसका दूना वानप्रस्थ और उसकाभी दूना सन्यासी शौचकरे, यह शौच दिनका कहागया है, रात्रिमें इसका अर्द्धही शौच करना ॥ ६२ ॥ रोगावस्थामें उसकाभी अर्द्धही शौचकरे, चौरादिसे बाधित पथमें उसकाभी अर्द्धकरे, स्त्री लोगोंका शौच अर्द्धहीहै, स्वस्थावस्थामें न्यून न करना चाहिये ॥ ६३ ॥ जो मनुष्य भावदुष्टहै वह चाहे समस्त नदियोंके जलसे मट्टीकी ढेरसे और गोमय (गोबर) समूहसे आपाद मस्तक शौच करतारहे परन्तु कभी शुद्ध नहीं होसकता ॥ ६४ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शौचक्रियामें ओदे आंवलाके फल इतनी मट्टी ग्रहण करनी चाहिये और यही परि
समस्त आहुति और चान्द्रायण व्रतके ग्रासोंकाभी जानना चाहिये ॥ ६५ ॥ अ
अनंतर बुसा अंगार अस्थि और भस्म इत्यादि से रहित पवित्र भूमीपर पूर्व अ
उत्तर मुख बैठकर अच्छीरीतिसे कुल्लाकरे ॥ ६६ ॥ ब्राह्मण स्थिरहोकर ब्राह्म
(अंगूठाकी जडसे) से अनुष्ण फेनहीन हृदयगामी जलसे—जलको भली भाँतिसे
कर—आचमनकरे ॥ ६७ ॥ क्षत्रियलोग कंठपर्यन्त और वैश्यगण तालुलों जल
जाकर शुद्ध होतेहैं, एवं स्त्री और शूद्र मुखमें जल लगानेहीसे शुद्ध होजातेहैं ॥ ६
मस्तक और कंठको ढाँपकर जलमें (सूखावस्त्र पंहिन) चुन्दी खोले किंवा
दोनों पैर धोये जो आचमन करताहै वह आचमन करने परभी अशुद्धही रहताहै
॥ ६९ ॥ तीनबार जलपीकर तदनंतर इस रीतिसे छिद्रोंको विशोधित करे,
मूलदेशसे ओष्ठ और अधरको दोदोबार स्पर्शकरे ॥ ७० ॥ पीछेसे बुद्धिमान्
तर्जनी मध्यम और अंनामिका इन तीनों अंगुलियोंके द्वारा फिर मुखको स्पर्श
एवं तर्जनी और अंगुठाके अग्रभागसे नासिकाके दोनों रंध्रोंको वारंवार स्वच्छ
॥ ७१ ॥ फिर अंगूठा और अनामिकाके अग्रभागसे दोचारबार दोनों आंखें
दोनों कानोंको स्पर्श करे, अनंतर कनिष्ठा और अंगुष्ठके कोरसे नाभिरंध्रको
करना चाहिये ॥ ७२ ॥ तत्पश्चात् दक्षिण हस्तके तलसे छातीको छूकर समस्त
लियोंके द्वारा मस्तक एवं अंगुलियोंके अग्रभागसे दोनों कंधोंका स्पर्शकरे, सर्वत्र
करनेमें हाथमें जल लगालेना चाहिये ॥ ७३ ॥ गली (रथसमूह) से चलने
स्नान, भोजन और जलपान करनेपर और शुभकर्मोंके प्रारंभमें (एकबार) आ
करके फिरसे आचमन करना चाहिये ॥ ७४ ॥ सो कर (उठनेपर) वस्त्र पहि
कोई अमांगलिक वस्तु देख, अथवा भूलसे किसी अपवित्र वस्तुको स्पर्शकर,
आचमन करनेसे शुद्ध होजाताहै ॥ ७५ ॥ इस प्रकारसे आचमन विधिको समा
मुखके विशुद्धि निमित्त दतुइन लेवे क्यों कि आचमन करनेपरभी दंतधावन न क
शुद्ध नहीं होसकता ॥ ७६ ॥ प्रतिपदा, अमावास्या, षष्ठी व नवमी तिथियोंमें
रविवारको दांतोंमें लकडीकी दतुअन लगानेसे सात पुरुषकुल दग्ध होजाताहै ॥७
इन निषिद्ध दिनोंमें अथवा जब कहीं दतुअन न मिले तो बारह कुल्लाकरके मुख
शुद्ध करना चाहिये ॥ ७८ ॥ दतुअन कानी अंगुरीके अग्रभागसी मोटी, छिलका
सहित, व्रणरहित, कोमल, सार्ध (अर्थात् आधी फाडी न हो) बारह अंगुल

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लंबी (अथवा साढे बारह अंगुल लांबी) होनी चाहिये ॥ ७९ ॥ इस दतुइनसे क्षत्रियादिक अन्य सब वर्णोंकी दतुअन यथाक्रम एकएक अंगुल छोटी होनी चाहिये, आम, आमडा, आंवला, कक्कोल, खैर ॥ ८० ॥ शमी, चिचिढा, खर्जूरी, लसोडा, खंभारी, अखरोट, खिरनी (वाप्यारमेवा) नारंगी, एवं कसैले, कडुवे, कटैले॥८१॥ और दुद्धे (दुधैले) वृक्षोंकी दतुअन उत्तमहै, पश्चात् धनुषके ऐसी टेढी अच्छी जीभछोलनी (बनाकर) करे ॥ ८२ ॥ "अन्नभोजन करनेके लिये (निर्मलता प्राप्तकर) स्थिर पंक्तिसे दृढ होरहो, (क्योंकि) राजा सोम जिस वनस्पतिमें आगये हैं वही मेरे मुखको यश और भाग्यके द्वारा पोंछ देवेंगे ॥ ८३ ॥ हे वनस्पते ! तुम हमलोगोंको आयु, बल, कीर्ति, तेज, प्रजा, पशु, धन, ब्रह्मप्रज्ञा (ब्रह्मबुद्धि) और मेधाप्रदान करो" ॥ ८४ ॥ इन अर्थवाले दोनों मन्त्रोंका पाठकर जो कोई दतुअन करताहै, उसपर वनस्पतिमें स्थित सोम नित्यही प्रसन्न होता है ॥ ॥ ८५ ॥ मुखके बासी होजानेसे मनुष्य अपवित्र होजाता है अतएव शुद्ध होनेके लिये प्रयत्नपूर्वक दन्तधावन करे ॥ ८६ ॥ उपवासमेंभी दन्तधावन, अञ्जन, गंध, अलंकार, उत्तम वस्त्र, पुष्पमाला और अनुलेपन दूषित नहीं है ॥ ८७ ॥ तदनंतर दन्तधावन करके प्रातःकालकी सन्ध्या करडाले, और विशेष करके तो शुद्धतीर्थमें प्रातःस्नान करके तबी सन्ध्याकरे ॥ ८८ ॥ (क्योंकि) प्रातःकालः स्नान करनेसे सदा मलिन यह जर्जर शरीर जो रातदिन नवों छेदोंसे (मल) स्रवताही रहताहै शुद्ध होजाताहै ॥ ८९ ॥ प्रातःस्नान (लोगोंके) उत्साह, बुद्धि, सौभाग्य, रूप, संपत्ति, एवं मनकी प्रसन्नताका मुख्य हेतु होनेहीसे प्रशंसित होताहै ॥ ९० ॥ क्योंकि मनुष्य निद्राधीन होकर पसीना और लार इत्यादिके द्वारा आई होजाताहै, अतःपरं प्रातःस्नान करनेहीसे मन्त्र स्तोत्र और जपादिक करनेका अधिकारी हो सकताहै ॥ ९१ ॥ प्रातःकाल अरुणोदय होनेकी वेलाका स्नान प्राजापत्य व्रतके समान कहाजाताहै, एवं यह स्नान महापापोंका विघातकहै॥९२॥ प्रातःस्नान, पाप, दरिद्रता, ग्लानि, अपवित्रता, और दुःस्वप्नका विनाशक एवं तुष्टि और पुष्टिका दायकहै ॥ ९३ ॥ प्रातःस्नायी जनको कभी दोषगण आक्रमण नहीं करसकते, प्रातःस्नानसे दृष्ट और अदृष्ट दोनोंही फल प्राप्त होतेहैं, इसलिये प्रातःस्नान अवश्य करना चाहिये ॥ ९४ ॥ हे कलशोद्भव ! प्रसंगवश मैं स्नानकी विधिभी वर्णन करताहूं, कारण यह कि—विधिपूर्वक स्नान साधारण स्नानसे सौगुना

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उत्तम कहा गयाहै ॥ ९५ ॥ पवित्र मृत्तिका कुश तिल और गोबर लेके
स्थानमें (उसे) रख स्नान करना चाहिये ॥ ९६ ॥ प्रथमतः कुश ग्रहण
शिखाबंधन करके जलके मध्यमें प्रवेश करे; फिर "ऊरूंहि" इत्यादि मंत्रको
हुआ चारों ओर जललेकर वेष्ठित करे ॥ ९७ ॥ फिर जलके आमन्त्रण करनेके
"येतेशतं" इत्यादि मन्त्रको जपे, अनंतर "सुमित्रियानः" इत्यादि मन्त्रसे जलको
देकर; फिर "दुर्मित्रिया" इत्यादि मंत्रके द्वारा शत्रुके उद्देशसे जलको
॥ ९८ ॥ इसके पीछे "इदं विष्णु" इत्यादि मन्त्रको पढता हुआ सर्वांगमें मृ
लगावे, एकबार मृत्तिकासे मस्तकको प्रक्षालितकर, दोबार नाभिके ऊपर
॥ ९९ ॥ तीनबार नाभिके नीचे एवं छबार दोनों पांवोंको विशोधित करे,
"आपो अस्मान्" इत्यादि मन्त्रको जपता हुआ प्रवाहाभिमुख होकर डुबकी
॥ १०० ॥ अनंतर "उदिदाभ्यः शुचिः" इत्यादि मन्त्रका उच्चारण करता हु
जलमेंसे ऊपर निकल "मानस्तोक" इत्यादि मन्त्रको जपकर समस्त देहमें मृत्
लेपन करे ॥ १ ॥ अनंतर "इमं मे वरुण" इत्यादि, तथा "तत्त्वायामि" इ
एवं "त्वन्नः" इत्यादि, तथा "स त्वं नः" इत्यादि, अथच "उदुत्तमम्" इत्यादि
फिर "धाम्नोधाम्नः" इत्यादि, तथा "मापोमौषधीः—" इत्यादि, एवं "यदाहुर
इत्यादि, पुनः "मुंचन्तु मा" इत्यादि, पश्चात् "अवभृथ" इत्यादि ॥ ३ ॥
सब अब्दैवत (जिनके देवता जलहैं) मन्त्रोंके द्वारा आत्माभिषेक करना कहा
इसके अनंतर कृतीब्राह्मण, प्रणव, महाव्याहृति, ॥ ४ ॥ एवं गायत्रीके द्वारा
नेको पावन करे । "आपोहिष्ठा" इत्यादि प्रत्येक तीनों ऋचायें पावन कही
(अतएव इनसेभी अभिषेक करना चाहिये) ॥ ५ ॥ "इदमापः" इत्यादि
ष्मतीः" इत्यादि, "देवीरापः" इत्यादि "अपोदेवाः" इत्यादि, "द्रुपदादिव"
॥ ६ ॥ "शन्नोदेवीः" इत्यादि, "अपोदेवीः" इत्यादि, "अपांरसं"
"पुनन्तुमा" इत्यादि येभी नवो पावमानी सूक्तके मंत्र परम पावन कहे गयेहैं
सेभी आत्मशोधन करना चाहिये) ॥ ७ ॥ अनंतर जलमें मग्नहोकर अघमर्षण
जपकर फिर द्रुपदामंत्रको जपे, अथवा विधिपूर्वक प्राणायामका जप करे ॥
किंवा तीनबार प्रणवकाही जप करे, अथवा विष्णुको स्मरण करे, इस प्रकार
करके वस्त्रको गार धोआ (कचारा) हुआ (तरना उपरना) दोवस्त्र पहिने ॥
अनंतर आचमन कर, कुश ले, प्रातःकालकी सन्ध्याकरे, विशेषकरके जो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

संध्याकी उपासना नहीं करता ॥ ११० ॥ वह जीते जीव तो शूद्रके समान और मरनेपर निश्चय कुकर होताहै, सन्ध्याहीन जन सर्वदा अशुद्ध एवं समस्त कर्मोंके अयोग्यही रहताहै ॥ ११ ॥ वह जो कुछ अन्यकर्म करताहै उसका फलभागी नहीं होता । प्रथमतः पूर्वदिशामें प्रवणको स्मरणकर कुशासन बिछाय ॥ १२ ॥ चित्त और दृष्टिको एकाग्रकर "चतुःस्रक्तिः" इत्यादि मन्त्रको पढ ॥ १३ ॥ पूर्वमुख अथवा उत्तरमुख बैठ, शिखाको बांध, दक्षिण ओरसे अपना अभ्युक्षण जलसे कर, प्राणायाम आरंभकरे ॥ १४ ॥ सप्तव्याहृति, शिरोमन्त्र, और दश प्रणव सहित गायत्रीका तीनबार जपकरे (पूरक, कुंभक, और रेचक साधे) इसीका नाम प्राणायाम कहा जाताहै ॥ १५ ॥ ब्राह्मण, मन और इन्द्रियोंको स्थिरकर प्राणायामका आचरण करनेसे उसीक्षण अहोरात्र कृतपापोंसे मुक्त होजाताहै ॥ १६ ॥ जो कोई मनको संयत करके दश वा बारह प्राणायाम करताहै, उसे बडी तपस्या करनेका फल प्राप्त होजाताहै ॥ १७ ॥ एक मासभर प्रतिदिन सोलह प्राणायाम यदि कियेजावें, तो वे भ्रूणहत्या करनेवालेकोभी पवित्र करदे सकतेहैं ॥ १८ ॥ जैसे अग्निमें तपादेनेसे पार्थिव धातुओंका मल दग्ध होजाताहै, वैसेही प्राणायाम करनेसे इन्द्रियकृत समस्त दोष भस्म होजातेहैं ॥ १९ ॥ एक ब्राह्मणको विधिपूर्वक भोजन करानेसे जो पुण्य प्राप्त होताहै, श्रद्धापूर्वक बारह प्राणायाम करनेसेभी वही फल प्राप्त होजाताहै ॥ १२० ॥ वेदादिक समस्त वाक्य स्वरूपही प्रणवमें प्रतिष्ठितहैं अतएव वेदजापक जन सर्वदा उसी वेदादि प्रणवका अभ्यासकरे ॥ २१ ॥ प्रणव, सप्तव्याहृति और त्रिपदा गायत्रीके (जपमें) जो सदा तत्पर रहताहै, उसे कहींभी भय उत्पन्न नहीं होता ॥ २२ ॥ हे घटयोने ! प्रणवही परंब्रह्म, प्राणायामही परम तपहै, और गायत्रीकी अपेक्षा दूसरा कोईभी मन्त्र परम पावन नहीं है ॥ २३ ॥ रात्रिमें मनसा वाचा, कर्मणा, जो कुछ पाप हुआ हो, सूतकर उठतेही प्रातःकालकी सन्ध्यामें प्राणायामोंहीके द्वारा उन सब (पापों) की विशेष शुद्धि करडाले ॥ २४ ॥ इसी प्रकारसे दिनमें मन वच और काय कर्मोंसे जो पाप होताहै, सायंकालकी सन्ध्यामें बैठकर प्राणायाम करनेसे वह पाप दूर होजाताहै ॥ २५ ॥ खडाहोकर गायत्रीका जपकरता हुआ सूर्यके दर्शनपर्यन्त प्रातःसन्ध्याकरे और बैठकर सम्यक् प्रकारसे नक्षत्र (तारा) दिखलाई पडनेतक सायं संध्योपासन करे॥ २६॥ खडे होकर प्रातःसंध्यामें जप करनेसे रात्रिके पाप नष्ट होजातेहैं,एवं बैठकर सायंसंध्यामें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जप करनेसे दिनके पाप दूर होजाते हैं ॥ २७ ॥ जो प्रातःसंध्या और सायंसं
न करे, उसे शूद्रके समान समस्त द्विजगणोंके कर्मसे बाहर करदेना चाहिये ॥२
जलाशयके समीप जाकर नित्यकर्मोंका अनुष्ठान करे, और अरण्यमें जाकर
चित्तसे गायत्रीका जप करे ॥ २९ ॥ क्योंकि गृहसे बाहर जाकर जो
पासन किया जाताहै, वह गृहकी संध्यासे कईकगुना अधिक होताहै, जितेंद्रिय
जो ब्राह्मण केवल गायत्रीहीका अभ्यास करताहै बरन वही भलाहै ॥ १३०
परंतु त्रिवेदविज्ञ होनेपरभी जो जन सर्वभोजी और सर्वविक्रयी हो वह कभी
योग्य नहीं है। जिसके देवता सविता (सूर्य), मुख अग्नि, विश्वामित्र
छन्द त्रिपदा गायत्रीहै, वही सबसे विशेषहै, प्रातःकालमें लोहितवर्णा,
॥ ३१–३२ ॥ हंसारुढा, अष्टवर्षा, रक्तमाला, रक्तचंदनानुलेपना, ऋग्वेद
अभयदा, अक्षमालावलंबिनी ॥ ३३ ॥ व्यासऋषिके द्वारा स्तूयमान
अनुष्टुप् छंदसे युक्त (ऐसी) गायत्रीका ध्यानकरे, प्रातःकालमें गायत्रीदेवी
प्रकारके ध्यान करनेसे रात्रिकृत समस्त पाप दूर होजातेहैं ॥ ३४ ॥
"सूर्यश्च" इत्यादि मंत्रके द्वारा आचमन करना उत्तमहै, फिर "आपोहिष्ठा"
तीनों ऋचाओंसे मार्जन करे ॥ ३५ ॥ (मार्जनकी विधि यह है कि
भूमिमें, मस्तकपर, आकाशमें, (फिर) आकाशमें, भूमिपर, और मस्त
(एवं) मस्तकपर आकाशमें, और भूमिपर, इस प्रकारसे नववार जल
॥ ३६ ॥ मार्जनज्ञलोगोंने भूमिशब्दसे दोनोंचरण, आकाशसे हृदय, औ
कसे मस्तकहीको उदाहृत कियाहै ॥ ३७ ॥ (जलसे) वारुणस्नान, (
त्रके भस्मसे) आग्नेयस्नान, वायुके द्वारा उडेहुए गोरज पडनेसे) वायव्
(विना मेघकी वृष्टिसे) ऐंद्रस्नान, एवं (वैदिकादि मूलमंत्रोंसे)
श्रेष्ठहै परन्तु यह (मानसिक) ब्राह्मस्नान सबसे श्रेष्ठ होताहै ॥
(इस) ब्राह्मस्नानके द्वारा जो नहाताहै वह बाह्य और आभ्यंतरसे
होजाता एवं देवपूजादिक सब कर्मोंमें सर्वत्र अधिकारी होताहै ॥
केवटलोग (मलाह) रात्रिदिन जलमें डूबे रहनेसे क्या पवित्र होजातेहैं ? उसी
से भावदूषित जन सैकडों बार स्नान करनेपर भी शुद्ध नहीं होते ॥ १४०
लोग शुद्ध अंतःकरण वालेहैं, विभूतिका लेपन उनीको पवित्र करताहै, नहीं तो
से धूसर गर्दभोंको भी क्या कोई पवित्र कह सकताहै ? ॥ ४१ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जिसका चित्त निर्मलहै वह मनुष्य समस्त तीर्थोंमें स्नात, सर्वविध मलोंसे वर्जित एवं सैकडों यज्ञोंका फलभागी होताहै ॥ ४२ ॥ हे मुनिवर ! वही चित्त जिस प्रकारसे निर्मल होताहै, उसे सुनिये यदि विश्वेश्वर प्रसन्न हो तबी (चित्तनिर्मल) होताहै, अन्य प्रकारसे कभी ऐसा होताही नहीं ॥ ४३ ॥ अतएव अन्तःकरणकी विशुद्धिके सिद्धयर्थ काशीनाथके शरणका आश्रयण करे, क्योंकि उनके आश्रयसे सकल मनोगत मल नियतरूपसे क्षय होजातेहैं ॥ ४४ ॥ विश्वेश्वरके परम अनुग्रहसे मनुष्य मानसिक मलोंके संपूर्णरूपसे क्षीण होजानेपर इस शरीरको त्यागकर परंब्रह्म (मोक्ष) को प्राप्त करताहै ॥ ४५ ॥ केवल सदाचारही मनुष्योंके प्रति विश्वेश्वरके उस अनुग्रहका कारण होताहै, अतएव श्रुति स्मृति कथित उसी सदाचारका आचरण करना सर्वथा उचितहै ॥ ४६ ॥ अनंतर विधिज्ञजन "द्रुपदा" मंत्रको जप हाथमें जल लेकर "ऋतं च" इत्यादि मंत्रके द्वारा अघमर्षण करे ॥ ४७ ॥ जो विद्वान् जलमें डूबकर तीनबार अघमर्षणका जप करे, तो उसे अश्वमेध यज्ञके अवभृथ स्नानमें जो पुण्य होताहै, निश्चय वही प्राप्तहोवे ॥ ४८ ॥ चाहे जलमें हो अथवा स्थलहीपर हो जो कोई अघमर्षणको जपताहै, उसकी पापराशि सूर्यके उदय होनेपर अंधकारके सदृश विनाशको प्राप्त होजातीहै ॥ ४९ ॥ कोई कोई आचार्य "अन्तश्चरसि" मन्त्रको जपकर द्विज आचमन करे ऐसा उपदेश करतेहैं, (परंतु) दूसरे (आचार्य) शाखाभेदसे आचमनकी व्यवस्था करतेहैं ॥ १५० ॥ ५१ ॥ इसके अनंतर शिरोमन्त्रसे हीन, प्रणवादि महाव्याहृतियोंके सहित गायत्रीका जप करता हुआ खडा होकर तीनबार जलांजलि देवे ॥ ५२ ॥ वह जलांजलि वज्रोदकहै, सूर्यके शत्रु मंदेहनामक राक्षसगण वज्रसे आहत शैलकी नाईं उससे प्रलयको प्राप्त हो जातेहैं ॥ ॥ ५३ ॥ जो द्विज, सूर्यदेवके सहायतार्थ मन्देहराक्षसोंके विनाश होनेके लिये तीन अंजलि जल नहीं देता तो वह स्वयं मन्देह होजाताहै ॥ ५४ ॥ प्रातःकाल जबलों सूर्यनारायणका दर्शन न होवे तबलों खडा रहकर (गायत्रीको) जपता रहे, एवं सायंकालमें भी तारकादर्शन पर्यन्त बैठकर जपकरे ॥ ५५ ॥ निजहिताकांक्षी द्विज कभी काललोप न होने देवे, (सुतरां) सूर्यके अर्धोदय और अर्धास्तके समय वज्रोदक (अर्घ्य) देदेवे ॥ ५६ ॥ संध्याका काल बीतजानेपर विधिपूर्वकभी कीगयी सन्ध्या वंध्या (विफल होजातीहै, इसका यही दृष्टान्त है कि जैसे वंध्यास्त्रीका मैथुन (होताहै) ॥ ५७ ॥ द्विजलोग वामहस्तमें जल लेकर जिस

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सन्ध्याको करतेहैं उसे वृषली जानना चाहिये, उसके द्वारा राक्षसगणोंहीको हवी होताहै ॥ ५८ ॥ "उद्वयं" इत्यादि, "उदुत्यं" इत्यादि, "चित्रं देवानाम्" इत्यादि एवं "तच्चक्षुः" इत्यादि, सूर्यके ये चारों उपस्थानके मंत्र सिद्धिप्रदहैं ॥ ५९ ॥ इन उपस्थानमें सहस्रबार शतबार अथवा दशबार गायत्रीका जप करना (सर्वदा उचितहै ॥ १६० ॥ इनमें सहस्रजप सर्वोत्तम, शतजप, मध्यम, एवं दशवार जप अधमहै, जो ब्राह्मण इनमेंसे किसी प्रकारका गायत्री जप करताहै वह पाप (कभी) नहीं पडता ॥ ६१ ॥ इसके पीछे "विभ्राड्" इत्यादि अनुवाक, वा पुरु सूक्त, किंवा शिवसंकल्प, अथवा ब्राह्मणमंडलका जपकरे ॥ ६२ ॥ ये सब उपस्थ मंत्र सूर्यनारायणके परमप्रीतिकरहैं, फिर वेदोक्त अथवा आगमोक्त मंत्रोंको प हुआ रक्तचंदन, अक्षत, पुष्प और कुशसहित जलके द्वारा सूर्यको अर्घ देवे, हि किसीने सूर्यकी पूजा की वह त्रैलोक्यका पूजन करचुका ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ देव पूजित होकर पूजकोंको पुत्र, पशु, धन और आयुष्य देते, एवं उनके रोगोंको हरते और सब कामनाओंको पूर्ण करदेतेहैं ॥ ६५ ॥ येही सूर्यदेव ह ही विष्णु और येही हिरण्यगर्भ (ब्रह्मा) हैं, येही दिवाकर त्रयीस्वरूपहैं ॥ ६६ केवल एक सूर्यहीके संतोषसे ब्रह्मा, विष्णु, महेश, इन्द्रादि समस्त देवता, म प्रभृति महर्षि ॥ ६७ ॥ मन्वादिक मनुष्य और सोमपा इत्यादि पितृगण संतु जातेहैं, इस रीतिसे सूर्यका पूजन करके तब तर्पण करना आरंभकरे ॥ ६८ ब्राह्मण (द्विज) दक्षिणहस्तसे नव, वा सात किंवा पांच, अग्रभागयुक्त, अ अच्छिन्न (टूटानहो) एवं गर्भशून्य कुशोंको लेकर ॥ ६९ ॥ बायां हाथ ल हुए दहिने हाथसे षट्विनायक, ब्रह्मादिक समस्त देवगण तथा मरीचि इत्यादि यों को ॥७०॥ "तृप्यन्तु" इस पदका उच्चारण करता हुआ, चंदन, अगुरु, क और सुगन्धितपुष्पोंके सहित पवित्र जलसे तर्पणकरे ॥ ७१ ॥ अनंतर निवीती (यज्ञोपवीतको कंठमें कर) दोनों हाथोंके दोनों अंगुष्ठोंके मध्यमें कोमल कुश धारणकर सनकादि मनुष्योंका यवयुक्त जलसे तर्पण करे ॥ ७२ ॥ फिर प्राची वीती होकर (यज्ञोपवीतको दक्षिण कंधे पर रख उसमें वामहस्त डालकर) हुए (अर्थात् मोटक) कुशको हाथमें लेकर तिलमिश्रित जलसे कव्यवाह प्रभृति दिव्यपितरोंका तर्पण करे ॥ ७३ ॥ श्रेयोर्थी ब्राह्मण रविवार शुक्रवार दशी सप्तमी रात्रिकाल और दोनों सन्ध्याओंमें कभी तिलसे तर्पण न करे ॥ ७

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यदिचेत् करना होतो शुक्लतिलोंसेही करे । फिर वह कृती द्विज चतुर्दश यमोंका नाम लेलेकर तर्पण करे ॥ ७५ ॥ अनंतर वाग्यत (और कुछ न बोलकर) बायां जानु पातितकर सहर्ष अपने गोत्रोच्चारणको करता हुआ पितृतीर्थसे पितरोंका तर्पण करे ॥ ७६ ॥ तर्पणमें देवगण एक एक अंजलि, सनकादि ऋषिगण दो दो अंजलि, पितृगण तीन तीन अंजलि एवं स्त्रीगण एक एक अंजलि जलकी वांछा रखतेहैं ॥ ७७ ॥ अंगुलियोंके अग्रभागमें देवतीर्थ, अंगुलियोंकी जडमें ऋषितीर्थ, अंगुष्ठके मूलमें ब्राह्मतीर्थ, हस्ततलके मध्यमें प्रजापतितीर्थ ॥ ७८ ॥ एवं अंगुष्ठ और तर्जनीके मध्यभागमें पितृतीर्थ निर्दिष्ट किया गयाहै विद्वान् जन नवों ऋचाओंका उच्चारण करता हुआ पितृतर्पणका विधान करे, (वे ऋचायें ये हैं) ॥ ॥ ७९ ॥ "उदीरतां" इत्यादि, "अंगिरसः" इत्यादि, "आयन्तुनः" इत्यादि, "ऊर्जवहंती" इत्यादि, "पितृभ्यः" इत्यादि, "ये चेह पितरः" इत्यादि, एवं "मधुवाता" इत्यादिमें तीन ऋचा-इन नवों ऋचाओंको पढकर "नमो वः पितरः" मन्त्रको पढता हुआ भूतलमें जल गिरावे ॥ १८० ॥८१॥ अनंतर "आब्रह्मस्तंबपर्यन्तम्" इत्यादि तथा "अतीतकुलकोटीनाम्" इत्यादि इन दोनों मन्त्रोंको तर्पणके अन्तमें कहकर ॥ ॥ ८२ ॥८३॥ तत्पश्चात् "ये चास्माकम्" इत्यादि मंत्रके द्वारा वस्त्रका गाराहुआ जल भूमिमें फेंकदेवे (और भीष्मको अर्घदेकर तर्पण समाप्तकरे) ॥ ८४ ॥ अनंतर अग्निकार्य (होम) करके वेदाभ्यास आरंभकरे, वह वेदाभ्यास पांच प्रकारसे होताहै, प्रथम-स्वीकार (गुरुसे पढना) द्वितीय-अर्थविचारण ॥ ८५ ॥ तृतीय-अभ्यास (उद्गिर्ण आदिके द्वारा) चतुर्थ-जप करना, पंचम-शिष्योंको शिक्षादान । फिर लब्ध अर्थके प्रतिपालन निमित्त और अलब्ध अर्थके प्राप्तिनिमित्त ॥ ८६ ॥ दाताके निकट जावे और अपना गौरव बढाता रहे । हे द्विजवंशावतंस ! द्विजातिलोगोंका यही प्रातःकृत्य कहागयाहै ॥ ८७ ॥ अथवा (जो लोग प्रातःकाल स्नान करनेमें असमर्थ होवें वे) प्रातःकाल उठकर आवश्यक कर्म करके शौच आचमन (कुल्ला) दंतधावन करडालें ॥ ८८ ॥ अनंतर समस्त शरीर (ओदे वस्त्रादिकसे पोंछ) शुद्धकर प्रातःसन्ध्योपासन करलेवें, फिर वेदार्थ एवं विविध शास्त्रोंको विचारपूर्वक पढें ॥ ॥ ८९ ॥ और मेधावी, शुचि, हितैषी शिष्योंको पढावे, तब योगक्षेमादिके सिद्ध्यर्थ ईश्वर (स्वामी वा राजा) के समीप प्राप्तहोवे ॥ १९० ॥ अनंतर पंडितजन मध्याह्न कर्मोंकी सिद्धिके निमित्त दोपहरको पूर्वोक्त विधिसे स्नानकरे, अतःपरं मध्याह्न सन्ध्यो-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पासन करे ॥ ९१ ॥ (मध्याह्न संध्यामें गायत्रीका ध्यान यों करे) नवयौवनसे भिन्नाङ्गी, शुद्ध स्फटिकके समान निर्मल, त्रिष्टुप्छंदसे युक्त, रुद्रदैवता, ॥ ९२ । कश्यपऋषि समन्विता, यजुर्वेदस्वरूपिणी, प्रणवात्मिका, वृषभोपरि समारूढा सावित्री देवी भक्तोंके लिये अभयमुद्रासे शोभितहस्ता रहतीहैं ॥ ९३ ॥ अनंतर देवतापूजन कर नित्यकृत्योंका आचरण करे, पाक (रसोंई) के अग्निको प्रज्वलित कर वैश्वदेव करे ॥ ९४ ॥ शिंबी (छीमी) कोदव, उरद, मटर, चना, तैलपक्व और नुनका पकवान ॥ ९५ ॥ रहर मसूर गोलेबडे (वरा) भुक्तशेष और वासी ये सब अन्न वैश्वदेवमें वर्जितहैं ॥ ९६ ॥ प्रथमतः कुशहाथमें लेकर आचमन और प्राणायाम करे, "पृष्ठोदिवि" इत्यादि मंत्रसे अग्निवेष्टन करना चाहिये ॥ ९७ ॥ फिर प्रदक्षिण और पर्य्युक्षण कर कुशोंको तीनबार बिछाकर "एषोह देव" इत्यादि मन्त्रोंके द्वारा अग्निको सुसंमुख करे ॥ ९८ ॥ पश्चात् घृत पुष्प और अक्षतोंसे वैश्वानर (अग्नि) की पूजाकर, प्रणवादि व स्वाहान्त "भूः" इत्यादि मंत्रोंसे तीन आहुति देवे ॥९९॥ और ब्राह्मण भूःप्रभृति तीनों मंत्रोंको एकत्र उच्चारण करता हुआ और एक आहुति प्रदानकरे, तदनंतर "देवकृतस्य" इत्यादि मन्त्रके द्वारा छ आहुति (फिर) देवे ॥ २०० ॥ इसके अनंतर मौन होकर एक आहुती यमको, दो स्विष्टकृत् को देकर तब विश्वेदेवकी आहुति देनी चाहिये । इसके पीछे भूमिपर उत्तरभागमें समस्त भूतोंको नमः कहकर बलि देवे फिर प्राचीनावीती होकर उसके दक्षिणभागमें पितरोंके उद्देशसे (अन्नकी) बलि देनी चाहिये ॥ १ ॥ २ ॥ इसके पश्चात् यक्ष्माके लिये ईशान कोणमें निर्णेजनका उदक और अन्न समर्पण करे । फिर उसके उत्तर और ब्रह्मादि देवोंको नमः पद अन्तमें लगाकर बलिदेवे ॥ ३ ॥ कंठसूत्रसे सनकादिको और अपसव्यसे पितरोंको बलिदेना चाहिये । सोलह ग्रासोंसे एक हन्त, चार ग्रासोंका एक पुष्कल कहागयाहै ॥ ४ ॥ एक कवर (ग्रास) मात्रकी भिक्षा (होतीहै जो) गृहस्थोंको सुकृतप्रदाहै । पथिक, क्षीणवृत्ति, विद्यार्थी, गुरुपोषक ॥ ५ ॥ सन्यासी और ब्रह्मचारी ये छवों धर्मभिक्षुकहैं । पथिक एवं वेदपारंगत अनूचान (ब्रह्मचारी) येही यथार्थ अतिथि समझने योग्यहैं ॥ ६ ॥ ब्रह्मलोकाभिलाषी गृहस्थोंके येही दोनों मान्यहैं, (योंतो) चांडाल वा कुक्कुरकोभी अन्न देनेसे निष्फल (कभी) नहीं होता ॥ ७ ॥ कोईभी अन्नार्थी होकर आजावे तो सुपात्र कुपात्रका विचार न करना चाहिये । पतित, चण्डाल, पापरोगी, कुक्कुर ॥ ८ ॥ काक व कृमिगणकेलिये बाहर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भूमिमें अन्न फेंकदेवे (और यह कहे कि) ऐन्द्र, वारुण, वायव्य, सौम्य और नैऋत ॥ ९ ॥ जो सब कौवेहैं, पृथिवीपर मेरे दियेहुए इस पिण्डको लेलेवें । वैवस्वतके कुलमें उत्पन्न जो दोनों श्याम और शबल नामक श्वानहैं ॥ २१० ॥ मैं उनको पिंड देताहूं वे दोनों अहिंसक होवें देव, मनुष्य, पशु, राक्षस, यक्ष, उरग, खग, ॥ ११ ॥ दैत्य, सिद्ध, पिशाच, प्रेत, भूत, दानव, तृण, तरु, कृमि, कीट और पतंग इत्यादि जो कर्मसूत्रमें बन्धे व क्षुधार्त होकर मेरे दिये हुए अन्नकी कामना रखते होवें, उनीके तृप्त्यर्थ यह अन्न मैंने दियाहै, इससे उनकी प्रसन्नता (संतुष्टि) होवे ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ इस प्रकारसे भूतबलि देकर गोदोहन काल भर अतिथिके आगमनकी प्रतीक्षा करके भोजनगृहमें प्रवेश करे ॥ १४ ॥ काकबलि विना दियेही नित्यश्राद्ध करे, अपने सामर्थ्यानुसार नित्यश्राद्धमें तीन दो अथवा एकही (ब्राह्मण) को ॥ १५॥ पितृयज्ञके लिये खिलावे, एवं जो दरिद्र हो वह अपने सब भोजनमेंसे कुछ कुछ निकासकर सबको एकही बलि देवे, नित्यश्राद्ध देवकर्मोंसे हीन विशेष नियमादिकसे वर्जित ॥ १६ ॥ एवं दक्षिणा रहितही होताहै और इसमें श्राद्धकर्ता और भोक्ता दोनोंको व्रत (ब्रह्मचर्य) का कोई प्रयोजन नहींहै । इस प्रकारसे स्वस्थबुद्धि और अनातुरहो पितृयज्ञको समाप्तकर ॥ १७ ॥ प्रशस्त आसन पर बैठ शोभनगंध और माला धारणकर, शुद्ध दोवस्त्र ओढ और पहिन, पूर्वमूख वा उत्तरमुख हो प्रसन्नचित्तसे श्राद्धशेष भोजनकर बच्चोंके साथ आहार करे ॥ १८ ॥ १९ ॥ सुबुद्धि द्विजको आपोशन विधानके द्वारा ऊपर तथा नीचेसे अन्नको अनग्न बनाकर भोजन करना चाहिये ॥ २२० ॥ भुवःपति भुवनपति एवं भूतोंके पति इन तीनोंको स्वाहान्त मंत्रके द्वारा एक एक ग्रास अन्नकी बलि भूमिपर देवे ॥ २१ ॥ प्रथम एकबार आचमन करके कुश हाथमें लेकर प्रसन्न मनसे जठरकुण्डके अग्निमें प्राण इत्यादि पंचवायुओंको पांचवार अन्नकी आहुति देवे, (यही आपोशन विधानहै) ॥ २२ ॥ जो कोई कुश हस्तमें लेकर भोजन करताहै, उसे अन्नमें गिरेहुए केश कीटादिकका दोष नहीं होता, इसलिये कुशहस्त होकर भोजन करना चाहिये ॥ २३ ॥ जबतक रुचि होवे तबतक अन्न भोजन करे, परन्तु उस वेला अन्नका गुण दोष कुछभी न कहे, क्यों कि जबलों अन्नका गुणागुण नहीं कहाजाता तबीलों पितरलोग भोजन करतेहैं ॥ ॥ २४ ॥ अतएव जो कोई मौनी होकर भोजन करताहै वह केवल अमृतही खाताहै इसके पीछे दूध मंठा (सिखरन) अथवा पानी पीकर ॥ २५ ॥ एकघोंट जल एक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वार "अमृतापिधानमसि" इत्यादि मंत्रको पढकर पीवे, पीतशेष जल इस मंत्रके उच्चार
भूमिपर फेंकदेवे ॥ २६ ॥ "जो लोग पद्मअर्बुदवर्षलों पापस्थान रौरव नरकमें निवास
कररहे हों, एवं विना हाथधोये मनुष्यके दहिने अंगूठाकी जडसे उच्छिष्ट जलकी
इच्छा रखतेहैं ? मेरा उच्छिष्ट यह जल उन सब लोगोंको अक्षय होवे" ॥ २७ ॥
॥ २८ ॥ बुद्धिमान् जन फिरभी आचमन कर, पवित्र हो, प्रयत्नपूर्वक, हाथमें
जल लेकर इस मंत्रको पढे ॥ २९ ॥ "जो अंगुष्ठमात्रका पुरुष अंगुष्ठही पर समा-
श्रित रहताहै, समस्त जगत्का ईश वह प्रभु विश्वभुक् प्रसन्न होवे" ॥ ३० ॥ इस
प्रकारसे अन्नको संकल्पकर दोनों हाथ और पाँवोंको धोकर तब अन्न पचनेके लिये
इन मंत्रोंको कहे ॥ ३१ ॥ "वायुसे प्रेरित (मदीय जठरगत) अग्नि (मेरे)
समग्र पार्थिव धातुओंके परिपुष्ट्यर्थ आकाशके दिये हुए अवकाशमें (भुक्त अन्नको)
पचादेवे, जिसमें मुझे सुखहोवे ॥ ३२ ॥ यह भुक्त अन्न प्राण, अपान, समान, उदान
और व्यान नामक शरीरास्थित वायुगणका पुष्टिकारक होवे और मुझको यथेष्ट सुख
प्राप्त होवे ॥ ३३ ॥ समुद्र, वडवानल, सूर्य और सूर्यनन्दन ये सब लोग मैंने जो
कुछ खायाहै उसे जीर्णकर (पचा) देवें" ॥ ३४ ॥ इसके पश्चात् मुखशुद्धि करके
पुराणादिके श्रवणद्वारा अवशिष्ट दिनके भागको बिताकर, तब संध्या प्रारंभकरे॥ ३५॥
सन्ध्यागृहसे गोशालामें और उससे नदीतीरपर यथाक्रम दशगुण अधिक फलप्रद
होतीहै, एवं दो नदियोंके संगममें सौगुनी और शिवके समीप अनंत फलदा होतीहै ।
॥ ३६ ॥ बाहरी ओर संध्याको उपासना करनेसे दिनके मैथुन, असत्य भाषण और
मद्यगंधके पापका शमन होजाताहै ॥ ३७ ॥ (इस सायं सन्ध्यामें गायत्रीका
ध्यान इस रूपसे करना चाहिये) (गायत्री) सामवेद स्वरूपा, वशिष्ठ ऋषिसे युक्ता,
कृष्णवर्णा, कृष्णवस्त्रपरिधाना, अधेड अवस्था ॥ ३८ ॥ सरस्वतीरूपा, गरुड-
वाहना, विष्णुदैवता, विघ्नविनाशिनी, जगतीछंदःसमन्विता और परम एकाक्षरमयी
(रहती) है ॥ ३९ ॥ (इस सायंसन्ध्यामें) "अग्निश्च" इत्यादिमंत्रसे आचमन
करके सुधीजन पश्चिम मुख बैठ जबतक नक्षत्र नहीं दिखाई पडें तबतक जप करताहै
॥ २४० ॥ सायंकालमें अतिथिके आकर उपस्थित होनेपर उसे मधुर वचन, स्थान,
आसन और जल देकर आदरपूर्वक (भोजनादि करावे) इस प्रकारसे बुद्धिमान्
जन रात्रिका प्रथम प्रहर बितावे ॥ ४१ ॥ योंही वेदके पठन पाठनसे दैनिक कर्मको
समाप्त कर अनतितृप्तभावसे एकही लकडीकी बनीहुई शय्यापर शयन करे ॥ ४२ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मैंने प्रसंगवश इस नित्यकर्मकी विधिको (संक्षेपमें तुमसे) कहाहै, इसरीतिसे आचरण करनेवाला ब्राह्मण कभीभी विनष्ट नहींहोता ॥ २४३ ॥

दोहा—नित्य कृत्य सब द्विजनके, धर्मग्रंथ निचोर ॥
सदाचार बरने सकल, धर्म वृक्षकी सोर ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां सदाचारनिरूपणं नाम पंचत्रिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ३५ ॥

छत्तीसवां अध्याय।

ब्रह्मचारीका सदाचारवर्णन ।

स्कन्दने कहा—कुंभजऋषे ! मैं पुनः उसी सदाचारके विषयमें कुछ औरभी विशेष रूपसे कहताहूं, जिसके सुनलेने पर बुद्धिमान् जन (कभी) अज्ञानरूप अंधकारमें नहीं पडता ॥ १ ॥ ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य, येही तीनों वर्ण द्विज कहलातेहैं, इन सबका प्रथम जन्मतो मातासे होताहै और दूसरा (जन्म) उपनयन (संस्कार) से (होताहै) ॥ २ ॥ इन द्विजोंकी गर्भाधानसे लेकर श्मशान पर्य्यन्त सबी क्रियायें वेदविहितही होतीहैं । मतिमान् जन, ऋतुकाल प्राप्त होनेपर मघा और मूल नक्षत्रको त्यागकर गर्भाधान करे ॥ ३ ॥ गर्भके चलनेसे पूर्वही पुंसवन करे, फिर छठवें वा आठवें मासमें सीमन्तोन्नयन करना चाहिये और गर्भ उत्पन्न होजाने पर जातकर्म (संपादन) करे ॥ ४ ॥ इग्यारवें दिन नामकरण, चौथे मासमें गृहसे निष्क्रमण (निकलना) और छठवें मासमें अन्नप्राशन करे, तत्पश्चात वर्षही (भर) में अथवा कुलाचारके अनुसार, चूडाकर्म (मुंडन) करडाले ॥ ५ ॥ (इन क्रियाओंके करनेसे) बीज और गर्भका उत्पन्न, दोष शान्त होजाताहै, स्त्रियोंकी ये सब क्रियायें विना मंत्रहीके होतीहैं, एक विवाहमात्र मन्त्रोंसे किया जाताहै ॥ ६ ॥ ब्राह्मणका सातवें वा आठवें वर्षमें उपनयन संस्कार (जनेव) होना उचितहै, एवं क्षत्रियका इग्यारवें (वर्षमें) और वैश्यका बारहवें वर्षमें अथवा कुलाचारके अनुसारही करना चाहिये ॥ ७ ॥ ब्रह्मतेजकी वृद्धिकेलिये ब्राह्मण पांचवें वर्षमें बलार्थी क्षत्रिय छठवें और कृष्यादि वृत्तिकी वृद्धिका अभिलाषी वैश्य आठवेंही वर्षमें यज्ञोपवीत धारण कर सकताहै ॥ ८ ॥ गुरु, शिष्यका उपनयन संस्कार करके महाव्याहृतिपूर्वक वेदको पढावे और शौचाचारमें लगादेवे ॥ ९ ॥ पूर्वोक्त विधिके क्रमसे मलत्याग शौच आचमन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(कुल्ला) दन्तधावन और जिह्वा शोधन करके ॥ १० ॥ फिर "जलदैवत" मंत्रोंके द्वारा स्नानकर यत्नपूर्वक दोनोंही सन्ध्याओंमें प्राणायाम और सूर्यका उपस्थान करे ॥ ११ ॥ फिर अग्निकार्य (होमादिक) सम्पादनकर, "अमुक गोत्र मैं आपको प्रणाम करताहूं" यह कहता हुआ ब्राह्मणोंको अभिवादन करे ॥ १२ ॥ जो पुरुष अभिवादन शील और वृद्धजनकी सेवामें तत्पर होताहै, प्रतिदिन उसकी आयु, यश, बल और बुद्धिकी वृद्धि होतीही रहतीहै ॥ १३ ॥ (यह श्लोक मनुके इस श्लोकके समानहीहै अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः । चत्वारि तस्य वर्द्धन्ते आयुर्विद्या यशोबलम् ॥) गुरुके बुलाने पर उनके पास जाकर पढे और जो कुछ पावे लेजाकर गुरुको समर्पण करे, एवं कर्मणा मनसा वाचा सदैव उनका हितकरे ॥ १४ ॥ जो लोग साधु, विश्वस्त, ज्ञानदाता, धनप्रद, शक्त, कृतज्ञ, पवित्र अद्रोही और अनसूयक हैं, उनको धर्मपूर्वक पढाना चाहिये, उनसे धनकी आशा करना उचित नहींहै॥१५॥ ब्रह्मचारीको मेखला, दंड, उपवीत और चर्मधारण करना चाहिये और अपने जीवन निर्वाहके अर्थ अनिंदित ब्राह्मणोंके गृहमें भिक्षाचरण करना योग्यहै ॥ १६ ॥ ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्यके भिक्षा मांगनेके वचनमें यथाक्रम आदि मध्य एवं अन्त्य भवत् शब्दका प्रयोग होना चाहिये (अर्थात् ब्राह्मण—"भवति ! भिक्षां देहि" इस कहे, क्षत्रिय कहे—भिक्षां भवति ! देहि, एवं वैश्यको कहना चाहिये—भिक्षां देहि भवति !) ॥ १७ ॥ गुरुकी आज्ञा पाकर, मौन होकर भोजनकरे, अन्नमें घृणा न करे एवं एकही जनका अन्न भोजन नहीं करना चाहिये, हां जब कि आपत्काल अथवा आपत्काल प्राप्त हो तो एकही जनके अन्न भोजनका निषेध नहींहै ॥ १८ ॥ अधिक भोजन करना आरोग्यता, आयुष्य, स्वर्ग और पुण्यका दूषक एवं लोकमें गर्हितहै अतएव उसका परित्यागही उचितहै ॥ १९ ॥ द्विजोत्तम एकही दिनमें दो वार कभीभी भोजन नहीं करे, अग्निहोत्रकी विधिका ज्ञाता द्विज, एकवार दिनमें एकवार रात्रिमें भोजन करे ॥ २० ॥ मद्यपान, मांसाहार, जीवहिंसा, उदय अस्तकालमें सूर्यका दर्शन, नेत्रोंमें अंजन, स्त्रीसंभोग, बासी और जूठा भोजन परनिन्दा, इन सबका परित्यागही करना सर्वथा उचितहै ॥ २१ ॥ द्विजोंके उपनयन का अन्तिम समय यह है । ब्राह्मणका सोलहवर्ष पर्यन्त, क्षत्रियका बाइस वर्षतक और वैश्यका चौबीस वर्षलों सीमाहै ॥ २२ ॥ इस निर्दिष्ट काल पर्य्यन्तभी जिनका उपवीत संस्कार नहीं होता फिर वे धर्मवर्जित एवं पतित होजातेहैं, व्रात्यस्तोम

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

करनेसे उन सबोंका पातित्यदोष दूर होसकताहै ॥ २३ ॥ इन सावित्री पतितोंके साथ किसी प्रकारका संबंध न करना चाहिये । द्विजातियोंमें यथाक्रम तीनों वर्णोंको कृष्णसार मृगका चर्म, रुरुमृगका चर्म और छागका चर्म (ओढनेके लिये) ॥२४॥ (एवं पहिरनेके लिये) सनके सूतका वस्त्र, पट (कपासके सूतका) वस्त्र और (मेषके रोमका) कंबल आदि वस्त्र होना चाहिये । ब्राह्मणकी मेखला (करधन) मौंजी (मूंजबाधकी) क्षत्रियकी मौर्वी (इसकी धनुषमें डोरी लगतीहै) एवं वैश्यकी शण तन्तु (सुतरी) की तेहरी एवं चिकनी होनी चाहिये ॥ २५ ॥ यदि मूंज न मिले तो कुश अश्मंतक (एकतृण) अथवा बल्वज (बगई) की मेखला बनावे और उसमें एक तीन अथवा पांच गांठ लगादेवे ॥ २६ ॥ इसी क्रमके अनुसार यज्ञोपवीतभी तीनों वर्णोंका—कपास, सन और मेषके लोमका होना चाहिये और वह त्रिगुण (तेहरा) और दक्षिणावर्त घुमाये जानेसे आयुष्यवर्द्धक होताहै ॥ २७ ॥ ब्राह्मणका दंड बिल्व वा पलाशका मस्तकपर्य्यन्त ऊंचा होवे, क्षत्रियका बड अथवा खैरका ललाटलों ऊंचा होवे, एवं वैश्यका पीलु वा गुल्लरका नासिकातक ऊंचा होना चाहिये ये सब द्विजातियोंके दंड वल्कलके सहित रहें और अग्निसे दूषित न होवें ॥ २८ ॥ ॥ २९ ॥ अग्निकी प्रदक्षिणा और सूर्यका उपस्थान करके तब ब्रह्मचारी दंड, चर्म और यज्ञोपवीतसे युक्त होकर कथित रीतिसे भिक्षा चरण करे ॥ ३० ॥ प्रथम भिक्षा माता, मातृस्वसा (मासी) भगिनी (बहिन) अथवा पितृस्वसा (फूआ) से वा उस स्त्रीसे मांगे जो "नहीं" न करे ॥ ३१ ॥ जबतक वेद पढे और वेदका व्रतकरे, तबलों ब्रह्मचारीही रहे, इसके उपरान्त स्नान करके गृहस्थ होवे ॥ ३२ ॥ इस प्रकारका ब्रह्मचारी "उपकुर्वाणक" कहा जाताहै और दूसरा वह नैष्ठिक कहलाताहै, जो आजन्म (मरणपर्यन्त) गुरुकुलहीमें रह जाताहै ॥ ३३ ॥ जो कोई गृहस्थाश्रम लेकर फिर ब्रह्मचर्य्य ग्रहण करताहै, वह न तो ब्रह्मचारीही रहा, न यतिही हुआ और न वानप्रस्थही होसका—अतःपरं वह सबी आश्रमोंसे भ्रष्ट होचुका (उसका कोई आश्रमही नहीं रहगया) ॥ ३४ ॥ द्विजको अनाश्रमी होकर एक दिनभी न रहना चाहिये, क्योंकि विना आश्रम रहने पर उसे प्रायश्चित्ती होना पडताहै ॥ ३५ ॥ जो कोई आश्रमभ्रष्ट होकर जप, होम, व्रत, दान स्वाध्याय और पितृतर्पण आदि चाहे कुछभी करे पर उसे किसीका कुछभी फल नहीं प्राप्त होता ॥ ३६ ॥ मेखला—अजिन—दंड इत्यादि ब्रह्मचारीके चिह्नहैं, वेद यज्ञ प्रभृति गृहस्थोंके और नखलोमा-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दिक वानप्रस्थके चिह्न होतेहैं ॥ ३७ ॥ योंही यतिका त्रिदंड इत्यादि लक्षण
गयाहै, इन सब लक्षणोंसे हीन आश्रमी लोग प्रतिदिन प्रायश्चित्त करनेके योग्य
जातेहैं ॥ ३८ ॥ पुराना कमंडलु, दंड, यज्ञोपवीत और चर्म जलहीमें फेंककर
धारणपूर्वक दूसरा (नवीन) धारण करे ॥ ३९ ॥ गृहस्थाश्रम धारणके सिद्धि
यथाक्रम ब्राह्मण सोलहवें क्षत्रिय बाईसवें और वैश्य चौबीसवें वर्षमें केशान्त संस्कार
करे ॥ ४० ॥ द्विजातियोंकी मोक्ष लक्ष्मीका एकमात्र कारण—तपस्या,
व्रत और समस्त शुभकर्मोंकी अपेक्षा वेदहीहै ॥ ४१ ॥ वेदके प्रारंभ और अ
सदा प्रणवका उच्चारण करे, क्योंकि विना प्रणवके पाठ करने परभी वेद सिद्धिके
फलीभूत नहीं होता ॥ ४२ ॥ प्रणवादि तीनों महाव्याहृतियोंके सहित त्रिपदा
त्रीही वेदका मुख कही गयीहै ॥ ४३ ॥ प्रणव व्याहृति और गायत्री इन
कुछ अधिक सहस्रवार जप ग्रामसे बाहर प्रतिदिन एकमास पर्यंत करनेसे
कोंसे भी मुक्त होजाताहै ॥ ४४ ॥ जो कोई एकाग्रचित्त होकर एकवर्षके ऊपर
दिन इस जपको करताहै, वह आकाशरूप शुद्धात्मा होकर परं ब्रह्मको प्राप्त
॥ ४५ ॥ तीन अक्षरोंका प्रणव तीनों व्याहृतियां एवं गायत्रीके तीन चरण
वेदोंसे दूहे गयेहैं॥ ४६ ॥जो वेदज्ञजन प्रातःसन्ध्या और सायंसन्ध्यामें इस अक्षर (
और व्याहृतिके सहित इस गायत्रीका जप करताहै, उसे समग्र वेदपाठ करनेका फल
होता है ॥ ४७ ॥ विधिपूर्वक यज्ञ करनेसे जपका फल दशगुण(अधिक) पायाजा
क्योंकि विधियज्ञकी आपेक्षा जपयज्ञ दशगुणा कहागयाहै ॥ ४८ ॥इस जपयज्ञके
रहस्यजप शतगुणा श्रेष्ठहै, और मानसजप तदपेक्षा सहस्रगुण श्रेष्ठ होताहै ॥ ४
द्विज, अपनी शक्तिके अनुसार तीन वेद वा दो वेद अथवा एकही वेदके अ
करनेसे भी सुवर्ण पूर्ण धरणीके दान करनेका फल प्राप्त करताहै ॥ ५० ॥ हि
त्तम तपस्या करनेकी इच्छासे सर्वदैव वेदाभ्यासही करे, क्योंकि ब्राह्मणका वेदाभ्या
सर्वोत्कृष्ट तप कहा जाताहै ॥ ५१ ॥ वेदाध्ययनका परित्याग कर जो (हि
दूसरा कुछ पढना चाहताहै, वह दुधार धेनुको छोडकर ग्रामकी शूकरीको
चाहताहै ॥ ५२ ॥ जो द्विज शिष्यको उपनीत करके कल्पसहित और
वेद पढाताहै, पंडित लोग उसे आचार्य कहतेहैं ॥ ५३ ॥ जो वृत्ति नि
वेदका एकदेश अथवा वेदांगोंको पढताहै, विद्वान् लोग उसे उपाध्याय कहकर
रतेहैं ॥ ५४ ॥ जो द्विज यथाविधि गर्भाधानादि कर्म करताहै, एवं अ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पालन पोषण करताहै. उसे इस संसारमें गुरु अर्थात् पिता कहकर कीर्तन किया जाताहै ॥ ५५ ॥ जो कोई वृतहो (संकल्पलेकर) जिसका अग्न्याधेयकर्म, पाकयज्ञ, एवं अग्निष्टोमादि यज्ञ करताहै, यहांपर वही जन उसका ऋत्विक् कहलाताहै ॥ ५६ ॥ उपाध्यायकी अपेक्षा आचार्यका गौरव दशगुण होताहै, और आचार्यसे पिताका शतगुण अधिकहै, एवं पितासे माताका गौरव सहस्रगुण अधिक है ॥ ५७ ॥ ज्ञानहीसे ब्राह्मणोंकी ज्येष्ठता, वीर्यसे (पराक्रमसे) क्षत्रियोंकी, धनधान्यसे वैश्योंकी और जन्मसे शूद्रोंकी बडाई होतीहै ॥ ५८ ॥ जैसा काठका हाथी और चमडेका मृग होताहै वैसाही अध्ययनहीन ब्राह्मणभीहै; ये तीनोंही पदार्थ नामधारी मात्रहैं ॥ ५९ ॥ ब्रह्मचारी द्विज, अनिच्छासे स्वभाव स्थामें स्खलित वीर्य होनेपर, स्नान और सूर्यका पूजन करके तीनबार "पुनर्मामु" इत्यादि ऋचाका जप करे ॥ ६० ॥ ब्रह्मचारी स्वधर्मतत्पर, और वेद यज्ञ क्रियाशीललोगोंके गृहमें प्रतिदिन प्रयत्नपूर्वक भिक्षा करे ॥ ६१ ॥ आतुरताके व्यतिरिक्त सात रात (दिन) भिक्षाचरण अथवा अग्नि समिंधन करने पर (प्रायश्चित्तरूप) अवकीर्णि व्रत करना चाहिये ॥ ६२ ॥ गुरुके दृष्टिपथमें स्वेच्छानुसार चेष्टा न करे, और परोक्षमेंभी कभी उनका नाम विना विशेषणके न लेवे ॥ ॥ ६३ ॥ जहांपर गुरुकी निन्दा (भूतपूर्व दोषकथन) अथवा अपवाद (वर्तमान दोषकथन) होता होवे, वहांपर (यदि रहनाही पडे तो) दोनों कानोंको बन्दकरके रहे, नहींतो वहाँसे कहीं अन्यत्र हट जावे ॥ ६४ ॥ ("श्रवण मूंदि नत चलिय पराई—तु.रा") गुरुका परिवाद करनेसे गर्दभ, निन्दा करनेसे कुक्कुर, मत्सर डाह करनेसे क्षुद्रकीट; और आगे बैठकर भोजन करनेसे कृमि (योनिमें प्राप्त) होताहै ॥ ६५ ॥ गुणदोषका ज्ञाता, बीसवर्षकी अवस्थाका शिष्य, गुरुपत्नीके युवती होनेपर कभी पांव छूकर प्रणाम न करे ॥ ६६ ॥ स्त्रियोंका स्वभाव तो चंचल होताही है, इसीसे पुरुषोंमेंभी विकार आजाताहै, अत एव पण्डितलोग, इन प्रमदाओंके विषयमें कभी प्रमाद (असावधानता) नहीं करते ॥ ६७ ॥ कारण यहहै कि—स्त्रियां विद्वान् हो चाहे मूर्खहो सबीको भरपूर धरदबाती हैं, अथवा डोरेमें बन्धे हुए पक्षीकी नांई अपने वशमें करले (सक) तीहैं ॥ ६८ ॥ माता, बेटी, बहिनके साथमेंभी एकान्त स्थानमें नहीं रहना चाहिये क्योंकि इन्द्रियां बडीही प्रबलहैं ये सब पंडित लोगोंको भी मोहित कर डालती हैं यथा च मनुः "मात्रा स्वस्रा दुहित्रा वा न विवि-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

क्तासनो भवेत् ॥ बलवानिन्द्रियग्रामो विद्वांसमपि कर्षति" ॥ ६९ ॥ प्रयत्नपूर्वक
रहनेसे जिस प्रकार पृथिवीके तलसे जल पाया जाताहै, योंही शिष्यभी केवल
शुश्रूषाहीके द्वारा विद्याको प्राप्त कर सकताहै ॥ ७० ॥ यदि ब्रह्मचारीके
स्थाहीमें सूर्य उदय होवें अथवा प्रमादवशही रहनेमें अस्त होजावें, तो
ब्रह्मचारीको एकदिनभर गायत्रीका जप उपवास करते रहना चाहिये ॥ ७
पुत्रके जन्ममें माता पिता जो क्लेश सहतेहैं, उस (ऋण) का सौवर्षमेंभी
नहीं होसकता है ॥ ७२ ॥ अतएव माता पिता और गुरुका सर्वदैव प्रियही
चाहिये, क्योंकि इनी तीनोंके संतुष्ट होनेसे सबी तपस्यायें समाप्त होजातीहैं ॥ ७
उनी तीनों जनोंकी शुश्रूषाही परम तपस्या कही जातीहै, उन लोगोंको अवि
करके जो कुछ किया जावे वह कदापि सिद्ध नहीं हो सकता ॥ ७४ ॥ बुद्धि
जन इनी तीनोंकी आराधना करके तीनों लोकोंको जीतलेवे और उनलोगोंका
बढाता हुआ स्वर्गमें देवतोंके समान क्रीडाकरे ॥ ७५ ॥ सुकृतीजन, माताकी
से भूलोक, पिताकी सेवासे भुवर्लोक, एवं गुरुकी शुश्रूषासे स्वर्गलोकको जीत
समर्थ होताहै ॥ ७६ ॥ जिसमें इनलोगोंका सन्तोष होवे वेही मनुष्योंके
अर्थ, काम और मोक्ष, ये) चारों पुरुषार्थ कहे गयेहैं, अन्य सब तो उपधर्म
लातेहैं ॥ ७७ ॥ द्विज क्रमानुसार तीनवेद, दोवेद, एवं एकवेद (अर्थात् ब्राह्मण
वेद, क्षत्रिय दो वेद और वैश्य एक वेद) पढकर, अस्खलित ब्रह्मचर्य्य होजावे
तब गृहस्थाश्रमका आश्रयण करे ॥ ७८ ॥ विश्वेश्वरके अनुग्रहसेही ब्रह्मचर्य
लित नहीं होता और वही विश्वेश्वरका परम अनुग्रह काशीप्राप्तिका कारणहै ॥ ७
काशीकी प्राप्ति होनेसे ज्ञान होताहै, और ज्ञान उत्पन्न होनेपर निर्वाण मिल जाता
जिस निर्वाणपदकी प्राप्तिके लिये बुद्धिमान् लोग सदाचारका प्रयत्न करते रहतेहैं
॥ ८० ॥ गृहस्थाश्रममें जैसा सदाचार होताहै, वैसा दूसरे आश्रममें नहींहै, इसीलि
(प्रथम) विद्यावर्गको अध्ययन कर तब गृहस्थाश्रमका आश्रय करे ॥ ८१
यदि पत्नी निज वशवर्तिनी होवे तो गृहस्थाश्रमकी अपेक्षा और कुछभी भला नहीं
क्योंकि दंपतिकी परस्पर अनुकूलताही त्रिवर्गके उदयका कारण होतीहै ॥ ८२
पत्नी यदि अनुकूल होवे तो स्वर्गसे कौन प्रयोजन है ? और यदि चेत् पत्नी प्रतिकू
होवे तो उसकी अपेक्षा दूसरा नरकही क्या होसकताहै ? ॥ ८३ ॥ गृहस्थाश्रम
मख्य प्रयोजन सुख है, परन्तु उस सुखकी जड भार्याहीहै और भार्याभी वहीहै

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विनीता होवे, एवं वह विनयही निश्चय रूपसे त्रिवर्गका स्वरूप है ॥ ८४ ॥ मंद बुद्धि लोग प्रमदाओंको जोंककी उपमा देतेहैं, परन्तु विचार करने पर मृगनयनी और जोंकमें बडाही अंतर जान पडताहै ॥ ८५ ॥ क्षुद्र (बेचारा) जोंकतो केवल रक्तही भर चूस लेताहै, परन्तु प्रमदा लोग तो सर्वदा मन, धन, बल और सुख लेती रहतीहैं ॥ ८६ ॥ गृहकार्योंमें दक्षता, सन्तान संपत्ति, सतीत्व, प्रियवचन और पतिसे अनुकूलता जो इन सब गुणोंसे संयुक्तहै वह स्त्रीका रूप धारण किये हुई साक्षात् गृहलक्ष्मीहै ॥ ८७ ॥ गुरुकी अनुमतिके अनुसार व्रत और वेदके समाप्त करने पर स्नानकर, समानवर्णा शुभलक्षणा भार्यासे विवाह करे ॥ ८८ ॥ जो पिताकी असगोत्रा और मातामहकी असपिंडा कन्याहै, वही द्विजगणके धर्मवृद्धिकर विवाहकार्यमें योग्य होतीहै ॥ ८९ ॥ जिस कुलमें अपस्मार (मृगी), क्षय (छई), एवं श्वित्र (श्वेतकोढ), रोग चला आताहो, अथवा जिस कुलमें अपवाद लगाहो एवं जहांपर कन्याही अधिक उत्पन्न होतीहों, विवाह संबन्धमें उन सब कुलोंको छोडही देना चाहिये ॥ ९० ॥ द्विजको उचितहै कि, रोगहीना, भ्रातृमती, सौम्य (सुन्दर मुखी, मृदुभाषिणी एवं अपनेसे अवस्थामें कुछ छोटी कन्यासे विवाह करे ॥ ९१ ॥ सुधीजन, पर्वत, नक्षत्र, वृक्ष, नदी, सर्प, पक्षी, नाग और दासवाचक नामवाली कन्यासे विवाह न करें, जिसका नाम सौम्य हो उसे ब्याहे ॥ ९२ ॥ हीनांगी, अधिकांगी, अतिदीर्घा, अतिकृशा, लोमहीना, अतिलोमा, एवं जिसके केश रूखे और मोटेहों ऐसी कन्यासे विवाह न करना चाहिये ॥ ९३ ॥ कुलहीना कन्यासे कदापि विवाह न करे, मोहवश अकुलीन कन्याके विवाह करनेसे अपनी संतान धाराभी हीनताको प्राप्त होजातीहै ॥ ९४ ॥ प्रथमतः लक्षणोंकी परीक्षा करके तदुपरान्त कन्यासे विवाह करे, क्योंकि सुलक्षणा और सदाचारा भार्या पतिकी आयुष्य बढा देतीहै ॥ ९५ ॥ हे घटोद्भव ! यह तो तुमसे मैंने ब्रह्मचारीका सदाचार वर्णन किया, अब प्रसंगवश स्त्रियोंकाभी लक्षण कहताहूं ॥ ९६ ॥

चौपाई—होय ब्रह्मचारी जो कोई । यह आचार विचारै सोई ॥
मन्वादिक सम्मत सब भाषे । पढत सुनत जेहि मन अभिलाषे ॥ १ ॥

दोहा—स्मृतिपुराणके तत्त्व सब, करि राखे एकत्र ।
सदाचार जो बनिपडै, पूज्य होय सर्वत्र ॥ २ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां ब्रह्मचारिसदाचारवर्णनं नाम षट्त्रिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ३६ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सैंतीसवाँ अध्याय ।

स्त्रीलक्षण (सामुद्रिक) ।

स्कन्द कहनेलगे गृहस्थ सदा सुख भोग करे यदि स्त्री लक्षणवती होवे, सुख समृद्धिके लिए प्रथमतः (स्त्रियोंके) लक्षणोंको परिखना चाहिए ॥ शरीर, (में बारोंकी) भौंरी, गंध, छाया (परछांही) अन्तःकरण, स्वर, (की गति (चाल), एवं वर्ण (रंग), पंडितोंने इन्हीं आठोंको लक्षणके स्थान ॥ २ ॥ मुनिवर ! पैरके तलवेसे लेकर शिरके केशतक शुभ और अशुभ णोंको क्रमसे कहताहूं, सुनिये ॥ ३ ॥ प्रथम पैर, पैरका तलवा, पैरके तल रेखा, पैरका अंगूठा, अंगुली, नख, पादपृष्ठ (पुस्तपांव) पैरकी दोनों घुटी, दो दोनों पेंडुरी, (उसपरके) रोयें, घुटुने ॥ ४ ॥ जंघे, कमरें, नितम्ब, कला पट्टा (पुट्ठा) पेडू, नाभि (ढोंढी), कोंखें, दोनों पंजडी, पेट, मध्यभाग, ब(पेटी) ॥ ५ ॥ (पेटपरकी) रोमावली, हृदय, छाती, दोनों स्तन, सेहँसुली, कंधेका जोड, (बांहकी जड) कधां कांख, बाँहैं, (हाथका) गट्टा (क सदोनों हाथ ॥ ६ ॥ (हाथका) उपरैल, हथेली, (हथेलीकी) रेखा, अंगुली, नख, पीठघांटी, कंठ (गला), चिबुक (ओठकेनीचे), ठुड्डियां ॥ दोनों गाल, नीचे ऊपरके दोनोंही ओठ, दांत, जीभ, घंटी, तालुहँसी, नाक, नासा), दोनों आंखें ॥ ८ ॥ पलक (पपनी), भौं, कान, मांथा, सिर, और केश यही छाछठों स्थान स्त्रियोंके अंग लक्षणकी उत्तम खान हैं ॥ ९ स्त्रियों (के पैर) का तलवा, चिकना, मांसल (मंसगर) कोमल, सम (थ रक्तवर्ण, जो पसीजे नहीं और उष्ण रहे वह बहुतही भोगके योग्य कहा ॥ १० ॥ (तथा) रूखा, विवर्ण (बदरंग) कर्कश (कडा), चुचका, आकारका, और जिसका चिह्न भूमिपर पूरा न पडे वह तलवा दुःख और ग्यका सूचक होताहै ॥ ११ ॥ चक्र, त्रिकोण, शंख, कमल, ध्वजा, मत्स्य, छत्र (छाता) ये सब रेखायें जिसके तलवामें होवें वह राजपत्नी होवे ॥ १२ जिस (स्त्री) के तलवेमें ऊर्ध्वरेखा बिचिली अंगुलीसे मिली हो वह संपूर्ण भोग करे, (तथा च नैषधे—पदं किमस्यांकितमूर्ध्वरेखया—इति) और मूल, और कौआके ऐसी रेखा दुःख दारिद्र्यकी सूचिका है ॥ १३ ॥ उभरहू मांसल, और गोला अंगूठा अतुल भोग देताहै, एवं टेढा, छोटा और चिपटा हो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सुख सौभाग्यका भंजक होताहै ॥ १४ ॥ जिसका अंगूठा बहुत बडा हो वह स्त्री विधवा और लंबा अंगूठा होनेसे दुर्भगा होतीहै, घनी, ऊंची, गोली और कोमलही अंगुरियां प्रशस्त होती हैं ॥ १५ ॥ (स्त्री) अंगुरियोंके लंबी होनेसे कुलटा, पतली होनेसे दरिद्रा, छोटीहोनेसे अल्पायुषा, और टेढी होनेसे कुटिल व्यवहार करनेवाली होतीहै ॥ १६ ॥ चिपिटी अंगुरी होनेसे दासी और विरल अँगुरी होनेसे निर्धना, एवं एकके ऊपर (परस्पर) दूसरी अंगुरियोंके चढे रहनेसे ॥ १७ ॥ अनेक पतियोंको मारकर फिर परायेकी चेरी होतीहै, जिसके मार्गमें चलनेपर भूमीसे धूर उडे ॥ १८ ॥ वह तीनों कुलकी नाश करनेवाली पांसुला होतीहै । जिसके चलनेमें कानी अंगुरी पृथिवीपर नहीं पडती ॥ १९ ॥ वह एक स्वामीको मारकर दूसरा पति करती है । जिसकी अनामिका अंगुरी भूमिपर न पडे वह तो दो पतियोंको और जिसकी बिचिली अंगुरी न लगतीहो वह तीन स्वामियोंको मार डालती है । और यही दोनों (अनामिका और मध्यमा) अंगुरियां जिसे न हों अथवा छोटी हों, तो वह स्त्री भी पतिहीनही रहती है ॥ २० ॥ २१ ॥ जिस नारीकी तर्जनी अंगुरी अंगूठासे सटी हो (अथवा बडी हो) तो वह कन्यावस्थाहीमें पुंश्चली होजातीहै, यह दृढ निश्चय है ॥ २२ ॥ चिकने, ऊंचे, तामडे, और गोले पैरके नख शुभप्रद होतेहैं ॥ २३ ॥ स्त्रियोंका पादपृष्ठ ऊंचा, चिकना, कोमल, मांसल, हो एवं बहुत नसोंसे भरा और स्वेदयुक्त न हो तो रानी होनेकी सूचना करताहै ॥ २४ ॥ पादपृष्ठ जो बीचमें धंसा रहे तो स्त्री दरिद्रा, और नसोंसे भरा हो तो सदा मार्गमें घूमनेवाली, एवं मांसोंसे पूर्ण होनेपर दासी, तथा सुकडा रहनेसे दुर्भगा होतीहै ॥ २५ ॥ पैरकी दोनों घुट्ठियां छिपीहुई हों और नसोंसे हीन और गोली होवें तो शुभ लक्षण कही गयीहैं, एवं बडी मेढी (ऊंची नीची) ढीली, दिखलाई पडतीहों तो दुर्भाग्यसूचक होतीहैं ॥ २६ ॥ जिस रमणीकी एडी सम हो वह शुभलक्षणा जिसकी एडी मोटी हो तो वह दुर्भगा, जिसकी एडी ऊंची हो वह कुलटा, और जिसकी एडी बडी हो वह दुःखभागिनी होतीहै ॥ २७ ॥ जिसके जंघे (पैरकी पेंडुरी—अर्थात् घुटनाके नीचेका भाग) नसरहित, चिकने, क्रमसे गोले, बिना नसोंके, मनोहर होवें वह स्त्री राजपत्नी होतीहै ॥ २८ ॥ जिसके प्रत्येक भंवरियोंपर एक एक रोम हो वह राजपत्नी, दो दो रोम होंतो सुखसे परिपूर्ण, और तीन तीन रोम होनेसे वैधव्य दुःखभागिनी होतीहै ॥ २९ ॥ गोले और मांसल पैरके घुटने उत्तम हैं, पर स्वैरचारिणीका घुटना मांस-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

रहित (सुकडा) और दरिद्राका घुटना पतला वा कोमल (गोला नहीं)
॥ ३० ॥ जिनके ऊरु (जंघे) विना नस, हाथीके सूंड समान, घने (
चिकने, गोले, और रोम रहित होवें वे स्त्रियां राजपत्नी होतीं हैं ॥ ३१ ॥
ऊरु रोमश होवें वे विधवा, चिपिटे हों तो दुर्भगा, बीचमें गडहे पडेहों तो
खिनी, और कठोर त्वचा (चमडा) के होनेसे दरिद्रिणी होतीं हैं ॥ ३२ ॥
नयनियोंकी काटि (कमर) चौबीस अंगुलियोंसे परिमित, और ऊंचे नितम्बसे
एवं चौकोन होनेहीसे उत्तम है ॥ ३३ ॥ और जिस नारीकी कटि
चिपिटी, दीर्घा (चौडी वा लंबी) निर्मांसा संकीर्ण (सकरी) छोटी और रोमयु
तो दुःख और वैधव्यका सूचन करती है ॥ ३४ ॥ स्त्रियोंका नितंबबिंब
मांसल (गुदगर) और भारी हो तो महा भोंगोका दायक कहागयाहै,
भिन्न होनेसे अशुभ सूंचक जानना चाहिए ॥ ३५ ॥ दोनों स्फिक् (कुल्हे
फल ऐसे गोले, मांसल, घन और बलि (रेखा) से हीन, होवें तो रति और
वर्द्धक होते हैं ॥ ३६ ॥ स्त्रियोंकी योनि कछुआके पीठ ऐसी कठोर (
हाथीके कंधेसी ऊंची होवे तो शुभ है, जो बायींओर ऊंची हो वह कन्या
नेवाली और दहिनी ओर ऊंची हो तो पुत्र जननेवाली होतीहै ॥ ३७ ॥
ऊपर मूसेके समान मटमैले (भूरे) रोयें हों, मध्यभाग छिपाहो, दोनों भाग
कडी भारी और ऊंची हो, कमल पत्रका वर्ण हो, और पीपलके पत्तेके समान
हो तो वह सुभग है ॥ ३८ ॥ और जो हरिणके खुर सदृश चूहाके बीच समान,
खुलामुंह हो, और जिसकी नासिका दिखलायी पडती रहे वह अत्यंत दुर्भगहै ॥
जो शंखकी नाईं तीन रेखाओंसे अंकित होतीहै वह गर्भ नहीं धारण करती
चिपिटी वा खपडाके आकार होतीहै वह दासी पदको दान करतीहै ॥ ४०
बांस वा वेंतके पत्ते ऐसी हो वा हाथीके समान कडेरोंये हों, किंवा जिसकी
उभडी रहे, अथवा कुत्सित और टेढा आकार हो तथा जिसका अधोभाग बडे
हो तो वह (सब) अशुभसूचक है ॥ ४१ ॥ उसके ऊपरका जघन (पट्टा
फैलाहुआ ऊंचा, मांसल, कोमल एवं दक्षिणावर्त कोमलरोमोंसे पूर्ण होवे तो
॥ ४२ ॥ और जिसपर वामावर्त भँवरियां हों और चुचका, और टेढा हो वह
सूचक है, एवं सकरा, नीचा और रूखा हो तो सदा दुःखप्रद होताहै ॥
बस्ति (पेडू), बडा, कोमल और कुछ उभडाहुआ हो तो अच्छा है, एवं जो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नसोंसे भरा और रेखाओंसे अंकित हो वह अच्छा नहींहै ॥ ४४ ॥ जो नाभी गहिरी और दक्षिणावर्त हो वह सुख संपत्तिकी सूचक होतीहै, एवं वामावर्त, उत्तान और जिसकी गांठ व्यक्त (दिखलायी पडती) हो वह नाभी शोभन नहीं है ॥ ४५ ॥ जिसकी कुक्षि (कोंख) बडी होतीहै वहस्त्री सुखसे अनेक पुत्रोंको उत्पन्न करतीहै, जिसकी कुक्षि मेझुकाके पेट ऐसी होतीहै, वह स्त्री राजापुत्रको प्रसव करतीहै ॥ ४६ ॥ जिसकी कुक्षि उन्नत हो वह बांझ, जिसकी कुक्षिमें वलि (पेटी) पडे वह प्रव्रजिता (साधुनी) और जिसकी कुक्षिपर भंवरी हो वह दासी होतीहै ॥ ४७ ॥ जिस नारीके पार्श्व (पाँजर—पंजडी) सम, मांसल, कोमल, सुन्दर और मज्ञास्थि (अर्थात् जिसकी हड्डियां छिपी) हों वे निस्सन्देह सौभाग्य और सुखके निधान होतेहैं ॥ ४८ ॥ जिसके पार्श्वमें नसें दिखायी पडती हों, वा रोम जमे हों, किंवा वे उभडे रहतेहों तो वह स्त्री निःसन्तान, दुःखकी खान, और दुःशीला होतीहै ॥ ४९ ॥ जिसका उदर (पेट) छोटा, नसोंसे हीन, और कोमल त्वचा (चमडे) का होताहै वह नारी रोगोंसे पूर्ण होकर नित्यही मिष्टान्नका सेवन करतीहै ॥ ५० ॥ और दरिद्रा स्त्रीका उदर घडा, कोहंडा, मृदंग वा जवके आकारका होताहै और वह कभी भरताभी नहीं ॥ ५१ ॥ जिसका उदर बहुत बडा होताहै वह स्त्री अपत्यहीना और दुर्भगा होतीहै, एवं जिसका उदर बडा लंबा होताहै वह श्वशुर वा देवरको मार डालतीहै ॥ ५२ ॥ जिस सुन्दरीका मध्यभाग (कमरके पास स्तनका अधोदेश) पतला होताहै वह सुभगा और जिसका मध्यभाग त्रिवलीसे युक्त रहे वह भोगवती होवे; एवं जिसकी रोमावली कोमल और छोटी, (पतली) हो वह सुख और क्रीडाकी भूमि होतीहै ॥ ५३ ॥ जिन स्त्रियोंकी रोमावली भूरे रंगकी, टेढी, मोटी, और विच्छिन्न (छितर वितर) होवे, तो वे चोट्टी विधवा वा दुर्भगा होतीहैं ॥ ५४ ॥ जिसकी छाती रोम-रहित, सम, एवं धँसी हुई न होवे, उस नारीको ऐश्वर्य्य, अवैधव्य, और पतिका प्रेम प्राप्त होताहै ॥ ५५ ॥ जिस स्त्रीकी छाती फैली रहतीहै वह निर्दया और पुंश्चली होतीहै, और जिसकी छातीपर रोयें जमेहों वह नारी पतिको अवश्यही मारडालती है ॥ ५६ ॥ अठारह अंगुलकी विस्तृत मोटी और उभडीहुई छाती सुखसूचक होतीहै, एवं वही रोमश, नीची, ऊंची, और भारी होजानेसे दुःखसूचक होजाती है ॥ ५७ ॥ सुन्दरियोंके घने, गोले, कडे, मोटे और सम दोनों स्तन प्रशस्त होतेहैं, और जिनके अग्रभाग भारीहों, वा बिरलहो, किंवा सुखडे हों तो वे शुभ-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रद नहीं होते ॥ ५८ ॥ जिसका स्तन दक्षिण और उन्नत रहताहै वह नारी पुत्र और स्त्रियोंमें श्रेष्ठ होतीहै, एवं जिसका स्तन वामभागमें उभडा होवे वह सुन्दरी कन्याको जनतीहै ॥ ५९ ॥ अरघट्ट घटी (रहटमें लगीहुई मोट) के होनेसे दोनोंही स्तन दुःशीलताके सूचक होतेहैं, एवं जिनके अग्रभाग मोटेहों, राल (परस्परके बीचमें झरी पडती) हों, और अन्तके पास (जडमें) भारी हों वे स्तन शोभन नहीं होतेहैं ॥ ६० ॥ जो स्तन जडमें मोटे और क्रमसे होकर आगे आकर तीखे होजातेहैं, वे प्रथम सुखदेकर फिर पीछेसे बडेही दुःख होतेहैं ॥ ६१ ॥ चूचुकद्वय (दोनों कुचाग्र—ढेपुनी) बहुत कडे, गोले, और होनेहीसे प्रशस्त होतेहैं, एवं भीतरधँसे, बडे और पतले होनेसे क्लेशको उत्पन्न ॥ ६२ ॥ जिस वधूकी दोनों हँसुली भरी हों, वह धनधान्यसे परिपूर्ण रहतीहै, एवं हँसुली ढीली हडीकेनीचे और विषम होवें वह दरिद्रिणी होतीहै ॥ ६३ ॥ जो झुंके, बडे और पतले न हों वे तो शुभहैं, और जो टेढे, भारी, और रोमोंसे भरेहों वा विधवा होनेकी सूचना देतेहैं ॥ ६४ ॥ जो अंस (भुजशिर) छिपे जोड, ओर झुंके हुए, अच्छीरीतिसे जुटे (सटे) होवें वे तो शुभप्रदहैं, और जो आगेसे उभडे हों वे वैधव्यसूचक एवं जो चुचके हों वे अत्यन्त दुःखप्रद होतेहैं ॥ दोनों कक्षायें (कांखें) बहुत छोटी रोंयिओंसे युक्त, ऊंची चिकनी और हों वे तो वेही उत्तमहैं, एवं जिनमें गडहा पडजावे, नसें उभडीहों और (पसीना) भरा रहे वे कक्षायें प्रशस्त नहीं होतीहैं ॥ ६६ ॥ सुन्दर गूढास्थि, गूढ ग्रंथि, (जिनकी हड्डीकी गांठ छिपीहो) नस और रोमोंसे कोमल और सरल (सीधे) दोनों कर (हाथ) निर्दोष होतेहैं ॥ ६७ ॥ स्त्रियोंके बाहुद्वय स्थूल रोमोंसे युक्त हों तो वैधव्यसूचक, ह्रस्व (छोटे) दुर्भाग्यसूचक, एवं जिनमें नसें दिखलाई पडें, वे बाहु बडे क्लेशोंके सूचक होतेहैं ॥ जिन मृगाक्षियोंके दोनों हाथ अंगूठा और अंगुलियोंको मिलाकर संमुख (करनेसे कमलकी कलीका आकार बनजावे, वे बडेही भोगप्रद होते हैं ॥ ६९ ॥ तल (हथेली) कोमल, मध्यमें उन्नत, रक्तवर्ण, प्रशस्त अल्प रेखाओंसे पूर्ण, (सुन्दर) एवं छिद्रहीन (जिसमें गडहा नपडे ऐसा) होनेसे बहुत उत्तम होत ॥ ७० ॥ एवं जिसनारीका करतल बहुतसी रेखाओंसे भराहो वह विधव जिसके करतलमें रेखाही नहो वह दरिद्रिणी, एवं जिसके हस्ततलमें नसें हों

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भिक्षुकी होतीहै ॥ ७१ ॥ जिसपर रोम और नसें न होवें और समुन्नत हो वही पाणिपृष्ठ (हाथका पुस्त) प्रशस्त होताहै और रोमपूर्ण, नसोंसे भरा, मांसहीन करपृष्ठ वैधव्यका हेतु होताहै ॥ ७२ ॥ रमणीकी कररेखा, रक्तवर्ण, व्यक्तआकार,गंभीर, चिकनीपूरी और गोली होनेसे भाग्यानुसार शुभदा होतीहै ॥ ७३ ॥ जिस नारीके करतलमें मत्स्यकी रेखा हो वह सुभगा और स्वस्तिक (त्रिकोण) रेखा पडजावे तो धनवती, एवं पद्माकार रेखा होनेसे राजपत्नी और राजमाता होतीहै ॥ ७४ ॥ चक्रवर्ती राजाकी पत्नीके करतलमें प्रदक्षिण नंद्यावर्त (गोलतम्बू—वा गोलघर) की रेखा रहतीहै और शंख, छत्र कच्छपकी रेखायें राजमाता होनेकी सूचना करतीहैं ॥ ७५ ॥ जिसके हाथमें तुला (तराजू) के दोनों पलरोंकी ऐसी रेखायें हों वह बनियांकी स्त्री होतीहै और जिस स्त्रीके बायें हाथमें हाथी घोडा बरधा (सांड) के आकारकी ॥ ७६ ॥ अथवा अटारी वा वज्रके समान रेखा हो वह तीर्थसेवी पुत्रको उत्पन्न करतीहै । एवं कृषक (खेतिहर) की स्त्रीके हाथमें छकडा वा जूवाके काठकी रेखा पडजातीहै ॥ ७७ ॥ जिसकी हथेलीमें चामर, अंकुश, वा धनुषकी रेखा हो वह निश्चयही राजमहिषी होतीहै । जिस स्त्रीके अंगुष्ठमूलसे निकलकर कनिष्ठा अंगुलीकी जडतक रेखा चलीजावे ॥ ७८ ॥ वह स्त्री पतिघातिनी होतीहै; अतएव पंडितजन उस स्त्रीको दूरहीसे त्यागदेवें । जिसके हाथमें त्रिशूल, तरवार, गदा, बरछी (वा भाला) और दुन्दुभी (नगाडा—डंका) के ऐसी कोई रेखा हो तो वह रमणी दानके द्वारा पृथिवीपर बडी यशस्विनी (नामवाली) होतीहै ॥ ७९ ॥ कंक (कँकहडापक्षी) शृगाल, मेझुका, वृक (दुंडार) बिच्छू, सर्प, गर्दभ, ऊंट और बिलार इन सबके आकारकी रेखा हाथमें होनेसे स्त्रियोंको बडा दुःख भोगना पडताहै ॥ ८० ॥ सूधे, गोले, कोमल, और गोल नखवाले अँगूठे शुभप्रद होतेहैं ॥ ८१ ॥ अंगुलियाँभी जो अच्छे पोरोंसे युक्त लंबी (अग्रभागमें) गोली और क्रमशः (नीचेसे ऊपरको) पतली होती जावें तो शुभहैं और जोकि चिपिटी, टेढी, रूखी और पीछेकी ओर रोमयुक्त होवें तो अशुभ होतीहैं ॥ ८२ ॥ अत्यंत छोटी, पतली, टेढी, और विरल अंगुलियाँ रोगकी जड होतीहैं, एवं जिन स्त्रियोंके अंगुलियोंमें बहुतसे पोर रहते हैं वे दुःखकी सूचना करतीहैं ॥ ८३ ॥ सुन्दरियोंके अरुणवर्ण शिखायुक्त, ऊँचे नखगण (नह) शुभसूचक और नीचे, विवर्ण (बदरंग) सुतुहीके ऐसे (चमकीले) और पीले होवें तो दारिद्र्यदायक होतेहैं ॥ ८४ ॥ जिसस्त्रीके नखोंपर श्वेतबूँदे पडी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हों वह प्रायः व्यभिचारिणी होतीहै, एवं पुरुषलोगभी ऐसे पुष्पित (फूले दुःखभागीही होतेहैं ॥ ८५ ॥ मांसल होनेसे वंशास्थि (रीढकी हड्डी) जिसके भीतर धँसी हो वही पीठ शुभहै और पीठपर रोमहोनेसे अवश्यमेव वैधव्य प्राप्त होवे ॥ ८६ ॥ टेढी, झुंकीहुई और नसभरी (नसैल) पीठभी दुःखही देतीहै सूधी, युक्त और ऊंची ककाटिका (गलेकी घंटी) श्रेष्ठ होतीहै ॥ ८७ ॥ सुकठी, रोमभरी बडी और टेढी घांटी अशुभहै मांसल गोला चारअंगुलका कंठ उत्तम ॥८८॥ तीनरेखाओंसे अंकित जिसमें हड्डियाँ छिपी हों ऐसी भरीहुई ग्रीवा (गरदन अच्छी होतीहै और निर्मास (चुचकी) चिपिटी लंबी और नीची ग्रीवा नहींहै ॥ ८९ ॥ जिसकी ग्रीवा बहुत स्थूल (मोटी—लंबी) हो वह स्त्री विधवा, ग्रीवा हो तो दासी, चिपिटी ग्रीवा होनेसे बांझ और छोटी ग्रीवासे अपुत्रिणी ॥ ९० ॥ चिबुक (ओठके नीचेकी ठुड्डी) गोला मोटा अतिकोमल और अंगुल परिमाणका होतो प्रशस्तहै और जो भारी दोफट्ट लंबा और रोमश हो उत्तम नहीं होताहै ॥ ९१ ॥ चिबुकसे सटीहुई, निर्लोम और अत्यंत घन, (दाढी) शुभहै, एवं टेढी मोटी, दुबली छोटी और रोमश होतो अच्छी नहींहै॥९२॥ सुन्दरीके गोले पीन (फुलेहुए) उभडे दोनों कपोल (गाल) उत्तम हैं, एवं रोमश कडे, धँसे और चुचके कपोल त्यागनेहीके योग्य होतेहैं॥९३॥ जो रमणियाँ धन्यहैं उन्हीं का मुख, सम, समांस, अतिचिक्कन, सुगन्धित, गोला और पिताके मुखके समान होताहै ॥९४॥ पाटलवर्ण (गुलाबीरंग) गोला, चिकना, और मध्यभागमें रेखासे विभूषित सुन्दरियोंका अधर (नीचेका ओठ) भूपतिका प्रिय होताहै ॥ ९५ ॥ और पतला, बहुतलंबा, फटाहुआ, रूखा अधर दुर्भाग्यका लक्षणहै, एवं जिसका ओठ श्याव (कपिल—कुछकालापीलारंग) होताहै वह विधवा और जिसका स्थूल (मोटा) होवे वह झगडालू होतीहै ॥ ९६ ॥ सुन्दरीका उत्तरोष्ठ (ऊपरका ओठ) कुछ बीचमें उभडा चिकना और रोमरहित होतो भोगप्रद होताहै, और इसके विपरीत होनेसे विरुद्धही फल देताहै ॥ ९७ ॥ गौके दूधऐसे श्वेतवर्ण, चिकने, कुछ उभडेहुए, नीचे और ऊपर समान बत्तीस दाँत होंतो शुभप्रद होतेहैं ॥ ९८ ॥ और जो पीतवर्ण अथवा कपिश (कुछकाले पीले) वर्ण, मोटे, लंबे, द्विपंक्ति (तरैल उपरैल गजदंता), अथवा सुतुहीके आकार वा विरल होंतो दुःख दुर्भाग्यके कारण होतेहैं ॥ ९९ ॥ जिसे नीचेकी पंक्तिमें अधिक दंत होवें वह नारी अवश्य माताको

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

खाजातीहै एवं विकट (ओठके बाहर निकले) दंत होंतो पतिहीना और विरल दंतोंसे कुलटा होतीहै ॥ १०० ॥ जिह्वा (जीभ) ऊपरतो रक्तवर्ण और नीचेकी ओर काली (श्वेत) और कोमल होतो इच्छित मिष्टपदार्थको भोजन करे, अग्रभागमें विस्तीर्ण और मध्यस्थलमें संकीर्ण जिह्वा होतो दुःखसूचकही होतीहै ॥ १ ॥ जिसकी जिह्वा स्वेतवर्णा होतो उसका मरण जलसे होवे, जिसकी जिह्वा श्यामवर्ण हो वह कलहप्रिया होतीहै, मांसलजिह्वावाली स्त्री दरिद्रा और जिसकी जिह्वा लंबी हो वह अभक्ष्य भक्षणी होतीहै ॥ २ ॥ जिस प्रमदाकी रसना विशालहो वह बडी प्रमादिनी होतीहै ! चिक्कन, रक्तकमलके समान, और कोमल तालु उत्तमहै, ॥ ३ ॥ यदि तालु श्वेत होतो विधवा, पीतवर्ण होनेसे साधुनी (भिक्षुकी), काला होतो सन्तानके वियोगसे पीडित, और रूखा होनेसे बहु कुटुम्बिनी होवे ॥ ४ ॥ कंठके भीतरकी घंटी अस्थूल, गोली, क्रमशःतीखी, (पतली) अतिलोहित, और बहुत लटकती न होतो शुभप्रदाहै, और जो मोटी वा कृष्णवर्ण होवे तो दुःखदात्री होतीहै ॥ ५ ॥ रमणियोंका वही स्मित (मुसकुराहट—हंसना) उत्तम होताहै, जिसमें कुछ दंतावली अलक्षित रहे और नेत्र ढप न जावें तथा गंडस्थल (गाल) कुछ प्रफुल्ल हो उठे ॥ ६ ॥ नासिकाके पुट दोनोंही ओर एक समान गोले हों और छेद छोटा होतो शुभसूचक होतेहैं, एवं जिसका—अग्रभाग मोटा, और मध्यमें धँसा, तथा ऊंचीहो; वह नासिका उत्तम नहीं होती ॥ ७ ॥ टेढा मुडाहुआ, और अरुणवर्ण नासिकाका अग्रभाग होनेसे वैधव्यका क्लेश, और चिपिटी होनेसे परायेकी दासी, तथा छोटी वा बडी नासिका हो तो कर्कशा (झगडालू) होवे ॥ ८ ॥ जिस स्त्रीका क्षुत (छींक) दीर्घ और एक साथही दो तीनवार होवे वह दीर्घायु होती है । ललनाओंके लोचन (आँखें) कोनेमें रक्तवर्ण, तारका (पुतली) कृष्णवर्ण, ॥ ९ ॥ गोदुग्धके समान स्वच्छ श्वेत, अतिचिकने और काली बरौनीसे युक्त होंतो प्रशस्त होतेहैं । जो स्त्री उन्नतनेत्राहो तो वह अल्पायु और जिसकी आँखें गोली हों वह कुलटा होतीहै ॥ ११० ॥ जिस नारीके नेत्र मेढा, भैंसा, वा केकडाकी आँखोंके तुल्य होवें तो वे उत्तम नहीं हैं, और जिसके नयन गोरूके ऐसे पिंगलवर्ण, होवें वह स्त्री अत्यंत दुश्चरित्रा कामगृद्धिनी होती है ॥ ११ ॥ जिसकी आँखें कबूतरकीनाईं हों वह दुःशीला, और रक्तनेत्रहोनेसे भर्तृघातिनी, और जिसकी आँखें खोंढराईसीहों वह दुष्टा, एवं गजनेत्रा अशोभना होती है ॥ १२ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बाँय आँखकी कानी स्त्री पुंश्चली, और दहिने आँखकी कानी बाँझ होती है। [illegible] रमणीके नेत्र मधुके (सहतके) समान पिंगलवर्ण होवें वह धनधान्यकी समृद्धिसे [illegible] होतीहै ॥ १३ ॥ जिसके पक्ष्म (बरौनी) अतिघने, चिकने, काले, और पतले [illegible] वह सौभाग्यवती होवे, और जिसके पक्ष्म, विरल, कपिल (भूरे) और मोटे हों [illegible] नारी निन्दनीयहै ॥ १४ ॥ सुभ्रूकी दोनों भ्रू (भौं) गोली, चिकनी, काली कोमल [illegible] रोमवाली, धनुषाकार, और परस्पर अमिलित होनेहीसे प्रशस्त होती हैं ॥ १५ ॥ [illegible] कडेरोम, और बडे रोमवाली, बहुतमोटी, विरल (वीडल) सूधी भूरी और एक [illegible] रेमें मिली (जुटी) हुई स्त्रियोंकी भौंहें उत्तम नहीं होतीं ॥ १६ ॥ शुभावर्तयुक्त [illegible] दोनोंही कर्ण सुखप्रद और शुभसूचक होतेहैं, एवं शष्कुली (गेंडुरी) रहित, [illegible] युक्त, टेढे, और छोटे कान प्रशंसनीय नहींहोते ॥ १७ ॥ जिस नारीका भालस्थ [illegible] (लिलार) नसोंसे हीन, निर्लोम, अर्धचन्द्राकार, उन्नत, और तीन अंगुलका [illegible] सौभाग्य और आरोग्यताका कारण होता है ॥ १८ ॥ स्वस्तिक (त्रिकोण) [illegible] जिसमें स्पष्ट हो, वह ललाट राज्यसंपत्तिका सूचक होता है, और जिसका [illegible] लम्बा होताहै वह स्त्री अवश्यही देवरको मारतीहै ॥ १९ ॥ एवं जिसका [illegible] ऊंचा रोमश और शिराल (नसैल) होवे वह स्त्री रोगिणी होतीहै ॥ २० ॥ [illegible] सीमन्त (मांग—जहां सेंधुर लगाया जाताहै) सूधाही उत्तम होताहै, और [illegible] (मूड), अतिउन्नत, और गजकुंभके सदृश, तथा गोल, होनेसे सौभाग्य [illegible] ऐश्वर्यका सूचक होताहै ॥ २१ ॥ जिस स्त्रीका शिर भारीहो वह विधवा, [illegible] शिर लम्बा हो वह वेश्या, और जिसका शिर बडाहो वह भी दौर्भाग्यभाजन हो [illegible] ॥ २२ ॥ केशकलाप भ्रमरकुलके समान काले, सूक्ष्म (पतले) चिकने, [illegible] कोमल, आगेकी ओर सिकुडे और टेढे हों तो अत्यंतही शोभन होतेहैं ॥ २३ ॥ [illegible] कडे, आगेकी ओर फटे, विरल, पिंगलवर्ण (भूरे) छोटे और रूखे केश [illegible] दारिद्र्य और बन्धके सूचक होतेहैं ॥ २४ ॥ स्त्रीलोगोंके दोनों भ्रूके मध्यमें [illegible] ललाटमें मशक (मसा) होतो वह राज्यसूचक होताहै, एवं बायें गालपर [illegible] शोणमशक (लालमसा) होवे तो मिष्टान्न भोगकी सूचना देताहै ॥ २५ ॥ [illegible] हृदयपर तिलक तिल अथवा लांछन (लच्छन) होतो सौभाग्यसूचक होताहै, [illegible] दहिने स्तनपर रक्त तिल वा लच्छन होवे तो ॥ २६ ॥ उसे चारकन्या और तीन [illegible] उत्पन्न होतेहैं। एवं जिसके वाम स्तनपर रक्त (लाल) तिल वा लच्छन होवे॥ [illegible]

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वह प्रथमतः एक पुत्र प्रसव करके फिर विधवा होजातीहै । यदि स्त्रीके गुह्यस्थानके दक्षिणभागमें तिल होतो ॥ २८ ॥ वह राजपत्नी अथवा राजमाता होवे । और लाल मसा तो (राजाकी) पटरांनीहीकी नासिकाके अग्रभागमें उगता है ॥ २९ ॥ और वही नासिकाके अग्रभागवाला मसा काला हो तो वह नारी भर्तृघातिनी और व्यभिचारिणी होतीहै । नाभिके नीचे तिल मसा और लच्छन ये सब शुभसूचक होतेहैं ॥ १३० ॥ गुल्फदेश (पैरकीघुट्टी) पर मसा तिल वा लच्छन होनेसे दरिद्रता होतीहै, और जिस स्त्रीके बायें हाथ, कान, गाल, वा कंठपर इन तीनों तिल मसा और लच्छनमेंसे एकभी कोई हो तो उसके पहिले गर्भमें पुत्रही उत्पन्न होवे । जिस नारीके माथेपर विधिलिखित त्रिशूलरेखाहो ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ वह सहस्रों स्त्रियोंपर आधिपत्य प्राप्त करतीहै । जो स्त्री सोजानेपर (निद्रावस्थामें) दांतोंको किटकिटावे ॥ ३३ ॥ अथवा प्रलापकरे (बयातीहो) तो वह सुलक्षणा होनेपरभी विवाह करनेके योग्य नहीं है । हाथपर यदि रोमसमूह दक्षिणावर्त (दाहिनीभँवरी) हों तो धर्मसूचक और वामावर्त होनेसे अशुभसूचक होतेहैं ॥ ३४ ॥ नाभी कान और छातीपर दक्षिणावर्त (भँवरी) होवे तो उत्तमहै एवं पीठके रीढसे दाहिनी ओर भी दक्षिणावर्त रोम हो तो सुखप्रद होताहै ॥ ३५ ॥ पीठके बीचमें नाभीके समान गोलाकार (भँवरी) हो तो वह नारी दीर्घायु और पुत्रवती होतीहै और राजपत्नीकी योनिके ऊपर दक्षिणावर्त (भँवरी) रहतीहै ॥ ३६ ॥ वही भँवरी यदि शकट (छकडा) के सदृश होतो बहुतसे संतान और सुखोंको देतीहै, और जो भँवरी कटि (कमर) से लेकर गुह्यस्थान पर्यंत चलीजावे, वह पति और संतानका नाश करडालतीहै ॥ ३७ ॥ पीठपरकी दोनोंही भँवरियाँ यदि उदरपर्यंत पहुँच जावें तो अच्छी नहींहैं, उनमेंसे एक भँवरी होतो स्त्रीका स्वामी मरजावे, और दूसरीके होनेसे वह नारी पुंश्चली होजातीहै ॥ ३८ ॥ जिसके कंठ (गला) सीमन्त (माँग) ललाट (लिलारमाथे) पर दक्षिणावर्त (भँवरी) हो उस स्त्रीको दुःख और वैधव्य भोगना पडताहै, अतएव ऐसी स्त्रीका परित्याग, प्रयत्नपूर्वक दूरहीसे करना चाहिये ॥ ३९ ॥ जिस स्त्रीके गलघांटी (कंठा) के बीचमें रोमोंकी दहिनी वा बायीं भँवरी हो वह एकवर्षके भीतरही पतिको मारडालतीहै ॥ १४० ॥ जिसके मस्तकपर एक अथवा वामभागमें दो बायीं (ओर घूमीहुई) भँवरियां होवें तो वे दोनों दश ही दिनके बीचमें पतिको मारडालतीहैं, इसलिये बुद्धिमानजन इन भँवरीवाली स्त्रीको दूरहीसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

परित्याग देवे ॥ ४१ ॥ कटिमें भँवरी होनेसे स्त्री कुलटा होतीहै, और नाभि भँवरी होतो पतिव्रता होवे, और जो (कहीं) पीठमें भँवरी हुई तो वह भर्तृघातिनी अथवा व्यभिचारिणी होती है ॥ ४२ ॥ स्कन्द कहनेलगे—जो स्त्री सुलक्षणा होके परभी दुःशीला हो वह कुलक्षणाओंकी शिरोमणिहै, एवं कुलक्षणा होकर जो साध्वी हो वही स्त्री समस्त (सु) लक्षणोंकी भूमी होतीहै ॥ ४३ ॥ विश्वेश्वरके अनुग्रहसेही सुलक्षणा सच्चारित्रा स्ववशवर्तिनी और पतिव्रतानारी गृहस्थाश्रममें पाई जासकतीहै ॥ ४४ ॥ पूर्वजन्ममें, जिन स्त्रियोंने सुवासिनियोंको नानाविध भूषणोंसे अलंकृत कियाहै वेही इसजन्ममें सुन्दर रूपवती होतीहैं ॥ ४५ ॥ जिनने पूर्वजन्ममें किसी पुण्यतीर्थमें स्नान अथवा शरीरत्याग कियाहै, वेही इस जन्ममें सुलक्षणा और लावण्यवती (नमकवाली) होतीहैं ॥ ४६ ॥ जिन स्त्रियोंने जगदंबिकाका पूजन कियाहै वेही भगवती भवानीके समान सच्चरित्रा होतीहैं और उनका पति उनके वशमें रहताहै ॥ ४७ ॥ स्वाधीनपतिका सुशीला मृगनयनियोंको स्वर्ग और अपवर्गका सुख यहाँहीपर प्राप्त होजाताहै, क्योंकि सुलक्षणका यही तो फलहै ॥ ४८ ॥ प्रमदायें अपने सुन्दरलक्षण और सच्चरित्रोंसे अल्पायु पतिकोभी दीर्घायु और आनन्दभाजन बनातीहैं ॥ ४९ ॥ अतएव पंडितजनोंको उचितहै कि, प्रथमतः समस्त लक्षणोंकी परीक्षा कर और दुर्लक्षणोंको छोड, सुलक्षणा स्त्रीसे विवाह करें ॥ १५० ॥ हे घटोद्भव ! गृहस्थोंके सुखार्थ इन (स्त्रियोंके) लक्षणोंको मैंने वर्णन किया, अब विवाहको कहताहूं, उन्हें भी सुन समझलीजिये ॥ १५१ ॥

दोहा—नारी नख सिख अंगके, सामुद्रिक अनुसार ।
गुन अवगुन लच्छन कहे, परिखिय व्याह बिचार ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां स्त्रीलक्षण-सामुद्रिकवर्णनं नाम सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३७ ॥

अडतीसवाँ अध्याय ।

गृहस्थाश्रम धर्म ।

स्कन्दबोले—(मुनिराज !) ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य, आसुर, गान्धर्व, राक्षस, और पैशाच, येही आठों प्रकारके विवाह (शास्त्रमें) कहेजातेहैं ॥ १

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(उन विवाहोंमें) वरको बुलाकर अलंकारादिके सहित जो कन्यादान कियाजाता है वह ब्राह्मविवाह होताहै इस ब्राह्मविधिसे विवाहित कन्याका पुत्र एक्कीस पुरुषों (पीढियों) को पवित्र करताहै ॥ २ ॥ यज्ञकर्ममें स्थित ऋत्विजको कन्या देदेनेसे दैवविवाह होताहै, इसका पुत्र चौदह पुरुषोंको पवित्र करताहै, वरसे एक जोडा गोरू लेकर कन्या देनेसे आर्षविवाह होताहै, इसका सन्तान छःपुरुषोंका उद्धार करताहै ॥ ३ ॥ "तुम दोनों एकसाथ होकर गृहस्थाश्रमके धर्मका आचरण करो" यह कहकर अर्थी वरको जो कन्यादान कियाजावे वह प्राजापत्य विवाह होताहै, इसका पुत्रभी छःपुरुषोंको पूत करदेताहै ॥ ४ ॥ येही चारों प्रकारके विवाह ब्राह्मणोंके धर्मानुसार कहेगयेहैं, धन देकर क्रयणकरनेसे आसुर, और परस्परके अनुरागसे गांधर्व ॥ ५ ॥ एवं बलपूर्वक कन्याहरण करलेनेसे राक्षस—ये तीनों विवाह सज्जनोंमें निन्दित होतेहैं और छलकरके कन्याहरण करनेसे जो पैशाच विवाह होताहै वह तो बहुतही गर्हित (कहाजाता) है ॥ ६ ॥ इन विवाहोंमें गांधर्व आसुर और राक्षस ये तीनों तो क्षत्रिय और वैश्योंमें प्रायः प्रचलित कहेजाते हैं, परन्तु यह आठवाँ पापमय पैशाच विवाह केवल पापियोंहीके बीचमें होताहै ॥ ७ ॥ सजातीय स्त्रीको विवाहकालमें हाथ पकडना चाहिये, किन्तु क्षत्रियकन्याको बाण, वैश्यकन्याको प्रतोद (चाबुक) और शूद्रकन्याको वस्त्रका अंचल पकडना उचितहै ॥ ८ ॥ यह विधि असवर्ण विवाहहीमें देखी और कहीगयीहै, एकजातिके विवाहमें सबोंको पाणिग्रहणही करना चाहिये—यही विधिहै ॥ ९ ॥ धर्मसंगत विवाहकरनेसे धर्मिष्ठ और शतवर्षजीवी संतान उत्पन्न होतेहैं, और अधर्मानुसार विवाहनेसे अधार्मिक, हतभाग्य निर्धन और अल्पायु सन्तान होतेहैं ॥ १० ॥ ऋतुकालमें (स्वपत्नी) गमन गृहस्थोंका परमधर्म है, अथवा स्त्रियोंके वरको स्मरणकर कामनानुसार संभोग करनाभी धर्महीहै ॥ ११ ॥ दिनमें स्त्रीगमन करना पुरुषोंका परमआयुष्य नाशक होताहै, अतएव बुद्धिमान् जन प्रयत्नपूर्वक (दिनभाग) श्राद्धदिन और समस्त पर्वोंके दिन संभोग न करे ॥ १२ ॥ इन समयोंमें मोहवश स्त्रीगमन करनेसे पुरुष परमधर्मसे पतित (भ्रष्ट) होजाताहै ॥ १३ ॥ जो पुरुष ऋतुकालहीमें संभोग करे, और अपनीही स्त्रीमें निरत होवे, उसे उत्तम गृहाश्रमी होनेपरभी सर्वदा ब्रह्मचारीही जानना चाहिये "एकनारी ब्रह्मचारी" ॥ १४ ॥ स्त्रियोंका ऋतुकाल सोलह रात्रितक रहताहै, उनमेंसे प्रथम चाररात्रियाँ वर्जितहैं, अवशिष्ट (बाकी) युग्मरात्रियोंमें गमनकरनेसे पुत्र और अयुग्म रात्रियोंमें कन्या उत्पन्न

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

होतीहैं ॥ १५ ॥ दुःस्थ (अनिष्टस्थानके ग्रस्त) चन्द्र, और मघा, मूल नक्षत्रोंको छोडकर, विशेषतः पुंनक्षत्रमें पवित्र होकर पत्नीसे संभोग करे (क्योंकि) ऐसा करनेसे पुरुषार्थ साधक पवित्रपुत्र उत्पन्न होताहै ॥ १६ ॥ आर्षविवाहके विधानमें एक जोडा गोरू लेनेकी बात कहीगयीहै, वह कुछ प्रशंसाके योग्य नहीं होती क्योंकि कन्याके संबंधमें कुछ (थोडा) भी शुल्क (धन) लेनेसे कन्याविक्रयका पाप होही जाता है ॥ १७ ॥ अपत्यविक्रयी जन कल्पभर विट्कृमि भोजी नामक नरकमें वास करता है, इसलिये पिता कन्याका अणुमात्र धन लेकर (अपनी) जीविका निर्वाह न करे ॥ १८ ॥ जो बांधवगण इस लोकमें मोहवश स्त्रीधनोंको लेकर उपजीविका करतेहैं वे केवल अपनेही नहीं वरञ्च उनके पूर्वज पुरुषभी नरकमें जापडतेहैं ॥ १९ ॥ जहांपर पति पत्नीपर संतुष्ट, और पत्नी पति संतुष्ट होवे वहांपर संतुष्टचित्तसे विष्णुकेसहित महालक्ष्मी निवास करतीहैं ॥२०॥ वाणिज्य, राजसेवा, वेदाध्ययनका त्याग, कुविवाह और कर्मलोप ! इन्हीं कारणोंसे कुलका अधःपतन होजाताहै ॥ २१ ॥ गृहस्थ प्रतिदिन वैवाहिक अग्निमें गृह्यसूत्र पंचयज्ञ, और नित्यकी पाकक्रिया (रसोंई) को सम्पादन करे ॥ २२ ॥ गृहस्थ श्रमीको कंडनी (कूटना—ओखरीमूसरसे) पेषणी (पीसनाजांतासे) चुल्ली (चूल्हा) उदकुंभ (जलका घडा) और मार्जनी (झाडू)—येही पांचों सूनाकर्म (जीवहिंसा स्थान) प्रतिदिन करने पडतेहैं ॥ २३ ॥ इन पांचों सूनादोषोंके दूरकरनेहीकेलिये गृहस्थोंके कल्याणवर्द्धक ये पांचों यज्ञ निर्दिष्ट कियेगयेहैं ॥ २४ ॥ पाठन—ब्रह्मयज्ञ, तर्पण—पितृयज्ञ, हवन—देवयज्ञ, बलि (वैश्वदेव)—भूतयज्ञ, और अतिथिपूजन—नरयज्ञ, क्रमसे कहेगयेहैं ॥ २५ ॥ गृहस्थ पितरोंके प्रीत्यर्थ अन्न, जल, दुग्ध, घृत और फलादिकेद्वारा प्रतिदिन श्राद्ध करे ॥ २६ ॥ सुपात्रको विधिपूर्वक भोजन करनेसे जो पुण्य प्राप्त होताहै, भिक्षुकको आदरसहित भिक्षादेनेमेंभी वही पुण्य मिलताहै ॥ २७ ॥ तपस्या और विद्यारूप ईंधनसे प्रज्वलित ब्राह्मणके मुखरूप अग्निमें आहुति देनेसे (गृहस्थ) दुस्तर पापसमुद्र और विघ्नराशियोंसे निर्लिप्त पाजाताहै ॥ २८ ॥ जिसके गृहसे अतिथि संमानके न पानेसे हताश होकर चला जाताहै, वह (गृहस्थ) आजन्मके संचितपुण्यसे भी उसीक्षण बाहर होजाताहै ॥ २९ ॥ यदि कुछभी नहोसकै तोभी अभ्यागत (अतिथि) के संतोषार्थ मधुर वचन, शयनार्थ विश्रामस्थान तृण (चटाईआदि) एवं जल तो अवश्यही

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चाहिये ॥ ३० ॥ जो गृहस्थ (आतिथ्यलोभसे) परान्न भोजन करताहै, वह मरनेपर उस अन्नदाताका पशु होताहै; क्योंकि इस परान्नपुष्टका पुण्य वही अन्नदाता लेलेताहै ॥ ३१ ॥ यदि सूर्यास्त होजानेपर सायंकालमें कोई अतिथि आजावे तो उसका प्रयत्नपूर्वक सत्कार करना चाहि नहींतो यदि वह असत्कृत होकर अन्यत्र चलाजावे तो बडा पाप गृहस्थको देजाताहै ॥ ३२ ॥ जो गृहस्थ अतिथिको खिलाकर अवशिष्ट अन्न भोजन करताहै वह इस लोकमें दीर्घायु और धनवान् होताहै, और जो अतिथिको हटाकर अन्न खाताहै वह पापग्रस्त होजाताहै ॥ ३३ ॥ वैश्वदेव बलिके अनन्तर अथवा सायंकालमें जो आजावे वही अतिथि कहलाताहै और जो कोई उसके पूर्वही आवे अथवा प्रथमही कहींपर दिखलायी पडा हो वह अतिथि नहीं होसकता ॥ ३४ ॥ जब कि ब्राह्मण बलिपात्रको हाथमें लिये हो उसी वेला यदि कोई दूसराभी अतिथि आजावे तो उस बलिको बिनादियेही उस अतिथिहीको यथाशक्ति अन्न समर्पण करे ॥ ३५ ॥ नव विवाहिता पुत्रवधू (पतोहू) बेटी इत्यादि स्त्रियाँ, बालक, गर्भिणी और अतिरोगियोंको अतिथिके भोजनसे पूर्वही खिलादेवे इसमें कुछभी विचार नहीं करना चाहिये ॥ ३६ ॥ गृहस्थ पितर, देव और मनुष्योंको देकर शेष भोजन करनेसे अमृतही खाताहै और जो कोई केवल अपनेही पेट भरनेकेलिये पाक बना करके खाताहै वह तो पापही भोजन करताहै ॥ ३७ ॥ गृहस्थ मध्याह्नकालका वैश्वदेव तो आपही करे, पर संध्याकालका वैश्वदेवबलि उसकी पत्नी सिद्ध (पकेहुए) अन्नोंसे विनामंत्रोंहीके कर देवे ॥ ३८ ॥ गृहस्थाश्रममें इसीका नाम सायंतन वैश्वदेव है, इसी प्रकारसे प्रयत्नपूर्वक सायंकाल और प्रातःकालका बलि वैश्वदेव होताहै ॥ ३९ ॥ जो द्विजाति वैश्वदेव और आतिथ्य सत्कारसे हीन होवें तो वेदाध्यायी होनेपरभी उन सबको शूद्रही समझना चाहिये ॥ ४० ॥ जो द्विजाधम बलि (वैश्वदेवके बिना) कियेही भोजन करतेहैं, वे इसलोकमें अन्नहीन और मरनेपर काकयोनिमें प्राप्त होतेहैं ॥ ४१ ॥ द्विजोत्तम, आलस्य रहित होकर प्रतिदिन अपना वेदविहित कर्म संपादन करे, क्योंकि यथाशक्ति उसके करनेसे अत्युत्तम सद्गतिको पाताहै ॥ ४२ ॥ षष्ठीको तेलमें, अष्टमीको मांसमें, चतुर्दशीको छूरामें (क्षौरकर्ममें) और अमावास्या पूर्णिमातिथिको योनिमें पापका नियत निवास रहताहै ॥ ४३ ॥ उदय और अस्त होतेहुए, आकाश के मध्यमें प्राप्त राहुग्रस्त और जलमें प्रतिबिंबित सूर्यको न देखे ॥ ४४ ॥ (वारंवार अथवा जलमें) अपना रूप न देखे, वर्षाके समय शीघ्रतासे न दौडे बछवाके बांधनेकी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

डोरी (पगहा) न नांधे, नग्न होकर जलमें न पैठे ॥ ४५ ॥ देवताका मंदि
ब्राह्मण, गौ, मधु (सहत), मट्टीकी ढेर, घृत, जातिमें श्रेष्ठ, अवस्थामें बडे,
विद्वान्, तपस्वी ॥ ४६ ॥ पिप्पलवृक्ष, चैत्य (प्रसिद्ध—वा—सीमा) वृक्ष, गुरु
जलसे पूर्ण घट, सिद्धान्न, दधि और सरसों, इन सबको चलते समय दहिनी ओर क
जावे ॥ ४७ ॥ रजस्वलास्त्रीसे संभोग न करे, भार्याके साथ (एकहीपात्रमें) भोजन क
एकही वस्त्र धारण किये अथवा (पीढा इत्यादि छोड) उत्कट आसनपर बैठकर भो
न करे ॥ ४८ ॥ तेजस्वी होनेका अभिलाषी द्विजोत्तम खातीहुई स्त्रीको (कभी
देखे, जो बहुतदिन जीवन चाहे वह कभी नवाअन्न, पकवान, और मांस, देवता
पितरोंको समर्पण कियेविना न भोजन करे. ॥ ४९ ॥ गोशाला, विमौढ, व
और जिसमें जीव वर्तमानहों वैसे गडहोंमें तथा खडेहोकर अथवा चलताहुआ मू
त्याग (पेशाब) न करे । गौ, ब्राह्मण, सूर्य, वायु, अग्नि, चन्द्रमा, तारागण, ज
और गुरुजनोंको देखताहुआ मलमूत्रका त्याग (दिसापेशाब) न करे । ईंटा (ढे
लकडी पत्ता वा तृण इत्यादिसे भूमिको डाँपकर एवं वस्त्रसे शिरको तोप (बांध
मौनावलंबी हो (चुपमारकर) मलमूत्रका परित्याग करे । रात्रिकालमें अथवा दि
मेंभी जहांपर छाया वा अंधेरा होवे वहां, भयके स्थानोंमें, और प्राणपीडामें
किसी ओर मुखकरके मलमूत्र त्याग कर सकताहै । ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२
॥ ५३ ॥ अग्निको मुखसे न फूंके (बारे) और नग्न स्त्रीको न देखे ॥ ५४
अग्निमें दोनों पैर न सेंके, और अशुद्ध वस्तु न डालदेवे, प्राणिहिंसा न करे,
दोनों सन्ध्याओंमें भोजन न करे ॥ ५५ ॥ सन्ध्याकालमें अथवा पश्चिम
शिर करके न सोवे दीर्घजीवनेच्छु जलमें मलमूत्र और ष्टीवन (थूंका) न
॥ ५६ ॥ (बछडेको) पिलाती हुई गौको किसीसे नकहे, इन्द्रधनुष किसी
न देखावे, किसीभी सूनेस्थानमें अकेला न सोवे और निद्रितजनको न जगा
॥ ५७ ॥ अकेला मार्गमें न चले, अंजुरीसे जल न पीवे, दिनमें जिसवस्तुका
निकाल लियागयाहो उसे, और रात्रिमें दहीका भोजन न करे ॥ ५८ ॥ रजस्व
स्त्रीसे बातें न करे, रात्रिमें आकंठ (चंप) भोजन न करे, नाच गीत और बाज
लीन न होवे, काँसेके बर्तनमें पैरोंको न धोवे ॥ ५९ ॥ जो ज्ञानहीन स्वयं श्रा
करके पीछे दूसरेके श्राद्धमें खावे तो वह भोक्ता पापहीं भोजन करताहै, और दा
कोभी श्राद्धका फल नहीं होता ॥ ६० ॥ दूसरेका पहिनाहुआ वस्त्र और उत्त

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(पनही–जूता) न पहिने फूटे बासनमें न खावे, और अग्नि इत्यादिसे दूषित स्थान पर न बैठे ॥ ६१ ॥ बरदाकी पीठपर चढना, चिताका धूम, (पैंडकर) नदीका पार करना–(नबाहुभ्यां नदींतरेत् इतिमनुः) प्रातःकालका घाम और दिनका सोना, दीर्घायु चाहनेवाला इन सबको न करे ॥ ६२ ॥ स्नान करके फिर देह न मले टीकाप्रमाण-"करेणनोत्सृजेद्गात्रं स्नानवस्त्रेण वा पुनः । शुनोच्छिष्टं भवेद्गात्रं पुनस्स्नानेन शुद्ध्यति" ॥ मार्गमें शिखाका (बार) न फेंके, दोनों हाथ और शिरको न धूने (कंपावे) पैरसे आसन न खींचे ॥ ६३ ॥ दांतसे लोम अथवा नख कभी न उखाडे नखोंहीसे नखका काटना और तृणका कुपुटना छोड देवे ॥ ६४ ॥ जिसकर्मके अन्तमें अच्छा नहीं है उसे प्रयत्नपूर्वक त्याग देवे, अपना घरहो चाहे दूसरेका घरहो उसके भीतर द्वारके भिन्न अन्य प्रकारसे न जावे ॥ ६५ ॥ जूआ न खेले, और अधार्मिक अथवा रोगियोंके साथ एकत्र न बैठे, कहीं भी नग्न होकर शयन न करे, एवं हाथपर लेकर भोजनभी नहीं करना चाहिये ॥ ६६ ॥ जो कोई हाथ पैर और मुखको ओदा करके अर्थात् धोके भोजन करताहै वह चिरंजीवी होताहै, परन्तु ओदेपैर सूतना न चाहिये, और जूठे मुख कहीं चलेभी नहीं जानाचाहिये ॥ ६७ ॥ शय्यापर बैठकर द्विज न खावे न कुछ पीवे, और न जपकरे, पादुका (पनहीं) पहिनकर आचमन (कुल्ला) न करे और खडा होकर धाराजल (गल्ला) नहीं पीनाचाहिये ॥ ६८ ॥ सुखाभिलाषी जन सन्ध्या होजानेपर तिलका बनाहुआ कोईभी पदार्थ न खावे, मलमूत्रको न देखे, और जूठे मुँह शिरको न छूवे ॥ ६९ ॥ भूसा, कोइला, राखी केश और पखपडा ठिकडापर न बैठे, पतितजनोंका साथ पतितही बनादेताहै (अतएव न करे) ॥ ७० ॥ शूद्रको कदापि वेदका मन्त्र न सुनावे, ऐसा करनेसे ब्राह्मण ब्राह्मणत्वसे और शूद्र अपने धर्मसे भ्रष्ट होजाताहै ॥ ७१ ॥ शूद्रोंको धर्मका उपदेश देनेसे अपनेही कल्याणकी हानि होतीहै, क्योंकि शूद्रोंका परमधर्म द्विजगणका सेवन करनाही शास्त्रमें कहागया है ॥ ७२ ॥ दोनों हाथोंसे शिरका खुजलाना अथवा पीटना और चिल्लाना वा बार नोचना अच्छा नहीं है ॥ ७३ ॥ लोभवश शास्त्रके विरुद्ध वर्ताव करनेवाले राजासे दान लेकर ब्राह्मण अपने वंशके सहित एक्कीसों नरकोंमें गमन करताहै ॥ ७४ ॥ (वेदवेदाङ्गके) ये सब अनध्याय कहेगये हैं–बिनावर्षाके बिजुरी गर्जनेपर, वर्षामें धूर गिरे तो, और रात्रिमें जो वायुका बडा हाहाकार शब्द हो तब ॥ ७५ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लुक्कगिरे, भूडोल होवे, बडी आग लगे, आधीरातकी बेला, दोनों सन्ध्या शूद्रके समीप, राजाका सूतक (चन्द्र सूर्यका) ग्रहण ॥ ७६ ॥ अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या और पूर्णिमा, तिथियाँ एवं श्राद्धका नेवता अथवा हाथी और ऊंटके बीचमें पडजानेपर ॥ ७७ ॥ गर्दभ, ऊंट, और सिंह बोलनेपर, सब लोगोंके एकसाथ रोने, उपाकर्म और उत्सर्ग विधिके होने—(वेदारंभ—और विसर्जनकेदिन) नौकापर, मार्गमें वृक्षपर और जलमें ॥ ७८ ॥ आरण्यकभागको पढकर और जहाँ बाण और सामवेदकी ध्वनि सुनाई पडे सब अनध्यायोंमें द्विज कभी अध्ययन न करे ॥ ७९ ॥ एवं जब कि गुरु—बीचमें, मेढक, मूसा, कुक्कुर, सर्प और नेउर, (कोईभी) आजावे तो फिर न अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या और पूर्णिमा तिथियोंमें सर्वदा ब्रह्मचर्य्य करना ॥ ८० ॥ परस्त्रीगमन बहुतही आयुष्य नाशक है अतएव उसे दूरहीसे त्यागदे शत्रुकी सेवा न करे ॥ ८१ ॥ पूर्वकी संपत्ति नष्ट होजानेसे अपना तिरस्कार न करे, क्योंकि उद्योगी पुरुषोंको संपत्ति और विद्या कुछभी दुर्लभ नहीं है ॥ ८ हे घटोद्भव ! सत्य बोले और प्रिय बोले, पर अप्रिय सत्यभी हो तो न कहे मिथ्या (झूठा) प्रियवचन भी न कहे यह धर्महै (मनुकेअनुसारहीहै सनातन संबोधनहै) यथा—"सत्यंब्रूयात्प्रियंब्रूयान्नब्रूयात्सत्यमप्रियम् । प्रियं च नानृतं ब्रूया धर्मः सनातनः" (धर्मोघटोद्भव) ॥ ८३ ॥ सर्वदैव भद्र (भला—अच्छा) कहे, और भद्रहीकी चिन्ताभी करे, इसलोकमें भद्र (पुरुषों) हीके साथ व्यवहार और अभद्रों (नीचों—बुरों) से कुछ संबंध न रक्खे ॥ ८४ ॥ बुद्धिमान् (अपनेसे) रूप, धन, और कुलमें जो लोग हीन हों उनका अपमान न करे, अशुद्ध रहे तो चन्द्र सूर्य और तारागणको न देखे ॥ ८५ ॥ वचनका वेग, मन वेग, और जिह्वाका वेग रोकना उचितहै, एवं घूस जूआ दौत्य (दलाली) आर्तजनका द्रव्य दूरहीसे त्याग देवे ॥ ८६ ॥ गौ, ब्राह्मण और अग्निको हाथसे न छूवे, और विना आतुरताके अकारणही अपने इन्द्रिय (छिद्रों) को नहीं छूना चाहिये ॥ ८७ ॥ एवं गुह्यस्थानके रोमोंकोभी स्पर्श करनेसे अशुद्ध होजाताहै । पैरका धोअनजल, मूत्र, जूंठा अन्न जल ॥ ८८ ॥ थूंक और (खँखार) इन सबको घरसे दूरपर फेंकना चाहिये । द्विज दिनरात वेदके और शौच और आचारके सेवन, एवं द्रोहरहित बुद्धिके द्वारा पूर्वजन्मको स्मरण

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पाताहै ॥ ८९ ॥ वृद्धलोगोंको प्रयत्नपूर्वक प्रणाम करे, उनको अपना आसन (छोड) देवे, आप नम्र होकर नीचे बैठे और जानेकी वेला उनके पीछे पीछे चले ॥ ९० ॥ वेद, ब्राह्मण, देवता, राजा, साधु, तपस्वी और पतिव्रता स्त्रियोंकी निंदा कभी न करे ॥ ९१ ॥ मनुष्योंकी स्तुति (बडाई) न करे अपना अपमान न करे, प्राप्तवस्तुका परित्याग न करे और दूसरेका मर्म न कहे ॥ ९२ ॥ अधर्म करनेसे प्रथम तो वृद्धि, शत्रुओंसे विजय और सब ओरसे अच्छाही अच्छा होताहै, परन्तु अन्तमें सवंश नष्ट होजाताहै ॥ ९३ ॥ दूसरेके जलाशयमें नहाना हो तो पहिले पाँच पिंडिया मट्टी निकालदेवे, नहीं तो उसके बनवानेवालेके पापका चतुर्थांश उस नहानेवालेको लगजाताहै ॥ ९४ ॥ देश काल और सत्पात्र पाकर यदि कुछभी द्रव्य श्रद्धासे दानकियाजावे तो उसका फल अनन्त होजाताहै ॥ ९५ ॥ जो कोई भूमिदान करताहै वह मंडलाधीश राजा होताहै अन्नके दातालोग सर्वत्रही सुखी होतेहैं, जल देनेसे सदा संतुष्ट और रूपा देनेसे रूपवान् होताहै ॥ ९६ ॥ दीपदान करनेवाला निर्मलदृष्टि, गोदान कर्ता सूर्यलोक भागी, सुवर्ण दानसे चिरजीवी, तिलदेनेसे सुसंतान ॥ ९७ ॥ गृहप्रद अत्युच्च सौधका स्वामी, वस्त्रदाता चन्द्रलोकवासी, घोडा देनेसे दिव्यविमानगामी, वृषभदानसे लक्ष्मीवान् ॥ ९८ ॥ पालकी और पलंगके दान करनेसे सुन्दर भार्य्यावाला, धान्य देनेसे समृद्धिमान्, अभयदान करनेसे ऐश्वर्यशाली ॥ ९९ ॥ और वेददानसे ब्रह्मलोकमें पूजित होताहै, जो वेददाताहो वह सर्वस्व दाता मानागयाहै, जो कि किसी उपायसे वेद दान करवाता (पढवाता) है वहभी दाताहीके समान फल पाताहै ॥ १०० ॥ जो श्रद्धापूर्वक दान देताहै और जो उसे वैसीही श्रद्धासे लेताहै, वे दोनोंही स्वर्गगामी होते हैं, पर बिनाश्रद्धाके देने और लेनेवाले दोनों अधःपतित होतेहैं ॥ १ ॥ असत्यसे यज्ञ, विस्मय (आश्चर्य) से तपस्या, वर्णन करनेसे दान और ब्राह्मणोंकी निंदाकरनेसे आयुष्य नष्ट होजातीहै ॥ २ ॥ गन्ध, पुष्प, कुश, शय्या, साग, मांस, दूध, दही, मणि, मछरी, गृह और धान्य ये सब जिससे प्राप्तहों लेलेनाचाहिये ॥ ३ ॥ मधु, जल, फल, मूल, ईंधन (जरावन) और अभयदक्षिणा, इन सबकोभी यदि बिनामाँगेही मिलजावें तो निकृष्ट जनसेभी लेलेवे ॥ ४ ॥ शूद्रोंमेंभी दास नापित (नाऊ) ग्वाला (अहीर) वंशका मित्र, हरवाहा और जो बडा भक्तहो, उसका अन्न भोजन कियाजासकताहै ॥ ५ ॥ इसप्रकारसे देव, ऋषि और पितरोंके ऋणसे छुट्टी पाकर और पुत्रके ऊपर घरका भार रख आप उदासीनता (वानप्रस्थ आश्रम) का अवलंबन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

करे ॥ ६ ॥ गृहमें रहे तोभी ज्ञानका अभ्यास करे, अथवा काशीका आश्रय क्योंकि संपूर्ण ज्ञान होनेहीसे मुक्तिलाभ होताहै, किंवा काशीहीमें मुक्ति प्राप्त होती है ॥ ७ ॥ मनुष्योंको एकही जन्ममें सम्पूर्ण ज्ञान कहाँसे प्राप्तहोसकताहै, काशीमें तो केवल शरीरत्यागहीसे निश्चय मुक्ति मिलजातीहै ॥ ८ ॥ आज, परसों, चाहे सौवर्षमें (एक न एक दिन तो यह) शरीर अवश्यही छूटजावेगा, कहीं यह घटना काशीमें होवे तो मुक्ति (अनायासही) मिलजावे ॥ ९ ॥ वह काशी सब किसीको नहीं मिलती, जो कोई नित्यही सदाचार करताहै उसे प्राप्त होतीहै, अतएव विद्वान् जन (लोकमें) इस सदाचारके लंघनको स्थान न देवे ॥ ११० ॥ इसके अनंतर अगस्त्यमुनिने यह सुनकर फिर कार्तिकसे कहा, कि आप पुनः उसी काशीका वर्णन कीजिये जो सदा चारहीसे प्राप्त होतीहै ॥ ११ ॥ हे स्कन्द ! मैं आपसे यह पूछताहूं कि, काशीमें कौन लिंग ज्ञानदायक हैं, आप उनको कहें ॥ १२ ॥ हे षडानन ! मुझे विना (अन्यत्र) न तो सुखहै और न प्रीतिहीहै, मैं तो केवल "काशी" इन्हीं दो रूप अमृतको पीता रहताहूं बिना काशीके नतो मैं सोताहूं न जागताहूं, न खाताहूं और न जलपानही करताहूं, मेरी दशातो चित्र पुत्रक (कठपुतरी) ऐसी रहीहै ॥ १३ ॥ १४ ॥ अगस्त्यऋषिका यह कथित वचन सुनकर स्कन्दजीने मुक्तक्षेत्र (काशी) की महिमाको वर्णन करना प्रारंभ किया ॥ ११५ ॥

दोहा—विविध गृहाश्रम धर्म जे, बरनेहैं एहिमाँहि ।
मिलत मनुस्मृतिसे बहुत, वचन विचारे जाँहि ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां गृहस्थाश्रमधर्मनिरूपणं नाम अष्टत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३८ ॥

उनतालीसवाँ अध्याय ।

अविमुक्तेश्वरकी कथा ।

स्कन्द कहनेलगे—हे महाभाग अगस्त्य ! पापपुंजनाशिनी मुक्तिसम्पत्तिदायिनी काशीकी कथा सुनो ॥ १ ॥ अहो कैसा आश्चर्यहै ! ! (शास्त्रोंमें) जिसे निर्गुण निरात्मक, निर्विकल्प, निराकार, अव्यक्त, कार्यकारणरूप, परब्रह्म कहेहैं सर्वव्यापी होनेपरभी वही इस क्षेत्रभरमें विराजमान रहताहै, क्या वह अन्य पर भवबंधनसे मोचन करदेनेमें कुछ असमर्थ है ? सो नहीं ॥ २ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

परन्तु वे जो यहांहीपर स्थिरमुक्ति देतेहैं उसका कारण श्रवण करो, अन्य स्थानोंमें वेही परब्रह्म भगवान शिव, महायोग, निष्काम महादान, अथवा महातपस्याकेद्वारा मुक्त करतेहैं, परन्तु इस काशीमें वेही नतो उस महायोग, न उस महादान और न उस महातपस्याहीको मुक्तिके लिये चाहतेहैं । बहुत बडे उत्पातके उपस्थित होनेपर भी जो काशीको न छोडे वही महायोगहै, यहाँपर और सब तो उपयोग है। नियम पूर्वक सुन्दर मनसे विश्वनाथके ऊपर पत्र, पुष्प, फल, जल, जो कुछ चढादिया जावे वही यहाँका महादान है । पवित्र गंगाजलमें स्नान करके मुक्तिमंडपमें जो क्षणभर स्थिरतासे बैठाजाताहै, यहाँपर यही महातपस्या है । काशीक्षेत्रमें जो सत्कारपूर्वक (एक) भिक्षुकको भिक्षा दीजाती है, इसकी षोडशी कलाकोभी तुलापुरुष (दान) नहीं प्राप्त करसकताहै ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ हृदयमें विश्वेश्वरको ध्यानकर जो क्षणमात्र भगवान्के दक्षिणभागमें नेत्रनिमीलन कियाजाताहै, यही सर्वोत्तम महायोग है ॥ १० ॥ क्षुधा पिपासाको कुछभी न मान, और इन्द्रियोंकी चञ्चलताको रोककर जो काशीमें रहजावे यही बडी घोरतपस्या है ॥ ११ ॥ अन्यस्थानोंमें प्रतिमास चान्द्रायण व्रत करनेसे जो फल मिलताहै, यहाँपर वही फल केवल चतुर्दशी तिथिमें नक्त भोजनसे प्राप्त होताहै ॥ १२ ॥ दूसरे स्थानमें एकमास उपवास करनेसे जो फल उपार्जित होताहै, काशीमें श्रद्धापूर्वक केवल एकहीदिन उपवास करने निस्सन्देह वही फल लाभ होजाताहै ॥ १३ ॥ अन्यत्र चातुर्मास्य व्रतका जो बडाफल कहागयाहै, इस काशीमें एकादशीके उपवास मात्रसे वह निश्चय होजाताहै ॥ १४ ॥ छमास पर्यन्त अन्नत्याग करनेसे अन्यत्र जो पुण्य होताहै वही काशीमें एक शिवरात्रि व्रतसेही अवश्य प्राप्त होताहै ॥ १५ ॥ व्रतीजन अन्यत्र एकवर्ष उपवास करके जो फल लाभ करताहै, काशीमें केवल त्रिरात्र व्रतहीसे वह फल ज्योंका त्यों प्राप्त होजाताहै ॥ १६ ॥ हे मुने ! (कहांलों कहें) अन्य स्थानमें प्रतिमास कुशाग्र भागके जलपानसे जो पुण्य प्राप्त होताहै, काशीमें उत्तर वाहिनी गंगाके एक चुल्लू जलपीनेसे वही फल मिलजाताहै ॥ १७ ॥ काशीकी महिमा अनन्त है, (भला !) उसके वर्णन करनेमें कौन समर्थ होसकताहै ! जहाँपर भगवान् शिव स्वयं मरण चाहनेवाले जन्तुके कानमें मन्त्र देदेतेहैं ॥ १८ ॥ अहा ! मरतेहुए प्राणीसे भगवान् शम्भु ऐसा कुछ कहदेतेहैं, कि जिस अक्षरको

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कानमें सुनतेही अमृतपदको मृतजन्मी प्राप्त होजाताहै ॥ १९ ॥ मन्दराचलपर जाकर स्मररिपु शंकरभी बारंबार अपनी काशीपुरीको स्मरण करतेहुए तुम्हारेही सदृश पुनः उसकी प्राप्तिके लिये संतप्त हुएथे ॥ २० ॥ अगस्त्यने कहा—स्वामिन् ! भला मुझसे तो स्वकार्यसाधक अतिकठिन देवतोंने काशी छोडवादी, परन्तु परममंगल शिवने उसे क्यों त्याग किया ! ॥ २१ ॥ क्या पिनाकधारी महादेवभी मेरेही समान पराधीनथे ! नहीं तो उनने मुक्तिमणिराशि काशीको कैसे छोडदिया ! ॥ २२ ॥ स्कन्द बोले-हे मित्रावरुणतनय!मुने!देवतोंके प्रार्थना करनेसे जैसे तुमने परोपकारकेलिये काशीका त्यागकिया वैसेही निजरक्षण चतुर चतुरानन (ब्रह्मा) की प्रार्थनासे भगवान् महादेवनेभी (कुछ दिनकेलिये) काशी छोडदीथी इस कथाको कहताहूं सुनो ॥ २३-२४ ॥ अगस्त्यने पूँछा कि—हे षडानन ! ब्रह्माने दयासागर भगवान् रुद्रसे किसनिमित्त प्रार्थना की थी, वह मुझसे कहिये ॥ २५ ॥ स्कन्दने कहा—विप्रवर ! व्यतीतपाद्मकल्पके स्वायंभुवमन्वंतरमें साठवर्षकी सर्वलोकभयंकरी (बडीभारी) अनावृष्टि हुईथी, उसके द्वारा समस्त प्राणिगण परमपीडित होगये, उसकालमें कोई तो समुद्रके तीरपर कोई पहाडोंकी गुफाओंमें, कोई कोई लोग बहुत नीचे जलप्रायदेशोंमें जाकर मुनिवृत्तिसे दिन काटने लगे और समस्तभूमि ग्राम और नगरसे शून्य होकर बन बनगयीथी ॥ ॥ २६-२७-२८ ॥ संपूर्ण नगर और पुरोंमें मांसभोजी गणही फैलगये, और पृथिवीमंडलमें सर्वत्र केवल आकाशस्पर्शी वृक्षही रहगये ॥ २९ ॥ इधर उधरसे बडे बडे लुटेरू आकर डांकुओंहीको लूटनेलगे, प्राणरक्षाकेलिये प्राणीलोग मांसभोजनहीसे जीवनधारण करते थे ॥ ३० ॥ उस वेला समस्त अराजक लोकमें बडे अनिष्टकी सूचना होनेपर सृष्टिकर्ता ब्रह्माकी सृष्टिका प्रयत्न व्यर्थ होनेलगा ॥ ३१ ॥ तब तो जगद्योनि (ब्रह्मा) प्रजाओंका क्षय देख बडी चिन्ता करनेलगे, कि "इन प्रजागणके क्षय होजानेसे समस्त यज्ञादि क्रियायेंभी लुप्त होगयीं ॥ ३२ ॥ और उन क्रियाओंके नष्ट होजानेसे समस्त यज्ञभोजी देवता लोगभी क्षीण होचले ।" सृष्टिकर्ता यही सोच (विचार) रहेथे इसी अवसरमें उनने राजर्षिसत्तम ॥ वीर, क्षात्र धर्मकी नाईं उदित, मनुवंशमें उत्पन्न, परपुरंजय, विख्यात राजा रिपुंजयको अविमुक्त महाक्षेत्रमें निश्चलेन्द्रिय होकर तपस्या करते देखा ॥ इसके अनंतर ब्रह्मा उसके निकट जाकर बडे गौरवके साथ यह वचन बोले "हे महामते ! राजन् ! रिपुंजय ! तुम इस समुद्र पर्वत और कानन भूषित भूमंडलका पालन करो ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हे भूपाल ! नागराज वासुकि, तुमको शीलभूषणसंपन्ना अनंगमोहिनी नामकी नागकन्या भार्यार्थ देवेंगे ॥ ३७ ॥ हे महाराज ! स्वर्गके (देवता) लोगभी तुम्हारे प्रजापालनसे सन्तुष्ट होकर प्रतिक्षण रत्न और पुष्पादिक देते रहेंगे ॥ ३८ ॥ इसी कारणसे तुम्हारा दिवोदास नाम प्रसिद्ध होगा, हे नरपाल ! मेरे स्वभावसे तुमको दिव्य सामर्थ्य होगा" ॥ ३९ ॥ तदनंतर उस राजसत्तमने ब्रह्मदेवका वचन सुन, उनकी बडी स्तुति करके यह वाक्य कहा ॥ ४० ॥ राजाबोला—हे महाविज्ञ ! पितामह ! इस जनाकीर्ण महीतलमें क्या और दूसरे राजालोग नहींहैं ? फिर आप मुझेही क्यों (ऐसा) कहतेहैं ? ॥ ४१ ॥ ब्रह्माने कहा—" (राजन् !) तुम्हारे राज्य करनेसे देव बरषेगा और जो पापनिष्ठ राजाहोगा तो फिर कदापि वृष्टि न होगी" ॥ ४२ ॥ राजा फिर कहनेलगा—"हे त्रैलोक्यसर्जनसमर्थ ! महामान्य ! पितामह ! यह आपका महान् अनुग्रहहै, अतएव आपकी आज्ञा शिरमाथोंपर धारण करताहूं ॥ ४३ ॥ परन्तु मैं आपसे कुछ प्रार्थना कियाचाहताहूं, यदि आप मेरेलिये उसे करदेवें तो मैं पृथिवीपर निष्कंटक राज्य करसकूंगा" ॥ ४४ ॥ ब्रह्माने कहा—"पार्थिव ! जो कुछ कि तुम्हारे हृदयमें हो उसे झटपट कहदो, और उसे हुआही समझो हे महाबाहो ! तुमको अदेय मुझे कुछभी नहींहै" ॥ ४५ ॥ राजाने कहा—हे सर्वलोकपितामह ! यदि मैंही पृथिवीका नाथ होऊं तो फिर देवतालोग स्वर्गहीमें रहा करें इस पृथिवीपर नहीं रहें ॥ ४६ ॥ क्योंकि देवतोंके स्वर्गमें रहनेसे और मेरे भूतलपर रहनेसे, राज्य निष्कंटक रहेगा और उसीसे प्रजागणको सुख मिलेगा ॥ ४७ ॥ ब्रह्माने दिवोदाससे "तथास्तु" कहदिया, तब उस नरेश्वरने डंका बजाकर यह घोषणा (मुनादी) करदी कि, "देवतालोग स्वर्गमें चले जावैं ॥ ४८ ॥ मेरे राज्य शासन कालमें देवगण स्वर्गहीमें रहें और नागगण यहां न आवैं और आजसे मनुष्य लोग स्वस्थ होकर रहें" ॥ ४९ ॥ इसके अनंतर ब्रह्मा विश्वेश्वरको प्रणाम कर ज्योंहीं यह निवेदन किया चाहतेथे त्योंहीं भगवान्ने ब्रह्मासे कहा ॥ ५० ॥ आओजी लोकनाथ ! मन्दरनामक एक पर्वत, कुशद्वीपसे आकर यहां पर घोरतर तपस्या कररहाहै ॥ ५१ ॥ उसे तप करतेहुए बहुतदिन बीतगये सो चलो उसे वरदान करआवें । ऐसा कहकर पार्वतीनाथने नन्दी और भृंगीको आगे करके वृषभपर चढ मन्दराचल जहाँ तपस्या कररहाथा वहांपर गमन किया (और वहां पहुंचनेपर) देवादिदेव वृषभध्वजने प्रसन्न चित्तसे कहा ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ हे पर्वतश्रेष्ठ ! उठो उठो, तुम्हारा कल्याण हो, वरमाँगो, यह सुनतेही वह पर्वत देवदेव त्रिलोचन महेश्वर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

को अनेक बार भूमिपर प्रणाम करके यह प्रार्थना करनेलगा । "हे लीलाविग्रह धारक! प्रणतजन कृपानिधे ! शम्भो ! ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ आप सर्वज्ञ होनेपरभी मेरा वांछित (मनोरथ) क्यों नहीं जानते ? हे शरणागतरक्षक ! आप सब बातोंके ज्ञाताहैं॥५६॥ आपही सर्वान्तर्यामी, सर्वव्यापी, सर्वकर्ता और सर्वहैं, हे प्रणतार्तिभंजक ! यदि आ स्वभाव कठिन, प्रस्तरदेही अतिशोचनीय मुझ याचकको वरदिया चाहतेहैं, तो है अविमुक्त क्षेत्रके समान होनेकी अभिलाषा करताहूं ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ हे नाथ ! कुशद्वीपमें मेरे मस्तकके ऊपर पार्वती और परिवार के सहित आप आजसे निवास कीं यही वर मैं चाहताहूं" ॥ ५९ ॥ (यह सुनकर) सब किसीके सर्वाभीष्ट दाता भग वान् शंभु ज्योंहीं कुछ विचार करने लगे, त्योंहीं अवसर जान ब्रह्माने अग्रसर हो प्रणामपूर्वक माथेपर दोनों हाथोंको जोडकर यह निवेदन किया ॥६०॥ ब्रह्माने कहा- हे त्रिलोकीनाथ ! विभो ! विश्वेश्वर ! आपहीने प्रसन्न होकर मुझे चतुर्विध सृष्टि करनेपर नियुक्त कियाहै, ॥ ६१ ॥ मैंनेभी आपकी आज्ञानुसार प्रयत्न- पूर्वक उस सृष्टिकार्यको सम्पादन किया, परन्तु भूलोकमें साठवर्षके अवर्षणसे समस्त प्रजागण नष्ट होगये ॥ ६२ ॥ बडीभारी अराजकता फैलगयी, समग्र संसार घोर दुःखमें डूबने लगा, यह देखकर मैंने मनुवंशोत्पन्न, राजर्षिप्रवर रिपुंजय नामक नराधिपतिको प्रजापालन करनेके लिये राज्याभिषेक करदिया, परन्तु उन परमतपस्वी महावीर्यने मुझसे यह प्रतिज्ञा करालियी है ॥ ६३–६४ ॥ कि यदि आपकी आज्ञासे देवगण स्वर्गमें और नागगण पातालमें रहाकरें. तब तो मैं राज करूं, नहीं तो नहीं ॥ ६५ ॥ मैंने उससे तथास्तु कहदिया, अब उस बातका निर्वाह होनाचाहिये, अतएव, हे कृपानिधे ! मन्दराचलको इस प्रकारका वरदान कीजिये ॥ ६६ ॥ जिसमें वह राजा प्रजाओंका पालन करे और इसका मनोरथ सिद्ध हो (विचारकरदेखिये) मेरी दोही घडी भर तो इन्द्रका और उसकाभी राज्य रहे ॥ ६७ ॥ मेरे आधेही निमेषमात्रमें आँख मूँद लेनेवाले मर्त्यलोगोंकी यहां कौन गिनतीहै । (यह सुनकर) भगवान् हरने ब्रह्माके गौरवकी रक्षा करतेहुए और सुन्दर कन्दराओंसे शोभित मन्दराचलकोभी निर्मल समझकर उसकी प्रार्थना स्वीकार करली इस जम्बूद्वीपमें जैसे काशी सर्वदा मोक्षदायिनीहै ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ उसी प्रकार कुशद्वीपमें मन्दराचलभी बहुतदिनोंतक मोक्षदाता बन गयाथा । जब कि भगवान् विश्वेश्वर विचित्र कन्दरावाले मन्दराचलको जानेलगे तब ॥ ७० ॥ साधक लोगोंने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

समस्तसिद्धि और (काशीमें) मरेहुए जन्तुओंको मोक्षसम्पत्ति देनेके लिये, एवं यहां रहनेवालोंके और क्षेत्रके रक्षण निमित्त, ब्रह्माकेभी अगोचर निजमूर्तिमय एकलिंगको प्रतिष्ठित कर दियाथा ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ सुतरां पिनाकपाणिने मन्दराचलके ऊपर चलेजानेपरभी, इस क्षेत्रको नहीं छोडा, वरन् लिंगरूपसे बनेहीरहे, इसीसे इसका नाम "अविमुक्त" पडा ॥ ७३ ॥ पूर्वकालमें इस क्षेत्रका नाम "आनंदवन" था, परन्तु तभीसे इसका अविमुक्त नाम भूतलमें विख्यात हुआ ॥ ७४ ॥ इसीप्रकारसे इस क्षेत्र और लिंग दोनोंका नाम अविमुक्तही पडगया, इन दोनोंहीको प्राप्त करके मनुष्य फिर कभी गर्भभागी नहीं होता ॥ ७५ ॥ जो कोई अविमुक्तक्षेत्रमें अविमुक्तेश्वर लिंगका दर्शन करताहै, वह समस्त कर्मबंधनसे विमुक्तही होजाताहै ॥ ७६ ॥ इस विश्वमें सभी लोग विश्वेश्वरकी पूजा करतेहैं, परन्तु वही विश्वकर्ता विश्वेश्वर मुक्तिदायक अविमुक्तेश्वर लिंगका पूजन करतेहैं ॥ ७७ ॥ पूर्वकालमें किसीनेभी कहींपर किसीका लिंग स्थापन नहीं कियाथा, और न तो कोई यही जानताथा कि लिंगका आकारही कैसा होताहै ॥ ७८ ॥ अविमुक्तेश्वरहीका आकार (रूप) देखकर ब्रह्मा और विष्णु आदि देवतोंने तथा वशिष्ठ प्रभृति ऋषियोंनेभी लिंगकी स्थापना की है ॥ ७९ ॥ क्षितिमंडलमें यह अविमुक्तेश्वर लिंगही प्रथम महालिंग कहा गया है इसके पीछे और सब लिंग स्थापित हुएहैं ॥ ८० ॥ अविमुक्तेश्वरका केवल नामही सुननेसे मनुष्य आजन्मके संचित पापोंसे क्षणमात्रमें मुक्त होजाताहै इसमें कुछभी सन्देह नहींहै ॥ ८१ ॥ जो कोई दूर चलागया हो तो अविमुक्तेश्वर लिंगके स्मरण करनेहीसे दो जन्मके कियेहुए पापसे उसीक्षण मुक्त होजाता है ॥ ८२ ॥ जो मनुष्य अविमुक्त महाक्षेत्रमें अविमुक्तेश्वर लिंगका दर्शन करताहै, वह तीन जन्मके जनित पापको त्यागकर पुण्यमय होजाताहै ॥ ८३ ॥ अविमुक्तेश्वरके स्पर्शकरनेसे पाँच जन्मोंमें जो पाप अज्ञानवश कियागयाहो वह सब क्षय होजाताहै इसमें कुछभी अन्यथा नहींहै ॥ ८४ ॥ इस लोकमें जो नर अविमुक्तेश्वर महालिंगकी पूजा करता है वही कृतकृत्यहै, (क्योंकि) उसे फिर कभी जन्म नहीं लेना पडता ॥ ८५ ॥ जो कोई यथाशक्ति यथाबुद्धि काशीमें अविमुक्तेश्वरकी स्तुति प्रणति और पूजा करता है वह सर्वत्रही स्तुत, वन्दित, और पूजित होताहै ॥ ८६ ॥ स्वयं विश्वेश्वरका पूजित यह अनादिसिद्ध अविमुक्तेश्वर लिंग, अविमुक्तक्षेत्रमें मुक्तिकेलिये प्रयत्नपूर्वक सेवनीयहै ॥ ८७ ॥ कितनेही पवित्र तीर्थस्थानोंमें कितनेही लिंगहैं सो वे सब लिंग

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

माघमासकी कृष्णचतुर्दशीको (इस अविमुक्तेश्वरलिंगके पास) चले आते हैं ॥ ८८॥ जो कोई इस अविमुक्तेश्वरके समीप माघकृष्ण चतुर्दशीकी रात्रि (शिवरात्रि) में जागरण करताहै, वह सदा जागरूक योगिजनकी गतिका भागी होताहै ॥ ८९ ॥ नाना तीर्थोंके लिंगगण चतुर्वर्ग फलदायक होनेपरभी माघकृष्ण चतुर्दशीको अविमुक्तेश्वरकी उपासना करतेहैं ॥ ९० ॥ जो धीर पुरुष अविमुक्तेश्वरकी दृढभक्तिरूप वज्रको धारण किये होगा तो भला वह संचित पापरूपी पर्वतसे क्यों डरेगा ? ॥ ९१ ॥ चतुर्वर्ग फल देनेकेलिये उदयप्राप्त अविमुक्तेश्वर महालिंग कहां ? और नामलेतेही क्षय होजानेवाला छोटासा पापियोंका पापपहाड कहां ? ॥ ९२ ॥ विश्वेश्वरके पीठस्थान इस अविमुक्त महाक्षेत्रमें जिन लोगोंने परमोत्तम अविमुक्तेश्वर लिंगका दर्शन नहीं किया वे सब बडेही मोहान्ध हैं ॥ ९३ ॥ और अविमुक्तेश्वरके दर्शकजनको देखकर, दंडधर यमराज दूरहीसे दोनों हाथ जोडकर प्रणाम करतेहैं ॥ ९४ ॥ जिसने अविमुक्तेश्वरका दर्शन और स्पर्शन किया, उसका वह नेत्रनिर्माण धन्यहै जिससे उसने देखा और वे दोनों हस्तभी कृतार्थ होगये जिनसे उसने स्पर्श किया ॥ ९५ ॥ जो कोई पवित्र होकर नियमपूर्वक त्रिसन्ध्य अविमुक्तेश्वरको जपे, वह दूरदेशमें मृत्यु प्राप्त होनेपरभी काशीहीमें मरनेका फल पाताहै ॥ ९६ ॥ जो मनुष्य अविमुक्तेश्वर महालिंगका दर्शन करके कहीं दूसरे ग्राम (स्थान) में जावे तो शीघ्रही कार्यसिद्धिको पाकर सकुशल अपने घर लौटआवे ॥ ९७ ॥

दोहा—जो महिमा अविमुक्तकी, षण्मुख सके न भाषि ।
लेखि सके किमि लेखनी, फटी जीभ मुखराखि ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां अविमुक्तेश्वरकथावर्णनं नाम एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ३९ ॥

चालीसवां अध्याय ।

गृहस्थोंके कर्तव्याकर्तव्यका वर्णन ।

स्कन्दने कहा—(मुनिवर !) अविमुक्तेश्वरका माहात्म्य तो मैंने तुम्हारे आगे वर्णन किया, यदि और कुछभी सुना चाहतेहो तो फिरभी कहनेकेलिये मैं प्रस्तुतहूं ॥ १ ॥ अगस्त्य बोले—षण्मुख ! अविमुक्तेश्वरकी महिमा सुनसुनकर यद्यपि मेरे कान कृतार्थ होगये, तथापि सन्तोष नहीं होता ॥ २ ॥ (भला) यह तो कहिये

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कि अविमुक्तेश्वर लिंग और अविमुक्तक्षेत्र, इन दोनोंकी प्राप्ति किस उपायसे होसकती है ? ॥ ३ ॥ स्कन्द कहनेलगे—महामते ! कुम्भज ! जिसप्रकारसे इस लोकमें निज कल्याणदायक अविमुक्तकी प्राप्ति होसकतीहै, उसे कहताहूं, श्रवण करो ॥ ४ ॥ इच्छित मनोरथकी सिद्धि बडेही पुण्योंसे प्राप्त होतीहै, परन्तु हे विप्रवर ! वह पुण्य केवल वेदोक्त मार्गके सेवन करनेहीसे लाभ होसकताहै ॥ ५ ॥ हे मुने ! छिद्र पाकर सदा नाश करनेवाले कलि और कालभी वैदिक पथपर चलनेवाले पुरुषके स्पर्शहीसे नष्ट होजाते हैं ॥ ६ ॥ ये दोनोंही कलि और काल, निषिद्धकर्मोंके करने और विहित विधियोंके छोडदेनेहीसे छिद्र देखकर ब्राह्मणकोभी नष्ट करडालतेहैं ॥ ७ ॥ अतएव पहिले तुमसे निषिद्ध आचरणोंहीको कहताहूं, मनुष्य इसे दूरहीसे त्यागकर नरकभागी नहीं होता ॥ ८ ॥ (गृहस्थजनको) प्याज, विष्ठाभोजी, ग्रामसूकर, लसोडा, लहसुन, गाजर, गौकापेंदुस (ब्यानेपर पहिला दूध) चौंराईका साग, और छत्राक (छत्ता—कुकुरमुत्ता)—इन सबको कभी न खाना चाहिये ॥ ९ ॥ वृक्षके काटनेसे निकलनेवाले गोंद इत्यादि, देवता और पितरोंको विना निवेदन कियाहुआ—खीर मालपूआ, पूरी (कचौरी) और मांस, एवं जिसका बछवा न होवे उस गौका दूध—ये सब त्याज्य हैं ॥ १० ॥ (अश्वादिक) एक खुरवाले पशुओंका दूध, ऊंट और भेडी का दूध नहीं पीना चाहिये । रात्रिकी वेलामें दही और दिनमें नवनीत (मक्खन) नहीं खाना चाहिये ॥ ११ ॥ टिटिहरी, गौंरैया, हंस, चकवा, जलकौआ (दरियाई मुर्ग) बकुला, सारस, कुक्कुट (मुरगा) सुग्गा, खिंजरिच जालपाद (जिनके पैरमें अंगुलियाँ झिल्लीसे जुटीहों जैसे आडिल इत्यादि) मांसखानेवाले (बाज इत्यादि) और बुडकी मारकर मछरी खानेवाले इन सब पक्षियोंको भोजन नहीं करना चाहिये । मछरी खानेवाला सबजीवोंका मांसभोजी होताहै, अतएव मछलीको सर्वथा त्यागदेना चाहिये ॥ १२॥ ॥ १३॥ देवता और पितरोंके कर्ममें लगायेगये पहिना, और रोहू मछली खायेजासकतेहैं, और जो लोग मांसखातेहैं वे खरहा (खरगोस) साही और कछुआको भोजन करें ॥ १४ ॥ साही और गोह ये दोनों प्रशस्तहैं, और भी जो मृग अथवा पक्षी जानेहों वे भक्षणीय होसकतेहैं, (परन्तु) यदि दीर्घायु होने अथवा स्वर्ग पानेकी जिन्हें इच्छा हो वेलोग प्रयत्नपूर्वक मांस (भोजन) त्यागदेवें ॥ १५ ॥ क्योंकि केवल यज्ञहीके लिये जो पशुहिंसा होतीहै वहीतो स्वर्गके अनुकूलहै, दूसरे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कार्योंमें कदापि नहीं होसकती । जिसमें खांड इत्यादि मीठा और घृतादि चिकना प
पडा हो वह सब वस्तु पर्युषित (बासी) होजावे, तो नहीं खाना चाहिये ॥ १६ ॥
(मांस तो कदापि न खावे पर) प्राण निकलजानेका डर हो तब और श्राद्धमें, यज्ञमें,
औषधमें ब्राह्मणकी आज्ञासे एवं विना लोभके—इन प्रकारोंसे यदि मांसखाना पडे तो
दोषभागी नहीं होता ॥ १७ ॥ मृगयासे जीविका चाहनेवाले (शिकारी) कोभी
मरनेपर वैसा पाप नहीं होता, जैसा कि लोभवश मांसखानेवालेको होताहै ॥ १८ ॥
ब्रह्माने यज्ञहीकेलिये पशु, वृक्ष, मृग, और औषधियोंको बनायाहै, अतएव ब्राह्मण, उ
सबके मारनेसे हिंसक नहीं होता बरन उन सबोंकी सद्गति होजातीहै ॥ १९ ॥
पितर, देवता, यज्ञ, और मधुपर्क (आतिथ्य) कर्मके लिये जो हिंसा होतीहै, व
हिंसा नहींहै, पर हाँ, इससे भिन्न अन्यत्र हिंसा करनेसे निस्तार नहीं होसकताहै ॥
॥ २० ॥ जो ज्ञानहीन जन, अपनी पुष्टिकेलिये प्राणियोंको मारताहै, उस दुराचारी
को इसलोक और परलोकमें कहींभी सुख नहीं मिल सकता ॥ २१ ॥ भोजन करने
वाला, संमति देनेवाला शस्त्रसे काटने बनानेवाला, बेंचनेवाला, मोललेनेवाला लेजाने
वाला, मारनेवाला और मरवानेवाला, ये आठों प्रकारके लोग हिंसक कहलातेहैं
॥ २२ ॥ जो कोई सौवर्षपर्यंत प्रतिवर्ष अश्वमेध यज्ञ करे और दूसरा कोई मांस न
खाताहो तो उन दोनोंमें पिछलाही जन श्रेष्ठ समझाजाताहै ॥ २३ ॥ सुख चाहने
वालेको अपनेही समान दूसरेकोभी देखना योग्यहै, क्योंकि सुख और दुःख जैसे
अपने ऊपर पडतेहैं वैसेही दूसरेकोभी होतेहैं ॥ २४ ॥ चाहे सुखहो अथवा अन्य
कुछभी हो जो दूसरेके ऊपर किया जाताहै, वह कियाहुआ सब कुछ (कर्म) संसार
है कि पीछे फिर अपने ऊपरभी आपडे ॥ २५ ॥ (संसारमें) विना क्लेशउठाये
द्रव्य नहीं मिलता और द्रव्यहीन जन किसी क्रियाको कहाँसे करसकताहै ? जो
क्रियाहीनहै उसमें धर्म कहांसे आवे ? और धर्महीनको सुख कहांहै ? ॥ २६ ॥
यद्यपि सुखको सभीलोग चाहतेहैं, परन्तु वह तो धर्महीसे उत्पन्न होताहै, अतएव
चारों वर्णोंको उद्योग करके इस लोकमें धर्महीको उपार्जन करना चाहिये ॥ २७ ॥
न्यायपूर्वक प्राप्तधनसे परलोक संबन्धी कर्म संपादन करना उचितहै, एवं काल और
सत्पात्र पाकर विशुद्धभावसे विधिपूर्वक दान करना चाहिये ॥ २८ ॥ विधिहीन
तथा कुपात्रको जो कोई दान करताहै उसका केवल वही दान व्यर्थ नहीं होता बरन
अवशिष्ट पुण्यभी नष्ट होजाताहै ॥ २९ ॥ विपत्तिके उद्धार, कुटुम्ब

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पालन, और ऋणके मोचन करनेके लिये जो कुछ दान कियाजाता है, वह निस्सन्देह इसलोक और परलोकमें अक्षय होताहै ॥ ३० ॥ जो कोई अपने धनके द्वारा माता पितासे हीन किसी (अनाथ) का, यज्ञोपवीत अथवा विवाहादि संस्कार करदेताहै, उसका पुण्य तो अनंत होजाताहै ॥ ३१ ॥ एकभी द्विजको प्रतिष्ठित करदेनेसे जो पुण्य होताहै, वह (पुण्य) अनेक अग्निहोत्र और अग्निष्टोमादिक यज्ञ करनेसे भी लोगोंको नहीं प्राप्त होसकता ॥ ३२ ॥ जो कोई अनाथ ब्राह्मण (कुमार) का विवाह करादेताहै, वह इस लोकमें सुख और परलोकमें अक्षय स्वर्गको प्राप्त होताहै॥ ३३॥ पिताके गृहमें जो कन्या विना विवाहहीके रजस्वला होजावे, तो उसके पिताको भ्रूणहत्याका पाप लगताहै और वह कन्याभी वृषली(शूद्रा)होजातीहै ३४ जो कोई मोहवश उस कन्यासे विवाह करलेताहै वह वृषलीपति होजाताहै, उसके साथ संभाषण और पंक्तिभोजन कदापि न करना चाहिये ॥ ३५ ॥ कन्या और वर दोनोंहीका दोष जनाकर तब उसके पीछे संबंध रचना करे, नहींतो पिताही दोषभागी होताहै ॥ ३६ ॥ स्त्रियाँ सर्वदैव पवित्र रहती हैं, इनको कोईभी दूषित नहीं कर कता, क्योंकि मासमासमें जो उनका रजोधर्म होताहै वही (उनको) पापोंको दूर हटा देताहै ॥ ३७ ॥ स्त्रियोंको पहिले अग्नि चन्द्र और गंधर्व भोग करलेते हैं तब उनके पीछे मनुष्य भोग करते हैं, परन्तु इन सबको कोई दूषित नहीं करसकता ॥ ३८ ॥ सोमने स्त्रियोंको शुचिता, अग्निने सर्वमेध्यता और गन्धर्वोंने कल्याणवाणी दीहै, इसीसे वे सदा पवित्र रहतीहैं ॥ ३९ ॥ रजके समय अग्नि, रोमनिकलतीवेला चन्द्रमा, और स्तनके उद्भेदकालमें गन्धर्व लोग कन्याका भोग करतेहैं, अतएव उसके पूर्वही उसका दान करदियाजाताहै ॥ ४० ॥ रोमदर्शन कालमें(विवाह होनेसे स्त्री) संतान नाशिनी, और यौवन फूटनेपर कुलघातिनी, एवं रज प्रकट होजानेसे पिताकी मृत्युकारिणी होतीहै, इसकारणसे उन सबको परित्याग करे ॥ ४१ ॥ इसीलिये कन्यादानके फलका अभिलाषीजन रजोदर्शनके पूर्वही उसे दान करडाले, नहीं तो दाताको कुछ फल नहीं होता और लेनेवाला अधःपतित होताहै ॥ ४२ ॥ चन्द्रादि देवतोंके भोगकरनेके पूर्वही कन्यादान करदेनेसे (उसका) फल होता, और देवभुक्ता कन्याको दानकर दाता स्वर्गको नहीं जासकता ॥ ४३ ॥ पंडितगण, शय्या, आसन सवारी (वाहन) कंचल, स्त्रीका—मुख, कुश, और समस्त यज्ञपात्रोंको कभी दूषित नहीं कहते ॥ ४४ ॥ गौके दूहनेमें बछवा, फलके काटगिरानेमें पक्षी, रतिकालमें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सब स्त्री, और मृग पकडनेमें कुत्ताका मुख पवित्र रहता है ॥ ४५ ॥ बकरा और घोडाका मुख, गौओंका पृष्ठभाग, ब्राह्मणोंका चरण, और स्त्रियोंका सर्वांग शुद्ध होता है ॥ ४६ ॥ बलात्कारपूर्वक भोगकरने अथवा चोरके हस्तगत होजानेसे दूषित नारीको त्याग नहीं करदेना चाहिये, न इसके छोडदेनेकी कोई विधिहै ॥ ४७ ॥ खटाईसे ताम्रपात्र, राखीसे काँसेके बर्तन, रजोधर्मसे स्त्री, और (प्रवाहके) वेगसे नदीकी शुद्धि होजातीहै ॥ ४८ ॥ जो स्त्री संसारमें मनसेभी परपुरुषका चिंतन नहीं करती, वह इस लोकमें कीर्तिभागिनी और परलोकमें पार्वती देवीके साथ सुखोंको भोगतीहै ॥ ४९ ॥ पिता, पितामह (आजा) भ्राता, सकुल और माता, ये सब एकके न होनेपर दूसरे कन्यादानके अधिकारी होतेहैं ॥ ॥ ५० ॥ दान न करदेनेसे प्रतिऋतुकालमें भ्रूणहत्याका पातक लगताहै यदि कोईभी दान करनेवाला न होवे तो कन्या आपही स्वयंवर करे ॥ ५१ ॥ यदि स्त्री व्यभिचारिणी हो तो सब अधिकार छीन, मैला कपडा पहिनाय, पिंडमात्र जीनेवाले को देकर, घृणित रूपसे शय्याके नीचे वास करावे ॥ ५२ ॥ ऋतुहोनेपर व्यभिचारि शुद्धि होजातीहै, परन्तु (अन्यसे) गर्भधारण, गर्भपात और भर्तृवधादिक बडे पा करनेपर परित्यागही करदियाजाताहै ॥ ५३ ॥ शूद्र केवल शूद्रासे, वैश्य वैश्या और शूद्रासे, क्षत्रिय क्षत्रिया वैश्या और शूद्रासे, एवं ब्राह्मण ब्राह्मणी और उन तीनों जाति की कन्याओंसे विवाह करसकताहै ॥ ५४ ॥ ब्राह्मण शूद्राको शय्यापर चढाने अधोगतिको प्राप्त होताहै और उसके गर्भमें पुत्रको उत्पादन करनेसे तो अपने ब्राह्मण त्वहीको खो बैठताहै ॥ ५५ ॥ जिसका होम, श्राद्ध और आतिथ्य सत्कार, स्त्री (शूद्रा) हीकी प्रधानतासे होताहै, देवता, पितर और अतिथिगण उसका अन्न न भोजनकरतेहैं और न वह स्वर्गही प्राप्त करसकताहै ॥ ५६ ॥ जिन घरोंमें भगिनि इत्यादि कुलस्त्रियाँ आदर न पाकर शापदेतीहैं, वे सब धन पशु इत्यादिके सहित अवश्यही ध्वंस होजातेहैं ॥ ५७ ॥ अतएव सम्पत्ति चाहनेवालोंको सुवासिनियों भोजन वस्त्र और भूषणादिके द्वारा अवश्यमेव उत्सव तथा मांगलिक कार्योंमें पूजा करना चाहिये ॥ ५८ ॥ जहाँपर स्त्रियाँ भोजन वस्त्र और भूषणोंसे प्रसन्न रहती वहांपर देवतालोग विहार करतेहैं, और सभी क्रियाकलाप सफल होतेहैं ॥ ५९ ॥ जिस गृहमें भर्तासे स्त्री और स्त्रीसे भर्ता संतुष्ट रहताहै, वहां पदपदमें कल्याण होता है ॥ ६० ॥ अहुत, हुत, प्रहुत, प्राशित और ब्राह्महुत ये पांचों

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शुभहैं॥६१॥ जपका नाम अहुत, होमका नाम हुत, भूतबलिका नाम प्रहुत, पितृतर्पणका नाम प्राशित और ब्राह्मण पूजनका नाम ब्राह्महुत कहागयाहै ॥ ६२ ॥ इन पांचों यज्ञोंके करते रहनेसे ब्राह्मण विनष्ट नहीं होता, परन्तु (हां) इन सबका अनुष्ठान न करे, तो पंचसूनाका दोष उसे लगताहै ॥ ६३ ॥ (उसके यहां जावे अथवा वह जब अपने यहां आवे तब) ब्राह्मणसे कुशल, क्षत्रियसे नीरोगता, वैश्यसे सुख, और शूद्रसे सन्तोष, पूँछना चाहिये ॥ ६४ ॥ उत्पन्न होनेसे लेकर आठवर्षतक शिशु कहाजाता है अतः जबलों यज्ञोपवीत न होजावे तबलों भक्ष्याभक्ष्यका दोष नहीं होता ॥ ६५॥ पालनयोग्य लोगोंका भरण पोषण करनेसे दृष्ट और अदृष्ट दोनोंप्रकारका फल मिलताहै, अतएव उद्योग करके उन सबका प्रतिपालन करे, नहीं तो दोष होताहै: ॥ ६६ ॥ माता, पिता, गुरु, पत्नी, सन्तान, आश्रित दासगण, अभ्यागत, अतिथि, और अग्नि, ये नवों पोष्यवर्गमें गिनेजातेहैं ॥ ६७ ॥ संसारमें वही पुरुष जीताहै, जिसके आश्रय से बहुत लोगोंका जीवन निर्वाह होताहै,नहीं तो उस मनुष्यको जोकि केवल अपनाही पेट भरताहै, जीवन्मृतक समझना चाहिये ॥ ६८ ॥ ऐश्वर्यपानेकी कामनासे दीन अनाथ और विशिष्ट लोगोंको कुछ देना चाहिये, क्योंकि जो दान नहीं करते वे लोग परभाग्योपजीवी होकर जन्म लेतेहैं ॥ ६९ ॥ जो गृहस्थ (घरमें सबका उचित) विभाग करे, सुशील दयावान् और क्षमाशील होवे, एवं देवता और अतिथि-का भक्तहो वही धार्मिक कहलाताहै—

"दोहा—करै विभाग सुशील हो, दया क्षमा उर राखि ।
देव अतिथि पूजै गृही, धार्मिक सो जग भाखि ॥ ७० ॥"

जो ब्राह्मण रात्रिमें मध्यके दोनों प्रहरोंहीमें शयन करे, और हुतशेष घृतादि वस्तु को भोजन करे उसका कदापि नाश नहीं होता ॥ ७१ ॥ यदि कोई गृहपर आ-जावे तो गृहस्थको ये नवोंकाम अवश्य करने चाहिये—सुधातुल्यकुशलप्रश्न, मधुर वचन, सौम्यदृष्टि, स्थिरचित्त, प्रसन्नमुख ॥ ७२ ॥ अभ्युत्थान (उठकर खडा हो जाना), यहां आइये ऐसा स्नेह पूर्वक भाषण, अपने समीपमें बैठाना और पीछे चलना ये सब गृहस्थोंकी उन्नतिके कारणहैं ॥ ७३ ॥ योंही थोडेही व्ययमें होजानेवाले इन नवों कार्योंकोभी यथाशक्ति अवश्यही करना चाहिये—आसन, पैरधोनेको जल, जो बनपडे भोजन, स्थान ॥ ७४ ॥ शय्या, ईंधन, पीनेको जल, तेल और दीप (रोशनी), इन सबसे गृहस्थोंकी अभीष्टसिद्धि होतीहै । गृहस्थोंको उचितहै कि,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इन नवों कुकर्मोंका त्याग करदेवें ॥ ७५ ॥ पिशुनता (क्रूरता—चुगुलखोरी), परस्त्री-गमन, वैर, क्रोध, असत्य, अप्रिय वचन, डाह, पाखंड और कपट—ये सब स्वर्गद्वारके प्रतिबंधक अगरीके समानहैं ॥ ७६ ॥ (गृहस्थको) इन नवों आवश्यक कर्मोंको प्रतिदिन करना चाहिये—स्नान, संध्या, जप, होम, वेदपाठ, देवपूजन ॥ ७७ ॥ वैश्वदेव, अतिथिसत्कार, और पितृतर्पण हेमुने ! अब उन नवोंको सुनो जिन्हें गुप्त रखना चाहिये ॥ ७८ ॥ जन्मका नक्षत्र, मैथुन, मंत्र, गृहच्छिद्र, बंचना, आयु, धन, अपमान और स्त्री—इन सबोंको कदापि प्रकाशित न करे ॥ ७९ ॥ और इन नवों कर्मोंको प्रकाश करना चाहिये—छिपाहुआ (गुप्त) पाप, निष्कलंकता, ऋण-दान, ऋणशुद्धि, निजवंश, क्रय, विक्रय, कन्यादान और गुणकी बडाई इनसे मिन्न और कुछ कहींपरभी किसीसे न कहे ॥ ८० ॥ इन नवोंके देनेसे अक्षय फल प्राप्त होताहै—सत्पात्र, मित्र, विनीत, दीन, अनाथ, उपकारीजन, माता, पिता और गुरु ॥ ८१ ॥ और इन नवोंके देनेसे दान निष्फल होताहै—बतोलिया—कथक—चोर—कुवैद्य—वंचक—धूर्त—दुष्ट—मल्ल—(पहलवान) और भाट ॥ ८२ ॥ इन नवों वस्तुओंको अनेक आपत्तियाँ पडनेपरभी वंश रहते कदापि नहीं देना चाहिये—(अपना) सर्वस्व, पत्नी, शरणागत जन, ॥ ८३ ॥ थाती, बंधकका द्रव्य, कुलवृत्ति, धरोहर (जो किसीका रक्खाहो) स्त्रियोंका धन और पुत्र जो मूढात्मा इन सबको देडालता प्रायश्चित्त करनेपर तब उसकी शुद्धि होतीहै ॥ ८४ ॥ जो कोई इन नवों नवकोंको (अर्थात् एक्यासी बातोंको) जानलेताहै, उसे सुख प्राप्त होताहै । एक और नवक कहताहूं जो सब किसीको स्वर्गमार्गका देनेवालाहै ॥ ८५ ॥ सत्य, शौच, अहिंसा, क्षमा, दया, दम, अतस्करता और इन्द्रियमणका निग्रह—ये तो सभीके प्रति साधनहैं ॥ ८६ ॥ जो गृहस्थ स्वर्गमार्ग प्रकाशिनी (मसाल) सज्जनोंकी अभिमत और पवित्र इन नव्वे बातोंका अभ्यास करताहै वह कभी नष्ट नहीं जाता ॥ ८७ ॥ जिस किसीकी जिह्वा, भार्या, पुत्र, भ्राता, मित्र, सेवक और आश्रितजन—ये सब विनयशील होतेहैं, उसका सर्वत्रही गौरव होताहै ॥ ८८ ॥ (मद्यादिका) पान दुर्जनकी संगति, पतिका विरह, यथेष्ट भ्रमण करना, अन्यके घरमें रहना अथवा (रात्रिमें) सोना—स्त्रियोंके ये छहों दोष (व्यभिचारके कारण होते) हैं ॥ ८९ ॥ जोकि अल्पमूल्य (कमदाम—सस्ता) पर अन्नका क्रय करके फिर उसे बहुत मूल्य (ज्यादादाम—महँगा) पर बेंचताहै उसका नाम वार्धुषिकहै, ऐसे जनका अन्न

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

खावे ॥ ९० ॥ आगे माहिषिक, मध्यमें वृषलीपति, और अन्तमें वार्धुषिकको देख पितरलोग निराश होकर चलदेतेहैं ॥ ९१ ॥ व्यभिचारणी स्त्रीको महिषी कहाजाताहै, और जो पुरुष उस दुष्टासे कामना करताहै, वही माहिषिक कहलाताहै ॥ ९२ ॥ अपने वृष (पति) को छोड़कर जो दूसरे वृष (पुरुष) से वरदाती है, उसीको वृषली कहतेहैं कुछ शूद्रहीकी स्त्री वृषली नहीं होती ॥ ९३ ॥ अन्न जबलों उष्ण रहे और मौन होकर भोजन किया जावे, एवं जबतक हवि (भोजन) का गुण इत्यादि न कहाजावे तभीतक पितृगण भोजन करतेहैं ॥ ९४ ॥ विद्या और विनयसे संपन्न श्रोत्रिय, यदि गृहपर आजावे तो समस्त औषधियां (अन्नादिक) इसलिये परमानंदित होतीहैं कि,हम सब परमगतिको प्राप्त होजावेंगी॥९५॥एवं शौच और व्रताचारसे भ्रष्ट, और वेदवर्जित ब्राह्मणकेआनेपर दान किया जाताहुआ अन्न यह रोताहै कि मैंने ऐसा कौन पाप किया (जो इसके पेटमें जारहा हूं) ? ॥ ९६ ॥ अन्न जिसके उदर (कोठा) में जाकर वेदाभ्यासके परिश्रमसे पकता है, वह दाताके दशपुरुष ऊपर और दशपुरुष नीचे तारदेताहै ॥ ९७ ॥ स्त्रियोंका सर्वमुंडन न करना चाहिये, गोरूका अनुगमन न करे (हल न जोते), रात्रिके समय गोशालामें न रहे और न वेदमन्त्रोंको सुने ॥ ९८ ॥ स्त्रियोंके शिरका मुण्डन योंहीं होताहै कि, समस्त केशोंको बटोरकर दोअंगुल कटवा देवे (और केश रहनेदेवे)॥९९॥ राजाहो, वा राजपुत्र हो, अथवा बहुश्रुत ब्राह्मणही हो, (चाहे जो हो) जोकि मुण्डन न करावे उसे प्रायश्चित्त करना चाहिये ॥ १०० ॥ केशकी रक्षा करनेके लिये द्विगुणव्रत (प्रायश्चित्त) करे, और वेदपारंगत ब्राह्मणको दूनी दक्षिणाभी देनी उचितहै ॥ १ ॥ जो कोई विना विवाहाग्निके ग्रहणकियेही अपनेको गृहस्थ माननेलगे, उसका अन्न भोजन करनेके योग्य नहीं होता, क्योंकि वह तो वृथा पाक कहाजाताहै ॥ २ ॥ (अनग्निक और अविवाहित) जेठे भाईके वर्तमान रहते जो कोई विवाह और अग्निहोत्रकी दीक्षाको करलेताहै, उसे परिवेत्ता और उसके बडे भाईको परिविन्ति समझना चाहिये ॥ ३ ॥ परिवेत्ता, परिविन्ति, जिस नारीका विवाह होवे वह और उस कन्याका दाता, एवं याजक (विवाहकरानेवाला पुरोहित) ये सब पांचों नरकमें जातेहैं ॥ ४ ॥ (ज्येष्ठ भ्राता यदि) नपुंसक (हिजडा), देशांतरस्थ, गूँगा, संन्यासी, जड, कुबडा, बौना, अथवा पतित, होवे तो ऐसे विवाहमें कोई दोष नहींहै ॥ ५ ॥ जो कोई धनके लोभसे जितने वेदके अक्षरोंका प्रयोग करताहै, उस वेदके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बेचनेवालेको उतनीही भ्रूणहत्या लगतीहै ॥ ६ ॥ जो पुरुष संन्यास ग्रहण करे
फिरभी मैथुनका सेवन करताहै, वह साठसहस्र वर्षलों विष्ठामें कृमि होकर रहे
॥ ७ ॥ शूद्रका अन्न, शूद्रका सहवास, शूद्रके साथ एक आसन परका भोजन
अथवा शूद्रसे कोई विद्या सीखना, ये सब (कर्म) ज्वलंत ब्राह्मणकोभी पतित
बनाडालते हैं ॥ ८ ॥ जो अज्ञानान्ध ब्राह्मण शूद्रसे दान लेकर पकातेहैं, वे
ब्रह्मतेजसे भ्रष्ट होकर घोरनरकमें जातेहैं ॥ ९ ॥ माक्षिक (मांछीकी सहत)
(ऊखका मीठा) साग गोरस लवण (नोन) और घृत,—इन वस्तुओंको हाथमें
पर भोजन करलेवे तो एकदिन उपवास करे ॥ ११० ॥ घृतादिक चिकने पदा
लवण और व्यंजन हाथसे न देवे, नहीं तो दाताको कुछ फल नहीं होता, और भोक्ता
पापही भोजन करताहै ॥ ११ ॥ लोहेके बर्तनसे जो अन्न दियाजाताहै, उसको
खानेवाला तो विष्ठाके समान भोजन करताहै और परोसनेवाला नरकगामी होताहै ।
॥ १२ ॥ (तर्जनी) अंगुलीसे दंतधावन, प्रत्यक्ष (केवल) लवणका भोजन
(जो किसीमें मिला न हो) और मृत्तिकाभक्षण—ये सब (कर्म) गोमांस भोजनके
समान होतेहैं ॥ १३ ॥ जल, पायस (खीर), भिक्षाकी वस्तु, घृत और लवण
सबको हाथसे देनेपर नहीं लेना चाहिये—क्योंकि वे सब गोमांसके तुल्य अभक्ष्य
होतेहैं॥ १४॥यदि कोई मूर्ख आगे रहे और गुणी पुरुष दूरपर होवे तो, उस गुणवान
हीको देना उचितहै, ऐसा करनेसे मूर्खका कोई व्यतिक्रम नहीं होता॥ १५॥वेदज्ञानहीन
ब्राह्मणका अतिक्रम करनेसे कोई दोष नहीं होता, क्योंकि प्रज्वलित अग्निको छोड़के
कभी भस्ममें हवन नहीं कियाजाता ॥ १६ ॥ जो कोई समीपहीमें (वेदका
अध्ययन करते हुए ब्राह्मणके भोजन अथवा दानके विषयमें व्यतिक्रम करताहै
उसका सातपुरुष (पीढ़ी) पर्यन्त वंश दग्ध होजाताहै ॥ १७ ॥ गोपालन, वाणिज्य
शिल्प जीवन, कत्थकी, सेवा, वार्धुषित (सूदखोरी)—इन वृत्तियोंके करनेवाले
ब्राह्मणोंके साथ शूद्रके समान व्यवहार करे ॥ १८ ॥ देवधनके विभाग, ब्रह्मस्व
छीन लेने और ब्राह्मणके व्यतिक्रम करनेसे कुल बहुत शीघ्रही विनष्ट होजाता
॥ १९ ॥ गौ, ब्राह्मण, और अग्निके विषयमें जो "मत दो" ऐसा कहे, वह जन सौ
तिर्यक्योनिमें जन्म लेकर चांडालोंमें उत्पन्न होताहै ॥ १२० ॥ बातसे जिसकी प्रतिज्ञा
करके कर्मके द्वारा उसे सम्पादन न करे, जो कहकर न करे तो वह इस लोक और परलोक
कर्मेभी धर्मसंगत ऋण बनारहताहै॥ २१ ॥यज्ञशेष अन्नको अमृत,और(अतिथि)भोजनको

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शेषको विघस कहतेहैं, (गृहस्थको) नित्य (प्रति) अमृतभोजी—और विघसाहारी होना चाहिये ॥ २२ ॥ जिसका वस्त्र बायें कन्धेसे गिरकर नाभिदेशमें आरहे, उसे एकवस्त्र होजानेसे देवकर्म तथा पितृकर्ममें छोडदेना चाहिये ॥ २३ ॥ जो द्विजोत्तम स्नानकरके जलहीसे पितरोंका तर्पण करदेताहै, उसीसे समस्त पितृयज्ञ (श्राद्धादि) क्रियाओंका फल उसे प्राप्त होजाताहै ॥२४॥ भोजन करनेके अनंतर दोनों हाथोंको धोकर जो कुल्लाका जल पीजावे, वह देवकर्म, पितृकर्म और अपनेकोभी नाश करडालताहै ॥२५॥ गण (चन्दा) का अन्न, वेश्याका अन्न, ग्रामयाजक (पुरोहित) का अन्न, और स्त्रियोंके गर्भाधानादिकर्मोंमें जो भोजन करे उसे चान्द्रायण व्रत करना चाहिये ॥ २६ ॥ जिस (गृहस्थ) के घरमें पक्ष अथवा मासके मध्य एकभी ब्राह्मण भोजन न करे-उस दुरात्माका (अन्न) भोजन करनेसेभी (वही) चान्द्रायणव्रत करना चाहिये ॥ २७ ॥ यज्ञकर्ता (सदावर्तवाले), यज्ञमें दीक्षित, संन्यासी, ब्रह्मचारी और कर्मकारी ऋत्विज लोगोंको सूतक नहीं लगताहै ॥ २८ ॥ अजीर्णका प्रकाश, वमन, क्षौरकर्म, मैथुन, दुःस्वप्नदर्शन और दुर्जनके स्पर्श होनेपर स्नान आवश्यक कर्तव्य है ॥ २९ ॥ चैत्यवृक्ष (जो चिताके स्थानपर लगाया गयाहो) चिता और श्मशान यूप (जैसे सती वा ब्रह्म इत्यादिका चौरा), एवं शिवनिर्माल्य भोजी और वेदविक्रयी जनको छूकर वस्त्रके सहित जलमें प्रवेश करे ॥ १३० ॥ अग्निरहनेके गृहमें, गौओं की शालामें, देवता और ब्राह्मणके समीप, वेदाध्ययन, भोजन और पानके समय पादुका (जुता—खडाऊं) को त्यागदेनाचाहिये ॥ ३१ ॥ खेत खलिहानका अन्न, कूँवा बावलीका जल और गोशाला (गोठे) का दूध, यह सब अग्राह्यलोगोंसेभी लियाजासकताहै ॥ ३२ ॥ शिर बाँधकर, दक्षिणमुखहो और जोडा (जूता) पहिनकर, जो कुछ खायाजाताहै उसे राक्षसही लोग भोजन करजातेहैं ॥ ३३ ॥ "टोपी देकर माथपै, अरु दक्षिण मुँह बैठि। जूता पहिने खाय जो सो राकस मुख पैठि" ॥३४॥ विना मंडलकिये दैत्य पिशाच और राक्षसादिक क्रूरकर्मीगण (भोजनके) अन्नका रस हरलेजातेहैं ॥ ३५ ॥ ब्रह्मा इत्यादि देवता और वसिष्ठ प्रभृति ऋषिगण मंडलका आश्रय करतेहैं, अतएव (भोजनके समय) मंडल करना चाहिये ॥ ३६ ॥ ब्राह्मणको चौकोन, क्षत्रियको (त्रिकोण, वैश्यको गोला और शूद्रको अभ्युक्षण (छिरका हुआ) मंडल करना कहागयाहै ॥ ३७ ॥ पलथीपर, हाथहीपर, चिथरामें धर, आसन (बिछौना) पर रख खटियाके ऊपर और मलसे जब दूषित रहे तब भोजन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नहीं करना चाहिये ॥ ३८ ॥ धर्मशास्त्ररूपी रथपर चढे और वेदरूपी खड्गको धारण कियेहुए ब्राह्मणलोग क्रीडार्थभी जो कुछ कहदेवें वही परमधर्म कहलाताहै॥ ३९॥ धर्माभिलाषीजन रात्रिमें दहीके साथ कोई भूँजादाना(लावा)न खावे,क्योंकि उसके भोजन करनेसे धर्मकी हानि और व्याधियोंसे पीडा होतीहै॥१४०॥जो ब्राह्मण राव, गोत्र, जल, लवण, मधु और मद्य, हाथहीसे देवे,वह कृच्छ्रचान्द्रायणका व्रत करे ॥ ४१ ॥ जो धर्मज्ञ पुरुष गन्ध, भूषण, मालादिक दान करताहै, वह जन जिस जिस योनिमें जन्म लेताहै वहाँपर सर्वदा हृष्ट और सुगंधयुक्त बना रहताहै ॥ ४२ ॥ नीलके रँगे हुए कपडेको दूरहीसे त्याग देवे, परन्तु स्त्रियोंके क्रीडार्थ संयोगमें और शय्यादिके बिछावनमें कोई दोष नहीं होता ॥ ४३ ॥ नीलीके पालन, विक्रय, और उसीकी वृत्तिसे जीविका निर्वाह करने (गोदाम आदि चलाने) से ब्राह्मण अपवित्र होजाताहै, और फिर विना तीन कृच्छ्रव्रत किये शुद्ध नहीं होसकता ॥ ४४ ॥ जो कोई नीलका रँगा वस्त्र पहिनकर स्नान, दान, तप, होम, वेदाध्ययन, पितृतर्पण और पंचमहायज्ञ आदि कुछभी करता है, तो उसका सब वृथा होजाता है ॥ ४५ ॥ जो ब्राह्मण नीलीवस्त्रको अपने शरीरपर धारण करे, वह उस वस्त्रमें जितने डोरेहों उतने काल नरकमें निश्चय वास करे ॥ ४६ ॥ (नीली वस्त्र पहिने तो) रात्रिदिन उपवास करके पंचगव्यसे शुद्ध होताहै ॥ ४७ ॥ नीलसे रंगे हुए वस्त्रको पहिनकर जो अन्न परोसा जावे, उसका भोजन करनेवाला विष्ठाके समान खाता और वह नरकमें जाताहै ॥ ४८ ॥ ब्राह्मणका अन्न अमृत, क्षत्रियका अन्न पय (दूध) वैश्यका अन्न अन्न और शूद्रका अन्न रुधिर कहलाताहै ॥ ४९ ॥ वैश्वदेव बलि होम, देवतापूजन, जप और ऋक्, यजु, सामवेदोंके संस्कारसे पवित्र होनेके कारण ब्राह्मणका अन्न अमृत होताहै ॥ १५० ॥ व्यवहारके अनुरूप, न्यायपूर्वक उपार्जन किया हुआ क्षत्रियका अन्न प्रजापालन करनेसे पय (दूध) कहाताहै ॥ ५१ ॥ प्रहरभर जोतेहुए बरदासे हल चलानारूप यज्ञ विधानसे जो अन्न उत्पन्न करके दान करताहै, उस वैश्यका अन्न शुद्ध होनेसे अन्न कहाजाता है ॥ ५२ ॥ अज्ञानरूप तिमिरसे अन्ध, और मद्यपानमें तत्पर शूद्रका अन्न वेदमन्त्रोंसे वर्जित होनेहीके कारणसे रुधिर कहलाताहै ॥ ५३ ॥ नरोत्तम साधु पुरुष प्रयोजनमेंभी वृथा शपथ न करे, क्योंकि वृथा शपथ करनेसे उसका यह लोक और परलोक दोनोंही बिगड़जातेहैं ॥ ५४ ॥ स्त्रियोंके विषयमें, विवाहकालमें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गौओंके भोजन करजानेके सम्बन्धमें, सर्वधनके क्षयकालमें, और ब्राह्मणके उपकारस्थलमें, शपथकरनेसे पाप नहीं होता ॥ ५५ ॥ ब्राह्मणको सत्यके प्रमाणसे, क्षत्रियको वाहन और आयुधोंके स्पर्शसे, वैश्यको गो बीज, और सुवर्णके द्वारा, और शूद्रको समस्त पातकोंसे शपथ कराना चाहिये ॥ ५६ ॥ इसे (शूद्रको) अग्निका अंगार लिलावे वा जलमें डबोये अथवा स्त्री पुत्रादिकका शिर पृथक्२ छुलावे॥५७॥ यमराजको यम नहीं कहते,यम तो आत्माहीको कहाजाताहै, जिसकिसीने इस आत्माका संयम करलियाहै, उसका यम क्या करसकताहै ॥ ५८ ॥ तेज तलवार, बडा विषधरसर्प, अथवा नित्यप्रति क्रुद्ध (बिगडैल) शत्रु, ये सब वैसे नहींहैं, जैसा कि असंयत आत्मा भयप्रद होताहै ॥ ५९ ॥ क्षमाशील लोगोंमें एकही दोष लगताहै, दूसरा कदापि नहीं होसकता कि, लोग इस क्षमाशाली जनको असमर्थ समझने लगतेहैं ॥ १६० ॥ शब्दशास्त्र परायण, शोभनीय गृहके प्रिय, भोजनाच्छादनमें तत्पर और संसारमें धनोपार्जनही करनेवाले जनका मोक्ष नहीं हो सकता ॥ ६१ ॥ जो एकांत सेवनका प्रेमी, समस्त इन्द्रियोंकी प्रीतिका निवर्तक, स्वाध्याय योगमें दत्तचित्त, और सर्वदा अहिंसक होताहै, निःसन्देह उसीको मोक्ष प्राप्त होताहै ॥ ६२ ॥ इस संसारमें पुरुषकी एकांतशीलता कहांहै ? और इन्द्रियोंकी प्रीतिसे निवृत्ति कहां होतीहै ? एवं योगयुक्ति, और देवतार्चन विधि कहाँ बनपड़तीहै ? तब (हां) इन सबके विनाही काशीमें मुक्ति सहजही मिलजातीहै ॥ ६३ ॥ विश्वेश्वरका सेवनही योगाभ्यास, और विश्वनाथकी काशीपुरीका निवासही तपस्या, एवं उत्तरवाहिनी गंगाका स्नान ही नियम यम दान और व्रत सबकुछ है ॥ ६४ ॥ स्कन्द बोले—जो न्यायपूर्वक धनको उपार्जन करे, तत्त्वज्ञानमें निष्ठा रक्खे, अतिथियोंकी सेवामें तत्पर रहे, श्राद्ध करे, और सत्यवचन बोले, वरु गृहस्थभी (काशीमें) मुक्त होजाताहै ॥ ६५ ॥ (काशीमें) गृहस्थ, दीन—अंध—कृपण और भिक्षुकोंको विशेषतः अन्नदान, करनेसे और गृहस्थोचित सब कर्मोंके आचरणसे मुक्तिको प्राप्त करसकताहै ॥ ६६ ॥ इस प्रकारके आचारनिष्ठ मनुष्योंके ऊपर काशीनाथ प्रसन्न रहतेहैं और उन्हीं विश्वेश्वरके प्रसादसे काशीकी प्राप्ति होजानेपर मोक्षभी होजाताहै ॥ ६७ ॥ जिस किसीने इस काशीका सेवन किया वह समस्त तीर्थोंमें स्नान, अशेष यज्ञोंकी दीक्षा और सर्वविध दानोंको करचुका ॥ १६८ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दोहा—सब गृहस्थके शर्महित, विधि—निषेध मय कर्म ।
वरने स्मृतिके मर्म बहु, करिय यथामति धर्म ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां गृहस्थानां कर्तव्याकर्तव्यवर्णनं नाम चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४० ॥

एकतालीसवां अध्याय ।

वानप्रस्थ और सन्यासियोंके धर्म तथा योगाभ्यासका कीर्तन ।

स्वामिकार्तिकने कहा—इस प्रकारसे ब्राह्मण गृहस्थाश्रमके सदाचारोंका प्रतिपालन करके जब अपने शरीरके चमडेमें सिकुडन और मस्तकके केशोंको पकताहुआ देखे तब तृतीय वानप्रस्थ आश्रमका आश्रय लेवे ॥ १ ॥ गृहस्थ जब पुत्रकोभी पुत्रवान् देखलेवे, तो अपनी पत्नीके रक्षणावेक्षणका भार पुत्रोंहीपर धरकर, अथवा साथलिक ग्राम्य भोजनोंको छोड वनमें चला जावे ॥ २ ॥ वहांपर चर्मका वस्त्र पहिने और मुनियोंके अन्न (तिन्नी इत्यादि) से अपना वर्ताव करे, प्रातःकाल और सन्ध्या समय दोनोंही वेला स्नानकरे और शिरकी जटा और दाढी रक्खे रहे, एवं नख और लोमको न कटावे ॥ ३ ॥ साग्निक रहकर, साग मूल वा फलादिकसे पंचयज्ञोंको करताहुआ और भिक्षुक और अतिथियोंका जो कुछ जल फल मूल वा भिक्षा इत्यादि मिले उसीसे परितोष करे ॥ ४ ॥ किसीका दान न लेवे, स्वयं जो बन पडे देदेवे, जितेन्द्रिय होकर वेदाध्ययनमें तत्पर रहे एवं वैतानिक अग्निहोत्र (विवाहके अग्निमें) यथा विधि हवन करे ॥ ५ ॥ अपनेही लायेहुए मुनियोंके नीवारादि अन्न (वा फलादि) से पुरोडाश (बलि वैश्वदेव) करदेवे, एवं अपना बनायाहुआ लवँण और फलसे निकालाहुआ चिकना भोजन करे ॥ ६ ॥ लसोडा—सहेजन (बथुआका साग) कुकुरमुत्ता (छत्ता) मांस और मधुको त्याग देवे, पूर्व संचित जो कुछ मुन्यन्न (तीन इत्यादि)हो उसे छोड देवे ॥ ७ ॥ एवं गांवमें उत्पन्न हुए फल मूलादिक और फारसे उत्पन्न हुए अन्नको न खावे।जो भोजन करे उसे दांतोंहीसे कूंचडाले अथवा पत्थरसे कूट लेवे (अर्थात् जातका पीसा वा ओखरीका कूटा न खावे)॥ ८ ॥ एकही दिन, एकही मास, तीन मास, छ मास अथवा एक वर्षके भोजन योग्य अन्न फल वा मूलादिकका संग्रह करना उचित है ॥ ९ ॥ चाहे रात्रिमें खावे, वा एक दिनका अंतर देकर दूसरे दिन भोजन करे, अथवा दिनके तीसरे पहरमें आहार करे, एवं चान्द्रायणव्रत, वा पक्ष भोजन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

किंवा मासान्त भोजन करे ॥ १० ॥ वैखानस वृत्तिको अवलंबन करके केवल फल वा मूलका आहार करताहुआ तपस्यासे देहको सुखादेवे और देवता पितरोंका संतोष साधन करे ॥ ११ ॥ अग्निको आत्माहीमें स्थापन करके विना गृहके घूमतारहे, एवं प्राणयात्राके लिये तापस वा वनवासी द्विजोंसे भिक्षा लेलेवे ॥ १२ ॥ अथवा वनहीमें वास करताहुआ ग्रामसे मांगलाकर आठ कवर भोजन करे, इस प्रकार (के आचार करने) से वानप्रस्थाश्रमी ब्राह्मण ब्रह्मलोकमें भी पूजित होताहै ॥ १३ ॥ इसी विधानसे जीवनका तृतीय भाग वनमें बिताकर आयुष्यके चतुर्थांश लगतेही सर्वविध संगोंको त्यागकर सन्यास ग्रहण करे ॥ १४ ॥ देवता, ऋषि और पितरोंके तीनों ऋणोंसे यज्ञानुष्ठान, (वेदाध्ययन) और पुत्रोत्पादनके द्वारा विना उद्धार पायेही जो सन्यास धारण करना चाहताहै उसकी अधोगति होती है ॥ १५ ॥ जो व्यक्ति संन्यास लेकर किसीभी प्राणीको भय नहीं उत्पन्न होनेदेता, समस्त जीवगण सर्वदैव उसको अभय दान करते रहतेहैं ॥ १६ ॥ सन्यासी अग्नि और गृहसे रहित हो मोक्षसिद्धि के लिये निस्सहाय और अकेलाही सदा विचरण करे, वह केवल भोजनही भरको ग्राममें जासकताहै ॥ १७ ॥ संन्यासीको जीने अथवा मरनेकी कुछभी आकांक्षा नहीं करनी चाहिए—भृत्य जैसे स्वामीकी आज्ञाकी बाट जोहता रहताहै, वैसेही केवल कालहीकी प्रतीक्षा करतारहे ॥ १८ ॥ लोकमें जो संन्यासी सभीपर ममता शून्य और सर्वत्रही समदर्शी, एवं वृक्षकी जडपर पडा रहे, वही मुमुक्षु प्रशंसित होताहै ॥ १९ ॥ ध्यान, शौच, भिक्षा और निर्जन स्थानमें वास, इन चारों कर्मोंको छोडकर संन्यासीका पांचवां कोई कर्म नहीं है ॥ २० ॥ वर्षाऋतुके चारों मासोंमें संन्यासी कहींभी गमन न करे, क्योंकि उस समयमें गमना—गमन करनेसे अनेक बीजोंके अंकुर और जन्तुओंकी हिंसा हो जातीहै ॥ २१ ॥ संन्यासीको उचित है कि जब मार्गमें चले तो पैरके नीचे जन्तुओंको (दबानेसे) बचाता जावे, वस्त्रसे छानकर जल पीवे घबराहट करनेवाली बातोंको न बोले और कहींपर किसीसेभी क्रोध (झगडा) न करे ॥ २२ ॥ किसीकीभी अपेक्षा न रख और नियत निवास रहित हो केवल आत्माहीं को सहाय बना जितेन्द्रियतापूर्वक केश और नखोंको बढाकर सर्वदैव ब्रह्मध्यानमें तत्पर रहे ॥ २३ ॥ संन्यासी कुसुमका रंगा हुआ वस्त्र पहिने, दंड धारण कियेरहे केवल भिक्षाका अन्न भोजन करे और अपनी प्रसिद्धि न चाहे तुंवा—काठ—मट्टी और बांसको छोडकर पांचवें अन्य किसी वस्तुका पात्र न ग्रहण करे ॥ २४ ॥ भिक्षुक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

को कदापि धातुका पात्र नहीं ग्रहण करना चाहिए । यदि कोई संन्यासी (होकर) कौडीभी ग्रहण करे तो उसे प्रतिदिन सहस्र गोवध करनेका पाप लगताहै यह भगवान् श्रुति है । एवं यदि किसी स्त्रीको स्नेहभावसे पूर्ण होकर एकबार भी देखलेवे तो वह कडोर ब्रह्मकल्पभर वह कुंभीपाक नरकमें वास करताहै, इसमें कुछभी सन्देह नहींहै । संन्यासीको अहोरात्रमें केवल एकहीबार भोजन करना चाहिए उसमेंभी (वस्तु) विस्तार न करे ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ जब कि गृहस्थका घर (रसोईके) धूमसे रहित मुशलके शब्दसे शून्य, (पाकयोग्य) अंगारोंसे हीन होजावे और लोगोंके भोजनोत्तर जूठे (कसोरे) फेंक दिये जावें उस वेला (अर्थात् तीसरे पहरके अनंतर) नित्यही भिक्षा करे ॥ २८ ॥ जो स्वल्पाहारी, एकान्तसेवी, जितेन्द्रिय और राग द्वेषादिसे रहित होताहै वही भिक्षुक मोक्षको प्राप्त करसकताहै ॥ २९ ॥ जिसके स्थानमें यति क्षणमात्रभी विश्राम करलेवे फिर उसे और सब विधानोंका कौन प्रयोजन है वह तो (उसीसे) कृतकृत्य हो जाताहै ॥ ३० ॥ योंही जिस गृहस्थके घरमें यति एक रात्रमात्र वास करे, उसके आजन्म संचित पापको भस्म कर देताहै ॥ ३१ ॥ चाहे किसीभी आश्रममें (क्यों न) रहे परन्तु देहमें वार्द्धक्यका विकार, असह्य रोगोंकी पीडा, मरण, पुनः गर्भमें प्रवेश, गर्भके उत्कट क्लेश ॥ ३२ ॥ अनेक योनि योंमें वास, प्रियजनोंके साथ वियोग, अप्रियोंके सहित संयोग, अधर्महीसे दुःखोंकी उत्पत्ति ॥ ३३ ॥ फिर नरक निवास, बहुतसी नरक यातनाओंका भोग (अपने अपने) कर्म दोषोंहीसे उत्पन्न अनेक प्रकारकी गति ॥ ३४ ॥ एवं शरीरकी अनित्यताको देख और एकमात्र परमात्माहीकी नित्यताको विचारकर मुक्तिके लिये उद्योग करते रहना चाहिए ॥ ३५ ॥ जो यती भिक्षाके पात्रको त्यागकर हाथहीमें भिक्षा लेतेहैं, उन लोगोंको दिन दिन सौगुना पुण्य प्राप्त होताहै ॥ ३६ ॥ पंडितजन इस प्रकारसे क्रमपूर्वक चारों आश्रमोंका सेवनकर अन्तमें निर्द्वन्द्व और निस्सङ्ग होके ब्रह्मके सायुज्यको प्राप्त करताहै ॥ ३७ ॥ कुबुद्धि लोगोंका जो आत्मा संयुक्त होनेहीसे (मायाके) बंधनमें डाल देताहै, बुद्धिमानोंके द्वारा वशीभूत होजानेपर (आत्मा) समस्त उपद्रवोंसे रहित मोक्षपदका दाता हो जाताहै ॥ ३८ ॥ श्रुति, स्मृति, पुराण, उपनिषद, श्लोक, सूत्र, भाष्य और जो कुछ वाङ्मय शास्त्र विद्यायेंहैं ॥ ३९ ॥ एवं वेदके अनुवचन (आज्ञा) का ज्ञान, ब्रह्मचर्य, तप, श्रद्धा, व्रत और स्वतन्त्रता (अर्थात् किसीमें आसक्त न होना) यही सब

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ज्ञानके कारण होते हैं ॥ ४० ॥ वही आत्मा समस्त आश्रमवालोंका प्रयत्नपूर्वक जिज्ञास्य, श्रोतव्य, मंतव्य और द्रष्टव्य है ॥ ४१ ॥ आत्मज्ञान होनेहीसे मुक्ति होती है, परन्तु वह आत्मज्ञान विना योगके प्राप्त नहीं होसकता और वह योगभी बहुत काल पर्यंत अभ्यास करनेहीसे सिद्ध होताहै ॥ ४२ ॥ अरण्य निवास, अनेक ग्रंथोंके चिंतन, दान, उपवास, तपस्या, यज्ञ ॥ ४३ ॥ पद्मासन बंधन, नासिकाग्रभाग दर्शन, शौच, मौनव्रत, अथवा विविध मंत्रोंके जपादि करनेसे योगकी सिद्धि कदापि नहीं होती ॥ ४४ ॥ किन्तु उस विषयमें वारंवार विफल हो जानेपरभी विरक्त न होकर, सानुरोध उसीपर दृढ निश्चय करके सदा अभ्यास करते रहनेहीसे योगसिद्ध होताहै और दूसरा उपाय नहींहै ॥ ४५ ॥ जो कोई आत्माके ऐक्यको प्राप्त होकर सर्वदा आत्माहीसे क्रीडा करे और उसी (आत्माही) पर संतुष्ट रहसके तो उसकी योगसिद्धि कुछ दूर नहीं रहती ॥ ४६ ॥ जो कोई इस संसारमें आत्मासे भिन्न दूसरा कुछभी नहीं देखता वही योगीन्द्र आत्माराम होकर ब्रह्मस्वरूप हो जाताहै ॥ ॥ ४७ ॥ पंडितलोग आत्मा और मनके संयोगहीको योग कहते हैं और कोई कोई (तो) प्राण और अपान वायुके संयोगहीको योग कहतेहैं ॥ ४८ ॥ परन्तु मूर्खगण विषयोंमें इन्द्रियोंके संयोगहीको योग कहतेहैं, इन विषयासक्त चित्त लोगोंको ज्ञान वा मुक्तिका मिलजाना बहुतही कठिन है ॥ ४९ ॥ जबलों (इस) चंचल मनोवृत्तिकी रुकावट नहीं होजाती, तबलों योगकी किंवदन्ती (अफवाह) भी समीपमें कहांसे आ सकती है ? ॥ ५० ॥ जो मनको व्यापार विषयोंसे रहितकर क्षेत्रज्ञ परमात्मामें एकसा बनादेवे वही मुक्त हो सकताहै और वही योगीभी कहा जा सकताहै ॥ ५१ ॥ प्रथमतः बाहरी इन्द्रियोंकी वृत्ति शून्यकरके भीतरकी ओर करे, फिर समग्र इन्द्रियोंको मनमें और मनको आत्मामें लगावे ॥ ५२ ॥ तत्पश्चात् सर्व भाव रहित क्षेत्रज्ञ आत्माको परमात्मा ब्रह्ममें मिला देवे, इसीका नाम ध्यान और योग है, एवं इसके भिन्न (शेष) जो कुछ है वह ग्रंथोंका विस्तार ही मात्र है ॥ ५३ ॥ सब किसीके हृदयमें जिस ब्रह्मका स्फुरण नहीं होता, लोग उसके अस्तित्व वादमेंभी विरोध करने लगते हैं और कहे जानेपरभी वह दूसरेके मनमें कभी नहीं बैठ सकता है ॥ ५४ ॥ जैसे अविवाहिता कुमारी पुरुषके संगम सुखको नहीं जान सकती, अथवा जन्मान्ध मनुष्य जैसे जलती हुई बत्तीको नहीं देख सकता वैसेही ब्रह्मभी (योगाभ्यास इत्यादिसे) आपही जाना जा सकताहै (किसीके समझा देनेसे उसका

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ज्ञान नहीं होता) ॥ ५५ ॥ नित्यही (योगका) अभ्यास करनेवालेको वह सना-
तन ब्रह्म आपसे आप सुझाई पडने लगताहै, परन्तु वचन और मनके अगोचर (अति
सूक्ष्म) होनेसे दूसरा कोई उसे कभी समझा नहीं सकता ॥ ५६ ॥ जैसे वायु लगते रहने
से जल एक क्षणभी स्थिर नहीं रह सकता, उसी प्रकारसे चित्तभी अस्थिर बना
रहताहै, अतएव उसका विश्वास नहीं करना चाहिए ॥ ५७ ॥ फिर चित्तकी स्थि-
रता करनेके लिये प्राणवायुका निरोध करे और वायुनिरोध करनेके हेतु षडंग योगका
अभ्यास करे ॥ ५८ ॥ आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, और समाधि-
येही छवों योगके अंगहैं ॥ ५९ ॥ संसारमें जितनी जीवोंकी योनियां हैं, उतनेही
प्रकारके आसनभी होते हैं (अर्थात् चौरासी लाख आसनभी हैं) (टीका—शिश्नके
ऊपर बायीं एडी रक्खे और फिर उसके ऊपर दहिनी एडी जमा देवे) यह सिद्धा-
सन योगियोंको योगकी सिद्धियोंका दाता कहा गयाहै ॥ ६० ॥ और इसके नित्य
अभ्यास करते रहनेसे शरीरमें बडी दृढता आजातीहै ॥ ६१ ॥ दहिने चरणको बायें
ऊरु (जंघा) पर और बायें पैरको दहिने ऊरुपर रखकर बैठनेको पद्मासन कहते हैं
॥ ६२ ॥ इसी पद्मासनमें बैठ पीछेकी ओर दोनों हाथोंसे दोनोंही पैरोंके अंगूठोंको
पकडे रहे तो इस (बद्ध) पद्मासनके अभ्यास द्वारा शरीर व्याधियोंसे रहित हो जाता
है ॥ ६३ ॥ अथवा स्वस्तिक इत्यादि आसनोंके मध्य जिस किसीमें योगीको सुख
मिले, उसीके अनुसार बैठकर योग साधन करे ॥ ६४ ॥ जल और अग्निके सन्निकट
जीर्ण अरण्य और गोशाला, जहांपर डंस और मसे लगते हों (वहां), गांवके पूजा
वाले वृक्षके नीचे, वा चौकमें ॥ ६५ ॥ अथवा केश भस्म भूंसा कोइला अस्थि
इत्यादिसे दूषित, वा दुर्गन्धमय, किंवा बहुत लोगोंसे भरेहुए स्थानमें योगाभ्यास न
करे ॥ ६६ ॥ जहांपर किसी प्रकारकी बाधा न हो, और समस्त इन्द्रियोंको सुख
होवे, एवं मनकी प्रसन्नता जहां उत्पन्न हो, ऐसे माला वा धूपादिसे सुगन्धित स्थान
(बैठ) ॥ ६७ ॥ अति भोजनके उपरान्त क्षुधार्त, मलमूत्रके वेगसे बाधित मार्ग
लनेसे थकाहुआ अथवा चिन्ताग्रस्त नहीं रहे तब योगी योगका अभ्यास करे ॥ ६८
दोनों जंघाओंपर दोनोंही पैरोंको उतान रखकर और दहिनी जंघापर बायां हाथ
उभडा हुआ उतानही लगाकर, एवं मुखको छातीसे सटाकर ॥ ६९ ॥ दोनों
मूंद, सत्वगुणमें स्थित हो, दांतोंसे दांतोंको विना छुलाये, जीभको तालुमें स्थिर
मुखको बन्द करके, निश्चल हो ॥ ७० ॥ समग्र इन्द्रियोंकी वृत्तिको रोक, अति

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वा अत्यन्तऊंचे आसनपर बिना बैठे, (अर्थात् सम आसनपर बैठ) उत्तम, मध्यम वा लघु प्राणायामको प्रारंभ करे ॥ ७१ ॥ वायुके चंचल होनेसे समस्त देह चल हो जाताहै, और वायुके निश्चल होनेपर सबी स्थिर रहताहै, अतएव योगी वायुके रोकनेसे स्थिरताको प्राप्त करताहै ॥ ७२ ॥ जबतक शरीरमें प्राण रहताहै तभीतक जीवित कहा जाताहै, और उसीके निकल जानेपर मरण कहलाताहै, इस लिये प्राणहीका रोक करना चाहिए ॥ ७३ ॥ जबलों शरीरमें प्राणवायु बंधा है, और जबतक चित्त बाह्य विषयोंके आकारसे शून्य होकर स्थिर होताहै एवं यावत् दृष्टि दोनों भ्रुवोंके मध्यमें लगी रहतीहै तबतक कालका भय कहां है ॥ ७४ ॥ ब्रह्माभी कालके भयसे नित्यही प्राणायाम करते रहते हैं, और बहुतसे योगियोंनेभी इसी प्राणायामके द्वारा पूर्ण सिद्धिको प्राप्त कियाहै ॥७५॥ लघु अक्षरकी मात्रा होती है, द्वादश मात्राओंका प्राणायाम मन्द,और उसका द्विगुण मध्यम और त्रिगुण उत्तम होताहै॥७६॥प्राणायाम करनेसे क्रमपूर्वक स्वेद कंप और विषाद उत्पन्न होताहै, किन्तु नियमसे प्राणायाम करता जावे तो मन्द प्राणायामसे स्वेद मध्यमसे कंप ॥७७॥ और उत्तमसे विषादको जीतकर तब योगीका प्राण सिद्ध होजाताहै और फिर क्रमशः निश्चल होताहै; तदनंतर क्रमपूर्वक अभ्यास करते रहनेसे वह वायु योगी जहांकहीं गमन करना चाहताहै, वहां (आपही) पहुंचादेताहै ॥ ७८ ॥ इस प्राणवायुका यदि हठपूर्वक रोककर देवे तो रोम कूपोंसे निकल पडताहै, देहको फार डालताहै; और कुष्ठ इत्यादि रोगोंकोभी उत्पन्न करताहै ॥ ७९ ॥ अतएव बनैले हाथीकी नाईं इसे धीरे धीरे परचाना चाहिए, जैसे वनका हाथी वा सिंह जब क्रमशः मृदुताको प्राप्त होजाताहै ॥ ८० ॥ तब शासककी मानने लगताहै और उसकी किसीभी आज्ञाका उल्लंघन नहीं करता, इसी प्रकारसे हृदयस्थित प्राणभी क्रमशः योगाभ्याससे गृहीत, और सेव्यमान होनेपर विश्वस्त हो (परच) जाताहै ॥ ८१ ॥ यह वायु दक्षिण और वाम नासिकाके रंध्रमार्गसे होकर छत्तीस अंगुल पर्यंत बाहरको प्रयाण(गमन) करताहै, इसी प्रयाणहीके कारण प्राण कहा जाताहै ॥ ८२ ॥ जबकि समस्त नाडीचक्र अनाकुल भावसे शुद्ध होजाताहै, तभी योगीभी प्राणके निरोध करनेमें समर्थ होसकताहै ॥ ८३ ॥ प्रथमतः दृढासन होकर यथाशक्ति चन्द्रकी इडा नाडी (वाम) से प्राणको पूरण करे, फिर सूर्यकी पिंगला नाडी (दक्षिण) के द्वारा रेचन करे, यही प्राणायाम कहलाताहै ॥ ८४ ॥ योगीन्द्र, चन्द्र बीज संयुत झरतेहुए अमृतधारा समूहका ध्यान करताहुआ, प्राणायामके द्वारा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तुरतही परम सुखका अनुभव करने लगताहै ॥ ८५ ॥ सूर्यनाडीसे प्राणवायुको खींच
कर उससे उदररूपी दरीको परिपूर्ण करे, इस विधिसे कुंभक होजानेके पीछे योगी
शनैःशनैः चन्द्रनाडीके द्वारा रेचन करदेवे ॥ ८६ ॥ प्रज्वलित अग्निके राशितुल्य
सूर्यको हृदयमें ध्यान करते रहनेवाला योगिराज इस (दक्षिण और वाम) प्राणाय-
मके द्वारा ब्रह्म सुखका भागी होताहै ॥ ८७ ॥ इस प्रकारसे तीन मास पर्यंत
(दक्षिण—और वाम) दोनों प्रकारके प्राणायामोंका अभ्यास करते रहनेसे योगीके
नाडीगण शुद्ध होजातेहैं, और वह योगी सिद्धप्राण होजाताहै ॥ ८८ ॥ नाडियोंके
विशोधन होजानेसे योगी यथेष्ट वायुको धारण करसकताहै, उसका जठरानल प्रदीप्त
होताहै उसे आधार चक्र स्थित परावाणी सुनाई पडने लगतीहै, और (उसका)
शरीरभी रोगरहित होजाताहै ॥ ८९ ॥ शरीर स्थित वायुका नाम प्राणहै और उसी
प्राणके रुकावटको आयाम कहाजाताहै, वही एक श्वासमयी मात्रा (के उच्चारणका
काल) प्राणायामके नामसे व्यवहृत है ॥ ९० ॥ अधम प्राणायाममें स्वेद, मध्यमें
कंप, और उत्तममें बद्ध पद्मासन शरीरका वारंवार (भूमिपरसे उपरको) उत्थान
होताहै ॥ ९१ ॥ प्राणायामोंके करनेसे शारीरक दोष, और प्रत्याहारसे संचित पाप
भस्म होजाते हैं, एवं धारणाके बलसे मनमें धैर्य, और ध्यानके द्वारा साक्षात् ईश्वरका
दर्शन प्राप्त होनेलगताहै ॥ ९२ ॥ समाधि साधन करनेसे शुभ और अशुभ कर्मको
त्यागकर मोक्ष लाभ होताहै और आसनके बलसे शरीरकी दृढता होतीहै यही पातंजल
योग कहागयाहै ॥ ९३ ॥ बारह प्राणायामोंका एक प्रत्याहार होताहै और बारह
प्रत्याहारोंकी एक धारणा कहीजातीहै ॥ ९४ ॥ बारह धारणाओंका एक ध्यान
होताहै और इसीसे ईश्वरका साक्षात्कारभी होजाताहै, एवं बारह ध्यानोंकी एक समाधि
कहीजातीहै ॥ ९५ ॥ समाधिके परे स्वप्रकाशक अनंत ज्योति लक्षित होतीहै, इसके
देखपानेपर समस्त क्रियाकांड और संसारमें आवागमन समाप्त होजाताहै ॥ ९६ ॥
जब कि प्राणवायु आकाश तत्त्व अर्थात् ब्रह्मरन्ध्रमें प्राप्त होजाताहै, तब घंटादि
वाद्योंकी बडी ध्वनि सुनायी पडने लगतीहै, फिरतो सिद्धि समीपही रहजातीहै ॥ ९७ ॥
प्राणायामके यथोक्त अनुष्ठान करनेसे योगीके समस्त व्याधियोंका क्षय होजाताहै ॥ ९८ ॥
उसी प्राणायामके अनुचित अभ्यास योगसे अशेष व्याधियोंकी उत्पत्ति होतीहै ॥ ९९ ॥
हिचकी, सांसफूलना, खाँसी, शिर, कान और आखोंमें पीडा इत्यादि अनेक रोग
(एक) वायुके व्यतिक्रमसे उत्पन्न होजातेहैं ॥ ९९ ॥ अतएव परिमित हो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(थोडा थोडा) वायुको त्याग करे, और योंही (थोडा थोडा) पूरण करे, एवं इसी विधिसे (थोडा थोडा) बंधन करे, इस प्रकारसे योगी सिद्धिको प्राप्त करताहै ॥ १०० ॥ स्वेच्छानुसार समस्त विषयोंमें घूमतीहुई इन्द्रियोंको युक्तिपूर्वक लौटा-लानेका नाम प्रत्याहार कहलाताहै ॥ १ ॥ जो अपने समस्त अंगोंको कच्छपकी नाईं चारोंओरसे सिकोड (बटोर) लेताहै, वह (योगी) इस प्रत्याहारके विधान करनेसे निष्पाप होजाताहै ॥ २ ॥ चन्द्रमा तालुदेशमें स्थित होकर अधोमुख (से) अमृतकी वृष्टि करताहै और नाभिदेश स्थित सूर्य उर्ध्वमुख होकर उसे ग्रास करताहै ॥ ३ ॥ अतः वैसीही क्रिया करनी चाहिए जिसमें ऊपर नाभि और नीचे तालु रहे,—ऐसा होजानेसे ऊर्ध्वदेशमें सूर्य और अधोदेशमें चन्द्र रक्खा जासकताहै, यह विपरीतकरण अभ्यासहीके द्वारा होसकताहै ॥ ४ ॥ प्राणायामके विधानका वेत्ता योगी काकचंचुके समान अपने मुखसे अत्यंत शीतल प्राणवायुको पीकर निर्जर हो जाताहै ॥ ५ ॥ तालुके छिद्रमें जिह्वाको लगाकर ऊर्ध्वमुखमें अमृतके पान करनेसे निस्सन्देह छः मासके भीतरही निर्जरता प्राप्त होजातीहै ॥ ६ ॥ जो योगी स्थिर रूपसे ऊर्ध्वजिह्व होकर अमृत पान करताहै, वह एकही पक्षमें मृत्युको जीत लेताहै ॥ ७ ॥ और जिह्वाके अग्रभागसे उसके मूलदेशस्थ बडे छिद्रको दबाकर सुधामयी देवीके ध्यान करनेसे छः मासमें कवि होजाताहै ॥ ८ ॥ जिस योगीका शरीर अमृत पानसे पूर्ण होजाताहै, वह दो तीन वर्षके भीतरही ऊर्ध्वरेता और अणिमादि सिद्धियोंसे सम्पन्न होसकताहै ॥ ९ ॥ नित्यही अमृत—पूर्ण—शरीर—धारी योगीको यदि तक्षक सर्पभी डँसलेवे तो उसे विष नहीं चढता ॥ ११० ॥ प्रथम आसनको दृढ करके प्राणायामका अनुष्ठान करे, फिर प्रत्याहारसे संपन्न होजानेपर धारणका अभ्यास करना चाहिए ॥ ११ ॥ मनको स्थिर करके हृदयमें पंचभूतोंका पृथक्पृथक् धारण करनाही धारणा कहीजातीहै ॥ १२ ॥ हरितालके समान पीतवर्ण, चतुष्कोण लकार बीज ब्रह्मदैवत पृथिवी तत्वका हृदयमें ध्यान करे, यही क्षितिधारणा होतीहै ॥ १३ ॥ कुन्द पुष्पके सदृश श्वेतवर्ण, अर्धचन्द्राकार, वकारबीज, विष्णुदैवत, जलतत्त्वको कंठ देशमें ध्यान करे, यही जल धारणाहै ॥ १४ ॥ बीरबहूटीकी नाईं रक्तवर्ण, त्रिकोण, रकारबीज, रुद्रदैवत, अग्नितत्त्वको तालुस्थानमें ध्यान करनेसे अग्निधारणा होतीहै ॥ १५ ॥ अंजनके तुल्य श्यामवर्ण, गोलाकार, यकारबीज, ईशदैवत, वायुतत्त्वको दोनों भौंओंके मध्यभागमें ध्यान करे, यह वायुधारणाहै ॥ १६ ॥ किरण जलके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

समान (वर्णशून्य), शान्त (निराकार), हकारबीज, सदाशिवदैवत, आकाश तत्व को ब्रह्मरंध्रमें स्थित ध्यान करे, यही आकाश धारणाहै, इसमें पांच घडी पर्यंत प्राण को ध्यानासक्त करनेसे यह (आकाश) धारणा मोक्षद्वारके कपाटरूप विघ्नोंके खोलने में समर्थ कहीगयीहै ॥ १७ ॥ यही पांचों भूतोंकी धारणायें (फलरूपसे क्रमशः) स्तंभनी, प्लावनी, दहनी, भ्रामणी और शमनी होतीहैं ॥ १८ ॥ 'ध्यै' धातु चिन्ता अर्थमें कहागयाहै अतः तत्त्वविषयमें (एकाग्रतारूप) स्थिरताही चिन्ताहै, (इसे योगशास्त्रमें) इसीको निर्गुण और सगुण भेदसे द्विविध ध्यान कहाहै ॥ १९ ॥ इन भेदसे युक्त मन्त्रसहित ध्यान सगुण और केवल (निराकार) मन्त्र रहित ध्यान निर्गुण होताहै ॥ १२० ॥ भीतर चित्त और बाहर नेत्रको अवास्थत (ठेकाने) कर, सुखद आसनसे बैठ शरीरकी समता ध्यानमुद्रा है—यह अत्यंत सिद्धिप्रदा होतीहै ॥ २१ ॥ योगी स्थिरासन होकर एकही ध्यानसे जो पुण्य लाभ करताहै, वह पुण्य अश्वमेध अथवा राजसूय यज्ञ करनेसे भी नहीं प्राप्त होता ॥ २२ ॥ जबतक कंठ इत्यादिमें शब्दादिकोंकी कुछभी मात्रा स्थित रहतीहै, तभीतक ध्यान कहाजाताहै, इसके ऊपर समाधिकी अवस्था होजातीहै ॥ २३ ॥ पाँचघडीकी धारणा, साठ घडी का ध्यान और बारह दिनकी समाधि—इस शास्त्रमें कहीजातीहै ॥ २४ ॥ जैसे जल और सेन्धानोन दोनोंही मिलादेनेसे एकसमान होजातेहैं उसी प्रकारसे आत्मा और मनकी एकताहीका नाम समाधि कहाजाताहै ॥ २५ ॥ जिस समयमें प्राण और मन लवलीन होजाताहै उसी बेलाकी एक रसताको समाधि कहतेहैं ॥ २६ ॥ इस शरीरमें जीवात्मा और परमात्माकी जब समानता होजातीहै, तब कोईभी मानसिक कर्म नहीं रहजाते यही समाधिकी दशा कहीजातीहै ॥ २७ ॥ समाधि-स्थित योगीन्द्र न अपनेको न परायेको न शीतको न ऊष्णको, न सुखको और न दुःखको, कुछभी नहीं जानताहै ॥ २८ ॥ जब योगी समाधि लगालेवे, तब उसे न तो काल हिलासकताहै, न कर्मही लिप्त करसकताहै और न अस्त्र शस्त्रोंहीसे वह काटाजा सकताहै ॥ २९ ॥ (यथा गीतायाम्)

"नैनं छिन्दंति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ॥"

जो योगी परिमित आहार विहार और निद्रा जागरण, एवं समस्त कर्मोंमें परिमित चेष्टाको करताहै, वह (सहजहीमें) तत्त्वको देखने लगताहै ॥ १३० ॥ ब्रह्मज्ञान

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लोग, हेतु और दृष्टान्तसे रहित, वचन और मनसे अगोचर, विज्ञानरूप, आनन्दमय ब्रह्महीको तत्त्व समझतेहैं ॥ ३१ ॥ योगी षडंग योगाभ्यासके द्वारा निरालंब, निरातंक, निरामय उसी परब्रह्ममें लीन होजाताहै ॥ ३२ ॥ जैसे घृतमें यदि घृतही डाल दियाजावे तो वहभी घृतही होजाताहै, एवं क्षीरमेंभी क्षीर डालदेनेसे क्षीरही होताहै, उसी रीतिसे परब्रह्ममें लीन योगीभी तन्मय होजाता है ॥ ३३ ॥ जलरहित भस्मादिक द्रव्योंसे अंगमर्दन करे, और अत्युष्ण वस्तु वा लवण भोजन न करे, हां दुग्ध भोजन करे ॥ ३४ ॥ जितेन्द्रिय होकर ब्रह्मचर्यका अनुष्ठान करताहुआ क्रोध, लोभ, और मत्सरताको छोड एक वर्षपर्यंत ऐसाही अभ्यास करनेसे योगीके नामसे कहाजाताहै ॥ ३५ ॥ महामुद्रा, नभोमुद्रा, उड्डीयान, जालंधर, और मूलबंधको जो योगी जानताहै, वही योगसिद्धियोंका भागी होताहै ॥ ३६ ॥ नाडीजालका शोधन, चन्द्रनाडी और सूर्यनाडीका संघटन, और अच्छीरीतिसे रसोंका शोषणही महामुद्रा कहलातीहै ॥ ३७ ॥ वामपादसे मूत्रेन्द्रियको दबाकर, और वक्षःस्थलमें चिबुक (दाढीकी ठुड्डी) को सटाये, दोनों हाथोंसे फैलेहुए दक्षिणचरणको चिरकाललों धारण किये रहै ॥ ३८ ॥ फिर प्राणवायुसे कोंखको परिपूर्णकर धीरे धीरे रेचन करे, यही महापाप पुंज विनाशिनी महामुद्रा करनेकी विधि कहीगयीहै ॥ ३९ ॥ प्रथमतः चन्द्रनाडी (इडा) में (प्राणयामोंका) अभ्यास करके तब पुनः सूर्यनाडी (पिंगला) में अभ्यास करे, जब कि पूरक इत्यादिकी संख्या समान होजावे तब मुद्राको छोडदेवे ॥ १४० ॥ इस महामुद्राके अभ्यास करनेमें पथ्य अपथ्यका विचार नहीं है, और समस्त नीरस (पदार्थ) भी रसपूर्ण होजातेहैं, यदि महाघोर विषभी पियाजावे तो वहभी अमृतके समान पचजाताहै ॥ ४१ ॥ जो महामुद्राका अभ्यास करताहै उसके क्षय, कुष्ठ, गुदावर्त (बवासीर) गुल्म (पिलही) अजीर्ण प्रभृति रोगोंके दोष क्षय होजातेहैं ॥ ४२ ॥ कपाल कुहर (बिल) में जिह्वाको विपरीतगामिनी रखकरके दोनों भौंओंके बीचमें दृष्टिको स्थिर करनेसे खेचरी मुद्रा होतीहै ॥ ४३ ॥ जो कोई इस खेचरी मुद्राको जानलेताहै, वह नतो बाणसमूहसे पीडित होताहै, न कर्मविपाकमें पडताहै, और न कालकी बाधाको प्राप्त होताहै ॥ ४४ ॥ इसके अभ्यासकालमें चित्त और जिह्वा आकाशमें प्राप्त होकर विचरण करतीहै, अतएव उस मुद्राका नाम खेचरीहै, सिद्धगण इसका बहुत सेवन करतेहैं ॥ ४५ ॥ जबतक बिन्दु शरीरमें स्थिररूपसे वर्तमान

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

रहताहै, तबतक मृत्युका भय कहांहै ? जबलों यह नभोमुद्रा (खेचरी) रहतीहै, तबलों बिन्दु कदापि नहीं निकलसकता ॥ ४६ ॥ दिनरात महाप्राण उडाकरता है, अतः उसके बंधन विधानको उड्डीयान (मुद्रा) कहागयाहै ॥ ४७ ॥ पेटपर (दोनों हाथोंके अग्रभागसे) फैलेहुए दोनों पैरोंके मध्यभागको नाभिके ऊपर धारण करे इसीको उड्डीयानबंध कहतेहैं, इसके साधनसेभी मृत्युका भय नहीं रहता ॥ ४८ ॥ जिसके द्वारा अधोगामी शरीरान्तर्गत छिद्र जलादिको कंठदेशके नाडीजालसे बांध दिया जावे तो यही जालंधरबंध दुःखसमूहका नाशक होताहै ॥ ४९ ॥ कंठका संकोच सूचक इस जालंधर बंधके अभ्यास होजानेसे (ऊर्ध्व संभूत) अमृत (जठरके) अग्निमें नहीं गिरने पाता, और न (शरीरस्थ) वायु चलताहै ॥ १५० ॥ पार्ष्णिभाग (एडी) से योनिको दबाकर गुदस्थानका संकोच करदेवे, फिर अपान वायुको ऊपर खींचले जानेसे मूलबंध संपादित होताहै ॥ ५१ ॥ इस मूलबंधनसे सर्वदा अपान और प्राणवायुकी एकता होजातीहै, और उसके द्वारा वृद्धभी युवा होजासकता है ॥ ५२ ॥ जीव प्राण और अपान वायुके वशमें पडकर दहिने बाँयें मार्गसे ऊपर नीचे दौडाकरता है, और वह नियत संज्ञा होनेसे तनिक स्थिर नहीं होसकता ॥ ५३ ॥ डोरेमें बँधाहुआ पक्षी जैसे उडकरभी फिर खींच आताहै, उसी प्रकारसे सत्वादि गुणोंद्वारा बद्ध जीवभी प्राणवायुसे आकर्षित करलिया जाताहै ॥ ५४ ॥ अपान वायुसे प्राणवायु, और प्राणसे अपान दोनोंही परस्पर खिंचेजाते हैं, और ये दोनों वायु ऊपर और नीचे विचरते रहतेहैं, इनको योगीही मिलासकता है ॥ ५५ ॥ जीव हकारसे बाहर जाताहै और सकारके द्वारा फिर प्रवेश करताहै, अतएव वह "हंसहंस" इस मन्त्रको सर्वदा जपरहताहै ॥ ५६ ॥ एक अहोरात्रमें जीव एकीस सहस्र छःसौ बार इसमन्त्रको नित्यही जप करता है ॥ ५७ ॥ इसे योगियोंकी मुक्तिप्रदा अजपा नाम गायत्री कहते हैं, इसके संकल्पमात्रसे मनुष्यके समस्त पाप छूट जातेहैं ॥ ५८ ॥ इस मंत्र साधनमें योगियोंके हानिकारक ये सब विघ्न उपस्थित होतेहैं, दूरकी बातें सुनपडतीहैं, दूरके पदार्थ आगेही देखानेलगते हैं ॥ ५९ ॥ अर्ध निमेषमात्रमें एकयोजन चलनेकी शक्ति होजाती है, अपठित समग्र शास्त्र कंठाग्र होजातेहैं ॥ १६० ॥ धारणाशक्ति बहुतही बढजातीहै, बडाभारी बोझ लघु (हलका) होजाताहै, जब दुर्बल, वा स्थूल (दुबला वा मोटा) और बडा वा छोटा बनजासकता है ॥ १६१ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दूसरेके शरीरमें प्रवेश करसकताहै, पशु पक्षियोंकी बोली समझने लगताहै, शरीरमें स्वर्गीय गंध आनेलगता है, देवभाषा बोलने लगता है ॥ ६२ ॥ स्वर्गकी कन्यायें प्रार्थना करने लगजातीहैं और दिव्य शरीरको धारण करलेताहै—ये सब विघ्न योग सिद्धिके संसूचक रूपसे प्राप्त होतेहैं ॥ ६३ ॥ यदि योगीका चित्त इन सब विघ्नरूप सिद्धियोंमें फँसने नहीं पाता तो उसके आगेही वह ब्रह्मादि देवतोंके दुर्लभ परम पदको प्राप्त करताहै ॥ ६४ ॥ जिसे पाकर फिर संसारमें न तो लौटना पडे; और न किसीका शोचही करना पडे. हे कुम्भज ! वह (पद) षडंग योगाभ्यासहीके बलसे पाया जासकता है ॥ ६५ ॥ एकही जन्ममें ऐसा योग कैसे सिद्ध होसकताहै ? और बिना योगसिद्धिके इस लोकमें मुक्तिही क्योंकर मिलसकतीहै ॥ ६६ ॥ हे घटयोने ! मुक्तिके तो दोही मार्ग हैं, एक तो काशीमें शरीरत्याग, दूसरा उक्त प्रकारका योगाभ्यास ॥ ६७ ॥ इन्द्रियवृत्तियोंके चंचल होनेसे, और कलिकालमें पापोंके बढनेसे, तथा मनुष्योंकी आयुष्य थोडी होनेसे इस भोगभूमिमें योगसिद्धि कैसे होसकतीहै ? ॥ ६८ ॥ इसीलिये वे दयासागर भगवान् विश्वेश्वर जन्तुओंके मोक्षदाता होकर सर्वदैव काशीपुरीमें निवास करतेहैं ॥ ६९ ॥ जन्तुगण काशीमें जैसे सुखसे मोक्षप्राप्त करतेहैं, अन्यत्र कहींभी योगादिक नाना उपायोंसे वैसी मुक्ति नहीं पासकते ॥ ७० ॥ काशीमें अपने देहका संयोगही संपूर्ण योग कहलाताहै, संसारमें इस योगके द्वारा जैसा शीघ्र मोक्ष प्राप्त होताहै, वैसा दूसरा कोई उपाय नहीं है ॥ ७१ ॥ काशीमें तो विश्वेश्वर, विशालाक्षी, गंगा, कालभैरव, ढुंढिराज, और दंडपाणि—येही छहों योगके अंगस्वरूपहैं ॥ ७२ ॥ इहांपर (काशीमें) इसी षडंगयोगके नित्य सेवन करते रहनेसे महायोगनिद्राके प्राप्त होनेपर मोक्षलाभ होजाताहै ॥ ७३ ॥ काशीमें ओंकारेश्वर, कृत्तिवासेश्वर, केदारेश्वर, त्रिलोचन, (आत्मा) वीरेश्वर, और विश्वेश्वर—यह दूसरा षडंग योगहै ॥ ७४ ॥ वरुणासंगम, असीसंगम, ज्ञानवापी, मणिकर्णिका, ब्रह्मकुंड और धर्मनद (पंचगंगा) येभी छहों अन्यविध योगके अंगहै॥ ७५॥ हे नरोत्तम ! काशीमें इस षडंगयोगके सेवनसे जन्तु फिर कभी माताके उदरमें उत्पन्न नहीं होता ॥ ७६ ॥ काशीमें तो गंगास्नानही महापातक नाशिनी महामुद्राहै, इसी मुद्राके अभ्याससे मोक्ष प्राप्त होजाताहै ॥ ७७ ॥ काशीकी गलियोंमें भ्रमण करनेहीका नाम खेचरी मुद्राहै, इस खेचरी मुद्राके साधनसे अवश्य खेचर अर्थात् देवता होजाताहै ॥ ७८ ॥ सभी देशोंसे उडकर वाराणसीके प्रति

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गमन करनेहीको उड्डीयान बंध कहतेहैं, इस महाबंधके अभ्याससे मुक्तिकी सिद्धि मिलती है ॥ ७९ ॥ विश्वेश्वरके स्नानोदकको लेकर मस्तकपर धारण करनेहीको समस्त दुर्लभ जालंधरबंध जानना चाहिये ॥ १८० ॥ सैकडों विघ्न पडनेपरभी बुद्धिमान् जो काशीको नहीं छोडते इसीका नाम मूलबंधहै,इसके द्वारा अशेष दुःखोंका मूलोच्छेद होजाताहै ॥८१॥ मुनिवर ! महादेवका भाषित, और मुक्तिका साधन, तथा छहों और मुद्राओंके सहित, यह दोनों प्रकारका योगाभ्यास मैंने तुमसे कहदिया ॥ ८२ जबलों इन्द्रियाँ विकल नहीं होजातीं, वा जबतक व्याधियोंकी बाधा नहीं ग्रस लेती और जितनाही मृत्युमें विलंब हो उसीकालके बीच योगाभ्यासमें तत्पर होजाना चाहिये ॥ ८३ ॥ इन दोनों योगोंमें यह काशीयोगही उत्तमहै, इस योगके आश्रय करलेनेसे वह श्रेष्ठयोग सहजहीमें प्राप्त होजाताहै ॥ ८४ ॥ मृत्युकी चिह्नरूपा आधि—व्याधि—सहायिनी जरा (वृद्धता) के द्वारा कालको निकटवर्ती जानकर काशीनाथका आश्रयण करे ॥ ८५ ॥ काशीपतिके शरणागत होजानेपर मनुष्यको फिर कालका भय कहाँसे होसकताहै ? क्योंकि कालतो कुपित होकर जीवही लेता सो वहभी काशीमें परममंगलका विषय है ॥ ८६ ॥ धार्मिक जन अतिथि पजने वेला जैसे अतिथिकी बाट जोहताहै, काशीमें भाग्यशाली पुरुष वैसेही आनेवाले कालकीभी—प्रतीक्षा करता रहताहै ॥८७॥ कलि, काल और कृतकर्म, यही तिन कहलाताहै, परन्तु काशीवासियोंके ऊपर इन तीनोंहीका कुछभी नहीं बसाता ॥८८ अन्य स्थानमें तो अतर्कित भावसे आकर काल अवश्यही असलेताहै, परन्तु जिसकिसी कालसे अभय प्राप्त करनेकी इच्छाहो वह काशीहीका आश्रयण करे ॥ १८९ ॥

दो०—मुक्तिहेतु कलिकालमें, कठिन योग अभ्यास ।
सूधो साधन एक यह, करिये काशीवास ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां वानप्रस्थसन्यासधर्म—योगाभ्यासकीर्तनं नामैकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४१ ॥

बयालीसवाँ अध्याय ।

कालवंचनोपापवर्णन ।

अगस्त्यने पूछा—हे हरनन्दन ! निकटवर्ती मृत्युका ज्ञान कैसे होता है ? उसके कौन कौनसे चिह्न हैं ? यह सब मुझे बतलादीजिये ॥ १ ॥ स्कन्दबोले—

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वर ! मृत्यके निकट आजानेपर शरीरधारियोंको जो कालके लक्षण प्रकट हो जातेहैं उन सबको मैं कहताहूं, श्रवण करो ॥ २ ॥ जिसके केवल दक्षिण नासिका छिद्रसे रात्रि दिन श्वास वायु चलता रहे, वह पूर्णआयुष्य होनेपरभी तीनवर्षके मध्यमें मरजाता है ॥ ३ ॥ दो अथवा तीन दिन रात जिसका निश्वास दक्षिणनाडीसे बहता रहे, उसके जीवनकी अवधि एकही वर्ष कहीजातीहै ॥ ४ ॥ निरंतर दशदिनलों जिसके दोनोंही नासापुटोंसे श्वास चलता रहे, और वायु एकसाथ मिलजावे, तो उसका जीवन तीन दिनमात्र रहजाता है ॥ ५ ॥ नासिकाके दोनोंही मार्गोंको छोडकर जिसका श्वास मुखसे चलने लगे, उसे दोहीदिनके भीतर यमराजके मार्गकी यात्रा करनीपडे ॥ ६ ॥ जिस कालमें अचानक मृत्यु आपहुँचे, मृत्युसे डरनेवाले को उसीकालकी चिन्ता प्रयत्न-पूर्वक करनी चाहिये ॥ ७ ॥ सूर्य जब सप्तमराशिपर हों और चन्द्रमा जन्मनक्षत्रमें रहे, तभी दक्षिण नासापुटसे श्वास चलनेलगताहै, इस सूर्याधिष्ठित कालपर विशेष लक्ष्य करना चाहिये ॥ ८ ॥ इसी वेलामें जो कोई अकस्मात् कृष्ण वा पिंगलवर्णके पुरुषको देखे और कुछही क्षणमें रूपान्तर देखे तो वह मनुष्य केवल दोवर्ष जीसकताहै ॥ ९ ॥ जिस किसीका वीर्य, मल और मूत्र, अथवा छींक, मल और मूत्र एकसाथही निकल पडे, उसकी आयुष्य एकही वर्ष कही जासकतीहै ॥ १० ॥ जो कोई आकाशमें इन्द्र-नीलके समान इधर उधर विचरण करतेहुए नागवृंदको देखने लगताहै, वह छःमास नहीं जीता ॥ ११ ॥ योंही जो मुखमें जललेकर सूर्यको पिछडंड (पीठकी ओर) करके कुहारा छोडे और इन्द्रधनुषको न देखे तो उसकाभी जीवन वही छःमासका होताहै ॥ १२ ॥ जिसकी मृत्यु निकट होजातीहै वह अरुंधती, ध्रुव, विष्णुपद, और मातृमंडल, इन चारोंको नहीं देखता ॥ १३ ॥ जिह्वाको अरुंधती, नासिकाके अग्रभागको ध्रुव, भ्रूमध्यको विष्णुपद, और नेत्रोंके मध्यभागको मातृ मंडल कहतेहैं ॥ १४ ॥ जोकि नील इत्यादि वर्ण और कडुआ खट्टा आदि रसोंका कुछ दूसराही रंग वा स्वाद समझताहै वह मृत्युका भागी होताहै ॥ १५ ॥ जिस मनुष्यकी आयुष्य छहीमास अवशिष्ट रहजातीहै उसका कंठ, ओष्ठ, जिह्वा, दन्त, और तालु, विच्छाय (बदरंग) होकर सदा सूखने लगजातेहैं ॥ १६ ॥ योंही जिसका वीर्य, हाथके नख, और नेत्रकोण काले पड़जावें, तो वहभी छह मासमें यमपुरगामी होजाताहै ॥ १७ ॥ जो कोई मैथुनके समय वा उसके अन्तमें छींक-ताहै वह मनुष्य पांचवें मासमें अवश्यही यमराजका अतिथि बनजाताहै ॥ १८ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तीनरंगका गिरगिटान (गिर्गिट) वेगसे जिसके मस्तकपर चढ़कर चलाजावे उसे आयुष्यका छहमासमें परिक्षय होजाताहै ॥ १९ ॥ अच्छीरीतिसे स्नान करनेपरभी जिसका हृदय दोनोंहाथ और चरण शीघ्रही सूख जावें, वह तीनमाससे अधिक नहीं जीसकता ॥ २० ॥ जिसके पैरका चिह्न धूल वा कींचडमें कटे पैरके ऐसा पड़े वह पांच माससे अधिक नहीं चलसकता ॥ २१ ॥ शरीरके निश्चल रहतेभी जिसकी छाया (परछांही) हिलतीहो वह चौथेमासमें यमदूतोंसे बांधा जाताहै ॥ २२ ॥ जल, घृत, दर्पण इत्यादिमें जोकि अपने प्रतिबिंबका मस्तक नहीं देखता वह तो सा हीभरमें मरजाताहै ॥ २३ ॥ मतिकाभ्रंश, वचनका लरखराना, अनायास इन्द्रधनुषका देखना, रात्रिमें दो चन्द्रमा, और दिनमें दो सूर्य ॥ २४ ॥ और तारारहित एवं रात्रिमें ताराहीन आकाश, वा एकसाथही चारों दिशाओंमें इन्द्रधनुष ॥ २५ ॥ वृक्षपर वा पर्वतके ऊपर गन्धर्वनगरालय, और दिनमें पिशाचोंका नृत्य—इन सबका देखनाही मृत्युका कारण होताहै ॥ २६ ॥ इन सब लक्षणोंके मध्यसे यदि एक चिह्न दिखाई पड़े तो एकमाससे अधिक मृत्युकी प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती ॥ २७ ॥ हाथसे कानोंको बन्दकरके जो कुछभी न सुनसके, अथवा हठात् मोटेसे दुबला दुबलेसे मोटा होजावे, तो वह एकमासके आगे नहीं बचसकता ॥ २८ ॥ जो अपनी छायाको दक्षिणदिशामें समाश्रित देखताहै वह तो पांचही दिन जीकर पंचत्वको प्राप्त होजाताहै ॥ २९ ॥ जो कोई स्वप्नमें पिशाच, असुर, काक, भूत, प्रेत, कुक्कुर, सियार, खर, सूकर, गर्दभ, ऊंट, वानर, श्येन (बाजपक्षी) खच्चर और इनके पीठपर चढ़कर उनका भक्ष्य बने वह जीवन छोड़कर एकवर्षमें यमराजका दर्शन करे ॥ ३० ॥ ३१ ॥ जो मनुष्य रक्तवर्णके गंध (चन्दन) पुष्प और वस्त्रादिसे अपने शरीरको भूषित होता हुआ स्वप्नावस्थामें देखे वह आठमास जीताहै ॥ ३२ ॥ योंही स्वप्नमें जो अपनेको धूलिके ढेर, विमौड वा बलिदानके खंभेपर चढताहुआ (देखे) वह भी छहमासमें मरजाताहै ॥ ३३ ॥ जो अपनेको गर्दभपर चढा, तेल लगाये, मुँडाये दक्षिणदिशामें जाताहुआ स्वप्नमें देखताहै, अथवा अपने (मृत) पूर्वपुरुषको अपने मस्तकपर, वा अपने शरीरपर तृण किंवा सुखठा काठोंको उसी स्वप्नावस्थामें देखताहै वह मनुष्य छठवें मासमें नहीं रहजाता ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ जो अपने कालावस्त्र पहिने और लोहेका डंडा लियेहुए कालेपुरुषको खडा देखताहै, वह मास नहीं लांघसकता ॥ ३६ जिसे स्वप्नमें श्यामवर्णकुमारी बाहुपाशसे आलिंगन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वह एकही मासमें यमपुरीको देखलेवे ॥ ३७ ॥ स्वभावस्थामें जो वानरपर चढकर पूर्वदिशामें जावे, वह तो पांचही दिनमें यमराजकी नगरीका पथिक बन जाताहै ॥ ॥ ३८ ॥ यदि कोई कृपण एकाएक दाता होजावे, अथवा कोई दाताही हठात् कृपण होजावे, किंवा किसी प्रकारसे अकस्मात् स्वभाव पलटजावे तो वह (कदापि) नहीं बचसकता ॥ ३९ ॥ येही सब कालके चिह्नहैं और अन्यभी बहुतसे चिह्न होतेहैं, इन सबको समझकर मनुष्य योगाभ्यास करे अथवा काशीवास करे ॥ ४० ॥ हे मुने ! दुःसह गर्भदुःखके निवारक, मृत्युंजय, काशीश्वरसे भिन्न दूसरा कोई कालका छलनेवाला उपाय मैं नहीं जानता ॥ ४१ ॥ मनुष्य जबतक भगवान् विश्वेश्वरका नियत शरणागत नहीं होजाता, तभीलौं पापपुंज और यमराज उसके प्रति गर्जते रहते हैं ॥ ४२ ॥ काशीधाममें निवास पाय, उत्तरवाहिनी गंगाका जलपान कर, और विश्वेश्वरके श्रेष्ठलिंगका स्पर्श करनेपर कौन नहीं पूजनीय होजाता ॥ ४३ ॥ जिस काशीमें स्वयं सदाशिव अन्तकालमें सभी जीवोंके कर्णमें मन्त्रका उपदेश करदेते हैं, तो भला काल वहांके अधिवासी मनुष्योंका कुपितही होकर क्या करलेवेगा ? ॥ ४४ ॥ जैसे थोडेदिनोंमें बाल्य और कौमार अवस्थायें बीतगयीं, वैसेही यौवन और वार्द्धक्यभी शीघ्रही निकलजाताहै॥ ४५॥ अतएव जबलों जरा नहीं धरदबाती और इन्द्रियाँ विकल नहीं होजातीं, तबलों समस्त तुच्छ विषयोंको त्यागकर बुद्धिमान् जन काशीका आश्रित होजावे ॥ ४६ ॥ हे अगस्त्य ! मृत्युके और सब चिह्न तो दूर रहें, प्रथम चिह्न तो जराहीहै, परन्तु जरा होजानेपरभी लोगोंको कुछ भय नहीं होता, यही बडा आश्चर्यहै ! ! ॥ ४७ ॥ जब पुरुष जरा से परिभूत होताहै, तो सभीसे पराभव पाने लगताहै, जैसे कि कोई अपनी जवानीरूप—मानिक खोके दरिद्री होगया हो ॥ ४८ ॥ जराग्रस्त नरके पुत्रभी आज्ञा नहीं मानते, पत्नीभी प्रेम त्यागदेतीहै, और बन्धुगणभी उसे कुछ नहींलगाते—

"पुत्रहु बातें ना सुनैं, पत्नी करै न नेह ।
बांधव जन मानैं नहीं, ग्रसे जरा जब देह ॥ ४९ ॥"

पुरुषको जरासे लिपटेहुए देखतेही प्रणयिनीभी कामिनी परस्त्रीके ऐसी विशंकित होकर नित्यही पराङ्मुखी होजातीहै । इसी अभिप्रायका यह पुराना दोहा प्रसिद्धहै—

"श्वेतश्वेत सबही भले, भले श्वेत नहि केश॥रमनी रमै न रिपु डरै, नहि आदरै नरेश"
॥५०॥ जराके समान न तो कोई व्याधी है और न कोई दुःखही है, सबसे अपमान कर-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वानेवाली यह जराही तो मनुष्योंकी मृत्युहै—"जरा जरा आई जरा, जरा गयी सब देह।
सब व्याधिनको पींजरा, जरा मौतको गेह" ॥ ५१ ॥ काल, तपस्या और योग
प्यासके द्वारा वैसे नहीं जिताता, जैसा कि अल्पसमयमें काशीवास द्वारा जीतलिया
जासकताहै ॥ ५२ ॥ नानाविध यज्ञ, दान, व्रत, जप और बडे पुण्य संभारकेभी
काशी पानेकी चेष्टा कौन करसकताहै ? ॥ ५३ ॥ काशीकी प्राप्तिही योग, काशी
लाभही तपस्या, काशीवासही दान और काशीमें मरणही शिवकी एकताहै ॥ ५४ ॥
यदि काशीमें आश्रयण करते बनपडे तो क्या कलि, क्या काल, क्या जरा, क्या पाप
क्या रोग और क्या विघ्नगण—ये सब तुच्छ कुछभी नहीं करसकते ॥ ५५ ॥ जो
लोग काशीका सेवन नहीं करते, उन्हींको कलि बाँधताहै और कालभी मारडालताहै
एवं पाप समूहभी (उन्हींको) दुःख देसकतेहैं ॥ ५६ ॥ जिन लोगोंने काशीमें
निवास किया और विश्वेश्वरका पूजन करलिया, वे तो तारक ज्ञानको पाकर सर्व
बंधनसे मुक्तही होजातेहैं ॥ ५७ ॥ वाराणसीमें निधन (मरण) होजानेसे जैसा
अनंतसुख लाभ होसकताहै, संसारभरमें कहीं भी बडे बडे धनिकोंको वह सौख्य नहीं
मिलसकता ॥ ५८ ॥ शास्त्रविधिके अनुसार काशीमें निवास करनेवाला
मनुष्य (सर्वथा) अच्छाहै, परन्तु स्वर्गमें देवताके पदपर बैठनेवाला कदापि श्रेष्ठ नहीं
है, क्योंकि प्रथम तो दुःखके अन्तरूप मोक्षको पाताहै, और दूसरा सुखके अन्तको
प्राप्त करताहै, अर्थात् पुनर्जन्म लेताहै ॥ ५९ ॥ (—वस्तुतः यह प्राचीन लोकोक्ति
ठीक जानपड़तीहै " चना चबैना गंग जल, जो पुरवंहि करतार। काशी कबहुं
छाँड़िये, विश्वनाथ दरबार ॥ " भगवान् विश्वेश्वर, सुन्दरकन्दरावाले मन्दरा
पर विराजमान होकरभी दिवोदास नृपालसे अधिष्ठित काशीपुरीके बिना प्रसन्नता
नहीं करसके ॥ ६० ॥

जीव बटोही, बटपरा, काल सबै ठगि लेत ॥
देह चिह्न लखि, सेइये, भुक्ति काशिही देत ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां कालवंचनोपाय
वर्णनं नाम द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४२ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तेंतालीसवां अध्याय।

राजा दिवोदासका प्रताप वर्णन।

अगस्त्यने कहा—हे स्कन्द! भगवान् त्रिलोचनने राजा दिवोदाससें काशी कैसे छोडवायी? और स्वयं मन्दराचलसे फिर किसप्रकारसे काशीमें लौट आये? ॥ १ ॥ श्रोताओंकी प्रसन्नताके लिये आप इस आख्यानको वर्णन करें। स्कन्द बोले—महादेवने ब्रह्माकी बात मानकर, एवं उस मन्दराचलकी तपस्यासे सन्तुष्ट होकर वहाँ पर गमन किया ॥ २ ॥ भगवान् विश्वेश्वरके सुन्दर मन्दरगिरिपर चलेजानेसे उन्हींके साथ समस्त देवतागणभी वहीं चलेगये ॥ ३ ॥ नारायणभी अशेष विष्णुक्षेत्रोंको त्यागकर उसी मन्दराचलपर जहाँ देवादिदेव उमापति विराजमानथे चलेगये ॥ ४ ॥ गणेश और सूर्यनेभी अपने अपने स्थानोंको छोडकर वहाँहीपर गमन किया, एवं अन्यान्य समस्त देवगण भूतलमें अपने स्थानोंको शून्यकर वहांहीकी यात्रा करनेलगे। हे विप्रेन्द्र! उस घडी मैं भी (इस पर्वतको) त्यागकर वहीं चलागयाथा ॥ ५ ॥ ६ ॥ इसप्रकारसे देवतागणके चलेजानेपर, प्रतापशाली भूपाल दिवोदास निर्द्वन्द्व होकर पृथिवीका राज्य करनेलगा ॥ ७ ॥ वाराणसी पुरीको अपनी स्थिर राजधानी बनाकर, और प्रजाओंका धर्मपूर्वक पालन करताहुआ वह महाबुद्धिमान् राजा दिन प्रतिदिन बढनेलगा ॥ ८ ॥ सूर्यके समान तेजस्वी होकर वह दुष्टोंके हृदय और नेत्रोंमें अत्यन्त तपनेलगा, और सज्जन तथा आत्मीय लोगोंके चित्तमें सोमकी नाईं सौम्य दर्शन होजाताथा ॥ ९ ॥ वह इन्द्रके समान अखण्ड धनुर्मण्डलका टंकार करताहुआ संग्राममें पलायमान शत्रुसैन्यरूपी मेघोंसे देखाजाताथा ॥ १० ॥ योंही सज्जनोंका और दुर्जनोंका शासन करताहुआ धर्माधर्म विवेचक वह राजा साक्षात् धर्मराज होगया ॥ ११ ॥ उसने अनेकबार अर्जुनकी नाईं अपने शत्रुरूपी बनको जलाडाला, और दूरस्थ होनेपरभी वरुणके समान रिपुमंडलको फाँस लेताथा ॥ १२ ॥ वह शत्रुरूप राक्षसोंका उच्छेदक वन पुण्यजनेश्वर (कुबेर) और जगत्के प्राणरक्षणमें तत्पर हो जगत्प्राण (वायु) के समान होगया ॥ १३ ॥ सभी सज्जनोंके धनदाता होनेके कारण वही राजराज (कुबेर) होगया, और रणमें रिपुगण उसीको रुद्रमूर्ति धारण किये देखते थे ॥ १४ ॥ वह अपने तपोबलसे समस्त देवतोंका रूप धारण करलेताथा, अतएव विश्वदेवगण उसकी स्तुति, और भजन करने लगे ॥ १५ ॥ वह साध्यदेवतोंसे असाध्यथा, वसुगणसेभी अधिक धनवान्था ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ग्रहगणका रूप धारण करनेवाला वह राजा अश्विनी कुमारोंसेभी अत्यंत रूपवान्था ॥ १६ ॥ समस्त विद्याधरोंसेभी अधिक विद्याधर हो, वह मरुद्गणोंको विना गिनेहुए अपने गुणोंसे तुषित देवतोंको सन्तुष्ट करताथा ॥ १७ ॥ जिसने अपनी गीतिसे गन्धर्वोंकोभी गर्वरहित करडाला, उसके स्वर्गोपम दुर्गकी रक्षा यक्ष और राक्षस लोकभी करतेथे ॥ १८ ॥ उसका पराक्रम देखकर, नागगणभी कभी अपराध नहीं करतेथे एवं दानवगण, मानवरूप धारणकर उसकी सेवामें लगे रहतेथे ॥ १९ ॥ गुप्तचर लोग मनुष्योंमें चारों ओरसे उसीके गुप्तचर होगयेथे, और असुरगण यह कहा करतेथे कि—" हे राजन् ! हम लोग अपने २ विभवके अनुसार आपकी सेवा करेंगे ॥ २० ॥ क्योंकि आपने अपने राज्यमें देवतोंका रहना भी दुर्लभ करदियाहै " इस भूमीपर जिस क्षितिपालके घोडोंको अश्वगतिकी शिक्षा शास्त्रके शिक्षकपदपर बैठकर (शालहोत्री वन) स्वयं वायु शीघ्रगतिकी शिक्षा देताथा ॥ २१ ॥ जिसके पर्वत समान स्थूल देही पर्वत जातहस्तियोंको सर्वदा दान (मदजल) संपन्न देखकर दूसरे लोगभी दानियाँ बनगये ॥ २२ ॥ जिसके विद्वान् लोग सभाप्रांगणमें शास्त्रोंसे और योधागण रणभूमिमें शस्त्रोंद्वारा कभी किसीसे पराजित नहींहुए ॥ २३ ॥ जिस राजाके राज्यमें कोईभी प्रजा सर्वदा आश्रयहीन अथवा द्वेषकरनेवाली नहीं दिखलाई पडतीथी, प्रत्युत सभी लोग प्राप्तपद और द्वेषरहित होगयेथे ॥ २४ ॥ स्वर्गमें देवतोंके मध्य केवल एकही कलावान् है, परन्तु उस राजाके समयमें पृथिवीपर सभीलोग समस्त कलाओंके आलय होगयेथे ॥ २५ ॥ स्वर्गमें तो एकही कामहै, सोभी अंगहीन है, परन्तु उसके राज्यमें सभी लोगोंके समस्तकाम सांगोपांग शोभित रहतेथे ॥ २६ ॥ उसके राज्यमें कहींपर कोई एकजनभी गोत्रनाशक नहीं सुनाजाताथा, किन्तु स्वर्गमें तो स्वयं देवराजही गोत्रभित् नामसे प्रसिद्ध हैं ॥ २७ ॥ स्वर्गमें चन्द्रमा प्रतिकृष्ण पक्षमें क्षय होजाताहै, पर उसके राज्यमें कहींपर किसीने क्षयीका नामभी नहीं सुनाथा ॥ २८ ॥ स्वर्गलोकमें यद्यपि नवोंग्रह रहतेहैं पर उस राजाके समस्त देशमें कभी सूखा नहीं पडताथा ॥ २९ ॥ स्वर्गमें तो एकही हिरण्यगर्भ दिखाई पडतेहैं, पर भूलोकमें उस राजाके सभी पुरवासियोंके गृह हिरण्यगर्भ (सुवर्णसे पूर्ण) ही रहते हैं ॥ ३० ॥ स्वर्लोकमें तो एकमात्र अंशुमान् (सूर्य) ही सात घोडेवाले भासित होते हैं, पर उसके सभी पुरवासीजन सदंशुक (खुशपोशाक) और बहुत घोडावाले हैं ॥ ३१ ॥ जैसे स्वर्ग अप्सराओंसे पूर्ण रहताहै, वैसे इसकी नगरीभी सुन्दर अप्सरा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ओंसे भरपूरही रहतीथी, योंही वैकुंठमें तो एकही पद्मा रहतीहै, पर उसके राज्यमें तो सैकडोंही पद्माकर (लक्ष्मीके घर) पडेथे ॥ ३२ ॥ उस राजाके सभीग्राम (अनावृष्टि इत्यादि) ईतिके भयसे रहितथे, पर रक्षक राजपुरुषसे कोईभी रहित नहींथे, स्वर्गमें तो केवल एक अलकानाथही धनदहै पर उसके राज्यमें तो घरघर धनदही भरे रहतेथे ॥ ३३ ॥ इसप्रकारसे काशीपुरीमें उस दिवोदास राजाने राज्यका पूर्ण शासन करतेहुए अस्सीसहस्र वर्षको एकदिनकी नाईं विना प्रयास व्यतीत करदिया ॥ ३४ ॥ इसके अनंतर देवतागण, धर्ममार्गानुगामी उस राजाका अपकार करनेके अभिप्रायसे बृहस्पतिके सहित मंत्रणा (विचार) करनेलगे ॥ ३५ ॥ "हेमुनिवर ! देवतागण प्रायशः आपहीके ऐसे धार्मिक लोगोंपर अपनी विपत्तियोंकी परंपरा रख देते हैं ॥३६॥ यद्यपि इस भूपाल दिवोदासने अनेक दुष्कर यज्ञोंसे यज्ञभुक् देवतोंका अत्यंतसन्तोष करदियाथा पर वे लोग इसके सुहृद (मित्र) नहीं हुए ॥ ३७ ॥ अथवा यह तो देवतोंका स्वभावहीहै, जो वे पराग्रेकी बढती नहीं सहसकते, नहीं तो बलि, बाणासुर और दधीचि इत्यादिने इनका क्या बिगाडाथा ? ॥ ३८ ॥ यद्यपि धर्मके अनुष्ठानमें पदपदपर विघ्न पडतेही रहतेहैं, परन्तु धार्मिकजन कभी अपने धर्मको नहीं त्यागते ।

दोहा—" धरम करत पग पग परत, विघन अनेकन आय ।
पैं नहिं त्यागहिं धर्म निज, धार्मिकजन समुदाय ॥ ३९ ॥ "

यद्यपि अधर्मीगण प्रथम धन धान्यकी संपत्तियोंसे बढने लगजाते हैं, तथापि अधर्महीके प्रभावसे अन्तमें समूल नष्ट होकर अधोगतिको प्राप्त होतेहैं ॥ ४० ॥ अपने औरसपुत्रके समान प्रजागणका पालन करतेहुए उस रिपुंजय राजाको अल्पमात्रभी अधर्म नहीं छूसकाथा ॥ ४१ ॥ देवतालोग, संधिविग्रहादि छहों गुणोंके वेत्ता और प्रभावोत्साहादि तीनों शक्तियोंसे स्वस्थ चित्त, एवं धर्मार्थादि चारों पुरुषार्थोंके उपायनिष्ठ, उस राजाके किसीभी छिद्रको नहीं जानसके ॥ ॥ ४२ ॥ बुद्धिमान् होनेपरभी देवतागण अपकारकरनेपर उद्यत होगये, परन्तु उस राजाका कुछभी बिगाड नहीं करसके ॥ ४३ ॥ उस राजाके राज्यमंडलमें सभी पुरुष एकपत्नीव्रतमें तत्परथे, योंही स्त्रियोंमेंभी ऐसी कोई नहींथी जो कि पतिव्रता धर्मका पालन न करती हो ॥ ४४ ॥ उस दिवोदास भूपतिके राष्ट्रमें कोईभी ब्राह्मण अपठित, क्षत्रिय शूरताहीन, वैश्य अर्थोपार्जन कर्मोंमें अनभिज्ञ, और शूद्र

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गणभी द्विजवर्गकी सेवा छोडकर दूसरी जीविकामें आसक्त नहीं होतेथे ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥ उसके शासनकालमें ब्रह्मचारी गण शुद्ध ब्रह्मचर्यसे नित्यही गुरुकुलके आधीन रहकर वेदाध्ययन करनेमें तत्पर होतेथे ॥ ४७ ॥ गृहस्थलोग अतिथिसेवनधर्ममें सोत्साह, और धर्मशास्त्रके मर्मवेत्ता, एवं नित्यही सत्कर्मोंके अनुष्ठानोंमें आसक्त रहतेथे ॥ ४८ ॥ वानप्रस्थाश्रमी जनभी वेदमार्गानुसारी होकर सर्वदा वनवृत्तिहीका आदर करतेहुए ग्रामवार्ताओंमें निस्पृह रहाकरतेथे ॥ ४९ ॥ योंही सन्यासी गणभी सब लोगोंका संग त्यागकर, वचन मन और कर्मके तीन दंडोंको धारणकियेहुए, निष्परिग्रह, निस्पृह, और निर्मुक्त होकर रहतेथे ॥ ५० ॥ और दूसरे सब अनुलोम प्रतिलोम जातिके (वर्णसंकर) लोग (अंबष्ठ सूत मागध इत्यादि) भी कदापि अपने परम्परागत कुलमार्गको नहीं त्यागतेथे ॥ ५१ ॥ उसके राज्य शासन समयमें कोईभी पुत्रहीन अथवा दरिद्री नहींथा, सभीलोग वृद्धसेवक और यथाकाल मृत्युगत होतेथे ॥ ५२ ॥ उस वेलामें चिविल्ले, बकवादी, वंचक, हिंसक, पाखंडी, भांड, रंडी और शौंडिक (मद्यविक्रेता) लोग नहीं रहगयेथे ॥ ५३ ॥ सर्वत्र पदपदपर वेदध्वनि, शास्त्रालाप, अच्छीसे अच्छी वार्तायें, सहर्ष मंगलगीत ॥ ५४ ॥ एवं वीणा, वंशी, और मृदंगके मधुर स्वन हुआही करतेथे, उस राज्यमें यज्ञके सोमपानसे भिन्न दूसरी पानगोष्ठी नहीं सुनी जातीथी ॥ ५५ ॥ और न यज्ञ पुरोडाशसे भिन्न मांसभोजनही कोई करताथा, उस राज्यमें जुआडी, ऋणग्राही और चोर भी नहीं थे ॥ ५६ ॥ पुत्र पिताके चरणोंकी सेवाहीको देवपूजन, उपवास, व्रत, तीर्थसेवन, और परम (इष्ट) देवताराधन मानताथा ॥ ५७ ॥ स्त्रियांभी पतिके पैरोंकी सेवा, और उसके वचनके श्रवण करनेसे भिन्न कुछभी नहीं जानतींथीं, सभी मनुष्य अपने बडे भ्राताकी सदा सेवा करतेथे ॥ ५८ ॥ भृत्यवर्ग प्रसन्नचित्तसे स्वामियोंके पदसरोजको सेवतेथे, नीचजातिके लोग ऊंची जातिवालोंको गुणोंकी बडाईद्वारा वर्णन करतेथे, ॥ ५९ ॥ लोग त्रिकाल वारंवार काशी और उसके देवतोंका पूजन करतेथे, सभी स्थानपर विद्वान् लोगोंका मनोरथोंकी पूर्तिसे सम्मान होताथा ॥ ६० ॥ पंडितगण तपस्वियोंका, तपस्वीलोग जितेन्द्रियोंका, जितेन्द्रिय लोग ज्ञानियोंका, और ज्ञानिगण, शिवयोगियोंका आदर करतेथे ॥ ६१ ॥ उस राज्यमें रात्रिदिन मन्त्रोंसे पवित्र, बहुमूल्य, विधिपूर्ण उत्तम रीतिसे संस्कार कियाहुआ हवि ब्राह्मणोंके मुखरूपी अग्निमें हवन कियाजाताथा ॥ ६२ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उसके राज्यमें पदपदपर वापी कूप तडाग और वाटिकाओंको शुद्ध बहुतसा द्रव्य लगा कर बनवादेनेवाले लोग अत्यंत अधिक रहतेथे ॥ ६३ ॥ वहांपर सभीजातिके लोग हृष्ट पुष्ट दिखलातेथे और केवल बहेलिया और कसाईको छोडकर सभीलोग प्रशंसनीय सेवादि कार्योंसे सम्पन्न रहतेथे ॥ ६४ ॥ इसप्रकारसे सर्वत्र शुद्धवर्ताव करनेवाले उस राजाके विषयमें बहुतही अनुसंधान करते रहनेपरभी देवतागणने तनिकभी अपकार करनेका अवसर नहींपाया ॥ ६५ ॥ अनंतर देवगुरु बृहस्पति, देवतोंको उस मन्त्रवेत्ताओंमें वरिष्ठ धर्मिष्ठ श्रेष्ठ राजाके विषयमें अपकार करनेका अभिलाषी देखकर कहनेलगे ॥ ६६ ॥ बृहस्पति बोले—(देवगण !) जैसा कि वह राजा संधि, विग्रह, प्रयाण, आसन, संश्रय और भेद—इन छहों नीतियोंको समझताहै यहांभी वैसा जाननेवाला कोई नहींहै ॥६७॥ उस तपोबलशाली राजाके विषयमें साम, दान, दंड, और भेद—इन चारों उपायोंमें यदि किसीके कुछ सिद्धिकी संभावना है तो वह केवल भेदही है॥६८॥यद्यपि उस भूपतिने सभी देवतोंको पृथिवीपरसे निकासदियाहै, तथापि वहाँपर हमलोगोंके पक्षपातीभी बहुतसे बनेहीहैं ॥ ६९ ॥ जिनके बिना निमेषमात्र कालभी चाहे हमलोगोंका हो अथवा उस राजाहीका क्यों न हो, पर सुखसे नहीं बीतसकता, वे लोग वहांपर सभीके विश्वासपात्र, तथा अन्तश्चर और बहिश्चर रूपधरकर सर्वदैव सादर निवास कररहेहैं, यदि वे लोग वहांसे चलेआवें तो हमलोगों का सब अभीष्ट सिद्ध होजावेगा ॥ ७० ॥७१॥ देवतोंने, बृहस्पतिका वचन सुन उसके अर्थानुसार भीतर और बाहर रहनेवालोंका निर्णय करके और उनकी बडाई गातेहुए, यह कहा कि—"ऐसाही कियाजावे" ॥ ७२ ॥ तब तो इन्द्र समीपहीमें अवस्थित अग्निको बडेही आदरसे बुलाकर अत्यंत मधुरवचनोंसे कहनेलगे ॥७३॥ हे हव्यवाहन ! आपका जो रूप भूमिपर प्रतिष्ठित है, उसे आप उस भूपतिके राज्यभरसे शीघ्रही हटादीजिये॥७४॥ जब कि आपकी मूर्ति वहांसे चलीआवेगी तो सभी प्रजागण अग्निके न रहनेसे हव्यकव्यादि क्रियाओंसे शून्य होकर उस राजापर विराग करने लगजावेंगे ॥ ७५ ॥ राज्यकी कामधेनु प्रजाओंके विरक्त होजानेपर बडे कष्टसे उपार्जित राजा शब्दभी व्यर्थही होजावेगा ॥ ७६ ॥ प्रजाओंके (मन) रञ्जन करनेसे यह जो भूपतियोंको राजा कहा जाताहै, वह जब कि प्रजाके विरक्त होजानेपर नष्ट होगया तो साथही राज्यभी विध्वंस होजावेगा ॥ ७७ ॥ जिस राजाके प्रजावर्ग विरुद्ध होकर छोड देंगे, तो वह चाहे कोश, दुर्ग, सेना इत्यादिसे समृद्ध हो, पर बहुतही शीघ्र नदीके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कूलस्थित वृक्षके समान नष्ट होजाताहै ॥ ७८ ॥ प्रजाही राजाके धर्म अर्थ और कामके प्रधान कारण हैं, पर जब प्रजावर्ग क्षीणवृत्ति होजातेहैं, तब तो राजाका त्रिवर्ग आपही क्षय होजाताहै ॥ ७९ ॥ और जब किसीका त्रिवर्गही बिगडगया तो फिर उसके इसलोक और परलोककी दोनोंही गतियोंका ठिकाना नहीं लगता ॥ ८० ॥ इन्द्रदेवके ऐसा कहनेसे अग्निदेवने तुरत पृथिवीमंडलसे अपनी मूर्त्तिको योगमायाके बलसे खींचलिया ॥ ८१ ॥ उनने केवल आहवनीय, गार्हपत्य और दक्षिणाग्निनामक इन्ही तीनों रूपोंका आकर्षण नहीं किया, वरन् अपनी पाचनशक्ति के सहित जठरानलकोभी इन्द्रके कहनेसे खींचलिया ॥ ८२ ॥ इस प्रकारसे अग्नि के स्वर्गमें चलेजानेपर मध्याह्नकालमें तात्कालिक उपासनादिको समाप्त कर भोजन मंडपमें ज्योंही राजाने प्रवेश किया ॥ ८३ ॥ रसोइयां लोग बारंबार काँपतेहुए राजाको क्षुधित जानकरभी धीरेसे यह निवेदन करनेलगे ॥ ८४ ॥ पाककर्त्ताओंने कहा—हे सूर्यसेभी अधिक तेजस्वी, और प्रतापसे अग्निके जीतनेवाले, रणपंडित महाराज ! हमलोग बिना अवसरकेभी कुछ निवेदन किया चाहतेहैं ॥ ८५ ॥ यदि आप हम सबको अभयदान करें, तो हमलोग हाथ जोडकर अपनी प्रार्थना निवेदन करें ॥ ८६ ॥ इसके अनंतर सौम्यमुख राजाके भ्रूसंकेतसे आज्ञा पाकर पाकशालके अधिकारी लोग कहने लगे ॥ ८७ ॥ "नाथ! नहीं जानते आपके प्रतापभयसे अग्नि होकर अथवा किसी कुचालसे मूर्ख अग्निने नगरही छोडदिया ॥ ८८ ॥ फिर अग्निके न रहनेसे पाककी क्रिया कैसे कीजावे, पर तोभी हमलोगोंने कुछ थोडासा पदार्थ सूर्यहीके तेजमें पकायाहै ॥ ८९ ॥ यदि महाराजकी आज्ञा पावें तो उसे यहांहीं पर लेआवें, भूप ! हमलोगोंकी समझमें आजका पाक अच्छाही होगा" ॥ ९० ॥ वह महाबली और परमबुद्धिमान् राजा रसोइयोंकी बात सुनकर विचारनेलगा कि यह सब देवतोंहीका खेलवाडहै॥ ९१ ॥फिर उस राजाने क्षणमात्र ध्यान करके तपोबलसे देखाकि अग्निने केवल रसोइयाँका घरही नहीं छोडदिया, पर जठर विवरकोभी त्यागदियाहै ॥ ९२ ॥ और वह इस भूलोकको परित्यागकर स्वर्गमें चलागया है, अच्छा तो इससे हमारी कौन हानिहै यदि ! अग्नि चलागया तो ॥ ९३ ॥ इस विचारसे उन्हीं देवतोंहीकी हानि होसकतीहै, क्या मैंने उन्हींसबोंके भरोसेपर इस राज्यका भार उठायाहै ? ॥ ९४ ॥ मैंने तो ब्रह्मदेवसे बडे गौरवके साथ इसे पायाहै,—राजा इसी प्रकारसे शोचरहाथा ॥ ९५ ॥ इसीमें देशवासियोंके सहित नागरिकगण राजद्वारपर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जापहुँचे, अनंतर पहरावालेने राजाकी आज्ञासे उन सबको भीतर लेजाकर उपस्थित करादिया ॥ ९६ ॥ उन सबलोगोंनें यथायोग्य उपायन (नजर) देकर राजाको प्रणाम किया, राजानेभी किसीसे सादर बोलकर ॥ ९७ ॥ किसीको प्रसन्नदृष्टिसे देखकर एवं किसीको हाथका संकेत कर बडेही आदरके साथ बैठनेको आसन दिया ॥ ९८ ॥ वे सबलोग, रत्नोंकी चमकसे शोभायमान, और देववृक्षोंकेभी सुगंधोंसे अधिक सौरभसे भरेहुए, एवं राजाके सौतिल्लीवाले छाताकी छायासे विभूषित उस राजाके आँगनमें (आसनपर) बैठगये ॥ ९९ ॥ तब राजाने उन सबोंकी मुखाकृतिहीसे सूचित उनके अभिप्रायको समझकर कहा हे पुरवासी प्रजागण ! कोई डर नहींहै ॥ १०० ॥ क्या बिगाड करनेवाले देवतोंने अग्निको भूमिपरसे हटादिया तो इसीसे मेरा पराभव सिद्ध होजावेगा? ॥ १ ॥ प्रजागण ! मैंने तो पूर्वहीमें इस कार्यको करडालना चाहाथा, पर उपेक्षाही करतारहा, आज बहुतदिनोंके पीछे उन लोगोंने स्मरण करादिया ॥ २ ॥ अग्नि चलागया तो अच्छाही हुआ, वायुभी चलाजावे, और वरुण चन्द्र सूर्यके संगही यहांसे अभी प्रस्थान करदेवे ॥ ३ ॥ मैं देशवासियोंके आनंदार्थ, समस्त धान्यादिकोंका समृद्धिदाता इन्द्र होकर अपने तपोबलसे वृष्टि करूंगा ॥ ४ ॥ मैं स्वयं अपनेहीको तपस्या और योगके बलसे अग्निका तीन रूप बनाकर पाक, यज्ञ, और दाहकर्मको संपादन करूंगा ॥ ५ ॥ मैं अन्तश्चर और बहिश्चर द्विविध वायु होकर सब लोगोंके अन्तःकरणकी चेष्टाकोभी जानलूंगा ॥ ६ ॥ मैंही जीवोंकें जीवनकी एकमात्र रक्षाकरनेवाले जलकी मूर्ति धारण करके प्रजाओंको जिलाऊंगा, भला इस जडरूप जलका मेरे राज्यमें कौन प्रयोजन है ॥ ७ ॥ पुरवासियो ! जब कि चन्द्र—सूर्यको राहु ग्रसलेताहै तो क्या उससमय हमलोग उनके विना भूमंडलमें जीवित नहीं रहते ॥ ८ ॥ मैं आपही चन्द्रसदृशी शोभासे प्रजाओंको आह्लादित करूंगा, इस क्षयरोगी, कलंकी, निशाचरसे कौन फलहै ॥ ९ ॥ केवल सूर्यदेव मेरे वंशके मूलपुरुष होनेसे माननीय हैं, वे अकेले यहां रहें और सुखसे गमनागमन करें ॥ ११० ॥ क्योंकि वे एकमात्र जगतोंके आत्माहैं और विशेषकरके हमारे कुलदेवताहैं, वे कदापि किसीका अपकार नहीं करते यही उनका उत्तमव्रत है ॥ ११ ॥ पुरवासी प्रजागण इसप्रकारसे कर्णपुटकोंद्वारा राजाके वचनामृतको पीकर विकसित मुखकमल हो, प्रसन्नमनसे अपने अपने घर चलेगये ॥ १२ ॥ राजानेभी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जैसा कहाथा वैसाही अग्नि और सूर्यसेभी अधिक तेजस्वी होकर, देवतोंके द्वारभी औरभी बडाभारी कीलठोंकदिया, अहो ! इस त्रैकोक्यमें तपोबलके द्वारा क्या असाध्यहै ॥ ११३ ॥

दोहा—का नहिं जगमें करि सकै, जाहि तपोबल होय ।
दिवोदास आपुहि भयो, अनिल, अनल शशि, तोय ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषाटीकायां दिवोदासनृपतिप्रतापवर्णनं नाम त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४३ ॥

चौवालीसवाँ अध्याय ।

विश्वेश्वरका काशीविरह और योगिनियोंका प्रस्थान ।

कार्तिकेय बोले—(इधर) विश्वेश्वर, मन्दराचलकी सुन्दर कन्दराओंके भीतर अनुपम रत्नद्युतिसे शोभायमान, और चारोंओर देवतोंसे वेष्टित, एवं निजशिखरोंसे आकाशस्पर्शी मन्दिरमें ॥ १ ॥ निवास करते रहनेपरभी काशीके वियोगजनित संतापसे व्याकुल होकर, बालचन्द्रकी कलाको धारण किये रहनेपरभी सुखशान्तिसे नहीं पासके ॥ २ ॥ त्रिपुरान्तक भगवान्ने विरहानलके शान्त्यर्थ शरीरमें जो मलयाचलके चन्दनका लेप किया, वह उसी घडी सूखकर धूर होगया ॥ ३ ॥ जो संतापहारी, अतिकोमल मृणाल हाथमें कंकण बनायेगये उनको महेश्वरने कहा ये तो कर्कश ऐसे जान पडते हैं (सो वे सब आजलों सर्प होकर उनके हाथमें पडेहैं) सत्यहै ईश्वरकी जो इच्छा होतीहै उसके होनेमें कौन आश्चर्यहै ॥ ४ ॥ देवतोंने क्षीरसागरको मथकर जिस कोमल और शीतलकलापूर्ण चन्द्रको निकालाथा, वह वियोगसे संतप्त महेश्वरके मस्तकपर पड उष्णतासे अपना देह सुखवाकर अत्यंत कृश होगया ॥ ५ ॥ शिवने अत्यंत संतापित होकर उस वेला अपने मस्तकपर बडेभारी जटाजूटमें जिस पारितापहारिणी सुरनदीको धारण कियाथा आजतक उसे उतारतेही नहींहैं ॥ ६ ॥ वशीशंकर अनायास उस बडे वियोगके वशीभूत होगये परंतु गुप्तसंतापसे भरेरहनेपरभी उनको सभासद्देवगण कुछभी नहीं जानसके ॥ ७ ॥ इससे बढकर और क्या आश्चर्य होगा कि, स्वयं त्रैलोक्यनाथ पवित्र रहनेपरभी अपनेही रूप अग्निके द्वारा, जोकि अपनीही पुरीके वियोगसे उत्पन्न हुआहै स्वयं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

संतप्त होनेलगे ॥ ८ ॥ जो सर्वदा अपने भालदेशको कलानिधिकी कलासेही विभूषित करतेहैं आज वही शीतल चन्द्र अपने आश्रयदाता ईश्वरकोभी संतापित करहाहै । सचहै—दुःखके समय कौन नहीं विरुद्ध होजाता ? "(अपनेभी वेगाने होजातेहैं)" ॥ ९ ॥ कैसी अद्भुत बातहै !! जिसके कंठदेशमें विषके रक्खेरहनेपरभी कुछ सन्ताप नहीं हुआ, उसे सुधाकरके अतिशीतल किरणोंसेही संतप्त होनापडा ॥ १० ॥ जो प्रतिक्षण शरीरस्थित सर्पोंके फनसे निकलतेहुए विषमय फूत्कारसे तनिकभी क्लेशित नहीं होते, इसघडी वेही शिव, तापशान्त्यर्थ हृदयपर लगाएगये हरिचन्दनके लेपसे औरभी संतापित होनेलगे ॥ ११ ॥ जिसकी कृपासे जीव संसारके समस्त भ्रमजालसे छुटकारा पाजासकताहै—उसघडी उनी भगवान् विश्वेश्वरको पुष्पकी मालापरभी बडे भारी सर्पका भ्रम होनेलगा, यह बडाही आश्चर्य है !! ॥ १२ ॥ जो स्मरण करते मात्र जीवोंके त्रिविध तापको अत्यंत दूरकर देतेहैं, आज वेही अनादिदेव काशीके वियोगसे व्याकुल होकर आपही आप यह कहनेलगे ॥ १३ ॥ यदि काशीसे आयाहुआ वायुभी मेरे शरीरमें लगजाता तो यह विरहका कंप शान्त होता नहीं तो इस हिमराशिके लपेटनेसेभी कुछ नहीं होसकता ॥ १४ ॥ जिस दक्षसुताने पिताके मुखसे पतिकी निन्दा सुनकर देहको त्याग करदिया, उसके लिये जो मुझे असह्यसन्ताप हुआथा, वह यदि शीघ्रही मेरी जीवनौषधिरूपा सती पार्वती न होगई होती तो कैसे दूरहोता ? ॥ १५ ॥ दक्षतनया सतीदेवीके शरीरत्याग करनेसेभी मेरा मन ऐसा व्याकुल नहीं हुआथा, जैसा कि इस काशीके विरहानलसे परितप्त होरहाहै ॥ १६ ॥ अयिकाशि ! अब फिर मैं कब तुम्हारे अंगसंगसे उत्पन्न सुखको हर्षसे पाऊंगा ! जिसके द्वारा यह मेरा संतप्त शरीर पुनः अत्यंतशीतल होजाता ॥ १७ ॥ अयि पापपुंजविनाशिनी ! काशि ! तुम्हारे वियोगसे उत्पन्न अग्नि तो विचित्रहीहै, जोकि सुधाकरकी कलाओंके कोमल छिरकावसे घृतपानेके समान औरभी बढता जाताहै ॥ १८ ॥ पूर्वमें जैसे मेरा सतीका विरहानल पार्वतीरूप औषधसे शांत होगया, वैसे इसघडी यदि तुरंत काशीका दर्शन न पाऊंगा तो कभी मेरी शान्ति नहीं होसकती ॥ १९ ॥ इस प्रकारसे गुप्तसंतापमें निमग्न, और मनहीमन ऐसा विलाप करतेहुए शिवको बुद्धिजननी जगदंबिकाने किसीविधसे जानलिया कि ये (शिव) किसीके वियोगी हुएहैं ॥ २० ॥ परन्तु शिवने तो इसरूपसे अपने विरहको गुप्त कररक्खाथा कि, साक्षात् अर्द्धांगिनी होनेपरभी पार्वती

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देवीको कुछभी वियोगका कारण नहीं समझाई पडा, अन्ततः भक्तजनके सन्तापहारी भगवान् विश्वेश्वरकी सेवा शुश्रूषा करतीही रहीं ॥ २१ ॥ (एकदिन) श्रीपार्वती देवीने कहा—हे सर्वव्यापक ! योगेश्वर ! प्रभो ! सब कुछ तो आपहीके हाथमें है, फिर यह आपको किसका वियोगहै ? अहो ! आपहीकी विभूति तो ब्रह्मादि देवतोंकोभी ऐश्वर्य्य देतीहै, और प्राणिमात्रकी रक्षिणी तथा सभी आपदोंकी नाशिनी है ॥ २२ ॥ हे नाथ ! ये सब संसार आपकी दृष्टि फिरजानेसे क्षणभरमें भस्म होकर शोचनीय होजातेहैं, हे ईश ! जिसे आप कृपालेशसे सेवक न स्वीकार करलेंवह भ्रष्टही होजाताहै ॥ २३ ॥ हे त्रिलोचन ! चन्द्र, सूर्य, और अग्नि, ये तीनों तो नेत्ररूप होकर आपके शरीरमें सदा बनेही रहतेहैं अतएव, ये सब तो संतापके कारण होही नहीं सकते फिर आपके मस्तकपर प्रीतिमती शोभनजलवाली गंगाही विराजमानहैं ॥ २४ ॥ हे (विषभक्षक !) नीलकंठ ! ये सब सर्प तो सदैव आपके हस्तभूषणही बने रहतेहैं, भला इनका विष आपका क्या करलेसकताहै ? हे वामदेव ! आपकी वामअर्द्धांगिनी मैं चित्तानुसारिणी दासीहीहूं (पर आपके सन्तापका कोई कारण मुझे नहीं दिखाई पडता) ॥ २५ ॥ इसप्रकारसे संसारकी मूलजननी पार्वतीदेवीके अतिहितकर वाक्यरचनाके कहनेपर भगवान् गिरीश कहनेलगे ॥ २६ ॥ ईश्वर बोले—"अयिकाशि ! अष्टमूर्ति होकर संसारमें प्रमाणस्वरूप महादेवकीभी तुम्हारे विरहमें ऐसी दशा होगयीहै" तुरन्त पार्वतीने जानलिया कि, काशीहीके लिहसे भगवान् हर हरेगयेहैं ॥ २७ ॥ अनंतर पार्वतीने बालकालकी सखीरूपा उस वनकी लताओंसे शोभायमान मुक्तिदात्री काशीपुरीका प्रस्ताव आरंभ करदिया ॥ २८ ॥ पार्वतीने कहा—स्मरहर ! जो प्रलयकालमें जब कि (समुद्रका) जल गगनतलसे मिलजाताहै उस बेलामेंभी आपके त्रिशूलपर कमलकी शोभाको पातीहै उसी काशीपुरीमें हम दोनोंही जन अभी चलें ॥ २९ ॥ हे धूर्जटे ! जो पृथिवीपर होकरभी कभी भूमि नहींहै वह आपकी श्रेष्ठ काशीपुरी जैसा सुख देतीहै वैसा आनन्द मेरे पिता हिमालय तथा इस मन्दरपर्वतकी भूमिपरभी कहीं नहींहै ॥ ३० ॥ हे विभो ! जहाँपर न कलि और कालका भयहै न जहाँ पापहीका कोई डरहै, एवं जिसकाशीमें मरजानेहीसे फिर पुनर्जन्मका दुःखभी नहीं भोगना पडता, वह काशीपुरी फिर कब इन आँखोंको कृतार्थ करेगी ? ॥ ३१ ॥ इस पृथिवीपर ठौर ठौर धनधान्यसे समृद्ध सहस्रशः नगरियाँ क्या नहीं पडीहैं ? परन्तु हे शिव ! मैं आपहीकी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शपथ करतीहूं मैंने तो काशीके समान दूसरी कोईभी पुरी नहीं देखपायीहै (. "कासी समान नहीं दुतिया पुर ब्रह्मादिक सब ध्यान लगावत") ॥ ३२ ॥ हे त्रिपुरान्तक ! स्वर्गमेंभी अनेक नगरहैं, जिनके देखतेही हृदयमें बडा कौतूहल उत्पन्न होनेलगताहै, परन्तु वे सभी भवभयनाशिनी आपकी काशीपुरीके आगे तृणके समान ज्ञात होतेहैं ॥ ३३ ॥ हे नाथ ! यहाँपर काशीका विरहज्वर केवल आपहीको दुःख नहीं देता; प्रत्युत मुझे तो औरभी अधिक संताप देरहाहै, इस घोर विरहानलकी शान्तिका उपाय तो केवल काशीही है, अथवा मेरी जन्मभूमि हिमालयहै ॥ ३४ ॥ हे प्रभो ! पूर्वकाल में मैं समस्त संतापविनाशिनी, परमशान्तिदायिनी काशीमें आकर, अपनी जन्मभूमि के वियोगकाभी सन्ताप भूलही गयीथी ॥ ३५ ॥ हे शर्मप्रद ! इस संसारमें किसी शरीरधारीने कहीं परभी साक्षात् मोक्षलक्ष्मीको नहीं देखाहै, परन्तु मैं समझतीहूं सब किसीके कल्याणके लिये यह काशीही मुक्तिका रूप धारणकर बैठीहै ॥ ३६ ॥ काशीमें शरीरत्याग करनेसे जैसी मुक्ति अनायास प्राप्त होतीहै, वैसी मुक्ति इन्द्रियोंकी चंचलतासे नष्ट समाधिवाले योगाभ्यास, वा यज्ञानुष्ठान, अथवा वेदविद्यासेभी अन्यत्र कहींपर नहीं मिलसकती ॥ ३७ ॥ काशीमें शरीरधारी जीवमात्रको जो अपूर्व सुख प्राप्त होताहै, वह सुख नतो अत्यंत रमणीय स्वर्गमेंहै न पातालहीमेंहै, रहा मर्त्यलोक सो उसमें तो सुखसंबन्धी बातभी कहांहै ? ॥ ३८ ॥ हे त्रिशूलिन् ! मोक्षलक्ष्मी जिसे कभी नहीं छोडती, आपके उस अविमुक्तक्षेत्रमें जो पुण्यप्राणी केवल मनोयोगभर दे देताहै उसे सदैव षडंगयोगाभ्यासका फल प्राप्त होताहै—

दोहा—जहाँ मुक्ति बिलसै सदा, सो तव काशी धाम ।
जो बहि सुमिरै देइ मन, कौन जोगसे काम ॥ ३९ ॥

हे नाथ ! काशीमें पहुँचकर आपपर क्षणमात्र दृष्टिको स्थिर करके सुखसे जो देह की सिद्धि तुरंत मिलजातीहै, इस लोकमें मनुष्योंको षडंग योगसाधन करनेपरभी वह कभी नहीं प्राप्तहोती ॥ ४० ॥ जो कोई जीव बुद्धिभाजन मनुष्यका जन्म पाकर काशी के दर्शनका सौभाग्य नहीं प्राप्त करता उसका पद्मपत्रके ऊपर जलके बुल्ले ऐसा क्षणमात्र स्थिर रहनेवाला जन्म अत्यंत निष्फलहै, वरन् उससे तो बुद्धिहीन पशुपक्षी गणही बहुत अच्छेहैं ॥ ४१ ॥ हे शिव ! काशीके दर्शनकरनेवाले दोनोंही नेत्र, काशीमें निवास करनेवाली तन (शरीर) इधर उधरके भ्रमणको छोडकर काशीहीमें आश्रय करनेवाला मन, एवं काशीके सन्मुख हुआ मुख—येही सब कृतार्थ होतेहैं ॥ ४२ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अत्यंतपावन, रजस्तमोगुणनाशक, चन्द्रप्रभाके समान परमोज्ज्वल, उस काशीकी ति
सबसे श्रेष्ठहै, क्योंकि जिसे मणिकर्णिकाकी भूमीपर देवगण प्रणामकरके अपने ललाट
में लगाकर (अपनेको) सर्वोत्कृष्ट मानने लगतेहैं ॥ ४३ ॥ देवलोक, सत्यलोक
अथवा नागलोक, ये सब कदापि मणिकर्णिकाकी तुलनाके योग्य नहींहैं क्योंकि कहीं
पर मरनेवालोंका कान तो ब्रह्मरसायनका स्थानही होजाताहै ॥ ४४ ॥ मणिकर्णि
का तो अद्भुत तेजोमय स्थानहै, जहाँपर कि सैकडों जन्मके संचित और सूर्य-अग्नि
चन्द्रादिकोंसे अनिवार्य, अज्ञानरूप अंधकारकी परंपरा स्वयं क्षय होजातीहै ॥ ४५ ॥
अहा ! क्या तो यह निर्वाणराजका सिंहासनहै ? वा मोक्षलक्ष्मीकी कोमल शय्याहै
किंवा परमानन्दरूप सुन्दरकन्दकी जन्मभूमिहै ? अथवा मणिकर्णिकाकी स्थलीहै
॥ ४६ ॥ जिस स्थानपर सुखसे बैठकर लोग अपने मरणमहोत्सवकी अभिलाषासे
प्रथम मरकर मुक्तहुए जन्तुओंकी गणना चमकतीहुई छोटी २ सिटकियों (कंकडियों)
से किया करतेहैं (वह मणिकर्णिका धन्यहै)—

दोहा—अद्यावधि शवदाह लगि, मणिकर्णिकापर आय ।
बैठि अठारह गोंटियाँ, खेलि सबै गृह जाय ॥ ४७ ॥

स्कन्दने कहा—हे अगस्त्य ! पार्वतीदेवी इसप्रकारसे काशीपुरीका वर्णन क
फिर वहाँ जानेकेलिये महादेवसे प्रार्थना करनेलगीं ॥ ४८ ॥ श्रीपार्वतीने कहा—
प्रमथनाथ ! सर्वेश्वर ! आपतो सर्वदा स्वाधीन वृत्तिही रहतेहैं, हे वरदायक ! जिस
आनन्दवनमें चलसकें वही (उपाय) करदीजिये ॥ ४९ ॥ महादेव, इसप्रकार
अमृतकी मधुरताको जीतनेवाली तथा काशीके गुणगानसे मनोहर, गिरिजादेवीकी
वाणी सुन अत्यंत मुदित होकर कहनेलगे ॥ ५० ॥ श्रीभगवान् शिवने कहा—अ
प्रिये ! गौरि ! मैं तुम्हारे इन वचनामृतके फुहारोंसे बहुतही तृप्त होगया अब क
चलनेका उद्योग करताहूं ॥ ५१ ॥ परन्तु हे महादेवि ! तुम तो मेरे इस कठोर
को भलीभाँतिसे जानतीहो कि, मैं दूसरेकी उपभुक्त वस्तुका कभी उपभोग नहीं क
॥ ५२ ॥ ब्रह्माके कहनेसे वह राजा दिवोदास धर्मपूर्वक काशीका शासन करत
(फिर वहां चलनेका) कौन उपाय कियाजावे ॥ ५३ ॥ और प्रजापालनमें त
धर्मनिष्ठ, भूपाल वह राजा दिवोदास काशीपुरीसे क्योंकर हटाया जासकताहै ॥ ५४
हे देवि ! जो पापी होताहै उसीपर विघ्न पडताहै, धार्मिकका तो उससे कुछ होई
सकता, अतएव वहाँ किसे भेजें जो जाकर उसे काशीसे पृथक् करदेवे ॥ ५५

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हे प्रेमवर्द्धिनि ! धर्ममार्गानुसारी जनोंपर जो विघ्न डालताहै, वह विघ्न उस कर्ताहीके ऊपर पडजाताहै (धार्मिकलोगोंका उससे कुछभी नहीं बिगड सकता) ॥ ५६ ॥ मैं जबतक उस राजामें कोई धर्मका छिद्र नहीं पाऊँगा तबतक वहाँसे उसे नहीं निकाल दिया चाहता, क्योंकि हे प्रिये ! धर्मधुरंधरोंकी रक्षा तो मुझीको करनी उचितहै ॥ ५७ ॥ इससंसारमें धार्मिक लोगोंको जरा अतिक्रमण नहीं करसकती, न मृत्युही मारसकतीहै, और न कोई व्याधियाँही उसे बाधा पहुँचा सकती हैं ॥ ५८ ॥ महादेव यह कहतेहुए सोच विचार करही रहेथे, इसी बीचमें बडे कठिन कार्योंके साधनमें परमप्रौढ, योगिनी मंडलके अपने सन्मुख दिखलाई पडजानेपर ॥ ५९ ॥ भगवतीसे परामर्श कर भगवान् व्योमकेशने योगिनीगणको बुलाया, हे महामुने ! तदनंतर शिवने यह कहा ॥ ६० ॥ हे योगिनीगण ! तुम लोग अभी मेरी वाराणसी पुरीमें चली जाओ, वहाँपर राजा दिवोदास धर्मपूर्वक राज्यका शासन कररहाहै ॥ ६१ ॥ सो तुम लोग स्वयं जानकार हो वहाँजाकर योग और मायाके बलसे जिसमें वह राजा स्वधर्मसे भ्रष्ट होकर शीघ्रही काशीको छोडदे वह उपाय करतीजाओ ॥ ६२ ॥ हे योगिनीगण ! जैसे होसके मैं वाराणसीपुरीको फिरसे नई बनाकर यहांसे चलदूं, यह प्रबंध शीघ्रही होनाचाहिये ॥ ६३ ॥ योगिनीगणने इस प्रकारसे महादेवका प्रसाद पाय, उनकी आज्ञाको शिरोधार्य कर, प्रणाम करनेके उपरान्त वहांसे प्रस्थान किया॥६४॥ वे सब बडे आनंदसे परस्पर वार्तालाप करतीहुई आकाशमार्गमें मनकी नाईं अत्यंत वेगसे उडचलीं ॥ ६५ ॥ वे सब मार्गमें यही बतियाती जातींथीं कि, आज हमलोग परमधन्यहैं जो स्वयं देवदेवने अनुग्रह करके हम सबको श्रीमती काशीपुरीमें भेजदिया है ॥ ६६ ॥ आज हमलोगोंको ये दोनोंही अतिदुर्लभ महालाभ प्राप्तहुए—एक तो भगवान्का राजसंमान और दूसरा काशीका दर्शन ॥ ६७ ॥ इसरीतिसे प्रसन्नचित्त वह योगिनीगण मन्दराचलके कुंजभवनसे निकलकर आकाशपथमें बडे वेगसे उडता हुआ अल्पसमयमें दूरहीसे उस पुरीको अपने नयनोंकी पाहुनी बनानेलगा ॥ ६८ ॥

दोहा—होय वियोगी योगिवर, विश्वेश्वर महाराज ।
बोलि योगिनी मण्डलहि, पठये साधन काज ॥ १ ॥
काशी वियोगानलतप्तचेता विश्वेश्वरोऽभूयदि योगिराजः ।
अस्मादृशां पामरपुंगवानां, कथा वृथा स्यादिह सर्वथैव ॥ २ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां विश्वेश्वरकाशीविरह—योगिनीगणप्रस्थानवर्णनं नाम चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४४ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पैंतालीसवाँ अध्याय।

योगिनीमण्डलका काशीमें प्रवेश।

कार्तिकेय बोले—इसके अनन्तर योगिनीगणने दूरहीसे दृष्टिको फैलाकर काशीके दर्शनसे सफल अपने अपने नेत्रोंके बडप्पनकी बडाईको वर्णन किया ॥ १ ॥ (फिर देखा कि वह काशी) अत्यंत ऊंची अटारियोंकी पंक्तिके ऊपर उडतीहुई पताकाओंके हिलतेहुए अग्रभागसे मानों अपने दूरदेशस्थित पथिकोंको सादर बुला रहीहै ॥ २ ॥ और उन अटारियोंमें लगेहुए मणिमाणिक्योंके चमकीले किरणोंसे अत्यंत नीले आकाश मंडलकोभी जगमगाकर निर्मल कियेदेतीहै ॥ ३ ॥ ऐसी काशीको देखतीहुई वे सब योगिनियाँ मायाबलसे अपने अपने देवतारूपको छिपाकर बनौआ जोगिनका वेष धर इधर उधरसे उस नगरीमें प्रवेश करने लगीं ॥ ४ ॥ कोई जोगिन, कोई तपस्विनी, कोई परगृहवासिनी, कोई एकमासका चान्द्रायण-व्रत करनेवाली ॥ ५ ॥ कोई मालिन, कोई नाइन, कोई दाई, कोई चिकित्सावाली ॥ ६ ॥ कोई क्रयविक्रयमें निपुण बनियांइन, कोई साँप पकडनेवाली (मदारिन) कोई धाय, कोई दासी ॥ ७ ॥ कोई नर्तकी, कोई कथकिन, कोई बाँसुरी बजा-नेवाली, कोई वीणामें प्रवीण, ॥ ८ ॥ कोई मृदंगवादिनी, कोई तालकी कलामें चतुरा, कोई टोटका (टोना) करनेवाली, कोई मोती गूँथनेमें निपुण पटहारिन ॥ ९ ॥ कोई सुगन्धबेंचनेवाली गन्धिन, कोई पाँसाफेंकनेमें दक्ष, कोई वार्तालापमें कुशल, कोई आँगन आँगन घूमनेवाली अवधूतिन, ॥ १० ॥ कोई बाँसपर चढ़-नेवाली अथवा रस्सीपर चलनेवाली नटिन, कोई मार्गमें चिथडा लपेटकर पागलकी ऐसी ॥ ११ ॥ कोई सन्तानहीन लोगोंको पुत्रदेनेवाली, कोई हाथोंकी रेखाको देखकर फल बतानेवाली ॥ १२ ॥ कोई चितेरी (मुसव्विरा) होनेसे लोगोंके मनोहारिणी, कोई वशीकरण मन्त्रको जाननेवाली, ॥ १३ ॥ कोई गुटिकासिद्धि कोई अंजनसिद्धि, कोई रसायनसिद्धि, कोई पादुकासिद्धिकी दानियाँ ॥ १४ ॥ कोइ अग्निस्तंभ, कोई जलस्तंभ, कोई वचनस्तंभकी सिखानेवाली, कोई खेचरीमुद्रा देनेवाली, कोई अदृश्य बनानेवाली ॥ १५ ॥ कोई आकर्षणसिद्धिकी देनेवाली, कोई उच्चाटन करदेनेवाली, कोई अपने अंगोंकी सुषमासे जवानोंका चित्त चुरानेवाली ॥ १६ ॥ कोई ज्योतिषकलामें प्रवीण और कोई इच्छित अर्थकी देनेवाली—इन सब वेषोंको धारणकर तदनुरूप भूषा और भाषासे सुसज्जितहो ॥ १७ ॥ वह योगिनीमंडल

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रत्येक गृहस्थोंके घर घर जा घुंसा, परन्तु इसीभाँति एकवर्षपर्य्यन्त उस काशी-नगरीमें अहर्निश विचरण करते रहनेपरभी ॥ १८ ॥ राजा दिवोदासके अनिष्टसाधनके लिये कोईभी छिद्र न पासका, पश्चात् वे सब योगिनियाँ वांच्छितार्थके व्यर्थ होजानेसे एकत्रित हो, परस्पर विचारकर फिर मन्दराचलपर नहीं लौटीं वरं काशीहीमें वास करनेलगीं ॥ १९ ॥ कारण यह कि राजसभामें क्रियाचतुर कहाकर लब्धसन्मान ऐसा कौनजन है जो स्वामीका कार्य बिना संपन्न किये जीतेजी उसके सन्मुख अपना मुख करसके ॥ २० ॥ हे मुनिवर ! उन जोगिनियोंने औरभी एक बात विचारी कि, हम सब प्रभुके पास न रहकरभी जीसकतीहैं पर बिना काशीके प्राण बंचना कठिनहै ॥ २१ ॥ क्योंकि स्वामी तो रुष्ट होकर सेवककी केवल जीविकाहीको छोरलेसकताहै पर जब काशी हाथसे छूटगयी तो धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, ये चारोंही पुरुषार्थ हिरागये ॥ २२ ॥ हे मुनिनाथ ! वे सब उसीदिनसे त्रैलोक्यभर्में भ्रमण करते रहनेपरभी काशीको छोडकर आजलों कहीं अन्यत्र नहीं रहतीं ॥ २३ ॥ जो दुर्बुद्धिजन एकबार श्रीमती काशीपुरीको पाकर फिर छोडदिया चाहताहै, वह स्वयं (आपही) चतुर्वर्गसे त्यागकर दियाजाताहै ॥ २४ ॥ कौनसा मूढ तुच्छ लक्ष्मीके वशीभूत होकर मोक्षरखनेकी कलसीरूपा काशीको छोडकर अन्यत्र जाया चाहताहै ? ॥ २५ ॥ परमेश्वर हम लोगोंसे विमुख होनेपरभी काशीसेवनके पुण्यबलसे अवश्यही सन्मुख होजावेंगे फिर तो हम सब कृतकृत्यही हैं ॥ २६ ॥ थोडेही दिनोंमें सर्वान्तर्यामी भगवान् त्रिलोचनभी यहांही आजावेंगे, क्योंकि बिना काशीके अन्यत्र कहींभी उनको आनन्द नहीं मिलताहै ॥ २७ ॥ यह काशी क्षेत्र भगवान् शिवकी कोई अलौकिक शक्तिहै जिसे सबकोई गोचर नहीं करसकते, क्योंकि इसके यथार्थसुखका अनुभव केवल शंकरही करसकतेहैं ॥ २८ ॥ इसरूपसे मनमें निश्चयकर वह योगिनीगण बडी मायासे आवृत होकर महादेवके उस आनंदवनमें निवास करनेलगा ॥ २९ ॥ व्यासने कहा—इन सब बातोंको सुनकर अगस्त्यऋषिने फिर स्वामिकार्तिकेयसे पूँछा कि, हे भगवन् ! उन योगिनियोंके कौन कौनसे नामहैं उन्हें कहिये ॥ ३० ॥ और यहभी बतलाइये कि काशीमें उन योगिनियोंके पूजन करनेसे कौन फल प्राप्त होताहै ? एवं किस पर्वमें उनकी पूजा अवश्य करनी चाहिये ? तथा उनकी पूजाकी क्या विधिहै ? ॥ ३१ ॥ इसप्रकारसे योगिनियोंके विषयमें अगस्त्यऋषिका प्रश्न सुनकर पार्वतीनन्दन स्कन्दने उत्तर दिया कि हे मुनिवर !

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यह सब मैं कहताहूं, आप सावधान होकर श्रवणकरें ॥ ३२ ॥ षडाननने कहा-हे कुम्भज ! मैं योगिनियोंके नाम कहताहूं, जिनके सुननेसे जन्मधारी लोगोंके पाप (आपसे आप) तुरतही क्षय होजातेहैं ॥ ३३ ॥ गजानना, सिंहमुखी, गृध्रास्या, काकतुंडिका, उष्ट्रग्रीवा हयग्रीवा, बाराही, शरभानना ॥ ३४ ॥ उलूकिका, शिवा, रावा, मयूरी, विकटानना, अष्टवक्रा, कोटराक्षी, कुब्जा, विकटलोचना ॥ ३५ ॥ शुष्कोदरी, लोलजिह्वा, श्वदंष्ट्रा, वानरानना, ऋक्षाक्षी, केकराक्षी, बृहत्तुंडा, सुराप्रिया ॥ ३६ ॥ कपालहस्ता, रक्तनेत्रा, शुकी, श्येनी, कपोतिका, पाशहस्ता, दंडहस्ता, प्रचंडा, चंडविक्रमा ॥ ३७ ॥ शिशुघ्नी, पापहन्त्री, काली, रुधिरपायिनी, वसाधया, गर्भभक्षा, शवहस्ता, अंत्रमालिनी ॥ ३८ ॥ स्थूलकेशी, बृहत्कुक्षी, सर्पास्या, प्रेतवाहना, दंदशूककरा, क्रौंची, मृगशीर्षा, वृषानना ॥ ३९ ॥ व्याघ्रास्या, धूम्रनिःश्वासा, व्योमैकचरणा, उर्ध्वदृक्, तापनी शोषणीदृष्टि, कोटरी, स्थूलनासिका ॥ ४० ॥ विद्युत्प्रभा, बलाकास्या, मार्जारी, कटपूतना, अट्टाट्टहासा, कामाक्षी, मृगाक्षी, मृगलोचना ॥ ४१ ॥ जो मनुष्य इन चौसठों नामोंको प्रतिदिन त्रिकाल जपकरे उसकी दुष्ट बाधा शान्त होजातीहै ॥ ४२ ॥ इन सब नामके पाठकरनेसे डाकिनी, शाकिनी, कूश्मांड, और राक्षसगण किसीप्रकारका उपद्रव नहीं करसकतेहैं ॥ ४३ ॥ ये सब (चौंसठों) नाम बालकोंके शान्तिकारक, गर्भोपद्रवोंके निवारक एवं राजसभा, तथा विवादमें विजय दायक होतेहैं ॥ ४४ ॥ जो कोई योगिनी पीठका सेवन करताहै, उसके सभीमनोरथ सिद्ध होजातेहैं, एवं उस योगिनी पीठमें यदि दूसरे मन्त्रको जपे तो वहभी शीघ्रही सिद्धिको प्राप्त होवे ॥ ४५ ॥ धूप, दीप, बलि, और उपहारादिके द्वारा योगिनियोंकी पूजा करनेसे वे सब शीघ्रही प्रसन्न होकर मनोरथोंको पूर्ण करदेतीहैं ॥ ४६ ॥ जो मन्त्रवेत्ता योगिनी पीठपर शरत्कालमें विधानपूर्वक महापूजा करके घृतका हवन करे, उसे वह सिद्धि प्राप्त होतीहै ॥ ४७ ॥ आश्विन मासके शुक्लप्रतिपदासे आरंभ कर नवमीतिथिपर्य्यन्त जो नर योगिनियोंका पूजन करे वह अपने चिन्तितसिद्धिको पाजाताहै ॥ ४८ ॥ जो उत्तमजन, वहांपर कृष्णपक्षकी चतुर्दशीको उपवासी होके रात्रिमें जागरण करताहै उसके सभी अभीष्ट सिद्ध होतेहैं ॥ ४९ ॥ जो भक्तिमान् नर इन सब नामोंके आदिमें प्रणव और अन्तमें चतुर्थी विभक्ति लगाके शरत्कालमें झरबैरियाके फल समान घृत सहित गुग्गुलसे प्रत्येक (नाम) पर अष्टोत्तर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शत हवन करे, वह जो जो सिद्धि चाहे सो सो सब प्राप्त करसकताहै ॥ ५०॥५१ ॥ चैत्रमासकी कृष्णप्रतिपदामें क्षेत्रकी विघ्नशान्तिके लिये पुण्यात्मा जनको प्रयत्न-पूर्वक यात्रा करनी चाहिये ॥ ५२ ॥ जो काशीवासी अनादर करके चतुःषष्टी योगिनियोंकी इस वार्षिक यात्राको नहीं करता वे सब उसे विघ्न देतीहैं ॥ ५३ ॥ योगिनीगण काशीमें मणिकर्णिकाको आगे करके अवस्थान करतीहैं, मनुष्य उन सबोंके नमस्कार मात्रसे विघ्न बाधामें नहीं पडताहै ॥ ५४ ॥

दोहा—श्रीचौंसठी घाटपर, धुरहड्डीके पर्व ।
दरस परस कीन्हें कटै, पाप विघ्न दुख सर्व ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां योगिनीमण्डल—काशीप्रवेशवर्णनं नाम पंचचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४५ ॥

छयालीसवां अध्याय ।

लोलार्ककी कथा ।

कार्तिकेय बोले—हे घटयोने ! योगिनी गणके चलेजानेपर महादेवने फिरभी काशीके समाचार जाननेकी इच्छासे सूर्यदेवको भेजा ॥ १ ॥ देवदेवने कहा—हे दिवाकर ! धर्मावतार राजा दिवोदास जहाँपर राज्य कररहाहै उसी पवित्र वाराणसी पुरीमें तुम शीघ्रही गमन करो ॥ २ ॥ जिसमें उसी राजाके धर्मविरोधसे वह क्षेत्र उजाड होजावे वही प्रयत्न शीघ्र करो, परन्तु उस राजाका अपमान न होनेपावे ॥ ३ ॥ क्योंकि धर्ममार्गानुसारी जनका अनादर करदेनेसे स्वयं अपनाही अपमान होजाताहै और भारी पापका बोझ उठाना पडताहै ॥ ४ ॥ हे भानो ! यदि तुम्हारे बुद्धिबलसे वह राजा किसी प्रकारसे धर्मच्युत होसके तो तुम अपने दुःसह किरणोंसे उस नगरीको उजाड करदेना ॥ ५ ॥ काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, और मत्सर ये सब कोईभी उसे अपने वशमें नहीं करसकते, औरोंको कौन कहे स्वयं कालभी उसे नहीं जीतसकता ॥ ६ ॥ जबतक मनुष्योंकी बुद्धि और मन धर्ममें स्थिर रहताहै तबतक विपत्तिकालमेंभी उन लोगोंपर विघ्न नहीं पडसकता ॥ ७ ॥ हे सूर्य ! तुम तो संसारमें सभी जन्तुओंकी चेष्टाओंको जानतेहो इसीसे तुम जगच्चक्षु कहेजातेहो सो तुम (मेरे) इस कार्यसिद्धिके लिये (वहां)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जाओ ॥ ८ ॥ इसके अनंतर सूर्यने महादेवकी आज्ञा पाकर व्योम चारिणी अपनी दूसरी मूर्ति रात्रि दिनकेलिये बनाकर काशीकी ओर गमन किया ॥ ९ ॥ उसवेला वे काशीकी दर्शनलालसासे अत्यंत उत्सुक होकर (सूर्य) सहस्रचरण होनेपरभी असंख्य चरण होनेके अभिलाषी होगये ॥ १० ॥ काशीके प्रति यात्राकरनेकी इच्छा करतेहुए, सर्वदा आकाशमार्गके पथिक सूर्य नारायणका "हंस" यह नाम उसीसमय सफल हुआ ॥ ११ ॥ इसके पश्चात् सूर्यदेव काशीमें पहुँचकर भीतर और बाहर दोनोंही ओर विचरण करते रहनेपरभी उस राजाके विषयमें तनिकभी अधर्म नहीं देखसके ॥ १२ ॥ सूर्यभगवान् अनेकरूप धारण करके काशीमें रहते हुए उस धर्मनिष्ठ राजामें एकवर्ष पर्यंत कोईभी अवसर नहीं पासके ॥ १३ ॥ अन्ततो गत्वा एकबार अतिथि होकर दुर्लभ वस्तुकी प्रार्थना करनेलगे, परन्तु उस राजाके राज्यमें कुछभी दुर्लभ नहीं देखसके ॥ १४ ॥ सूर्यदेव कभी भिक्षुक बनते, कभी दाता होजाते, कभी स्वयं दीन होकर विचरण करते, किसीदिन ज्योतिषी बनजाते ॥ १५ ॥ कभी कभी (लोगोंसे शास्त्रका कुटिल अर्थ करके) वेदके विरुद्ध क्रियाको प्रतिपादन करते, किसीसमय नास्तिकोंके समान केवल ऐहिक प्रत्यक्ष ज्ञानके विषय वस्तुओंहीको समर्थन करते ॥ १६ ॥ कभी जटाधारी होते, किसीवेला दिगंबर बनजाते कभी विषविद्या विशारद जांगलिक (विषझाडनेवाला मँदारी) होजाते ॥ १७ ॥ किसी समय बडेही पाखंड धर्मके ज्ञाता बनते कभी ब्रह्मवादी होकर ब्रह्मही का निरूपण करने लगजाते कभी ऐन्द्रजालिक बनकर लोगोंका मनमोहन करते ॥ १८ ॥ कभी कभी नानाविध व्रतोंके उपदेश तथा अनेक दृष्टान्त सहित कथाओंसे पतिव्रता स्त्रियोंको क्षोभित करदेते ॥ १९ ॥ कभी अघोरी होते, कभी ब्राह्मण बनकर अनुष्ठान करते, किसीवेला ब्रह्मज्ञानी बनजाते, कभी रसायन सिद्ध करते ॥ २० ॥ कभी ब्राह्मण, कभी राजकुमार, कहीं व्यापारी वैश्य, कहीं अंत्यज, कहीं ब्रह्मचारी, कहीं गृहस्थ, कहीं वानप्रस्थ ॥ २१ ॥ कभी संन्यासी, कभी सर्वविद्या निधान सर्वज्ञ बनकर लोगोंको अपने रूपोंसे भ्रमजालमें डालदेतेथे ॥ २२ ॥ इसप्रकारसे ईश्वर सूर्य काशीमें (रात्रिदिन) अपने इन अनेक विध रूपोंको बनाकर भ्रमण करते रहनेपर भी कभी कहींपर किसी मनुष्यमें कोई दोष नहीं पासके ॥ २३ ॥ अन्ततो गत्वा कश्यपनन्दन चिंताग्रस्त होकर अपनीही निन्दा करनेलगे वस्तुतः परा धीनताको धिक्कारहीहै क्योंकि उसमें कभी यश नहीं पायाजासकता ॥ २४ ॥ सूर्य

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कहा—यदि मैं अभी मन्दराचलपर चलाजाऊं तो महेश्वर भगवान् सामान्य सेवककी नाईं अपने कार्यको असाधित देखकर मुझपर अवश्य क्रुद्ध होवेंगे ॥ २५ ॥ इसपर भी यदि मैं उनका कोप अपने ऊपर ओढकर किसी प्रकारसे वहाँ चलाजाऊं तो उन के आगे अधमसेवकके समान कैसे खडा होसकूंगा ? ॥ २६ ॥ अथचेत् इस अपमानकोभी सहकर मैं किसीप्रकारसे जारहूंगा तोभी यदि भगवान् त्रिलोचन एकबारभी क्रोधसे मेरी ओर ताकदेंगे तो मुझे विषही पीना पडेगा ॥ २७ ॥ क्योंकि यदि मैं महादेवके कोपानलमें पतंग बनजाऊंगा तो उसघडी मुझे स्वयं विधाताभी नहीं बचासकते यह बात अत्यंत स्पष्टहीहै ॥ २८ ॥ अतएव अब तो यहांहीपर रहजाऊंगा और इसी काशीमें आश्रम बनाकर क्षेत्र संन्यासकी रीतिसे इसे कभी नहीं छोडूंगा ॥ २९ ॥ एवंच त्रिपुरारिके निकट कार्यके सिद्ध अथवा असिद्ध होनेका समाचार न सुनाकर यहांहीपर बैठे रहजानेसे जो पाप होगा उसे काशीही विनष्ट करसकतीहै ॥ ३० ॥ क्योंकि सज्जनोंके काशीमें प्रवेश करतेही और और सब पापभी चाहे छोटे हों अथवा बडेहों आपही क्षय होजातेहैं ॥ ३१ ॥ और फिर मैंने तो जान बूझकर इस पापको अपने मनसे कियाही नहींहै क्योंकि भगवान् शिवनेही तो यह आज्ञा दीहै कि प्रथम (अपनेही) धर्मकी रक्षा करनी चाहिये ॥ ३२ ॥ जिसने इस क्षणभंगुर शरीरमें धर्मकी रक्षा कीहै, वह तो (मानो) त्रैलोक्यकी रक्षा करचुका इन काम और अर्थादिकोंके रक्षणसे कौन फलहै ? ॥ ३३ ॥ यदिचेत् कामहीका प्रतिपालन करना उचित होता तो बहुतोंके सुखसाधन उस कामको स्वयं शंकर काम शत्रु होकर अनंग क्यों बनादेते ? ॥ ३४ ॥ कोई कोई कहतेहैं कि, अर्थकी सर्वथा रक्षा करनी चाहिये, परन्तु राजा हरिश्चन्द्रने विश्वामित्रके विषयमें क्यों नहीं अर्थकी रक्षा की ? ॥ ३५ ॥ परन्तु दधीचि आदि ब्राह्मण तथा शिवि इत्यादि राजाओंने अपना शरीर गँवाकर धर्महीको रक्षित रक्खा—

श्लो०—"त्वचं कर्णः, शिबिर्मांसं, जीवं जीमूतवाहनः ।
ददौ दधीचिरस्थीनि, किन्न देयं महात्मनाम् (टीका)" ॥ ३६ ॥

यह काशी सेवन जनित धर्मही मुझे रुद्रदेवके कोपानलसे बचावेगा, इसमें कुछ सन्देह नहीं है ॥ ३७ ॥ कौन सचेतन व्यक्ति परमदुर्लभ काशीधामको पाकर फिर उसे छोडसकताहै ? (भला) ऐसा कौन होगा जो हाथमें धरेहुए रत्नको फेंककर कांच लिया चाहेगा ? ॥ ३८ ॥ जो कोई वाराणसीको त्यागकर अन्यत्र कहींपर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जाया चाहताहै वह तो मानों अमूल्य निधिको लातमारकर भिक्षासे अर्थसंचयकी इच्छा करताहै ॥ ३९ ॥ संसारमें पुत्र, मित्र, कलत्र, क्षेत्र, और धनादिक तो प्रत्येक जन्ममें मिलसकतेहैं, परन्तु एक काशीही नहीं मिलती ॥ ४० ॥ जिस भाग्यवान् जनने त्रैलोक्यके उद्धार करनेमें समर्थ काशीपुरीको प्राप्त करलिया, उसे त्रिभुवनके ऐश्वर्यमें दुर्लभ महासुखही हाथ लगगया ॥ ४१ ॥ भगवान् रुद्र क्रोधित होकर मेरे (बाहरीही) तेजकी हानि करदेंगे, परन्तु मैं यदि काशीमें रहजाऊंगा तो उस आत्मज्ञान जनित परमतेजको पासकूंगा ॥ ४२ ॥ जबलों काशी (सेवा) जनित प्रकाशका विकास नहीं होता तभीलों जुगुनूके समान दूसरे तेज टिमटिमाते रहतेहैं ॥ ४३ ॥ इस प्रकारसे काशीप्रभावके ज्ञाता, तमोध्वंसक सूर्यदेव अपनी बारह मूर्तियाँ बनाकर काशीपुरीहीमें टिकगये ॥ ४४ ॥ (उनके ये नामहैं) लोलार्क, उत्तरार्क, साम्बादित्य, द्रुपदादित्य, मयूखादित्य ॥ ४५ ॥ खखोल्कादित्य, अरुणादित्य, वृद्धादित्य, केशवादित्य, विमलादित्य, गंगादित्य, ॥ ४६ ॥ और यमादित्य, हे अगस्त्य ! ये बारहों आदित्य काशीपुरीमें तामस दुष्ट पापियोंसे सब क्षेत्रकी रक्षा करते रहतेहैं ॥ ४७ ॥ आदित्य भगवान्का मन काशीके दर्शनमें अत्यंत लोल होगयाथा—इसीसे वहाँपर सूर्यका नाम लोलार्क पडगया ॥ ४८ ॥ (क्षेत्रके) दक्षिणदिशामें असिसंगमके समीपही लोलार्क विराजमानहैं, उनके द्वारा काशीवासियोंका सदा योगक्षेम होतारहताहै ॥ ४९ ॥ अगहन मासके किसी आदित्य वारको सप्तमी अथवा षष्ठी तिथिको लोलार्ककी वार्षिकी यात्रा करके मनुष्य समस्त पापोंसे छुट्टी पाजाताहै—

दोहो—"होत लोलारक छट्ठ जो, भादोंके सितपच्छ ।
मूल चिन्तिये ताहिको, ग्रन्थनि ढूँढिय दच्छ ।
प्रायः अगहन मासमें, भानु सप्तमी होय ।
पर लोलारक छट्ठ सम, विदित न मेला सोय" ॥ २ ॥ ५० ॥

लोगोंके एकवर्ष भरके सञ्चित समस्त पाप इस भानुषष्ठी पर्वमें लोलार्कके दर्शन करनेहीसे क्षणमात्रमें विध्वंस होजातेहैं ॥ ५१ ॥ जो मनुष्य असिसंगमपर स्नानकर पितर और देवतोंका तर्पण तथा श्राद्ध करताहै वह पितृऋणसे छूटजाताहै ॥ ५२ ॥ लोलार्क (कुंडके समीप—असि) संगमपर स्नान, दान, होम, और देवतापूजन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इत्यादि जो कुछ कर्म कियाजावे वह सब अनन्त फलदायक होताहै ॥ ५३ ॥ सूर्यग्रहणके समय लोलार्क (कुंड) पर स्नान दानादिक क्रियाओंके करनेसे कुरुक्षेत्रका दशगुना फल निस्सन्देह प्राप्त होताहै ॥ ५४ ॥ माघमासकी शुक्ला सप्तमीके दिन गंगा और असिके संगमपर लोलार्ककुंडमें स्नान करनेसे मनुष्य अपने सात जन्मके संचित पापोंसे तुरंत मुक्त होजाताहै ॥ ५५ ॥ जो कोई पवित्रव्रत धारण कर प्रतिरविवारको लोलार्कका दर्शन करताहै उसे इसलोकमें कभी कोई दुःख नहीं भोगना पडता ॥ ५६ ॥ एवं प्रतिरविवारको लोलार्कका दर्शन कर उनका पादोदक सेवन करनेवालेको दाद, और खुजली इत्यादि रोग तथा दुःख (कभी) नहीं होते ॥ ५७ ॥ जो कोई काशीमें रहकरभी लोलार्कका सेवन नहीं करता, उसे क्षुधा और व्याधियोंसे उत्पन्न अनेक क्लेश अवश्यही भोगने पडतेहैं ॥ ५८ ॥ लोलार्क काशीके समस्त तीर्थोंमें प्रथम शिरोदेश भागहै, और दूसरे तीर्थ अन्य अंगोंके समानहैं क्योंकि सभी (तीर्थ असिके) जलसे धोयेगयेहैं ॥ ५९ ॥ भूमंडलके जितनेही दूसरे तीर्थहैं वे सबके सब इस असिसंगमतीर्थके सोलहभागमें एकभागकेभी समान होने योग्य नहींहैं ॥ ६० ॥ समग्र तीर्थोंके स्नान करनेसे जो फल पायाजाताहै—इस गंगा और असिके संगम स्थलमें नहानेसे वही फल पूर्णरूपसे मनुष्योंको प्राप्त होताहै ॥ ६१ ॥ हे मुने ! यह न तो अर्थवादहै, और न स्तुतिवादहै, पर यह सत्यही यथार्थवादहै, अतएव साधुजनोंको सादर श्रद्धा करनी चाहिये ॥ ६२ ॥ जहाँपर साक्षात् भगवान् विश्वनाथ विराजमानहैं, और स्वयं स्वर्गतरंगिणी गंगा बहरहीहैं, उस पुण्यक्षेत्र पर ईर्ष्या करनेवाले कुतार्किक लोगही व्यर्थका अनुमान लडातेहैं ॥ ६३ ॥ जो मूर्ख लोग अपने कुतर्क—बलके अभिमानी बनकर काशीके विषयमें इन बातोंको अर्थवादही समझतेहैं वे सब युगयुगमें विष्ठाके कृमि होकर कदापि सद्गतिनहीं प्राप्तकरसकते ॥ ६४ ॥ हे मुनिवर ! समस्त त्रैलोक्य मंडलभी कदापि काशीके किसी तीर्थके महिमाकी तुला(तराजू)पर निश्चयही नहीं चढसकताहै ॥ ६५ ॥ अतएव नास्तिक, वेदनिंदक अंत्यज इत्यादि अविधिकार्यकर्ता तथा शिश्नोदरपरायण लोगोंके आगे कभी काशीकी महिमाका वर्णन नहीं करना चाहिये ॥ ६६ ॥ लोलार्कके किरणोंसे संतप्त तथा असिकी धारासे बहुतही खंडित होनेसे बडे बडे पाप काशीमें दक्षिणओरसे कभी प्रवेश नहीं करसकते ॥ ६७ ॥ उत्तमपुरुष, लोलार्ककी इस महिमाके श्रवण करनेहीसे दुःखसागर संसारमें कदापि दुःखभागी नहीं होसकताहै ॥ ६८ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दोहा—अजहुँ लोलारक कुंडमें, प्रति रविवार नहाय ।
पावहिं इच्छित फल सबै, कुष्ठादिकहिं नसाय ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां लोलार्ककथावर्णनं नाम षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४६ ॥

सैंतालीसवाँ अध्याय ।

उत्तरार्ककी वर्णन (अर्थात् बकरिया कुंडकी कथा)

स्कन्दने कहा—काशीके उत्तरदिशामें जो उत्तम अर्ककुंड है वहांपर उत्तरार्क नामक सूर्यभगवान् विराजमान हैं ॥ १ ॥ वे महातेजस्वी उत्तरार्क सूर्य साधुलोगोंके दुःखसंघातको दूर हटाकर परम आनन्द देतेहुए सर्वदा काशीकी रक्षा करते रहतेहैं ॥ २ ॥ हेसुव्रत अगस्त्य ! इन सूर्यके विषयमें एक इतिहास कहताहूं, सुनो, (पूर्व कालमें) आत्रेयवंशोत्पन्न प्रियव्रत नामक कोई एक ब्राह्मण ॥ ३ ॥ काशीमें रहता था, वह सदाचार सम्पन्न और सर्वदा अतिथिजनका परमभक्त था, अत्यंत सुन्दरी शुभव्रता उसकी धर्मपत्नीथी ॥ ४ ॥ वहभी भर्ताकी शुश्रूषाहीको प्रधान धर्म मानकर सदा घर गृहस्तीके कामोंमें चतुरताके साथ वर्तती थी, कालानुसार उसके गर्भसे शुभव्रतने सुलक्षणा नाम्नी एक कन्याको उत्पन्न किया ॥ ५ ॥ उसका जन्म मूलनक्षत्रके प्रथम चरणमें तथा बृहस्पतिके चतुर्थादिकेन्द्र राशिस्थित होनेपर हुआथा, फिर वह कन्या शुक्लपक्षकी चन्द्रकलाके समान पिताके घरमें बढने लगी ॥ ६ ॥ वह कन्या अत्यंत रूपवती और विनय तथा आचारसे पूर्ण होकर मातापिताकी प्रीतिकारिणी एवं घरके कामधंधा और झाडने बुहारनेमें बहुतही निपुण होगयी ॥ ७ ॥ ज्यों ज्यों वह कन्या पिताके गृहमें बढनेलगी त्योंही त्यों उसके पिताकी चिन्ताभी बढतीही चलीगयी ॥ ८ ॥ इस परमसुन्दरी सुलक्षणा कन्याको किसे (ब्याह) देवें कुली, युवा, सुशील, विद्वान्, रूपवान् और धनी—ऐसा सर्वगुणाधार वर इसके योग्य होसकताहै, उसके हाथमें पडनेसे यह सुखभागिनी होगी, पर वैसा सुपात्रवर मुझे कहाँ मिलेगा ? ॥ ९ ॥ १० ॥ इसीभाँतिकी चिन्ता करते करते शुभव्रत अत्यंत दारुण ज्वरसे पीडित होगया, और पुरुषोंका यह चिंताज्वर (कभी किसीभी) औषधसे शान्त नहीं होता ॥ ११ ॥ (अस्तु) कन्याके मूलनक्षत्रमें जन्म लेनेके फलरूप चिन्ताज्वरके होजानेके कारण वह ब्राह्मण गृह इत्यादि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सब कुछ छोडकर परलोकका प्रवासी होगया ॥ १२ ॥ पिताके मरजानेपर उस कन्याकी माताभी स्नेहमयी कन्याको त्यागकर सतीधर्मके अनुसार पतिकी अनुगामिनी होगयी ॥ १३ ॥ सहचारिणीका तो यही धर्महै कि, पति जीवित रहे अथवा मरजावे परन्तु पतिव्रता नारी कदापि उसका साथ देनेसे हटतीही नहीं है ॥ १४ ॥ क्योंकि स्त्रियोंके धर्मकी रक्षा न संतानही करताहै न माता पिता अथवा दूसरे बन्धु बान्धवही करसकतेहैं, तब उसकी रक्षा केवल पतिकी चरणशुश्रूषाही करतीहै ॥१५॥

"मातु पिता भ्राता हितकारी । मितसुखप्रद सुनु राजकुमारी !
अमितदान भरता वैदेही । अधम सो नारि जो सेव न तेही" (तु०रा०) ॥१॥

इसके अनंतर उस (बेचारी) सुलक्षणानेभी परमदुःखसे कातर होकर मृत माता पिताके और्ध्वदैहिक क्रियाको समाप्तकर ज्यों त्यों करके दशाहभी बिताया ॥ १६ ॥ इसके पीछे सुलक्षणा अनाथा होकर दीनतासे रोदन करने लगी, फिर बडी भारी चिन्तामें जापडी कि, मैं माता और पितासे हीनहोकर अकेली होगयी, तो अब इस दुस्तर संसारसागरका पार कैसे पाऊंगी, ? हाय ! यह स्त्रीत्वही सबका मान-नाशकहै ! माता पिताभी मुझे किसीके हाथमें नहीं सौंपगये ॥ १७ ॥ १८ ॥ (अब) इसी घडी उनके बिना दियेही मैं स्वयं अपनी इच्छानुसार किसीको अपना वर कैसे बनालूं, ? यदि मैं किसीसे विवाहही करलूं और वह कुलीन गुण-वान् किंवा शीलवान् न हो ॥ १९ ॥ अथवा मेरे मनके साथ उसका अनैक्य होवे तो फिर उसीको लेकर कैसे निर्वाह होगा ? इस प्रकारकी चिन्तामें व्याकुल वह रूपौदार्य गुणशालिनी सुलक्षणा ॥ २० ॥ अनेक नवयुवकोंके प्रतिदिन वार-वार प्रार्थना करते रहनेपरभी अपने हृदयमें किसीकोभी घुसनेका अवसर नहीं देती थी ॥ २१ ॥ वह कन्या माता पिताकी मृत्युको देख तथा उनकी स्नेहपूर्ण वत्सल-ताको स्मरणकर संसारको असार विचार बहुधा अपनीही निन्दा करतीथी ॥ २२ ॥ हाय ! जिनसे मैं उत्पन्न हुई और जिनने मेरा प्रतिपालन किया आज मेरे वे माता पिता (मुझे छोडकर) कहाँ चलेगये ? ऐसे देहधारीकी अनित्यताको धिक्कार है ॥ २३ ॥ जिस प्रकारसे मेरेही आगे मेरी माता और पिताका शरीर नहीं रहगया यही दशा मेरेभी इसदेहकी होगी यही विचार निश्चितकर वह कन्या सुल-क्षणा इन्द्रिय और मनको जीत, ॥ २४ ॥ कठोर ब्रह्मचर्यको धारणकर, दृढचित्तसे पूर्वोक्त उत्तरार्क सूर्यके समीपमें घोर तपस्या करनेलगी ॥ २५ ॥ उसके तपस्या

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

आरंभ करनेके दिनसे एकठो छोटीसी बकरी प्रतिदिन वहांपर आकर निश्चल भावसे उसके सन्मुख खडी रहतीथी ॥ २६ ॥ फिर जब सन्ध्या होती तब वह बकरी जो कुछ तृण वा पत्ता आदि अनायास मिलजाता उसे खाय और उसी कुंडका पानी पीकर अपने स्वामीके घर चली जातीथी ॥ २७ ॥ इस रीतिसे प्रायः पांच छःवर्ष बीतजानेपर एकबार भगवान् महेश्वर पार्वतीदेवीके सहित यदृच्छाक्रमसे भ्रमण करतेहुए वहाँ जापडे ॥ २८ ॥ और वहींपर उत्तरार्कके निकट तपस्यामें अतिकृश शरीरा स्थाणुके समान निश्चलहो घोरतपस्या करती हुई उस सुलक्षणा को देखनेलगे ॥ २९ ॥ तदनंतर उसे देखतेही भगवती पार्वती करुणार्द्रचित्त हो उस बंधुहीना अनाथा कन्याको वरदानसे अनुगृहीत करनेके लिये अनुरोध करने लगी ॥ ३० ॥ कृपानिधान महादेवनेभी गिरिजादेवीकी बात सुनकर वरदानोन्मुख हो समाधिसे नयनोंको मूँदेहुई सुलक्षणाके प्रति यह कहा ॥ ३१ ॥ हे सुव्रते सुलक्षणे ! बहुत कालसे तपस्या करते करते तू खिन्न होगयीहै, यह देख मैं तुझपर प्रसन्नहूं, तेरा क्या मनोरथ है ? वह वर माँग ॥ ३२ ॥ विश्वनाथके ऐसे अमृतवर्षी और महासंतापनाशक मधुरवचनको सुनकर उस सुलक्षणानेभी अपने नेत्रोंको उघार दिया ॥ ३३ ॥ और देखा कि सन्मुखही साक्षात् भगवान् त्रिलोचन और उनके वामभागमें जगदम्बिका उसे वरप्रदान करनेको उद्यतहैं तुरंत उसने हाथ जोडकर प्रणाम किया ॥ ३४ ॥ फिर वह सुन्दरी कुमारी यह सोचने लगी कि "क्या वरमांगूं" इसी समय उसकी दृष्टि आगेकी ओर उस वराकी (बेचारी) बकरीपर जापडी—(फिर उसने विचारा कि) ॥ ३५ ॥ इस संसारमें ऐसा कौन मनुष्य है जो अपने (प्रयोजन सिद्ध करनेके) लिये जीवन नहीं धारण करता, परन्तु परोपकारके हेतु जो जीताहै उसीका जीवन सार्थकहै ॥ ३६ ॥ इस बकरीने मेरी तपस्याकी साक्षिणी होकर बहुतसमय लों मेरी सेवा की है—अतएव मुझे यही उचितहै कि मैं जगत्पतिसे इसीको वरदान दिलवादूं ॥ ३७ ॥ (बस) सुलक्षणाने मनमें यही स्थिरकर त्र्यंबकसे कहा—हे दयानिधे ! महादेव ! यदि आप मुझे वर देतेहैं तो ॥ ३८ ॥ पहिले इस वराकी बकरीहीपर अनुग्रह कीजिये, क्योंकि यह मेरी भक्तिकरनेमें बडी चतुरहै, पर क्या करैं, पशु होनेके कारण (अपना मनोरथ) कुछभी नहीं कह सकती ॥ ३९ ॥ भक्तभयभंजन भगवानूभूतभावन, सुलक्षणाकी इस निःस्वार्थ और परोपकारसे पूर्ण वाणीको श्रवण कर परमसंतुष्ट हुए ॥ ४० ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तदनंतर शंकरने पार्वतीसे कहा हे देवि ! गिरिजे ! देखो साधुलोगोंकी बुद्धि ऐसीही परोपकारसे भरी रहतीहै ॥ ४१ ॥ समस्त लोकोंमें वेही लोग धन्यहैं और वेही अशेष धर्मोंके अवलंबन स्वरूपहैं, जो सब प्रकारसे परोपकारहीके लिये प्रयत्न करतेहैं॥

दोहा—"धन्य वही सब लोकमें, सब धर्मनकी खानि ।
करैं यत्न सब भावते, पर उपकारहि मानि" ॥ ४२ ॥

हे प्रिये ! समस्त वस्तुओंके संचय कहींभी चिरस्थायी नहीं होते, परन्तु केवल यह परोपकार (स्वरूप महत्पुण्य) ही बहुतदिनोंतक बना रहताहै ॥ ४३ ॥ हे देवि ! यह सुलक्षणा तो परमधन्य और अत्यंत अनुग्रह करनेके योग्यहै, हे प्रिये ! अब तुमही कहो कि इसे और इस बकरीको कौनसा वर देना चाहिये ॥ ४४ ॥ पार्वतीने कहा—हे समस्तसृष्टि कर्ताओंके विधाता ! सर्वज्ञाता ! भक्तार्तिहारी नाथ ! यह शुभोपमा सुलक्षणा तो शुभाचारवती होनेके कारण मेरी सखी होवे ॥ ४५ ॥ जैसी जया, विजया, जयन्ती, शुभानंदा, सुनंदा, कौमुदी, उर्मिला ॥ ४६ ॥ चंपक-माला, मलयवासिनी, कर्पूरलतिका, गंधधारा, शुभा, ॥ ४७ ॥ अशोका, विशोका, मलयगंधिनी, चंदननिःश्वासा, मृगमदोत्तमा ॥ ४८ ॥ कोकिलालापा, मधुरभाषिणी, गद्यपद्यनिधि, अनुक्तज्ञा ॥ ४९ ॥ इंगितज्ञा, कृतमनोरथा और गानमनोहरा प्रभृति सखियाँहैं वैसीही यह सुलक्षणाभी होवे ॥ ५० ॥ एवं यह बालब्रह्मचारिणी होनेसे मेरी बडीही प्यारी होवेगी और यह इसी (पवित्र) शरीरसे दिव्याङ्गादिव्य-भूषणा ॥ ५१ ॥ दिव्यवस्त्रा, दिव्यगंधा और दिव्यज्ञानसे परिपूर्णा होकर सदैव मेरे पासहीमें चंचलचामर धारण किये रहाकरै ॥ ५२ ॥ और यह बकरीभी काशि-राजकी बेटी हो इसलोकके समस्त भोगोंको प्राप्तकर यहांही पर उत्तम मुक्तिको पावेगी ॥ ५३ ॥ हे देव ! इस बकरीने पौषमासके रविवारको अत्यंत शीत पडते रहनेपरभी स्थिरचित्तसे सूर्योदयके पूर्वही इस अर्ककुंडमें स्नान कियाहै ॥ ५४ ॥ हे विश्वेश्वर ! प्रभो ! आपके वरदान—प्रभावसे तथा उस स्नानके पुण्यबलसे यह सुलोचना बकरी काशीराजकी प्यारी (दुलरुई) बेटी होवे ॥ ५५ ॥ और इस अर्ककुंडका नाम आजसे "वकरीकुण्ड" प्रसिद्ध होवे—एवं सब लोग इस बकरीकी मूर्तिको यहांपर पूजा करैं ॥ ५६ ॥ काशीफलाभिलाषी भक्तजन पौषमासके रविवारको इस कुण्ड पर उत्तरार्केदेवकी वार्षिकयात्रा किया करैं ॥ ५७ ॥ इसप्रकारसे भगवती पार्वती देवीके समस्त कथनको पूर्णकर सर्वव्यापक भगवान् विश्वनाथ अपने प्रासादमें चलेगये

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

॥ ५८ ॥ स्कन्द बोले—हेमहाभाग अगस्त्य ! यह तो मैंने लोलार्क और उत्तरार्कका माहात्म्य तुमसे कहा, अब साम्बादित्यका वर्णन करताहूं श्रवण करो ॥ ५९ ॥ जो कोई इन लोलार्क और उत्तरार्ककी पवित्र कथाओंको श्रवण करेगा, उसे व्याधि का अथवा दरिद्रताकी बाधा कभी न होवेगी ॥ ६० ॥

दोहा—यही बकरियाकुंडपै, अंत्यज तुरुक उछाह ।
होत जेठ रविवारको, (गाजीमीयाँ) ब्याह ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां उत्तरार्कवर्णनं नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४७ ॥

अडतालीसवाँ अध्याय ।

साम्बादित्यकी कथा ।

स्कन्द कहनेलगे—हे मैत्रावरुणे ! श्रवणकरो, द्वारकापुरीमें यदुवंशप्रदीप, अग्निसम प्रतापवान् भगवान् कृष्ण, दानवोंका वधकर पृथिवीके भार उतारनेके लिये देवकीके गर्भमें वसुदेवके पुत्र जगद्धाम वासुदेवरूपसे स्वयं अवतार लेकर रहतेथे ॥ १ ॥ २ ॥ हे कुम्भज ! स्वर्गवासियोंकी अपेक्षा अधिक सुशील और अतिमनोहर रूप सौन्दर्य सम्पन्न, अतिशय महाबली, समस्त शस्त्रशास्त्रोंमें अत्यंत निपुण, परमशुभलक्षण अनेक लाख उनके (सुकुमार) कुमार उत्पन्न हुएथे ॥ ३ ॥ ४ ॥ एकबार ब्रह्माके मानस पुत्र, तपोनिधि, वल्कलका कौपीन पहिने, काले मृगचर्मको लपेटे, ब्रह्मदंडको धारण किये, तेहरी मूंजकी मेखलासे युक्त, उरस्थलपर तुलसीकी मालासे विभूषित, अंगोंमें चंदनको समस्त अंगोंमें लेपनाकिये तपश्चर्यासे परमकृश शरीर, मूर्तिमान् अग्निसमान जाज्वल्यमान भगवान् नारदऋषि आकाशमार्गसे विश्वकर्माकी (शिल्प निपुणतासे) निर्मित और स्वर्गपुरीकी शोभाको जीतनेवाली उसद्वारकापुरीमें उनसब कुमारोंको देखने के लिये आये ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ (समस्त यादवनन्दनोंने देवर्षि नारदको देखतेही बडे विनयके साथ झुककर मस्तकपर अंजलि बांध प्रणाम किया ॥ ९ ॥ उन सबोंमें अपने रूप सौन्दर्यके अभिमानसे मोहित होकर एक साम्बही ने नारदके रूप संपत्तिका उपहास करके प्रणाम नहीं किया ॥ १० ॥ मुनिराज नारदजीने साम्बके उस अभिप्रायको समझकर (धीरभावसे) कृष्ण के परमरम्य मंदिरमें गमन किया ॥ ११ ॥ भगवान् कृष्णने नारदको आतेहुए देख अगवानी करके मधुपर्क

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पूजाविधानके अनंतर अपने सिंहासनपर बैठाया ॥ १२ ॥ उनके साथ अनेक प्रकार के विचित्र वार्तालाप होनेपर जब नारदने देखा कि इस समय भगवान् के समीप और कोईभी नहींहै तब (धीरेसे) उनके कानमें(इसभांति)साम्बकी चेष्टाको कह सुनाया ॥१३॥ हे यशोदाके आनन्दवर्द्धक! यद्यपि इस बातकी कोई संभावना नहीं है, परन्तु (साम्बका चरित्र और रूप सौन्दर्य देखनेसे यही प्रतीत होताहै कि यहांपर इन स्त्रियोंके धर्मकी रक्षा होनी बडीही कठिनहै क्योंकि स्त्रियाँ क्या नहीं करडालतीं हैं? "का नहिं अबला करिसकैं, का नहिं सिन्धु समाय" ॥ १४ ॥ (इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहींहै—क्योंकि) साम्ब त्रैलोक्यके समस्त युवकोंमें सर्वापेक्षा अत्यंत सुन्दर रूपवान् है, और इन स्वभावतः चंचलनयनियोंकी मनोवृत्तिभी बहुतही चंचल होतीहै ॥ १५ ॥ ये सब सुन्दर नेत्रवाली, (स्त्रियां) कुल, शील, विद्या, और धनकी तनिकभी अपेक्षा (परवाह) नहीं करतीं, कामसे मोहित होकर केवल रूपही चाहतींहैं ॥ १६ ॥ (बहुत क्या कहें)—क्या आपको गोपियोंकी चेष्टा ज्ञात नहीं है, ? हे कृष्ण ! आपकी आठों पटरानियोंको छोडकर सभी स्त्रियाँ इस (साम्ब) के रूपपर मोहित रहतीहैं ॥ १७ ॥ इसप्रकारसे नारदके कथन और कामिनियोंके चंचल स्वभाव होनेसे समस्त वृत्तान्तोंके परमविज्ञ होनेपरभी कृष्णने (इसबातको) सत्यही मानलिया ॥ १८ ॥ जबतक अपने प्रेमाभिलाषी पुरुषके साथ एकांत स्थानमें मिलन नहीं होता तभीतक चंचलाक्षी गणके (मनमें) धैर्य और विवेककी बुद्धि रहतीहै; परन्तु निर्जनमें प्रार्थीके मिलजानेपर दूसरा कुछ नहीं होसकताहै ॥ १९ ॥ भगवान् कृष्णने इसप्रकारसे विवेचना कर विवेकरूप सेतुसे क्रोधरूपा नदीके प्रबलवेगको रोक नारदऋषिको विसर्जन (बिदा) किया ॥ २० ॥ उस देवर्षिके चलेजानेपर कृष्ण, रात्रिदिन अनुसन्धान लगाते रहनेपरभी कहींपर सांबका कोईभी दोष नहीं देखसके ॥ २१ ॥ कुछदिन बीतजानेपर फिर नारदमुनि द्वारकामें आये, और उसबेला कृष्णको स्त्रियोंके मध्यमें क्रीडासक्त जानकर ॥ २२ ॥ बाहर खेलतेहुए साम्बको बुलाकर यह कहनेलगे कि—अभी कृष्णके पास जाओ, और मेरा आगमन उनसे कहदो ॥ २३ ॥ (यह सुनकर) साम्बभी क्षणमात्र जाऊं कि न जाऊं यह सोचने लगे—स्त्रियोंको संगमें लेकर एकान्तमें विराजमान पिताके पास कैसे जाऊं ॥ २४ ॥ और इस जलतेहुए अंगारके समान जाज्वल्यमान सर्वांगतेजःशाली, परम ब्रह्मचारीके कथनानुसार कैसे न जाऊं ॥ २५ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(क्योंकि) पहिलेही एकबार जब यह आयेथे और समस्त यादव कुमारोंने प्रणाम कियाथा तो मैंने (इनको प्रणाम न करके बहुत) लजवायाथा और इस अवसर परभी यदि मैं इन महामुनिके कहनेसे न जाऊंगा तो ॥ २६ ॥ इन दोनों अपराधोंके देखनेसे यह मेरा बडाभारी अनिष्ट करदेंगे, (इससमय पिताके पास जानेसे उनके क्रोध करनेकी विशेष आशंकाहै परन्तु) पिताका क्रोधभी श्लाघनीय यहै—किन्तु मुझपर ब्राह्मणका कोपकरना कभी अच्छा नहीं है ॥ २७ ॥ क्योंकि जो लोग ब्राह्मणके क्रोधानलसे निर्दग्ध होजातेहैं वे फिर कभी अंकुरित नहीं होसकते—परन्तु दूसरे अग्निसे जलेहुए कभी कभी दावानलके दग्धवनके ऐसे अंकुर फेंकतेभी हैं ॥ १ ॥

"इन्द्र कुलिश मम शूल विशाला । ब्रह्म दंड हरिचक्र कराला ॥
इनकर मारा जो नहिं मरई । विप्र कोप पावक सो जरई" ॥(तु.रा.)॥२८॥

इसभाँति सोच विचार करतेहुए साम्बने अन्तःपुरमें पिताके पास गमन किया-और ज्योंही जांबवतीनन्दन स्त्रियोंकी सभाके मध्यमें विराजमान कृष्ण भगवानको ॥ २९ ॥ दूरहीसे प्रणामकर शंकित चित्तहो (देवर्षिका आगमन) जनानेलगे त्योंही नारदभी अपना कार्य सिद्धकरनेकेलिये पीछे लगेहुए वहांपर पहुँचगये ॥ ३० ॥ कृष्णभी साम्ब और नारदको (आतेहुए) देखकर घबराहटके साथ अपने पीतां वरको पहिनते हुए उठकर खडे होगये ॥ ३१ ॥ देवकीनन्दनके उठकर खडे होजानेपर वे सब नायिकायेंभी अत्यंत लज्जित होकर अपना—अपना वस्त्र लेती (पहिनतीं) हुई उठ खडीहुई ॥ ३२ ॥ अनंतर कृष्णने (आदरके साथ) उन महामुनिका हाथ पकडकर (अपने) बहुमूल्य शय्यापर बैठाया (यह देखकर) साम्बभी अपने क्रीडास्थानपर चलेगये ॥ ३३ ॥ इसीमें नारदजी आगेही उठतीहुई उन सब स्त्रियोंके कृष्णकी लीलासे द्रवीभूत योनियोंके स्खलित उस भावको देखकर कृष्णसे कहनेलगे ॥ ३४ ॥ हे महामते ! देखिये देखिये, सब स्त्रियाँ जाम्बवती नन्दनको देखतेही उनके रूपसे क्षुब्धहृदया होकर स्खलित भावको प्राप्त होगयीहैं ॥ ३५ ॥ कृष्णनेभी अपने पुत्र साम्बको बुलाकर, अहह तुरत शाप देदिया—परन्तु साम्ब इस विषयमें वस्तुतः निर्दोषथे, क्योंकि वह उन स्त्रियोंको जाम्बवतीहीके समान देखतेथे ॥ ३६ ॥ (कृष्णने साम्बको यह दिया) तुम्हारा रूप देखकर ये सब स्त्रियां विचलित भावको प्राप्त होगयीं, और

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बिना अवसरके चलेआये, अतएव अभी कुष्ठी होजावो ॥ ३७ ॥ साम्बभी इस भयंकर महाव्याधिके भयसे काँपतेहुए अपने अपराधकी शांतिके निमित्त कृष्णकी वारंवार स्तुति करनेलगे ॥ ३८ ॥ कृष्णनेभी अपने औरसपुत्र साम्बको कर्मद्वारा निरपराध जानकर कहा कि तुम कुष्ठ छोडानेके लिये विश्वनाथकी नगरीमें चलेजाओ ॥ ३९ ॥ (क्योंकि) बडे बडे पापोंका नाश वाराणसीपुरीको छोडकर दूसरे किसी स्थानपर होही नहीं सकता—अतएव वहाँ जाकर भगवान् सूर्यनारायणकी सम्यक् प्रकार आराधना करनेसे अपने प्रकृतरूपको लाभ करोगे ॥ ४० ॥ जिन जिन महापापोंसे उद्धार होने के उपाय मुनियोंकोभी नहीं सुझाईपडे, उन सबकी विशुद्धिभी जहाँपर साक्षात् भगवान् विश्वेश्वर एवं स्वर्गतरंगिणी गंगा विराजमानहैं, उसी वाराणसी पुरीमें पहुँचतेही हो जातीहै ॥ ४१ ॥ (कारण यह है कि) वाराणसीमें केवल अपने कियेहुए पापोंहीसे छुटकारा नहीं होता, वरन् महादेवकी आज्ञाके बलसे प्रकृतिजनित पापोंसे भी उद्धार होजाताहै ॥ ४२ ॥ पूर्वकालमें भगवान् त्रिपुरारिने अन्तावस्थामें शरीर त्याग करनेवाले समस्त जन्तुओंको मोक्षपानेहीके लिये बडी कृपाकरके उस अविमुक्त क्षेत्रकी रचना कीहै ॥ ४३ ॥ (अतएव) हे साम्ब ! उसी महादेवके आनन्दवनमें तुम्हारे पापका निस्तार होगा—यह मैं सत्य कहताहूं तुम वहाँपर चलेजाओ नहीं तो दूसरी रीतिसे तुम्हारे शापका उद्धार नहीं होसकता ॥ ४४ ॥ इसके अनन्तर समस्त शुभाशुभकर्मोंकी चेष्टाओंसे रहित (जीवन्मुक्त) नारदमुनि कृतकृत्य होकर कृष्णसे पूँछलेनेपर आकाशमार्गसे चलेगये ॥ ४५ ॥ और साम्बभी वाराणसीपुरीमें प्राप्त हो वहां पर (मंदिरसे) पश्चिम ओर कुण्ड बनाकर सूर्यदेवकी आराधना करनेसे फिर पूर्ववत् अपनी प्रकृतिको प्राप्तहुए ॥ ४६ ॥ तभीसे काशीमें सर्वव्याधिविनाशक मूर्तिमान् सूर्यभगवान् समस्त भक्तजनोंको विपत्ति रहित समस्त संपत्तियाँ देतेरहतेहैं ॥ ॥ ४७ ॥ जो मनुष्य आदित्यवारके अरुणोदय कालमें (भक्तिपूर्वक) साम्बकुण्डमें स्नानकर साम्बादित्यकी पूजा करे तो वह कदापि रोगोंसे पीडित नहीं होता ॥ ॥ ४८ ॥ उन साम्बादित्यके सेवन करनेसे स्त्री (कभी) विधवा नहीं होती एवं वन्ध्या (स्त्री) भी शुद्ध (सच्चरित्र) और रूपवान् पुत्रको उत्पन्न करतीहै ॥ ४९ ॥ हे द्विजवर ! (शास्त्र कहताहै कि) माघमासके शुक्लपक्षकी सप्तमीतिथिको रविवार होनेसे सूर्यग्रहणके समान शुभप्रद एक महापर्वका दिन होजाताहै ॥ ५० ॥ उसदिन अरुणोदयकी बेला उस साम्बकुण्डमें स्नानकर साम्बादित्यका पूजन कर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नेसे अतिउत्कट रोगोंकी शान्ति होतीहै, एवं अनंतपुण्य लाभ होताहै ॥ ५१ ॥ सूर्यग्रहणके समय पुण्यजलाशय कुरुक्षेत्रमें स्नान करनेसे जो पुण्य होताहै, माघ मासकी सप्तमी तिथिको रविवार पडनेसे काशीके सूर्य कुण्डमें स्नान करनेसेभी वही पुण्य प्राप्त होताहै इसमें कुछ सन्देह नहींहै ॥ ५२ ॥ चैत्र मासके रविवारको साम्बादित्यकी वार्षिक यात्रा होतीहै, उसदिन जो कोई विधानपूर्वक उस कुण्डमें स्नान करके अशोकके फूलोंसे पूजन करताहै ॥ ५३ ॥ वह मनुष्य कभी शोकसागरमें नहीं पडता, और उसीक्षण वर्षभरके कियेहुए पापोंसे बाहर होजाताहै ॥ ५४ ॥ काशीधाममें विश्वेश्वरसे पश्चिम दिशामें महात्मा साम्बके द्वारा अच्छीरीतिसे आराधना कीगयी जो सूर्यकी मूर्तिहै, वह बडीही मंगलदायिनी है ॥ ५५ ॥ हे अगस्त्य ! मैंने तुमसे यह होनेवाली सूर्यकी मूर्तिका वर्णन कियाहै, जिसके पूजन करने और आठबार प्रदक्षिण करनेसे मनुष्य पापरहित होजाता और (पूर्णरूपसे) काशीवास करनेका फल पाताहै ॥ ५६ ॥ हे महामते ! यह जो साम्बादित्यका माहात्म्य मैंने तुमसे वर्णन कियाहै, मनुष्य इसके सुननेसेभी कभी यमलोकको नहीं देखसक्ता ॥ ५७ ॥ हे अनघ ! अब मैं तुमसे द्रौपदादित्यकी कथा कहताहूं, जिसके सुननेसे मनुष्य वनसे भक्तगण (मनोवांछित) सिद्धिको प्राप्तकर सकतेहैं ॥ ५८ ॥

दोहा—प्रतिरविवारहिं व्रत करै, सूरजकुण्ड नहाय ।
ग्रहपति कर दर्शनकिये, कुष्ठ कष्ट छुटिजाय ॥ १ ॥
चहुँदिसि पाथरसे बनी, एक गुफा एहिठाँम ।
अजहूँ है तोपीपडी, कीन्ह जहाँ तप साम ॥ २ ॥
कच्चे सूरज कुंडमें, पूरब पक्का घाट ।
कोढ छुटेपर भक्त कोउ, बनवायो करि चाट ॥ ३ ॥
काल, करम, जग, धरमके, सूरज हैं गतिहेत ।
देवनमें प्रत्यच्छ ह्वै, वही प्रकट फल देत ॥ ४ ॥

अद्यापि सूर्यं समुपासते यः प्रत्यर्कवारं व्रतपूजनाद्यैः ॥
निहन्ति तस्याशु बहूनि साम्बादित्यस्तु कुष्ठानि रुजस्तथान्याः ॥ ५ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां साम्बादित्यकथावर्णनं नाम अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४८ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उनचासवाँ अध्याय।

द्रौपदादित्य और मयूखादित्यकी कथा।

सूतने पूछा—हे पराशरात्मज ! व्यास ! मुने ! जब कि स्वामिकार्तिकेयने अगस्त्य ऋषिसे इस कथाको कहाथा तब द्रौपदी कहाँथी ? ॥ १ ॥ व्यासनेकहा—सूत ! पुराणकी संहिता भूत भविष्य और वर्तमान तीनों कालोंका वृत्तान्त कहतीहै, क्योंकि यह सब कुछ उसका गोचर विषयहै, अतएव उसमें किसीप्रकारका सन्देह करना उचित नहींहै ॥ २ ॥ स्कन्दबोले—मुनिवर ! सुनो, पूर्वकालमें संसारके हितार्थ भगवान् पंचमुख शिव स्वयं पाँचअंशोंमें विभक्तहोकर पृथिवीपर (पांडवोंके रूपसे) प्रकट हुएथे ॥ ३ ॥ एवं जगन्माता उमाभी यज्ञकरतेहुए द्रुपदमहीपतिके यज्ञकुण्डसे अत्यंत सुन्दरी होकर प्रकट हुईथी ॥ ४ ॥ पांचों पांडुपुत्र, साक्षात् रुद्ररूपधारी और दुष्टसंहारकारी होकर स्वर्गसे भूतलपर अवतार लियेथे ॥ ५ ॥ उन लोगोंके सहचारीबनकर, वैकुण्ठविहारी हरिभी कृष्णरूपधारी होकर दुष्टोंके दुर्वृत्तहारी और शिष्टजनोंके पालनकारी हुएथे ॥ ६ ॥ उससमय परमप्रतापी उन पांचों पांडवोंने पृथक् पृथक् संपत्ति और विपत्तियोंके उदय एवं अस्तका अनुभव कियाथा ॥ ७ ॥ किसी समय वे महावीर लोग, भाईकी शत्रुतासे कीगयी विपत्तिमें पडकर वनवासी हुएथे॥ ८॥ उनकी सहधर्मिणी धर्मपरायणा, सुंदरी, द्रौपदीभी पतिके विपत्तिसे दुःखिनी होकर काशीमें पहुँच सूर्यकी बडी आराधना करनेलगी॥ ९॥ अनंतर सूर्यदेव द्रौपदीकी आराधनासे सन्तुष्ट होकर उसे एक अक्षय करछुल और ढँपना सहित बटलोही देकर ॥ १० ॥ प्रसन्न हृदय भगवान् भास्कर भक्तिभावसे आराधनामें लवलीन, सर्वत्र शुद्धहृदया द्रुपदनंदिनी से कहनेलगे ॥ ११ ॥ हे महाभागे ! इस बटलोहीसे जबतक तुम भोजन न करोगी तबतक चाहे जितने अन्नार्थी (क्षुधित) जन हों सभी लोग तृप्त होजावेंगे ॥ १२ ॥ परन्तु तुम्हारे खालेनेपर सुरस व्यंजनोंकी खानि, इच्छानुसार भोजन देनेवाली और भातसे भरी हुई यह बटलोही छूछी होजावेगी ॥ १३ ॥ हे मुने ! इस विधिसे तो उसने सूर्य नारायणसे काशीमें वरदान पाया और फिर भगवान् भास्करने उसे एक दूसराभी वरप्रदान किया ॥ १४ ॥ सूर्यबोले—विश्वेश्वरके दक्षिणभागमें जो कोई तुम्हारे सन्मुख स्थित मेरी आराधना करेगा, उसे क्षुधाकी बाधा कभी न होगी ॥ १५ ॥ हे पतिव्रते ! विश्वनाथने तपस्यासे सन्तुष्ट होकर जो मुझे वरदान कियाहै, उसे कहताहूं श्रवण कर ॥ १६ ॥ (विश्वेश्वरने कहाहै कि)—हे सूर्य !

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जो मनुष्य पहिले तुम्हारी पूजा करके मेरा दर्शन करेगा, उसके दुःखरूप अन्ध
कारको अपने किरणोंसे तुम दूर करदो ॥ १७ ॥ अतएव हे द्रौपदि ! विश्वेश्वरके
वर पाकर मैं नित्यही काशीवासी जीवोंका अघसंचय नाश करतारहताहूँ ॥ १८ ॥
यहांपर जो नर तुमको वरदेनेके लिये हाथ उठाये हुए मुझे श्रद्धापूर्वक भजेंगे उनका
मनोरथ पूर्ण करदूंगा ॥ १९ ॥ जो पुरुष अथवा स्त्री भक्तिभावसे विश्वेश्वरके
दक्षिण भागमें दण्डपाणिके समीप और मेरे सन्निकटमें परमपतिव्रता तुम्हारी पूजा
करेंगी, उन सबको कभी प्रियजनके वियोगका भय न होगा ॥ २० ॥ २१ ॥
हे निष्पापे ! धर्मप्रिये ! द्रौपदि ! काशीमें तुम्हारा दर्शन करनेसे कभी व्याधिजनित
अथवा क्षुधा पिपासासे उत्पन्न कष्ट नहीं सहना पडेगा ॥ २२ ॥ सज्जनोंके
सर्वाभीष्ट दाता सूर्यदेव उसे इसभाँतिसे वरप्रदान करके आप महादेवकी आराधना
करनेलगे, और द्रौपदीभी अपने पतिके पास चलीगयी ॥ २३ ॥ इन द्रौपदी पूजित
आदित्य भगवान्‌की इस कथाको जो मनुष्य भक्तिपूर्वक सुनेगा उसका पाप विनष्ट
होजावेगा ॥ २४ ॥ स्कन्द बोले—हे कुम्भज ! मुने ! यह तो द्रौपदादित्यका
माहात्म्य मैंने संक्षेपसे कहदिया, अब मयूखादित्यकी कथाको श्रवण करो ॥ २५ ॥
पूर्व कालमें त्रैलोक्य विश्रुत पंचनदतीर्थमें भगवान् सहस्ररश्मिने गभस्तीश्वर नाम
महाशिवलिंग और सर्वदा भक्तजनोंको मंगल देनेवाली भगवती मंगला गौरीकी
स्थापना करके दिव्यपरिमाणसे एक लाखवर्ष पर्यंत, पार्वतीके सहित चन्द्रशेखर
शिवकी आराधना करतेहुए घोर तपस्या की थी ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥
तपनदेव तो स्वयं अपने रूपहीसे त्रैलोक्यके तापित करदेनेमें समर्थ हैं—फिर
पर इस कठोर तपस्याके द्वारा तो अत्यन्त प्रज्वलित हो उठे ॥ २९ ॥
उस समय सूर्यके त्रैलोक्य दहनमें समर्थ किरणमंडलसे स्वर्ग और मर्त्यलोकका समस्त
मध्यभाग बहुतही भरगयाथा ॥ ३० ॥ विमानपर चढकर यात्राकरनेवाले देवगण
पतंग भगवान्‌के तीव्र तेजमें सामान्य पतंग (फतिंगा) के समान भस्म होजानेके
डरसे आकाश मार्गमें जाना आना छोडदिया ॥ ३१ ॥ सूर्यनारायणके नीचे ऊपर
अगल बगल केवल किरणही दिखलाई पडतेथे, मानो फूलाहुआ कदंबका पुष्पहै
सूर्यका तो दर्शनही नहीं होताथा ॥ ३२ ॥ उस घडी तपोमय महातेजस्वी सूर्यकी
तपस्या और ज्वालाके बडे भयसे सचराचर त्रिभुवन कांपनेलगा ॥ ३३ ॥
जगत्‌के आत्मा सूर्यहीहैं"—यह बात वेदोंमें भी पढीजातीहै, यदि चेत वही जलाने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पर उद्यतहैं तो इस संसारमें हमलोगोंका रक्षक कौन होसकताहै ? ॥ ३४ ॥ येही सूर्य जगत्के चक्षुहैं और येही संसारकी आत्माभीहैं, क्योंकि प्रतिदिन प्रातःकालमें उठाकर मृतप्राय समस्त जगत्को येही जगादेतेहैं ॥ ३५ ॥ येही प्रतिदिन उदय होतेहुए चारों ओर अपने कररूप किरणोंसे अन्धकारमय कूपमें गिरेहुए समस्त प्राणियोंको निकाल देतेहैं ॥ ३६ ॥ सूर्यके उदय होनेसे हमलोगभी उठतेहैं और उनके अस्तहोजानेसे हम सबभी व्यस्त होजातेहैं, अतएव हमलोगोंके उदय और अस्तके कारणभी सूर्यहीहैं ॥ ३७ ॥ इस प्रकारसे परमव्याकुलित संसारको देखकर जगत्पालक भगवान् विश्वेश्वर, स्वयं सूर्यको वरप्रदान करनेके लिये वहाँ गये ॥ ३८ ॥ मयूखमाली सूर्यको समाधि लगाकर अपनेकोभी भूलेहुए और अत्यंत निश्चलरूपसे स्थित देखकर भक्तवत्सल श्रीमान् श्रीकंठ शंभु देव उस तपस्याके प्रति विस्मित होकर प्रसन्नचित्तसे कहने लगे—हे तेजोराशे ! सूर्य ! अब तपस्या होचुकी वरदानकी प्रार्थना करो ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ध्यान—समाधिके कारण समस्त इन्द्रियोंकी वृत्ति रुकजानेसे बाह्यज्ञानशून्य सूर्यने शिवके इस वचनको दो तीनबार कहनेपरभी बहिरेके ऐसा कुछ भी नहीं सुना॥ ४१ ॥तब महादेव उनको काष्ठरूप समझकर घोर तपस्यासे उत्पन्न संतापके शान्त्यर्थ अमृत वर्षण करनेवाले अपने हाथसे सुहराने लगे ॥ ४२॥ इसके अनंतर जगच्चक्षु सूर्यने प्रातःकालमें अपने किरणोंके लगनेसे विकसित कमलवनके समान अपने आँखोंको खोलदिया ॥ ४३ ॥ सूखापडनेसे मुर्झुरातेहुए सस्यकी शोभा जैसे मेघोंसे उल्लासित होतीहै वैसेही भगवान्के स्पर्श करदेनेसे तपनदेवकाभी समस्त तपका सन्ताप दूर होगया ॥ ४४ ॥ तब सूर्य अपने आगे प्रत्यक्ष व्यक्ष भगवान्को अपने नयनोंका अतिथि बनाकर, दण्डवत्प्रणाम करतेहुए स्तुति करनेलगे ॥ ४५ ॥ सूर्य कहनेलगे—हे देवदेव ! जगदीश्वर ! विभो ! भर्ग ! भीम ! भव ! चन्द्रशेखर ! भूतनाथ ! आपही संसारभयके हर्ता और भक्तजनोंके वांछित फलदाताहैं मैं आपको प्रणाम करताहूं ॥ ४६ ॥ हे चन्द्रचूड ! मृड ! धूर्जटे ! हर ! त्रिलोचन ! आपही दक्षप्रजापतिके यज्ञविध्वंसकहैं, हे शांत ! शाश्वत ! शिवापते ! शिव ! आप तो प्रणतजनके अभीष्टप्रदहैं, आपको मेरा प्रणाम है ॥ ४७ ॥ हे नीललोहित ! समीहितार्थप्रद ! त्रिनयन ! विरूपाक्ष ! व्योमकेश ! आप समस्त जीवोंके संसाररूप बंधनके विनाशकहैं, अतएव नतवांछितप्रद आपको दण्डवत्प्रणाम करताहूं ॥ ४८ ॥ हे वामदेव ! शितिकंठ ! शूलिन् ! शशांकशेखर ! फणीन्द्र-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भूषण ! कामान्तक ! पशुपते ! महेश्वर ! आपही तो भक्तोंके अभीष्ट फल दायकहैं आपको प्रणाम है ॥ ४९ ॥ हे त्र्यंबक ! त्रिपुरासुरमर्दक ! परमेश्वर ! पीताम्बरायण ! त्रिनेत्र ! त्रयीमय ! आपही कालकूट महाविषके पानकर्ता और अन्तकेभी अन्तकहैं, हे सेवकजनके मनोरथसाधक ! आपको प्रणाम है ॥ ५० ॥ हे मायाविनिर्मुक्त ! शर्व ! आप सर्वव्यापीहैं, स्वर्गके मार्गहैं, हे सुखप्रद ! आपही अपवर्गके दाताहैं, हे कपर्दिन् ! आपहीने अंधकासुरको विनष्ट कियाहै, हे निज जनके इच्छित फलदायक ! आपको प्रणाम है ॥ ५१ ॥ हे शंकर ! उग्र ! गिरीश जापते ! स्वामिन् ! विश्वनाथ ! ब्रह्मा और विष्णु सर्वदा आपकी स्तुति करते रहतेहैं; हे वेदवेद्य ! आप सब किसीके सभी अभिप्रायोंको जानतेहैं, हे सेवकसुखदायक ! आपको प्रणाम करताहूं ॥ ५२ ॥ हे विश्वरूप ! परात्परतर ! आप रूपरहित ब्रह्महैं, हे मायारहित ! अमृतप्रद ! आप तो सदैव वचन और मनके अगोचरही रहतेहैं, अतएव हे दूरग ! भक्तजनके मनोवांछित सिद्धिप्रद आपको मैं (बारंबार) प्रणाम करताहूं ॥ ५३ ॥ सूर्यनारायण प्रदक्षिणापूर्वक महादेवका यह स्तुतिगान करके प्रसन्नमनसे शिवकी अर्द्धांगस्वरूपिणी गौरी देवीकीभी स्तुति करने लगे ॥ ५४ ॥ भगवान् रवि बोले—हे देवि ! जो प्रणतिप्रवीण जन अपने भाल स्थलमें आपके चरणसरोजकी धूलिको धारण करलेताहै, उस पुरुषका ललाटदेश जन्मान्तरमेंभी सुन्दर चन्द्रकलासे भूषित रहताहै ॥ ५५ ॥ हे श्रीमंगले ! आप समस्त मंगलोंकी जन्मभूमि और सकल पापरूप तूलराशिके भस्मकरनेमें अग्नि ज्वालाहैं, हे मंगले देवि ! आपही अशेष दानवोंकी दर्पनाशिनीहैं, अतएव इस अखिल विश्वकी रक्षा करें ॥ ५६ ॥ हे विश्वेश्वरि ! आपही विश्वजनकी सृष्टिकर्त्री पालयित्री और प्रलयकालमें हन्त्रीहैं, आपकी नाम कीर्तनरूपा पुण्यनदी, पापरूप तीरके वृक्षोंको गिराती रहतीहै ॥ ५७ ॥ हे भवानि ! मातः ! इस संसारमें एक मात्र आपहीके शरणागत होनेसे जन्मग्रहणरूप तीव्र दुःखका बोझ उतर सकता त्रिभुवनभरमें जिनपर आपकी शुभमयी करुणादृष्टि पडजातीहै, वेही लोग धन्य और सर्वथा मान्य होजातेहैं ॥ ५८ ॥ जो शुद्धबुद्धिजन, भक्तोंकी मोक्षलक्ष्मी, कैवल्यवासिनी, सहजप्रकाशा आपका सर्वदा स्मरण करतेहैं, उन मुक्तिरक्षाके विषयके अधिकारी लोगोंको भगवान् महादेवभी कभी नहीं भूलते ॥ ५९ ॥ हे जननी जिसके हृदयमें आपका निर्मल चरणयुगल विराजमान है, समस्त जगत् उसी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हाथमें हैं, हे मंगलागौरि ! जो कोई आपका नाम नित्यही जपताहै, उसका गृह अणिमादिक आठों सिद्धियाँ कभी नहीं छोडसकतीहैं ॥ ६० ॥ हे देवि ! आपही द्विजगणकी कामधेनु, प्रणवस्वरूपा वेदमाता, गायत्रीहैं, संसारमें समस्त कर्मोंके सिद्ध्यर्थ आपही तीनों व्याहृतियाँभी हैं, एवं देवतोंके संतोषार्थ स्वाहा और पितरोंकी तृप्तिके लिये स्वधारूपाहैं ॥ ६१ ॥ हे निर्मलरूपे ! आपही महादेवकी गौरी, ब्रह्माकी सावित्री विष्णुकी लक्ष्मी और काशीमें मुक्तिस्वरूपिणीहैं अतएव हे मातः ! मंगलागौरि ! यहाँपर आपही मेरी रक्षा करनेवालीहैं ॥ ६२ ॥ भानुभगवान् इस मंगलाष्टक नामक महास्तोत्रके द्वारा शिवके अर्धांगस्वरूपा मंगलागौरीकी स्तुति करके—शिव और पार्वतीको बारंबार प्रणाम करते हुए, उनलोगोंके सन्मुख मौन होरहे ॥ ६३ ॥ देवदेवने कहा हे महामतिमन् ! उठो उठो, मैं प्रसन्नहूं, तुम्हारा भलाहो, हे मित्र ! तुम मेरे नेत्ररूप होकर इस चराचर संसारको देखते रहो ॥ ६४ ॥ हे सूर्य ! तुम तो मेरे शरीरही हो, अतएव तुम सर्वज्ञ, सर्वव्यापक, समस्त तेजोंके राशि और सब लोगोंके समग्र कर्मोंके ज्ञाता होंगे ॥ ६५ ॥ और तुम समस्त भक्तगणके सब दुःखोंको दूर करते रहो । यह जो मेरे चौंसठ नामोंका आठ श्लोकोंमें स्तोत्र तुमने कहाहै ॥ ६६ ॥ इसके पाठ करनेसे मनुष्य मेरी भक्तिको पावेगा एवं मंगलागौरीका जो अष्टक कहाहै, उसका नाम मंगलाष्टकहै ॥ ६७ ॥ इससे मंगलागौरीकी स्तुति करनेपर मंगलही मिलेगा । यह चतुःषष्ट्यष्टक और मंगलाष्टक ॥ ६८ ॥ स्तोत्रश्रेष्ठ, पुण्यका दाता और सर्व पातक नाशकहै, जो उत्तम नर दूरदेशांतरमें रहकरभी शुद्ध अंतःकरणसे इसका नित्य पाठ करेगा, वह परमदुर्लभ काशीको लाभ करेगा । जो लोग प्रतिदिन इन दोनों स्तोत्रोंको पढेंगे, उनका दैनिक समस्त पाप धोजावेगा—यह ध्रुवहै, इस विषयमें तनिक भी सन्देह नहींहै कि उस देहीको देहमें फिर कुछभी पापका लेश रहजावेगा ॥ ६९ ॥ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ जो कोई त्रिकालमें इन दोनोंही उत्तम स्तोत्रोंको नित्य जपे, उसे मनुष्योंको चंचल लक्ष्मी देनेवाले अन्य बहुतसे स्तोत्रोंके पाठ करनेका कौन प्रयोजन है ? ॥ ७२ ॥ येही दोनों स्तोत्र काशीधाममें मोक्षसंपत्तिको देतेहैं, अतएव मोक्षाभिलाषी लोगोंको चाहिये कि दूसरे सब स्तोत्रोंको छोडकर प्रयत्नपूर्वक इन्हीं दोनों स्तोत्रोंका पाठ करें । क्योंकि यह समस्त चराचर हमी दोनोंका प्रपंचहै ॥ ७३ ॥ ॥ ७४ ॥ सुतराम् हम लोगोंके इस स्तोत्रके पाठ करनेसे मनुष्य निष्प्रपंच होजाताहै और यहाँपर पुत्रपौत्रके सहित बडी संपत्ति पाकर ॥ ७५ ॥ अंतमें निर्वाणपदको

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्राप्त करताहै । हे सप्ताश्व ! ग्रहराज ! दिवाकर ! एक बात औरभी सुनो ॥ ७६ ॥ जो कोई तुम्हारे स्थापित इस गभस्तीश्वर नामक लिंगको भक्तिभावसे सेवेगा उसे सम्पूर्ण सिद्धियाँ प्राप्त होवेंगी ॥ ७७ ॥ हे भास्कर ! तुमने चंपक और कमलके सम्पूर्ण अपनी किरणमालासे सर्वभावपूर्वक इस शिवलिंगकी पूजा कीहै, अतएव इस लिंगका गभस्तीश्वर नाम पडेगा जो कोई पंचनदतीर्थमें स्नान करके इस गभस्तीश्वर लिंगका पूजन करेगा ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ वह निष्पाप होजानेसे फिर कभी माताके जठरकी यातनाको नहीं भोगेगा । एवं जो नारी अथवा, पुरुष चैत्रमासकी शुक्लतृतीयाको उपवासी होकर, वस्त्र और आभूषणादि महोपचारके द्वारा इस मंगलागौरीका पूजन करके ॥ ८० ॥ ८१ ॥ रात्रिमें नृत्य गीत और कथा इत्यादिसे जागरण करेगा, एवं प्रातःकालमें बारह कुमारियोंको वस्त्रादिकसे पूजितकर और उत्तम पदार्थ भोजन करवाके दक्षिणा देकर अन्य लोगोंकोभी यथाशक्ति दक्षिणा देवेगा,—एवं "जातवेदसे" इत्यादि वेदकी ऋचासे तिलसहित घृतकी अष्टोत्तरशत आहुतियाँ विधानसे देकर प्रातःकृत्य होम करेगा, तत्पश्चात् एक कुटुम्बी ब्राह्मणको गौका जोडा देकर, श्रद्धापूर्वक दिव्य दम्पतीको भूषणादिसे अलंकृतकर उत्तमोत्तम भोज्य पदार्थोंको खिलाकर—"मंगलागौरी और परमेश्वर प्रसन्न होवें" यह मन्त्र उच्चारण करनेपर प्रभातहीमें व्रतका पारण करेगा तो उसे कभी न तो असौभाग्य होगा, न दरिद्रताही घेरेगी ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ न कभी उसके संतानहीका विच्छेद होवेगा, न भोगसुखही छूटेगा, न स्त्रीही विधवा होगी और न पुरुषही स्त्रीका वियोगी होवेगा ॥ ८७ ॥ फिर उसके पापपुंज बिलाय जातेहैं और पुण्यकी राशि आकर प्राप्त होतीहै ॥ ८८ ॥ मंगलाव्रतके अनुष्ठान करनेसे वंध्याभी प्रसव करतीहै ॥ ८८ ॥ एवं इस व्रतके करनेसे कुरूपता नहीं होती, कुमारीभी अति गुणवान् और रूपवान् पतिको पातीहै ॥ ८९ ॥ और कुमारभी इस व्रताचरणसे उत्तम स्त्रीरत्नको लाभ करताहै, यद्यपि बहुतसे धन देनेवाले तथा अभीष्टदायक हैं ॥ ९० ॥ परन्तु वे सब कदापि इस मंगलाव्रतकी तुल्यताको नहीं पासकते । सभी काशीनिवासियोंको समस्त विघ्नोंकी शांतिके लिये चैत्रमासकी शुक्ल तृतीयाको मंगलागौरीकी वार्षिकी यात्रा सदा करनी चाहिये ॥ दिनमणे ! एक बात औरभी कहताहूं—यहाँपर तपस्या करते समय आकाशमार्गमें तुम्हारे मयूख (किरण) ही दिखलाई पडतेथे शरीर नहीं दीखताथा, इसलिये दितिनन्दन ! तुम्हारा नाम मयूखादित्य होताहै ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पूजन करनेसे मनुष्योंको कोईभी व्याधि नहोगी और रविवारको तुम्हारे दर्शन करनेसे कभी दरिद्रता नहोवेगी ॥ ९४ ॥ महादेव इस प्रकारसे मयूखादित्यको बहुतसे वर दान कर वहीं अन्तर्धान होगये और सूर्यदेव वहाँपर रहनेलगे ॥ ९५ ॥ द्रौपदादित्य के सहित मयूखादित्यके इस पवित्र आख्यानको सुनकर मनुष्य कदापि नरकगामी नहीं होसकता ॥ ९६ ॥

दोहा–जहँ हैं पांचों पंडवा, वहीं द्रौपदादित्य ॥
प्रकट मयूखादित्यको, दर्शन करिये नित्य ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे भाषायां द्रौपदादित्यमयूखादित्य कथावर्णनं नाम एकोनपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ४९ ॥

पचासवाँ अध्याय ।

खखोल्कादित्य और गरुडेश्वरकी कथा ।

कार्तिकेय बोले–हे कुम्भज मुने ! काशीमें और भी जो जो आदित्यहैं वे सभी महापाप नाशनहैं, अतएव मैं तुम्हारे प्रीत्यर्थ उनका वर्णन करताहूं ॥ १ ॥ त्रिलोचन महादेवके उत्तर भागमें समस्त व्याधियोंके विघातक भगवान् खखोल्कादित्य नामक सूर्य विराजमान हैं ॥ २ ॥ इनका खखोल्कादित्य नाम पडनेका कारण कहताहूं, श्रवण करो, पूर्वकालमें दक्षप्रजापतिकी कद्रू और विनता नामक दो शुभलक्षणा कन्यायें हुई ॥ ३ ॥ पीछे वे दोनोंही मरीचिके पुत्र प्रजापति कश्यपकी पत्नी हुई, एकबार वे दोनों परस्पर क्रीडा कौतुक करती हुई यह कथनोपकथन करनेलगी ॥ ४ ॥ कद्रूने कहा–हे विनते ! आकाशमंडलमें तुम्हारी सर्वत्रही गतिहै, अतएव (वहांकी एक बात पूछतीहूं) यदि तुम्हारा जाना हो तो मेरे आगे कहो ॥ ५ ॥ (यह सूर्य जो गगन में विचरण करतेहैं) इनके रथमें उच्चैःश्रवा नामक घोडा रहताहै, यह सुनाजाताहै, सो वह घोडा चितकबराहै, कि श्वेतवर्णहै ? यह मुझसे शीघ्रही कहो ॥ ६ ॥ और हे कल्याणि ! तुमको जो रुचे सो पणबन्ध (शर्त) भी करलो, हे अनघे ! बिना खेलवाडके योंही दिन नहीं बीतता ॥ ७ ॥ बिनताने कहा–बहिन ! इस विषयमें पणकरनेका कौन प्रयोजनहै, मैं योंही कहतीहूं, क्योंकि तुमको जीतकर मुझे कौन प्रसन्नता होगी अथवा मुझीको जीतकर तुम्हें कौन बडासुख मिलजावेगा ? ॥ ८ ॥ यही विचारकर परस्पर स्नेह बनाये रखनेकी इच्छावालेको किसी-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रकारका पणबन्ध नहीं करना चाहिये, क्योंकि एकहीका जीतना निश्चितहै, तब कि दूसरेको क्रोध होजाताहै ॥ ९ ॥ कद्रू कहनेलगी—अरे बहिन ! यह तो खेलमात्र होरहाहै, भला इसमें क्रोध करनेका कौन कारण है ? यह तो खेलका एक साधारण व्यवहारहै, कि कुछ पणबन्ध कहदिया जाताहै ॥ १० ॥ बिनताने उत्तर दिया—हे वायुभक्षिणि ! जिसमें तुम्हारी प्रसन्नता हो वही करो, यह सुनकर कुटिलहृदया कद्रूने बिनतासे कहा ॥ ११ ॥ कि जो हारजावे वह जीतनेवालीकी दासी होवे, और हम दोनोंके इस पणबंधकी ये सब साखियाँ साक्षिणी रहें ॥ १२ ॥ इस प्रकारसे सर्पिणी कद्रू और पक्षिणी बिनताके पणबंध होजानेपर कद्रूने चितकबरा और बिनताने श्वेतवर्ण कहा ॥ १३ ॥ अनंतर वे दोनों परीक्षाके लिये गमन करनेका समय निश्चितकर, खेलवाडसे छुट्टी पाकर अपने अपने घरको चलीगयीं ॥ १४ ॥ बिनताके हटजानेपर कद्रूने अपने पुत्रोंको बुलाकर यह कहा कि हे बेटा ! तुम लोग मेरे कहनेसे अभी वहाँ जाओ ॥ १५ ॥ जहाँपर कि देवता और दैत्योंने मिलकर मन्दराचलको मन्थन दंड (छोरी) बना क्षीर समुद्रको मथकर, उच्चैःश्रवा तुरंगको निकालाहै ॥ १६ ॥ हे पुत्रगण !, यद्यपि सभी कार्य कारणहीके अनुरूप होते हैं (यह मैं जानतीहूं) तथापि तुम लोग उस क्षीर समुद्रके निकले दुग्धसदृश श्वेतवर्ण घोडेको चितकबरा रंगका बनादो ॥ १७ ॥ तुम सब उसके पूँछमें लिपटकर उसके बालोंको काला करदेसकते हो, एवं अपने विषैले फुफकारोंसे उसके सर्वांगके रोमोंकोभी श्याम करदेना ॥ १८ ॥ माताका यह वचन सुनकर कुरूपधारी कद्रूके संतानगण परस्पर विचारकर अपनी मातासे यह बोले ॥ १९ ॥ सर्पोंने कहा—हे मातः ! हमलोग तो तुम्हारे पुकारनेपर यह समझकर अपना खेलवाड छोड प्रसन्नतासे चले आये कि माता आज मिठाई देवेंगी ॥ २० ॥ सो मिठाई तो दूर रहे, जो तुमने कहा वह तो विषसेभी बहुत अधिक कडुआहै, और उसका उपशमन न तो मंत्रोंहीसे और न औषधोंहीसे होसकताहै ॥ २१ ॥ यहांपर हमलोगोंका जो होना हो सो होवे पर हमलोग तो कदापि नहीं जासकतेहैं ।" उसघडी उन कुटिलगामी विषमुखोंने यही उत्तर दिया ॥ २२ ॥ स्कन्द बोले—हे मुने ! (इन सर्पोंके समान) दूसरेभी कुटिल गतिवाले परछिद्र निषेवी कर्णहीन क्रूरहृदय लोगही अपने माता पिताको लज्जित करतेहैं ॥ २३ ॥ जो अहंकारीगण माता पिताके बचनका निरादर करदेतेहैं, वे संसारमें बडे बडे दुःखोंको भोगकर शीघ्रही मरणकोभी प्राप्त होतेहैं ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दोहा—जे न करहिं अति दर्पवश, मात पिताके बैन ।
थोरेहि दिनमें नष्ट होइ, कबहुँ न पावैं चैन ॥ २४ ॥

अनंतर उन सबोंकी यह बात कि "नहीं जासकतेहैं"—ऐसा सुनतेही कद्रू क्रोधमें आकर उन अपराधी सर्पोंको शाप देनेलगी ॥ २५ ॥ "तुम सब मेरे वचनके उल्लंघन करनेसे गरुडके भोजन होंगे, और तुम्हारी स्त्रियाँ बच्चा उत्पन्न होतेही उसे खानेलगेंगी" ॥ २६ ॥ सर्पगण माताके इस शापानलसे डरकर बहुतेरे तो पातालमें भागगये और अवशिष्ट दो चार मातृशापसे प्राणबचानेकी आशासे उसकी आज्ञा पालन करनेमें तत्पर हुए ॥ २७ ॥ वे सब बडी बुद्धिमत्तासे जाय, उच्चैःश्रवाकी पोंछमें लिपटकर, उसे अत्यन्त काले रंगके बालोंका बनाय अपने विषरूप अग्निके फुफ्कार-रूप धूमसे उस घोडेके समस्त अंगोंको चितकबरा करनेलगे । और माताकी आज्ञा-पालनरूप धर्मकरनेसे सूर्यके किरणोंसेभी वे सब दग्ध नहीं होसके ॥ २८ ॥ २९ ॥ उसीबेला विनताकी पीठपर चढकर कद्रूभी स्नेहवश गगनपथको भूषितकर सूर्यमण्डल देखने लगी ॥ ३० ॥ (क्रमशः उठते जानेपर) सूर्यके तीक्ष्ण किरणोंके लगनेसे अतिव्याकुल चित्त होकर कद्रूने बिनतासे कहा—"हे विनते अब नीचेहीकी और चलो ॥ ३१ ॥ (क्योंकि) तपनदेवके इन उष्णकिरणोंसे मेरा शरीर झुलसा जारहाहै, और मैं तो स्वभावहीसे विश्वास करती और कोई अपेक्षा नहीं रखतीहूं पर तुमतो सर्वतोभावसे सापेक्षा हो ॥ ३२ ॥ (प्रथमतो यह कि) तुम्हारा स्वरूप पतंगीकाहै और यह सूर्यभी पतंगहैं, इसी कारणसे आकाशमें तुमको ताप जनित कोईभी बाधा नहीं होती ॥ ३३ ॥ (दूसरे यह कि) आकाशरूप सरोवरमें यह सूर्य हंसरूपहैं और तुमभी हंसगामिनी हो, इसीसे यहाँपर सूर्यके किरणोंका प्रतापभि तुमको कुछभी पीडित नहीं करसकताहै ॥ ३४ ॥ कद्रूके इस कहनेपरभी जब विनता और ऊपरही को उडतीहुई चढती चली तब कद्रूने कहा कि—बहिन ! अब यहांसे लौटचलो और मेरे प्राणोंको बचाओ ॥ ३५ ॥ हे विनते ! मैं तुम्हारे पैरों पर पडतीहूं मुझे क्यों नहीं बचातीहो ? हे पक्षिणि ! जन्मभर मैं तुम्हारी दासी बनी रहूंगी और तुम्हारा जूंठा खाऊंगी, एवं तुम्हाराही पैर धोकर पीऊंगी । कातरस्वरसे यह कहतीहुई अरे ! यह आकाशका लुक्क गिरताहीहै ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ बिलमें रहने वाली सर्पिणी कद्रू बडे घबराहटसे "हे सखि ! यह लुक्क गिरताहै" यह वचन अस्फुट उच्चारण करते नकरते विनताके पक्षपुटको पकडकर (उसके पीठहीपर) मूर्छित होगयी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

॥ ३८ ॥ उस घडी कद्रूने जो बडे घबराहटके साथ खखोल्क ऐसा वचन कहा, इसी से विनता सूर्यकी खखोल्क नामसे बडी स्तुति करने लगी ॥ ३९ ॥ अतःपर भग-वान् विवस्वान् (विनताकी स्तुतिसे प्रसन्न होकर कुछ कालके लिये) अपनी तीक्ष्ण-ताको रोककर चलनेलगे, उसी समय आकाशमें उन दोनों विनता और कद्रूने रथमें जोतेहुए घोडेको कुछ चितकबरा रंगका देखा ॥ ४० ॥ (तुरंतही) सत्यवादिनी, जगन्मान्या, विनताने सूर्यके प्रखर तापसे प्रतिहत दृष्टि, क्रूरहृदया, कद्रूसे यह कहाकि ॥ ४१ ॥ "हे भद्रे ! कद्रू ! तुमने जीतलिया, क्योंकि चन्द्रमाके किरणोंके समान श्वेतवर्ण होनेपरभी यह उच्चैःश्रवा तुरंग (आज) चितकबरासा भास रहाहै ॥ ४२ ॥ हे भुजंगिनि ! जय और पराजयमें भाग्यही बली होताहै"—बडे आश्चर्यकी बातहै कि कहीं तो कपटीजनभी विजयी होजाताहै और कभी कभी निष्कपटजन कोभी हार-जाना पडताहै ॥ ४३ ॥ विनता विनतभावसे यह सब कहतीहुई जिधरसे गईथी उधरहीसे लौटकर कद्रूके घरपर जापहुँची—और उसकी सेवकाई करनेलगी ॥ ४४ ॥ एकबार गरुडने अपनी माता विनताको आँखोंमें आँसू भरेहुए उदासमुख, परममलिन और दीन एवं बडी लंबी साँसलेतीहुई देखा ॥ ४५ ॥ (तब तो) गरुडने पूछा-"अहोमातः ! प्रतिदिन प्रभात होतेही तुम कहाँ चलीजातीहो ? और फिर सन्ध्याके समय कहाँसे उदासीन मुख और दीन हृदय होकर लौट आतीहो ॥ ४६ ॥ और क्यों क्लीब संतति अथवा पतितिरस्कृता स्त्रीके समान नेत्रोंमें आँसू भरकर ऊंची साँस लेतीहो ? ॥ ४७ ॥ हे जननि ! आज तुम मुझसे यह झटपट कहदो कि तुम क्यों इतनी खिन्न होरही हो ? हे तपस्विनि ! मेरे ऐसे कालको डरानेवाले पुत्रके जीतेरहनेपर तुम्हारे इस आंसुओंकी धारा बहानेका क्या कारणहै ? क्योंकि संसारमें सच्चरित्रा स्त्रियोंपर तो अमंगल पडही नहीं सकता ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ जिनके जीते रहते माताको दुःख भोगना पडे उन पुत्रोंको धिक्कारहै !! जिसके पुत्र मनोरथ पूर्ण न करसकें उससे तो वन्ध्याही अच्छी है ॥ ५० ॥ इस प्रकारसे विनताने माता-भक्त गरुडके ऊर्जस्वल वचनको सुनकर अपने पुत्रसे कहा ॥ ५१ ॥ रे बेटा ! मैं क्रूरचित्ता कद्रूकी दासी होकर अपने पीठपर उसे और उसके पुत्रोंको लादकर प्रतिदिन ढोया करतीहूं ॥ ५२ ॥ कभी मन्दराचल, कभी मलयाचल, और कभी कभी समुद्रोंके अन्तरीपोंमें घुमाया करतीहूं ॥ ५३ ॥ वे सब दुर्मद कद्रूके पुत्रगण जहाँ जहाँ लेजातेहैं वहाँ वहाँ उनको लादकर मुझे पहुँचाना पडताहै हे बेटा !

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

क्या करूं क्योंकि उनके आधीनहो पडीहूं ॥ ५४ ॥ गरुडने पूछा—अम्ब ! इस दासी होनेका कौनसा कारणहै; हे सुलक्षणे ! अनघे ! तुमभी तो दक्षप्रजापतिकी पुत्री और भगवान् कश्यपकी पत्नीहो (फिर दासी कैसेहुई ?) ॥ ५५ ॥ विनताने अपने दासीत्वका कारण सूर्यके घोडेका दर्शन इत्यादि समस्त वृत्तान्त आद्योपान्त गरुडसे कहसुनाया ॥ ५६ ॥ यह सुनकर गरुडने कहा माता ! आज तुम अभी चलीजाओ और दुष्टकद्रूके पुत्रोंसे यह बात पूछो ॥ ५७ ॥ कि जो वस्तु तुमलोगों को परमदुर्लभहो और जिसपर तुम सबकी बडीही रुचिहो वह मुझसे लेकर मेरा दासीत्व छुडादो ॥ ५८ ॥ गरुडके कथनानुसार विनताने वैसाही किया । यह सुनकर वे सब सर्प परस्पर विचारकरके प्रसन्न मनसे विनताके प्रति यह कहनेलगे ॥ ५९ ॥ यदि तुम मेरी माताके दासीत्वसे मुक्त होनेके लिये अमृत लाकर हमलोगोंको दोगी, तब तो तुम्हारा अभिलाष पूर्ण होसकताहै नहीं तो दासीही बनी रहोगी ॥ ६० ॥ कद्रूसे भी पूँछकर विनताने उनकी बातको अंगीकारकर शीघ्रगतिसे प्रसन्नहृदय हो गरुडके पास जाकर यह वृत्तान्त कहसुनाया ॥ ६१ ॥ अनंतर नागांतक चिंतातुर गरुड मातासे कहने लगे कि—हे मातः ! अमृतको तो लायाहुआही समझो और मुझको कुछ भोजनदो ॥ ६२ ॥ प्रसन्नतासे रोमांचित होकर विनताने पुत्र गरुडसे कहा—हे सुपर्ण ! तुम्हारा मंगल होवे, तुम अभी समुद्रके तटपर चलेजाओ ॥ ६३ ॥ वहाँपर मछरियोंको मारनेवाले बहुतसे निषादलोग समुद्रके तटप्रांतमें निवास करतेहै उन दुरात्माओं को जाकर भोजन करो ॥ ६४ ॥ जो दुर्बुद्धिगण संसारमें दूसरोंके प्राणोंको मारकर अपने प्राणका रक्षण करतेहैं, उनका शासन प्रयत्नपूर्वक करना उचितहै, क्योंकि दुष्टोंका शासन करनाही परममंगल है ॥ ६५ ॥ बहुत हिंसा करनेवालोंका मारना स्वर्गका साधन होताहै, क्योंकि एक जीवघातीके मारेजानेपर बहुतसे जीवोंकी प्राणरक्षा होजातीहै ॥ ६६ ॥ हे पुत्रक ! यदि कोई निषादोंमें ब्राह्मण होवे तो उसकी सर्वथा रक्षाही करना उसे कदापि मत खाजाना ॥ ६७ ॥ गरुड बोले—मत्स्यभोजी निषादोंके बीचमें रहनेवाले ब्राह्मणको जिसे तुम भोजन करनेके लिये निषेध करती हो मैं कैसे पहिचानसकूंगा ? उसके जो कुछ चिह्न हों उनको मुझसे कहदो ॥ ६८ ॥ विनताने कहा—जिसके गलेमें यज्ञोपवीतहो और निर्मल दुपट्टा ओढे हो, जिसके वस्त्र नित्यही कचारेजातेहों, जिसके मस्तक पर तिलकलगा रहे ॥ ६९ ॥ जिसके दोनोंही हाथोंमें पवित्री पडीहो और जिसके कटिस्थलमें कुश खोंसा रहे, एवं जिसके माथेकी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चोंटीमें गांठ लगीहो उसे तुम ब्राह्मण जानना ॥ ७० ॥ जोकि ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथवा सामवेदकी एकभी ऋचाको उच्चारण करे, किंवा जो गायत्रीमात्र मंत्रको जानता हो उसेभी द्विजही समझना चाहिये ॥ ७१ ॥ गरुडने कहा—हे जननि ! जो ब्राह्मण सर्वदा निषादोंके मध्यमें रहेगा, उसको तो इन सबोंमें कोईभी चिह्नाई देनेवाला लक्षण होगा यह मेरी समझमें नहीं आताहै ॥ ७२ ॥ हे मातः ! द्विजत्वबोधक कोई दूसरा लक्षण बतादो, जिससे मैं उसे ब्राह्मण जानकर कंठमें चलेजानेपर भी छोड़ देसकूं ॥ ७३ ॥ यह सुनकर विनताने कहा हे पुत्र ! जो तुम्हारे गलेमें चले जानेपर खैरकी लकडीके अंगारासा जलाने लगे उसे (ब्राह्मण समझकर) दूरहीसे त्यागदेना ॥ ७४ ॥ (क्योंकि जातिके आचारोंसे हीनभी) ब्राह्मणको मारडालनेमें घातकका कभी कुशल नहीं होनेपाता उसका देश, कुल, ऐश्वर्य, और धन कालानुसार जडसे उच्छिन्न होजाताहै ॥ ७५ ॥ यह ब्राह्मणत्वका चिह्न माताके मुखसे सुनकर कश्यपके पुत्र पक्षिराज गरुड उनको प्रणामकर उनका आशीर्वाद ले आकाशमें उड़ चले ॥ ७६ ॥ गरुड कुछकाल उडकर दूरसे उन मत्स्यघाती निषादोंको देखलेके अपने पंखोंको फडफडाकर धूलिसे आकाश पातालके मध्यभागको भरने लगे ॥ ७७ ॥ उस धूलिराशिसे समस्त दिग्भागोंमें अंधकार छावतेहुए, महाकंदराके समान अपने मुख कर मुखको फैलाकर गरुड समुद्रके तटमें पहुंचगये ॥ ७८ ॥ भयसे घबडायेहुए निषाद गण अनायास आपसे आप उनके मुखविवरमें घुसनेलगे, उनसबोंके प्रवेशकरते समय ॥ ७९ ॥ कोई एक ब्राह्मणभी भीतर जाकर उनके कंठरूप कंदराको जलानेलगा। तब तो गरुडने पहिलेके पैठेहुए निषादोंको अपने उदररूपा दरीमें ॥ ८० ॥ उसके कंठ और तालुमें अंटकेहुए ब्राह्मणको यथार्थ रूपसे विचारकर माताके वचनसे कहीं भयवश तुरत उसे उगिलदिया ॥ ८१ ॥ अनंतर उस उगिलेहुए मनुष्यकी ओर देख कर पक्षिराजने कहा—तुम कौन जातिके हो ? जो मेरा गला जला रहेथे, सो कहो ॥ ८२ ॥ तब उसने गरुडके आगे यह कहा कि मैं "ब्राह्मणहूं और जातिमात्र जीविका निर्वाह करके इन निषादोंमें पडारहताहूं" ॥ ८३ ॥ फिर गरुडने उसे पीठ पर हटाकर बहुतेरे निषादोंको खाडाला, तदनंतर प्रलयवायुके समान बडेवेगसे आकाश मंडलमें वे उडचले ॥ ८४ ॥ उस घडी देवतोंने स्वर्गकी ओर उडतेहुए परम तेजस्वी गरुडको दावानलसे जलतेहुए पर्वतके समान तथा उनके तेजसे दिङ्मंडलको आच्छादित देखकर बहुतही भयभीत हो, अपना अपना अस्त्र शस्त्र सुसज्जित कर निजनिज बाहनोंपर चढ़

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कवच धारणकर युद्धकरनेके लिये आगमन किया ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ (गरुडका आकार देखकर देवगण विचारने लगे कि)—यह तिरछागमन करनेसे सूर्य नहीं है ? न यह अग्निहीहै क्योंकि वह तो धूमयुक्त होताहै !! और बिजुली तो यह होही नहीं सकती क्योंकि वह तो क्षणप्रभाहीहै ! फिर यह कौन हमलोगोंपर चढाईका धावा माररहाहै ॥ ८७ ॥ दैत्योंमें भला ऐसा तेजस्वी कौन होसकताहै ? क्योंकि दानवोंमें ऐसा विशाल किसका आकार है ? महाभयंकर यह कौनहै ? जो हमलोगोंका हृदय कंपा-रहाहै ॥ ८८ ॥ देवतागण जबतक यह तर्क कररहेथे इसी अवसरपर महाबली पक्षिराज गरुडने अपने दोनोंही पंखोंको (एकबार) फडफडा दिया ॥ ८९ ॥ उस पंखके वायुसे देवतागण अपने अपने शस्त्र वाहनके साथ नहीं जानते कहाँपर तिनगा और पत्ताके समान उधिरागये ॥ ९० ॥ उन लोगोंके विनष्ट होजानेपर पक्षि-राजने बुद्धिपूर्वक अमृतके कोशागारको ढूँढढाँढकर (वहाँ पहुँचतेही) रक्षकगणको देखा ॥ ९१ ॥ अस्त्र शस्त्रको हाथमें लियेहुए सुसज्जित उन सब रक्षकोंको दूर फेंक-कर अमृतके ऊपर रक्खेहुए कर्तरीयन्त्र (कतरनी—कैंची) कोभी देखा ॥ ९२ ॥ जोकि मन और वायुके समान बडे वेगसे घूमरहाथा, और जिसके छूतेही मसाभी करोडों टुकडे होजाताथा ॥ ९३ ॥ गरुड उसयंत्रके समीपहीमें निर्भय होकर बैठ-गये और क्षणभर यह सोचनेलगे कि अब क्या करूं ? ॥ ९४ ॥ इस यंत्रका छूना तो सर्वथा असंभवहीहै, क्योंकि इसे तो वायुभी स्पर्श नहीं करसकता, तब फिर यहांपर कौन उपाय करूं ? यह तो मेरा सब उद्यमही वृथाहुआ चाहताहै ॥ ९५ ॥ यहां तो न बलहीसे काम चलसकताहै न पुरुषार्थही कुछ करसकताहै, ओहो ! इस अमृतकी रक्षाके लिये देवतोंने कैसा प्रयत्न कियाहै ॥ ९६ ॥ यदि भगवान् विश्वनाथपर मेरी अत्यंत दृढ और अनन्यभक्ति होवे, तो वेही देवादिदेव मुझे उचितबुद्धिसे युक्त करदेवें ॥ ९७ ॥ फिर जो मैं स्वामी महादेवसेभी माताके चरणोंका दृढभक्त होऊं, तो इस अमृतके लेजानेकी उपयुक्तबुद्धि मुझको होजावे ॥ ९८ ॥ सर्वव्यापी भगवान् जो हृदयमें बैठे हैं, उनसे तो यह बात छिपी नहीं है, कि यह अमृतलेनेका उद्योग मैं कुछ अपने लिये नहीं कररहाहूं, इसका उद्देश्य तो केवल माताके दास्यभावको छुडानेहीका है ॥ ९९ ॥ (क्योंकि शास्त्रकी आज्ञाहै कि)—बूढे मा बाप, छोटे बच्चे, सती भार्या—इन लोगोंके पालन पोषणके लिये यदि कोई अनुचित कर्मभी होजावे तो कोई दोष नहीं है ॥ १०० ॥ ऐसी चिन्ता कर-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

तेहुए महात्मा गरुडके मनमें एक उपाय सूझपडा ॥ १ ॥ उनने तुरंत अपने शरीरको अत्यंत छोटेसेभी छोटा अर्थात् परमाणुकेभी सहस्रांशके समान बडा विचित्ररूप बनाकर ॥ २ ॥ देहकी लघुतासे सहजहीमें उस यंत्रके नीचे डरतेहुए और उस वायुखंडन यन्त्रसे अपने शरीरको चारों ओरसे बचातेहुए घुसकर ॥ ३ ॥ बडी शीघ्रतासे उसकी जड उखाड और अमृतके पात्रको लेकर देवतोंके चिल्लाते रहनेपरभी आकाशका मार्ग धरलिया ॥ ४ ॥ उधर देवगण चीत्कार करतेहुए गोलोकवासी भगवान् वैकुंठनाथके समीप जाकर यह कहनेलगे, हे चक्रधर ! गरुड हमलोगोंको जीतकर हमारे—परम जीवनाधार अमृत भाजनको लिये चले जारहेहैं ॥ ५ ॥ यह सुनतेही विष्णुभगवान् उन लोगोंको अभयदानसे आश्वस्तकर तुरन्त गरुडसे लडनेके लिये उठ खडेहुए । हे सूत ! पहिले शुंभदैत्यके साथ चंडिकादेवीका जैसा युद्ध हुआथा, उस घडी गरुडसेभी वैसीही घोर लडाई होनेलगी, एकरात्र और दिनभरके ऊपरलों संग्राम होते रहनेपरभी गरुडहीको अधिक बलवान् बिचार उस बडे भारी युद्धसे प्रसन्न होकर सर्वस्वदाता भगवान् विष्णु ॥ ६ ॥ ७ ॥ स्वयं जाकर गरुडसे कहनेलगे—हे देवतोंके जीतनेवाले खगेश्वर गरुड ! तुम्हारा भलाहो, मैं प्रसन्नहूं जो चाहो वर माँगलो ॥ ८ ॥ (सुनतेही) गरुडने हँसकर विश्वरूप जनार्दनसे यह कहा कि, मैंही प्रसन्नहूं, तुम्हीमुझसे (एकनहीं) दोठो वरदान करालो ॥ ९ ॥ अनन्तर विष्णु बडेहर्षित होकर विनतानन्दन गरुडसे कहने लगे—हे परमोदार ! मांगा, मांगा, दोठो वर देदे ॥ १० ॥ विष्णुका यह कथन सुनकर हँसतेहुए पक्षिराजने कहा—तो फिर विलंब क्यों करतेहो, झटपट बोलो दो वर देदिये ॥ ११ ॥ बुद्धिमान् जनको उचित है कि, जब कोई अलभ्यवस्तु मिलजावे, अथवा द्यूत इत्यादिमें जय जीत होवे तो योग्यपात्रको कुछ अवश्य देदेवे क्योंकि लाभ और जय दिन प्रतिदिन कहाँ होताहै ?

दोहा—जब कछु होवै लाभ बड, अथवा पावै जीत ।
ढूँढि सुपात्रहि देइ तब, कहाँ लाभ जय मीत ! ॥ १२ ॥

श्रीविष्णुबोले—हे पक्षिराज ! तुम बडे बलीहो अतएव तुम मेरे वाहन बनो, तो मै पहिला वर मांगताहूं और हे वरदानी काश्यप ! दूसरा वरभी सुनलो ॥ १३ ॥ सर्पोंको यह अमृत दिखलाकर अपनी माताका दास्यभाव छोडालो, परन्तु हे प्राह ! ऐसा उपाय करना जिसमें वे सब अमृत न पीने पावें ॥ १४ ॥ और फिर वह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अमृत देवतोंको लौटा देना—बस यही मेरा दूसरा वरहै। पक्षिराजने "बहुत अच्छा" कहकर स्वर्गसे अपना मार्गलिया ॥ १५ ॥ (वहांसे चलकर क्षणभरमें) नागोंके सन्मुख उस अमृतपात्रको रखकर उस कश्यपनन्दनने उनसे अपनी माताका दास्यभाव छोडालिया ॥ १६ ॥ अनंतर सर्पलोग अमृतको पीने चले तब महामति गरुडने उनसे यह कहा कि, हे नाग भाइयो ! तुम लोग पहिले शुद्ध हो लेओ तब इस उत्तम अमृतको पीते जाओ ॥ १७ ॥ नहीं तो बिना नहाये धोए अपवित्र लोगोंके छूदेनेसे यह अमृत अदृश्य होजावेगा क्योंकि देवतागण इसकी (सदा) रखवारी करते रहतेहैं ॥ १८ ॥ (देखो,) यदि कहींपर कोई अशुद्धलोग किसी सामान्यभी भक्ष्यपदार्थको छूदेतेहैं; तो देवता लोग (तुरंत) उसका रस खींचलेतेहैं और फिर वह नीरसही रहजाताहै ॥ १९ ॥ इस कथनके अनंतर उन सबोंके कहनेसे गरुड उस अमृतके पात्रको कुशके आसनपर रखकर अपनी माता विनताके साथ वहांसे चलेगये ॥ १२० ॥ उधर सर्पगण ज्योंही नहानेको गये त्योंही भगवान् विष्णुने उस अमृत पात्रको लेकर देवतोंको मानो जीवनदान करदिया ॥ २१ ॥ इधर सर्पलोग नहा धोकर जब वहाँ पहुंचे तो अमृतपात्रको न देखकर यह चिल्लाने लगे कि—"अरे हम सबको ठगकर अमृतपात्रको कौन उठालेगया" ? ॥ २२ ॥ (वारंवार यही चिल्लाते हुए) वे सबके सब अमृतके स्पर्शमात्रकी इच्छासे (उन) कुशोंको (जिनपर वह पात्र रक्खागयाथा) चाटने लगे, उससे अमृतका मिलना तो दूरही रहा, पर हुआ यह कि उन सबकी जीभ फटकर दो टुकडे होगयी ॥ २३ ॥ योंही और जो लोग अन्यायसे पायेहुए वस्तुको भोगा चाहतेहैं, वे न तो उसे भोगनेही पातेहैं और न उसका परिणामही अच्छा होताहै ॥ २४ ॥ न्यायपथपर चलनेहीसे गरुडने परम दुर्लभ अमृतकोभी प्राप्त करलिया, परन्तु सर्पोंके अन्याय पूर्वक लेनेसे वही अमृत देखते मात्र क्षणभरमें विनष्ट (अदृश्य) होगया ॥ २५ ॥ (अस्तु) इस प्रकारसे विनता जब दासीभावसे छूटगयी तब गरुडसे बोली—हे पुत्र ! अब मैं अपने इस दास्यरूप पापके शान्त्यर्थ काशी जाऊंगी ॥ २६ ॥ क्योंकि जीवोंके हृदयमें जबलों पुनर्जन्म विघातिनी काशीको स्थान नहीं मिलता, तभी लों अनेकजन्मके संचितपापोंका अधिपत्य रहता है ॥ २७ ॥ जिस काशीमें रहनेसे विश्वेश्वरके परम अनुग्रह होजानेपर गर्भवासका दुःखभी छूटजाताहै, उसी काशी के स्मरण करनेसे यदि पापही कटजावे तो इसमें कौन बडा आश्चर्यहै ? ॥ २८ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(अरे !) जहाँपर साक्षात् चन्द्रभूषण भगवान् विश्वनाथ तारकमंत्ररूप तरणीके द्वारा इस दुस्तर संसारसागरसे पार उतारदेतेहैं ॥ २९ ॥ उस काशीके प्रति उन्हीं लोगोंकी बुद्धि होसकतीहै जिनपर विश्वनाथकी पूरी दया हो और जो अपने समस्त कर्म बंधनोंको काटचुकेहों—नहीं तो दूसरोंकी बुद्धि उसपर कभी नहीं होसकती ॥ १३० ॥ जो लोग अपने समस्त पापोंको धोडालतेहैं उन्हींका मन काशीकी ओर झुकताहै और वेही लोग इस संसारमें यथार्थ मनुष्य कहेजासकतेहैं, अपर लोग तो सचमुच मनुष्यरूप पशुही होतेहैं ॥ ३१ ॥ इसलोकमें जिनने वाराणसीको पालिया वेही तो कालकोभी जीतसकते हैं, और वेही निष्पापभी होजातेहैं, और उन्हीं लोगोंको फिर कभी गर्भवासका दुःखभी नहीं भोगना पडता ॥ ३२ ॥ समस्त कल्याणोंके आधार और देवतोंकेभी दुष्प्राप्य इस मनुष्य जन्मको विना काशीके दर्शन किये वृथा नहीं करना चाहिये ॥ ३३ ॥ (क्योंकि) जिस किसीने परमआनंददायिनी, अविमुक्त क्षेत्ररूपा इस काशीपुरीका दर्शन पालिया, फिर तो क्या काल, किंवा कलि, अथवा अनेक प्रकारके कर्म (फल), उस जीवका क्या करसकतेहैं ॥ ३४ ॥ वेही लोग गर्भमें बास करतेहैं, और उन्हीं लोगोंको वारंवार गर्भवासका दुःख भोगना पडताहै, जो लोग गर्भरूप वनके काटनेवाली वरणा और असि (वाराणसी) का सेवन नहीं करते ॥ ३५ ॥ इन बातोंको सुन गरुडनेभी माताको प्रणामकरके कहा कि "मैंभी महादेवके द्वारा पूजित काशीक्षेत्रको देखनेके लिये चलूंगा" ॥ ३६ ॥ अनन्तर माताकी आज्ञाको पाकर उसेभी साथ ले पक्षिराज गरुड क्षणमात्रमें मोक्ष धाम काशीपुरीमें जापहुँचे ॥ ३७ ॥ और वहांपर जितेंद्रिय गरुड शिवलिंगकी स्थापना कर एवं विनताभी खखोल्क नामक आदित्यकी मूर्ति प्रतिष्ठित कर, फिर वे दोनोंही महाबुद्धिमान् जन घोरतपस्या करनेलगे, और थोडेही दिनोंमें उन दोनोंने बडी तपस्यासे भगवान् शंकर और भास्कर दोनोही देव काशीमें परमप्रसन्न होगये और गरुडके स्थापितलिंगसे प्रकट होकर भगवान् उमापतिने गरुडको बहुतसे अत्यंत दुर्लभ वरोंको दान किया और यह कहा कि—"हे खगेन्द्र ! तुम मेरे भक्तहो अतः तुमको यथार्थज्ञान होजावेगा ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ १४० ॥ ४१ ॥ और तुम्हारे वे रहस्यभी ज्ञात होजावेंगे जिनको (आजतक) देवतोंनेभी नहीं जानाहै और इस तुम्हारे स्थापित शिवलिंगका नाम गरुडेश्वर पडेगा ॥ ४२ ॥ एवं जो लोग इसका दर्शन स्पर्शन और पूजन करेंगे उनको यह परमज्ञान दान करेगा;

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पक्षीन्द्र ! अब औरभी एक बात कहतेहैं जोकि तुम्हारी बडीही हितकरहै, उसे सुनो ॥ ४३ ॥ जोई मैंहू सोई विष्णुहैं, हम दोनोंमें कुछभी भेदकी दृष्टि मत रखना, हे पक्षिराज ! दैत्येन्द्रके बलविध्वंसक उस विष्णुदेवके ॥ ४४ ॥ उत्तमबाहन बनकर, हे गरुड ! तुमभी सर्वत्र पूजनीय होजाओगे । इसप्रकारसे अपने भक्त गरुडको वरदान कर भगवान् शम्भु ॥ ४५ ॥ वहांहीपर अन्तर्धान होगये, और (इधर) गरुडभी विष्णुके पास जाय और इनका वाहन बनकर संसारमें सब किसीके पूजनीय होगये ॥ ४६ ॥ (उधर) काशीवासियोंके अनेक जन्मसंचित पापोंके क्षयकर्ता भगवान् महादेवहीके दूसरेरूप खखोल्कादित्य एकबार घोरतपस्या करतीहुई विनताको देख उसे पापनाशक शिवज्ञानके सहित उत्तम वरदान कर ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ उसीदिनसे विनतादित्यके नामसे प्रसिद्ध होकर वहांपर रहनेलगे । इस प्रकारसे भगवान् खखोल्कादित्य काशीवासियोंके विघ्नरूप अंधकारको दूर करते रहते हैं ॥४९॥ काशीके पिलपिलातीर्थमें (त्रिलोचनपर) खखोल्कादित्यके दर्शन करनेहीसे मनुष्य समस्त पापोंसे छूट जाताहै, और अपने अभीष्ट फलको पाकर तुरन्त नीरोग होजाताहै ॥ १५० ॥ और जो कोई इस खखोल्कादित्य और गरुडेश्वरके माहात्म्यको श्रवण करताहै, वहभी समस्त पापोंसे निर्मुक्त होजाताहै ॥ १५१ ॥

सुने खखोल्कादित्य औ, गरुडेश्वरके नाम ।
सफल मनोरथ होहिं नर, सुधरहिं जग सब काम ॥ १ ॥
पूर्वार्द्धपूर्तिर्विहिताद्यकाशी—खण्डानुवादेगिरिशप्रसादात् ।
विशोध्य भाषां बहुदोषपूर्णां, भवन्तु सन्तो मुदितामहान्तः ॥२॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे पूर्वार्द्धे खखोल्कादित्य गरुडेश्वरकथावर्णनं नाम पंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५० ॥

इति काशीखंडभाषायां पूर्वार्द्धं समाप्तम् ।

"श्रीविङ्कटेश्वर" स्टीम्—यन्त्रालय—बंबई.

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इति

श्रीकाशीखण्ड भाषा पूर्वार्द्ध

समाप्त।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

॥ श्रीः ॥

काशीखण्ड-उत्तरार्द्धभाषा.

(स्कन्दपुराणान्तर्गत चतुर्थखण्डोत्तरार्द्ध)

जिसको

श्रीकाशीनिवासी पण्डित **नारायणपति**
त्रिपाठीके द्वारा भाषानुवादित कराय

खेमराज श्रीकृष्णदासने

बम्बई

निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्प्रेसमें

मुद्रितकर प्रसिद्ध किया.

संवत् १९६९ शके १८३०.

पुनर्मुद्रणादि सर्वाधिकार "श्रीवेङ्कटेश्वर" यन्त्रालयाध्यक्षने
स्वाधीन रक्खेहैं.

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्रीगणेशाय नमः ।

अथ काशीखण्डोत्तरार्द्ध-भाषा ।

श्लोक—काशीकाशीश्वरौ नत्वा काशीखण्डोत्तरार्द्धके ।
भाषानुवादं तनुते नारायणपतिर्द्विजः ॥ १ ॥

एक्कावनवां अध्याय ।

अरुणादित्य, वृद्धादित्य, केशवादित्य, विमलादित्य, गंगादित्य और यमादित्यकी कथायें ।

अगस्त्यमुनि बोले—हे पार्वतीहृदयानन्दवर्धन ! सर्वज्ञनन्दन ! स्वामिन् ! प्रभो ! यदि आप कृपा करके कहें तो मैं आपसे कुछ पूछा चाहताहूं ॥ १ ॥ सच्चरित्रा विनता दक्षप्रजापतिकी पुत्री और महर्षि कश्यपकी सहधर्मिणी एवं गरुडकी माता होने परभी क्यों दासी हुई थी ? ॥ २ ॥ स्कन्दने कहा—हे महामते ! अगस्त्य ! वह तपस्विनी विनता जिस कारणसे दासी हुईथी उस कथाको भी मैं कहताहूं, श्रवण करो ॥ ३ ॥ पूर्वकालमें कश्यपऋषिसे कद्रूको एक शतपुत्र और विनताके, उलूक, अरुण, और गरुड ये तीन पुत्र उत्पन्न हुए ॥ ४ ॥ हे मुनिवर ! उलूकको विनताके पुत्रोंमें ज्येष्ठ होनेसे पक्षियोंके राज्यपद पानेपरभी सब पक्षियोंने मिलकर उसे निर्गुण कह, राज्यसे उतार दिया ॥ ५ ॥ यह तो क्रूर नेत्र, दिनमें अंधा, और टेढे नखोंवाला है और फिर इसकी बोली सदैव सब लोगोंको बडीही उद्वेगजनक (डरावनी) होती है ॥ ६ ॥ इस भाँति उसकी बडी निन्दाकरतेहुए पक्षिगण स्वेच्छाचारी होकर आज लों किसीको अपना राजा नहीं बनाते ॥ ७ ॥ विनताने अपने ज्येष्ठपुत्र उलूककी वैसी दुर्दशा देखकर पुत्रके देखनेहीकी लालसासे बिचले अंडेकोभी फोरडाला ॥ ८ ॥ हे कुंभज ! उस अंडेको पूरे सहस्र वर्षपर फोडना चाहिये था परन्तु उसने मारे उत्कंठा के आठहीसौ वर्षमें उसे फोडदिया ॥ ९ ॥ (अठवांसा होजानेसे) उस अंडेके भीतर रहनेवाले परमतेजस्वी बच्चेके घुटनोंके (जंघाके) ऊपरका समस्त शरीर सिद्ध हो गयाथा, (पर पैर नहीं होने पायाथा) ॥ १० ॥ अंडेसे निकलतेही अर्द्धनिष्पन्न

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शरीर उस बच्चेने क्रोधसे रक्तमुख होकर माताको शाप दिया ॥ ११ ॥ हे जननि ! तुमने अपनी सवतके गोदमें उसके लडकोंको स्वेच्छानुसार खेलतेहुए देखकर (डाहसे) जो इस अंडेको दो टुकडे करडाला ॥ १२ ॥ इससे मेरा सर्वांग पूर्ण नहीं होनेपाया अतएव हे पक्षिणि ! मैं तुमको शापदेताहूं कि, तुम उसी सवत और उसके पुत्रोंकी दासी होगी ॥ १३ ॥ पुत्रके शापभयसे काँपतीहुई विनताने यह कहा कि, बेटा ! अनूरो ! मुझ माताका शापावसान भी तो कहदो ॥ १४ ॥ अरुणने कहा—हे मातः ! तुम इस तीसरे अण्डेकोभी मेरे ऐसा कच्चाही मत फोरडालो क्योंकि इसी अण्डेसे जो उत्पन्न होगा वही तुम्हारे दासीभावको दूर करेगा ॥ १५ ॥ यह कहकर वह अरुण (तुरंत आकाशमें) उडकर आनंदवनमें चलेगये, जहाँपर भगवान् विश्वेश्वर पंगुकोभी अच्छीगति दे देतेहैं ॥ १६ ॥ हे मुने ! यहतो मैंने तुम्हारे पूँछनेसे विनताके दासीहोनेका कारण कह सुनाया, अब मैं प्रसंग आजानेसे अरुणादित्यकाभी उपाख्यान कहताहूं ॥ १७ ॥ जंघा न रहनेसे जो अनूरु और क्रोधसे रक्तवर्ण होनेसे जो अरुण कहातेहैं, वेही काशीमें जाकर तपस्याके द्वारा सूर्यनारायणकी आराधना करने लगे ॥ १८ ॥ और भगवान् सूर्यभी प्रसन्न हो, उस भक्त अनूरुको वर देके उसीके नामसे अरुणादित्य कहलाने लगे ॥ १९ ॥ सूर्यने कहा—हे विनतानन्दन अनूरो ! तुम सदैव मेरे रथपर बैठे रहो और त्रैलोक्यके हितार्थ आगेसे अन्धकारको विध्वंस करते रहो ॥ २० ॥ इस काशीपुरीमें जो मनुष्य तुम्हारी स्थापित मूर्तिको जो महादेवके उत्तर ओरहै सेवेंगे फिर उनको भय कहाँहै ? ॥ २१ ॥ जो लोग नित्य यहांपर अरुणादित्यके नामसे मेरा पूजन करेंगे उनको दुःख, दारिद्र और पातक कभी नहीं होंगे ॥ २२ ॥ अरुणादित्यके सेवनसे नतो किसी भाँतिकी व्याधियाँ होतीं हैं न कोई उपसर्ग बाधा पहुँचासकतेहैं, और न कदापि शोकाग्निदहन करसकताहै ॥ २३ ॥ इसके पीछे सूर्य अरुणको अपने रथपर चढालेते तबसे आजतक सूर्यके रथपर प्रभातकालमें अरुण उदय होतेहैं ॥ २४ ॥ जो मनुष्य प्रतिदिन प्रातःकालमें सोकर उठतेही सूर्यको एवं अरुणको प्रणाम करताहै उसे दुःख भय कहाँहै ? ॥ २५ ॥ अरुणादित्यके इस माहात्म्यको जो कोई सुनेगा उसे किसी प्रकारके दुष्कृतका भागी नहीं होना पडेगा ॥ २६ ॥ स्कन्द फिर कहने लगे (अगस्त्यमुने ! अब) वृद्धादित्यकी महिमाको मैं कहताहूं आप श्रवण करें, सुननेहीसे मनुष्य निष्पाप होजाताहै ॥ २७ ॥ पूर्वकालमें इसीवाराणसी धाममें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

५

हारीतनामक एक बडे तपस्वी दृढभक्तिपूर्वक उग्र तपस्याकी समृद्धिके लिये विशालाक्षी देवीके दक्षिण ओर शुभप्रदा और शुभलक्षणोंसे युक्त एक मूर्ति स्थापन करके सूर्यदेवकी आराधना करने लगे ॥ २८ ॥ २९ ॥ उग्र तपस्यासे सन्तुष्ट होकर सूर्यने उस वृद्धतपस्वीसे कहा कि, अब विलम्ब मतकरो जो चाहो सो वर मुझसे माँगलो मैं देनेको सन्नद्ध हूं ॥ ३० ॥ तब उस मुनिने परमप्रसन्न सूर्यसे यह वरदान माँगा कि, हे भगवन् ! यदि आप प्रसन्नहैं तो मुझे फिर जवानी दीजिये ॥ ३१ ॥ क्योंकि मैं अब वृद्ध होगयाहूं इससे तपस्या करनेकी सामर्थ्य मुझमें नहींहै, यदि चेत् मैं फिर तरुण होजाऊं तो अत्युत्तम तपस्या करसकूंगा ॥ ३२ ॥ तपही परमधर्महै, तपही परमधनहै, तपही परमकामहै, और तपही मोक्षभी है ॥ ३३ ॥ तपस्याको छोडकर दूसरे किसी प्रकारसे ऐश्वर्यकी सम्पत्तियाँ कहींभी नहीं मिलसकतीं, क्योंकि ध्रुव इत्यादि महात्माजनोंनेभी केवल तपस्याकेही बलसे उत्तमपदको प्राप्त कियाहै ॥ ३४ ॥ सुतराम् मैंभी आपके अनुग्रहरूप वरदानसे सर्वसम्मत यौवन पाकर उभयलोकमें बडाई देनेवाली तपस्याहीका अनुष्ठान करूंगा ॥ ३५ ॥ इस संसारमें जिससे सभी लोग विरक्त होजातेहैं इस प्राणियोंकी जराको धिक्कारहै ! ! क्योंकि जिसकी इंद्रियाँ जराग्रस्त होजातीहैं फिर स्त्रियांभी उसके वशमें नहीं रहतीहैं ॥ ३६ ॥ बरन्, मरजाना अच्छाहै, परन्तु परमशोचनीय यह जरा न होवे, क्योंकि मरनेमें तो क्षणमात्रका दुःखहै, परन्तु यह जराका दुःख क्षणक्षणमें सताता रहताहै ॥ ३७ ॥ जितेन्द्रिय लोग, बहुतकालतक तपस्या करनेहीके लिये दीर्घआयु, दानकरनेको धन, पुत्रोत्पादनके अर्थ पत्नी, और मुक्तिसाधनके निमित्त उत्तम बुद्धिके उपार्जन करनेकी अभिलाषा करते रहतेहैं ॥ ३८ ॥ भगवान् सूर्यने तुरन्त उस बूढे ऋषिकी बुढौतीको दूरकर, बडी सुन्दरताका हेतु और पुण्योंका साधन तारुण्य देदिया ॥ ३९ ॥ इस रूपसे महामुनि वृद्धहारीतने वाराणसीपुरीमें सूर्यनारायणके प्रसादसे यौवन पाकर घोर तपस्या कीथी ॥ ४० ॥ तपस्वी वृद्धहारीतके आराधना करनेसे (उस मूर्तिका) वृद्धादित्य नाम पडा, और वे बुढापाके दूरकरनेवाले कहे जातेहैं ॥ ४१ ॥ हे घटयोने ! काशीपुरीमें बहुतसे लोगोंने इन जरा, दुर्गति, और रोगोंके विनाशक वृद्धादित्यकी उपासना करके (बडी) सिद्धिको प्राप्त कियाहै ॥ ४२ ॥ वाराणसीक्षेत्रमें जो कोई रविवारको वृद्धादित्यकी वन्दना करताहै, उसे कभी दुर्गति नहीं भोगनी पडती, और वह जन अपनी अभीष्टसिद्धिको प्राप्त करताहै ॥ ४३ ॥ स्कन्द बोले—हे मुने ! अब केशवादित्यकी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उत्तम महिमा सुनिये, जैसे सूर्यने केशवको पाकर उनसे ज्ञान प्राप्त किया था (उसेभी कहताहूं) ॥ ४४ ॥ आकाशमें भ्रमण करतेहुए सूर्यने एकबार आदि केशवको भक्तिभावसे शिवलिंगकी पूजा करतेहुए देखा ॥ ४५ ॥ यह देख, सूर्य मानो कौतुकसे (भूतलपर—काशीमें) उतरकर भगवान् केशवके पास जा चाप जाकर निश्चलरूपसे स्वस्थचित्त हो बडे आश्चर्य्यमें आकर खडे रहे ॥ ४६ ॥ और केशवसे कुछ पूँछनेकी इच्छासे अवसरकी प्रतीक्षा करने लगे, अनन्तर जब विष्णु लिंग पूजन करचुके (तब अवकाशपाय) सूर्यने हाथ जोडकर प्रणाम किया ॥ ॥ ४७ ॥ विष्णुनेभी बडेही आदरसत्कारके साथ उनका आगत स्वागत करके भुजा कन्धर सूर्यको अपने समीपमें बैठाया ॥ ४८ ॥ अनन्तर अवसर देखकर सूर्य विष्णुको प्रणामकर उनसे आज्ञा लेकर यह निवेदन करने लगे ॥ ४९ ॥ सूर्य बोले—हे जगत्पते ! विश्वम्भर ! आपतो समस्त जगत्के अन्तरात्माहैं, अतएव हे माधव ! आपही जगत्मात्रके पूजनीयहैं, परन्तु यहांपर क्या कोई आपकाभी पूजन है ? ॥ ५० ॥ हे जगदाधार ! यह समस्त संसार आपहीसे उत्पन्न होताहै और आपही इसकी रक्षा करतेहैं और फिर यह सब कुछ आपहीमें लीनभी होजाताहै (तो फिर आप किसे पूजतेहैं ?) ॥ ५१ ॥ हे नाथ ! यही आश्चर्य देखकर मैं आपके पास आयाहूं कि आप स्वयं भवतापभंजक होकरभी यह किसकी पूजा कर रहेहैं ? ॥ ५२ ॥ सूर्यका यह वचन सुनकर विष्णुने हाथके संकेतसे उनको उच्च स्वरसे बोलनेका निषेध कर दिया, ॥ ५३ ॥ श्रीविष्णु कहने लगे—इस काशीपुरी मेंमें समस्त कारणोंकेभी कारण, देवाधिदेव, नीलकण्ठ, भगवान्, उमापति महादेवही एकमात्र पूजनीय हैं ॥ ५४ ॥ यहांपर जो मन्दबुद्धि जन भगवान् त्रिलोचनको छोड दूसरे किसी देवताका पूजन करताहै, उसे दोनों लोचन रहतेभी लोचनसे हीनही समझना चाहिये ॥ ५५ ॥ एकमात्र जन्म मृत्यु और जराके हरणकरनेवाले मृत्युंजयही सबके पूज्यतमहैं, क्योंकि राजा श्वेतकेतुने मृत्युंजयहीके पूजनबलसे मृत्युको भी हरादिया था ॥५६॥ भृंगीनेभी तो कालकेभी काल महाकालहीकी आराधनाके बलसे कालको जीताथा, और मृत्युने शिलादके पुत्रको भी मृत्युंजयका अभय होनेहीसे छोडदिया था ॥ ५७ ॥ जिसके अनायास एक बाण फेंकदेनेहीसे त्रिपुर पराजय होगया, उस भूतनाथ शिवकी पूजा करनेसे कौन परमपूज्य नहीं होजाताहै ॥ ५८ ॥ त्रैलोक्य विजयशील, कारणभूत, भगवान् महादेवकी आराधनाही

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

७

पुरुषार्थका साधन है हे सूर्य ! जिनके नेत्रकी पलक गिरपडनेहीसे संसार लयहोजाताहै, और फिर आँख खोलतेही जगत् खिल उठता है वे कामनाशन विश्वनाथ किसके परमपूजनीय नहींहैं और कौन उनका पूजन नहीं करता ? ॥ ५९ ॥ ॥ ६० ॥ यहांपर महादेवके लिंगका पूजन करके मनुष्य चारोंही पुरुषार्थोंको तुरन्त प्राप्त करताहै इसमें कुछभी सन्देह नहींहै ॥ ६१ ॥ शिवलिंगके पूजन करनेसे मनुष्य सैकडों जन्मके संचितपापराशिको छोडही देताहै, यहबात ध्रुवहै॥ ६२॥ यहाँपर शिवलिंगके समर्चनसे क्या क्या फल नहीं मिलता, ? निःसन्देह पुत्र, कलत्र, क्षेत्र, स्वर्ग और मोक्ष सब कुछ प्राप्त होजाताहै ॥ ६३ ॥ हे सहस्ररश्मे ! मैंने केवल शिवलिंगार्चनहीसे त्रैलोक्यभरकी समस्त ऐश्वर्य सम्पत्ति प्राप्त कीहै यह बात वारंवार सत्यहै ॥ ६४ ॥ इस स्थानपर एक शिवलिंगका पूजनही परमयोगाभ्यास, उग्रतपस्या और सर्वोत्तम ज्ञानहै, ॥ ६५ ॥ जिन लोगोंने यहाँपर एकबारभी पार्वतीनाथके लिंगका पूजन करलिया उनको इस दुःखभाजन संसारमें फिर दुःखका कौन डरहै ॥ ६६ ॥ हे दिवाकर ! जो कोई सबकुछ त्यागकर केवल शिवलिंगहीके शरणमें चलाजाताहै, हे रवे ! उसे बडेसे बडे पापभी दुःखित नहीं करसकते ॥ ६७ ॥ हे भास्कर ! महेश्वर जिनके पुनर्जन्म दुःखको छोडाया चाहतेहैं, उन्हींकी बुद्धि यहांपर शिवके लिंगार्चनमें दृढ होजातीहै ॥ ६८ ॥ शिवके लिंगाराधनसे बढकर त्रैलोक्यमें दूसरा कुछभी पुण्य कर्म नहीं है क्योंकि एक शिवलिंगके स्नान जलहीके सेवन करलेनेसे समस्त तीर्थोंके स्नानका फल मिलजाताहै ॥ ६९ ॥ अतएव, हे सूर्य ! तुमभी सर्वोत्कृष्ट महातेजोभिवर्धिनी लक्ष्मी पानेके लिये शिवलिंगका समर्चन करो ॥ ॥ ७० ॥ हे मुने ! विष्णुके इस वचनको सुनकर सूर्यदेव तभीसे स्फटिकमणिका शिवलिंग बनाकर अद्यावधि पूजन करते हैं ॥ ७१ ॥ और आदिकेशवको गुरु मानकर भगवान् सूर्य आजलों आदिकेशवके उत्तरभागमें वहींपर खडे रहतेहैं ॥ ७२ ॥ एवं उनका नाम केशवादित्यहै, और वे काशीमें भक्तोंके तमको दूर करतेहैं, और पूजित होनेपर सदैव मनोवांछित फल देते हैं ॥ ७३ ॥ उत्तम नर वाराणसीपुरीमें केशवादित्यके आराधनसे उस परम (तत्त्व) ज्ञानको पाजाताहै जिसके द्वारा अन्तमें निर्वाणपदका भागी होताहै ॥ ७४ ॥ वहांपर पादोदकतीर्थमें समस्त स्नानादि जल कर्मोंको कर केशवादित्यके दर्शन करनेहीसे जीव समस्त जन्मके पापोंसे छुटकारा पाजाताहै ॥ ७५ ॥ हे अगस्त्य ! माघ सुदि सप्तमीको जब रविवार पडजावे तब उस

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पादोदक तीर्थमें आदिकेशवके समीपही प्रातःकाल मौनी होकर स्नानके अनंतर केश-
वादित्यके पूजन करनेसे मनुष्य उसी घडी सातजन्मके बटोरेहुए पापोंसे मुक्त होजाताहै
॥ ७६ ॥ ७७ ॥ "मैंने सातजन्ममें जो जो पाप किये हों, उन्हें और मेरे
शोक और रोगको यह मकरसंक्रातिकी सप्तमी नष्ट करदेवे" ॥ ७८ ॥
इस जन्ममें अथवा दूसरे जन्ममें, मनसे, वचनसे, शरीरसे ज्ञानसे और अज्ञानसे
जो किये गयेहों ॥ ७९ ॥ इन सातों प्रकारके पापोंको सातों व्याधियोंके
सहित, हे सप्तसप्तिके ! माकरि ! सप्तमि ! तुम हरण करलो ॥ ८० ॥ जो
मनुष्य इन तीनों श्लोकरूप मन्त्रोंको पढताहुआ पादोदक तीर्थमें स्नान करके
आदिकेशवका दर्शन करताहै वह क्षणमात्रमें निष्पाप होजाताहै ॥ ८१ ॥ श्रद्धा
युक्त होकर जो कोई केशवादित्यका माहात्म्य सुनताहै वह पापमें कभी नहीं पड्ता
और शिवकी भक्तिको पाताहै ॥ ८२ ॥ स्कन्दने फिर कहा—हे मुनिवर ! अब
विमलादित्यके उत्तम इतिहासको श्रवण करो, जो कि काशीके हरिकेश वनमें विराज
मान हैं ॥ ८३ ॥ पूर्वकालमें पर्वतीय उच्चदेशमें विमलनामक एक क्षत्रियथा, वह
यद्यपि विमलमार्गहीसे चलताथा, पर पूर्वजन्मके कर्मफलसे ॥ ८४ ॥ कुष्ठरोगी हो
गया था, फिर वह बुद्धिमान् अपनी स्त्री घर और धन इत्यादि सबको छोड काशीमें
आकर सूर्यकी आराधना करने लगा ॥ ८५ ॥ नित्यही कनइल, उडहुल, दुपह-
रिया, परास, रक्ताशोक, और रक्तकमलके उत्तम पुष्पोंसे ॥ ८६ ॥ एवं पाटल
(गुलाब) और चंपककी विचित्र गुँथीहुई मालाओंसे, और केशर अगर, कपूरसे
सहित रक्तचन्दनोंसे ॥ ८७ ॥ और बडे सुगंधपूर्ण देवमोहन धूपोंसे तथा कपूरकी
बत्तीवाले दीपोंसे एवं घृत और पायसके नैवेद्योंसे ॥ ८८ ॥ विधिवत् अर्घ्यदान
और सूर्यके स्तोत्र पाठोंसे आराधना करतेहुए उस विमलवर्माके ऊपर प्रसन्न होके
सूर्यदेव वरदान करने आये ॥८९॥ और कहने लगे हे विमलचेष्टित ! विमल वर माँगो
तुम्हारा कुष्ठ तो छूटही जावेगा, पर तुम औरभी दूसरे वरकी प्रार्थना करो
॥ ९० ॥ भगवान् रश्मिमालीके इस आलापको सुनकर प्रसन्नतासे रोमांचित शरीर
होकर विमलने भूमिपर दण्डवत्प्रणाम कर ॥ ९१ ॥ बहुत धीरेमें एक पहियाके रथ
वाले सूर्यसे निवेदन किया कि, हे अपरिमेयात्मन् ! घोर अंधकारके विनाशक
भगवन् ! जगच्चक्षु ! ॥ ९२ ॥ यदि आप प्रसन्न होकर मुझे वरदान करते हैं
तो हे नाथ ! जो लोग आपके भक्त हों उनके कुलमें कभी कुष्ठ न होवे ॥ ९३ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

९

और हे सहस्रकिरण ! जो आपके सेवक हों उन्हें नतो दूसरेही रोग होवें, न कभी दरिद्रता होवे, और न किसी भांतिका संतापही होनेपावे ॥ ९४ ॥ श्रीसूर्यने कहा—"तथास्तु"—हे परमविज्ञ ! विमल ! (वर्मन् !) एक औरभी उत्तम वरदान सुनलो, काशीमें तुमने इस मूर्तिका पूजन कियाहै ॥९५॥ अतएव हे महामते ! मैं इस मूर्तिसे कभी न हटूंगा (वरन् सर्वदा इसमें बना रहूंगा) और यह प्रतिमा तुम्हारेही नामसे प्रसिद्ध होगी॥९६॥ अर्थात् इसका नाम विमलादित्य पडेगा और यह मूर्ति सर्वदा भक्तजनोंको वर देवेगी उनके समस्त व्याधियोंका विनाश करेगी एवं समग्र पापोंकाभी क्षय करडालेगी ॥९७॥यह कहकर सूर्यनारायण वहाँहीपर अन्तर्धान होगये,और वह विमलभी विमल (निरोग) शरीर होकर अपने घरपर चलागया ॥ ९८ ॥ इस प्रकारसे वाराणसीमें विमलादित्य परमशुभप्रदहैं उनके केवल दर्शनहीसे कुष्ठरोग प्रनष्ट होजाताहै ॥ ९९ ॥ जो मनुष्य विमलादित्यकी इस कथाको श्रवण करताहै वह निर्मल शुद्धिको पाताहै और मानसिक समस्त मलोंसे छूट जाताहै ॥ १०० ॥ स्कन्द बोले—उसी काशीमें विश्वनाथसे दक्षिणओर एक दूसरे सूर्यहैं जिनका नाम गंगादित्यहै उनके दर्शन-मात्रसे मनुष्य परमविशुद्ध होजाताहै ॥ १ ॥ जब कि राजर्षि भगीरथके रथखातमें गंगावहती चलीआतीथी उसीसमय गंगाकी स्तुति करनेके लिये सूर्यदेव वहांपर जा विराजे ॥ २ ॥ और तबसे आजतक भगवान् भास्कर गंगाको सन्मुख कर प्रसन्न मनसे गंगाके भक्तोंको वरप्रदान करतेहुए, रात्रिदिन उसी गंगाकी स्तुति करते रहतेहैं ॥ ३ ॥ जो उत्तम नर काशीमें गंगादित्यकी आराधना करताहै,उसे नतो कभी कोई दुर्गतिही भोगनी पडतीहै और न वह रोगभागीही होताहै ॥ ४ ॥ कार्तिकेयने फिर कहा—हे महाभाग! अब यमादित्यके प्रादुर्भावका उपाख्यानभी श्रवण करलो, जिसके सुननेसे मनुष्य कभी यमलोकको नहीं देखता ॥ ५ ॥ हे मुनिवर ! जिस यमादित्यके दर्शन करनेसे फिर कभी यमलोक नहीं देखना पडता वह (यमघाटपर) यमेश्वर के पश्चिम ओर (आत्मा) वीरेश्वरके पूर्वभागमें विराजमानहैं ॥ ६ ॥ जब मंगल-वारको चतुर्दशी तिथि पडजावे तब जो मनुष्य यमतीर्थमें स्नान करके यमेश्वरका दर्शन करता है वह शीघ्रही अशेषपापोंसे निर्मुक्त होजाताहै ॥ ७ ॥ यमतीर्थपर पूर्वकालमें यमराजने बडीही उज्ज्वल तपस्या करके यमेश्वरनामक शिवलिंग और यमादित्यनामक सूर्यकी मूर्ति जो कि भक्तोंको सिद्धिप्रदहैं प्रतिष्ठित की थी ॥ ८ ॥ यमराजके स्थापना करनेहीसे सूर्यदेवका नाम यमादित्य विख्यात हुआहै और हेकुम्भज !

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वे यमादित्य यमराजकी यातना भोगनेसे बचादेतेहैं ॥ ९ ॥ यमतीर्थमें स्नानकर यमराजके स्थापित यमेश्वर और यमादित्यके प्रणाम करनेहीसे यमलोकका दर्शन नहीं होने पाता ॥ ११० ॥ जो कोई यमतीर्थमें मंगलवार और भरणीनक्षत्र युक्त चतुर्दशीतिथिके दिन तर्पण और पिंडदान करताहै वह पितरोंके ऋणसे छूटजाताहै ॥ १११ ॥ नरकवासी पितृगण सर्वदा यही अभिलाषा किया करतेहैं कि जब भौमवार भरणीनक्षत्रको चतुर्दशी तिथि मिलजानेसे यह उत्तम योग आजावे तो ॥ ११२ ॥ (मेरेवंशका) कोई महाबुद्धिमान् काशीक्षेत्रके यमतीर्थमें स्नान कर हम सबके मुक्तिके लिये यदि तिलका तर्पणभी करदेता तो हमलोग तृप्त होजाते ॥ ११३ ॥ गयाजानेसे अथवा लंबी दक्षिणाके श्राद्धकरनेसे कौन प्रयोजनहै ? यदि काशीके यमतीर्थपर उक्त योगमें श्राद्ध मिलजावे ॥ ११४ ॥ यमतीर्थमें श्राद्ध, यमेश्वरका पूजन और यमादित्यके नमस्कार करनेहीसे मनुष्य पितरोंके ऋणसे छूट जाताहै ॥ ११५ ॥ स्कन्दने कहा—हे अगस्त्य ! यह तो मैंने तुमसे पापनाशक द्वादशआदित्योंको वर्णन किया, इनके प्रादुर्भावकी कथा सुननेसे मनुष्य नरकभागी नहीं होता ॥ ११६ ॥ हे घटयोने ! सूर्यभक्तोंके स्थापित औरभी अनेकगुह्यकादित्य प्रभृति सूर्य (मूर्तियाँ) काशीमें विराजमानहैं ॥ ११७ ॥ इन द्वादशादित्यकी कथावाले अध्यायोंके सुनने और सुनानेसे मनुष्य कहींभी दुर्गतिमें नहीं पडताहै ॥ ११८ ॥

दोहा—सुनै द्वादशादित्यके, जो इतिहास पुनीत ।
कटै रोग सब दुख मिटै, घटे न वित सुखमीत ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्द्धे भाषायां अरुणादित्य, वृद्धादित्य केशवादित्य, विमलादित्य, गंगादित्य यमादित्यकथावर्णनंनामैकपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५१ ॥

बावनवाँ अध्याय ।

दशाश्वमेधका वर्णन ।

स्कन्द बोले—हे मुने ! सूर्यदेवके त्रैलोक्यमोहिनी काशीपुरीमें चलेजानेपर मन्दराचलवासी भगवान् महादेव फिर बडी चिन्ता करने लगे ॥ १ ॥ (कि यह क्या हुआ ? न तो आजतक योगिनियाँ लौटीं, न सूर्यही फिरके आये ? बडाही आश्चर्य है !! मुझे तो काशीके समाचारका मिलनाही अत्यंतदुर्लभ होपडाहै ॥ २ ॥ यह कौनसा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

११

विचित्र बातहै, जब कि काशी मेरेभी दृढ चित्तको चंचल कररहीहै तो अन्य देवतोंकी कौन गिनतीहै ॥ ३ ॥ अहो ! त्रैलोक्यविजयी कामदेवको मैंनेही अपने नेत्रकी ज्वालासे भस्म करदिया था, परन्तु आज काशीकी अभिलाषा मुझीको जलाये देती है ॥ ४ ॥ काशीका समाचार लेनेको अब यहांसे किसे भेजूं, (ब्रह्माहीको भेजूं)? इसके समझनेमें तो ब्रह्माही बड़े चतुरहैं, क्योंकि उनका नामही चतुरानन है ॥५॥ यही स्थिरकर, महादेवने ब्रह्माको बडे आदरके साथ बुलाकर, और अपने पासमें बैठाकर, उनसे यह कहा कि ॥ ६ ॥ हे कमलसंभव ! मैंने पहिले तो योगिनियोंको भेजा फिर सूर्यकोभी भेजा, परन्तु आजतक वे सब काशीसे नहीं लौटे ॥ ७॥ हे लोकनाथ ! वह काशी तो मेरे चित्तको ऐसा उत्कंठित कररहीहै, जैसे किसी चंचलाक्षी कामिनीके लिये कोई सामान्य जन उत्सुक होजाता हो ॥ ८ ॥ जैसे छोटेसे गड्ढेमें निर्मल और अगाधजल न रहनेसे नाक (नामक जलजन्तु) की प्रसन्नता नहीं होती, वैसेही इस अत्यंतसुन्दर कन्दरावाले मन्दराचलपर (अब) मेरा मन तनिकभी नहीं लगता ॥ ९ ॥ पहिलेभी जब मैंने हलाहल विषको पान कियाथा तबभी मुझे ऐसा संताप नहीं हुआ जैसा कि, आज काशीका विरह मुझको सताय रहाहै ॥ १० ॥ अधिक क्या कहें, यह मेरे शिरमें विराजमान शीतरश्मि चन्द्रमा भी अमृतके कणोंकी वर्षा करके इस काशीके विरहसे उत्पन्न सन्तापके दूर हटानेमें समर्थ नहीं है ॥ ११ ॥ हे महामते ! सर्वश्रेष्ठ ! विधे ! तुम मेरे इस कार्यको सिद्ध करदो, तुम अभी यहांसे काशीको चलेजाओ, और मेरे हित साधनका परिश्रम उठाओ ॥ १२ ॥ हे ब्रह्मन् ! मेरे काशी त्यागनेका कारण तुम भलीभाँति जानतेहो, अरे कोई मूर्खभी काशीको नहीं छोडता फिर जो कुछभी समझता होगा उसकी कौन बातहै ॥ १३ ॥ हे विधातः ! मैं तो आजही अपनी मायासे काशीमें चलाजाता, पर क्या करूं अपने धर्मपर आरूढ राजा दिवोदासको उल्लंघन नहीं किया चाहता ॥ १४ ॥हे विधे ! तुम्हीं तो समस्तविधियोंके विधाता हो, अतएव तुमको कहनेका उपदेश देना तो सर्वथा व्यर्थहीहै ॥ " बहुत बुझाइ तुमहिं का कहहूं, परमचतुर मैं जानत अहहूं ॥ काज हमार तासु हित होई । रिपु सन करेहु बतकहि सोई " (तु०रा०) ॥ १५ ॥ तुम निर्विघ्न यात्रा करो, तुम्हारा पथ अत्यंतशुभफल दायक होवे, इस प्रकारसे महादेवकी आज्ञाको शिरोधार्य कर ब्रह्मदेव बडे हर्षसे वाराणसीको चले ॥ १६ ॥ अनंतर श्वेतहंस वाहन ब्रह्मा अत्यंत शीघ्रही काशी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पुरीमें पहुँचजानेसे अपनेको कृतकृत्य समझने लगे ॥ १७ ॥ (और मनही मन यह कहने लगे कि) आज काशीके समागम विषयमें मेरा हंसवाहन होना सफल होगया क्योंकि काशीकी प्राप्तिमें पैर पैरपर विघ्न आपडतेहैं, यह शास्त्रमें कहागया है ॥ १८ ॥ आज मेरी आँखोंसे दृशिधातु सार्थक होगया, जो यह आनन्दवाटिका काशी मेरे दृष्टिपथपर स्पष्टरूपसे आगई ॥ १९ ॥ अहाहा ! जिस नगरीमें पुण्यजला स्वयं स्वर्गतरंगिणी गंगा बहरहीहैं, और जहांके मनुष्योंको कौन कहे ! वृक्षगणभी सर्वदा आनन्दके रूपही दिखाई पडते हैं ॥ २० ॥ जिस काशीमें अन्यत्रके उत्पन्नभी फलादिक आतेही आनंदप्रद होजातेहैं, वही काशी सदैव आनंदभूमि है और वहांपर सर्वदैव आनन्दके दाता महादेव विराजमान रहते हैं ॥ २१ ॥ इसीसे काशीमें सभी जन्तु आनन्दके रूपही होजातेहैं, जिन पुण्यप्राणियोंके चरण विश्वनाथके नगरकी भूमिपर विचरण करें, वेही चरण इस भूलोकमें विचरण करना जानतेहैं, । सुननेवालोंके जो कान एकबारभी काशीका नाम सुनलेते हैं वेही बहुश्रुत कान सुननेका फल समझतेहैं । इस संसारमें मनस्वी लोगोंका वही मनन करसकताहै, जो इसी काशीको समस्तप्रमाणोंकी भूमि मानताहै । इस लोकमें बुद्धिमान् सज्जनोंहीकी वह बुद्धि सब कुछ निश्चय कर सकतीहै जो महादेवके धाम इस काशीहीको अपना विषय बना डालेहै ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ आँधी बावंडरसे उधिराएहुए घास पात इत्यादिभी जो कि काशीमें जा पड़ते हैं वे अच्छेहैं परन्तु जगत्में काशीके न देखनेवाले लोग भले नहींहैं ॥ २६ ॥ आज मेरी यह दोपरार्द्ध (परिमाण)की आयुष्य सफल होगई, जिसके बने रहनेसे मैंने इस दुर्लभ काशीपुरीको पायाहै ॥ २७ ॥ अहाहा ! कैसी मेरी धर्मसंपत्तिहै और कैसा मेरे भाग्यका गौरवहै? कि मैं बहुत दिनोंसे जिसकी चिन्तामें पडाथा, आज उसी काशीको देखसका ॥ २८ ॥ आज शिवभक्तिरूप जलधाराका सींचाहुआ मेरा तपोवृक्ष अत्यंत बडे मनोरथरूपी फलोंसे बहुत लदरागयाहै ॥ २९ ॥ यद्यपि सृष्टि करतेहुए मैंने बहुत भांतिकी सृष्टि बनाडाली, परन्तु स्वयं विश्वनाथकी रचीहुई यह काशी तो कुछ और ही चालकी है । " विधिहि भयो आचरज विशेषी । कतहुँ न आपनि रचना देखी " ॥ ३० ॥ वाराणसीपुरीको देख प्रसन्न चित्त होकर ब्रह्माने वृद्ध ब्राह्मणका रूप धारण करके राजाकोभी देखा ॥ ३१ ॥ और हाथमें जल और ओदा अन्न लेकर उनको स्वस्तिपूर्वक आशीर्वाद दिया, फिर राजाको प्रणाम करके (आप

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१२

हाथसे) दिएहुए आसनपर वे बैठगये ॥ ३२ ॥ राजा दिवोदासने जब आसन और उठ खडेहोने इत्यादिसे उनका आदर सत्कार करके आगमनका प्रयोजन पूछा तब वृद्ध ब्राह्मणने कहा—॥ ३३ ॥ ब्राह्मण बोला—राजन् ! मैं यहांपर बहुत दिनका पुराना (बूढा) हूं, और तुमतो मुझे नहीं जानतेहो पर मैं तुमको भलीभांतिसे जानताहूं॥ ३४ ॥ मैंने ऐसे सैकडोंही राजोंको देखा, जो बडी दक्षिणा देनेवाले, अनेकयुद्धोंके विजेता बडे यज्ञशील, जितेन्द्रिय, ॥ ३५ ॥ कामादि छहों शत्रुओंके विजयी परमसुशील, बडे सात्विक, शास्त्रके पारंगत, राजनीतिके मर्मज्ञ ॥ ३६ ॥ दया और दाक्षिण्यमें निपुण, सत्यव्रतमें तत्पर, क्षमामें पृथिवीके समान, गंभीरतामें समुद्रसेभी अथाह ॥ ३७ ॥ रोषके वेगको रोकनेवाले, शूर परमसौम्य (सीधे) अतिसुन्दर और यशरूप धनके संचय करनेवाले, एवं बडेही गुणसंपन्न होगयेहैं ॥ ३८ ॥ परन्तु हे राजर्षे ! जो दो तीन उत्तम गुण तुम्हारे में हैं प्रायः करके वे सब और दूसरे किसी राजोंमें मुझे नहीं दिखाई पडे ॥ ३९ ॥ जैसा कि तुम प्रजाओंको अपना कुटुंबही समझतेहो, और ब्राह्मणोंहीको देवता मानतेहो, अथवा केवल तपस्याहीकी सहायता लेतेहो, ऐसे तो कोई भी राजा नहीं हुएहैं ॥ ४० ॥ हे दिवोदास ! तुम्हीं धन्य और मान्य, तथा अपने उत्तम गुणोंके द्वारा सज्जनोंकेभी पूजनीय हो, क्योंकि तुम्हारे डरसे देवतालोगभी कुमार्गपर नहीं चलने पातेहैं ॥ ४१ ॥ हे नृप ! हमलोग तो निस्पृह ब्राह्मणहैं; कोई स्वार्थ रखकर तुम्हारी बडाई नहीं करते, पर क्या करें ? तुम्हारे गुणोंके वशमें पडकर तुम्हारे अधीन होरहेहैं ॥ ४२ ॥ अच्छा तो इन बातोंसे कौन प्रयोजनहै, अब मैं अपने आनेका कारण बतलाताहूं, हे महाराज ! मैं यज्ञ कियाचाहताहूं, अतएव तुम मेरे सहायक बनो ॥ ४३ ॥ हे राजन् ! यह भूमण्डल तुम्हारेही द्वारा सराजक और समस्त संपत्तियोंका पात्र बनाहै, और मैं क्षुद्र प्रजाहोनेपरभी तुम्हारे राज्यमें न्यायानुसार धनको उपार्जित करके सुखपूर्वक कालयापन कररहाहूं ॥ ४४ ॥ तुम्हारी राजधानी यह काशीपुरी समस्त कर्मभूमिमें सर्वोत्तमहै, क्योंकि इसमें जो कुछ कर्म अनुष्ठित होतेहैं प्रलयकालमेंभी उनका क्षय नहीं होता ॥ ४५ ॥ जिन लोगोंने न्यायपूर्वक सच्चे मार्गसे धन बटोराहो वे उस धनको काशीहीमें लगावें नहीं तो उसके द्वारा क्लेशही भोगना पड़ताहै ॥ ४६ ॥ हे भूपाल ! इस काशीकी यथार्थ महिमाको सब किसी के ज्ञानदाता, त्रिनयन महादेवको छोड़कर और कोईभी नहीं जानता ॥ ४७ ॥ मेरी समझमें तुम परमधन्यहो जो अनेकजन्मके संचित पुण्यके प्रभावसे विश्व-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नाथकी दूसरी मूर्ति इस काशीपुरीका पालन करतेहो ॥ ४८ ॥ यह काशी तो त्रैलोक्यभरमें सारभूमिहै, और यही तीनों वेदोंकी निचोडभी है, एवं इसीमें निवासके अनंतर मोक्षभी मिलताहै, ऐसाही बडे बडे ऋषियोंने निर्णय कियाहै ॥ ४९ ॥ हे राजन् ! विश्वनाथके बडे अनुग्रहहीसे तुम इस नगरीका प्रतिपालन करतेहो, क्योंकि इस काशीमें एक प्राणीकेभी रक्षण करनेसे त्रैलोक्यकी रक्षा हो जाती है ॥ ५० ॥ हे अनघ ! मैं औरभी एक बात जो तुम्हारा हित करनेवालीहै, उसे कहताहूँ परन्तु यदि वह तुमको भावे, तो उसे अवश्यमेव करो । वह यहीहै कि, समस्त कर्मोंके द्वारा सर्वदेव भगवान् विश्वेश्वरको प्रसन्न रक्खो ॥ ५१ ॥ हे राजन् ! इन विश्वेश्वरको दूसरे साधारण देवतोंकी बुद्धिसे कभी मत देखना, क्योंकि ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, चन्द्र, और सूर्य इत्यादि देवतोंको तो उनने खेलवाड़ करनेको बनायाहै ॥ ५२ ॥ शुभाकांक्षी ब्राह्मणको उचितहै कि, राजालोगोंको उचित शिक्षा देवे, अतएव मैंने यह हितकर विषय तुमसे कहाहै नहीं तो मेरे ऐसे सामान्य मनुष्यको इस चिन्ताका कौन प्रयोजन है ? ॥ ५३ ॥ ऐसा कहकर उस ब्राह्मणके चुप होजानेपर राजा दिवोदासने उत्तर दिया कि हे द्विजोत्तम ! आपने जो कुछ कहा मैंने उन सबको अपने हृदयमें बैठा लिया ॥ ५४ ॥ फिर राजाने कहा—मैं तो आपका सेवकहूँ, अतएव यदि आप यज्ञकिया चाहतेहैं तो उसकी सहायताके लिए जो जो यज्ञकी सामग्री चाहे वह सब मेरे कोशागारसे लेजाइये ॥ ५५ ॥ हे ब्रह्मन् ! मेरे इस सप्तांगराज्यमें जोकुछ वस्तुहै आप उस सबके स्वामीहैं, अतएव आप स्वस्थचित्त होकर यज्ञ करें और उसके समस्त प्रयोजनीय वस्तुओंको उपस्थितही समझें ॥ ५६ ॥ हे विप्रवर ! यह राज्य जो मैं कररहाहूं स्वार्थके लिये कुछभी नहीं करता, मैं तो पुत्र स्त्री और अपने शरीरसेभी परायेके उपकारही करनेकी चेष्टा करता रहताहूं ॥ ५७ ॥ पंडितलोगोंने राजोंको यज्ञानुष्ठान और तीर्थ सेवनसे भी बढ़कर प्रजापालनहीको एक मुख्य धर्म कहाहै ॥ ५८ ॥ क्योंकि प्रजाओंके संतापका अग्नि वज्रके अग्निसेभी बड़ा भयंकर है, देखिये वज्रका अग्नि केवल दोही तीन जनोंको दग्ध करसकताहै परन्तु प्रजाका संतापानल तो राज्यकुल और शरीरकोभी भस्मही करडालताहै ॥ ५९ ॥ हे द्विजसत्तम ! जब कभी मैं (यज्ञके) अवभृथस्नानकी इच्छा करताहूं तो ब्राह्मणोंके चरणोदकहीसे नहाडालताहूं ॥ ६० ॥ हे महामते ! द्विजोत्तम ! मैं जो कुछ ब्राह्मणोंके मुखमें हवन करसकताहूं, उसे यज्ञकी क्रियाओंसे भी बहुत अच्छा समझता

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१५

ताहूं ॥६१॥ मेरे हृदयमें समस्त अभिलाषोंके बीच एक यही इच्छा जागरूक बनीहै कि, आजभी कोई मेरे शरीरका माँगनेवाला दिखाजावे॥ ६२ ॥ हे द्विजवर ! आज मेरा वह मनोरथ बहुत दिनोंपर सफल हुआ, जो आप कुछ माँगनेके लिये मेरे घरपर पधारे ॥ ६३ ॥ हे विप्र ! आप अनन्य चित्त होकर बडी दक्षिणावाले बहुतसे यज्ञोंको आरंभ कीजिये, और सभी वस्तुओंमें मेरी सहायता समझिये ॥ ६४ ॥ इसप्रकारसे उस महाबुद्धिमान् धर्मशील राजा दिवोदासकी बातको सुनकर परमसंतुष्ट चित्तहो ब्रह्मा यज्ञकी समग्र सामग्रियोंको लेने लगे ॥ ६५ ॥ इसभाँति परमराजर्षि दिवोदासकी सहायता पाकर ब्रह्माने काशीमें अश्वमेधनामक दश बडे २ यज्ञोंको संपन्न किया ॥ ६६ ॥ उस यज्ञमें होमकी धूमराशिने उठकर जो आकाशमंडलको नीलवर्ण करदिया सो तबसे आजतक आकाशकी वह नीलिमा नहीं छूटी ॥ ६७ ॥ वाराणसीपुरीमें जहाँपर ब्रह्माने अश्वमेध यज्ञ कियाथा, वह स्थान तभीसे (आजलों) शुभप्रद दशाश्वमेधनामक तीर्थ भूतलमें प्रसिद्ध हुआ (है) ॥ ६८ ॥ हे अगस्त्य-मुने ! पहिले तो उस तीर्थका नाम रुद्रसरोवर था, फिर ब्रह्माके यज्ञकरनेसे दशाश्व-मेध होगया ॥ ६९ ॥ इसके अनंतर राजा भगीरथके ले आनेसे जब गंगा वहांपर आगयीं तबसे वह उत्तम तीर्थ परमपवित्र होगया ॥ ७० ॥ (इधर) ब्रह्माभी दशाश्वमेधेश्वरनामक एक शिवलिंगकी स्थापना कर वहाँहीपर रहने लगे, और आजतक काशीको छोडकर फिर कहीं नहीं गये ॥ ७१ ॥ उस धर्मशील राजा दिवोदासका कोई छिद्र न पाकर ब्रह्मा महादेवके सन्मुख जाकर क्या कहते ? ॥ ॥ ७२ ॥ (यह विचारकर) और उस क्षेत्रकी महिमाको समझ, भगवान् विश्वे-श्वरका ध्यान करतेहुए ब्रह्माने वहाँहीपर एक ब्रह्मेश्वरनामक लिंगकोभी प्रतिष्ठित कर, अपना निवास स्थिर करलिया ॥ ७३ ॥ (और यहभी स्थिर करलिया कि) यह काशी तो विश्वेश्वरकी दूसरी मूर्तिहीहै, अतएव इसके सेवन करनेसे विश्वनाथ कभी कोप नहीं करसकते ॥ ७४ ॥ अनेकजन्मके संचित कर्म सूत्रको काटनेवाली काशीको पाकर फिर कौन दुर्बुद्धि उसे छोड़ना चाहताहै ? ॥ ७५ ॥ विश्वमात्रके संतापहारी भगवान् विश्वनाथकाभी शरीर जो काशीके विरहानलसे अत्य-न्त संतप्त होरहाहै, सो तो ठीकहीहै ॥ ७६ ॥ समस्त पापोंकी नाशकरनेवाली, काशी-को पाकर जो कोई उसे त्यागदेताहै, वह अपने परमहितवस्तुसे विमुख होनेके कारण नर—पशु समझाजाताहै ॥ ७७ ॥ जो कोई संसारकी दुर्गतिको छोड़ मोक्षलक्ष्मीकी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इच्छा करे, वह यदि परमेश्वरकी दयासे काशीको पाजावे तो फिर उसे कभी न त्यागे ॥ ७८ ॥ जो मूर्ख काशीको छोड़कर कहीं अन्यत्र चलाजाताहै उसकी हथेली परसे चतुर्वर्गका फलोदयभी गिरजाताहै ॥ ७९ ॥ क्या ऐसाभी कोई दुर्बुद्धि होगा जो पापपुंजनाशिनी, सुन्दरपुण्यवर्द्धिनी, और मोक्षसुखदायिनी काशीका परित्याग करदेगा ॥ ८० ॥ काशीमें अर्द्धनिमेष मात्रही सेवन करनेसे जो सुख प्राप्त होताहै वह सुख सत्यलोक अथवा वैकुंठधाममेंभी कहां मिलता है ॥ ८१ ॥ हे मुनिवर! इस रीतिसे ब्रह्मा काशीके गुणावलीको विचार, फिर मन्दराचलपर लौटकर नहीं गये॥ ८२ ॥स्कन्द बोले—हे मैत्रावरुणे ! अब मैं काशीमें सब तीर्थोंके शिरोमणि दशाश्वमेधतीर्थकी महिमा तुमसे कहताहूं ॥ ८३ ॥ इस परमोत्तम दशाश्वमेधतीर्थपर स्नान, दान, जप, होम, वेदाध्ययन, देवपूजन, सन्ध्योपासन, तर्पण और श्राद्ध इत्यादि पितृकर्म अथवा जो कुछ सत्कर्म किये जातेहैं, वे सब अक्षय कहेगयेहैं, ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ जो उत्तमपुरुष एकबारभी दशाश्वमेधतीर्थमें स्नान करके दशाश्वमेधेश्वरका दर्शन करलेताहै वह फिर समस्तपापोंसे छूट जाताहै ॥ ८६ ॥ जेष्ठमासके शुक्लपक्षकी प्रतिपदाको इस दशाश्वमेधतीर्थमें स्नान करनेसे जन्मभरके संचितपाप दूर होजातेहैं ॥ ८७ ॥ और उसी जेठकी सुदी दूजको इस रुद्रसरोवर तीर्थमें स्नानकरनेसे दोजन्मके बटोरेहुए पापोंसे तुरंत छुट्टी मिलजातीहै ॥ ८८ ॥ योंही दशमीतक प्रत्येक तिथियोंमें क्रमसे स्नान करनेवाला सज्जन (तिथिसंख्याके) प्रति जन्मके अघोंको त्याग देताहै ॥ ८९ ॥ दश जन्मके पापोंकी नाशकरनेवाली दशहरातिथिपर इस दशाश्वमेधतीर्थमें नहानेवालेको यमयातना नहीं देखनी पड़ती॥९०॥ उसी दशहराके दिन दशाश्वमेधेश्वरलिंगके दर्शन करनेसेभी दशजन्मके पाप दूर होजातेहैं इसमें कुछभी सन्देह नहींहै ॥ ९१ ॥ जो कोई दशहराको दशाश्वमेधपर नहाकर दशाश्वमेधेश्वरलिंगका भक्तिसे पूजन करताहै उसे गर्भदशाका दुःख नहीं झेलना पडता ॥ ९२ ॥ जो मनुष्य ज्येष्ठमासके समस्त शुक्ल पक्षभर इस रुद्रसरोवरमें वार्षिकी यात्रा करताहै, उसे विघ्न कभी नहीं सतासकते ॥ ९३ ॥ दश अश्वमेध यज्ञोंके अन्तमें अवभृथ स्नान करनेसे जो फल होताहै, दशहराके दिन दशाश्वमेधमें एकबारभी स्नान करनेसे निश्चयही वह फल मिलजाताहै ॥ ९४ ॥ पुण्य (तम) पुरुष, गंगाके पश्चिमतटपर जो (शीतलादेवीकी मढीमें) दशहरेश्वर विराजमानहैं उनको प्रणाम करनेसेभी कभी दुर्दशामें नहीं पड़सकताहै ॥ ९५ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

काशीमें जिस स्थानको अन्तर्गृही यात्राका दक्षिणद्वार कहाजाताहै वहींपर ब्रह्मेश्वरके दर्शन करनेसे ब्रह्मलोकमें आदर मिलताहै ॥ ९६ ॥ ब्रह्मा इसी रीतिपर बडी बुद्धिमानीके साथ काशीपुरीमें बूढे ब्राह्मणका वेष धरकर जबतक भगवान् विश्वनाथ नहीं आये तबतक टिके रहे ॥ ९७ ॥ महाराज दिवोदासनेंभी उस वृद्धब्राह्मणरूपी ब्रह्माके यज्ञ समाप्त करनेपर उनके लिये एक ब्रह्मशाला बनवादी ॥ ९८ ॥ ब्रह्मेश्वरके पासही उस मनोहर ब्रह्मशालामें ब्रह्मदेव गगनस्पर्शी वेदध्वनि करतेहुए निवास करने लगे ॥ ९९ ॥ हे मुने ! सर्वपापविनाशक महामहिम दशाश्वमेध तीर्थका माहात्म्य मैंने तुमसे कह दिया ॥ १०० ॥ इस पवित्र अध्यायको जो उत्तम जन श्रद्धापूर्वक सुनेगा अथवा सुनावेगा वह ब्रह्मलोकको पावेगा ॥ १०१ ॥

श्लोक—न काशिकायां पुरि कश्चिदस्ति दशाश्वमेधेन समान एकः ।
सप्तर्षको घट्टक एष पुण्यः स्नानादिकर्मस्वपि यः प्रशस्तः ॥ १ ॥

दोहा—कहुँ नहिं दशाश्वमेध सम, काशीमें कोउ घाट ।
अतिप्रशस्त पुर मध्यमें, सोहत उत्तम वाट ॥ २ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डोत्तरार्द्धे भाषायां द्विपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५२ ॥

तिरपनवाँ अध्याय ।

काशीकी महिमा और गणोंका प्रेषण ।

अगस्त्य बोले—हे ब्रह्मज्ञवर ! आपसे इस अपूर्व ब्रह्माकी कथाको सुनकर बडा सन्तोष हुआ; जब कि ब्रह्माभी काशीहीमें रहगये तो महादेवने क्या किया ? ॥ १ ॥ स्कन्दने कहा—हे महाभाग ! अगस्त्य ! सुनो, ब्रह्माकेभी काशीहीमें रहजानेपर महादेव बहुतही उद्विग्नचित्त होकर सोचने लगे कि ॥ २ ॥ जैसी काशीपुरी लोगोंकी चित्तमोहिनी है वैसी तो कोई भी दूसरी भूमि इस भूमंडलपर प्रायः मेरे देखनेमें नहीं आई यह बात ध्रुवहै ॥ ३ ॥ जो जो उस पुरीमें जाताहै, वह वहाँहीपर रहजाताहै, प्रथम तो योगिनियाँ गईं, वे सब आजतक लौटीही नहीं ॥ ४ ॥ फिर सहस्रकर होनेपरभी सूर्य वहां जाकर कुछ नहीं करसके, इसके पीछे ब्रह्मा विविधविधानोंमें दक्ष होकरभी मेरे किसी कार्यका विधान नहीं करसके ॥ ५ ॥ इन्हीं सब बातोंको सोच विचारकर, महादेवने अपने बहुतसे गणोंको बुलाकर कहा कि "तुमलोग अभी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

काशीपुरीमें जातेजाओ ॥ ६ ॥ और वहांपर जाकर इस बातका अनुसंधान करो (पतालगाते जाओ) कि, (मेरे भेजे) योगिनीगण, सूर्य और ब्रह्मा क्या कररहेहैं ॥ ७ ॥ इसके अनंतर फिर भगवान् शम्भु बड़े आदरके साथ नाम लेलेकर कहने लगे—हे शंकुकर्ण ! हे महाकाल ! हे घंटाकर्ण ! हे महोदर ॥८॥ हे सोम ! हे नन्दिन् ! हे नन्दिषेण ! हे काल ! हे पिंगल ! हे कुक्कुट ! हे कुंडो (भो) दर ! हे मयूरनेत्र ! हे बाण ! हे गोकर्ण ! हे तारक ॥ ९ ॥ हे तिलपर्ण ! हे स्थूलकर्ण ! हे दभिचंड ! हे प्रभामय ! हे सुकेश ! हे विंदते ! हे छाग ! हे कपर्दिन् ! हे पिंगलाक्ष ! ॥ १० ॥ हे वीरभद्र ! हे किरात ! हेचतुर्मुख ! हे निकुंभ ! हे पंचाक्ष ! हे भारभूत ! हे त्र्यक्ष ! हे क्षेमक ! हे लांगलिन् ! ॥ ११ ॥ हे विराध ! हे सुमुख ! हे आषाढ ! तुमलोग हमारे बेटेके लडके हो जैसे स्वामिकार्तिक और गणेशहैं । हम जैसा नैगमेय, शाख—विशाख और नन्दी—भृंगको चाहतेहैं वैसेही तुमलोगोंकीभी प्रीति करतेहैं । तुम लोगोंके ऐसे बड़े पराक्रमीके रहतेभी मुझे काशीका राजा दिवोदासका तथा योगिनियोंका सूर्यका और ब्रह्माका भी कुछ समाचार नहीं मिलताहै (यह बडे खेदकी बातहै) सो तुम लोगोंके मध्यसे कालकेभी डरावनेवाले ये दोनों शंकुकर्ण और महाकाल काशीका समाचार जाननेके लिये शीघ्रतासे चलेजावें ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ अनंतर वे दोनों प्रतिज्ञा करके वाराणसीपुरीको चलेगये, और वहां पहुँचतेही शंकुकर्ण और महाकाल दोनोंही गण जैसे इन्द्रजालकी मायाको देखकर बुद्धिमान् जनभी क्षण मात्र मोहित होजाताहै वैसेही काशीको देखतेही महादेवकी आज्ञाको भूलगये ॥ १६ ॥ १७ ॥ अहाहा ! कैसी मोहकी महिमाहै ? और कैसा भाग्यका विपर्ययहै ? जो पूर्वलोग मुक्तिराशि काशीमें पहुँचकर फिरभी अन्यत्र चलेजातेहैं ॥ १८ ॥ लोग इस महाआशीर्वादिक भूमि काशीको त्यागदेतेहैं वे अपने हथेलीपर मुक्तिको रखकर फिर उसे फेंकदेतेहैं ॥ १९ ॥ जिस काशीमें उष्णजलसेभी स्नानकरनेसे अमृत स्नानसे अधिक फल मिलताहै भला उसे कौन छोड़ सकताहै ? ॥ २० ॥ जहां पर शिवलिंगके ऊपर एकभी पुष्प चढ़ादेनेसे दश सुवर्ण पुष्प चढ़ादेनेका पुण्य होताहै उस काशीको कौन ऐसाहै जो छोड़देवे ? ॥ २१ ॥ जहाँ कि महादेवके एकभी दण्डवत्प्रणाम करनेसे इन्द्रकाभी पद तुच्छ कहाजाताहै उस काशीको त्यागना चाहताहै ? ॥ २२ ॥ जिस भूमिमें एक ब्राह्मणकोभी यथेष्ट भोजन देनेसे वाजपेययज्ञका पुण्य होताहै उस काशीको कौन छोडताहै ? ॥ २३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१९

स्थानपर विधिपूर्वक ब्राह्मणको एकभी गोदान करनेसे दशसहस्र गोदानका पुण्यलाभ होताहै उस काशीको कौन बुद्धिमान् त्यागकरेगा ? ॥ २४ ॥ जहाँपर एकभी शिवलिंगकी स्थापना करनेसे अखिल ब्रह्मांडकी प्रतिष्ठा करनेका फल होताहै भला उस काशीको कौन छोड़सकताहै? ॥ २५ ॥ वे दोनोंही इस प्रकारका विचार कर पुण्यप्रद दो शिवलिंग, स्थापित करके वहांही रहने लगे और आजलों काशीको (कभी) नहीं छोडतेहैं ॥ २६ ॥ शंकुकर्णनामक गणके पूजित शंकुकर्णेश्वर नाम लिंगके दर्शन करनेसे कोई जन्तु कभी माताके जठरमें नहीं पडता ॥ २७ ॥ भगवान् विश्वनाथके वायुकोणपर शंकुकर्णेश्वरके पूजन करनेसे मनुष्य इस घोर संसारसागरमें नहीं पडता ॥ २८ ॥ योंही महाकाल नामक गणके पूजित महाकालेश्वर लिंगके पूजन, प्रणाम, और स्तुतिकरनेसे फिर कालका भय कहांहै ? ॥ २९ ॥ स्कन्दने कहा—इसके अनंतर शंकुकर्ण और महाकालके बहुत विलंब करनेपर सर्वज्ञ नाथ महादेवने (उसका कारण) जानकर फिर दूसरे दो गणोंको भेजा ॥ ३० ॥ उनसे कहा कि, हे महामते ! घंटाकर्ण और महोदर ! तुम दोनोंजन झटपट काशीको जाओ और वहाँका वृत्तान्त समझ बूझकर चलेआओ ॥ ३१ ॥ हे अगस्त्य ! वे दोनोंभी काशीनगरीमें जाकर वहींपर कहीं रहगये और आजतक फिर नहीं लौटे ॥ ३२ ॥ गणोंमें श्रेष्ठ घंटाकर्ण काशीमें घंटाकर्णेश्वरनामक एक शिवलिंग स्थापितकर उसके स्नानकरानेके लिये (कर्णघंटानामक) एक कुंड खोदवाकर उसी स्थानपर शिवलिंगका ध्यान करताहुआ आजलों काशीको (कदापि) नहीं त्यागता है ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ और महोदरनेभी उसीके पूर्व ओर महोदरेश्वर लिंगकी स्थापना कर आजपर्य्यंत वैसेही शिवके ध्यानमें मग्न रहकर फिर काशीको नहीं छोडा ॥ ३५ ॥ हे द्विजोत्तम अगस्त्य ! काशीमें जो कोई महोदरेश्वरका दर्शन करता है वह फिर कभी माताके उदररूप दरीमें नहीं प्रवेश करता ॥ ३६ ॥ घंटाकर्णके कुंडमें नहाय और भगवान् व्यासेश्वरका दर्शन करके यदि कहींपरभी मरे तो काशीहीमें मरनेका फल मिलताहै॥ ३७॥ इस घंटाकर्ण तीर्थपर विधिपूर्वक श्राद्ध करनेवाला अपने सात पूर्वज पुरुषोंको दुर्गतिमें पडे रहनेपरभी उद्धार करदेसकताहै ॥ ३८ ॥ आजतक इस कुंडमें गोता मारकर यदि क्षणभर चित्त एकाग्र करके सुनै तो विश्वनाथकी बडी आरतीके घंटाका शब्द स्पष्ट सुनाई पडताहै ॥ ३९ ॥ पितरलोग यह कहाही करते हैं कि क्या हमारे कुलमेंभी, कोई ऐसा होगा जो घंटाकर्णकुंडके निर्मलजलमें हम लोगोंको तिलोदक देगा ॥ ४० ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हे घटोद्भव! काशीमें जिनके वंशके लोग घंटाकर्ण नामक महाह्रदमें उक्त क्रियाको करते हैं वे सब मुनियोंके समान परमसिद्धिको प्राप्त होते हैं ॥ ४१ ॥ स्वामिकार्तिकने कहा—घंटाकर्ण और महोदर इन दोनों गणोंके चलेजानेपर (बहुत विलंब देखकर) महादेव वारंवार मस्तक हिलातेहुए बडा आश्चर्य करने लगे ॥ ४२ ॥ और फिर फिर हंसकर यह कहने लगे कि, हे काशि! तुम महामोहिनी विद्या हो यह मैं अच्छीरीतिसे जानताहूं ॥ ४३ ॥ पुरातन लोग तुमको महामोहकी हरणकरनेवालीही कहकर प्रशंसा करतेहैं पर यह नहीं जानते कि तुम महामोहनकी करनेवालीहो ॥ ४४ ॥ मैं जिनजिन लोगोंको भेजताहूं तुम उनको मोहित करडालतीहो, हे काशि! मैं तुमको भलीभांतिसे जानताहूं कि तुम मोहनकरनेकी औषधिहो ॥ ४५ ॥ तथापि जहाँतक होसकेगा मैं अपने सब लोगोंको भेजता जाऊंगा, क्योंकि समझनेवाले साध्यकर्ममें उद्यम करनेसे कभी नहीं हटते ॥ ४६ ॥ किसी काममें क्यों न हो बुद्धिमान् लोगोंको उद्योग करनेसे कभी न हटना चाहिये, क्योंकि निरंतर (बराबर) उद्यम करते रहनेसे प्रतिकूलभी विधि अनुकूल होजाताहै—

दोहा—उद्यमसे हटिए नहीं, यही विज्ञकी बात।
करत जाय उद्योग जो, पोंचहु विधि बनिजात ॥ ४७ ॥

इस बातके दृष्टान्त चन्द्र और सूर्य दोनोंहीहैं जो राहुके ग्रसलेनेपरभी आकाशमंडलमें अपने मंजिलपर पहुँचनेका उद्योग करतेहुए कभी ठहरतेही नहीं ॥ ४८ ॥ इस संसारमें एक ओर तो दैव प्रतिकूल होकर वारंवार कामोंको बिगाडता रहताहै परन्तु दूसरी ओर अत्यंत उद्योग करते रहनेसे सब काम आपसे आप बनते जातेहैं ॥ ४९ ॥ पूर्वजन्मके कियेहुए कर्महीको तो दैव कहाजाताहै फिर वह दूसरा कुछ तो हुई नहींहै अतएव पंडितको चाहिये कि, उसके दूर करनेका उपाय स्वयं करे ॥ ५० ॥ थालीमें परोसाहुआ भोजन आपही दैवकी सहायतासे मुखमें नहीं घुसजाता—हां, हाथ और मुखके उद्यम करनेहीपर वह पेटमें पैठसकताहै ॥ ५१ ॥ विश्वनाथने इस प्रकारसे उद्यमहीको दैवका जीतनेवाला स्थिर करके, सोमनंदी, नंदिषेण, काल, पिंगल और कुक्कुट नामक दूसरे पाँच बडेवेगवाले गणोंको भेजा और वे सबभी कार्यार्थ मरेहुए जीवके समान आजतक फिर नहीं लौटे ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ उन लोगोंने संसारके मोक्षकी जन्मभूमि उसी काशीमें महादेवके संतोषार्थ अपने अपने नामके लिंगोंकी स्थापना करके (नियत) निवास करलिया ॥ ५४ ॥ भक्तिमान् जन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

आनंदवनमें सोमनन्दीश्वर लिंगके दर्शन करनेसे सोमलोकमें परमआनंदको पाताहै ॥ ॥ ५५ ॥ उसके उत्तरभागमें नन्दिषेणेश्वरके दर्शनसे मनुष्य आनंदकी सेनाको पाकर क्षणमात्रमें मृत्युको जीत लेताहै ॥ ५६ ॥ गंगाके पश्चिमोत्तर भागमें कालेश्वरको प्रणाम करनेसे कभी कालपाशमें नहीं बंधना पडता ॥ ५७ ॥ कालेश्वरसे कुछ उत्तर ओरपर पिंगलेश्वरके पूजन करनेसे वह पिंगलज्ञान प्राप्त होताहै जिससे (जीव) तन्मय होजाताहै ॥ ५८ ॥ योंही कुक्कुटके अंडे ऐसे कुक्कुटेश्वर लिंगकी भक्ति करनेसे संसारमें फिर गर्भवासका दुःख नहीं भोगना पडता ॥ ५९ ॥ स्कन्दने कहा—हे मुने ! सोमनन्दी प्रभृति पाचोंगणोंके भी काशीमें जाकर ठहर जानेपर शिव कहने लगे ॥ ६० ॥ कि यदि विचारकी दृष्टिसे देखाजावे तो यह हमाराही काम होरहाहै, जो इसी उपाधिसे ये सब मेरे लोग वहांपर जारहे हैं ॥ ६१ ॥ क्योंकि माया और पराक्रमसे सम्पन्न मेरे इन गणोंके काशीमें घुसे रहनेसे मानों मैंही वहांपर बैठा रहूंगा इसमें कुछ सन्देह नहीं है ॥ ६२ ॥ मैं क्रमसे अपने समस्त लोगोंको वहांही पर भेज देताहूं; यहांके सब लोगोंके चलेजानेपर फिर मैंभी चलदूंगा ॥ ६३ ॥ महादेवने यही विचार मनमें स्थिरकरके कुंडोदर, मयूर, बाण और गोकर्ण, इन चारों गणोंको फिर भेजा, और वे सब मायाके बलसे काशीमें जाघुसे ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ राजा दिवोदासके संभ्रम उत्पन्न करनेमें उन सब गणोंने सैकड़ोंही उपाय रचे पर जब वहां एकभी न लगा तो फिर असमर्थ होकर वे वहांही पर रहने लगे ॥ ॥ ६६ ॥ सैकडों अपराध करनेपरभी स्वामी किस कामके करनेसे संतुष्ट होंगे ? यह विचारकर वे सब शिवलिंगकी आराधना करनेमें तत्पर होगये ॥ ६७ ॥ (क्योंकि) इस काशीमें विधिपूर्वक एकभी शिवलिंगके पूजन करनेसे भगवान् शिव सैकडोंही अपराधोंको क्षमा करते और मोक्षभी दे देतेहैं ॥ ६८ ॥ महादेव तो यज्ञ दान तपस्या और व्रतादिसे कभी वैसे संतुष्ट नहीं होते जैसे कि विधिपूर्वक एकबारभी लिंगके पूजन करनेसे प्रसन्न होजातेहैं ॥ ६९ ॥ जो मनुष्य लिंगार्चनके विधानका ज्ञाता होकर सर्वदा लिंगहीके पूजनमें लगारहताहै वह दोही नेत्रका होनेपर भी साक्षात त्रिलोचनहै ॥ ७० ॥ सैकडों गोदान अथवा सुवर्णदान करनेसेभी वह फल कभी नहीं मिलता जो कि एकबार लिंगके पूजनेसे मनुष्य पासकताहै ॥ ७१ ॥ अश्वमेध इत्यादि यज्ञोंसेभी वह फल नहीं प्राप्त होसकता जो फल कि नित्यही लिंगके पूजन करनेसे लाभ होताहै ॥ ७२ ॥ जो कोई यथाविधि शिवलिंगको नहवाकर उस स्नपनोदकका

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तीनबार आचमन करताहै उसके सांसारिक त्रिविधपाप तुरंतही विनष्ट होजातेहैं ॥ ७३ ॥ जो कोई लिंगके स्नान जलको अपने मस्तकपर छिडिक लेताहै वह निष्पा होजाताहै और उसे गंगास्नान करनेका फल (अनायासही) मिलजाताहै ॥ ७४ ॥ जो कोई पूजित शिवलिंगको देख एकबारभी प्रणाम करदेताहै, उसके फिर शरीर धारण करनेमें सन्देहही बना रहजाताहै ॥ ७५ ॥ यहांपर जो कोई भक्तिपूर्वक शिवके लिंगकी स्थापना करताहै वह निःसन्देह सातजन्मके कियेहुए पापोंसे छूटका विशुद्ध होजाताहै और स्वर्गका भागीभी होताहै ॥ ७६ ॥ प्रमथगणने यही विचारका स्वामीके क्रोधकी शांतिके लिये महापातक भंजक (अपने अपने नामके) लिंगोंक स्थापन किया ॥ ७७ ॥ लोलार्कके समीप कुंडोदरेश्वरके दर्शनसे मनुष्य सब पापोंसे छूटकर शिवलोकमें पूजित होताहै ॥ ७८ ॥ उसी कुंडोदरेश्वर लिंगसे पश्चिम ओर असीनदीके तीरपर विराजमान मयूरेश्वरका पूजन करनेसे फिर जठर यातना नहीं भुगतनी पडती ॥ ७९ ॥ योंही मयूरेश्वरके पश्चिम जो बाणेश्वर नामक महालिंगहै उसके तो केवल दर्शनही करनेसे समस्त पाप छूटजातेहैं ॥ ८० ॥ अन्तर्गृही (यात्रा) के पश्चिमद्वार (फाटक) पर गोकर्णेश्वर नामक बडाभारी लिंग प्रतिष्ठितहै जिसके पूजन करनेसे काशीमें समस्त विघ्न दूर होजातेहैं ॥ ८१ ॥ जो कोई गोकर्णेश्वरका भक्त होताहै उसका मरनेके समय चाहे कहींभी अन्तकाल क्यों न हो पर ज्ञान नहीं विघडता ॥ ८२ ॥ स्वामि कार्तिकने कहा—भगवान् प्रमथनाथ उन चारों गणोंके लौटनेमें बहुत विलंब देखकर काशीपुरीकी अपरंपार महिमा वर्णन करने लगे ॥ ८३ ॥ (उनने कहा) जो इस अखंड ब्रह्माण्डको घुमारहीहै यह संसारमोहिनी काशी अवि विष्णुमायाकी मूर्तिहै यह ध्रुवहै ॥ ८४ ॥ लोग, भाई, बंधु, स्त्री, पुत्र, खेत, बारी, घर और धन इन सबको छोडकर मरनेहीके लिये इस काशीको सेवतेहैं ॥ ८५ ॥ और फिर जिस काशीमें लोग मरनेसेभी कुछ नहीं डरते, वहाँही पर टिकके मेरे गणलोग भला मुझसे क्यों डरेंगे ? ॥ ८६ ॥ जहांपर मरनाही मंगल है और जहाँ भस्मका लगानाही देहका भूषण होताहै, एवं लंगोटीही जहाँका उत्तम रेशमी वस्त्रहै, उस काशीकी उपमा कहाँसे दीजासकतीहै—

दोहा—मरिबो मंगल है जहाँ, भस्महि भूषन जत्र ।
काशीकी उपमा कहाँ, जहँ कौपीनहि वस्त्र ॥ ८७ ॥

जिस स्थानपर श्रीमती मुक्तिरमणी—मृतक भूषणसे सुसज्जित रंक अथवा राज

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ब्राह्मण किंवा चांडालकोभी एकही भावसे वरलेतीहै (उस काशीके समान कौनहै ?) ॥ ८८ ॥ इन्द्र इत्यादि देवगण जहाँपर मरकर मुक्त होजानेवाले जीवोंके करोडवें अंशकेभी तुल्य कभी नहीं होसकते ॥ ८९ ॥ जिस काशीमें मृत्यु प्राप्त होनेसे एक सामान्य जन्तुभी ब्रह्मा और विष्णु इत्यादि देवतोंद्वारा बडे प्रयत्नके साथ, हाथजोड, माथा नवाया जाताहै ॥ ९० ॥ जिस नगरीमें मृतकशरीरभी अपवित्र नहीं होता इसीसे उस मृतकके कानको मैंभी स्वयं छूताहूं ॥ ९१ ॥ जो पुण्यात्मा दो तीनबार काशी काशी कहदेताहै, वह समस्त पवित्रोंसेभी महापवित्र होजाताहै ॥ ९२ ॥ जो इस काशीका हृदयमें ध्यान धरता अथवा सेवन करता है, वह मेराही ध्यान और सेवा करता है ॥ ९३ ॥ जो प्राणि निर्विकलचित्तसे काशीहीको सेवताहै, मैं बडे प्रयत्नसे उसे अपने हृदयमें रखलेताहूं ॥ ९४ ॥ जो कि स्वयं काशीवास करनेमें असमर्थ होनेपर किसी एक तीर्थवासीहीको कुछ जीविका लगाकर वसादेताहै वह निश्चयही वासकरनेवालेका फलभागी होताहै ॥ ९५ ॥ जो धीरजन काशीमें मरणावधि निश्चय निवास करतेहैं उनको तो जीवन्मुक्तही समझनाचाहिये, और वे लोग सर्वथा वन्दनीय और पूजनीय होतेहैं ॥ ९६ ॥ महादेव इसी भाँतिसे काशीके बहुतेरे गुणोंको विचार दूसरे दूसरे गणोंको बुलाकर प्रीतिपूर्वक (वहां) भेजनेलगे॥९७॥ (और यह बोले कि) हे शुद्धान्तःकरण ! तारक ! धर्मका आश्रय राजा दिवोदास जिस नगरीका शासन कररहाहै वहांपर जाओ ॥ ९८ ॥ हे तिलपर्ण ! स्थूलकर्ण ! हेदंमिचंड ! हेप्रभामय ! हेसुकेश ! हेविन्दते ! हेछाग ! हेकपर्दिन् ! हेपिंगलाक्ष ! ९९ हेवीरभद्र ! हेकिरात ! हेचतुर्मुख ! हेपंचाक्ष ! हेभारभूत ! हेत्र्यक्ष ! हेक्षेमक ! हेलांगलिन् ! ॥१०० ॥ हेविराध ! सुमुख ! और आषाढ ! तुम लोग सब कोई पृथक् पृथक् वहां जातेजाओ । (कार्तिकेय कहनेलगे कि) ये सब परम स्वामिभक्त महात्मा दृढव्रतिज्ञ प्रमथगण, (महादेवकी आज्ञासे काशीमें जाकर) ॥ १ ॥ अनेक प्रकारकी मायाओंको करतेहुए बहुतभाँतिके रूपोंको धारणकर एकाग्रचित्तसे उस राजा दिवोदासका छिद्र ढूंढतेहुए वहीं पडेरहगये ॥ २ ॥ परन्तु उसका कोईभी दोष न देख सकनेसे अपने (बटोरेहुए) यशरूप धनको मलिन कर " आःछी ! यह क्या हुआ ? " यह कहते हुए अपनेहीको धिक्कारने लगे ॥ ३ ॥ गणोंने यही कहा कि—अपने स्वामीसे नित्यही आदर सत्कार पानेवाले हम लोगोंको वारंवार धिक्कारहै, जो हमलोगोंने यहांपर एक मनुष्यकोभी किसीचालसे अपने वशमें नहीं किया ॥ ४ ॥ प्रभु

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

त्रिनयनकेद्वारा बडे मान दान सौहार्द इत्यादिसे प्रसादित होनेपरभी उनके कार्यमें असावधानी करनेवाले हमलोगोंको धिक्कारहै !! ॥ ५ ॥ ऐसे (दयालु) स्वामीके कार्यमें असावधानी करनेवाले हमलोगोंकी कौन गति होगी ? अवश्यही हम सबको अंधकारमय (दुस्तर) लोकमें वास करना पडेगा ॥ ६ ॥ जो लोग हाथ पैर चलतेभी जीतेजी स्वामीका कार्य सिद्ध नहीं करते पगपगपर उनकी दुर्गति होतीहै ॥ ७ ॥ जो भृत्यगण, प्रथमही स्वामीसे आदर और सत्कार पाकर फिर उनके कामोंमें प्रमाद करतेहैं उन सब लोगोंके अभिलाष कभी पूरे नहीं होते ॥ ८ ॥ अथवा जो लोग स्वामीका कार्य बिना कियेही निर्लज्ज होकर प्रभुके सामने अपना मुख दिखातेहैं उन्हींसे इस पृथिवीपर बडा बोझ पडताहै ॥ ९ ॥ बडे बडे पर्वत, समुद्र और वृक्षोंका भार इस भूमिको वैसा असह्य नहीं होता जैसा कि इन प्रभुद्रोहियोंसे यह दब जातीहै ॥ ११० ॥ अहो ! हमलोगोंने पुराणकी यह उत्तम गाथा (पुरानी कहावत) स्मरण कर रक्खीहै, सो उसीके अर्थको अवलंबन करके निश्चयही इसी काशीमें रहजावेंगे ॥ ११ ॥ जिन लोगोंने न तो पुण्यहीका संचय किया न धन अर्थवा आयुष्यको बढाया, उन सब उपायोंसे हीन लोगोंकी गति वाराणसी पुरीही है ॥ १२ ॥ पापोंके बोझेसे थकेहुए, तथा पीछेसे (उस पापके) तापको प्राप्त होनेवाले और चारों ओरसे घबडाये हुए लोगोंकी एक काशीपुरीही गतिहै ॥ १३ ॥ एवं जो लोग स्वामिद्रोही, कृतघ्न, विश्वासघाती, होतेहैं, उन सबोंका इस काशीके छोडकर और कहीं ठेकाना नहीं लगसकता ॥ १४ ॥ इस प्रकारसे प्रमथगण पुराणके कथनपर विश्वास करके राजा दिवोदाससे छिपकर वहाँपर रहनेलगे ॥ १५ ॥ अत्यंत बुद्धिमान् होनेपरभी उस भूपालने शिवके प्रभावसे नानारूप धारण किएहुए उन सब देवतोंको कुछभी नहीं जानपाया ॥ १६ ॥ इसमें कोई विचित्रता नहीं है, क्योंकि स्वयं चित्रगुप्तकोभी काशीवासी लोगोंका कुछ अनुसंधान (पता) नहीं लगने पाता तो दूसरे मर्त्यलोकनिवासीकी कौन गिनती है ? ॥ १७ ॥ जो लोग यहाँपर लिंगकी स्थापना करके (रहनेलगतेहैं) उन असीम प्रभाववाले पूर्णतेजस्वियोंका अन्त धर्मराजकोभी नहीं मिलसकताहै ॥ १८ ॥ हेकुंभजमुने ! इसी भाँतिसे वे सब प्रमथगण शिवलिंगकी आराधना करते हुए कल्याणदात्री काशीको आजतकभी नहीं छोडतेहैं ॥ १९ ॥ हे मुनिवर ! गणोंमें सर्वश्रेष्ठ तारक, तारकेश्वर नामक महालिंगका जो मनुष्योंको तारक ज्ञान देताहै, आजलों पूजा किया करताहै ॥ १२० ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२५

जो उत्तम नर तारकेश्वरलिंगपर दृढभक्ति करतेहैं उनको सहजहीमें तारकज्ञान मिल-जाताहै ॥ २१ ॥ तिलपर्णनामक गणके प्रतिष्ठित तिलपर्णेश्वर लिंगके तिलभरभी दर्शन करलेनेसे पाप नहीं रहजाने पाता ॥ २२ ॥ योंही स्थूलकर्णेश्वर लिंगका पूजन करनेसे मनुष्यको दुर्गति नहीं भोगनी पडती परंच उत्तम पुण्यलाभ होताहै ॥ २३ ॥ उसके पश्चिमओर दमिचण्डेश्वर और प्रभामयेश्वरनामक लिंग विराज-मान हैं जिनकी आराधना करनेसे पापोंका भय नहीं रहजाता ॥ २४ ॥ जो कोई इस प्रभामयेश्वर लिंगका दर्शन करके कहीं अन्यत्र परभी मरजावे तोभी वह बुद्धि-मान् बडे प्रभामय विमानपर चढकर शिवलोकको चलाजाताहै ॥ २५ ॥ और हरि केशवनामक स्थानमें सुकेशेश्वर संज्ञक जो शिवलिंगहै उसके पूजन करनेसे मनु-ष्यको इस चर्म, मांस, रुधिर, नस, हड्डी और मज्जाकी खोलरी बारबार (फिर) नहीं धारण करनी पडती ॥ २६ ॥ भीमचण्डीके समीपहीमें विंदतीश्वरनामक शिव-लिंगकी पूजा करनेसे मनुष्य बडे उत्कटपापोंको त्यागकर नित्य मोक्षपदको प्राप्त कर-ताहै ॥ २७ ॥ इसी रूपसे पित्रीश्वर शिवके समीपमें विराजमान छागलेश्वरनामक लिंगके दर्शन करनेसे कोईभी पशुओंकी नांई प्राकृत पापमें नहीं पडता ॥ १२८ ॥

दोहा—भ्रमण करन लागे बहुत, काशीमें गण जाय ।
दिवोदास भूपालसे, तनिकहु वश न सिराय ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्द्धे भाषायां काशीमाहात्म्य—
गणप्रेषणवर्णनंनाम त्रिपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५३ ॥

चौवनवाँ अध्याय ।

पिशाचमोचनकी कथा ।

स्कन्दने कहा—हे कुम्भसम्भव ! अब मैं कपर्दीश्वर लिंगका परमोत्तम माहात्म्य वर्णन करताहूं, सावधान होकर आप सुनें ॥ १ ॥ महादेवका बडा प्यारा कपर्दीना-मक जो गणोंमें एक प्रधानहै उसने पित्रीश्वरके उत्तरभागमें इस शिवलिंगकी स्थापना करके ॥ २ ॥ उसके सन्मुख एक विमलोदक नामक कुंड खोद दियाथा जिस कुंडके जलका स्पर्श करनेसे मनुष्यकी मलीनता छूट जातीहै ॥ ३ ॥ इसके विषयमें एक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(छोटासा) उपाख्यान कहताहूं जो कि पूर्वकाल त्रेतायुगमें हुआथा, और जिसके श्रवणकरनेसे पातक विनष्ट होजाताहै हे कुम्भयोने ! (अगस्त्य !)॥ ४ ॥ एक वाल्मीकिनामक बडेभारीशैवथे वे मुनि कपर्दीश्वरकी अर्चना करतेहुए तपस्या करने लगे ॥ ५ ॥ एकबार उन तपोधनने हेमन्तऋतुके अगहन मासमें उसी विमलोदकनामक महातीर्थमें मध्याह्नके समय स्नान करके ॥ ६ ॥ पादतलसे लेकर मस्तकपर्यन्त (सर्वाङ्गमें) भस्मसे स्नान किया, फिर लिंगके दक्षिणओरमें (बैठ) मध्याह्नकर्मको समाप्त कर ॥ ७ ॥ मस्तकपर फिर भस्म डाल, मध्याह्नकालकी सन्ध्याका स्मरण करतेहुए, और पंचाक्षरी मन्त्रका जप तथा भगवान् कपर्दीश्वरका ध्यान किया ॥ ८ ॥ अनंतर वामावर्त्त प्रदक्षिणा और प्रणायामपूर्वक तीनबार उच्चस्वरसे हुडुंकारमें प्रणवलगा कर कहा, फिर षड्ज इत्यादि स्वरभेदोंके साथ, हाथ हिलाकर आनंदपूर्वक मंडल बद्ध अंगभंगीके सहित तांडव करतेहुए गीतको गाकर उसी सरोवरके तीरपर वह तपस्वी क्षणभर बैठगया ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ इसी अवसरपर उसने एक भयंकर स्वरूप घोर राक्षसको देखा, जिसका ललाट, और गाल एवं मुख (बहुत चुचकाथा) और पीली पीली आँखें भीतरको धँसीहुईथीं ॥ १२ ॥ शिरपरके बाल रूखे फटे और ऊरकी ओर खडेथे, ग्रीवा (गरदन) मोटी थी, नाक तो बहुतही चिपिटीथी, और ओठ सुकटेथे, एवं उनपर बडे बडे दाँत निकले रहतेथे ॥ १३ ॥ मूड बहुतही भारीथा? रोवाँ खडेथे, कानोंके ऊपरका भाग लटक रहाथा, और पीली डाढी बडी ही भयंकर थी ॥ १४ ॥ लंबी जीभ लप लप कर रहीथी, गलेकी घाँटी बहुतही उमडीथी, हंसुलीकी दोनोंही हड्डियां मोटाकर बाहर निकल पडीथी, और दोनों कंधेभी बडे होनेपर उभडेही रहतेथे ॥ १५ ॥ कोख (कांख) गड्ढेके समान धँसेहुएथे, छोटे छोटे हाथ बहुतही चुचकेसे थे, हाथके अग्रभागमें अंगुलियां बडी विरलथीं और उनके नख मोटे तो थे पर आगेकी ओर झुकेथे ॥ १६ ॥ छाती धूलिसे धूसर और बडी सुकठी थी, पेटका चमडा (जाकर) पीठमें लगा हुआथा, कटी तट तो बडाही बिकटथा, रीढेकी गांठ पर तनिकभी मांस नहीं था ॥ १७ ॥ दोनोंही कूल्हे लटक रहेथे, अंडकोश चुचुक गयाथा लिंग नाममात्रका था, जाँघें लंबीं तो थीं पर मांसका (उनपर) चिह्नभी नहीं था, घुटना बडा मोटा हड्डियोंसे जकडा था ॥ १८ ॥ उसमें केवल हाड और चामही रहगया था

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२७

समस्त शरीरमें नसोंहीकी भरमार थी, घुटुनाके नीचेका—भाग बहुत लंबा और नसोंसे भराथा, एडी मोटी और भयानक रूपकी थी ॥ १९ ॥ पांव तो बहुतही बडे बडे थे पर उनकी अंगुरियाँ लंबी टेढी और बडी पतलीं थीं, केवल हड्डी चमडा और नसही देहभरमें उपटेहुए थे, ॥ २० ॥ ऐसे बिकट और परम भयानकरूप, मारे भूखके मरतेहुए, समस्त शरीर रोंगटोंसे भरा दावानलसे जरेहुए ठूंठे पेडकीनाईं, अत्यंत चंचल नेत्र ॥ २१ ॥ समस्त प्राणियोंके भय उपजावनेवाले मूर्तिमान् साक्षात् भयानक रसके समान हृदयको कंपादेनेवाले अत्यंतदीन मुख उस पिशाचको देखकर बडी धीरताके साथ उस बूढे तपस्वीने पूँछा कि, "तुम कौनहो" ॥ २२ ॥ और तुम यहां कैसे आये ? फिर तुम्हारी यह दशा कैसे हुई है ? हे पिशाच ! मैं दयाकी बुद्धिसे पूछरहाहूं तू निर्भय होकर कह, ॥ २३ ॥ और तेरे ऐसोंसे हम सब तपस्वियोंको जो शिवके सहस्रनामको जपते तथा विभूतिका कवच पहिने रहतेहैं, तनिकभी डर नहीं है ॥ २४ ॥ पिशाचने तपस्वीकी इस बातको प्रीतिसे सुन, हाथजोडकर उस दयाशील तपोधनसे कहा ॥ २५ ॥ पिशाच बोला—भगवन् ! यदि आपने दयादृष्टि की है, तो हे तापसोत्तम ! मैं अपना वृत्तान्त कहताहूं आप क्षणभर मनदेकर सुनलेवें ॥ २६ ॥ गोदावरी नदीके तीरपर एक प्रतिष्ठाननामक देशहै, वहांपर मैं तीर्थका दानलेनेवाला ब्राह्मण था ॥ २७ ॥ उसी कर्मके फलसे मेरी यह दशा हुईहै, वृक्ष और जलसे रहित बडे घोर मरुस्थलमें ॥ २८ ॥ निवास करते करते मुझे बहुत दिन काटने पडे, हे मुनिराज ! उस बेला क्षुधा, पिपासा, शीत और घाम यह सब मुझे सहनाही पडताथा ॥ २९ ॥ वर्षाकालमें जब रात्रिदिन मुसलधार घोरवृष्टि होतीथी और वायुका बडा झकोरा चलताथा, तबभी मेरे पास एक टुकडा कपडा न था (जिससे मैं अपनी देह तो ढाँप सकता) ॥ ३० ॥ जो लोग तीर्थमें प्रतिग्रह तो लेलेतेहैं परन्तु पर्व पडने परभी स्वयं कुछ दान नहीं करते, उन्हीं लोगोंको बडे दुःखमें डालनेवाली यह (पिशाच) योनि भोगनी पडतीहै ॥ ३१ ॥ हे मुने ! उस मरुभूमिमें इसी भाँति बहुत दिन बीतजानेपर एकबार मैंने एक ब्राह्मणके लडकेको आतेहुए देखा ॥ ३२ ॥ जो कि सूर्यके उदय होजानेपरभी सन्ध्या इत्यादि कुछ नहीं किये था परञ्च मलमूत्र करके शौच और कुल्ला आदि कुछभी नहीं कियेथा ॥ ३३ ॥ बस उसे पछौटा खोले (बिना लाँग बाँधे) शौचसे हीन और सन्ध्याकर्मसे रहित देखतेही मैं भोगकी वांछासे उसके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शरीरमें घुसगया ॥ ३४ ॥ हे मुनिनाथ ! मेरे मन्दभाग्य होनेसे वह ब्राह्मणकुमार किसी बनियाके साथ धनके लोभसे इस पवित्र (काशी) पुरीमें चलाआया ॥ ३५ ॥ हे मुनिसत्तम ! ज्योंही वह नगरकी सीमाके भीतर घुसा त्योंही मैं उसके पापोंके साथ क्षणमात्रमें उसके शरीरसे बाहर होपडा ॥ ३६ ॥ हे तपोनिधे ! (मेरे बाहरही रुक जानेका कारण यह है कि) महादेवकी आज्ञानुसार इस वाराणसीपुरीमें मेरे पति पिशाच और बडे बडे पातक भीतर नहीं जानेपाते ॥ ३७ ॥ सो अबतक वे सब पाप उसके बाहर आनेका बाट जोहतेहुए गणलोगोंके डरसे सीमाके बाहरही ठहरेहैं ॥ ३८ ॥ हे तपोधन ! वह इसी आज, कल, परसोंतक बाहर निकलेगा—इसी आशामें पडकर हम सब आजलों बैठेहैं ॥ ३९ ॥ अबतक न वह बाहर निकलताहै न हमलोगोंकी आशाही दूर होतीहै; इसी आशाके जालमें अरुझकर विना अवलंबके हम सब पडेहैं ॥ ४० ॥ हे तपस्विन् ! अब, मैं आजकी विचित्र बात कहताहूं आप इसेभी सुनलेवें, मेरी समझमें तो इस घटनासे अभी बडाभारी कल्याण हुआ चाहताहै ॥ ४१ ॥ हमलोग प्रतिदिन मारे भूखके व्याकुल होकर आहार (ढूंढने) केलिये (यहांसे लेकर) प्रयागपर्य्यंत चलेजातेहैं पर (कभी) कुछ हाथ नहीं लगता ॥ ४२ ॥ सभी जंगलोंमें फलोंसे लदेहुए कई तसे वृक्ष पडेहैं, और इस भूमिमें पैरपैरपर निर्मल जलसे भरे अनेकजलाशयभी दिखि मानहैं ॥ ४३ ॥ योंही औरभी अनेकप्रकारके भोज्य पदार्थ तथा बहुतसे विचित्र पीनेके द्रव्य और लोगोंको बडेही सुलभहैं ॥ ४४ ॥ परन्तु (क्याकरें) हम लोगों की दृष्टि पडतेही वे सब वस्तु दूर दूर हटते चलेजातेहैं । हे मुने ! आज अकस्मात् एक वस्त्रधारी संन्यासी को आतेहुए देखकर ॥ ४५ ॥ भूखके मारे अत्यंत पीडित हो चाहा कि इसे बलपूर्वक पटककर खाडालूं—बस यही विचारकर बडी शीघ्रतासे उसके पास पहुँचा ॥ ४६ ॥ ज्योंही मैं उसे पकडा चाहताथा त्योंही उसके मुखारविन्दसे विघ्न विनाशिनी शिवनामकी पवित्र वाणी निकल पडी ॥ ४७ ॥ (अबतो) शिवनामके स्मरण होतेही मेराभी (पूर्वसंचित) पाप दबगया, इसीसे मैं इस पुरीमें प्रवेश करसका ॥ ४८ ॥ सीमापर रहनेवाले प्रमथगणोंने एकबारभी मेरी ओर नहीं ताका क्योंकि, जिनके कानमें शिवका नाम जारहताहै, फिर उनकी ओर यमराजभी दृष्टि नहीं फेरसकते ॥ ४९ ॥ मैंतो अभी उसी (संन्यासी) के साथ (पंचक्रोशीकी) सीमा नांघताहुआ यहां अन्तर्गृहीके सिवानेपर आपहुँचाहूं, फिर वह संन्यासी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भीतर चलागया पर मैं यहांही रहगया ॥ ५० ॥ हे मुनीश्वर ! इस घडी आपके दर्शन पाजानेसे मैं अपनेको बहुत कुछ (कृतार्थ) समझने लगा, हे कृपानिधे ! आप इस दारुण (पिशाच) योनिसे मेरा उद्धार करदेवें ॥ ५१ ॥ इसके पीछे उस पिशाचके इस (दीन) वचनको सुनकर वह दयालु तपस्वी मनमें सोचने लगा कि—स्वार्थहीमें लगे रहनेवाले मनुष्यको धिक्कारहै ॥ ५२ ॥ पशु पक्षी और मृग इत्यादि सभी कोई अपना पेट तो भरहीलेतेहैं, परन्तु इस संसारमें जो सदैव परोपकार करनेको उद्यत रहताहै, वही धन्यहै ॥ ५३ ॥ सो आज मैं इस शरणागत पिशाचको जो पापके बोझसे दबाजारहाहै, अपने तपोबलसे उद्धार करूंगा ॥ ५४ ॥ उस सज्जनने मनहीमन यह विचार स्थिर करके पिशाचसे कहा कि, "तू इस विमलोदक सरोवरमें पाप छोडानेके लिये नहाडाल ॥ ५५ ॥ रे पिशाच ! इस तीर्थके प्रभाव तथा भगवान् कपर्दीश्वरके दर्शनसे अभी क्षणभरमें तेरी पिशाचयोनि क्षीण होकर नष्ट होजावेगी" ॥ ५६ ॥ मुनिकी बात सुन, प्रसन्न चित्त हो दोनों हाथोंको जोड प्रसन्नमनसे उस मुनिको प्रणाम कर पिशाच कहने लगा ॥ ५७ ॥ हे नाथ ! जलके अधिष्ठाता देवतालोग (बराबर) रक्षा करते रहतेहैं, इस कारणसे हे मुनिसत्तम ! मुझे तो पीनेके लियेभी पानी नहीं मिलता फिर नहानेकी कौन बातहै ? ॥ ५८ ॥ और (नहाने) पीनेको क्या कहें ? मेरेलिये तो जलका छूनाही बडा कठिनहै, पिशाचकी यह बात सुन बडेही प्रसन्न होकर संसारभरके उद्धारकरनेमें समर्थ उस तपस्वीने उससे कहा कि, "अच्छा तो ले, इस विभूतिको अपने ललाट फलकमें लगादे ॥ ५९ ॥ ॥ ६० ॥ हे पिशाच ! इस विभूतिकी ऐसी विचित्र महिमाहै कि चाहे कैसाही पापी क्यों न हो पर उसे कहींपर कोई भी कुछ बाधा नहीं डाल सकता ॥ ६१ ॥ यमराजके दूत लोग, मस्तकपर विभूतिको पोतीहुई देखकर चाहे वह पापीही क्यों न हो पर उस पाशुपत अस्त्रसे डरकर भागही जाते हैं ॥ ६२ ॥ जैसे पथिक लोग हड्डियोंकी ध्वजासे चिह्नित जलाशयको देखतेही दूर छोडदेतेहैं वैसेही यमके किंकर भस्मसे भूषित भाल देखवालेके पास नहीं जाते ॥ ६३ ॥ जो उत्तम नर शिवमंत्रोंको कहकर भस्मरूप कवचको शरीरमें धारण करता है, उसके समीपमें हिंसक-जन्तुभी कभी नहीं जासकतेहैं ॥ ६४ ॥ जो कोई शिवमन्त्रोंसे पवित्रित भस्मको भक्तिपूर्वक भाल, वक्षस्थल, और बाहुमूलमें लगाताहै, उसे हिंसक लोगभी कभी नहीं मारसकते ॥ ६५ ॥ खमस्त दुष्ट जन्तुओंसे सर्वदा रक्षा करनेके कारण रक्षा,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

और भूति (ऐश्वर्य) बढानेसे विभूति ॥ ६६ ॥ संसारमें भासमान करने तथा ज्ञान कर्मोंके भर्त्सन करनेसे भस्म, (भूननेसे भस्म) और पांसुत्व दोषके दूर क नेसे पांसु, तथा पापोंके क्षरण करदेनेसे क्षार, ऐसा पंडित लोग उसे कहते हैं॥६७॥ (यह कहकर) उस तपस्वीने आधार (बोरसी) भस्म लेकर उस पिशाचके हाथमें देदिया, और उसनेभी बडेही आदरसे लेकर अपने कपालमें मलदिया ॥ ६८ ॥ जलाधिष्ठित देवतोंनेभी विभूतिधारी पिशाचको जलमें उतरकर नहातेहुए देख कुछभी निवारण नहीं किया ॥६९ ॥ फिर तो वह पिशाच ज्योंहीं नहाय और पानी पीय उस सरोवरसे बाहर हुआ त्योंही उसकी पिशाचयोनि छूटगयी और वह (तुरत) दिव्यदेही होगया ॥ ७० ॥ और दिव्यमाला और वस्त्रोंको पहिन दिव्य गंधोंसे अनुलेपन कर, दिव्यविमानपर चढ़ पावनमार्गकी ओर चलपडा ॥ ७१ ॥ आकाश मार्गमें जातेहुए उस (दिव्य पुरुष) ने उस तपस्वीको प्रणाम करके बडे उच्चस्वरसे कहा—हे अनघ ! भगवन् ! मुझे आपहीने परमनिंदित उस कुत्सितपिशाच योनिसे छोडादियाहै, और इस तीर्थके महिमाबलसे मुझे यह दिव्यदेह प्राप्त हुई है ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ आजसे इस तीर्थका नाम पिशाचमोचन पडेगा, और इसमें स्नान करनेसे और लोगोंकीभी पिशाचयोनि छूटजावेगी ॥ ७४ ॥ और जो लोग इस पुनीत तीर्थमें स्नान करके सन्ध्या और तर्पणके अनन्तर पितरोंको पिंडदान करेंगे ॥ ७५ ॥ यदि दैवात् उनके बाप दादे पिशाच योनिमें पडे होंगे तो उससे छूटकर उत्तमगतिको पाजावेंगे ॥७६ ॥ हे तपोधन ! आज अगहन मासके शुक्लपक्षकी चतुर्दशीहै, आजके दिन यहाँपर स्नानादिक करनेसे पिशाचयोनिका मोचन होजाताहै॥७७॥ जो लोग इसदिन प्रतिवर्ष यहाँकी यात्रा करेंगे वे तीर्थमें दानलेनेके पापसे निकल जावेंगे ॥ ७८ ॥ जो मनुष्य पिशाचमोचनमें स्नान और कपर्दीश्वरका दर्शन तथा वहांपर अन्नदान करतेहैं वे सर्वत्रही पापसे निर्भय रहतेहैं ॥ ७९ ॥ अगहन शुक्ल चतुर्दशीके दिन कपर्दीश्वरके समीप (इस पिशाचमोचन) में स्नान करलेनेपर कहींभी मरे पर पिशाच नहीं होना पडता ॥ ८० ॥ वह महाभाग्यशाली दिव्यपुरुष यह कहकर और उस मुनिको वारंवार प्रणाम करके दिव्यगतिको प्राप्त होगया॥८१॥ हे घटोद्भव ! उस तपस्वीने भी इस आश्चर्यमयी घटनाको देख, कपर्दीश्वरकी आराधना करके कालक्रमसे मोक्ष लाभ किया ॥ ८२ ॥ हे मुनिवर ! वाराणसीतीर्थमें तभीसे वह पिशाचमोचन तीर्थ सर्वपापनाशक (होनेसे) बहुतही प्रसिद्ध होगया॥८३॥

CC-0. Jangamwadi Math Varanasi. Digitized by eGangotri

३१

इस पिशाचमोचन तीर्थपर एक एक शिवयोगीके भोजन करानेसे करोड करोड (संन्यासीके) खिलानेका फल पूर्णरीतिसे प्राप्त होताहै ॥ ८४ ॥ जो कोई नियत चित्तसे इस पवित्र अध्यायको सुनताहै, उसे कभी भूत, प्रेत, और पिशाच इत्यादिका भय नहीं होता ॥ ८५ ॥ यह उत्तम उपाख्यान बालग्रहोंसे पीडित बालकोंके (रोगावस्थामें) प्रयत्नपूर्वक पाठकरनेसे (ग्रहोंकी) बडीही शान्ति करदेता है ॥ ८६ ॥ इस आख्यानको सुनकर यदि कोई मनुष्य परदेशकी यात्रा करे तो उसे कहींभी चोर, बाघ, अथवा पिशाच इत्यादिका भय न होवे ॥ ८७ ॥

दोहा—चौदस अगहन शुक्लकी, लोटा भंटा नाम।
पिशाचमोचन तीर्थपै, मेला लगत ललाम ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्द्धे भाषायां पिशाचमोचन-कथावर्णनं नाम चतुष्पंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५४ ॥

पंचपनवां अध्याय.

काशीवर्णन और गणेशप्रेरण।

स्कन्द बोले—हे कुंभयोने! वहांपर काशीमें औरभी गणोंनें जिन जिन लिंगोंको स्थापित किया था मैं उनकाभी वर्णन करता हूं, तुम श्रवण करो ॥ १ ॥ पिंगलाक्षनामक पारिषदने कपर्दीश्वरके उत्तरभागमें पिंगलाक्षेश्वर संज्ञक शिवलिंगको प्रतिष्ठित किया था ॥ २ ॥ जिसके केवल दर्शन करनेहीसे पापोंका क्षय होजाता है। भगवान् महादेवके परमप्रीतिपात्र वीरभद्रभी ॥ ३ ॥ निश्चलरूपसे आजतक वीरभद्रेश्वरका ध्यान करते रहते हैं, उस लिंगके दर्शनहीसे वीरसिद्धि होजाती है ॥ ४ ॥ जो कोई अविमुक्तेश्वरके पिछवाडे वीरभद्रेश्वरका पूजन करता है उसे रणक्षेत्रमें कभी भंग नहीं मिलता ॥ ५ ॥ हे अगस्त्यमुने! स्वयं वीरभद्रही साक्षात् वीररूपको धारणकरके अविमुक्त क्षेत्रवासियोंके विघ्नोंका विध्वंस करते रहते हैं ॥ ६ ॥ मनुष्य, शुभप्रदा भद्रा और भद्रकालीके साथ विराजमान वीरभद्रकी पूजा करके काशीवासका फल प्राप्त करता है ॥ ७ ॥ योंही किरात नामक गणने काशीमें केदारेश्वरके दक्षिण भागमें भक्तोंके अभय देनेवाले किरातेश्वरके लिंगको प्रतिष्ठित किया है ॥ ८ ॥ श्रीमान् चतुर्मुखनामक गण वृद्धकालेश्वरके समीपहीमें दृढरूपसे चतु-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मुखेश्वर लिंगके ध्यानमें आजतक लीन पडा रहता है ॥ ९ ॥ इस चतुर्मुखेश्वर लिंग के भक्तलोग स्वर्गलोकमें समग्र भोगोंसे पूर्ण होकर साक्षात् ब्रह्माके समान समस्त देवोंसे पूजित होते हैं ॥ १० ॥ कुबेरेश्वरके पासहीमें निकुंभ गणके पूजित निकुंभेश्वरके दर्शन और पूजनको कर परदेशकी यात्रा करनेसे कार्यकी सिद्धि होती है और अन्तमें शिवलोकमें सादर वास मिलता है ॥ ११ ॥ महादेव (नामक लिंग) के दक्षिण ओरमें पंचाक्षेश्वर लिंगकी पूजा करनेसे काशीमें मनुष्यको जाति स्मरण (की शक्ति) हो जातीहै ॥ १२ ॥ अन्तर्गृहके उत्तर द्वारपर भारभूतनामक गणके अर्चित भारभूतेश्वर महादेवके ध्यान करनेसेही शिवलोकमें वास मिलताहै ॥ १३ ॥ जिन लोगोंने काशीमें भारभूतेश्वर लिंगका अवलोकन नहीं किया वे सब बंझे वृक्षकी नाईं पृथिवीके भारभूतही बने रहतेहैं ॥ १४ ॥ हे कुंभज ! व्यक्षनामक गण त्रिलोचन लिंगके सन्मुख व्यक्षेश्वरनामक बडे लिंगका आजलों ध्यान करता रहता है ॥ १५ ॥ उस (व्यक्षेश्वर) लिंगके जो लोग भक्त हैं, वे शरीरान्त होनेपर साक्षात् व्यक्षही हो जाते हैं, इसमें तनिकभी विचार नहीं करना चाहिए ॥ १६ ॥ क्षेमकनाम पार्षद काशीमें स्वयं मूर्ति धारणकर स्थिरभावसे आजभी सर्वव्यापी भगवान् विश्वनाथके ध्यानमें मग्न रहता है ॥ १७ ॥ जो कोई काशीमें गणप्रधान क्षेमकका पूजन करता है, उसके विघ्न तो नष्ट होही जाते हैं, फिर पग पगपर क्षेम होने लगता है ॥ १८ ॥ यदि कोई परदेशमें चलागया हो तो उसके चले आनेकी कामनासे यहांपर क्षेमककी पूजा करनेसे वह कुशल क्षेमसे शीघ्रही लौट आता है ॥ १९ ॥ विश्वेश्वरके उत्तरभागमें लांगलीनामक गणके प्रति पूजित लांगलीश्वरके दर्शन करनेसे मनुष्य कभी रोगभागी नहीं होता ॥ २० ॥ एकवारभी लांगलीश्वरके पूजन करनेसे पांच हल दान करनेका पूर्ण फल और समस्त संपत्तियाँभी प्राप्त होती हैं ॥ २१ ॥ विराधेश्वर स्थापित विराधेश्वरकी आराधना करनेसे सब अपराधोंसे भरे रहने परभी कहीं आधी नहीं होने पाता ॥ २२ ॥ काशीवासी लोग जो प्रतिदिन अपराध करते हैं इस विराधेश्वरके पूजन करनेसे वे सब अपराध शीघ्रही क्षय हो जाते हैं ॥ २३ ॥ दंडपाणिसे नैर्ऋत्यकोणपर विराधेश्वरको प्रयत्नपूर्वक प्रणाम करनेसे निस्सन्देह सब अपराधोंसे छूटजाता है ॥ २४ ॥ सुमुखनामक गणके प्रतिष्ठित पश्चिमाभिमुख सुमुखेश्वर लिंगके देखनेहीसे सब पाप दूर होजाते हैं ॥ २५ ॥ पिलपिलातिर्थ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

३३

स्नानकर सुमुखेश्वरके दर्शन करनेसे सदैव यमराजको सुमुखही देखता है कभी दुर्मुख (रूप) नहीं देखना पडता ॥ २६ ॥ मनुष्य, आषाढी पूर्णिमाके दिन आषाढी गणके संस्थापित आषाढीश्वर लिंगका भक्तिपूर्वक दर्शन करनेसे पापरहित हो जाता है ॥ २७ ॥ भारभूतेश्वरके उत्तरओर आषाढी पूर्णिमाको आषाढीश्वरके पूजन करनेसे पापोंका संताप नहीं होने पाता ॥ २८ ॥ जो कोई आषाढमासकी शुक्लाचतुर्दशी अथवा पूर्णिमासीके दिन इस लिंगकी वार्षिकयात्रा करता है, वह मनुष्य निष्पाप हो जाता है ॥ २९ ॥ स्वामिकार्तिक कहने लगे हे मुने ! वाराणसीमें विश्वनाथके प्रसन्नतार्थ अपने अपने नामसे लिंगोंको स्थापित करके इन सब गणोंके वहांहीपर रहजानेसे ॥ ३० ॥ काशीका समाचार जाननेके लिए भगवान् विश्वेश्वर फिर चिंता करने लगे, किस हितैषीको भेजूं जिससे पूरा सन्तोष पाऊं ॥ ३१ ॥ योगिनीगण, सूर्य, ब्रह्मा, शंकुकर्ण इत्यादि गण, ये सब लोग समुद्रमें मिलगईहुई नदियोंकी नाईं फिर नहीं लौटे ॥ ३२ ॥ जो लोग काशीमें जा बैठे हैं वे तो सचमुच मेरे उदरहीमें बैठे हैं, जलतीहुई ज्वालामें घृतकी नाईं पडकर अब वे फिर नहीं निकल सकते ॥ ३३ ॥ जो लोग लिंगपूजामें तत्पर होकर काशीमें वास करते हैं वे सब मेरेही जंगम लिंगरूप हैं इसमें कुछभी सन्देह नहीं है ॥ ३४ ॥ काशीमें स्थावर, जंगम, अचेतन, और सचेतन जो कुछ हैं सब मेरे लिंग-रूपही हैं, उनसे द्वेष करनेवाले सबी (लोग) दुर्बुद्धिही होते हैं "काशीके कंकड सब शंकर समान हैं" ॥ ३५ ॥ जिनके मुखसे काशीका नाम निकसे और जिनके कानोंमें विश्वनाथकी कथा पैठे, वेही लोग काशीमें लिंगस्वरूप हैं, और मेरेही समान पूजनीय तथा श्रेष्ठ हैं ॥ ३६ ॥ वाराणसी, काशी, रुद्रावास, यह वचन जिसके मुखसे स्पष्टरूपसे बाहर होता है, फिर यमराज उसका कुछ नहीं करसकते ॥ ३७ ॥ जो लोग आनंदवनमें पहुँचकर फिर कहीं दूसरी निरानन्दभूमीको हृदयसे चाहने लगते हैं वे इस संसारमें सदैव आनन्दसे हीनही रहते हैं ॥ ३८ ॥ चाहे आज हो अथवा बहुत दिनोंके पीछे हो पर मरना तो अवश्यही है, अतएव मनुष्योंको चाहिए कि कलि और कालके भयसे काशीको कभी न छोडें ॥ ३९ ॥ जो बातें होनेवालीं होती हैं वे पैर पैरपर अवश्यही हो जाती हैं, फिर निर्बुद्धिलोग लक्ष्मीकी आश्रयरूपा इस काशीको क्यों छोड देते हैं ? ॥ ४० ॥ काशीमें पदपदपर सहस्रों दुःख सहकरभी रहना अच्छा है, परन्तु कहीं अन्यत्रपर निष्कंटक राज्य पाने-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कीभी वांच्छा नहीं करना चाहिए ॥ ४१ ॥ ऐश्वर्यके भोग भला कै निमेषतक रह
सकते हैं ? पर काशीमें तो पदपदपर इस लोक और परलोक उभयत्र निरंतर सुख
बना रहता है ॥ ४२ ॥ मैं विश्वनाथ स्वयं (जिसका) नाथहूं, और काशी आदि
मुक्तिप्रकाशिनी है, फिर सुधातरंगा साक्षात् स्वर्गंगा जहां बहरही हैं—तो ये तीनोंहि
एकमत होकर क्या नहीं दे सकते हैं ? ॥ ४३॥ अगणित समृद्धियोंसे परिपूर्ण पंच
कोश प्रमाणकी यह नगरी तो मेरी शरीरही है, इससे यह मोक्षका कारण है ॥४४॥
एक मेरी काशीपुरीही तो संसारके बोझसे थकेहुए तथा सदैव आवागमन करनेवाले
जीवोंकी निश्चित विश्रामभूमिका है ॥ ४५ ॥ संसारके पथिकोंके लिए यह काशीहि
सदैव मनोरथरूपी फलोंसे अत्यंतफलाहुआ कल्पलताओंका मण्डप है ॥ ४६ ॥
चक्रवर्ती मोक्ष महाराजका यह काशीही सर्व तापहर विचित्र छत्रहै, और इस छात्रके
दांडी मेरा त्रिशूलहै ॥ ४७ ॥ जिन पुण्यात्माओंको, निरंतर सुख पानेके लिए विना
श्रमहीके मोक्ष लक्ष्मीकी कामना होवे उन्हें काशीको कदापि नहीं त्यागना चाहिए
॥ ४८ ॥ जो लोग मेरे आनन्दवनके निश्चित वनवासी होतेहैं वे बडे स्वादिष्ठ मोक्ष
लक्ष्मीके फलोंको (परलोकमें) पातेहैं ॥ ४९ ॥ जो कि ममता और मोहसे रहि
मुझकोभी मोहे लेतीहै, उस विश्वविमोहिनी काशीको कौन नहीं सुमिरना चाहवेहै
॥ ५० ॥ परमानंदके प्रकाशक होनेसे जिस काशीका नामभी बडाही मधुरहै, ऐसे
कौनसे पुण्यात्मा "काशी—काशी" कहकर नहीं जपते हैं ? ॥ ५१ ॥ जो लोग
सर्वदा काशीके नामरूपा सुधाको पीते रहतेहैं उनके लिए भूतलव्यापी उत्तम धर्म
मार्ग होताहै ॥ ५२ ॥ यद्यपि मैं सर्वथा ममतारहित और निश्चित सर्वात्माहूं पर संसार
भरमें वेही लोग मेरेहैं जो काशीके नामको जपते रहतेहैं ॥ ५३ ॥ वाराणसीके इस
रहस्यको समझहीकर, योगिनियां, ब्रह्मा, सूर्य और प्रधानगण लोग वहांपर रहते
और कोई दूसरा कारण नहींहै॥५४॥नहीं तो वे योगिनियां, वह सूर्य, वह ब्रह्मा, और
वे सब (मेरे) गण मुझे छोडकर अन्यत्र कैसे रहजाते ? ॥ ५५ ॥ उन
लोगोंका काशीमें रहजानाही बहुत अच्छा हुआ, क्योंकि दूसरे राज्यका एक मनुष्य
राज्यके भेद (फोडफाड) करदेनेमें समर्थ होजाताहै ॥ ५६ ॥ (पर वहांतो)
स्वरूपधारीही उतने लोग घुस पैठ चुकेहैं तो फिर वे सब मेरेभी चलनेका
अवश्यही कर रहे होंगे ॥ ५७ ॥ अच्छा तो अब औरभी कुछ (थोडेसे)
पार्श्ववर्ती लोगोंको वहां भेजदूं, क्योंकि इन सब प्रधानलोगोंके वहां ठहर जानेसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

३५

मैंभी पीछेसे चल सकूंगा ॥ ५८ ॥ महादेवने यही सब विचार कर गजाननको बुलाया, और यह कहकर उनकोभी भेजा कि,–"हे पुत्र ! तुम यहांसे काशीको जाओ ॥ ५९ ॥ और वहांपर टिककर गणोंके साथ (इस कार्यकी सिद्धिमें) प्रयत्न करो, और हम लोगोंके विघ्नको दूर हटाकर राजाही पर विघ्न करो ॥ ६० ॥ इसके अनंतर मर्यादापालक गणाध्यक्षने महादेवकी आज्ञाको माथेपर लेकर उनकी स्थितिके लिये तुरत काशीकी ओर प्रस्थान किया ॥ ६१ ॥

दोहा–जेहि सुमिरे जग होहिं सब, सिद्धि वही गननाथ ।
चले करन जिन काजको, भे वे आपुहिं साथ ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे भाषायां उत्तरार्द्धे पंचपंचाशत्तमोऽध्यायः॥ ५५॥

छप्पनवां अध्याय ।

गणेशका काशीमें प्रवेश और माया प्रपंचका वर्णन ।

स्वामिकार्तिकने कहा–इसके अनंतर महादेवके आज्ञानुसार गणेश्वर मन्दराचलसे शिवजीकी काशीमें आनेका उपाय सोचतेहुए प्रस्थित हुए ॥ १ ॥ मूषक वाहन भगवान् गणेश शीघ्रतासे वाराणसीपुरीमें पहुँच ब्राह्मणकी मूर्ति बनकर अच्छे अच्छे सगुनोंके साथ नगरमें प्रविष्ट हुए ॥ २ ॥ वृद्ध ज्योतिषीका रूप धारण कर, सबी किसीके भीतरी घरैया हो नगरके मध्यमें पुरवासियोंके प्रीतिपात्र बनकर, घूमने लगे ॥ ॥ ३ ॥ वे आपही रात्रिकालमें लोगोंको स्वप्न दिखलाते, और प्रभातको उन सबोंके घरोंपर जा जा कर उन स्वप्नोंका दोष गुण (यों) कहने लगेथे ॥ ४ ॥ आजकी रातमें जो कुछ स्वप्नका चरित्र आप लोगोंने देखाहै, आपही सबके कौतूहल निमित्त मैं उसीको कहताहूं ॥ ५॥ रातके चौथे पहरमें आपने एक बडाभारी पोखरा देखा फिर उस पोखरेमें गोते खाते जाकर तीरेलगे ॥ ६ ॥ (जब तीरसे निकसने लगे) तो उसके जलसे बिछिलहल चहटेमें (फँसकर) अनेकबार डूबे और उतिराये, इस दुःस्वप्नका फल बडाही भयानकहै ॥ ७ ॥ और आपनेभी जो गेरुआवस्त्र पहिने मूड मुडाएहुए एक मनुष्यको देखाहै, यहभी अत्यंतदारुण और बहुत बडा संताप देवेगा ॥ ८ ॥ रात्रिमें जो सूर्य ग्रहण (लगते) देखाथा, सो यह तो ध्रुव करके भारी अनिष्ट करेगा, और (आपने) रातमें दो इन्द्रधनुष देखे यहभी अच्छा नहीं है ॥ ९ ॥ (और आपने जो यह देखा कि) आकाशमें सूर्यने पश्चिमओर आकर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उदय होते हुए चन्द्रमाको पृथिवी पर गिरादिया—सो यह राज्यका भय सूचक
॥ १० ॥ (आपने) एक साथही जो दो केतुओंको परस्पर लडते हुए देखाथा-
यहभी अच्छा नहीं है, केवल राज्यभंगहीके लिए (यह होताहै) ॥ ११ ॥ (आपने
स्वप्नमेंजो) बाल और दांतोंको झरतेहुए तथा अपनेको दक्षिणकी ओर ले जातेहु
देखाहै उसे अपनाही नहीं वरन अपने कुटुम्बभरके लिए बडा भयंकर (समझि
एगा) ॥ १२ ॥ तुमने रात्रिके अन्तमें अटारी परकी ध्वजाका टूटकर गिरपडना
जो देखाहै—उसे राज्यका यज्ञकारक और भारी उत्पात मचानेवालाही जान रखना
॥ १३ ॥ यह जो स्वप्नमें क्षीर समुद्रके तरंगोंसे नगरीको प्लावित होते देखाहै—सो
मुझे ऐसा जान पडताहै कि तीनही चार पक्षके भीतर पुरवासियोंको भारी शंका
होवेगी ॥ १४ ॥ स्वप्नमें जो तुम वानरोंके यानपर चढाकर दक्खिनकी ओर ले
गएथे—सो हे महामते ! उससे बचनेका उपाय तो एक पुरत्यागहीहै ॥ १५ ॥ बीतती
हुई रातमें जो तुमने एक स्त्रीको रोतीहुई, चोंटी खोले, और विना वस्त्रके देखाथा मानो
(राज) लक्ष्मीही यहांसे चलीगई ॥ १६ ॥ और तुमने जो देवमन्दिरका कलश
गिरतेहुए देखाहै—उससे तो कुछही दिनोंमें राज्यभंग होजावेगा ॥ १७ ॥ सपनेमें—चारों
ओरसे रोतेहुए सिआर आदिके झुंडोंसे बहुतही घिरीहुई जो इस पुरीको (देखाथा
सो) एक मासके भीतरही यह उजडजावेगी ॥ १८ ॥ पुरीके ऊपर मडरानेवाले
चील्ह, घूघू, और गिद्ध इत्यादिके द्वारा यहांके रहनेवालोंपर कोई बडीभारी आपत्ति
पडनेकी सूचना होरहीहै ॥ १९ ॥ इस प्रकार पर विघ्नराजने जहां तहां बहुतसे दुष्ट
मोंकी बातें कहते (फैलाते) हुए—अनेकपुरवासियोंके (मनमें) उच्चाटन करदिया
॥ २० ॥ वे किसी किसीके आगे ग्रहचार दिखलातेहुए—कहने लगे कि जो शनैश्चर
शुक्र और मंगल ये तीनों ग्रह एक राशिमें जाबैठेहैं सो तो अच्छा नहींहै ॥ २१ ॥
यह जो धूमकेतु आकाशमें सप्तर्षिमंडलको भेदकर पश्चिमदिशामें चलागयाहै सो
राजाहीका नाश करडालेगा ॥ २२ ॥ शनैश्चर राशिको नाँघकर चलेजाने पर फिर
जो वक्रचारी हो (टेढे मार्गमें जा) कर पापग्रहोंके साथ होरहेहैं यह बडाही अशुभ
॥ २३ ॥ कल दिनमें जो भूकंप हुआथा वह तो इस नगरमें रहनेसे मेरे हृदयमें
बडीही थरथरी उत्पन्न कर रहाहै ॥ २४ ॥ यह उत्तरसे दक्षिण दिशामें बडे वेग
साथ जो लुक्क दौडता गया और आकाशहीमें लीनभी होगया—सोतो कभी अ
नहीं है ॥ २५ ॥ जब कि वायुके बडे वेगसे यह मोटी जडका चौमुहानी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

३७

पूजाका पेड उखड गया तो फिर कोई भारी उत्पात अवश्यही होगा ॥ २६ ॥ सूर्योदयके विना हुएही उकठे पेडपर बैठकर पूर्वदिशामें यह कौआ जो उत्कट बोली रटरहाहै सो कोई भारी भय डालेगा ॥ २७ ॥ ये जो दोनों बनैले हरने हाटके बीच ठोंढूंढनेवाले पुरवासियोंके आगेसे भागकर निकल गये यहभी बडाही अपशकुन हुआ ॥ २८ ॥ यह जो शरदऋतुहीमें आम और सखुओंमें कली दीखती हैं सो विना कालकेभी पुरवासियोंपर भारी काल पडनेका भय जान पडताहै ॥ २९ ॥ इस प्रकारसे भय उपजाकर कपटपूर्वक ब्राह्मण रूपधारी उस विघ्नराजने कितनेही पुरवासियोंको उस नगरसे उच्चाटित कर दिया ॥ ३० ॥ फिरतो वे अपनी मायाके बलसे अन्तःपुरमेंभी घुसकर प्रत्यक्ष फलोंके कहदेनेसे स्त्रियोंके बडेही विश्वास पात्र बनगये ॥ ३१ ॥ (किसी रमणीसे यह कहने लगे कि) हे सुलक्षणे ! तुमको तो तिरानवे बेटे उत्पन्न हुएथे, उन सबोंमें एक तो घोडेपर चढकर बाहरी सेतु (पुल) पर गिर पडनेसे मरगया ॥ ३२ ॥ (योंही दूसरीसे यह बोले कि) यह गर्भवती तो एक सुन्दरी कन्याको प्रसव करेगी, और यहभी पूर्वमें तो (पतिके प्रेम न करनेसे) दुर्भगाथी पर इस घडी सुभगा होगईहै ॥ ३३ ॥ हाँ यह तो यहांपर राजा और रानियोंकी बडीही प्यारीहै इसे तो राजाने अपनी छातीपरकी मोतीवाली माला दीथी ॥ ३४ ॥ और मैं समझताहूं पांचही सात दिन हुए होंगे कि राजाने प्रसन्न होकर इसे दो गांव (भी) देनेको कहाथा ॥ ३५ ॥ इसी रीतिसे प्रत्यक्ष फलोंके कहदेनेसे वह ब्राह्मण रानियोंका परममान्य होगया, और वे सब (रानियां) पीठ-पीछेभी उसके बहुतेरे गुणोंको यों कहने लगीं ॥ ३६ ॥ अहो ! यह ब्राह्मण सभी बातोंमें कैसा अभिज्ञ, सुशील, सुरूप, सत्यवादी, मितभाषी ॥ ३७ ॥ निर्लोभ उदार-प्रकृति, सदाचारी, जितेन्द्रिय, थोडेहीमें सन्तोषी, प्रतिग्रहसे विमुख ॥ ३८ ॥ क्रोध रहित, प्रसन्न वदन, असूया और वंचनासे हीन, कृतज्ञ, प्रीति सुमुख, परनिंदासे परा-ङ्मुख ॥ ३९ ॥ हितोपदेशक, पुण्यात्मा, सब व्रतोंमें निष्ठावान्, पवित्र सच्चरित्र श्रुतिस्मृतियोंमें विशारद ॥ ४० ॥ परमधीर, पवित्र इतिहासोंका वेत्ता, समदर्शी, सर्व-प्रिय, समस्त कलाओंमें निपुण, ज्योतिषियोंमें श्रेष्ठ ॥ ४१ ॥ क्षमाशील, कुलीन, कृपणता रहित (दाता) भोक्ता, और निर्मलचित्तहै, इन सब गुणोंसे पूर्ण तो ऐसा कोई भी कहीं दृष्टिपर नहीं चढता ॥ ४२ ॥ इसी भाँति वे सब अन्तःपुरकी स्त्रियाँ पद पदपर उसके गुणग्रामका वर्णन करतीहुई समय काटतीथीं ॥ ४३ ॥ एकदिन,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

रानी लीलावती अवसर पाकर राजा दिवोदाससे निवेदन करने लगी ॥ ४४ ॥ महाराज ! एक बूढासा परमगुणवान् पंडित ब्राह्मणहै, वह साक्षात् मूर्तिमान् परमब्रह्म निधि होनेसे दर्शनही करनेके योग्यहै ॥ ४५ ॥ फिर राजाकी अनुमति लेके रानीने अपनी विचक्षणा सखीको भेजकर शरीरधारी ब्राह्मतेजकी नाईं उस ब्राह्मणको बुलवा भेजा ॥ ४६ ॥ राजाभी दूरसे आतेहुए उस ब्राह्मणको देखकर जहाँ तहाँ वहांही गुण—यही बात मनहीमन कहतेहुए बडेही हर्षित हुए ॥ ४७ ॥ फिर तो राजा उठकर ज्योंही दो तीन पग बढकर अगवानीका सत्कार करने लगे त्योंही उस ब्राह्मणने चतुर्वेदोक्त आशीर्वादोंसे उन्हें अभिनंदित किया ॥ ४८ ॥ राजानेभी प्रणाम करके आदरपूर्वक आसनपर बैठाया और कुशलप्रश्न किया ब्राह्मणनेभी राजासे कुशल पूँछा ॥ ४९ ॥ वे दोनोंही ब्राह्मण और राजा वार्तालापमें चतुर होनेसे परस्परके कुशलप्रश्न तथा प्रत्युत्तरसे संतुष्ट होगये ॥ ५० ॥ इसके अनन्तर बातचीत समाप्त होनेपर राजाने ब्राह्मणको घर जानेके लिये विसर्जन किया, और वेभी बडा सन्मान और पूजा पाकर अपने स्थानपर चले आये ॥ ५१ ॥ उस ब्राह्मणके अपने आश्रमको चलेजानेपर नरनाथ दिवोदास, रानी लीलावतीसे उस विप्रकी बड़ी बडाई वर्णन करने लगे ॥ ५२ ॥ अयि गुणप्रिये ! महाबुद्धिमति ! देवि ! लीलावति ! तुमने जैसा कहाथा यह ब्राह्मण वैसाही क्या उससेभी कुछ अधिक गुणवान्है ॥ ५३ ॥ यह तो बीतीहुई तथा वर्तमान सभी बातोंको जानता है परन्तु कल प्रातःकाल उसे बुलाकर कुछ भविष्य विषय पूंछना चाहिये ॥ ५४ ॥ फिर बडे विभव भोगोंसे रात बीतजानेपर प्रातःकालही राजाने उस ब्राह्मणको बुलवाभेजा ॥ ५५ ॥ बडी भक्तिसे दुपट्टा इत्यादिके दानद्वारा सत्कार करके राजाने एकान्तमें उस ब्राह्मणसे अपने मनकी बातें पूछीं ॥ ५६ ॥ राजा बोले—मुझेतो आपही अकेले ब्राह्मणोंमें सर्वोत्तमहैं ऐसा प्रतीत होताहै, और मेरी समझमें जैसी आपकी बुद्धि तत्त्वदर्शिनी है वैसी और किसीकी नहीं है यह निश्चित है ॥ ५७ ॥ आपको शांत, दांत, परमविज्ञ, और तपोनिधि देखकर हे विप्र ! मैं कुछ पूछना चाहताहूं, यदि आप उसे ठीक ठीक बतलादेवें ॥ ५८ ॥ मैंने जैसा इस पृथिवीका शासन किया दूसरे राजोंने नहीं किया होगा, मैंने अनेक विधि विभवाधिक दिव्य भोगोंकाभी भोग किया ॥ ५९ ॥ मैं रात्रिदिन निरालस होकर बलपूर्वक दुष्टोंको जीतकर अपने औरस पुत्रोंसेभी अधिक इस प्रजावर्गका

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पालन किया ॥ ६० ॥ मैं ब्राह्मणके चरणपूजनसे बढकर दूसरा तो कोई पुण्य ही नहीं समझता, जो हो इस अकथनीय विषयके कहनेसे कुछ फल नहीं है ॥ ६१ ॥ हे आर्य ! अब मेरा चित्त सब कर्मोंसे विरक्तसा होरहाहै सो हे सत्तम ! जैसे अन्तमें भला होवे उस बातको विचारकर आप कहें ॥ ६२ ॥ ब्राह्मणने उत्तरदिया— संसारमें राजोंका चाहे कैसेहू छोटासा काम क्यों न हो पर जबतक एकान्तमें न पूछा-जाय बुद्धिमान्‌को कभी नहीं कहना चाहिये ॥ ६३ ॥ बिना पूछेही मन्त्रीकोभी अपने अपमानके डरसे राजाके आगे कुछभी नहीं कहना चाहिये ॥ ६४ ॥ अतएव यदि आपने पूंछाहै तो मैं अवश्यही कहूंगा, इसमें कुछभी सन्देह मतकीजिये, और उसके करनेसे आपके चित्तकी उदासीनता अवश्यमेव दूर होजावेगी ॥ ६५ ॥ हे महामते ! महाराज ! सुनिये, मैं यह कुछ अयथार्थ नहीं कहता, आप सर्वतो-भावसे परमभाग्यशाली बडे पराक्रमी और शूर हैं ॥ ६६ ॥ जैसे कि आप पुण्य, यश, और बुद्धिसे सम्पन्नहैं, मेरी जानमें तो वे अमरावतीके इन्द्रभी वैसे नहीं हैं ॥ ६७ ॥ आपको तो मैं बुद्धिमें बृहस्पति, प्रसन्नतामें चन्द्र, तेजमें सूर्य प्रतापके द्वारा अग्नि ॥ ६८ ॥ बलमें वायु, धनदान करनेमें कुबेर, शासनमें रुद्र, रणभूमिमें निर्ऋति ॥ ६९ ॥ दुष्टोंके फांसनेमें वरुण, दुर्जनोंके नियमनकरनेमें यमराज, प्रभुत्व करनेमें महेन्द्र, क्षमामें सर्वसहाभूमी ॥ ७० ॥ मर्यादामें समुद्र, बडाईमें हिमालय, नीति-शास्त्रमें शुक्राचार्य, और राज्यसिंहासनमें साक्षात् मनुहैं (ऐसाही समझताहूं) ॥ ७१ ॥ आप मेघके समान संतापहारी, गंगाके नाम सम पवित्र, और समस्तजीवोंको सद्गति देनेमें काशीके तुल्यही हैं ॥ ७२ ॥ आप संहार करनेमें रुद्र, पालनमें चतुर्भुज, और (सृष्टि) विधानमें विधाताहैं, आपके कमलमुखमें सरस्वती विराजती हैं ॥ ७३ ॥ आपके हस्तकमलमें कमला, और क्रोधानलमें हलाहल विष रहताहै, आपका वचनही अमृत और दोनों भुजायें अश्विनीकुमारहैं ॥ ७४ ॥ हे भूपते ! आप तो सर्वदेवमय हैं, और सब कुछ आपहीमें वर्तमानहै, इसी कारणसे मैं आपका भावी शुभफल यथार्थरूपसे जानसकाहूं ॥ ७५ ॥ हे राजन् ! आजके अठारहवें दिन कोई उतरहा (औदीच्य) ब्राह्मण यहां आकर निश्चयही आपको उपदेश देगा ॥ ७६ ॥ हे महाराज ! वह जो कुछ कहे आप उसे बिना सोचे विचारे कर दीजियेगा बस इसीसे आपका समस्त मनोभिलाष सिद्ध होजावेगा ॥ ७७ ॥ यह कह वह ब्राह्मण राजा-की अनुमति पाकर अपने स्थानपर चलागया और राजाभी बडेही विस्मित हुए ॥ ७८ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इस प्रकार विघ्नराजने अपनी मायाके जालसे पुरवासी रानियाँ और राजाके सहित समग्र नगरीको अपने वशमें करलिया ॥ ७९ ॥ फिरतो गणेश्वर अपनेको छत्पन्न मान अपनी अनेकमूर्तियाँ बनाकर काशीमें वास करने लगे ॥ ८० ॥ हे अगस्त्य जब कि राजा दिवोदास नहींथा, उस वेलाके अपने स्थानोंको गणेशने भूषित किया ॥ ८१ ॥ विष्णु भगवानके राजादिवोदासको उच्चटित करदेनेपर, और फिरसे नगरीको विश्वकर्माके नई बनादेनेपर ॥८२॥ भगवान् विश्वनाथ स्वयं मन्दराचलसे इस सुन्दर नगरी वाराणसीमें आकर प्रथमतः गणनायकहीकी स्तुति करने लगे थे॥८३॥ अगस्त्यने पूँछा—कि भगवान् महादेवने कैसे विघ्नेश्वरकी स्तुति की, और उन विनायकने अपनी कौनकौनसी मूर्तियाँ बनाईं ॥८ ४ ॥ और किसकिस नामसे वे काशीपुरीमें विराजमान हुए ! हे षडानन ! इन सब बातोंको आप संक्षेपसे कहिए ॥ ८५ ॥ कार्तिकेय अगस्त्यके इस कथनको सुनकर गणराजकी मंगलमयी कथा यथावत् कहने लगे ॥ ८६ ॥

दोहा—रचि प्रपंच निज वशकिये, दिवोदासको जाय ।
भे गणेश जबहीं गणक, तब कहँ मनुस बसाय ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्द्धे भाषायां काशीवर्णनगणेशप्रेषणवर्णनंनाम षट्पंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५६ ॥

सत्तावनवाँ अध्याय ।

ढुंढिराजका स्तोत्र और छप्पन विनायकोंकी कथा ।

स्कन्द कहने लगे—हे मुनिसत्तम ! जब भगवान् विश्वेश्वर भवानीको और मुझे आगे ले चले उस घडी नैगमेयोंसे युक्त महाशाख और विशाखके संग नन्दी भृंगी इत्यादि आगे आगे चलतेथे, रुद्रगण चारोंओरसे घेरलियेथे, देवऋषियोंके सहित सनकादिक स्तुति कर रहेथे ॥ १ ॥ २ ॥ समस्त देवालयोंके स्वामी और दिक्पाल लोग अभिनन्दन करतेथे, एवं तीर्थगण अपना अपना जल दरसारहेथे, और गंधर्वगण मंगल गीतें गारहेथे ॥ ३ ॥ अप्सराएँ नाचमें अपने हाथरूपी पल्लवोंसे मानो पूजाही कर रहींथीं, और आकाशमंडलमें बिना बजाएही बाजे बजकर चतुर्दिक् अनुमोदन कर रहेथे ॥ ४ ॥ ऋषियोंके वेदध्वनिसे सभी दिशाओंका अग्रभाग बहिरा होगया (अर्थात् कुछ सुनाई नहीं पडने लगा) चारण लोग स्तुतिगान करने लगे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

४१

और मारे विमानोंके चारोंही ओर भरगयाथा ॥ ५ ॥ प्रसन्नतासे पुलकित महादेवके ऊपर इधर उधरसे देवाङ्गनायें मुट्ठियोंमें भरभरकर लावोंकी वर्षा कररहींथीं ॥ ६ ॥ अनेकविद्याधरियाँ मालाओंका उपहार देरहींथीं, यक्ष, गुह्यक, सिद्ध इत्यादि आकाशचारी गण जयध्वनि कर रहेथे ॥ ७ ॥ शकुन सूचक मृग और पक्षिगण स्वयं आगे प्रवेश कर रहेथे, प्रसन्नमुख किन्नर और किन्नरियाँ वडीही वडाई गारहींथीं ॥ ८ ॥ विष्णु, महालक्ष्मी, ब्रह्मा, विश्वकर्मा, नन्दी और गणेश—ये सब लोग इस महोत्सवकी धूमधाम प्रकट कर रहेथे ॥ ९ ॥ और नागकन्यायें चारोंओरसे मंगल आरती उतार रहींथीं, उसी वेलामें महादेवने शुभमयी वाराणसीपुरीमें प्रवेश किया ॥ १० ॥ वृषभध्वज वृषराजपरसे उतरकर समग्र देवताओंके देखतेही गणेशको आलिंगन करके यह कहने लगे कि ॥ ११ ॥ मुझे अपनेसे परमदुर्लभ इस शुभा वाराणसीपुरीमें जो मैं आसकाहूं यह सब इसी लडकेका प्रसादहै ॥ १२ ॥ त्रैलोक्य मंडलमें जो पिताकाभी दुस्साध्य है पुत्रसे वही वस्तु सुसाध्य होजातीहै, इसका उदाहरण मैंही बैठाहूं ॥ १३ ॥ इसी गजाननने मुझको जिसमें काशी प्राप्त होजावे ऐसा नजाने कौनसा अनुष्ठान अपनीही बुद्धिके विभवोंसे कियाहै ॥ १४ ॥ पुत्रवान् तो मैंही हूं, क्योंकि जिस बातकी चिंता मुझे बहुतदिनोंसे लगीथी, (और मेरा किया कुछभी नहीं होसका पर मेरे इस पुत्रने) अपने पौरुषसे उसी अभिलाषाको हाथमें धरदिया ॥ १५ ॥ इन्द्रादिक देवतोंकेभी स्तुत्य भगवान् त्रिपुरान्तक यह कहकर, प्रसन्नतासे स्पष्टवचनोंमें गणेशकी स्तुति करने लगे ॥ १६ ॥ भगवान् श्रीनीलकंठने कहा—हे विघ्नविनाशकश्रेष्ठ ! भक्तगणके निर्विघ्नकारक ! तुम निर्विघ्नलोगोंके विघ्नको शमन और सविघ्नोंके लिये एकमात्र विघ्नकर्ता हो ! अतएव तुम्हीं सबसे बढ कर हो ! ॥ १७ ॥ हे समग्रगणोंके अधीश ! और समस्त गणोंके अग्रगण्य ! सभीगण तुम्हारे चरणकमलपर प्रणत रहतेहैं, और तुम्हारे सद्गुण गणनाकरनेसे अतीतहैं, अतएव तुम्हारी जयहो ॥ १८ ॥ हे सर्वव्यापक ! सर्वस्वामिन् ! तुम्हीं समस्तबुद्धियोंके एकमात्र आश्रयहो, सभी मायाओंके प्रपंचज्ञहो, और सभी कर्मोंमें प्रथम पूजितहो-अतः तुम सर्वोत्कर्ष लाभकरो ॥ १९ ॥ हे सर्वमंगलमांगल्य ! सर्वमंगलस्वरूप ! तुम्हीं समस्त अमंगलोंके शमयिता और महामंगलके कारण हो, तुम्हारी जय हो ॥ २० ॥ हे सृष्टिकर्ता ब्रह्माके वन्दनीय ! तुम्हारी जयहो, हे पालनकर्ता विष्णुके प्रणामपात्र ! तुम्हारी जयहो, हे संहारकर्ता रुद्रके स्तवनीय ! तुम्हारी जयहो, हे सत्कर्मोंके सिद्धिदायक ! तुम्हारी जयहो ॥ २१ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हे सिद्धिविधायक ! तुम्हारा पादपद्म तो सिद्धोंकोभी वन्दनीयहै, और तुम्हीं समस्त सिद्धियोंके अकेले अवलंबन हो, एवं महासिद्धि और महाऋद्धियोंके सूचकभी तो तुम्हींहो, अतएव तुम्हीं सर्वश्रेष्ठ हो ॥ २२ ॥ हे गुणातीत ! तुम समस्त गुणोंके बनानेवाले, और अपने गुणोंहीसे सबमें अग्रगण्य, एवं परिपूर्णचरित्र, कृतार्थ और गुणवर्णित हो, अतः तुम्हारी जय हो ॥ २३ ॥ हे सर्वसेनाध्यक्ष ! इन्द्रके पराक्रम दाता ! तुम्हारे दांतका अग्रभाग बकुलाके समान उज्ज्वलहै, और तुम बालक होनेपरभी बडेही पराक्रमी हो, सो तुम्हारा जयजयकार होवे ॥ २४ ॥ हे अनंतमहिमाओंके आधार ! पर्वत विदारण ! तुमने दिग्गजोंको अपने दंतके अग्रभागमें खोंसलियाथा सो हे नागभूषण ! तुम्हारी जय हो ॥ २५ ॥ हे करुणामय ! दिव्यमूर्ते ! इस भूमंडलपर जो लोग तुम्हें प्रणाम करतेहैं, वे समस्त पापोंके आश्रय होनेपरभी मुक्तिके भागी होतेहैं, और तुम उनके सर्वदैव बडे बडे विघ्नोंको हरते रहते हो, और अन्तमें स्वर्ग और अपवर्गभी देडालतेहो ॥ २६ ॥ हे विघ्नराज ! इस पृथिवीतलपर आपने जिन्हें करुणाकटाक्षसे क्षणमात्रभी देखदिया, उनके समस्त पातकपुंजोंका क्षय होजाताहै, और उन पुरुषोत्तमोंपर लक्ष्मी कटाक्ष फेरने लगतीहै ॥ २७ ॥ हे प्रणतलोगोंके विघ्नविघात करनेमें दक्ष ! पार्वती—हृदयारविन्दके सूर्य ! जो लोग तुम्हारी स्तुतिको करते हैं, वे प्रसिद्ध सुने जातेहैं, यह तो कोई विचित्रता नहींहै, पर आश्चर्य तो यह है कि, वेही लोग यहाँपर गणनायक बनने लगतेहैं ॥ २८ ॥ जो लोग निरंतर आपके चरणयुगलका सेवन करते हैं, वे पुत्र पौत्र धन धान्य और समृद्धियोंके भागी होतेहैं, और अनेक दास दासी उन लोगोंके पदसरोजकी सेवामें लगजातेहैं, एवं च सब निर्मल राजभोग लक्ष्मीके अधिकारी होजातेहैं ॥ २९ ॥ हे परमकारण ! तुम्हीं समस्त कारणोंके कारणहो, वेदवेत्ताओंकेभी परमवेदनीय एक तुम्हींहो, हे वाङ्मूल ! तुम तो वचनोंके अगोचर हो, हे चराचरस्वरूप ! दिव्यमूर्ते ! तुम्हीं कोई अलौकिक अन्वेषणीय वस्तुहो ॥ ३० ॥ हे इस चराचर नाटकके सूत्रधार ! चारोंही वेद और ब्रह्मादिक देवतागणभी यथार्थरूपसे तुमको नहीं समझ सकते, हे मनोऽगम्य ! तुम तो अकेलेही समस्त जगत्का संहार पालन और सिरजन करतेहो, फिर अब तुम्हारी कौनसी स्तुति करी जासकतीहै ? ॥ ३१ ॥ तुम्हारी कुटिलदृष्टिरूपी बाणोंसे मारेगये, त्रिपुर, अंधक, और जलंधर इत्यादि दानवोंकोही मैंभी मारसका हे सिद्धिप्रद ! तुम्हारे विना एक तुच्छ कार्यकेभी करनेकी इच्छा करसके ऐसी यहांपर किसकी शक्तिहै ॥ ३२ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

४३

धातु तो ढूंढनेहीके अर्थमें प्रसिद्धहै, और समस्त अर्थोंके ढूँढनेहीके कारण तुम्हारा नाम ढुंढी हुआहै, इस लोकमें तुम्हारे संतोषके विना हे ढुंढिराज ! विनायक ! काशीपुरीमें प्रवेशभी कौन पासकताहै ? ॥ ३३ ॥ हे ढुंढिराज ! जो काशीवासी प्रथमही तुम्हारे चरणारविन्दमें प्रणाम कर फिर मुझे नमस्कार करताहै, मैं उसके कानके पास पहुँचकर अन्तसमयमें कुछ ऐसा उपदेश करदेताहूं जिससे फिर संसारमें जन्म नहीं लेना पडता ॥ ३४ ॥ मनुष्य प्रथमतः मणिकर्णिकामें सचैल स्नान कर, देवऋषि और मानवपितरोंका तर्पण निपटाय, धुरहे (नंगे) पैरोंहीसे ज्ञानवापीमें पहुँचकर तुम्हारा पूजन करे ॥ ३५ ॥ हे ढुंढे ! कोईभी काशीपुरीके फल देनेमें दक्ष तुमको पहिले सुगंधित चन्दनके लेपन, सुन्दर धूप, दीप, माला, और सामोदमोदक समूहसे प्रसन्न कर, फिर मेरी पूजा करनेसे कौनसी सिद्धिको नहीं पासकताहै ? ॥ ३६ ॥ इसके अनंतर वही नर काशीके दूसरे तीर्थोंमें क्रमके उलट फेर होजाने परभी पर्यटन करताहुआ तुम्हारीही दयादृष्टिसे अपने हित—घातक विघ्नोंको दूर भगाकर इस काशीमें संपूर्ण फल प्राप्त करताहै ॥ ३७ ॥ हे ढुंढिविनायक ! काशीमें जो कोई प्रतिदिन प्रातःकालमें तुमको प्रणाम करताहै, उसके समस्त विघ्नसंघ नष्ट होजातेहैं, और उसे यहां और परलोकमेंभी भूतलवर्ती कोईभी वस्तु कभी दुर्लभ नहीं होती ॥ ३८ ॥ हे ढुंढिराज ! जो कोई तुम्हारा नाम प्रतिदिन जपताहै, उसे आठों सिद्धियाँ अपने अपने हृदयमें सदा जपती रहतीहैं, और वह मनुष्य देवतोपभोग्य अनेकभोगोंको कर अन्तमें मोक्षलक्ष्मीके द्वारा वराया जाताहै ॥ ३९ ॥ हे ढुंढिविनायक ! तुम सकल सिद्धियोंके दाता हो, अतएव यदि कोई दूरदेशस्थित मनुष्य प्रतिदिन तुम्हारे पादपीठका स्मरण करता रहे तो उसे काशीवास करनेका अविकल फल मिलजाताहै, नहीं तो नहीं मिलसकता, और मेरी बात कभी झूँठ नहीं होसकतीहै ॥ ४० ॥ हे महाभाग ! मैं यह जानताहूं कि तुम इस क्षेत्रके अनेकविध असंख्य विघ्नोंके विनष्ट करनेको बहुतसे रूपोंको धारण करके यहाँपर विराजमान हो ॥ ४१ ॥ हे अनघ ! जहां जहांपर तुम्हारे जो जो रूप हैं वहांपर उनको मैं कहताहूं ये देवतालोगभी सुन लेवें ॥ ४२ ॥ प्रथम तो मेरे दक्षिणओर समीपहीमें तुम ढुंढिराजरूपसे विराजमान हो, जो समस्त भक्तोंको ढूँढ ढूँढकर उनके सब अर्थोंको पूर्ण करदेतेहो ॥ ४३ ॥ हे सुपुत्र ! गणेश ! जो लोग मंगलवारकी चतुर्थी तिथिको पाकर सुगन्धयुक्त लड्डुओंसे तथा गंधमाल्य इत्यादिके द्वारा तुम्हारी विविधभांतिकी पूजा करतेहैं, उन सबको

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यहांपर मैं अपना पारिषद बनाताहूं ॥ ४४ ॥ हे ढुंढिगजानन ! प्रति चतुर्थीको जो लोग तुम्हारा समर्चन करतेहैं वेही बडे बुद्धिमान् और परमसुकृती होकर समस्त आपदाओंके सिरपर अपना बायां पैर भलेही रखकर फिर स्वयं गजानन होजातेहैं ॥ ॥ ४५ ॥ हे ढुंढे ! माघमासके शुक्ल चतुर्थीको नक्तव्रत धारण कर जो लोग तुम्हारी पूजा करेंगे वे देवतोंकेभी पूज्य होजावेंगे ॥ ४६ ॥ माघसुदी चौथको तुम्हारी वार्षिकी यात्राको करके श्वेत तिलके लड्डुओंको (बांधकर) व्रतकर्ता भोजन करे ॥ ॥ ४७ ॥ हे ढुंढिराज ! क्षेत्रकी सिद्धिको चाहनेवाले लोग उस माघ सुदी चौथको तुम्हारी प्रसन्नताके लिये प्रयत्नपूर्वक यात्रा करें, फिर यह यात्रा उनके सब विघ्नोंको दूर करसकेगी ॥ ४८ ॥ और जो कोई यहांपर उस यात्राको न करे अथवा तिलवाका नैवेद्य न लगावे उसे मेरी आज्ञासे सहस्रों विघ्न पीडित करेंगे ॥ ४९ ॥ जो कोई मंत्रवेत्ता उसी चतुर्थीमें भक्तिपूर्वक तिल और घृतादिक द्रव्योंसे होम करेगा उसका मंत्र सिद्ध होजावेगा ॥ ५० ॥ हे ढुंढिराज ! तुम्हारा वैदिक अथवा तांत्रिक चाहे कोईभी मंत्र हो वह तुम्हारे समीपमें जपेजानेपर वांछित सिद्धिको देवेगा ॥५१॥ महेश्वरने कहा कि—जो सद्बुद्धिजन मेरी बनाईहुई तुम्हारी स्तुतिका पाठ करेगा उसे कदापि बडे, से बडे, विघ्न वर्ग पीडित नहीं करसकेंगे यह तो निश्चितही है ॥५२॥ इस पवित्र ढुंढिराजस्तोत्रको जो ढुंढिराजके समीपमें पढेगा,समस्त सिद्धियाँ उसके पास सर्वदा सेवा करती रहेंगी ॥५३॥ अत्यंतनियमित चित्तसे जो मनुष्य इस स्तोत्रका पाठ करेगा उसे उसके मानसिक पापभी कभी दबा नहीं सकेंगे ॥ ५४ ॥ ढुंढिस्तोत्रके पाठकरनेसे मनुष्य—पुत्र, कलत्र, क्षेत्र, उत्तम घोडे, बढियाँ गृह, धन और धान्य सबकुछ पासकताहै ॥ ५५ ॥ मोक्षार्थी मनुष्य मेरे बनाएहुए इस सर्वसम्पत्तिकरनामक स्तोत्रका पाठ बडे प्रयत्नके साथ सदैव करे ॥ ५६ ॥ प्रथम इस स्तोत्रको पढकर फिर किसी प्रयोजनके लिये यात्रा करे तो अवश्यही समस्त सिद्धियां आगे मिलती हैं ॥ ॥ ५७ ॥ अच्छा तो देवतालोग अब एक और बातभी सुनलेवें जो यहहै कि इस क्षेत्रकी रखवारी करनेके लिये ढुंढिराजने जहां जहांपर अपना डेरा डाल रक्खाहै ॥ ॥ ५८ ॥ काशीमें गंगा और असिके संगमपर अर्कविनायकनाम गणेशहैं, जिनका रविवारके दिन दर्शन करनेसे समस्त तापोंकी शान्ति होतीहै ॥ ५९ ॥ इस क्षेत्रके दक्षिणभागमें समस्त दुर्गतियोंके विनाशक दुर्गविनायक नाम गणेशहैं, उनकी पूजा बडे प्रयत्नसे करनी चाहिये ॥ ६० ॥ भीमचंडीके समीप क्षेत्रके नैर्ऋत्यकोणमें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

४५

भीमचंडविनायकहैं, जो दर्शनहीसे बडे भयको दूर करदेतेहैं ॥ ६१ ॥ काशीके पश्चिमसीमापर वह देहलीविनायकहैं, जो भक्तोंके समस्त विघ्नोंको यहांपर निस्संदेह निवारण करदेतेहैं ॥ ६२ ॥ इसी क्षेत्रके वायव्यकोणपर उद्दण्ड विनायकहैं जो सर्वदा भक्तलोगोंके बडे उद्दण्ड विघ्नोंकोभी दण्ड दिया करते हैं ॥ ६३ ॥ काशीकी उत्तरदिशामें पाशपाणि विनायक विराजतेहैं जो भक्तिकरनेसे काशीवासियोंके सभी विघ्नोंको सदैव फांसाकरतेहैं ॥ ६४ ॥ गंगा और वरणाके संगमपर रमणीय खर्वविनायक अवस्थितहैं, जो सज्जन भक्तोंके बडे बडे विघ्नसमूहोंको भी (दबाकर) बहुत छोटा बनादेते हैं ॥ ६५ ॥ पूर्वकी ओर क्षेत्रकी रक्षा करनेके लिये प्रसिद्ध सिद्धिविनायक यमतीर्थके पश्चिम विद्यमान रहतेहैं, वे साधकोंको अतिशीघ्रही सिद्धियाँ देदेतेहैं ॥ ६६ ॥ काशीमें बाहरी घेरेपर ये आठों विनायक विराजमान रहकर जो लोग भक्त नहीं हैं उनको उच्चाटन और जो भक्तहैं उन्हें सर्वसिद्धि देते रहते हैं ॥ ६७ ॥ अब मैं दूसरे घेरेमें रहकर इस अविमुक्त क्षेत्रकी जो विनायक रक्षा करतेहैं, उनको बतलाताहूं ॥ ६८ ॥ गंगाके पश्चिमतटपर अर्कविनायकसे उत्तर ओर लंबोदर विनायक हैं जो विघ्नरूप कर्दमको धो डालते हैं ॥ ६९ ॥ उनके पश्चिमओर दुर्गविनायकके उत्तर कूटदंतनामक गणेशहैं, वे कठिन उपसर्गोंका संहार और इस क्षेत्रका रक्षण सर्वदैव करते रहते हैं ॥ ७० ॥ भीमचंड गणेशसे कुछ (हटकर) ईशानकोणमें क्षेत्ररक्षक शालकंटकनामा गणेश पूजनीयहैं ॥ ७१ ॥ देहलीविनायकसे पूर्व कूश्माण्डनामक गणाध्यक्ष रहते हैं, भक्तोंको उचितहै कि महाउत्पातके शान्त्यर्थ उन्हींकी पूजा करें ॥ ७२ ॥ उद्दण्ड विनायकके अग्निकोणपर भक्तोंके परमपूजनीय और महाप्रसिद्ध मुण्डविनायक वर्तमानहैं ॥ ७३ ॥ उनका शरीर तो पातालमें है और केवल मुण्ड (भर) काशीमें विराजितहै, इसीसे काशीमें उनकी मुण्डविनायक संज्ञा पडीहै ॥ ७४ ॥ पाशपाणि गणेशके दक्षिणओर बिकटदंत गणेशकी पूजा करनेसे गणेशहीका पद प्राप्त होताहै ॥ ७५ ॥ खर्व—विनायकके नैर्ऋत्यकोणपर राजपुत्र गणेशका पूजन करनेसे राज्यच्युत राजाकोभी फिरसे राज्य प्राप्त होजाताहै ॥ ७६ ॥ गंगाके पश्चिमतटपर राजपुत्र गणेशके पश्चिमओर प्रणवनामक गणेशहैं जो प्रणाम करनेहीसे स्वर्गमें पहुँचा देते हैं ॥ ७७ ॥ काशीके दूसरे आवरणमें येही आठों विनायक अवस्थितहैं ये लोग काशीवासियोंके विघ्नराशियोंको उखाडते

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

रहतेहैं ॥ ७८ ॥ अब काशीक्षेत्रके तीसरे आवरणमें क्षेत्रके रखवार जो जो विघ्नराजहैं, मैं उनका वर्णन किया चाहताहूं ॥ ७९ ॥ उत्तरवाहिनी गंगाके रमणीय तीरपर लम्बोदर गणेशसे उत्तर वक्रतुंडनामक विनायकहैं जो पापोंकी ढेरको हरण करलेतेहैं ॥ ८० ॥ कूटदन्त गणेशके उत्तरभागमें एकदन्त विनायकहैं, वे सर्वदा उपद्रवोंके संसर्गसे आनन्दवनकी रक्षा करतेहैं॥८१॥ शालकंटक गणेशके ईशानकोणपर नित्यही काशीके भयहर्ता त्रिमुख विनायकहैं, जिनका एकमुख तो वानर, दूसरा सिंह, और तीसरा हस्तीके मुखसमानहै ॥ ८२ ॥ कूश्मांड गणेशके पूर्वओर पंचमुख विनायकहैं जिनका उत्तम रथभी पंचाननसे युक्त है, वे वाराणसीपुरीकी रक्षा करते रहतेहैं ॥ ८३ ॥ मुंडविनायकके अग्निकोणपर हेरम्ब गणेशहैं, उनकी पूजा सदैव करनी चाहिये, क्योंकि वे माताके समान सभी काशीवासियोंकी कामना पूर्ण करदेतेहैं ॥ ८४ ॥ बुद्धिमान् नर सिद्धिके लिये, विकटदंत गणेशके पश्चिमभागमें सर्वविघ्नोंके विनाशक विघ्नराज नामक गणेशका पूजन करे ॥ ८५ ॥ राजपुत्र गणेशके कुछ नैर्ऋत्यकोणपर स्थित भक्तोंके बड़े वरदानी वरदनामक गणेशकी पूजा करनी चाहिये ॥ ८६ ॥ प्रणव विनायकसे दक्षिणगंगाके पवित्र तटपर पिशंगिला (त्रिलोचन) तीर्थमें मोदकप्रिय (नामक) गणेश पूजनीयहैं ॥ ८७ ॥ काशीके चौथे आवरणमें भक्तलोगोंके विघ्न विघातक ये आठों विनायक प्रसन्नचित्तसे सुव्यक्तरूपमें दर्शनीयहैं ॥ ८८ ॥ वक्रतुंड गणेशके उत्तरओर गंगाके तटहीपर सब किसीके भयहर्ता अभयप्रद गणेश विराजमान हैं ॥ ८९ ॥ एकदंत गणेशके उत्तरभागमें सिंहतुंडनामक विनायक हैं, जो काशीवासियोंके उपसर्गरूपी हस्तियोंको विनष्ट कर डालतेहैं ॥ ९० ॥ त्रिमुख गणेशसे ईशानकोणपर कूणिताक्षनामा विनायकहैं जो इस महाश्मशान काशीकी दुष्टोंकी कुदृष्टिसे रक्षा करते रहतेहैं॥ ९१ ॥ पंचमुख गणेशके पूर्वभागमें क्षिप्रप्रसादन गणेश इस नगरीकी रक्षा करते हैं, इनकी पूजा करनेसे सभी सिद्धियाँ शीघ्रही सिद्ध होजातीहैं ॥ ९२ ॥ हेरम्ब गणेशके दक्षिणभागमें चिंतामणि विनायक हैं जो वास्तवमें भक्तोंके लिये साक्षात् चिंतामणिहीहैं, क्योंकि वे सभी चिंतित अर्थोंको समर्पण करदेते हैं ॥ ९३ ॥ विघ्नराज विनायकके दक्षिणप्रान्तमें दंतहस्त गणेश हैं, जो काशीके विद्रोही मनुष्योंके (ऊपर) सहस्रोंही विघ्नोंको लिखते रहते हैं ॥ ९४ ॥ वरदविनायकसे नैर्ऋत्य कोणपर राक्षस गणोंसे घेरेहुए पिचंडिल गणेशहैं जो देव इस नगरीकी रात्रिदिन रक्षा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

४७

करते हैं ॥ ९५ ॥ पिलपिला (त्रिलोचन) तीर्थपर मोदकप्रिय गणेशसे दक्षिण जो उद्दण्डमण्ड विनायक हैं वे भक्तोंको क्या नहीं देदेते हैं ? ॥ ९६ ॥ अब काशीके पांचवें आवरणमें जो जो आठों विनायक इस क्षेत्रका रक्षण करते रहते हैं, उनको मैं कहताहूं ॥ ९७ ॥ जाह्नवीके तीरहीपर अभयप्रद गणेशसे उत्तर स्थूलदन्त गणेश हैं जो सज्जनोंको स्थूल (बडी) सिद्धियाँ दियाकरते हैं ॥ ९८ ॥ सिंहतुण्ड विनायकसे उत्तरओर कलिप्रिय विनायक हैं, जो तीर्थवासियोंके द्वेषियोंमें परस्पर नित्यही कलह कराते फिरते हैं ॥ ९९ ॥ कूणिताक्ष गणेशके ईशानकोणपर चतुर्दन्त विनायकहैं, उनके दर्शनमात्रसे विघ्नवर्ग आपही क्षय होजाताहै ॥ १०० ॥ क्षिप्रप्रसादन गणेशसे पूर्वभागमें द्विमुख विनायक हैं, उनके आगेकी जैसी छटाहै वैसीही पीछेकी ओरभी (शोभा) है ॥ १ ॥ उनके दर्शनकरनेसे मनुष्योंको सबओरसे श्री प्राप्त होतीहै मेरी पुत्रसंपत्तिमें सबसे जेठे ज्येष्ठविनायकहैं ॥ २ ॥ वे चिंतामणि विनायकसे अग्निकोणपर विराजमानहैं; जेठमासकी शुक्लाचतुर्दशीके दिन जेठाई पानेके लिये उनकी पूजा करनी चाहिए ॥ ३ ॥ दंतहस्त गणेशके दक्षिणभागमें गजविनायक पूजनीयहैं उनकी पूजा भक्तिपूर्वक करनेसे गजान्त संपत्ति प्राप्त होतीहै ॥ ४ ॥ पिचंडिल गणेशसे दक्षिण काल विनायकहैं जिनके सेवनसे मनुष्यको कालका भय नहीं रहता ॥ ५ ॥ उद्दंडमुंड गणेशके दक्षिणभागमें वर्तमान नागेशविनायकके देखनेहीसे नागलोकमें सादर वास प्राप्त होताहै ॥ ६ ॥ काशीके छठवें आवरणोंके गणेशोंको अब कहताहूं जिनके केवल नामभी सुनलेनेसे मनुष्योंको सिद्धि प्राप्त होजातीहै ॥ ७ ॥ पूर्वमें विघ्नविघातक मणिकर्णविनायकहैं, अग्निकोणमें भक्तोंकी आशा पूर्णकरनेवाले आशाविनायक विराजमानहैं ॥ ८ ॥ दक्षिणदिशामें सृष्टिके संहारकारी सृष्टिविनायक हैं, नैर्ऋत्यकोणमें सर्वविघ्नहारी भगवान् यक्षविनायक विराजितहैं ॥ ९ ॥ पश्चिमकी ओर सब किसीके मंगलकर्ता गजकर्ण विनायक हैं, वायव्यकोणपर चित्रघंट विनायक पुरीका पालन करते रहते हैं ॥ ११० ॥ उत्तरमें स्थूलजंघ विनायक शान्तप्रकृतिवालोंके अघको शमन करते हैं, और ईशानकोणपर मंगलविनायक इस शिवपुरीका पालन करते हैं ॥ ११ ॥ यमतीर्थके उत्तरओर एक मित्र विनायकभी पूजनीयहैं अब मैं सातवें आवरणके विनायकोंको कहताहूं ॥ १२ ॥ (प्रसिद्ध) मोदादिक पांच विनायक, छठवें ज्ञानविनायक, सातवें द्वारविनायक जो महाद्वारके अधिकारी हैं ॥ १३ ॥ और आठवें अविमुक्त विनायकहैं जो मेरे इस अविमुक्त-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

क्षेत्रमें भक्तिमान् लोगोंके समस्त कष्टोंको दूर करदेते हैं ॥ १४ ॥ जो कोई इन छप्पन विनायकोंका स्मरण करेगा, वह दूर देशान्तरमें मरनेपरभी ज्ञान पावेगा ॥ १५ ॥ जो कोई ढुंढिराज स्तोत्र और छप्पन विनायककी कथाको पढेगा उसकी आत्मा पवित्र होजावेगी और उसे पद पदपर सिद्धि मिलेगी ॥ १६ ॥ जहां चाहे वहाँहीपर इन गणेशोंका स्मरण करे तो, बडेभारी विपत्तिरूप समुद्रके भीतर गिरतेहुए मनुष्यकोभी ये लोग उद्धार करदेते हैं ॥ १७ ॥ इस परमपुनीत स्तोत्र और विनायकोंकी कथाके सुननेसे नतो कभी विघ्नोंकी बाधाही होती है और न फिर पापही रहजासकते हैं ॥ १८ ॥ उचित वेत्ता देवदेवभी महोत्सवसे प्रसन्न चित्त होकर इस कहनेके अनंतर ब्रह्मादि देवतोंके अभिषेक करनेपर उन लोगोंको मनोवांछित अर्थ देकर और सभीलोगोंको यथायोग्य प्रसन्न करके विश्वकर्माके बनायेहुए राजभवनमें चलेगये ॥ १९ ॥ ॥ १२० ॥ स्कन्दने कहा—इस प्रकारसे भगवान महादेवने विघ्नराजकी स्तुति कीथी, और गणेशनेभी उसी भाँतिसे अपने अनेकरूप बनाडालेथे ॥ २१ ॥ हे कुंभज ! उसी ढुंढिराजके ये सब नामहैं, जिनके जपकरनेसे मनुष्य अपने वांछित वस्तुको पाताहै ॥ २२ ॥ वहांपर इनके भिन्न औरभी सहस्रों मूर्तियाँ ढुंढिराजकी विद्यमानहैं, जिन्हें भक्तलोगोंने भक्तिपूर्वक पूजन कियाहै ॥ २३ ॥ जैसे भगीरथगणेश, हरिश्चन्द्रविनायक, कपर्दगणपति, बिन्दुविनायक ॥ २४ ॥ इत्यादिक प्रत्येक भक्तोंके स्थापित काशीमें अनेकगणेशहैं, और उन सबकेभी पूजन करनेसे लोगोंको सब संपत्तियाँ प्राप्त होजाती हैं ॥ २५ ॥ जो कोई श्रद्धापूर्वक इस पवित्र अध्यायको सुनताहै उसके सब विघ्न दूर होजाते हैं, और वह अपना अभीष्टपद प्राप्त करताहै ॥ १२६ ॥

दोहा—ढुंढिराज ! बतलाइये, को हैं बडे गणेश ।
माघ वदी जो चौथको, लड्डू खात विशेष ॥ १ ॥
ढुंढिराज महराजके, प्रणवों छप्पन रूप ।
काशीमाहि बसाइये, ज्यों न परों भवकूप ॥ २ ॥
है महाल तव नामसे, ढुंढिराज परसिद्ध ।
काशिराज युवराज तुम, करहु काम सबसिद्ध ॥ ३ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्द्धे भाषायां ढुंढिराजस्तोत्र—विनायककथावर्णनंनाम सप्तपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५७ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

४९

अट्ठावनवाँ अध्याय।

विष्णुकी काशीयात्रा और राजादिवोदासकी मुक्ति।

अगस्त्यऋषिने पूछा—हेस्कन्द ! जब कि गणेशभी विलम्ब करने लगे तब मन्दराचलपररहतेहुए महादेवने क्या किया ? ॥ १ ॥ हे अगस्त्य ! अखिलपापोंकी नाशिनी एकमात्र काशीके विषयमें जो पवित्र कथा मैं अब कहताहूं उसे श्रवण करो ॥ २ ॥ उस अविमुक्त नामक उत्तमक्षेत्रमें जाकर गजाननके भी बहुत विलम्ब करनेपर महादेवने तुरंतही विष्णुको देखा (और बुलालिया)॥ ३॥और बडे सम्मानसे कईकवार यहभी कहा कि (देखो) पूर्वके गये लोगोंने जैसा कियाहै वैसाही तुम भी मतकरने लगना ॥ ४ ॥ श्रीविष्णु बोले—सभी प्राणियोंको अपनी बुद्धि और बलके अनुसार उद्यम तो करना ही चाहिये, परन्तु हे शंकर ! कर्मोंका फल मिलना तो (सर्वथा) आपहीके हाथमें है ॥५॥ क्योंकि कर्म तो सब अचेतनहैं, और प्राणीलोगभी स्वतंत्र नहीं हैं, फिर कर्मोंके साक्षी और प्राणियोंके प्रवर्तक एक आपहीहैं ॥६॥ तब रहा यह कि, जो लोग आपके पादपद्मकी भक्ति करतेहैं उनकी बुद्धिही ऐसी होजातीहै कि, अन्तमें आपहीको यह कहना पडताहै कि, इसने यह अच्छा किया ॥ ७ ॥ हे गिरीश ! इस संसारमें छोटा अथवा बडा चाहे जो कुछ कर्म हो पर वह सब आपके चरणोंको सुमिरकर आरंभ कियाजावे तो सिद्ध होही जाताहै ॥ ८ ॥ और जो उत्तम बुद्धिपूर्वक अनुष्ठित तथा सुसिद्धप्रायभी कार्य हो पर आपके पदस्मरणके बिनाही कियागयाहो, तो वह उसीक्षण विनष्ट होजाताहै ॥ ९ ॥ आज मैं शिवका प्रेषित बनकर उत्तम उद्योग कररहाहूं, तब आपकी भक्तिरूप संपत्तिवाले हम लोगोंके वे उद्योग प्रायः सम्पन्नही हैं ॥ १० ॥ हे शिव ! जो कार्य अपनी बुद्धि बल और पौरुषसेभी अत्यंतही असाध्य होताहै, वहभी आपके ध्यानमात्रसे सुसिद्ध होजाताहै ॥ ११ ॥ हे विभो ! हे भव ! जो लोग आपको प्रदक्षिण करके चलतेहैं, उनके सभी कार्य मानो आपके भयसे आगेहीके हुए रहतेहैं ॥ १२ ॥ हे महादेव ! इस कामको तो हुआही जानिये यह निश्चितहै, अब तो काशीमें प्रवेश करनेका कोई उत्तम लग्न स्थिर करना चाहिये ॥ १३ ॥ अथवा काशीके प्रवेशमें कुछ शुभाशुभकी चिन्ता नहीं करनी चाहिये, क्योंकि वही तो शुभक्षणहै जिसमें काशी प्राप्त होजावे ॥ १४ ॥ इसके अनंतर गरुडध्वजने शिवको प्रदक्षिण और बारंबार प्रणाम करके मंदराचलसे लक्ष्मीके साथ प्रस्थान किया॥ १५॥ तदनंतर विष्णुने वाराणसीपुरीको देखतेही अपने पुंडरीकाक्ष (इस) नामको हर्षसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सफल करदिया (अर्थात् आँखें फाडकर देखने लगे) ॥ १६ ॥ फिर गंगा और वरणाके संगमपर विष्णुने स्वच्छहृदयसे हाथ पाँव धोकर सचैल स्नान किया॥ १७॥ तभीसे वह तीर्थ पादोदकनामसे कहाजाताहै, क्योंकि पीताम्बर भगवान्ने मंगलप्रद अपने चरणोंको पहिले पहिल वहांहीपर धोया था ॥ १८ ॥ उस पादोदक तीर्थमें जो लोग स्नान करेंगे उनके सातजन्मके संचित पुराने पाप तुरंतही नष्ट होजावेंगे ॥ १९ ॥ जो कोई वहाँपर श्राद्ध और तिलजलसे तर्पण करेगा वह अपने वंशके एक्कीस पुरुषोंका उद्धार करदेवेगा ॥ २० ॥ पितरोंको जैसी तृप्ति गयातीर्थमें होतीहै काशीके पादोदक तीर्थमेंभी ध्रुवरूपसे वैसीही होतीहै ॥ २१ ॥ जो मनुष्य पादोदकतीर्थमें स्नान पादोदकका जलपान और उसी पादोदकका जल देताहै, उसे नरक कभी नहीं छूसकता ॥ २२ ॥ पादोदक तीर्थके जलसे विष्णुका चरणामृत जो एकबारभी पीलेताहै, फिर उसे माताका दूध कभी नहीं पीना पडता यह निश्चित है ॥ ॥ २३ ॥ (गोमती) चक्रके सहित शालग्रामको पादोदकके जलसे शंखके द्वारा नहवाकर वही जल जो कोई पीलेताहै वह अमृतपदको प्राप्त होताहै ॥ २४ ॥ यदि विष्णुके पादोदक तीर्थहीपर विष्णुका चरणामृत पीलिया जावे तो बहुत दिनोंके पुराने (सडियल) उस अमृतसे कौन फलहै ? ॥ २५ ॥ जिन लोगोंने काशीके पादोदक तीर्थमें उदककियाको नहीं किया उन सबका जलके बुल्ले ऐसा जन्महीं व्यर्थ गया ॥ २६ ॥ लक्ष्मी और गरुडके सहित भगवान् आदिकेशव विष्णुने नित्य कृत्यके समाप्त करनेपर त्रैलोक्यव्यापिनी अपनी मूर्तिको बटोर ॥ २७ ॥ अपनेही हाथोंसे पत्थरकी मूर्तिको बनाकर समस्त सिद्धि और समृद्धियोंकी देनेवाली उस मूर्तिकी आपही पूजा की ॥ २८ ॥ मनुष्यभी श्रीपरमेश्वरकी आदिकेशव नाम्नी उस मूर्तिकी पूजा करनेसे वैकुंठको अपने घरके अंगनासा समझने लगताहै ॥ २९ ॥ काशीकी सीमापर वह स्थान श्वेतद्वीपके नामसे प्रसिद्धहै, और जो लोग उस आदिकेशव मूर्तिके सेवकहैं वेही उस श्वेतद्वीपमें वास करतेहैं ॥ ३० ॥ वहींपर आदिकेशवके आगे एक क्षीरसमुद्र नामक दूसराभी तीर्थ है, उस तीर्थमें जलक्रिया करनेसे क्षीरसागरके तीरपर वास होताहै ॥ ३१ ॥ मनुष्य वहाँपर श्राद्धकरके स्वर्णशृंग रौप्यखुर इत्यादि आभरणोंसे युक्त दुधार गौका दान करनेसे अपने पितरोंको क्षीरसमुद्रपर वसाताहै ॥ ३२ ॥ वहाँपर जो पुण्यात्मा भक्तिपूर्वक एकभी गोदान करताहै, वह अपने एकसौएक पूर्वपुरुषोंको पायसके कर्दमसे पूर्ण क्षीरोदके तीरपर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

५१

पहुँचा देताहै ॥ ३३ ॥ और जो वहांपर दक्षिणाके सहित बहुतसी उत्तम गौओंको श्रद्धापूर्वक देता है वह अपने प्रत्येक पितरोंको क्षीरसागरके तीरमें टिकाता और शय्यापर सुखसे सुलाताहै ॥ ३४ ॥ क्षीरोदतीर्थसे दक्षिण और उसी ठांवपर परमोत्तम शंखतीर्थ है, उसमेंभी पितरोंका तर्पण करनेसे विष्णुलोक प्राप्त होताहै ॥ ३५ ॥ उसकेभी दक्षिण चक्रतीर्थ है, वहभी पितरोंको बडादुर्लभहै वहांपरभी श्राद्धकरनेसे पितृऋण छूटजाताहै ॥ ३६ ॥ उसीके समीपहीमें गदातीर्थ है जो समस्त मानसिक पीडाओंको नाशकरडालताहै, और वह पितरोंका निस्तारक और पापोंका संहारक है ॥ ३७ ॥ उसके आगेही पद्मतीर्थ है उसमें जो उत्तम नर नहाकर विधिपूर्वक पितरोंका तर्पण करताहै वह कदापि लक्ष्मीसे हीन नहीं होनेपाता ॥ ३८ ॥ त्रिभुवनकी हर्षदात्री महालक्ष्मीने स्वयं जहाँपर स्नान कियाथा, वही त्रैलोक्यविख्यात महालक्ष्मी तीर्थभी वहींपर वर्तमानहै ॥ ३९ ॥ उस तीर्थमें स्नानकरने तथा सुवर्ण रत्न और पट्टवस्त्र इत्यादिक ब्राह्मणको दान देनेसे कभी लक्ष्मीसे हीन नहीं होसकता ॥ ४० ॥ तीर्थहीके प्रभावसे वह मनुष्य जहांजहांपर जन्मलेताहै वहांही वहां समृद्धिमान् होताहै और उसके पुरुषेभी श्रीमन्त बनेरहते हैं ॥ ४१ ॥ वहांपर त्रैलोक्यवंदिता महालक्ष्मीकी मूर्ति है, मनुष्य जिसके प्रणाम करनेहीसे कदापि रोगग्रस्त नहीं होसकता ॥ ४२ ॥ जो व्रत रहकर भादोंवदी अष्टमीकी रात्रिमें जागरण और महालक्ष्मीका पूजन करे उसे व्रतका फल मिले ॥ ४३ ॥ उसी स्थानपर गरुडकेशवके समीपहीमें गरुडतीर्थ है, वहां भक्तिपूर्वक स्नान करनेसे मनुष्यको संसाररूपी सर्पका फिर दर्शन करना नहीं पडता ॥ ४४ ॥ उसके आगेही नारदतीर्थ है जो महापातकोंकाभी विनाशकहै और वहींपर केशवसे नारदको ब्रह्मविद्याका उपदेश प्राप्त हुआथा ॥ ४५ ॥ वहांपरभी जो कोई सम्यक्प्रकारसे स्नान करे उसको भी ब्रह्मविद्याकी प्राप्ति केशवहीसे होजातीहै इसीसे काशीमें उनका नाम नारदकेशव (पडगया) है॥४६॥जो जन भक्तिभावसे नारदकेशव देवका पूजन करे, वह कभी माताके जठरयातनाका दुःख नहीं भोगने पाता ॥ ४७ ॥ फिर उसकेभी आगे प्रह्लादतीर्थ (घाट) है, वहांपर प्रह्लादकेशवकी मूर्ति हैं, उस तीर्थमें श्राद्धादिक करनेसे वैकुण्ठलोकमें वास मिलताहै ॥ ४८ ॥ उसके पासहीमें आम्बरीष तीर्थ है जो बडाही पापनाशक है वहांभी तर्पणादि जलक्रियाके करनेसे मनुष्य निष्पाप होजाताहै ॥ ४९ ॥ आदिकेशवके पूर्वभागमें आदित्यकेशव हैं, जिनके केवल दर्श-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नहींसे बडेबडे पाप छूटजाते हैं ॥ ५० ॥ वहांहीपर दत्तात्रेयेश्वर तीर्थ और आदि-
गदाधर विराजमान हैं, वहांभी पितरोंके तर्पण करनेसे ज्ञानयोग प्राप्त होताहै ॥ ५१ ॥
उसके आगे भृगुकेशवके पूर्व भार्गवतीर्थ है, वहांपर स्नानकरनेसे मनुष्य भार्गवहीके
समान बुद्धिमान् होजाताहै ॥ ५२ ॥ उसी स्थानपर वामनकेशवके पूर्व वामन
तीर्थहै, उस विष्णुका पूजन करनेसे वामन भगवान्के पास वास मिलताहै ॥ ५३ ॥
फिर नरनारायणके आगे नरनारायण तीर्थहै, उस तीर्थपर स्नानकरके नरभी नारायणही
होजाताहै ॥ ५४ ॥ उसके आगे यज्ञवाराह तीर्थ है, जो पापोंका नाशकहै और
वहांपर स्नान करनेसे (प्रत्येकगोतेमें) राजसूययज्ञका फल प्राप्त होताहै ॥ ५५ ॥
वहांहीपर विदार नारसिंह तीर्थ है वह बड़ाही निर्मलहै, वहांभी स्नान करनेसे
सैकडों जन्मके संचित पुराने पाप विदीर्ण होजातेहैं ॥ ५६ ॥ आगे
गोपी—गोविन्दके पूर्व ओर गोपी—गोविन्द तीर्थ है, वहांपर स्नान और
विष्णुका पूजन करनेसे विष्णुका प्रीतिपात्र होताहै ॥ ५७ ॥ गोपी—गोविन्दके
दक्षिण लक्ष्मी—नृसिंहनामक तीर्थ है, इस तीर्थमें डुबकी लगानेवालेको लक्ष्मी कभी
नहीं छोडती ॥ ५८ ॥ आगे (चलकर) शेष—माधवके समीपमें शेष तीर्थहै, जहांपर
पितरोंका तर्पण करदेनेसे फिर उनकी तृप्ति कुछ शेष नहीं रहजाने पाती ॥ ५९ ॥
उसकेभी दक्षिण शंख—माधवनामक बडा निर्मल तीर्थहै, जहांपर उदककियाके
करनेसे पापीजन भी निर्मल होजाताहै ॥ ६० ॥ उसकेभी आगे हयग्रीव तीर्थ है
जो कि परमपावनहै, वहांपर नहाकर हयग्रीवकी पूजा करनेसे ॥ ६१ ॥ तथा
हयग्रीवके समीपमें पिंडदान करनेसे हयग्रीवकी श्रीको पाकर अपने पूर्वज पुरुषोंके
सहित मुक्त होजाताहै ॥ ६२ ॥ स्कन्दने कहा—कि प्रसंगवश मैंने इन
सब तीर्थोंका वर्णन तुमसे करादिया पर काशीकी भूमिमें तो तिलतिलके अंत-
रपर अनेकानेक तीर्थ वर्तमान हैं ॥ ६३ ॥ हे कलशोद्भव ! इन सब
उद्दिष्ट तीर्थोंके केवल नामही सुनलेनेसेभी मनुष्य निष्पाप होजाताहै ॥
॥ ६४ ॥ हे विप्र ! अब मैं तुम्हारे आगे वह प्रस्तुत विषय कहताहूं, जो
कि शंख—चक्र—गदा—धर वैकुण्ठनाथने कियाथा ॥ ६५ ॥ इसके पीछे भगवान्
विष्णु उसी केशवमूर्तिमें प्रवेश कर महादेवके कार्यमें कृतसंकल्प हो अंशांशके भी
अंशसे निकल गये ॥ ६६ ॥ अगस्त्यने पूँछा—हे षडानन ! चक्रपाणि अंशांशके भी
अंशसे क्यों निकले ? और काशीमें पहुँचजानेपर निकलकर विष्णु फिर कहां चले

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

५३

गये ? ॥ ६७ ॥ स्कन्द कहने लगे—हे मुने ! जिस कारणसे विष्णु समूचेरूपसे नहीं निकले उसका अभिप्राय मैं कहताहूं, क्षणभर श्रवण करो ॥ ६८ ॥ बड़े बड़े पुण्योंके बलसे वाराणसीपुरीमें प्राप्त होकर विज्ञजन उसे सर्वतोरूपसे न छोड़देवे, चाहे उसे कितनेही बड़ेसे बड़े लाभकी आशा रहे तो क्या हुआ ? ॥ ६९ ॥ हे अगस्त्य ! इसीसे विष्णुने काशीमें अपनी मूर्ति बनाकर बैठादी और आप छोटे (थोड़े) अंशसे निकल गये ॥ ७० ॥ भगवान् विष्णुने काशीसे कुछ उत्तरदिशामें जाकर अपने रहनेके लिये एक स्थान निश्चित किया, जो धर्मक्षेत्र (धमेख) कहाजाताहै ॥ ७१ ॥ तदनंतर भगवान् विष्णुने स्वयं अत्यंत सुन्दर और त्रैलोक्यको मोहितकरनेवाला बौद्धरूप धारण करलिया ॥ ७२ ॥ और लक्ष्मीभी अत्यंत सुभगरूपवती होकर परिव्राजिका बनगयीं, हाथमें आगे पुस्तक लियेहुए उस विश्वमाता जगद्धात्रीको देखकर समस्त जगत् चित्रलिखित (तसबीर) की नाईं सन्न होजाताथा । और गरुडभी हाथमें पुस्तक लेकर समस्त वस्तुओंमें निस्स्पृह लोकोत्तर स्वरूपमान् विचित्र महाविद्वान् और परम-गुरु शुश्रूषक उनके शिष्य बनगये ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ फिर वह शिष्य, सौम्यमुख, प्रसन्नहृदय, परमोत्तम धर्मार्थशास्त्रमें निपुण, ज्ञानविज्ञान संपन्न, सुस्वरशोभन पदोंसे पूर्ण अतिस्निग्ध मधुरभाषी, स्तंभनउच्चाटन—आकर्षण—वशीकरण इत्यादि कर्मोंके विज्ञ, धर्मव्याख्यानमें आकर्षित पक्षियोंकेभी रोमांच करदेनेवाले, उनके गीतरूप अमृतके पीनेवाले मृगोंके झुंडोंसे सेवित, परमानन्दके बोझसे दबाकर वायुकीभी चंचलताके दूरकरदेनेवाले, एवं पुष्पोंके झरपडनेके छलसे मानो वृक्षोंसेभी पूजित उस आचार्यवर्यसे संसारविमोचक परमधर्म पूँछनेलगा ॥ तब वह पुण्यात्मा पुण्यकीर्ति नामक बौद्ध, महाविनयभूषण उस विनयकीर्ति नामक शिष्यसे कहनेलगा ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ पुण्यकीर्ति बोला—हे विनयकीर्ते ! तुमने मुझसे जो सनातन धर्म पूँछाहै उसे मैं अशेष प्रकारसे कहताहूं हे महामते ! तुम सुनो ॥ ८२ ॥ यह संसार अनादिसिद्धहै इसका नतो कोई कर्ता है और न यह किसीका बनायाही है, यह तो आपसे आप उत्पन्न होता और फिर आपसे आपही विलायभी जाताहै ॥ ८३ ॥ ब्रह्मासे लेकर तृणगुच्छ पर्यंत सभी कोई देहबंधनमें पडे हैं, इसका स्वामी एकमात्र आत्माही है और उस आत्माका नियामक दूसरा कोईभी नहीं है ॥ ८४ ॥ ब्रह्मा, विष्णु, और रुद्र, ये सभी देहधारियोंहीके नामहैं, जैसे हमलोगोंकाभी पुण्यकीर्ति इत्यादि नामकहाजाताहै ॥ ८५ ॥ जैसे हमलोगोंका शरीर काला

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नुसार विनष्ट होताहै तैसेही ब्रह्मासे लेकर मशकपर्यंत सभी प्राणियोंका शरीर अपने कालक्रमसे नष्ट होजाताहै ॥ ८६ ॥ यदि विचारा जावे तो इस देहमें कहींपर कुछभी विशेष नहीं पायाजाता क्योंकि, आहार, निद्रा, भय, और मैथुन सर्वत्र एकसमानही है॥८७॥अपने अपने परिमाणके अनुरूप आहार पानेपर सभी देहधारी एकसी तृप्तिको प्राप्त होते हैं, नतो किसीको न्यून और न किसीको अधिकही प्रीति होती है ॥ ८८ ॥ प्यास लगनेपर पानी पीकर जैसे हम लोग आनंदसे तृषाहीन होजाते हैं, वैसेही दूसरे तृषितभी होते हैं इसमें कुछभी न्यूनाधिक्य नहीं है ॥ ८९ ॥ रूप लावण्यवती चाहे सहस्रों स्त्रियाँ क्यों न होवें पर मैथुनके समय एकहीके साथ संभोग कियाजासकताहै ॥ ९० ॥ योंही सैकडों घोडे और बहुतसे हाथियोंके रहतेभी अपनी चढाई (सवारी) एकहीपर कीजासकतीहै दूसरेपर नहीं ॥ ९१ ॥ पर्यंकपर सोनेवालेको जो निद्राका सुख मिलताहै, संसारमें पृथिवीपर पडरहने वालेकोभी वही सुखहै॥९२॥हम सब शरीरियोंको जो मृत्युसे भयहै, ब्रह्मासे लेकर कीटतक सब किसीको वैसेही मरणभय बना रहता है॥९३॥यदि बुद्धिपूर्वक विचार करे तो सभी प्राणी एकसां हैं अतएव इस विचारको दृढकरके कहींपर किसीको किसी प्राणीकी हिंसा कभी नहीं करनी चाहिये॥९४॥ पृथिवीतलमें जीवोंके ऊपर दया करनेके समान दूसरा कोई धर्म नहीं है, इसलिये मनुष्योंको सब प्रकारके प्रयत्नसे जीवोंपर दया करनी चाहिये ॥ ९५ ॥ केवल एकभी जीवकी रक्षा करदेनेसे त्रैलोक्यकी रक्षा करनेका फल प्राप्त होताहै और एकके मारडालनेसे त्रैलोक्यके मारडालनेका पाप होताहै, अतएव यावच्छक्य रक्षाही करे घात न करे॥ ॥ ९६ ॥ पुरातन पण्डितोंने संसारमें अहिंसाहीको परमधर्म कहाहै, अतएव नरक पडनेके डरसे मनुष्योंको कभी हिंसा नहीं करनी चाहिये ॥ ९७ ॥ सचराचर त्रैलोक्यमें हिंसाके समान कोईभी पाप नहींहै, क्योंकि हिंसक (नर) नरकमें जाताहै पर अहिंसक स्वर्गमें चलाजाताहै ॥ ९८ ॥ यद्यपि अनेक प्रकारके दानहैं, पर उन तुच्छ फलदेनेवालोंसे कौन प्रयोजनहै ? (पर) हां, इस जगत्में अभयदानके समान कोई एकभी दान नहीं है ॥ ९९ ॥ नानाविध शास्त्रोंको विचारकर बडे बडे ऋषियोंने संसारमें केवल चारही दानोंको इसलोक और परलोकके हित, कहाहै ॥ १०० ॥ भयग्रस्तोंको अभयदानकरे, रोगियोंको औषध देना चाहिये, विद्यार्थियोंको विद्या पढावे, और भूखेको अन्न देवे ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

५५

दोहा—अभय डरेको बोलिये, रोगिहिं औषध देय।
विद्यारथि विद्या पढैं, भूखे अन्नहि सेय ॥ १ ॥

मणि मन्त्र और औषधियोंका प्रभाव अचिंत्यहै, अनेकविधके अर्थोपार्जन करनेके लिये उन सबका अभ्यास प्रयत्नपूर्वक करना चाहिये ॥ २ ॥ बहुतसा अर्थ उपार्जन करके सर्वतः द्वादश आयतनोंहीकी पूजा करनी चाहिये, नहीं तो इस संसारमें दूसरे पूजनोंसे कौन फलहै ? ॥ ३ ॥ पांचों कर्मेन्द्रिय, पांचही ज्ञानेन्द्रिय, मन और बुद्धि येही बारहों संसारमें पवित्र द्वादशायतन कहेगयेहैं ॥ ४ ॥ प्राणियोंका स्वर्ग और नरक यहांहीपरहै कहीं अन्यत्र नहींहै, सुखको स्वर्ग कहतेहैं और दुःखही नरकहै ॥ ५ ॥ यदि सुखके भोग करते रहते देह छूटजावे तो यही परममोक्षहै, और कोई दूसरा मोक्ष कहीं नहींहै ॥ ६ ॥ समस्त वासनाओंके सहित क्लेशोंके उच्छेद होजानेपर जो विज्ञानका उपराम होजाताहै, तत्त्व चिंतक लोग ध्रुवकरके उसीको मोक्ष समझतेहैं ॥ ७ ॥ वेदवादी लोग तो इसीको प्रामाणिक श्रुति कहतेहैं कि, "किसी प्राणीको न मारै"; फिर हिंसाकी प्रवर्तन करनेवाली कोई दूसरी श्रुतिभी नहींहै ॥८॥ और "अग्नीषोमीय पशुको मारे" यह श्रुति तो केवल दुर्जनोंकी भ्रमोत्पादिनी है, पर ज्ञाताओंके लिये यह पशुसंहारिणी श्रुति कभी प्रमाण नहीं मानी जासकती ॥ ॥ ९ ॥ क्याही आश्चर्य है ! ! कि, वृक्षोंको काट, पशुओंको मार, रुधिरका कींचड कर, अग्निमें तिल—घृतके हुननेसे स्वर्गकी अभिलाषा कीजाती है ? ॥

दोहा—पेड काटि पशु मारिकै, लोहू खाँच बनाय।
तिल घिव डारे अग्निमें, भला स्वर्गको जाय ॥ ११० ॥

इसी भाँतिसे पुण्यकीर्तिको धर्म व्याख्यानोंके समझादेनेपर, पुरवासीलोग एक दूसरेसे सुनकर वहांकी यात्रा करने लगे ॥ ११ ॥ इधर सर्वविद्याओंमें सुचतुरा परिव्राजिका विज्ञानकौमुदीभी पुरस्त्रियोंको इसी प्रकारसे परचाने लगी ॥ १२ ॥ और उन सबोंके सन्मुख प्रत्यक्ष फलके विश्वासदायक और शरीरके एकमात्र सुखसाधक बौद्धधर्मोंको वारंवार वर्णन करनेलगी ॥ १३ ॥ विज्ञान कौमुदीने कहा—वेदने जो आनंदहीको ब्रह्मका स्वरूप कहाहै वही ठीक और माननेके योग्यहै और यह अनेकजन्म इत्यादिकी कल्पना तो सर्वथा मिथ्याही है ॥ १४ ॥ जबलों यह शरीर सुस्थ रहे और इन्द्रियाँ शिथिल नहीं पड़जावें, एवं बुढौती पासमें न पहुँचसके तबीलों सुखोंका साधन करलेनाचाहिये ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दोहा—जबलगि सुस्थ शरीरहै, इन्द्रिय शिथिल न होय ।
रहै जरा दूरे जबै, तबै सौख करु सोय ॥ १५ ॥

शरीरके अस्वस्थ, शिथिलेन्द्रिय, और जराग्रस्त होजानेपर फिर सुख कहांसे मिलसकताहै, अतएव जिसे सुखभोगनेकी इच्छा हो उसे उचित है कि, यदि कोई माँगबैठे तो अपना शरीरभी देडाले ॥ १६ ॥ जिन्होंने जन्म लेकर याचकोंका मनोभिलाष पूर्ण नहीं किया, उन्हींसे इस भूमिपर भार होताहै, कुछ समुद्र, पर्वत, अथवा वृक्षोंसे बोझ नहीं होता । (नैषधकाव्यमें यही श्लोक अन्य छंदमें यों लिखागयाहै) ॥

श्लोक—"याचमानजनमानसवृत्तेः पूरणाय बत जन्म न यस्य ।
तेन भूमिरतिभारवतीयं, न द्रुमैर्न गिरिभिर्न समुद्रैः" ॥ १७ ॥

शरीरका कोई ठिकाना नहींहै कि कब चलाजावे, और संचयोंकाभी परिक्षय होना निश्चयही है, यह समझकर विज्ञजन शारीरक सुख संपादन करलेवे ॥ १८ ॥ यह देह अंतमें, काक कूकर और कृमियोंका भोजनही होताहै, अथवा इस शरीरका परिणाम भस्मही होताहै यह बात वेदमें सत्यरूपसे प्रतिपादित है ॥ १९ ॥ लोगोंमें जातिभेदकी कल्पना तो झूठही चलपडीहै, क्योंकि मनुष्यत्वके समान होनेपर कौन उत्तम और कौन अधमहै ? ॥

दोहा—जातिभेदकी कल्पना, झूठहि लोगन बीच ।
सब मनुष्य जब एकसे, को उत्तम को नीच ? ॥ १२० ॥

ब्रह्माहीसे यह सृष्टि होनेलगी है यह तो बूढे लोगोंकी बात है, (देखो) उसी सृष्टिकर्ता ब्रह्माके दक्ष और मरीचिनामक दोनों प्रसिद्ध पुत्र हुए हैं ॥ २१ ॥ फिर उसी मरीचिके बेटा कश्यपने दक्षकी सुन्दरनेत्रा तेरहबेटियोंसे धर्ममार्गानुसारही विवाह कर लियाथा ॥ २२ ॥ पर आजकलके थोडी बुद्धि और बलवीर्य्यवाले लोग, "यह गम्यहै यह अगम्यहै" यह विचार व्यर्थही करतेहैं ॥ २३ ॥ इस लोकमें मुख, बाहु, ऊरु, और पदसे चारोंवर्णोंकी जो उत्पत्ति कही जातीहै यह तो बुढ्ढोंकी एक कल्पना (गप्प) मात्र है, पर विचारनेसे यह असंगतही जान पडती है ॥ २४ ॥ यदि कहींपर एकही पुरुषसे एकही स्त्रीके शरीरमें चार बेटे होवें तो क्या वे सब भिन्न भिन्न वर्णके होजावेंगे ? ॥ २५ ॥ इसीसे यह वर्णावर्णका विचार संगत नहीं घटता, तब मनुष्य होकर यह भेद कभी किसीको नहीं मानना चाहिये ॥ २६ ॥ नागरी-स्त्रियाँ विज्ञान कौमुदीकी इन सब बातोंको सुनकर भर्तृसेवनकी उत्तम बुद्धिको

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

५७

लागने लगीं ॥ २७ ॥ उधर पुरुष लोगभी आकर्षण और वशीकरणकी विद्याको स्त्रीस, परस्त्रियोंपर मोहित होकर उसकी सफलता साधने लगे ॥ २८ ॥ राजाके अन्तःपुरकी स्त्रियां और राजकुमार, पुरवासीलोग और उनकीभी नारियां— इन सबलोगोंको उन दोनोंने मोहित करलिया ॥ २९ ॥ वह परिव्राजिका विज्ञानकौमुदी उन सब कर्मविशेषके उपायोंसे वंध्याओंका वंध्यत्व दूर करने लगी एवं दुर्भगाओंकोभी सौभाग्यके भाग्यसे संपन्न बनाने लगी उसने किसी स्त्रीको अंजन किसीको तिलक लगानेके लिये जडीबूटी दी ॥ १३० ॥ ३१ ॥ बहुतोंको वशीकरणके मन्त्र सिखलादिये, कोई कोई स्त्री मंत्रोंको जपने लगीं कोई कोई यंत्रोंको लिखने लगीं ॥ ३२ ॥ कोई कोई स्थिर होकर कुंडके आगमें अनेकद्रव्योंसे होम करने लगीं, इस प्रकारसे जब समस्त पुरवासीलोग सर्वथा अपने धर्मसे पराङ्मुख होने लगे तब अधर्म उल्लसित होकर बढ़ने लगा ॥ ३३ ॥ बिना जोते बोएही जो अन्नादिक उत्पन्न होतेथे वे सब पापके घुसतेही नष्ट होगये, और उस राजा दिवोदासका सामर्थ्यभी धीरे धीरे कुंठित होचला ॥ ३४ ॥ विश्वेश्वर ढुंढिराजने दूरही पर बैठकर उस रिपुंजय राजा (दिवोदास) को राज्य (पालन) करनेसे खिन्नचित्त (मनछोट) करदिया ॥ ३५ ॥ राजा दिवोदास नियमित अठारहवें दिनकी गिनती करने लगा कि, वह ब्राह्मण कब आवेगा ? और कब मुझको उपदेश करेगा ॥ ३६ ॥ योंही (ज्योंत्यों करके सत्रह दिन बीतगये,) अठारहवें दिन ठीक मध्याह्नके समय राजाके द्वारपर एक उत्तम ब्राह्मण आपहुँचा ॥ ३७ ॥ (यह कोई दूसरा ब्राह्मण नहीं है) विष्णुही धर्मक्षेत्र (सारनाथकी धमेख) से पुण्यकीर्तिनामक, (बौद्धाचार्यरूपी) ब्राह्मणका वेष धरकर राजाके पास आपहुँचे ॥ ३८ ॥ बहुधा 'जय' 'जीव' इत्यादि वचन बोलनेवाले दो तीन पवित्र जनोंके सहित वह ब्राह्मण मूर्तिमान् पावकके समान वहाँपर प्राप्त हुआ ॥ ३९ ॥ अत्यंत उत्कंठित होकर राजा आतेहुए उस ब्राह्मणको दूरहीसे देखकर मनहीमन शोचने लगा कि यह ब्राह्मण मुझे उपदेश देनेमें गुरुहोनेके योग्यहै ॥ ४० ॥ फिरतो राजा स्वयं जाकर उसे वारंवार प्रणाम करके "स्वस्ति" ऐसा आशीर्वाद पाकर उस ब्राह्मणको अपने अन्तःपुरमें लिवालेगया ॥ ४१ ॥ जनाधिपति दिवोदास मधुपर्कविधिसे उसकी पूजा कर मार्गश्रमके दूरहोनेसे स्वस्थ और प्रसन्न मुखकमल ॥ ४२ ॥ उस ब्राह्मणको समस्त क्रियाकलापके करचुकनेपर खानेके पदार्थोंको निवेदनकर और भोजनसे संतुष्ट हो उसके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सुखपूर्वक बैठजानेके उपरान्त यह पूछने लगा ॥ ४३ ॥ राजा बोला—हे विप्रवर्य ! मैं राज्यका बोझ ढोते ढोते अब बहुत थकगयाहूं, सोभी थकाहट नहीं है वरंच जैसे वैराग्य उत्पन्न होगया हो ॥ ४४ ॥ हे द्विज ! मैं कहां जाऊं ? क्या करूँ ? मेरी निर्वृति कैसे होगी ? इसी चिंतामें पडेपडे मेरे प्रायः दो पक्ष बीतगये ॥ ४५ ॥ हे द्विजवर ! महादेवके ऐश्वर्य्य ऐसा स्फुटरीतिसे मैंने असीम सुखवर्द्धक निष्कंटक राज्यका भोग किया ॥ ४६ ॥ फिर मैंने अपनेही सामर्थ्यसे मेघ अग्नि, और वायु बनकर औरस पुत्रकी नाईं अच्छीरीतिसे प्रजाओंका पालन किया ॥ ४७ ॥ और दिनप्रतिदिन धनके द्वारा भूमिके देवता ब्राह्मणोंकोभी संतुष्ट किया, फिरभी राज्यशासनके समय मैंने एकही अपराध कियाहै ॥ ४८ ॥ (वह यही कि) मैं अपने तपोबलके अहंकारसे देवतोंको तृणके समान समझता रहा, पर मैं आपहीका शपथ करता हूं कि, यह काम मैंने प्रजाओंके हितार्थही कियाथा कुछ अपने लिये नहीं किया ॥ ४९ ॥ संप्रति मेरे भाग्यके उदय होनेहीसे आप आगये हैं तो गुरु होजाइये, और मैंतो ऐसा राज्य करताहूं कि उसमें यमराजका तनिकभी भय नहीं रहता ॥ १५० ॥ और मेरे राज्यमें अकालमृत्यु कहींभी नहीं होती, जरा, रोग और दरिद्रता—ये सब मेरे राज्यमें किसीको नहीं व्याप सकते ॥ ५१ ॥ मेरे शासनकालमें कोईभी अधर्मवृत्तिको अवलंबन नहीं करसका, पर हां धर्मोन्नत और सुखोन्नत तो सभी लोगहैं ॥ ५२ ॥ सभी कोई उत्तम विद्याओंके व्यसनी और सन्मार्गचारी हैं, पर यदि मेरी आयुष्य कल्पान्तभर बनीही रहे तो इससे क्या फलहै ? ॥ ५३ ॥ हे द्विजपुंगव ! जितनेही भोग्य हैं वे सब मुझे तो चर्वित चर्वणहीके समान जान पडते हैं, तो फिर इस पिसानपीसनेसे क्या लाभहै ? ॥ ५४ ॥ हे प्राज्ञ ! जिसमें गर्भवासका दुःख न भोगना पडे ऐसा कोई उपदेश करदीजिये, अथवा जब मैं आपहीके शरणमें प्राप्त हुआ तो फिर इन चिन्तनोंसे मुझे कौनसा प्रयोजन रहगया ? ॥ ५५ ॥ आप जो कुछ कहेंगे मैं निस्सन्देह आजही उसे करडालूंगा, क्योंकि आपके दर्शनमात्रहीसे समस्त मनोरथ ॥ ५६ ॥ दूसरे लोगोंकेभी पूर्ण होजाते हैं, और मेरेतो हुएही ऐसे हैं । मैं यह अच्छीरीतिसे जानताहूं कि, देवतोंके विरोधकरनेसे कौन कौन लोग नष्ट नहीं हुए ॥ ५७ ॥ पूर्वकालमें अपनी प्रजाओंके पालनमें तत्पर और निजधर्मोंमें अनुरक्त, तथा बडे शूर वे सब त्रिपुरासुर शिवकी भक्तिमें परायण रहने परभी ॥ ५८ ॥ शिवने पृथिवीको रथ, चारोवेदोंहीको घोडेकी चौकडी, चन्द्र—सूर्यको रथकी दोनों पहिये

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

५९

प्रणवको कशा (चाबुक) ताराग्रहोंको रथके कील; आकाशहीको टोप (टप्प) सुमेरुको ध्वज दंड, बडे, ऊंचे कल्पवृक्षको ध्वंज, (बडेबडे) सर्पोंको बाँधनेकी डोरी, वेदांग छन्दोंको अंगरक्षक, ब्रह्माको सारथि, हिमालयको धनुष, वासुकी नागको धनुषकी प्रत्यंचा (रस्सी) कालाग्निरुद्रको भाला, विष्णुको बाण, और वायुको बाणका पंख बनाकर लीलासे एकही बाण चलाय उसे भस्म करडालाथा ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ यह पुरानीही बातहै कि, विष्णुने कपटपूर्वक वामन बनकर (६३) त्रिविक्रमके द्वारा यज्ञकर्ताओंमें श्रेष्ठ राजाबलिको पातालमें भेजदिया, सच्चरित्र होने-परभी वृत्रासुरको इन्द्रने मारहीकर तब छोडा ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ जयकी इच्छासे युद्ध करतेहुए विष्णु जब दधीचिके कुशास्त्रसे हारगये तो उसी पुराने वैरको स्मरणकर देवतोंने विप्रेन्द्र दधीचि मुनिको अस्थि लेनेके लिए मारही डालाथा ॥ ६५ ॥ देखिये यहभी तो पूर्वहीकी बातहै जो विष्णुने शिवके परमभक्त बाणासुरके सहस्र भुजाओंको युद्धमें काटडाला था, भला उस साधुवर्ती बिचारे बाणने क्या अपराध कियाथा ? ॥ ६६ ॥ अतएव देवतोंके साथ विरोध करना अच्छा नहीं होता परन्तु मुझे देवतोंका कुछभी डर नहीं है क्योंकि मैं तो कुछ कुमार्गपर चलताही नहींहूं फिर वे मेरा क्या करसकते हैं ? ॥ ६७ ॥ इन्द्रादिक देवतागण यज्ञोंहीके बलसे देवत्वको प्राप्त हुएहैं, पर मुझमें तो यज्ञ, दान, तप इत्यादिके द्वारा उनसे अधिकताही है॥ ६८॥ फिर चाहे न्यूनता हो अथवा आधिक्य हो अब मुझे इससे कौन कामहै ? आपके दर्शनहीसे मैं इस घडी सुखदायक इन्द्रियोंकी शान्तिको पारहाहूं ॥ ६९ ॥ हे तात ! आप उपायोंके ज्ञाताहैं, अतः इसवेला मैं जिससे निर्वृतिको प्राप्त होसकूं कर्मके निर्मूलन करनेमें समर्थ उसी उपायका उपदेश कीजिये ॥ १७० ॥ स्कन्दने कहा कि—गणेशके आवेशवश होकर (चढदबानेसे) राजाने जो यह सब कहा, ब्राह्मणरूपधारी भगवान् विष्णु वह सब सुनकर कहने लगे ॥ ७१ ॥ श्रीविष्णु बोले—हे महाविज्ञ ! निष्पाप ! भूपालचूडामणे ! साधु साधु (वाह, वाह,) जो कुछ मुझे उपदेश करनाथा वह तो सब आपहीने निरूपण करादिया ॥ ७२ ॥ आप तो पहिलेहीसे निर्वृतिको प्राप्त होचुके हैं पर इस समय मुझे संमान देरहेहैं, आपने तो अपनी स्वच्छ तपस्यारूप स्वच्छ जलधारासे इन्द्रियरूप पंकको धोडाला है ॥ ७३ ॥ हे राजन् ! आपने जो कुछ कहा वह सब सत्यहै, हे महामते ! मैं आपकी शक्ति और वैराग्यको बहुत अच्छीरीतिसे जानताहूं ॥ ७४ ॥ आपके ऐसा कोईभी राजा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भूतलपर न हुआ (न है) और न होगा, राज्यका भोगना तो आपहीने जाना; और यहभी बहुतही युक्तहै जो अब मोक्ष पानेकी इच्छा कररहेहैं ॥ ७५ ॥ देवतोंसे विरोध रहनेपरभी आपने कोई अपकार नहीं किया, और न आपके राज्यमें अधर्मही घुसने पाया ॥ ७६ ॥ हे स्वधर्मनिष्ठ ! आपहीके धर्ममें लगादेनेसे प्रजाओंने जो धर्मका आचरण किया, उसीसे देवतालोग संतुष्ट होगये ॥ ७७ ॥ मेरे हृदयमें तो आपका एकही दोष झलकताहै जो आपने काशीसे विश्वेश्वरकोभी दूर हटादिया ॥ ७८ ॥ हे भूपसत्तम ! मेरे जानमें तो यही आपका बहुत बडा अपराधहै, अस्तु, इस पापकी शान्तिके लिये मैं बहुत बढियाँ उपाय बतलाता हूं ॥ ७९ ॥ देहधारीके शरीरमें जितने रोयें हैं यदि उतनेही संख्याके पापभी हों तो एक शिवलिंगकी प्रतिष्ठा करदेनेसे दूर चलेजातेहैं ॥ १८० ॥ यहांपर जिस किसीने शिवकी भक्तिसे एकभी लिंगकी स्थापना करदी उसने आत्माके सहित समस्त विश्वको प्रतिष्ठित करदिया ॥ ८१ ॥ गिनती जोडनेवाले लोग समुद्रके रत्नोंकीभी संख्या बिनालगाये नहीं रहते, पर लिंगस्थापनाके पुण्यकी गिनती कभी नहीं लिखी जासकतीहै ॥८२॥ इसलिये सब प्रयत्नोंको उठाकर लिंगकी स्थापना करडालिये, क्योंकि उसी लिंगप्रतिष्ठासे कृतकृत्य होजाइयेगा ॥ ८३ ॥ यह कह ब्राह्मणने स्थिरचित्त होकर क्षणमात्र ध्यान लगालिया, और फिर हाथसे राजाको स्पर्श करते हुए, प्रसन्न मुखहोकर यह कहा॥ ८४ ॥ श्रीविष्णु बोले—हे भूपाल ! ज्ञानकी दृष्टिसे मैं औरभी कुछ देखरहाहूं, हे प्राज्ञसत्तम ! सावधानहोकर उसेभी श्रवण कीजिये ॥ ८५ ॥ आप धन्य हैं, कृतार्थ हैं, और बडे लोगोंकेभी मान्यहैं, संसारमें शुभफल चाहनेवालोंको प्रातःकालही आपका नाम जपना चाहिये ॥ ८६ ॥ हे दिवोदास ! आपके समीपवर्ती होनेसे हम लोगभी परमधन्य होगये, और इसलोकमें वे सभीकोई धन्य धन्य हैं जो आपका नामभी लेलेतेहैं ॥ ८७ ॥ वह ब्राह्मण मुसुकुराताहुआ, और हृदयमें परमप्रसन्न, तथा रोमांचित शरीर हो, वारंवार शिरहिलाकर यह कहने लगा ॥८८॥ अहो ! इस राजाका कैसा भाग्य उदय हुआहै ? इसकी कैसी निर्मलता है कि, समस्त लोगोंके ध्येय भगवान् विश्वेश्वर इसे रात्रिदिन ध्यानपर चढायेही रहते हैं ॥ ८९ ॥ अहो इस राजाका कैसा आश्चर्य परिणामहै, ऐसा तो परिणाम किसीका हुआही नहीं, जो बात हमलोगोंके लिये बहुत दूरहै, वही इसके लिये बहुतही निकटवर्ती है ॥ १९० ॥ ब्राह्मणने इसी भाँति पर हृदयमें देखभाल, और वर्णन कर, जो कुछ समाधिमें देखा था राजासे प्रकट

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

६१

किया ॥ ९१ ॥ ब्राह्मणने कहा—हे राजन् ! आज आपका मनोरथरूपी बडावृक्ष फलगया आप इसी शरीरसे परमपदको प्राप्त होंगे ॥ ९२ ॥ विश्वेश्वर जैसे आपको हृदयसे स्मरण करते रहते हैं वैसे अपने चरणसेवक हम सब ब्राह्मणोंको कभी नहीं चाहते ॥ ९३ ॥ लिंगकी प्रतिष्ठा करलेनेपर आजके सातवें दिन शिवका दिव्य-विमान आकर आपको लेजावेगा ॥ ९४ ॥ राजन् ! क्या आप यह जानते हैं कि आपके किसपुण्यका यह फलहै ? मैं तो यही समझताहूं कि अच्छी प्रकारसे वाराणसी पुरीके सेवनहीसे यह हुआहै ॥९५॥ हे महाराज ! यदि कोई काशीमें रहनेवाले एकजन काभी पालन करसके तो शरीरके अन्तहोनेपर उसकाभी परिणाम यही होगा ॥ ९६ ॥ प्रतापशाली राजर्षि उस दिवोदासने यह सुनकर प्रसन्नतापूर्वक शिष्योंके सहित उस ब्राह्मणको वांछित द्रव्य दान किया ॥ ९७ ॥ इसके पीछे संतोषित ब्राह्मणको वारंवार प्रणाम करके हृष्टचित्त राजाने कहा कि "मुझे आपहीने इस संसार समुद्रसे पार उतार दिया" ॥ ९८ ॥ मनोरथके परिपूर्ण होजानेसे प्रसन्नहृदय वह ब्राह्मणभी राजासे पूछकर अपने इष्टस्थानपर चलागया ॥ ९९ ॥ मायावश ब्राह्मणवेषधारी विष्णु काशीको चारोंओरसे देखभालकर बारंबार यह विचार करने लगे कि "यहांपर अत्यंत पवित्र कौन स्थानहै? ॥२००॥ जहांपर बैठकर मैं अपने समस्त भक्तोंको विश्वेश्वरके परम अनुग्रहसे परमधामतक पहुँचा सकूंगा" ॥ १ ॥ भगवान् विष्णु इस बातको मनमें बनाये रहकर पाँचनद ह्रद (पंचगंगा तीर्थ) को देख, उसमें विधिपूर्वक स्नानकर वहां हीपर ठहरगये ॥ २ ॥ और फिर लक्ष्मीपति (वहींसे) राजाके वृत्तान्तवेत्ता गरुडको भेजकर शीघ्रतासे महादेवके आगमनकी बाट जोहने लगे ॥ ३ ॥ राजेन्द्र दिवोदासनेभी ब्राह्मणेन्द्रका गुण गान करतेहुए—समस्त प्रजागण, अमात्योंके सहित सभी मंडलेश्वर ॥ ४ ॥ कोश, अश्व और हस्ती इत्यादिपर नियुक्त सब अध्यक्षगण, पांचसौ पुत्र, तथा युवराज समरञ्जय ॥ ५ ॥ पुरोहित, प्रतीहार, ऋत्विज, गणक, ब्राह्मणवृन्द, सामन्त, राजकुमार, सूपकार, चिकित्सक ॥ ६ ॥ नानाकार्योंके लिये अनेक विदेशीय लोग, अन्तःपुरवर्गके सहित राजमहिषी वृद्ध, गोपाल और बालक वृन्द ॥ ७ ॥ इन सबको बुलाकर, प्रसन्नहृदयसे अपने दोनों हाथोंको जोड सभी लोगोंसे ब्राह्मणने जैसी कि सातदिन अवधिकी स्थिति कहीथी, कह सुनायी ॥ ८ ॥ उन लोगोंके इस आश्चर्यकथाके सुनतेही विषण्णमुख होजानेपर उस महाबुद्धिमान् राजाने कुमार समरंजयको स्वयं (गोमतीके तटपर) राजगृहमें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तीर्थहीको क्यों सबसे श्रेष्ठ समझा ? ॥ ५ ॥ हे षडानन ! उस तीर्थका पंचनद ऐसा नाम क्यों पडा ? और वह सब तीर्थोंसे अधिक पावन कैसे होगया ? ॥ ६ ॥ और फिर जो अपनी लीलाहीसे समस्त ब्रह्मांडोंके कर्ता हर्ता और पालयिता हैं, वही जगन्नाथ रूपरहित होनेपरभी रूपधारी अव्यक्त होकर व्यक्तताको प्राप्त, निराकार रहनेपरभी साकार, निष्प्रपंच होकर प्रपंचभागी, जन्म और नामसे रहित रहकरभी अनेक जन्म और नामवाले, स्वयं निरालम्ब होनेपरभी सब किसीके अवलम्बन, निर्गुण होकर सगुण, इन्द्रियरहित रहकरभी सब इन्द्रियोंके स्वामी, एवं चरण न रहनेपरभी सर्वत्रही विचरण करनेवाले, अन्तर्यामी भगवान् विष्णु अपने सर्वव्यापी रूपको बटोर कर सर्वात्मभावसे उस पंचनद तीर्थपर क्यों जा ठहरे ? हे षड्वदन ! इस विषयमें आपने पंचवदन महादेवसे जो कुछ सुनाहै मुझसे कहिये ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥ ११ ॥ स्कन्दने उत्तरदिया—महेश्वरको प्रणाम करके मैं सर्वपापापहारिणी और समस्त कल्याणकारिणी इस कथाको कहताहूं ॥ १२ ॥ जैसे यह पंचनद तीर्थ काशीमें प्रसिद्ध हुआ और जिसके नाम लेतेही पाप सहस्रों टुकडे होजाते हैं ॥ ॥ १३ ॥ जहांपर साक्षात् तीर्थराज प्रयागभी स्वयं विराजमान रहताहै, (क्योंकि) पापियोंके पापोंकी ढेरको अपनेही तेजके द्वारा हठपूर्वक ॥ १४ ॥ प्रयागहीके बलसे सब तीर्थ हरण करतेहैं और वे सब तीर्थ माघमासमें जब सूर्य मकरराशिपर जातेहैं तो ॥ १५ ॥ प्रतिवर्ष तीर्थराजहीके समागमसे निर्मल होजातेहैं परन्तु तीर्थराज प्रयागभी समस्त तीर्थोंके अर्पित मल ॥ १६ ॥ तथा बडेबडे अघियोंके घोर अघिको इस पंचनद तीर्थके बलसे हरता रहताहै, तीर्थराज वर्षभरके बटोरेहुए समस्त पापराशिको इसी पंचनदतीर्थपर कार्त्तिक मासमें एकबार गोता लगाकर निश्चयही छोडदेताहै ॥ ॥ १७ ॥ हे महाभाग ! मित्रावरुणनन्दन ! इस पंचनद तीर्थकी उत्पत्ति जैसे हुईहै मैं वर्णन करताहूं, तुम श्रवण करो ॥ १८ ॥ पूर्वकालमें भृगुके वंशमें उत्पन्न, बडेही तपस्वी, मूर्तिमान् दूसरे वेदके समान, वेदशिरानामक एक मुनि रहतेथे ॥ १९ ॥ एकबार तपस्या करतेहुए उस मुनिके आगे परमरूपलावण्यशालिनी शुचिनाम्नी एक प्रधान अप्सरा दृष्टिगोचर हुई ॥ २० ॥ उसे देखतेही मुनिका मन चलायमान होगया और वे तुरंतही स्खलित होगये, (यह देखकर) वह अप्सरा बहुतही डरी ॥ २१ ॥ उस मुनिके शाप भयसे अत्यंत काँपती हुई शुचि दूरहीसे उस ऋषिको प्रणाम करके कहने लगी ॥ २२ ॥ हे महोग्रतपोनिधे ! (इस विषयमें) मेरा कुछभी अपराध

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

६५

नहींहैं, हे क्षमाधार ! मुझे क्षमा कीजिये, क्योंकि तपस्वीलोगही क्षमाके स्वरूप होतेहैं ॥ २३ ॥ हे सत्तम ! मुनियोंका हृदय प्रायः करके कमलसेभी (अधिक) कोमल रहताहै, पर स्त्रियोंका चित्त स्वभावतः बडा कठोर होताहै ॥ ॥ २४ ॥ इस प्रकारसे उस शुचि अप्सराकी बात सुनकर, उस मुनिने बडे क्रोधरूप नदीके वेगको विवेकरूपी बांधसे रोकलिया ॥ २५ ॥ और प्रसन्न मनसे कहा—अयिशुचे ! तुम वास्तवमें शुचि (निर्दोष) हो, हे सुन्दरि ! इस विषयमें न तो मेराही कोई दोषहै न तुम्हाराही कुछ दोषहै ॥२६॥ रमणी अग्नि-ज्वालाके समान और पुरुष माखनके समान होते हैं यह बात अनजान लोगही कहते हैं, पर विचार करनेसे बडाही अंतर दीखताहै ॥ २७ ॥ माखन तो अग्निकी आंच लगनेपर टेघरताहै, पर यह तो बडाही आश्चर्य है, जो कि पुरुष दूरहीसे स्त्रीका नाम लेतेही पिघलने लगजाताहै ॥ २८ ॥ अत एव हे शुचे ! तुम्हारा मनोगत भाव शुद्ध है और तुम मुझे क्षोभित करनेकी इच्छासे नहीं आई हो, इससे कुछ मत डरो, मेरा रेतस्खलन होगया तो क्या हुआ ? ॥ २९ ॥ इच्छाके विना स्खलन होजानेसे मुनिजनके तपकी वैसी हानि नहीं होती जैसी कि क्षणमात्रमें अंध करदेनेवाले कोपके वेगरूपी शत्रुसे होजाती है ॥ ३० ॥ क्रोध करनेसे बडे कष्टसे संचित तपस्याका क्षय होजाताहै, जैसे बादलके घिरआनेसे चन्द्र और सूर्यका प्रकाश प्रायः लुप्त होजाताहै ॥ ३१ ॥ अनर्थ करनेवाले क्रोधसे पुरुषार्थोंकी प्राप्ति कहां होसकतीहै ? जैसे खल लोगोंकी बढती होनेपर साधुजनोंका अभ्युदय कहां होनेपाताहै ? ॥ ३२ ॥ जब कि मन क्रोधमें खिंचजाताहै तब भला मनोज कहाँसे उत्पन्न होसकताहै ? जैसे राहुके चन्द्रमाको अत्यंत ग्रस लेनेपर चन्द्रिका कहां रहजाती है ? ॥ ३३ ॥ फिर जब क्रोध-रूपी दावानल जलने लगताहै तो शांतिरूपी वृक्ष कैसे बचसकताहै ? भला किसीनें कहींभी सिंहसे हाथीके बच्चेकी सुस्थता देखी है ? ॥ ३४ ॥ इसलिए बुद्धिमान् जनको चतुर्वर्ग और शरीरका घातक प्रतिकूल क्रोध सर्वथा त्यागनेहीके योग्य है ॥ ३५ ॥ हे कल्याणि ! शुचे ! अब जो कुछ तुम्हारा कर्तव्य विषय है उसे सुनो, हम लोगोंका वीर्य अमोघ होताहै, अतएव तुम इसे धारण करलो ॥ ३६ ॥ तुम्हारेही देखाई पडनेसे स्खलितहुए इस वीर्यके रक्षित करनेसे तुमको अत्यंत उत्तम एक कन्यारत्न प्राप्त होगी ॥ ३७ ॥ उस मुनिके इस कहनेपर मानो नया जन्म पाकर उस अप्सराने "महाप्रसाद" कहकर उस ऋषिका वीर्य निगललिया ॥ ३८ ॥ फिरतो काल-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तीर्थहीको क्यों सबसे श्रेष्ठ समझा ? ॥ ५ ॥ हे षडानन ! उस तीर्थका पंचनद ऐसा नाम क्यों पडा ? और वह सब तीर्थोंसे अधिक पावन कैसे होगया ? ॥ ६ ॥ और फिर जो अपनी लीलाहीसे समस्त ब्रह्मांडोंके कर्ता हर्ता और पालयिता हैं, वही जगन्नाथ रूपरहित होनेपरभी रूपधारी अव्यक्त होकर व्यक्तताको प्राप्त, निराकार रहनेपरभी साकार, निष्प्रपंच होकर प्रपंचभागी, जन्म और नामसे रहित रहकरभी अनेक जन्म और नामवाले, स्वयं निरालम्ब होनेपरभी सब किसीके अवलम्बन, निर्गुण होकर सगुण, इन्द्रियरहित रहकरभी सब इन्द्रियोंके स्वामी, एवं चरण न रहनेपरभी सर्वत्रही विचरण करनेवाले, अन्तर्यामी भगवान् विष्णु अपने सर्वव्यापी रूपको बटोर कर सर्वात्मभावसे उस पंचनद तीर्थपर क्यों जा ठहरे ? हे षड्वदन ! इस विषयमें आपने पंचवदन महादेवसे जो कुछ सुनाहै मुझसे कहिये ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥ ११ ॥ स्कन्दने उत्तरदिया—महेश्वरको प्रणाम करके मैं सर्वपापापहारिणी और समस्त कल्याणकारिणी इस कथाको कहताहूं ॥ १२ ॥ जैसे यह पंचनद तीर्थ काशीमें प्रसिद्ध हुआ और जिसके नाम लेतेही पाप सहस्रों टुकडे होजाते हैं ॥ ॥ १३ ॥ जहांपर साक्षात् तीर्थराज प्रयागभी स्वयं विराजमान रहताहै, (क्योंकि) पापियोंके पापोंकी ढेरको अपनेही तेजके द्वारा हठपूर्वक ॥ १४ ॥ प्रयागहीके बलसे सब तीर्थ हरण करतेहैं और वे सब तीर्थ माघमासमें जब सूर्य मकरराशिपर जातेहैं तो ॥ १५ ॥ प्रतिवर्ष तीर्थराजहीके समागमसे निर्मल होजातेहैं परन्तु तीर्थराज प्रयागभी समस्त तीर्थोंके अर्पित मल ॥ १६ ॥ तथा बडेबडे अघियोंके घोर अघको इस पंचनद तीर्थके बलसे हरता रहताहै, तीर्थराज वर्षभरके बटोरेहुए समस्त पापराशिको इसी पंचनदतीर्थपर कार्त्तिक मासमें एकबार गोता लगाकर निश्चयही छोडदेताहै ॥ ॥ १७ ॥ हे महाभाग ! मित्रावरुणनन्दन ! इस पंचनद तीर्थकी उत्पत्ति जैसे हुईहै मैं वर्णन करताहूं, तुम श्रवण करो ॥ १८ ॥ पूर्वकालमें भृगुके वंशमें उत्पन्न, बडेही तपस्वी, मूर्तिमान् दूसरे वेदके समान, वेदशिरानामक एक मुनि रहतेथे ॥ १९ ॥ एकबार तपस्या करतेहुए उस मुनिके आगे परमरूपलावण्यशालिनी शुचिनाम्नी एक प्रधान अप्सरा दृष्टिगोचर हुई ॥ २० ॥ उसे देखतेही मुनिका मन चलायमान होगया और वे तुरंतही स्खलित होगये, (यह देखकर) वह अप्सरा बहुतही डरी ॥ २१ ॥ उस मुनिके शाप भयसे अत्यंत काँपती हुई शुचि दूरहीसे उस ऋषिको प्रणाम करके कहने लगी ॥ २२ ॥ हे महोग्रतपोनिधे ! (इस विषयमें) मेरा कुछभी अपराध

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

६५

नहींहैं, हे क्षमाधार ! मुझे क्षमा कीजिये, क्योंकि तपस्वीलोगही क्षमाके स्वरूप होतेहैं ॥ २३ ॥ हे सत्तम ! मुनियोंका हृदय प्रायः करके कमलसेभी (अधिक) कोमल रहताहै, पर स्त्रियोंका चित्त स्वभावतः बडा कठोर होताहै ॥ ॥ २४ ॥ इस प्रकारसे उस शुचि अप्सराकी बात सुनकर, उस मुनिने बडे क्रोधरूप नदीके वेगको विवेकरूपी बांधसे रोकलिया ॥ २५ ॥ और प्रसन्न मनसे कहा—अयिशुचे ! तुम वास्तवमें शुचि (निर्दोष) हो, हे सुन्दरि ! इस विषयमें न तो मेराही कोई दोषहै न तुम्हाराही कुछ दोषहै ॥२६॥ रमणी अग्नि-ज्वालाके समान और पुरुष माखनके समान होते हैं यह बात अनजान लोगही कहते हैं, पर विचार करनेसे बडाही अंतर दीखताहै ॥ २७ ॥ माखन तो अग्निकी आंच लगनेपर टेघरताहै, पर यह तो बडाही आश्चर्य है, जो कि पुरुष दूरहीसे स्त्रीका नाम लेतेही पिघलने लगजाताहै ॥ २८ ॥ अत एव हे शुचे ! तुम्हारा मनोगत भाव शुद्ध है और तुम मुझे क्षोभित करनेकी इच्छासे नहीं आई हो, इससे कुछ मत डरो, मेरा रेतस्खलन होगया तो क्या हुआ ? ॥ २९ ॥ इच्छाके विना स्खलन होजानेसे मुनिजनके तपकी वैसी हानि नहीं होती जैसी कि क्षणमात्रमें अंध करदेनेवाले कोपके वेगरूपी शत्रुसे होजाती है ॥ ३० ॥ क्रोध करनेसे बडे कष्टसे संचित तपस्याका क्षय होजाताहै, जैसे बादलके घिरआनेसे चन्द्र और सूर्यका प्रकाश प्रायः लुप्त होजाताहै ॥ ३१ ॥ अनर्थ करनेवाले क्रोधसे पुरुषार्थोंकी प्राप्ति कहां होसकतीहै ? जैसे खल लोगोंकी बढती होनेपर साधुजनोंका अभ्युदय कहां होनेपाताहै ? ॥ ३२ ॥ जब कि मन क्रोधमें खिंचजाताहै तब भला मनोज कहाँसे उत्पन्न होसकताहै ? जैसे राहुके चन्द्रमाको अत्यंत ग्रस लेनेपर चन्द्रिका कहां रहजाती है ? ॥ ३३ ॥ फिर जब क्रोध-रूपी दावानल जलने लगताहै तो शांतिरूपी वृक्ष कैसे बचसकताहै ? भला किसीनें कहींभी सिंहसे हाथीके बच्चेकी सुस्थता देखी है ? ॥ ३४ ॥ इसलिए बुद्धिमान् जनको कीर्त्ति और शरीरका घातक प्रतिकूल क्रोध सर्वथा त्यागनेहीके योग्य है ॥ ३५ ॥ हे कल्याणि ! शुचे ! अब जो कुछ तुम्हारा कर्तव्य विषय है उसे सुनो, हम लोगोंका वीर्य्य अमोघ होताहै, अतएव तुम इसे धारण करलो ॥ ३६ ॥ तुम्हारेही देखाई पडनेसे स्खलितहुए इस वीर्यके रक्षित करनेसे तुमको अत्यंत उत्तम एक कन्यारत्न प्राप्त होगी ॥ ३७ ॥ उस मुनिके इस कहनेपर मानो नया जन्म पाकर उस अप्सराने "महाप्रसाद" कहकर उस ऋषिका वीर्य निगललिया ॥ ३८ ॥ फिरतो काल-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

क्रमसे उस अप्सराको परम नयनानन्दकर और रूप संपत्तिकी खानि एक कन्यारत्न उत्पन्न हुआ ॥ ३९ ॥ तब अप्सराओंमें श्रेष्ठ उस शुचिने उस कन्याको वहींपर वेदशिरा मुनिके आश्रममें रखकर अपने इष्टस्थानको गमन किया ॥ ४० ॥ इसके अनंतर वेदशिरा मुनि अपने आश्रमकी हरिनीके दूधसे उस हरिणी नयना कन्याको बडे स्नेहसे पालने (पोषने) लगे ॥ ४१ ॥ और मुनिने उस कन्याका यथार्थतः धूतपापा नाम रक्खा, (क्योंकि) जिसका नाम उच्चारण, करतेही पातकावली काँपने लगती है ॥ ४२ ॥ मुनिराज सर्व लक्षण और शोभासे संपन्न तथा सर्वांगसुन्दरी उस कन्याको क्षणमात्रके लिये भी कहींपर अपने गोदसे नहीं उतारतेथे ॥ ४३ ॥ फिर रात्रिमें चन्द्रकलाके समान दिन प्रतिदिन उस कन्याको बढतीहुई देखकर क्षीरसमुद्रकी नांई अत्यंतप्रमुदित होनेलगे ॥ ४४ ॥ अनंतर जब वह आठवर्षकी होगई तो मुनिवरने यह विचार कराकि इसे किसको देना उचित है, उसी कन्याहीसे पूछा ॥ ४५ ॥ वेदशिरा बोले—अयि महाभागे ! सुनयने ! पुत्रि ! धूतपापे ! मैं तुमको किस वरके हाथमें देऊं यह बात तुम्हीं कहो ॥ ४६ ॥ तब धूतपापाने अत्यंत स्नेहार्द्रचित्त पिताका यह वचन सुन नीचे मुख करके कहा ॥ ४७ ॥ धूतपापा बोली—हे पिताजी ! यदि आप मुझे किसी सुन्दर वरको दिया चाहतें हैं तो मैं जिसे कहतीहूं उसीको आप समर्पण कीजिए ॥ ४८ ॥ हे तात ! आपभी उसे प्रमाण करेंगे, इसलिए सावधानमनसे श्रवण कीजिए, जो सबसे अधिक पवित्र और सब किसीके नमस्कार योग्य हो ॥ ४९ ॥ जिसे सभीलोग चाहतेहों जिससे समस्त सुखोंका उदय होताहो, जो कभी विनष्ट न होवे जो सर्वदा साथी बनारहे ॥ ५० ॥ इसलोक और परलोकमें भी जो अवश्यही बडीसे बडी विपत्तियोंमें रक्षा करसके, जिसके द्वारा समस्त मनोरथ परिपूर्ण होजावें ॥ ५१ ॥ जिसके निकटमें दिन प्रति दिन सौभाग्य बढताही रहे, सर्वदा जिसकी सेवा करनेसे कहींभी भय न हो ॥ ५२ ॥ जिसके केवल नाम लेनेहीसे कोईभी कुछ बाधाको नहीं करसके और जिसीके आधारपर यह सब चौदहोंभुवन ठहरे होवें ॥ ५३ ॥ इस प्रकारके गुण जिस वरमें होवें, हे तात ! उसीको देनेसे यहांपर मुझे और आपकोभी सुख मिलसकताहै ॥ ५४ ॥ उस कन्याकी इन बातोंको सुनकर वेदशिरा ऋषि बडेही प्रसन्न हुए और अपनेको तथा अपने पुरुषोंको धन्य कहने लगे कि जिसके वंशमें यह कन्या उत्पन्न हुईहै ॥ ५५ ॥ अवश्यही यह बेटी धूतपापाहै नहीं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

६७

इसकी ऐसी बुद्धि कैसी होती ? अस्तु अब इन गुणगणोंसे परिपूर्ण इस संसारमें कौन है ? ॥ ५६ ॥ और फिर वह बिना बडे पुण्यपुंजके संचय किये कैसे मिल सकताहै ? यही सोचतेहुए मुनिराजने क्षणकाल मनको समाधिमें लगालिया ॥ ५७ ॥ फिर ज्ञानदृष्टिसे वैसे गुण संपन्न वरको देखकर उस धन्या कन्यासे कहा कि हे बेटी ! कल्याणी ! सुनो ॥ ५८ ॥ पिता कहने लगे—हे बुद्धिमति ! तुमने वरके जो यह सब गुण कहे हैं, इन सबोंसे परिपूर्ण वर तो निश्चयही है ॥ ५९ ॥ परन्तु वह परमसुन्दरमूर्ति वर बिना प्रयासके नहीं मिलसकता, तब किसी उत्तम पात्रसे [illegible] तपस्याके मूल्य देनेसे क्रय किया जासकताहै ॥ ६० ॥ हे बेटी ! वह वर धन, संपत्ति, कुलीनता, वेद और शास्त्रोंके अभ्यास, ऐश्वर्य ॥ ६१ ॥ शरीरकी सुन्दरता, बुद्धिवैभव, अथवा पराक्रमके बलसे कदापि नहीं मिल सकताहै; हां केवल चित्तशुद्धि, इन्द्रियोंके विजय ॥ ६२ ॥ दम दान और दयासे युक्त घोर तपस्याकी सहायताहीसे वह परमविज्ञ वर पाया जासकताहै, नहीं तो (तुम्हारे) अनुरूप पतिका मिलना दुर्घट है ॥ ६३ ॥ यह सुनकर उस कन्याने पिताको प्रणाम कर तपस्याके लिये दृढ संकल्प हो अनुमति पानेकी प्रार्थना की ॥ ६४ ॥ स्कन्दने कहा—पिताकी आज्ञा पाकर वह कन्या परमपावन काशी-क्षेत्रमें तपस्वियोंकेभी असाध्य कठोर तपस्याको करने लगी ॥ ६५ ॥ अहो ! मनस्वी जनका कैसा असाधारण धैर्य होताहै ? कहांतो अत्यंतसुकुमारी वह कुमारी और कहां कठोर शरीरसे साध्य वैसी घोर तपस्या ? ॥ ६६ ॥ वह वर्षा ऋतु-ओंमें बडे वायुके झकोरेके साथ मुसलधार वृष्टि होते रहनेपरभी शिलाओंहीपर बहुतेरी रातें काटदेती थी ॥ ६७ ॥ मेघोंके घोर गर्जनको सुन, और बिजुरीकी चमक देख बून्दोंकी झडीसे भीजजानेपरभी वह तनिक नहीं हिलती थी ॥ ६८ ॥ अंधेरी रातोंमें चमकतीहुई बिजुरी मानो उसके तपस्याकी स्थिति देखनेहीके लिए तपोवनमें आवागमन कर रहीथी ॥ ६९ ॥ ग्रीष्मऋतु (गर्मी) मानों आपही कुमा-रीके व्याजसे इस तपोवनमें पांचों अग्नियोंको रखकर तपस्या करतीथी ॥ ७० ॥ वह लडकी पंचाग्निके तापसे पिपासित होकर (गर्मीमें) कुशाग्रभागके भी जलबि-न्दुको कदापि नहीं पीतीथी ॥ ७१ ॥ रोमांचहीकी चोलिया पहिरकर (जाडाके मारे) हिमसे काँपतीहुई वह तपःकृशा बालिका हेमन्तऋतुकी रातें बितादेतीथी ॥ ७२ ॥ शिशिर ऋतुकी रजनियोंमें सरोवरके जलमें बैठीहुई उसे देखकर सारस पक्षिगण यह समझने लगतेथे कि आज यह कौनसी कमलिनी खिलगईहै ? ॥ ७३ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यद्यपि वसंत ऋतुमें मनस्वी मुनियोंकेभी मनमें राग (उत्पन्न) होजाताहै पर यहां तो आम्रके पल्लव भी उसीके ओष्ठपल्लवका राग चुराने लगे ॥ ७४ ॥ वह बालिका वसन्तमेंभी वनवासिनी होकर कोकिलोंकी कुहुक सुनते रहनेपर भी तपस्याहीमें मनोयोग देतीथी ॥ ७५ ॥ योंहीं शरदृऋतुमें भी वह छोकरी अपनी अंधरकान्तिको दुपहरिया पुष्पके पास और अपनी मन्दगतियोंको कलहंसके समीप धरोहर रखकर तपस्याहीमें लगी रहतीथी ॥ ७६ ॥ वह तपस्विनी धूतपापा समस्त भोगोंको त्यागकर क्षुधा निवारण करनेके लिए वायुही भक्षण करती थी ॥ ७७ ॥ जैसे मणि शानपर चढनेसे घिसजानेपर भी बहुमूल्य होजाताहै, वैसेही उसका शरीर तपसे कृश होकरभी अत्यंतसमुज्ज्वल होगयाथा ॥ ७८ ॥ इसके अनंतर ब्रह्मा उसे शुद्ध हृदयसे तपस्या करतीहुई देख वहांपर जाकर बोले हे सुप्रज्ञे ! मैं प्रसन्नहूं तू वर मांग ॥७९॥ तब तो उसने हंसके ऊपर विराजमान भगवान् चतुर्मुखको देख प्रणाम कर प्रसन्न हो हाथजोड प्रजापतिसे यह कहा ॥ ८० ॥ धूतपापा बोली—हे वरप्रद ! पितामह ! यदि मैं आपके वरदान योग्य हूं तो मुझे समस्त पवित्रोंसे अत्यंत पवित्र करदीजिये ॥ ८१ ॥ ब्रह्मा उसके इस मनोरथको सुन बहुतही संतुष्ट होकर निर्मलता चाहनेवाली उस पवित्र बालिकासे कहने लगे ॥ ८२ ॥ ब्रह्मा बोले—हे धूतपापे ! इस संसारमें जितने पवित्र हैं, तुम मेरे दानके प्रभावसे सबसे अधिक पवित्र होजाओ ॥ ८३ ॥ हे बेटी ! स्वर्ग और मर्त्य एवं अन्तरिक्ष इन सबोंमें उत्तरोत्तर पवित्र करनेवाले साढेतीन करोड तीर्थ हैं ॥ ८४ ॥ मेरे वचनसे वे सब तीर्थ तुम्हारे शरीरके प्रत्येक रोमोंमें वास करें, और तुम सबकी अपेक्षा परम पावनी होजाओ ॥ ८५ ॥ यह कहकर ब्रह्मा अन्तर्धान होगये, और वह धूतपापा भी निर्मल होकर अपने पिता वेदशिरा मुनिके पर्णकुटीपर जापहुँची ॥ ८६ ॥ कुछ दिनके पीछे एकबार भगवान् धर्म उसकी तपस्याके वशीभूत होकर पर्णशालाके आँगनमें उसे खेलतीहुई देखकर प्रार्थना करने लगे ॥ ८७ ॥ धर्मने कहा—" हे सुश्रोणि ! कृशोदरि ! शुभानने ! विशालाक्षि ! मैं तुम्हारी रूपसंपत्तिसे क्रीत होगयाहूं, मुझे एकान्त दान करो ॥ ८८ ॥ अयि सुलोचने ! तुम्हारेही लिये मुझे काम अत्यंत बाधा देरहाहै " इस प्रकारसे आग्रहपूर्वक बारंबार एक अज्ञात कुलशील पुरुषसे प्रार्थित होनेपर ॥ ८९ ॥ उसने कहा " रे दुर्मते ! मुझे दान करनेवाला पिता वर्तमान है तुम उन्हींसे प्रार्थना करो, क्योंकि कन्याके दान करनेका पिताही अधिकारी होता

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

६९

यह सनातनकी श्रुति (चली आती) है ॥९०॥ तब तो धर्म यह बात सुनकर अधीरतासे होनहारवश फिर उस धैर्यशालिनी कन्यासे हठ करने लगे ॥९१॥ धर्मने कहा—"हे सुभगे ! मैं तुम्हारे पितासे यह प्रार्थना नहीं करसकता, हे सुन्दरि! तुम गान्धर्व विवाह करके मेरा मनोरथ पूर्ण करदो" ॥ ९२ ॥ इस हठयुक्त वचनको सुन कुमारी धूतपापा पिताको कन्यादानका फल प्राप्त करानेकी इच्छासे फिर उस ब्राह्मणसे कहने लगी ॥९३॥"अरे जडमते ! अब फिर ऐसी बात मत कहना, यहांसे चलाजा;" किन्तु उस कन्याके इस कहनेपरभी उस कामातुरने कुछ नहीं माना॥९४॥तबतो तपोबलसे बलवती उस बालिकाने उसे यह शाप दिया कि "तुम बडेभारी जड हो अतएव जडोंके आधार नद होओ" ॥ ९५ ॥ तबतो शापग्रस्त हो उस ब्राह्मणनेभी क्रोधपूर्ण होकर यह शाप दिया कि—"रे दुर्मते ! कठोरहृदये ! तू भी (चेतनारहित पाषाणकी) शिला होजा" ॥ ९६ ॥ स्कंदने कहा—हे मुनिवर ! इस प्रकार परस्परके शापसे धर्मनद होगया, जो कि अविमुक्त महाक्षेत्रमें धर्मनद नामसे प्रसिद्ध हुआ ॥ ९७ ॥ और वह धूतपापाभी डरतीहुई अपने पितासे जाकर अपने शिलाहोनेका कारण कहने लगी, तबतही मुनिने ध्यानबलसे धर्मकी सब बातें जानकर कन्यासे कहा ॥ ९८ ॥ अयि-सुते ! तुम कुछभी मत डरो, मैं तुम्हारा सब प्रकारसे कल्याणही करूंगा; उसका शाप तो वृथा नहीं होसकता पर तुम चन्द्रकान्त मणिकी शिला होजाओ ॥ ९९ ॥ हे साध्वि ! चन्द्रोदय होनेपर तुम्हारी शिलाशरीर द्रवीभूत होजावेगी, हे बेटी ! तब तुम धूतपापा नामसे विख्यात नदी होगी ॥ १०० ॥ अयि कन्ये ! वह धर्मनदही तुम्हारे अनुरूप भर्ता है, क्योंकि तुमने जिनजिन गुणोंकी प्रार्थना कीथी यही उन सबसे परिपूर्ण है ॥ १ ॥ हे सद्बुद्धे ! औरभी सुनो, मेरेभी तपके प्रभावसे तुम्हारा एकतो प्राकृत और दूसरा द्रवरूप होगा ॥ २ ॥ हे परंतप ! इस भांतिसे बुद्धिमान् पिता वेदशिरा मुनिने अपनी कन्या धूतपापाको जो कि चन्द्रकान्त शिला होगई अनुगृहीत किया ॥ ३ ॥ हे अगस्त्यऋषे ! तभीसे काशीपुरीमें धर्मनदनामक ह्रद प्रख्यात हुआ, महापातकनाशक वह द्रवरूपी धर्मनद और सर्वतीर्थमयी शुभरूपा धूतपापा नदी तट परके वृक्षोंकी नाईं घोर पापराशियोंको विनष्ट करते रहते हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥ फिर जबकि गंगा नहींथी तभी धूतपापासे मिलेहुए धर्मनद तीर्थपर सूर्यने तप कियाथा ॥ ६ ॥ वहांपर भगवान् गभस्तिमाली गभस्तीश्वरके समीपहीमें श्रीमंगलागौरीकी आराधना करतेहुए बडी उग्र तपस्या करने लगेथे ॥ ७ ॥ उस तीर्थमें तप करनेवाले

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मयूखादित्यनामक सूर्यके किरणोंसे मारे परिश्रमके बडा स्वेद (पसीना) बह चला था ॥ ८ ॥ इसके अनंतर किरणोंसे निकसनेके कारण उस बडे स्वेदकी धारासे एक किरणानामक पवित्र नदी होकर बहचली ॥ ९ ॥ वह किरणा नाम्नी नदी धूतपापा नदीमें मिलजानेसे स्नान करतेमात्र समस्त पापांधकारको भंग करडालतीहै ॥ ११० ॥ जो धूतपापा सर्वतीर्थमयी होकर सब पापोंको कंपादेतीहै, पहिले तो उसमें पुण्य धर्मनद जा मिला ॥ ११ ॥ फिर जिसका नाम सुमिरतेही महामोह जालभी फट जाताहै, वही सूर्यकी बनायीहुई किरणाभी आकर मिलगई ॥ १२ ॥ काशीके उस पवित्र धर्मनदमें पापहन्त्री किरणा और धूतपापा ये दोनोंही शुभद्रवा नदियां स्रवतीही रहतीहैं ॥ १३ ॥ इसके पीछे दिलीपके पुत्र महाराज भगीरथके साथ भागीरथीभी वहांपर आपहुँचीं, और गंगाहीके सहित यमुना और सरस्वतीभी वहां आगईं ॥ १४ ॥ यहांपर पवित्रजला किरणा धूतपापा सरस्वती यमुना और गंगा यही पाँचों नदियां कहीजाती हैं ॥ १५ ॥ इसी कारणसे यह पंचनदतीर्थ त्रैलोक्यमें प्रसिद्ध है उस तीर्थमें स्नान करनेसे मनुष्यको फिर कभी पंचभूतोंसे बनाहुआ देह नहीं धरना पडता ॥ १६ ॥ पाप पुंज भंजक इस पंचनदीके संगममें केवल स्नान करनेहीसे मनुष्य ब्रह्मांड मंडप भेदकर चलाजाताहै ॥ १७ ॥ यद्यपि काशीमें पदपदपर बहुतेरे तीर्थ पडेहैं, परंतु इस पंचनद तीर्थके कोटि अंशकेभी समान नहीं हैं ॥ १८ ॥ प्रयागराजमें माघमासभर स्नान करनेसे जो फल प्राप्त होताहै, काशीके इस पंचनद तीर्थमें केवल एकही दिन नहालेनेसे भी वही फल निश्चय मिलजाताहै ॥ १९ ॥ पंचनद तीर्थमें स्नान और पितरोंका तर्पण करके श्रीबिन्दुमाधवका पूजन करनेसे फिर जन्मभागी नहीं होना पडता॥ १२० ॥ पवित्र पंचनद तीर्थमें जलसे तर्पण करते समय पितरोंके निमित्त जितने तिल दियेजाते हैं, उतनेही वर्षके लिये उनकी तृप्ति होजातीहै ॥ २१ ॥ इस शुभप्रद पंचनद तीर्थपर जो लोग श्रद्धापूर्वक श्राद्ध करतेहैं, उनके पितरलोग अनेकयोनियोंमें पडे रहेपरभी मुक्तही होजातेहैं ॥ २२ ॥ पितृगण श्राद्धविधानमें पंचनदकी महिमा देखकर यमलोकमेंभी यह गाथा गाते रहतेहैं (कि) ॥ २३ ॥ "हमारे लोगोंके वंशकारोंमें कोई न कोई काशीके इस पंचनद तीर्थमें श्राद्ध करदेगा, तो हम सबभी मुक्त होजावेंगे" ॥ २४ ॥ यह गाथा (कहावत) प्रतिदिन श्राद्धदेव (यमराज) के समीपमें पितरलोग काशीके पंचनद तीर्थके विषयमें गातेही रहतेहैं ॥ २५ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

७१

पंचनद तीर्थपर जो कुछ धन दान कियाजाताहै, कल्पान्तपर्यंत उस पुण्यका कभी क्षय नहीं होता ॥ २६ ॥ पंचनदह्रदमें स्नानकर वर्षभर मंगलागौरीकी पूजा करनेसे वंध्या स्त्रीकोभी निश्चयही पुत्र उत्पन्न होताहै ॥ २७ ॥ कपडेसे छानेहुए पवित्र पंचनद तीर्थके जलसे अपने इष्ट देवताको नहवानेसे बडाही फल प्राप्त होताहै ॥ २८ ॥ पंचामृतके एकसौआठ भरेहुए घडोंसे तौल करनेपर इस पंचनद तीर्थका एक बून्द जलही अधिक हुआथा ॥ २९ ॥ संसारमें पंचगव्य पीनेसे जो शुद्धि कहीगईहै, श्रद्धापूर्वक पंचनदके एक बून्द जल पीलेनेसेभी वही पवित्रता होजातीहै ॥ १३० ॥ राजसूय और अश्वमेध यज्ञ (के अन्त) में अवभृथ स्नान करनेसे जो फल मिलताहै, पंचनदके जलसे स्नान करनेपर वही फल सौगुना होजाताहै ॥ ३१ ॥ क्योंकि राजसूय और अश्वमेध यज्ञ तो ब्रह्माकी दोघडी भरके लिये स्वर्ग साधन होसकते हैं, पर पंचनदका स्नान तो मुक्तिहीका साधन होजाताहै ॥ ३२ ॥ स्वर्गके राज्यकाभी अभिषेक सज्जनोंको वैसा संमत नहीं है, जैसा कि महासुखदायी पंचनदतीर्थका अभिषेक होताहै ॥ ३३ ॥ वाराणसीपुरीमें जाकर पंचनदतीर्थमें स्नान करनेवालेका सेवक होना बहुतही अच्छाहै, पर दूसरे किसी स्थानमें सेवक बनेहुए करोडों राजोंका अधीश्वर होकर रहनाभी अच्छा नहीं है ॥ ३४ ॥ जो लोग कार्तिकमासमें पापहारी पंचनदतीर्थमें स्नान नहीं करते, वे आजलों गर्भहीमें वास कररहेहैं, और फिरभी गर्भवासीही बनेरहेंगे ॥ ३५ ॥ (यह तीर्थ) सत्ययुगमें धर्मनद, त्रेतामें भूतपापक, द्वापरमें बिन्दुतीर्थ, और कलियुगमें पंचनद नामसे कहागयाहै ॥ ३६ ॥ सत्ययुगमें सैकडों वर्ष तपस्या करनेसे जो फल मिलताहै, कार्तिकमासके बीच एकबारभी पंचनदमें स्नान करलेनेसे वही फल प्राप्त होजाताहै ॥ ३७ ॥ अन्यत्र यज्ञ और कूंआ बावली आदि धर्मकार्य यावज्जीवन करते रहनेसे जो पुण्य होताहै, कार्तिकमासमें केवल एकहीबार इस धर्मनदमें स्नान करनेपर वह मिलजाताहै ॥ ३८ ॥ भूतपापके समान कोईभी तीर्थ भूतलमें कहीं नहींहै जो कि, केवल एकहीबार स्नान करनेसे तीन जन्मके संचित पापको विनष्ट करडालताहो ॥ ३९ ॥ जो कोई बिन्दुतीर्थमें एक घुँघुचीभरभी सुवर्ण दान करताहै, वह नतो दरिद्री होताहै और न कभी सुवर्णहीसे हीन रहताहै ॥ १४० ॥ इस बिन्दुतीर्थमें गौ, भूमि, तिल, सुवर्ण, घोडा, कपडा, अन्न, माला, गहना, इत्यादि जो कुछदियाजावे वह सब अक्षय होता है ॥ ४१ ॥ पवित्र धर्मनद तीर्थपर विधानपूर्वक प्रज्वलित अग्निमें एकभी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

आहुति देनेसे कोटि होमका फल प्राप्त होताहै ॥ ४२ ॥ चतुर्वर्गके शुभस्थान पंचनद तीर्थकी अपारमहिमा का वर्णन कौन करसकताहै ? ॥ ४३ ॥ इस पवित्र आख्यानको भक्तिपूर्वक सुनने और सुनानेसे मनुष्य सब पापोंसे छूटकर विष्णुलोकमें पूजित होताहै ॥ १४४ ॥

दोहा—कहेउ पंचनद तीर्थ जो, सो पचगंगा घाट ।
काशीमें विख्यात है, सीढिनको बड ठाट ॥ १ ॥
कातिक मास पुनीतमें, रात याम अवशिष्ट ।
नानारी ह्वावैं वहाँ, मेला होत विशिष्ट ॥ २ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्द्धे भाषायां पञ्चनदप्रादुर्भाव-वर्णनं नामोनषष्टितमोऽध्यायः ॥ ५९ ॥

साठवाँ अध्याय ।

श्रीबिन्दुमाधवकी कथा ।

स्कन्द कहने लगे—हे मित्रावरुणनन्दन ! मैं पंचनदतीर्थके उत्पत्तिकी कथा कहचुका, अब बिन्दुमाधवके प्रकट होनेकी कथा वर्णन करताहूं ॥ १ ॥ जिस कथाको श्रद्धापूर्वक सुननेसे बुद्धिमान् जन क्षणभरमें सब पापोंसे मुक्त होजाताहै और कभी लक्ष्मीसे हीन नहीं होता; वरंच धर्मसे परिपूर्ण बना रहताहै ॥ २ ॥ जब कि महादेवकी आज्ञा पाकर भगवान् विष्णु गरुडपर चढ क्षणमात्रमें मन्दराचलसे वाराणसीपुरीमें आपहुँचे तब ॥ ३ ॥ अपने मायाजालसे वहांके राजा दिवोदासको उच्चाटन कर, पादोदक तीर्थपर केशवरूपसे टिक ॥ ४ ॥ काशीकी अपारमहिमा विचारते विचारते पंचनदतीर्थको देखकर अत्यंत आनन्दित हुए ॥ ५ ॥ एवं प्रसन्नचित्त होकर पुंडरीकाक्ष यह कहने लगे कि, मुझे तो अगणित गुणोंसे पूर्ण वैकुंठलोकभी गुणहीनहीं समझाई पडताहै॥ ६ ॥ फिर क्षीरसमुद्रमें (भला) उतने निर्मल गुण कहां हैं ? जितने कि, काशीके इस पंचनदतीर्थमें विराजमान हैं ॥ ७ ॥ और श्वेतद्वीपमें तो इतनी भारी गुणोंकी सामग्री हुईनहीं है, जितनी काशीके परम पवित्र इस धूतपापामें वर्तमान रहती है ॥ ८ ॥ मुझे तो अपनी कौमोदकी गदाका स्पर्श वैसा आनन्द नहीं देता, जैसा कि धूतपापाके जल छूजानेपर सर्वथा आनन्द मिलताहै ॥ ९ ॥ यहां पर तो धूतपापाके जल स्पर्श करनेसे जो सुख मुझे मिलताहै

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

७३

वह साक्षात् क्षीरसागरकी कन्या लक्ष्मीदेवीके आलिंगनमेंभी नहीं होता ॥ १० ॥ यही सब सोचते विचारते हुए महादेवके पास सब वृत्तांत निवेदन करनेके लिये गरुडको भेजकर, ॥ ११ ॥ आनंदवन काशी, राजा दिवोदास, और पंचनद तीर्थके पवित्र गुणग्रामोंका वर्णन करतेहुए भगवान् माधवने पंचनद तीर्थपर सुखपूर्वक बैठकर संहृष्टचित्तसे सुदृष्टिसंपन्न हो, तपस्यामें लगेहुए दुर्बलदेह एकतपोधनको देखा ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ वह ऋषि पुंडरीकाक्ष भगवान् अच्युतके समीप जाकर लक्ष्मीके सहित विराजमान, वनमालासे सुशोभित ॥ १४ ॥ चारों हाथोंमें शंखचक्र गदा और पद्मको धारण किये, कौस्तुभमणिके द्वारा भासमान हृदय, पीतांबरको पहिनेहुए ॥ १५ ॥ सुन्दर नीलकमलके समान वर्ण, अतिमधुर मनोहररूप, नाभिरूपी ह्रदमें पद्मसे शोभायमान, अत्यंत पाटल (गुलाबी) रंगके ओठसे भूषित ॥ १६ ॥ अनार दानेके समान दंतपंक्तिसे युक्त, किरीटसे आकाशको प्रकाशित करतेहुए (उनको देखनेलगे जिनके) चरणोंकी बन्दना स्वयं देवराज इन्द्र कररहे हैं, सनकादि ऋषिगण स्तुति गानमें लगे हैं ॥ १७ ॥ नारद इत्यादि दिव्यमुनिवृन्द महोदय (बडाई) की कथागारहे हैं, प्रह्लाद प्रभृति भगवद्भक्तगण उनके मनको प्रसन्न कररहे हैं ॥ १८ ॥ जो शार्ङ्ग नामक धनुषको धारण किये हैं, और अशेष दानवोंके दंडदाता, मधुकैटभके हंता, और कंसके विध्वंसकर्ता हैं ॥ १९ ॥ जो कैवल्यरूप परंब्रह्म निराकार और वचनमनके अगोचर होनेपरभी भक्तोंके भक्तिहेतुसे पुरुषरूपमें परिणत होगये हैं ॥ २० ॥ वेदगण उपनिषदके द्वारा कहनेपरभी जिसके रूपको नहीं जानसके, और न ब्रह्मादिक देवतोंहीने जाना उसीको उसने नेत्रगोचर करलिया ॥ २१ ॥ फिरतो महातपस्वी उस अग्निबिन्दु ऋषिने बडेही हर्षितहो पृथिवीपर माथा टेककर, भगवान् माधवको प्रणाम किया ॥ २२ ॥ और वह विस्तीर्ण शिलातलपर विराजमान बलिविध्वंसक भगवान् अच्युतकी बडीभक्तिके साथ हाथ जोडकर स्तुति करनेलगा ॥ २३ ॥ वहांपर मार्कण्डेय इत्यादि मुनियोंसे सेवित पंचनदतीर्थके समीपहीमें संतुष्टचित्त होकर अग्निबिन्दु ऋषिने इसप्रकारसे स्तुतिको आरंभ किया ॥ २४ ॥ अग्निबिन्दु बोले—हे पुंडरीकाक्ष ! आप बाहर और भीतरके शुद्धिदाता हैं, आप सहस्रशीर्ष, सहस्रनेत्र और सहस्रचरण पुरुषहैं, आपको नमस्कार है ॥ २५ ॥ हे इन्द्रादिक देवगणवन्दित विष्णो ! मैं निर्द्वन्द्व (एकाग्र) बुद्धिसे सर्वविध द्वन्द्व (अर्थात् धर्माधर्म पापपुण्य, सुखःदुख, इत्यादि) के निवारक आपके पदद्वन्द्वको प्रणाम करताहूं ॥ २६ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बाचस्पतिकी वाणीभी जिसकी स्तुतिको नहीं करनेजानती, भला उसकी बडाई कौन करसकताहै ? तब फिर (जो स्तुति कीजातीहै उसमें) भक्तिहीका भरोसा रहताहै ॥ २७ ॥ जो ईश्वर भगवान् प्राचीन लोगोंकेभी मनोगोचर नहीं होसके, वेही वाणीकी शक्तिसे परे रहनेके कारण मेरे ऐसे, छोटीबुद्धिवालोंके द्वारा कैसे स्तुति करनेके योग्य होसकते हैं ? ॥ २८ ॥ जहाँपर वाणियोंकी गतिही नहीं है, और न मनही जिसे मनन करले सकताहै, उस मन वचनसे अतीत ईश्वरकी स्तुति गानकरनेके लिये किसकी शक्तिहै ? ॥ २९ ॥ छहों अंग और पद, क्रमके सहित चारोंवेद जिसके निःश्वाससे अनायासही उत्पन्न हुएहैं उस भगवान्की अपार महिमाको कौन जानसकताहै ॥ ३० ॥ अकुंठित मनबुद्धि और इन्द्रियवाले सनकादि ऋषिगण जिसे हृदयाकाशमें ध्यान करते रहनेपरभी यथार्थरूपसे नहीं जानसके हैं ॥ ३१ ॥ आबाल ब्रह्मचारी नारदादि महर्षिलोगभी यद्यपि उन्हींका चरित्र गान करते रहते हैं पर सम्यक्प्रकारसे जिसे नहीं समझसकते हैं ॥ ३२ ॥ ब्रह्मादि देवोंकेभी अगोचर, अजेय अनंत शक्तिसंपन्न, सूक्ष्मरूप, जन्मरहित, अव्यय, अद्वितीय, आद्य, नित्य निरामय, निराकार, अचिंत्यस्वरूप, चराचरमय, और चराचरसे भिन्न उस आपको कौन जानसकताहै ? ॥ ३३ ॥ हे मुरारे ! हरे ! आपका एक एक नामही पापियोंके जन्मान्तर संचित बडी बडी विपत्तियोंसे भरपूर पापोंको दूर करदेताहै, एवं " मुकुन्द ! मधुसूदन ! माधव ! " इत्यादि पूजित नाम तो जपकरतेही बडे बडे यज्ञोंका फल देदेते हैं॥ ३४॥ " नारायण—नरकार्णवतारण—दामोदर—मधुसूदन— चतुर्भुज—विश्वंभर— विरज—और जनार्दन—" इन सब (आपके) नाम जपनेवालोंको इस संसारमें जन्म कहां ? और यमराजका भयही कहां होता है ? ॥ ३५ ॥ हे त्रिविक्रम ! जो लोग अपने हृदयमें मेघमालाके तुल्य सुन्दर शोभित श्यामलमूर्तिपर सौदामिनीके समान पीतपट ओढेहुए पुंडरीकाक्षरूपी आपका ध्यान करते हैं वे सबभी आपहीकी अचिंत्यरूपा कान्तिको पाजाते है अर्थात् आपहीके ऐसे होजाते हैं । " तेइ जानै जेहि देहु जनाई । जानत तुमहिं तुमहीं होइजाई " ॥ ३६ ॥ हे श्रीवत्सलांछन ! हरे ! अच्युत ! कैटभारे ! गोविन्द ! गरुडवाहन ! केशव ! चक्रपाणे ! लक्ष्मीपते ! दानवसूदन ! शार्ङ्गधर ! आपके भक्तपुरुषको कहींभी भय नहीं है ॥ ३७ ॥ हे भगवन् ! कस्तूरीके सुगंधको जीतनेवाले दिव्यगंधसे भरे तुलसीकी मंजरियोंसे जिन लोगोंने आपकी पूजाकी है स्वर्गमें सभीदेवतालोग मंदारकी मालाओंसे उन निर्मल स्वभाववालोंकी बडी (भारी)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

७५

पूजा करते हैं ॥ ३८ ॥ हे कमललोचन ! जिनकी बोलचालमें अभिलाषपूरक आपका नाम रहताहै, और जिनके कानोंमें आपकी कथाके मधुरअक्षर जापडतेहैं एवं जिनकी वित्तभित्तियोंपर आपकी मूर्ति लिखजाती है, उन लोगोंके लिये निराकार ब्रह्मपदकी प्राप्तिभी कुछ दुर्घट नहीं है ॥ ३९ ॥ हे स्वर्ग—अपवर्ग—सुखसंततिके दानदक्ष ! शेषशायिन् ! श्रीपते ! इस भूलोकमें जो लोग आपको सर्वदैव भजते रहते हैं, स्वर्गमें इन्द्र, यम, कुबेर प्रभृति देवगण सदैव उनको संमानित करते हैं ॥ ४० ॥ हे कमलायतलोचन ! पद्मपाणे ! जो लोग निरंतर आपका स्तवगान करते हैं सिद्धअप्सरा और देवतागणभी स्वर्गमें उनकी बडाईही किया करते हैं, हे सर्वसिद्धिप्रद ! आपको छोडकर मुक्तिलक्ष्मीका दान दूसरा कौन करताहै ? ॥ ४१ ॥ हे निजमायावशलीलारूपधारिन् ! विरिंचनमस्कृतचरणयुगल ! आपही क्षणमात्रमें इस संसारको सिरजते पालते और संहार करते हैं; हे सर्वश्रेष्ठ ! आपही जगत् और जगत्के नाथ, एवं जगत्के बीज हैं; अतएव आपहीको मैं नित्य प्रणाम करताहूं ॥ ४२ ॥ हे दनुजेन्द्ररिपो ! आपही स्तुतिकर्ता, और आपही स्तुति, और आपही स्तुतिके पात्रहैं, अतएव अकेले आपही सब कुछहैं, हे विष्णो ! मुझे तो आपसे भिन्न कुछभी नहीं समझाई पडता, (अतः) हे भवनाशक ! आप मेरी संसारजनित तृष्णाको दूर करदेवें ॥ ४३ ॥ इस प्रकारसे महातपस्वी अग्निबिन्दु ऋषि हृषीकेशकी स्तुति करके चुपचाप खडे होगये, तब वरदायक विष्णुने उस मुनिसे कहा ॥ ४४ ॥ श्रीविष्णु कहनेलगे—हे महातपोनिधे ! परमप्राज्ञ ! अग्निबिन्दो ! मैं बडाही प्रसन्न हूं, तुम्हारे लिये मुझे कुछभी अदेय नहीं है अतः तुम वरमाँगो ॥ ४५ ॥ अग्निबिन्दुने कहा—हे वैकुंठनाथ ! जगन्नायक ! भगवन् ! कमलाकांत ! यदि आप (मुझपर) प्रसन्नहैं, तो मैं जो प्रार्थना करताहूं वही दीजिये ॥ ४६ ॥ इसके अनंतर भगवान् विष्णुने भौं हिलाकर उस तपस्वीको जब अनुमति दी, तब उसने प्रसन्न मनसे प्रणाम करके केशवसे यह प्रार्थनाकी ॥ ४७ ॥ हे नाथ ! आप यद्यपि सर्वव्यापीहैं, पर विशेषकरके सभी जन्तुओंके और मुमुक्षुलोगोंके हितार्थ इस पंचनद तीर्थपर निवास कीजिये ॥ ४८ ॥ हे माधव ! विचार न करके आप यह वर मुझे देदेवें, मैं आपके चरणकमलकी भक्तिको छोडकर और कुछभी नहीं चाहता ॥ ४९ ॥ इसप्रकारसे उस अग्निबिन्दु ऋषिकी वरप्रार्थनाको सुनकर मधुसूदन माधवने प्रीतहोकर परोपकारके लिये "तथास्तु" कहदिया ॥ ५० ॥ विष्णुने कहा—हे मुनिश्रेष्ठ ! अग्निबिन्दो ! काशीके भक्त मनुष्योंको मुक्तिमार्गका

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

देश करताहुआ मैं इस स्थानपर अवश्य (बना) रहूंगा ॥ ५१ ॥ हे मुने ! तुम मेरे बडेही दृढभक्तहो, अतएव मुझपर तुम्हारी (ऐसीही) दृढभक्ति बनीरहेगी, पर मैं प्रसन्नहूं, इससे औरभी कुछ वर माँगलो, मैं तुमको वही देदूंगा ॥५२॥ हे तपोनिधे! मैं तो पहिलेहीसे यहाँपर रहाचाहताथा, तिसपर अब तुम्हारे प्रार्थना करनेसे तो हमैं सदैव निवास करूंगा ॥ ५३ ॥ यदि कुछभी समझ होगी तो काशीमें पहुँचकर कौन दुर्बुद्धिजन इसे त्यागसकताहै ? क्योंकि अमूल्य माणिक्य पाकर उसे छोड भला कौन कांच लेनेकी इच्छा करसकताहै ? ॥ ५४ ॥ बहुत थोडे परिश्रमसे अवश्य नश्वर शरीरके पात (व्यय) मात्रसे, यहाँपर जैसी झटपट मुक्ति मिलजातीहै अन्यत्र वैसी कहाँहै ? ॥ ५५ ॥ प्राज्ञलोग, यहाँपर जरासे जीर्ण मट्टीकी देहके बदलेमें निर्जर अमृतदेहको क्यों नहीं ग्रहण करलेते ? ॥ ५६ ॥ अन्य किसीस्थानमें तपस्या दान अथवा बडी दक्षिणासे पूर्ण बहुतेरे यज्ञोंसेभी वह मोक्षलाभ नहीं होता जो कि काशीमें केवल शरीरत्याग करनेहीसे मिलजाताहै ॥ ५७ ॥ संयतचित्त योगीलोग योगाभ्यास करते रहनेपरभी एकही जन्ममें मुक्तिको नहीं पाजाते, पर काशीमें केवल शरीरत्याग करनेहीसे मुक्त होजातेहैं ॥ ५८ ॥ काशीमें मृत्यु होनीही महादान, बडी तपस्या और सर्वश्रेष्ठव्रतहै ॥ ५९ ॥ संसारमें वही पंडित, वही जितेन्द्रिय, और वही धन्य पुण्यवान् है, जो काशीको पाकर फिर न छोडे ॥ ६० ॥ हे मुने ! जबलों काशीहै तबतक मैं यहाँ बनारहूंगा, और शिवके त्रिशूलाग्रपर स्थित होनेसे इस (काशी) का प्रलयकालमेंभी विनाश नहीं होता ॥ ६१ ॥ महामुनि अग्निबिन्दुने विष्णुके इस वचनको सुन रोमांचित होकर कहा, मैं फिर दूसरा वर माँगताहूं, ॥ ६२ ॥ हे माधव ! इस शुभस्थान पंचनदतीर्थपर आप मेरे नामके साथ रहकर भक्त तथा अभक्त लोगोंकोभी मुक्तिदान करते रहिये ॥ ६३ ॥ जो लोग इस पंचनद तीर्थमें स्नानकर देशान्तरमेंभी जाय मरें, उनकोभी आप मुक्ति देदेवें ॥ ६४ ॥ जो मनुष्य पंचनद तीर्थमें स्नानकर आपको भजें उन लोगोंको संपत्तिरूपा चला और मुक्तिरूपा निश्चल दोनोंविधकी लक्ष्मी कभी न त्यागें ॥ ६५ ॥ श्रीविष्णु बोले—हे मुने ! अग्निबिन्दो ! तुमने जो वरप्रदान माँगा वही होगा, लक्ष्मीके सहित मेरे नामके साथ तुम्हाराभी आप नाम रहेगा ॥ ६६ ॥ काशीमें त्रैलोक्य विश्रुत " बिन्दुमाधव " ऐसा मेरा नाम पडेगा जो बडेसे बडे पापपुंजोंका घातक होगा ॥ ६७ ॥ जो पुण्यात्मा लोग इस पवित्र पंचनद ह्रदपर सर्वदा मेरा पूजन करेंगे उन्हें संसारका भय कहाँहै ? ॥ ६८ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

७७

जो लोग पंचनदतीर्थपर मुझे हृदयमें रक्खेंगे, धनरूपा, और मोक्षरूपाभी लक्ष्मी उनके पासमें सदा बनी रहेगी ॥ ६९ ॥ जो लोग पंचनदतीर्थपर पहुँचकर धनसे ब्राह्मणोंको संतुष्ट नहीं करते थोडेही दिनोंमें मृत्यु प्राप्त होनेपर उनका वह धन रोनेलगताहै ॥ ७० ॥ जो कोई मेरे समीपमें पहुँचकर मुझे द्रव्य चढादेतेहैं, इसलोकमें वेही लोग धन्य और कृतकृत्य होतेहैं ॥ ७१ ॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! अग्निबिन्दो ! सर्वपातक नाशक यह तीर्थभी तुम्हारेही नामसे बिन्दुतीर्थ कहाजावेगा ॥ ७२ ॥ जो कोई ब्रह्मचर्यके साथ कार्तिकमासमें सूर्योदयके पहिलेही इस बिन्दुतीर्थमें स्नान करलेवेगा उसे यमराजकी डर कहां है ? ॥ ७३ ॥ मनुष्य मोहवश चाहे सहस्रों पाप करकेभी कार्तिक मासके बीच इस धर्मनदमें नहालेवे तो क्षणमात्रमें निष्पाप होजाताहै ॥ ७४ ॥ जबतक यह शरीर स्वस्थ रहे, और जबलों इन्द्रियाँ विकल न होजावें तबतक व्रतका अनुष्ठान करे, क्योंकि देहका फल तो व्रतही है ॥ ७५ ॥ यह अपवित्रताका पात्र गात्र (शरीर) एकभक्त, नक्त, अयाचितव्रत एवं उपवास करके शोधनीयहै ॥ ७६ ॥ कृच्छ्रचान्द्रायण इत्यादि व्रत यत्नपूर्वक करने चाहिये, क्योंकि उन व्रतोंके आचरण करनेसे यह अशुद्धभी शरीर शुद्ध होजाताहै ॥ ७७ ॥ व्रतोंसे शुद्ध कीहुई देहमें धर्म स्थिररूपसे वास करताहै, फिर जहाँ धर्म बनारहताहै वहाँपर मोक्षके साथ अर्थ और कामभी वर्तमान रहते हैं ॥ ७८ ॥ अतएव चतुर्वर्गके फल चाहनेवाले लोगोंको सदैव धर्मके साधनरूप व्रतोंका आचरण करनाही चाहिये ॥ ७९ ॥ यदि मनुष्य सर्वदा व्रत न करसके तो चातुर्मास्य प्राप्त होनेपर अवश्यही करे ॥ ८० ॥ भूमिपर शयन, ब्रह्मचर्य और कुछ एक भोजन निषेध, एकबार भोजनका नियम, अपनी शक्तिभर नित्यदान ॥ ८१ ॥ पुराणश्रवण, उसके कथनानुसार आचरण, अखंड दीपदान, और इष्टदेवताकी महापूजा करे ॥ ८२ ॥ बुद्धिमान् जन, बहुतसे अंकुर और बीजोंसे परिपूर्ण स्थानमें आवागमनको यत्नपूर्वक वर्जन करे ॥ ८३ ॥ जो कोई चातुर्मास्य व्रतको धारण करे वह (चाण्डाल म्लेच्छादि) असंभाष्य लोगोंसे बातचीत न करे, सदैव मौनही रहे, अथवा सत्यही बोले ॥ ८४ ॥ पछोरकर बनायेहुए धान्य, मसूर और कोदव इत्यादि अन्नोंको व्रतीजन न खावे, सदा पवित्रभावसे रहे, जो व्रत न करताहो उसे स्पर्श न करे ॥ ८५ ॥ एवं दाँत, केश और वस्त्र इत्यादिको नित्यही यत्नसे धोडाले, और व्रतकर्ता अपने मनमें कभी अनिष्टचिंता न करे ॥ ८६ ॥ बारहों मास व्रत-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

करनेवालेको जो फल होताहै, चातुर्मास्यके व्रतीकोभी वही समूचा फल प्राप्त होजाता है ॥ ८७ ॥ यदि चातुर्मास्यभरभी व्रत करनेकी शक्ति नहोवे तो पूर्णवर्षभरके व्रतफलको चाहनेवाला कार्तिकमासमें व्रत करे ॥ ८८ ॥ जिस मूढबुद्धिजनका कार्तिक मास व्रतके बिनाही बीत जाताहै, उन सूकरात्मालोगोंमें लेशमात्रभी पुण्य नहीं रहजाता बडा पुण्यवान् प्राणी कार्तिकमास उपस्थित होनेपर यथाशक्ति कृच्छ्र, अति ॥८९॥ कृच्छ्र प्राजापत्य (जोही बनपडे वही) व्रतकरे ॥९०॥ व्रती नर कार्तिकमासमें एकान्तरव्रत, त्रिरात्रव्रत, पंचरात्रव्रत, सप्तरात्रव्रत, पक्षव्रत अथवा मासोपवास व्रत करे, व्रतहीन होकर किसीको कहींपरभी कार्तिक मास व्यर्थ नहीं बिताना चाहिये ॥९१॥ ॥ ९२ ॥ कार्तिकमास आनेपर व्रतकर्ताजन शाकभोजन, दुग्धभोजन, फलाहार अथवा जब अन्नको भक्षण करे ॥ ९३ ॥ एवं व्रती मनुष्य कार्तिकमासमें नित्य और नैमित्तिक स्नान करे, और महाफलार्थी हो तो समूचा कार्तिक मास ब्रह्मचर्य करके बितादेवे ॥ ९४ ॥ जो कोई केवल कार्तिकभरभी पवित्रचित्तसे ब्रह्मचर्य निबाहताहै, उसे समूचे वर्षभरके ब्रह्मचर्य करनेका फल होताहै ॥ ९५ ॥ योंही जिस किसीने उपवासोंको करके एकभी कार्तिकमास काटडाला, वह मानों पूरे वर्षभरका व्रत करचुका ॥ ९६ ॥ जो लोग केवल शाक भोजन अथवा पयोमात्र आहारसे कार्तिकमासको बितादेतेहैं, उन सबको उन्हीं वस्तुओंके भोजनसे समस्तवर्ष बितादेनेका फल होताहै ॥ ९७ ॥ कातिकभर पत्तलहीपर खाना चाहिये और काँसेका बर्तन बडे यत्नसे छोडदेवे, क्योंकि जो व्रती होकरभी काँसेहीमें भोजन करताहै, उसे व्रतका फल नहीं मिलता ॥ ९८ ॥ कांस्यपात्र त्यागनेका नियम करनेपर घृतसे पूर्ण कांस्यपात्रका दान करे, और कार्तिकमें अत्यंत नीचगति देनेवाले मधुकोभी न खावे ॥ ९९ ॥ मधुको त्यागनेपर घृत और शक्करके सहित खीर देवे, योंही कातिकमें तेल देहके लगाने और खानेमेंभी छोड देनाचाहिये ॥ १०० ॥ हे अनघ ! कार्तिकमें जो कोई तेल लगाताहै वह नरकभागी होताहै, तेल छोडनेपर द्रोण (चार पसेरी ॥) भर तिल और कुछ सुवर्णभी देना चाहिये ॥ १ ॥ जो कोई कातिकमें मत्स्य खाताहै, वह तिमिनामक मछरीकी योनिमें जाताहै, और जो कि कार्तिकमें मांस खाताहै वह पूय शोणितमें कृमि होताहै ॥ २ ॥ जो राजालोग मांस खातेहों वेभी कातिकमें छोडदेवें, कातिकमें मत्स्यमांस त्यागकर व्रतमें तत्पर होनाचाहिये ॥ ३ ॥ कार्तिकमें मत्स्य मांस भोजनके दोषसे अवश्यही बाहर (सर्प) होना पडताहै, व्रती कार्तिकमें मत्स्य

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

७९

मांसके नियम करनेपर माष (उरदी) और सुवर्णके सहित दश कोंहडा देवे ॥ ४ ॥ जो कि कार्तिकमें मौनहोकर खाताहै वह तो अमृतही भोजन करताहै, मौनव्रतीको तिल और सुवर्णके साथ उत्तम घंटा देनाचाहिये ॥ ५ ॥ जो व्रतकर्ता कार्तिकमें लवणको त्याग देवे, उसे सब रसोंके छोडदेनेका फल होताहै, अलोना करनेवालेको अन्तमें गोदान करना चाहिये ॥ ६ ॥ कार्तिकमें जो व्रती भूमिशय्या करताहै, उसे फिर भूमिपर जन्मना नहीं पडता, भूशायीको तोषक (तुराइ) तकियाके साथ पलंग-दान करना उचितहै ॥ ७ ॥ जो कोई घृतवर्ति संयुक्त अखंडदीप कार्तिकभर देता जावे तो उसे मोहके अंधकारमें पडजानेपरभी दुर्गति नहीं भोगनी पडती ॥ ८ ॥ जिसकिसीने कार्तिकमें दीपावली चन्द्रिका रातमें करदी, उसे कभी तामिस्र अथवा अंधतामिस्र नरकको नहीं देखना पडता ॥ ९ ॥ कार्तिकमें दीपदान करनेसे पापरूप अन्धकारपर क्रोधित होकर व्रतीजन क्रोधांधित मुख यमराजको नहीं देखने पाता है ॥ ११० ॥ जो कोई मेरे सन्मुख उज्जर बत्तीका दीया बालताहै, वह सचराचर त्रैलोक्यको ज्योतिर्मयही देखताहै ॥ ११ ॥ जो मनुष्य कार्तिकमें पंचामृतके घड़ोंसे मुझे स्नान कराता है, वह पुण्यवान् क्षीरसमुद्रके तटपर जाकर कल्पभर वास करताहै ॥ १२ ॥ कार्तिक मासकी प्रत्येक रात्रिमें मेरे आगे भक्तिपूर्वक दीपावली करदेनेसे गर्भके अन्धकारमें नहीं पड़ना होता ॥ १३ ॥ जो कोई कार्तिकमें घीके बत्तीका दीया मेरे आगे बार देताहै, महामृत्युके भय होनेपरभी उसकी बुद्धिमें कुछ भ्रम नहीं पड़ता ॥ १४ ॥ जो लोग कार्तिकमें भक्तिपूर्वक (इस) बिन्दुतीर्थमें नहाकर मेरी यात्रा करतेहैं, उनसे मोक्षभी कुछ दूर नहीं रहजाताहै ॥ १५ ॥ हे दैत्येन्द्रविघातक ! दामोदर ! कार्तिक मासमें विधिपूर्वक नहायेहुए मुझ व्रतीके (इस) अर्घ्यको लीजिये ॥ १६ ॥ हेकृष्ण ! पापके सुखादेनेवाले कार्तिकमें नैमित्तिक स्नान करनेपर मेरे दिये हुये इस अर्घ्यको आप राधिकाके सहित ग्रहण करें ॥ १७ ॥ इन दोनों मन्त्रोंको कहकर जो कोई पुण्यात्मा सुवर्ण, रत्न, पुष्प और जलसे, युक्त शंखके द्वारा मुझे अर्घ्य देताहै ॥ १८ ॥ उसे उत्तमपर्वमें सुपात्रको संकल्पका जल लेकर सुवर्णसे पूर्ण पृथिवीदानका पूरापूरा फल मिलताहै ॥ १९ ॥ मेरी प्रबोधिनी (डिठवन) एकादशी प्राप्त होनेपर बिन्दुतीर्थमें स्नानकर रात्रिमें जागरण करताहुआ ॥ १२० ॥ बहुतसे दीयोंको बालकर और यथाशक्ति मुझे अलंकृत कर, नाच, गाने, और बजानेके बिनोद तथा पुराण इत्यादिके श्रवणसे ॥ २१ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बडाभारी महोत्सव करे जबतक कि, तिथि पूर्ण न होजावे, फिर वहांपर मेरी प्रीतिके लिये बहुतसा अन्नदान करे तो वह मनुष्य ॥ २२ ॥ महापातकी होनेपरभी फिर स्त्रीके पेटमें प्रवेश नहीं करता। बिन्दुतीर्थमें स्नान करके जो कोई यहाँपर बिन्दु-माधव नामसे मेरी पूजा करताहै वही निर्वाणको प्राप्त होताहै. हे मुने ! सत्ययुगमें मैं आदिमाधवके नामसे पूज्य हूं ॥ २३–२४ ॥ त्रेतामें मुझे सर्वसिद्धिदायक अनंत-माधव नामसे समझना चाहिये, द्वापरमें परमार्थकर्तामैंही श्रीदमाधवसंज्ञक हूं, ॥२५॥ और कलियुगमें कलिमलध्वंसी बिन्दुमाधव मुझे जानना चाहिये, कलियुगमें मनुष्य लोग पापी होनेसे मुझे नहीं समझ सकते हैं ॥ २६ ॥ मेरीही मायासे मोहित जो लोग भेदवादमें तत्पर होकर मेरी भक्ति करतेहुए विश्वेश्वरसे करतेहैं ॥ २७ ॥ वे सब मेरेही शत्रुहैं, और वे अन्तमें पिशाचपदके भागी होतेहैं, फिर, पिशाचयोनि पानेपर कालभैरवकी आज्ञासे ॥ २८ ॥ तीस सहस्र वर्ष पर्यंत दुःखसागरमें रहकर अन्तमें फिर विश्वेश्वरहीके अनुग्रहसे मोक्षको प्राप्त होजातेहैं ॥ २९ ॥ अतएव परमात्मा विश्वेश्वरपर द्वेषकी बुद्धि, न करे, क्योंकि जो पुरुष विश्वनाथका द्वेषी होताहै उसका कोई प्रायश्चित्तभी नहीं होसकता ॥ ३० ॥ जो अधमलोग इस लोकमें मनसेभी विश्वेश्वरसे द्वेष रखतेहैं, वे मरजानेपर परलोकमेंभी निरंतर अंधतामिस्र नरकमें वास करतेहैं ॥ ३१ ॥ जो लोग शिवके निन्दक होतेहैं, अथवा शैवलोगोंकी निन्दा करतेहैं, वे सब मेरेही द्वेषी समझे जानेके योग्यहैं, और वे घोर नरकमें पतित होतेहैं ॥ ३२ ॥ जो लोग विश्वेश्वरके निन्दक होतेहैं, वे अट्ठाईस करोड़ नरकोंमें क्रमक्रमसे कल्पकल्पभर वास करतेहैं ॥

चौपाई–"शिवद्रोही मम दास कहावै । सो नर सपनेहु मोहिं न पावै ।
शंकर विमुख भक्ति चह मोरी । सो नर मूढ़ मन्दमति थोरी ॥
दोहा–शंकरप्रिय मम द्रोही, शिवद्रोही मम दास ।
ते नर करहिं कल्पभर, घोर नरकमहँ वास ॥" (तु.रा.) ॥३३॥

हे मुने ! मैं भी विश्वेश्वरहीकी दयासे मुक्ति दानमें समर्थ हुआहूं, अतएव मेरे भक्तोंको तो विशेषरूपसे सर्वदैव विश्वेश्वरकी सेवा करनी चाहिए ॥ ३४ ॥ हे ऋषे ! इस वाराणसीको महादेवकी राजधानी समझनी चाहिये, इसी कारणसे मोक्षार्थियोंको काशीमें महादेवहीका सेवन करना उचितहै ॥ ३५ ॥ इस पंचनदतीर्थमें स्वयं भगवान् विश्वेश्वरभी गणराज, स्कन्द और पारिजनके सहित सदैव कार्तिक-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

८१

मासमें स्नान करतेहैं ॥ ३६ ॥ चारोंवेद और यज्ञोंके साथ साक्षात् ब्रह्मा, एवं ब्रह्माणी इत्यादि मातृगण, तथा समस्तनदियोंके सहित समुद्रगण, कार्तिकभर इस धूतपाप-क्रतीर्थमें नहातेहैं ॥ ३७ ॥ त्रैलोक्यभरमें जितने सचेतन देहधारीहैं, वे सबके सब कार्तिकमासमें इस धूतपापक तीर्थमें नहानेके लिये आतेहैं ॥ ३८ ॥ शुभमय कार्तिक मासमें जिन्होंने पंचनदतीर्थमें स्नान नहीं किया, उन शरीरधारियोंका जन्म तो जलके बुलेसा वृथाही बीतगया ॥ ३९ ॥ हे महामुने ! अग्निबिन्दो ! (सबसे) पवित्र तो आनन्दवनही है, उसमेंभी पंचनदतीर्थ औरभी पवित्रहै, वहाँपरभी मेरा सांनिध्य तो अत्यं-तही पवित्रहै ॥ १४० ॥ हे महाप्राज्ञ ! इसी अनुमानसे पंचनदतीर्थका सब तीर्थोंसे उत्तमोत्तम माहात्म्य समझलो ॥ ४१ ॥ जिसके सुननेसे महामूर्ख जनभी बड़े बड़े पापोंसे छूटजाताहै, उस अग्निबिन्दु महामुनिने विष्णुके मुखसे इस कथाको सुनकर ॥४२॥बिन्दुमाधव रूप भगवान् अच्युतको प्रणाम करके फिर (यह) पूछा ॥४३॥ अग्निबिन्दु बोले—हे भगवन् ! बिन्दुमाधव ! इस काशीमें आपकी कैसी कैसी मूर्तियाँ वर्तमानहैं, हे जनार्दन ! यह मैं सुना चाहताहूं, आप कहिये ॥ ४४ ॥ और हे अच्युत ! कौन कौनसे आपके रूप अभी होनेवालेहैं, ? जिनका पूजन करके आपके भक्तलोग कृतार्थ होंगे, कृपापूर्वक आप मुझसे उनकाभी वर्णन कीजिए ॥ १४५ ॥

दोहा—अग्निबिन्दु मुनि धन्य भे, मेलेउ हरिमें नाम ।
तबाहिं बिन्दुमाधव भये, द्वैत विशिष्ट निकाम ॥ १ ॥
मसजिद "अवरंगजेबकी," कही जाय कुछ और ।
माधोजीको "धरहरा," है प्रसिद्ध सब ठौर ॥ २ ॥
वही धरहरा धर्मकर, है फरहरा समान ।
भुज उठाय काशी कहै, हरिहर दोउ न आन ॥ ३ ॥
पँचगंगा पर स (छ) त्रयुत, मन्दिर देखन जोग ।
दरशन माधोरायको, देत बहुत फल भोग ॥ ४ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्द्धे भाषायां श्रीबिन्दुमाधवकथा वर्णनं नाम षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६० ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

एकसठवाँ अध्याय ।

विष्णुके तीर्थोंका माहात्म्य और मूर्तियोंका भेदवर्णन ।

श्री अगस्त्यमुनि बोले कि—हे षडानन ! पापनाशक बिन्दुमाधवका उपाख्यान और पंचनदतीर्थकी उत्तम महिमा पूर्णतया मैंने सुनी ॥ १ ॥ अब आप अग्निबिन्दुके पूछनेपर दानवसूदन माधवने जो उत्तर कहाथा उसे कीर्तन कीजिये ॥ २ ॥ स्कन्दने कहा—हे अगस्त्य ! महर्षे ! भगवान् माधवने अग्निबिन्दु मुनिसे जैसा कहाथा, मैंभी संप्रति तुमसे कहताहूं, श्रवण करो ॥ ३ ॥ बिन्दुमाधवने कहा—हे महापंडित ! अग्निबिन्दो ! प्रथमतः तो मुझे भक्तलोगोंके मुक्तिदाता आदिकेशवरूपको पादोदक तीर्थपर समझना चाहिये ॥ ४ ॥ जो लोग अमृतस्वरूप अविमुक्तक्षेत्रमें मेरे आदिकेशवरूपका पूजन करतेहैं, वे सब दुःखोंसे रहित होकर अन्तमें अमृत पदको प्राप्त होतेहैं ॥ ५ ॥ आदिकेशव, दर्शनहीसे पापनाशक संगमेश्वरनामक महालिंगकी स्थापना कर मनुष्योंको सदैव भोग और मोक्षका दान करते रहतेहैं ॥ ६ ॥ पादोदकतीर्थके दक्षिण एक श्वेतद्वीपनामक महातीर्थहै, वहाँपर मनुष्योंको ज्ञानदेनेके लिये, मैं ज्ञानकेशव नामसे विराजमान रहताहूं ॥ ७ ॥ ज्ञानकेशवके समीप श्वेतद्वीप तीर्थमें स्नान करनेसे और ज्ञानकेशवकी पूजा करनेसे मनुष्य कभीभी ज्ञानसे भ्रष्ट नहीं होता ॥ ८ ॥ फिर गरुडतीर्थपर मैं तार्क्ष्यकेशव नामा हूं, जो उत्तम जन भक्तिपूर्वक वहांपर मेरी पूजा करतेहैं, वे गरुडहीके समान मेरे प्रीतिपात्र होजातेहैं ॥ ९ ॥ यहीं उसी स्थानपर नारदतीर्थमें मैं नारदकेशवके नामसे रहताहूं, और उस तीर्थके स्नान करनेवालोंको ब्रह्मविद्याका उपदेश करता रहताहूँ ॥ १० ॥ वहांहीपर प्रह्लादतीर्थहै, जहाँपर मैं प्रह्लादकेशवके नामसे व्यवस्थित हूं, बडी भक्तिकी समृद्धिके लिये भक्तलोगोंको वहांपर मेरी पूजा करनी चाहिये ॥ ११ ॥ उसके आगे अंबरीषतीर्थपर आदित्यकेशव नामसे मैं पापान्धकारके समूहको दर्शनमात्रसे विध्वंस करडालताहूं ॥ १२ ॥ दत्तात्रेयेश्वरके दक्षिण मैं आदिगदाधर रूपसे रहताहूं और वहांपर भक्तोंके संसाररूपी रोगराशिको दूर करदेताहूं ॥ १३ ॥ उसी स्थानपर भार्गवतीर्थहै, जहाँपर मैं भृगुकेशवके नामसे वास करताहूं, और काशीमें वासकरनेवाले मनुष्यके मनोरथोंको भरपूर करदेताहूं ॥ १४ ॥ शुभेच्छुलोगोंको अभीष्टफलदायक वामननामक महातीर्थपर मुझे वामनकेशव नामसे पूजना चाहिये ॥ १५ ॥ फिर नरनारायण तीर्थपर मैं नरनारायण नामसे बना रहताहूं, जो भक्तगण वहांपर मेरा पूजन करतेहैं, वे नरनारायणके स्वरूप

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

८३

पही होजातेहैं ॥ १६ ॥ मैं यज्ञवाराहतीर्थपर यज्ञवाराहनामक हूं, जो लोग सब यज्ञोंका फल चाहें, वे हमारी पूजा करें ॥ १७ ॥ काशीके विघ्नोंके विदारक विदारनरसिंहनामक मुझे इसी नामके तीर्थपर तीर्थके उपद्रव शान्तकरनेके लिये सेवन करना योग्यहै ॥ १८ ॥ गोपीगोविन्द तीर्थपर भक्तिपूर्वक गोपीगोविन्दनामसे मेरी अर्चना करनेवाला मनुष्य मेरी मायामें नहीं पड़ता ॥ १९ ॥ हे मुने! लक्ष्मीनृसिंह नामसे उसी नामके पावन तीर्थपर मैं भक्तियुक्त लोगोंको सर्वदा मोक्षलक्ष्मी दियाकरताहूं ॥ २० ॥ अघहारी शेषतीर्थपर मैं शेषमाधवसंज्ञक होकर भक्तोंके अशेष विशेष चिंतितोंको देतारहताहूं ॥ २१ ॥ शंखमाधवतीर्थमें स्नान करके शंखके जलसे मुझे शंखमाधवको नहवादेनेसे मनुष्य शंखनिधिका अधीश्वर होजाता है ॥ ॥ २२ ॥ मैं हयग्रीवतीर्थपर हयग्रीवकेशवनामकहूं, वहांपर मुझे प्रणामभी करदेवे तो निश्चयही विष्णुका वह परमपद प्राप्त करताहै ॥ २३ ॥ वृद्धकालेश्वरके पश्चिम ओर मैं भीष्मकेशव नामसे रहकर भक्तिपूर्वक सेवाकरनेसे बड़े भयंकर उपद्रवोंको दूर करदेताहूं ॥ २४ ॥ लोलार्कके उत्तरभागमें मैं निर्वाणकेशवसंज्ञक हूं, भक्तोंके निर्वाणकी सूचना करताहुआ चित्तकी चंचलताको हरण करताहूं ॥ २५ ॥ त्रैलोक्यसुन्दरी वंदीदेवीके दक्षिणकाशीमें विख्यात भुवनकेशव नामसे जो मेरी पूजा करे सो फिर कभी गर्भभागी न होवे ॥ २६ ॥ ज्ञानवापीके सन्मुखही मैं ज्ञानमाधव होकर विराजमान रहताहूं, भक्तिभावसे वहाँपर मेरा समर्चन करनेसे शाश्वत ज्ञान प्राप्त होताहै ॥ २७ ॥ विशालाक्षी देवीके समीपही मैं श्वेतमाधव नामसे भक्तिपूर्वक पूजन करनेपर श्वेतद्वीपेश्वरका रूपही बनादेताहूं ॥ २८ ॥ दशाश्वमेधसे उत्तर प्रयागतीर्थमें यथावत् स्नान करके जो कोई प्रयागमाधवरूपका दर्शन करताहै वह पापोंसे छूटजाताहै ॥ २९ ॥ माघमासमें प्रयागजानेसे जो फल सुनागयाहै, यहाँपर मेरे आगे स्नानकरनेसे वही फल दशगुण अधिक होताहै ॥ ३० ॥ गंगा और यमुनाके संगमपर स्नान करनेवालोंको जो पुण्य होताहै, काशीमें मेरे समीप इस तीर्थमें उसका दशगुणा पुण्य प्राप्त होताहै ॥ ३१ ॥ सूर्यग्रहण लगनेपर कुरुक्षेत्रमें अनेकदान करनेसे जो फल होताहै, काशीमें इसी स्थानपर उसका दशगुणा अधिक फल मिलजाताहै ॥ ३२ ॥ जहाँपर गंगा उत्तरवाहिनी और यमुना पूर्ववाहिनी है, उस संगमपर पहुँचतेही मनुष्यकी ब्रह्महत्याभी छूट जातीहै—(रघुवंशमें सीताके प्रति रामका वाक्यहै) "समुद्रपत्न्योर्जलसन्निपाते, पूतात्मनां यत्र किलाभिषेक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कात्॥ तत्त्वावबोधेन विनापि भूयस्तनुत्यजां नास्ति शरीरबन्धः ॥ ३३॥" वहांपर केशमुंडन और पिंडदान एवं अनेकप्रकारके दान बहुत भावसे बडे फल चाहनेवालेको करना योग्यहै ॥ ३४ ॥ प्रजापति—क्षेत्र प्रयागराजमें जो सब गुण कहेगयेहैं, वे सब अविमुक्त महाक्षेत्रमें अगणित होजातेहैं ॥ ३५ ॥ प्रयागमें सब कामनाओंका दाता प्रयागेश्वरनामक एक महालिंग विराजमान है, उसीके सान्निध्य होनेसे वह तीर्थ कामद कहाजाताहै ॥ ३६ ॥ सूर्यके मकरराशिमें चलेजानेपर माघमासमें जिन लोगोंने अरुणोदयके समय काशीके प्रयाग तीर्थमें स्नान नहीं किया, उनको भला मोक्ष कहांसे मिलेगा ? ॥ ३७ ॥ जो लोग काशीके प्रयाग तीर्थपर माघमासमें संयम होकर नहातेहैं उन्हें दश अश्वमेध यज्ञोंके करनेका फल अवश्यही होताहै ॥ ३८ ॥ माघमासमें प्रयाग (दशाश्वमेध घाट) पर नहाकर जो सदैव भक्तिपूर्वक प्रतिदिन प्रयागमाधव और कामप्रद प्रयागेश्वरका पूजन करते हैं ॥ ३९ ॥ वे लोग इस लोकमें धन—धान्य पुत्र और संपत्तियोंको पाकर परमआनंदसे मनोरम भोगोंको भोगतेहुए अंतमें मोक्षकोभी प्राप्त करलेते हैं ॥ ४० ॥ माघमें पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण नीचे और ऊपरके समस्त तीर्थ प्रयागराजमें चले जातेहैं॥ ४१॥ किन्तु हे मुने! वाराणसीमें जितने तीर्थ स्थित हैं वे कहीं नहीं जाते, और जाते भी हैं तो परमोत्तम केवल इन्हीं तीनों तीर्थोंमें जातेहैं ॥ ४२ ॥ प्रथम तो महापापनाशक और परममंगल दायक पंचनदतीर्थपर प्रतिदिन प्रातःकाल मेरे समीपमें आतेहैं ॥ ४३ ॥ फिर अघहारी माघमासमें प्रयागेश्वरके सन्निकट प्रयागतीर्थपर मेरे पासहीमें सब तीर्थ स्नान करतेहैं ॥ ४४ ॥ और फिर तो सभी तीर्थगण नित्यही मध्याह्न वेलामें मुक्तिदात्री मणिकर्णिकापर स्नान करनेके लिये जातेहैं ॥ ४५ ॥ हे मुनिवर ! अपने अपने समयपर काशीमें ये तीनोंही तीर्थ जैसे श्रेष्ठहैं वह गुप्तबात मैंने विशेषरूपसे तुमसे कहदी ॥ ४६ ॥ अब एक औरभी गूढविषय तुमसे कहताहूं पर उसे जहाँही हो वहींपर नहीं कहदेना चाहिये, अर्थात् जो लोग भक्ति रखतेहों उनसे तो अवश्यही कहदेवे, पर जो भक्तिहीन हों उनसे कभी न कहे ॥ ४७ ॥ काशीमें सभी तीर्थ एकसे एक बढचढकर अपने अपने तेजसे बलपूर्वक बडेबडे पापोंको विनष्ट करडालतेहैं ॥ ४८ ॥ परन्तु वाराणसीका यह रहस्य मैं एक अंगुली उठाकर तुमसे बहुतही ठीक कहताहूं कि (सबतीर्थोंसे) एक मणिकर्णिकाही श्रेष्ठहै ॥ ४९ ॥ एकमात्र मणिकर्णिकाहीका बडा बल पाकर अपने अपने स्थानपर विराजमान सभी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

८५

तीर्थ (पापहरण करनेके लिये) गरजते रहतेहैं ॥ ५० ॥ काशीके समस्ततीर्थ पापियोंके बहुतही बडे बडे पापोंको काटकर प्रायश्चित्त करनेकी इच्छासे मध्याह्नके समय ॥ ५१ ॥ सब पर्वोंमें और पर्वोंके विनाभी नित्यही नियमके साथ मणिकर्णिकामें अवगाहन करके (धोधाकर) निर्मल होजातेहैं ॥ ५२ ॥ (कहांतककहें) प्रतिदिन मध्याह्नवेलामें भगवान् विश्वनाथभी भवानी (अन्नपूर्णा) के साथ मणिकर्णिकाहीमें स्नान करतेहैं ॥ ५३ ॥ हे मुने ! मैंभी नित्यशः मध्याह्नकालमें लक्ष्मीके सहित वैकुंठसे आकर बड़े आनंदसे मणिकर्णिकामें स्नान करताहूं ॥ ५४ ॥ किसीके एकबारभी मेरे नाम लेलेनेसे मैं उसका पाप हरण करनेके कारणही हरि कहाजाताहूं, सो यह प्रभाव केवल मणिकर्णिकाहीका है ॥ ५५ ॥ पितामह ब्रह्माभी मध्याह्नक्रिया करनेके लिये हंसपर आरूढ होकर प्रतिदिन सत्यलोकसे मणिकर्णिकापर आतेहैं ॥ ५६ ॥ इन्द्रादिक लोकपाल और मरीचि इत्यादि महर्षिगण मध्याह्नकर्म करनेके लिये (स्वर्गसे) मणिकर्णिकाही पर आतेहैं ॥ ५७ ॥ इसी मणिकर्णिकापर नागलोक (पाताल) से शेष और वासुकि इत्यादि नागलोग मध्याह्नके समय स्नान करनेके लिये आया करतेहैं ॥ ५८ ॥ (अधिक क्या कहें) समस्त चराचरोंमें जितनेही सचेतन प्राणी हैं वे सब मध्याह्नकी वेला मणिकर्णिकाके निर्मलजलमें स्नानकरतेहैं ॥ ५९ ॥ हे विप्र ! हम लोगभी जिसकी गणना करनेमें अशक्त हैं, मणिकर्णिकाके उन बहुत भारी गुणोंका कौन लोग वर्णन करसकतेहैं ? ॥ ६० ॥ जिन तपस्वियोंने जंगलोंमें बडी उग्रतपस्यायें संचयकीहैं, उन्हीं लोगोंने अन्तमें इस मुक्तिभूमि मणिकर्णिकाको प्राप्त किया है ॥ ६१ ॥ जो लोग अन्तअवस्थामें इस मणिकर्णिकाको पा सकें वेही नरश्रेष्ठ बडे दानियाँ कहेजातेहैं ॥ ६२ ॥ यथोक्तविधिके अनुसार जिन लोगोंने सब व्रत कर डालेहैं, भुव करके वेही सब मणिकर्णिकाकी सुकोमल भूमिको अपनी शय्या बनासके हैं ॥ ६३ ॥ वेही लोग इस मर्त्यलोकमें धन्यवादके पात्र और सब यज्ञोंमें दीक्षित होचुके हैं, जो अपने पुण्यसे उपार्जित सम्पत्तिको त्यागकर मणिकर्णिकाको देखसके हैं ॥ ६४ ॥ वास्तवमें जो लोग नानाप्रकारके इष्टापूर्त धर्मकर्मोंका अनुष्ठान करचुकेहैं, वेही लोग वृद्धावस्थामें मणिकर्णिकाको पा सकते हैं ॥ ६५ ॥ बुद्धिमान् जनको उचितहै कि, बडे यत्नसे रत्न, सुवर्ण, वस्त्र, हाथी, और घोडा इत्यादि वस्तु मणिकर्णिकापर दानकरे ॥ ६६ ॥ हे मुने ! मणिकर्णिकापर यदि धर्मपूर्वक उपार्जित थोडाभी द्रव्य दियाजावे तो वह नित्यही अक्षय बनारहताहै ॥ ६७ ॥ जो उत्तम मनुष्य एक-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बारभी इस स्थानपर विधिपूर्वक प्राणायाम करे, उसे परमउत्कृष्ट षडंगयोग साधनका फल प्राप्त होताहै ॥ ६८ ॥ योंही जो कोई मणिकर्णिकापर एक गायत्रीकाभी जप करसके, उसे दश सहस्र गायत्रीके जपनेका पुण्य होजाताहै ॥ ६९ ॥ जो प्राज्ञ-जन मणिकर्णिकापर एकभी आहुति देदेताहै, उसे जन्मभर अग्निहोत्र करनेका पूर्ण फल मिलजाताहै ॥ ७० ॥ इस प्रकारसे उस परमतपस्वी अग्निबिन्दु ऋषिने भगवान् माधवके वाक्यको सुनकर बडी भक्तिके साथ प्रणाम करके फिर पूछा ॥ ७१ ॥ हे माधव ! इस पुण्यभूमि मणिकर्णिकाका कितना परिमाणहै, आप मुझसे कहें, क्योंकि हे पुण्डरीकाक्ष ! आपसे बढकर कोई दूसरा तत्त्वज्ञ नहीं है ॥७२॥ श्रीविष्णुने उत्तर-दिया कि—(दक्षिण) गंगाकेशवसे (उत्तर) हरिश्चंद्रका मंडप, और (पूर्व) आधी-गंगासे (पश्चिम) स्वर्गद्वारतक मणिकर्णिकाकी सीमाहै॥ ७३ ॥ यह तो मोटापरिमाणहै, अब मैं उसका सूक्ष्मरूपभी तुमसे कहताहूं, हरिश्चन्द्रतीर्थके आगे हरिश्चन्द्र विनायकहैं॥७४॥ और वहींपर मणिकर्णिका कुण्डके उत्तरओर सीमाविनायक हैं, जो कोई उत्तम नर भक्तिपूर्वक मोदक आदि उपचारोंसे सीमाविनायकका पूजन कर मणिकर्णिकापर पहुँचे, और हरिश्चन्द्र तीर्थमें अपने पितरोंका तर्पण करे ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ तो उसके पूर्व पुरुष सौवर्षके लिये तृप्त होकर वांछित फल देतेहैं । जो मनुष्य श्रद्धापूर्वक हरिश्चन्द्र महा तीर्थमें स्नानकर ॥ ७७ ॥ हरिश्चन्द्रेश्वरको प्रणाम करे वह कभी सत्यसे भ्रष्ट नहीं होता, फिर पर्वतेश्वरके समीपहीमें पर्वत तीर्थ है ॥ ७८ ॥ जो महासुमेरुके रहनेका स्थान होनेसे महापापोंका नाशक है, वहांपर स्नान, शिवपूजन और यथाशक्ति दान करनेसे ॥ ७९ ॥ सुमेरु पर्वतके शिखरपर चढकर दिव्यभोगोंकी प्राप्ति होतीहै, आगे पर्वतेश्वरसे दक्षिणओर कंवलाश्व तीर्थ है ॥ ८० ॥ उस तीर्थके पश्चिमभागमें कंबलाश्वतरेश्वरनामक शिवहैं, उस तीर्थमें स्नानकर जो उस शुभप्रद लिंगकी पूजा करताहै ॥ ८१ ॥ उसके वंशमें जो लोग उत्पन्न होतेहैं, वे सब गानमें निपुण और श्रीमान् होतेहैं, वहींपर योनिचक्रकी निवारण करनेवाली चक्रपुष्करिणी विराजमान है ॥ ८२ ॥ जिसमें स्नान करनेसे मनुष्यको इस गहन संसारचक्रमें घुसना नहीं पडता, यह चक्रपुष्करिणी तीर्थही मेरा प्रधान वासस्थलहै, ॥ ८३ ॥ पहिले मैंने इसी तीर्थपर परार्ध वर्ष पर्य्यंत घोर तपस्या की थी, और वहींपर परमात्मा भगवान् विश्वे-श्वरको प्रत्यक्ष देखाथा ॥ ८४ ॥ फिर वहाँही अविनश्वर बडा ऐश्वर्य्य मुझे मिलाथा, और वही चक्रपुष्करिणी मणिकर्णिका नामसे प्रसिद्ध हुई है ॥ ८५ ॥ मैं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

८७

स्वरूपको त्यागकर प्रत्यक्ष स्त्रीरूप धारिणी मणिकर्णिका (देवी) को वहींपर देखाथा ॥ ८६ ॥ अब मैं भक्तोंके परममंगलदायक उसके रूपका वर्णन करताहूं, मनुष्य छहमास पर्यंत त्रिकाल जिसरूपके ध्यान करनेसे ॥ ८७ ॥ प्रत्यक्षरूपा मणिकर्णिका देवीका दर्शन पा सकते हैं, वह देवी चतुर्भुजा विशालनेत्रा भालमें नेत्रसे भूषित॥ ८८॥ नित्यही दो हाथोंको जोडेहुए पश्चिमाभिमुखी रहतीहै, उसके दाहिने हाथमें नीलकमलकी माला ॥ ८९ ॥ और वरदानके लिये उठाएहुए बायें हाथमें मातुलुंग (विजौरानींबू) का उत्तम फल शोभित रहताहै, वह सदैव बारह वर्षकी कुमारीका रूप धारणकिये रहतीहै ॥ ९० ॥ उसकी कांति शुद्ध स्फटिकके समान और केशपाशअत्यंतनीलवर्ण एवं बहुत चिकना रहताहै उसके बीचमें विकसित केतकीका पुष्प शोभायमान रहताहै, ओष्ठपल्लव मूँगा और माणिक्यसेभी बढ़कर रमणीय, और सर्वांगमें मुक्तालंकारको धारण किएहुए चंद्रकांतिके समान श्वेत वस्त्रको पहिने ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ और छातीपर शोभायमान कमलकी मालाको धारण किये हुई उस देवीका इस रूपसे मोक्षार्थियोंको अहर्निश ध्यान करना चाहिये ॥ ९३ ॥ क्योंकि मोक्षलक्ष्मीका मन्दिर श्रीमती मणिकर्णिकाही है, अब मैं भक्तकल्पद्रुमनामक उसके मंत्रको कहताहूं, जिसके जपनेसे मनुष्योंको आठों सिद्धियाँ सिद्ध होजातीहैं ॥ ९४ ॥ पहिले प्रणव फिर सरस्वती बीज, भुवनेश्वरी बीज, लक्ष्मीबीज, कामबीज, तब बिन्दुके सहित मकार और प्रणव संपुटित मणिकर्णिके नमः ऐसा पद उच्चारण करे ॥ ९५ ॥ यह पन्द्रह-अक्षरोंका मन्त्र कल्पद्रुमके समान जपकरनेहीके योग्यहै, शुद्ध बुद्धिवालोंको यह समस्त सुख और संततिका दाताहै, एवं अन्तमें परमपदभी देदेताहै ॥ ९६ ॥ और दूसरा मनुसंख्यक मंत्रहै (जो चौदही अक्षरोंसे होताहै), इसमें प्रथम प्रणव, तब बिन्दुसहित मकार फिर मणिकर्णिके प्रणवात्मिकेके अनंतर नमः पद रहताहै ॥ ॥ ९७ ॥ मोक्षाभिलाषी मनुष्योंको श्रद्धा और आदरके साथ सर्वदा इस मंत्रको जपना चाहिये, और बडी पवित्रताके साथ गौके घृतमें डुबाकर कमल और शक्करके सहित मधुसे दशांश होम करना चाहिये ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ जो कोई इस मंत्रका तीनलक्ष जप करलेताहै, वह देशान्तरमेंभी मृत्युको प्राप्त होनेपर इस मंत्रके प्रभावसे अवश्यही मुक्तिको पाजाताहै ॥ १०० ॥ नवों रत्नोंसे युक्त सुवर्णकी मूर्ति उक्तरूपके अनुसार बनाकर प्रयत्नपूर्वक पूजनी चाहिये ॥ १ ॥ और मोक्षार्थियोंको तो ऐसी मूर्तिकी पूजा अपने घरमें सदैव करनी चाहिये अथवा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पूजाके अनंतर उस मूर्तिको मणिकर्णिकामें फेंकदेनाचाहिये ॥ २ ॥ जो लोग संसारके भयसे डरे और श्रद्धामें बद्धादर पुरुष होवें उनको अथवा दूरदेश वासियोंकोभी यही उपाय करना चाहिये ॥ ३ ॥ जो कोई मनुष्य मणिकर्णिकामें स्नानकर मणिकर्णिकेश्वरका दर्शन करताहै, उसे फिर माताके गर्भकी यंत्रणा नहीं सहनी पडती ॥ ४ ॥ पूर्वकालमें मैंनेही अन्तर्गृहके पूर्वद्वारपर मणिकर्णिकेश्वरनामक लिंगकी स्थापना कीथी, अतएव मोक्षार्थियोंको उसकी पूजा करनी चाहिये ॥ ५ ॥ मणिकर्णिकासे पश्चिमओर पाशुपत तीर्थ है, वहाँ पर जलकी क्रियाओंको कर पशुपतीश्वरका दर्शन करना बहुत आवश्यकहै ॥ ६ ॥ वहींपर भगवान् शंकरने मुझे और ब्रह्मादिक देवतोंको पशुओंके पाश (बंधन) हरनेवाले पाशुपत योगका उपदेश दियाथा ॥ ७ ॥ अतएव पशुतुल्य जीवोंके मायापाश काटनेहीके लिये भगवान् पशुपतीश्वर लिंगरूप धरकर काशीमें नित्यही प्रकाशमान रहते हैं ॥ ८ ॥ जो लोग चैत्रमासकी शुक्ला चतुर्दशीके दिन पवित्र चित्तसे वहाँकी यात्रा और प्रयत्नपूर्वक रात्रिमें जागरण ॥ ९ ॥ और उपवासी होकर पशुपतिका पूजन एवं अमावस्यामें पारण करते हैं वे सब पशुओंके समान कभी बन्धनमें नहीं पडते ॥ १० ॥ इस पाशुपत तीर्थके आगे रुद्रावास तीर्थ है, वहांपर नहाकर रुद्रावासेश्वरनामक महादेवका पूजन करना उचित है ॥ ११ ॥ मणिकर्णिकेश्वरके दक्षिणदिशामें रुद्रावासेश्वरके पूजन करनेसे मनुष्य निस्सन्देह रुद्रावासमें निवास करताहै ॥ १२ ॥ उसके दक्षिणभागमें समस्त (विश्वभरके) तीर्थोंसे अधिष्ठित विश्वनामक तीर्थ है, जो कोई वहाँपर नहाकर विश्वनाथका दर्शन करे ॥ १३ ॥ फिर बडी भक्तिके साथ विश्वगौरी (अन्नपूर्णा) की पूजा करे वह विश्वमात्रका पूज्य और विश्वरूप होजाताहै ॥ १४ ॥ उसके अनंतर मुक्तितीर्थ है, जो मनुष्य वहांभी स्नानकर मोक्षेश्वरकी अर्चना करताहै, वह निस्सन्देह मोक्षको पाताहै ॥ १५ ॥ अविमुक्तेश्वरके पीछे मोक्षेश्वरका दर्शन करनेसे मनुष्य इस मर्त्यलोकमें फिर आवागमनसे रहित होजाताहै ॥ १६ ॥ मुक्तितीर्थसे थोडेही अन्तरपर अविमुक्तेश्वर तीर्थ है, मनुष्य वहांपर स्नानकर अविमुक्तेश्वरकी पूजा करनेसे मुक्त होजाताहै ॥ १७ ॥ फिर उसके अनंतर तारकतीर्थ है, जहाँपर स्वयं भगवान् विश्वेश्वर मृत जन्तुओंके कानमें अमृतात्मक तारकब्रह्मका उपदेश करतेहैं ॥ १८ ॥ जो कि उस तारकतीर्थमें विधिपूर्वक स्नान और तारकेश्वरका अवलोकन करे वह आप संसारसागरसे पार उतरकर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

८९

अपने पितरोंकोभी तारदेताहै ॥ १९ ॥ स्कन्दतीर्थभी उसीके समीपहीमें है, जहाँपर उत्तमजन नहानेके उपरान्त षडाननके दर्शन करनेसे (त्वचा, मांस, रुधिर, नस, हड्डी, और मज्जा इन) छहों कोशोंसे परिपूर्ण शरीरको फिर नहीं धारण करता॥ १२० ॥ तारकेश्वरके पूर्व ओर स्वामिकार्तिक देवके दर्शनसे कुमारसा शरीर धारण कर स्कन्द-लोकमें वास पाताहै ॥ २१ ॥ तदनन्तर पवित्र ढुंढितीर्थ है, जो नर वहाँपर स्नानादि कर्मोंको कर ढुंढिराज गणेशकी स्तुति करताहै, उसपर किसीभाँतिके विघ्न नहीं पडते ॥ ॥ २२ ॥ इसी ढुण्ढितीर्थके दक्षिण भागमें अन्नमान भवानी तीर्थहै, वहांपर विधि-पूर्वक स्नानकर भवानीकी (अन्नपूर्णाकी) पूजा करे ॥ २३ ॥ वस्त्र, रत्न, भूषण, बहुत विस्तारके साथ नैवेद्य, पुष्प, धूप, और दीप इत्यादिसे भवानी और भवदेवका पूजन करे॥ २४ ॥ जिसने काशीमें श्रद्धापूर्वक भवानी और शंकरको अर्चित किया, वह सचराचर त्रैलोक्यका पूजन करचुका ॥ २५ ॥ पण्डितजनको उचितहै कि, चैत्रकी शुक्लामहाष्टमीको भवानीकी यात्रा करे, और एकसौ आठ प्रदक्षिणा (फेरी) भी अवश्य कर्तव्य हैं ॥२६॥ क्योंकि, उसदिन प्रदक्षिणा करनेसे पर्वत, समुद्र, आश्रम और अरण्योंके सहित सप्तद्वीपा पृथिवीभरकी फेरीदेनेका फल होताहै ॥ २७ ॥ सन्तोषपरायण लोगोंको प्रतिदिन आठप्रदक्षिणा करनी चाहियें और सदैव प्रयत्नपूर्वक भवानी और शंकरको प्रणाम करना उचित है ॥ २८ ॥ भक्तोंकी मनोरथदात्री भवानीही स्थिर वास करने देतीहैं, अतएव काशीमें तीर्थवास करनेवालोंको भवानीका पूजन करना बहुतही आवश्यक है ॥ २९ ॥ भवानीही काशीवासियोंका सदा योग-क्षेम करतीहैं, इसलिये वहांके रहनेवालोंको निरंतर भवानीका सेवन करना चाहिये ॥ ॥ १३० ॥ मोक्षकांक्षी भिक्षुकको काशीमें भिक्षादेनेवाली विश्वेश्वरकी कुटुम्बिनी भवानीहीसे (मोक्षकी) भिक्षा माँगनी चाहिये ॥ ३१ ॥ काशीमें भगवान् विश्वनाथ गृहस्थ हैं, और उनकी कुटुम्बिनी भवानी हैं, अतएव वही समस्त काशीवासियोंको मोक्षकी भिक्षा देतीहैं ॥ ३२ ॥ काशीवासियोंको यदि कुछभी दुर्लभ हो तो पूजा करनेहीसे भवानी उसे सुलभ करदेतीहैं ॥३३॥ जो मनुष्य चैत्रकी महाष्टमीमें रात्रिभर जागरणकर प्रातःकाल भवानीकी पूजा करसके उसके सभी वांछित फल प्राप्त होजाते हैं ॥ ३४ ॥ जो शुक्रेश्वरसे पश्चिम दिशामें विराजमान भवानीका दर्शन करे, उसके सभी मनोरथ निस्सन्देह सिद्ध होजाते हैं ॥ ३५ ॥ काशीमें सदैव वास, उत्तर वाहिनी गंगामें स्नान, और भवानी और शंकरका सेवन करना चाहिये, इसीसे भुक्ति

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

एवं मुक्तिभी प्राप्त होसकतीहै ॥ ३६ ॥ हे मातः ! भवानि ! मैं आपके चरणका रज होऊं, हे भवानि ! मातः ! मैं आपका परमसेवक होजाऊं, हे मातः ! भवानि ! जिससे फिर मुझे इस संसारका क्लेश न सहना पडे, हे अन्नपूर्णे देवि ! मैं (वैसेही) तुमको भजूं और फिर (संसारमें) न (उत्पन्न) होऊं ॥

सवैया—मात ! भवानि ! सुनो बिनती, तुम्हरे पदपद्मको धूलिहौं माता ॥
होंउं भवानि ! महूं तुव सेवक—श्रेष्ठ यही हमरे मनभाता ॥
जन्म न होय जथा जगमें फिर, चित्त यहीपर है ललचाता ।
हे अनपूरन ! तोहिं भजौं नित, फेरि न होय कहूं जगनाता ॥

दोहा—मात भवानी ! होउँ मैं, तव—पदरज सम दास ।
भजौं तोहिं जग होइ नहिं, जन्म मोर यह आस ॥ ३७ ॥

सुखपानेके लिये काशीवासीजनको, बैठते चलते सोते और जागते सदैव इस मंत्रका जप करते रहना चाहिये ॥ ३८ ॥ भवानीतीर्थके पासहीमें ईशानतीर्थहै, वहांभी नहाकर ईशानेश्वरके दर्शन करनेसे फिर जन्म नहीं लेना पडता ॥ ३९ ॥ वहींपर मनुष्योंको ज्ञानदेनेवाला ज्ञानतीर्थहै,उसमें स्नानकर ज्ञानवापीके समीपहीमें ज्ञानेश्वरमहादेवके दर्शन और पूजन करनेसे मृत्युके समयभी ज्ञानभ्रंशनहीं होनेपाताहै ॥ १४०॥४१॥ उसी स्थानपर परमसंपत्तिका प्रकाशक नन्दीतीर्थ है, वहांपर पिंडा पारने और अपनी शक्तिके अनुसार दान करने ॥ ४२ ॥ तथा ज्ञानवापीके उत्तर नन्दीश्वरके दर्शनकरनेसे निश्चयही महादेवके गणकी पदवी प्राप्त होती है ॥ ४३ ॥ नन्दितीर्थके दक्षिण मेरा प्रधान विष्णुतीर्थ है, मनुष्य वहांपर पिंडदान करनेसे पितरोंके ऋणसे मुक्त होजाताहै ॥ ४४ ॥ जो विष्णुतीर्थमें स्नानकर विश्वेश्वरके दक्षिणभागमें मेरा दर्शन करताहै, वह विष्णुलोकमें चला जाताहै ॥ ४५ ॥ जो कोई प्रत्येक एकादशी अथवा शयनी और प्रबोधिनीको मेरी उस मूर्तिके समीप रात्रिमें जागरण करे ॥ ४६ ॥ और दूसरे दिन प्रातःकालमें भक्तिभावसे मेरा पूजन कर ब्राह्मणोंको भोजन करावे गौ, सुवर्ण और भूमिको दान करे, वह फिर भूमिपर नहीं उत्पन्न होता ॥ ४७ ॥ जो बुद्धिमान् जन धनकी कृपणता छोडकर वहाँ पर व्रतोंका उद्यापन करे, वह मेरी आज्ञासे संपूर्ण व्रतोंका फल पाताही है ॥ ४८ ॥ मेरे तीर्थके दक्षिण शुभप्रद पितामहका तीर्थ है वहाँ भी श्राद्धके विधानसे अपने पुरुषोंको तर्पित कर ॥ ४९ ॥ भक्तिपूर्वक ब्रह्मनालके ऊपर विराजमान पितामहेश्वर लिंगका पूजन करनेसे मनुष्य ब्रह्मलोकको प्राप्त करसकताहै ॥ १५० ॥ उस ब्रह्मस्रोतके समीपमें जो कुछ शुभ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

९१

अथवा अशुभ (बुरा-भला) कर्म किया जावे, वह परमअविनाशी होजाताहै, इससे यहाँ अच्छाही काम करना चाहिये ॥ ५१ ॥ हे मुनिसत्तम ! इस स्थानपर बहुत थोडाभी जो सत् अथवा असत् कर्म कियाजाताहै, प्रलयकालमें भी उसका क्षय नहीं होता ॥ ५२ ॥ पृथिवीके नाभिस्थानमें रहनेसे यह तीर्थ नाभितीर्थ कहागयाहै, भूमिकी क्यों यह समस्त ब्रह्मांड गोलककी शुभोदया नाभीहै ॥ ५३ ॥ यही गंभीरताकी भूमि मणिकर्णिका नाभी है, जिसमें समस्त ब्रह्मांड गोलक उदय और अस्त होता रहताहै ॥ ५४ ॥ त्रैलोक्यभरमें ब्रह्मनालही प्रधानतीर्थ प्रसिद्धहै, मनुष्य उस तीर्थके संगमपर स्नान करनेसे करोंडों जन्मके मलोंसे मुक्त होजाताहै, "करोडों जन्मके पातक गँवाये जिसका जी चाहे" ॥ ५५ ॥ जिस किसीकी एकभी हड्डी ब्रह्मनालमें गिरपडती है, उन लोगोंको फिर कभी ब्रह्मांडमंडपमें प्रवेश नहीं करना पडता ॥ ५६ ॥ उक्त ब्रह्मनालके दक्षिण भागीरथी तीर्थहै, जो मनुष्य वहांपर स्नान करताहै, वह संपूर्ण ब्रह्म हत्यासेभी छूट जाताहै ॥ ५७ ॥ स्वर्गद्वारके सन्निधानहीमें भागीरथीश्वर लिंगके दर्शन करनेसे ब्रह्महत्याके पापका पुरश्चरण होजाताहै ॥ ५८ ॥ जिसके पूर्वपुरुष लोग अधोगतिको प्राप्त हुए हों उसे तो भागीरथी तीर्थमें बडे प्रयत्नसे तर्पण करना चाहिये ॥ ५९ ॥ एवं उस भागीरथी तीर्थमें विधानपूर्वक श्राद्ध करनेसे और ब्राह्मणोंको भोजन करानेसे पितर लोग ब्रह्मलोकमें पहुँचादिये जातेहैं ॥ १६० ॥ उसके दक्षिण भागमें खुरकर्तरी नामक एक महातीर्थहै पूर्वकालमें गोलोकसे आईहुई गौओंके खुरकी कोटियोंसे ॥ ६१ ॥ उस भूमिभागके खुदजानेपर वह खुरकर्तरीतीर्थ हुआहै, वहाँपर नहाकर पिण्डदान और तर्पण ॥ ६२ ॥ एवं खुरकर्तरीश्वर लिंगके दर्शन करनेसे मनुष्य गोलोकमें प्राप्त होताहै, और उस लिंगकी पूजा करनेसे कभीभी गोरूप धनसे हीन नहीं होता ॥ ६३ ॥ खुरकर्तरीके दक्षिण उत्तम मार्कण्डेय तीर्थहै, उस पातकनाशक तीर्थपर श्राद्ध कृत्योंके सम्पादनसे ॥ ६४ ॥ तथा मार्कण्डेयेश्वर लिंगके दर्शनसे भूमिपर दीर्घायु, ब्रह्मतेजकी वृद्धि और बडी कीर्ति प्राप्त होतीहै ॥ ६५ ॥ फिर महापातकहारी वशिष्ठ नामक प्रधान तीर्थहै, वहांपरभी पितरोंके तर्पण और वशिष्ठेश्वरके दर्शन करनेसे ॥ ६६ ॥ मनुष्य तीनजन्मके संचित पापोंसे छूटकर ब्रह्मतेजस्वीहो वशिष्ठलोकमें वास करताहै ॥ ६७ ॥ वहींपर स्त्रियोंका सौभाग्यवर्द्धक अरुंधती तीर्थभीहै, उस तीर्थमें पतिव्रता स्त्रियोंको विशेषरूपसे स्नान करना चाहिये ॥ ६८ ॥ उस तीर्थमें डुबकी लगानेसे क्षणमात्रमें अरुंधतीके प्रभावबलसे पंश्चलताका दोष

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मिटजाताहै ॥ ६९ ॥ जो मनुष्य मार्कण्डेयेश्वरके पूर्व भागमें विराजमान वशिष्ठेश्वर-का पूजन करताहै वह निष्पाप होकर बडा पुण्यभागी होताहै ॥ १७० ॥ उसी स्थानपर वशिष्ठऋषि और अरुंधतीकीभी मूर्तियाँ परिश्रम उठाकर पूजनीयहैं, उनकी पूजासे स्त्रीको तो वैधव्य और पुरुषको स्त्रीका वियोग नहीं सहना पडताहै ॥ ७१ ॥ वशिष्ठतीर्थके दक्षिण उत्तम नर्मदातीर्थहै, बुद्धिमान् जन वहाँपर श्राद्ध और नर्मदे-श्वरका दर्शन कर ॥ ७२ ॥ एवं महादानोंके करनेसे कभी धनहीन नहीं होता। फिर त्रिसंध्येश्वरके पूर्व ओर त्रिसंध्यतीर्थहै ॥ ७३ ॥ उस तीर्थमें स्नानकर विधानपूर्वक जो मनुष्य सन्ध्यावंदन करताहै वह संध्योपासन कर्मके काललोप होनेके पापोंसे छुटा रहताहै ॥ ७४ ॥ द्विज, त्रिकालमें संध्योपासन करके श्रद्धा-पूर्वक त्रिसंध्येश्वरके दर्शन करनेसे तीनोंवेदोंके अध्ययन करनेका पुण्य प्राप्त करताहै ॥ ७५ ॥ तदनंतर योगिनी तीर्थहै, जहाँपर मनुष्य स्नानकर योगिनीपीठके दर्शनसे योगोंकी सिद्धिको लाभ करताहै ॥ ७६ ॥ उस स्थानमें अगस्त्य तीर्थ है, जो बडे भारी पापराशियोंको नाश करडालताहै, जो कोई वहांपर स्नान कर प्रयत्नपूर्वक अगस्त्येश्वर शिवका दर्शन करे ॥ ७७ ॥ तब फिर अगस्त्य-कुंडमें पितरोंका तर्पण कर अगस्त्यके सहित लोपामुद्राको प्रणाम करे ॥ ७८ ॥ वह सबपापोंसे और समस्त क्लेशोंसे छूटकर अपने पूर्वजोंके साथ शिवलोकमें चलाजाताहै॥ ॥ ७९ ॥ अगस्त्यतीर्थसे दक्षिण अत्यंतपवित्र गंगाकेशव संज्ञक तीर्थ है, जो सब पापोंको शमन करदेताहै॥ १८० ॥ हे मुने! उस तीर्थपर उसीनामकी शुभप्रदा मेरी मूर्ति है, बुद्धिमान् जन श्रद्धापूर्वक उसकी पूजा करनेसे मेरे लोकमें पूजित होते हैं ॥ ८१ ॥ उस तीर्थमें पिंडा पारने और अपनी शक्तिके अनुसार दान करनेसे सौवर्ष-केलिये पितरोंकी तृप्ति होजाती है ॥ ८२ ॥ मैंने यह मणिकर्णिकाका बडा परिमाण तुमसे वर्णन किया। जोकि समस्त विघ्नोंके हर्ता सीमाविनायकसे लेकर दक्षिण दिशामें वर्तमान है ॥ ८३ ॥ वैरोचनेश्वरसे पूर्व दिशामें मैं वैकुंठमाधव नामक हूं, वहांपर भक्तिभावसे मेरी पूजा करे तो वैकुंठहीमें पूजनेका फल प्राप्त होताहै ॥८४॥ हे मुने! वीरेश्वरके पश्चिमप्रान्तमें मैं वीरमाधव संज्ञकहूं उस स्थानपर जो व्रत धारण करके मेरी पूजा करे वह यमयातनामें (कभी) नहीं पडे ॥ ८५ ॥ मैं कालभैरवके पास काल-माधव नामसे स्थित हूं; (उस रूपके) मेरे भक्तको कलि और काल दुःख नहीं देनेपावे यह निश्चित है ॥ ८६ ॥ अगहनमासकी शुक्ला एकादशीके दिन व्रती रहकर वहाँपर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

९३

जो कोई रात्रिमें जागरण करे उसे यमराजका मुख कभी नहीं देखना पडे ॥ ८७ ॥ पुलस्त्येश्वरके दक्षिण ओर मैं निर्वाण नरसिंहरूपसे रहताहूं, भक्तजन उस मूर्तिको प्रणाम करनेहीसे निर्वाणपदको प्राप्त करलेताहै ॥ ८८ ॥ हे मुने ! ओंकारेश्वरके पूर्व भागमें मैं महाबल नृसिंहके नामसे वास करताहूं, मेरी पूजा करनेवाला नर कभी यमराजके महाबली दूतोंको नहीं देखने पाता ॥ ८९ ॥ चंडभैरवके पूर्वमें मैं प्रचंड नरसिंहनामक हूं, उनके पूजनसे मनुष्य प्रचंड पापोंकेभी करनेपर निष्पाप होजाताहै ॥ १९० ॥ देहलीविनायकसे पूर्वदिशामें प्रबल पापौघरूपी हस्तियोंका फारडालनेवाला मैं गिरिनृसिंहरूपसे विराजमान रहताहूं ॥ ९१ ॥ हे तपोधन ! पितामहेश्वरके पिछवाडे महाभयहर नामक नरसिंह होकर मैं भक्तोंका भय हरण करताहूं ॥ ९२ ॥ कमलेश्वर शिवके पश्चिमभागमें मैं अत्युग्र नरसिंहके नामसे रहताहूं ॥ और श्रद्धासे पूजन करनेपर बडे उग्रभी पापराशिको दूर करदेताहूं ॥ ९३ ॥ ज्वालामुखीके समीपहीमें मैं ज्वालामाली नृसिंह नामकहूं, वहाँपर पूजनकरनेसे मैं पापपुंजरूप तृणोंको जलाडालताहूं ॥ ९४ ॥ जहाँपर काशीकी रक्षामें दक्षबुद्धि कंकाल भैरवहैं, वहींपर दैत्यदानवोंका मर्दक मैं कोलाहल नृसिंह होकर रहताहूं, इस नामका यह कारणहै कि, इसे लेतेही पाप कोलाहल (हौरा) करने लगजाते हैं, उस स्थानपर भक्तिपूर्वक मेरी अभ्यर्चना करनेसे किसीप्रकारके उपसर्ग बाधा नहीं पहुँचा सकते हैं ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ नीलकंठ महादेवके पीछेकी ओर मैं विटंक नरसिंहरूपसे हूं, जो नर वहाँपर श्रद्धाकरके मुझे पूजताहै वह निर्भय होजाताहै ॥ ९७ ॥ अनंतेश्वरके समीपहीमें मैं अनंतवामनकी मूर्ति धरकर रहताहूं, पूजनकरनेसे भक्तोंके अनंत कलुषोंकोभी हरलेताहूं ॥ ९८ ॥ मैं अपने भक्तोंको दही भात देनेवाला दधिवामन नामसे बनारहताहूं, मनुष्य जिसनामके स्मरण करनेहीसे कभी दरिद्री नहीं होता ॥ ९९ ॥ त्रिलोचनसे उत्तर मैं त्रिविक्रमरूप हूं वहां पूजाकरनेसे लक्ष्मीको देता और पापोंको हरलेताहूं ॥ २०० ॥ मैं दैत्यराज बलिसे पूजित बलिवामन नामक होकर बलिभद्रेश्वरके पूर्वभागमें अवस्थिरहूं एवं उस मूर्तिके भक्तलोगोंका बल बढाता रहताहूं ॥ १ ॥ मैं ताम्रद्वीपसे काशीमें आकर भवतीर्थके दक्षिण ताम्रवराहरूप होकर भक्तोंका अभीष्ट सिद्ध करताहूं ॥ २ ॥ हे तपस्विन् ! मैं धरणिवराहकी मूर्ति धरकर प्रयागेश्वरके सन्निकटमें वर्तमानहूं, उस वराहतीर्थमें स्नानकर मुझे वराहरूपधारी देखनेसे ॥ ३ ॥ एवं बडेभावसे पूजन करनेसे अनेकयोनियोंमें घूमनेका संकट नहीं सहना पडता, और उस तीर्थपर थोडाभी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अन्नदान करनेसे भमिदानका फल मिलताहै ॥ ४ ॥ जो मनुष्य मेरी भक्तिरूप दृढ़ नई (नौका) पासके, वह घोर पातकरूप अथाह समुद्रमें गिरते रहनेपर प्रलयकालमेंभी नहीं डूबसकताहै ॥ ५ ॥ मैं वराहेश्वरके समीपहीमें कोकावराहरूपसे विद्यमानहूं, वहांपर जो मनुष्य मेरी पूजा करे वह अपना चिंतित फल पाजाताहै ॥ ६ ॥ मेरी पांचसौ मूर्तियाँ नारायणरूपकी, एकसौ जलशायीरूपकी, तीस कच्छपरूपकी तीस मत्स्यरूपकी ॥ ७ ॥ एकसौआठ गोपालरूपकी, सहस्रशः बौद्धरूपकी तीस परशुरामरूपकी और एक सौ एक रामरूपकी हैं ॥ ८ ॥ इस मुक्तिमण्डपके मध्यमें मैं विष्णुरूपसे अकेलाहीहूं, हे मुने ! विश्वेश्वरने स्वयं प्रसन्न होकर वहाँपर मुझे आश्रयण दियाहै ॥ ९ ॥ मेरे साठलाख अनुचरगण नारायण रूपसे चक्र और गदा धारणकर इस क्षेत्रकी चारोंओरसे रक्षा करते रहतेहैं ॥ २१० ॥ इन सब बातोंको सुनकर अग्निबिन्दु ऋषि हर्षके मारे रोमांचित होगये, फिर उस बुद्धिमान्ने भगवानसे पूछा कि हे प्रभो ! अपने भक्तोंके हितार्थ और मेरे सन्देहको हटानेके लिये मूर्तियोंके भेदोंको वर्णन कीजिये हे अनंत ! आपकी कितनी मूर्तियांहैं ? और वे सब कैसे जानीजासकतीहैं, यहभी बतलाइये ॥ ११ ॥ १२ ॥ तपोनिधि अग्निबिन्दु ऋषिकी इस बातको सुनकर भगवान् विष्णुने क्रमसे मूर्तियोंके भेदोंको कहना आरंभ किया ॥ १३ ॥ जिनकेशव इत्यादि चौबीस भेदोंको सुनकर मनुष्य यमराजकी गोचरताको नहीं प्राप्त होता भगवान उनको कहने लगे ॥ १४ ॥ श्रीविष्णु बोले—हे महाप्राज्ञ ! अग्निबिन्दो ! मुने ! मैं तुमसे कहताहूं, श्रवण करो, पहिले ऊपरका दहिना हाथ, तब ऊपरका बाँया हाथ, फिर नीचेका बाँया हाथ, तब नीचेका दहिना हाथ इसी क्रमसे ॥ १५ ॥ शंख, चक्र, गदा और पद्मसे जो मूर्ति रहे उसे केशवमूर्ति समझलो और उसकी पूजा करनेसे निस्सन्देह वांछित अर्थकी सिद्धि होती है ॥ १६ ॥ शंख, पद्म, गदा और चक्रसे जो युक्त हो उसे मधुसूदन मूर्ति पहिचाननी चाहिये, उसके सेवनसे शत्रुओंका विनाश होजाताहै ॥ १७ ॥ जो मूर्ति शंख, पद्म, चक्र और गदासे परिपूर्ण हो उसे संकर्षण मूर्ति जानना चाहिये। उसके पूजा करनेसे जन्तु फिर कभी जन्मभागी नहीं होता ॥ १८ ॥ शंख, गदा, चक्र और पद्म क्रमसे जिसके हाथोंमें हों वह दामोदरमूर्तिके नामसे पूजी जाती है, और यह मूर्ति प्रचुरद्रव्य, पुत्र, गोधन, धन और धान्यको अवश्य देती है ॥ १९ ॥ वासुदेव मूर्ति शंख, चक्र, पद्म और गदासे उपलक्षित रहती है, यह मूर्ति जिसके घरमेंभी हो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

९५

अमान रहे, उस मनुष्यको धनवान् बनादेवे ॥ १२० ॥ मेरी जिस मूर्तिमें पांचजन्य नामक शंख, गदा, पद्म, और सुन्दरसुदर्शन चक्र, यथाक्रमसे रहताहै वह प्रद्युम्न मूर्ति है, जो लोग उसे पूजते हैं उनको बहुत धनलाभ होताहै ॥ २१ ॥ और विष्णु इत्यादि छ मूर्तियाँ ऊपरके बाँये हाथसे सृष्टिके अनुसार कहाती हैं जिनके स्मरणमात्रसे पापराशियाँ विलाय जाती हैं ॥ २२ ॥ शंख, चक्र, गदा, और पद्मसे युक्त विष्णुमूर्तिकी पूजा करनेसे मनुष्य श्रीमान् होताहै, एवं शंख, पद्म, गदा, और चक्रसे सुशोभित जो माधवमूर्ति है वह, बडी संपत्ति देती है ॥ २३ ॥ शंख, पद्म, चक्र, और गदाको धारण कियेहुए अनिरुद्धमूर्तिका ध्यान करनेसे सिद्धि मिलती है, और पुरुषोत्तम मूर्तिमें शंख, गदा, चक्र, और पद्म रहते हैं ॥ २४ ॥ हे मुने ! शंख, चक्र, पद्म और गदावाली जन्मदुःखहारिणी अधोक्षज मूर्ति है, और शंख, कौमोदकी, गदा, पद्म, और चक्रसे युक्त जनार्दन मूर्ति होती है ॥ २५ ॥ सृष्टिके क्रमसे नीचेके बाँयें हाथसे गोविन्द इत्यादि छ मूर्तियोंका भेद होताहै, उक्तक्रमके अनुसार गोविन्द मूर्ति सदैव शंख, चक्र, गदा, और पद्मको धारण किये रहतीहै ॥ २६ ॥ लक्ष्मीके लिये शंख, पद्म, गदा, और चक्रसे युक्त त्रिविक्रममूर्ति पूजनीयहै एवं शंख, पद्म, चक्र और गदाधारी श्रीधरकी मूर्तिभी श्रीके लाभार्थही पूज्य है ॥ २७ ॥ हृषीकेश मूर्तिमें उक्तक्रमसे शंख, गदा, चक्र और पद्म सुशोभित रहताहै, और शंख, चक्र, पद्म और गदाको धारण करनेवाली नृसिंहमूर्ति है ॥ २८ ॥ शंख, गदा, पद्म और चक्रधारी अच्युतकी मूर्ति होतीहै अब नीचेके दहिने हाथके क्रमसे वासुदेव इत्यादि छः मूर्तियोंका भेद कहाजाताहै ॥ २९ ॥ शंख, चक्र, गदा और पद्मसे अलंकृत वासुदेवकी मूर्ति होतीहै, और शंख, पद्म, गदा और चक्रवाली नारायणकी मूर्तिका ध्यान मनुष्योंको करना चाहिये ॥ १३० ॥ हे मुनिवर ! शंख, पद्म, चक्र और गदा वाली जो मूर्ति हो उसे पद्मनाभकी समझनी चाहिये, एवं शंख, गदा, चक्र, और पद्मसे भूषित उपेन्द्रकी मूर्ति होतीहै ॥ ३१ ॥ शंख, चक्र, पद्म और गदासे पूर्ण हरिकी मूर्ति है जो मनुष्योंके पापको हरण करतीहै, और शंख, गदा, पद्म, और चक्रको लियेहुए कृष्णकी मूर्ति कहीजातीहै ॥ ३२ ॥ हे महातपस्विन् ! अपनी सब मूर्तियोंके भेदोंको मैंने वर्णन किया, मनुष्य इन भेदोंके जानसकनेसे ध्रुवकरके भुक्ति और मुक्तिको भी प्राप्त करताहै ॥ ३३ ॥ (स्कन्दने कहा—) जिस समय भगवान् विष्णु अग्निबिन्दमुनिसे यह सब बात कररहेथे उसी वेलामें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अपने पक्षोंसे विपक्षोंको दूर फेंकदेनेवाले पक्षिराज गरुड दिखलाई पडे ॥ ॥ ३४ ॥ उन्होंने बडे हर्षसे प्रणाम कर शीघ्रतापूर्वक भगवान् त्रिलोचनके आनेका समाचार कहा, तब तो यह सुनतेही घबराकर हृषीकेश कहने लगे कि—महादेव कहाँ हैं ? ॥ ३५ ॥ गरुड बोले—देखियेतो, येही न वृषभध्वज हैं, जिनके ध्वजमें लगे हुए रत्नोंकी प्रभा समस्त आकाश और भूमण्डलमें भररहीहै ॥ ३६ ॥ तदनंतर पुंडरीकाक्ष विष्णुभगवान् त्रिनेत्रके वृषभकी ध्वजासे युक्त रथको देखने लगे, जिसका दर्शनही सबलोगोंके नयननिर्माणको सफल करदेनेमें समर्थ है, और जो करोडोंसूर्योंकी किरणमालासे मानो दिङ्मंडलको उद्भासित कररहाहै । एवं जिसके चारोंओर देवता लोगोंके विमानोंसे गगनमंडल भरपूर होरहाहै ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ जिसको अनेक बडे बाजाओंकी ध्वनियोंसे पर्वतोंकी कन्दरायें प्रतिध्वनित होरहीहैं, एवं विद्याधरियोंकी फेंकीहुई पुष्पांजलियोंसे जो सुगन्धित होराहाहै ॥ ३९ ॥ तबतो शंखचक्रगदाधारी भगवान् विष्णु हर्षसे पुलकित शरीर हो दूरहीसे प्रणाम कर अगवानी करनेकी इच्छा करने लगे ॥ १४० ॥ फिर मुदनिधान मुक्तिप्रद भगवान् अग्निबिन्दुसे बोले कि—यह सुदर्शनचक्रहै इसे तुम दहिने हाथसे छूदो ॥ ४१ ॥ ऐसे कहनेपर ज्योंही अग्नि बिन्दुमुनिने सुदर्शनचक्रको स्पर्श किया त्योंही नारायणके परमअनुग्रहसे स्वयं सुदर्शन (दिव्यज्ञानी) होगये ॥ ४२ ॥ स्कन्द कहने लगे—हे अगस्त्य ! इसके अनन्तर वे अग्निबिन्दु ऋषि बिन्दुमाधवके सेवनसे ज्योतीरूप होकर कौस्तुभधारीके ज्योतिर्मय शरीरमें मिलगये ॥ ४३ ॥ हे कुम्भज ! जो लोग अपने मनको बिन्दुमाधवके चरणकमलका ! भ्रमर बना देतेहैं वे सब अग्निबिन्दुहीके समान होजातेहैं, इसमें तनि कभी सन्देह नहीं है॥ ४४ ॥ जो कोई काशीमें सर्वदा निवास करे और भगवान् बिन्दुमाधवका दर्शन पावे, एवं इस आख्यानको सुनसके, वह संसारकी गतिको जीतलेसकताहै ॥ ४५ ॥ पंचनदतीर्थकी उत्पत्ति और बिन्दुमाधवकी कथा ये दोनोंही बडी पवित्रहैं तिसपर पुण्यक्षेत्र काशीपुरीका वास, यह सब बडे पुण्यवान्हीं जनके भाग्यमें घटताहै॥ ४६ ॥ जो कोई काशीमें बिन्दुमाधवके आगे अग्निबिन्दुकी विरचित स्तुतिका पाठ करेगा वह यहाँपर तो अपनी समस्त वासनाओंसे समृद्ध होहीगा पर अन्तमें मोक्षलक्ष्मीका भी भागी होजावेगा ॥ ४७ ॥ श्राद्धके समय जब कि ब्राह्मणगण भोजन करते उन लोगोंके सन्मुख संतोष प्राप्त होनेके लिये इस उत्तम उपाख्यानको अवश्यही पढना चाहिये ॥ ४८ ॥ विशेषकरके पर्वके दिन पवित्र पंचनदतीर्थके समीप में पुण्यशील

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वृद्धिके लिये इस कथाको पढनाही चाहिये ॥ ४९ ॥ भोग तथा मोक्षकी समृद्धिके हेतु बिन्दुमाधवके प्रादुर्भावका विवरण प्रयत्नपूर्वक पढना चाहिये एवं बडीभक्तिके साथ सुननाभी उचितहै ॥ १५० ॥ विष्णुवासर एकादशी तिथि पडनेपर रात्रिमें जागरण कर इस पवित्र उपाख्यानके सुननेसे वैकुंठलोकमें वास मिलताहै ॥ १५१ ॥

त्रोटकछंद—जेहि नाम लिये सब पाप कटैं, पुनि अंतस मुक्ति घटै छनमें ।
यहि लोकनि भोग मिलैं सबहीं, नहिं ताप रहै तनिकौ तनमें ॥
निज भक्तनके कलि—कल्मषको, वहि पंच नदीनकें धारनमें ।
निज माधव धोइ बहावतहैं, प्रणवौं उनके पदको मनमें ॥ १ ॥

दोहा—हे माधव मायापते, करहु मोर कल्यान ।
तुव पदपंकज छाडिकै, कतहुँ न मोहिं ठिकान ॥ २ ॥
नाथ ! दया उरमें धरो, करो दीनपर नेह ।
भक्तिभाव दीजै हमैं, होय जन्म दुख छेह ॥ ३ ॥
माधव माधव रैन दिन, जपों बैठि तुव पास ।
जन्म कोटिके अघ कटैं, यही एक मम आस ॥ ४ ॥
सुमिरत माधव नमवाँ, भागैं पाप ।
मिटत सकल कलेसवाँ, धन यह जाप ॥ ५ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्द्धे भाषायां वैष्णवतीर्थमाहात्म्ये मूर्तिभेदवर्णनंनाम एकषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६१ ॥

बासठवाँ अध्याय ।

महादेवका काशीमें प्रवेश और कपिलधारातीर्थकी कथा ।

अगस्त्यने कहा—हे स्कन्द ! आपके मुखसे निर्गत वचनामृतको सुनतेहुए तो मेरी तृप्तिही नहीं होती, आपने यह बिन्दुमाधवका उपाख्यान तो बडाही अद्भुत वर्णन किया ॥ १ ॥ पर अब मैं आपसे भगवान् महादेवके समागमकी कथा सुना चाहताहूं, कि त्रिलोचन शिवने गरुडसे राजा दिवोदासका तत्कालीन व्यवहार ॥ २ ॥ और भगवान् विष्णुके मायाजालका प्रपंच सुनकर नारायणको क्या कहाथा ? और कौन कौनसे लोग महेश्वरके साथ मन्दराचलसे चलकर (काशीमें) आयेथे ? ॥ ३ ॥ फिर ब्रह्माने लज्जासे अधोदृष्टि होकर शंकरसे किसप्रकार साक्षात्कार किया ?

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

और शिवने ब्रह्माको क्या कहा ? योहीं सूर्यदेवने अपने विषयमें क्या कहा ! ॥ ४ ॥ और योगिनियोंने अपने अपराधके लिये कैसे क्षमाकी प्रार्थना की और लज्जित प्रमथगणोंहीने क्या कहा ? हे षडानन ! यह सब मुझसे कहिये मुझे बडाही कौतूहल होरहाहै ॥ ५ ॥ शंकरनन्दनने कुम्भजमुनिके इस प्रश्नको सुन प्रणतजनके सिद्धिप्रद महादेव पार्वतीको नमस्कार कर इसभाँतिसे उत्तर दिया ॥ ६ ॥ स्कन्द बोले—हे मुने ! समस्त पाप और विघ्नों (तापों) की नाशिनी एवं परममंगलकारिणी इस कथाको श्रवण (गोचर) करो ॥ ७ ॥ इसके अनंतर दानवारि हरिने शंकरके समागमका वृत्तान्त सुनतेही बडे हर्षसे शिवागमनशंसी पक्षिराज गरुडको बडा पारितोषिक (इनाम) दिया ॥ ८ ॥ और वाराणसी पुरीके समीपहीमें अपने बडे प्यारे प्रजापतिको अगुआ बनाकर अगवानी की ॥ ९ ॥ फिर सूर्यनारायण, गणपति, प्रमथगण और योगिनियोंके सहित मिलजुलकर कुछकालतक वहीं-पर ठहर भगवान् विष्णु अगोरते रहे ॥ १० ॥ तदनंतर वृषभध्वज महादेवको नेत्रगोचर करतेही लक्ष्मीपतिने अपने वाहन गरुडपरसे उतरकर प्रणाम किया ॥ ११ ॥ फिर बूढे पितामहको बहुतही झुककर प्रणाम करतेहुए देख, स्वयं प्रणत हो महादेवने निषेध करदिया ॥ १२ ॥ तब तो प्रजापतिने दोनों हाथोंको उठाकर स्वस्तिवचनके साथ ओदे अक्षत और फलोंको दिखलाकर रुद्रसूक्तका पाठ करतेहुए अभिमंत्रित किया ॥ १३ ॥ गणेशनेभी तुरतही बडी नम्रतासे उनके चरणोंमें अपना माथा लगाया फिर तो महादेवने बडे हर्षसे गणेशका मस्तक सूँघा ॥ १४ ॥ और उनसे मिलकर अपने आसन पर बैठालिया, सोमनन्दी इत्यादि गणोंने दण्डवत्प्रणाम किया ॥ १५ ॥ योगिनियाँभी शिवको प्रणाम करती हुई मंगलकी गीतें गानेलगीं, एवं भगवान् भास्करने प्रमथनाथ महादेवको प्रणाम किया ॥ १६ ॥ इसके पीछे चन्द्रशेखरने भडे आदरके साथ अपने सिंहासनके पासहीमें बायींओर वैकुंठनाथको बैठाया ॥ १७ ॥ और आसन देकर दहिनेभागमें ब्रह्माको बिठलाया, फिर सब विनीतगणोंकोभी प्रसन्नदृष्टिसे संतुष्ट किया ॥ १८ ॥ इसीरीतिसे मस्तक हिला योगिनियोंकोभी संमानित कर हाथके संकेतसे बैठजानेके लिये कह कर सूर्यदेवकोभी प्रसादित किया ॥ १९ ॥ इसके अनंतर ब्रह्माने हाथोंको जोडकर प्रसन्न मुखकमल शंभुसे सविनय यह निवेदन किया ॥ २० ॥ ब्रह्मा कहनेलगे—हे भगवन् ! देवदेवेश ! गिरिजापते ! जो मैं काशीमें आया फिर आपके पास नहीं लौटसका मेरे इस बडे अपराधको आप क्षमा करें ॥ २१ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

९९

हे चन्द्रभूषण ! कोईभी जराग्रस्त बूढा कुछ करनेकेलिये समर्थ होनेपरभी प्रसंगवश काशीमें आकर भला उसे क्योंकर छोड सकताहै ? ॥ २२ ॥ औरभी एकबात है, प्रकृत-रूपसे ब्राह्मण होनेके कारण अपकार नहीं कियाजासकताहै, फिर यदि अपकार करनेमें समर्थ होनेपरभी कोई अच्छेके विषयमें भला ऐसे काम करनेकी इच्छा करसकताहै ? ॥ २३ ॥ तिसपर स्वामीकीभी यही आज्ञा हुईथी, कि जानबूझकर कोईभी कभी किसी धर्मपथावलम्बीके विषयमें कुछभी अपकार न करे ॥ २४ ॥ तब फिर ऐसा कौनहै ? जो निरालस्य होकर काशीके रक्षक उस दिवोदास राजाके ऊपर कुछभी अनिष्टकी बुद्धि फेरसके ? ॥ २५ ॥ इस वचनको सुन संतुष्ट होकर ज्ञाननिधि भगवान् शंकरने हँसकर ब्रह्मासे कहा—"हे ब्रह्मन् ! मैं यह सब समझताहूं ॥ २६ ॥ (फिर) महादेव कहनेलगे—पहिले तो तुम्हारा कोई दोषही नहीं हैं, क्योंकि ब्राह्मणका ब्राह्मण्य (करना) तो धर्महीहै, फिर तुमने इस काशीधाममें दश अश्वमेध यज्ञभी कराडाले ॥ २७ ॥ हे ब्रह्मन् ! इन सबसे बढकर तुमने एक बडाही हितसंपादक यह काम किया जो मेरे लिंगकी स्थापनाभी करदी, जिससे सहस्रोंही अपराध दूर होजातेहैं ॥ २८ ॥ (क्योंकि) सब अपराधोंसे भराहुआभी यदि कोई कहींपर मेरे एकभी लिंगकी स्थापना करदेवे तो उस जनमें तनिकभी अपराधका लेश नहीं रह-जासकताहै ॥ २९ ॥ फिर जो कोई सहस्रों दोषोंसे पूर्ण रहनेपरभी ब्राह्मणको अपराधी बनावे तो, थोडेही दिनोंके बीचमें उसका समस्त ऐश्वर्य्य बिगडजाताहै ॥ ३० ॥ भगवान् शिवके ऐसे मीठे उत्तरको सुनकर समस्तगण लोग और योगि-नियाँ एक दूसरेका मुख निहारतींहुईं भीतरही भीतर आनंदित होनेलगीं ॥ ३१ ॥ उसीसमय अवसरें विचार चराचरके प्रकाशक सूर्यनेभी प्रणामपुरस्सर प्रसन्नमुख उन उमाकान्तसे यह निवेदन किया ॥ ३२ ॥ सूर्य बोले—हे नाथ ! मैंभी मन्दराचलसे काशीमें पहुँच यथाशक्ति उपद्रवकरतेहुए सहस्रकरधारी होनेपरभी स्वधर्म पालक उस राजा दिवोदासके विषयमें अकिंचित्करही रहगया, तब फिर स्वामीका आगमन निश्चित समझकर यहांहीं ठहरगया ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ और हे देवेश ! आपके अवाईकी बाट जोहताहुआ अपनेको अनेकरूप बनाकर आपकीही आराधनामें लगा-रहा ॥ ३५ ॥ हे नाथ ! इतने दिनोंसे जो मेरा मनोरथरूप वृक्ष भक्तिरूप जलसे सींचाथा आज वह वृक्ष ध्यानरूप पुष्पसे शोभित होकर श्रीमान्के दर्शनसे सफल होगया ॥ ३६ ॥ सूर्यनेत्र भगवान् चन्द्रमौलि सूर्यके इस वचनको कर्णगोचर कर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कहनेलगे कि हे भास्कर ! तुम्हारा भी कोई दोष नहीं है ॥ ३७ ॥ यहाँपर ठहरा जानेसे तुमने मेराही कार्य सम्पादन किया क्योंकि राजा दिवोदासके राज्यशासनकालमें कोईभी देव घुसने नहीं पातेथे ॥ ३८ ॥ कृपानिधान महेश्वरदेव इस प्रकारसे सूर्य-नारायणको आश्वासन देकर लज्जासे विनम्रकंधर अपने प्रमथगणोंकोभी आश्वासित करनेलगे ॥ ३९ ॥ फिर योगिनियोंकी ओरभी कृपाकी दृष्टि फेरकर उन सबकोभी जो लज्जाके बोझसे बहुतही दबीजारहींथीं बडी सांत्वना प्रदान करनेलगे ॥ ४० ॥ इसके अनंतर शंकरने अपने नेत्रोंको विष्णुके ऊपर डाला, पर उस महाममस्वी हरिने भगवान् हरके आगे कुछभी नहीं कहा ॥ ४१ ॥ इधर महादेवभी पहिलेही गरुडसे गणेश और विष्णुका सब वृत्तान्त सुनचुकेथे, इससे उस घडी मनहीमन बडे प्रसन्न हुए पर प्रकटरूपसे उन लोगोंके विषयमें कुछ नहीं बोले ॥ ४२ ॥ उसीवेलाएर गोलोकसे सुनन्दा, सुमना, सुरति, सुशीला और कपिला नामकी पांच गायें वहाँपर आपहुँचीं ॥ ४३ ॥ उन सर्वपापनाशिनी गौओंके थनसे महादेवकी स्नेहमयी दृष्टिके पडतेही दूधकी धारा बहनेलगी ॥ ४४ ॥ उन सबोंके थनसे बराबर इतनी दूधकी मुसलधारा बहचली कि वहाँपर उसीसे एक बडाभारी अगाध पोखरा बनगया ॥४५॥ उस ह्रदको देखकर महादेवके पार्षद लोग उसे दूसरे क्षीरसमुद्रहीके समान देखने लगे, फिर तो देवदेवके बैठनेसे वह ह्रद बडाभारी तीर्थहोगया ॥ ४६ ॥ अनंतर भगवान् शिवने उसका नाम कपिलाह्रद रक्खा, और उन्हींके आदेशसे समस्त स्वर्गवासी देवतोंने उसमें स्नान किया ॥ ४७ ॥ उसीसमय उस तीर्थके भीतरसे दिव्य पितरलोग प्रकटहुए उनको देखतेही देवतोंने बडे हर्षसे जलांजलि दीं ॥ ४८ ॥ तब अग्निष्वात्ता, सोमपा, आज्यपा और बर्हिषद् आदि पितृगण परमतृप्त होकर शिवसे निवेदन करने-लगे ॥ ४९ ॥ हे भक्तोंके अभयदाता ! जगदीश्वर ! देवदेव ! इस तीर्थमें आपके वर्तमान रहनेसे हम लोगोंकी अक्षय तृप्ति होगई ॥ ५० ॥ इस कारण हे शंभो ! आप प्रसन्नचित्तसे हम सबको वरदान करें, महादेव इस भाँतिसे दिव्यपितरोंके वाक्योंको सुनकर सब देवतोंके सन्मुख यह बात कहने लगे जिससे पितरलोगोंको बडाही सन्तोष प्राप्त हुआ ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ श्रीदेवदेवने कहा—हे महाबाहो ! विष्णो ! और हे पितामह ! ब्रह्मन् ! सब लोग श्रवण करो, जो लोग कपिलाओंके दूधसे भरेहुए इस कपिलतीर्थमें श्रद्धापूर्वक श्राद्धविधानसे पिंडदान करसकेंगे, मेरी आज्ञाके अनुसार उनके पितरलोगोंकी पूर्ण तृप्ति होजावेगी ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ अब मैं इन लोगोंके पास

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१०१

संतोषकारक एक बातको कहताहूं—(एकाग्रचित्तसे श्रवण करो,) सोमवारसे युक्त अमावास्यां तिथिमें यहाँपर श्राद्धकरनेसे अक्षय फल प्राप्त होताहै ॥ ५५ ॥ प्रलय-कालमें समुद्रकेभी जल सूख जाते हैं परन्तु सोमवतीमें यहाँपर अनुष्ठित श्राद्धका कभी क्षय होताही नहीं है॥ ५६॥ यदि सोमवती अमावास्यामें इस कपिलधारा तीर्थपर श्राद्ध किया जावे तो गया क्षेत्र अथवा पुष्करमें श्राद्धानुष्ठानसे कौन फलहै?॥ ५७॥ हे गदाधर ! जहाँपर आप स्वयं विद्यमान हैं, और हे पितामह ! आपभी यहाँही हैं, फिर वृषध्वज मैंभी वर्तमानहीहूं तो यहाँपर फल्गुनदीके प्रकटहोनेमें कौन सन्देहहै ? ॥ ५८॥ बहुत क्या कहें, क्या स्वर्ग, क्या अंतरिक्ष, अथवा क्या भूमण्डल—सर्वत्रहीके जितने तीर्थ हैं, वे सब सोमवती अमावास्या पर्वमें यहाँहींपर विराजमान रहेंगे॥ ५९॥ सूर्यग्रहणके समय कुरुक्षेत्र, नैमिषारण्य और गंगासागरके संगममें श्राद्धकरनेसे जो फल मिलताहै, इस वृषभध्वज-तीर्थमेंभी वहीपुण्य प्राप्त होजाता है ॥ ६० ॥ हे दिव्यपितरगण ! इस तीर्थके वे नाम जो आपलोगोंकी बडी तृप्तिके कारणहैं, उनको मैं कहताहूं ॥ ६१ ॥ पहिले यह पोखरा मधुस्रवा था, फिर कृतकृत्या हुआ तब क्रमसे क्षीरनीरधि, वृषभध्वजतीर्थ, पैतामहतीर्थ, गदाधरतीर्थ, पितृतीर्थ, कपिलधारा, सुधाखनि, और शिवगयातीर्थ हुआहै ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ हे पितरगण ! इस तीर्थके इन दशोंनामोंको श्राद्ध और पिण्डके बिनाभी उच्चारण करनेसे आपलोगोंकी पूरी तृप्ति होजावेगी ॥ ६५ ॥ जो लोग अमावास्यातिथिके दिन पितरोंकी तृप्तिकी कामनासे यहाँपर ब्राह्मणोंको भोजन करावेंगे उनका कियाहुआ श्राद्ध अनंतफलदायक होगा ॥ ६६ ॥ इस स्थानमें जो लोग पितरोंकी तृप्तिके लिये श्राद्धमें उत्तम कपिला गौका दान करेंगे उनके पितरगण क्षीरोदके तीरपर वास करेंगे ॥ ६७ ॥ जो लोग इस वृषभध्वज तीर्थपर वृषोत्सर्ग करेंगे, उनके पितरगण अश्वमेध यज्ञके पुरोडाशोंसे तर्पित होवेंगे ॥ ६८ ॥ हे पिता-महगण ! इस कपिलधारा तीर्थपर सोमवती अमावास्यामें श्राद्ध करनेसे गयाश्राद्धका अठगुना पुण्य होताहै ॥ ६९ ॥ जो जीव गर्भके गिरजानेसे अथवा दाँत निकलनेके पहिलेही मरजाते हैं उन सबकीभी तृप्ति इसी कपिलधारातीर्थमें निश्चय होजाती है ॥ ७० ॥ यज्ञोपवीत और विवाहके पूर्वही प्राणत्याग करनेवालोंके लिये इस तीर्थमें पिंडा पारनेसे उन लोगोंकी अक्षयतृप्ति होती है ॥ ७१ ॥ जो लोग अगलेही (आग-लगने) से जरमरेहों अथवा जिनका शवदाह न हुआहो, वेभी इसी कपिलधारातीर्थमें तृप्त होते हैं ॥ ७२ ॥ जिनलोगोंकी अन्त्येष्टि क्रिया न हुईहो, किंवा षोडशश्राद्ध

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

न किये गयेहों, उनकी तृप्तिभी इसी घृतकुल्या तीर्थमें पिंडदेनेसे होसकती है ॥ ७३ ॥ जो लोग अपुत्रही मृत्युको प्राप्त होवें, अथवा जिनका कोईभी पानी देनेवाला न हो, उनकीभी परमतृप्ति इसी मधुस्रवा तीर्थमें तर्पणकरनेहीसे होती है ॥ ७४ ॥ चोर, बिजुरी, जल इत्यादिसे जिनका अपघात मरण हुआहो, यहांपर उन लोगोंका श्राद्ध करदेनेसे उनकी उत्तमगति होजाती है ॥ ७५ ॥ जिन पापियोंने (कुकर्मियोंने) आत्महत्या करडाली हो, इस शिवगयातीर्थमें पिंडा पारनेसे वेभी तृप्त होजाते हैं ॥ ७६ ॥ पिताके गोत्रमें अथवा माताके पक्षमें जो लोग मरेहों और उनका नाम ज्ञात न होतो यहाँपर पिंडदान करदेनेसे उनलोगोंकीभी अक्षय तृप्ति होसकती है ॥७७॥ पत्नीके वर्गमें किंवा मित्रमंडलीमें जो कोई मरेहों इस तीर्थमें तर्पणकरनेसे उनलोगोंकीभी तृप्ति होजातीहै ॥ ७८ ॥ क्या ब्राह्मण, क्या क्षत्रिय, क्या वैश्य, क्या शूद्र, किंवा अंत्यजोंहीमें कोई मरा हो, यहाँपर जिसीका नाम लेकर पिंडा देदियाजावे, उसीका उद्धार होजाता है ॥ ७९ ॥ जो लोग (मरनेपर) पशुपक्षी, अथवा पिशाचकी योनिमें जापडेहों, इस कपिलधारातीर्थमें तृप्त होनेपर वेभी ऊर्ध्वगतिको प्राप्त होजातेहैं ॥ ८० ॥ इस मधुस्रव तीर्थमें तर्पण करनेसे जो मर्त्ययोनिवाले पितर लोग इस मनुष्यलोकमें हैं, वेभी दिव्ययोनिके पितर होजाते हैं ॥ ८१ ॥ जो दिव्यलोकके पितृगण पुण्यके बलसे देवत्वको प्राप्त होजाते हैं, वे इस वृषभध्वज तीर्थमें तृप्त होनेपर ब्रह्मलोकमें चलेजाते हैं ॥ ८२ ॥ यह तीर्थ सत्ययुगमें दुग्धमय, त्रेतामें मधुमय, द्वापरमें घृतमय, और कलियुगमें जलमय होवेगा ॥ ८३ ॥ यह उत्तमतीर्थ यद्यपि वाराणसीकी सीमाके बाहर है, तथापि लोगोंको चाहिये कि मेरे सांनिध्यसे इस प्रधानतीर्थको वाराणसीके बीचहीमें समझें ॥ ८४ ॥ हे पितामह गण ! काशीस्थ समस्त लोगोंने पहिले यहींपर वृषभके चिह्नसे युक्त मेरी ध्वजाको देखाहै, इसलिये मैं इस स्थानपर वृषध्वजनामसे सदा निवास करूंगा ॥ ८५ ॥ हे पितरलोग ! आप लोगोंके संतोषार्थ मैं यहाँपर ब्रह्मा, नारायण, सूर्य और अपने पार्षदगणोंके साथ रहूंगा, ॥ ८६ ॥ जब कि भगवान् दिव्यपितरोंको इस प्रकारसे वरदान कररहेथे ठीक उसी समयपर नन्दीनामक प्रधान पार्षदने महादेवको प्रणाम करके यह निवेदन किया ॥ ८७ ॥ नंदिकेश्वर बोले—नाथ ! आपका विजयोदयहोवे, (आज्ञानुसारश्रीमान् वृका) रथ सुसज्जित करदियागया, जिसमें प्रकृतिरूप आठ सिंह धातुरूप आठ बैल ॥ ८८ ॥ दिग्गजरूप आठ हाथी, एवं (चित्त अहंकार बुद्धि और पांचों ज्ञानेन्द्रिय-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१०३

रूप) आठही घोडेभी जोतेगये हैं, जिसपर कशा (चाबुक) हाथमें लेकर सारथी बनकर मन विराजमान होरहाहै ॥ ८९ ॥ फिर जिसमें गंगा और यमुना दंड स्वरूपा, और पवनही पहिया अधिष्ठात्री देवता, एवं सन्ध्या और प्रभातरूप दोचक्र, तथा आकाशमंडल ही पवित्र छत्ररूप बनाहै ॥ ९० ॥ तारागण कीलोंके स्थानापन्न, रथबंधनरूप सर्पगण, मार्गदर्शिनी (लालटर्न) श्रुतियाँ, रथगुप्ति (टप्प) स्मृतियाँ ॥ ॥ ९१ ॥ जिसकी दृढ़ धूरा दक्षिणा, अभिरक्षक (सईस) यज्ञगण, आसन (गद्दी) पणव पैररखनेका स्थान (पावदान) गायत्रीहै ॥ ९२ ॥ फिर जिसमें बढ़ियाँ सीढ़ियाँ अंगोंके सहित सातों व्याहृतियां, और चन्द्र—सूर्य दोनों जन द्वाररक्षक हैं ॥ ९३ ॥ मकरतुंडरूप अग्निदेव, रथभूमि चन्द्रिका, ध्वजदंड महामेरु, एवं पताका सूर्यकी प्रभाहै ॥ ९४ ॥ जिसपर साक्षात् वाग्देवताही चंचल चामर धारिणी रूपसे खडीहैं । स्कन्दने कहा—नन्दिकेश्वरके यों कहनेपर देव देव शंकर ॥ ९५ ॥ पिनाक धनुषको हाथमें लिए हुए, भगवान् नारायणका हाथ पकडकर आठों देव माताओंके आरती उतारनेपर उठ खडेहुए ॥ ९६ ॥ उस घडी चारण लोगोंके मंगलगीतोंकी ध्वनि दिव्यबाजोंकी ध्वनिसे औरभी बढकर स्वर्ग—मर्त्यलोकोंके मध्यस्थलको भरपूर किये देतीथी ॥ ९७ ॥ उस दिव्यध्वनिके चारों दिशाओंमें भरजानेपर समस्त भुवन-वासी लोग उसीसे निमंत्रित लोगोंकी नाईं काशीकी ओर यात्रा करनेलगे ॥ ९८ ॥ उस वेलापर तेतीस कोटि देवतागण, बीस सहस्रकोटि गणलोग, नव करोड चामुण्डा, एक करोड भैरवी ॥ ९९ ॥ आठ करोड बडे बली मयूर वाहनारूढ षण्मुख मेरे अनुचर वर्ग, साथी, कुमारगण ॥ १०० ॥ सातकोटि चमकीले कुठारको हाथमें धारणकिए हुए बडे वेगवाले तोंदेले विघ्नविदारक गजमुखगण ॥ १ ॥ छियासी सहस्र ब्रह्मवादी मुनिगण, उतनीही संख्याके गृहस्थ धर्मावलंबी ऋषिलोग ॥ २ ॥ तीन करोड पाताल तलवासी नागगण, दो दो करोड परम शैव दैत्य और दानवगण ॥ ३ ॥ आठलाख गंधर्वगण, पचासलाखमें यक्ष और राक्षसगण, दोलाख दशसहस्र विद्याधरगण, ॥ ४ ॥ साठसहस्र स्वर्गकी उत्तम अप्सरागण, आठलाख गोमाताओंका गण, साठसहस्र गरुडगण ॥ ५ ॥ विविधरत्नोंके उपहार देनेवाले सातोंसमुद्र, अस्सी सहस्र नदियाँ ॥ ६ ॥ आठसहस्र पर्वतगण, तीनसौ वनस्पतिगण, और आठों दिक्पाल, जहाँपर भगवान् पिनाकपाणि विराजमान थे वहाँपर आपहुँचे ॥ ७ ॥ इन सबलोगोंके साथ परमसन्तुष्टचित्तसे भगवान् विश्वेश्वरने इधर उधर लोगोंकी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

स्तुतिको सुनतेहुए उसी रथपर चढकर अतिमनोहर काशीपुरीमें प्रवेश किया ॥ ८ ॥ प्रवेशकरतेसमय परमहर्षित त्रिलोचन शिव, भगवती गिरजादेवीके साथ मुदमंगलकी खानि स्वर्गसेभी रमणीय वाराणसीपुरीको प्रहृष्ट होकर इधर उधर देखनेलगे ॥ ९ ॥ स्वामिकार्तिकने कहा—जो कोई करोडों जन्मके पापनाशक इस पुण्यप्रद उपाख्यानको पढे अथवा पढवाये वह शिवसायुज्य पदको पाये ॥ ११० ॥ विशेष करके श्राद्धके समयमें इसे अवश्यही पढना चाहिये, क्योंकि इसके पाठसे वह श्राद्ध पितरोंका परमतुष्टिकर और अक्षय होजाताहै ॥ ११ ॥ एक वर्षभर प्रतिदिन शिवके समीपमें इस वृषभध्वज माहात्म्यके पाठ करनेसे पुत्रहीन जनभी पुत्रवान् होताहै ॥ १२ ॥ मैंने तुमसे यह जो विश्वेश्वरके काशीमें प्रवेशकरनेका वृत्तान्त वर्णन किया यह परम आनन्दके कन्दका बीज है इसमें तनिकभी संदेह नहीं है ॥ १३ ॥ जो कोई हर्षके साथ इस आख्यानको पढकर नये गृहमें प्रवेश करे तो वह सबप्रकारके सुखसे परिपूर्ण रहे, यह बात निश्चित है ॥ १४ ॥ जब कि इसके श्रवणगोचर होनेसे स्वयंभगवान् विश्वनाथही संतुष्ट होजातेहैं, तब फिर समस्त विश्वम्भरके लोगोंको यह हर्षदायक होतो इसमें भला कौनसा संदेह होसकताहै ? ॥ १५ ॥ इस कथामें भगवान् विश्वेश्वरकेभी दुर्लभ काशीप्रवेशका वर्णन कियागयाहै, अतएव जो अभिलषित वस्तु बहुतही दुर्घट समझ पडे उसके पानेके लिये इस उपाख्यानका निरंतर पाठ करना चाहिये ॥ १६ ॥

दोहा—तीर्थ कपिलधारा विदित, सोमवतीके पर्व ।
गयाश्राद्ध फल लाभ हित, करैं श्राद्ध तहँ सर्व ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्धे भाषायां वृषभध्वजप्रादुर्भाव—कपिलधारातीर्थवर्णनंनाम द्विषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६२ ॥

तिरसठवां अध्याय

ज्येष्ठेश्वर और जैगीषव्येश्वरकी कथा ।

अगस्त्यऋषिने पूँछा—हे तारकासुरारिपो ! भगवान् त्रिपुरान्तकने नयनानन्दकरी और समस्त मनोरथोंसे परी, काशीपुरीको देखकर क्या किया, उसे आप मुझसे प्रकाश कीजिये ॥ १ ॥ (तब) स्कन्दने उत्तर दिया—हे पतिव्रतापते ! अगस्त्य ! भगवान् चन्द्रशेखरने काशीको अपने नेत्रोंकी पाहुनी बनाकर जो कुछ किया वह सब

१०५

मैं वर्णन करता हूं सुनो ॥ २ ॥ प्रथम तो परमभक्तवत्सल चित्त, भगवान् सर्वज्ञनाथने गुफाके भीतर बैठेहुए जैगीषव्य नामक महामुनिको देखा ॥ ३ ॥ जिस समय विश्वनाथने वृषभराजपर चढकर गिरिजादेवीके साथ (काशीसे) मन्दराचलके लिये प्यान किया ॥ ४ ॥ उसी दिनसे लेकर इस महा तपस्वी पुण्यात्मा जैगीषव्य मुनिने यह परमकठिन नियम धारण किया कि ॥ ५ ॥ भगवान् विश्वेश्वरका चरण-कमल जब फिर देखपाऊंगा तभी जलका बिन्दुभी पान करूंगा नहीं तो कुछभी न खाऊं पीऊंगा ॥ ६ ॥ हे कुम्भजमुने ! वे योगिराज जैगीषव्य ऋषि चाहे किसी योगकी धारणाके बलसे अथवा शम्भुके अनुग्रहहीसे विना कुछ खाये पियेही (जीते जागते) वहां बैठेरहे ॥ ७ ॥ इस घटनाका समाचार केवल महादेवही जानतेथे दूसरे किसीको कुछभी परिज्ञात नहीं था । इसीकारण प्रथमतः प्रमथनाथ वहाँहीपर चले गये ॥ ८ ॥ ज्येष्ठमासके शुक्लपक्षकी चतुर्दशी तिथि सोमवार, अनुराधा नक्षत्र, यह पर्व जब प्राप्त हो तब उस स्थानकी महायात्रा लोगोंको अवश्यमेव करनी चाहिये ॥ ९ ॥ उसी दिनसे काशीमें वह पुण्यमय ज्येष्ठस्थान प्रसिद्ध हुआ और वहांपर ज्येष्ठेश्वर नामक एक शिवलिंग आपसे आप प्रकट होगया ॥ १० ॥ सूर्यके प्रकाश फैलनेसे जैसे अंधकार दूर होजाताहै उसीभाँति उस लिंगके दर्शन होतेही लोगोंके सैकडों जन्मके बटोरेहुए पाप क्षणभरमें विलीन होजातेहैं ॥ ११ ॥ जो कोई ज्येष्ठ वापीमें स्नान कर पितरोंका तर्पण करनेपर ज्येष्ठेश्वरका दर्शन करताहै उसे फिर भूमिपर जन्म नहीं होनापडता ॥ १२ ॥ उसी स्थानपर ज्येष्ठेश्वरके समीपहीमें सर्वसिद्धि-प्रदायिनी सबसे श्रेष्ठा ज्येष्ठा गौरी स्वयं प्रकट हुई ॥ १३ ॥ ज्येष्ठमासकी शुक्ला अष्टमीको वहांपर महोत्सव और रात्रिमें जागरण संपत्तिकी समस्त समृद्धियोंके लिये करना चाहिये ॥ १४ ॥ बडीही हतभागिनी स्त्रीभी ज्येष्ठा वापीमें स्नान एवं ज्येष्ठा गौरीके दर्शन करनेसे परमसौभाग्यवती होजातीहै ॥१५॥ वहां महादेवके स्वयं वास करनेकेकारण निवासेश्वर नामक एक दूसराही लिंग उसी स्थानपर प्रसिद्ध होगयाहै॥ १६॥ उस निवासेश्वर लिंगके सेवनसे गृहमें समस्त संपत्तियाँ प्रत्येक विषयमें सर्वदैव निवास करती रहतीहैं ॥ १७ ॥ जो उत्तम नर ज्येष्ठेश्वरके समीपमें घृत और मधु इत्यादि वस्तुओंके साथ विधानपूर्वक श्राद्ध करताहै, वह पितरोंको सर्वज्येष्ठ तृप्तिसे संतुष्ट करदेताहै ॥ १८ ॥ काशीके ज्येष्ठतीर्थ पर शक्तिके अनुसार दान करनेसे मनुष्य उत्तम स्वर्गादि भोगोंको भोग कर अन्तमें मुक्त होजाताहै ॥ १९ ॥ कल्याण चाहने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वाले लोगोंको सबसे पहिले काशीमें ज्येष्ठेश्वरकी अर्चना तदनंतर जेष्ठा गौरीकी पूजा करनेसे सबमें ज्येष्ठत्व पदकी प्राप्ति होतीहै ॥ २० ॥ इसके पीछे कृपानिधि भगवान् धूर्जटीने सब देवतोंके सुनते हुए नन्दीको पुकार कर बात कही ॥ २१ ॥ ईश्वर बोले—हे नन्दिन् ! यहाँपर एक मनोहर गुहा है, उसमें तुम घुसजाओ उसके भीतर मेरा एक भक्त जैगीषव्य नामा तपोधन है ॥ २२ ॥ हे नन्दिन् ! वह बडाभारी नियमधारी होनेसे (मांसरहित) खाल नस और हाड भर शेष रहगयाहै, सो तुम मेरे दर्शनके दृढ़व्रती उस मेरे भक्तको यहां उठा लाओ ॥ २३ ॥ जबसे मैं इस काशीसे सर्वसुन्दर मन्दराचल पर चलागया तबसे इस ऋषिने खान पान छोडकर यह कठोर नियम धारण कियाहै ॥ २४ ॥ सो तुम अमृतके समान पोषक इस लीलाकमलको लेलो और, परम वृद्धिकारक इसी (लीलाकमल) को अभी उसके समग्र शरीरमें छुला दो ॥ २५ ॥ इसके अनंतर नन्दीने भगवान्से उस लीला कमलको लेकर महादेवको प्रणाम करके उस गंभीर गुहामें प्रवेश किया ॥ २६ ॥ फिर वहांजाकर तपरूप अग्निसे शुष्कांग और धारणामें दृढ चित्त रहनेके कारण बाह्य ज्ञानसे शून्य उस मुनिको देखतेही उनने कमलसे स्पर्श करादिया ॥ २७ ॥ (बस फिर क्या था) उस कमलके छूजातेही (गर्मीमें) तपजानेके पीछे वृष्टिका संयोग होतेही खोंढरेमें जैसे मेढक फुदकने लगताहै वैसेही वे मुनिभी उल्लसित होनेलगे ॥ ॥ २८ ॥ तब तो नन्दीने मुनिराजको तुरत उठालाकर देवदेवके चरणोंके आगे प्रणाम करते हुए रखदिया ॥ २९ ॥ इसके अनंतर जैगीषव्य मुनि घबडाहटके साथ सन्मुखही वामभागमें भगवती गिरिजा देवीके सहित शोभायमान श्रीशंकर भगवान्को देखतेही प्रणाम करनेलगे ॥ ३० ॥ फिर तो वह मुनि भूमिपर लोटतेहुए दण्डवत्प्रणाम कर परम भक्तिके साथ चन्द्रशेखरकी स्तुति करनेमें लगगये ॥ ३१ ॥ जैगीषव्य बोले—जो शिव, शान्त, सर्वज्ञ, शुभमय, जगत्के आनन्द कंद परमआनंदके निदान ॥ ३२ ॥ रूपरहित होकरभी जो रूपवान्, वर अनेक रूपधारी, विधिस्वरूप, ब्रह्मा और विष्णुके द्वारा स्तवनीय, विरूपाक्ष हैं मैं उनको वारंवार नमस्कार करताहूं ॥ ३३ ॥ हे नाथ ! आपही स्थावर और जंगमरूपहैं आपको नमस्कारहै आपही सर्वात्मा और आपही परमात्मा हैं अतएव आपको नमस्कार है ॥ ३४ ॥ आपही त्रैलोक्यमात्रमें कमनीयहैं, आपही कामदेवके भस्म करनेवालेहैं, आप शेष विशेषसे हीन, और शेषनागको अपना विजाधठ बनाए रहते हैं आपको मैं प्रणाम

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by eGangotri

१०७

करताहूं ॥ ३५ ॥ हे श्रीकण्ठ ! आपके कंठमें विष शोभितहै, आपके चरणोंकी वंदना स्वयं वैकुण्ठनाथ करते रहतेहैं, और आपकी शक्ति कदापि कुण्ठित नहीं होती, मैं आपको नमस्कार करताहूं ॥ ३६ ॥ स्वयं शक्तिही आपके वामार्द्ध देहमें विराजमान है, आप देहविहीन होनेपरभी सुन्दर देहको धारण करतेहैं, जो देहधारी एकबारभी आपको प्रणाम करताहै फिर कभी उसे देह नहीं धरना पडता, अतएव आपको प्रणामहैं ॥ ३७ ॥ आपही काल, और कालकेभी काल महाकालहैं, आपहीने (जगत्के हितार्थ) कालकूट विषको पान कियाहै, आप तो सर्पोंहीको अपना भूषण और यज्ञोपवीतभी बनाये रहतेहैं ॥ ३८ ॥ हे खण्डपरशो ! आप चन्द्रके खण्डको धारण किये रहतेहैं, आपही समस्त दुःखोंका खण्डन करतेहैं, और खड्गी एवं खेटक (ढाल) धारीहैं, अतः मैं आपको प्रणाम करताहूं ॥ ॥३९॥देवतालोग सर्वदैव आपका गुण गाते रहतेहैं, आपके जटाजूटमें गंगाके तरंगोंकी मालायें उठाकरतीं हैं,आपही गौरीके नाथहैं,आप गिरिशायी और गिरिगणके नायकहैं,॥ ॥४०॥अर्द्धचन्द्रके शिरोभूषण होनेपरभी (पूर्ण) चन्द्र, सूर्य, और अग्नि, आपके तीनोंही नेत्रहैं, हे कृत्तिवासः ! दिगम्बररूप आपको नमस्कारहै ॥ ४१ ॥ हे जगदीश ! आप पुराणपुरुष, और (भक्तोंके) जराजन्महारी, पापान्तकारी एवं जीवरूपधारी (जीवात्मा) हैं ॥ ४२ ॥ हे गंगाधर ! आपही जगत्मात्रके नेत्र और स्वयं त्रिनेत्रहैं, आपके हाथोंमें डमरू (पिनाक) धनुष, और त्रिशूल शोभितहै, आपही त्रिविधवाली देवतोंके अधिनाथ हैं, एवं तीनों वेदोंमें आपहीकी महिमा कहीगई है अतएव आपको वारंवार नमस्कारहै॥ ४३॥ ४४॥ आप त्रयीमयहैं, परमसंतुष्टहैं, और भक्तोंके परमसंतोषदाताहैं, आपही दीक्षित और देवतोंकेभी देवताहैं, मैं आपको प्रणाम करताहूं ॥ ४५ ॥ हे दूरदर्शिन् ! आपही समस्तपापोंको दूर करतेहैं और स्वयं सबसे दूरवर्ती रहतेहैं, आपही दोषोंको दलन करते हैं फिर आपसा दुर्लभ कौन है ? अतएव आपको नमस्कारहै ॥ ४६ ॥ हे चन्द्रकलाधर ! आप समस्त दोषागमनसे रहित हैं, हे धत्तूर पुष्पप्रिय ! धूर्जटे ! आपको प्रणाम करताहूं ॥ ४७ ॥ हे नीलकंठ ! आपही धीर, धर्म; और धर्मके पालक हैं, अतएव हे नीललोहित ! मैं आपहीको वारंवार नमस्कार करताहूं ॥ ४८ ॥ आप तो अपने नाममात्रके स्मरण करनेवालोंको त्रैलोक्य भरके ऐश्वर्यसे भरपूर करदेते हैं, फिर आपही पिनाकोद्यत पाणि प्रमथनाथहैं, आपको नमस्कार है ॥ ४९ ॥ आपही पशुपाशके काटनेवाले पशुपति हैं, अपने नामोच्चारण

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

करनेवालोंके घोर पापोंको आपही हरलेते हैं मैं आपको नमस्कार करताहूं ॥ ५० ॥ आपही परात्पर, और (संसारसागरके) पारस्वरूपहैं, आप तो पर और अपरसेभी परे रहते हैं, आपका चरित्र अपार एवं कथा परमपवित्रहै, अतएव आपको प्रणामहै ॥ ५१ ॥ आपही वामदेव वामार्धधारी, वृषभगामी, भर्ग, भीम, और प्रणतजनोंके भीतिहारी हैं, आपको मेरा प्रणामहै ॥ ५२ ॥ हे महादेव ! आप सब तेजोंके स्वामी महेश्वरहैं आपही भव और भवनाशक भूतपतिहैं, आपको नमस्कारहै ॥ ५३ ॥ आप पार्वतीके पति और मृत्युंजयहैं, आपही दक्षके यज्ञविध्वंसक, और यक्षराज कुबेरके परमप्रियहैं, आपको प्रणामहै ॥ ५४ ॥ आपही यज्ञपुरुष, यज्ञकर्ता, और यज्ञोंके फलदाताहैं, एवं आपही रुद्र, रुद्रपति, और कुत्सितरोदनके मिटानेवाले एवं सर्वसंपत्तिदायक हैं ॥ ५५ ॥ आपही त्रिशूलधारी, शाश्वतईश्वर, और श्मशानभूमिचारी हैं, आपही पार्वतीके वल्लभ, शर्व और सर्वज्ञ हैं, आपको नमस्कार करताहूं ॥ ५६ ॥ हे क्षमाकर ! आपही हर, क्षमाकीमूर्ति, और क्षेत्रज्ञहैं, आपही (सब विषयोंमें) समर्थ, क्षतिहर्ता और क्षीरके समान गौरवर्ण हैं, आपको प्रणाम है ॥५७॥ हे अंधकारसुरनाशक ! आप तो आदिअन्तसे रहितहैं आपही इडा (पृथ्वीवाणी) के आधार, और ईश एवं इन्द्र और उपेन्द्रादिदेवोंसे स्तुत हैं आपको नमस्कार है ॥५८॥ आप उमाकान्त, उग्र, ऊर्ध्वरेता, अकेले, एकरूप, और बडी संपत्तिके दाताहैं, आपको प्रणाम है ॥ ५९ ॥ आप अनन्तकार्योंको करते हैं, आपही अंबिकादेवीके स्वामी हैं, आपही प्रणव, वषट्कार, भूः, भुवः और स्वः हैं, अतएव आपहीको नमस्कार है ॥ ॥ ६० ॥ हे उमानाथ ! इस संसारमें जो कुछ दृश्य अथवा अदृश्य पदार्थ हैं वे सब आपही हैं (आपसे भिन्न तो कुछभी नहीं है तब) हे प्रभो ! भला मैंभी आपकी स्तुति करसकूं यह सामर्थ्य (मुझमें) कहां है ? क्योंकि स्तुतिकर्ता तो आपहीहैं॥६१॥ आपही वाच्य, आपही वाचक और आपही वचन हैं, अतएव मैं आपको (केवल) प्रणाम कररहाहूं, हे महादेव ! मैं तो दूसरे किसीको जानताही नहीं, हे महेश्वर ! फिर अन्य किसीकी स्तुति कैसे करसकताहूं ? ॥ ६२ ॥ हे गौरीश ! दूसरेको तो मैं प्रणामभी नहीं करता हे शिव ! न अन्य किसीका नामही लेताहूं, मैं तो दूसरेका नाम कहनेमें गूँगा और अन्यकी कथा सुननेमें बहिरा ॥ ६३ ॥ दूसरेके पासजानेमें पंगुल (लूला) एवं अन्य किसीके देखनेमें अंधा होरहताहूं । मेरे तो एक आपही स्वामी और आपही कर्ता ॥ ६४ ॥ हर्ता एवं पालयिता हैं, अनेकरूप

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१०९

तो मूढलोगोंहीकी कल्पनाहै, अतएव हे महेश्वर ! मैं वारंवार आपहीके शरणागत हूं ॥ ६५ ॥ मैं तो संसारसागरमें डूबरहाहूं, आप मेरा उद्धार करें, इस प्रकारसे वे महामुनि जैगीषव्य, महादेवकी स्तुतिको कर, ॥ ६६ ॥ स्थाणु भगवान्के आगे ठूँठवृक्षके समान खडे होकर मौन (चुप) होगये, तब तो चन्द्रभूषणने उस मुनिकी ऐसी स्तुतिके सुननेसे प्रसन्नचित्त होकर जैगीषव्य ऋषिसे कहा कि, वर मांगो ॥ ६७ ॥ जैगीषव्य बोले—हे परमपददायक ! भवानीश ! देवदेव ! यदि आप प्रसन्न हैं, तो (यही वर दीजिये कि) मैं आपके चरणकमलसे (कभी) दूर न होनेपाऊं ॥ ६८ ॥ एवं हे नाथ ! एक और भी वर मुझे विना विचारेही देदीजिये (वह यह है कि) मैंने आपका लिंग-स्थापित कियाहै, उसमें आप सर्वदा वास करें ॥ ६९ ॥ ईश्वरने कहा—हे अनघ ! महाभाग ! जैगीषव्य ! तुमने जो कुछ कहा वह सब तो होवेहीगा पर मैं और भी एक वर (अपनी ओरसे) देताहूं ॥ ॥ ७० ॥ मैं तुमको निर्वाण साधक योगशास्त्र दान करताहूं, तुम (आजसे) समस्त योगियोंके मध्यमें योगाचार्य होगे ॥ ७१ ॥ हे तपोधन ! मेरे प्रसादसे तुम योगशास्त्रके संपूर्ण गूढतत्त्वोंको यथार्थरीतिसे ऐसा समझसकोगे जिससे अन्तमें निर्वाणको प्राप्त होजाओगे॥७२॥ जैसे नंदी, भृंगी, और सोमनन्दी हैं, वैसेही तुमभी जरामरणसे रहित मेरे परमभक्त होवोगे ॥ ७३ ॥ यद्यपि अनेक व्रत, अनेक नियम, बहुतसे तप और नानाविधके दान होतेहैं ॥७४॥ जो कल्याणके साधक और पापके बाधक कहेजातेहैं, परंतु यह नियम जिसे तुमने कियाहै बडाही कठिनहै ॥ ७५ ॥ मेरा दर्शन करके तभी भोजन करना यह बहुतही उत्तम नियमहै, क्योंकि मेरे दर्शनके विनाही जो कुछ खाया जाताहै, वह तो केवल पापहीका भोजनहै ॥ ७६ ॥ जो मूढ पत्र पुष्प फल इत्यादिसे मेरा पूजन कियेही बिना खालेताहै, वह इक्कीस जन्मतक रेतोभक्षी होताहै ॥७७ ॥ तुमने जिस बडे नियमका अनुष्ठान किया उसकी षोडशीमात्राकोभी कोई नियम अथवा यज्ञ नहीं पहुँचसकते ॥ ७८ ॥ अतएव तुम मेरे चरणोंके समीपमें सदैव वास करोगे, और वहींपर निस्संदेह तुमको अन्तमें निर्वाण पद प्राप्त होगा ॥ ७९ ॥ काशीमें परमदुर्लभ इस जैगीषव्येश्वरनामक लिंगके तीन वर्ष पर्यंत सेवनकरनेसे निश्चयही योग प्राप्त होजाताहै ॥ ८० ॥ जो कोई जैगीषव्यकी गुहामें पहुँचकर योगाभ्यास करताहै, वह मेरे अनुग्रहसे छहमासके भीतरही अभीष्टसिद्धिको पाताहै ॥ ८१ ॥ जो भक्तलोग बडी सिद्धि चाहतेहों, उनको

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रयत्नपूर्वक तुम्हारे स्थापित इस लिंगकी पूजा तथा इस रमणीय गुफाका दर्शन करना चाहिये ॥ ८२ ॥ इस ज्येष्ठेश्वरक्षेत्रमें यह शिवलिंग सब सिद्धियोंका दाता है, इसके दर्शन स्पर्शन और पूजन करनेसे पापराशिभी बिलाय जातीहै ॥ ८३ ॥ इस ज्येष्ठेश्वर क्षेत्रमें एक एक शिवयोगियोंके भोजन करानेसे कोटिकोटिजनोंके भोजन करानेका पूर्ण फल होताहै ॥ ८४ ॥ इस जैगीषव्येश्वरनामक लिंगको कलियुगमें विशेष करके पापबुद्धिलोगोंके आगे बडे यत्नसे गुप्तही रखना चाहिये ॥ ८५ ॥ हे तपोधन ! मैं साधक लोगोंको योगसिद्धिके दान करनेके लिये सदैव इस लिंगमें बनारहूंगा ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ हे महाभाग ! जैगीषव्य ! मैं औरभी एक वर देताहूं, सुनो तुमने जो यह स्तोत्र रचाहै सो परमयोगसिद्धिकारक माहापापविदारक, परमपुण्यवर्द्धक, महाभीति नाशक, और परमभक्तिदायक होगा ॥ ॥ ८८ ॥ इस स्तोत्रके पाठकरनेसे मनुष्योंको कुछभी असाध्य नहीं रहेगा, अतएव बडे बडे साधक लोगोंको इसे प्रयत्नपूर्वक जपना चाहिये ॥ ८९ ॥ प्रसन्नदृष्टि, भगवान् कामरिपुने जैगीषव्यऋषिको इस भाँतिसे वरदान देकर वहांपर (बटुरकर) आये हुए क्षेत्रवासी ब्राह्मणोंको देखा ॥ ९० ॥ स्कन्दने कहा—जो विज्ञजन प्रयत्न पूर्वक इस अतुलनीय उपाख्यानको सुनेगा, वह नर निष्पाप होजावेगा और किसी भाँतिके उपद्रवोंसे पीडितभी नहीं होने पावेगा ॥ ९१ ॥

दोहा—जैगीषव्य मुनीशकी, गुफा एक अँधियार ।
योगेश्वरके पासमें, है दिखलात अपार ॥ १ ॥

इति श्रीकन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्द्धे भाषायां ज्येष्ठेश्वर-जैगीषव्येश्वरकथावर्णनंनाम त्रिषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६३ ॥

चौंसठवाँ अध्याय ।

काशीका माहात्म्य और रहस्य वर्णन ।

अगस्त्यने फिर पूँछा कि—हे षडानन ! भगवान् शंभुने ब्राह्मणोंको देखकर क्या कहा ? और वहांपर कौन कौनसे लिंग प्रकट हुए उनकाभी वर्णन कीजिये ॥ १ ॥ एवं उस परमपवित्र, महादेवके अतिप्रिय, ज्येष्ठस्थानमें कौनसी आश्चर्य घटना हुई उसेभी मुझसे प्रकाश कीजिये ॥ २ ॥ स्कन्दने उत्तर दिया—हे अगस्त्य ! तुमने मुझसे जो जो बातें पूँछी हैं, मैं उन सबको कहताहूं, श्रवण करो जब कि, भगवान्

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१११

शिवने ब्रह्माके अनुरोधसे मन्दराचलको पयान किया ॥ ३ ॥ तब वे सब निर्मल क्षेत्र संन्यासधारी ब्राह्मणलोग निराश्रय होकर उस महाक्षेत्रके प्रतिग्रह लेनेसे एकबारही रुकगये ॥ ४ ॥ और वे लोग डंडेके हूरेसे भूमिको खन खोदकर कंद इत्यादिके भोजनसे जीवन निर्वाह करने लगे, हे मुनिवर ! इस भाँतिसे वहांपर एक रमणीय देवस्नात नामक पुष्करिणी बनगई ॥ ५ ॥ वेलोग उस तीर्थके चारों ओर अनेक बडे बडे लिंगोंको स्थापित कर प्रयत्नपूर्वक महेशकी आराधनामें तत्पर हो तपस्या करनेलगे ॥ ॥ ६ ॥ वे लोग नित्यही अंगोंमें भस्मलेपन, और रुद्राक्षधारण करके निरंतर शिवलिंगकी पूजा और शतरुद्रियका जप करतेथे ॥ ७ ॥ वे सबलोग तपकरनेसे अत्यंत कृश, और घोर तपस्यामें परमतत्पर पाँचसहस्र ब्राह्मण गण देवदेवके पुनरागमनका समाचार सुनकर परमानन्दित हो दर्शनके लिये दंडस्नात नामक तीर्थसे वहांपर आयेथे ॥ ॥ ८ ॥ ९ ॥ और मंदाकिनी तीर्थसे पाशुपतव्रतधारी एकमात्र शिवकी आराधनमें परायण दशसहस्र ब्राह्मण गण वहाँपर आकर प्राप्त हुए ॥ १० ॥ योंही हंसतीर्थसे दशसहस्र तीनसौ, दुर्वासातीर्थसे बारहसौ; ॥ ११ ॥ मत्स्योदरी तीर्थसे छहसहस्र, कपालमोचन तीर्थसे सातसौ ॥ १२ ॥ ऋणमोचन तीर्थसे बारहसौ वैतरणी तीर्थसे पांचसहस्र, ॥ १३ ॥ महाराज पृथुके खोदवायेहुए पृथुतीर्थसे तेरहसौ ॥ १४ ॥ अप्सराओंके तीर्थ मेनकाकुंडसे दोसौ, उर्वशीकुंसे बारहसौ, ॥ १५ ॥ ऐरावत कुंडसे तीनसौ, गंधर्वकुंडसे सातसौ, अप्सराकुंडसे दोसौ, ॥ १६ ॥ वृषभध्वज तीर्थसे तीनसौ नव्वे, यक्षिणीकुंडसे तेरहसौ ॥ १७ ॥ लक्ष्मीकुण्डसे सोलहसौ, पिशाचमोचन तीर्थसे सातसहस्र ॥ १८ ॥ पितृकुण्डसे कुछ अधिक एक सौ, ध्रुवतीर्थसे छःसौ, मानससरोवरसे पांचसौ, ॥ १९ ॥ वासुकिह्रदसे दशसहस्र सीताकुण्डसे आठसौ, गौतमकण्डसे नवसौ ॥ २० ॥ २१ ॥ और दुर्गाकुंडसे ग्यारहसौ, भृगुकुलावतंस ब्राह्मणगण परमानंददायक भगवान् काशीनाथ उमापति देवके दर्शन करनेको वहाँपर आकर उपस्थित हुए ॥ २२ ॥ हे घटोद्भव ! इसीप्रकारसे असिसंगमसे लेकर वरणा संगमके संगमेश्वर तकके गंगाके तीरपर रहनेवाले अठारह सहस्र पांचसौ पचास ब्राह्मण गंगातटसे वहाँ पर हाथमें ओदी दूब अक्षत पुष्प, फल, सुगंध एवं माला लेकर, जयजय कार मनातेहुए, वारंवार मंगलसूक्तोंको कहते और प्रणाम करतेहुए जापहुँचे । भगवान् शंकरने उनलोगोंको अभय देकर बडे हर्षसे कुशल प्रश्न किया ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ तब उन ब्राह्मणोंने हाथ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जोड कर कहा कि, हे नाथ ! आपके इस क्षेत्रमें निवास करनेवालोंका तो सर्वदैव कुशलहीहै ॥ २७ ॥ फिर जिसके स्वरूपको वहभी नहीं जान सकते, आज हम लोग उन्हीं आपको साक्षात् नेत्रोंसे देख रहेहैं (तो अबभी हमारे कुशलमें कुछ सन्देह है ?) ॥ २८ ॥ जो लोग आपके क्षेत्रसे पराङ्मुख हैं, उन्हींका अमंगल सर्वदा होता रहताहै, और चौदहों भुवनभी उनके विपरीत होजातेहैं ॥ २९ ॥ हे भुजंगभूषण ! जिनके हृदयमें काशी सदैव विद्यमान रहती है, उनको संसाररूपी सर्प कभी नहीं डँससकता ॥ ३० ॥ "काशी" ऐसा दोअक्षरका मंत्र गर्भरक्षाकी मणिहै, यह जिसके कंठमें विराजमान रहै तो फिर उसकी अकुशलता कहांहै ? ॥ ॥ ३१ ॥ जो कोई "काशी" नामक दो अक्षरोंका अमृत पीलेताहै, वह निर्जरा अवस्थाको त्यागकर अमृतही होजाताहै ॥ ३२ ॥ जिसने इन दो अक्षरोंकी काशीका नाम अपने कानोंमें डाललिया, उसे फिर कभी गर्भविषयिणी वार्ता नहीं सुननी पडती ॥ ३३ ॥ हे चन्द्रशेखर ! जिसके माथेपर एकबारभी दैवयोगसे कहीं काशीकी धूलि वायुवेगसे उडकर पडजावे तो उसका मस्तकभी चन्द्रकलासे सुशोभित होजाताहै ॥ ३४ ॥ प्रसंगवशसेभी एकबार यह आनन्दकानन जिनके नेत्रपथपर पडजाताहै, वे न तो फिर संसारमें उत्पन्नही होते और न श्मशानहीको देखते हैं॥ ३५॥ जो कोई उठते बैठते, सोते और जागते अथवा किसी अवस्थामें हो, "काशी" इस महामंत्रका जहींपर जपकरताहै वहीं भयसे रहित होजाताहैं ॥ ३६ ॥ जिसने काशी इस बीजमन्त्रके दोनों अक्षरोंको अपने हृदयमें बैठालिया, उसके सबी कर्मबीज निर्बीज होजाते हैं ॥ ३७ ॥ जो कोई काशी-काशी-काशी-ऐसा कहींपर जपता रहताहै वह जहांहीं रहताहै वहींपर उसके आगे मुक्ति प्रकाशित होती है ॥ ३८ ॥ हे भव ! यह काशी साक्षात् कल्याणकी मूर्ति है, और आप कल्याणस्वरूप हुई है, फिर गंगाभी यहां कल्याणमयी बहरहीहैं, तो ये सब तीनोंही क्षेमकर्ता अन्यत्र कहां हैं?॥ ३९॥ पार्वतीनाथ भगवान् हर ब्राह्मणोंके क्षेत्रभक्तिसे परिपूर्ण वचनको सुनकर बहुतही संतुष्ट हुए ॥ ४० ॥ फिर परमप्रसन्न होकर कहने लगे, हे द्विजोत्तमगण ! तुम लोग धन्य हो, जो तुमलोगोंकी ऐसी भक्ति मेरे इस परमपावन क्षेत्रपर बनी है ॥ ४१ ॥ मैं जानताहूं कि तुम लोग इस क्षेत्रके सेवन करनेहीसे रजोगुण और तमोगुणसे रहित होकर सत्त्वगुणसे पूर्ण होगयेहो, और इसीकारणसे संसारसमुद्रके पारभी पहुँचचुकेहो ॥ ४२ ॥ जो लोग वाराणसीमें भक्ति करते हैं वे निस्सन्देह मेरेही भक्तहैं,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

११३

वे सब मोक्षलक्ष्मीके कटाक्षपात करनेसे जीवन्मुक्त होजाते हैं, यह ध्रुवहै ॥ ४३ ॥ जिन लोगोंने काशीके किसी क्षुद्रजन्तुसेभी विरोध किया वे समस्त पृथिवीके सहित मुझसे विरोध करचुके ॥ ४४ ॥ जो कोई वाराणसीकी बडाई सुनकर उसका अनुमोदन करताहै, वह समस्त ब्रह्मांडमंडलका अनुमोदन करचुका इसमें कुछभी सन्देह नहीं है ॥ ४५ ॥ जो लोग इस आनन्दवनमें रहते हैं, वे शुद्धहोकर मेरे हृदयहीमें वास करते हैं ॥ ४६ ॥ जो लोग मेरे क्षेत्रमें वास, मुझपर भक्ति, और मेरा चिह्न (बाना) धारण करते हैं, मैं उन्हींको उपदेश करताहूं ॥

दोहा—बसहिं हमारे क्षेत्रमें, करैं भक्ति जो मोर ।
धरहिं चिह्न जो मोरही, उपदेशहुँ तेहि ओर ॥ ४७ ॥

किन्तु जो लोग मेरे क्षेत्रमें तो रहते हैं पर मेरी भक्ति नहीं करते और न मेरे चिह्नोंहीको धारण करते हैं, उनको मैं भी कभी उपदेश नहीं करता ॥ ४८ ॥ जिनके मनमें निर्वाणनगरी काशी प्रकाशित रहती है, वे लोग मेरे सन्मुख मोक्षलक्ष्मीके हाथसे जयमाल पहिनकर प्रकाशमान होजाते हैं ॥ ४९ ॥ जिन लोगोंको मोक्षलक्ष्मीरूपा यह काशी नहीं रुचती है और वे सब स्वर्गश्रीके पानेकी इच्छा करते रहते हैं तो वे निस्सन्देह पतितही हैं ॥ ५० ॥ हे द्विजगण ! काशीकी आकांक्षा करनेवालोंके आगे मेरे अनुग्रहसे चारोंही पुरुषार्थ किंकरके समान खडे रहते हैं ॥ ५१ ॥ इस आनंदकाननमें मैं जलतेहुए दावानलके समान रहताहूं जीवोंके कर्मबीजोंको मैं ऐसा जलाडालताहूं कि, वे सब फिर कभी नहीं उगने पाते हैं ॥ ५२ ॥ इस काशीपुरीमें सर्वदा वास, और प्रयत्नपूर्वक मेरी पूजा करनी चाहिये, इसीसे कलि और कालको जीतकर मुक्तिरूपा स्त्रीकेसाथ विहार किया जासकताहै ॥ ५३ ॥ जो दुर्बुद्धि काशीमें पहुँचकरभी मेरी सेवा नहीं करता, मोक्षलक्ष्मी उसके हाथोंमें जाकरभी तुरंतही निकलजातीहै ॥ ५४ ॥ हे ब्राह्मणगण ! मेरी भक्तिके चिह्नोंको धारण कर काशीमें वासकरनेसे तुम्हीं लोग धन्यहो ! क्योंकि तुम लोगोंकी चित्तवृत्तिसे न मैं ही दूर हो सकताहूं, न यह काशी ही दूर है ॥ ५५ ॥ तुमलोग अपनी इच्छाके अनुसार जो चाहो सो वर मुझसे माँगलो, क्योंकि क्षेत्रसंन्यास लेनेके कारणही तुम सब मेरे परमप्रीति पात्र हो । ॥ ५६ ॥ इस भाँतिसे महेश्वरके मुखनिःसृत वचनामृतको सुन, बहुतही संतुष्ट होकर वे सब ब्राह्मण उत्तम बर माँगनेलगे ॥ ५७ ॥ ब्राह्मणोंने कहा—हे उमापते ! महेशान ! संसारतापनाशक ! सर्वज्ञ ! हम लोगोंको यही वरदान होवे कि, आप कभी इस काशीपुरीको न छोडाकरें ॥ ५८ ॥ और इस

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

काशीमें कभी किसीभी ब्राह्मणके कहदेनेसे मोक्षका रोकनेवाला कोईभी शाप किसीपर न पडने पावे ॥ ५९ ॥ एवं आपके दोनों चरणकमलोंमें हम सबकी अचल भक्ति बनीरहे, और जबतक शरीर न छूटे सर्वदा इसी काशीमें वास होतारहे ॥ ६० ॥ हे ईश ! दूसरे बरका कुछभी प्रयोजन नहींहै, हम लोगोंको यही बर दियाजावे, हे अन्धकान्तक ! हम लोग एक औरभी वर मांगतेहैं, आप उसेभी सावधान होकर सुन लेवें ॥ ६१ ॥ हमलोगोंने आपकी भक्तिभावनासे जो आपकी प्रतिमूर्तिरूप लिंगोंकी प्रतिष्ठा कीहै, उन सबोंमें आपका सान्निध्य सदैव बनारहे ॥ ६२ ॥ उन लोगोंकी यह बात सुनकर भगवान् पिनाकीने तथास्तुके पीछे यहभी कहा कि, (लो) एक औरभी वर देतेहैं, कि तुमलोगोंको ज्ञान उत्पन्न होजावेगा ॥ ६३ ॥ महादेवने फिर कहा कि हे द्विजगण ! सुनते जाओ, हम तुमलोगोंके हितकी बात कहतेहैं, तुम लोग उसे अवश्यही अनुष्ठित करो ॥ ६४ ॥ मुक्तिचाहनेवालोंको नित्यही उत्तरवाहिनी गंगाकी सेवा, प्रयत्नपूर्वक लिंगकी पूजा, इन्द्रियोंका दबाना यथाशक्ति दान और समस्त जीवोंपर दया सदैव करनी चाहिये ॥ ६५ ॥ क्षेत्रवासी लोगोंके लिये यही परमरहस्य कहागयाहै कि, अपनी बुद्धिको तो दूसरेकी हिताभिलाषिणी बनावें, और घबराहट करनेवाली बात न बोलें ॥ ६६ ॥ विजयेच्छुजनको यहाँपर मनसेभी कभी पाप नहीं करना चाहिये, क्योंकि यहांका कियाहुआ पुण्य और पाप दोनोंही अक्षय होजातेहैं ॥ ६७ ॥ अन्य सब स्थानोंके किये हुए पाप काशीहीमें विनष्ट होते हैं, और जो पाप काशीमें होताहै वह अन्तर्गृहमें जाकर विनष्ट होताहै ॥ ६८ ॥ एवं अन्तर्गेहका अनुष्ठित पाप पिशाचनरक भोगका कारण होताहै पर यदि बाहरसे पिशाचनरककी प्राप्ति हुई होतो वह अन्तर्गृहमें अवश्यही चली जातीहै ॥ ६९ ॥ काशीमें कियाहुआ कर्म कोटिकल्पमेंभी नहीं विनष्ट होता, और यहांपर तीस सहस्र वर्षलों रुद्रपिशाचत्व भोगनाही पडताहै ॥ ७० ॥ जो कोई काशीमें रह कर सर्वदा पातकोंमें तत्पर रहाकरताहै, वह तीससहस्र वर्षलों पिशाचयोनिको भोगकर ॥ ७१ ॥ फिर इसी काशीका निवासी हो अनुत्तम ज्ञान पाकर, अन्तमें उसी ज्ञानसे अनुत्तम मोक्षकोभी प्राप्त करताहै ॥ ७२ ॥ हे द्विजसत्तमगण ! जो लोग इस काशीमें बहुत दुष्कर्मोंको कर कहीं बाहर जाकर मरतेहैं, उनकीभी जो गति होतीहै, उसे कहताहूं सुनते जावो ॥ ७३ ॥ मेरे याम नामक विकटमूर्ति भयंकर गणलोग पहिले उन पातकियोंको कराह (घरिया) में चढाकर देघरातेहैं ॥ ७४ ॥ तब वर्षाकाल

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

११५

दुर्गम जलमयी पूर्व दिशामें लेजाकर उन दुराचारियोंको अगाध जलमें डुबादेतेहैं ॥ ७५॥ वहांपर रात्रिदिन पंखोंवाली जोंके और पनिहे डेंड़हा आदि साँप, एवं दुर्निवार मसोंसे उनको डँसवातेहैं ॥ ७६ ॥ फिर जाडा पडनेपर उन सबको यामलोग हिमालय पहाडपर लेजाकर खाने पहिरनेका बडाही दुःख भोगातेहैं ॥ ७७ ॥ तदनंतर गर्मीके दिनोंमें जल और वृक्षसे शून्य मरुस्थलमें लेजाकर सूर्यके कडुए किरणोंसे मारे प्यासके उन सबोंको बहुतही सुखवा डालतेहैं ॥ ७८ ॥ मेरे घोरगणलोग इसी चालसे बहुत कालतक उन सबोंको बडी बडी पीडाओंसे क्लेशित करके अन्तमें फिर यहीं पर लेआतेहैं ॥ ७९ ॥ तदनंतर वे यामलोग उन सबको कालराजके पास लेजाकर उपस्थित करतेहैं, तब कालराजभी उनलोगोंको देखतेही उनके दुष्कर्मोंको स्मरण कर ॥ ८० ॥ वस्त्रहीन, क्षुधापिपासासे पूर्ण दुःखी, और पीठमें पेटकी चमडी लगाए हुए उन सबोंको दूसरे रुद्रपिशाचोंके साथ करदेतेहैं ॥ ८१ ॥ तदनन्तर वे सब रुद्रपिशाच लोग भैरवके अनुचर बनकर सदैव क्षुधा तृषाकी घोर पीडा सहा करतेहैं ॥ ८२ ॥ कभी कभी कुछ थोडा बहुत रक्त मिश्रित भोजन उनको मिल-जाताहै, इसीरीतिसे तीस सहस्र वर्ष बडे दुःखित होकर ॥ ८३ ॥ श्मशानके खम्भेमें गलफांससे बंधे रहकर समयकाटतेहैं, वे बडेही प्यासे रहनेपरभी बूंदभर जलके लिये तरसते रहतेहैं ॥ ८४ ॥ इसके पीछे कालभैरवके दर्शनसे निष्पाप होकर इसी स्थानमें फिर जन्म लेकर वे सब मेरी आज्ञासे मुक्त होजातेहैं ॥ ८५ ॥ अतएव जिन्हें बडे फलोंके पानेकी लालसा होवे यहां पर मनवचन और कर्मके द्वारा पापकरनेकी इच्छा न रक्खें, और सदैव पवित्र मार्गको अवलंबन करैं ॥ ८६ ॥ इस अविमुक्त क्षेत्रमें मरनेसे कोईभी पापी नरकमें नहीं जानेपाता, मेरे अनुग्रहसे परम गतिहीको पाजाताहै ॥ ८७ ॥ यहांपर जो कोई मेरा भक्त अनशन व्रत करताहै सैकडों कड़ोर कल्प बीतनेपरभी उसकी पुनरावृत्ति नहीं होती ॥ ८८ ॥ इस पापमय मनुष्य जन्मको सर्वथा विनश्वर विचारकर, संसार भयमोचक अविमुक्त क्षेत्रहीका सेवन करना उचितहै, मैं तो घोर कलियुगमें सर्वपापविनाशिनी वाराणसी ॥ ८९ ॥ पुरीको छोडकर प्राणियोंका दूसरा प्रायश्चित्तही नहीं देखता ॥ ९० ॥ क्योंकि सहस्रों जन्मके बटोरेहुए पाप काशीमें प्रवेशकरतेमात्र क्षयको प्राप्त होजाते हैं ॥९१॥ योगीजन सहस्रों जन्ममें योगाभ्यासकी रगडसे जिस मुक्तिको पासकताहै, इस स्थानमें मृत्युहोजानेहीसे वह परमपद (अनायासही) प्राप्त होजाताहै ॥ ९२ ॥ इस अविमुक्त-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

क्षेत्रमें तिर्यग्योनिवाले जीवभी जो वास करते हैं, वे सबभी कालानुसार मरनेपर परम-गतिहीको प्राप्त होते हैं ॥ ९३ ॥ जो मूढलोग मोहान्धकारमें पडकर अविमुक्तक्षेत्रकी सेवा नहींकरते, वे वारंवार मलमूत्र और वीर्यके खांचमें सडा करते हैं ॥ ९४ ॥ जो बुद्धिमान् जन काशीमें लिंगकी स्थापना करदेताहै, सैकडों कड़ोर कल्प बीतजानेपर भी फिर उसका जन्म नहीं होता ॥ ९५ ॥ कलानुसार ग्रह नक्षत्र और तारांओं-काभी पतन अवश्यही होताहै, पर जो लोग इस अविमुक्त क्षेत्रमें मरते हैं, उनका पतन कभी नहीं होता ॥ ९६ ॥ जो मनुष्य ब्रह्महत्या करनेपरभी पीछेसे संयतचित्त होकर, काशीमें प्राणत्याग करसके, तो वह भी निस्सन्देह मुक्त होजाताहै ॥ ९७ ॥ हे विप्रगण ! जो पतिव्रता स्त्रियाँ मेरे भक्तिभावसे भरी रहकर अविमुक्तमें मरती हैं, वेभी परमपदको प्राप्त होती हैं ॥ ९८ ॥ हे द्विजोत्तमगण ! यहांपर प्राणत्याग करनेके समयपर मैं आपही तारक ब्रह्मका उपदेश करताहूं जिससे वह देही ब्रह्ममय होजा-ताहै ॥ ९९ ॥ मेरा भक्त मुझमें मनलगाकर और समस्त कर्मोंको मुझेही समर्पण करके इस स्थानमें जैसा मोक्ष पासकताहै अन्यत्र कहींपर वह (बात) नहीं है ॥ १०० ॥ मृत्युको निश्चित और संसारकी गतिको दुःखरूपिणी, एवं समस्त आगंतुक विषयोंको चल समझकर काशीहीका आश्रयण करना चाहिये ॥ १ ॥ जिन लोगोंने तन मन वचनसे काशीका आश्रयण करलिया यहांपर उन निर्मलबुद्धिमानोंको मोक्षलक्ष्मी आपहीसे जा घेरती है ॥ २ ॥ जो कोई न्यायोपार्जित धनसे काशीवासी एकजनकोभी प्रसन्न करसके, वह मेरे साथ समस्त त्रैलोक्यको संतुष्ट करचुका ॥ ३ ॥ हे ब्राह्मण लोगो ! जो कोई पुण्यात्मा इस निर्वाणनगरीके निवासी नरको तुष्ट करताहै उसे मैं स्वयं चारोंही पुरुषार्थोंसे सदा प्रसन्न करता रहताहूं ॥ ४ ॥ राजर्षि दिवोदासभी धर्म पूर्वक इस काशीका पालन करनेहीसे सदेह मेरे पदको प्राप्त होगया, जहांसे फिर उसे लौटना नहीं पडेगा ॥ ५ ॥ यहांपर एकहीजन्ममें योगसिद्धि ज्ञानप्राप्ति और मुक्तिलाभ होजाताहै, अतएव इस अविमुक्तक्षेत्रको छोडकर तपस्या करनेके लिये कहीं दूसरे तपोवनमें नहीं जाना चाहिये ॥ ६ ॥ मोक्षको बहुतही दुर्लभ और संसारको बडा भयंकर समझकर, पत्थरसे अपना पैर तोडकर यहां पर कालकी बाट जोहनी चाहिये ॥ ७ ॥ जब कि दुर्बुद्धि लोग काशीको छोडकर कहीं अन्यत्र चले जातेहैं, तब मेरे भूतगण परस्पर करतालीं बजाकर हँसने लगतेहैं ॥ ८ ॥ परमोत्तम सिद्धिदेनेवाले पवित्र काशीपुरीमें रहकर फिर वहांसे निकलजानेकी इच्छा किस प्राणीकी होतीहै ?

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

११७

दोहा—परम सिद्धिदा काशीमें, जो कछु दिन रहिजाय ।
ताहि छाडि कहुँ जानहित, केहिके मनहिं सोहाय ॥ ९ ॥

अन्यस्थलमें महादान करनेसे जो फल लोगोंको मिलताहै इस अविमुक्तक्षेत्रमें केवल कौडी देनेसे वही फल प्राप्त होताहै ॥ ११० ॥ यहांपर एक मनुष्य यदि लिंगपूजन करे, और दूसरा कोई तपस्या करे, तो उन दोनोंमें लिंगपूजकही श्रेष्ठ गिनाजाताहै ॥११॥दूसरे तीर्थोंमें जो कोई विधिपूर्वक कोटि गोदान करै,एवं यदि दूसरा कोई केवल एकही दिन काशीमें वास करे तो उन दोनोंके बीचमें काशीवासीही उत्तम होताहै॥ १२॥ अन्यत्र कहींपर करोड ब्राह्मणोंके जिंवानेसे जो पुण्य होताहै, इस काशीमें केवल एकही ब्राह्मणके खिलादेनेसे वही फल मिलजाताहै ॥ १३ ॥ सूर्यग्रहणके समय कुरुक्षेत्रमें तुलापुरुष दान करनेके समान काशीमें एकमुठी भीख देनेका फल होताहै ॥ १४ ॥ यहांपर अनंत लिंगका रूप धरकर मेरी परम ज्योति पातालसे लेकर सातों लोकोंको अतिक्रमण करके बैठी रहतीहै ॥ १५ ॥ पृथिवीके प्रान्तभागमें भी रहकर जो लोग मेरे अविमुक्तलिंगको स्मरण करतेहैं, उनकेभी बडेसे बडे पाप छूटही जातेहैं, इसमें कुछ सन्देह नहींहै ॥ १६ ॥ जो कोई इस क्षेत्रमें मेरा दर्शन, स्पर्शन, और पूजन करताहै, वह तारक ज्ञानको पाकर फिर कभी जन्म नहीं लेता ॥ १७ ॥ जो मनुष्य यहांपर मेरा समर्चन करके किसी दूसरेस्थानमें जाकर प्राणत्याग करताहै, वह जन्मान्तरमें फिर मुझे पाकर अन्तमें विमुक्त होजाताहै ॥ १८ ॥ भगवान् शंकर उन ब्राह्मणोंके आगे इसभाँतिसे क्षेत्रकी महिमा कहकर उनके देखतेही देखते अन्तर्द्धान होगये ॥१९ ॥ उन सब द्विजलोगोंनेभी साक्षात् विरूपाक्षको प्रत्यक्ष कर अत्यंत हर्षित हृदयसे अपने अपने स्थानकी ओर प्रस्थान किया ॥१२०॥ फिर तो ब्राह्मणोंने कृपानिधान सर्वज्ञ भगवान् शंभुके वचनपर दृढविश्वास कर और सब कामोंको छोड छाड शिवलिंगोंहीका पूजन आरंभ किया ॥ २१ ॥ स्कन्दने कहा—जो कोई श्रद्धालु जन इस उत्तमरहस्याख्यानका पाठ करे अथवा पढवावे तो वह सब पातकोंसे छूटकर शिवलोकमें पूजित होताहै ॥ १२२ ॥

दोहा—काशीमें बसिये सदा, कबहुँ न करिये पाप ।
पुण्य यथारुचि कीजिये, शम्भु कहेउ जस आप ॥ १ ॥
दया दान दम युत रहै, गंग नहावे जाय ।
विश्वनाथ दर्शन किये, मुक्ति मिलै तेहि धाय ॥ २ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

है विचित्र काशीपुरी, संशय तनिकहु नाहिं ।
पाप पुण्यको टारिकै, मिलै मुक्ति एहि माहिं ॥ ३ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्द्धे भाषायां काशीमाहात्म्यरहस्य-वर्णनंनाम चतुःषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६४ ॥

पैंसठवां अध्याय ।

कन्दुकेश्वर और व्याघ्रेश्वरकी कथा एवं अन्य बहुतेरे लिंगोंका वर्णन ।

स्कन्दने कहा—हे कुम्भसंभव ! ज्येष्ठेश्वरके चारोंओर जो पांच सहस्र शिवलिंग हैं वे सब मुनियोंके बडेही सिद्धिदायक हैं ॥ १ ॥ पराशरेश्वरनामक एक महालिंग ज्येष्ठेश्वरके उत्तरभागमें विराजमान है, उसके केवल दर्शन करनेहीसे निर्मल ज्ञान प्राप्त जाताहै ॥ २ ॥ उसी स्थानपर एक मांडव्येश्वर नामक दूसरा लिंगभी है उसके दर्शनसे मनुष्यकी दुर्बुद्धि कभी नहीं होने पाती ॥ ३ ॥ वहींपर सदैव शुभदायक शंकरेश्वर लिंगहै जिसके समीपहीमें भक्तोंके सर्वसिद्धिदायक भृगुनारायण सुशोभित रहते हैं ॥ ४ ॥ उसी स्थलमें अति सिद्धिप्रद एक जाबालीश्वर नामक लिंगहै जिसके दर्शनमात्रसे मनुष्य कभी दुर्गतिमें नहीं पडता ॥ ५ ॥ वहीं सुमन्तुऋषिके स्थापित एक प्रधान आदित्य भगवान् हैं, उनके दर्शन करतेही कुष्टकी व्याधिका प्रशमन होजाताहै ॥ ६ ॥ और वहींपर भीषण रूपिणी भीषणा नाम भैरवी हैं भक्तिभावसे उनकी पूजा करनेसे वह क्षेत्रके समस्त भयको दूर करदेतीं हैं ॥ ७ ॥ उसी स्थानके समीपहीमें एक कर्मबंध विमोक्षक लिंग है, जो मनुष्योंके छहमास पर्यन्त सेवन करनेहीसे परमासिद्धिको देदेताहै ॥ ८ ॥ वहां एकही स्थानमें भरद्वाजेश्वर लिंग और माद्रीश्वर लिंग ये दोनोंही विराजमान हैं पुण्यात्माही जनको उनका दर्शन प्राप्त होता है ॥ ९ ॥ हे अगस्त्य ! वहींपर एक अरुणका स्थापित लिंग है, जिसकी सेवासे सब समृद्धियाँ मिलजातीहैं ॥ १० ॥ वहांपर वाजसनेय नामक एक बडाही मनोहर लिंग है उसके दर्शन करनेहीसे लोगोंको वाजपेय यज्ञका फल मिलताहै ॥ ११ ॥ योंहीं कण्डेश्वर, कात्यायनेश्वर, वामदेवेश्वर, और तथ्येश्वर ॥ १२ ॥ हारीतेश्वर, गालवेश्वर, कुम्भेश्वर, कौस (थु) मेश्वर ॥ १३ ॥ अग्निवर्णेश्वर, नैंध्रुवेश्वर, वत्सेश्वर, पर्णादेश्वर, ॥ १४ ॥ सक्तुप्रस्थेश्वर, कणादेश्वर, मांडूकेश्वर, ॥ १५ ॥ बाभ्रवेश्वर, शिलादेश्वर, च्यवनेश्वर, शालंकायनेश्वर, ॥ १६ ॥ कलिंदमेश्वर, अक्रोधनेश्वर, कपोतदेश्वर,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

११९

स्वर, कंकेश्वर, कुन्तलेश्वर, ॥ १७ ॥ कंठेश्वर, कहोलेश्वर, तुंबुर्वीश्वर, मतंगेश्वर, भरतेश्वर, मगधेश्वर, ॥ १८ ॥ जातूकर्णेश्वर, जंबुकेश्वर, जारुधीश्वर, जलेश्वर, जाम्भेश्वर, जालकेश्वर, ॥ १९ ॥ प्रभृति पाँच सहस्र शिवके लिंग विराजमानहैं। अत्यंत पावन ज्येष्ठस्थानमें इन सब शुभप्रदलिंगोंके दर्शन, स्पर्शन, पूजन, प्राणायाम प्रणमन और स्तवन करनेसे पाप कदापि किसी प्राणीको नहीं छू सकताहै ॥ २० ॥ ॥२१॥ स्कन्द बोले—हे कुम्भज महर्षे! परम पवित्र ज्येष्ठस्थानमें एक बार जो घटना होगई थी उसे मैं तुमसे कहता हूं, उस पापनाशक चरित्रको श्रवण करो ॥२२॥ वहांपर भगवान् महेश्वर स्वेच्छानुसार बिहार कररहेथे और भगवती पार्वती कन्दुक (गेंदा) खेल रहींथीं ॥ २३ ॥ उस घड़ी भगवती फैलते और सिकुड़ते हुए अपने अंगोंकी बड़ी लघुता प्रकाश करती हुई, अपने निःश्वास वायुके सुगन्धसे मुदित होकर आतेहुए भौंरोंपर घबराहटकी दृष्टि डालती हुई ॥ २४ ॥ अपने खुलते हुए केशपाशमें गुँथीगयीं मालाओंसे उस भूमिको ढांपती हुई पसीजते हुए कपोल परकी पत्रावलीसे निकलते स्वेद बिन्दुओंसे परम शोभायमान (होतीं हुई) ॥ २५ ॥ फटी हुई चोलियाके कपड़ेके मार्गसे निकलती हुई अंगोंकी प्रभासे घिरी हुई, ऊपरको फेंकेहुए गेन्दाके लोकनेसे अपने करकमलोंको अत्यंत रक्तवर्ण बनाती हुई ॥ २६ ॥ एवं गेन्देपर दृष्टि डालते रहनेके कारण अपनी भ्रूलताके कोनोंको घुमाती हुई जगज्जननी भगवती भवानी इसीरीतिसे खेलतीहुई दिखलाई पडतीथीं ॥ २७ ॥ उसी समयपर ब्रह्माके वरदानसे त्रैलोक्यभरके पुरुषोंको तृणके समान समझनेवाले, अपने भुजबलसे दर्पित, आकाशचारी, विदल और उत्पल नामक दो दैत्य मानो मृत्युके उपस्थित होजानेहीसे परमसुन्दरी देवीको देखतेही कामबाणसे पीडित होकर उनके हरलेजानेकी इच्छा करतेहुए शाम्बरीमायाको धारणकर तुरंतही गगनमंडलसे नीचे उतरपडे ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ और वे दोनों परमचंचलचित्त दुराचारी दानव पार्षदोंका रूप बनकर अंबिकाके पास चलेगये ॥ ३१ ॥ तब तो भगवान् सर्वज्ञने उन दोनोंको उनकी आँखोंहीकी चुलबुलाहटसे चीह्नकर दुर्गासुरघातिनी भगवती दुर्गादेवीको नेत्रोंहीके फेरफारसे समझादिया ॥ ३२ ॥ बस फिर क्याथा, सर्वज्ञकी अर्द्धांगिनी देवीने भगवान् शिवकी नेत्रचेष्टाको समझकर तुरंत उसी गेन्देसे एकसाथही उन दोनों दैत्योंको मारा ॥ ३३ ॥ महाबली महामायाके क्रीडाकन्दुकसे चोटइल होतेही वे दोनों दैत्य चक्कर खाखाकर, डालीसे पकेहुए फलके समान और

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वायुके झोंकेसे ताडके फलकी नाईं, एवं वज्रकी चोटसे टूटतेहुए महापर्वतके शृंगके तुल्य गिर पडे ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ इसके पीछे कुकर्मकरनेको उद्यत उन दोनों दुष्ट दैत्योंको मारकर वह गेन्दा लिंगरूपमें परिणत होगया ॥ ३६ ॥ तबसे ज्येष्ठेश्वरके समीपमें समस्त दुष्टोंका निवारक वह लिंग कन्दुकेश्वरके नामसे प्रसिद्ध है ॥ ३७ ॥ जो कोई कन्दुकेश्वरकी इस उत्पत्तिको सुनेगा और प्रसन्न मनसे उनका पूजन करेगा फिर उसे किसीभी दुःखका भय कहां है ? ॥ ३८ ॥ समस्त भयनाशिनी स्वयं भवानीही कन्दुकेश्वरके निष्पाप भक्तलोगोंका सदैव योगक्षेम करती रहतीं हैं ॥ ३९ ॥ पार्वती देवी प्रतिदिन उस लिंगकी पूजा करती हैं और वहांपर वर्तमान रहकर भक्तलोगोंको सिद्धिका दान करतीं हैं ॥ ४० ॥ जिन लोगोंने कन्दुकेश्वर नामक महा लिंगकी पूजाही नहीं की, तो भला शिव और पार्वती उन सबके अभीष्ट फलको कैसे देसकते हैं ? ॥ ४१ ॥ समग्र उपसर्गोंकी राशिके परमविनाशक कन्दुकेश्वर लिंगका दर्शन प्रयत्न उठाकर करना चाहिये ॥ ४२ ॥ कन्दुकेश्वरका नाम सुनतेही पापपुंज ऐसे शीघ्र क्षयहोनेलगते हैं जैसे सूर्यके उदय होतेही अन्धकार बिलायजाताहै ॥४३॥ स्कन्दने कहा—हे महाभाग विप्रवर ! ज्येष्ठेश्वरके पासमें जो एक बडीही आश्चर्य घटना होचुकी है, उसे सुनो ॥ ४४ ॥ (पूर्वकालमें) देवता ऋषि और पितरोंके तृप्तिप्रद दंडखात महातीर्थपर जब कि ब्राह्मण लोग निष्काम होकर घोर तपस्या करतेथे ॥ ४५ ॥ उस घडी प्रह्लादका मामा दुन्दुभिनिह्राद नामक एक दुष्टदैत्य मनहीमन यह उपाय सोचने लगा कि देवता लोग कैसे जीते जासकतेहैं ॥४६॥ उन सबको किसका बलहै ? वे क्या भोजन करतेहैं ? किसके आधार (सहारे) पर चलतेहैं ? इस प्रकारसे बहुतबार विचार करके उस दैत्यने यही निश्चय किया कि ॥ ४७ ॥ विचार करनेसे तो ब्राह्मण लोगही इन बातोंके अवश्यमेव कारणहैं, फिरतो वह बारंबार ब्राह्मणोंहीके सर्वनाशकरनेका उद्योग करनेलगा ॥ ४८ ॥ क्योंकि उसने सोचा कि देवतोंको भोजन यज्ञहीसे मिलताहै, और सभी यज्ञ वेदहीसे निकलेहैं, फिर वेदभी इन्हीं ब्राह्मणोंहीके अधीनहैं, अतएव देवतोंके बल केवल ब्राह्मण लोगही हैं ॥ ४९ ॥ इसमें कुछभी सन्देह नहींहै कि सबवेदोंका आधार और इन्द्रादिक देवतोंका बल ब्राह्मणोंको छोड दूसरा कोई नहीं होसकता ॥ ५० ॥ तब यदि ब्राह्मणोंको नाश करडालूं तो वेद आपही नहीं रह सकते एवं वेदके लुप्त होतेही समस्त यज्ञभी विनष्ट होजावेंगे ॥ ५१ ॥ फिर जहां यज्ञोंका होना बन्द हुआ, तहां तो आहारहीन होजानेसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

निर्बल देवता लोग सुखसे जीतलियेजासकतेहैं, फिर तो देवतोंके जीतलेनेपर ॥ ५२ ॥ मैंही त्रैलोक्य भरका स्वामी बनकर सबलोगोंका मान्य होजाऊँगा, और देवतोंकी अनन्त समग्र संपत्तियांभी लूट लाऊंगा ॥ ५३ ॥ फिरतो निष्कंटक राज्यमें मैंही सुखोंका भोग करूंगा, हे मुने ! वह दुर्बुद्धि दैत्य, योंही (मनमानी बातें) स्थिर करके फिर यह सोचने लगा ॥ ५४ ॥ कि ब्रह्मतेजसे परिपूर्ण वेदके अध्ययनमें तत्पर और तपोबलशाली बहुतसे ब्राह्मण कहां रहतेहैं ? ॥ ५५ ॥ जानपडताहै, वाराणसी बहुतेरे ब्राह्मणोंके रहनेका स्थान है, तो पहिले वहींके ब्राह्मणोंका संहार करके तब दूसरे तीर्थमें चलूँ ॥ ५६ ॥ जिन जिन तीर्थोंमें अथवा जिन जिन आश्रमोंमें ब्राह्मण होवें, उन सबोंको मैं चारों ओरसे खाडालूँ ॥ ५७ ॥ इस भाँतिसे वह दुराचारी और मायावी दुन्दुभिनिहाद अपने कुलोचित बुद्धिको दृढ करके काशीमें पहुँचकर ब्राह्मणों-को मारनेलगा ॥ ५८ ॥ ब्राह्मण लोग समिधा और कुश लानेके लिये जहाँ जंगलमें गये वहींपर वह दुष्ट उन सबको खाडालताथा ॥ ५९ ॥ जिसमें कोईभी उसे जान न सके ऐसा छिपकर वनमें तो बनचर और जलाशयमें जलचर बनकर ॥ ६० ॥ वह मायावी अदृश्यरूपी होकर देवतोंसेभी गुप्तरहताथा, वह दिनमें तो मुनियोंके बीचमें रहकर उन्ही लोगोंकी नाईं ध्याननिष्ठ बन बैठताथा ॥ ६१ ॥ पर उनकी कुटियोंसे निकलने पैठनेके मार्गको देखताहुआ रातमें बाघका रूप बन-कर बहुतसे ब्राह्मणोंको खाडालताथा ॥ ६२ ॥ वह गुप चुप ऐसा चबालेता कि हड्डीतकभी नहीं छोड़ताथा, इस चालपर उस दुष्टने बहुतेरे विप्रोंको मारडाला ॥ ॥ ६३ ॥ एक बार कोई एक भक्त शिवरात्रिको अपनी पर्णकुटीमें महादेवकी पूजा करके ध्यान लगाकर बैठ गया ॥ ६४ ॥ इसीमें वह बल दर्पित दानवराज दुन्दु-भिनिहाद बाघका रूप धरकर उसे धरदबानेकी इच्छा करने लगा ॥ ६५ ॥ पर शिव दर्शनमें दृढ़चित्त ध्याननिष्ठ उस भक्तको अस्त्ररूप मंत्रके विन्यास कर रखनेसे वह उसपर आक्रमण नहीं करसका ॥ ६६ ॥ इसके अनंतर जगत्मात्रके रक्षामणि और भक्तकी रक्षा करनेमें दक्षबुद्धि भगवान् त्रिलोचन शंभुने सर्वान्तर्यामी होनेसे उस दुष्ट दैत्यके अभिप्रायको समझकर उसके विनाश करडालनेकी इच्छासे ज्योंहीं वह बाघ उस भक्तको धरनेके लिये लपका त्योंही भगवान् हर प्रकट होगये ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ तब तो उस भक्तके पूजित लिंगसे निकलकर आतेहुए रुद्रदेवको देखतेही वह दैत्य उसी व्याघ्ररूपसे पर्वतके समान । ढचला ॥ ६९ ॥ फिर तो ज्योंही वह दानव

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अवज्ञापूर्वक सर्वज्ञको देखने लगा त्योंही महादेवने आतेहुए उसे पकड़ अपनी कांखमें दबाकर पीसडाला ॥ ७०॥ और फिर भगवान् पंचाननने उस पंचाननके शिरपर एक ऐसा मुक्का मारा कि उसने उसी रूपसे कांखमें पिसजानेके कारण ॥ ७१ ॥ बड़े आर्तस्वरसे (चिग्घारमारकर) आकाश और भूमंडलको भरपूर करादिया तब तो सहसा उस (भयंकर) चिग्घारके सुननेसे कंपित हृदय होकर ॥ ७२ ॥ तपोधन लोग रात्रिकालमें उसी शब्दके अनुसार वहाँपर जापहुँचे और कांखमें व्याघ्रको दबापहुए परमेश्वरको देखकर ॥ ७३ ॥ सबलोग प्रणामपूर्वक जयजयकारके साथ स्तुति करतेहुए कहने लगे हे जगरक्षक ! आपहीने इस दारुणदुःखसे हमलोगोंको बचाया है ॥ ७४॥ हे नाथ ! आप अनुग्रह करें, हे जगद्गुरो ! इसी रूपसे आप यहां पर निवास करें, और हे महादेव ! आप व्याघ्रेश्वरनामसे इस ज्येष्ठ स्थानकी सर्वदा रक्षा करते रहैं दूसरे और सब विघ्नोंसेभी हम सब तीर्थवासियोंको बचावें ॥ ७५–७६ ॥ चन्द्रभूषण महादेव, उन लोगोंकी बात सुनकर तथास्तु कहनेपर फिर यह बोले कि हे द्विजोत्तम लोग ! सुनो ॥ ७७ ॥ जो कोई यहांपर श्रद्धापूर्वक इसी रूपका दर्शन करेगा, निस्सन्देह मैं उसके समस्त उपद्रवोंको दूर करूँगा॥ ॥ ७८ ॥ जो मनुष्य इस लिंगका पूजन करके यात्रा करेगा, उसे मार्गमें चोर अथवा बाघ इत्यादिसे कभी डर नहीं रहेगा ॥ ७९ ॥ जो पुरुष मेरे इस चरित्रको सुने और हृदयमें मेरे इस लिंगको सुमिर कर संग्राममें घुसेगा उसे जय प्राप्त होगी इसमें कुछ अन्यथा नहीं है ॥ ८० ॥ इस कहनेके अनंतर महादेव उसी लिंगमें लीनहोगये, और ब्राह्मणलोग प्रातःकालमें अपने अपने स्थानको चलेगये ॥ ॥ ८१ ॥ स्कन्दने कहा—हे अगस्त्य ! तभीसे वह लिंग व्याघ्रेश्वरनामसे विख्यात हुआ ज्येष्ठेश्वरके उत्तरभागमें उसके दर्शन और स्पर्शन करनेसे सब भय छूटजातेहैं ॥ ॥८२॥ जो लोग व्याघ्रेश्वरके भक्तहैं उनसे यमराजके बडे क्रूरकिंकर लोगभी जय जीव कहतेहुए डरतेही रहतेहैं ॥ ८३ ॥ इन सब पराशरेश्वर इत्यादि लिंगोंकी कथा सुननेसे कोई मनुष्य महापापरूप कीचडमें नहीं लिपटता ॥ ८४ ॥ कन्दुकेश्वरकी उत्पत्ति और व्याघ्रेश्वरका आविर्भाव सुननेसे मानव कभी किसीभी उपद्रवमें नहीं पडता॥८५॥व्याघ्रेश्वरके पश्चिमओर उटजेश्वर नामक लिंगविराजमानहै जो भक्तोंकी रक्षाके लिये प्रकट हुआथा, उसकी पूजा करनेसे कोई भय नहीं रहजाता ॥ ८६ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१२३

दोहा—एक बाघ पाषानको, टूटे फूटे रूप।
है गुफाके पासमें, बघवा वीर अनूप ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्द्धे भाषायां कन्दुकेश्वर व्याघ्रेश्वरादिलिंगवर्णनं नाम पंचषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६५ ॥

छाछठवाँ अध्याय।

शैलेश्वरादि लिंगोंकी कथा।

स्कन्द कहनेलगे—हे वातापिनाशन! ज्येष्ठेश्वरके चारोंओर जो जो लिंग हैं मैं उनको कहताहूं श्रवण करो ॥ १ ॥ ज्येष्ठेश्वरके दक्षिणभागमें अप्सरा लोगोंका स्थापित एक उत्तम शिवलिंग है, और वहांपर सौभाग्योदकनामक अप्सराकूप भी विद्यमानहै ॥ २ ॥ नरहो चाहे नारीहो उस कूपमें स्नान कर अप्सरेश्वरका दर्शन करलेवे तो कभी दुर्भाग्य नहीं होने पाता ॥ ३ ॥ उसी स्थानपर बावलीके समीपहीमें कुक्कुटेश्वर नामक लिंग विराजमानहै, उसके पूजनसे लोगोंका कुटुंब बढताहै ॥

चौपाई—दुष्ट स्वप्न फल मेटनहारे। कुक्कुटनाथ एकहैं न्यारे ॥
दुर्गाकुंड समीप विराजैं। ग्रंथ प्रमाण बहुतविध छाजैं ॥ १ ॥

यथा वा।

"वाराणस्यां दक्षिणे भागे कुक्कुटो नाम वै द्विजः।
तस्य स्मरणमात्रेण, दुःस्वप्नः सुस्वप्नो भवेत् ॥ ४ ॥

ज्येष्ठ बापीके तटहीपर पितामहेश्वरनामक एक शुभप्रद लिंगहै, मनुष्य वहांपर श्राद्ध करके पितरोंको बडाही हर्षित करसकताहै ॥ ५ ॥ पितामहेश्वरसे नैर्ऋत्यकोणपर गदाधरेश्वरनामक लिंग जो पितरोंको बडाही तृप्तिप्रदहै वह प्रयत्नपूर्वक पूजनीय है ॥ ६ ॥ हे मुनिवर! ज्येष्ठेश्वर लिंगके दक्षिणदिशामें दूसरा एक वासुकीश्वर संज्ञक लिंगहै, उसके दर्शन करनेसे ॥ ७ ॥ तथा वहींपर वासुकी कुंडमें स्नान दानादिक क्रिया संपादन करनेसे वासुकीश्वरके प्रभावसे लोगोंका सर्पभय दूर होजाताहै ॥ ८ ॥ जो कोई नागपंचमीके दिन वासुकि कुण्डमें नहाये उसे कभी साँपका विष नहीं चढता ॥ ९ ॥ वर्षाऋतुमें नागपंचमीके दिन वहांकी यात्रा अवश्य करनी चाहिये, क्योंकि उस यात्राके करनेसे नागलोग उसके कुलपर सर्वदा प्रसन्न रहते हैं ॥ १० ॥ हे अगस्त्य! उस नागकुंडके पश्चिमओर भक्तोंका सर्वसिद्धिप्रद

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तक्षकेश्वर लिंगभी परमपूजनीयहै ॥ ११ ॥ एवं उस लिंगके उत्तरभागमें तक्षक कुंड है, जहाँपर उदककियाके करनेसे सर्पभय नहीं रहता ॥

दोहा—जैतपुराके पासमें, नागकुआँ है ख्यात ।
नागपँचैयाँ पर्वपर, मेला तहँ लगि जात ॥
काशीके विद्वान सब, नागकूप पर जाय ।
करैं सर्व शास्त्रार्थ तहँ, नागपंचमी पाय ॥१२ ॥

उस कुण्डके उत्तरभागमें सदा क्षेत्रके क्षेमकर्ता और भक्तलोगोंके भयहर्ता कपाली नाम भैरव विराजित हैं ॥ १३ ॥ वह भैरवका महाक्षेत्र साधकलोगोंका बडाही सिद्धिप्रद है, वहांपर जिस विद्या मंत्रका साधन करे छही मासमें सिद्धि प्राप्त होती है ॥ १४ ॥ वहींपर भक्तविघ्ननिवारिणी महामुंडा नाम चंडिकाहै, अपनी अभीष्टसिद्धिके लिये विविध बलि पूजा आदि उपहारोंसे उसकी पूजा करनी चाहिये ॥ १५ ॥ जो उत्तमजन महाष्टमीको वहाँकी यात्रा करे, वह यशस्वी पुत्र पौत्रसे पूर्ण और लक्ष्मीवान्भी होताहै ॥ १६ ॥ महामुंडाके पश्चिमप्रान्तमें चतुःसागर वापी है, उसमें स्नान करनेसे चारों समुद्रोंमें स्नान करनेका फल होताहै ॥ १७ ॥ वह स्थान चतुःसागर नामसे बडाही प्रसिद्धहै, और वहांपर चारों समुद्रोंके स्थापित चार लिंगहैं ॥ १८ ॥ उस बावलीके चारोंओर उन चारों लिंगोंकी पूजा करनेसे वे सब समस्त पापोंको भस्म करडालते हैं, उससेभी उत्तर जाकर वृषभेश्वरनामक महालिंग है ॥ १९ ॥ महादेवहीके वृषभने अपनी भक्तिसे उसे स्थापित कियाहै, उसके दर्शनसे लोगोंको छही मासमें मुक्ति लाभ होजाता है ॥ २० ॥ वृषभेश्वरसेभी उत्तरभागमें गन्धर्वेश्वर लिंगहै, उसके पूर्वमें गन्धर्वकुण्डहै, जो नरोत्तम उसमें नहाकर ॥ २१ ॥ गन्धर्वेश्वरकी पूजा करे, और शक्तिके अनुसार दान देवे, एवं देवता पितरोंका तर्पण करे, तो वह गन्धर्व लोगोंके साथ आनन्द लूटताहै ॥२२॥ गन्धर्वेश्वरके पूर्वओर कर्कोटक नाम नाग, कर्कोटवापी, और कर्कोटकेश्वर लिंग विराजमान है ॥ २३ ॥ जो मनुष्य उस वापीमें स्नान, कर्कोटकेश्वरका पूजन और कर्कोटक नागकी आराधना करताहै, वह नागलोकमें पूजित होताहै ॥ २४ ॥ जो लोग उस बावलीमें स्नानादि क्रियाओंको कर कर्कोटनागका दर्शन करतेहैं, उनके शरीरमें स्थावर अथवा जंगम कोईभी विष नहीं चढता ॥२५॥ कर्कोटकेश्वरकेपश्चिम धुंधुमारीश्वर लिंगहै, जिसके पूजनसे लोगोंको शत्रुका भय नहीं रहजाता ॥ २६ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१२५

उसके उत्तरभागमें पुरूरवेश्वर नामक लिंगहै, प्रयत्न पूर्वक दर्शन करनेसे वह चतुर्वर्गका फल देताहै ॥ २७ ॥ उसके आगे सुप्रतीक नामा दिग्गजका प्रतिष्ठित यश और बलका बढानेवाला सुप्रतीकेश्वर नामक लिंगहै ॥ २८ ॥ उसके सन्मुखही सुप्रतीक नामसे एक बड़ा सरोवर सुशोभितहै, उसमें स्नान और उस लिंगके दर्शनकरनेसे दिक्पतिका पद प्राप्त होताहै ॥ २९ ॥ वहींपर उत्तरके द्वारकी रक्षाके लिये विजय-भैरवी नामकी एक महागौरी अवस्थित हैं, उनकी पूजा करनेसे इष्टकी सिद्धि होतीहै ॥ ३० ॥ वरणाके रमणीय तटपर विघ्नविध्वंसक हुंडन और मुंडननामक दो गण क्षेत्रकी रक्षा करते रहतेहैं ॥ ३१ ॥ क्षेत्रसम्बन्धी विघ्नोंके निवारण करनेके लिये उन दोनों गणोंका दर्शन अवश्य करना चाहिये, और वहींपर हुंडनेश्वर और मुंडनेश्वर लिंगोंके दर्शन करनेसे मनुष्य सुखी होताहै ॥ ३२॥ स्कन्द कहनेलगे—हे इल्वलरिपो अगस्त्य ! पूर्वकालमें वरणाके मनोहर तटपर जो एक अद्भुत घटना हुईथी, उसका वृत्तान्त कहताहूं, सावधान होकर सुनो ॥ ३३ ॥ एकबार पतिव्रता मेना गिरिराज हिमवान्को प्रसन्नचित्त देखकर उमाको स्मरणकर उसाँसें लेतीहुई यह बोली ॥ ३४ ॥ (मेना कहनेलगी) हे आर्यपुत्र ! गिरिराज ! विवाह होजानेके अनंतर कालसे उस गौरीका कुछभी समाचार नहीं जानतीहूं ॥ ३५ ॥ भस्म और सर्पके भूषणधारी, महाश्मशानवासी, दिगंबर, वृषभवाहन, महादेव इस घडी कहांहै? यहभी मुझे ज्ञात नहीं है ॥ ३६ ॥ हे प्रिय ! ब्राह्मी इत्यादि आठों मातालोग सुखकी स्वरूप दृष्ट होनेपरभी मेरी समझमें लडकीके कष्टहीकी कारणहैं ? ॥ ३७ ॥ हे विभो ! उस अद्वितीय (अकेले) त्रिशूलीको दूसरा कोईभी नहीं है, अतएव उसके वृत्तान्त जाननेकाभी उद्योग कीजिये ॥ ३८ ॥ उमाके वात्सल्यसे गद्गद वचन, सन्तानप्रिय हिमाचल अपनी प्यारी पत्नीकी बात सुनतेही अश्रुपूर्णनेत्र होकर कहनेलगे ॥ ३९ ॥ गिरिराज बोले—हे मेने ! मैं आपही उसका अनुसंधान (खोज) लेनेको जाताहूं, उसके न देखनेके कारण विरहानलसे दूषित प्रेम मुझे बहुतही बाधित कररहाहै ॥ ४० ॥ जबसे गौरी मेरे घरसे गई तबसे मेरी समझमें लक्ष्मीही मेरे यहांसे निकल गई ॥ ४१ ॥ हे प्रिये ! मेरे दोनोंही कर्ण जिसदिनसे उमाके वचनामृतके पानसे वंचित हुये हैं, हे प्राणेश्वरि ! उसदिनसे दूसरे किसी शब्दको भीतर घुसनेही नहीं देते ॥ ४२ ॥ (हाय !) दिनकी चन्द्रिका, बेटी जबसे मेरे आँखोंसे दूरहुई तबसे रातकी चाँदिनीभी मुझे बहुतही तपाती रहती है ॥ ४३ ॥ गिरिराज हिमालयने इसप्रकारसे कहासुनी कर विविधभाँतिके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

रत्न और वस्त्र लेकर शुभलग्नके बलोदय होनेपर यात्रा की ॥ ४४ ॥ अगस्त्यने पूछा—हे षण्मुख ! वे किन किन रत्नोंको कितना कितना साथ लेकर वहांसे प्रस्थित हुए, यह बात मैं पूछताहूं आप बतादेवें ॥ ४५ ॥ स्कन्दने उत्तर दिया—दो करोड तुला (४०० तोलेकी एक तुला) परिमाण मोती, और सौ तुला वारितर (आवदार) हीरा ॥ ४६ ॥ हे विप्र ! नवलाखसे कुछ अधिक बडे चमकीले छकोने हीरे, एवं दोलाख तुला बडे कान्तिमान् (रंगदार) विदूरमणि ॥ ४७ ॥ हे मुने ! पांचकरोड तुला पद्मराग (माणिक) और नवलक्ष तुला परिमित पुष्पराग (पोखराज) ॥४८॥ एवं एकलाख तुला गोमेदमणि, पचास लाख तुला इन्द्रनीलमणि (नीलम) ॥४९॥ दशलक्ष तुला पन्ना, नवकरोड तुला उत्तम मूँगा ॥ ५० ॥ और हे मुनिराज ! आठों अंगोंके विचित्र आभरण एवं कोमल वस्त्रोंकी गिनती नहीं कीजासकती है ॥ ५१ ॥ हे मुनिवर ! उनके साथमें जो बहुतसे चमर और अनेक सुगंध द्रव्य, एवं सुवर्ण दास और दासी इत्यादि थे उन सबकी कौन संख्याहै ? ॥ ५२ ॥ इन सब वस्तुओंको संग लेकर गिरिराज हिमालय वहांसे चलकर वरणाके तटपर पहुँचतेही दूरसे काशीको देखने लगे ॥ ५३ ॥ जिसकाशीकी समस्त भूमि अनेक प्रकारके रत्नसमूहोंसे खँचीहै, जिसकी ऊंची ऊंची अटारियोंके माणिककी ज्योतिसे विस्तृत आकाशमंडल भररहाहै॥ ॥ ५४ ॥ उत्तम भवनोंके ऊपर लगेहुए विविध सुवर्णकी कलसियोंसे जो दिशाओंके मुखको उज्ज्वल कररहीहै, जो अपनी उड़तीहुई पताकाओंसे देवतोंकी अमरावतीकोभी जीते लेतीहै ॥५५॥ जो आठों सिद्धियोंकी अद्भुत केलि मन्दिर स्वरूपाहै, और सब फलोंसे समृद्ध वनोंसे कल्पद्रुमके वनोंकोभी जीतनेवालीहै ॥ ५६ ॥ (तबतो) ऐसी काशीकी समृद्धिको देखतेही गिरिराज हिमालय अपने मनमें लज्जित होकर यह बात कहनेलगे, कि ॥ ५७ ॥ देव मन्दिर, गलियाँ, घेरा, गृह, पुर, द्वार, विचित्र किवाँड़, और तटोंके घाटोंपर ॥ ५८ ॥ सुन्दर चमकीले मणि माणिक्य इत्यादि रत्नोंकी समुज्ज्वल ज्योतिजालोंसे जैसा यह स्थान जटिल दीखताहै ॥५९॥ ऐसा तो भूलोक और स्वर्गके बीचमें कोईभी स्थान मेरी समझमें नहींहै, दूसरेकी कौन बात है, ऐसी सम्पत्तियोंकी भरमार तो कुबेरके भवन अथवा वैकुण्ठ लोकमें भी नहींहै । गिरिराज मनहीमन जब यह बात सोच रहेथे ॥ ६० ॥ ६१ ॥ उसी समय एक भिखारी उनकी आँखोंके आगे आगया, तब तो हिमाचलने उसे बडे आदरके साथ बुलाकर पूछा ॥ ६२ ॥ हिमवान्ने कहा—हे कार्पटिकश्रेष्ठ ! यहाँ इस आसनपर बैठजाओ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१२७

हे पथिक ! अपने नगरका जो कुछ अपूर्व वृत्तान्त हो मुझसे कहो ॥ ६३ ॥ संप्रति इसका कौन अधिष्ठाताहै ? और उस (स्वामी) का व्यवहार कैसाहै ? ये सब बातें यदि तुमको ज्ञात हों तो मुझसे कहो ॥ ६४ ॥ हे ऋषे ! उस भिक्षुकनेभी गिरिराजका कहना सुनकर उत्तर देनेका उपक्रम किया ॥ ६५ ॥ कार्पटिक बोला—हे राजेन्द्र ! आपने जो कुछ मुझसे पूछाहै, उन सब बातोंको मैं कहताहूं, आप श्रवण कीजिये, हे मानप्रद ! राजा दिवोदासके स्वर्गगामी होनेपर अभी पाँचही छः दिन बीते हैं, कि भगवान् गिरिजापति विश्वनाथ सुन्दर मन्दराचलसे यहाँपर पधारेहैं ॥ ६६—६७ ॥ हे विभो ! जो त्रैलोक्यके स्वामी हैं, वही यहांके अधिष्ठाताहैं, उन सर्वव्यापी, सर्वदर्शी, सर्वदाता, भगवान् शर्वको क्या आप नहीं जानते ? ॥ ६८ ॥ मैं समझताहूं, आप पत्थरके स्वरूपहैं पर आपकी बुद्धितो पत्थरसेभी बडी कठोर है, इसीसे आप काशिके अधिष्ठाता पार्वतीपति विश्वनाथको नहीं जानते ॥ ६९ ॥ गिरिराज हिमवान् स्वाभाविक काठिनात्मा होनेपरभी (आपसे) अच्छेहैं, जिनने अपनी प्राणाधिक कन्याको देकर विश्वनाथको प्रसन्न किया॥७०॥गौरीके पिता सहजकठिन होनेपरभी कन्यारूप मालासे शम्भुकी पूजाकर जगद्गुरुकेभी बडे होगये ॥ ७१ ॥ वेदवेद्य उन ईश्वरका व्यवहार भला कोई जान सकताहै? तब इतनाही भर मैं जानताहूँ कि यह समस्त जगत् उन्हीं का कार्य है ॥ ७२ ॥ यह तो मैंने (आपसे) यहांके अधिष्ठाता और उनकी चेष्टाको कहदिया अब जो आपने यहांकी अपूर्वता पूछीहै, उसेभी कहताहूं सुनलीजिये ॥ ७३ ॥ इस पुरी भगवान् उमापति, गिरिजादेवीके सहित इस काशीपुरीमें आकर बड़े हर्षसे शुभप्रद ज्येष्ठेश्वरके स्थानमें विराजमान हैं ॥ ७४ ॥ स्कन्दने कहा—हे कुम्भज मुने ! वह पथिक जब जब गिरिजा के सुधासम कोमल नामाक्षरको कहता था तब तब गिरिराज (भीतरही भीतर) बड़े प्रसन्न होने लगते थे ॥ ७५ ॥ जो कोई इस भूतलमें उमाके नामरूपी अमृतको पीता है, वह फिर कभी माताके स्तनका दूध नहीं पीने पाता ॥ ७६ ॥ हे द्विज ! जो मनुष्य, उमा इस दो अक्षरके मंत्रको रात्रिदिन सुमिरन करता रहताहै पापपरायण होनेपर भी उसे चित्रगुप्त भूलही जाते हैं ॥ ७७ ॥ हिमवान् प्रहृष्ट होकर फिर उस कार्पटिककी बात सुनने लगे । भिक्षुक बोला, हे राजन् ! प्राणियोंके मुक्तिदाता विश्वेश्वरके लिये विश्वकर्मा जो बड़े निर्माण (बड़ी कारीगरी)का राजमन्दिर बना रहेहैं, वह बड़ाही अपूर्व है, मैंने तो अपने कानोंसे वैसा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कहीं नहीं सुना है ॥ ७८॥७९ ॥ उस मन्दिरमें चारोंओरकी भीतें मणि माणिक्य और रत्नोंकी सूर्यसेभी बढकर चमकीली शलाकाओं (मुट्ठों) से बनाई गई हैं॥८०॥ जिसमें भासमान एकसौ बारह खंभे मानों प्रत्येक भुवनोंके थाल्लनेके लिये आठ आठ के हिसाबसे लगाये गये हैं ॥८१॥ चौदहों भुवनोंमें जो कुछ शोभा है, उस प्रासादमें चारोंओर उससे सौ कड़ोर गुना अधिक वर्तमान है॥८२॥ चंद्रकान्त मणियोंकी जो स्तम्भाधार शिलासे (बन्द बैठे) हैं, उनपर विचित्र रत्नके खम्भोंसे लगी हुई एवं उन खम्भोंकी प्रभासे भरपूर (लदीं) ॥ ८३ ॥ पद्मराग, इन्द्रनील आदि रत्नोंकी सोहावन पुतरियाँ रात दिन रत्नके दीपोंसे उसमें आरती करती रहती हैं ॥ ८४ ॥ रक्त (लाल) पीले, काले, नीले और चितकबरे रंगोंसे चमकीले स्फटिकमणिके बनेहुए चिकने पद्मवाले शिलातल पर, चारोंओरके अनेक रत्नोंका प्रतिबिंब ऐसा विचित्र पड़ता है जो चित्रमें चितेरेका जड़ा हुआसा भासित होता है ॥८५॥८६॥ जिसमें आँखोंको बिछिलादेनेवाली मानिक्यके खम्भोंकी पंक्तियाँ अविमुक्त नामक अपने क्षेत्र (खेत) में मोक्ष लक्ष्मीके अँखुआसी दिखाई पड़ती हैं ॥ ८७ ॥ जहांपर शिवके अनुचर लोग, सब समुद्रोंसे बहुतेरे रत्नोंको लाकर पर्वत शृंगके समान ढ़ेर लगा रक्खे हैं ॥ ८८ ॥ एवं गणोंने पाताल तलके नागलोगोंके कोशागारसे अनेक मणियोंको उठालाकर पहाड़ही बनादियेहैं ॥ ८९ ॥ उस मन्दिरके लिये परम शिवभक्त रावण, अपने त्रिकूटाचलसे करोडों सोनेके शृंग राक्षसोंसे ढोवालाया है ॥ ९० ॥ हे नरनाथ ! इस मन्दिरके बननेका समाचार सुनकर कितनेही दूसरे दूसरे द्वीपोंके निवासी भक्तगण असंख्य रत्न लिवालाये हैं ॥ ९१ ॥ जहांपर चिंतामणि आपही विश्वकर्माको कामकेलिये इच्छित विचित्र मणियोंको अहोरात्र देता रहताहै ॥९२॥ एवं कल्पवृक्ष गण, भक्तिसे परिपूर्ण होकर नित्यही जिस प्रासादमें बहुतही बड़ी अनेक वर्णकी पताकाओंको लगाते रहतेहैं ॥ ९३ ॥ दधि, दुग्ध, इक्षु और घृतके सागरभी प्रतिदिन जहाँपर पंचामृतके कलशोंसे निरंतर स्नान कराते रहतेहैं ॥ ९४ ॥ एवं कामधेनुभी बडी भक्तिके साथ अपने मधुधारारूप दुग्धसे जहांपर लिंगस्वरूप विश्वेश्वरको अभिषेक करारहीहै ॥ ९५ ॥ जिसे मलयाचल अपने गंधसारके रसोंसे और कपूरवाले केले अपने कपूरकी ढेरोंसे भक्तिपूर्वक सेवते रहते हैं ॥ ९६ ॥ येही सब अपूर्व व्यापार यहांपर शिवालयमें दिन दिन होते रहतेहैं, हे कठिनाशय ! फिर उन उमाकान्तको आप क्यों नहीं जानसके ? ॥ ९७॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१२९

गिरिराज जामाताकी इतनी समृद्धि देखकर बहुतही लज्जित होगये, हे कुम्भज मुने ! ॥ ९८ ॥ इसके पीछे उनने उस कार्पटिकको बड़ा पारितोषिक देकर (विदाकिया) फिर उस भिखारीके चले जाने पर विचारा ॥ ९९ ॥ और वे मनही मन आश्चर्यसे प्रफुल्ल नेत्र होकर कहने लगे कि, अहो ! यह तो बहुत भला हुआ जो तुमने बडी अच्छी बात सुनली ॥ १०० ॥ लीलाहीसे त्रैलोक्यनायक, जामाताके घरमें यहाँपर जो सम्पत्तियाँ सुनाई देतीं और दिखलाई पडतीं हैं ॥ १ ॥ उसके आगे तो यह सब भेंट देनेको जो मैं लायाहूं बहुतही तुच्छसा जँचताहै, भला इससे कन्या और जमाईका कौन सन्तोष होसकताहै ? ॥ २ ॥ मैंने तो यही समझा था कि, पहिले ये जैसे थे अब भी वैसेही होंगे, वे सब कामोंसे पराङ्मुखथे, और केवल एक बुडा बैलही भर उनकी सम्पत्ति थी ॥ ३ ॥ न तो कोईभी उनको जानता, न उनके वंशहीका कुछ ठेकाना, न उनका एकही कोई नाम, न यही जान पडे कि वे किस देशके हैं ? ॥ ४ ॥ अथवा कौनसी उनकी वृत्ति है ? किंवा कैसा आचार है ? (इत्यादि), तब नाममात्रसे तो ईश्वरहैं, पर उनके पास ऐश्वर्य्य सूचक, कोईभी वस्तु नहीं दीख पडतीथी ॥ ५ ॥ (पर अबतो देखताहूं) कि, ये मेरे वेही जामाता सबकोभी सब सम्पत्तियां देदेतेहैं एवं सुमुख (प्रसन्न) होनेपर सब कर्मोंको सफल करडालते हैं ॥ ६ ॥ वे वेदवेद्य [सर्वज्ञाता] और सर्वान्तर्यामी हैं यह समस्त संसार उन्हींका बालबच्चा है, आदिमें जिसे कोईभी नहीं जानसकाथा, आज वेही वेदवेदनीय होरहे हैं ॥ ७ ॥ जो सदैव अनभिज्ञ समझे जातेथे अब वेही सर्वज्ञ होगये हैं, पहिले कोई पुरुष जिसका एकभी नाम नहीं जानता था ॥ ८ ॥ इस घडी सब किसीके सभी नाम निश्चय रूपसे उन्हींके नाम होरहे हैं, और वेही सब देशके बन गये हैं एवं सब लोगोंको सभी सिद्धियाँभी देरहेहैं ॥ ९ ॥ मैं कठोर बुद्धि होनेहीसे जिनको पाहिले देशहीन वृत्ति पराङ्मुख, और आचार शून्य देखता था ॥ ११० ॥ आज समझताहूं कि उन्हींसे श्रुति और स्मृतियोंने भी सब आचार सीखेहैं, और वे नाममात्रके नहीं वरन् वास्तवमें ईश्वर हैं ॥ ११ ॥ अहो ! मेरे वेही जामाता साक्षात् ईश्वरहैं, क्योंकि वेही सबके ऐश्वर्यदाताहैं, और सबी गुणोंके आधार होनेपरभी वेही गुणोंसे अतीत और परोंकेभी परे हैं ! ॥ १२ ॥ एवं अर्वाचीन, पराचीन और परात्परहैं, मैं तो केवल पर्वतोंका नाथहूं पर ये उमापति विश्वभरके अधिनाथ हैं ॥ १३ ॥ मैं तो परिमित सम्पत्तिशालीहूं, पर ये तो अमित धनवाले हैं, अतएव

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यह मेरी लाईहुई भेंटैं तो उनके दिखाने योग्य नहीं हैं ॥ १४ ॥ इसी कारणसे इस समयपर उनसे मिलना ठीक नहीं फिर कभी आकर मिलूंगा, हिमवान् सारे कालमें यही सिद्धान्त मनहीमन स्थिर करके ॥ १५ ॥ बडे बली अपने समस्त पर्वतवासी अनुचरोंको बुलाकर यह बात कहने लगे कि, तुम सब कोई बडेही बलशाली हो ॥ १६ ॥ अतएव सूर्यके उदय होनेसे पहिलेही झटपट एक शिवालय बनादो, बस एक यही मेरा आदेशहै ॥ १७ ॥ क्योंकि शिवालय बनजानेसे मैं इसलोक और परलोक उभयत्र कृतार्थ होजाऊंगा, जो कोई इस काशीधाममें आकर एक शिवालय बनवासके॥ १८॥उसे त्रैलोक्य मात्रके गृहवासी करदेनेका फल होताहै एवं वह विधिपूर्वक सब दानोंको बड़ी श्रद्धासे उत्तम पर्व पर अच्छे तीर्थमें जाकर सुपात्रको देचुका, जिसने धर्मोपार्जित धनसे अपने बिभवके अनुसार ॥ १९ ॥ ॥ १२० ॥ यहांपर महादेवका मन्दिर बनवादिया, ऐसे पुरुषको कमलादेवी कभी नहीं त्याग सकतीं । जिस किसीने वाराणसीमें पहुँचकर शिवालय बनवादिया, वह सूखे पत्तोंके भोजन इत्यादि बडे बडे तपोंका अनुष्ठान करचुका ॥ इस आनंदकाननमेंजो कोई देवदेव शिवका मन्दिर निर्माण करासका, उसे बडे धूमधामसे किये गये बडे बडे यज्ञोंका पूर्ण फल प्राप्त होताहै, इस प्रकारसे गिरिराजकी आज्ञा पाकर उनके अनुचर लोगोंने रात्रिभरहीमें एक बहुतही बढिया देवालय प्रस्तुत करदिया । और हिमवाननेभी प्रभात होनेसे पूर्वही चन्द्रकांतमणिकी चमकीली कान्तिसे मंडपको श्वेत करदेनेवाला शैलेश्वरनामक एक उत्तम शिवलिंग स्थापित करदिया ॥ २१ ॥ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ फिर उनने अन्य सब पर्वतोंसे अपनी प्रधानता सूचक प्रशस्त अक्षर पंक्तिकी एक प्रशस्ति लिखवाकर (वहां पर लगा दिया) ॥ २५ ॥ तत्पश्चात् गिरिराज अरुणोदय होनेपर पंचनदह्रदमें स्नान एवं कालभैरवका दर्शन और पूजन कर ॥ २६ ॥ वहींपर उन सब रत्नोंकी राशिको रख अपने समस्त पर्वतवासी अनुचरोंके साथ उसी समय अपने घरको चलदिये ॥ २७ ॥ इसके अनंतर प्रातःकाल होनेपर हुंडन और मुंडननामक शिवके दोनों गण सुहावने वरणाके तट पर रमणीय शिवालय देख प्रसन्न होकर ॥ २८ ॥ उस अद्भुत मन्दिरका समाचार भगवान्से निवेदन करनेके लिये वहांगये, जहाँपर भगवती उमादेवी स्वयं महादेवको दर्पण दिखारहींथीं, यह देख ॥ २९ ॥ उन दोनोंने हाथोंको जोडकर भूतलपर दण्डवत्प्रणाम किया, फिर भृंगीके द्वारा आज्ञा पाकर यों निवेदन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१२१

किया ॥ १३० ॥ हे देवदेव ! हम लोग नहीं जानते कि, किस बडे भक्तिमानने वरणाके तटपर बडाही सुन्दर मन्दिर प्रस्तुत किया है ॥ ३१ ॥ हे विभो ! सन्ध्यासमय तक तो वहां कुछ नहीं देख पडाथा, पर आज प्रातःकालहीं (एकाएक) वह मंदिर देखाई पडाहै, गणोंकी बात सुनकर सब वृत्तान्त विदित होजानेपरभी सर्वज्ञ भगवान् महेश्वरने पार्वतीदेवीसे अनभिज्ञकी नाईं कहा कि, अयि शैलेन्द्रनन्दिनि ! चलो हम तुम दोनोंही जन उस मन्दिरको देखने चलें ॥ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ हे मुने ! यह कहकर महेश्वर पार्वती और गणोंके सहित बडे रथपर चढ उस मन्दिरके देखनेको उत्कंठित होकर वहांसे निकल पडे ॥ ३४ ॥ फिरतो महादेवने वरणाके तीरपर एकही रातके बनेहुए बडी सुन्दर रचनासे पूर्ण उस मन्दिरको देखतेही ॥ ३५ ॥ रथपरसे उतरकर उसके भीतर प्रवेश किया, वहांपर तेजसे देदीप्यमान, मोक्षलक्ष्मीके अंकुर समान, नयनानन्दकर, और पुनर्जन्म दुःख-नाशक, चन्द्रकान्तशिलाके महालिंगको देखा ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ इसीमें परमेश्वरने ज्योंही यह पूँछना चाहा कि इस लिंगको किसने स्थापित कियाहै, त्योंही कर्तृ-सूचक प्रशस्ति सामने देखपडी ॥ ३८ ॥ अनंतर कन्दर्पदर्पहारी हरने मनहीमें कुछ बाँचकर पार्वतीसे कहा, देवि ! (अरे) अपने पिताकी कीर्ति तो देखो ॥ ॥ ३९ ॥ यह सुनकर अत्यंत आनन्दित होनेसे हर्षके अंखुआकी शोभाकी नाईं समस्त अंगोंमें कदमके फूलकी छटाको धारण करतीहुई उमा ॥ १४० ॥ देवीने महादेवके चरणोंपर गिरकर यह निवेदन किया कि, हे नाथ ! इस उत्तम लिंगमें आपको अहर्निश रहना चाहिये ॥ ४१ ॥ और जो लोग इस शैलेश्वर महालिंगके भक्त होवें उन सबको आप इसलोक और परलोकमेंभी पूर्ण समृद्धि दिया करें ॥ ४२ ॥ तब महादेव "ऐसाही होगा" कहकर पार्वतीसे फिर कहने लगे कि, जो लोग वरणामें स्नान करनेके उपरान्त शैलेश्वरका पूजन करेंगे ॥ ४३ ॥ एवं पितरोंका तर्पण कर प्रसन्न मनसे यथाशक्ति दान देवेंगे, उन सबको फिर इस संसारमार्गमें घूमना नहीं पडेगा ॥ ४४ ॥ मैं इस शुभप्रद शैलेश्वर लिंगमें सदैव वास करूंगा और इस लिंगके पूजनेवालेको उत्तम मोक्षपद देतारहूंगा ॥ ४५ ॥ वरणाके सुन्दर तीरपर जो लोग शैलेश्वरका दर्शन करेंगे, उन काशीवासियोंको किसीभी दुःखसे पीडित नहीं होना पडेगा ॥ ४६ ॥ हे कुम्भज ! इसके पीछे उमा देवीने भी यह वरदान किया कि, जो लोग शैलेश्वरके भक्त होंगे, वे निरस-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

न्देह मेरेभी पुत्रके समान प्यारे होंगे ॥ ४७ ॥ स्कन्दने कहा—हे महामुने ! यह तो मैंने तुमसे शैलेश्वर लिंगका वर्णन कहा, अब रत्नेश्वरके प्रादुर्भावकी कथा कहताहूं ॥ ४८ ॥ परम श्रद्धापूर्वक शैलेश्वरके इस माहात्म्यके सुननेसे मनुष्य पापका कंचुक उतारकर शिवलोकमें सुखसे निवास करताहै ॥

दोहा—प्रथम शैल पुत्री जहाँ, तहँ शैलेश्वर नाथ ।
वरणा पै छाजैं दोऊ, करैं सुमंगल साथ ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्द्धे भाषायां शैलेश्वरादि-लिंगवर्णनं नाम षट्षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६६ ॥

सड़सठवां अध्याय

रत्नेश्वरकी प्रशंसा और कथा ।

अगस्त्य बोले—हे षडानन ! संप्रति आप रत्नेश्वरकी उत्पत्तिको वर्णन कीजिये, क्योंकि वह महालिंग काशीमें रत्नभूत कहाजाताहै ॥ १ ॥ हे गौरीहृदयनन्दन ! उस लिंगकी कैसी महिमाहै ? और किसने उसकी प्रतिष्ठा कीहै ? इन बातोंको आप विस्तारपूर्वक वर्णन करें ॥ २ ॥ स्कन्दने कहा—हे मुनिवर ! मैं तुमसे रत्नेश्वरका माहात्म्य और जैसे वह लिंगभूतलमें प्रकट हुआ यह कहताहूं ॥ ३ ॥ हे ऋषे ! जिस लिंगका एक नामभी सुनाई पडजानेसे तीन जन्मके बटोरेहुए पापको नाशकर देताहै, मैं उसीका प्रादुर्भाव वर्णन करताहूं ॥ ४ ॥ शैलराज हिमालयने, कालभैरवके उत्तरभागमें जो रत्नोंकी ढेर लगादीथी, सो सब रत्न उस पुण्यात्मा पर्वतेश्वरके धर्मबलसे इन्द्रधनुषके समवर्ण और सब रत्नोंकी प्रभासे भासित, समस्त रत्नमय एक लिंगका स्वरूप होगया ॥ ५ ॥ ६ ॥ उस लिंगके दर्शनहीसे ज्ञानरत्न प्राप्त होताहै ! शैलेश्वरको देखकर महादेव और पार्वती वहाँ आये ॥ ७ ॥ जहांपर रत्नमय लिंग (आपसे) आपही प्रकट हुआथा, हे मुने ! उस लिंगके प्रभाजालसे आकाशमंडल भरगयाथा ॥ ८ ॥ वहाँपर परमोत्तम सब रत्नोंसे उत्पन्न अदृष्टपूर्व लिंगको देखकर भवानी शंकरसे पूछने लगी ॥ ९ ॥ हे देवाधिदेव ! जगन्नायक ! सर्वभक्ताभयप्रद ! सातवें पातालमें जड़की मूलसा यह लिंग कहांसे निकसाहै ? ॥ १० ॥ इसकी ज्वालासे आकाश जटिलित और प्रभासे दिग्मण्डल उद्भासित होरहाहै, हे भवान्तक ! उसका क्या नामहै ? कैसा स्वरूप और कौनसा प्रभावहै ॥ ११ ॥ इसके देखनेहीसे मेरा मन बहुतही हृष्टसा होकर यहीं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१३३

सरहाहै, हे नाथ! आप कृपा करके इन सब बातोंको कहें॥ १२॥ महादेव कहने लगे—हे अपर्णे! तुमने जो पूछाहै, मैं इस सर्वतेजोनिधि परम लिंगका स्वरूप इत्यादि कहताहूं हे पार्वति! श्रवण करो॥ १३॥ हे भामिनि! तुम्हारे पिता गिरिराज हिमवान् तुम्हारे लिये बहुतसी रत्नोंकी राशियाँ यहां ले आये थे॥ १४॥ हिमाचलने सुकृतोपार्जित उन सब रत्नोंको यहींपर ढेर लगाकर फिर अपने स्थानको प्रस्थान किया॥ ॥ १५॥ हे अनघे! श्रद्धापूर्वक तुम्हारे निमित्त अथवा मेरे लिये काशीमें जो कुछ समर्पण किया जाताहै उसका ऐसाही परिपाक होताहै॥ १६॥ हे उमे! यह रत्नेश्वरनामक लिंग केवल मेराही स्वरूप है, और वाराणसीमें इसका बडाही प्रभाव है॥ १७॥ यहांके सब लिंगोंके मध्यमें यह परमरत्नभूत है, अतएव निर्वाणरूप रत्नका दाता यह उत्तम लिंग रत्नेश्वर नामसे उत्पन्न हुआ है॥ १८॥ हे महेश्वरि! तुम अपने पिताके बटोरेहुए इसी सुवर्णके ढेरसे इस लिंगका (बढियाँ) मन्दिर बनवादो॥ १९॥ जो लिंगका शिवालय बनवाता अथवा टूटे फूटेका संस्कार (मरम्मत) करादेताहै, उसे अनायासही लिंगके स्थापन करनेका पुण्य मिलजाताहै॥ २०॥ हे मुने! भगवतीने तुरन्तही बहुत अच्छा कहकर सोमनन्दी इत्यादि असंख्य गणोंको मन्दिर बनानेमें लगादिया॥ २१॥ उन गणोंने एकही पहरके भीतर अनेककौतुकमय चित्रोंसे पूर्ण सुमेरुके शृंगसा सुवर्णका मन्दिर बनादिया॥ २२॥ देवीने उस प्रासादकी रचनाको देखकर अत्यंतप्रसन्न मुख हो उन गणलोगोंको बहुतसा पारितोषिक दिया॥ २३॥ हे मुनिवर! इसके पीछे भगवती प्रणामपूर्वक फिर महादेवसे उस लिंगकी महिमा पूछने लगीं॥ २४॥ शंकरने कहा—हे देवि! यह शुभदायक लिंग तो अनादि सिद्धहै, पर इस घडी तुम्हारे पिताके पुण्य गौरवसे प्रगटहुआ है॥ २५॥ इस क्षेत्रमें मनोवांछित फलका दाता और गोपनीय वस्तुओंमें परमगोप्य इस रत्नेश्वर लिंगको कलियुगमें विशेष करके पापबुद्धि लोगोंसे प्रयत्नपूर्वक छिपायेही रखना चाहिये॥ २६॥ जैसे घरमें भी रत्न छिपाही कर रक्खा जाताहै कि जिसमें उसे कोई दूसरे लोग न जान-सकें, वैसेही मेरे अविमुक्तनामक गृहमें रत्नभूत यह लिंग भी गुप्त रक्खा हुआ है॥ ॥ २७॥ हे पार्वति! ब्रह्माण्डमण्डलमें जितनेही लिंग हैं, उन सबके पूजन करनेका फल इस एकही रत्नेश्वर लिंगकी पूजासे प्राप्त होजाता है॥ २८॥ हे गौरि! जो लोग प्रमादवशभी रत्नेश्वरका समर्चन करसके हैं, वे अवश्यही

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सातों द्वीपोंके स्वामी महाराज होते हैं ॥ २९ ॥ मनुष्य, एकबारभी रत्नेश्वरकी अर्चना करनेसे त्रिभुवनभरके सभी रत्नोपम वस्तुओंके पानेका अधिकारी होजाताहै ॥ ३० ॥ जो लोग कामनारहित होकर रत्नेश्वरकी पूजा करतेहैं वे सब मेरे गण होकर अन्तमें यहांपर मेरा दर्शन पातेहैं ॥ ३१ ॥ कोटिशः रुद्रीजपनेमें जो फल होताहै, हे देवि ! रत्नेश्वरके पूजन करनेसेभी वही फल लाभ होताहै ॥ ३२ ॥ इस अनादिसिद्ध शिवलिंगके विषयमें जो बडाही आश्चर्य्यकर और सर्वपापनाशक घटना हुईहै उसका इतिहास तुमसे कहताहूं ॥ ३३ ॥ पूर्वकालमें नाचने गानेमें निपुण एक कलावतीनाम नर्तकी इसी नगरमें रहतीथी, वह एकबार फाल्गुनमासकी शिवरात्रिके पर्वपर ॥ ३४ ॥ रात्रिभर जागरण कर उत्तमगीतें गातीहुई आपही अनेकप्रकारके बाजे बजाने लगी ॥ ३५ ॥ इसके अनन्तर वह वाद्यदक्षा नटी अपने नाचने गाने और बजानेसे रत्नेश्वर महालिंगको प्रसन्नकर अपने इष्टदेशको चलीगई ॥ ३६ ॥ वह उत्तम नर्तकी, वहींपर कालधर्मके वश होकर गंधर्वराज वसुभूतिकी कन्या हुई ॥ ३७ ॥ शिवरात्रि पर्वमें जागरण एवं बजाने और नाचनेके पुण्यबलसे जो कि वहांपर रत्नेश्वरके सन्मुख उसने कियाथा ॥ ३८ ॥ रूपलावण्यशालिनी, कला कलापमें कुशला, मधुरालापवादिनी, पिताकी आनन्दवर्द्धिनी, समस्त गांधर्वशास्त्रमें दक्ष, और गुणरत्नोंकी वही खानि वह सुन्दरी कन्या रत्नावली नामने प्रसिद्ध हुई। हे कुम्भज !॥ ३९॥४०॥ हे मुने ! उसकी शशिलेखा, अनंगलेखा, और चित्रलेखानामक तीन सखियाँ वहीही चतुर थीं ॥ ४१ ॥ उन तीनोंने एकसाथही मिलजुलकर वाग्देवीकी आराधना की, परमप्रसन्न होकर सरस्वतीने उन सबोंको चौंसठों कलाओंमें निपुणता दी ॥ ॥ ४२ ॥ हे गौरि ! उस रत्नावलीने जन्मांतरकी वासनाके कारण उस रत्नेश्वर लिंगका यह उत्तम नियम धारण किया कि ॥ ४३ ॥ काशीमें रत्नभूत रत्नेश्वर लिंगका प्रतिदिन दर्शन न करलूंगी, तो मुँहसे एक बातभी न बोलूंगी ॥ ४४ ॥ इस प्रकारसे वह उत्तम गंधर्वकन्या उन अपनी सखियोंके साथ नियमवती होकर प्रतिदिन लिंगका दर्शन करने लगी ॥ ४५ ॥ एकबार मेरे इसी उत्तम रत्नेश्वर लिंगकी आराधना करतीहुई वह बाला सुहावनी गीतावलियोंसे मुझे प्रसन्न करने लगी ॥ ४६ ॥ हे उमे ! उस घडी उसकी तीनोंही सखियाँ लिंगकी प्रदक्षिणा करतीथीं इसीमें उसके गीतसे प्रसन्न होकर मैं वरदान करनेको प्रवृत्त हुआ ॥ ४७ ॥ हि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१३५

हे गन्धर्वकन्ये ! आजकी रातमें जो तेरे ही ऐसा नामवाला तेरे साथ विहार करेगा वही तेरा भर्ता होगा ॥ ४८ ॥ वह रत्नावली, लिंगरूपी समुद्रसे निकलेहुए वचनामृतको पीकर आनन्दसंदोहसे मंथर और बडीही लज्जित होगई ॥ ४९ ॥ फिर सखियोंके साथ अपने पिताके घरको जातीहुई उसने अपनी सखियोंसे अपना वृत्तान्त हर्षपूर्वक कह सुनाया ॥ ५० ॥ उन सबोंने धन्य ! धन्य (वाह ! वाह) ! कहकर उसे सन्तुष्ट किया (और कहा कि) आज रत्नेश्वरके पूजनसे तुम्हारा मनोरथ सिद्ध हुआ ॥ ५१ ॥ यदि आजकी रात्रिमें तुम्हारा कौमार हर चोर आवे तो बडे प्रयत्नसे उसे बाहुलताकी फाँसमें बाँध रखना चाहिये ॥ ५२ ॥ जिसमें हम लोगभी सबेरा होतेही रत्नेश्वरके निर्दिष्ट इष्टकारी सुकृताली तुम्हारे प्यारेको देखसकें ॥ ५३ ॥ भाई ! तुम्हारा कैसा पुण्यहै ! अहाहा ! हमलोगोंके हृष्ट होकर चलेजानेपर तुमने अपने पुण्यके बलसे भगवान् रत्नेश्वरका प्रत्यक्ष दर्शन पायाहै ॥ ५४ ॥ अहा ! (देखो) लोगोंके भाग्यकी कैसी महिमाहै, कैसा पुण्यका उदय है, जो एकसाथ रहनेपरभी एकहीकी सिद्धि होतीहै ॥ ५५ ॥ दैवहीकी प्रधानता कहनेवाले (जो यह कहतेहैं, कि) एक दैवही फलताहै, और उद्यम अथवा दूसरे बलसे कुछ नहीं होसकता, सोई ठीक है इसमें कुछभी झूंठ नहीं है ॥ ५६ ॥ देखो--तुम और हमलोग एकही उद्यममें लगींथीं, पर तुम्हारे अदृष्टमें जैसा फल लगा हम सबके आगे वैसा नहीं हैं ॥ ५७ ॥ हे सखि ! यह तो प्रसंग पडनेसे लोगोंका व्यवहार कहा (जाता) है, पर वास्तवमें जो तुम्हारे मनोरथकी प्राप्ति है वह तो हमीलोगोंकी है, यह बात स्पष्टही है ॥ ५८ ॥ वे सब योंही बातचीत करतीहुई क्षणभरमें बडा मार्ग बहुत थोडासा बिताकर अपने २ घरपर जापहुँचीं ॥ ५९ ॥ फिर सबेरा होनेपर जब वे सब उठकर इकट्ठा हुई तो रत्नावलीको मौन देखकर संभुक्तासी समझने लगीं ॥ ६० ॥ अनंतर वह उसीभाँति चुपचाप काशीमें आय मंदाकिनीके जलमें नहाय सखियोंके साथ मेरे (इसी) रत्नेश्वरलिंगका दर्शन करने लगी ॥ ६१ ॥ फिर नित्यनियम समाप्त करनेपर सखियोंके हठपूर्वक पूछनेसे मारे लज्जाके आँखें झिंपाएहुई वह कहने लगी ॥ ६२ ॥ रत्नावली बोली सखियो ! रत्नेश्वरकी यात्रासे लौटनेपर जब तुम लोग अपने अपने घरको चलीगईं तब मैं रत्नेश्वरके वचनामृतको स्मरण करतीहुई ॥ ६३ ॥ विशेषरूपसे अंगरागादि संस्कारोंको कर शयनागारमें चलीगई, पर उसके दर्शनकी लालसासे नेत्र तो निद्राके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दरिद्रीही बनेरहे ॥ ॥ ६४ ॥ किन्तु होनहार वश अचानक मेरी स्वभावस्था होगई फिर तो मैं इन दोकारणोंसे अपनेहीको भूलगई ॥ ६५ ॥ एक तो तन्द्रा दूसरे उसके अंगोंका स्पर्श—इन दोनोंसे मेरी ज्ञानशक्ति जातीरही, फिरतो मैं तन्द्रा और उसके अंगस्पर्शके वशीभूत होकर ॥ ६६ ॥ यह नहीं जानती कि क्या हुआ ? मैं कौन हूं ? कहांहूं ? और वह कौनहै ? हे सखियो ! फिर जब वे घरसे निकलकर जानेलगे तो मैंने ज्योंही पकडनेके लिए हाथ फैलाया त्योंही हाथका कंकन शत्रु बन कर बडे वेगसे बडी उत्कट चिल्लाहट मचानेलगा, उसके चिल्लाहटसे मैं तुरंत जागपडी ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ उस घडी मैं सुखमय अमृत ह्रदमें डुबकी मारकर क्षणहीभरमें उसके वियोगानलकी ज्वालामें गिरपडी ॥ ६९ ॥ (प्यारी) सखियो ! उसका कौन देश ? किसकुलमें जन्म ? और क्या नाम है ? यह सब कुछभी नहीं जानती पर उसका दारुण विरहानल मुझे बहुतही जला रहाहै ॥ ७० ॥ हे सखियो ! रातमें भोग करनेवालेके पुनर्वार संगमकी आशासे चित्त बहुतही उत्कंठित होरहाहै, और निकलतेहुए मेरे प्राणोंका महौषध एकमात्र फिर उनका दर्शनही है, जो पुनर्दर्शन तुमलोगोंके आधीन है ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ मेरी सखियो ! भला अपनी प्यारी सुन्दर आलियोंसे भी कोई झूँठ कहताहै ? केवल उनके दर्शन पानेहीसे ये प्राण ठहर सकते हैं नहीं तो निकसही भागेंगे ॥ ७३ ॥ अभीही मरणावस्था मेरे लिये संनद्धहै, इस भाँतिसे अत्यंतकातर रत्नावलीकी बातें सुनकर वे सब ॥७४॥ कंपित ह्रदय होकर परस्पर (एक दूसरेको) देखती हुई (आपसमें) कहने लगीं ॥ ॥ ७५ ॥ सखियाँ बोलीं—हे भद्रे ! जिसका नांव, गाँव, और घराना कुछभी नहीं जान पडा, भला, उसके मिलनेका कौनसा उपाय किया जावे ? ॥ ॥ ७६ ॥ रत्नावली सखियोंकी ऐसी सन्देह भरी (दुबिधाकी) भरी बातें सुनकर (यह कहती कि) "सखियो ! उनके मिलनेमें तुम लोगभी कुंठि" मूर्छित होगई ॥ ७७ ॥ उस गन्धर्वकन्याका अभिप्राय—तुमलोगभी कुण्ठित शक्ति होगई-कहनेका था पर 'तुमलोग कुंठि' यही आधीबात कहकर रहगई ॥ ७८ ॥ तब तो सखियोंने झटपट मूर्छा दूरकरनेके लिये बहुतसे संतापनाशक शीतल उपायोंसे आरंभ किया ॥ ७९ ॥ पर बहुतेरे ठंढे उपायोंके करनेपरभी जब उसकी मूर्छा किसी प्रकारसे नहीं हटी, तब उसकी एक सखी रत्नेश्वरका स्नानजल लेआई ॥८०॥ उस जलके छिडकतेही क्षणमात्रमें उसकी मूर्छा शांत होगई, और वह सोकर उठी-

CC-0. Vasishtha Tripathi Collection. Digitized by eGangotri

१३७

हुईकी नाईं वारंवार शिव शिव कहने लगी ॥ ८१ ॥ स्कन्दने कहा—श्रद्धावान् भक्तोंके ऊपर बडाभारी संकट पडनेपर ईशके चरणामृतको छोडकर दूसरा कोई उपायही नहीं है ॥ ८२ ॥ शरीरके भीतर और बाहरकी सभी दुःसाध्य व्याधियाँ श्रद्धापूर्वक शिवके चरणोदकका स्पर्श होतेही नष्ट होजातीहैं, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है ॥ ८३ ॥ जिस किसीने भगवान्के चरणामृतका सेवन किया, उस पर भीतर और बाहरसे शुद्ध होजानेके कारण कोई भी दुर्गति नहीं पडसकती ॥८४॥ श्रीचरणोदक (अपनेसेवनकरनेवालोंका) आधिभौतिक, आधिदैविक, और आध्यात्मिक इन त्रिविधतापोंको दूर करदेताहै ॥ ८५ ॥ हे मुने ! इसके अनंतर वह गन्धर्वकन्या चैतन्यहोनेपर अतिकोमल धीरबुद्धि सखियोंसे उचितरीतिपर यह कहनेलगी ॥ ८६ ॥ रत्नावली बोली—, हे शशिलेखे ! और अनंगलेखे, ! एवं चित्रलेखे ! तुमलोग मेरे इष्टसाधनमें क्यों सामर्थ्यहीन होगईहो ? और तुम लोगोंकी वे सब कलायें कहांहैं ? ॥ ८७ ॥ हे हितकारिणियो ! भगवान् रत्नेश्वरके अनुग्रहसे अपने प्राणनाथके पानेका एक अच्छा उपाय मुझे सूझाई पडाहै, अब तुमलोग मेरा हितसाधन करो ॥ ८८ ॥ हे शशिलेखे ! तुम तो मेरी अभिलाषा पूरनेके लिये सब देवतोंको लिखो, और हे अनंगलेखे ! तुम समस्तभूतलवासी जवानोंको लिखडालो ॥ ८९ ॥ एवं हे चित्राभिज्ञे ! चित्रलेखे ! तुम पातालवासी उमडतीहुई तरुणाईकी लुनाईवाले युवकोंको लिखो ॥ ९० ॥ यह सुन, सखियोंने उसकी चतुराईकी बडाई कर, क्रमशः समस्त यौवनसंपन्न, कुमारावस्थाके ऊपर चढतेहुए, रेखभिनान, तरुणोंको लिखडाला, और रत्नावली प्रातःसन्ध्याकी नाईं उन चित्रलिखित राजा इत्यादिको देखने लगी ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ उस मृगनयनीने समग्र सुरवृन्दको देखकरभी फिर उन स्वर्गवासियोंपरसे अपनी आँखोंकी चुलबुलाहटको नहीं हटाया ॥ ९३ ॥ तब मध्यमलोकवासी मुनिकुमार और राजकुमारोंकोभी देखा, पर प्रेमसे परिपूर्ण होकर कहींभी प्रसन्नताको नहीं प्राप्त हुई ॥ ९४ ॥ तदनंतर विशालनेत्री रत्नावली बाला, अपनी दृष्टिको पातालके युवकोंपर फेरने लगी ॥ ९५ ॥ कामबाणोंसे बिंधकर वह गन्धर्वकन्या, दैत्य और दानवोंके कुमारोंको देखकर कहींभी प्रसन्न नहीं हुई ॥ ९६ ॥ चन्द्रमाके किरणस्पर्शसे अत्यंत व्यथित शरीर होनेपरभी नागकुमारोंकी ओर दृष्टि पडतेही कुछ कुछ उसाँसें लेनेलगी॥ ९७॥ क्याही आश्चर्य है ! कि वह कुमारिका उन चित्रलिखित भोगियोंको देखतेही क्षणभर कुछ (एक) मुक्तभोगाकी नाईं होगई॥ ९८॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

फिर तो वह, शेष, तक्षक, वासुकी, पुलीक, अनंत, कर्कोटक, और भद्र इत्यादिके वंशमें उत्पन्न समग्र नवजवान नागकुमारोंको देखतीहुई रत्नचूडको देखने लगी॥९९॥ ॥ १०० ॥ (बस फिर क्याथा) शंख रत्नचूडपर दृष्टिपडतेही मारे लज्जाके भरगई और उसके अंग प्रत्यंगकी सन्धियोंमें रोमांच होआया ॥ १ ॥ तब तो उसके लज्जा भावहीसे अतिचतुर चित्रलेखाने क्षणमात्रमें उसके कौमारहर वरको समझलिया ॥२॥ इसके पीछे परिहासरसिका चित्रलेखाने चित्रपटपर अपपे विचित्र वस्त्रके अंचलको डालकर तुरंत ढाँपदिया ॥ ३ ॥ अब तो रत्नावली मारे लज्जासे चुप रहकर ओठ फुरफुरातीहुई चित्रलेखाकी ओर कुटिलदृष्टिसे ताकने लगी ॥ ४ ॥ इसके अनंतर अनंगलेखाने शशिलेखाके कटाक्षकी चेष्टासे चित्रलेखाके डालेहुए कपडाके अंचराको हटादिया ॥ ५ ॥ वसुभूतिकी कन्या रत्नावली, शंखचूडके पुत्र रत्नचूडको (फिर) देखने लगी ॥ ६ ॥ उसके देखनेहीके क्षणसे रत्नावलीकी आँखोंमें प्रेमाश्रु और कपोलोंपर स्वेदके बिन्दु भरआये ॥७॥ रोमांचकी चोलियाँ पहनेहुई उस्की शरीरलता काँपने लगी, क्षणभरके लिये आँखोंको मूँदकरके वहभी चित्रलिखितहीसी होगई ॥८॥ तदनंतर चित्रलेखा उसके पास आकर उस आतुरासे कहनेलगी कि हे गन्धर्वसुते! अधीरमतहो, आज तुम्हारा मनोरथ सिद्ध हुआ ॥ ९ ॥ इस पुरुषका देश और नाम इत्यादि सबकुछ ज्ञात होगया, अतएव हे सखि ! कुछभी विषाद मतकरो, यह रत्नेश्वरका प्रसाद तुमको अनायासही प्राप्त होगा ॥ ११० ॥ अहो ! भाग्यवश रत्नेश्वरने तुमको अनुरूप वरका वरदान कर संतुष्ट कियाहै, अतएव उठो चलैं हमलोगोंके सर्वस्वदाता भगवान् रत्नेश्वरही हैं ॥ ११ ॥ इन बातोंके अनंतर वे चारोंही सखियाँ आकाशमार्गसे घरको चलपडीं, इसीबीचमें दैववश पातालतलवासी सुबाहु दानवने उन सबोंको देखलिया ॥ १२ ॥ विकटदंष्ट्रामुख सिंह जैसे हरिणीपर टूटताहै वैसेही वह दानव उन चारोंहीको पकडकर अपने घरकी ओर लेचला ॥ १३ ॥ सब गंधर्व कुमारियां बडे बडे दांतोंसे विकटमुख, और रुधिरके समान अरुणनेत्र, उस दानवको देखकर मारेभयके थर थर काँपनेलगीं ॥ १४ ॥ हाय ! माता ! हा पिता ! हा विधे ! बचाओ, हमलोगोंको अनाथा देखकर यह दुष्ट दानव जो निष्ठुर कर्म किया चाहताहै उससे बचालो ॥ १५ ॥ हायरे ! दैव ! हम सब अभागिनियोंने ऐसा क्या किया ? (अरे !) चित्तमें भी तो कभी पापकी बात नहीं कहतीथी ॥ १६ ॥ हमलोग तो लडिकखेलवा, और रत्नेश्वरकी पूजा एवं माता पिताके अ-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१३९

दिष्टकार्यको छोडकर और तो कुछ जानतीही नहीं ॥ १७ ॥ हे सर्वव्यापिन् ! शम्भो ! रत्नेश्वर ! इस पातालतलमें पतित, और अनाथ, एवं शरणार्थिनी छोकरियोंको आपके बिना कौन बचासकताहै ? ॥ १८ ॥ इसी बीचमें महामना नागराज रत्नचूडने उन गंधर्वकन्याओंका कातरविलाप सुनपाया ॥ १९ ॥ फिर सोचने लगा, (हंय !) यह कौन मेरे स्वामी कर्मबंधनके काटनेवाले महेश्वर रत्नेश्वर लिंगका नाम लेरहाहै ? ॥ २० ॥ फिरभी " हे रत्नेश्वर ! रक्षाकरो, रक्षाकरो " बालिकाओंके मुखसे निकसे-हुए इस आर्तनादको सुन वह अस्त्र शस्त्र लेकर घरसे निकल पडा ॥ २१ ॥ तबतो रत्नचूडने वसा और मद्यपान तथा अत्यन्त मांसभोजनसे परमउन्मत्त उस दुष्टचेष्टित दानवको देखलिया ॥ २२ ॥ तुरंत ललकारकर कहा कि अरे दुष्ट ! शिष्टकन्यापहा-रक ! अधम ! दानव ! अब आज मेरे नेत्रपथपर पहुँचकर तू कहां भागसकताहै ? ॥ २३ ॥ रे दुर्मते ! मैं विपन्नजनके बचानेके लिये दृढहूं, अब तू मेरे बाणोंकी चोटसे प्राण गवाँकर यमपुरकी यात्रा कर, ॥ २४ ॥ जो लोग प्रलयकाल और आपत्ति पडनेपरभी रत्नेश्वरका नाम लेते हैं, उन भयग्रस्तोंपर तेरेऐसोंसे तनिकभी भय नहीं होसकता, यह निश्चयहै ॥ २५ ॥ जो लोग रत्नेश्वरके महानामसे परिरक्षित होर-हते हैं, उन लोगोंको जन्म, जरा, व्याधि, कलि, और कालकाभी भय कहां होताहै ? ॥ २६ ॥ नागराज कुमार रत्नचूड, भयग्रस्त उन गंधर्वकन्याओंको बाघकी सूँघीहुई हरिनीके समान अपने मुखकी ओर ताकतीहुई देखकर, "तुमलोग तनिकभी मत डरो" यह कहता हुआ, आश्वासनपूर्वक कर्णपर्यंत धनुषको खींचकर बाणचलाने लगा ॥ २७ ॥ २८ ॥ अब तो उस दानवेन्द्रनेभी पददलित सर्पके समान क्रुद्ध होकर, कालदंडकी नाईं एक मुसलको घुमाकर (रत्नचूडपर) फेंका ॥ २९ ॥ जिसके हृदयमें रत्नेश्वरलिंग पूर्णतया जागरूक रहताहै, उसके ऊपर घोर कालदंडभी छोटेसे तृणके समान होजाताहै ॥ १३० ॥ रत्नचूडने बीच (मार्ग) हीमें अपने बाणोंसे उसके मुसलको काट गिराया, फिर जिससे उस दुष्टका प्राणान्त होजावे ॥ ३१ ॥ ऐसा कालानलके तुल्य एक बाण उसपर चलाया जो उसका वक्षःस्थल ढूँढकर घुस-गया ॥ ३२ ॥ और उसके प्राणोंको निकालकर स्वयं अपने तरकसमें चला आया, रत्न-चूडका बाण दिगंगनाओंके आगे उस दानवके हृदय स्थित सब दौरात्म्यके तत्त्व-पूर्वक समझकर कहनेहीके लिये मानो लौटआया ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ जो कोई अन्यायपूर्वक उपार्जित द्रव्योंसे सुखभोगनेकी इच्छा करताहै वह प्राणके सहित उन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

द्रव्योंको विनष्ट करदेताहै, फिर सुख कहां है ? ॥ ३५ ॥ इसके अनंतर उस महाबली नागराजने दानवको मारकर उन कन्याओंसे कहा कि तुम लोग कौन हो ? और किसकी बेटी हो ? ॥ ३६ ॥ एवं इस दुरात्मा दानवसे कहां भेंटहुई और तुम सबोंने रत्नेश्वरका लिंग कहां देखा ? ॥ ३७ ॥ जिसके नाम लेतेही तुम सब आपत्तिसे तुरंत छूटगईं, इन बातोंको यथार्थ रीतिसे कहो, जिसमें मैं सब बातें ठीक ठीक समझसकूं ॥ ३८ ॥ वे सब उसकी ऐसी बातोंको सुनकर प्रेमसे अत्यंत परिपूर्ण होकर परस्पर एक दूसरीका मुख देखतीहुई यह कहने लगीं कि यह कौन हैं ? जैसे स्यात् पहिले भी कभी इनको देखा हो, ऐसा जानपडता है ॥ ॥ ३९ ॥ ये कहांसे अकारणमित्र इस दुःखके समयपर यहाँ आगये जिनने अपने प्राणोंको पण लगाकर हम सब बालिकाओंको बचायाहै ॥ १४० ॥ इनके दर्शनहीसे हम सबकी इंद्रियाँ स्वभावतः चंचल होनेपरभी मानो अमृत पीकर मन्थर होगईं हैं ॥ ४१ ॥ हमारे दोनोंही नेत्र, इस परमरमणीयतरको देख फिर दूसरी वस्तुके देखनेको कहीं अन्यत्र जानेकी इच्छाही नहीं करते ॥ ४२ ॥ एवं दोनोंही कानभी वचनामृतकी मधुरताको पीकर अपर शब्दोंके श्रवणमें निरपेक्ष होगयेहैं ॥ ॥ ४३ ॥ हम सबके मनरूपी मणिके चोर इन जवानको देख, हमारे ये पैर चंचल होनेपरभी पंगुसे होगये हैं ॥ ४४ ॥ वे सब बालिकायें (आपसमें) परस्पर इसी भाँतिसे धीरे धीरे बतियाकर चित्रमें देखनेपरभी उसको नहीं पहिचान सकीं ॥ ४५ ॥ क्योंकि अत्यन्त भीषणाकार उस दानवके भयसे आंखोंके अन्ध होजानेसे वे मृगनयनियाँ उसे किसी प्रकारसे नहीं पहिचानसकीं ॥ ४६ ॥ फिर उस जीवन रक्षक युवकसे वे सब कहने लगीं, कि, हे जीव ! आपने जो स्नेहपूर्ण हृदयसे पूछा ॥ ४७ ॥ सो सब हमलोग कहती हैं आप क्षणभर सावधान होजावें, यह गन्धर्वराज वसुभूतिकी बेटी है ॥ ४८ ॥ इसका नाम रत्नावलीहै, यह गुण रत्नोंकी बडी खानि है, हमलोग इनकी सखियाँ हैं और छायाकी नाईं सर्वदा इनकी अनुगामिनी बनी रहती हैं ॥ ४९ ॥ ये लडकपनहीसे पिताकी आज्ञानुसार प्रतिदिन काशीमें रत्नेश्वरनामक लिंगकी पूजाकरनेको जातीहैं ॥ १५० ॥ भगवान शंकरने प्रसन्न होकर इनको यह वरदान भी कियाहै कि हे कुमारिके ! जो युवक स्वप्नमें तेरी कुमारता हरण करेगा ॥ ५१ ॥ और तुम्हारे नामके समान नामी होगा वही तुम्हारा भर्ता होगा, फिर यह स्वप्नके भोक्ता उस जवानके नहीं पानेसे बहुतही

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१४१

दुःखित हुई ॥ ५२ ॥ फिर जब उसके विरहानलसे अत्यन्त तापित हुई, तो हम-लोगोंने कला कौशल करके उसे चित्रमें इनको दिखलाया ॥ ५३ ॥ जिसका नाम, धाम, वंश, कुछभी नहीं ज्ञात है उसे चित्रमें लिखित होनेपरभी देखतेही यह जी उठी ॥ ५४ ॥ फिर रत्नेश्वरको प्रणाम करके अपने घरके जानेको उत्कण्ठित हुई। इसी बीचमें आकाशमार्गसे इनके साथ जातीहुई हम लोगोंको ॥ ५५ ॥ धरकर अतर्कित भावसे आयाहुआ यह दानव पातालमें लेगया। इसके अनंतर इस दानवाधमके विषयमें जो कुछ हुआ वह आपपर भलीभाँतिसे विदितही है ॥ ५६ ॥ महाशय ! यह तो अपना सब वृत्तान्त हमलोगोंने आपसे कहदिया; हे कृपानिधान ! अब आपभी प्रसन्न होकर यह बतादेवें कि आप कौनहैं ? ॥ ५७ ॥ हे भयत्रातः ! जबसे हमलोगोंने इस दुष्टदानवको देखाहै, तबसे हमारी आँखें मानो बिजुरीसे (चक) चौंधिआगई हैं ॥ ॥ ५८ ॥ हम सब किधर जावें ? कहां हैं ? कौनहैं ? आपही कौनहैं ? एवं क्या होगया ? अथवा क्या होगा ? यह सब कुछभी नहीं जानतीहैं ॥ ५९ ॥ शुद्धबुद्धि, पुण्यात्मा, नागराजके कुमार उस रत्नचूडने भयसे विह्वल उन गन्धर्वकन्याओंकी बात सुन, आश्वासन देकर यह कहा कि ॥ १६० ॥ तुमलोग मेरेसाथ चलीआओ, मैं तुम सबको रत्नेश्व-रका दर्शन कराताहूं, रत्नचूड यही कहकर उन सबोंको सुखोदका नामकी क्रीडावापी पर लेगया ॥ ६१ ॥ जो बावली विचित्रमणियोंकी सीढियोंसे सुशोभित, और हंस और कोकके मधुरध्वनिसे पूर्ण एवं जलपक्षियोंकी बोलीके व्याजसे मानो स्वागत कर-रहीहै ॥ ६२ ॥ उसकी आज्ञाके अनुसार वे सब उस क्रीडावापीमें स्नानकर फिर वस्त्र और पुष्पाभरणादिके सहित उसमें डुबकी मारने लगीं ॥ ६३ ॥ तुरंतही बाहर होकर वे सब गंधर्वकन्यायें अपनेको कालभैरवके पासमें रत्नेश्वरके समीप देखतेही आश्चर्यसे पूर्ण होगईं ॥ ६४ ॥ तब वे सब परस्पर चकितहोकर यह कहने लगीं कि यह स्वप्नहै ! अथवा सत्यहै ! कि रत्नेश्वरहीका कोई खेलवाड है ॥ ६५ ॥ स्यात् हमी लोगोंकी बुद्धि चकरागई है ? किंवा हम लोग गन्धर्वकन्याही नहीं हैं ? जो हो पर हम लोगोंको तो इन्द्रजालकी नाईं कुछ समझाताही नहीं ॥ ६६ ॥ पर यहां तो गंगा उत्तरवाहिनी स्पष्टही हैं, यही शंखचूडकी वापी है वही शंखचूडका घर है, ॥ ६७ ॥ यह पंचनद तीर्थ है, यह वागीश्वर (री) का मन्दिर है, जिसके दर्शनहीसे वाग् विभूति खुलजातीहै ॥ ६८ ॥ यह शंखचूडेश्वर हैं, जिसके दर्शन करनेसे लोगोंको कालसर्पकाभी भय नहीं रहजाने पाता ॥ ६९ ॥ यही तो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पवित्र जलकी भूमि मन्दाकिनीनामक बावली है, जिसमें जलक्रिया करनेसे मनुष्यको फिर मर्त्यलोकमें प्रवेश नहीं करना पडता ॥ १७० ॥ यह आशापूरी नामक देवी हैं जो मन्दाकिनीके सुन्दर तटपर, त्रिपुरासुरके जीतनेकी इच्छासे त्रिपुरारिके द्वारा स्तुति कीगई हैं ॥ ७१ ॥ आजभी जिनकी पूजा करनेसे अर्थी लोगोंकी आशा पूर्ण होजातीहै, मन्दाकिनीके पश्चिमओर यह सिद्धयष्टकेश्वर हैं ॥ ७२ ॥ जिनके पूजनसे घरमें आठोंही सिद्धियाँ प्रकट स्फुट होकर रहतीहैं, और वहींपर निर्मलजलवाला एक सिद्धयष्टकनामक कुंड है ॥ ७३ ॥ जिस कुंडमें स्नान और श्राद्ध करनेसे मनुष्य विरज होकर स्वर्गमें चलाजाताहै, और वहींपर आठों सिद्धियोंकी मूर्तियां हैं, जो काशीमें सब सिद्धियोंको देती हैं ॥ ७४ ॥ और येही तो सर्व सिद्धियोंके दाता महाराज विनायक (बडे गणेश) हैं, जिनके प्रणाम करनेवाले लोगोंके सब विघ्न आपही विनष्ट होजाते हैं ॥ ७५ ॥ यह सिद्धेश्वरका ऊंचा मन्दिर है जिसपर सोना चढाहुआहै, और रत्नोंकी ध्वजा और पताकायें फहरा रहीं हैं, जिसके दर्शनहीसे सिद्धि प्राप्त होतीहै ॥ ७६ ॥

दोहा—वागीश्वरिके पासमें, सिद्धेश्वर महराज ।
आप विराजत हैं जहां, ज्वरहर ईश्वर आज ॥

ये क्षेत्रके मध्यभागमें मध्यमेश्वर हैं, जिनके दर्शनसे मध्यलोक और पाताललोकमें वास नहीं होता ॥ ७७ ॥ मनुष्य इसी मध्यमेश्वरकी पूजा करनेसे भूलोकमें समुद्रांत भूमिका अधीश्वर होकर अन्तमें मोक्ष पाताहै ॥ ७८ ॥ उसके पूर्वभागमें ऐरावतेश्वर नामक लिंगहै जो इष्टसिद्धियोंको पूर्णकर देताहै, और जिसकी पताकामें सोहावन ऐरावत गजबनाहै॥ ७९ यहीतो वृद्धकालेश्वरका जडाऊवाला मन्दिरहै, जिसपर प्रतिअमावास्याकी रात्रिमेंभी मानो ताराओंके साथ चन्द्रमा शोभायमान रहताहै॥ १८० ॥ जिसके दर्शनहीसे निस्सन्देह संसारमें कलिकाल और कल्मष राशियाँ कुछभी नहीं करसकतीं ॥ ८१ ॥ वे सब गन्धर्वकन्यायें जब घबडाईहुईसी इन बातोंको कररहींथीं उसी घडी गंधर्वराज वसुभूति बडीशीघ्रतासे वहाँ आपहुँचे ॥ ८२ ॥ देवऋषि नारदके मुखसे सखियोंके सहित दुलरुई बेटी रत्नावलीका रत्नेश्वरके दर्शनके अनंतर लौटतीवेला शून्य आकाश-मार्गमें सुबाहुदानवसे हराजाना और उसके पातालमें लेजानेपर वहां युद्धका होना और फिर ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ रत्नेश्वरके भक्त बडे धनुर्धर रत्नचूडसे उस सुबाहु दानवका बाणके द्वारा माराजाना ॥ ८५ ॥ फिर सब वृत्तान्त पूछलेनेपर रत्नचूडका उन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१४३

सबोंको बावलीके मार्गसे पहुँचादेना और उन सबोंका शंखचूडकी पातालतलवाली बावलीमें ॥ ८६ ॥ बैठकर काशीमें जा निकलना, और काशीको देखकर उन गंधर्व-कन्याओंका बहुत घबडाना एवं वारंवार उत्कंठित होकर (इधर—उधर) देखना॥८७॥ इत्यादि बातोंको सुनकर गंधर्वराज वहाँ जाय अपनी कन्याको सखियोंके सहित प्रफुल्ल मुखकमलकी शोभाके द्वारा पूर्णरहनेसे फिर उत्पन्न हुई सी देखकर ॥ ८८ ॥ वारंवार उसे आलिंगन करते और उसका ललाटतल सूँघते हुए गोदमें बैठाकर आदरके साथ सब समाचार पूछने लगे ॥ ८९ ॥ इसके पीछे रत्नावलीने, स्वभावस्थाकी बात छोड-कर रत्नेश्वरका वरदान और दानवके अपहरण करनेका सब वृत्तान्त कह सुनाया ॥ १९० ॥ अनंतर रत्नावलीके मुखकी चेष्टासे उसकी मनोवृत्तिको समझकर शशिले-खाने स्पष्टअक्षरोंमें सब समाचार सविस्तर वर्णन किया ॥ ९१ ॥ तब तो वे सुकृती गंधर्व-राज बहुतही संतुष्ट होकर बडे हर्षके साथ रत्नेश्वरका प्रभाव वर्णन करने लगे ॥ ९२ ॥ स्कन्दने कहा—हे विन्ध्य वृद्धि विबंधक ! मुनिश्रेष्ठ ! सुनो, संयमी रत्नचूडभी प्रति-दिन उसी बावलीके मार्गसे ॥ ९३ ॥ अपने नागलोकसे वहाँ आकर मन्दाकिनीके जलमें स्नानकर रत्नेश्वरकी पूजाके उपरान्त आठअंजुरी रत्न ॥ ९४ ॥ और आठही सोनेके बनेहुए कमलके पुष्पोंको बडी प्रसन्नतासे चढाताथा एकबार स्वप्नके समय लिंगरूप होकर रत्नेश्वरने ॥ ९५ ॥ दृढव्रती अपने भक्त रत्नचूडसे यह कहा कि, "युद्धमें जिस दानवको जीतकर उसकी हरणकीहुई कन्याको तुम छोडावोगे वही तुम्हारी पत्नी होगी"। फिर वह महामनस्वी नागराज इस वरदानको स्मरणकरता हुआ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ अपने वीर्यके बलसे सुबाहु दानवको मार, उस गंधर्वक-न्याको उससे छुडाकर वापीके मार्गसे फिर महीतलपर पहुँचागया ॥ ९८ ॥ और वह बुद्धिमान् प्रतिदिनका अपना नियमभी साधने लगा, जब कि रत्नेश्वरका पूजन और परिक्रमाकरके ॥ ९९ ॥ सुहावने रत्नेश्वरके मंडपसे वह बाहर निकला, त्योंही वह सब बालिका गंधर्वराज वसुभूतिको ॥ २०० ॥ "यही तो वह धन्ययुवाहै" कहतीहुई तर्जनीके अग्रभागसे दिखाने लगी। तब तो (उस) नागराजके कुमारको देखतेही गन्धर्वराजके ॥ १ ॥ नेत्र बहुतही प्रफुल्ल, और शरीर रोमांचित हो उठा, और वे मनहीमन उसके रूप, यौवन और कुलकी प्रशंसा करने लगे ॥ २ ॥ (एवं सोचने लगे कि) रत्नेश्वरने वरदान करके मुझपर बडा अनुग्रह किया, अतएव मैं धन्य हूँ और यह कन्यातो परमधन्य होगई जो इसको अनुरूप पति मिलगया ॥ ३ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वसुभूतिने इन बातोंको मनहीमें सोच विचार उस सुन्दर युवाको बुलाय, उसका नाम और गोत्र पूछ बलाबलकी गणना मिलाकर ॥ ४ ॥ रत्नेश्वरके सन्मुखही बडे हर्षसे उसे अपनी कन्याको देदिया । फिर विवाहके कौतुक मंगल करनेपर रत्नचूडको अपने गंधर्वलोकमें लिवाजाकर ॥ ५ ॥ विवाहकी विधिके अनुसार मधुपर्कसे पूजन कर पाणिग्रहण करादिया, और बहुतसे रत्नोंकोभी दिया ॥ ६ ॥ हे कुम्भज ! मुने ! शशिलेखा, अनंगलेखा, और चित्रलेखानेभी, अपने अपने पिताको जनाकर रत्नचूडहीको पति बनाना चाहा ॥ ७ ॥ इसके अनन्तर वह नागकुमार उन चारों सुन्दर गंधर्वकन्याओंका विवाह कर उन सबोंके साथ अपने पिताके घर चलागया ॥ ८ ॥ चारों श्रुतियोंके सहित प्रणव जैसे शिवके पास पहुँचताहै वैसेही वह नागराज उन चारों नवोढाओंके साथ जाकर अपने माता पिताके चरणोंपर गिरा ॥ ९ ॥ और रत्नेश्वरकी अनुकम्पाका सब वृत्तान्त निवेदन करके माता पितासे अभिनन्दित होनेपर वह उन सबोंके साथ सुखपूर्वक वास करने लगा ॥ ॥ २१० ॥ शंकरने कहा—हे गिरजे ! सब लोगोंके सब कुछ देनेवाले स्थावरका मेरे इस रत्नेश्वरलिंगके प्रभावकी तुलना नहीं है ॥ ११ ॥ हे सुमध्यमे ! इस लिंगसे सहस्रों सिद्धलोगोंने बडी सिद्धि पायीहै, यह लिंग आजतक गुप्तही रहा ॥ १२ ॥ पर मेरे परमभक्त तुम्हारे पिता हिमवान्‌ने अपने पुण्यार्जित महारत्नोंसे रत्नेश्वरको (आज) प्रकट करदिया ॥ १३ ॥ हे गिरिराज सुते ! इस लिंगपर मेरी बडीही प्रीतिहै, अतएव वाराणसी क्षेत्रमें बडे परिश्रमसे इस लिंगका पूजन करना चाहिये ॥ ॥ १४ ॥ हे प्रिये ! उमे ! रत्नेश्वरकी कृपासे नानाप्रकारके रत्नजात, स्त्रीरत्न, पुत्ररत्न, स्वर्ग, और मोक्ष, इत्यादि सब कुछ पाया जाताहै ॥ १५ ॥ जो कोई यहांपर रत्नेश्वरको प्रणाम करके परदेशमें भी प्राणत्याग करे, उसे सौ करोड कल्पतक फिर इस मर्त्यलोकमें लौटना नहीं पडता ॥ १६ ॥ हे देवि ! रत्नेश्वरके समीप कृष्णपक्षकी चतुर्दशीके दिन उपवास रहकर रात्रिमें जागरण करनेसे मेरा सान्निध्य प्राप्त होताहै ॥ १७ ॥ हे प्रिये ! इसी रत्नेश्वरके पूर्वभागमें तुमने अपने पूर्वजन्ममें दाक्षायणीश्वरनामक लिंगको मेरी भक्तिसे स्थापित कियाथा ॥ १८ ॥ उसके दर्शन करनेहीसे मनुष्य दुर्गतिको नहीं प्राप्त होता, हे सुमध्यमे ! यहींपर तुम अंबिका गौरी हो, और मैं अंबिकेश्वरनामकहूं एवं तुम्हारा पुत्र षडाननभी यहां मूर्तिमान् है, हे उमे ! इन तीनोंहीके दर्शन करनेसे मनष्य फिर गर्भमें प्रवेश नहीं करता ॥ १९ ॥ २२० ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१४५

यह रत्नेश्वरका माहात्म्य मैंने तुमसे वर्णन किया, कलियुगके पापियोंसे इसे सदैव पूर्णरीतिपर छिपानाही चाहिये ॥ २१ ॥ जो कोई नित्यही इस रत्नेश्वरके उपाख्यानका पाठ करेगा, उसे कभी पुत्र पौत्र और पालित पशुओंका वियोग नहीं सहना पडेगा ॥ २२ ॥ जो कोई पुरुष इतिहासके साथ रत्नेश्वरके प्रादुर्भावकी कथाको सुनेगा वह अविवाहित होनेपर निश्चयही वंशके अनुरूप कन्यारूपी रत्नको पावेगा ॥ २३ ॥ एवं यदि कोई कन्याभी इस मनोरम इतिहासको श्रद्धापूर्वक सुनेगी, तो वहभी सज्जन पतिको पाकर परमपतिव्रता होगी ॥ २४ ॥ इस इतिहासके सुननेसे चाहे पुरुष हो अथवा स्त्री हो, कभी अपने प्रियके विरहानलमें संतप्त नहीं होता ॥ २२५ ॥

दोहा—रत्नचूड रत्नावली, दोउनको इतिहास ।
पढे, सुने, मनकामना, पुरवहि यह दृढ आस ॥ १ ॥

सो०—रत्नेश्वरको धाम, वृद्धकालके पासहै ।
सधैं जगत्के काम, तेहिदरसन पूजन किये ॥ २ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्द्धे भाषायां रत्नेश्वरप्रशंसावर्णनं-नाम सप्तषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६७ ॥

अड़सठवाँ अध्याय ।

गजासुरका वध और कृत्तिवासेश्वरका प्रादुर्भाव ।

स्कन्द बोले—हे विप्रेन्द्र ! वहांका एक औरभी महापातक—नाशक और परमार्थकारक वृत्तान्त श्रवण करो ॥ १ ॥ महेश्वर, रत्नेश्वरके विषयमें जब यह कथा कहरहेथे उसीसमयपर चारों ओरसे "बचाओ बचाओ" का बडाभारी कोलाहल मचने लगा ॥ २ ॥ (यहसुनाईपडा कि) अपने वीर्यके अहंकारसे उद्धत, महिषासुरका पुत्र गजासुर अशेष प्रमथगणोंको मथताहुआ यहीं चलाआरहाहै ॥ ३ ॥ वह जिसजिस स्थानपर अपना चरण रखताहै, वहां वहांकी पृथिवी उसके बोझसे काँपने लगतीहै ॥ ४ ॥ उसके बडेवेगसे वृक्ष और सूंडके टक्करसे शिखरोंके साथ बडे बडे पर्वत चकनाचूर होकर गिरेपडतेहैं ॥ ५ ॥ जिसके मस्तक—कुंभके टक्करसे मेघगण आकाश छोडदेते हैं, और उसके केशोंके रगडकी नीलिमा आजतक उनमें बनी रहगई है ॥ ६ ॥ जिसके श्वासके फुफकारसे बडे समुद्रोंमेंभी ऊंची ऊंची लहरें उठने लगतीहैं और नदियाँभी बडे बडे जलचरोंके साथ हिंडोल उठतीहैं ॥ ७ ॥ उस मायावीके शरीरकी लंबाई और

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चकराई नवसहस्र योजनमें फैली हुई है॥८॥उसके नेत्रोंकी पीलीचमक और चंचलता आजलों बिजुरीमें बनी है; वही दुष्ट बडे वेगसे चला आरहाहै ॥ ९ ॥ यह दुस्सह दानव जिस जिस दिशामें जाताहै मानो उसे निश्चयही समथर किये जारहाहै ॥ ॥ १० ॥ यह तो ब्रह्माके वरदानसे कामसे हारेहुए स्त्री और पुरुषोंसे अपनेतईं अवध्य मानकर तीनोंही जगत्को तृणके समान समझताहै ॥ ११ ॥ इसके उपरांत त्रिशूलधारी महादेवने उस दैत्यराजको दूसरे किसीसे अवध्य जानकर आतेही अपने त्रिशूलसे मारा ॥ १२ ॥ और उस गजासुर दैत्यको त्रिशूलमें गोदकरके उठालिया, तबतो अपनेको छातेके समान मानकर उसने शिवसे कहा ॥ १३ ॥ गजासुर बोला- हे त्रिशूलपाणे ! देवेश ! आपने कामदेवका संहारकियाहै, आपको मैं भलीभाँतिसे जानताहूं, परंतु हे त्रिपुरान्तक ! आपके हाथसे मारे जानेमें मेरा कल्याणही है॥१४॥ हे मृत्युंजय ! इसघडी मैं आपसे कुछ विनती किया चाहताहूं, यदि आप (मनदेकर) सुनें, और विचारें कि मैं सत्य कहताहूं अथवा असत्य कहताहूं ॥ १५ ॥ हे देव ! एक आपही त्रैलोक्यभरके वन्दनीय, और सब किसीके ऊपर रहनेवालेहैं, पर आजतो मैं त्रिशूलमें विद्ध होकर आपकेभी ऊपर विराजमानहूं, तो फिर मैंही आपके अनुग्रहसे धन्यहूं और मेरीही जीतहुई, क्योंकि कालधर्मके अनुसार (एकदिनतो) सभीको मरना है, तब ऐसीही मृत्यु श्रेयस्कर है, (इसमें कौन संदेहहै) ॥ १६ ॥ १७ ॥ हे घटोद्भव ! परमकारुणिक देवादिदेव शंभु, उसके इस वचनको सुनकर हँसतेहुए गजासुरसे कहने लगे ॥ १८ ॥ ईश्वरने कहा—हे महापुरुषार्थिन् ! गजासुर ! तुम्हारी सुबुद्धिसे मैं बहुतही प्रसन्नहूं, हे दानव ! तुम अपने अनुकूल वर माँगलो मैं देनेको प्रस्तुत हूं ॥ १९ ॥ वह दैत्येन्द्र शिवका यह वचन सुनकर उनसे कहनेलगा, गजासुर बोला—हे दिगम्बर ! यदि आप प्रसन्न हैं तो, हे विरूपाक्ष ! मेरे इस लंबे चौडे सुखस्पर्श (कोमल) रणांगणके दावसे जीतेहुए और त्रिशूलकी आगसे सिझाएगये चमडेको सदैव पहिना करें ॥ २० ॥ २१ ॥ यह कृत्ति (खाल) आपकी कृपासे सदैव उत्तमगंधसे युक्त, और अत्यंत कोमल, एवं निर्मल और (आपका) परमविभूषण होवे ॥ २२ ॥ हे प्रभो ! यह कृत्ति बहुत कालतक बडीभारी तपस्यारूप अग्निज्वालामें पडनेपरभी नहीं जरी अतएव पवित्रता और सुगंधका आश्रय होवे ॥ २३ ॥ हे नाथ ! यदि मेरी यह कृत्ति (खाल) बडे पुण्यसे पूर्ण न होती तो, हे दिगंबर ! युद्धक्षेत्रमें इससे आपके अंगोंका संसर्ग कैसे होजाता ॥ २४ ॥ हे शंकर ! यदि आप

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१४७

संतुष्ट हो तो एक औरभी वर देवें, वह यही कि आजके दिनसे आपका नाम कृत्ति-
वासा पडे ॥ २५ ॥ उसके इस वचनको सुनतेही तथास्तु कहकर भगवान् शंकर
भक्तिसे निर्मल चित्त, उस दैत्यसे फिर कहनेलगे ॥ २६ ॥ महेश्वरने कहा—हे पुण्य-
शिखे ! दैत्य ! एक औरभी बडा दुर्लभ वरदान सुनो, तुमने मुक्तिके साधन इस
अविमुक्तनामक महाक्षेत्रमें युद्धकरके अपना शरीर त्यागकियाहै, इसलिये तुम्हारा यह
पवित्र शरीर इसक्षेत्रमें मेरा लिंग होकर यहांपर सब किसीका मुक्तिदायक होवेगा ॥
॥ २७ ॥ २८ ॥ इसका नाम कृत्तिवासेश्वर पडेगा, और यह महापापभंजन होनेसे
सब लिंगोंके बीचमें प्रधान मस्तकरूप लिंग होवेगा ॥ २९ ॥ वाराणसीमें जितनेही
बडे बडे लिंगहैं उन सबोंमें यह लिंग जैसे सब अंगोंमें उत्तमांग (शिर) उत्तम होता
है वैसेही उत्तम होगा ॥ ३० ॥ मानवलोगोंके हितके लिये मैं इस लिंगमें अपने
परिवार वर्गके साथ अवस्थान करूंगा, मनुष्य इस लिंगके दर्शन, पूजन और स्तुति,
पाठ, करनेसे कृतकृत्य होकर फिर संसारमें प्रवेश नहीं करेगा ॥ ३१ ॥ शांत, दांत,
क्रोधहीन, निर्द्वन्द्व, निष्परिग्रह, जो रुद्र, पाशुपत, सिद्ध, ऋषि, तत्त्वचिंतक ॥ ३२ ॥
मान और अपमानमें तुल्यबुद्धि, और ईंटा, पाथर और सोनेको समान समझनेवाले
मेरे भक्तलोग मोक्षकी इच्छासे अविमुक्तक्षेत्रमें रहतेहैं ॥ ३३ ॥ उन सबोंपर अनु
ग्रह करनेकेलिये मैं इस कृत्तिवासेश्वर लिंगमें रहाकरूंगा । प्रतिदिन दशकोटिसहस्र
तीर्थ ॥ ३४ ॥ तीनोंवेला इस कृत्तिवासेश्वरपर अवश्य आया करेंगे । कलियुग
और द्वापरके उत्पन्न लोग पापबुद्धि, ॥ ३५ ॥ सदाचारसे हीन, सत्य और शौचसे
पराङ्मुख, माया, दंभ, लोभ, मोह, और अहंकारसे पूर्ण ॥ ३६ ॥ एवं ब्राह्मणलोग
शूद्रोंके अन्नसेभी, जिभचटाक, बडे लालची, स्नान, संध्या, जप और यज्ञादिकसे दूर
भागनेवाले होवेंगे ॥ ३७ ॥ (परन्तु) वे सबभी कृत्तिवासेश्वरमें पहुँच सबपापोंसे
छूटकर पुण्यात्मा लोगोंकी नाईं सुखसे मोक्षपदको प्राप्त होवेंगे ॥ ३८ ॥ इसीकारणसे
काशीमें लोगोंको कृत्तिवासेश्वर लिंगका सेवन करना चाहिये, क्योंकि दूसरे स्थानमें
जो मोक्ष सहस्रों जन्मतांरोंमेंभी बडाही दुर्लभहै ॥ ३९ ॥ वह कृत्तिवासेश्वर लिंगके
स्थानमें अनायास एकही जन्ममें मिल जाताहै । यद्यपि पूर्वजन्मका कियाहुआ पाप,
तपस्या और दान इत्यादिसेभी धीरे धीरे दूर होताहै, परंतु कृत्तिवासेश्वरके दर्शनकर-
नेसे तो तुरंतही विनष्ट होजाताहै ॥ ४० ॥ जो लोग कृत्तिवासेश्वरका पूजन करेंगे, वे
नर मरेही शरीरमें प्रविष्ट होजावेंगे और उनका फिर जन्म नहीं होगा ॥ ४१ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सभी लोगोंको अविमुक्तक्षेत्रमें रहना, और शतरुद्रियका जपना, एवं वारंवार भगवान् कृत्तिवासेश्वरका दर्शन करना उचितहै ॥ ४२ ॥ सात करोड़ महारुद्रमंत्रके जपनेसे जो फल मिलताहै, काशीमें केवल कृत्तिवासेश्वरके पूजनकरनेसे भी वही फल प्राप्त होताहै ॥ ४३ ॥ माघवदी चतुर्दशीको उपवास और रात्रिमें जागरण करके कृत्तिवासेश्वरकी पूजा करनेसे परमगति प्राप्त होतीहै ॥ ॥ ४४ ॥ और जो चैत्रमासकी पूर्णिमाके दिन कृत्तिवासेश्वर लिंगपर बडा उत्सव करताहै वह गर्भमें कभी नहीं पैठता ॥ ४५ ॥ देवेश्वरने, यह कह गजासुरकी वही-भारी कृत्ति (खाल) को लेकर अपने नग्नशरीरमें लपेट लिया ॥ ४६ ॥ हे कुम्भज! मुने ! जिसदिन भगवान् दिगंबर देव कृत्तिवासा हुए उस दिन (वहां) बहुतभारी महोत्सव मनाया गया ॥ ४७ ॥ एवं जहाँपर त्रिशूलमें गोद गजासुरको छाताकी नाईं बनाकर भूतलमें गाडदियाथा, वहींपर त्रिशूलके उखाडलेनेसे एक बहुतबडा कुंड होगया ॥ ४८ ॥ मनुष्य उस कुंडमें स्नान और पितरोंका तर्पण करके कृत्तिवासेश्वरका दर्शन करे तो कृतकृत्य होजाताहै ॥ ४९ ॥ स्कन्द बोले—हे अगस्त्य ! अब उस तीर्थमें जो घटना हुईथी उसेभी सुनलो, जैसे कि उस तीर्थके प्रभावसे काकगण हंसके स्वरूप होगयेथे ॥ ५० ॥ पूर्वमें एकबार चैत्रकी पूर्णिमाके दिन कृत्तिवासेश्वरकी यात्रा थी, वहाँपर बहुतेरे देवकों (पुजारियों) ने पूजामें चढेहुए बहुतसे अन्नकी ढेर लगादीथी, हे विप्र ! उस ढेरको देखकर बहुतेरी चिडिआयें मेडरानेलगीं, और उस अन्नके लिये आकाशमार्गमें परस्पर लडने लगीं ॥ ५१ ॥ फिर तो कगवर खाकर हृष्टपुष्ट और बडे मोटे काकाकौओंने काँवकाँव करतेहुए दुबले और निर्बल कौओंको चोंचोंसे मारगिराया ॥ ५३ ॥ वे कौवे चोट खाकर आकाशसे (लरखरातेहुए) उसी कुंडमें गिरपडे, और आयुष्य शेष रहनेके कारण, वे सब बँचगये और तुरतही कौवासे हंस होगये ॥ ५४ ॥ तब जो लोग उस यात्रामें बटुरे हुएथे वे बडे आश्चर्य में आकर अंगुरी दिखाकर कहने लगे कि ओह ! देखो देखो ! कैसी विचित्र बात है कि ! ॥ ५५ ॥ हमलोगोंके देखते देखते जो कौवे इस कुंडमें गिरे वे सबके सब इस तीर्थके प्रभावसे कालेचोंच और चरणके हंस होगयेहैं ॥

चौपाई—"मज्जन फल पेखिय ततकाला।काक होहिं पिक बकउ मराला"(तु:रा.)॥ ५६॥

हे कलशोद्भव! तभीसे वह कुंड इसलोकमें कृत्तिवासेश्वरके पासमें हंसतीर्थके नामसे विख्यात हुआ ॥ ५७ ॥ अत्यंत मलिनकर्मोंसे जो लोग बडेही मलिन आत्मावाले

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१४९

होजातेहैं, वेभी हंसतीर्थमें स्नानादि जलक्रियाओंके करनेसे क्षणमात्रमें निर्मल होजातेहैं ॥ ५८ ॥ सदैव काशीमें वास और हंसतीर्थमें स्नान, एवं कृत्तिवासेश्वरका दर्शन करना चाहिये, इसीसे परमपदकी प्राप्ति होतीहै ॥ ५९ ॥ हे मुने ! काशीमें तो पदपद पर अनेक लिंग विद्यमानहैं, परंतु कृत्तिवासेश्वर लिंग सब लिंगोंका मस्तक स्वरूपहै ॥ ६० ॥ काशीमें भक्तियुक्त चित्तसे एक कृत्तिवासेश्वरहीकी सेवा करनेसे समग्र लिंगोंकी आराधना करनेका फल पायाजाताहै ॥ ६१ ॥ कृत्तिवासेश्वरके समीपमें, तपस्या, जप, दान, होम, तर्पण, और देवतापूजन आदि जो कुछ कियाजावे वह सब अनंत होजाताहै ॥ ६२ ॥ हे कलशसम्भव ! यह तीर्थ तो अनादि सिद्धहै, परन्तु भगवान् महेश्वरके सान्निध्यसे फिर प्रकट हुआ है ॥ ६३ ॥ यह सब सिद्धलिंग युगयुग-में छिपजायाकरते हैं, और फिरसे महादेवका सान्निध्य पाकर प्रकट होजातेहैं ॥ ६४ ॥ हे मुने ! हंसतीर्थके चारोंओर बडे बडे मुनियोंके स्थापित दश सहस्र दोसौ लिंग वर्त-मान हैं ॥ ६५ ॥ उन सबोंमें एक एक लिंग जो कात्यायनेश्वरसे लेकर च्यवनेश्वर पर्यन्त विद्यमान हैं, काशीवासी लोगोंके सिद्धिदायक हैं ॥ ६६ ॥ कृत्तिवासेश्वरके पश्चिमओर लोमशमुनिका प्रतिष्ठित लोमशेश्वर नामक महालिंगहै, जिसके दर्शन करने-पर फिर यमराजका भय कहां है ? ॥ ६७ ॥ योंही कृत्तिवासेश्वरके उत्तर बडा शुभप्रद मालतीश्वर लिंगहै, उसकी पूजा करनेवाला गजांत ऐश्वर्यशाली राजा होताहै ॥ ६८ ॥ कृत्तिवासेश्वरसे ईशानकोणपर अवस्थित अंतकेश्वरसंज्ञक लिंगहै, जिसके दर्शनसे बडा पापीमनुष्यभी निष्पाप होजाताहै ॥ ६९ ॥ उसके पासहीमें परमज्ञानप्रद जनकेश्वर लिंगहै, उसके पूजनसे ब्रह्मज्ञान प्राप्त होताहै ॥ ७० ॥ उससे उत्तरप्रांतमें बडे विशा-लमूर्ति असितांग भैरवहैं, उनके दर्शनकरनेसे यमराजका दर्शन नहीं मिलता ॥ ७१ ॥ वहींपर कृत्तिवासेश्वरसे उत्तरदिशामें विकट लोचना शुष्कोदरी देवी है जो सदा काशी-वासियोंके विघ्नोंको भक्षण कियाकरती है ॥ ७२ ॥ उस देवीके नैर्ऋत्य कोणपर अग्निजिह्व नामक एक बेताल रहताहै, मंगलके दिन पूजा करनेसे वह वांछित सिद्धिको देताहै ॥ ७३ ॥ वहींपर सब व्याधियोंका विघातक बेतालकुण्डहै, उस कुंडका जल स्पर्श करनेहीसे घाव और फोडा फुन्सी आदि रोग दूर होजातेहैं ॥ ७४ ॥ जो कोई बेताल कुंडमें नहाकर बेतालको प्रणाम करे वह सब प्राणियोंसे दुर्लभ मनोवांछित सिद्धिको प्राप्त करताहै ॥ ७५ ॥ वहींपर एक गणहै, जिसे दो भुजायें, चार पैर और पांच शीशहैं, उसके दर्शनमात्रसे पाप सहस्रों टुकडे होजातेहैं ॥ ७६ ॥ हे मुने !

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उसके उत्तरभागमें चारसींघ, तीनपाद, दोशीर्षका, सात हाथवाला अत्यंत भीषण, (वृषाकार) रुद्रहै ॥ ७७ ॥ हे कुम्भजमुने ! वह त्रिधाबद्धहोकर, जो लोग काशीमें विघ्न करतेहैं, और पापबुद्धि होते हैं ॥ ७८ ॥ उन लोगोंको काटनेके लिये, कुठारधारी बनकर चिल्लाया करताहै, और जो काशीमें विघ्नोंको दूर करते और धर्मबुद्धि रखतेहैं ॥ ७९ ॥ उनलोगोंके वंशको वह अमृतके घडेसे नहवाता रहताहै, जो मनुष्य उस वृषरूपी रुद्रका दर्शन करके फिर भक्तिपूर्वक विविधभांतिके उत्तम उपचारोंसे पूजा करताहै, उसे कभी किसी प्रकारके विघ्न आक्रमण नहीं करसकते ॥ उक्त रुद्रदेवके उत्तरभागमें मणिप्रदीप नामक एक नागहै ॥ ८० ॥ ८१ ॥ उसके सन्मुखही बडे विषोंकी व्याधियोंका हरनेवाला मणिकुंडहै, उस कुंडमें नहाकर उस नागका दर्शन करनेसें ॥ ८२ ॥ मणिमाणिक्यसे पूर्ण और हस्ती, अश्व और रथादिसे भरपूर स्त्रीरत्न और पुत्ररत्नोंसे समृद्ध राज्य प्राप्त होताहै ॥ ८३ ॥ जो लोग काशीपुरीमें कृत्तिवासेश्वर लिंगका दर्शन नहीं करते, वे सब मर्त्यलोकमें निस्सन्देह भूमिके भारही होरहतेहैं ॥ ८४ ॥ स्कन्दने कहा, जो लोग इस संसारमें कृत्तिवासेश्वरकी उत्पत्तिकथाको सुनेंगे, वे इस लिंगके दर्शनसेभी अधिक पुण्यभागी होंगे, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है ॥ ८५ ॥

श्लो०भा०—महादेव थे पूर्वमें जो दिगंबर् । बने वे स्वयं कृत्तिवासा जहाँपर ॥
कहाता वही हंसतीरथ् सरोवर् । हुए हंस कौवे वहाँपर् नहाकर् ॥ १ ॥

श्लो०श्रीकृत्तिवासेश्वरमन्दिरं तद्, यत्रोटयित्वा यवनाधिपेन ॥
"औरंगजेबेन" कृताऽस्ति मसजिद् साद्यापि तत्रैव विलोकनीया ॥ २ ॥
श्रीकृत्तिवासेश्वरमन्दिरं नवं श्रीहंसतीर्थस्य तटे विराजते ॥
लिंगं विशालं हि परं पुरातनं आकर्ण्यते ख्यातिरियं समन्ततः ॥ ३ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्द्धे भाषायां गजासुरवधान्त-कृत्तिवासेश्वरप्रादुर्भाववर्णनं नामाष्टषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६८ ॥

उन्हात्तरवाँ अध्याय ।

अडसठ क्षेत्रोंका समागम और लिंगोंका विवरण ।

स्कन्द कहनेलगे—हे तपोराशे ! अगस्त्य ! काशीमें जिन लिंगोंका सेवन करनेसें पवित्रात्मा लोगोंकी मुक्ति होतीहै, उन सबको श्रवण करो ॥ १ ॥ जिस स्थानमें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१५१

महादेवने गजासुरकी कृत्ति (खाल) को लीला करके पहिना था, उस सर्वसिद्धिप्रद स्थानका नाम रुद्रावास प्रसिद्ध हुआ ॥ २ ॥ वहाँपर उमादेवीके साथ भगवान् कृत्तिवासेश्वरके (टिके) रहजानेपर (एकदिन) नन्दीने आकर प्रणति पुरस्सर यह निवेदन किया ॥ ३ ॥ हे देवदेवेश ! विश्वेश्वर ! यहाँपर अभी सब रत्नोंसे शोभित, सुरम्य, और बडेही मनोहर अडसठ (६८) शिवालय बनगये हैं ॥ ४ ॥ एवं भूलोक भुवर्लोक और स्वर्गलोकमें जो जो मुक्तिदायक उत्तम उत्तम आयतनहैं, उन सबको मैं चारोंओरसे यहांपर लेआयाहूं ॥ ५ ॥ हे नाथ ! जो जहांसे लायागयाहै, और जो जहांपर स्थापित कियागयाहै, उसे मैं कहताहूं, आप क्षणभर अवहितचित्त होकर श्रवण करें ॥ ६ ॥ कुरुक्षेत्रसे देवदेवका मोक्षप्रद स्थाणुनामक महालिंग यहांपर समुद्भूत हुआहै और अपने स्थानपर कलामात्र शेष रहगयाहै ॥ ७ ॥ उसके आगेही लोलार्कसे पश्चिमओर संनिहती नामक शुभदायिनी बडीभारी पोखरी है, और वहीं कुरुक्षेत्रकीभी भूमिहै ॥ ८ ॥ शुभाकांक्षी लोग वहाँपर जो कुछ स्नान, दान, जप, होम, और तपस्या इत्यादि करतेहैं, वह सब कुरुक्षेत्रकी अपेक्षा कोटिगुण अधिक होताहै, यह सत्यहै ॥ ९ ॥ हे विभो ! देवदेव नामक महालिंग, ब्रह्मावर्त नामक कूपके सहित नैमिषारण्यमें अपना अंशमात्र छोडकर यहाँ प्रकट हुआहै ॥ १० ॥ ढुंढिराजके उत्तरभागमें साधक लोगोंका सिद्धिदायक देवदेव संज्ञक लिंगहै और उसीके आगे ब्रह्मावर्त नामक कूपहै जो लोगोंका पुनर्जन्म निवारण करताहै । उस कूपके जलसे स्नानकर देवदेव नामक लिंगकी पूजा करनेसे नैमिषारण्यसे कोटि कोटि गुण अधिक पुण्य होताहै । इस काशीमें गोकर्णक्षेत्रसे (आकर) साम्बादित्यके समीपही महाबल नामक महालिंग आपसेआप प्रकट हुआहै, जिसके दर्शन और स्पर्शन करनेसे पापका महाबलभी ॥ ११ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ १४ ॥ वायुके वेगसे उडाईहुई रुईकी ढेर (पहल) की नाई बहुत दूरपर उधिरा जाताहै, कपालमोचनके आगेही महाबल लिंगके दर्शन करनेसे ॥ १५ ॥ महाबलको प्राप्त होकर निर्वाण नगरको चलाजाताहै ऋणमोचनसे पूर्व प्रभास नामक महाक्षेत्रसे ॥ १६ ॥ शशिभूषण नामक लिंग यहां प्रतिष्ठित हुआहै, उस लिंगके सेवनसे मनुष्यभी शशिभूषण होजाताहै ॥ १७ ॥ और प्रभासक्षेत्रकी यात्राका कोटिगुण फल पाताहै । उज्जयिनीके भगवान् महाकाल स्वयमेव यहां आयेहैं ॥ १८ ॥ जिनके केवल स्मरणहीसे कलि और कालका भय नहीं होता, ओंकारेश्वर नामक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

महालिंगके पूर्व ओर कल्मषनाशक और दर्शनहीसे परम मोक्षप्रद, महाकालेश्वर का लिंग विराजमान हुआहै । अयोगन्धेश्वर लिंग, पुष्करसे महातीर्थ ॥ १९ ॥ २० ॥ यहांपर आकर पुष्करके सहित आपहीसे प्रकट हुआहै, मत्स्योदरी (मछोदरी) के उत्तर अयोगन्धेश्वरका दर्शन ॥ २१ ॥ और अयोगंधकुंडमें स्नान करनेसे मनुष्य अपने पितरोंको भवसागरसे पार उतार देताहै । अट्टहासक्षेत्रसे महानादेश्वर लिंग यहाँ आयाहै, ॥ २२ ॥ त्रिलोचनसे उत्तर उस लिंगका दर्शन करनेसे मुक्तिलाभ होताहै । मरुत्कोट नाम आयतनसे महोत्कटेश्वर नामक लिंग यहां आयाहै, जो कामेश्वरके उत्तरभागमें दर्शनहीसे निर्मल सिद्धिको देदेताहै ॥ २३ ॥ विश्वस्थानसे विमलेश्वर संज्ञक लिंग यहाँ आपहुँचा है, जो स्वर्लीनेश्वरके पश्चिमभागमें दर्शन करनेसे विमल सिद्धिको देताहै ॥ २४ ॥ महेन्द्रपर्वतसे महाव्रत नाम महालिंग यहाँ आ विराजेहैं, जो स्कन्देश्वरके समीपहीमें महाव्रतोंके फलोंको दान करतेहैं ॥ २५ ॥ सत्ययुगमें देवता और मुनिवृन्दोंके स्तुतिकरनेपर बडी दुर्भेद्य भूमिको भेद (फोड) कर जो महालिंग उत्पन्न हुआ ॥ २६ ॥ और मनोरथोंके पूरण करनेसे जिसे महादेव कहागयाहै, वहीलिंग तबसे वाराणसीमें महादेव नामसे विख्यात है ॥ २७ ॥ उसी महालिंगने काशीको मुक्तिक्षेत्र बनायाहै, अतएव इस अविमुक्तक्षेत्रमें जो मनुष्य महादेवका दर्शन करेगा ॥ २८ ॥ वह चाहे कहींभी क्योंन मरे पर अन्तको शिवलोकमें चलाही जाताहै, इसलिये मोक्षार्थी लोगोंको अविमुक्तक्षेत्रमें उसी लिंगका सेवन बडे प्रयत्नसे करना चाहिये ॥ २९ ॥ सर्वथा जिस लिंगस्वरूप महादेवने कल्पान्तरमें कभीभी आनंदवनको नहीं छोडा ॥ ३० ॥ यह उन्हींका अनुपम और अनेकरत्नोंसे भूषित उत्तमशिवालयहै, अभिलाषप्रदात्री, वाराणसीकी अधिष्ठात्री, सर्व लिंगस्वरूपा महादेवदेवताही हिरण्यगर्भ तीर्थसे पश्चिम दिशामें क्षेत्रकी रक्षा करतीहै ॥ ३१ ॥

दोहा—सबै लिंग जगमें विदित, महादेवके नाम ।
यहिकारन परधानहै, महादेव एहि धाम ॥ ३२ ॥

जिस किसीने वाराणसीक्षेत्रमें लिंगरूपधारी महादेवका दर्शन किया, निस्सन्देह वह त्रैलोक्यभरके समस्तलिंगोंका दर्शन यहींपर करचुका ॥ ३३ ॥ जो मनुष्य काशीमें एकबारभी महादेवका पूजन करसका, वह महाप्रलयतक शिवलोकमें बडे हर्षसे वास करताहै ॥ ३४ ॥ जो कोई श्रावणमासके पवित्रपर्वमें (अर्थात शुक्लाचतुर्दशीके दिन)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१५३

प्रयत्नपूर्वक महादेवलिंगपर पवित्रारोपण करता (जनेऊचढ़ाता) है वह गर्भभागी नहीं होता ॥ ३५ ॥ (हे प्रभो !) पितामहेश्वर नामक लिंग, फल्गु इत्यादि साढेआठकरोड तीर्थोंके सहित गयातीर्थसे यहाँपर आयाहै ॥ ३६ ॥ जहाँपर धर्मने दशलाख युगतक श्रीमद्धर्मेश्वर नामक महालिंगको साक्षी करके (बडी) तपस्या कीथी ॥ ३७ ॥ काशीमें वहींपर पितामहेश्वर नामक लिंगकी सहर्ष पूजा करनेसे एकीस कुलोंके साथ मनुष्य निस्सन्देह मुक्त होजाताहै॥ ३८॥ तीर्थराज प्रयागसे स्वयं आकर शूलटंकेश्वर नामक लिंग तीर्थराजके साथ यहां विराजरहाहै॥ ३९॥ सुन्दर निर्वाणमंडपके दक्षिण जिस-का अत्यंतनिर्मल और सुवर्णसा उज्ज्वलमन्दिर सुमेरुपर्वतसे स्पर्द्धा कररहाहै ॥ ४० ॥ हे देव ! आपहीने पूर्वयुगमें जहांपर वरदान कियाथा, कि काशीमें प्रथमही पापनाशी शूलटंकेश्वरका पूजन करना चाहिये ॥ ४१ ॥ जो कोई यहांके प्रयागतीर्थमें स्नान-कर विधिपूर्वक बडी सामग्रीसे पूजन करनेपर प्रणाम करेगा ॥ ४२ ॥ उसे शूलटंके-श्वरके दर्शनसे प्रयागमें स्नानकरनेका करोडगुना पुण्य प्राप्त होगा इसमें कुछ सन्देह नहीं है ॥ ४३ ॥ शंकुकर्ण नामक बडेतीर्थसे तेजका बडा बढानेवाला महातेज शंकुक लिंग यहांपर आविर्भूत हुआहै ॥४४॥ उस लिंगका महातेजोनिधि और केवल मानिक (चुन्नी) का बनाहुआ अतीवनिर्मल मंदिर अपनी ज्वालासे आकाशमें व्याप्त होरहाहै ॥ ४५ ॥ उस लिंगके दर्शन स्पर्शन स्तवन और पूजन करनेसे परमधाम मिलताहै, जहाँ जाकर फिर कुछभी नहीं सोचना पडता ॥ ४६ ॥ विनायकेश्वरसे पूर्व महातेजलिंगकी पूजा करनेसे तेजोमय यानपर चढकर शिवलोकमें गमन होताहै ॥ ४७ ॥ परमपावन रुद्रकोटि नामक तीर्थसे महायोगीश्वर नामक लिंग आपसे आप प्रकट हुआहै ॥४८॥ पार्वतीश्वरके पासहीमें सब सिद्धियोंके कर्ता उस लिंगका दर्शन करनेसे मनुष्योंको करोडलिंगोंके दर्शन करनेका फल होताहै ॥ ४९ ॥ इस महायो-गीश्वरके मन्दिरसे चारोंओर करोडों रुद्रमूर्तियोंके बनायेहुए एक करोड रमणीय रच-नाके शिवालय शोभायमानहैं ॥ ५० ॥ वेदवादीलोग काशीमें उस स्थलको रुद्रस्थली कहते हैं, वहांपर क्या कृमि, क्या कीट, क्या पतंग, क्यापशु, क्यापक्षी, क्यामृग, क्या म्लेच्छ, क्या दीक्षित, जो चाहे सो हो, पर यहां मरनेसे रुद्रस्वरूप होजानेके कारण संसारमें पुनरावृत्ति नहीं होसकतीहै ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ सहस्रों जन्मान्तरका उपार्जित पाप, रुद्रस्थलीमें प्रवेश करतेही सब क्षय होजाताहै ॥ ५३ ॥ निष्कामहो, चाहे सकाम हो, अथवा तिर्यक्योनिमें प्राप्तहो, पर जो कोई रुद्रस्थ-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लीमें मरा वह परमपदको पाचुका ॥ ५४ ॥ एकांबरक्षेत्रसे भगवान् कृत्तिवासा यहां आकर इसी कृत्तिवासेश्वरलिंगमें स्वयं प्रकाशमान हुएहैं ॥ ५५ ॥ इस स्थानपर जगदम्बा, ऋषि, और गणोंके सहित स्वयं भगवान् अपने भक्तोंके कानमें वेदविहित ब्रह्मका उपदेश करते हैं ॥ ५६ ॥ सिद्धि-दायक इस (काशी) क्षेत्रमें मरुजांगल तीर्थसे चंडीश्वर आये हैं, जो केवल दर्शनहीसे प्रचंड पापोंकी ढेरको सैकडों टुकडे करडालते हैं ॥ ५७ ॥ पाशपाणि गणेशके पासमें जो कोई इस चंडीश्वर महालिंगका दर्शन करताहै, वह परमगतिको प्राप्त होताहै॥५८॥ दंतकूट गणेशके समीपही भवनाशक भगवान् नीलकंठ कालंजर पर्वतसे स्वयं आकर यहांपर विराजमान हुएहैं ॥ ५९ ॥ जो लोग काशीधाममें नीलकंठेश्वर लिंगकी पूजा करते हैं वे स्वयं नीलकंठ और चन्द्रभूषण होजाते हैं ॥ ६० ॥ काश्मीरसे यहाँपर विजयेश्वर नामक लिंग आयाहै, जो शालकंटक गणेशके पूर्वमें रहकर सदा लोगोंको विजय देताहै ॥ ६१ ॥ विजयेश्वरके पूजन करनेसे, युद्ध, राजद्वार, द्यूत और विवादमें सर्वत्रही सदैव लोगोंका विजय होताहै ॥ ६२ ॥ त्रिदण्डातीर्थसे भगवान् ऊर्द्धरेता नामक महालिंग स्वयं यहां आकर कूष्मांड—गणेशके सन्मुख अवस्थितहैं ॥ ६३ ॥ ऊर्ध्वरेताके दर्शनकरनेसे ऊर्ध्वगति मिलती है, एवं जो लोग इस लिंगके भक्तहैं उनकी कभी अधोगति होतीही नहीं ॥ ६४ ॥ मण्डलेश्वरक्षेत्रसे श्रीकण्ठसंज्ञक लिंग यहां आकर मण्डविनायकसे उत्तर ओर स्थित है ॥ ६५ ॥ जो लोग श्रीकंठके भक्तहैं वे सब श्रीकण्ठही होते हैं, वे इस लोक और परलोकमें कहींभी श्रीसे हीन नहीं रहने पाते ॥ ६६ ॥ छागलांड नामक महातीर्थसे भगवान् कपर्दीश्वर संज्ञक लिंग पिशाचमोचन तीर्थपर आपसे आप प्रकट हुआहै ॥ ६७ ॥ कपर्दीश्वरका पूजन करनेसे मनुष्य नरकगामी नहींहोता, और न घोरपाप करनेपरभी यहां पिशाच होनेपाताहै॥६८॥सूक्ष्मेश्वरलिंग, अम्रातकेश्वरक्षेत्रसे इस कल्याणास्पदक्षेत्रमें स्वयमेव उपस्थित हुआहै ॥ ६९ ॥ विकटदंत गणेशके समीपमें सूक्ष्मेश्वर लिंगके दर्शन करनेसे सूक्ष्मगति मिलतीहै ॥ ७० ॥ जयन्तेश्वरनामक लिंग मधुकेश्वरतीर्थसे आकर लंबोदर गणेशके आगे विराजमानहै ॥ ७१ ॥ जो कोई भागीरथी गंगाके पवित्र जलमें नहाकर जयन्तेश्वरका दर्शन करे वह अपनी वांछित सिद्धिको पावे, और सर्वत्र विजयी होवे ॥ ७२ ॥ श्रीशैल आयतनसे देवाधिदेव त्रिपुरान्तक यहाँ प्रादुर्भूत हुए हैं, श्रीशैल शिखरके दर्शनका जो फल कहागया है ॥ ७३ ॥ त्रिपुरान्तकके दर्शन करनेसे वह फल अनायासही मिल-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१५५

जाताहै, विश्वेश्वरके पश्चिमभागमें त्रिपुरान्तकेश्वर लिंगका ॥७४॥ पूजन जो मनुष्य बडी भक्तिसे करताहै, वह गर्भमें नहींपैठता। सौम्यस्थानसे भगवान् कुक्कुटेश्वर यहां आयेहैं ॥ ७५ ॥ और वे वक्रतुंड गणेशके पासमें व्यवस्थितहैं, उनके दर्शन और पूजनसे सब सिद्धियाँ करतलगत होजाती हैं ॥ ७६ ॥ जालेश्वर तीर्थसे सर्वसिद्धि-दाता त्रिशूली नामक लिंग आपहीसे कूटदंत गणेशके आगे आगयाहै ॥ ७७ ॥ (सेतुबंध) रामेश्वर महाक्षेत्रसे जटीदेव आयेहैं, जो एकदंत गणेशके उत्तरभागमें पूजन करनेसे सभी कामनाओंको पूर्ण करदेतेहैं ॥ ७८ ॥ त्रिसंध्यतीर्थसे भगवान् त्र्यंबक आयेहैं, जो त्रिमुख गणेशके पूर्वभागमें पूजा करनेसे त्र्यंबक बनादेतेहैं ॥७९॥ हरिश्चन्द्र-क्षेत्रसे हरेश्वर-लिंग यहाँ आयाहै, जो हरिश्चन्द्रेश्वरके आगे पूजित होनेसे सदैव विजय देताहै ॥ ८० ॥ मध्यमकेश्वर तीर्थसे शर्वनामक लिंग इस काशीमें आयाहै, जो चतुर्वेदेश्वर लिंगको आगे करके बैठाहै ॥ ८१ ॥ कोईभी मनुष्य परम सिद्धिदायक शर्वसंज्ञक लिंगकी पूजा यदि काशीमें करसके तो वह कहींभी जन्तुकी पदवीको नहीं पासकता ॥ ८२ ॥ जहाँपर सब यज्ञोंका फलदाता यज्ञेश्वर लिंगहै, वहांहीपर स्थानेश्वर तीर्थसे आकर महालिंग प्रकट हुआहै ॥ ८३ ॥ बडी श्रद्धासे महालिंगका पूजन करनेपर इस लोक और परलोकमें बडी श्री प्राप्त होतीहै ॥ ८४ ॥ सुवर्णनामक तीर्थसे सहस्राक्ष संज्ञक लिंग यहां आयाहै, जिसके दर्शनसे लोगोंके ज्ञानचक्षु होजाताहै ॥ ८५ ॥ शैलेश्वरसे दक्षिण ओर भगवान् सहस्राक्षेश्वरका दर्शन करनेसे सैकडों सहस्रजन्मके पातक छूटजाते हैं ८६ ॥ हर्षितक्षेत्रसे हर्षितेश्वर नामक तमोनाशक लिंग यहां आया है, जो दर्शन और स्पर्शन करनेसे लोगोंको बडा हर्षदायक होताहै ॥ ८७ ॥ मन्त्रे-श्वरके समीपहीमें हर्षितेश्वरका शिवालयहै, जिसके देखनेहीसे लोगोंकी हर्षपरंपरा नित्यही बढती रहतीहै ॥ ८८ ॥ रुद्रमहालयसे रुद्रेश्वर नामक लिंग यहां आयाहै, लोग जिसके दर्शनसे अवश्यही रुद्रलोकमें चलेजातेहैं ॥ ८९ ॥ जो लोग इस काशी-पुरीमें रुद्रेश्वरलिंगकी पूजा करसकेहैं, वे मनुष्य होनेपरभी रुद्रके रूपही जाननेके योग्यहैं, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है ॥ ९० ॥ त्रिपुरेश्वरके समीपमें भगवान् रुद्रे-श्वरका दर्शन पाजावे तो उसे जीतेजी, अथवा मरजानेपरभी रुद्रही समझना चाहिये ॥ ९१ ॥ धर्मप्रद वृषेश्वर, वृषभध्वजतीर्थसे यहाँ आकर बाणेश्वरमहादेवके समी-पमें सदैव शोभायमान रहतेहैं ॥ ९२ ॥ केदारतीर्थसे ईशानेश्वर यहां आविराजेहैं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रह्लादकेशवके पश्चिमभागमें उस लिंगका दर्शन करना चाहिये ॥ ९३ ॥ उत्तरवाहिनीकी धारामें स्नानकर जो कोई ईशानेश्वरका दर्शन करेगा वह ईशानहीके समान प्रभावान् होकर ईशानलोकमें वास पावेगा ॥ ९४ ॥ भैरवक्षेत्रसे मनोहर भैरवमूर्ति यहां आयीहै जिनका नाम संहारभैरवहै उनका दर्शन प्रयत्नपूर्वक करना आवश्यकहै॥९५॥ खर्वविनायकसे पूर्व उनकी पूजासे सब सिद्धियाँ होतीहैं काशीमें संहारभैरवही सब पापोंका संहार करतेहैं ॥ ९६ ॥ कनखलतीर्थसे आकर सिद्धिप्रद उग्रनामक लिंग यहां प्रकट हुआहै, उसके दर्शनसे मनुष्योंका उग्रभी पाप नष्ट होजाताहै ॥ ९७ ॥ अर्कविनायकसे पूर्व उग्रेश्वर नामक लिंगका सदैव सेवन करना चाहिये, उनके पूजन करनेसे बडे उग्रभी उपसर्ग शांत होजाते हैं ॥ ९८ ॥ हे प्रभो ! वस्त्रापथ महाक्षेत्रमें भगवान् भव स्वयमेव भीमचण्डीके समीपमें यहांपर आविर्भूत हुएहैं ॥ ९९ ॥ मनुष्य इस भवेश्वरलिंगके समर्चन करनेसे फिर भवसागरमें नहीं पडता, और इसलोकमें आज्ञाकारी सब राजाओंकाभी प्रभु होजाताहै ॥ १०० ॥ पातकावलीके दण्डकर्ता भगवान् दण्डीश्वरभी देवदारुवनसे वाराणसीमें आकर लिंगाकारमें स्थितहैं ॥ १ ॥ देहलीविनायकसे पूर्व दण्डीश्वरका पूजन करना चाहिए, उनके पूजन करनेसे मनुष्योंका पुनर्जन्म नहीं होता ॥ २ ॥ भद्रकर्णह्रदसे काशीमें भगवान् शिव भद्रकर्णह्रदके सहित आयेहैं, वे पूजित होनेपर सभी लोगोंका कल्याण करतेहैं ॥ ३ ॥ उद्दण्डगणेशके पूर्वओर भद्रकर्ण नामक ह्रदहै जो परमतीर्थ कहाजाताहै, उसमें स्नान और शिवलिंगके पूजन करनेसे ॥ ४ ॥ सर्वत्रही कल्याण होताहै, और भद्रकर्णेश्वरकी पूजासे समस्त प्राणियोंकी बात सुनाई पडती और सभीका मंगल आंखोंसे देखाई पडताहै ॥ ५ ॥ हरिश्चन्द्रेश्वरके आगे शंकरनामक लिंग है, जिसके समर्चनसे मनुष्योंको फिर माताके गर्भमें नहीं जन्मनापडता ॥ ६ ॥ यमालिंगनामक महातीर्थसे कालालिंग यहां आगयाहै जो चन्द्रेश्वरके पश्चिमभागमें कलशेश्वर नामसे प्रसिद्ध हुआ है ॥ ७ ॥ मित्रावरुणके दक्षिण प्रांतमें स्थित यमतीर्थमें नहाकर जो मनुष्य कालिंगका दर्शन करसके उसे कलि और कालका भय कहां है ॥ ८ ॥ वहांपर मंगलवार युक्त चतुर्दशी तिथिके दिन जो कोई यात्राकरे वह पातकी होनेपरभी कभी यमयात्रामें नहीं जासकता ॥ ९ ॥ नेपाल महाक्षेत्रसे पशुपति (नाथ) यहां आये हैं, जहांपर पिनाकपाणि देवदेव अपने पाशुपत योगका उपदेश ब्रह्मादि देवतोंको मुक्तिके लिये दियाथा, उनके दर्शनहीसे लोग पशुपाशसे छूट जातेहैं ॥ १० ॥ ११ ॥ करवीरक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१५७

तीर्थसे कपालीश्वर यहां आकर कपालमोचन तीर्थपर जा विराजे हैं, प्रयत्नपूर्वक उनका दर्शन करना योग्यहै ॥ १२ ॥ क्योंकि उनके दर्शनसे ब्रह्महत्याभी विलीन होजातीहै । देविकातीर्थसे आकर उमापति भी यहां ही ठहरे हैं ॥ १३ ॥ उनके दर्शनसे भी बहुत दिनोंका बटोराहुआ पाप दूर होजाता है । महेश्वरक्षेत्रसे दीप्तेश्वरनामक लिंग उमापतिके समीपहीमें व्यवस्थित है, काशीके मध्यमें स्थित यह दीप्तेश्वरलिंग इसलोक और परलोकमें भी अंधकारको दूरकर भोग और मोक्षको देता है ॥ १४ ॥ १५ ॥ कायारोहणतीर्थसे आचार्य नकुलीश्वर लिंगरूप होकर महापाशुपतव्रतधारी शिष्योंके साथ महादेवके दक्षिणभागमें विराज रहेहैं, वे दर्शन करनेसे ज्ञान देते हैं, एवं तुरतही गर्भ और संसारविषयक अज्ञानको नाश करडालते हैं ॥ १६ ॥ १७ ॥ गंगा-सागर तीर्थसे अमरेश्वरसंज्ञक लिंग यहां आया है, जिसके दर्शनहीसे दुर्लभ अमरत्व प्राप्त होता है ॥ १८ ॥ सप्तगोदावरीतीर्थसे भगवान् भीमेश्वर प्रभु यहां आकर मनुष्य लोगोंके भोग और मोक्षके लिये लिंगरूपसे प्रकाशमानहैं ॥ १९ ॥ नकुलीश्वरके पूर्वभागमें भीमेश्वर प्रभुके दर्शन करनेसे बडे भयंकर पापभी तुरत विनष्ट होजाते हैं ॥ १२० ॥ भूतेश्वरक्षेत्रसे स्वयं भस्मगात्रनामक लिंग प्रकट हुआहै, जो भीमेश्वरके दक्षिणमें शोभितहै, प्रयत्नपूर्वक उसके पूजन करनेसे ॥ २१ ॥ वही फल प्राप्तहोता है, जो पुण्य पूर्णरीतिसे सैकडोंवर्ष पाशुपतयोगके अभ्यास करनेसे होसकताहै, अतएव भस्मगात्र लिंगका दर्शन करना उचितहै ॥ २२ ॥ स्वयंभूनामक विख्यात लिंग नकुलीश्वरतीर्थसे आकर काशीमें आपसे आप प्रकट होगयाहै ॥ २३ ॥ महालक्ष्मी-भगके सन्मुखही सिद्धिह्रदमें स्नानकर जो मनुष्य स्वयंभूलिंगकी पूजा करे वह फिर कभी जन्मभागी न होवे ॥ २४ ॥ प्रयागतीर्थके समीपहीमें मूंगाके समान प्रभाशाली यह धरणीबाराहका बडा शिवालय (मन्दिर) है ॥ २५ ॥ गण, ऋषि और देव-मंडलके सहित रत्नकंदर मंदराचलसे आपको यहां आये हुए सुनकर ये विंध्याचलसे चले आयेहैं ॥ २६ ॥ काशीमें धरणिबाराहकादर्शन बडे प्रयत्नसे करना चाहिये, क्योंकि ये आपत्तिरूप समुद्रमें डूबते हुए भी अपने शरणागतजनका निस्तार करदेतेहैं ॥ २७ ॥ कर्णिकारतीर्थसे करनाके फूल ऐसे कान्तिमान् और सहस्रों उपसर्गके नाशक एवं हाथमें गदा लिएहुए गणाध्यक्षभी आगयेहैं ॥ २८ ॥ उक्त धरणिवाराहसे पश्चिम दिशामें स्थित इन गणेशका पूजन करनेसे गणपतिका पद प्राप्त होताहै ॥ २९ ॥ विरूपाक्षनामक लिंग हेमकूट क्षेत्रसे आकर यहांपर महेश्वरके दक्षिण अवस्थित हुआ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

है, उसके दर्शनसे संसारसे निस्तार होजाताहै ॥ १३० ॥ गंगा (हर) द्वार पुरीमें हिमके समान प्रभाशाली हिमस्थेश्वर आयेहैं, जो ब्रह्मनालके पश्चिम ओर दर्शनसे समस्त सिद्धियां देतेहैं ॥ ३१ ॥ हे प्रभो ! कैलासपर्वतसे सातकरोड़ बडे बलशाली गणलोग और स्वयं गणाधिपभी आविराजेहैं ॥ ३२ ॥ उन लोगोंने समस्वर्गके समान द्वार और सिकरी अगरीइत्यादि यंत्रोंसे युक्त और कठिन किंवाडोंसे पूर्ण बडे२ कोट इस काशीमें बनायेहैं ॥ ३३ ॥ उन कोटोंमें करोडों भट घूमसकतेहैं, और सबप्रकारकी समृद्धियां भरीहैं, वे सब सोना चाँदी (रूपा) तामा, कांसा, पीतल और सीसाके बने हुएहैं ॥ ३४ ॥ अयस्कान्तके समान रमणीय, और गगनस्पर्शी हैं, उनसे काशीके चारोंओर शैलकेसमान बडीकोट बनगईहै ॥ ३५ ॥ उस कोटमें खाईभी नीचेही नीचे मछोदरीसे जल लेजाकर बनादीहै, इसीसे मछोदरी भीतरी और बाहरी दोप्रकारकी होगईहै ॥ ३६ ॥ वह गंगामें मिलनेसे बडीभारी तीर्थ होगईहै, जब (वर्षा ऋतुमें) गंगाका जल बढनेसे यहांपर उलटीधारा चलने लगती है ॥ ३७ ॥ तब बडे ही पुण्यके बलसे मत्स्योदरीतीर्थ मिलताहै, उस कालमें सूर्य और चन्द्रके ग्रहणसे सैकडों करोड गुना पर्व वहां लगजाताहै ॥ ३८ ॥ जब गंगाका जल मत्स्योदरीमें चलाआताहै तब समस्त पर्व, समस्त तीर्थ और समस्तलिंग वहींपर जा विराजते हैं ॥ ॥ ३९ ॥ जो मनुष्य जहां कहीं होसके मत्स्योदरीमें स्नानकर पिंडदान करसकें वे कभी माताके उदरमें शयन नहीं करनेपातेहैं ॥ १४० ॥ जब कि जाह्नवीका जल मत्स्योदरीमें आजाताहै तब यह अविमुक्त क्षेत्र मत्स्याकार दिखाने लगताहै ॥ ४१ ॥ इसी बेलामें जो लोग मत्स्योदरीमें नहालेते हैं, वे सब मनुष्योंमें उत्तम समझे जातेहैं, और बहुतेरे पापोंके करनेपरभी यमपुरीको नहीं देखनेपाते ॥ ४२ ॥ (कहांतककहें) बहुतसे तीर्थोंमें स्नान और अनेक कठोर तपस्या करनेसे कौन फलहै ? यदि मत्स्योदरीमें एकबारभी स्नान करपाते, तो फिर गर्भका भय कहांहै ? ॥ ४३ ॥ जहां जहां देवता ऋषि और मनुष्योंके प्रतिष्ठित लिंगहैं, मत्स्योदरीमें जाकर वहांपर नहालेनेसे मोक्षका पात्र होजाताहै ॥ ४४ ॥ यद्यपि स्वर्ग मर्त्य और पातालमें अनेक तीर्थहैं, परन्तु वे सब इसके कोटि अंशके भी समान नहीं हैं, यह बात निश्चितहै ॥ ४५ ॥ हे विभो ! बडे उदारकर्मा कैलासवासी गणाधिपतिने इसीभाँतिसे इस तीर्थको बहुत बडा बनादियाहै ॥ ४६ ॥ उक्त गणाधिपतिके पूर्व भागमें गंधमादन पर्वतसे भूर्भुवः संज्ञक लिंग आपही यहां आयाहै ॥ ४७ ॥ पुण्य-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१५९

शाली लोग भूर्भुवः लिंगका दर्शन करके भूलोक भुवर्लोक, स्वर्लोक और महर्लोकके ऊपर जाकर बहुत समयतक दिव्यभोगोंको भोगते हुए निवास करतेहैं ॥ ४८ ॥ हे नाथ ! हाटकेश्वरनामक महालिंग भोगवती (पातालगंगा) के सहित सातवें पातालके तलसे निकलकर यहां चलाआयाहै ॥ ४९ ॥ और शेष और वासुकि प्रभृति मुख्य मुख्य नागोंने मणि माणिक्य आदि रत्नोंके समूहसे प्रयत्न पूर्वक उसलिंगका बडा भारी मन्दिर काशीमें बनायाहै ॥ ५० ॥ यद्यपि वह लिंग सच्चेसोनेकाहै पर अनेक रत्नोंकी मालासे अर्चित रहताहै, ईशानेश्वरके पूर्व उस लिंगकी पूजा प्रयत्न पूर्वक करनी चाहिये ॥ ५१ ॥ मनुष्य भक्ति पूर्वक उस लिंगके पूजन करनेसे सब समृद्धियोंसे पूर्णहो, और अगणित भोगोंको भोगकर अन्तमें निर्वाण पदको पाताहै ॥ ॥ ५२ ॥ तारालोक आकाशसे ज्योतीरूप तारकेश्वरनामक लिंग यहांपर ज्ञानवापीके सन्मुखही आविराजा है ॥ ५३ ॥ उस लिंगके समर्चनसे तारकज्ञान प्राप्त होताहै, धीमान्मनुष्य ज्ञानवापीमें नहाय, संध्यावन्दन आदि नित्य नियम और पितरोंका तर्पणकर, मौनव्रती होय, तारकेश्वर लिंगका दर्शन करे तो ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ सब पापोंसे छूटकर अनंत पुण्यको प्राप्त करताहै एवं अन्तसमयमें तारकज्ञानको पाताहै जिसके द्वारा विमुक्त होजाताहै ॥ ५६ ॥ पूर्वमें आपने जहांपर किरातका रूप धारण किया था, उसी किरात तीर्थसे भगवान् किरातेश्वर यहां प्रकट हुएहैं ॥ ५७ ॥ भारभूतेश्वरके पिछवाडे उस किरातेश्वर लिंगको नमस्कार करनेसे मनुष्य फिर जननीजठरशायी नहीं होने पाता ॥ ५८ ॥ लंकापुरीसे मरुकेश्वरनामक लिंग यहां आयाहै, जिसके पूजनसे लोगोंको राक्षसादिका भय नहीं होता ॥ ५९ ॥ नैर्ऋत्यदिशामें रहनेसे वह लिंग नैर्ऋतेश्वर नामसे विभीषणके स्थापित पौलस्त्यराघवके पीछेकी ओर पूजित होनेपर सब दुष्टोंका संहारक प्रसिद्धहै ॥ १६० ॥ पवित्र जलप्रिय लिंग जललिंग—स्थानसे आकर यहां गंगाके जलमें अवस्थितहै ॥ ६१ ॥ उस लिंगका अत्यंत विचित्र, सब धातु और रत्नोंसे पूर्ण शिवालय गंगाके बीचमें दिखाई पडरहाहै ॥ ६२ ॥ आजतकभी किसी किसीको बडा पुण्यभार होनेसे उसका दर्शन होजाताहै । कोटेश्वरनामक तीर्थसे श्रेष्ठेश्वर लिंग यहां आगयाहै ॥ ६३ ॥ उसके दर्शन करनेसे करोडलिंगोंके दर्शन करनेका पुण्य लाभ होताहै, वह श्रेष्ठ सिद्धियोंका दाता श्रेष्ठेश्वरलिंग ज्येष्ठेश्वरके पिछवाडे वर्तमानहै ॥ ६४ ॥ बडवानलसे उत्पन्न अनलेश्वर नामक लिंग यहांपर नलेश्वरके आगेकी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ओर विराजमानहै जिसकी पूजा करनेसे सब सिद्धियां प्राप्त होतीं हैं ॥६५॥ त्रिजा तीर्थसे आकर देव देव भगवान् त्रिलोचन, अनादि सिद्ध त्रिविष्टपलिंगमें व्यवस्थित हुएहैं ॥ ६६ ॥ सब जीवोंके ज्ञानदायक पवित्र पिलपिला तीर्थपर अमरकंटक तीर्थसे आकर भगवान् ओंकारेश्वर आपसे आप आविर्भूत हुएहैं ॥ ६७ ॥ जब कि, पहिले पहिल काशी ही त्रैलोक्य करके उद्धारार्थ प्रकट हुई तबीसे वह तारकक्षेत्र हुआहै, गंगा तो वहां पर बहुत पीछेसे आई हैं ॥ ६८ ॥ वहींपर वह ओंकारस्वरुप महालिंग स्वयं प्रकट हुआ है, और उस लिंगकी महिमा आपको छोडकर दूसरा कोईभी नहीं जानसकता ॥ ६९ ॥ हे भगवन् ! अपने अपने स्थानोंपर अंशमात्र रखकर ये सब बडे बडे पवित्र आयतन इस काशीक्षेत्रमें संपूर्ण भावसे लायेगये हैं इसमें कुछभी अन्यथा नहीं है ! हे नाथ ! इन सब शिवलिंगोंके ये सब चारोंओर रमणीय और गगनस्पर्शी शिवालय शोभायमान हैं ॥ १७० ॥ ७१ ॥ ये सब मंदिर विचित्र और धातुओंके बने एवं समस्तरत्नोंसे समुज्ज्वलहैं इनके कलशकाभी पर्श करनेसे मुक्ति मिलसकती है ॥ ७२ ॥ हे सुरसत्तम ! इन लिंगोंका नामभी सुनलेनेसे सहस्रों जन्मकी संचित पापकी राशियां क्षय होजाती हैं ॥ ७३ ॥ हे स्वामिन् ! अब मुझे कौन आज्ञा मिलती है, कि, मैं उसे करूं, अनुग्रह किया जावे तो उन सबको सिद्धही समझना चाहिये ॥ ७४ ॥ स्कन्दने कहा—हे कुम्भज ! देव देव महेश्वर—नंदिका ऐसा वचन सुनकर प्रसन्न हो कहने लगे ॥ ७५ ॥ श्रीदेवदेवने कहा—हे आनन्दविधायक नंदिन् ! तुमने बहुतही अच्छा कामकिया, अब मेरी आज्ञासे तुम नवकरोड चण्डिकाओंको जो जो जहां जहां भूत बेताल भैरव और अपने देवताओंके साथ रहतीहैं उन सबको वाहन सेना और अस्त्र शस्त्रोंके सहित इस नगरीकी रक्षा करनेको ले आओ, और उन सबको प्रत्येक दुर्गोंमें दुर्गारूपसे चारोंओर टिकादो ॥७६॥७७॥ ॥ ७८ ॥ स्कन्दने कहा—भगवती पार्वतीके सहित भगवान् शंकर नंदीको यही आदेश देकर मुक्तिबीजके अंकुरस्वरूप त्रिविष्टप क्षेत्रमें चलेगये ॥ ७९ ॥ इधर शिलादके पुत्र नन्दीनेभी शिवकी आज्ञाको शिरपर रख चारों ओरकी दुर्गाओंको बुलाकर प्रत्येक दुर्गों (कोटों) में सन्निवेशित करदिया ॥१८०॥ मनुष्य, श्रद्धापूर्वक पुण्यआयतनोंकी कथाओंसे भरेहुए इस अध्यायको क्रमसे सुने तो स्वर्ग और मोक्षकाभी अधिकारी होताहै॥८१॥इन अडसठ लिंगोंके विवरणसे परिपूर्ण इस कथाके श्रवण करनेसे कोईभी प्राणी कभी माताके उदररूप कन्दरामें प्रवेश नहीं करता ॥ १८२ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१६१

दोहा—अड़सठ लिंगनकी कथा, कही गई एहिमाँहि ।
सुने पढे सुखदेत ये, स्वर्ग मोक्ष मनचाहि ॥ १ ॥
कहे कोट जे सातहैं, वे नहिं कतहुं लखात ।
अहै मछोदरिके परे, फुटहीकोट विखात ॥ २ ॥
औरहु जे टीला कइक, कतहुं कतहुं पर बाय ।
वे सब बर्णन जोग नहिं, देखिय मनहि बुझाय ॥ ३ ॥

इति श्रीस्कंदपुराणभाषायां चतुर्थे काशीखंडे उत्तरार्धे एकोनसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ६९ ॥

सत्तरवां अध्याय ।

देवियोंके स्थानोंका वर्णन ।

अगस्त्यने कहा—हे पार्वतीनन्दन ! महादेवकी आज्ञासे विश्वभरके आनन्ददाता नन्दीने देवियोंको जैसे जैसे व्यापारित किया उसे वर्णन कीजिये ॥ १ ॥ हे देव ! काशीक्षेत्रकी रक्षाके लिए जहां जहां पर जो जो देवियां स्थापित की गईं कृपाकरके उन सबको यथार्थ रीतिपर मुझसे कहिये ॥ २ ॥ शंकरसुवन, अगस्त्यकी बात सुनकर आनन्दबनमें जो जो देवियां जहां जहांपर आनन्दसे विराजमानहैं उनका वर्णन करनेलगे ॥ ३ ॥ स्कन्दने कहा—वाराणसी पुरीमें क्षेत्रमात्रकी परम इष्टदात्री भगवती विशालाक्षी देवी अपने पिछवाडे गंगामें विशालनामक तीर्थको बनाकर व्यवस्थितहैं ॥४॥ उक्त विशालतीर्थमें स्नानकर विशालाक्षी देवीको प्रणाम करनेहीसे उभयलोकमें मंगल देनेवाली विशाललक्ष्मीका लाभ होताहै ॥ ५ ॥ हे कुम्भज ! जो लोग भादों-सी तीजको व्रत करते और रात्रिमें विशालाक्षीके समीपही जागरन करते ॥ ६ ॥ उस प्रातःकालमें चौदह कुमारियोंको यथाशक्ति माला वस्त्र भूषणआदिसे सुसज्जितकर प्रयत्नपूर्वक भोजन कराते ॥ ७ ॥ फिर पीछेसे अपने पुत्र सेवक इत्या-दिके साथ पारण करतेहैं, वेही पूर्णरीतिसे काशीवासका फल पासकते हैं ॥ ८ ॥ सभी काशीवासियोंको उपद्रवोंके शान्त रहने और मोक्ष लक्ष्मीके पानेकी इच्छासे उक्त तिथिपर (अर्थात् कजरीके दिन) विशालाक्षी देवीकी महायात्रा करनी चाहिये ॥ ९ ॥ कहींके रहनेवाले ।देशियोंकोभी, धूप, दीप, उत्तम माल्य, मनोहर उप-हार, मणि, मुक्ता, आदि अलंकार विचित्र चँदवा चामर तथा सुगंधसे वासित नवीन वस्त्रादिक वस्तुओंसे प्रयत्न उठाकर विशालाक्षी देवीका पूजन करना चाहिये, क्योंकि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हे मुनिवर! उत्तमलोग मोक्षलक्ष्मीके सिद्ध्यर्थ विशालाक्षीके निमित्त जो बहुत थोडाभी (चढा) देते हैं, वह दोनोंही लोकोंमें अनंत होजाताहै उस विशालाक्षी महापीठमें जो कुछ दान, जप, हवन और स्तवन किया जाताहै उसका परिपाक मोक्षही होताहै इसमें तनिकभी विचार नहीं करना चाहिये । विशालाक्षीके पूजन करनेसे कुमारियोंको गुण और शील इत्यादिसे विभूषितरूप संपत्तिमान् पति मिलताहै । और गुर्विणियोंको उत्तम पुत्ररत्न एवं वंध्याओंको भी गर्भ संभव होताहै ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ जो स्त्रियां असौभाग्यवती हैं वे बडीही सौभाग्यशाली होजातीहैं, और विधवायेंभी फिर दूसरे जन्ममें कहींभी वैधव्य दुःखको नहीं पातीहैं ॥ १६ ॥ (बहुत कहांतक कहें) पुरुषहो अथवा स्त्री हो जिस किसीको मुक्तिकी चाहहो काशीमें विशालाक्षीके श्रवण, पूजन और दर्शन करनेसे उसकी सब अभिलाषा सिद्ध होतीहैं ॥ १७ ॥ उसीके पास गंगाकेशवके समीपहीमें एक ललितातीर्थ (घाट) है, जहांपर क्षेत्रकी परम रक्षा करनेवाली ललिता देवी विराजमानहैं ॥ १८ ॥ बडे प्रयत्नसे उनकी पूजा सब संपत्तियोंके समृद्ध्यर्थ करनी चाहिये, क्योंकि, ललिताके पूजकोंपर कभी कोईभी विघ्न नहीं पड सकता ॥ १९ ॥ आश्विनमासकी कृष्ण द्वितीयापर ललितादेवीका पूजन करनेसे क्या स्त्री क्या पुरुष सभी अपने वांछित फलको पाजाते हैं ॥ २० ॥ ललिताघाटपर नहाय, ललितादेवीको प्रणामकर जो कुछ बन पडे स्तुति करनेसे सर्वत्रही लालित्य लाभ किया जासकताहै ॥ २१ ॥ हे ऋषिवर! विशालाक्षीके सन्मुखही विश्वभुजा गौरी स्थितहैं, जो क्षेत्रके भक्तिमान् लोगोंके बडे बडे विघ्नोंको सदैव संहार करती रहती हैं ॥ २२ ॥ कुंआरके नवरात्रमें उनकी यात्रा बडे परिश्रमसे करनी चाहिये, क्योंकि विश्वभुजा देवीही सब कामनाओंको सम्पन्न करतीहैं ॥ २३ ॥ जो मनुष्य काशीमें विश्वभुजा देवीको प्रणाम नहीं करता भला उस दुरात्माके बडेभारी उपद्रवोंकी शांति कैसे होसकतीहै ॥ २४ ॥ जो पुण्यात्मा जन वाराणसी पुरीमें विश्वभुजादेवीकी स्तुति और पूजा करसकतेहैं उनको (कभीभी) विघ्नसमूह कोई बाधा नहीं पहुँचा सकते ॥ २५ ॥ काशीमें यज्ञवाराहके सन्निकट एक दूसरीही वाराहीदेवीहैं, मनुष्य भक्ति पूर्वक उनको प्रणाम करनेहीसे कभी विपत्तिसागरमें नहीं डूबता ॥ २६ ॥ इस स्थानपर आपत्तिनाशिनी शिवदूतीदेवीकाभी दर्शन करना उचितहै, वे आनन्दसे रक्षाकेलिये त्रिशूल उठाकर शत्रुओंको चपेटा करती हैं ॥ २७ ॥ इन्द्रेश्वरसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१६३

और गजराजके रथपर आरूढ और हाथमें वज्र धारण कियेहुए ऐन्द्रीदेवीहैं, जो पूजन करनेहीसे सदैव सम्पत्तियोंको दिया करती हैं ॥ २८ ॥ स्कन्देश्वरके समीपमें मयूरवाहना कौमारीदेवीहैं, बडे फललाभके लिये प्रयत्नपूर्वक उनका दर्शन करना चाहिये ॥ ॥ २९ ॥ महेश्वरसे दक्षिणभागमें माहेश्वरीदेवीहैं, जो वृषभके यानपर आरूढ रहती-हैं, उनके पूजनसे लोगोंको परमधर्मकी समृद्धि होतीहै ॥ ३० ॥ मोक्षकी आकांक्षा रखनेवालोंको निर्वाण नरसिंहके पासहीमें उठायेहुए चक्रसे सुशोभित हस्तानारसिंही देवीकी अर्चना करना उचितहै ॥ ३१ ॥ ब्रह्मेश्वरके पश्चिम ओर हंसयानपर आसीन ब्राह्मीदेवीहैं, जो गिरतेहुए कमंडलुके जलको चिल्लूमें लेकर (उसीसे) शत्रुओंको ताडन करती रहतीहैं ॥ ३२ ॥ ब्रह्मविद्याके प्रबोधार्थ काशीपुरीमें ब्राह्मण, संन्यासी, और आत्मतत्त्वावबोधी लोगोंको प्रतिदिन उनकी पूजा करनी चाहिये ॥ ३३ ॥ काशीधाममें शार्ङ्गधनुषपर बडेतीखे बाणोंको चढाकर विघ्नोंको इधर उधर फेंकनेवाली नारायणी देवीका आश्रय लेवे ॥ ३४ ॥ गोपीगोविन्दसे पश्चिम तर्जनी अंगुरीको ऊंची करके उसमें चक्रघुमाते रहनेवाली नारायणीको जो कोई काशीमें प्रणामकरे उसकी बडीही उन्नति होतीहै ॥ ३५ ॥ तदनंतर देवयानीके उत्तर दिशामें विरूपाक्षी गौरीकी भक्तिपूर्वक पूजा करनेसे मनुष्य वांछित संपत्तिको पाताहै ॥ ३६ ॥ शैलेश्वरके समीपमें स्थित शैलेश्वरीदेवीका पूजन अवश्यही करना चाहिये, वह अपनी तर्जनीअंगुरीसे (भक्तोंके) उत्पातजनित संसर्गदोषको तर्जन करती (डांटती) रहतीहैं ॥ ३७ ॥ जो मनुष्य विचित्र फलदायक चित्रकूपमें स्नान, चित्रगुप्तेश्वरका दर्शन और चित्रघंटा देवीका पूजन करलेताहै ॥ ३८ ॥ वह चाहे बहुतेरे पातकोंसे पूर्णहो अथवा अधर्ममार्गको त्यागदियेहो; पर चित्रघंटाके पूजन करनेसे कभी चित्रगुप्तके लिखनेयोग्य नहीं होता ॥ ३९ ॥ क्या नर, क्या नारी, चाहे जो हो चित्रघंटाका पूजन न करे तो काशीमें सहस्रोंही बिघ्न उसे पद पदपर धरदबातेहैं ॥ ४० ॥ चैत्र मासकी शुक्ला तृतीयाको प्रयत्नपूर्वक उनकी यात्रा, और बहुतभारी (धूम धामका) महोत्सव, एवं रातमें जागरण करना चाहिये ॥ ४१ ॥ और अनेक प्रकारके उपचारोंसे बडीभारी पूजाके द्वारा चित्रघंटाके समर्चन करनेसे कोईभी यमराजके बाहन महिषके गलघंटाको नहीं सुनने पाता ॥ ४२ ॥ चित्रांगदेश्वरके पूर्वओर चित्रग्रीवादेवीको प्रणाम करनेसे कोईभी प्राणी विचित्र यम यातनाको कभी नहीं देखताहै ॥ ४३ ॥ जो कोई भद्रवापीमें स्नानादि कर्मोंको कर भद्रनागकी सन्मुखवर्तिनी भगवती भद्रकालीका दर्शन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

करताहै उसे कहींपर अभद्रका मुख नहीं देखना पडता ॥ ४४ ॥ सिद्धिविनायकके पूर्वओर हरासिद्धिदेवीका पूजन जो सज्जन प्रयत्नपूर्वक करताहै, उसे महासिद्धि मिलतीहै ॥ ४५ ॥ विधीश्वरकी समीपवासिनी विधिदेवीका विविध उपहारोंसे विधिपूर्वक पूजन करे तो विविध भांतिकी सिद्धिको पाताहै ॥ ४६ ॥ प्रयागघाटपर स्नानकर जो कोई निगडभंजनी बंदीदेवीका समर्चन करसके वह मनुष्य कदापि (लोहेकी) बेडियोंसे नहीं बांधाजाता ॥ ४७ ॥ बंदी (बंधुआ—कैदी) मनुष्यके छुटकारापानेकी इच्छासे प्रत्येक मंगलवारको भक्तिपूर्वक केवल एकही बार भोजन करके काशीमें निगडभंजनी देवीका पूजन करना उचितहै ॥ ४८ ॥ क्योंकि वह देवी पूजित होजाने पर संसारके बंधनोंको भी काटडालती है, फिर उनके पूजनसे बेडीआदिकी कौन गिनतीहै ? ॥ ४९ ॥ काशीमें जो लोग श्रद्धापूर्वक बन्दीदेवीके चरणसेवकहैं उनका कोई बन्धु परदेशमें बन्दी होगया हो तो वहभी निस्सन्देह छूटजाताहै ॥ ५० ॥ यदि कुछभी नियम धारणकरके काशीमें सन्देहको दूरकरनेवाली बन्दीदेवीका सेवन कियाजावे तो वह सभी मनोरथोंको परिपूर्ण करदेती हैं ॥ ५१ ॥ हाथोंमें वज्र (मुद्गर) और टांकीको धारण किये, हुई और भक्तलोगोंके बंधनकी काटनेवाली, एवं तीर्थराजकी समीपवासिनी भगवती बंदीदेवी किन किन कामनाओंको नहीं पूरण करतीं ? ॥ ५२ ॥

श्लोक—यैर्वन्द्यते बन्दिपदारविन्दममन्दवृन्दारकवृन्दवन्द्यम् ॥
तवाम्ब ! ते वन्द्यतमा भवन्ति, कुलेश्वरि ! त्वामहमद्य वन्दे ॥ १ ॥

पशुपतीश्वरके पीछे अमृतेश्वरके पास अमृतेश्वरी देवी हैं परिश्रम उठाकर अमृत कूपमें नहानेपर उनका दर्शनकरना चाहिये ॥ ५३ ॥ जो पुरुष भक्तिभावसे अमृतेश्वरी देवीका पूजन तथा उनके चरणारविंदका सेवन करताहै, उसे अवश्यही अमृत प्राप्त होजाताहै ॥ ५४ ॥ दहिने हाथमें अमृतका घडा धारणकरनेवाली तथा बांये हाथसे अभयदेनेवाली उस महामायाका ध्यान करनेसे कौन अमृतत्वका भागी नहीं होता ? ॥ ५५ ॥ उसी अमृतेश्वरसे पश्चिमओर प्रपितामहेश्वरलिंगके आगेही जगन्मा सिद्धिलक्ष्मीदेवी विराजमानहैं, जो पूजन करनेसे सब सिद्धियोंको देती हैं ॥ ५६ ॥ सिद्धिलक्ष्मीका कमलके आकारका लक्ष्मीविलासनामक मन्दिरहै, उसके देखनेसे किसे नहीं लक्ष्मी मिलतीं ? ॥ ५७ ॥ प्रपितामहेश्वरके पश्चिमओर नलकूबरेश्वर सन्मुखही जगज्जननी कङ्कालदेवीका पूजन करना चाहिये ॥ ५८ ॥ क्योंकि

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१६५

करनेसे कुब्जादेवी समस्त उत्पातोंको दूर भगादेती हैं, इसलिये कल्याण चाहने वालोंको काशीमें बडे जतनसे कुब्जादेवीकी अर्चना करनी योग्यहै ॥ ५९ ॥ नलकूबरेश्वरसे पश्चिम कुब्जाम्बरेश्वर नामक लिंगहै, उसी स्थानपर अभीष्टदायिनी त्रैलोक्यसुन्दरी गौरी परम पूजनीयहै ॥ ६० ॥ त्रैलोक्यसुन्दरी देवी त्रैलोक्यभरकी सुन्दर सिद्धिको देती है, उस देवीकी पूजा करनेसे कभी वैधव्य नहीं होने पाताहै ॥ ६१ ॥ लोलार्कादित्यके पासमें (सूर्यकुंडपर) दीप्तानाम महाशक्तिहैं, उनके पूजनसे लोग लक्ष्मीकी ओरसे देदीप्यमान होजाते हैं ॥ ६२ ॥ श्रीकंठेश्वरके निकटमें जगद्धात्री महालक्ष्मीदेवीहैं, लक्ष्मीकुंडनामक (उनके) तीर्थमें नहाकर उन जगद-म्बिकाका पूजन करना चाहिये ॥ ६३ ॥ उस लक्ष्मीकुण्डनामक तीर्थमें विधिपूर्वक पितरोंका तर्पण और विविधदानोंके करनेसे मनुष्य सदैव लक्ष्मीवान् बनारहताहै ॥ ६४ ॥ साधकोंका परम सिद्धिप्रद लक्ष्मीक्षेत्रनामक महापीठहै, जो मनुष्य वहांपर मन्त्रोंका साधन करताहै, सो अनायासही सिद्धिको पाजाताहै ॥ ६५ ॥ यद्यपि काशीपुरीमें सिद्धिदेनेवाले अनेक पीठहैं, पर महालक्ष्मीपीठके समान परम लक्ष्मीकारक दूसरा कोईभी नहीं है ॥ ६६ ॥ (कुँवारवदी) महालक्ष्मीकी अष्टमीपर वहांकी यात्राकरनेवालोंके घरको महालक्ष्मीदेवी काशीमें विधिवत् पूजित होनेसे कभी नहीं छोडती हैं ॥ ६७ ॥ महालक्ष्मीके उत्तरओर कुठारधारिणी हयकंठी देवीहैं जो कि, प्रतिदिन काशीमें विघ्नरूपी बडे बडे पेडोंको काटतीही रहतीहैं ॥ ६८ ॥ और महालक्ष्मीके दक्षिणओर कौमी शक्तिहैं जो हाथमें पाशलिये रहतीहैं, और प्रतिक्षण इस क्षेत्रके विघ्नवर्गको (उसीसे) बांधाकरतीहैं ॥ ६९ ॥ मनुष्यगण उनका पूजन करनेसे क्षेत्रकी सिद्धिको पातेहैं, योंही क्षेत्रकी परम रक्षाकरनेवाली शिखिचंडी देवी वायव्य कोणमें रहतीहैं ॥ ७० ॥ जो कि, मोरकी नाईं पिहिकती हुई विघ्न (रूपीसर्पों) के झुंडको खाती रहतीहैं, उनके दर्शनसे लोगोंकी समस्त व्याधियां विनष्ट होजातीहैं ॥ ७१ ॥ भीमेश्वरके सन्मुखही पाश और मुद्गरको धारणकर भगवती भीमचंडीदेवी निरालसता पूर्वक (क्षेत्रके) उत्तरद्वारका सदैव रक्षाकरती रहतीहैं ॥ ७२ ॥ जो मानव भीमकुंडमें स्नानादि कर्मोंको कर भीमचंडीदेवीका दर्शन करता है वह पुण्यात्मा भीमाकार यमराजके दूतोंको कभी नहीं देखने पाता ॥ ७३ ॥ रूपमञ्जके दक्षिणभागमें छागवक्त्रेश्वरी देवीहैं, जो अहर्निश विघ्नौघरूपी तरुपल्लवोंको चबाती रहतीहैं ॥ ७४ ॥ उनही देवीके प्रसन्नतासे काशीमें वास मिलसकताहै, अतएव

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(कुँवारसुदी) महाष्टमीको उन्हींका पूजन करना चाहिये ॥ ७५ ॥ संगमेश्वरके दक्षिणभागमें विकटानना और ताडके पेडका शस्त्रधारण कियेहुए, तालजंघेश्वरी देवीहैं, जो आनन्दवनके बीचमें रहनेवाले विघ्नरूपवृक्ष समूहोंको उखाडडालतीहैं, जो तालजंघेश्वरीके प्रणामकरनेसे किसीप्रकारके विघ्नोंसे दबना नहीं पडता ॥ ७६ ॥ ॥ ७७ ॥ उद्दालकतीर्थपर उद्दालकेश्वर लिंगके दक्षिणओर यमदंष्ट्रानामदेवीहैं, जो विघ्नराशिको चबाडालतीहैं ॥ ७८ ॥ उद्दालकतीर्थपर जिनलोगोंने यमदंष्ट्रादेवीको प्रणामकिया वे बडेसे बडे पापोंके करनेपरभी यहांपर यमराजसे तनिकभी नहीं डरतेहैं ॥ ७९ ॥ दारुकेश्वरतीर्थपर दारुकेश्वरके समीपहीमें चर्ममुंडानाम्नी प्रसिद्ध देवी हैं, उनका तालु और मुख तो पातालमें एवं ऊपरका ओठ आकाशमें, और अधर पृथिवीमें अवस्थितहै, वह ब्रह्मांडमात्रको कवरभरमें (खालिया) चाहती हैं, उनका पेट सुखठा, और वसाओंसे देह भरीहुई है, वह क्षेत्रके पूर्वभागको विघ्नोंके समूहसे बँचाया करती हैं, उनके हाथोंमें खोपडी और छूरी (कतरनी) रहतीहैं, सहस्रोंभुजाओंसे जाज्वल्यमान और तिरछी आँखोंसे शोभायमानहैं ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ वह समुद्रतक फैलनेवाले अपने हाथोंमें शत्रुरूप मोदक (लडुआ) रक्खे रहती हैं, और उनका पहिरावा बाघके चमडेका रहताहै, एवं वह बडा कठोर अट्टाट्टहास करतीरहतीहैं ॥ ८३ ॥ त्रिशूलके अग्रभागमें गोदेहुए दुरात्मा क्षेत्रद्रोहियोंका शरीर और पापियोंकी हड्डीको वह मृणालके नालकी नाईं (सुखसे) चबाया करती हैं ॥ ८४ ॥ उनका भूषण मुंडमाला और स्वरूप बडाही भयंकरहै, उक्तचर्ममुंडादेवीके प्रणाम करनेसे मनुष्य क्षेत्रके विघ्नोंसे पीडित नहीं होने पाता ॥ ८५ ॥ जैसी यह चर्ममुंडादेवी हैं वैसीही एक महारुंडादेवीभी हैं, इनमें इतनाही भेदहै कि (यहतो मुंडमालाहै) और यह रुंड (धड) की मालासे विभूषित रहती हैं ॥ ८६ ॥ ये दोनोंही परम बलशालिनी देवियां परस्पर अपने हाथोंको फैलाकर करतालियोंसे हँसतीहुई क्षेत्रकी रक्षा करतीरहती हैं ॥८७॥ हय ग्रीवेश्वरतीर्थपर लोलार्कसे उत्तरओर भक्तविघ्नहारिणी प्रसन्नानना महारुंडादेवी सदैव वासकरती हैं ॥ ८८ ॥ ये दोनों चर्ममुंडा और महारुंडादेवीकी जो देवियां कहीगई हैं इनही दोनोंके बीचमें मुंडरूपिणी एक चामुंडा देवी हैं ॥ ८९ ॥ क्षेत्रनिवासियोंको उचितहै कि इन तीनोंही देवियोंका पूजन प्रयत्नपूर्वक करें क्योंकि येही तीनों धन धान्य और पुत्र पौत्रोंको देती हैं ॥ ९० ॥ ये सब देवियां लोगोंके श्रद्धापूर्वक पूजन, दर्शन, स्पर्शन, नमन, और स्मरण करने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१६७

नेहीसे उपद्रवोंका नाश और मुक्तिश्रीका दान करतीं हैं ॥ ९१ ॥ पूर्वोक्त महारुंडा देवीके पच्छिमओर एक शुभमयी स्वप्नेश्वरीदेवी हैं जो स्वप्नावस्थामें भक्तके सन्मुख भविष्य शुभाशुभको कहदेतीं हैं ॥ ९२ ॥ चाहे जिस दिनहो पवित्र असिसंगमपर नहाकर स्वप्नेश्वरीदेवी और वहींपर स्वप्नेश्वरलिंगका पूजन करके पुरुष हो अथवा स्त्री हो उपवास धारणपूर्वक स्थंडिलमें (भूमीपर) शयनकरे तो वह बुद्धिमान् स्वप्नमें होनेवाली बातोंको देखताहै ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ जानकार जनको आजतकभी इस विषयमें विश्वासही करना चाहिये कि, रातमें स्वप्नेश्वरीदेवी भूत भविष्य और वर्तमान सबकुछ कहदेतीहैं॥९५॥ काशीपुरीमें ज्ञानार्थी लोगोंको अष्टमी चतुर्दशी और नवमीके दिन अथवा रातमें उस देवीका प्रयत्नपूर्वक पूजा करनी चाहिये ॥ ९६ ॥ उसी स्वप्नेश्वरीदेवीके पश्चिम भागमें दुर्गादेवी विराजमानहैं, जो सदैव क्षेत्रके दक्षिणभागकी रक्षाकरतीरहतीं हैं॥९७॥

दोहा—इन देविनमें मुख्य जो, अन्नपूरना मात ।
तेहिकर नाम मिल्योनहीं, बुद्धि मोर चकरात ॥ १ ॥
पंडितजन यहि विषयको, ढूंढै भले बिचार ।
काशीको " अनपूरना छत्र " नाम उँजियार ॥ २ ॥
महरानी अनपूरना, विश्वनाथ महराज ।
काशीके ये मुख्यहैं, ढुंढिराज—युवराज ॥ ३ ॥
कासों कारन पूछिये, कौन कहै समुझाय? ।
रहत पारमें व्यासजी, ओहुन देत बताय ॥ ४ ॥
वालमीकने नहिं कह्यो, " रामचन्द्र " अस नाम ।
व्यासहुकी ओही दशा, कहेन " राधा " श्याम ॥ ५ ॥
तैसहि काशीखंडमें, अन्नपूरना नाम ।
कतहुं देखाई पडतनहिं, कारन जानै राम ॥ ६ ॥
अन्नपूरना देतहैं, सबको भोजन खोज ।
है प्रसिद्ध यहि कासिमें होत छत्रमें भोज ॥ ७ ॥
" स्वयं पंचाननः पुत्रौ—गजाननषडाननौ ।
दिगंबरः कथं जीवेदन्नपूर्णा न चेद्गृहे ? " ॥ ८ ॥ प्राचामुक्तिः,
पंचानन शिवके सुवन, षटमुख गजमुख नाम ।
होति न घर अनपूरना, सरत कवन विधि काम ॥ ९ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तोटकछन्द–बिनु वस्तर नग्न सदाहि रहैं, विष व्याल कपाल धरे विचरैं ।
नित भंग उडावत पंच मुखै, सगरो जग धूमत नांचि फिरैं ॥
षट आनन और गजानन जू, सुत दोउनको निज संग धरैं ।
वृष वाहन जीयत कौन विधी ? अनपूरना जो नहिं होति घरैं ॥ १० ॥ श्लोकानुवाद

इति श्रीस्कंदपुराणे चतुर्थे काशीखंडे उत्तरार्धे भाषायां देवीस्थानवर्णनन्नाम सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७० ॥

एकहत्तरवां अध्याय

दुर्गासुर और देवीका युद्ध ।

अगस्त्यने पूँछा– हे उमानन्दन ! देवीका दुर्गा नाम क्यों पडा ? और काशीमें उनका सेवन कैसे करना चाहिए ? इन बातोंको मुझसे वर्णन कीजिये ॥ १ ॥ स्कन्दने उत्तर दिया–हे महामते ! कुम्भयोने ! जैसे देवीका दुर्गानाम पडा और साधक लोगोंको जैसे उनका सेवन करना उचितहै सो (सब) कहताहूं ॥ २ ॥ रुरुदैत्यका पुत्र दुर्गनामक महादैत्यने कठोर तपस्या करके पुरुषोंसे अजेय होनेका वरदान प्राप्तकिया ॥ ३ ॥ फिरतो उसने अपनी भुजाओंके पराक्रमसे संग्राममें जीतकर भूलोक भुवर्लोक और स्वर्ग आदि लोकोंको अपने आधीन करलिया ॥ ४ ॥ उस महाबली दैत्यने आपही इन्द्र, चन्द्र, वायु, वरुण, यम, अग्नि, कुबेर, ईशान, रुद्र, सूर्य और वसुगणका पदाधिकार लेलिया (और वही सबका काम करनेलगा) उसके डरसे बडेबडे तपस्वियोंने भी तपस्याका करना छोडदिया ॥ ५ ॥ ६ ॥ ब्राह्मणोंने भी उसीके भयसे वेदाध्ययन त्यागदिया, उसके अत्यंत दुःसह भटोंने यज्ञस्थानोंको गिरा पडादिया ॥ ७ ॥ और उन सब कुमार्ग गामियोंने कितनीही सती स्त्रियोंको बिगाडदिया, योंही वे सब दुरासद क्रूरकर्मकारी दुराचारी दैत्यगण बलपूर्वक दूसरेके धनादिक छीनकर (मनमाना) भोग करनेलगे । उस वेलामें नदियां विमार्गगामिनी होगईं, अग्निने जलानाही छोड दिया ॥ ८–९ ॥ उसीके भयसे व्याकुलसी होकर और सब ज्योतियां भी प्रभाहीन होगईं, चारों ओरसे दिगंगनाओंके मुखभी खिसियानेसे होगये (थे) ॥ १० ॥ धर्मकर्मका लोप होकर पापाचारका प्रचार बढने लगा, वेही सब असुर अपनी (मायाकी) लीलासे मेघ बनकर वृष्टि करनेलगे ॥ ११ ॥ और वसुंधराभी बिना (जोते) बोयेही उसके भयके मारे सब अन्नोंको उपजानेलगी, सदैवके बंझे पेडोंमेंभी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१६९

फल निकलने लगे ॥ १२ ॥ उस महादर्पशाली दैत्यने देवता और ऋषियोंकी स्त्रियोंको बन्दी और सब स्वर्गवासियोंको बनवासी बनादिया ॥ १३ ॥ उसीके डरसे व्याकुल होकर मनुष्य लोगभी विपत्तिमें पडेहुए देवतोंको अपने घरमें स्वयं चलेआनेपर एक बात पूछनेकाभी सत्कार नहीं करतेथे ॥ १४ ॥ स्कन्द कहनेलगे (कि हे मुने !) कुलीन और सच्चरित्र होनेहीसे बडप्पन नहीं होसकता, क्योंकि पदाधिकारहीसे बडाई और पदभ्रंशहीसे छोटाई होतीहै ॥ १५ ॥ जो लोग विपत्ति पडनेपरभी दीनताके वश होकर धन गर्वसे मलिन चित्त लोगोंके आँगनमें कभी नहीं जाते वेही धन्यहैं ।

दोहा—विपति परे जे दीन ह्वै, धन दर्पितके द्वार ।
कबहुँ न जावैं धन्य ते, होंहि जगत उजियार ॥ १६ ॥

संसारमें लघुतासे हीनहोकर मरजानाभी बहुत भला है, पर छोटाईके साथ अमरताभी मिले तो वह अच्छी नहीं है ॥ १७ ॥ जिन लोगोंका मनरूपी समुद्र आपत्कालमेंभी गंभीरताको नहीं छोडता, वास्तवमें वेही पुण्यशाली लोग इसजगतमें जीते (जागते) हैं ॥ १८ ॥ कभीकभी संपत्ति मिलजाने अथवा विपत्ति पडनेसे धीरजन दोनोंहीको अदृष्टाधीन समझकर अपनी धीरताको नहीं छोडते ॥ १९ ॥ पंडितजन चन्द्र और सूर्यके उदय और अस्तका समय देखकर सदैव एकरूपताको न छोडे, क्योंकि हर्ष और विषाद ये दोनोंही निष्फल हैं ।

दोहा—उदय अस्त शशि सूरको, लखहिं सुलच्छन लोग ।
तजहिं न एक सरूपता, करहिं न हरष न सोग ॥ २० ॥

जो कोई विपत्ति पडनेपर दीन होकर मरजाताहै, उसके दोनोंही लोक बिगड जाते हैं, इसलिये दीनताको सर्वथा छोडही देना उचितहै ॥ २१ ॥ जो लोग आपत्तिके समयमेंभी धैर्यहीको धरे रहते हैं उन धीरोंकी धीरताहीसे अवधीरित होकर विपत्ति फिर उन सबको इसलोक अथवा परलोकमेंभी (कभी) नहीं छू सकती ॥ २२ ॥ इधर देवतालोग राज्यादि संपत्तियोंसे विहीन होकर भगवान् महेश्वरके शरणागत हुए तब सर्वज्ञ शिवनेभी असुरोंके मारनेकेलिये देवीको प्रेरणा की ॥ २३ ॥ तदनंतर भवानी बडी प्रसन्नतासे महादेवकी आज्ञा पातेही देवतोंको अभय देकर समरका उद्योग करने लगीं ॥ २४ ॥ रुद्राणी देवीने तुरतही लावण्य शोभासे त्रैलोक्य मात्रको मोहनेवाली कालरात्रीको बुलाकर उस—दुर्गासुरके पास आह्वाके लिये भेजदिया ॥ २५ ॥ फिर तो कालरात्री देवी उसदुष्टचित्त दैत्यके समीप जाकर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कहनेलगी, कि " हे दैत्यराज ! तुम त्रैलोक्यकी सम्पत्तिछोडदो ॥ २६ ॥ और स्वयं रसातलमें चलेजाओ, (जिसमें) इस त्रिभुवन (के राज्य) को इन्द्र फिरसे पावें और वेद वादियोंकी सब वेदोक्त क्रियायें पूर्ववत् होनेलगीं ॥ २७ ॥ और यदि चेत् इस विषयमें तुमको कुछ अहंकार हो तो युद्ध करनेके लिए (ललकार देतीहूं) तुम आओ, पर जो जीनेकी आकांक्षा होवे तो देवराजके शरणागत होवो ॥ २८ ॥ महामंगल स्वरूपिणी महेश्वरी देवीने तुमसे यही कहनेके लिये मुझको तुम्हारे पास भेजाहै, (यह तुम निश्चय समझलो कि) उनकी बातोंकी उपेक्षाकरनेहीसे तुम्हारी मृत्यु है ॥ २९ ॥ अतएव हे महासुर ! अब जो कुछ उचित हो उसे करो, पर जो मेरा कहना सुनो तो जीव लेकर (सीधे) चले जाओ ॥ ॥ ३० ॥ इस प्रकारसे महाकाली देवीकी बातें सुनकर, वह दैत्यराज क्रोधसे प्रज्वलित होकर बोला " पकडो२ इसे पकडलो" ॥ ३१ ॥ यह त्रैलोक्य मोहिनी (आंज) मेरेही भाग्यके गौरवसे यहां चलीआई है, यही तो त्रैलोक्य भरके राज्यकी सम्पत्ति रूपी लताका बडाभारी फलहै ॥ ३२ ॥ मैंने इसीके लिये देवता ऋषि और राजोंको बन्दी कियाथा, पर आज यह अनायास मेरे शुभकर्मोंके उदय होनेहीसे मेरेपास चली आई है ॥ ३३ ॥ जो वस्तु जिसके योग्यहै वह वनमें रहे चाहे घरमें रहे पर भाग्यके बलसे उसके पास अवश्यही पहुँच जातीहै ॥ ३४ ॥ अब तो मेरे अन्तःपुर चारी लोग इसे बडे अन्तःपुरमें लेजावें, आज इस स्त्री रत्नसे मेरा राज्यही विभूषित होगया ॥ ३५ ॥ (अहाहा ! !) मुझ उदारचित्तका आजही महान् उदय हुआ, और केवल अकेले मेराही क्यों ? वरं समस्त दैत्यवंशका आज उदय होगयाहै ॥ ३६ ॥ आज मेरे पूर्वपुरुष नृत्यकरें, और बांधवगण सुखसे आनन्द मनावें एवं मृत्यु काल अन्तक और देवतालोग मेरी ओरसे भयभीत होवें ॥ ३७ ॥ इसी बीचमें कंचुकी लोग देवीको अन्तःपुरमें लेजानेके लिए वहांपर आपहुँचे, तब तो कालरात्रिने दानवराजसे फिर कहा ॥ ३८ ॥ कालरात्री बोलीं—हे महाप्राज्ञ ! दैत्यराज ! आप ऐसे लोगोंको यह उचित नहीं है, हे राजनीति ज्ञाताओंमें श्रेष्ठ ! (आपतो जानतेही हैं) हमलोग दूती हैं, सुतरां पराधीन (रहती) हैं ॥ ३९ ॥ कोई छोटा जनभी दूतोंके साथ किसीप्रकारका असद् व्यवहार (हरकत) नहीं करता फिर आपके ऐसे बडे बलवन्त महाराजोंकी कौन बातहै ? ॥ ४० ॥ हे महाराज ! भला नीच दूतियोंपर (आपका) ऐसा अनुराग क्यों होरहाहै ? स्वामिनीके आनेसे तो हम सब अनायासही यहां चली

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

आवेंगी ॥ ४१ ॥ हे दैत्यपते ! आप संग्राममें मेरी स्वामिनी देवीको जीतकर मेरेऐसी सहस्रोंही रमणियोंको यथेच्छ भोग करसकते हैं ॥ ४२ ॥ आजही उनके देखलेनेसे आपको और पूर्वजोंके सहित आपके बांधवलोगोंको बडाही सुख प्राप्तहोगा ॥ ४३ ॥ आजही आपके चिरचिंतित सकल मनोरथ सफल होजावेंगे क्योंकि एकतो वह मुग्धा (अनजान) अबला हैं, दूसरे उनका कोई रक्षकभी नहीं है ॥ ४४ ॥ फिर वह सर्वरूपमयी हैं, अतएव आप उन्हें एकबार देखतो लेवें, मैं स्वयं जहांपर वह जगत्की खानिहैं (लेचलकर) आपको दिखलादूंगी ॥ ४५ ॥ अकेले मुझीको पकडलेनेसे आपका कौनसा काम होसकेगा ? मैं तो स्वयं आजके दिनसे कभी आपका साथ नहीं छोडूंगी ॥ ४६ ॥ इसलिए मेरे धरनेवाले इनसब (चिबिल्ले) सौविदल्लोंको हटा दीजिए, इसप्रकारसे कालरात्रिकी बातें सुनकर काम और क्रोधसे मोहित वह ॥ ४७ ॥ दुर्गासुर मृत्युकी दूतीके समान उस अकेली कालरात्रिहीको बहुत समझनेलगा, (और बोला कि) अन्तःपुरके रक्षकलोग अभी इसे शुद्धान्तमें (भीतर) पहुँचादेवें ॥ ४८ ॥ हे सुने ! उसकी ऐसी आज्ञापातेही वे सब बडेबली नपुंसकलोग बलपूर्वक उसके पकड-लेनेका उद्योग करनेलगे ॥ ४९ ॥ (तबतो) कालरात्रिने हुंकारसे उत्पादित अग्निके द्वारा उनसबोंको तुरतही भस्म करडाला, तदनंतर दैत्यराज क्षणमात्रमें उस-दूतीके द्वारा भस्म किये गये उन सब तीससहस्र दैत्योंको देखकर बडाही क्रुद्ध हुआ ! और दुर्धर, दुर्मुख, खर, सीरपाणि, पांशपाणि, सुरेन्द्रदमन, हनु, यज्ञशत्रु, खड्गलोमा, उग्रास्य और देवकंपनकी ओर दृष्टिफेरकर (कहनेलगा कि) ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ दानवलोग अभी इस दुष्टा दूतीको गहना कपडा उतार झोंटा पकडकर पाशोंसे बांधलावें ॥ ॥५३॥ फिर तो दैत्याधिपतिके आदेशानुसार वे सब पर्वतोपम दीर्घकाय, दुर्धर इत्यादि दानवगण, पाश, असि, और मुद्गर आदि अस्त्रशस्त्रोंको हाथमें लेलेकर उसके पकड लानेका उद्यम करनेलगे, परन्तु उसके उसांस लेनेके वायुका धक्का लगतेही (नजाने कहां) दिग्दिगन्तरमें उधिरा गये ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ इस प्रकारसे उन सब सौ करोड दैत्योंके उडजानेपर वह कालरात्रि देवीभी आकाशमार्ग गामिनी होकर वहांसे निक-लपडी ॥ ५६ ॥ फिरतो उनको निकली और चलीजातीहुई देखकर, करोडहां करोड सहस्र महासुरगण आकाश और भूमंडलको भरपूर करतेहुए उनके पीछे पीछे दौडनेलगे ॥ ५७ ॥ तदनंतर दैत्यनायक दुर्गासुर, सौकरोड रथी, दोखर्व गजारोही, कोटि अर्बुद संख्यक असवार, और असंख्य पैरासे पर्वतको चकनाचूर करदेनेवाले, आयुधधारी,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

महाभयंकर, और त्रैलोक्यमात्रके भयभीति कर्ता, पैदल दैत्योंको अपने साथ लेकर बडाही क्रोधित हो वहांसे निकलपडा ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ इसके अनंतर कालरात्री देवीने पहुँचकर विंध्याचल वासिनी महादेवीसे दुर्गासुरके अपराधकी सब बातें निवेदन करदीं ॥ ६१ ॥ (अबतो वह दुर्गासुर) रण कौतुक प्रिया, परमतेजस्वती, भीषण आयुधोंसे सुसज्जित सहस्रभुजाओंसे पूर्ण उसदेवीको ॥ ६२ ॥ जिसका सुन्दर मुख मानो ऊगतेहुए चन्द्रमाके सहस्रोंकिरणोंसे पोंछदिया गयाथा, जो लावण्य समुद्रसे निकलतेहुए चंचलचन्द्रकी चन्द्रिकासी चमक रहीथी ॥ ६३ ॥ जिसका समग्र शरीरही अनुपम माणिक्य समूहकी दीप्तिसे व्याप्तसा होरहाथा जो त्रिभुवनरूप रमणीय नगरीमें प्रकाशपूर्ण दीपशिखासी चलरहीथी ("छबि गृह दीपशिखा जनु बरई । तु. रा.") ॥ ६४ ॥ जो महादेवके नेत्रानलसे जलेहुए कामदेवके (जिलानेके) लिये संजीवनी लतासी बनरहीथी और जो उत्तम सुन्दरताकी सामग्रीसे जगत्भरके मोहलेनेकी बहुतबडी ओषधि होरही थी ॥ ६५ ॥ उसे देखतेही कामदेवके बाणोंसे भिन्नहृदय होगया, अनंतर उस उग्रशासन दैत्यराजने अपने बडे बडे सेनापतियोंसे यह कहा कि ॥ ६६ ॥ हे जंभ ! महाजंभ ! कुजंभ ! विकटानन ! लम्बोदर ! महाकाय ! महादंष्ट्र ! महाहनो ! ॥ ६७ ॥ पिंगाक्ष ! महिषग्रीव ! महोग्र ! अत्युग्रविग्रह ! क्रूराक्ष ! क्रोधन ! आक्रंदन ! संक्रन्दन ! महाभय ॥ ६८ ॥ जितांतक ! महाबाहो ! महावक्र ! महीधर ! दुन्दुभे ! दुन्दुभिरव ! महादुंदुभिनासिक ! ॥ ६९ ॥ उग्रास्य ! दीर्घदशन ! मेघकेश ! वृकानन ! सिंहास्य ! सूकरमुख ! शिवाराव ! महोत्कट ! ॥ ७० ॥ शुकतुंड ! प्रचंडास्य ! भीमाक्ष ! क्षुद्रमानस ! उलूकनेत्र ! कंकास्य ! काकतुंड ! करालवाक् ! ॥ ७१ ॥ दीर्घग्रीव ! महाजंघ ! उष्ट्रकंधर ! रक्तबिन्दो ! जपानेत्र ! विद्युज्जिह्व ! अग्नितापन ! ॥ ७२ ॥ धूम्राक्ष ! धूमनिःश्वास ! चंड ! चंडांशुतापन ! एवं महाभीषण आदि दैत्यगण ! तुम लोग आदरके साथ मेरी आज्ञाको सुनो ॥ ७३ ॥ तुम लोगोंके मध्यसे अथवा अन्य दैत्योंके बीचसे जो कोई बलसे किंवा छलसे, चतुरतासे चाहे धीरतासे इस विंध्यवासिनीको पकड लावेगा ॥ ७४ ॥ आज अवश्यही मैं उसे इन्द्र बनादूंगा इसमें कुछ संदेह नहीं है, क्योंकि इस सुन्दरीको देखकर आज मेरा मन बहुतही व्याकुल होरहाहै ॥ ७५ ॥ अतएव इस रमणीके नहीं मिलनेसे जबतक मेरा चित्त कामदेवके बाणोंसे पीडित होकर विह्वल नहीं होजाने पाता तबतक तुम लोग शीघ्रतासे चलेजाओ ॥ ७६ ॥ उसघडी दनुजेश्वर दुर्गका ऐसा वचन सुन-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१७३

कर सबी दैत्यलोग हाथजोडकर कहनेलगे ॥ ७७ ॥ हे महाराज ! भला सुनिए तो, यह कौन बडा दुष्कर काम है ? एकतो यह अबला है, तिसपर विशेषता यह कि इसका कोईभी सहायक नहीं है ॥ ७८ ॥ हे प्रभो ! इस अनाथा स्त्रीको लेआनेके लिए इतने बडे प्रयत्न उठानेका कौनसा प्रयोजन है ? हे नाथ ! त्रैलोक्यभरमें ऐसा कौन है ? जो प्रलयकालके अग्निकी महाज्वालावलीके तुल्य हमलोगोंको आपके प्रसादसे उद्योग करनेपर सहसके ? यदि आपकी आज्ञा पावें तो आजही अन्तःपुर और देवतोंके सहित इन्द्रकोभी धरलाकर आपके चरणके आगे फेंकदेवें । भू, भुव, स्वर्ग, मह, जन, तप और सत्य आदि सभी लोक आपहीकी आज्ञाके वशवर्ती होकर आपके अधिकारमें पडे हैं, हे महासुर ! आपकी आज्ञा पाजानेपर इनसबलोकोंमें हमलोगोंको कुछभी असाध्य नहीं है ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ (औरकी कौन बातहै ? स्वयं) वैकुंठनाथही सदैव आपकी आज्ञाओंका प्रतिपालन करते रहतेहैं, और जो कुछ उत्तम रत्न उनके यहां हैं आपके पास बडे हर्षसे भेजा करते हैं ॥ ८३ ॥ और कैलासनाथको तो हमीलोगोंने (आपहीसे) छोडदियाहै, क्योंकि वह विषभोजी, परमदरिद्र, भस्म और भुजंगोंसे भूषित और चमडाको पहिने रहते हैं ॥ ८४ ॥ वे तो हमीलोगोंके डरसे (अपनी) एकस्त्रीको अर्धांगमें छिपाये रहते हैं, उनके समग्र गोंमें एकसे भिन्न दूसरा चौपाया नहीं है ॥ ८५ ॥ केवल एकहीतो बूढाबैल है जो दूसरेके यहां (कभी) नहीं जी सकता योंही उनके नगरमें जो गणलोग रहते हैं वे सब श्मशानपरबैठे, कौपीन पहिने, भभूत पोते, और एकएक जटा बांधे पडेरहते हैं ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ सुतरां हे प्रभो ! उन सब परम दरिद्रगणोंका हमलोग क्या करें ? आपके लिए सभी समुद्र प्रतिदिन रत्नोंका बोझ भेजतेही रहते हैं ॥८८॥ दयापात्र (बेचारे) नागलोग प्रतिदिन सन्ध्या समय आपही अपने फनकी मणियोंका दीपक सदैव हमलोगोंके यहां बालतेही फिरते हैं ॥८९॥ हे नाथ ! आपहीके प्रसादसे हमलोगोंके घरोंमेंभी बहुतेरे कल्पवृक्ष, कामधेनु और चिंतामणियोंकी ढेरें पडी रहती हैं ॥ ९० ॥ स्वयं पवनभी व्यजन (पंखा) रूपसे प्रयत्नपूर्वक आपकी सेवा करताहै, और वरुणभी प्रतिदिन स्वच्छजल भरजाताहै ॥ ९१ ॥ योंही अग्निभी कपडोंको धो (कचार) जाताहै और चन्द्रभी अपनेहीसे छाता लगाता फिरताहै, सूर्य नित्यही क्रीडा वापीके कमलोंको खिला देताहै ॥ ९२ ॥ देवता, मनुष्य, और सर्पोंमें ऐसा कौनहै जो आपके प्रसन्नताकी अपेक्षा न करताहो ? सुर असुर और

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

खगादिक सभीतो आपके आश्रित होरहे हैं ॥ ९३ ॥ हे राजन् ! अब आप हमलोगोंके पौरुषको देखिये, हमसब अभी इस अबलाको बलपूर्वक उठा लाते हैं, यह कहकर वे सब दैत्यगण प्रलयकालमें समस्त संसारको बहादेनेके लिए सातों समुद्रोंकी नाईं एकसाथही भयंकर रूप होगये उस घडी चारों ओरसे लडाईका डंका बजनेलगा ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ जिसके सुननेहीसे क्या कातर क्या शूरवीर सभीको रोमांच होने लगा, तबतो देवतालोग भयभीत होगये और वसुंधरा काँपने लगी ॥ ९६ ॥ सभी समुद्र क्षुब्ध होगये, आकाशसे तारागणोंकी ढेरें गिरनेलगीं, और उस तूर्य्यध्वनिसे समस्त आकाश और भूमंडल भरगया ॥ ९७ ॥ तब तो भगवती विंध्यवासिनीने अपनेही शरीरसे सैकडों सहस्रों शक्तियां उत्पन्न करदीं ॥ ९८ ॥ वे सब शक्तियां उन सब परमबलशाली दैत्योंके सेनारूपी बे मेंडके प्रत्येक समुद्रको चारों ओरसे रोकने लगीं ॥ ९९ ॥ उस रणक्षेत्रमें उनसब महाअसुरोंने जिनजिन बडे तेज अस्त्र शस्त्रोंको चलाया उन शक्तियोंने उनसबको तृणके समान दूर फेंकदिया ॥ ॥ १०० ॥ तब फिर जंभ आदिक सुरारिगण बडेही क्रोधसे पूर्णहोकर मेघोंकी जलवृष्टिके समान देवीके ऊपर एकसाथही तलवार, चक्र, भुशुंडी, गदा, मुद्गर, तोमर, भिंदिपाल, परिघ, कुन्त, शल्य, शक्ति, अर्धचन्द्र, क्षुरप्र, नाराच, शिलीमुख, महाभल्ल, परशु, भिदुर, इत्यादि मर्मभेदी शस्त्र और वृक्ष एवं पाषाणोंकी बडीभारी वर्षा करनेलगे ॥ १॥२॥३ ॥ इसके अनंतर महामाया विंध्यवासिनी महेश्वरीने भीषणधनुष धारण करके वायव्यास्त्रसे अनायासही ॥ ४ ॥ दैत्योंके चलाए हुए अस्त्र शस्त्रोंके जालको बहुत दूरपर फेंकदिया । तबतो उस महाऽसुर दर्गने अपने सैन्यको निरायुध देखकर ॥ ॥ ५ ॥ देवीके ऊपर एक जलतीहुई शक्ति फेंकी भगवतीनेभी रणक्षेत्रमें बडेवेगसे आतीहुई उस शक्तिको ॥ ६ ॥ अपने धनुषसे छूटेहुए बाणोंके द्वारा टुकडेटुकडे उडा दिया, अबतो दुर्गासुरने अपनी शक्तिको भग्नहोतीहुई देखकर ॥ ७ ॥ दैत्यगणके परम हर्षप्रद चक्रको चलाया, पर देवीने उसेभी अपने सैकडों बाणोंसे बीचहीमें किनके किनके करडाला ॥ ८ ॥ तत्पश्चात्, सुरमर्दक दुर्गने इन्द्रधनुषके समान सींगके बने हुए धनुषको लेकर देवीके हृदयपर मारना चाहा और उसने ऐसा एकबाण चलाया कि बडे वेगवाले देवीके बाणोंसे रोकेजाने परभी हे मुने ! वह देवीके आगे चलाही गया ॥ ९॥१० ॥ फिरतो भगवतीने दूसरे यमदंडके समान उस तेजाबणको भुशुंडीसे मारकर गिरादिया ॥ ११ ॥ अनंतर उस दुर्दय दानवराजने अपने बाणको व्यर्थ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१७५

जातेहुए देख बडाही क्रुद्ध हो प्रलयानलके तुल्य प्रभावाले त्रिशूलको लेकर ॥ १२ ॥ देवीहीको लक्ष्य करके बडेवेगसे उनकी ओर फेंका, पर चंडिका देवीने अपने त्रिशूलसे गिरतेहुए उस त्रिशूलको ॥ १३ ॥ अर्द्ध मार्ग हीमें दैत्योंकी जयाशाके सहित काट गिराया, जबकि वह महाशूलभी देवीके त्रिशूलसे व्यर्थ पडगया ॥ १४ ॥ तब तो वह महाबली दैत्येन्द्र गदा लेकर सहसा (एकायक) टूटपडा, और देवीके भुजमूलपर आघात करही बैठा ॥ १५ ॥ पर गिरीन्द्रके शृङ्ग ऐसी वह गदा देवीके बाहुपर लगतेही तुरत सैकडों सहस्रों टुकडे होकर टूटगई ॥ १६ ॥ फिरतो भगवतीने उस दैत्येश्वरको वाम चरणके तलवेसे मारकर भूमीपर गिरादिया और उसकी छातीपर बडेवेगसे जा दबाया ॥ १७ ॥ पर वह दैत्येन्द्र दुर्ग गिरनेपर तुरंत उठखडाहुआ और वाताहत दीपकीनाईं सहसा अदृश्य होगया ॥ १८ ॥ तबतक जगज्जननीने अपनी उन सब शक्तियोंको, दैत्योंकी सेनामें भेजदिया जो प्रलयकालमें मृत्युकी सेनाके समान वहांपर विचरण करने लगीं ॥ ११९ ॥

दोहा—दुर्गासुरके सैन्यमें, घुसीं शक्ति सब जाय ।
करनलगीं विध्वंस तब, मत्त असुर कुल पाय ॥ १ ॥
लागे उल्टन दैत्यगण, पटापट्ट तहँ धाय ।
जनु वहि सेनामें महा—मारी फैली आय ॥ २ ॥
है "चुनार"के पासही, "दुर्गाखोह" प्रसिद्ध ।
विंध्यवासिनी हैं वहां, दुर्गा सेवहिं सिद्ध ॥ ३ ॥

इति श्रीस्कंदपुराणे चतुर्थे काशीखंडोत्तरार्धे भाषायां दुर्गासुरदेवीयुद्धवर्णनन्नाम एकसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७१ ॥

बहत्तरवां अध्याय ।

श्री दुर्गादेवीका विजय और वज्रपंजर स्तोत्र ।

अगस्त्यने पूछा—हे पार्वतीहृदयानन्द ! सर्वज्ञनन्दन ! स्कन्द ! वे सब कौन कौनसी शक्तियां हैं ? आप उनके नामोंकोभी मुझे बतादेवें ॥ १ ॥ स्कन्द कहनेलगे हे कुम्भसम्भव मुने ! महेश्वरीके शरीरसे उत्पन्न उन सब महाशक्तियोंके नामोंको मैं ठीक—ठीक कहताहूं, तुम सुनो ॥ २ ॥ त्रैलोक्य विजया, तारा, क्षमा, त्रैलोक्यसुन्दरी, त्रिपुरा, त्रिजगन्माता, भीमा, त्रिपुरभैरवी ॥ ३ ॥ कामाख्या, कमलाक्षी,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

धृति, त्रिपुरतापनी, जया, जयंती, विजया, जलेशी, अपराजिता, ॥ ४ ॥ शंखिनी, गजवक्त्रा, महिषाघ्नी, रणप्रिया, शुभानंदा, कोटराक्षी, विद्युज्जिह्वा, शिवारवा ॥ ५ ॥ त्रिनेत्रा, त्रिवक्त्रा, त्रिपदा, सर्वमंगला, हुंकारहेति, तालेशी, सर्पास्या, सर्वसुन्दरी, ॥ ६ ॥ सिद्धि बुद्धि, स्वधा, स्वाहा, महानिद्रा, शरासना, पाशपाणि, खरमुखी, वज्रतारा, पद्मानना ॥ ७ ॥ मयूरवदना, काकी, शुकी, भासी, गरुत्मती, पद्मावती, पद्मकेशी, पद्मास्या, पद्मवासिनी ॥ ८ ॥ अक्षरा, त्र्यक्षरा, तन्तु, प्रणवेशी, स्वरात्मिका, त्रिवर्गा गर्वराहिता, अजपा, जपहारिणी ॥ ९ ॥ जपसिद्धि, तपःसिद्धि, योगसिद्धि, परामृता, मैत्रीकृत, मित्रनेत्रा , रक्षोघ्नी, दैत्यतापनी, ॥ १० ॥ स्तम्भनी, मोहनी, माया, बहुमाया, बलोत्कटा, उच्चाटनी, महोल्कास्या, दनुजेन्द्रक्षयंकरी ॥ ११ ॥ क्षेमकरी, सिद्धिकरी, छिन्नमस्ता, शुभानना, शाकंभरी, मोक्षलक्ष्मी, त्रिवर्ग फल दायिनी ॥ १२ ॥ वार्ताली, जंभली, क्लिन्ना, अश्वारूढा, सुरेश्वरी, और ज्वालामुखी आदि महाबलशालिनी नवकोटि शक्तियां थीं ॥ १३ ॥ वे सब अपनी लीलाहीसे बडे पराक्रमी दानवोंकी सेनाओंको प्रलयकालकी अग्निशिखा जैसे समस्त जगत्का संहार करतीहै वैसेही विनाश करने लगीं ॥ १४ ॥ उसी घडी दानवाधिपति दुर्ग घनघटाके भीतरसे बनौरी की वर्षा करने लगा जो वायुके झटकेसे बडे ही वेगके साथ बढने लगी ॥ १५ ॥ तबतो भगवती देवीने शोषणास्त्रके प्रयोगसे उस बनौरीकी वृष्टिको क्षणभरमें दूर हटा दिया ॥ १६ ॥ अबतो रमणाभिलाषिणी रमणी नपुंसकके पास जाकर जैसे विफल होजातीहै वैसेही वह दैत्योंकी करका (बनौरी) वृष्टि देवीके पास पहुँचकर व्यर्थ होगई ॥ १७ ॥ इसके पीछे दैत्यराजने क्रोधातुरतासे ताली ठोंक एकपर्वतका शिखर उखाडकर गगनमंडलसे फेंकदिया ॥ १८ ॥ देवीने उस बडेभारी पर्वतके शृंगको गिरता हुआ देखकर वज्रकी चोटसे उसे करोडहों टुकडेकरडाले ॥ १९ ॥ तब तो वह दैत्य हाथी बनकर कुंडलोंसे सुशोभित मस्तकको वारंवार झुकाता हुआ रणक्षेत्रमें देवीकी ओर दौडनेलगा ॥ २० ॥ भगवतीने पर्वताकार उसहस्तीको (अपनी ओर) चलाआता देख तुरंत पाशसे बांधकर खड्गसे उसका सूंड काटलिया ॥ २१ ॥ फिर तो देवीके सूंड काटलेनेपर वह हस्ती (स्वरूप दानव) घोरतर चिग्घार मारने लगा और कुछभी करनेमें असमर्थ होकर भैंसेका रूप बनगया २२ ॥ फिर वह बलशाली दैत्य अपने खुरोंके आघातसे पृथिवीको कँपाने ओर सींघोंसे बहुतेरे पर्वतोंको (उखाडकर,) फेंकनेलगा ॥ २३ ॥ उसवेलामें उसके सांसलेनेसे बडेबडे पेड भूमीपर गिरने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१७७

लगे, और सातों समुद्र अपने २ वेला (तट) को लांघचले ॥ २४ ॥ (अधिक क्या कहें) प्रलय वायुके समान, वह महाबली दानव भयंकर महिष रूपसे समस्त त्रैलोक्य को डगमगाने लगा ॥२५॥ और सभी ब्रह्माण्डवासी लोग अकस्मात उसके भयसे व्याकुल होगये, यह देख भगवतीने क्रुद्ध होकर उसे त्रिशूलसे मारा ॥ २६ ॥ उस त्रिशूलके आघातसे वह चक्कर खाकर गिरपडा पर तुरंतही उठकर महिषरूपको छोड एक सहस्रबाहुधारी योद्धा बनगया ॥ २७ ॥ उसघडी समरांगणमें वह परम दुर्गम्य दुर्गासुर सहस्रों (हाथोंमें) आयुधोंको धारण करनेसे कालान्तकके समान भासमान होनेलगा ॥ २८ ॥ इसके अनंतर वह महाबलशाली दानववीर झटपट समरनिपुणा भगवतीको पकडकर आकाश मंडलमें उठालेगया ॥ २९ ॥ फिर तो उसने जगदंबिका देवीको गगन मंडलमें बहुत दूरसे फेंककर बडेवेगसे क्षणमात्रमें बाणोंके जालसे ढक दिया ॥ ३० ॥ उस समय गगन मंडलस्था भगवती उसके बाणोंके मध्यमें (छिपकर) गहिरी बदलीके बीचमें घिरीहुई बिजुरी की नाईं चमकने लगीं ॥३१॥ तब उन्होंने अपने बाणोंसे उसके शरजालको हटाकर एक बडे तीक्ष्णबाणसे उस दैत्येन्द्रको मारा ॥ ३२ ॥ फिर तो देवीके उस महाबाणसे हृदयमें विद्ध होनेपर वह दैत्य नेत्रोंको घूर्णित करता हुआ बडाही विह्वल होकर भूतलपर गिरपडा ॥ ३३ ॥ उसकी रुधिरधारासे नदी बहचली, इसप्रकारसे उस परम पराक्रम शाली दुर्गासुरके मारेजानेपर ॥ ३४ ॥ देवतोंकी दुन्दुभियां बजने लगीं, समस्त संसार प्रहृष्ट होगया और सूर्य चन्द्र और अग्नि अपने अपने तेजको प्राप्त हुए ॥ ३५ ॥ तब महर्षियोंके सहित देवतागण पुष्पकी वृष्टि करते हुए वहां पहुँचकर बडे आदरके साथ उत्तमोत्तम स्तुतियोंसे महादेवीकी स्तुति करनेलगे ॥ ३६ ॥ देवतोंने कहा—हे जगद्धात्रि ! महेश्वर—महाशक्ते ! देवि ! आपही त्रैलोक्यमें घोर संग्राम करनेवाली और दानवरूप वृक्षोंके (काटनेको) कुल्हाडी रूप हैं, आपको नमस्कार है॥ ३७॥ हे त्रैलोक्यव्यापिनि! शिवे! शंख चक्र गदाधारिणि विष्णुरुपिणि ! आप (दुष्टोंके दलनाथ) धनुष खींचनेमें निरंतर हस्ताग्रको लगाये ही रहती हैं, आपको नमस्कार है ॥३८॥ हे सर्वसृष्टिविधायिनि ! हंसवाहिनि ! ब्रह्मस्वरूपिणि ! आपही वेदवचनोंकी जन्मभूमी हैं आपको नमस्कारहै ॥ ३९ ॥ हे देवि ! आपही इन्द्रशक्ति, आपही कुबेरशक्ति, आपही वायुशक्ति, आपही वरुण शक्ति, आपही यमशक्ति, आपही निर्ऋति शक्ति, आपही ईशानशक्ति आपही अग्नि शक्ति ॥ ४० ॥ आपही चन्द्रमाकी कौमुदीशक्ति, आपही सूर्यकी (प्रभा) शक्ति

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

और आपही सर्वदेवमयी परमेश्वरी शक्तिहैं ॥ ४१ ॥ आपही गौरी, सावित्री, गायत्री, सरस्वती, प्रकृति, मति, और अहंकृति स्वरूपा हैं ॥ ४२ ॥ हे अम्बिके ! आपही चेतःस्वरूपा, आपही सर्वेन्द्रिय मूर्ति, और आपही पंचतन्मात्ररूपा महाभूतात्मिका हैं ॥ ४३ ॥ हे देवि ! शब्द (स्पर्श रूप रस और गंध) आदिका स्वरूप आपही हैं, इन्द्रियोंकी अधिष्ठातृ देवताभी आपही हैं, ब्रह्मांडकी करनेवाली आपही हैं और ब्रह्मांड रूपिणी भी आपही हैं ॥ ४४ ॥ हे देवि ! आपही परा (ईश्वरी) हैं, आपही पर और अपरकी मूर्ति हैं, आपही परापरके मध्यमें परमा (सर्वोत्कृष्टा) हैं फिर आपही (साक्षात्) परमात्म स्वरूपिणी हैं ॥ ४५ ॥ हे ईशानि ! सर्वत्र व्यापिनि ! आप रूपसे रहित होनेपरभी सर्वस्वरूपा हैं, हे अमृत स्वरूपिणि ! महामाये ! आपही चित्शक्ति, आपही स्वाहा और आपही स्वधाहैं ॥ ४६ ॥ आपही वषट् और वौषट्की मूर्ति एवं प्रणवात्मिका हैं, आप तो सर्व मंत्र मयी हैं और ब्रह्मादिकभी आपहीसे उत्पन्न हुए हैं ॥ ४७ ॥ हे चतुर्वर्ग फलदायिनि ! धर्म अर्थ काम और मोक्षकीभी आपही मूर्ति हैं, हे जगत्कर्त्री ! यह समस्त संसार आपहीसे उत्पन्न हुआ, और आपहीमें प्रतिष्ठित है ॥ ४८ ॥ स्थूल अथवा सूक्ष्मरूपसे जो कुछ (वस्तु) वर्तमानहै वह दृश्य हो किंवा अदृश्य हो पर उस सबमें आपही शक्तिरूपसे विराजमान हैं, कहीं भी कोईवस्तु आपसे भिन्न (पृथक्) नहींहै ॥ ४९ ॥ हे मातः ! जिस दुर्गासुरने स्वभावतः देवतोंके लिए दैत्यसेनाका विस्तार कियाथा उस महासुरेन्द्रको मारकर आपने हमलोगोंका परित्राण किया, अतएव हे देवि ! प्रणतपालिनि ! आपको छोडकर दूसरे किसके शरणमें हमलोग जासकते हैं ॥ ५० ॥ हे ईश्वरि ! आप जिनपर कृपा कटाक्ष फेरदेतीहैं, इस लोकमें वेही लोग धन, धान्य, समृद्धि, पुत्र, पौत्र, सुन्दर कलत्र और उत्तम मित्रसे परिपूर्ण होतेहैं, और उन्हीं लोगोंके फैलतेहुए चन्द्रकिरणोंके समान शुभ्र यशसे संसार भरजाताहै ॥ ५१ ॥ हे त्रिपुरारिपत्नि ! जिन लोगोंके चित्तमें आपकी भक्ति भरीहै, उनको तो विपत्तिका लेशभी नहीं रहजाता, और जो लोग आपके प्रणाम करनेवालेहैं, उन्हें भला क्लेश कहांसे अनुभव होसकताहै ? योंही जो लोग जन्मभर आपहीका नाम सुमिरन करते रहतेहैं इस संसारमें फिर उनका जन्म कहां होसकताहै ! ॥ ५२ ॥ हे भवानि ! यह तो सभीको विदितहै कि, कोई कैसेहीं दुष्ट क्यों न हो, पर आपके दृष्टिपथपर पडजानेहीसे कभी अधोगतिको नहीं प्राप्त होता परंतु हमलोगोंको तो यही बडा आश्चर्यहै, जो यह दुर्गासुर युद्धमें आपके अमृतो-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१७९

राम दृष्टिपातको पाकरभी मृत्युके वशीभूत होगया !! ॥ ५३ ॥ हे देवि ! दैत्यलोगभी आपके शस्त्रानलमें यहांपर पतंग बनकर पतंग (सूर्य) मंडलको भेदतेहुए स्वर्गमें चले जा रहेहैं, यही कारण है कि प्रणयशील सज्जन लोग दुष्टोंपरभी साधुओंकीनाईं नीच बुद्धि नकरके अपनेही पथका उपदेश देतेहैं ॥ ५४ ॥ हे मृडानि ! हम सब आपको प्रणाम करतेहैं, हे त्रिपुरान्तकमहिषि ! महेशि ! भवानि ! अपने भक्त हम-लोगोंको आप प्रतिपदमें विपत्तियोंसे बँचाकर पूर्व—पश्चिम और उत्तर—दक्षिण दिशा-ओंमें सदैव रक्षा करती रहें ॥

सवैया—रच्छमृडानि ! हमैं तुम पूरव, दक्खिनमें विपदोंसे बँचाओ ।
मात ! भवानि ! सदा कर मोपर, छोह यही विनती मनलाओ ॥
हे त्रिपुरारि पियारि ! सुनो, तुम पच्छिम ओरके दुःख भगाओ ।
हौं तुम भक्त महेशि ! हमैं तुम, उत्तरमें करुना दरसाओ ॥ ५५ ॥

हे ब्रह्माणि ! आप मेरे ऊपरके भागका और हे वैष्णवि ! आप अधः प्रदेशका प्रतिपाल करें, हेदेवि ! आप मृत्युंजयारूपसे ईशानकोण, त्रिनयनारूपसे अग्निकोण, त्रिपुरारूपसे नैर्ऋत्यकोण, और त्रिशक्तिरूपसे वायुकोणमें सदा रक्षा करें ॥ ५६ ॥ हे अमले ! आपका यह त्रिशूल हमलोगोंके केशोंकी रक्षा करे, (हे मातः !) चन्द्र-कलावतंसा हमारे भालस्थल, उमादेवी दोनोंभ्रू, त्रिलोचन बधू दोनों नेत्र, गिरिजा नासिका, जया ओष्ठ, विजया अधरदेश ॥ ५७ ॥ श्रुतिस्वना दोनों कान, श्रीदेवी दंतपंक्ति चंडिका दोनों गाल, वाणी जिह्वा, जयमंगला ठुड्डी कात्यायनी समस्त मुखमं-डल ॥ ५८ ॥ नीलकंठी कंठप्रदेश, वाराही गलेकी घंटी, कूर्मशक्ति स्कंध, ऐन्द्री भुजदंड, पद्मा पाणिफलक ॥ ५९ ॥ कमला हस्तांगुली, विरजा नखश्रेणी, सूर्य मंडलस्था तमोनाशिनी सौरी शक्ति कक्षान्तर, स्थलचरी वक्षःस्थल, धारित्री हृदय, जगदाचरघ्नी दोनोंकोख, ॥ ६० ॥ जगदीश्वरी उदरदरी, नभोगति नाभि, अजादेवी गुह्यदेश, विकटा कटिभाग, परमा नितम्बतल, गुहारणि गुह्यदेश, अपायहंत्री पायुस्थान ॥ ६१ ॥ विपुला ऊरुद्वय, ललिता दोनों घुटना, जयादेवी दोनों जंघा, कठोरतरा नैर्ऋती दोनों घुट्टी, रसातलचरा दोनों पाद, उग्रा पैरकी अंगुरी, चान्द्री पैरके नख और कल्याणिनीदेवी हमलोगोंके तलबाकी सदैव रक्षा करें ॥ ६२ ॥ लक्ष्मीदेवी सर्वदा हम लोगोंके गृहकी, क्षेमकरी क्षेत्रकी, प्रियकरी पुत्रोंकी और सनातनी आयुष्यकी रक्षा करें ॥ ६३ ॥ महादेवी यशकी, धनुर्धरी धर्मकी, कुलदेवी कुलकी, सद्गतिप्रदा सद्ग-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तिकी रक्षा करें ॥ ६४ ॥ शर्वाणी देवी रण, राजकुल, द्यूत, संग्राम, शत्रुसंकट, घो
वन, और जलादिकमें सर्वत्रही बँचावे ॥ ६५ ॥ इसप्रकारसे महर्षि, गंधर्व और
चारणोंके सहित इन्द्रादि देवगण स्तुति करके वारंवार जगज्जननीको प्रणाम करनेलगे
॥६६॥ तदनंतर जगद्धात्रीने संतुष्ट होकर उन सब सुरोत्तमोंसे कहा कि हे देवतागण!
तुम लोग पूर्ववत् अपने अपने अधिकारोंका शासन करते जावो॥६७॥हे सुरोत्तमगण!
मैं तुम लोगोंकी इस यथार्थ स्तुतिसे बहुतही प्रसन्न हूं, अतएव एक औरभी वरदान दे
ताहूं, श्रवण करो ॥ ६८ ॥ दुर्गादेवी बोली—जो मनुष्य पवित्र होकर भक्तिपूर्वक इ
स्तोत्रके द्वारा मेरी स्तुति करेगा मैं पदपदमें उसकी (सब) विपत्तिको विनाश करदूंगी ॥
॥६९॥इस वज्रपंजर स्तोत्रके मध्यवर्ती कवचको जो मनुष्य धारण करेगा उसे कहींभी
कोईभी भय नहीं होने पावेगा ॥७०॥ रणक्षेत्रमें परम दुर्गम दुर्गासुरके मारनेके कारण
आजसे मेरा दुर्गा नाम प्रसिद्ध होगा ॥ ७१ ॥ जो लोग मुझ दुर्गाके शरणागत
होंगे, उनको कभी दुर्गति नहीं भोगनी पडेगी, यह वज्रपंजर नामक परम पवित्र दुर्गाकी
स्तुतिहै ॥ ७२ ॥ इसको कवचरूपमें धारण करनेसे यमराजकाभी भय नहीं होता
कता, भूत, प्रेत, पिशाच, शाकिनी, डाकिनी ॥ ७३ ॥ झोटिंग, राक्षस, कूष्मां
विषधर सर्प, अग्नि, चोर, वेताल, कंकाल, ग्रहगण बालग्रह ॥ ७४ ॥ वातपि
दिसे उत्पन्न तथा विषमज्वर इत्यादि इस उत्तम स्तोत्रके सुननेहीसे बहुत दूर भ
जाते हैं ॥ ७५ ॥ यह वज्रपंजर नामक स्तोत्र दुर्गाकी महिमाका प्रकाशक है
स्तोत्रके द्वारा रक्षित जनको वज्रसेभी कुछ भय नहीं होता ॥ ७६ ॥ जो
इसस्तोत्रसे आठबार अभिमंत्रित करके जल पीवेगा उसे कभी उदरपीडा नहीं हो
॥ ७७ ॥ औरभी, इस स्तोत्रके अभिमंत्रित जलके पीनेसे गर्भकी पीडा दूर हो
और लडकोंके लिये तो परमशांति कारक होगा ॥ ७८ ॥ जगत्में जहांकहीं
स्तोत्र विद्यमान रहेगा वहांपर ये सब शक्तियां मेरेसाथ रहकर ॥७९॥ मेरीही आज्ञा
मेरे भक्तलोगोंकी पूर्णरक्षा करेंगी, इसप्रकारसे देवतोंको वर देकर भगवती अन्तर्ध
होगई ॥ ८० ॥ और उन देवतोंनेभी बडे हर्षसे अपने अपने स्थानको प्रस्थान किय
स्कन्दने कहा—हे महर्षे ! इसीप्रकारसे उन देवीका दुर्गा नाम पडा, अब जैसे क
उनका सेवन करना चाहिये सोभी तुमसे कहताहूं, सुनो ॥ ८१ ॥ अष्टमी,
दर्शी और विशेषकरके मंगलवारको काशीमें दुर्गतिहारिणी दुर्गादेवीका निरंतर पू
करना चाहिए ॥ ८२ ॥ प्रयत्न पूर्वक नवरात्रभर प्रतिदिन पूजन करनेसे वह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१८१

शत्रियोंका नाश करतीं, और सुमतिको देतीं हैं ॥ ८३ ॥ विविध उपचारोंसे पूजन और महा बलिप्रदानके करनेसे दुर्गादेवी काशीमें निस्सन्देह अभीष्ट सिद्धिको देतीं हैं ॥ ८४ ॥ शुभार्थी लोगोंको कुटुम्बके साथ प्रयत्न पूर्वकप्रतिवर्ष चैत्र और कुआ- र के नवरात्रमें उनकी यात्रा करनी चाहिये ॥ ८५ ॥ जो दुर्बुद्धिजन प्रति संवत्सर दुर्गादेवीकी यात्रा नहीं करता, काशीमें उसे पदपदपर सहस्रोंही विघ्न उपस्थित होते हैं ॥ ८६ ॥ जो मनुष्य (नवरात्र भर) दुर्गाकुण्डमें स्नान और सर्वविध दुर्गार्ति- हारिणी भगवती दुर्गादेवीका विधिपूर्वक पूजन करे तो वह नवजन्मके संचित पापोंसे छूटजावे ॥ ८७ ॥ भगवती दुर्गादेवी कालरात्रिप्रभृति शक्तियोंके साथ चारों ओरसे काशीपुरीकी रक्षा करती रहती हैं, अतएव लोगोंको उन सबका पूजन प्रयत्न पूर्वक करना चाहिये ॥ ८८ ॥ इनसे भिन्न और भी दिशाओंकी अधिष्ठात्री देवता महाशक्तियां हैं, वेभी क्रमसे इस अविमुक्त क्षेत्रकी सहस्रों उपद्रवोंसे रक्षा कियाकरती हैं ॥ ८९ ॥ शतनेत्रा, सहस्रास्या, अयुतभुजा, अश्वारूढा, गजास्या, त्वरिता, शववा- हिनी ॥ ९० ॥ विश्वागौरी, और सौभाग्यगौरी इन नवों क्षेत्ररक्षक देवियोंका पूर्वादि आठों, दिशाओंमें और (एक) मध्यमें बडे यत्नसे पूजन करना चाहिये ॥ ९१ ॥ इसी रीतिसे आठ भैरवभी आठों दिशाओंमें नियुक्तहैं, वे लोग निर्वाणलक्ष्मीके स्थान काशीक्षेत्रकी निरंतर रक्षा करते हैं ॥ ९२ ॥ उनके ये नाम हैं, रुरु, चंड, असितांग, कपाली, क्रोधन, उन्मत्त, संहार, और भीषणभैरव ॥ ९३ ॥ इसीभाँतिसे महा- भयंकरमूर्ति, रुंड और मुंडकी मालासे सुसज्जित कर्तनी और खप्पर हाथमें लिये, क्रूर ॥ ९४ ॥ कुत्ताको वाहन बनाये, रक्तमुख, विशालदंष्ट्रा, दीर्घबाहु, नंगीदेह- खिले बालोंको खोले, रुधिर और मद्यके पीनेसे प्रमत्त ॥ ९५ ॥ नानाविधके रूप धरनेवाले, विविध अस्त्रशस्त्रोंको हस्तमें धारण किये, और अपनेही समान करोडहों अनुचरोंसे वेष्टित ॥ ९६ ॥ विद्युज्जिह्व, ललज्जिह्व, क्रूरास्य, क्रूरलोचन, उग्र, विकट- दंष्ट्र, वक्रमुख, वक्रनासिक ॥ ९७ ॥ जंभक जृम्भणमुख, ज्वालानेत्र, वृकोदर, लोलनेत्र महानेत्र, तुच्छनेत्र, अंत्रमंडन ॥ ९८ ॥ ज्वलत्केश, कंबुशिरा, खर्वग्रीव, बृहद्धनु, महानास, लंबकर्ण, कर्णप्रावरण, और अनस ॥ ९९ ॥ इत्यादि क्षेत्रेश और रुधिरप्रिय चौंसठ वेताल, दुराचारी लोगोंको त्रासित करतेहुए चारोंओरसे सदैव क्षेत्रको सुरक्षित रखते हैं ॥ १०० ॥ हे कुम्भज मुने ! मैंने पूर्वमें जो त्रैलोक्य विजयसे लेकर ज्वालामुखी पर्यंत शक्ति-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

योंको वर्णन कियाहै ॥ १ ॥ वे सब चारोंही दिशाओंमें आयुधोंसे सुसज्जित होकर काशीपुरीका रक्षण किया करती हैं बडे बडे विघ्नोंकी शांतिके लिए उन सबोंका प्रयत्नपूर्वक पूजन करना उचितहै ॥ २ ॥ योंही पूर्वोक्त रुरु आदि भैरवोंकी भी सदा पूजा करनी चाहिए क्योंकि वे सबभी काशीमें बडेसे बडे भयोंके दूरकर्ता और सब संपत्तियोंके प्रधान कारणहैं ॥ ३ ॥ और विद्युज्जिह्वप्रभृति उग्रवेताल लोगभी काशीमें पूजा पानेपर बडेही भयंकर विघ्नवृन्दोंको हरलेतेहैं ॥ ४ ॥ यहांपर नाना भाँतिकी भीषण मूर्तिवाले अस्त्रशस्त्रोंसे भूषित एक करोड भूतगणभी इस पुरीकी रक्षामें लगे रहतेहैं ॥ ५ ॥ ये सबभी पदपदपर निर्वाण लक्ष्मीक्षेत्रके पालकहैं, अतएव काशीमें मोक्षार्थी लोगोंको इनसब देवताओंका पूजन अवश्य करना चाहिये ॥ ६ ॥ मनुष्य दुर्गाविजय नामक अनेक शक्तियों (कीकथा) से भरेहुए इस पुण्यअख्यायके श्रवण करनेसे शीघ्रही आपत्तिसे पार होजावेगा ॥ ७ ॥ ये सब जो भैरव कहेगयेहैं और वेतालोंका वर्णन हुआहै, उनके केवल नामभी सुनलेनेसे मनुष्य (कभी) विघ्नोंसे नहीं पीडित होने पाता ॥ ८ ॥ उक्त भूतगण दृष्टिगोचर न होनेपरभी इस कथाके पढनेवाले और सुननेवाले लोगोंकी प्रयत्नपूर्वक रक्षा करतेहैं ॥ ९ ॥ इसलिये जिन लोगोंकी काशीपर (दृढ) भक्ति होवे, उनको तो महाविघ्ननिवारक इस आख्यानको अवश्यही सुनना उचित है ॥ ११० ॥ जिसके घरमें यह उपाख्यान लिखकर सादर रक्खा भी रहेगा, देवता लोग उसके सहस्रोंही आपत्तियोंका नाश कर देवेंगे ॥ १११ ॥ जिसका काशीपर अटल प्रेम होवे उसे बडे आदरके साथ इस वज्रपंजर नामक उपाख्यानको सुनना चाहिये ॥ ११२ ॥

चौपाई—सकल देवग्रह शक्ति विशाला, भैरव भूत प्रेत अरु काला ।
दुर्गा भजे करहिं सब रच्छा, शक्तिमान जग सबसे अच्छा ॥ १ ॥
दोहा—होत सबै कछु शक्तिते, शक्तिहीन कछु नाँहि ।
देखिय शक्ति प्रभाव जग, शक्ति विना केहि मँहि ॥ २ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराण भाषायां चतुर्थे काशीखण्डोत्तरार्धे द्विसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७२ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तिहत्तरवाँ अध्याय।

ओंकारेश्वरका माहात्म्य—वर्णन।

अगस्त्यने पूछा—हे षडानन! भगवान् महेश्वरने जगदम्बाके साथ त्रिलोचन लिंगके समीप जाकर क्या किया? आप उसे शीघ्रतासे बतादेवें ॥ १ ॥ स्कन्दने कहा—हे घटयोने! मुने! तुमने जो जो पूछाहै, उसे मैं कहताहूं, श्रवण करो, जो सर्वसिद्धियोंका दाता विरज नामक पीठ कहा गयाहै ॥ २ ॥ उस पीठके दर्शनहीसे मनुष्य रजोगुणसे रहित होजाताहै, यह (सिद्धपीठ) वाराणसी पुरीमें जहांपर त्रिलोचन महालिंग है ॥ ३ ॥ वहांपर पिलपिलातीर्थके नामसे गंगाके जलमें प्रसिद्ध है, काशीमें यह तीर्थ सर्वतीर्थमय कहाजाताहै ॥ ४ ॥ हे मुनिवर! उसका कारण यहीहै कि, तीनों लोकमें जितने देवता, ऋषि, मनुष्य, नाग, नदी, पर्वत और अप्सरा हैं वे सब वहांपर विराजमान रहतेहैं ॥५॥ इसी कारणसे वह तीर्थ और त्रिलोचन लिंग दोनोंही त्रिविष्टप नामसे आजतक विख्यात और सर्वश्रेष्ठ हैं ॥६॥ हे मुने! भगवान् पिनाकीने जगज्जननीके आगे त्रिलोचन लिंगकी जैसी महिमा कही थी, वैसीही मैंभी तुमसे कहताहूं ॥ ७ ॥ देवीने कहा—हे देवदेव! जगन्नाथ! सर्वप्रद! सर्वव्यापक! समदर्शिन्! सर्वजनक! शर्व! मैं कुछ पूछतीहूं, आप उसे बतादेवें ॥ ८ ॥ यह काशीक्षेत्र—कर्मबीजका महौषध है, और मोक्षलक्ष्मीका मंदिर है, फिर यह आपको जैसे प्याराहै, मुझेभी बहुतही प्रीतिदायक है ॥ ९ ॥ जिस क्षेत्रकी भूके आगे समस्त त्रैलोक्यभी तृणके समान होजाताहै, उसकी पूरीपूरी महिमा यथातथः कौन जान सकताहै? ॥ १० ॥ यहांपर जितनेलिंगहैं वे चाहे स्वयं प्रकट हुएहों अथवा स्थापित कियेगयेहों निस्सन्देह सभी निर्वाणके कारण होते हैं ॥ ११ ॥ हे शंकर! यद्यपि यह बात तो ऐसीही है, पर इस काशीमें कौनकौनसे अनादि सिद्ध लिंगहैं, हे ईश! इसे विशेषरूपसे वर्णन कीजिये ॥ १२ ॥ जहांपर आप शक्तिके सहित प्रलय कालमें भी सदा रहतेहैं और जिनलिंगोंके (विराजमान) रहनेहीसे यह काशी मुक्तिपुरी नामसे प्रसिद्ध हुईहै ॥ १३ ॥ यहांपर जिनके स्मरण मात्रसे पापका क्षय होजाता है, और दर्शन और स्पर्शन करनेसे स्वर्ग एवं मोक्ष मिलताहै ॥ १४ ॥ फिर जन्मभरके बीचमें एकबारभी जिनका पूजन करनेसे काशीके समस्त लिंगोंकी पूजा होजातीहो ॥ १५ ॥ हे करुणामृतसागर! शम्भो! मुझपर अनुग्रह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

करके आप यह बतादेवें, मैं आपके चरणोंपर प्रणत हूं ॥ १६ ॥ हे विन्ध्यारिपो! मुनिसत्तम ! महादेव इस प्रकारसे देवीके सुभाषितको सुनकर, जिनके नाम सुननेहीसे पापोंकी राशियां क्षय होजातींहैं, और पुण्यकी ढेरैं बढ़ने लगतीं हैं काशीके उन सब मुक्तिके हेतु (रूप) महालिंगोंको कहने लगे ॥ १७ ॥ १८ ॥ देवाधिदेवने कहा हे देवि ! इस क्षेत्रके परम गुप्त मुक्तिके कारणको सुनो, इस बातको ब्रह्मा एवं विष्णु इत्यादिभी नहीं जानतेहैं ॥१९॥ हे पार्वति ! इस आनंदवनमें बडे और छोटे असंख्य लिंगहैं, जो नानाविध रत्न, अनेक धातु और बहुतेरे पाषाणके बनेहैं एवं किसनेही तो स्वयंभू लिंग हैं, और बहुतसे देवता और ऋषियोंके स्थापित हैं ॥ २० ॥ ॥२१॥ कितनेही सिद्ध, चारण, गंधर्व, यक्ष और राक्षसोंके पूजित हैं, एवं असुर, नाग, मनुष्य, दानव, अप्सरागण ॥२२॥ दिग्गज, पर्वत, तीर्थ, ऋक्ष, वानर, किन्नर और पक्षी इत्यादिके द्वारा निज नामसे अंकित करके ॥ २३ ॥ स्थापित कियेगयेहैं, हे देवि ! यहांपर ये सब मुक्तिके कारण हैं, हे प्रिये ! (यहांके लिंग) दृश्य हों, अथवा अदृश्यहों, किम्वा दुरवस्थामें पड़े हों ॥ २४ ॥ चाहे समयके फेरफारसे टूटफूट गये हों पर सर्वथा पूजनीय ही हैं, हे सुन्दरि ! एकबार मैंने उनसबोंको सौ परार्ध संख्यातक गिना था ॥ २५ ॥ हे ईशे ! यहांपर गंगाके जलमें साठकरोड सिद्ध लिंग हैं जो कलिकालमें अदृश्य होजाते हैं ॥

दोहा—मिले बहुत यहि वर्षमें, लिंग, मढ़ी प्रत्यच्छ ।
जे गंगा जलसे कढ़े, दशाश्वमेधके कच्छ ॥ २६ ॥

अयिप्रिये ! मेरी गिनतीके दिनसे पीछे मेरे भक्तलोगोंने यहांपर जिन लिंगोंकी स्थापना की है उनकी गिनती नहीं हुई है ॥ २७ ॥ हे सुन्दरि ! अब मैं जिनलिंगोंके विषयमें तुमने पूछा है उनको कहताहूं, अर्थात् जिनके कारण यह क्षेत्र सर्वोत्तम हुआहै, और जो स्वयं मोक्षके हेतुहैं ॥ २८ ॥ हे गिरीन्द्रनन्दिनि ! यद्यपि कलियुगमें वे सब लिंग बहुतही गोप्य होजावेंगे, परंतु उनका जो प्रभाव है वह अपने अपने स्थानपर बनाही रहेगा ॥ २९ ॥ जो लोग कलिकल्मषोंसे पुष्ट, दुष्ट, नास्तिक और शठ हैं वे सब इन सिद्धलिंगोंका नामभी नहीं जान सकेंगे ॥ ३० ॥ हे शुभानने! जिन लिंगोंके केवल नामभी सुन पानेसे पापपुंजका क्षय और पुण्य राशियोंकी वृद्धि होती है ॥ ३१ ॥ (उनमें) प्रथम ओंकारेश्वर, द्वितीय त्रिलोचन, तृतीय महादेव, चतुर्थ कृत्तिवासेश्वर ॥ ३२ ॥ पंचम रत्नेश्वर, षष्ठ, चन्द्रेश्वर, सप्तम केदारेश्वर,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१८५

अष्टम धर्मेश्वर ॥ ३३ ॥ नवम वीरेश्वर, दशम कामेश्वर, एकादश विश्वकर्मेश्वर, ॥ ३४ ॥ द्वादश मणिकर्णिकेश्वर त्रयोदश अविमुक्तेश्वर और चतुर्दश विश्वेश्वर महा लिंगको समझना चाहिये ॥ ३५ ॥ हे प्रिये ! येही चौदहों लिंग मोक्षश्रीके जड हैं, हे सुन्दरि ! इन्हींके जमावडेहीको मुक्तिक्षेत्र कहा गयाहै ॥ ३६ ॥ इस क्षेत्रकी परम अधिष्ठात्री देवता येही हैं और येही आराधना करनेसे मनुष्योंको कैवल्य सम्पत्ति दान करते हैं ॥ ३७ ॥ हे प्रिये ! आनंदवनमें येही चौदहों कथित महालिंग देहधारियोंकी मुक्तिके लिए पूजनीय हैं ॥ ३८ ॥ प्रत्येक मासकी प्रतिपदा तिथिसे आरंभ करके (चतुर्दशी तक) इन मुख्यतम लिंगोंकी यात्रा प्रयत्न पूर्वक करनी चाहिए ॥ ३९ ॥ हे कुम्भज ! इन सब लिंगोंमें महादेवकी आराधना विना किये काशीमें मोक्ष किसे मिलसकताहै ? यह बात वारंवार सत्यही सत्यहै ॥ ४० ॥ अतएव हे मुने ! काशीके फल चाहनेवालोंको सब प्रयत्न उठाकर बडीभक्तिके साथ इनलिंगोंका पूजन करना उचित है ॥ ४१ ॥ अगस्त्यने कहा—हे षण्मुख ! काशीमें येही लिंग मुक्तिके मूल हैं ? अथवा दूसरेभी हैं ? यदि हैं तो उनकोभी वर्णन कीजिए ॥४२॥ स्कन्दने उत्तरदिया—हे सुव्रत ! वहांपर और भी बहुतेरे महालिंग वर्तमान हैं परन्तु कलियुगके प्रभावसे वे सब गुप्तही होजावेंगे ॥ ४३ ॥ जिसकी ईश्वरपर सदैव भक्ति रहती है और जो कोई काशीके तत्त्वोंका बडाही ज्ञाता होताहै वही इन सब नाम लेनेहीसे कलिकलुष नाशक लिंगोंको जान सकता है, दूसरा कोई कभी नहीं जानने पाता ॥४४॥ अमृतेश्वर, तारकश्वर, ज्ञानेश्वर, करुणेश्वर ॥ ४५ ॥ मोक्षद्वारेश्वर, स्वर्गद्वारेश्वर, वह्नेश्वर, लांगलीश्वर, वृद्धकालेश्वर, ॥ ४६ ॥ वृषेश्वर, चंडीश्वर, नन्दिकेश्वर, महेश्वर, और ज्योतीरूपेश्वर, ये चौदह लिंग विख्यात हैं ॥ ४७ ॥ अयि सुन्दरि ! ये भी चौदहों महालिंग काशीपुरी आनन्द काननमें मुक्तिके निदान हैं ॥४८॥ कलियुगके पाप बुद्धि लोगोंसे इनलिंगोंकी बात कभी नहीं कहनी चाहिए, काशीमें जो कोई इन चौदहो लिंगोंकी आराधना करे ॥ ४९ ॥ उसे फिर कबी संसार यात्रामें नहीं लौटना पडे यह काशीका अतुल रत्नभांडार है, अतएव इसे इधर उधर नहीं प्रकट करना चाहिए ॥ ५० ॥ अयि वरानने ! इन लिंगोंका नामोच्चारणभी बडे संकटमें दुःखोंको हर लेताहै, और यही इस क्षेत्रका परम रहस्य विषय है ॥५१॥ हे गिरीन्द्रजे ! अविमुक्त क्षेत्रके हृदय स्वरूप येही चौदहों लिंग मेरे सांनिध्य करनेके कारणहैं ॥ ५२ ॥ सब लोगोंके मुक्तिदायक ये चौदहों लिंग प्रत्येक भुवनोंका सार (सत्त) लेकर अपने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

परम भक्तोंपर कृपा करके मेरेही बनाये हैं ॥ ५३ ॥ इस क्षेत्रमें मुक्ति निश्चय होतीहै यह जो प्रसिद्धिहै उसके कारण मेरे येही चौदहों लिंग हैं ॥ ५४ ॥ हे कान्ते ! जो भक्तलोग आनन्द बनमें इनलिंगोंका ध्यान करते रहतेहैं वेही व्रतधारी और तपस्वी हैं ॥ ५५ ॥ काशीमें जो लोग इनलिंगोंका दर्शन करलेते हैं वे ही लोग योगाभ्यास और दान करनेके फलभागी होतेहैं ॥ ५६ ॥ मुनीश्वरोंने जो इष्टापूर्तके धर्म बनाये हैं उनसबका फल आजन्मसे पाप रहित होकर वही (दर्शक) पाताहै ॥ ५७ ॥ हे पार्वति ! जो कोई अविमुक्त क्षेत्रमें पहुँचकर एकबारभी इनसबलिंगोंका पूजन करसका वह अवश्य ही मुक्त होजाताहै इसमें कुछ सन्देह नहीं है ॥ ५८ ॥ स्कन्दने कहा हे अग्रजन्मन् ! विन्ध्यमान भंजक अगस्त्य ! भगवान् शंकरने अपने भक्त लोगोंके हितार्थ अन्यान्यभी जिनजिन लिंगोंको देवीसे कहाथा उनकोभी श्रवण करो ॥ ५९ ॥ शैलेश्वर, संगमेश्वर, स्वर्लीनेश्वर, मध्यमेश्वर, हिरण्यगर्भेश्वर, ईशानेश्वर गोप्रेक्षेश्वर, वृषभध्वजेश्वर ॥ ६० ॥ उपशांतशिव, ज्येष्ठेश्वर, निवासेश्वर, शुक्रेश्वर व्याघ्रेश्वर और जंबुकेश्वर ये चतुर्दश लिंग हैं ॥ ६१ ॥ हे मुने ! ये चौदहों महायतन हैं, इनलिंगोंके सेवनसेभी मनुष्य मोक्षको पाताहै ॥ ६२ ॥ उत्तम लोगोंको प्रयत्न पूर्वक चैत्रमासकी कृष्ण प्रतिपदा तिथिसे आरम्भकर चतुर्दशी पर्यंत इनलिंगोंकी पूजाकरनी चाहिये ॥ ६३ ॥ मोक्षार्थी लोगोंको उचित है कि, इन लिंगोंकी वार्षिक यात्रा बडे उत्सवके साथ करें, उसके द्वारा संपूर्ण रीतिसे क्षेत्रकी सिद्धि प्राप्त होतीहै ॥ ६४ ॥ हे मुने ! इन चौदहों महालिंगोंका यत्नपूर्वक दर्शन करनेसे कोई भी जन्तु दुःख सागर संसारमें (फिर) नहीं उत्पन्न होसकता ॥ ६५ ॥ (स्वयं भगवान्ने पार्वतीसे कहा था कि) हे प्रिये ! क्षेत्रका यही परम तत्त्व है और निश्चय करके यही संसाररूप रोगसे ग्रस्त लोगोंका परम औषध है ॥ ६६ ॥ यही क्षेत्रकी उपनिषद् है और यही उत्तम मुक्तिका बीज है, अयि प्रियतमे ! यही सब लिंग कर्मरूपी काननके दावानल हैं ॥ ६७ ॥ इन प्रत्येक लिंगोंकी महिमाका आदि और अन्त नहीं है उसे पूर्णरूपसे मैंही जानताहूं, हे देवि ! और तो किसीको ज्ञातही नहीं है ॥ ६८ ॥ हे महर्षे ! यह बात सुन रोमांचित हो सर्वज्ञाता और सर्वस्वदाता भगवान् ईशान देवको प्रणाम करके देवी पूछने लगी ॥ ६९ ॥ भगवतीने कहा—हे (प्राण) वल्लभ ! यह जो (कि) आपने काशीका परम रहस्य कहा इसके सुननेसे मेरा चित्त बहुतही उत्सुक होगया है ॥ ७० ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१८७

हे कारणोंके भी ईश्वर ! आपने जो इन लिंगोंमें प्रत्येकको सर्वोत्कृष्ट और महासार-
तर एवं काशीमें मोक्षका कारण बतायाहै सो ॥ ७१ ॥ हे भुवननायक ! इन सब
श्रवण मात्रसे पाप हरलेने वाले चौदहों लिंगोंमें प्रत्येकका माहात्म्य मुझसे वर्णन कीजिये
॥ ७२ ॥ अतिपुण्यतम प्रसिद्ध अमरकण्टक क्षेत्रसे यह ओंकारेश्वरका लिंग यहां
कैसे आगया ? ॥ ७३ ॥ हे हर ! यह ओंकार किमात्मक है ? (इन ओंकारका)
क्या स्वरूपहै ? इनकी क्या महिमा है ? पहिले इनकी आराधना किसने की थी ?
और फिर आराधना करनेपर इनने क्या वरदान कियाथा ॥ ७४ ॥ पार्वती देवीके
इस वचनामृतको पान करके भगवान् महादेव ओंकार (नाथ) की परम विचित्र
कथा कहने लगे ॥ ७५ ॥ देवदेव बोले—हे अपर्णे ! (पहिले) मैं तुमसे जिस
प्रकारसे ओंकारेश्वर लिंगका यहांपर प्रादुर्भाव हुआहै, वही कथा कहताहूं, श्रवणकरो
॥ ७६ ॥ हे महादेवि ! पूर्वकालमें विश्वकर्ता ब्रह्मा इसी आनंदवनमें उग्रसमाधिको
धरकर बडी भारी तपस्या करने लगे ॥ ७७ ॥ तदनंतर सहस्रयुग बीतजानेपर सातों
पातालोंको फोडकर समस्त दिशाओंको प्रकाशित करतीहुई एक बडी ज्योति सन्मुखही
निकल पडी ॥ ७८ ॥ ब्रह्माके भीतर अन्तःकरणमें निष्कपट (निष्काम) समाधिके
बलसे जो परमज्योति प्रकट हुईथी वही बाहर होगई ॥ ७९ ॥ उस घडी भूमि-
भागके फटनेसे जो चटचटाहट हुई उसी शब्दसे वशी विधाताकी समाधि धीरे धीरे खुल-
गई ॥ ८० ॥ फिर तो ज्योंही ब्रह्माने ध्यान छोड आंखोंको खोलकर देखा त्योंही
वे अपने आगे आदिम अक्षरहीको अवलोकन करने लगे (जिसमें) ॥ ८१ ॥
सत्त्वगुणसे पूर्ण, ऋग्वेदके उत्पत्तिका क्षेत्र, सृष्टिपालक, नारायणात्मक, और तमो-
गुणके पारमें स्थित साक्षात् अकारको ॥ ८२ ॥ तब उसके आगे रजोगुणमय, यजु
र्वेदकी जन्मभूमि, सबकी सृष्टिके कर्ता, अपने रुपके प्रतिबिम्बस्वरूप उकारको ॥८३॥
तत्पश्चात् संकेत मन्दिरकी नाईं निःशब्द (सूनसान स्थानके) समान कृष्णवर्ण
तमोरूप, सामवेदके जन्मस्थल, साक्षात् रुद्रस्वरूप, प्रलयके कारण मकारको देखसके
इसके अनंतर फिरभी विधाताने उसके आगे अपनी दृष्टि फैलाकर देखा कि ॥ ८४ ॥
॥ ८५ ॥ विश्वरूपकी नाईं आकार, सगुण अथच निर्गुण, अकथनीय नादका मन्दिर
परमानन्दकी मूर्ति विराजमानहै ॥ ८६ ॥ जिसे समस्त वाङ्मयका कारण शब्द-
ब्रह्म (अर्थात् वेद) कहा जाताहै, फिर उस नादकेभी ऊपर सर्वप्रधान, कारणोंकेभी
कारण परम जगद्योनि, तपोबलसे नयनगोचर हुए उस बिन्दुरूपको भी ब्रह्माने देखलिया

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

॥ ८७ ॥ ८८ ॥ जो अपने प्रभावसे समस्तलोकोंके अवन (पालन) करनेहीसे ओम् कहा जाताहै अथवा भक्तको उन्नीत करनेके कारणसे जिसे ओम् कहते हैं उसी रूपहीनको रूपधारी होनेपर ब्रह्मा उसे देखसके, जो अपने जपमें आसक्त चित्त भक्तको भवसागरसे पार उतार देताहै, और तारनेहीके कारणसे जिसका तारनाम पडाहै, विधाताने उसेही प्रत्यक्ष किया॥ ८९॥९०॥ परम मोक्षार्थी लोगोंके द्वारा जो बडी स्तुति कियेजानेसे अथवा सर्वापेक्षा अधिक होनेके कारणसे जो प्रणव कहलाताहै ॥ ९१ ॥ एवं अपने सेवन करनेवालेको जो परमपद पर पहुँचादेताहै अतएव शांतमय प्रणवको विधिने विलोकन किया ॥९२॥ जो वेदत्रयका तत्त्वहै, जो साक्षात् परमात्माहै, जो वस्तुतः तुरीयकेभी ऊपर है, और जो सर्वात्मकहै, हंसवाहन ब्रह्माने उसी नादबिन्दुस्वरूपको नेत्रपथपर चढालिया ॥ ॥ ९३ ॥ सब किसीके जन्मस्थान जिससे समस्तअंगोंसे पूर्ण सभी वेदप्रवर्तित (उत्पन्न) हुएहैं, पद्मयोनि ब्रह्माने सन्मुखही उसी वेदादिको नयनोंका अतिथि बनाया ॥ ९४ ॥ जो त्रिगुणसे बंधाहुआ, तेजोमय वृषभ सदैव भोंकरता रहताहै, परमेष्ठी ब्रह्माने उसी परमपुरुषका दर्शन पाया ॥ ९५ ॥ जिसे चार शृंग, सात हस्त, दो मस्तक, तीन चरण हैं विधिने उसी देवको देखा ॥ ९६ ॥ फिर जिसके भीतर भूत भविष्य और वर्तमान सभी लीन रहते हैं, उसी बीजोंसे हीन बीजस्वरूपको ब्रह्माने निरीक्षण किया ॥ ९७ ॥ जिसमें अन्तर्लीन आब्रह्मस्तंबपर्य्यंत यह सब खोजा जाताहै, अतएव सज्जनलोग जिसका सादर पूजन करते हैं ब्रह्मदेव उसी लिंगस्वरूपको देखने लगे ॥ ९८ ॥ (अस्ति, भाति, प्रिय, रूप, और नाम ये) पांचों अर्थ जिसमें भासमान रहते हैं, और (चारोंही वेद और इतिहास—पुराण ये) पांचों ब्रह्म जिसमें भरे रहते हैं, एवं (अकार उकार मकार नाद और बिन्दु) इन पांचोंहीका जो स्वरूपहै ब्रह्माने उसीको देखाथा ॥ ९९ ॥ तदनंतर ब्रह्मदेव प्रपंचसे भिन्न उसी पंचाक्षरमय लिंगरूपी ईश्वरको देखकर शंकरकी स्तुति करने लगे ॥ १०० ॥ ब्रह्मा बोले हे सदाशिव ! आपही अक्षरोंके रूपधारी अकारादि अक्षरोंकी उत्पत्तिके कारण, ओंकार स्वरूपहैं आपको वारंवार नमस्कार है॥ १॥ हे निराकार ! आपही अकार उकार और मकार हैं, आप वस्तुतः रूपाती तहैं पर ऋक्—यजु—और सामवेदोंके रूप आपही हैं अतएव आपको प्रणामहै॥ २॥ आपही नाद बिन्दु और कलाके स्वरूपहैं आप तो लिंगरहित होनेपरभी लिंगात्मकहैं और सर्वलोकोंके स्वरूपहैं, आपको नमस्कारहै ॥ ३ ॥ हे आद्यन्तहीन ! आप तेजोनिधि भव, रुद्र, और सर्वस्वरूपहैं, आपको अनेक प्रणतियां हैं ॥ ४ ॥ आपही उग्र, भीम, और

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१८९

पशुपतिहैं, आप तो तारस्वरूप और सबकिसीके कारणहैं अतः आपको वारंवार नमस्कारहै ॥ ५ ॥ हे शितिकंठ ! आप मायासे शून्यहैं, परममंगलरूप हैं और जटाजूटधारी हैं, आपको बहुतेरे प्रणामहैं ॥ ६ ॥ हे गिरीश ! आपही फल सीचनेवालोंमें श्रेष्ठ, पशुओं (जीवों) पर यज्ञरूपसे रहने वाले बडे, छोटे, मोटे, और वृद्धस्वरूपहैं आपको नमस्कार है ॥ ७ ॥ आपही कुमारके गुरु और कुमारकी मूर्ति हैं, आपही श्वेत, श्याम, रक्त और पीतवर्णहैं, आपको प्रणामहै ॥ ८ ॥ आपही धूमिल मटमैल चित कबरा, पाटल (गुलाबी) और हरिअर वर्णके तेजोधारीहैं आपको प्रणति है ॥ ९ ॥ आप नानावर्णोंके स्वरूपहैं और सभीवर्णोंके पति हैं अतएव आपको वारंवार नमस्कारहै आपही स्वररूप और आपही व्यंजन (वर्णोंके) स्वरूपहैं आपको प्रणामहैं ॥ ११० ॥ आपही उदात्त, अनुदात्त और स्वरितहैं आपही विसर्गके सहित ह्रस्व, दीर्घ, और प्लुतके अधीशहैं ॥ ११ ॥ आपही अनुस्वारके रूपहैं, आपही सानुनासिक और निरनुनासिकहैं, आपही दन्त्य तालव्य ॥ १२ ॥ ओष्ठ्य और उरस्य (कंठ्य) वर्णोंके स्वरूपहैं, ऊष्म, और अन्तस्थ वर्णभी आपहीहैं, अतएव आपके इन सब प्रत्येक रूपोंको नमस्कारहै हे पिनाकधनुर्धर ! आपही पंचम और निषादस्वरके स्वरूप हैं, आपही निषादराजहैं वीणा, वेणु, और मृदंगादिक सब वाद्योंके स्वरूपभी आपही हैं, अतः आपको अनेक नमस्कारहैं ॥ १३ ॥ १४ ॥ आपही उच्चध्वनि, गंभीरशब्द, भयंकरवचन, और कोमलशब्दोंके स्वरूपहैं आपको प्रणामहै, आपही (उनञ्चासों) तानोंकी मूर्ति, और (एक्कीसों) मूर्छनाओंके स्वामीहैं आपको नमस्कारहै ॥ १५ ॥ स्थायी और संचारीके भेदसे आपही भाव स्वरूप हैं आप स्वयं तालोंके स्वरूप हैं और सबेही तालप्रिय हैं एवं लास्य और तांडव इन दोनोंही प्रकारके नर्तनोंके उत्पादक हैं, आपको प्रणाम है ॥ १६ ॥ हे तौर्यत्रिक (नृत्य—गीत—वाद्य) के महाप्रिय ! आपही तो तौर्यत्रिकके स्वरूपहैं, एवं भक्तिभावसे नाचने, गाने और बजानेवालोंको आप मोक्षश्रीका दान करतेहैं ॥ १७ ॥ स्थूल—सूक्ष्म, दृश्य—अदृश्य, और नवीन—प्राचीन सबके स्वरूप आपहीहैं अतएव आपको नमस्कारहै ॥ १८ ॥ आपही वाक्प्रपंचके रूपहैं और आपही वाक् प्रपंचके कारणभी हैं, यद्यपि आप एकही हैं पर आपके भेद बहुतेरेहैं, एवं क्या सत् क्या असत् सभीके स्वामी आपहीहैं अतः आपको प्रणति निवेदनहै ॥ १९ ॥ आपही शब्दब्रह्म और परब्रह्महैं आपको वारंवार नमस्कारहै,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हे पार्वतीश ! आपही वेदान्तवेद्य, वेदपति, वेदस्वरूप, और: वेद गोचरमूर्ति हैं अतएव हे जगदीश ! आपको अनेकशः प्रणतियां हैं ॥ १२० ॥ २१ ॥ हे देवदेवेश ! आपही देवतोंके दिव्य पद प्रदायकहैं, हे महेश्वर ! शंकरस्वरूप ! आपको नमस्कारहै ॥ २२ ॥ हे जगदानन्द ! चन्द्रशेखर ! मृत्युञ्जय ! त्र्यंबक ! हे पिनाकपाणे ! त्रिशूलायुधधारिन् ! त्रिपुरान्तक ! अन्धकनिषूदन ! कंदर्पदर्पदलन ! जालंधरिपो ! आपको अनेकबार नमस्कारहैं, आपही काल और कालकेभी काल, एवं कालकूट विषके भोजनकर्ता हैं, आप भक्तोंके विषादहारी और अभक्तोंके विषाद दाता हैं, आपही ज्ञानहैं, ज्ञानके रूपहैं, और सर्वज्ञहैं, आपको बहुशः प्रणामहै ॥ २३ ॥ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ हे योगसत्तम ! योगियोंकी योगसिद्धिके दाता आपही हैं, और हे तपोधन ! तपस्वीलोगोंकी तपस्याओंकेभी फलोंको आपही देते हैं ॥ २७ ॥ आपही मंत्रोंके स्वरूपहैं एवं मंत्रोंके फलदाताहैं, आपही महादानोंके फलहैं और आपही महादानोंके देनेवालेभी हैं ॥ २८ ॥ हे नाथ ! आपही यज्ञपुरुषहैं, और आपही बडेसे बडे यज्ञोंके फलदाताहैं, आपही सब कुछहैं, आपही सर्वत्रव्यापी हैं, आपही सर्वस्वदायकहैं और आपही समदर्शी हैं, आपको नमस्कारहै ॥ २९ ॥ आपही सर्वभोजी, सर्वकर्ता, और सर्वसंहारकारक हैं, आपही योगियोंके हृदयाकाशमें विराजमान रहते हैं, आपको नमस्कार है ॥ १३० ॥ हे त्राणकारिन् ! सत्त्वमूर्ते ! आपही विष्णुरूपसे शंख चक्र और गदाको धारणकरके त्रैलोक्यमात्रका पालन करते हैं अतः आपहीको प्रणाम है ॥ ३१ ॥ हे नीरजस्क (मोक्ष) पददायक ! आपही रजोगुणका अवलंबन कर विधातारूपसे यथाविधान इस विश्वका सृजन करते हैं, आपको नमस्कार है ॥ ३२ ॥ हे महाश्मशानवासिन् ! आपही महारुद्र, महेश, महाभीम और भुजंगमभूषण हैं ॥ ३३ ॥ हे कृतांतके भी कृतांतक ! आपही तामस शरीरको धर अन्तमें कालाग्निरुद्र होकर प्रलयके प्रवर्तक होजाते हैं ॥ ३४ ॥ हे अज ! आपही प्रकृति और पुरुषरूपसे महत् आदि अखिल जगत्को आंखकी पलक उठाने (खोलने) भरमें फिरसे प्रकट करदेते हैं ॥ ३५ ॥ आपकी दृष्टिका उन्मीलन और निमीलनही सृष्टि और प्रलयके कारण हैं, हे धूर्जटे ! आप स्वेच्छाचारी हैं अतएव यह कपालमाला तो आपकी लीलामात्र है और जो आपके कंठमें नरमुंडमाला शोभित होरही है वह तो स्पष्टही अन्तर्दग्ध सब लोगोंकी बीजमाला है ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ हे शंभो ! आपहीसे यह समस्त संसार चला है, और आपहीपर निर्भर है, आप तो पुराण

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized By eGangotri

१९१

वाङ्मयके भी अंगोचर हैं फिर आपकी स्तुति कौन करसकता है? ॥ ३८ ॥ आपही स्तुतिकर्ता, आपही स्तुति और आपही नित्य स्तुत्य हैं तब फिर मैं केवल "नमः शिवाय" (भर) जानता हूं, और तो कुछ नहीं समझता ॥ ३९ ॥ आपही मेरे शरणदाता, और आपही परमगति हैं, मैं तो आपहीको प्रणाम करता हूं, हे ईश! आपको वारंवार नमस्कार है ॥ १४० ॥ इसी प्रकारसे ब्रह्मा अनेकबार ओंकार नामक महालिंगरूपी महेश्वरकी स्तुतिकरके भूतलपर दण्डवत् प्रणाम करनेलगे॥ ४१ ॥ ईश्वरने कहा—अयि गिरीन्द्रतनये! तब तो मैं ब्रह्माकी परम ऐश्वर्य संपत्तिकी जड(हेतु) उस बडी विचित्र स्तुतिको सुनकर बहुतही संतुष्ट होगया ॥ ४२ ॥ फिर तो मैं मूर्ति हीन होने परभी उसी लिंगसे शंकरकी मूर्ति धरकर ब्रह्मासे कहनेलगा कि, मैं प्रसन्न हूं वर मांगो ॥ ४३ ॥ अनंतर ब्रह्मा (यह सुन) उठ खडे होतेही मुझे प्रत्यक्ष देखकर, फिर जयजयकार करते हुए हाथोंको जोड (मुझे) प्रणाम करने लगे ॥ ४४ ॥ आनंदअश्रुजलसे पूर्णनेत्र और पुलकित शरीर होकर ब्रह्मदेव गद्गद स्वरसे कहने लगे ॥ ४५ ॥ ब्रह्माने कहा—यदि आप मुझपर प्रसन्न हैं, और यदि मुझे वरदान अवश्य किया चाहते हैं, तो हे शंकर! इस महालिंगमें आपका सांनिध्य रहे ॥ ४६ ॥ मुझको यही वरदान कियाजावे, मैं दूसरा कोई वर नहीं चाहता, इसलिंगका ओंकारेश्वर नाम पडे और यह लिंग भक्तलोगोंको एक मात्र मोक्षदायक होवे ॥ ४७ ॥ स्कन्दनेकहा—हे विप्रर्षे! भगवान् शिवने, विधाताका कहना सुनकर उनसे तथास्तु कहदिया॥ ४८ ॥ और उस स्तोत्रसे संतुष्ट होकर तत्क्षणात् बडी तपस्या करनेवाले ब्रह्माको औरभी बहुतसे वरोंको देदिया ॥ ४९ ॥ ईश्वर कहनेलगे—हे सुरश्रेष्ठ! परमतपस्विन्! तुम समस्त वेदोंके निधान होवो, और मेरे अनुग्रहसे तुमको सृष्टि रचनेका सामर्थ्य होवे ॥ १५० ॥ तुम सब किसीके पितामह और सबीलोगोंके माननीय होगे, हे विधे! यह जो शब्द ब्रह्ममय, ओंकाररूप, महालिंग, तुमारीही तपस्याके फल देनेको उत्थित हुआहै, सो इसके आराधन करनेसे पुरुषोंको ब्रह्मपद कुछ दूर नहीं रह जावेगा५१॥ ५२॥ इस आनन्दकाननमें सबलोगोंके मोक्षार्थ, अकार, उकार, मकार, नाद और बिंदु संयुक्त यह लिंग इसरीतिसे शिवपंचायतन कहागयाहै ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ यदि कोई भी जन्तु मत्स्योदरी तीर्थमें स्नानकरके इस ओंकारेश्वरका दर्शन करसके, तो उसे फिर कभी जननीके जठरका दुःख नहीं भोगना पडे ॥ ५५ ॥ यही नादेश्वर लिंग है—यह लिंग बडाही दुर्लभ है, सरस्य मत्स्योदरीके तीरपर दर्शन और स्पर्शन करनेसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यह विशेष मुक्ति देता है ॥ ५६ ॥ इस लिंगमें यह जो कपिलदेवकी ज्योति झलक रहीहै अतएव यह कपिलेश्वर नामक लिंग परम दुर्लभ है ॥ ५७ ॥ जब (वर्षामें) गंगा मत्स्योदरीमें आकर कपिलेश्वरके समीप पहुँच जाती है उस समयपर वहांके नहानेसे मनुष्य ब्रह्महत्यासे छूटजाता है ॥ ५८ ॥ गंगाके जल आजानेसे वरणाके उलटे बहते हुए जलमें स्नानकर फिर नादेश्वरका दर्शन करनेसे मनुष्यको कोईभी शोच नहीं रहजानेपाता ॥ ५९ ॥ अष्टमी और चतुर्दशी तिथिको साठसहस्र तीर्थ सब समुद्रोंके सहित मत्स्योदरी तीर्थमें प्रवेश करतेहैं ॥ १६० ॥ जिस समय गंगा ओंकारेश्वरके पास पहुँचजाती हैं वह परम पुण्यकाल देवता, ऋषि, और पितरोंको बडाही प्रिय है ॥ ६१ ॥ उस समय वहां मत्स्योदरी तीर्थपर ओंकारेश्वरके समीप, स्नान, दान, जप, होम, और देवपूजन इत्यादि जो कुछ किया जावे वह सब अक्षय होजाताहै ॥ ६२ ॥ ओंकारेश्वरके केवल दर्शनहीसे अश्वमेध यज्ञका फल मिलताहै, अतएव काशीधाममें प्रयत्न उठाकर ओंकारेश्वरका दर्शन करना चाहिये ॥ ६३ ॥ जो कहीं नादेश्वरका दर्शन नहीं करसका, उसका दुर्लभ मनुष्यजन्म चतुर्वर्गका एकमात्र साधन होनेपरभी जलके बुल्लेसा व्यर्थही होजाता है॥ ६४ ॥ मत्स्योदरीमें स्नान, पिंडदान, और कपिलेश्वरका दर्शन करनेहीसे मनुष्य पितरोंके ऋणसे छूट जाताहै ॥ ६५ ॥ मोहवश बहुतेरे घोरपातकोंके करने परभी यदि काशीमें ओंकारेश्वरका दर्शन होजाते तो फिर यमराजसे क्यों डरना पडै ॥ ६६ ॥ पितर लोग अपने वंशमें उत्पन्न किसी मनुष्यको ओंकारेश्वरकी यात्राके अभिमुख देखकर हर्षसे नाचनेलगते हैं ॥ ६७ ॥ (कारण यह है कि) वह बुद्धिमान् सन्तान जिसजिस पितरका नाम स्मरण करके प्रणाम करता है, उसे उसे ब्रह्मपद पर पहुंचा देता है ॥ ६८ ॥ एक लाख रुद्रजप करनेसे जो फल मिलताहै, भक्तिपूर्वक ओंकारेश्वरका दर्शन करनेसेभी वही फल अवश्य प्राप्त होता है ॥ ६९ ॥ जिसने आनंदवनमें सर्वाभीष्ट दायक ओंकारेश्वरका दर्शन नहीं किया, उस जन्मधारीकी उत्पत्ति केवल पृथिवीका बोझही बढानेके लिए हुई है ॥ १७० ॥ एक ओंकारेश्वरके दर्शन करनेहीसे समस्त भूमंडल परके सभी लिंगसमूहोंके दर्शन करनेका पुण्य निश्चयही होजाता है ॥ ७१ ॥ मनुष्य यदि ओंकारेश्वरको प्रणामकर किसी दूसरे स्थानपर जाकर मरजावे तो स्वर्गलोकको पहुंचकर फिर काशीमें मोक्षको पाताहै ॥ ७२ ॥ हे ब्रह्मन् ! मैं इस लिंगमें सर्वदा स्थित रहूंगा यह निश्चित है, और इस लिंगके अर्चक लोगोंको सदा मोक्ष दिया

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१९३

करेगा॥७३॥ जो नर प्रयत्न करके एकबारभी यहांपर ओंकारेश्वरको प्रणाम करलेगा वह मेरे परम अनुग्रहसे अवश्य ही कृतकृत्य होजावेगा ॥७४॥ ओंकारेश्वरके पश्चिम-भागमें उत्तम तारतीर्थ है वहांपर स्नानादि जलक्रियाओंके करनेसे मनुष्य दुर्गतिसे निस्तार पाजाताहै ॥ ७५ ॥ जो लोग ओंकारेश्वरके उपासक हैं, उनको कदापि-मनुष्य नहीं समझना चाहिए, वे तो मनुष्यके चमडेसे मढे हुए मोक्षगामी (जीव-न्मुक्ति) साक्षात् रुद्रहीहैं ॥ ७६ ॥ इस लिंगकी महिमा यहांपर दूसरे किसीकी नहीं जानीहुई है क्योंकि, हे विधे ! तुम्हारेही पुण्योदयसे यहांपर यह लिंग प्रकट हुआहै ॥ ७७ ॥ तुम इसी लिंगके प्रभावसे सब बातें तत्वतः जानजाओगे, और हे विधातः ! उसी ज्ञानसे तुम इस चराचर जगत्की सृष्टि करसकोगे ॥ ७८ ॥ भगवान् शंभु पद्मयोनि ब्रह्मदेवको इसप्रकारसे वरदान कर उसी महालिंगमें लीन होगये ॥७९॥ स्कन्दने कहा—हे कलशोद्भव ! आजलों ब्रह्मा उस लिंगको भजाकरते हैं, और अपने बनाये हुए ब्रह्मस्तवके द्वारा स्तुति करते रहते हैं ॥ १८० ॥ मनुष्य इस ब्रह्मस्तवके पाठ करनेसे समस्त पापोंसे छूटता, और महापुण्योंसे पूर्ण हो जाता, तथा परमोत्तम ज्ञानको पाताहै ॥ ८१ ॥ एकवर्षभर तीनों कालोंमें इस ब्रह्मस्तवके पाठ करनेसे अन्तसमयमें वह ज्ञान प्राप्त होताहै, जिसके द्वारा (अनायास ही) बन्धनसे छूट जाताहै ॥ १८२ ॥

दोहा—मछोदरी अब दूर है, तार कुण्डके तीर ।
ओंकारेश्वर नाथ रहि, हरत पापकी भीर ॥ १ ॥
सब वेदनको मूल है, जस ओंकार प्रधान ।
सब लिंगनमें श्रेष्ठ तस, ओंकारेश महान ॥ २ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखंडेउत्तरार्धे भाषायां श्रीमदोंकारेश्वरमाहात्म्य-वर्णनंनाम त्रिसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७३ ॥

चौहत्तरवाँ अध्याय ।

इतिहासके सहित पुनः ओंकारेश्वरका माहात्म्य ।

स्कन्द कहने लगे—हे वातापिभंजन ! पुरातन पाद्मकल्पमें दमन नामक ब्राह्मणकी जो पापहारिणी घटना काशीमें हुई थी उसे श्रवण कीजिए ॥ १ ॥ भारद्वाजके पुत्र एकजनका नाम दमन था, वह यज्ञोपवीत संस्कार होजाने पर समस्त विद्याओंको

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पढकर ॥ २ ॥ संसारको दुःखमय एवं जीवनको क्षणभंगुर समझकर (वैराग्यपूर्वक) अपने घरसे निकलपडा ॥ ३ ॥ फिर तो वह विद्वान् परम निर्वेदको प्राप्त होकर किसी दिशामें चलागया, और प्रत्येक आश्रम, प्रतिपर्वत, प्रतिसमुद्र, प्रतिवन ॥ ४ ॥ प्रतितीर्थ, और प्रत्येक नदियोंमें तपोयुक्त होकर घूमने लगा, वह ब्राह्मण अपनी इंद्रियोंके सहित मनको संयत करके भूमण्डलपर जहां जहां सिद्धक्षेत्र थे वहां वहांपर जाकर वास करनेलगा ॥ ५ ॥ ६ ॥ परन्तु वह अपने मनोनुकूल उपदेशक कहींभी नहीं देखसका, (अन्ततो गत्वा) एकबार उस तपस्वी दमनने दैवयोगसे ॥ ७ ॥ नर्मदा नदीके तटपर अमरकंटकतीर्थ और परम पवित्र ओंकारेश्वरका स्थान देखा ॥ ८ ॥ उसे देखतेही उसका चित्त बहुतही प्रसन्नता और स्थिरताको प्राप्त हुआ, अनंतर वहांपर उस ब्राह्मणने देखा कि, विभूतिसे भूषित शरीर कितनेही पाशुपतव्रतधारी तपोधन लोग लिंगपूजनके अनंतर प्राणयात्राका निर्वाहकर स्थिरचित्तहो अपने गुरुके सन्मुख स्वस्थतापूर्वक बैठकर आगम (शास्त्र) का विचार कररहे हैं । फिर तो वह उनलोगोंको प्रणामकर हाथजोड अत्यंतनम्रतापूर्वक उनके आचार्यके पास जाकर बैठरहा, तब उसे निकटहीमें बैठते देखकर तपस्या करनेसे कृशशरीर, वृद्धतासे समाक्रांत, समस्त तपस्वियोंमें श्रेष्ठ, शिवाराधनमें तत्पर महामुनि गर्गाचार्य्यने पूछा कि, हे सत्तम ! तुम कौनहो ? और यहां कहांसे आते हो ? एवं क्यों तुम इस तरुणावस्थाहीमें विरक्त होगये हो ? सो कहो ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ इस प्रकारसे स्नेहपूर्ण वचनको सुनकर दमनने कहा-हे पूज्य शिवाराधनप्रिय ! पाशुपतोंके आचार्य ॥ १५ ॥ मैं अपने चित्तका व्यापार यथार्थतः आपसे निवेदन करताहूं, मैं ब्राह्मणका लडकाहूं, और वेदशास्त्रमें बडा परिश्रम कियेहूं ॥ १६ ॥ संसारकी असारता समझकर वानप्रस्थ आश्रमका अवलंबन करलियेहूं इसी शरीरसे परमसिद्धिके लाभ करनेकी इच्छासे मैंने ॥ १७ ॥ बहुतेरे तीर्थोंमें स्नान, कोटिशः मन्त्रोंका जप, अनेक देवतोंकी सेवा, कितनेही हवन ॥ १८ ॥ और बहुत दिनोंतक गुरुगणका शुश्रूषण किया, श्मशानोंमें (बैठकर) कितनीही रातें कर्म ॥ १९ ॥ पर्वतोंके शिखरोंपर (टिककर) वास किया, सहस्रों दिव्य औषधियोंसे साधन किया ॥ २० ॥ फिर कितनेही रसायनोंका सेवन किया, यमराजके मुख समान सिद्धोंकी रही हुई बहुतेरी कंदराओंमें बडा साहस करके प्रवेश किया, और बडे बडे यम और नियमोंको धारणकर उत्कृष्ट तपोंकोभी करडाला ॥ २१ ॥ २२ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१९५

परन्तु हे प्रभो ! कहींपर कुछभी सिद्धिका अंकुर नहीं देखपाया, इस घडी भूमंडलमें घूमता घूमता आपके चरणोंमें उपस्थित होनेसे ॥ २३ ॥ मानो सिद्धिको पाकर मनकी बडी स्थिरताको प्राप्त कियाहै अवश्यही आपके मुखकमलसे जो वचन निकलेगा ॥ २४ ॥ उसीसे मेरी परमसिद्धि होगी, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है, अतएव इसी पार्थिव स्थूलशरीरसे जिसमें मेरी परम सिद्धि होवे उस उत्तम उपदेशको आप बतावें, तब दमनके इस वचनको सुनकर गर्गाचार्य प्रत्यक्ष देखेहुए एक बडे उत्तम आश्चर्य (वृत्तान्त) को कहनेलगे, और वहांपर उनके पाशुपतव्रतधारी दृढचित्त मोक्षार्थी शिष्य लोग श्रवण करनेलगे ॥२५॥ ॥ २६ ॥ २७ ॥ गर्गाचार्य बोले, यदि तुम इसी शरीरसे सिद्धिको चाहते हो तो मैं (उसका उपाय) कहताहूं, सावधान होकर सुनो ॥२८॥ अविमुक्त नामक महाक्षेत्र, सज्जनलोगोंको सर्वसिद्धिदायक है, धर्म, अर्थ, काम, और मोक्षका बहुत बडा आकर है ॥ २९ ॥ आश्रित समस्त जन्तुओंके सब कर्मरूप पतंगोंके लिए दीपकी शिखाके समान है, सूर्यकी नाईं अन्धकाररूप अज्ञान समूहका विनाशक है ॥ ३० ॥ वह कर्मरूपी वृक्षोंके लिए दावानल, संसारसागरके लिए वडवानल, मोक्षलक्ष्मीके लिए क्षीरसमुद्र और सुखका संकेत मन्दिर है ॥ ३१ ॥ वह दीर्घनिद्रामें पडेहुए सोनेवालेके लिए बहुत बडी जागरनकी घंटी है, वह आते जाते थके मांदे (श्रमार्त) पथिकप्राणियोंके लिये (मार्गके वृक्ष) लखरांवके समान आश्रयदाता है ॥ ३२ ॥ वह अनेक जन्मके संचित घोरपापरूप पहाडोंके (पक्षकाटनेमें) वज्रधर इन्द्रके तुल्य है, वह अपने नामभी लेनेवाले लोगोंका परम कल्याणकारक है ॥ ३३ ॥ जो भगवान् विश्वेश्वरका सर्वप्रधान राजस्थान है, जो स्वर्ग और अपवर्गका सीमास्थल है, एवं जिसकी भूमी स्वर्गनदी गंगाके तरल तरंगोंसे नित्यही धोआती रहतीहै ॥३४॥ ऐसे सर्वदुःखहारी उस महाक्षेत्रमें हे महामो ! मेरे सामनेही जो घटना हुईथी उसे मैं तुमसे कहताहूं ॥ ३५ ॥ भला जहांपर न तो कालका भय है और न पापहीका डरहै, उस (अविमुक्त) क्षेत्रकी महिमाका पूर्णरीतिसे कौन वर्णन करसकता है ? ॥ ३६ ॥ भूमंडलमें जितनेही जंतुओंके पापनाशक तीर्थ हैं, वे सब अपनी शुद्धिके लिए नित्यही काशीपुरीमें आया करते हैं ॥ ३७ ॥ काशीवासी मनुष्य सर्वभक्षी, और सर्वविक्रयी होनेपरभी जिस गतिको पहुँचता है, वह (गति) दूसरे किसी स्थानमें विविध यज्ञ और दानोंके करनेपरभी नहीं मिलसकती है ॥ ३८ ॥ (अब) रागरूप बीजसे उत्पन्नहुआ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विशाल संसाररूप वृक्ष, काशीमें महानिद्रारूपी कुल्हारीसे कट जानेपर फिर नहीं पनफनेगा ॥ ३९ ॥ समस्त ऊषरोंमें काशीही सर्वप्रधान ऊषर है, क्योंकि उसमें बोनेवालेका बोया हुआ बीज फिर कभी अंखुआताही नहीं है ॥ ४० ॥ संसारमें जो लोग काशीका स्मरण भी करते हैं वे अवश्य साधुही (समझे जाते) हैं और वे सब पापपुंजसे छूटकर उत्तमगतिको प्राप्त होतेहैं ॥ ४१ ॥ सत्यादि सब लोकोंका ऐश्वर्य क्षणभंगुर है, पर स्थिरसंपत्ति तो केवल अविमुक्तक्षेत्रकी है, सो वहभी शिवकी आज्ञा होनेहीपर मिलसकती है ॥ ४२ ॥ अविमुक्तक्षेत्रमें कृमि कीट, और पतंग आदिकोभी शरीर त्यागनेसे जैसी विभूति दिखाई पडतीहै, भला ब्रह्मांडमण्डल भरमें वैसी और कहां है ॥ ४३ ॥ यदि कालक्रमसे मनुष्य कदाचित् वाराणसी पुरीमें पहुंचजावे तो उसे उचित है कि ऐसा उपाय करे जिसमें वहांसे बाहर नहीं निकसना पडे ॥ ४४ ॥ पूर्वमें—मणिकर्णिकेश्वर, दक्षिणमें—ब्रह्मेश्वर, पश्चिममें गोकर्णेश्वर, और उत्तरमें भारभूतेश्वर ॥ ४५ ॥ इतना स्थान अविमुक्तक्षेत्रमें सर्वश्रेष्ठ और महाफलदायक है, जो कोई मणिकर्णिकाकुंडमें स्नान और भगवान् (विश्वेश्वरका) दर्शन कर ॥ ४६ ॥ इस कथितक्षेत्र (अन्तर्गृह) की प्रदक्षिणा करता है उसे राजसूययज्ञका फल मिलताहै, और वहांपर श्राद्ध करनेसे पितरोंका उद्धार होजाता है ॥ ४७ ॥ ब्रह्मांडमंडलमें अविमुक्तके समान साधकोंका सिद्धिदायक दूसरा कोईभी क्षेत्र कहीं नहीं है, यह बात सर्वथा सत्य सत्यहै ॥ ४८ ॥ इस क्षेत्रको शुद्धबुद्धिवाले बडे उग्र, महाप्रमथगण हाथमें पाश और तलवार लेकर दुष्टलोगोंसे निरंतर रक्षा करते रहतेहैं ॥ ४९ ॥ परम भयंकर अट्टहास नामक पारिषद एककरोड गणोंसे वेष्टित होकर रात्रिदिन दुर्वृत्त लोगोंसे इस क्षेत्रके पूर्वद्वारकी रक्षाकरता रहता है ॥ ५० ॥ योंही कोटिगणोंके साथ भूतधात्रीश नामक गण दक्षिणद्वारका रक्षक है और वैसेही गोकर्णनामा गण पश्चिमद्वारका रक्षण करताहै ॥ ५१ ॥ एवं उत्तरद्वारकी रक्षा घंटाकर्ण नामक महागण करताहै, ईशान कोणमें छागवक्त्र, अग्निकोणमें भीषण ॥ ५२ ॥ नैर्ऋत कोणमें शंकुकर्ण और वायव्य कोणमें दमिचंड नामक गण रक्षक नियुक्त हैं । इस प्रकारसे ये सब बडे तेजस्वी गणलोग क्षेत्रकी रक्षा करते रहते हैं ॥ ५३ ॥ गंगाके पारमें रहकर कालाक्ष, रणभद्र, कौलेय, और कालकंपन नामक गणलोग पूर्व ओरकी रक्षा करते हैं ॥ ५४ ॥ असि नदीके पारमें अवस्थित होकर बीरभद्र, नभ, कर्दमालि, नविग्रह, स्थूलकर्ण और महाबाहु नामक गणलोग दक्षिणप्रांतका रक्षण करते हैं ॥ ५५ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

५९७

देहली विनायकके समीपमें टिककर विशालाक्ष, महाभीम, कुंडोदर, और महोदर नामक गण पश्चिमद्वारदेशकी रक्षा करते हैं ॥ ५६ ॥ वरणाके पारमें विराजित होकर नंदिसेन, पंचाल, खरपाद, करंटक, आनंदगोप, और बभ्रु, उत्तरभागका रक्षण करते हैं ॥ ५७ ॥ इस प्रकारसे सुरक्षित पुण्यतम उस महाक्षेत्रमें ओंकारेश्वर नामक लिंगहै, जहांपर अनेक साधक लोगोंने इसी शरीरसे परम सिद्धिका लाभ किया है ॥ ५८ ॥ उस लिंगकी आराधनासे कपिल, सावर्णि, श्रीकंठ, पिप्पल, और अंशुमान् ये सब शैवलोग सिद्ध होगयेहैं ॥ ५९ ॥ वे सबलोग एकबार उस लिंगका पंचोपचार पूजन कर हुडुत्कारके साथ नृत्य करतेहुए उसी लिंगमें लीन होगये हैं ॥ ६० ॥ हे महाबुद्धे ! द्विजसत्तम ! दमन ! वहांका एक और भी विचित्र चरित्र जो हो चुका है (सो) तुमसे कहताहूं ॥ ६१ ॥ हे मुने ! एक भेकी (मेझुकी) वहींपर लिंगके समीपमें घूमती फिरती प्रदक्षिणा करतीहुई शिवको चढाहुआ अक्षत खातीथी ॥ ६२ ॥ परंतु शिवके निर्माल्य भोजन करनेसे वहांपर उसकी मृत्यु नहीं हुई, उसी (निर्माल्य भक्षणके) पापसे वह क्षेत्रके बाहर जाकर मरगई ॥ ६३ ॥ वरन् विषका खालेना अच्छाहै, पर शिवनिर्माल्य कभी नहीं भोजन करना चाहिए, क्योंकि विष तो अकेले एकही जनको मारसकताहै, किन्तु शिवस्व तो पुत्र पौत्रतकको नाशही कर डालताहै,—

दोहा—विष खाये तस हानि नहिं, जस शिवस्वसे होय ।
विष मारतहै एकही, नातीपूतहु सोंय ॥ ६४ ॥

साधुजनोंको उचित है कि, शिवस्व (धन) खाकर जो लोग मोटाये हुए हैं उनका स्पर्शभी न करें, क्योंकि वे सब शिवस्वभोजी गण उसी कर्मके फलसे रौरव नामक नरकके निवासी होते हैं ॥ ६५ ॥ (अस्तु) एकदिन उस भेकीको इधर उधर खुदुकती हुई देख एक कौआ अपने चोंचमें पकडकर उसे क्षेत्रके बाहर उठालेगया ॥ ६६ ॥ क्षेत्रसे बाहर जाकर उस कौवेने भेकीको फेंकदिया, (जिससे वह मरगई) अनंतर वह भेकी कालानुसार उसी उत्तमक्षेत्रमें ॥ ६७ ॥ लिंगकी प्रदक्षिणा और स्पर्श करनेहीसे पवित्र होकर वहींपर पुष्पवटुके घरमें पुण्यवती नाम्नी कन्या उत्पन्न हुई ॥ ६८ ॥ उस कन्याके सब अंगोंकी गढन और शुभलक्षण तो बहुत अच्छे देखाते थे पर निर्माल्यका अक्षत खानेसे उसका मुख गिद्ध (के मुख ऐ) सा होगयाथा ॥ ६९ ॥ वह कन्या बडीही मधुरस्वरवाली, और सम्यक प्रकारसे गीतरहस्य (गानके भेदों) को

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जानती थी, सातों स्वर, तीनों ग्राम, एक्कीसों मूर्च्छना (यें) ॥ ७० ॥ उनचासों तान, एकसौ एक ताल, छवों राग, और उन छवोंरागोंकी पांच पांच स्त्रियां ॥ ७१ ॥ इस रीतिसे छत्तीस राग और रागिनियां होतीहैं जो रागी (गवैया) लोगोंका आनंद बढातीहैं फिर देश और कालके विशेषभेदसे पैंसठ राग और रागिनियां और भी होतीहैं, ॥ ७२ ॥ (सुतरां) जितनेही तालहैं, उतनेही राग (और रागिनियां) भी होते हैं इस प्रकारसे (गंधर्वउपवेदके) उपनिषद्से वह शुभव्रता ॥ ७३ ॥ मधुरालापा माधवी सदैव ओंकारेश्वरका पूजन करने लगी, वह पुष्पबटुकी दुहिता अमूल्य तरुनाई पानेपरभी ॥ ७४ ॥ पूर्वजन्मकी वासनाके बलसे ओंकारेश्वरहीको बहुत मानती थी । हे दमन ! स्वभावतः चंचल होनेपरभी महात्माजनका चित्त योगाभ्याससे जिस भाँति स्थिर होजाताहै, तैसेही उस लिंगके सेवनसे उसकाभी मन स्थिर होगयाथा, उसे दिनमें क्षुधा, पिपासा और रात्रिमें निद्रा कातर नहीं बना सकतीथी ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ वह उस लिंगके दर्शन करनेमें निरालस्य मन रहती थी, रात्रिदिनमें उसकी आंखोंकी जितनीही पलकें पडती थीं ॥ ७७ ॥ वह साध्वी कन्या उतने समयको विघ्नही समझती थी, (वह शोचती थी कि) "लिंगदर्शनके विना जितना मेरा समय निमेष गिरनेमें व्यर्थ बीतगया उसका प्रायश्चित्त कैसे होसकताहै" ॥ ७८ ॥ वह कन्या इसी प्रकारकी चिन्ता करतीहुई ओंकारेश्वरका सेवन करतीरही, वह (कभी) जलकी तृषा लगनेपर लिंगहीके नामामृतको पीलेतीथी ॥ ७९ ॥ उसकी कानोंतक फैलीहुई (बडी बडी) आंखें, सज्जनोंके हृदयाकाशवासी ओंकारेश्वरको छोडकर दूसरी ओर कभी जातीही नहींथीं ॥८०॥ उसके कानोंमें दूसरे शब्द पडतेही न थे, उसके दोनों हाथ ओंकारेश्वरकी माला गूँथनेमें बडेही पक्के होगयेथे ॥ ८१ ॥ उसके चरण युगलभी मोक्षलक्ष्मीसे शोभित ओंकारेश्वरके आंगनको त्यागकर अन्यत्र कहींभी सुखकी इच्छासे नहीं विचरतेथे ॥ ८२ ॥ ब्रह्मप्रकाशक, प्रणववाच्य, परमसार, (स्थिर) त्रिवेदस्वरूप, शब्दब्रह्म, नादबिंदु और कलाके आश्रय ॥ ८३ ॥ सदक्षर, आदिस्वरूप, विश्वरूप, कार्यकारणात्मक, वरेण्य, वरप्रद, वर (सर्वश्रेष्ठ) शाश्वत, शांत, ईश्वर ॥८४॥ सर्वलोगोंके एकमात्र जनक, सब किसीके पालक, सबीलोगोंके संहारक एवं समस्त लोकोंसे वंदित ॥ ८५ ॥ आदिअन्तसे हीन, नित्य, शिव, शंकर, अव्यय, अद्वितीय त्रिगुणातीत, भक्तहृदयवासी, ॥ ८६ ॥ निरुपाधि, निराकार, निर्विकार, निरंजन, निर्मल, निरहं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१९९

कार, निष्प्रपंच, निजोदय (स्वप्रकाश) ॥ ८७ ॥ स्वात्माराम, अनन्त, सर्वव्यापी, सर्वदर्शी, सर्वस्वदाता, सर्वसुखास्पद, सब कुछ ओंकारेश्वरही हैं ॥ ८८ ॥ यही बात उसकी जिह्वा रातदिन कहा करतीथी, और कभी दूसरे किसीका नामभी नहीं लेतीथी ॥ ८९ ॥ उसकी रसना अहर्निश ओंकारेश्वरहीके नामाक्षरका रस चीखा करती थी, और दूसरे रसोंको तो जानतीभी नहींथी ॥ ९० ॥ माधवी वहांपर प्रतिदिन मंदिरके चारोंओर झार बोहार देती और चित्रकारी बनाती एवं पूजाके पात्रों (पुजहाई) को मांज धो देतीथी ॥ ९१ ॥ उस स्थानपर ओंकारेश्वरकी पूजा करनेवाले (पुजारी) जो पाशुपत लोग रहतेथे, वह कन्या पिताकी बुद्धिसे भक्तिपूर्वक उन लोगोंकी शुश्रूषा करतीथी ॥ ९२ ॥ एकबार वैशाख मासकी शुक्ला चतुर्दशीके दिन उपवास और रात्रिमें जागरण करके वह माधवी ॥ ९३ ॥ प्रातःकाल जबकि यात्राके लिये इकट्ठे हुए भक्तलोग इधर उधर चलेगये तब बडे हर्षके साथ मंदिरको झाड बोहारकर लिंगकी पूजाकरनेके उपरान्त ॥ ९४ ॥ मधुर गीतको गाती और भक्तिके आवेशमें आकर नाचती एवं ओंकारेश्वरलिंगका ध्यान करतीहुई उसी लिंगमें लीन होगई ॥ ९५ ॥ हमलोगोंके प्रधान आचार्य तपस्वियों देखतेही देखते वह महाबुद्धिमती कन्या इसी पार्थिव शरीरसे आकाशमें गईहुई जो ज्योति उसलिंगसे निकली उसीमें ज्योतीरूप होगई ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ आजतक उस क्षेत्रके निवासी लोग, वैशाख मासकी शुक्ला चतुर्दशीको बडे उत्सवके साथ वहां (पर ओंकारेश्वर) की यात्रा करते हैं ॥ ९८ ॥ वहांपर (उक्त) चतुर्दशीके दिन उपवास और जागरणकरनेसे चाहे कहींपर मरे परन्तु (अन्तसमयमें) परम ज्ञान उत्पन्न होजाताहै ॥ ९९ ॥ ब्रह्मांडके भीतर सर्वत्रके जितनेही तीर्थ हैं वे सब वैशाखकी शुक्लाचतुर्दशीको ओंकारेश्वरके दर्शनार्थ (काशीमें) आते हैं शिवपुराणमेंभी यह बात पाई गईहै, यथा "ब्रह्माण्डोदर मध्ये तु यानि तीर्थानि सुव्रते । वाराणस्यां गमिष्यंति वैशाखस्य चतुर्दशीम्" ॥ १०० ॥ लिंगके सन्मुखही श्रीमुखी नाम्नी परमोत्तम गुफा है जो पाताल (जाने) का द्वारहै; उसमें सिद्धलोग रहतेहैं ॥ १ ॥ जो लोग उत्तमव्रत धारणकरके पांचरात उस गुहामें वास करते हैं उनको नागोंकी कन्यायें दिखाई पडतीहैं और वे सब शुभाशुभ (कर्मों) को कह देतीहैं ॥ २ ॥ उस गुहाके उत्तरभागमें एक रसोदक नाम कूप है, छः मास पर्यंत उसका जल पीनेसे साक्षात् ब्रह्मरसायन पानकरनेका स्वाद मिलनेलगताहै ॥ ३ ॥ वहींपर नादकी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उत्पत्तिका स्थान नादेश्वर नामक लिंग वर्तमान है, जिसके दर्शनसे समस्त नादात्मक विश्व (उसका) श्रवण गोचर होनेलगताहै ॥ ४ ॥ वहांपर गंगा और वरणाके जलसे परिपूर्ण मत्स्योदरीतीर्थमें स्नानकरके मनुष्य कृतकृत्य होजाताहै और उसे फिर कभी (कहींपर) शोक नहीं करना पडता ॥ ५ ॥ ओंकारेश्वरके (असंख्य) सेवक लोग इसी पार्थिवशरीरसे दिव्यरूप होकर तुरत परम सिद्धिको प्राप्त होगये हैं ॥ ६ ॥ (प्रथमतो) समस्त ब्रह्माण्डभरमें अविमुक्तक्षेत्र सबसे प्रधान है, उसमेंभी मत्स्योदरीके तीरपर ओंकारेश्वरका स्थान तो आरभी श्रेष्ठहै ॥ ७ ॥ ओहो !! जिन लोगोंने काशीमें ओंकारेश्वरको न प्रणामही किया न पूजनही किया, वे सब (अपनी) माताकी तरुनाई बिगाडनेके लिये क्यों उत्पन्न हुए ? ॥ ८ ॥ हे द्विजोत्तम ! जबसे भगवान् विश्वेश्वर मंदराचलसे आनन्दवनमें आये हैं तबसे ॥ ९ ॥ वहांपर समुद्र, पर्वत, नदी, तीर्थ, और द्वीपोंके सहित सबी (देवता) आयतन चलेगये हैं ॥ ११० ॥ हे मुने ! इस घडी तुमने मेरे भाग्यहीसे मुझे स्मरण करादिया, मैंभी आताहूं, धीरे धीरे काशीहीको चलूंगा ॥ ११ ॥ ये सब महापाशुपतव्रतधारी मेरे शिष्यलोगभी काशी चलनेके अभिलाषी हैं क्योंकि ये तो सभी कोई मोक्षार्थी ही ठहरे ॥ १२ ॥ जिन लोगोंने वृद्धावस्थामेंभी काशीका सेवन नहीं किया, वे सब इस परम दुर्लभ मनुष्य जन्मके बीतजानेपर फिर कहांसे महासुख पासकतेहैं ? ॥ १३ ॥ जबतक इन्द्रियां विकल नहीं होजातीं, किंवा आयुष्यका क्षय नहीं होजाता, तबीतक शंकरका आनन्दकानन प्रयत्नपूर्वक सेवनीय है ॥ १४ ॥ जो लोग श्रीके मन्दिर महादेवके आनंदवनमें आश्रय लेलेते हैं उन सब महासुखके प्रधान अवलंबनरूप लोगोंको लक्ष्मी अचल होकर कभी छोडतीही नहीं है ॥ १५ ॥ इस प्रकारसे पाशुपतश्रेष्ठ गर्गाचार्य इस रमणीय कथाको कहकर भरद्वाजनन्दन दमनके साथ वाराणसी पुरीमें जा पहुँचे ॥ १६ ॥ और वह धर्मात्मा दमनभी गर्गाचार्यके साथ श्रीमान् ओंकारेश्वरकी आराधना करके उसी लिंगमें लीन होगया ॥ १७ ॥ स्कन्दने कहा—हे इल्वलरिपो ! अविमुक्तक्षेत्रमें ओंकारेश्वर एक प्रधानस्थान हैं, क्योंकि हे मुने ! वहांपर बहुतेरे साधकलोग परमसिद्धिको प्राप्त होचुके हैं ॥ १८ ॥ कलियुगमें पापहृदय और विशेषकरके नास्तिक लोगोंके आगे इस ओंकारेश्वरके माहात्म्यको कभी नहीं कहना चाहिए ॥ १९ ॥ जो बुद्धिहीनलोग महादेवकी निन्दा करें, किंवा क्षेत्रकी निन्दाकरें अथवा पुराणकी निन्दाकरें उनके साथ

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२०१

कहींपर (कभी) बातचीत नहीं करनाचाहिए ॥ १२० ॥ भूतलमें ओंकारेश्वरके समान दूसरा कोईभी लिंग नहीं है,—यह बात निश्चितरूपसे महादेवने गौरीदेवीसे कही है ॥ १२१ ॥ मनुष्य तद्गतचित्त होकर इस अध्यायको श्रवणकरे तो सब पापोंसे विमुक्त होकर शिवलोकमें प्राप्तहोताहै ॥ १२२ ॥

दोहा—ओंकारेश्वरनामसे, रह्यो ग्राम जो ख्यात।
हुक्कालेसन नाम धरि, वह महाल कहिजात ॥ १ ॥
यदपि जवन गन भग्नकरि, विनशायो तेहि नाम।
पर अजहूं अति रम्यहै, ओंकारेश्वर धाम ॥ २ ॥

इति श्रीस्कंदपुराणे चतुर्थे काशीखंडे उत्तरार्धे भाषायां चतुःसप्ततितमोऽध्यायः ॥७४॥

पचहत्तरवाँ अध्याय।

त्रिलोचनका माहात्म्य।

अगस्त्य बोले—हे विशाख! महापातक नाशिनी इस ओंकारेश्वरकी कथाके श्रवण करनेसे मेरी तो तृप्तिही नहीं होतीहै सो अब आप त्रिलोचनेश्वरलिंगकी कथा कीर्तन करें ॥ १ ॥ हे महाबुद्धे। षण्मुख! भगवान् महादेवने भगवतीसे फिर त्रिलोचनलिंगके प्रकट होनेकी कथा किस प्रकारसे कही थी? ॥ २ ॥ स्कन्द कहनेलगे—हे मुने! देवदेवने त्रिलोचनकी उत्पत्तिके विषयमें जो श्रमनिवारिणी कथा कहीथी उसे मैं कहताहूं, श्रवण करो ॥ ३ ॥ (वह स्थान काशीमें) विरजापीठनामसे प्रसिद्धहै और वहांपर जो लिंग है, वह त्रिविष्टप कहाताहै, उस पीठके दर्शनहीसे मनुष्य रजोगुणसे रहित होजाताहै ॥ ४ ॥ हे घटोद्भव! त्रिलोचनसे दक्षिणकी ओर तीन नदियां मिलीं हुई हैं, और वे तीनोंही पातक हारिणी हैं ॥ ५ ॥ केवल उसी लिंगके स्नान करानेके लिए, सरस्वती, यमुना और परमशर्मदा नर्मदा ये तीनोंही साक्षात स्रोतकी मूर्ति धारण किये थीं ॥ ६ ॥ वे तीनोंही नदियां हाथमें कुंभ लेकर महातेजस्वी उस त्रिविष्टप महालिंगको त्रिकाल स्नान कराती हैं ॥ ७ ॥ और उसी लिंगके तीन ओर उन तीनों नदियोंने अपने अपने नामानुसार तीन लिंगोंको स्थापित किया है, उन लिंगोंके दर्शन करनेसे लोगोंको उन नदियोंमें स्नान करनेका फल प्राप्त होताहै॥ ॥ ८ ॥ त्रिविष्टपके दक्षिणभागमें सरस्वतीश्वर लिंगहै, जो दर्श स्पर्शसे जडताको

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दूरकर सारस्वत पदको देताहै ॥ ९ ॥ पश्चिमओर यमुनेश्वर लिंगहै, जो भक्तिपूर्वक पूजन करनेसे पापी मनुष्योंकोभी यमलोकके भयको हटा देताहै ॥ १० ॥ एवं त्रिलोचनके पूर्व परम शर्म (कल्याण) प्रद नर्मदेश्वर लिंग है, जिसका पूजन करनेसे मनुष्योंको फिर गर्भवास नहीं होने पाता ॥ ११ ॥ त्रिविष्टपके समीपही पिलपिला तीर्थमें स्नान और त्रिलोचनलिंगका दर्शन करलेने पर फिर किस बातका शोच रहजाताहै ? ॥ १२ ॥ (कहांलों कहें) यदि मनुष्य त्रिविष्टपलिंगका स्मरणभी करसके तो वह त्रिविष्टप (स्वर्ग) का अधिपति होवे, इसमें कुछ विचार नहीं करना चाहिए ॥ ॥ १३ ॥ त्रिविष्टपके दर्शन करनेवाले निस्सन्देह ब्रह्मपदको प्राप्त होजाते हैं एवं इस संसारमें वेही परम बुद्धिमान् और कृतकृत्य समझेजाते हैं ॥ १४ ॥ आनंदवनमें जिन लोगोंने त्रिविष्टप लिंगको प्रणाम किया, अथवा जिन शुद्धबुद्धिमानोंने त्रिलोचनका नामभी सुनलिया ॥ १५ ॥ वे लोग जगत्में सात जन्मके संचित पापोंसे निस्सन्देह पवित्र होचुके ! पृथिवीपर जितनेही लिंगहैं उनके दर्शनसे जो फल होताहै ॥ १६ ॥ काशीमें त्रिविष्टप लिंगके दर्शन करलेनेसे मैं समझताहूं कि उससेभी अधिक फल प्राप्त होताहै, (क्योंकि) काशीमें त्रिविष्टप लिंगके दर्शन करनेसे समग्र त्रिविष्टप (स्वर्ग) ही दृष्ट होजाताहै ॥ १७ ॥ क्षणमात्रमें वह मनुष्य निष्पाप होजाता और उसे फिर कभी गर्भभागी नहीं होना पड़ता, जो उत्तरवाहिनी गंगाके जलमें पिलपिला तीर्थपर स्नान करताहै, उसे समग्र तीर्थस्नान और समस्त यज्ञस्नानका फल प्राप्त होताहै । जहाँपर परमपवित्र तीनोंही नदियां साक्षात् वास करतीहैं, वहांपर श्राद्ध कर सके तो गयामें श्राद्ध करनेका कौन प्रयोजन है ? पिलपिलातीर्थमें स्नान तथा पिंडदान एवं त्रिविष्टप लिंगका दर्शन करनेसे कोटितीर्थ करनेका फल प्राप्त होताहै । अन्य स्थानके उपार्जित पाप केवल काशीके दर्शनहीसे दूर होजातेहैं ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ किन्तु काशीमें जो पाप कियाजाताहै वह तो पिशाचही बना देताहै, (तब रहा यह कि) यदि शिवके आनंदकाननमें प्रमादका कोई पातक होजावे तो ॥ २२ ॥ वह भी त्रिविष्टप लिंगके दर्शन करनेसे छूट जाताहै समस्त भूमंडलमें आनन्दकाननही सबसे श्रेष्ठहै, ॥ २३ ॥ उसमें तीर्थस्थान और भी श्रेष्ठहैं, उन सबोंमेंभी ओंकारेश्वरका स्थान प्रधान है, मोक्षमार्गदर्शक ओंकारेश्वर महालिंगसेभी ॥ २४ ॥ श्रेयोरूप त्रिलोचनलिंग अत्यंत श्रेष्ठतर है ॥ २५ ॥ जैसे तेजस्वियोंमें सूर्य, और दर्शनीयोंमें चन्द्रहैं, वैसेही सब लिंगोंमें त्रिलोचनलिंगभी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२०३
प्रधान है ॥ २६ ॥ असाधारण महासुखकी खानि निर्वाणलक्ष्मीकी परम पदवीभी त्रिलोचनके पूजकोंको कुछ दूर नहीं रहजाने पाती ॥ २७ ॥ त्रिलोचनके एक बारकी पूजासे जो कल्याण प्राप्त होताहै, अन्य लिंगोंका जन्मभर पूजन करने परभी वह फल नहीं मिलसकता ॥ २८ ॥ जो महाबुद्धिमान् लोग काशीमें त्रिलोचन लिंगका अर्चन करतेहैं, वे सब मेरी प्रीतिके चाहनेवाले सबी त्रिलोकवासियोंके पूज्य हैं ॥ २९ ॥ मनुष्यगण, सब प्रकारसे संन्यास ले पाशुपतव्रतको धारणकर, फिरभी नियमोंसे च्युत होनेपर क्यों डरते हैं ? ॥ ३० ॥ जब कि महापातकावलीके संहारक मोक्षके कोशागार, पुण्योंकी राशि, त्रिविष्टप महालिंग विद्यमानही है ॥ ३१ ॥ एक बारभी त्रिलोचन महालिंगके पूजन करनेसे सैकडोंजन्मके बटोरे हुए सब (पुराने) पाप छूटजाते हैं ॥ ३२ ॥ ब्रह्मघाती, मद्यप, (सुवर्णका) चोर, गुरुपत्नीगामी, एवं वर्षभरतक इन सबोंका संसर्ग करनेवाला ये सब महापापी कहेजाते हैं ॥ ३३ ॥ एवं परस्त्रीगामी, परहिंसक, परनिन्दक, विश्वासघाती ॥ ३४ ॥ कृतघ्न, भ्रूणहा, वृषली (शूद्रा) पति, माता, पिता, और गुरुका त्यागदेनेवाला, आग लगानेवाला, विष खिलानेवाला ॥ ३५ ॥ गोघाती, स्त्रीघाती, शूद्रघाती, कन्यादूषक, क्रूर, पिशुन, स्वधर्मविमुख, ॥ ३६ ॥ निन्दक, नास्तिक, कूटसाक्षी, अपवादक, अभोज्यभोजी एवं अविक्रेय—विक्रयी ॥ ३७ ॥ इन सब पापोंके करनेवाले मनुष्यभी त्रिलोचनलिंगको प्रणाम करके इन सब पापोंसे छुटकारा पासकतेहैं पर एक शिवनिंदककी निष्कृति नहीं होती ॥ ३८ ॥ जो मूढजन शिवका निन्दक हो, अथवा शिवशास्त्रोंकी निन्दामें तत्पर रहे, उसका निस्तार शास्त्रमें कहींपर किसीने नहीं देखाहै ॥ ३९ ॥ जो महाप्राज्ञ शिवकी निन्दा करे उसे आत्मघाती, और त्रैलोक्यघाती, एवं बोलनेके अयोग्य समझना चाहिए ॥ ४० ॥ जो लोग शिवकी निंदा अथवा शिवभक्तोंकी निन्दा करते हैं, वे जबतक चन्द्र सूर्य हैं घोर नरकमें पडतेहैं ॥ ४१ ॥ काशीमें मोक्ष चाहनेवालोंको प्रयत्नपूर्वक शैवोंकी पूजा करनी चाहिये, क्योंकि उन लोगोंके पूजनसे निस्सन्देह शिव प्रसन्न होते हैं ॥ ४२ ॥ संसारमें समस्त पापोंका प्रायश्चित्त करनाहो तो प्रमाणज्ञोंको निःशंक होकर यही बात कहनी चाहिये कि ॥ ४३ ॥ "यदि पापसे भयभीत होकर प्रायश्चित्त किया चाहते हो, और हमारे वचनको यदि शास्त्रके प्रमाणसे सत्य मानतेहो तो ॥ ४४ ॥ सबको छोड मनमें दृढनिश्चय करके आनन्दकाननमें जहांपर स्वयं विश्वेश्वर विराजमान हैं चलेजाओ" ॥ ४५ ॥ जहांपर क्षेत्रमें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रवेश करतेही विश्वासीलोगोंको पापपुंज कोई बाधा नहीं पहुँचा सकते और बडा धर्म प्राप्त होताहै ॥ ४६ ॥ वहांपर तीन नदियोंसे सेवित, अत्यंतनिर्मल, त्रिलोचनके दृष्टिपातसे महापापोंके दूर करदेनेवाले, परमपवित्र, त्रिस्रोत पिलपिलानामक तीर्थमें गृह्योक्त विधिसे स्नान और पितरोंका तर्पण ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ एवं वित्तशाठ्यको छोडकर यथाशक्ति दान और त्रिविष्टपलिंगका दर्शन तथा परम भक्तिपूर्वक विविध गंध पंचामृत, माल्य, धूप, दीप, नैवेद्य, वस्त्र, बहुतसे भूषण ॥ ४९ ॥ ५० ॥ घंटा, दर्पण चामर, विचित्र—ध्वजा पताका, इत्यादि पूजाके उपकरण द्रव्य, नृत्य, वाद्य, उत्तम गान, ॥ ५१ ॥ जप, प्रदक्षिणा, नमस्कार, और पारिचारक (पुजारी) लोगोंको सहर्ष पारितोषिक दान इत्यादिके द्वारा विधिवत् पूजन करके ॥ ५२ ॥ "मैं निष्पाप होगया" ऐसा कहता हुआ ब्राह्मणोंसेभी कहवालेवे (बस) प्राज्ञजन ऐसा करनेसे आजभी क्षणभरमें पापरहित होजाताहै ॥ ५३ ॥ तदनंतर पंचगंगामें फिर मणिकर्णिका कुंडमें स्नान और विश्वेश्वरका पूजन करे तो परम पुण्यका भागी होजावे ॥ ५४ ॥ यह महापातकशोधक प्रायश्चित्त कहागयाहै इसे काशीके माहात्म्यकी निन्दा करनेवाले तथा नास्तिकोंसे कभी नहीं कहना चाहिये ॥ ५५ ॥ हे घटयोने ! यदि धनके लोभसे (नास्तिकको) यह उत्तम प्रायश्चित्त बतादेवे तो दाता नरकगामी होताहै यह सर्वथा सत्यही सत्यहै ॥ ५६ ॥ संपूर्ण पृथिवीकी प्रदक्षिणा करनेसे जो फल मिलताहै प्रदोषकी वेला काशीमें त्रिलोचनकी सात फेरी देनेसेभी वही फल प्राप्त होताहै ॥ ५७ ॥ काशीपुरीमें सर्पकी मेखलासे भूषित त्रिविष्टपलिंगका दर्शन करने पर यदि कहीं अन्यत्र मृत्यु होजावे तो फिर वह मनुष्य दूसरे जन्ममें मुक्त होजाताहै ॥ ५८ ॥ अन्यत्र सब लिंगोंमें विशेष पुण्यकाल होताहै, परन्तु त्रिविष्टपलिंगके विषयमें लोगोंका रातदिन सदैव पुण्यकाल बनारहताहै ॥ ५९ ॥ यद्यपि ओंकार इत्यादि लिंग बडेही पापनाशक हैं, परन्तु हे पार्वति ! त्रिलोचन लिंगकी शक्ति कुछ दूसरीही है ॥ ६० ॥ हे अपर्णे ! जिस कारणसे यह लिंग सब लिंगोंकी अपेक्षा परम उत्तमहै, उसे मैं कहताहूं, कानलगाकर सुनो ॥ ६१ ॥ पूर्वकालमें यह महालिंग मेरी योगावस्थाहीमें भुवस्तलसे सातों पातालोंको भेदकर सबके आगेही निकल आयाथा ॥ ६२ ॥ हे गौरि ! इसी लिंगमें अत्यंत गुप्तरूपसे स्थित होकर मैंने तुमको त्रिनेत्र दिया था जिससे तुम उत्तम दर्शन करने लगी थी ॥ ६३ ॥ हे देवेशि ! तबीसे त्रैलोक्यवासीगण ज्ञानदृष्टिके देनेवाले इस लिंगको त्रिलोचननामसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२०५

कहनेलगे ॥ ६४ ॥ जो लोग त्रिलोचनलिंगके भक्तहैं, वे सब स्वयं त्रिलोचन होकर मेरे पारिषद होजाते हैं, और जीवन्मुक्त बने रहते हैं ॥ ६५ ॥ हे महेश्वरि ! त्रिलोचनलिंगकी महिमाको मैंनेही छिपा रक्खाहै, इसीसे उसे कोईभी ठीक ठीक नहीं जान सक्ता ॥६६॥ वैशाखमासकी शुक्ला तृतीयाको पिलपिलाह्रदमें स्नानकर भक्तिभावसे उपवासी हो रात्रिमें जागरण कर ॥ ६७ ॥ त्रिलोचनलिंगकी पूजा करै प्रातःकाल फिर वहींपर नहाकर पुनः त्रिलोचनलिंगका पूजनकरे, तदनंतर हर्षपूर्वक पितरोंके उद्देशसे अन्न और दक्षिणाके साथ धर्मघटोंको दानकरे फिर शिवभक्तोंके सहित पारण करे ॥६८॥६९॥ हे देवि इस पुण्यके प्रभावसे लोग पार्थिव शरीरको त्यागकर अवश्य मेरे आगे चलनेवाले गण होजाते हैं ॥ ७० ॥ हे गौरि ! देवता, मनुष्य और नागलोग तबतक संसारचक्रमें घूमते रहतेहैं, जबतक काशीमें त्रिलोचन लिंगका दर्शन नहीं कर पाते ॥ ७१ ॥ एक बारभी पिलपिलाह्रदमें स्नान कर त्रिलोचनका दर्शन कर लें तो फिर कभी कोईभी प्राणी इस लोकमें माताका स्तनपान नहीं करने पाता ॥ ७२ ॥ हे भामिनि ! प्रतिमासकी अष्टमी और चतुर्दशीको समस्ततीर्थ भगवान् त्रिविष्टपके दर्शन करनेको (वहां) आतेहैं ॥ ७३ ॥ त्रिविष्टपसे दक्षिण और पिलपिलाके जलमें नहाकर यदि एकभी सन्ध्या करलेवे तो राजसूययज्ञका फल होताहै ॥ ७४ ॥ वहींपर पादोदकनामक पापविनाशक एक कूपहै, उसका जल पीलेनेसे मनुष्य फिर कभी मर्त्यलोकमें नहीं जनमने पाता ॥ ७५ ॥ त्रिलोचनके पासमें औरभी बहुतसे लिंगहैं जो यहांपर दर्शन और स्पर्शन करनेसे मुक्तिको दे देतेहैं ॥ ७६ ॥ वहांही गंगाके तीरपर एक शांतनवनामक लिंग प्रतिष्ठित है, उसके दर्शनसे संसारसे तापित मनुष्यभी शांतिलाभ करताहै ॥ ७७ ॥ हे मुने ! उसके दक्षिण भागमें भीष्मेश्वरनामक महालिंगहै, उसके दर्शनसे कलिकाल, और काम कोई भी बाधा नहीं पहुँचा सकता ॥ ७८ ॥ उससे पश्चिम ओर द्रोणेश्वर नामसे कीर्तित एक महालिंगहै जिस लिंगके पूजनसे द्रोणाचार्यने फिरसे ज्योतीरूपको धारण कियाथा ॥ ७९ ॥ उससे आगे (बढ़कर) परम पुण्यप्रद अश्वत्थामेश्वर लिंगहै, जिसके पूजन करनेसे द्रोणनन्दन कालसेभी नहीं डरतेहैं ॥८०॥ द्रोणेश्वरसे वायुकोणपर वालखिल्येश्वरनामक एक प्रधान लिंगहै, श्रद्धापूर्वक उसका दर्शन करनेसे समस्त यज्ञोंका फल प्राप्त होताहै ॥ ८१ ॥ उसके बायीं ओर वाल्मीकेश्वरसंज्ञक (एक) लिंग विराजमानहै, मनुष्य उसका सम्यक् प्रकारसे दर्शन पातेही सब शोकोंसे रहित होजाताहै ॥ ८२ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हे कुम्भज ! यहांपर जो एक घटना होचुकीहै, उसे कहताहूं जैसा कि देवदेवने भग-
वतीसे त्रिविष्टपका माहात्म्य वर्णन किया था ॥ ८३ ॥

दोहा—रह्यो पूर्वमें स्थान यह, सब अन्ननको हाट ।
काशीमें विख्यात वह, श्रीत्रिलोचन घाट ॥ १ ॥
जदपि भई वसती वहां, खडँहर भरी उजाड़ ।
पै अजहूं सब पापको, देति मारिकै गाड़ ॥ २ ॥

इति श्रीस्कंदपुराणे चतुर्थे काशीखंडे उत्तरार्धे भाषायां पंचसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७५ ॥

छिहत्तरवां अध्याय ।

इतिहासपूर्वक त्रिलोचनका माहात्म्य ।

स्कन्द कहने लगे—हे मित्रावरुणतनय ! अगस्त्य ! इस विरजसंज्ञक (सिद्ध) पीठ-
पर पूर्वकालके रथंतर कल्पमें जो बात हुईथी उसका इतिहास श्रवण करो ॥ १ ॥
त्रिलोचनका मन्दिर मणि और माणिक्योंसे निर्मित था, उसमें नानाभाँतिकी जालियां
और झरोखे बने थे, वह मन्दिर सुमेरुके समान ऊंचा था ॥ २ ॥ मानो विश्वकर्ताने
आपही प्रलयकालमें कदाचित् स्वर्गलोकको अधःपातसे बँचानेके लिए उसे प्रोत्तंभन
(चांड) का खम्भा लगा दियाहै ॥ ३ ॥ हे मुनिवर ! (जो शिवालय अपने
ऊपरकी) वायुसे हिलती हुई पताकाओंके अग्रभागसे मानो इधर उधरसे घुसतेहुए
पापवर्गको इस प्रकारसे निषेध कररहाहै ॥ ४ ॥ जिसके ऊपर चमकता हुआ सुवर्ण-
कलश ऐसा शोभायमान होरहाथा मानो पूर्णिमाका चन्द्रमा खेदसे (थककर) मंदिर-
पर विश्राम कर रहाहै ॥ ५ ॥ उसी मन्दिरपर एक जोडा कपोत (कबूतर) अपना
घर बनाकर रहता था, जो सबेरे साँझ और दोपहरके समयमेंभी नित्यही (उस शिवा-
लयकी) प्रदक्षिणा करता रहताथा ॥ ६ ॥ प्रतिदिन उसके पंखोंके वायुसे मन्दिर
पर इधर उधरसे उडकर लगीहुई चारोंओरकी धूर उधिरा जाती थी ॥ ७ ॥ उसके
कानोंमें भक्तोंके कहेहुए त्रिलोचन और त्रिविष्टप इत्यादि नाम बराबर सुनाई पडा
करतेथे ॥ ८ ॥ महादेवके बड़ेही रुचिकर काँस्यतालादि चतुर्विध बाजन उस जोड़के
कानरूपी गुफामें जाकर प्रतिध्वनि करने लगते थे ॥ ९ ॥ उन पक्षियोंकी आंखोंमें
मंगल आर्तिकी ज्योति नित्यही त्रिकाल प्रवेश करके भक्तोंकी पूजादि चेष्टाको देखाती
रहती थी ॥ १० ॥ कभी कभी तो वे दोनोंही खग स्थिर चित्तसे बैठ ऐसा कौतुक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२०७

देखने लगते थे कि खाना पीना छोड़कर वहांसे कहींभी नहीं उड़ते थे ॥ ११ ॥ हे महर्षे ! वहींपर मन्दिरके इधर उधर भक्तलोग जो कुछ अक्षत (चाउर) इत्यादि छींट देतेथे वे दोनों प्रदक्षिणा करते हुए उसीको खालेते थे ॥ १२ ॥ हे विप्र ! वे दोनोंही अण्डज प्यास लगनेपर भगवान्के दक्षिणकी ओर गंगा, यमुना, सरस्वती और नर्मदा इन चारों नदियोंके सोतेका जल पीते और कभी कभी नहाते भी थे ॥ १३ ॥ इस प्रकारसे त्रिलोचनके समीपहीमें विचरण करते हुए उन दोनोंही साधु-स्वभाववाले पक्षियोंका बहुत समय बीतगया ॥ १४ ॥ तदनंतर एकबार एक श्येनपक्षी (बाज) ने क्रूरदृष्टिसे देवालयके मध्यमें झरोखाके भीतर सुखसे बैठेहुए उन दोनोंही (पक्षियों) को देखलिया ॥ १५ ॥ उस कपोतके जोडेको पकडलेनेकी इच्छासे वह बाज आकाशसे उतरकर झटपट एक दूसरे शिवालयमें जा घुसा ॥ १६ ॥ और वहांसे उनके निकलने पैठनेको देखनेलगा कि, ये दोनों पक्षी किस मार्गसे इस दुर्गमें जाते ॥ १७ ॥ और किधरसे निकलते हैं ? फिर किसवेला क्या करते हैं ? और किस प्रकारसे एक साथही ये दोनों मेरे हाथ लगसकतेहैं ? ॥ १८ ॥ क्योंकि इस दुर्गके भीतर घुसे रहनेपर तो ये दोनों कभी मेरे वशमें नहीं आसकते वह बाज क्षणभर यही चिन्ता करताहुआ उसीओर दृष्टि लगाकर बैठारहा ॥ १९ ॥ अहो ! ! बुद्धि-मान् लोग दुर्गबलकी बडाई बहुतही ठीक कहते हैं, क्योंकि दुर्गस्थ दुर्बलभी शत्रु सहसा नहीं दबालिया जासकता ॥ २० ॥ अकेले दुर्गहीसे राजाका जो काम सिद्ध होजाताहै वह काम सहस्रों हाथी अथवा लाखों बढियां घोडोंसेभी नहीं चलसकता ॥ २१ ॥ यदि दुर्ग स्वतंत्र और सबप्रकारसे गुप्तहो तो तत्रस्थ शत्रु कभी किसीसे नहीं हार जासकताहै ॥ २२ ॥ वह बाज इसी भाँतिसे दुर्गबलकी प्रशंसा करताहुआ उन दोनोंही कपोतोंको निर्भय देख, क्रोधसे आंखें लालकरके आकाशमंडलमें चलागया ॥ २३ ॥ तत्पश्चात् केवल दुर्गहीकी बलवती चतुर कपोती अपने शत्रु बाज पक्षीको देखकर बडेबली अपने स्वामी कपोतसे कहनेलगी ॥ २४ ॥ कपोतीने कहा हे सर्वकाम-सुखाकर ! प्रियतम ! पारावत ! आपने इस प्रबल शत्रुबाजको देखा ? ॥ २५ ॥ कपोतीका वचन सुनकर उसका पति अहंकारके साथ कपोतीसे कहने लगा कि— "प्यारी ! तुम किस चिन्तामें पडीहो" ॥ २६ ॥ कबूतर बोला—हे सुभगे ! यहां पर क्या बहुतेरे गगनचारी नहीं पडेहैं ? और फिर इन देवालयोंमें क्या बहुतेरी चिडियायें नहीं घुसाकरतींहैं ? ॥ २७ ॥ एवं प्रिये ! क्या कितनेही (लोग) हम

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दोनों जनको यहांपर सुखसे रहते हुए नहीं देखते हैं ? यदि उन सबोंसे डरतेही रहना पडे तो प्यारी ! वह सुख हमलोगोंको कैसे होगा ? ॥ २८ ॥ हे सुन्दरि ! तुम मेरे साथ क्रीडाकरो, और इस चिन्ताको छोडदो, इस तुच्छ (बिचारे) बाजकी तो मेरे मनमें कुछ गिनतीही नहीं है ॥ २९ ॥ तब तो कपोतकी ऐसी बातें सुनकर वह कपोती पतिके चरणोंमें दृष्टि लगाकर चुपचाप बैठरही ॥ ३० ॥ क्योंकि पतिकी प्रिय चाहनेवाली पतिव्रता नारीको यही उचित है कि, हितमार्ग बताकर फिर चुपचाप बैठ रहे (अर्थात् अनुचित बातकाभी खंडन न करे) और स्वयं सर्वदा पतिकी आज्ञाका पालन करे ॥ ३१ ॥ फिर दूसरेदिन वह बाज वहां आकर जैसे मृत्यु गतायुको देखे वैसेही टक्टकी लगाकर उन दोनोंहीको देखता रहा ॥ ३२ ॥ अनन्तर मन्दिरके चारोंओर चक्कर लगाता और घूमता हुआ वह बाज उन सबोंका निकलना पैठना देखकर आकाशमार्गसे उडगया ॥ ३३ ॥ बाजके आकाशमें उडजाने पर फिर उस कपोतीने अपने पतिसे कहा कि नाथ ! इस दुष्ट शत्रुको आपने देखा (न) ? ॥ ३४ ॥ उसकी बात सुनकर फिर कपोत बोला मुग्धे ! मैं तो गगनविहारीहूं यह भला मेरा क्या करसकताहै ? ॥ ३५ ॥ फिर यह मेरा दुर्गभीतो स्वर्गके तुल्यहै, इसमें शत्रुका कोई भय नहीं है, तब आकाशमंडलके विषयमें जो चालें मैं जानताहूं भला यह क्या जानेगा ? ॥ ३६ ॥ प्रडीन उड्डीन, संडीन, कांड, व्याड, कपाटिका, स्रंसनी और मंडलवती ये आठप्रकारकी गतियां कही गई हैं ॥ ३७ ॥ अयि प्रिये ! कपोति ! इन चालोंकी निपुणता जैसी मुझमें है, वैसी आकाशके भीतर दूसरे किसीभी पक्षीकी नहीं है ॥ ३८ ॥ प्यारी ! तुम सुखसे चलकर बैठो, मेरे जीतेजी यहाँ तुम किसकी चिन्ता कररहीहो, ? उसकी बात सुनकर वह पतिव्रता कपोती गूंगेकी नाईं चुप होगई ॥ ३९ ॥ उसके अंतरे (दूसरे) दिन फिर वह बाज मन्दिरपर आकर एक बडेभारी पत्थरके नीचे दरारमें घुसकर बडी प्रसन्नतासे बैठारहा ॥ ४० ॥ पहर भरतक वहांपर बैठ उनका खोंता भलीभाँति देखभालकर वह बाज फिर चलागया, तब फिर उस कपोतीने भयभीत होकर कहा ॥ ४१ ॥ हे प्रिय ! (देखो आज) यह दुष्ट बहुत निकटमें आकर बडा हठसे बैठा रहाहै, सो अबतो यह स्थान दुष्टकी दृष्टिद्वारा दूषित होजानेसे त्यागही देनेके योग्यहै ॥ ४२ ॥ फिरभी उसने बडे अहंकारके साथ कहदिया कि अरी प्यारी ! यह क्या करसकताहै ? मृगनैनियोंका तो यह स्वभावहीहै जो वे प्रायः करके बडीही

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२०९

हरपोंके होतीहैं ॥ ४३ ॥ दूसरे दिन फिर वह महाबली बाज वहांपर आपहुँचा, और उन दोनोंहीके सन्मुख दो पहरतक बैठारहा ॥ ४४ ॥ फिर उन सबोंका मार्ग आदि देखभालकर तुरतही चलताहुआ, उसके उडजानेपर पुनः उस (बिचारी) कपोतीने कहा ॥ ४५ ॥ नाथ ! यहांपर हमलोगोंकी मृत्यु निकट चली आतीहै, अतएव अब दूसरेही स्थानपर चलना उचितहै, जब इस दुष्टका आना जाना बन्द होजा-वेगा तब फिर हम दोनों यहांपर (आकर) सुखसे रहने लगेंगे ॥ ४६ ॥ हे प्रियतम ! जिस पक्षवालेकी गति सर्वत्रही सिद्धि देखके, भला वह बुद्धिमान् स्वदेशानुरागके कारण क्या (विपक्षके द्वारा) अपना नाश करवासकताहै ? ॥४७॥ जो कोई उप-द्रवसे पूर्ण अपने देशको त्यागकर अन्यत्र पर नहीं चलाजाता, वह पंगुजन (लूला) नदीके तटस्थवृक्षकी नाईं (शीघ्रही) विनष्ट होजाताहै ।

दोहा—विपति पूर्ण निज देशतजि, जो अन्यत्र न जाय ।
नदीतीरके वृक्ष सम, सो पंगुल बिनसाय ॥ ४८ ॥

वह कपोत अपनी पत्नीका यह कथन सुनकर फिरभी गर्वके साथ होनहार वश कह-नेलगा—प्यारी उस खग (बाज) से तुम मत डरो॥४९॥ फिर दूसरे दिन वह बली बाज बड़े तड़केहीसे आकर साँझतक उसके द्वारपर बैठारहा ॥ ५० ॥ जब कि सूर्य अस्ताचलके शिखरपर चलेगये तब वहांसे उठा बाजके चलेजानेपर वह कपोती खोतेसे बाहर निकसकर अपने स्वामीसे कहने लगी ॥ ५१ ॥ हे नाथ ! इसघड़ी वह कालरूप बाज दूर चलागया इससे अब यहांसे उड़ भागनेका यही समयहै, हे प्रियतम ! जबलों वह फिर यहाँ नहीं आजाता तबतक आप मुझेभी छोड़कर निकल जाइये ॥ ५२ ॥ क्योंकि संसारमें आपके जीते रहनेसे कोईभी वस्तु दुर्लभ नहींहै, (कारण यह कि आप पुरुषहैं आपके जीनेपर) स्त्री, मित्र, धन और घर ये सब फिरफिर होते रहेंगे ॥ ५३ ॥ यदि पुरुष, स्त्री और धन इत्यादिसे अपनी रक्षा कर-सके तो वह इसी संसारमें राजा हरिश्चन्द्रकी नाईं सब कुछ फिरसे पासकताहै ॥५४॥ यह आत्माही प्यारा बंधु, और यही आत्मा बड़ा धनहै, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—इन सबका उपार्जन करनेवाला भी यही आत्माहै ॥ ५५ ॥ अपनेही कुशलसे त्रैलो-क्यपरका कुशल समझाताहै, परन्तु बुद्धिमान् जन उस कुशलकोभी सुयशके साथ चाहतेहैं ॥ ५६ ॥ जिस कुशलमें यश न हो उससे तो मरजानाही अच्छाहै, एवं वह कुशलभी न्यायमार्गसे चलनेही पर मिलताहै ॥ ५७ ॥ अतएव, हे नाथ !

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नीतिके अनुसार तो अब यहांसे चलदेनाही उचितहै, यदि आप यहांसे न उठजांयेंगे, तो प्रातःकालही मेरी बातोंको स्मरण करेंगे ॥ ५८ ॥ इस प्रकारसे परमबुद्धिमती पत्नीके वारंवार कहनेपर भी वह कपोत होनहार वश उस स्थानसे नहीं निकला। (सच है होनहारकी बात ऐसीही होतीहै जैसा कि इस प्राचीन दोहेमें कहाहै-

दोहा-"जैसी होय होतव्यता, तैसी उपजे बुद्धि ।
होनहार हृदये वसे, विसरि जाय सब सुद्धि)" ॥ ५९ ॥

हे महर्षे ! (इधर) दूसरे दिन फिर वह बलवान् बाज प्रातःकालहीसे कुछ भोजन (ले) कर उसके निकलनेका मार्ग रोक बैठा ॥ ६० ॥ और कुछ समयतक वहीं बैठकर उस चतुरबाजने कबूतरसे कहा—अरे ! कपोत ! तूं तो बड़ाही पौरुषहीन है, तुझे धिक्कारहै ! ! ! ॥ ६१ ॥ रे दुर्बुद्धे ! तू मेरे साथ लड़, किंवा मेरे कहनेसे बाहर निकल आ, नहीं तो अन्तमें भूखके मारे मरकर नरकगामी हो जावेगा इसमें कुछ सन्देह नहीं है ॥ ६२ ॥ मैं तो अकेलाही हूं और तू जोडाहै फिर जीत और हारका कोई ठिकानाभी नहीं, बडे पराक्रमसे स्थानके लिए युद्ध करनेवालेको दुर्गही मिलताहै कि स्वर्गही प्राप्त होताहै ॥ ६३ ॥ जो बुद्धिमान् जन पौरुषके सहारेसे उद्योग करते रहते हैं, उनके पराक्रमसे उत्साहित होकर स्वयं विधाताही उन लोगोंकी सहायता करताहै ॥ ६४ ॥ इस प्रकारसे उस बाजके ललकारने पर और पत्नीके उत्तेजना देनेपर ढाँढस बांधकर वह कपोत अपने दुर्गके द्वारपर उस बाजसे लडने लगा ॥६५॥ फिर क्या था—तुरत उस बली बाजने उस भूखे और प्यासे कपोतको अपने दृढचंगुलमें और कपोतीको चोंचमें पकड लिया ॥६६॥(बस) अनन्तर उन दोनोंहीको लेकर वह बाज बडी तेजीसे आकाशमें उडचला और अन्य पक्षियोंसे रहित निराला (सूनसान) स्थान भोजन करनेके लिये सोचने लगा ॥ ६७ ॥ उसी समय बुद्धिमती कपोतीने कपोतसे कहा कि,—हे नाथ ! आपने स्त्री समझकर मेरी बातपर ध्यान नहीं दिया ॥ ६८ ॥ इसीसे आप इस दशामें आपडेहैं, मैं तो अबलाहीहूं फिर और क्या करसकतीहूं, पर प्यारे ! यदि आप अबभी मेरी एक बात मानजावें ॥ ६९ ॥ तो मैं आपका हित कहसकतीहूं, पर आप कुछ सोचने विचारनेके लिए ही उसे करडालें, और मेरी एक बात मानलेनेसे आप स्त्रीके वशमें नहीं होजायेंगे ॥ ७० ॥ (हे नाथ !) जबतक यह बाज स्वस्थतापूर्वक किसी स्थान पर नहीं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२११

बैठता और मैं इसके चोंचमें पडीहूं इसीके बीचमें आप अपने छुटकाराके लिये इसे पैरमें बलपूर्वक काटिये ॥ ७१ ॥ पत्नीकी बात सुनकर उस कपोतने वैसाही किया तबतो वह बाज पैरमें बडी कठोरताके साथ बहुत काटजानेपर चींचीं करने लगा ॥ ७२ ॥ इतनेमें जो उसका मुख खुला त्योंही कपोती निकलगई, और चंगुलके ढीला पडजानेसे वह कबूतरभी गिरपडा ॥ ७३ ॥ बुद्धिमान्लोगोंको विपत्ति पडने परभी कभी उद्योग नहीं छोडना चाहिये, क्योंकि (देखो) वह कपोतका जोडा शत्रुके मुखमें पडकरभी उसके पैरोंको काटकर वैसे बली शत्रुसे अपनेको विचित्ररीतिसे छोडालेसका, सच है—यदि कोई दुर्बलभी उद्योग करे तो भाग्य उसे अवश्यही फल देदेताहै॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥ अतएव भाग्यानुसारही उद्यम सदैव फलताहै, इससे पंडितलोग विपत्तिमेंभी उद्योगहीकी बडाई गाते हैं॥ ७६ ॥इस प्रकारसे वे दोनों कबूतर मृत्युके मुखसे बँचकर कालानुसार सरयूके तीरपर मुक्तिक्षेत्र अयोध्यापुरीमें जहांके मरनेवाले प्राणियोंको काशी अवश्य प्राप्त होतीहै (वहां जाकर) मृत्युको प्राप्त हुए, उनमें कपोत मंदारदामका पुत्र परिमलालयनामक विद्याधर हुआ, ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ वह कुमारावस्थाहीमें अनेकविद्याओंका ज्ञाता और कलाकौशलोंका पात्र और परमशिवभक्त होगया ॥ ७९ ॥ उसने जितेन्द्रिय चित्त होकर यह दृढनियम ठान लियाथा कि, मैं नित्यही एकपत्नी व्रत करूंगा इसमें कुछ संदेह नहीं है ॥ ८० ॥ (लोकमें) परस्त्री पर आसक्त होनेसे, आयुष्य, यश, सुख, बल, और स्वर्गकी गति सबकुछ नष्ट होजाताहै अतएव बुद्धिमान् जन परस्त्रीगमनको सर्वथा त्यागदेवें॥ ८१ ॥ त्रिलोचनके आश्रयवश व्यतीत जन्मके अभ्याससे उस शुचिष्मान् विद्याधरने एक औरभी नियम धारण करलिया कि, ॥ ८२ ॥ जबतक शरीर नीरोगहै और जबतक इन्द्रियां शिथिल नहीं पडजातीं तबतक मैं काशीपुरीमें अशेषपुण्योंके भवन, चारों पुरुषार्थोंके साधक, समस्त कामनाओंके दाता, एवं परमानन्दके एकमात्र कारण भगवान् त्रिलोचनका पूजन किये बिना कुछभी नहीं खाऊंगा ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ इस प्रकारसे वह मंदारदामका पुत्र परिमलालय (नियमोंको धारणकर) प्रतिदिन काशीमें बडे प्रयत्नसे दर्शन करनेको आता था ॥ ८५ ॥ (उधर) वह कपोतीभी पातालमें नागराज रत्नदीपके गृहमें रत्नावली नामकी कन्या उत्पन्न हुई ॥ ८६ ॥ वह रत्नदीपनामकी कन्या समस्त नागकन्याओंमें रूप, शील, और कला आदि गुणोंसे एक रत्नहीसी होगई थी ॥ ८७ ॥ उसकी प्रभावती और कलावती नामसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(विदित) दो सखियां थीं, जो सर्वदा उसके साथ रहती थीं ॥ ८८ ॥ हे घटज मुने ! जैसे अपने शरीरसे छाया और कांति कभी दूरनहीं होसकती, वैसेही वे दोनोंही सखियां रत्नावलीसे कभी पृथक् नहीं होती थीं ॥८९॥ रत्नावली, लडकपन बीतजानेपर जब कुछ कुछ जवान होनेलगी तो अपने बापको बडा शिवभक्त देख आपभी यह नियम धारणकर कहने लगी॥९०॥कि, हे पितः ! मैं प्रतिदिन इन दोनों सखियोंके साथ काशीमें जाकर त्रिलोचनकी पूजा करलेनेपर बोलूंगी नहीं तो मौनही रहूंगी॥९१॥ इस भाँतिसे (पिताकी अनुमति पाकर) वह नागकुमारी दोनों सखियोंके साथ प्रतिदिन त्रिलोचनका पूजन करके गृह पर जाती (और मौनभाव त्यागती) थी ॥९२॥ वह नित्यही टटके और बड़ेही सुगंधवाले चित्रविचित्र पुष्पोंकी माला गुथकर भगवान्को चढ़ाती थी ॥ ९३ ॥ वे तीनोंही मनोहर गांधार स्वरसे सोहावन गीतोंको गातीं और रासकामण्डल बांधकर नाचतीं ॥ ९४ ॥ एवं भगवान्के समीपमें वीन बाँसुरी और पखावजको लयतालकी निपुणतासे हर्षपूर्वक बजाती थीं ॥ ९५ ॥ वे तीनोंही नागकन्यायें इसी प्रकारसें विचित्र गंध और माला इत्यादिके द्वारा तथा संमार्जन विलेपन प्रभृति सेवाओंसे भगवान् त्रिलोचनकी आराधना करती रहीं ॥ ९६ ॥ इसीमें एकवार वे सब वैशाखमासकी शुक्ला तृतीयाको व्रत और रात्रिमें नृत्यगीत और कथादिकसे जागरण कर ॥ ९७ ॥ प्रातःकाल चतुर्थीको पिलपिलातीर्थमें नहाय श्रीत्रिलोचनकी पूजाकर रंगमण्डपमें जाकर सोगईं ॥९८॥ उन कन्याओंके सोजाने पर भगवान् त्रिलोचन उसी पन्नगमेखलावाले लिंगसे शुद्ध कर्पूरके समान गौरांग, जटाजूटसे मण्डित चन्द्रशेखर, तमाल ऐसे नीलकंठ, वामार्द्ध देहमें शक्तिसे सुशोभित और सर्पके भूषण एवं यज्ञोपवीतसे विराजित रूपधर निकलकर उन सब कुमारियोंसे कहने लगे कि, उठती जाओ ॥ ९९ ॥ १०० ॥ १ ॥ अनंतर वे सब उठकर अपने बड़े बड़े नेत्रोंको मींजतीहुईं अंगराकर जँभाई लेने लगीं ॥ २ ॥ और ज्योंही उन सबोंने घबड़ाहटके साथ आगेकी ओर दृष्टि डाली त्योंही अचानक भगवान् त्रिलोचनको देखा ॥ ३ ॥ फिर तो वे सब नागकन्या चिह्नोंके द्वारा परमेश्वरको पहिचान प्रणाम करने लगीं और प्रसन्नमुख होने परभी कण्ठके सन्न हो (रुक) जानेसे गद्गद स्वरसें उनकी स्तुति करनेलगीं ॥ ४ ॥ हे शंभो ! आप सर्वव्यापीहैं, आपका जय हो, हे ईशान ! आपही सबकुछके दाताहैं, आपका जयहो, हे त्रिपुरान्तक ! आपहीने अंधक दैत्यको माराहै, आपका जयहो ॥ ५ ॥ हे त्रिलोकीजनक ! आपहीने जालंधर असु

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

२१३

रको विनाश कियाहै, हे त्रैलोक्यवर्धन ! आपहीके द्वारा कन्दर्पका दर्प दूर हुआहै, आपका जयहो, जयहो, ॥ ६ ॥ हे विश्वाधार ! आप तो त्रैलोक्य भरसे वन्दितहैं, हे प्रमथनाथ ! आप (सदैव) अपने भक्तलोगोंके अधीन रहतेहैं, आपका वारंवार जयहो ॥७॥हे देव!आपका जटाजूट त्रिपथगा गंगाके जलसे प्रक्षालित रहताहै और आपके(मुकुटमणि)चन्द्रमाकी कलाओंकी ज्योतियोंसे त्रैलोक्यमात्र प्रकाशित होताहै,आपका जयहो ॥८॥हे प्रभो ! आपका शरीर तो सर्पोंके फणामणिकी प्रभासे भासमान होरहाहै, एवं गिरिराजनन्दिनीने आपका आधा शरीर अपने तपोबलसे खरीद लियाहै आपका जय हो ॥ ९ ॥ हे श्मशानवासिन् ! वाराणासीवल्लभ ! आप आनन्दवनवासी प्राणियोंके मोक्षदाताहैं, आपका जयहो जयहो ॥१०॥ हे विश्वनाथ ! शर्व ! आप शर्वरीसे वर्जितहैं, हे नृत्यप्रिय ! उग्र ! आप समस्त गीतविशारदहैं, आपका जयहो ॥ ११ ॥ हे शूलपाणे ! आपही प्रणवके आश्रय और समस्त तेजोंकी महानिधिहैं, हे विरूपाक्ष ! आप प्रणतजनके सर्वस्व दाताहैं, आपका जयहो जयहो ॥ १२ ॥ हे नाथ! स्वयं विधि! समस्त विधियोंके ज्ञाता होनेपरभी आपकी स्तुति करनेमें समर्थ नहीं हैं और वाचस्पतिकीभी वाणियां आपके स्तुतिगानमें कुंठित होजातीहैं ॥१३॥ हे सर्वज्ञ ! आपको तो वेदगणभी यथार्थरीतिसे नहीं जानसके हैं, हे नाथ ! फिर इस संसारमें (हमलोगोंका) मनभी आदि—अन्तसे रहित आपको अपने मननका विषय नहीं बनासकता ॥ १४ ॥ अतएव हे त्रिलोचन ! आपको वारंवार नमस्कार है हे त्रिविष्टप ! हम सब (लोग) आपको अनेकशः दण्डवत्प्रणाम करतीहैं ॥ १५॥ वे सब नागकन्यायें इसी भाँतिसे स्तुतिकहकर भूमिपर दण्डवत्प्रणाम करनेलगीं, तब तो भगवान् शशिभूषण उन सब कुमारियोंको उठाकर कहने लगे कि—॥ १६ ॥ मेरुदामनामक विद्याधरका बेटा परिमलालय तुमलोगोंका पति होगा ॥ १७ ॥ तुमलोग बहुत दिनोंतक विद्याधरोंके लोकमें यथेष्ट भोगोंका सुख भोगकर तदनंतर निर्विघ्न पाजानेपर काशीमें परमसिद्धिको प्राप्त करोगी ॥१८॥ तुम तीनों जनी और वह नौजवान विद्याधर ये चारोंही जन यहींपर अन्तमें मोक्षको पाओगे॥१९॥पूर्व जन्ममें तुमलोगोंने और उसनेभी मेरी बडी सेवा कीथी, इसीसे यह जन्म निर्मल और भक्तिभावसे भरा हुआहै ॥ १२० ॥ तुमलोगोंके कहेहुए इस स्तोत्रका पाठ जो कोई मेरे आगे करेगा उसकेभी मनोरथको तुमलोगोंके समान मैं अवश्यही पूर्ण करदूंगा॥२१॥ मनुष्य प्रातःकालमें इस स्तोत्रके पढनेसे रात्रिके कियेहुए पापोंसे पवित्र होजावेगा एवं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जो सन्ध्या समयमें पाठ करेगा उसके दिनभरके सब पाप दूर होजावेंगे ॥ २२ ॥ भगवान्‌के इस कहनेपर वे सब नागकन्यायें प्रहृष्टमन हो दोनों हाथोंको जोड प्रणाम कर महादेवसे बोलीं ॥ २३ ॥ नागकन्याओंने कहा--हे करुणाकर ! नाथ ! शंकर ! हम चारों जनोंने पूर्व जन्ममें कैसे आपकी सेवा की थी ? ॥२४॥ एवं हे कृपानिधे ! भव ! देव ! उस सुकृती विद्याधरका और हमलोगोंके पूर्वजन्मका वृत्तान्त आप कृपाकरके कहें ॥ २५ ॥ भगवान् शिव इसप्रकारसे उन नागकन्याओंकी बिनती सुनकर उन सबोंके एवं पारिभलालयके जन्मान्तरकी कथाको कहने लगे ॥ २६ ॥ ईश्वरने कहा हे नागकन्याओं ! मैं तुम तीनोंजनी और उस विद्याधर कुमारके पूर्वजन्मका सब वृत्तान्त कहताहूं, सावधान हो (करसुनो) ॥ २७ ॥ यह रत्नावली और वह विद्याधर ये दोनोंही पूर्वजन्ममें कपोत पक्षीके जोडा थे, ॥ २८ ॥ इन दोनोंने मेरे इसी मन्दिरपर बहुत दिनोंतक वासकिया, और फिर इस शिवालय पर पडीहुई धूलीको अपने पंखके वायुसे अनेकबार उडादिया था ॥ २९ ॥ आकाशमें उडते हुए ऊपरसे, और मन्दिरके आँगनमें घूमघूमकर नीचेसे इन दोनोंने मेरी बहुतसी प्रदक्षिणायें कीं ॥ १३० ॥ वारंवार चतुर्नदतीर्थमें स्नान किया वहांका जल पिया, और अपने मधुरध्वनिसे मुझे हर्षितकिया ॥ ३१ ॥ इन दोनोंने बडे प्रसन्न और स्थिर चित्तसे यहांपर मेरे भक्तोंके कियेहुए बडेबडे कौतुकोंको देखा ॥ ३२ ॥ एवं मेरे मंगल आर्तिकी शोभाका दर्शन किया, और अपने श्रवणपुटसे मेरे नामाक्षररूप अमृतको पान किया ॥ ३३ ॥ पर (यह सब होनेपरभी) तिर्यक्‌योनिके प्रभाववश मेरे समीपमें मृत्यु नहीं हुई, ये दोनोंही काशीमें अवश्य पहुँचादेनेवाले अयोध्यातीर्थमें जाकर मृत्युको प्राप्तहुए ॥ ३४ ॥ फिर अयोध्यामें मृत्यु होनेहीसे यह तो रत्नदीपनागकी कन्याहुई और इसका पति वह कबूतर विद्याधरका पुत्र हुआ है ॥ ३५ ॥ और नागराजपक्षीकी कन्या जो यह प्रभावतीनामसे इस जन्ममें उत्पन्न हुईहै, इसकी एवं ॥ ३६ ॥ त्रिशिरनामके नागेन्द्रकी पुत्री इस कलावतीके भी पूर्वजन्मका वृत्तान्त कहताहूं, सुनतीजाओ ॥ ३७ ॥ इस जन्मसे तीन जन्म पहिले ये दोनोंही महर्षि (वर) चारायणकी बडीही शीलवती और परस्पर प्रेमवती कन्या हुईथीं ॥ ३८ ॥ अनंतर इन्हींकी प्रेरणासे इनके पिता चारायणऋषिने इन दोनोंहीको अमुष्यायणमुनिके पुत्र नारायणको दान करदिया ॥ ३९ ॥ परन्तु वह ऋषिकुमार जवान होनेके पहिलेही (किशोरावस्थामें) एकबार कहीं बनमें समिधा लानेके लिये

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

११५

गयाथा दैवात् वहींपर उसे सांपने डँसलिया ॥ १४० ॥ तबतो ये दोनोंही भवानी और गौतमी नाम्नी चारायणकी कन्यायें वैधव्यका दुःख पाकर बहुतही दैन्यग्रस्त होगईं॥ ४१ ॥ तबसे कोईभी बुद्धिमान्जन देवता और नदीके नामवाली कन्याका पाणिग्रहण प्रयत्नपूर्वक नहीं करताहै ॥ ४२ ॥ फिर इन दोनोंने कुछदिनके अनंतर किसी ऋषिके बड़े विचित्र आश्रममें जाकर दैवात् मोहके वशमें पड़कर बिना दियेहुए केलाका फल लेलिया ॥ ४३ ॥ पश्चात् ये ऋषिकन्यायें मासोपवास इत्यादि व्रतोंको करके कालवश जब मरीं तो फिर वानरी होगईं ॥ ४४ ॥ यद्यपि फल चोरानेके कारण इन दोनोंको (बिचिले जन्ममें) वानरी होनापड़ा पर अपने शीलरक्षण रूपधर्मके बलसे काशीमें जन्म हुआ ॥ ४५ ॥ और वह नारायणनामक ऋषिकुमार पिताके सेवन व्रत करनेसे सांपके काटने परभी काशीमें (जाकर) कपोत हुआ ॥ ४६ ॥ इस प्रकारसे यही परिमलालय पूर्वजन्ममेंभी इन दोनोंका पति रहचुकाहै, और अबभी तुम तीनों (जनी) का भर्ता होनेवाला है ॥ ४७ ॥ इसी मन्दिरके पासमें एक बहुत बड़ा बरगदका पेड़ था, जिसमें बहुतेरी शाखें लगी थीं उसी पर ये दोनों वानरियां रहतीथीं ॥ ४८ ॥ और क्रीड़ावश इसी चतुर्नदतीर्थमें डुबकी मारतीं और प्यास लगनेपर इसी तीर्थका पानी पीतींथीं ॥ ४९॥ अपने जाति स्वभावकी चंचलतासे अनेकबार क्रीड़ा करतीहुईं लिंगकी प्रदक्षिणा और दर्शनभी करलेतींथीं ॥ १५० ॥ एकबार उसी बरगदके पासमें ये दोनों घूमरहींथीं इसीमें एक योगीवेषधारी (मन्दारी) ने फाँसमें बाँधलिया ॥ ५१ ॥ और इन दोनोंहीको उसने नाचना और कूदना भीख माँगनेके लिये सिखाया, फिर कुछ दिनके पश्चात् ये दोनों वानरियां मरगईं ॥ ५२ ॥ पर काशीवासके पुण्य और त्रिलोचनकी प्रदक्षिणा आदि सेवासे ये दोनोंही नागकन्या हुईं ॥ ५३ ॥ अब फिर उस विद्याधरकुमारको पतिपाकर स्वर्गके सुखोंका अनुभव करतीहुईं यह काशीमें निर्वाणपदको पावेंगी॥ ५४॥ काशीमें यदि थोड़ाभी सत्कर्म करते बनपड़े तो उसका फल मेरी कृपासे मोक्षही मिलजाहै ॥ ५५ ॥ त्रैलोक्यभरमें काशीपुरीसे बढ़कर कोई स्थान श्रेष्ठ नहीं है, उसमेंभी ओंकारेश्वर सबके प्रधानहैं, पर यह त्रिलोचनका स्थान उससेभी बढ़ाचढ़ाहै ॥ ५६ ॥ इस लिंगमें सदा वर्तमान रहकर मैं भक्तोंको भोग और मोक्ष देतारहताहूं, अतएव सर्वात्मना काशीमें त्रिलोचनकी पूजा करनी चाहिए ॥ ५७ ॥ यह कहकर भगवान् त्रैलोचन त्रिभुवन भरसे बड़े होनेपरभी अवाच्यरूप (सूक्ष्मरूप) को धारण कर उसी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मन्दिरके भीतर चलेगये ॥५८॥ इधर ये सब नागकन्यायें अपने अपने घरमें पहुँच अपनी माताओंसे यह सब वृत्तान्त कहकर मानो कृतकृत्य होगईं ॥ ५९ ॥ फिर एकबार वैशाख मासकी महायात्रा आपहुंची, उसी समय त्रिलोचनके पास विराजके महापीठ क्षेत्रमें अपने स्वजन गणके साथ समस्त विद्याधर और नागगण वहां जुटेथे, सुतरां देवके वरदानसे उन लोगोंने एक दूसरेकी कुलपरम्परा इत्यादि समझ बूझलेनेपर ॥ १६० ॥ ६१ ॥ नागोंने विद्याधरके पुत्र परिमलालयको उन तीनोंही कन्याओंका दान करदिया, और मंदारदामभी उन तीनों पुत्रवधुओंको पाकर बडा संतुष्ट हुआ ॥ ६२ ॥ योंही नागराज रत्नदीप, पद्मी, और त्रिशिखिभी परिमलालयको सब प्रकारसे योग्य जामाता पाकर बडेही सन्तुष्ट हुए, और दोनों ओरके बन्धुबांधवगणभी हर्षके मारे विकसितनयन होगये ॥६३॥ ६४ ॥ इस प्रकारसे उन सबोंने विवाहोत्सवको सम्पन्न कर त्रिलोचन लिंगकी बडी बडाई गातेहुए अपने अपने लोककी यात्राकी ॥ ६५ ॥ इसके उपरान्त वह श्रीमान् परिमलालय विद्याधर उन तीनों नागकन्योंके साथ विपुलसुख भोगकर अन्तको काशीधाममें पहुँच श्रीत्रिलोचनकी सेवा करता हुआ ॥ ६६ ॥ और मधुर गीतोंको गाता हुआ उन नागकन्याओंके साथ अपनेको भूलजानेपर उसी त्रिलोचन लिंगमें लीन होगया ॥ ६७ ॥ स्कन्दने कहा—कलियुगमें महादेवने त्रिलोचन लिंगकी महिमाको गुप्तकर रक्खाहै इसीसे अल्प सत्त्ववाले मनुष्यलोग उस लिंगकी उपासना नहीं करते ॥ ६८ ॥ अहो !! यह त्रिलोचनकी कथा यदि पापीकेभी कानोंमें जा पडे तो उसे निष्पाप करके परम गतिका लाभ करासकतीहै ॥ १६९ ॥

दोहा—त्रिपथ गामिनी तीर पै, श्रीतिरलोचन घाट ।
वहां त्रिलोचन हरत हैं, त्रिभुवनके अघ ठाट ॥ १ ॥
अछय तृतीयापर्वपर, काशीके सब लोक ।
वहां नहाय नसावते, अपने दुख अघ शोक ॥ २ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्धे भाषायां षट्सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७६ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२१७

सतहत्तरवां अध्याय।

श्रीकेदारेश्वरका माहात्म्य।

पार्वतीने कहा—हे प्रणतजनदयानिधे ! देवदेवेश ! मैं आपको प्रणाम करतीहूं, आप भक्तोंपर कृपाकरके केदारेश्वरका माहात्म्य वर्णन कीजिए ॥ १ ॥ क्योंकि काशीमें उस लिंगपर आपकी बडीही प्रीतिहै, और उसके भक्तलोगभी नित्यही बडे बुद्धिमान् होतेहैं ॥ २ ॥ महादेव बोले—हे अपर्णे ! मैं केदारेश्वरकी कथाको कहताहूं, श्रवण करो, इसके सुननेसे पापीभी तुरतही निष्पाप होजाताहै ॥ ३ ॥ जो पुरुष दृढचित्त होकर केदारेश्वरकी यात्रा करनेकी इच्छा करताहै, उसके जन्मभरके संचित पाप उसी क्षणमें नष्ट होजातेहैं ॥ ४ ॥ और जो कोई केदारयात्राके लिए घरसे निकल पडता है, उसके तो दो जन्मके उपार्जित पापभी शरीरसे अवश्यही निकल भागतेहैं ॥ ५ ॥ एवं जो कोई आधा मार्ग साधलेताहै उसके तीन जन्मके पाप देहरूप गेहसे बाहर हो उसीसेलेते हुए निराश होकर परायजातेहैं ॥ ६ ॥ यदि कोई घरमेंभी रहकर सन्ध्या समय तीनबार केदारका नाम लेलेवे तो उसे निश्चय करके केदारकी यात्राका फल मिल जाताहै ॥ ७ ॥ केदारनाथके शिवालयका शिखर देख, और वहांका जल पीकर सभी कोई अपने सात जन्मोंके पापोंसे छूटजाताहै इसमें कुछ सन्देह नहीं है ॥ ८ ॥ हरपापकुंडमें स्नान और केदारेश्वरके पूजनसे तो करोडों जन्मके पातक छूटजातेहैं, यह बात निश्चितहै ॥ ९ ॥ यदि कोई हरपापमें स्नानादिकृत्योंको कर अपने हृदय रूप कमलमें केदारेश्वरलिंगको रख एक बारभी प्रणाम करे तो वह अन्तमें मुक्तिको प्राप्त करताहै ॥ १० ॥ हरपाप हृदपर श्रद्धापूर्वक श्राद्धकरे तो उसके सात पुरुषोंका उद्धार होजाताहै एवं वह मनुष्य मेरे लोकमें चलाजाताहै ॥ ११ ॥ हे अपर्णे ! पूर्व—रथन्तर कल्पमें जो बात यहां हुईथी, उसे मैं तुम्हारे आगे प्रकट करताहूं, कान देकर सुनो ॥ १२ ॥ एक ब्राह्मणका लडका पिताके यज्ञोपवीत करदेनेपर ब्रह्मचर्यका व्रतधारण करके उज्जयिनीसे यहां आया ॥ १३ ॥ वह जटामुकुटसे भूषित, लिंगपूजक, भस्मसे लेपित शरीर, भिक्षामात्रके अन्नसे संतुष्ट, गंगाके जलपानसे पुष्ट पाशुपत ब्राह्मणोंसे चारोंओर भरीहुई शिवपुरी काशीको देख ॥ १४ ॥ १५ ॥ बहुतही प्रसन्न हुआ, और (वहींपर) हिरण्यगर्भनामक आचार्यसे उसने परमोत्तम पाशुपत व्रतको ग्रहण किया ॥ १६ ॥ उस शिष्यका नाम वशिष्ठ था, वह समस्त शैवोंमें प्रधान होगया, वह प्रतिदिन प्रातःकाल (सूत) उठनेपर हरपापकुंडमें नहाता

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

॥ १७ ॥ और नित्यही भस्मसे स्नान कर त्रिकाललिंगका पूजन करता, एवं शिव-लिंग और गुरुमें कुछभी अन्तर नहीं समझता था, ॥ १८ ॥ (एकबार) जब वह बारह वर्षका था अपने गुरुके साथ केदारेश्वरकी यात्राके लिए हिमालयपर्वतपर गया ॥ १९ ॥ जहां जानेसे संसारियोंको कभी कोईभी शोच नहीं करना पडता, और वहांके लिंगरूप जलके पीनेसे लोग स्वयंभी लिंगरूपको प्राप्त होजाते हैं ॥ २० ॥ इसके अनंतर वशिष्ठके आचार्य तपस्वी हिरण्यगर्भ असिधारपर्वतपर पहुँचकर कालके ग्रास होगये ॥ २१ ॥ फिर उनको सब तपस्वियोंके देखतेही देखते शिवके पारिषद लोग स्वेच्छाचारी विमानपर चढाकर बडे हर्षसे कैलासमें लेगये ॥ २२ ॥(क्योंकि) केदारेश्वरके उद्देश्यसे जो कोई यात्रा करताहै वह यदि आधे मार्गमें अकातर रहकर मर जावे तो बहुत दिनोंतक कैलासमें वास करताहै ॥ २३ ॥ उस आश्चर्य्यघटनाको देखकर वह तपोधन वशिष्ठ निश्चयरूपसे केदारहीको सब लिंगोंमें बडा समझने लगा ॥ २४ ॥ पश्चात् वह केदारेश्वरकी यात्रा करके फिर काशीमें लौटआया, और इस नियमको धारणकरके यथार्थरीतिसे उसका पालनभी करनेलगा, कि ॥ २५ ॥ प्रति वर्ष चैत्रकी पूर्णिमाको जबलों मैं जीता रहूंगा काशीमें रहनेपरभी केदारेश्वरका दर्शन कियाकरूंगा ॥ २६ ॥ फिर तो आनन्दवनमें रहकर उस बालब्रह्मचारीने सम्यक् प्रकारसे केदारनाथकी एकसठ यात्रा बडे हर्षसे कीं ॥ २७ ॥ अनंतर वह तपस्वी बालोंके बहुत श्वेत होजानेपरभी बडे उत्साहके साथ सन्तुष्टचित्तसे फिर चैत्रमासके निकट आनेपर यात्राका प्रबंध करनेलगा ॥ २८ ॥ यह देखकर उसके संगी दूसरे तपस्वीलोग वृद्धताके कारण उसकी मृत्युके संदेहवश दयार्द्रचित्तहोकर उसे निषेध करनेलगे ॥ २९ ॥ पर उस दृढचित्त शैवका उत्साह नहीं टूटा, उसने शोचा कि, यदि मैं मार्गहीमें मरजाऊंगा तो भी गुरुकी नाईं मेरी गति होजावेगी ॥ ३० ॥ हे पार्वति! इस प्रकारके दृढसंकल्प और द्विजमात्रके अन्नभोजी उस पवित्र तपोधन पर मैं बडा प्रसन्न हुआ ॥ ३१ ॥ और स्वप्नमें उस तापसोत्तम वशिष्ठसे बोला कि हे दृढव्रत! मैं तुम्हारे ऊपर प्रसन्नहूं, तुम मुझको केदारेश्वर जानो ॥ ३२ ॥ और जो कुछ तुमको अभीष्टहो उस वरकी मुझसे प्रार्थनाकरो, इसमें कोई बिचारकी आवश्यकता नहीं है, मेरे इस कहने परभी उसने कहा कि स्वप्न तो झूठा होताहै ॥ ३३ ॥ तब फिर मैंने उससे कहा कि, अपवित्र लोगोंहीका स्वप्न झूठा होताहै, पर तुम्हारे ऐसे जितेन्द्रियोंका तो सर्वथा सच्चाही होताहै ॥ ३४ ॥ हे द्विज ! तुम स्वप्नकी शंकाको

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

२१९

छोड़कर वरमांगो मैं प्रसन्नहूं तुमसे सात्त्विक वृत्तिवालोंको कुछभी अदेय नहींहै॥ ३५॥ मेरे इस कहनेको सुनकर हिरण्यगर्भके शिष्य उस तपस्विसत्तमने मुझसे यह वरदान मांगा (कि) ॥ ३६ ॥ हे देवेश ! यदि आप प्रसन्नहीहैं तो मेरे साथ चलनेवाले इन सबलोगोंपर आप अनुग्रह करें, हे शूलिन् ! (बस) मेरा यही वरहै ॥ ३७ ॥ हे देवि ! उस परोपकारी वशिष्ठकी इस बातको सुनकर मैं बहुतही प्रसन्न हुआ, और उससे कहनेलगा कि "तथास्तु" (वैसाही होवेगा) ॥ ३८ ॥ मैंने परोपकार करनेसे उसकी तपस्याको दूनी करदिया, और उसीके पुण्याधिक्यसे फिर कहा कि वरमांगो ॥ ३९ ॥ हे उमे ! उस दृढ़शैवव्रत, महाप्राज्ञ वशिष्ठने मुझसे यही प्रार्थना की, कि आप हिमाचलसे आकर यहांपर वासकरें ॥ ४० ॥ तदनंतर मैं उसके तपसे आकृष्टहो तभीसे हिमालयपर कलामात्र छोड़कर इस काशीहीमें सर्वभावसे रहनेलगा॥ ४१ ॥ फिर तो प्रभात होजानेपर सब लोगोंके समक्षही देवता और ऋषियोंकी स्तुतिके सहित मैंने हिमालयसे प्रस्थान किया ॥ ४२ ॥ और समस्त यात्रिवर्गके साथ वशिष्ठको अग्रसर बना उस पर अनुग्रह करके हरपाप ह्रदतीर्थपर निवास किया ॥ ४३ ॥ मेरेही संबन्धसे हरपाप ह्रदमें स्नान और मेरा आराधन करके वे सब वशिष्ठके साथी लोगभी इसी शरीरसे सिद्धिको प्राप्त होगये ॥ ४४ ॥ तभीसे मैं अविमुक्तक्षेत्रमें विशेष करके कलियुगके समय इसीलिंगमें साधक लोगोंकी सिद्धिके लिए (सर्वदैव) वास करनेलगा ॥ ४५ ॥ हिमालयपर्वतपर चढ़कर केदारनाथके दर्शनसे जो फल मिलताहै, काशीमें केदारेश्वरके दर्शनसे उसका सातगुना अधिक पुण्य होताहै ॥ ४६ ॥ जैसे हिमाचलपर निर्मल गौरीकुंड, हंसतीर्थ, और मधुस्रवागंगा विराजमानहैं, काशीमेंभी वे सब ज्योंके त्यों वर्त्तमानहैं ॥४७॥ यह हरपाप तीर्थ (पहिलेतो) सातही जन्मके पापोंको हरताथा, पर जबसे गंगामें मिलगया तबसे करोडों जन्मके कियेहुए पापोंका नाश करडालताहै ॥ ४८ ॥ यहांपर पूर्वकालमें दो (डोम) कौवे लडतेहुए आकाशसे गिरपडेथे, सो वे दोनों वहां वालोंके देखतेही देखते हंस होकर निकल गये (इससे तो यह हंसतीर्थ हुआ और) ॥ ४९ ॥ हे गौरि ! इस महाह्रदमें पहिलेपहिल तुम्हीने स्नान कियाथा इस कारणसे यह सब तीर्थोंमें परमोत्तम गौरीकुण्डके नामसे प्रसिद्ध हुआ ॥ ५० ॥ यहांपर गंगाभी मधुस्रवा कहलातीहैं, क्योंकि वह यहां महामोहांधकारको हरती एवं अनेकजन्म जनित जडताको दूरकरतीहैं ॥ ५१ ॥ इसी हरपापतीर्थ पर मानसनामक सरोवरने पूर्वकालमें बड़ी कठोर तपस्या की थी इसीसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इसको लोग मानसतीर्थ कहनेलगे ॥ ५२ ॥ पहिले तो लोग इस तीर्थमें केवल स्नानही करलेनेसे मुक्त होजाते थे पर पीछेसे मुक्तिके विषयमें दुर्दशाग्रस्त देवतोंने (आकर) मुझसे प्रार्थना की कि ॥ ५३ ॥ हे देव ! इस केदारकुण्डमें स्नान करनेसे यदि सभीलोगोंको मुक्ति मिल जायाकरेगी तो फिर सभी वर्ण, आश्रम, और धर्मियोंका उच्छेद (होकर सृष्टिका लोप) होजावेगा, इसलिये आप यहांपर शरीर त्यागनेवालोंहीको मुक्तिदेवें, अन्यथा मत दियाकीजिये ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ उनलोगोंके अनुरोधसे मैंने तथास्तु (तो) कहदिया (पर) हे महादेवि ! तबसे केदारकुंडमें स्नान ॥ ५६ ॥ भक्तिभावसे मेरा पूजन और नामके जपकरनेसे अन्यत्र मरनेवालोंकोभी मैं मोक्षलक्ष्मीका दान करनेलगा ॥ ५७ ॥ केदारतीर्थमें स्नान कर यदि कोई स्थिरचित्तसे पिंडदान करेगा तो उसके एकसौएक पुरुषे भवार्णवसे पार होजावेंगे ॥ ५८ ॥ यदि भौमवती अमावास्यामें कोई केदारकुण्डपर श्राद्ध करसके तो फिर उसे गयामें श्राद्ध करनेका कौन प्रयोजनहै ? ॥ ५९ ॥ यदि कोई केदारकी यात्रा किया चाहता हो तो लोगोंको यही बुद्धि देनी चाहिये कि, काशीहीमें केदारेश्वरका स्पर्श करके तुम कृतकृत्य होजावोगे ॥ ६० ॥ जो कोई चैत्रमासकी कृष्ण चतुर्दशीको व्रत रहकर प्रातःकाल यदि तीन घोंट जल (वहांपर) पीलेवे तो उसके हृदयमें लिंगका वास होजाताहै ॥ ६१ ॥ हिमालयके केदारोदकका पान करनेसे जो फल होताहै, यहांपरभी निस्सन्देह वही पुण्य स्त्री हो अथवा पुरुष हो सभी लोगोंको मिलजाताहै ॥ ६२ ॥ जो कोई धन, वस्त्र, और अन्न इत्यादिके द्वारा केदारेश्वरके भक्तकीभी पूजा करताहै, वह अपने जन्मभरके पापोंसे छूटकर मेरे स्थानमें प्राप्त होताहै ॥ ६३ ॥ छमासपर्यंत जो कोई प्रतिदिन तीनबार (त्रिकालमें) केदारनाथको प्रणाम करताहै, उसे यमराज आदिक लोकपाललोग सर्वदैव नमस्कार करतेहैं ॥६४॥ कलियुगमें सब कोई केदारेश्वरकी महिमाको नहीं समझसकते, पर जो जानताहै वह पुण्यात्मा सब कुछ जानसकता है यह बात ध्रुवहै ॥ ६५ ॥ हे देवि ! जो कोई एक बारभी केदारेश्वरका दर्शन करलेताहै वह मेरा अनुचर होताहै, अतएव प्रयत्न उठाकर काशीमें केदारनाथका दर्शन करना चाहिये ॥ ६६ ॥ केदारेश्वरके उत्तरभागमें परमोत्तम चित्रांगदेश्वरनामक लिंग विराजमानहै, उसके पूजनसे मनुष्य स्वर्गके नित्य भोगोंको पाताहै ॥ ६७ ॥ केदारेश्वरके दक्षिणभागमें नीलकंठेश्वरके दर्शनसे संसाररूपी सर्पके डँसेहुए लोगोंको (दुःख रूप) विषसे कोई भय नहीं रहनेपाता ॥ ६८ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२२१

उसके वायव्यकोणपर अंबरीषेश्वरके दर्शन करनेसे मनुष्य दुःखमय संसारमें गर्भवासकी यातना नहीं भोगनेपाता ॥ ६९ ॥ उसीके पासमें इन्द्रद्युम्नेश्वरनामक लिंगके पूजन करनेसे मनुष्य तेजोमय विमानपर चढकर स्वर्गलोकमें आनन्द करताहै ॥ ७० ॥ उसके दक्षिणओर कालंजेश्वरनामक लिंगके दर्शन करनेसे मनुष्य जरा और कालको जीतकर मेरे लोकमें बहुत दिनोंतक वास करताहै ॥ ७१ ॥ चित्रांगदेश्वरके उत्तर ओर क्षेमेश्वर लिंगके दर्शन करनेसे सर्वत्रही अर्थात् इसलोक और परलोकमेंभी क्षेमही मिलताहै ॥ ७२ ॥ स्कन्दने कहा—हे विन्ध्यविमर्दक ! इस प्रकारसे महादेवने श्रीकेदारेश्वरका बडाभारी माहात्म्य जगदम्बासे निरूपण कियाथा सो सब मैंने तुमसें कहदिया ॥ ७३ ॥ जो मनुष्य केदारेश्वरके प्रकटहोनेकी कथाको श्रवण करताहै वह क्षणमात्रमें निष्पाप होकर शिवलोकमें चलाजाताहै ॥ ७४ ॥

दोहा—गौरीकुंड नहायकै, जो केदारहिं देख ।
सो मनुष्य निष्पाप ह्वै, सब लेखनमें लेख ॥ १
शोभन सावन मासमें, सोमवार परदोष ।
केदारेश्वर घाटपै, मेला लगत निदोष ॥ २ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्धे भाषायां सप्तसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७७ ॥

अठहत्तरवां अध्याय ।

धर्मेश्वरलिंगके उत्पत्तिकी कथा ।

पार्वती बोलीं—हे शम्भो ! आनन्दकाननमें ऐसा कौनसा लिंगहै जो पुण्यका दायक हो, और जिसके नामका स्मरण करनेहीसे समस्त महापातकोंका क्षय होजावे ? ॥ १ ॥ एवं साधक लोग जिसपर बडी प्रीति रखकर सदैव जिसका सेवन किया चाहतेहैं, और जिसकें समीपमें कियाहुआ दान, ध्यान, जप, और होम (इत्यादि) अक्षय होजाता होवे ॥ २ ॥ फिर जिस लिंगके स्मरण, दर्शन, स्पर्शन, प्रणाम ॥ ३ ॥ और पंचामृतस्नपन—पूर्वक पूजन करनेसे असीम कल्याण होवे हे ईशान ! आप उस लिंगको वर्णन कीजिये ॥ ४ ॥ स्कदने कहा—हे घटज ! भगवतीके इस प्रश्नको सुनकर सर्वज्ञ भगवानने जो कुछ उत्तर दिया था, उसे मैं कहताहूं तुम श्रवण करो ॥ ५ ॥ महादेवने कहा-हे उमे ! देवि ! तुमने जो संसारके बन्धन छुडानेवाले लिंगको पूछा सो मैं कहताहूं स्थिरचित्त होजाओ ॥ ६ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(क्योंकि) इस आनंदवन काशीक्षेत्रमें यह मेरा बडाभारी रहस्यहै, और इस बातको (आजतक) मैंने किसीसे नहीं कहाहै, कारण ऐसे प्रकारसे कोई पूछनेही नहीं जानते ॥ ७ ॥ हे प्रिये ! यद्यपि मेरे आनन्दवनमें अनेकलिंग वर्तमानहैं परंतु तुमने जैसे पूछाहै मैं तुम्हारे अभिप्रायके अनुरूप (वैसाही लिंग) तुमसे कहताहूं ॥ ८ ॥ हे विश्व गे। जहांपर स्वयं तुम्ही मुक्तिस्वरूपाहो, और जहांपर तुम्हारे पुत्रभी क्षेत्रके विघ्नोंका विघात करते रहतेहैं ॥ ९ ॥ जिसने त्रिपुरासुरके संग्रामकालमें जयकी आकांक्षासे बडी स्तुति करने और लड्डू चढानेसे मेरीभी जयाशाको पूर्ण कर दियाथा ॥ १० ॥ जहांपर पापनाशक और पितरोंका प्रीतिवर्द्धक एक उत्तमतीर्थ है, इन्द्रभी जिसमें स्नान करके वृत्रासुरकी हत्यासे छूटगये थे ॥ ११ ॥ फिर जहांपर धर्मराजनेभी समाधि लगाय बडी कठोर तपस्या करके धर्माधिकारी (दंडधर) के पदको पायाहै ॥ १२ ॥ जहांपर पक्षीलोगोंनेभी भवमोचक ज्ञानको प्राप्त कियाथा, और जिस स्थानपर एक सोहावना बरगदका पेड सुवर्णमय होचुका है ॥ १३ ॥ फिर जिस लिंगके केवल दर्शन करनेहीसे राजा दुर्दम जो कि लोगोंको उद्वेजितकर (उबिआय) देता था क्षणमात्रमें धर्म बुद्धि बन गयाथा ॥ १४ ॥ हे सुन्दरि ! उसी महापातक नाशक लिंगका माहात्म्य और आविर्भाव मैं वर्णन करताहूं, श्रवण करो ॥ १५ ॥ मेरे इस आनन्दवनमें यह स्थान धर्मपीठके नामसे प्रसिद्धहै, और इस पीठके दर्शनसे मनुष्य सब पापोंसे छूटजाताहै ॥ १६ ॥ हे विशालाक्षि ! पूर्वकालमें सूर्यनारायणके पुत्र परमसंयमी यमराजने (वहींपर) तुम्हारे सन्मुखही घोरतपस्या की थी ॥ ॥ १७ ॥ वह शिशिर ऋतुमें जलके बीचमें बैठ, वर्षामें अनाच्छादित भावसे रह, एवं ग्रीष्मकालमें पंचाग्नि तापकर, तपस्याको करनेलगा ॥ १८ ॥ वह बहुत दिनोंतक तो एक पैरसे खडा रहकर फिर पीछे केवल अंगूठासे भूमिको स्पर्श करताहुआ तपस्या करता रहा ॥ १९ ॥ उस भाग्यवान् यमने बहुत समय तो केवल वायुभोजनहीसे बितादिया एवं प्यास लगनेपर कुशाग्रभागसे टपकनेवाले बून्दोंहीको चाटकर कालको काट दिया ॥ २० ॥ वह मेरेही दर्शनके लिये, उग्र समाधि लगाकर चारों युगोंकी चार चौकडीतक घोर तपश्चर्या करता रहा ॥ २१ ॥ तबतो उस हृच्चित्त महात्मा यमराजकी तपस्यासे बडाही संतुष्ट होकर मैं वरदान करनेके लिये वहां गया ॥ २२ ॥ जहांपर कांचनशाखनामक वट जो अनेक पक्षियोंसे भरा और बडी छाया युक्त होनेसे तपस्याजनित संतापोंको (दूर करताथा) ॥ २३ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२२३

जो वट मन्द मन्द वायुके धक्केसे हिलतेहुए पल्लवरूपी करपल्लवोंके द्वारा मार्गश्रमसे नितांत क्लान्त (थकेहुए) पथिकोंको (अपनी ठंढी छायामें) विश्राम करनेके लिए मानो पुकार रहाथा ॥ २४ ॥ एवं जो लोग उसपर अनुराग करके उसका आश्रय ग्रहण करतेथे उन अर्थियोंको वह अपने गोलगोल पक्के सुगन्धित और स्वादिष्ठ फलोंसे संतुष्ट कर देताथा ॥ २५ ॥ उसी बडे बरगदके नीचे (पहुँचकर) मैंने यमराजको देखा वह (तो मानो) अत्यंतनीले आकाशमंडलमें अपने तेजसे देदीप्यमान सूर्यकी नाईं फैलतेहुए तपस्याके तेजसे चारोंओर परिधि (मंडल) से वेष्टित, और बडीभक्तिसे अपने नामानुसार सूर्यकांत मणिका महालिंग स्थापित कर मानो तेजपुंजहीसे उसको पूजित करताहुआ, उसी लिंगको साक्षी बनाकर स्थाणुकी नाईं निश्चल देह होय और नासाके अग्रभागपर दृष्टि देकर तपन तनय घोर तपस्या कररहाथा, तब मैंने धर्मराजसे कहा हे भास्करनन्दन ! वरमांगो, हे महाभाग ! अब तपस्या करनेका कोई प्रयोजन नहीं है, हे सुव्रत ! मैं बहुतही प्रसन्नहूं, यह सुनकर यमराजने मेरी ओर ताककर प्रणाम किया ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ और परम हृष्टचित्त हो, निष्कपटभावसे समाधिको छोडकर भानुनन्दन मेरी स्तुति करनेलगा ॥ ३१ ॥ धर्मराज कहने लगे हे कारणोंकेभी कारण ! आपको नमस्कारहै हे कारणरहित ! आपको प्रणामहै, हे देव ! आप समस्तकार्योंके स्वरूप होनेपरभी कार्योंसे पृथक् स्वरूपहैं, अतएव आपको वारंवार नमस्कारहै ॥ ३२ ॥ हे शशिमौले ! यद्यपि आप रूपहीनहैं, पर (मायाकरके) समस्त रूपोंसे परिपूर्ण हैं, फिर आप परमाणु स्वरूपहैं, तौभी कार्य कारण रूपहैं, हे अपारपार ! आपही संसाररूपी घोरसमुद्रके पार पहुँचानेवाले हैं अतएव आपको नमस्कार करताहूं, ॥ ३३ ॥ हे स्वामिन् ! आपका ईश्वर तो कोईभी नहीं है पर समग्र जगत्के ईश्वर आपहीहैं, आप गुणात्मक होनेपरभी गुणातीतहैं, आप स्वयं कालमूर्ति होकरभी काल और प्रकृतिसे परेहैं परन्तु आपही कालात्मक प्रकृतिहैं, अतएव आपको नमस्कारहै ॥ ३४ ॥ हे अनंतशक्ते ! आपही निर्वाणहैं और आपही निर्वाणपदके दाताहैं, आपही आत्मा और आपही परमात्माके रूपहैं, एवं समस्त चराचरके अंतरात्माभी आपहीहैं ॥ ३५ ॥ हे जगदेकबंधो ! यह सारा जगत् आपहीसे है, और आपही साक्षात् विश्वरूप हैं, एवं समस्त संसार आपहीका है, क्योंकि पहिले तो इसके स्रष्टा फिर पालयिता और अन्तमें संहर्ता ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र रूप आपही हैं, अतः आपको वारंवार नमस्कारहै ॥ ३६ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जो लोग वेदमार्गानुसारीहैं, उनके लिए आप सुखमय मृडस्वरूपहैं, और जो लोग वेदके विरुद्ध आचरण करतेहैं उनके लिए आपही भयंकर भीममूर्ति होजातेहैं, हे उमा-सहित ! अपने भक्तोंके लिए तो आप शंकरहैं पर भक्तिहीनोंके लिये आपही उग्ररूपहैं अतएव हे रुद्र ! आपको अनेकवार नमस्कारहै ॥ ३७ ॥ हे नाथ ! द्वेषियोंके हेतु आप शूलपाणिहैं, परन्तु मनसा वचसा प्रणतजनोंके लिए आपही शिवरूपहैं, अपने चरणशरणोंके विषयमें आप एकमात्र श्रीकंठहैं, पर दुरात्माओंके निमित्त तो आप हलाहल विषधारी उग्र नीलकंठ (स्वरूप) होजातेहैं ॥ ३८ ॥ हे शान्तमूर्ते ! शंकर ! शम्भो ! चन्द्रकलावतंस ! फणिभूषण ! पिनाकपाणे ! अन्धकारिपो ! आपके कोटिशः नमस्कारहै ॥ ३९ ॥ हे भगवन् ! जो कोई (इस संसारमें) आपकी भक्ति अथवा पूजाको करसकताहै वही धन्य और सुकृती होताहै, एवं जो कोई आपकी स्तुति करताहै वह तो इन्द्रादिदेवोंसेभी स्तूयमान होजाताहै ॥ ४० ॥ हे असीमम-हिमन् ! भला मुझसा मन्दबुद्धि, सम्पन्न जन आपकी स्तुति क्योंकर कर सकताहै। जब कि इस लोकमें आप प्राचीन लोगोंके भी वचनगोचर नहीं हुए तो मेरी यह स्तुति तो केवल प्रणतिमात्रहुईहै ॥ ४१ ॥ स्कन्दने कहा—सूर्यके पुत्र यमराज इस-प्रकारसे स्तुति गानकर अत्यंत दृढचित्तसे नमःशिवाय कहतेहुए बडीभक्तिसे भूतलमें माथा टेककर महादेवको सहस्रबार प्रणामही करते रहे ॥ ४२ ॥ तबतो भगवान् शंकरने तपकरनेसे बडेही खिन्न यमको प्रणाम करनेसे रोककर वरदान किया कि तुम्हारा नाम धर्मराज होवे ॥ ४३ ॥ और आजके दिनसे मैं तुमको स्थावर और जंगम समस्त देहधारियोंके धर्माधिकारपर नियुक्त करताहूं, अतएव मेरे आदेशसे तुम सब लोगोंके धर्म और अधर्मका शासन करो ॥ ४४ ॥ एवं दक्षिणदिशाके अधीश्वर होकर तुम समस्तप्राणियोंके कर्मसाक्षी बनेरहो, और तुम्हारे दर्शितमार्गके अनुसारही उत्तम और अधम लोग यहांसे अपनी अपनी गतिको प्राप्त करसकेंगे ॥ ४५ ॥ हे धर्मराज ! मेरे परमभक्त तुमने इस काशीमें जो इस लिंगकी आराधना की है इसके दर्शन स्पर्शन और पूजनसे लोग थोडेही कालमें सिद्धिलाभ करसकेंगे ॥ ४६ ॥ जो कोई शुद्धबुद्धिसे तुम्हारे सन्मुख इस धर्मतीर्थमें नहाकर एकबारभी धर्मेश्वरका दर्शन करलेवेगा उसके लिये चतुर्वर्गकी सिद्धि कुछ दूर नहीं रहजावेगी ॥ ४७ ॥ यदि कोई सहस्रों पाप करने परभी दैवयोगसे काशीमें धर्मेश्वरका दर्शन पाजावे तो उसे कभी नरकका क्लेश नहीं भोगना पडे, वरंस्वर्गमें देवतालोगभी उसकी चर्चा करते

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२२५

रहतेहैं॥४८॥हे धर्म ! जो मनुष्य इस संसारमें काशीके धर्मपीठस्थानको पाकरभी अपने कल्याणका प्रयत्न नहीं करता, भला वह अपनेको तुमसा तेजस्वी और कृतकृत्य कैसे बनासकेगा॥४९॥हे धर्मराज ! यहांपर जैसे तुमने अपनी बडी तपस्याओंसे अपने सब मनोरथोंको पूर्ण करलिया, वैसेही धर्मेश्वरके भक्तोंकी सब कामनायें निस्सन्देह सफल होजावेंगी ॥ ५० ॥ बडेसे बडे पापोंको करके जो कोई यहांपर एक बारभी धर्मेश्वरका पूजन करलेवेगा, वह तुम्हारे पूजित लिंगके भक्त होनेसे तुम्हारा प्यारा बन्धु बनकर फिर तुमसे क्यों डरेगा ? ॥ ५१ ॥ हे धर्म ! जो कोई पत्र, पुष्प, दूर्वा, और जल इत्यादिसे धर्मेश्वरका पूजन करेगा, देवतालोग बडी प्रसन्नताके साथ मन्दारकी मालाओंसे उसकी पूजा करेंगे ॥ ५२ ॥ जो लोग पाप करनेके कारण तुमसे डरते होंगे, वे सब धर्मेश्वरकी अर्चनाकी रचनाकर बन्धुतासे तुम्हारे मनको प्रसन्न करके तुमसे कदापि नहीं डरेंगे ॥ ५३ ॥ लोग यहांपर उत्तरवाहिनी गंगामें स्नान और धर्मेश्वरलिंगको प्रणाम कर इस धर्मपीठपर जो कुछ दान करेंगे वह युगान्तरमेंभी अक्षयफलको देवेगा ॥ ५४ ॥ कार्तिकमासकी शुक्ला अष्टमीके दिन व्रत रहकर जो लोग धर्मेश्वरमें बडे उत्सवोंके साथ यात्रा और रात्रिमें जागरण करेंगे पृथिवीपर फिर उनका जन्म कभी नहीं होगा ॥ ५५ ॥ जो मनुष्य तुम्हारी कहीहुई इस स्तुतिको तुम्हारे आगे कभी पढेंगे वे निष्पाप होकर मेरे लोकमें जावेंगे और तुम्हारे मित्र होवेंगे ॥ ५६ ॥ हे सूर्यनन्दन धर्मराज ! तुम्हारे लिए मुझे कुछभी अदेय नहीं है, अतएव जो कुछ इच्छाहो औरभी वर मांगलो तुमको केवल कहदेनेही भरका परिश्रम उठाना पडेगा ॥ ५७ ॥ (स्कन्दने कहा) यमराज अपने मनोरथ पूरक करुणामय भगवान् शंकरको प्रसन्नमूर्ति देख आनन्दरसके सरोवरमें डूबकर क्षणमात्र (निस्तब्धहो) कुछभी नहीं बोलसके ॥ ५८ ॥

दोहा—धर्ममूल संसार सब, धर्महिसे शुभ कर्म ।
शुभ कर्मनके शर्मफल, करु विचार तजि भर्म ॥ १ ॥
पुरुषार्थनमें श्रेष्ठ है, धर्महि सो तनु धारि ।
तप कीन्ह्यो धर्मेश हित, कहुको तस अनुहारि ॥ २ ॥

इति श्रीस्कंदपुराणे चतुर्थे काशीखंडे उत्तरार्धे भाषायां धर्मेश्वरलिंगोत्पत्ति-कथनन्नाम अष्टसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७८ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उन्नासिवां अध्याय ।

धर्मेश्वरका उपाख्यान ।

स्कन्दने कहा—सुधासागर भगवान् शंकरने धर्मराजको आनन्दवाष्पके जलसे रुद्धकंठ देखकर अमृतवर्षी अपने दोनों हाथोंसे उनको सुहरादिया ॥ १ ॥ तब तो वे परमतपस्वी धर्मराज उस स्पर्शके सुखसे फिर तपोरूप अग्निसे प्रज्वलित अपने शरीरको अंकुरित (रोमांचित) करने लगे ॥ २ ॥ तदनंतर तपनन्दन शान्त परिषदोंसे घिरेहुए, परमशान्त, प्रसन्नमुख, देवदेव उमापतिसे बोले ॥ ३ ॥ हे सर्वज्ञ ! करुणानिधे ! ईशान ! जब आप प्रसन्न हुए तभी तो मैं आपका साक्षात्कार करसका, अब दूसरे वरका कौन प्रयोजन है ? ॥ ४ ॥ (पर) जिसे न तो वेदोंहीने जाना, न दोनों वेद पुरुष ब्रह्मा और विष्णुही समझसके, उसके निकट मैं वरदानके योग्य ठहरा, तो फिर हे नाथ ! मैं प्रार्थना करताहूं ॥ ५ ॥ हे श्रीकण्ठ ! इन सब मधुरभाषी, मेरे तपके साक्षी, मेरे आगेके उत्पन्न, ॥ ६ ॥ माता पितासे रहित, इतिहास और कथाओंके ज्ञाता, आहार विहारत्यागी, सुग्गाके बच्चोंको (कुछ) वरदान कीजिए ॥ ७ ॥ इन सबोंके जनमनेहीकी वेलामें रोगसे पीडित होकर सुग्गी तो मरगई और सुग्गेको बाजने खाडाला ॥ ८ ॥ अतएव सर्वथा अनाथ होकर मेराही मुख ताकनेवाले इन पक्षियोंको, हे अनाथनाथ ! आपहीने आयुष्य शेषस्वरूप होकर रक्षित कियाथा ॥ ९ ॥ हे महर्षे ! महादेव धर्मराजके परोपकारसे निर्मल इस वचनको सुन, बडेही प्रसन्न हो, विनयसे नम्रमुख उन सब शुकशावकोंको बुलाकर यह बात कहनेलगे कहो धर्मसंगत साधु पक्षिगण ! तुमलोग सत्संग करके अपने जन्मांतरके सब पापोंको क्षीणकर चुके हो और धर्मेश्वरके परिचारक हो, अतएव तुम लोगोंको कौनसा वरदान कियाजावे ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ इस भाँतिसे महेश्वरके वचनको सुनकर उन सब पक्षियोंने शंकरको प्रणाम करके कहा कि, हे भवनाशन ! भव ! आपको नमस्कार है ॥ १३ ॥ (फिर) वे सब पक्षी कहनेलगे कि, हे अनाथनाथ ! सर्वज्ञ ! हमलोग तिर्यक्योनिमें रहकरभी जो साक्षात् आपका दर्शन पारहेहैं भला इससे बढकर और कौन वर है जिसकी इच्छा करें ॥ १४ ॥ हे गिरीश ! उद्यमशील लोगोंके ऐहिक सैकडोंही लाभ हो सकतेहैं, पर आप जो नयनगोचर होरहे हैं यह तो परमलाभ होरहाहै ॥ १५ ॥ हे नाथ ! यह जो कुछ दिखाई पडता है वह सब क्षणभंगुरहीहै, केवल आप और आपकी पूजाही भर अभंगुर है ॥ १६ ॥ इस तपस्वीके रचित लिंगकी पूजाके देने-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२२७

जैसे हमलोगोंको करोडों जन्मकी विचित्र स्मरणशक्ति प्रस्फुरित होरहीहै ॥ १७ ॥ हे ईशान ! हम सबोंने देवयोनिभी पाई थी उस घडी लीलानुसार बहुतदिनोंतक सहस्रशः दिव्यांगनाओंका भोगभी किया था ॥ १८ ॥ असुरयोनि, दानवयोनि, नागयोनि, राक्षसयोनि, किन्नरयोनि, विद्याधरयोनि और गन्धर्वयोनियोंकोभी प्राप्त कियाथा ॥ १९ ॥ मनुष्ययोनिमें तो अनेकबार राजाभी हुए जलमें जलचर; स्थलपर स्थलचर, ॥ २० ॥ वनमें वनेचर, एवं ग्राममें ग्रामवासी (गँवार) भी बने, दाता, याचक, रक्षक, घातक, ॥ २१ ॥ सुखी, दुःखी, विजयी, पराजयी, ॥ २२ ॥ अध्ययनशील, मूर्ख एवं स्वामी और सेवकभी होचुके (कहांतक कहें) चारों प्रकारके भूतग्रामोंमें हम सब उत्तम मध्यम और अधम ॥ २३ ॥ बहुत कुछ हुए परन्तु हे शम्भो ! स्थिरताको कहीं परभी नहीं पासके, इस योनिसे उस योनिमें और उस योनिसे फिर दूसरी योनिमें (चकरातेहुए) ॥ २४ ॥ हे पिनाकिन् ! किसी योनिमें कुछभी सुखका लेश नहीं प्राप्त करसके, पर इस घडी धर्मेश्वरके दर्शन जनित पुण्यभारसे ॥ २५ ॥ एवं धर्मराजके तपरूपी अग्निकी ज्वालासे पापोंके जलजानेके कारण हे व्यक्ष ! आपका साक्षात् दर्शन पाकर कृतार्थ होगये ॥ २७ ॥ हे धूर्जटे ! तथापि यदि दीन हीन शोचनीय इन सब पक्षियोंकोभी (आप) वर दिया चाहतेहैं तो हे सर्वज्ञ ! वह ज्ञान, दान, कीजिए ॥ २७ ॥ जिस ज्ञानके द्वारा मेरे ऐसे प्राणियोंसे दुर्भेद्य और प्रकृतिके पाशमें नियन्त्रित हमलोगभी इस संसारबन्धनसे छूट्जावें ॥ २८ ॥ हमलोग न तो इन्द्रासनही चाहते हैं, न चन्द्रमाहीके अधिकारकी वांछा रखते हैं, न दूसरेही किसी पदकी इच्छा करते हैं, हे शम्भो ! यदि कुछ चाहतेहैं तो केवल काशीमें मृत्यु;—जिससे फिर जन्म नहीं लेना पडे ॥ २९ ॥ हे सर्वज्ञ ! आपहीके सान्निध्यसे हमलोगभी सबकुछ समझसकतेहैं, जैसे चन्दनके संसर्गसे सभी वृक्ष परिपूर्ण होजाते हैं ॥ ३० ॥ यही परमज्ञान संसारका उच्छेदक है जो आपके आनन्दवनमें कालानुसार शरीरका त्याग होजावे ॥ ३१ ॥ समस्त वाग्जालको मथकर परम सारभूत इसी बातको पहिले ब्रह्माने कहाथा कि, "काशीमें देह त्याग करनेवालोंको मुक्ति मिलतीहै" ॥ ३२ ॥ जो बात बहुतसे ग्रंथोंमें कहने योग्यहै, उसीको भगवान् हरिने सूर्यदेवसे आठही अक्षरोंमें कहाथा कि, "कैवल्यं काशिसंस्थितौ" अर्थात् केवल काशीमें मरनेहीसे कैवल्य मिलताहै ॥ ३३ ॥ मुनिराज याज्ञवल्क्यने भी सूर्यनारायणसे समस्त वेदोंको

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पढकर ऋषिसमाजमें यही कहाथा कि " काशीमें अन्तकाल होनेहीसे परमपद प्राप्त होताहै " ॥ ३४ ॥ पूर्वकालमें (एकबार) स्वामीनेभी मन्दराचलपर जगदम्बाके आगे कहाथा कि, " काशीही निर्वाणकी जन्मभूमी है " ॥ ३५ ॥ हे शंभो ! कृष्णद्वैपायन (वेदव्यास) भी यही बात कहेंगे " जहांपर साक्षात् विश्वेश्वर विराजमान हैं, वहां तो पद पदपर मुक्ति होसकती है इसमें कुछ अन्यथा नहीं है " ॥३६॥ एवं तीर्थ संन्यासकारी लोमश इत्यादि अन्यान्य प्राचीन ऋषिलोगभी यही कहते हैं कि " काशीही मोक्षकी प्रकाशिका है " ॥ ३७ ॥ और हमलोगभी यही समझते हैं कि जहांपर स्वर्गतरंगिणी गंगा बहरही हैं उस महादेवके आनन्दकाननमेंही मोक्ष निश्चित है ॥ ३८ ॥

सवैया—कमलासन औ कमलापतिजू, मुनि याज्ञवलक् यहईं कहि साख्यो ।
पुनि आपहु मंदरपर्वत पै, जगदम्बसे मुक्ति मही वहि भाख्यो ॥
कहिहैं यह व्यासहु लोमश आदिक, हैं कहते हमलोग सुराख्यो ।
जहँ गंग बहै वहि शंभुपुरी, तन त्यागकिये सब मुक्तिहि चाख्यो॥ ३२–३८॥

(इन्ही) धर्मेश्वरके परम अनुग्रहसे हमलोग स्वर्ग, मर्त्य और पातालमें, भूत, भविष्य एवं वर्तमान जो कुछ होताहै वह सब जानजाते हैं ॥ ३९ ॥ हे शंकर ! इसी कारणसे ब्रह्माका कहा, विष्णुका उक्त, मुनियोंका भाषित, एवं आपकाभी कथित सब कुछ हमलोग जानसके हैं ॥ ४० ॥ इसी धर्मपीठके सेवनसे यह समग्र ब्रह्मांड मंडल करतलगत आमलक (आंवरा) फलके समान हमसबोंके जिह्वाग्रभाग पर बना रहताहै ॥ ४१ ॥ हे विभो ! धर्मराजहीके तपःप्रभावसे हमलोग तिर्यग्योनि होनेपरभी विकल्प रहित समस्तज्ञानके पात्र होगये हैं ॥ ४२ ॥ देवदेव इस प्रकारसे मधुर, मृदुल, सत्य, हित, मित, सुसंस्कृत, दृष्टान्तपूर्ण और अनुभव सिद्ध, उन पक्षियोंका बचन सुन ॥ ४३ ॥ बडेही विस्मित होकर उस धर्मपीठकी बडाई करनेलगे, इस त्रैलोक्य रुपीनगरमें यह काशीही मेरा राजमन्दिरहै ॥ ४४ ॥ उसमेंभी मोक्षलक्ष्मी विलासनामक परममंगलमय प्रासाद, बहुत मूल्यके मणियोंसे निर्मित मेरा भोगभवनहै ॥ ४५ ॥ जिस प्रासादके स्वेच्छानुसार आकाशमें विचरण करते हुए पक्षीलोगभी (दैवात्) प्रदक्षिण करजानेसे विमानचारी देवता होजाते हैं ॥ ४६ ॥ मोक्षलक्ष्मी विलासनामक मन्दिरके दर्शन करनेसे ब्रह्महत्याभी शरीरसे दूर चली जाती है इसमें अन्यथा नहीं है ॥ ४७ ॥ जो लोग मोक्षलक्ष्मी विलास नामक मन्दिरके

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

ऊपरका कलसभी देखलेते हैं, उन लोगोंको निधियोंके कलसे पग पगपरभी नहीं छोड सकते हैं ॥ ४८ ॥ इस मन्दिरके शिखरपरकी पताकाकोभी जो लोग दूरहीसे देखलेते हैं, वे सदाके लिए मेरे पाहुने बनजाते हैं ॥ ४९ ॥ उस प्रासादके व्याजसे भूमीको भेदकर आनंदनामक कन्दका यह अपूर्व परमअंकुर स्वयं उग आयाहै ॥ ५० ॥ कैसी आश्चर्यमयी बातहै कि, ब्रह्मासे लेकर स्थावरतक अनेक चित्रस्थित रूपभी सर्वदा मेरीही उपासना करते रहते हैं ॥ ५१ ॥ वही प्रासाद समस्तलोकमें मेरे आनन्दका स्थानहै और वही मेरी रम्य रतिशाला और विश्वास भूमिकाहै॥ ५२॥ यद्यपि मैं सर्वव्यापकहूं पर यह मन्दिर मेरा बडाही प्रधानस्थानहै, परम उपनिषद्के वाक्योंसे जो निराकार ब्रह्म कहाजाताहै, वही निराकार मैं भक्तोंपर अनुकंपा करके साकार होजाताहूं ॥ ५३ ॥ मोक्षलक्ष्मी विलासमन्दिरके दक्षिणभागमें मेरा एक मंडपहै, वहांपर मैं सर्वदा अवस्थित रहताहूं क्योंकि, वही मेरा सभामंडप है॥ ५४॥ वहांपर जो कोई आधा निमेषभी स्थिरचित्त होकर बैठजाताहै, उसे सौ वर्षपर्यन्त योगाभ्यास करनेका फल प्राप्त होताहै ॥ ५५ ॥ वह स्थान भूमंडलपर मुक्तिमंडप नामसे प्रसिद्धहै वहांपर एकभी ऋचापढनेसे समस्त वेदाध्ययनका फल मिलताहै ॥ ५६ ॥ उस मुक्तिमंडपमें जिसने एकभी प्राणायाम किया उसे अन्यत्र पर दस-सहस्र वर्ष अष्टांग योगाभ्यास करनेका पुण्य प्राप्त होताहै ॥ ५७ ॥ जो कोई मुक्ति मंडपमें शिवका एकभी षडक्षर मंत्र जपताहै, उसे एक करोड रुद्रिय जप करनेका फल होताहै ॥ ५८ ॥ गंगाके जलमें स्नानकर पवित्र हो जो कोई शतरुद्रियको मुक्ति-मंडपमें जपे उसे द्विज वेषधारी रुद्रही समझना चाहिए ॥ ५९ ॥ जो कोई मेरे दक्षिण-मंडपमें एकबारभी ब्रह्मयज्ञको कर लेताहै, वह ब्रह्मलोकमें प्राप्त होकर परब्रह्मका लाभ करताहै ॥ ६० ॥ निष्काम होकर जो कोई धर्मशास्त्र इतिहास और पुराणोंको पढताहै, वह मेरे घरमें बास करताहै ॥ ६१ ॥ जो पुण्यप्राणी इन्द्रियोंकी चंचलताको रोक-कर क्षणमात्रभी मुक्तिमंडपमें बैठताहै उसे दूसरे स्थानपर बडी तपस्या करनेका फल मिलताहै॥ ६२॥ अन्यत्र पर सौवर्ष वायु भक्षणसे जो पुण्य होताहै मुक्तिमंडपमें आधीघडी मौन हो रहनेसेभी वही फल प्राप्त होताहै ॥ ६३ ॥ जो कोई मुक्तिमंडपमें एक घुंघुची भरभी सुवर्णदान करताहै वह स्वर्गमें सुवर्णके विमानपर चढकर भ्रमण करताहै॥ ६४॥ जो कोई वहांपर चाहे कोईभी दिन हो व्रत रहकर जागरण करे और लिंगका पूजन करे तो वह समस्त व्रतोंके पुण्यका भागी होताहै ॥ ६५ ॥ वहांपर बडेभारी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दानके करने, महाव्रतके धारण करने, और समस्त वेदोंका पाठ करनेसे मनुष्य स्वर्गसे पतित नहीं होता ॥ ६६ ॥ जिसका प्राण इस मुक्तिमण्डपमें निकल जाताहै, वह मुझमें लीन होकर यहांपर जबतक मैं रहूंगा बना रहेगा ॥ ६७ ॥ मैं उमादेवीके साथ ज्ञानवापीमें सदैव जलक्रीडा करताहूं, उसके जलपान करनेसेही निर्मलज्ञान उत्पन्न होताहै ॥ ६८ ॥ मेरे इस राजभवनमें वह जलक्रीडाका स्थान मुझे बहुतही प्याराहै, और जडता रहनेवाले जलसे भरपूर रहताहै ॥ ६९ ॥ उस प्रासादके अग्रभागमें मेरा शृंगारमंडपहै, उसीको श्रीपीठभी समझना चाहिये, क्योंकि, वह श्री हीन लोगोंको भी श्रीमान् बनादेताहै ॥ ७० ॥ उस स्थानपर जो कोई मेरे लिये निर्मल वस्त्र, परमविचित्र मालायें, यक्ष कर्दम ॥ ७१ ॥ नानाप्रकारके शृंगार संबंधि वस्तु और पूजनकी सामग्री इत्यादिको समर्पण करताहै, वह सज्जन सर्वत्रही श्रीसे भूषित रहताहै ॥ ७२ ॥ वह चाहे कहींभी मरे पर निर्वाणलक्ष्मी उसे निर्वाणपद देनेके लिये अवश्यही वरण करतीहै ॥ ७३ ॥ मेरे मोक्षलक्ष्मी विलासनामक प्रासादके उत्तरभागमें रमणीय ऐश्वर्यमंडप है, वहांपर मैं ऐश्वर्यदान करताहूं ॥ ७४ ॥ मेरे मंदिरके पूर्व ओर जो ज्ञानमंडपहै उसमें जो लोग मेरा ध्यान करतेहैं, उनको मैं सर्वदा ज्ञानका उपदेश देता रहताहूं ॥ ७५ ॥ भवानीका राजभवनही मेरा जेवनहरा है, वहांपर उपहाररूपसे जो कुछ पवित्र वस्तु प्राप्त होतीहै, उसे मैं हर्षपूर्वक स्वीकार करलेताहूं ॥७६॥ विशालाक्षी देवीका बडा मंदिरही मेरे विश्रामका स्थान है, वहांपर मैं संसारसे खिन्न लोगोंको विश्राम वितरण करताहूं ॥७७॥ मेरे नियम स्नानका तीर्थ चक्रपुष्करिणी (मणिकर्णिका) है, वहांपर नहानेवालोंको मैं वही निर्मलता देदेताहूं ॥७८॥ जिसे (शास्त्रोंमें) परमतत्त्वके नामसे कहाहै, और जिसे सर्वोत्तम ब्रह्म कहतेहैं, एवं वहीं स्वसंवेद्यभी कहाजाताहै, अन्तके समय वहांपर मैं उसीका उपदेश करताहूं ॥ ७९ ॥ जिसे तारकज्ञान कहतेहैं, किंवा जो परमनिर्मल कहलाताहै, एवं जिसे स्वात्मारामभी कहाजाताहै, मणिकर्णिका पर अन्तमें मैं वही उपदेश करताहूं ॥ ८० ॥ इस लोकमें जगत्भरकी जो मंगलभूमी मणिकर्णिकाहै वहांपर कर्मके पाशमें बंधेहुए पशुओंको मैं छुडाता रहताहूं ॥ ८१ ॥ जहांपर मैं मोक्षकी भिक्षादेनेमें रातदिन पात्र कुपात्रका कुछभी बिचार नहीं करता आनंदवनमें वही मेरे दानका स्थानहै ॥ ८२ ॥ बडे अथाह संसारसागरमें डूबतेहुए प्राणियोंको कर्णधार बनकर जहांपर मैं पार उतार देताहूं ॥ ८३ ॥ वही मणिकर्णिका सौभाग्य-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२३१

की भाग्य भूमि कहीजाती है अतएव वहांपर मैं अग्रज और अंत्यज सभीको सर्वस्व देडालताहूं॥८४॥ महासमाधिके लगानेवाले तथा वेदान्तोंके अर्थसेवियोंकोभी अन्यत्र पर जो मोक्ष दुर्लभहै यहांपर शोचनीय लोगोंकोभी वह प्राप्त होजाताहै ॥८५॥ चाहे कोई यज्ञसे दीक्षितहो अथवा चाण्डालहो एवं पंडितहो किंवा मूर्खही हो पर मणिकर्णिकापर पहुँचजावे तो मेरी ओरसे मोक्षकी दीक्षामें समान अधिकारी होताहै ॥ ८६ ॥ अन्य स्थानोंमें मैं जिसके देनेमें कृपण होजाताहूं, इस मणिकर्णिकापर उस चिरसंचित सर्वस्वको प्राणिमात्रके लिए देनेमें तत्पर रहताहूं ॥ ८७ ॥ यदि दैववश यहांपर परमदुर्घट तीनों संयोग होजावें तो बिना बिचारेही चिरसंचित सर्वस्व देदेताहूं ॥ ॥ ८८ ॥ शरीर, संपत्ति, और मणिकर्णिका इन तीनोंका इकट्ठ होजानाही त्रिसंयोगहै, यह इन्द्रादिक देवतोंकोभी दुर्लभहै ॥ ८९ ॥ मैं इसे वारंवार बिचारकर समस्तप्राणियोंको मणिकर्णिका पर सदैव मुक्तिलक्ष्मीका दान करता रहताहूं॥ ९० ॥ इस वाराणसीपुरीमें वही स्थान मेरे मुक्तिदानका प्रधानस्थान (अड्डा) है, क्योंकि उस भूमिकी धूलिके समानभी त्रैलोक्य भर नहीं होसकता ॥ ९१ ॥ मेरे लिंग पूजनके प्रधानस्थान अविमुक्तेश्वरहैं, वहांपर यदि कोई मनुष्य एकबारभी पूजा करलेवे तो कृतकृत्य होजाता है ॥ ९२ ॥ सन्ध्याके समय मैं पशुपतीश्वर पर शैवी सन्ध्याको करताहूं, उसवेला वहांपर विभूति धारण करनेहीसे पशुपाशमें बंधना नहीं पडता ॥ ॥ ९३ ॥ और प्रातःकालकी सन्ध्या (तो) मैं सदैव ओंकारेश्वरके मन्दिरमें करता हूं, (क्योंकि) वहांपर एकभी सन्ध्या करनेसे समस्त पाप दूर होजाते हैं ॥ ९४ ॥ मैं प्रत्येक चतुर्दशीको कृत्तिवासेश्वर पर वास करताहूं, वहांपर चतुर्दशीको जागरण करनेसे गर्भभागी नहीं होना पडता ॥ ९५ ॥ भक्तिपूर्वक रत्नेश्वरके पूजन करनेसे वह बहुत भारी रत्नोंको देतेहैं, एवं जो नर रत्नोंसे उस लिंगका पूजन करता है, उसे वीरत्न इत्यादि प्राप्त होते हैं ॥ ९६ ॥ मैं त्रैलोक्य भरमें सर्वत्र व्यापी होनेपरभी भक्तोंकी मनोरथ सिद्धिके लिए त्रिलोचन सदैव बैठा रहताहूं ॥ ९७ ॥ मनुष्य वहांपर विरजस्क महापीठका सेवन और चतुर्नदतीर्थमें उदकक्रियाको कर अवश्यही रजोगुणसे शून्य होजाता है ॥ ९८ ॥ महादेवमें मेरा साधकोंका सिद्धिदायक महापीठ है उस पीठके दर्शन करनेहीसे कठोरपापोंसे भी छुट्टी होजातीहै ॥ ९९ ॥ पितरोंका परम प्रीतिप्रद वृषभध्वज तीर्थ (पीठ) है वहांपर पितरोंका तर्पण करनेवाला क्षणमात्रमें पितरोंका उद्धार करदेताहै ॥ १०० ॥ आदिकेशव पीठपर मैं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

आदिकेशवरूपसे रहताहू वहांके अपने परमप्रिय वैष्णव भक्तोंको श्वेतद्वीपमें प्राप्त करदेताहूं ॥ १ ॥ सकल मंगलदायक, मंगलापीठ पर जो पंचनदतीर्थके समीपमें है, मैं अपने भक्तोंका निस्तार करताहूं ॥ २ ॥ जहांपर मैं बिन्दुमाधव रूप धरकर, पंचनदतीर्थमें स्नान करनेवाले अपने वैष्णवभक्तोंको विष्णुके प्रसिद्ध परमपदपर पहुँचा देताहूं ॥ ३ ॥ पंचमुद्रनामक महापीठपर जो लोग वीरेश्वरके सेवक हैं, वे थोडेही कालमें निर्वाणपदको प्राप्त होजातेहैं ॥ ४ ॥ चन्द्रेश्वरके समीपमें सिद्धेश्वरी पीठहै, वहांपर रहनेवालोंकी छः मासमें सिद्धि होजातीहै ॥ ५ ॥ काशीमें योगसिद्धि विषयक योगिनीपीठमें किन सुसाधकोंने उच्चाटनादि सिद्धियोंको नहीं पाया (है)। ॥ ६ ॥ इस काशीपुरीमें पद पदपर अनेक पीठहैं, पर धर्मेश्वर पीठकी कुछ अपूर्व शक्तिहै॥ ७॥जहांपर " रक्षाकरो, रक्षाकरो " ऐसा आर्तनाद करनेवाले ये सब सुग्गोंके बच्चेभी मेरे उत्तम उपदेशसे निर्मलज्ञानके पात्र बनगयेहैं ॥ ८ ॥ हे सूर्यनन्दन! आजसे मैं तुम्हारे इस उत्तम तपोवन धर्मेश्वर पीठको कभी नहीं छोडूंगा ॥ ९ ॥ हे रवितनूज ! देखो, मेरे अनुग्रहसे ये सब सुग्गेभी दिव्यविमानपर चढकर मेरे महापुरको जारहेहैं ॥ ११० ॥ तुम्हारे सत्संगसे परम निर्मल होकर ये सब वहांपर बहुत दिनोंतक सुखभोग मेरे कहेहुए ज्ञानको प्राप्तकर, (फिर) यहींपर मुक्तिको पावेंगे ॥ ११ ॥ भगवान् शंकरके यह कहतेही रुद्र कन्याओंसे भूषित और कैलासके शृंगसमान दिव्य विमान वहांपर आपहुँचा ॥ १२ ॥ परम निर्मल वे सब शुकशावक दिव्यरूपको धारणकर धर्मराजसे पूछ (बिदा हो) उस विमानपर चढकर कैलासकी ओर चलेगये ॥ ११३ ॥

दोहा—श्री धर्मेश्वर लिंगको, प्रनवौं वारंवार ।
शुकशावक पाये जहां, निर्मलस्थान अपार ॥ १ ॥
धर्मपीठ सम नहिं कहीं, पीठ मध्य संसार ।
जहां पच्छियो ज्ञान लहि, पाये भवनिस्तार ॥ २ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्धे भाषायां एकोनाशीतितमोऽध्यायः ॥ ७९ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अस्सीवां अध्याय।

मनोरथ—तृतीयाव्रत—कथन।

स्कन्द बोले—हे कुम्भज! जगदम्बाने उस आश्चर्यघटनाको देख, प्रणामकर प्रणार्तिहारी भगवान् शिवसे कहा ॥ १ ॥ अंबिका बोलीं—हे महेश्वर! महादेव! इस पीठका कैसा माहात्म्यहै, जो तिर्यग्योनिवाले (पक्षियों) को भी संसारमोचक ज्ञान उत्पन्न होगया? ॥ २ ॥ इसी कारणसे हे धूर्जटे! धर्मपीठका प्रभाव समझकर आजके दिनसे सर्वदा मैं धर्मेश्वरके समीपमें रहा करूंगी ॥ ३ ॥ जो स्त्री अथवा पुरुष इस लिंगके भक्त होंगे मैं सदैव उनकी अभीष्टसिद्धिका साधन करती रहूंगी ॥ ४ ॥ ईश्वरने कहा—हे देवि! सज्जनलोगोंके मनोरथ पूरनेवाले इस धर्मपीठका आश्रयण करके तुमने बहुतही अच्छा किया ॥ ५ ॥ जो लोग यहांपर विश्वभुजा रूपसे तुम्हारा पूजन करेंगे वेही सब संसार सुखोंके भोक्ता और जगत्पूज्य होंगे ॥ ६ ॥ हे संसारकी सृष्टि पालन और संहारकरनेवाली विश्वभुजे! विश्वे! जो लोग यहांपर तुम्हारी पूजा करेंगे वे निर्मलहृदयवाले होजावेंगे ॥ ७ ॥ जो कोई मनोरथतृतीयाको तुम्हारा सेवन करेगा, मेरी कृपासे उसके मनोरथोंकी सिद्धि होजावेगी ॥ ८ ॥ हे प्रिये! क्या स्त्री, क्या पुरुष सभी कोई तुम्हारे व्रतका—अनुष्ठान करनेसे इस लोकमें अपने मनोरथोंको पाकर अन्तमें ज्ञानभी पावेंगे ॥ ९ ॥ देवीने पूछा—हे नाथ! मनोरथतृतीयाका व्रत कैसे होताहै? और उसकी कथा कैसी है? एवं उसके करनेसे कौनसा फल मिलताहै? और किसने उसे कियाथा? इन सब बातोंको आप कृपाकरके बतलादेवें ॥ १० ॥ ईश्वरने कहा—हे संसारतारिणि! देवि! यह जो तुमने पूछाहै, वह मनोरथव्रत गोपनीयोंसेभी परमगोपनीय है ॥ ११ ॥ पूर्वकालमें पुलोमकी पुत्री शचीने किसी मनोरथकी सिद्धिके लिए, घोर तपस्या की थी, पर तपस्याका कुछ फल नहीं पाया ॥ १२ ॥ तब उसने बडीभक्तिके साथ हर्षपूर्वक कोकिलाके मधुरस्वनके तुल्य सरहस्य गीतोंके गानसे मेरा पूजनकिया ॥ १३ ॥ तानमान कलासे पूर्ण सुन्दर राग और तालवाले उसके मृदु—मधुर गानसे मैं बडाही संतुष्ट होकर ॥ १४ ॥ उससे बोला, कि, हे पुलोमनन्दिनि! तुम्हारे इस सुन्दरगान और इस लिंगपूजनसे मैं बडा प्रसन्नहूं, वर मांगो ॥ १५ ॥ पुलोमजाने कहा—हे देवाधिदेव! महादेवी महाप्रिय! महादेव! यदि आप मुझपर प्रसन्नहैं, तो मेरे मनोरथको पूर्ण कीजिए ॥ १६ ॥ जो सब देवतोंमें माननीय और समग्र देवगणमें सुन्दर, एवं समस्त यज्ञोंके कर्ताओंमें श्रेष्ठहो वही मेरा पतिहोवे ॥ १७ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हे भव ! यदि, आप प्रसन्नहैं तो इच्छानुरूप रूप और इच्छानुरूप सुख एवं इच्छानुरूप आयु दीजिए ॥ १८ ॥ मनकी सुखेच्छासे जब जब मेरा पतिसे संगम होवे तब तब मैं उस शरीरको त्यागकर फिर दूसरा धारण करसकूं ॥ १९ ॥ हे संसार मोचक ! भव ! लिंगपूजनके विषयमें सदैव जरामरणहारिणी, सर्वोत्तम मेरी भक्ति बनीरहे ॥ २० ॥ हे महादेव ! स्वामीके मरजानेपर क्षणमात्रके लिएभी मुझे वैकल्य न होवे, और न पातिव्रत्यही बिगडने पावे ॥ २१ ॥ स्कन्द बोले—त्रिपुरसूदन महादेवने पुलोमजाका इस प्रकारसे मनोरथ सुनकर क्षणमात्र मुसकुरातेहुए विस्मयान्वित होकर कहा ॥ २२ ॥ ईश्वर बोले—हे जितेन्द्रिये ! पुलोमजे ! यह जो तुमने मनोरथ कियाहै, सो व्रतचर्याहीसे मिलसकताहै, अतएव तुम उसे करो ॥ २३ ॥ इसके लिए मनोरथतृतीयाका व्रताचरण करना पडेगा, उस व्रतकी विधि मैं कहताहूं, कथनानुसार तुमको करना चाहिए ॥ २४ ॥ हे बाले ! उस परम सौभाग्यप्रद व्रतके पूर्ण होजानेपर तुम्हारा मनोरथ अवश्यही सिद्ध होजावेगा ॥ २५ ॥ पुलोमजाने कहा—हे प्रणतजनके सर्वस्वदायक ! दयासागर ! शंकर ! उस व्रतका क्या फलहै ? कौनसी शक्तिहै ? उसमें किस देवताकी पूजा करनी चाहिए ? ॥ २६ ॥ उस व्रतको क्या करना पडताहै, ? और उसका विधान क्या है, ? यह बात सुनकर शिव उससे कहने लगे ॥ २७ ॥ हे पुलोमजे ! वह शुभप्रद व्रत मनोरथतृतीयापर होताहै, उसमें बीस भुजावाली विश्वभुजा गौरीका पूजन करना उचितहै ॥ २८ ॥ व्रतकर्ताको चाहिए कि, देवीके सन्मुख एक हाथमें वर, दूसरेमें अक्षसूत्र, तीसरेमें अभय, और चौथे हाथमें मोदकको लिएहुए आशाविनायकका पूजन करे ॥ २९ ॥ चैत्रमासकी शुक्ला तृ (द्वि) तीयाको दंतधावन और सायंकालकी संध्याको समाप्तकर रात्रिमें स्वल्पही भोजन करे ॥ ३० ॥ फिर क्रोधादिको त्याग जितेन्द्रिय होकर और अस्पृश्योंका स्पर्श न कर पवित्रतापूर्वक तद्गतचित्तसे यह नियम धारण करे ॥ ३१ ॥ हे अनघे ! मात ! विश्वभुजे ! देवि ! मैं प्रातःकाल व्रत करूंगा, उसमें आप (मेरे) मनोरथकी सिद्धिके लिए पधारें ॥ ३२ ॥ इस प्रकारसे नियमको धारणकर शुभका स्मरण करता हुआ सोरहे, फिर वह बुद्धिमान् व्रतकर्ता प्रातःकाल उठकर अपने आवश्यक विधिको करके ॥ ३३ ॥ शौच और कुल्लाके उपरांत सब शोकोंके मिटानेवाले अशोकवृक्षको दतुइन करे ॥ ३४ ॥ तदनन्तर वह विधिज्ञ प्रवर नित्यतन कृत्यको समाप्तकर स्नानके पश्चात् शुद्धवस्त्र पहिन सन्ध्यासमय गौरी देवीका पूजन करे ॥ ३५ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

१३५

पहिले गणेशहीकी पूजा करे और उनको घृतपूर (मालपूआ) का नैवेद्य लगावे, फिर कुंकुमका अनुलेपन, उत्तम अशोकके पुष्प, अगरकी धूपबत्ती, और अशोकवर्तियुक्त, घृतपूरोंके नैवेद्यसे विश्वभुजा गौरीका पूजन करे इसके अनंतर अशोकवर्तिसहित मनोहर घृतपूरोंके द्वारा केवल एकबार भोजनकरे, हे युधिष्ठिरजी! इस भाँतिसे चैत्रशुक्ल तृतीयाके बीतजानेपर ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ वैशाखसे लेकर फाल्गुनमासतक प्रत्येक शुक्ला तृतीयाको व्रत करे, हे अनघे! क्रमसे अवशिष्ट ग्यारहों मासोंकी दतुअन ॥ ३९ ॥ अनुलेपनके द्रव्य, पुष्प, गणेश और गौरीके नैवेद्य, एवं एकाहारके अन्नोंको हे शुभव्रते! मैं तुमसे कहताहूं, इन्हीं सबोंसे व्रतका फल मिलताहै, अतएव इनको सुन रक्खो जामुन, निचिंदा, खैर, जाही (चमेली) आम, कदम्ब ॥ ४० ॥ ४१ ॥ बड, गुल्लर, खजूर, नीबौरा (नीबू) और अनार—व्रतीके दतुइनिहां पेड येही सब कहेजाते हैं ॥ ४२ ॥ चंदन, अगर, कस्तूरी, चंदन, लालचन्दन, गोरोचन, देवदारु, पद्मकाठ और दोनों हलदी (अर्थात्-हरदी और दारुहरदी) ॥ ४३ ॥ हे बाले! इन अनुलेपनोंको और यक्षकर्दमके लेपनको प्रीतिसे समर्पण करे, और इन सब अनुलेपनोंके न मिलनेपर यक्ष कर्दमही प्रशस्तहै ॥ ४४ ॥ दो भाग कस्तूरी, दो भाग केशर, तीन भाग चन्दन, और एक भाग कपूर ॥ ४५ ॥ इसीका यक्षकर्दम होताहै जो समस्त देव-ताओंको बडा प्याराहै, इसका अनुलेपन करके जिन पुष्पोंसे पूजना चाहिये, अब उनको कहताहूं ॥ ४६ ॥ गुलाब, बेला, कमल, केवडा, कनइल, कोई, राजचम्पा, तगर, जूही, ॥ ४७ ॥ घिकुंआर, और करनाके फूल, यदि फूल न मिलें तो उक्तवृक्षोंके पत्र चढाने चाहिये, दैवात् कुछभी न मिले तो सुगन्धयुक्त अन्यान्य पुष्पसमूहोंसे पूजा करे ॥ ४८ ॥ करंभ (दधिमिश्रितसक्तु) दहीभात, आमके रसके साथ घृत, फेनी, बडा, शक्करसहित जाउर (खोआ) ॥ ४९ ॥ मूंगकी दाल और घृतके साथ भात, कार्तिकका नैवेद्यहै, (अगहनमें) इंडेरिका (पूसमें) लडुआ,(माघमें) फेनी ॥ ५० ॥ एवं फाल्गुनमासमें शक्कर भरीहुई और घीमें छनी पेडकिया (गुझा-पूरी) गौरी और गणेशको हर्षपूर्वक नैवेद्य लगावे ॥ ५१ ॥ जिस वस्तुका नैवेद्य लगावे उसीको एकाहारमें खावे, एक वस्तु नैवेद्य लगावे और दूसरा खावे तो वह व्रत अधःपतित होताहै ॥ ५२ ॥ एकवर्षभर इसी रीतिसे प्रतिमासकी शुक्ल तृती-याको आराधना करके व्रतकी समाप्तिके लिए स्थंडिलमें अग्निकी पूजाकरे ॥ ५३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

व्रतकर्ता, " जातवेदस " मन्त्रके द्वारा यथाविधि तिल, घृत, इत्यादि द्रव्योंसे अष्टोत्तर
शत आहुतियोंका होम करावे ॥ ५४ ॥ सदैव यह पूजा रात्रिहीमें कहीगई है और
रात्रिहीमें भोजनभी करना चाहिए, और यह होमभी रात्रिहीमें करे, एवं रात्रिहीमें
क्षमापनभी उचितहै ॥ ५५ ॥ " हे मातः ! गणेशके सहित आप भक्तिपूर्वक मेरे
कीहुई पूजाको ग्रहण करें, हे विश्वभुजे ! मैं आपको नमस्कार करताहूं, आप मेरी
मेरे मनोरथको पूर्ण करदेवें ॥ ५६ ॥ हे आशाविनायक ! आप विघ्नविनाशक हैं
अतएव आपको वारंवार नमस्कारहै, आप विश्वभुजा देवीके सहित मेरे मनोरथको
(सिद्ध) करदेवें " ॥ ५७ ॥ इन दोनों मन्त्रोंको कहकर गौरी और गणेशकी
पूजा करे, व्रतके उद्यापनमें, तोसक, तकिया, डीवट, दर्पण आदिसे युक्त पलंग लेवे
और उस पलंगपर सपत्नीक आचार्यको बैठावे ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ तब व्रतकर्ता
हाथ और कानके भूषण, सुगंध, चंदन, माला और दक्षिणा इत्यादिसे हर्षपूर्वक
पूजन करे ॥ ६० ॥ एवं व्रतपूर्तिके लिए दुधार गौ, तथा छत्र, उपानह, लोटा
लोटा इत्यादि उपभोगकी सब सामग्री दान करे ॥ ६१ ॥ "यह जो मैंने मनोरथ
तृतीयाका व्रत कियाहै इसमें जो कुछ न्यून अथवा अतिरिक्त होवे वह सब आपके
वचनसे परिपूर्ण होजावे " ॥ ६२ ॥ इस प्रकार आचार्यसे प्रार्थना करनेपर जब
तथास्तु कहदेवें तब सीमापर्यंत उनको पहुँचादेवे फिर और लोगोंकोभी दक्षिणा
इत्यादि यथाशक्ति देकर ॥ ६३ ॥ प्रसन्नचित्तसे रात्रिमें अपने पोष्यवर्गके साथ
भोजन करे, उसके अनंतर प्रातःकाल चतुर्थीके दिन चार कुमार ॥ ६४ ॥ एवं चार
कुमारियोंको गंध मालादिकसे पूजकर भोजन करावे, इस भाँतिसे यह निर्मल व्रत पूर्ण
होताहै ॥ ६५ ॥ इस शुभव्रतको अपने मनोरथकी सिद्धिके लिए सभी किसी
करना चाहिए । अविवाहित पुरुष एक वर्षभर इस व्रतके करनेसे मनोरमा, सत्कुल
त्पन्ना, मनोवृत्तिके अनुसार चलनेवाली, दुःखमय संसारसागरसे पार उतारनेवाली
पतिव्रता पत्नीको अवश्यही पाताहै ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ एवं कुमारीभी धनाढ्य,
गुणोंमें अधिक पतिको प्राप्त करती है, सोहागिन बहुतसे पुत्र और स्वामीका
डित सुखलाभ करती है ॥ ६८ ॥ दुर्भगाभी सुभगा और दरिद्रिणीभी धनी
होजाती है, और विधवाको फिर कभी वैधव्यका दुःख नहीं झेलना पड़ता
॥ ६९ ॥ गर्भवती चिरायु और शुभ (लक्षण) पुत्रको पाती है और व्याधि
सर्व सौभाग्यदायिनी विद्याही मिलती है ॥ ७० ॥ राज्यसे च्युतहुआ राजा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२३७

जाताहै वैश्यको लाभ होताहै, एवं शूद्रभी अपने चिंतित फलको प्राप्त करताहै, व्रतके सेवन करनेसे ॥ ७१ ॥ धर्मार्थीजन धर्मको पाताहै, धनार्थीको धन मिल-ने कामीकी सब कामनायें पूरजाती हैं, और मोक्षार्थीभी मोक्षलाभ करताहै॥७२॥ तृतीयाके व्रतानुष्ठानसे व्रती जो जो मनोरथ करताहै सो सो सब ध्रुवकरके पूर्ण होजातेहैं ॥ ७३ ॥ स्कन्दने कहा महादेवसे यह सुनकर भगवती संतुष्टचित्त फिर हाथ जोडकर विश्वेश्वरसे पूछनेलगीं ॥ ७४ ॥ हे सदाशिव ! जो लोग काशीसे स्थानमें इस व्रतको करेंगे वे सब मुझे और आशाविनायकको किस प्रकारसे पूजसकेंगे ? ॥ ७५ ॥ महादेवने कहा—हे सर्व सन्देहनिवारिणि ! तुमने बहुतही ठीक पूछा, हे विश्वे ! वाराणसीपुरीमें तो लोग प्रणाम दूरदेशमें चलेगये हुए लोगोंको भी फेरलाकर (उनको) चिंतित मनोरथोंके द्वारा कृतार्थ बनाकर, सब किसीकी आशाओंके पूरक, और अनंत-के विनाशक, एवं मेरे क्षेत्रके शुभार्थी आशाविनायकके सहित प्रत्यक्षरूपसे तुमको ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ पर हे विश्वे ! दूसरे स्थानोंपर पांच घुंघुची (रत्ती) से की (तौलमें अधिक) तुम्हारी और गणेशकीभी प्रतिमा (मूर्ति) बनानी ॥ ७९ ॥ व्रतकर्त्ता व्रतके अन्तमें उन दोनोंही प्रतिमाओंको लेजाकर आचा-निवेदन करदेवे, इस प्रकारसे एकबारभी इस व्रतके करनेसे व्रती कृतार्थ होजाता ॥ ८० ॥ हे देवि ! तदनंतर यह सुनकर पुलोमजा (इन्द्राणी) ने इस उत्तम के अनुष्ठानसे अपने मनोवांछित अभिलाषको प्राप्त किया ॥ ८१ ॥ इसी व्रतके से अरुंधतीने वसिष्ठको, अनुसूयाने अत्रिको पतिरूपसे पायाहै, और सुनीतिने उत्तानपादसे उत्तम पुत्र ध्रुवको प्राप्त कियाथा ॥ ८२ ॥ एवं इसी व्रतके आच-सुनीतिका दुर्भगत्वभी दूर भागाथा, और क्षीरसागरकी कन्या लक्ष्मीनेभी विष्णु को पायाथा ॥ ८३ ॥ हे सुश्रोणि ! कहांतक कहूं, जिस व्रतीने इस व्रतको किया, वह सब व्रतोंको करचुका, यह ध्रुवहै॥८४॥बुद्धिमान् जन तद्गतचित्त होकर पवित्र कथाके सुननेसे शुभ बुद्धिको प्राप्त करता, और पापोंसेभी छूट जाताहै॥८५॥

दोहा—आशा गणपतिहैं जहां, विश्वभुजा जहँ मात ।
सब आशा पूजैं तहां, यहिमें भ्रम न लखात ॥ १ ॥

श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखंडे उत्तरार्धे भाषायां अशीतितमोऽध्यायः ॥ ८० ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इक्यासिवां अध्याय।

धर्मेश्वरका माहात्म्य और राजादुर्दमकी कथा।

अगस्त्य बोले—हे स्कन्द ! भगवान् शंभुने देवीसे धर्मतीर्थका माहात्म्य किस प्रकारसे कहाथा, कृपाकरके आप उसेभी कहें ॥ १ ॥ स्कन्दने कहा—हे विघ्नध्वान्तिहारिन् ! महाप्राज्ञ ! भगवान्ने जैसे धर्मतीर्थ जनित माहात्म्यको कहाथा, उसे मैं कहताहूं तुम श्रवण करो ॥ २ ॥ इन्द्र वृत्रासुरको मारकर ब्रह्महत्यामें जापडे तब वह पश्चात्ताप करके अपने पुरोहित बृहस्पतिसे प्रायश्चित्त पूछने लगे ॥ ३ ॥ बृहस्पतिने कहा—हे देवराज ! यदि तुम इस दुस्त्यज ब्रह्महत्याको दूरकिया चाहते हो तो विश्वेश्वर पालित काशीपुरीकी यात्रा करो ॥ ४ ॥ हे शक्र ! भगवान् विश्वेश्वरकी बडी राजधानीके छोडकर और कहींभी ब्रह्महत्याका महौषध दूसरा कोईभी नहीं दीखताहै ॥ ५ ॥ हे वृत्रशत्रो ! जिस आनंदवनमें भैरवकेभी हस्ताग्रसे ब्रह्माका कपाल गिरपडा था, शीघ्रही तुमभी वहींपर चलेजाओ ॥ ६ ॥ हे शक्र ! आनंदवनकी सीमापर पहुँचतेही ब्रह्महत्या निराधार होकर कांपती (थर्राती) हुई भागजाती है ॥ ७ ॥ विश्वेश्वरकी अधिष्ठिता काशी, और औरभी बडेबडे पापियोंके पापोंका पूर्णरूपसे नाश करडालती है ॥ ८ ॥ हे शतक्रतो ! महापातकोंसे जैसे काशीमें मुक्ति (छुट्टी) मिलती है, वैसेही महासंसारसेभी काशीहीमें मुक्ति होती है, अन्यत्र तो होही नहीं सकती ॥ ९ ॥ काशीही मुक्तिपुरी है और काशीही सब पापोंको हरलेती है, एवं विश्वेश्वरकी बडीप्यारीभी काशीहै सुतरां काशीके समान (तुम्हारा) स्वर्गभी नहीं है ॥ १० ॥ जिसे ब्रह्महत्याका भय हो, अथवा जिसे संसारका भय हो उसे मुक्तिप्रकाशिनी काशीको कभी नहीं छोडना चाहिए ॥ ११ ॥ जहांपर देहत्याग करनेसे समस्त प्राणियोंके कर्मबीज शिवदृष्टिपातसे सूखकर फिर कभी अंकुर नहीं फेंकते ॥ १२ ॥ हे वृत्तारे ! उसी काशीमें जाकर वृत्रासुरकी हत्या छोडानेके लिए विश्वमात्रके मोक्षदाता भगवान् विश्वेश्वरकी आराधना करो ॥ १३ ॥ बृहस्पतिका यह वचन सुनकर सहस्राक्ष, महापातकनाशिनी काशीमें बहुत शीघ्रही आपहुँचे ॥ १४ ॥ उत्तरवाहिनी गंगामें नहाय, धर्मेश्वरके मंदिरपहींमें टिककर ब्रह्महत्या छोडानेके लिए महादेवकी आराधना करने लगे ॥ १५ ॥ अनन्तर (एकबार) महारुद्रमन्त्रका जप करतेहुए इंद्रने लिंगके बीचमें अपने सामनेसे आकाशको दीपित कियेहुए साक्षात् त्रिलोचनका दर्शन पाया ॥ १६ ॥ तब तो वे फिर अनेकभांतिके वेदोक्त रुद्रसूक्तोंसे उनकी स्तुति करनेलगे, तदनन्तर महादेव

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

२१९

उस लिंगसे प्रकट होकर (उनसे) कहने लगे ॥ १७ ॥ हे धर्मपीठ सेवित्! शचीपते! मैं प्रसन्नहूं वर मांगो, हे सुव्रत! मुझसे तुम क्या चाहतेहो? उसे शीघ्र कहो ॥ १८ ॥ वृत्रान्तक इन्द्रने भगवान्का यह प्रेमपूर्ण वचन सुनकर उनसे कहा कि, हे सर्वज्ञ! भला आपसेभी कुछ छिपाहै? ॥ १९ ॥ तदनन्तर धर्मपीठके वचनसे उनपर कृपालु होकर शिवने वहींपर तीर्थ बनाकर इंद्रसे कहा कि, तुम यहांपर स्नानकरो ॥ २० ॥ इंद्र वहांपर नहानेके साथही क्षणमात्रमें दिव्यगन्धसे परिपूर्ण होकर अपनी पुरानी शतयज्ञोपार्जिता कांतिको प्राप्त होगये ॥ २१ ॥ उसके पश्चात् नारदादिक मुनिगण यह आश्चर्य्य देखकर पापनाशक उस धर्मतीर्थमें बडे हर्षके साथ स्नान करनेलगे ॥ २२ ॥ एवं दिव्य पितरोंका तर्पण और श्रद्धापूर्वक श्राद्ध करके उसी तीर्थके जलसे घडोंको भरकर धर्मेश्वरको स्नानभी कराने लगे ॥ २३ ॥ तबसे यह तीर्थ अनायासही ब्रह्महत्यादि पापोंका धोडालनेवाला धर्मकूपनामसे प्रसिद्ध होगया ॥ २४ ॥ तीर्थराजप्रयागके स्नानसे जो फल होताहै, धर्मकूपके स्नानमात्रसे उसका सहस्रगुण अधिक फल मिलताहै ॥ २५ ॥ मनुष्य, हरिद्वार, कुरुक्षेत्र और गंगासागर संगममें जो फल पाताहै, धर्मतीर्थमेंभी वही (फल) लाभ करताहै ॥ ॥ २६ ॥ बृहस्पतिके सिंहराशिमें जानेपर गौतमी सरस्वती और नर्मदामें स्नान करनेसे जो फल होताहै, धर्मकूपमें नहालेनेसेभी वही फल प्राप्त होजाताहै ॥ २७ ॥ मानससरोवर, पुष्करतीर्थ, और द्वारकाके समुद्रतीर्थमें स्नानसे जो फलहै, धर्मकूपमेंभी वही पुण्य होताहै ॥ २८ ॥ कार्तिकी पूर्णिमाको सूकरक्षेत्र, चैत्रकी पूर्णिमापर सोमकुंड एवं हरिवासरको शंखोद्धारतीर्थमें नहानेका जो फलहै, इस तीर्थमेंभी वही पुण्य होताहै ॥ २९ ॥ गंगा और धर्मकूप—इन दो तीर्थोंमें नहानेवाले लोगोंसे पितर-लोग पिंड पानेकी आशा लगाये रहतेहैं ॥ ३० ॥ (गयामें) पितामहेश्वरके समीप ब्रह्मकुण्डतीपर और (काशीमें) धर्मेश्वरके पास धर्मकूपपर पितरलोग संतुष्ट होजातेहैं ॥ ३१ ॥ मनुष्य धर्मकूपमें नहाय, पितरोंका तर्पण करलेवे, तो गयामें जाकर पितरोंका उससे अधिक हर्षप्रद कौनसा कृत्य करसकताहै? ॥ ३२ ॥ पितरलोग गयामें पिण्डदान करनेसे जैसे तृप्त होतेहैं, धर्मतीर्थपर पिण्डा पारनेसे भी वैसेही तृप्त होजातेहैं इसमें कुछ न्यूनाधिक्य नहीं होता ॥ ३३ ॥ जो सन्तान धर्मतीर्थपर (पितृकर्म करके) पितरोंके ऋणसे उद्धार करलेते हैं, वेही धन्यहैं, वेही पितृभक्तहैं, और वेही पितरोंके प्रीति-संपादकहैं ॥ ३४ ॥ उस तीर्थके-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रभावसे इन्द्र क्षणमात्रमें निष्पाप होगये, फिर देवदेवको प्रणामकर (अपनी) अमरावतीपुरीको चलेगये ॥ ३५ ॥ हे कुंभजमुने ! उस धर्मतीर्थकी अपार महिमाहै, उस कूपमें अपनी परछांही देखनेसेभी श्राद्धदान करनेका फल प्राप्त होताहै ॥ ३६ ॥ वहांपर यदि कोई मनुष्य पितरोंकी प्रीतिके लिए, एक टुकडाभी दे देवे तो धर्मतीर्थके प्रभावसे उसका अक्षयफल प्राप्त करताहै ॥ ३७ ॥ यदि कोई वहांपर ब्राह्मण, संन्यासी अथवा तपस्विबयोंको भोजन करावे तो उसे अन्नके प्रत्येक कणिकामें समस्त वाजपेययज्ञका फल मिलजाताहै ॥ ३८ ॥ (उधर) इन्द्र वहांसे अमरावतीमें जाकर देवतालोगोंके आगे काशीके धर्मपीठकी बडीही बडाई गानेलगे ॥ ३९ ॥ अनंतर वहांसे फिर महादेवके आनन्दवनमें देवता और मुनियोंके साथ (लौट) आकर इन्द्रने लिंगकी स्थापना की ॥ ४० ॥ तारकेश्वरसे पश्चिमओर इन्द्रेश्वरनामक लिंग प्रसिद्धहै, उसके दर्शनसे लोगोंको इन्द्रलोक कुछ दूर नहीं रहजाता ॥४१॥ उसके दक्षिणभागमें स्वयं इन्द्राणीका स्थापित शचीश्वरनामक लिंगहै, उस शचीश्वर लिंगके पूजन करनेसे स्त्रियोंका अतुलनीय सौभाग्य होजाताहै॥४२॥उसी लिंगके समीपमें रम्भेश्वर हैं जो बडी सुखसमृद्धियोंके दाताहैं, और इन्द्रेश्वरके पासहीमें लोकपालेश्वर नामक एक औरभी लिंगहै ॥ ४३ ॥ उसके पूजन करनेसे लोकपाल गण प्रसन्न होकर समृद्धियोंको देतेहैं । एवं धर्मेश्वरसे पश्चिम दिशामें जो लिंगहै वह धरणीश्वर कहा जाताहै, उसके दर्शनसे राज्य, और राजकुलमें धैर्य बना रहताहै॥४४॥धर्मेश्वरके दक्षिणभागमें तत्त्वेश्वरनामक प्रधान लिंगहै, लोगोंको उसकी पूजा करनी चाहिए क्योंकि उस लिंगके पूजनसे तत्त्वज्ञान उत्पन्न होजाताहै ॥ ४५ ॥ धर्मेश्वरके पूर्वओर वैराग्येश्वर लिंगका समर्चन करना उचितहै, उस लिंगके स्पर्श करनेहीसे चित्तकी निवृत्ति—होने लगतीहै ॥ ४६ ॥ धर्मेश्वरसे ईशानकोणपर समस्त देहधारियोंको शुभलिंगज्ञान देनेवाला ज्ञानेश्वर लिंगहै, और उत्तरदिशामें ऐश्वर्येश्वरनामक लिंगहै ॥ ४७ ॥ उस लिंगके दर्शन करनेसे मनोभिलषित ऐश्वर्य्य लोगोंको मिलता है । हे कुम्भयोने ! ये सब लिंग साक्षात् पंचवक्त्रके स्वरूपहैं, ॥ ४८ ॥ इन सबोंका सेवन करनेसे मनुष्य अवश्यही शाश्वतपदको प्राप्त होताहै । हे मुने ! वहांपर एक और घटना हुईथी, उसेभी कहताहूं श्रवण करो ॥ ४९ ॥ जिसके केवल सुनलेनेसेभी मनुष्य संसारसागरमें डुबकी नहीं खाता, यहींपर कर्दम शिखरनामकी विंध्यपर्वतकी एक पहाडी है ॥ ५० ॥ वहांपर राजा दमका पुत्र दुर्दम-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

२४१

नामक एक राजा रहताथा, पिताके शान्त होजानेपर राज्य पाकर वह (बडाही) चंचलेन्द्रिय होगयाथा ॥ ५१ ॥ वह कामसे मोहित होकर पुरवासियोंकी युवती स्त्रियोंको बलपूर्वक हरलेताथा, दुष्टही लोग उसके प्यारे थे, और सज्जनोंसे तो वह घृणा करता था ॥ ५२ ॥ वह निरपराध लोगोंको तो दंड देता, पर अपराधियोंको अदण्डय बनाये रहता था, वह व्याध और वनरखोंके साथ रहकर सदैव मृगया (अहेर) में लगा रहता था ॥ ५३ ॥ अच्छी बुद्धि देनेवालोंको उसने अपने राज्यभरसे बाहर निकाल दिया, शूद्रलोगोंको धर्माधिकारी बनाया, और ब्राह्मणोंसे कर लेनेलगा ॥ ५४ ॥ वह पराई स्त्रियोंसे संतुष्ट और अपनी स्त्रियोंसे पराङ्मुख रहता था, उसने कभीभी दुःखान्तकारी ॥ ५५ ॥ सर्वपापापहारी, सब किसीके वांछितदाता, संसारके सार, सब किसीके स्वामी, देवदेव हरि और हरकी पूजा नहीं की ॥ ५६ ॥ वह दुर्दम-नामक भूपाल अपनी प्रजाओंके असमयहीमें क्षय करडालनेके लिए मानो दूसरा धूम-केतुही उदय हुआ था ॥ ५७ ॥ एकबार वह पापकी संपत्तिसे पूर्ण व्यसनातुर राजा व्याधोंके साथ घोडेपर चढकर एक नीलगायके पीछे दौडताहुआ बडे गझिन जंगलमें जा घुसा ॥ ५८ ॥ इसके अनंतर धनुषको लिए, घोडापर चढाहुआ वह राजा दुर्दम दैवयोगसे अकेलाही आनन्दवनमें जा पडा ॥ ५९ ॥ वहांपर सर्वत्रही सुन्दर छायासे भरे, बडे विस्तारयुक्त (छतनार) और फल हीन (विकसित) वृक्षोंको देखकर मानो वह श्रमहीन होगया ॥ ६० ॥ वे सब पेड (मानो) राजाको अपने पल्लवरूप पंखोंके शीतल मन्द सुगंधयुक्त उत्तम वायुसे पंखा झुलने लगे ॥ ६१ ॥ उस वनके देखनेसे उस राजाका केवल मृगयाजनितही खेद नहीं दूर हुआ, वरन् आजन्मसंचित समस्त खेद दूर होगये ॥ ६२ ॥ उसने उस वनके बीचमें आकाशका चूमनेवाला (बडा ऊँचा) बडेसे बडे रत्नोंकी शलाकाओंके आकारसा परमरमणीय, एक मंदिर देखा ॥ ६३ ॥ फिरतो वह राजा बडे आश्चर्यके साथ घोडेसे उतरकर गोपेश्वरके मंडपमें जा पहुँचा, और अपनी बडी प्रशंसा करने लगा ॥ ६४ ॥ आज मैं धन्य हुआ, प्रसन्न हुआ, और मेरे दोनों नेत्रभी धन्य होगये, एवं आजका दिनभी धन्यहै जो मैंने इस भूमीको देखलिया ॥ ६५ ॥ फिर धर्मपीठके प्रभावसे (ज्ञान होजानेपर) अपनीही निन्दा करनेलगा कि दुर्जनोंके साथी और सज्जनलोगोंके संग त्यागनेवाले मुझको धिक्कार है !! ॥ ६६ ॥ जो मैं प्राणियोंका उद्वेग जनक, मूढ, प्रजापीडनमें पंडित और परायेकी स्त्री और धनका अपहरण करके अपनेको सुखी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मानताहूं, ॥ ६७ ॥ सो आजतकका मेरा दिन मेरीही अल्पबुद्धिके कारणसे वृथा गया, हा !! मैंने ऐसे ऐसे उत्तम धर्मके स्थानोंको कभी नहीं देखा ॥ ६८ ॥ इस प्रकारसे वह राजा दुर्दम अपनी बडी निंदा करनेके उपरांत भगवान् धर्मेश्वरको प्रणाम कर घोडेपर चढ अपने राज्यको चलागया ॥ ६९ ॥ फिर तो उस राजाने अपने परंपरासे चले आएहुए पुराने मन्त्रियोंको बुलाकर, और नये मन्त्रियोंको निकालकर पुरवासियोंकोभी बुला भेजा ॥ ७० ॥ तदनंतर ब्राह्मणोंको प्रणामकर उन लोगोंको वृत्ति देकर, राज्यका भार पुत्रको सौंप अपनी प्रजाको धर्मपर स्थापन कर ॥ ७१ ॥ दंडके योग्य लोगोंको दंड दे, सज्जनलोगोंका संतोष साधन कर स्त्रियोंकोभी त्याग, विषय-वासनासे विमुख होगया ॥ ७२ ॥ फिर श्रेयोविकासिनीकाशीमें अकेलाही पहुँच धर्मेश्वरकी आराधना करके कालानुसार निर्वाणपदको प्राप्त हुआ ॥ ७३ ॥ वह राजा दुर्दम वैसा होनेपरभी नित्य धर्मेश्वरके दर्शन करनेसे जितेन्द्रियोंमें श्रेष्ठ होगया और अन्तमें मोक्षभी पागया ॥ ७४ ॥ हे कुम्भज ! यह तो धर्मेश्वरका माहात्म्य मैंने थोडेमें निरूपण किया पर संपूर्णरीतिसे उस धर्मपीठकी महिमाको भला कौन जान सकताहै ? ॥ ७५ ॥ जो उत्तम नर इस धर्मेश्वरके उपाख्यानको सुनेगा वह उसी क्षण जन्मभरके संचित पापसे छूट जाताहै ॥ ७६ ॥ बुद्धिमान् जन विशेष करके श्राद्ध-कालमें पितरोंके तृप्तिकारक इस उत्तम धर्मेश्वरके आख्यानको ब्राह्मणलोगोंके (समीप) सुनावे ॥ ७७ ॥ दूर स्थित होनेपरभी बुद्धिमान् जन धर्मेश्वरके इस उपाख्यानके सुननेसे समस्त पापोंसे छूटकर अंतमें शिवधामको गमन करताहै ॥ ७८ ॥

दोहा—धर्मेश्वरके पासमें, धर्मकूप विख्यात ।
रहै मास छह मृत्युमें, तब तहँ मुख न दिखात ॥ १ ॥

इति श्रीस्कंदपुराणे चतुर्थे काशीखंडे उत्तरार्धे भाषायां एकाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८१ ॥

बयासिवां अध्याय ।

वीरेश्वरके आविर्भावकी कथा ।

पार्वतीने पूछा—हे महेश्वर ! वीरेश्वरकी भी तो बडी महिमा सुनाई पडतीहै कि वहांपर सैकडों लोगोंने परमसिद्धिको पायाहै ॥ १ ॥ उस उत्तम लिंगका काशीमें कैसे आविर्भाव हुआ, जो बहुत शीघ्रही सिद्धियोंका दाता होगया ? हे जगत्पते ! यह सब मुझसे कहिए ॥ २ ॥ महेश्वरने उत्तर दिया—हे महादेवि ! वीरेश्वरके प्रा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२४३

आविर्भावकी कथाको श्रवण करो, अयि शिवे ! इसके सुननेसे मनुष्य विपुलपुण्यको प्राप्त करताहै ॥ ३ ॥ अमित्रजित्नामक एक राजा बडा धार्मिक परपुरंजय, परम सत्त्व संपन्न प्रजारंजनमें तत्पर, ॥ ४ ॥ यशस्वी, वदान्य बुद्धिमान् ब्राह्मणसेवी बहुत विनीत, नीति संपन्न समस्त कर्मोंमें निपुण, विद्यासागरका पारदृश्वा, गुणवान्, गुणग्राहक, कृतज्ञ, मधुरालापी, पापकर्मसे विमुख, सत्यवचन, शौचागार, मितभाषी, विजितेन्द्रिय, रणांगणमें यमराजके तुल्य, सभामें दिग्गज विद्वान्, स्थिरता, धीरता आदिसे संपन्न, देशकालमें विचक्षण, माननीय लोगोंका मान करनेवाला, समस्त दोषोंसे रहित था। उसके माथेके बाल सदैव यज्ञस्नानसे ओदेही रहतेथे ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ वह अपने चित्तकी वृत्तिको भगवान् वासुदेवके चरणकमलमें लगाकर सब प्रकारके उपद्रवोंसे रहित निष्कंटक राज्य करता था ॥ ११ ॥ अलंघ्यशासन श्रीमान् अमित्रजित् विष्णुका परमभक्त होकर समस्त भोगोंको विष्णुके चरणोंमें समर्पण करकेही आप भोगता था ॥ १२ ॥ उस महाभाग्यशाली राजाके राज्यमें पद पदपर विष्णुके बडे ऊंचे ऊंचे मन्दिर प्रत्येक गृहोंमें विराजमान थे॥ १३॥ उसके राज्यमें सर्वत्रही हे गोविन्द ! गोप ! गोपाल ! गोपीजन—चित्तचोर ! गदाधर ! गुणातीत ! गुणपूर्ण ! गरुडध्वज ॥ १४ ॥ केशिसूदन ! कैटभराते ! कंसारे ! कमलाधवे ! कृष्ण ! केशव ! कमलनेत्र ! मृत्युभय नाशन ॥ १५ ॥ पुरुषोत्तम ! पापारे ! पुंडरीकाक्ष ! पीतकौशेयवसन ! पद्मनाभ ! परात्पर ॥ १६ ॥ जनार्दन ! जगन्नाथ ! जाह्नवी जलजन्मभूमे ! जन्मिजन्मनिवारक ! यज्ञ कर्तृगणके पापापहारक ! ॥ १७॥ श्रीवत्सवक्षः ! श्रीकान्त ! श्रीकर ! श्रेयोनिधे ! श्रीरंग ! शार्ङ्गकोदंड ! शौरे ! शीतांशुलोचन ! ॥ १८ ॥ दैत्यारे ! दानवाराते ! दामोदर ! दुरंतक ! देवकीहृदयानन्द ! शेषशायिन् ॥ १९ ॥ विष्णो ! वैकुंठनिलय ! बाणारे ! विष्टरश्रवः ! विष्वक्सेन ! विरारे ! वनमालिन् ! वनप्रिय ! ॥ २० ॥ त्रिविक्रम ! त्रिलोकीनाथ ! चक्रपाणे ! चतुर्भुज इत्यादि मधुसूदनके मधुर और पवित्र नाम घर घरमें बाल, गोपाल, वृद्ध और स्त्रियोंके मुखसे उच्चारित होनेपर जहां तहां (सर्वत्रही) सुनाई पडते थे ॥ २१ ॥ २२ ॥ प्रत्येकगृहोंमें तुलसीके जंगलही दीख पडते, एवं बडी बडी अटारियोंकी भीतोंपर (चतुर) चित्रकारोंकी लिखीहुई भगवान् कमलापतिकी परमपवित्र और विचित्र चित्रकारियां दृष्टिगोचर होती थीं (वहांपर) हरिकथासे भिन्न दूसरी बातही नहीं सुनाई देती थी ॥ २३ ॥ २४ ॥ भगवान् हरिके नामांशके लेशधारी होनेहीसे हरिनोंकोभी व्याध

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लोग उस राजाके भयसे नहीं मारतेथे ॥ इस कारणसे वे सब (हरिन) सुखसे वनमें विचरण करते थे ॥ २५ ॥ कोईभी मांस मछरी खानेवाला उसके भयसे मछली कछुआ किंवा वराहको नहीं मारने पाता था ॥ २६ ॥ उस राजा अमित्रजितके राज्यभरमें कहींपर कोईभी दुधमुँहा बच्चा एकादशी आनेपर दूध नहीं पीता था॥२७॥ मनुष्योंकी कौन बातहै, एकादशीके दिन तो पशुभी तृणाहार छोडकर उपवासही करते थे ॥ २८ ॥ उस राजाके राज्यशासन समयमें एकादशी पहुँचनेपर सभी पुरवासी लोग बहुत बडा महोत्सव मनाते थे ॥ २९ ॥ राजा अमित्रजित्का एकमात्र भूतल-पर प्राणदंड अथवा अर्थदंड वही पाता जो भगवान् विष्णुकी भक्तिसे रहित होता ॥ ३० ॥ उसके राज्यमें अंत्यज जातिके लोगभी विष्णुमंत्रसे दीक्षित हो, शंख, चक्रका, छाप धारण करके ब्राह्मणोंहीकी नाईं शोभा पाते थे ॥ ३१ ॥ लोग प्रति-दिन जितनेही अच्छे कर्म करते, उन सब कर्मोंको वे निष्कामभावसे वासुदेवको सम-र्पण करदेते ॥ ३२ ॥ कहींपर कोईभी परमानन्द (अच्युत) मुकुन्द गोविन्दको छोडकर दूसरे किसी देवताको न तो जपता न भजता, न मानताही था ॥ ३३ ॥ उस भूपतिके भगवान् कृष्णही परमदेवता, कृष्णही परमगति और कृष्णही परमबन्धु थे ॥ ३४ ॥ इस प्रकारसे राजा अमित्रजित्के सम्यग्रूपसे राज्यशासन करनेके समय एकबार श्रीमान् देवर्षिनारद उसको देखनेके लिए (वहां) आये ॥ ३५ ॥ अनंतर राजाने (बडे आदरके साथ) मधुपर्ककी विधिके अनुसार उनका पूजन किया, तदुपरान्त नारद राजा अमित्रजित्से कहने लगे ॥ ३६ ॥ नारद बोले—हे—नरपाल! तुम्हीं धन्य, तुम्हीं कृतार्थ और तुम्हीं देवतालोगोंकेभी मान्यहो, क्योंकि तुम समस्त भूतोंमें भगवान् गोविन्दहीको देखते रहते हो ॥ ३७ ॥ हे राजस-त्तम ! जो वेदके प्रतिपाद्य पुरुष विष्णुहैं, और जो यज्ञपुरुष हरिहैं, एवं जो इस जगत्के अंतरात्मा, हर्ता, कर्ता, और पालयिताहैं ॥ ३८ ॥ उन्हीं विष्णुके व्याप्य अर्थात् विष्णुमय जगत्को तुम देखते हो, अतएव तुम्हारे शुभप्रद दर्शनको पाकर (आज) मैं बडाही पवित्र होगया ॥ ३९ ॥ इस क्षणभंगुर संसारमें सब कल्याणोंका देनेवाला, एकमात्र कमलाकान्तके चरणारविंदका भक्तिभावही सार पदार्थ है ॥ ४० ॥ जो बुद्धिमान् जन और सब कुछ त्यागकर केवल विष्णुहीको भजताहै, सब पदार्थ उसे आपसे आप सेवते हैं ॥ ४१ ॥ हृषीकेशके ऊपर जिसकी इंद्रियां स्थिर होरहती हैं, वही मनुष्य इस परम चंचल ब्रह्मांडमें स्थिरताको प्राप्त

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२४५

होताहै ॥ ४२ ॥ धन, यौवन, आयुष्य, आदिको कमलपत्रके जलबिन्दुसा अत्यन्त अस्थिर समझकर अकेले भगवान् अच्युतहीके आश्रयमें रहना चाहिये ॥ ४३ ॥ जिसके वचन और हृदयमें सर्वत्रही भगवान् जनार्दन विराजमान रहते हैं वह नररूपधारी जनार्दन सर्वदैव वन्दनीय हैं ॥ ४४ ॥ इस भूतलपर निश्छल ध्यानयोगके द्वारा श्रीपति विष्णुकी आराधना करके कौन नहीं पुरुषोत्तमताको प्राप्त हुआहै ? ॥ ४५ ॥ हे भूपते ! तुम्हारी ऐसी विष्णुकी भक्तिको देख परमसन्तुष्टचित्त होकर मैं जो कुछ तुम्हारा उपकार किया चाहताहूं उसे कहताहूं, तुम श्रवण करो॥ ४६ ॥ मलयगंधिनीनामकी एक बालिका जो कि विद्याधरकी कन्याहै, अपने पिताकी वाटिकामें खेलती थी उसी बेला कपालकेतुका बेटा कंकालकेतुनामक एक बडे बलवान् दानवने उसे हरण करलिया, और आगामिनी तृतीया तिथिको उसका विवाह होना स्थिर हुआहै ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ इस घडी वह पातालकी चम्पावती नगरीमें निवास करती है, हाटकेश्वरसे होकर आतेहुए मुझसे उसने आंखोंमें आँसू भरकर देखतेही प्रणाम करके जो कुछ कहा उसे सुनो, " हे ब्रह्मचारिन् ! मुनिश्रेष्ठ ! गन्धमादनपर्वतपर मैं लडिकखेलवामें लगीथी, वहींसे यह दुराचारी कंकालकेतुनामक दानव मुझे हर लाया, वह युद्धमें दूसरे शस्त्रोंसे अजेयहै, केवल अपनेही त्रिशूलके आघातसे वह मरसकताहै, अन्यथा नहीं मारा जा सकता, वह दानव संसारभरको व्याकुल करके यहींपर निर्भय होकर सोया करताहै ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ॥ ५२ ॥ यदि कोई कृतज्ञ मनुष्य इस दुष्ट दानवको मेरे दियेहुए त्रिशूलसे मारकर मुझको निकाल लेचलता तो बहुतही अच्छा होता ॥ ५३ ॥ हे महामुने ! यदि आप उपकार किया चाहते हैं, तो इस दुष्ट दानवसे मुझे बँचालीजिए, मुझे तो भगवतीने वरभी दियाहै कि ॥ ५४ ॥ " हे पुत्रि ! एक बडा विष्णुभक्त बुद्धिमान् जवान जन तृतीयातिथितक तुझे व्याहेगा" सो जिसमें भगवतीका वचन ठीक होजावे ॥ ५५ ॥ इसलिए आप निमित्तमात्र होकर इस विषयमें कुछ यत्न कीजिए । हे राजन् ! उसके कहनेहीसे मैं विष्णुभक्तिमें तत्पर, जवान और बुद्धिमान् (देखकर) आपके पास आयाहूं ॥ ५६ ॥ (सो) हे महाबाहो ! आप इस कार्यकी सिद्धिके लिए शीघ्रही यात्रा करें, और उस दुष्ट दानवको मारकर शुभलक्षणा मलयगंधिनीको लिवालावें ॥ ५७ ॥ हे नरनाथ ! वह (बिचारी) विद्याधरी आपका दर्शन पाजानेहीसे जी सकेगी, और आप भगवती पार्वतीदेवीके वचनानुसार प्रयास

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

उठाये विनाही उस दुष्टको मारसकेंगे ॥ ५८ ॥ इस भाँति नारदके वचनको सुनकर वह राजा अमित्रजित् विद्याधरकी कन्याके पानेकी इच्छासे बडाही उत्सुक होउठा ॥ ५९ ॥ और चंपकावतीनगरीमें जानेका उपायभी पूछने लगा, हे गिरीन्द्रनन्दिनि ! तब तो फिर नारदने कहा ॥ ६० ॥ हे राजन् ! पूर्णिमाके दिन पोत (जहाज) पर चढकर शीघ्रही समुद्रमें चलेजानेपर आप एक रथके ऊपर कल्पवृक्षको लगाहुआ देखेंगे ॥ ६१ ॥ उसके ऊपर दिव्यपर्यंकपर विराजमान हो एक दिव्यांगना वीणा लेकर गातीहुई मधुरस्वरमें इस गाथाको गावेगी ॥ ६२ ॥ जिसने शुभ अथवा अशुभ (भला—वा—बुरा) चाहे कैसाहू कर्म कियाहै उसे दैवकी डोरीमें बँधकर उसका फल अवश्यही भोगना पडताहै ॥ ६३ ॥ (बस) इस गाथा (कहावत) को गाकर, वह दिव्यकन्या, वृक्ष, रथ, और पर्यंकके सहित क्षणमात्रमें समुद्रके भीतर घुसजावेगी ॥ ६४ ॥ हे राजन् ! उस घडी आपभी यज्ञवाराहको स्मरण करतेहुए, निश्शंक चित्त होकर उस पोत (जहाज) से महासमुद्रमें तुरत (कूदकर) उसका अनुगमन कीजिएगा ॥ ६५ ॥ तदनंतर पातालमें (पहुँचकर) उस कन्याके सहित परम मनोहर चंपकावती—नगरीको देखिएगा ॥ ६६ ॥ इन बातोंको बतियाकर ब्रह्माके पुत्र अन्तर्धान होगये, और राजाभी समुद्रपर पहुँच, कथनानुसार सबकुछ देखभालकर ॥ ६७ ॥ समुद्रके भीतर पैठ उस नगरीमें जा पहुँचा, इसके पीछे उस विद्याधरी कन्याको अपनी आँखोंसे देखसका ॥ ६८ ॥ उसे देखतेही राजा अपने मनमें तर्क करने लगा, कि, क्या यही एकमात्र त्रैलोक्यभरकी सौन्दर्य लक्ष्मी है ? किंवा मेरे नेत्रोंका उत्सव करनेवाली पातालदेवताहै ? ॥ ६९ ॥ नहीं तो भगवान् विष्णुने ब्रह्माकी सृष्टिसे विलक्षण इसे बनाया होगा, ? अथवा अमावास्या और राहुके भयसे यह चन्द्रमाकी कान्ति तो स्त्री बनकर यहांपर निर्भय होकर नहीं छिपीहै ? इस प्रकार क्षणभर शोच विचार कर वह उसके पास गया ॥ ७० ॥ ७१ ॥ इसके अनंतर वह कन्याभी परममधुराकृति; तुलसीकी मालासे बडे विशाल वक्षस्थलको शोभित करे ॥ ७२ ॥ शंख और चक्रके चिह्नको दोनों भुजोंपर धारण कियेहुए हरि नामसे रूप सुधासे सुधौत दंतपंक्तियोंसे युक्त, ॥ ७३ ॥ एवं भवानीके भक्तिबीजसे उत्पन्न पुरुषस्वरूप वृक्षको मनोरथ रूप फलोंसे परिपूर्ण (देखकर) रोमांचित शरीर होकर ॥ ७४ ॥ फिर तो हिंडोलाकी पलंग छोड मारे लज्जाके नम्रकंधर हो और देहकी कपकँपीको रोककर वह कन्या राजासे कहनेलगी ॥ ७५ ॥ हे मधुराकृते !

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२४७

अभागिनीके चित्तवृत्तिको छेंकतेहुए आप कौनहैं ? जो यहांपर यमराजके घरमें चले आयेहैं ॥ ७६ ॥ हे सुभग ! जबलों वह महाकठोर स्वरूप, और दूसरेके शस्त्रोंसे अवध्य, परमदुराचारी कंकालकेतुनामक दानव त्रैलोक्यमात्रको व्याकुल करके फिर नहीं लौटता तबतक आप इस बडे गह्वर शस्त्रागारमें छिपे रहिए ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ पार्वतीके वरदानसे वह मेरे कन्याव्रतको कभी नहीं तोडसकता, इसीसे परसों तीजके-दिन मेरा व्याह करलेना चाहताहै, सो वह दुरात्मा तो मेरेही शापसे गतजीवन हो चुकाहै, हे युवक ! आप उसका तनिकभी भय मतकरें वह काम बहुतही शीघ्र होजायगा ॥ ७९ ॥ ८० ॥ विद्याधरीके ऐसा कहनेपर वह बीर और महाबाहु राजा दानवके आगमनकी प्रतीक्षा करता शस्त्रागारमें छिपाहुआ ठहरा रहा ॥ ८१ ॥ इसके अनंतर सन्ध्याके समय वह परमभयंकर रूप दानव हाथमें मृत्युकेभी भय उपजानेवाले त्रिशूलको फेरताहुआ वहांपर आगया ॥८२॥ आतेही वह रौद्र दानव प्रलयमेघके समान गंभीरस्वरसे मदके मारे आँखोंको घुमाताहुआ विद्याधरीसे यह कहने लगा ॥ ८३ ॥ अयि सुन्दरि ! इन दिव्यरत्नोंको ग्रहण करो, पाणिग्रहण होजानेसे परसों तुम्हारा कन्यापन छूट जावेगा ॥ ८४ ॥ अयि वरवर्णिनि ! प्रातःकाल होतेही दस सहस्र दासियां तुम्हारे पास लगादूंगा, शत शत सुन्दरी आसुरी, दैवी, दानवी ॥ ८५ ॥ गन्धर्वी, किन्नरी, और मानुषी, एवं छःसौ विद्याधरी, यक्षिणी, और नागकन्यायें ॥ ८६ ॥ यँहीपर आठसौ राक्षसी और एकसौ अप्सरायें ये सब तुम्हारी लौंडियां होंगी ॥ ८७ ॥ मेरे साथ व्याहकरलेनेसे इन्द्रादिक दिक्पालोंके घरमें जितनी संपत्तिहै उस सबकी तुम्हीं स्वामिनी होजाओगी ॥ ८८ ॥ मेरे साथ विवाह होजानेपर तुम दिव्यभोगोंको भोगोगी, अहा !! वह परसों कब होगा ? जिस दिन विवाहकी विधि होजानेपर ॥ ८९ ॥ मैं तुम्हारे अंगस्पर्शरूप सुखकी धारामें डूबकर परमआनन्दका भोग करसकूंगा, यदि परसों नगिचायजाता तो ॥ ९० ॥ अपने हृदयमें जिन मनोरथोंको बहुत दिनोंसे पालरक्खाहै, परसोंही तुम्हारे संगम होजानेसे चरितार्थ करडालता ॥ ९१ ॥ हे मृगनयने ! इंद्रादिक देवतोंको युद्धमें जीतकर त्रैलोक्यभरकी समस्त ऐश्वर्य संपत्तिकी तुम्हींको स्वामिनी बनाऊंगा ॥ ९२ ॥ इस चालका प्रलाप कर नरमांसके भोजनसे हृष्टचित्त, वह दानव अपने त्रिशूलको गोदमें रख, निर्भय होकर, सो रहा ॥ ९३ ॥ तब वह विद्याधर कुमारी पार्वतीके वरदानको स्मरण करतीहुई, उस दानवको प्रमत्त और निःशंक हो,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बहुतही निद्रित देखकर ॥ ९४ ॥ सर्वांगसुन्दर और अपने भावीवर एवं विष्णुभक्तिके द्वारा कृतत्राणा उस नरवरको " हे प्राणनाथ ! " ऐसा संबोधन देतीहुई पुकार ॥ ९५ ॥ इस दानवके गोदसे त्रिशूल लेकर (कहने लगी—कि) इसे झटपट लेकर इसको "मारडालो" तब तो वह बाल सूर्यके समान परमकान्तिमान् महाबाहु राजा अमित्राजित्, उस कन्याके हाथसे त्रिशूलको ले उसे अभयदान (तसल्ली) देताहुआ बडाही हर्षित होकर गरजनेलगा ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ फिर तो उस राजाने निर्भय हो, उस दानवको बायें लातसे मारकर अपने हृदयमें जगत्के रक्षामणि भगवान् चक्रधर हरिको स्मरण करके ॥ ९८ ॥ कहा, कि अरे दुष्ट ! कन्याघर्षणेच्छु दानव ! उठ, यहींपर मेरे साथ युद्धकर, मैं सूतेहुए शत्रुको नहीं मारता ॥ ९९ ॥ इतना सुनतेही वह दानव चकमकाता हुआ " प्यारी मेरा त्रिशूल तो दो " यही वारंवार कहनेलगा ॥ १०० ॥ (हाय्) यह कौन मृत्युके घरमें चला आयाहै ? आज यमराज किसपर रुष्ट हुआहै ? आज किसकी आयु खोटी हुई जो यह मेरे पास आयाहै ? ॥ १ ॥ मेरे प्रचण्ड भुजदण्डोंकी खजुरी खुजलानेके योग्य यह नहीं है, यह तो महातुच्छ मनुष्यहै, हे सुन्दरि ! त्रिशूलका कौन प्रयोजनहै ? ॥ २ ॥ तुम तनिकभी मतडरो, इस अवसर मेरा कौतुक देखो, मैं अभी इसे खाडालताहूं, मुझसे डरकर कालने स्वयं इसे मेरे लिये भेंट भेजदियाहै" ॥ ३ ॥ इन सब बातोंको कहकर उस दानवने पाषाणके समान कठोर राजाकी छातीपर बडे वेगसे एक मुक्का मारा ॥ ४ ॥ परन्तु भगवान् चक्रपाणिके त्राण कर रखनेसे उस राजाको तनिक भी पीडा नहीं होनेपाई, वरन्, उसकी कठोर छातीसे टक्कर खाकर उसीका हाथ दुखनेलगा ॥ ५ ॥ तब तो राजानेभी क्रोधित होकर उसके मुखपर एक ऐसा थप्पड (तमाचा) लगाया कि वह महाबली दानव चक्कर खाकर पृथिवीपर गिरपडा, फिर उठकर धीरतापूर्वक यह कहने लगा दानवने कहा—समझा, तुम मनुष्य नहीं हो, तुम तो नररूपधारी चतुर्भुज हो ॥ ६ ॥ ७ ॥ और दानवोंके अंतकहो, तुम छिद्र (मोका) पाकर मुझे मारने आये हो ॥ ८ ॥ हे मधुरिपो ! यदि तुम अपनेको बलवान् लगातेहो तो मेरे इस कन्या त्रिशूलको रखदो और अपना आयुध लेकर मुझसे लडाई करो ॥ ९ ॥ तुमने कपट रूपहीसे महाबली कैटभ इत्यादि दैत्योंको संग्राममें छलकर मारा कुछ बलपूर्वक नहीं मारलिया था ॥ ११० ॥ तुम्हीं ने कपटपूर्वक नर वामन बनकर बलिको पातालमें डालदिया, और नरसिंह होकर हिरण्यकशिपुकोभी मारडाला था ॥ ११ ॥ तुम्हीं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२४९

जटिल तपस्वी होकर रावणका नाश किया, और गोपालका वेष धरकर कंस इत्यादिको मारा ॥ १२ ॥ तुम्हीं तो मोहिनीमूर्ति धर, असुरोंको ठगकर अमृत उडा लेगये थे, फिर जलचर जन्तु बनकर शंख आदिक बहुतेरे असुरोंकोभी तुम्हींने माराहै ॥ १३ ॥ हे सर्वमर्मज्ञसाधक ! तुम समस्त मायावियोंके अग्रगण्यहो, (पर क्या हुआ) यदि तुम मेरा त्रिशूल रखदो तो मैं तुमसे तनिकभी नहीं डरसकता ॥ १४ ॥ परन्तु इन कांत-रोचित वचनोंका कोई प्रयोजन नहीं है, तुम त्रिशूलको न छोडोगे, और न मैं संग्राममें तुमको जीत सकूंगा ॥ १५ ॥ आज चाहे कल शरीरधारीको तो अवश्यही मरना पडेगा, फिर बलसे हो किंवा छलसे हो तुम्हारे हाथसे मरना हो तो बहुतही अच्छाहै ॥ १६ ॥ यह विद्याधरकी कन्या शुद्ध सती है, मैंने इसे दूषित नहीं कियाहै, इसे तुम साक्षात् लक्ष्मीही समझना, क्योंकि मैंने इसे तुम्हारेही लिए सुरक्षित कर रक्खा है ॥ १७ ॥ इतना कहकर उस दानवने पर्वत कँपादेनेवाले अपने वाम भुजदण्डसे बडीही निष्ठुरतापूर्वक राजाकी छातीपर प्रहार किया ॥ १८ ॥ महाबाहु राजानेभी रणक्षेत्रमें उस विषम आघातको सह हाथमें त्रिशूलको लेकर, उसके वक्षःस्थ-लको लक्ष्य करके ॥ १९ ॥ ऐसा मारा कि वह दानव क्षणमात्रमें प्राण-रहित होगया, इस प्रकारसे राजा अमित्रजित्ने देवतोंके हृदय हिलादेनेवाले कंकाल-केतुको मारकर ॥ १२० ॥ रोमांचित शरीर और ताकतीहुई उस विद्याधरीसे कहा कि, "हे सुश्रोणि ! महर्षि नारदके कथनानुसार मैंने तुम्हारा वांछित कार्य कर दिया, हे कृतज्ञे ! अब मुझे क्या करना चाहिए उसे भी कहो," इस रीतिसे उस गंभीर हृदय राजाकी बात सुनकर वह कहनेलगी ॥ २१ ॥ २२ ॥ मलयगंधिनीने कहा—हे जीव-नदातः ! उदारमते ! वीर ! अपने प्राणोंके पणसे इस अदूषित कुलकन्याकी रक्षा कीहै तब फिर मुझसे क्या पूछतेहैं ॥ २३ ॥ जब कि वह कन्या यह बात कह रहीथी, उसी घडी स्वेच्छाचारी नारद मुनि अनायासही देवलोकसे वहांपर जा पहुँचे ॥ २४ ॥ वे दोनोंही उन मुनिराजको देखतेही बडे संतुष्ट होकर प्रणाम करने लगे, तब महर्षि नारदने आशीर्वाद देकर ॥ २५ ॥ पाणिग्रहणकी विधिसे उन दोनोंको अभिषिक्त किया, फिर नारदहीके बताएहुए मार्गसे उन दोनोंने मंगलविधानके अनंतर प्रस्थान किया ॥ २६ ॥ इसके उपरांत मलयगंधिनीके सहित राजा अमित्रजित्के वाराणसीपुरीमें पहुँचजानेपर पुरवासी लोगोंने मंगलाचार किया ॥ २७ ॥ जिस नगरीके दर्शन करनेहीसे मनुष्य कदापि नरकमें नहीं पडता नर उत्तमगतिको प्राप्त

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

होजाताहै, राजाने उसीमें प्रवेश किया ॥ २८ ॥ जिस कैवल्यजननीपुरीमें इन्द्रादिक देवतोंकोभी सहजहीमें प्रवेश नहीं मिलता अमित्रजित्ने उसी पुरीमें प्रवेश किया ॥ २९ ॥ जिस त्रैलोक्यकांक्षिता काशीपुरीके स्मरण करनेसेभी मनुष्य पापोंसे लिप्त नहीं होता (आज) वह भूपति उसीमें जा पहुँचा ॥ १३० ॥ जिस नगरीमें प्रवेश करनेवाला मनुष्य महापातकोंसे भी तनिक नहीं दबता, राजा अमित्रजित् उसी काशीमें प्रविष्ट हुआ ॥ ३१ ॥ वह विद्याधरीभी दूरहीसे काशीकी समृद्धिको देखकर स्वर्गलोक और पातालपुरीकोभी धिक्कारने लगी ॥ ३२ ॥ वह विद्याधरी वधू राजा अमित्रजित्को पति पाकरभी वैसी हर्षित नहीं हुई जैसी कि परमानन्द मंदिर काशीपुरीके दर्शनसे प्रसन्न हुई थी ॥ ३३ ॥ उस पति और काशीधामके प्राप्त होनेसे वह मनस्विनी अपनेको कृतार्थ मानकर परमानन्दके सुखमें निमग्न होगयी ॥ ३४ ॥ राजा अमित्रजित्भी कलयगंधिनीको पत्नी पाकर, धर्मप्रधान कामके सेवनसे सर्वोत्तम सुखको प्राप्त हुआ ॥ ३५ ॥ एकबार परम पतिभक्ता उस रानीने सुतार्थिनी होकर एकांतमें असाधारण विष्णुके भक्त अपने पतिसे कहा ॥ ३६ ॥ रानी बोली-हे भूपते ! यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं पुत्र फलप्रदा अभीष्ट तृतीयाके महाव्रतका अनुष्ठान करूं ॥ ३७ ॥ राजाने कहा—हे देवि ! अभीष्टतृतीयाका व्रत कैसा होताहै ? और उसमें किस देवताका पूजन करना चाहिए ? एवं उसका कौनसा विधान और क्या फल है ? ॥ ३८ ॥ जो स्त्री पतिकी आज्ञाके विनाही व्रत इत्यादिको करती है, वह जीते जी दुःखिनी होती, और शरीरांत होनेपर नरकमें पडतीहै ॥ ३९ ॥ राजाके इस कहनेपर वह पतिव्रता रानी उस व्रतमें जो जो करना पडताहै उसे रहस्यके साथ कहने लगी ॥ १४० ॥

दोहा—रम्य संकटा घाट पै, वीरेश्वर महराज ।
साधत निज जन हित सदा, सिद्धि करैं सब काज ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्धे भाषायां वीरेश्वराविर्भाववर्णनं नाम द्व्यशीतितमोऽध्यायः ॥ ८२ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२५१

तिरासिवाँ अध्याय।

श्रीवीरेश्वरका माहात्म्य ।

रानीने कहा—हे महाराज ! सावधान हूजिए, मैं इस व्रतका विधान, फल और इष्ट देवताको यथार्थरूपसे कहती हूं ॥ १ ॥ पूर्वकालमें ब्रह्माके पुत्र नारदमुनिने पुत्रार्थिनी कुबेरकी पत्नी श्रीमुखी देवीसे इस व्रतका वर्णन किया था॥ २॥इसके अनन्तर उस देवीके व्रत करनेपर उसे नलकूबरनामक पुत्र हुआ, औरभी बहुतेरी स्त्रियोंने इसी व्रतके प्रभावसे पुत्रलाभ किया है ॥ ३ ॥ हे सर्वविधानज्ञ ! इस व्रतमें दुग्धस्रावी स्तनको पीतेहुए बालकके सहित गौरी देवीकी विधिपूर्वक पूजा करनी चाहिये ॥ ४ ॥ अगहन मासकी शुक्ला तृतीयाको कलसके ऊपर चावलसे भराहुआ एक तांबेका पात्र रखकर ॥ ५ ॥ उसके ऊपर बिनाफाडा (दसीदार) और हरदीके रंगसे रंगाहुआ बहुतही सूक्ष्म (महीन) उत्तम नवीन वस्त्रको धरकर ॥ ६ ॥ फिर उसके ऊपर सूर्यके किरणोंसे खिलेहुए उत्तम कमलको रक्खे उस पद्मकी कर्णिकापर चार रुपयेभर सोनेकी बनीहुई ब्रह्माकी मूर्तिको स्थापनकर, रत्न, पट्टवस्त्र, नानाभाँतिके रमणीय पुष्प, नारंगी इत्यादि फल ॥ ७ ॥ ८ ॥ कपूर, कस्तूरी (केशर) आदिसे सुगंधित चन्दन, विविध विधके उत्तमोत्तम पक्वानोंके नैवेद्य ॥ ९ ॥ एवं अगर आदिके धूपोंसे भक्तिपूर्वक सुन्दर पुष्पमण्डपमें ब्रह्माका पूजन करे, और रात्रिके समय निद्राको त्यागकर बडे उत्सवके साथ जागरण करे ॥ १० ॥ फिर मन्त्रज्ञ द्विजको उचित है कि, एक हाथभरके कुंडमें घृत और मधुमें डुबायेहुए आपसे आप खिले एक सहस्र कमलके पुष्पोंको " जातवेदस " इत्यादि ऋचोंसे हवन करे, और आचार्य महाराजको नवप्रसूता, कपिला, सीधी, और अलंकृत दुधार गौका दान करे, एवं स्वयं सपत्नीक उपवास करके दूसरे दिन चतुर्थीके प्रातःकाल स्नानोपरान्त नवीन वस्त्रसे विभूषित होकर, बडे आदर और हर्षके साथ आचार्यको, वस्त्र, भूषण, माल्य, और दक्षिणा इत्यादिसे पूजित कर, सब सामग्रीके सहित उस मूर्तिको इस मंत्रका उच्चारण करताहुआ वह व्रती दंपती हर्षपूर्वक आचार्यको निवेदन करदेवे ॥ ११ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ हे विश्वविधानज्ञे ! विविधकारिणी ! विधिस्वरूपे ! देवि ! आपको नमस्कार है, आप इस शुभव्रतके अनुष्ठानसे सन्तुष्ट होकर (मुझे) वंश चलानेवाला पुत्र दीजिए ॥ १६ ॥ इसके पीछे एक सहस्र ब्राह्मणोंको भक्तिपूर्वक भोजन करावे तब उसी भुक्तशेष अन्नसे स्वयं पारण करे ॥ १७ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हे राजन् ! इसी प्रकारसे इस व्रतको मैं आपके साथ किया चाहतीहूं, यदि अभीष्ट फल पानेके लिए आप मेरे इस परमप्रिय कार्यको करदेवें ॥ १८ ॥ हे मुने ! उस भूपालवर्यने इस कथाको प्रसन्नचित्तसे सुनकर उस व्रतका अनुष्ठान किया जिससे वह रानी गर्भवती होगई ॥ १९ ॥ तब गौरी, रानीकी, भक्तिसे बडीही संतुष्ट हुई, फिर उस गर्भवती रानीने उनसे प्रार्थनाकी, (कि) हे महामाये ! साक्षात् विष्णुके अंशसे उत्पन्न पुत्र मुझको प्रदान कीजिए ॥ २० ॥ जो जन्मतेही स्वर्गको जासके और फिर कर यहां लौट आवे, शिवका सदैव भारी भक्त बनारहे एवं समस्त भूमंडलमें वह प्रसिद्ध होवे ॥ २१ ॥ जो कि दुग्धपान करनेके विनाही क्षणभरमें सोलह वर्षकी अवस्थाका जानपडे, हे गौरि ! ऐसा पुत्र जिसमें मुझको मिले वह (कृपा) कीजिए ॥ २२ ॥ रानीकी भक्तिसे संतुष्ट होकर भवानीदेवीने भी तथास्तु कहदिया, तदनंतर कालक्रमसे मूल नक्षत्रमें उसे पुत्र उत्पन्न हुआ ॥ २३ ॥ तब तो हितैषी मंत्री लोगोंने आकर सूतिकागृहहीमें रानीसे कहा कि, हे देवि ! यदि आप राजाको चाहती हैं तो इस दुष्ट नक्षत्रमें उत्पन्न पुत्रको त्याग दीजिए ॥ २४ ॥ एकमात्र पतिदेवता, नीति निपुण, उस राजमहिषीने मंत्रियोंकी बात सुनकर उस कष्टप्राप्त पुत्रको त्यागदिया ॥ २५ ॥ रानीने धायको बुलाकर यह कहा कि हे धात्रेयिके ! पंचमुद्रानामक महापीठस्थलमें विकटानामकी मातृका हैं ॥ २६ ॥ उनके आगे इस बालकको रखकर यह कहना कि, " गौरी देवीके दियेहुए इस बालकको राजाका प्रिय चाहने वाली रानीने मंत्रियोंके द्वारा पुत्रत्यागके लिए उपदिष्ट होकर आपके सन्मुख निवेदित करदिया है " । पश्चात् वह धायभी रानीकी कहीहुई बातें सुन उस सुन्दर चन्द्र सम बालकको विकटा देवीके आगे रखकर घरपर लौट आई । तदनंतर उस विकटा देवीने योगिनियोंको बुलाकर ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ कहा कि, इस बच्चेको मातृगणके पास अभी ले जाओ, और उन लोगोंकी आज्ञाका पालन, एवं इस बच्चेका रक्षण बडे प्रयत्नसे करो ॥ ३० ॥ सब खेचरी योगिनियां भी विकटा देवीके कथनसे उस लडकेको जहांपर ब्राह्मी इत्यादि मातृकायें विराजमान थीं क्षणमात्रमें आकाश मार्गसे लेगईं ॥ ३१ ॥ योगिनियोंने उन सब मातृकाओंको प्रणाम कर उस सूर्य सम तेजस्वी बालकको उनके आगे रख विकटा देवीकी बातें कह सुनाईं ॥ ३२ ॥ तब तो ब्राह्मी, वैष्णवी, रौद्री, वाराही, नारसिंही, कौमारी, ऐन्द्री, चामुंडा और चंडिका प्रभृति मातृकाओंने ॥ ३३ ॥ विकटा देवीके भेजेहुए उस सुन्दर बच्चेको

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२५३

देखकर उससे एकसाथही यह पूँछा कि, "तुम्हारे माता पिता कौन हैं?" ॥ ३४ ॥ मातृकाओंके पूँछनेपरभी जब वह लडका कुछ नहीं बोला तब मातृगणने उस योगिनी मंडलसे यह कहा कि, ॥ ३५ ॥ उत्तमोत्तम लक्षणोंसे परिपूर्ण यह बालक तो राजा होनेके योग्य है, सो हे योगिनियो ! इसे झटपट वहीं पहुँचा देना चाहिए ॥ ३६ ॥ जहाँपर इच्छितफल देनेवाली पंचमुद्रा महादेवी विराज रही हैं, जिनकी सेवा करनेसे मनुष्योंके लिये मोक्षलक्ष्मीभी दूर नहीं रहजाती ॥ ३७ ॥ यद्यपि शुभ कारिणी काशीपुरीमें मुक्ति तो पद पदपर सर्वत्रही होतीहै, तथापि वह पीठ विशेष रूपसे समस्त सिद्धियोंका करनेवाला है ॥ ३८ ॥ इस षोडशवार्षिक रूपवान् बालककी परमसिद्धि विश्वेश्वरकी परमानुकम्पासे उसी पीठके सेवन करनेसे होनेवाली है॥ ३९ ॥ योगिनियोंने इस भाँति मातृकाओंसे आशीर्वादित उस बालकको मातृगणके वचनानुसार फिर पंचमुद्रानामक पीठपर पहुँचा दिया ॥ ४० ॥ स्वर्ग लोकसे इस लोकको लौटाहुआ वह लडका आनंदवनके उस महापीठमें पहुँचकर बडी कठोर दिव्य तपस्याको करने लगा ॥ ४१ ॥ निश्चलेन्द्रिय, दृढचित्त उस राजकुमारके अत्यंततीव्र तपसे भगवान् उमापति (बडे) प्रसन्न हुए ॥ ४२ ॥ फिरतो शंकर भगवान् उसके सन्मुख ही लिंगरूपसे प्रकट होकर कहने लगे कि, हे राजकुमार ! मैं प्रसन्न हूं, तुम वर मांगो ॥ ४३ ॥ स्कन्द बोले—परम अनुग्रहसे सातों पातालोंके तलको भेदकर उठेहुए अशेष ज्योतियोंसे परिपूर्ण वाङ्मय उस लिंगको अपने आगेही देखकर ॥ ४४ ॥ (वह राजपुत्र) बडे हर्षसे भूमिपर दण्डवत् प्रणाम कर जन्मांतरके अभ्यस्त रुद्रसूक्तमन्त्रोंसे महादेवका स्तुतिगान करने लगा ॥ ४५ ॥ तबतो देवादिदेव वृषभध्वज भगवान् शंकर बडी प्रसन्नताके साथ उसकी तपस्यासे संतुष्ट होकर कहने लगे ॥ ४६ ॥ महादेवने कहा—तुम वरदानकी प्रार्थना करो, तुमने तो अपने इस बालक शरीरसे कठोर तपस्याका अनुष्ठान कर अपनी देहको बडीही क्लेशित करदिया और इसीसे मेरे मनको वशीभूत करालिया है ॥ ४७ ॥ इस प्रकारसे वरदानके विषयमें बारंबार शिवका कथन सुनकर रोमांचित शरीर होकर वह राजपुत्र वरदानकी प्रार्थना करने लगा ॥ ४८ ॥ कुमारने कहा—हे देवादिदेव ! महादेव ! यदि मुझको वर देनाही है तो यही मिले कि, आप संसारके तापोंके नाशक होकर यहांपर सदैव रहाकरें ॥ ४९ ॥ हे शंभो ! आप इस लिंगमें विराजमान रहकर भक्तलोगोंका अभीष्ट मुद्रा आदि करनेके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बिना और मंत्र जपके बिनाही दिया (कीजिए) ॥ ५० ॥ हे विभो ! यहाँपर केवल दर्शन, स्पर्शन और प्रणाम करनेहीसे आप उत्तम सिद्धिको देवें, और जो लोग मनसा वचसा कर्मणा और शरीरसे इस लिंगके भक्त होवें॥५१॥ आप उनपर सदैव अनुग्रह करें (बस) मैं यही वर मांगताहूं इस भाँतिसे उसका वरदान सुनकर लिंगस्वरूप भगवान्ने यह कहा कि ॥ ५२ ॥ हे वीर ! तुम वैष्णवके पुत्र हो, सो जो कुछ तुमने कहा है सो वैसाही होगा, हे मद्भक्त तनूज ! विष्णुभक्त राजा अमित्रजित्से तुम साक्षात् विष्णुके अंशही उत्पन्न हुए हो, अतएव हे वीर ! तुम्हारेही नामसे यह लिंग वीरेश्वर संज्ञक होवेगा ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ और काशीमें यह लिंग भक्तलोगोंके चिंतित अभीष्टोंको देता रहेगा, हे वीर ! आजके दिनसे मैं सर्वदैव इस लिंगमें बना रहूंगा ॥ ५५ ॥ और आश्रितजनोंको परम सिद्धिका दान करूंगा, इसमें कुछ सन्देह नहीं है, परन्तु कलियुगमें कोईभी मेरी महिमाको नहीं समझ सकेगा ॥ ५६ ॥ और जिस किसीको भाग्यवश कुछ समझाई पडजावेगी उसे परम सिद्धि लाभ होगा, यहांपर जप, हवन, दान, स्तुति और पूजन ॥ ५७ ॥ तथा जीर्णोद्धार इत्यादिका करना अक्षय्य फलका कारण होगा, और तुम (तो) समस्त राजाओंसे दुर्लभ बडा भारी राज्य पाकर ॥ ५८ ॥ एवं विपुल भोगोंके भोग लेनेपर अन्तमें सिद्धिको पावोगे । समस्त संसारभरमें यह वाराणसी पुरी बडीही रमणीय है ॥ ५९ ॥ फिर उसमेंभी गंगा और असिनदीका संगम पुण्यप्रदहै, उससेभी हयग्रीव तीर्थ बडाही पुण्यदायक है ॥ ६० ॥ जहांपर भगवान् विष्णु हयग्रीव रूप होकर भक्तोंके मनोरथोंको देते हैं, हयग्रीव तीर्थसेभी विशेष गजतीर्थ है ॥ ॥ ६१ ॥ जहांपर केवल स्नान करनेहीसे गजदानका फल मिलता है, गजतीर्थसेभी अधिक पुण्यद कोकावराह तीर्थ है ॥ ६२ ॥ वहांपर कोकावराहका पूजन करनेसे मनुष्य फिर जन्मभागी नहीं होता, कोकावराहसेभी दिलीपेश्वरके समीपहीमें ॥६३॥ दिलीपतीर्थ बहुत श्रेष्ठ है, जो तुरतही परमपापनाशकहै, तदनंतर सगर तीर्थ है जो सगरेश्वरके पासमें है ॥ ६४ ॥ जहांके स्नानकरनेसे मनुष्य कभी दुःखसागरमें नहीं डूबता सगरतीर्थकी अपेक्षा सप्तसागरतीर्थ औरभी शुभप्रदहै ॥ ६५ ॥ मनुष्यमात्र जहांपर स्नानकरनेसे सातों समुद्रोंमें स्नानकरनेका पुण्य पाताहै, उस सप्तसागरसेभी महोदधितीर्थ विख्यातहै ॥ ६६ ॥ जहांपर एकबारके स्नान करनेसेभी बुद्धिमान्जन अपने अपने महोदधिको भस्म करडालताहै, उससेभी (बडा) पुनीत कपिलेश्वरके निकटमें चौ-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२५५

तीर्थ है ॥ ६७ ॥ जहांके नहानेसे सुवर्ण चौर्यादिक पापोंका क्षय होजाताहै उससेभी हंसतीर्थ जो केदारेश्वरके समीपमें बडा पूजनीयहै ॥ ६८ ॥ जहांपर मैं स्वयं हंसस्वरूप होकर देहधारियोंको ब्रह्मपदपर पहुँचादेताहूं ॥ ६९ ॥ तदनंतर त्रिभुवनकेशवका तीर्थ है, जो अत्यंत पुण्यप्रद है, जहाँ स्नान करनेवाले लोग फिर मर्त्यलोकमें कभी नहीं प्रवेश करते ॥ ७० ॥ उससेभी गोव्याघ्रेश्वरतीर्थ अधिक है (क्योंकि) वहांपर गौ और बाघ दोनोंहीने अपने स्वाभाविक वैरको त्यागकर सिद्धिको प्राप्त कियाथा ॥ ७१ ॥ हे वीर ! मांधातृनामक तीर्थ उससेभी श्रेष्ठ है, राजा मांधाताने वहींपर चक्रवर्त्तीका पद प्राप्त कियाथा ॥ ७२ ॥ फिर मुचुकुन्द तीर्थ तदपेक्षा औरभी पुण्यदायक है, वहांपर स्नान करनेसे मनुष्य कभी शत्रुओंसे पराजित नहीं होता ॥ ७३ ॥ उससेभी बढकर परमकल्याणसाधन पृथुतीर्थ है, वहां-पर पृथ्वीश्वर लिंगके दर्शन करनेसे मनुष्य पृथ्वीपति होताहै ॥ ७४ ॥ तदनंतर अतीव सिद्धिप्रद परशुरामतीर्थ है, वहींपर जमदग्नि नन्दनने क्षत्रियोंकी हत्यासे छुटकारा पायाथा ॥ ७५ ॥ आजतक ज्ञानसे हो अथवा अज्ञानसे हो वहांपर एकबारके स्नान करनेहीसे क्षत्रियवधका पाप छूटजाताहै ॥ ७६ ॥ कृष्णाग्रज बलरामका तीर्थ उससेभी श्रेयस्कर है, बलदेवने वहींपर सूतके वध जनित पापसे मुक्तिलाभ कियाथा ॥ ७७ ॥ वहींपर परमबुद्धिमान् राजा दिवोदासका तीर्थ है मनुष्य वहांपर स्नान करनेसे अन्तकालमें ज्ञानसे हीन नहीं होनेपाता ॥ ७८ ॥ सर्व पातकनाशक भागीरथीतीर्थ उससेभी बडा है, जहांपर भगवती भागीरथी साक्षात् मूर्तिमती बनकर बैठीरहती हैं ॥ ७९ ॥ विधानवेत्ताजन भागीरथीतीर्थमें स्नान श्राद्ध और सत्पात्रोंको दान करके फिर जन्मभागी नहीं होता ॥ ८० ॥ हे वीर ! भागीरथीके तीरहीपर हरपाप (नामक केदार कुण्ड) तीर्थ है, वहांके स्नान करनेसे महापातक पुञ्जका नाश होजाताहै ॥ ८१ ॥ जो कोई वहांपर निष्पापेश्वर लिंगका दर्शन करताहै हे वीर! उस लिंगदर्शनके प्रभावसे वह क्षणमात्रमें निष्पाप होजाताहै ॥ ८२ ॥ दशा-श्वमेधतीर्थ तो उससेभी बडा चढा है, वहांपर स्नान करनेसे दश अश्वमेध यज्ञोंका फल मिलताहै ॥ ८३ ॥ हे वीर ! बन्दीतीर्थ उससेभी अधिक शुभप्रद कहाजाताहै क्योंकि वहां स्नान करनेवाला मनुष्य संसारबन्धनसेभी छूटजाताहै ॥८४॥ पूर्वकालमें देवता-लोग हिरण्याक्ष दैत्यके द्वारा बहुत बार बेडियां डालकर बन्धुए बनाये गयेथे, तब उन सबोंने जगदम्बाकी स्तुति कीथी ॥ ८५ ॥ तदनंतर सिकडीके बंधनसे छूटकर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जबसे उन लोगोंने जगज्जननीकी स्तुति की तबसे आजतक लोग उनको बन्दीदेवी कहते जाते हैं ॥ ८६ ॥ वहींपर महानिगडखंडन बन्दीतीर्थ है, वहांके नहानेसे सब प्रकारके कर्मपाशसे छुट्टी मिलजातीहै ॥ ८७ ॥ हे राजन्! काशीपुरीमें बन्दी-तीर्थ बहुतही श्रेष्ठ है, क्योंकि वहां स्नान करनेसे मनुष्य देवीके अनुग्रहसे मुक्तिको प्राप्त करताहै ॥ ८८ ॥ जहांपर समस्त यज्ञोंके फलदाता प्रयागमाधव विराजमान हैं, वह प्रयागनामसे विख्याततीर्थ आरभी श्रेष्ठतर है ॥ ८९ ॥ तदनन्तर परम शुभदायक क्षोणीवराहतीर्थ है- मनुष्य वहांपर स्नान करनेसे कभी तिर्यग्योनिमें नहीं पडता ॥ ॥ ९० ॥ हे वीर ! उसके आगे परम श्रेष्ठतर कालेश्वर तीर्थ है, वहांके नहानेवाले उत्तम नरको कलि और काल कभी नहीं बाधा करसकते ॥ ९१ ॥ वहींपर अशोक तीर्थ औरभी शुभप्रद है, वहां स्नान करनेसे मनुष्य कभी शोकसागरमें नहीं पड़ता ॥ ९२ ॥ हे नृपनन्दन ! शुक्रतीर्थ तो एतदपेक्षा औरभी बडाही निर्मल है वहांके नहानेसे उत्तमजन फिर कभी शुक्र (वीर्य) के द्वारा जन्म नहीं लेता ॥ ९३ ॥ हे राजन् ! उत्तम भवानीतीर्थ उससेभी अधिक पुण्यप्रद है, वहांपरभी स्नानकर भवानी और शिवके दर्शन करनेसे फिर जन्म नहीं लेना पडता ॥ ९४ ॥ प्रभासतीर्थ लोगोंमें उससेभी विशेष शुभप्रद विख्यात है, सोमेश्वरके सन्मुख उस तीर्थमें स्नान कर-लेनेसे गर्भभागी नहीं होना पडता ॥ ९५ ॥ तदनन्तर संसाररूप विषका नाशक गरुडतीर्थ है, वहांपर नहाकर गरुडेश्वरकी पूजा करनेसे फिर कुछ नहीं शोच करना पडता ॥ ९६ ॥ हे वीर ! ब्रह्मेश्वरके आगे उससेभी पवित्र ब्रह्मतीर्थ है, वहांके नहानेसे मनुष्य ब्रह्मविद्याका अधिकारी होजाताहै ॥ ९७ ॥ उससेभी वृद्धार्कतीर्थ एवं तदपेक्षा विधितीर्थ श्रेष्ठ है, वहांके स्नान करनेसे मनुष्य निर्मल सूर्यलोकमें चलाजाता है ॥ ९८ ॥ महाभयनिवारक नृसिंहतीर्थ उससेभी उत्तम है, क्योंकि वहां स्नान करनेसे कालकाभी कुछ भय नहीं रहजाता ॥ ९९ ॥ मनुष्योंके लिए उससेभी अधिक पुण्यप्रद चित्ररथेश्वरतीर्थ है, जहांपर स्नान और दान करनेसे चित्रगुप्तको नहीं देखना पडता ॥ १०० ॥ धर्मेश्वरके सन्मुख जो धर्मतीर्थ है वह तो औरभी पवित्र है वहांपर श्राद्ध इत्यादि करनेसे पितरोंके ऋणसे उद्धार पायाजाताहै ॥ १ ॥ उससेभी विशाल फलोंका देनेवाला, विमल, विशाल तीर्थ है, वहांपर स्नान और विशालाक्षीके दर्शन करनेसे फिर कभी गर्भमें वास नहीं करना पडता ॥ २ ॥ जरासन्धेश्वरके समीपहीमें जरासन्धेशतीर्थ है, वहांके स्नान करनेसे संसारज्वरकी पीडाओंसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२५७

मोहित नहीं होनेपाता ॥ ३ ॥ ललितातीर्थ उससेभी बडाभारी सौभाग्य वर्द्धन है वहांपर स्नान तथा ललिताके दर्शन करनेसे कोईभी दरिद्र और दुःखभागी नहीं होता ॥ ४ ॥ समस्त पापोंका विशोधक गौतमतीर्थ उससेभी श्रेष्ठ है, वहांपर स्नान करके पिंड-दान करनेसे कदापि कहीं भी पश्चात्ताप नहीं करना पडताहै ॥ ५ ॥ उसके आगे गंगा केशव तीर्थ, फिर अगस्त्यतीर्थ, पश्चात् योगिनी तीर्थ तदनंतर त्रिसन्ध्यनामक तीर्थ है ॥ ६ ॥ उसके उपरान्त नर्मदा तीर्थ, एवं अरुंधती तीर्थ, तब वसिष्ठ तीर्थ, फिर सबसे उत्तम मार्कण्डेय तीर्थ है ॥ ७ ॥ इन सब तीर्थोंको उत्तरोत्तर अधिक पुण्य-प्रद समझना चाहिए, और खुरकर्तरि तीर्थ तदपेक्षा और भी उत्तम है ॥ ८ ॥ वहांपर श्राद्ध इत्यादि करनेसे मनुष्य पापोंसे छूटजाताहै, तदनंतर राजर्षि भगी-रथका परम पुण्यदायक तीर्थ है ॥ ९ ॥ वहांपर अल्पमात्रभी जो कुछ दिया जावे वह कल्पान्तमेंभी क्षयको नहीं प्राप्त होता, हे वीर ! इन सब तीर्थोंसे तथा तीन कोटि लिंगोंसेभी ॥ ११० ॥ यह वीरेश्वर लिंग बहुतही श्रेष्ठ होगा, वीरतीर्थमें स्नानकर वीरेश्वरका पूजन करनेसे मनुष्य ॥ ११ ॥ इन समस्त तीर्थोंमें स्नान करनेका फलभागी होताहै, इसमें कुछ सन्देह नहीं है, जो कोई रात्रिसमयमें वीरेश्वरकी पूजा करेगा, उसे तीन कोटि लिंगोंके पूजन करनेका फल यहींपर मिलजावेगा ॥ ॥ १२ ॥ जो कोई भुक्ति और मुक्ति देनेवाली लक्ष्मीकी कामना करे उसे बडे प्रयत्नके साथ वीरेश्वर लिंगको सेवना चाहिए ॥ १३ ॥ जो चतुर्दशी तिथिको जागरण करके वीरेश्वरका पूजन करता है, वह फिर कभी पांचभौतिक शरीरको नहीं धारण करता ॥ १४० ॥ जो लोग सिद्धिके साधनेकी इच्छा रखतेहों उनको तो सदैव इस लिंगकी सेवा करनी चाहिए, क्योंकि इसके सेवनसे ऐहिक और पारलौकिक सभी कामनायें पूर्ण होजातीहैं ॥ १५ ॥ जो मनुष्य इस वीरेश्वर लिंगको पंचामृतसे नहवायेगा उसे पल पलमें करोडों घडोंका फल प्राप्त होवेगा ॥ १६ ॥ दूसरे लिंगोंपर करोड पुष्प चढानेसे जो फल होताहै इस वीरेश्वर लिंगपर वही पुष्प केवल एकही पुष्पसे प्राप्त होताहै इसमें कुछ सन्देह नहीं है ॥ १७ वीरेश्वरके समीपमें एकभी आहुतिके देनेसे कोटि होमका पूर्ण फल निस्सन्देह मिलजाता है ॥ १८ ॥ एक एक कण नैवेद्यभी यदि वीरेश्वरपर चढादियाजावे तो अत्यंत थोडा होनेपरभी कोटि कोटि फल अक्षय होजाता है ॥ १९ ॥ यदि कोई वीरे-श्वरके समीपमें एकही महारुद्रमंत्रका जप करे अथवा जपवावे तो उसे ध्रुवकरके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कोटिरुद्र जंपका फल मिलता है ॥ १२० ॥ व्रतानुष्ठायी जो लोग वीरेश्वरपर तोत्सर्ग इत्यादि करतेहैं, वह सब निस्सन्देह कोटिगुण होजाताहै ॥ २१ ॥ जिस किसीने वीरेश्वरके आगे आठभी नमस्कार करलिये उसे आठकरोड दण्डवत्-णाम करनेका फल होताहै इसमें तनिकभी सन्देह नहीं है ॥ २२ ॥ हे वीर ! मेरे वरदानके प्रभावसे यह वीरेश्वरलिंग समस्त सम्पत्तियोंका (आकर) स्थान होगा इस विषयमें सन्देह नहीं है ॥ २३ ॥ इस लिंगके सेवनसे जीतेजी लोगोंको तारकज्ञान मेरी आज्ञासे उत्पन्न होजावेगा, अतएव शुभार्थी लोगोंको उसकी सेवा करनी चाहिए ॥ २४ ॥ (स्कन्दने) कहा अमित्रजित्का पुत्र वह वीर नामक बालक पूर्णमनोरथ होकर इन बातोंके सुननेपर देवदेवको प्रणाम करके फिर कहनेलगा ॥ २५ ॥ हे देवेश ! मेरे आगे जिन जिन तीर्थोंका वर्णन कियाहै, इनसे भिन्न आदिकेशवसे लेकर भगीरथतीर्थपर्य्यन्त जो जो प्रधान तीर्थ हैं, जिनका नाम सुननेसेभी मनुष्य निष्पाप होजाताहै, हे प्रभो ! कृपाकरके उन सबोंकोभी वर्णन कीजिए ॥ २६ ॥ २७ ॥ इस प्रकारसे उस राजकुमारका कथन सुनकर भगवान् महादेव फिर गंगाके (तटस्थ) तीर्थोंका कीर्तन करनेलगे ॥ १२८ ॥

दोहा—करी बीरने बीरता, बीरेशहिं प्रकटाय ।
वही धन्य जग जीव जेहि, पर उपकार सोहाय ॥ १ ॥

इति श्रीस्कंदमहापुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्धे भाषायां व्यशीतितमोऽध्यायः ॥ ८३ ॥

चौरासिवां अध्याय ।

बीरेश्वरके प्रसंगसे तीर्थों (घाटों) का वर्णन ।

स्कन्दने कहा—हे विप्रवर ! गंगा और वरुणाके पवित्र संगमस्थलसे महादेवने जिन तीर्थोंको बनाया है, उनको श्रवण करो ॥ १ ॥ उस संगममें स्नानकर संगमेश्वरकी पूजाकरनेसे मनुष्य कभी माताके गर्भका संगी नहीं होनेपाता ॥ २ ॥ वहींपर पादोदकतीर्थ है, जहांपर भगवान् विष्णुने मंदराचलसे आकर पहिले पहिल अपने पैरोंको धोयाथा ॥ ३ ॥ उस विष्णुपादोदकतीर्थमें जो कोई व्यतीपात योगपर स्नान तर्पण इत्यादि जलकृत्योंको करता है उसे फिर संसारमें दुर्गतिमें नहीं पडना होता ॥ ४ ॥ काशीमें जो उत्तम जन पादोदकतीर्थमें स्नान पर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२५९

आदिकेशवका पूजन करलेताहै उसे संसारवासका दुःख नहीं भोगना पडता ॥ ५ ॥ काशीमें ब्राह्मणलोग उस भूमिको श्वेतद्वीप कहते हैं, अतएव जो कोई वहांपर पुण्योपार्जन करता है वह श्वेतद्वीपका स्वामी होताहै ॥ ६ ॥ उस पादोदकतीर्थसे आगे क्षीराब्धिनामक तीर्थ है, वहांपर पुण्यकर्म करनेवाला क्षीरसमुद्रके तीरपर वास करता है ॥ ७ ॥ क्षीरोदतीर्थसे दक्षिणभागमें उत्तम शंखतीर्थ है, वहांके नहानेसे मनुष्य शंख इत्यादि निधियोंका अधिपति होताहै ॥ ८ ॥ शंखतीर्थके पीछे सर्वोत्तम चक्रतीर्थहै, उस तीर्थके जलमें नहालेनेसे मनुष्य कभी संसारचक्रमें नहीं गिरनेपाता ॥ ९ ॥ उसके आगे (बढकर) संसाररूप गद (रोग) का नाशक गदातीर्थ है, वहांपर श्राद्ध इत्यादिके करनेसे गदाधर भगवान्का दर्शन मिलजाताहै ॥ १० ॥ उसके आगे पितरोंकी तृप्तिका करनेवाला, और सर्व सम्पत्तिजनक (स्वयं पद्मादेवीका बनाया हुआ) पद्मतीर्थ है, वहांपर स्नान इत्यादिके करनेसे पापोंका क्षय होजाताहै ॥ ११ ॥ उसके अनन्तर महापुण्यप्रद महालक्ष्मीतीर्थ है, वहांपर महालक्ष्मीकी आराधना करनेसे निर्वाणलक्ष्मी प्राप्त होतीहै ॥ १२ ॥ तदनन्तर गारुत्मतीर्थ है, जो संसाररूप गरलका नाशक है, वहांपर उदककियाओंका करनेवाला वैकुंठमें वास पाताहै ॥ १३ ॥ फिर ब्रह्मविद्याका एकमात्र कारण नारदतीर्थ है, वहांपर स्नान करके नारदकेशवके दर्शन करनेसे मुक्तिलाभ होताहै ॥ १४ ॥ उसके दक्षिणओर बडाभक्तिरूप फलका दाता प्रह्लादतीर्थ है वहांके केवल स्नानहीसे विष्णुका बडा प्यारा होजाताहै ॥ १५ ॥ तब फिर महापातकनाशक अम्बरीषतीर्थ है, वहांपर शुभकर्म करनेवाले लोग कभी गर्भभागी नहीं होते ॥ १६ ॥ उसके आगे आदित्यकेशवनामक उत्तम तीर्थ है, वहांके नहानेसे मनुष्य स्वर्गराज्यमें अभिषिक्त होजाताहै, ॥ १७ ॥ उसीके निकटमें त्रैलोक्यपावन त्रिविक्रमतीर्थ है, वहांपर भक्तिभावसे केवल स्नान करलेनेहीसे (मनुष्य) योगसिद्धिको प्राप्त करलेताहै ॥ १८ ॥ उससे आगे बढतेही परम ज्ञान समर्पक भार्गवतीर्थ है, वहांपर स्नान विधानसे भार्गवलोकका भागी होताहै ॥ १९ ॥ तदनन्तर जो वामनतीर्थ है वहांपर स्नान करनेसे मनुष्य पितरोंके ऋणसे छूटता और विष्णुके समीप पहुँचताहै ॥ २० ॥ फिर नरनारायणतीर्थ है जो बडाही शुभप्रद है, वहांके नहानेसे लोगोंको गर्भवास नहीं करना पडता ॥ २१ ॥ उससे दक्षिणओर शुभमय यज्ञवराहतीर्थ है, जहांके नहानेवाले पुरुषोंको राजसूययज्ञका फल ध्रुव करके प्राप्त होताहै ॥ २२ ॥ वहींपर बडा पवित्र विदारनारसिंहनामक तीर्थ है, जहांके केवल एकही बार नहालेनेसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सैकडों जन्मके पातक नष्ट होजातेहैं ॥ २३ ॥ तदनंतर विष्णुलोकका दाता गोपीगोविन्दतीर्थ है, जिसमें स्नान करके विद्वान् जन गर्भवेदनाको फिर नहीं जानसकता ॥ २४ ॥ गोपीगोविन्दतीर्थके दक्षिणभागमें लक्ष्मीनृसिंहतीर्थ है, जहांके नरोत्तमको निर्वाणलक्ष्मीभी बरलेतीहै ॥ २५ ॥ उससे दक्षिणदिशामें एक बडाही उत्तम शेषतीर्थ है जिसके स्नानहीसे घोर पापसमूहका शेष नहीं बँचने पाता ॥ २६ ॥ उसकेभी दक्षिण उत्तम शंखमाधवतीर्थहै, उस तीर्थके सेवन करनेसे फिर लोगोंको संसारका बडा भय कहां रहजाताहै ॥ २७ ॥ उससेभी परमपवित्र, एवं तत्क्षणही सिद्धिदायक, अतुलनीय नीलग्रीवनामक तीर्थ है वहांका नहानेवाला सर्वदैव पवित्र रहताहै ॥ २८ ॥ वहींपर सर्व पापनाशक उद्दालक तीर्थ है, जो केवल स्नानही करनेसे लोगोंको बडीभारी समृद्धि देदेताहै ॥ २९ ॥ तदनंतर सांख्येश्वरके समीपहीमें सांख्यतीर्थ है, उस तीर्थके सेवन करनेसे लोगोंका सांख्ययोग सिद्ध होजाताहै ॥ ३० ॥ उसके निकटहीमें स्वर्लीनेश्वरके पास स्वर्लीनतीर्थ है जो स्वर्गलोकसे आकर वहांपर स्वयं भगवान् उमापतिके लीन होरहनेसे स्वर्लीननामक प्रसिद्ध है ॥ ३१ ॥ वहांपर श्रद्धापूर्वक स्नान दान ब्राह्मणभोजन जप होम और पूजन इत्यादि करनेसे सब कुछ अक्षय होजाताहै॥३२॥ उसके समीपहीमें परम पावन महिषासुरतीर्थ है, जहांपर उस दैत्यराजने तपस्या करके समस्त देवतोंको जीताथा ॥ ३३ ॥ उस तीर्थका सेवक आजतक न तो कभी शत्रुओंसे हारता, न बडेसे बडे पातकोंसे दबताहै, वरं इच्छितफलको प्राप्त करताहै ॥३४॥ उसके समीपहीमें (बाणासुरको) सहस्रभुजाओंका देनेवाला बाणतीर्थ है, वहांके नहानेसे मनुष्य शिवकी दृढभक्तिको प्राप्त होजाता है ॥ ३५ ॥ उसके आगे चलकर उत्तम गोप्रतार तीर्थ है, जहांपर स्नान करनेसे अपुत्र पुरुषभी सुखपूर्वक वैतरणीके पार होजाताहै ॥ ३६ ॥ उसके दक्षिणभागमें हिरण्यगर्भनामक तीर्थ है, वहांके नहानेसे मनुष्य कभी सुवर्णसे हीन नहीं होता ॥ ३७ ॥ तदनंतर समस्त तीर्थोंसे परमोत्तम प्रणवतीर्थ है, वहांपर केवल स्नान करनेहीसे मनुष्य जीवन्मुक्त होजाताहै ॥ ३८ ॥ फिर तो पिशंगिलातीर्थ है, जो दर्शन करनेसेभी पापोंको हरलेता है, (हे अगस्त्यमुने!) वह मेरे निज रहनेका परम सिद्धिप्रद स्थान है ॥ ३९ ॥ पिशंगिलातीर्थमें स्नान और कुछ थोडा बहुत दान करनेसे यदि वह अन्यत्र कहींपर मृत्युको प्राप्त हो तो पापोंसे कोई शोच नहीं करना पडता ॥ ४० ॥ जो कोई पिशंगिलातीर्थमें नहाकर मेरी पूजा करेगा वह सूर्यके समान तेजस्वी होकर मेरा मित्र बनजावेगा ॥ ४१ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२६१

उसके पासहीमें पिलपिलातीर्थ है जो त्रिविष्टपलिंगकी दृष्टिपडनेसे वहांके समस्त भूमाको निर्मलकरताहुआ मनके मलकोभी शुद्ध करदेता है ॥ ४२ ॥ वहांपर श्राद्धादिकके करने और दीन और अनाथ लोगोंके संतुष्ट करनेसे मनुष्य बडी स्थिर बहुत भारी सम्पत्तिको पाताहै ॥ ४३ ॥ तदनंतर नागेश्वरतीर्थ है, जो बडेसे पापोंका शोषक है, उस तीर्थमें मज्जनकरनेहीसे समस्त पापोंका क्षय होजाताहै ॥ ४४ ॥ उसके दक्षिणभागमें परमपवित्र और सर्वोत्तम कर्णादित्यनामक तीर्थ है, वहांके नहानेसे मनुष्य सूर्यकी नाईं तेजस्वी होजाताहै ॥ ४५ ॥ फिर महापातकोंका क्षय करदेनेवाला भैरवतीर्थ है, जो कि चारो पुरुषार्थोंका दाता और सब विघ्नोंका निवारक है ॥ ४६ ॥ जो मनुष्य वहांपर भौमवारकी अष्टमीको स्नानके उपरान्त पितरोंका तर्पण और कालभैरवका दर्शन करै वह काल और कलि दोनोंहीको जीत लेता है ॥ ४७ ॥ भैरवतीर्थके आगे स्वर्वनृसिंह तीर्थ है, वहांके नहानेवाले पुरुषको पापका भय कहां रहजाताहै ? ॥ ४८ ॥ उसके दक्षिणभागमें अति निर्मल मार्कण्डेय तीर्थ है वहांके नहानेसे अकालमृत्युका भय कहीं नहीं रहजाता ॥ ४९ ॥ तत्पश्चात् पंचनदतीर्थ है, जिसका समस्त तीर्थ सेवन करते हैं, वहांके स्नान करनेसे मनुष्य फिर कभी संसारी नहीं होता ॥ ५० ॥ ब्रह्मांडोदरवर्ती जितने तीर्थ हैं वे सब कार्तिकमासमें चारोंओरसे अपने पापपुंजको छुडानेके लिये वहां आते हैं ॥ ५१ ॥ जहांपर समस्त तीर्थ श्रेष्ठ अपनी निर्मलताके लिये प्रत्येक दशमीसे तीन दिनतक निवास करते हैं ॥ ५२ ॥ यद्यपि काशीके मध्यमें तो पद पदपर बहुतेरे तीर्थ पडे हैं परन्तु पंचनदतीर्थकी महिमा कहींभी किसी तीर्थको नहीं प्राप्त होसकती ॥ ५३ ॥ वहांपर जिन लोगोंने कार्तिकमासका एक दिन भी जप, होम, पूजन, और दानसे सफल किया, वे सर्वथा कृतकृत्य होजाते हैं ॥ ५४ ॥ यदि एक ओर संसारभरके समस्त तीर्थ और दूसरी ओर यह पंचनद तीर्थ रखकर तौलाजावे तो भी वे सब इसकी कलामात्रकी तुल्यता नहीं करसकते ॥ ५५ ॥ बुद्धिमान् जन यदि पंचनदतीर्थमें स्नान करके भगवान् बिन्दुमाधवका दर्शन करलेवे तो फिर कभी माताकी कोखमें नहीं जानेपाता ॥ ५६ ॥ तदनंतर जडजीवोंकी जडताका हरणकरनेवाला ज्ञानह्रद तीर्थ है, वहांके स्नान करनेसे कभी ज्ञानभ्रंश नहीं होता ॥ ५७ ॥ उस ज्ञानह्रदमें नहाकर ज्ञानेश्वरका दर्शन करनेसे मनुष्यको वह ज्ञान प्राप्त होजाताहै जिससे वह फिर कभी बाधाको नहीं पाता ॥ ५८ ॥ उसके आगे समस्त अमंगलोंका नाशक मंगल-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तीर्थ है, वहांके स्नान करनेसे मनुष्य मंगलका भाजन होजाता है ॥ ५९ ॥ उस मंगलतीर्थमें नहानेवालेके अमंगलोंका तो नाश होजाता है, और बहुतेरे मंगल होने लगते हैं, एवं नमस्कार करनेवालेका भी मंगल ही होता है ॥ ६० ॥ उसके आगे बढते ही मलनाशक गभस्तिमालीका तीर्थ है, वहांपर नहाकर गभस्तीश्वरका दर्शन करनेसे मनुष्य विमल होजाता है ॥ ६१ ॥ वहींपर मखेश्वरके पासमें मखतीर्थ है, वहांके नहानेसे उत्तम जन यज्ञोंके करनेका फलभागी होजाता है ॥ ६२ ॥ उसके समीपहीमें परमज्ञानका कारण एक बिन्दुतीर्थ है, वहांपर श्राद्ध इत्यादिके करनेसे बडा भारी पुण्य होताहै ॥ ६३ ॥ उससे दक्षिण दिशामें पिप्पलाद मुनिका तीर्थ विराजमान है, वहांपर शनैश्चरके दिन स्नानकर पिप्पलेश्वरका दर्शन करके ॥ ६४ ॥ "अश्वत्थ" इत्यादि मंत्रके द्वारा पीपल वृक्षके सेवन करनेसे शनिग्रहकी पीडा नहीं होती और दुःस्वप्नोंका भी नाश होजाता है ॥ ६५ ॥ तदनंतर परम पावन ताम्रवराहनामक तीर्थ है, जहांके स्नान और दान करनेसे पापसागरमें नहीं डूबना पडता ॥ ६६ ॥ उसके आगे कलिकल्मषनाशिनी कालगंगा है, बुद्धिमान् नर उसमें नहातेही उसी क्षणमें निष्पाप होजाता है ॥ ६७ ॥ इन्द्रद्युम्नेश्वरके सन्मुख ही इन्द्रद्युम्ननामक महातीर्थ है वहांपर जलक्रियाके करनेसे इन्द्रलोक प्राप्त होता है ॥ ६८ ॥ हे वीर ! तदनंतर रामेश्वरके आगे रामतीर्थ है, उसमें केवल स्नान करनेहीसे विष्णुलोककी प्राप्ति होती है ॥ ६९ ॥ फिर समस्त अघसमूहोंका नाशक इक्ष्वाकुतीर्थ है, वहांके नहानेसे मनुष्य पवित्रात्मा होजाताहै ॥ ७० ॥ उसी प्रांतमें मरुत्तेश्वरके पास मरुत्ततीर्थ है वहांपरभी नहाकर उस लिंगकी पूजा करनेसे बडा ऐश्वर्य मिलता है ॥ ७१ ॥ तब फिर, महापातकनाशन मैत्रावरुण तीर्थ है, वहांपर पिंडदान करनेसे पितरोंका बडा प्यारा होताहै ॥ ७२ ॥ अनन्तर अग्नीश्वरके आगे बडा विमल अग्नितीर्थ है, उस तीर्थमें स्नान करनेसे अग्निलोकमें चलाजाता है ॥ ७३ ॥ वहींपर अंगारेश्वरके समीपमें अंगारतीर्थ है, वहांपर अंगारचतुर्थीके दिन स्नान करनेसे निष्पापता मिलजाती है ॥ ७४ ॥ फिर आगे बढकर कलशेश्वरके पासमें वैकल्यतीर्थ है, वहां नहाकर उस लिंगके पूजन करनेसे कलिकालका कुछ डर नहीं रहजाता ॥ ७५ ॥ वहींपर चन्द्रेश्वरके निकटमें चन्द्रतीर्थ है, जहांपर स्नानकर चन्द्रेश्वरके पूजन करनेसे चन्द्रलोक प्राप्त होता है ॥ ७६ ॥ उसके आगे वीरेश्वरके समीपमें वीरतीर्थ है, जिसको मैं पहिलेही तुमसे समस्त तीर्थोंसे परम उत्तम कहचुकाहूं ॥ ७७ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२६३

तदनन्तर सर्व विघ्नविघातक विघ्नेश्वरतीर्थ है, वहांके स्नान करनेसे कभी कोई विघ्नोंसे पराभूत नहीं होता ॥ ७८ ॥ उसके आगे राजर्षि हरिश्चन्द्रका उत्तम तीर्थ है, जहांके स्नानकरनेसे मनुष्य कहींभी सत्यसे च्युत नहीं होनेपाता ॥ ७९ ॥ हे ! वीर हरिश्चन्द्रके तीर्थमें जो कुछ सत्कर्म कियाजाता है वह इस लोक और परलोकमेंभी अक्षय फल देताहै ॥ ८० ॥ तदनन्तर पर्वतेश्वरके पासमें पर्वत तीर्थ है, वहां चाहे पर्वपर नहाय चाहे विना पर्वके स्नान करे उसे समस्त पर्वोंमें स्नान करनेका फल मिलजाता है ॥ ८१ ॥ वहींपर सब प्रकारके विषोंका हरनेवाला कम्बलाश्वतर तीर्थ है, वहांके नहानेसे मनुष्य गीतविद्यामें विशारद होजाताहै ॥ ८२ ॥ तदनंतर समस्त विद्याओंका संपादक सारस्वत तीर्थ है, वहांपर देवता और ऋषियोंके साथ पितरलोग वास करते हैं ॥ ८३ ॥ वहींपर समस्त शक्तियोंसे समन्वित उमातीर्थ है उसमें स्नानमात्र करलेनेसे उमालोक अवश्यमेव प्राप्त होजाता है ॥ ८४ ॥ हे वीर ! उसके पासहीमें त्रैलोक्यभरमें सर्वत्र विख्यात, और त्रैलोक्य मात्रके उद्धार करदेनेमें समर्थ, परमश्रेष्ठ, मणिकर्णिकानामक तीर्थ है ॥ ८५ ॥ पहिले तो उसे भगवान् विष्णुने चक्रपुष्करिणीतीर्थ बनाया उसके केवल नामही सुनलेनेसे समग्र पाप छूटजाते हैं ॥ ८६ ॥ स्वर्गवासी देवतागण त्रिकाल मणिकर्णिकाको जपते रहते हैं, इसीसे उसका नाम लेनेसे मनुष्यमात्रका कल्याण होता है ॥ ८७ ॥ हे वीर ! जिनने मणिकर्णिकाको सुना, स्मरण किया, अथवा देखलिया, इस मर्त्यलोकमें वेही लोग सुकृती और कृतार्थ हैं ॥ ८८ ॥ हे राजन् ! इस त्रैलोक्यभरमें जो लोग मणिकर्णिकाको जपते हैं, उन पुण्यकर्मा लोगोंको मैंभी त्रिकालमें जपता रहताहूं ॥ ८९ ॥ जो कोई "मणिकर्णिका" इस पंचाक्षरी महाविद्याको मुखसे उच्चारण करता है, उसे शतसहस्र दक्षिणाओंसे परिपूर्ण असंख्य महायज्ञोंके करनेका फल प्राप्त होजाताहै ॥ ॥ ९० ॥ हे वीर ! मणिकर्णिकापर पहुँचकर जिस पुण्यकर्माने मेरा पूजन करदिया, वह बडेसे बडे दानोंको करचुका, यह निश्चितहै ॥ ९१ ॥ [illegible]र्थमें मधु और पायस आदिसे पितरोंके श्राद्ध करनेका जो फल है, मणिकर्णिकाके जलस[illegible]ग करनेमेंभी वही फल प्राप्त होताहै ॥ ९२ ॥ जिसने शुद्धबुद्धि होकर मणिकर्णिकाका जलपान किया, उसे पुनरावृत्तिके कारण सोमपान करनेका कौन प्रयोजनहै ? ॥ ९३ ॥ बडे बडे पर्वोंपर महातीर्थोंमें अनेकबार स्नान करनेसे जो फल मिलताहै, अथवा बहुतेरे यज्ञोंके अवभृथ स्नान करनेका जो पुण्यहै, एकबार मणिकर्णिकाके स्नान करनेसेभी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

वही फल प्राप्त होताहै ॥ ९४ ॥ जिन लोगोंने सुवर्ण पुष्प और रत्नोंके द्वारा मणिकर्णिकाका पूजन किया उनका क्या कहनाहै ? वे लोग तो यज्ञोंके द्वारा ब्रह्मा और विष्णु इत्यादि सब देवतोंकी पूजाका फल प्राप्तही करलेतेहैं ॥ ९५ ॥ जिस किसीने प्रतिदिन मणिकर्णिकाकी पूजाकी, वह तो शैवी दीक्षा पाकर पार्वतीके सहित मेरी अर्चना करचुका ॥ ९६ ॥ जो कोई श्रद्धापूर्वक श्रीमती मणिकर्णिकाको सेवताहै, उसे बहुत दिनोंतक सूखे पत्तोंके भोजनकी तपस्याका फल प्राप्त होताहै ॥ ९७ ॥ जो कोई बडे बडे दानोंको कर, बहुतेरे यज्ञोंको समाप्त कर, एवं बडे घोर जंगलोंमें बहुत दिनतक कठोर तपस्याके फलसे स्वर्गका ऐश्वर्य भोगकर जब फिर पृथिवीपर आतेहैं तब ॥ ९८ ॥ इस विपुल भूपृष्ठपर पंचक्रोशीके भीतर परममनोहारिणी मणिकर्णिकाका आश्रय कर पातेहैं, और वेही लोग मरनेपर पुनरावृत्तिके दुःखसे छूट जाते हैं ॥ ९९ ॥ मेरी समझमें दान, व्रत, यज्ञ और तपस्याओंका एकमात्र यही फलहै जो (अन्तमें) मणिकर्णिका प्राप्त होजावे ॥ १०० ॥ यह श्रीमती मणिकर्णिका साक्षात् मोक्षलक्ष्मी है, इसकी समग्र महिमाको प्रायः मैं भी नहीं जान सकाहूं ॥ १ ॥ मणिकर्णिकाके दक्षिण परमप्रधान पाशुपततीर्थ, रुद्रवासतीर्थ, और विश्वतीर्थ विराजमान है, तदनन्तर ॥ २ ॥ रमणीय और उत्तम मुक्तितीर्थ, अविमुक्ततीर्थ, तारकतीर्थ, स्कन्दतीर्थ, एवं ढुंढितीर्थ अवस्थित है ॥ ३ ॥ तदनन्तर भवानीतीर्थ, ईशानतीर्थ, ज्ञानतीर्थ, नन्दितीर्थ, विष्णुतीर्थ और पितामहतीर्थ सुशोभितहै ॥ ४ ॥ उसके पश्चात् नाभितीर्थ ब्रह्मनालहै उसके आगे वही भगीरथतीर्थ जिसका वर्णन मैं तुमसे पहिलेही कहचुकाहूं ॥ ५ ॥ काशीके भीतर उत्तरवाहिनी गंगामें बहुतेरे पवित्रतीर्थ पडेहैं, पर मैंने तो थोडेहीसे तुमसे कहदिये हैं ॥ ६ ॥ हे नृपनन्दन ! इन सबोंमें पंचतीर्थही सबोंसे श्रेष्ठहै, जिसमें स्नान करनेसे मनुष्य फिर कभी गर्भवासके दुःखको नहीं स्मरण करताहै ॥ ७ ॥ पहिले तो सब तीर्थोंमें प्रधान असिसंगमहै, तब फिर समस्ततीर्थोंसे सेवित दशाश्वमेध अवस्थितहै ॥ ८ ॥ तदनन्तर आदिकेशवके समीपमें पादोदक तीर्थ है, फिर समस्त पापौघनाशक, पवित्र पंचनद (पंचगंगा) तीर्थहै ॥ ९ ॥ हे सत्तम ! इन चारों तीर्थोंका पंच (प्रधान) मणिकर्णिकातीर्थ है जो मन और इंद्रियोंकोभी शुद्ध करदेताहै ॥ ११० ॥ पर्वोंपर नित्यही मैंभी ब्रह्मा, विष्णु, इंद्र इत्यादि देवता और ऋषियोंके साथ यहींपर स्नान करताहूं ॥ ११ ॥ इसी कारणसे स्वर्गवासी और पातालवासी लोग सर्वदैव वेदसम्मत इस गाथा (कहावत) को

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२६५

कहा करतेहैं कि ॥ १२ ॥ "यह बात सर्वथा सत्यहै कि, ब्रह्मांड गोलकमें मणिकर्णिकाके समान कोईभी तीर्थ नहीं है, यही सत्य सत्य है" ॥ १३ ॥ काशीके पंचतीर्थोंमें स्नान करनेसे मनुष्यको पांचभौतिक शरीर नहीं धारण करना पडता और जो कदाचित् शरीरधारी हुआभी तो साक्षात् पंचवदन शिवही होजाताहै ॥ १४ ॥ इस प्रकारसे (तीर्थोंका माहात्म्य कहं और) राजा वीरको बहुतसे वरदानोंको देकर भगवान् हर अन्तर्धान होगये, और उस राजा वीरनेभी वीरेश्वरका पूजन करके अपने इष्ट मनोरथको प्राप्त करालिया ॥ १५ ॥ स्कन्दने कहा—हे अगस्त्य ! जो कोई इस पवित्र तीर्थाध्यायको सुनेगा उसके सैकडों जन्मके बटोरेहुए अघोंका क्षय होजावेगा ॥ १६ ॥ हे मुने ! मैंने तीर्थाख्यानके प्रसंगसे वीरेश्वरका माहात्म्य तुमसे कहा, अब कामेश्वरकी कथाको कहताहूं ॥ ११७ ॥

दोहा—तीर्थाध्याय पुनीत यह, पढ़ै सुनै जो कोय ।
काशीके सब घाटसे, परिज्ञात सो होय ॥

इति श्रीस्कंदपुराणे चतुर्थे काशीखंडे उत्तरार्धे भाषायां चतुरशीतितमोऽध्यायः ॥ ८४ ॥

पचासिवां अध्याय ।

दुर्वासाको वरदान, और कामेश्वरकी उत्पत्तिकथा ।

स्कन्द बोले—हे अगस्त्य मुने ! जगदम्बा पार्वतीसे भगवान् त्रिपुरारिने जिस पवित्र कथाको कथन कियाथा उसे मैं तुमसे वर्णन करताहूं ॥ १ ॥ पुरातन समयमें एकबार महाक्रोधी, अत्यंततेजस्वी, परमतपस्वी, दुर्वासाऋषि, समुद्र-पर्वत-जंगल-नदी-ग्राम-पुर और पत्तनोंसे परिपूर्ण सागरान्त इस समग्रभूमंडलमें परिभ्रमण करके महादेवके आनन्दवनमें जा पहुँचे ॥ २ ॥ ३ ॥ अनेकप्रकारके प्रासाद, कुंड और तडागोंसे मण्डित महेश्वरके उस समस्त आराम (बगिचा) को देखकर वह बडेही संतुष्ट हुए ॥ ४ ॥ वहांपर कालके महाभयकोभी जीत लेनेवाले मुनियोंके रमणीय पर्णकुटीरों (मडइयों) को पद पदपर देखनेसे दुर्वासा बडेही विस्मित हुए ॥ ५ ॥ वहांके सब ऋतुओंमें पुष्पित, छतनार और कोमलपल्लव एवं फलोंसे लदे, तथा सुन्दर लताओंसे लिपटेहुए वृक्षोंकी (शोभा) देखकर वे मुनि बहुत प्रसन्न हुए ॥ ६ ॥ तदनंतर दुर्वासा, कौपीनमात्र वस्त्रधारी, सर्वांगमें भस्मसे भूषित, मस्तकपर जटाजूटसे मंडित, कांखमें तुम्बीको

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दबाये हुङ्कारध्वनिसे मेघके गर्जनको जीतनेवाले स्मरारिके ध्यानमें लीन उत्तम और (पाशुपत) लोगोंके दर्शनसे बडेही हृष्ट हुए ॥ ७ ॥ ८ ॥ वे कहींपर निःसंग अकृतदारपरिग्रह, देवसंपुट, दंड, और कमण्डलु, मात्रधारी त्रिदण्डियोंको कालेभी निश्शंक होकर विश्वेश्वरके शरणागत हुए देखकर तथा (किसी) किसी स्थानपर वेदोंके रहस्यवेत्ता आबालब्रह्मचारी, नित्यही गंगास्नानसे पिंगल बालवाले ब्राह्मणोंके देखनेसे काशीमें दुर्वासा बहुतही हर्षित हुए ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ काशीमें पशुओंपर जैसी तुष्टता, मृगगणमें जैसी द्युति, और पक्षियोंपरभी जैसी हृष्टता है, दूसरे किसी स्थानमेंभी वैसी नहीं है ॥ १२ ॥ जहांके (निवासी) पक्षी इत्यादि जातिवालोंमेंभी जो परमानन्दकी समृद्धि छायी है भला स्वर्गवासी देवतालोगोंके मध्यमें वह असीम शुभ संपदा कहां है ? ॥ १३ ॥ आनन्दवनमें विचरण करनेवाले ये सब पशुगण नन्दनवनविहारी देवताओंकी अपेक्षा बहुतही अच्छेहैं क्यों कि ये सब सदानन्दमय होगयेहैं और देवते तो नहीं है ॥ १४ ॥ अन्तकालमें शुभ परिणाम होनेसे काशीपुरीमें रहनेवाला म्लेच्छजनभी उत्तमहै, पर मुक्तिके पात्र न होनेसे अन्यत्रका दीक्षित (ब्राह्मण) भी श्रेष्ठ नहीं होसकता ॥

दोहा—काशी बसिकै मुक्ति लहि, म्लेच्छहु उत्तम होय ।
पै अन्तहिकर दीक्षितहुं, मुक्तिपात्र नहिं सोय ॥ १५ ॥

जसी कि यह विश्वनाथपुरी मेरी मनोहारिणी है ऐसी तो समस्त पृथिवी स्वर्ग और पाताललोकभी नहीं है ॥ १६ ॥ मैंने समस्त भूभागमें भ्रमण किया पर मेरे मनकी गति कहींपरभी वैसी स्थिर नहीं हुई जैसी कि यहां होगई ॥ १७ ॥ सारे ब्रह्मांडभरसे यह पुरी रमणीयहै—यही सब काशीकी बडाई गाकर दुर्वासा ऋषि तपस्या करनेमें प्रवृत्तहुए ॥ १८ ॥ वह महातपस्वी बहुत दिनोंतक (कठोर) तपस्या करनेपरभी जब कुछ फल नहीं पासके तब तो बडेही क्रुद्ध होकर कहने लगे कि, ॥ १९ ॥ मुझ दुष्ट तापसको धिक्कारहै और मेरे इस दुश्चर तपको धिक्कार है, फिर महादेवके इस क्षेत्रकोभी धिक्कार है, जो कि सब लोगोंका प्रतारक (वंचक बन बैठा) है ॥ २० ॥ अच्छा तो अब मैं ऐसाही करूं जिसमें यहांपर किसीकी मुक्ति नहीं होसके (गी), इस प्रकारसे जब वह शाप देनेके लिये उद्यत होगये तब भगवान् शिव हँसने लगे ॥ ॥ २१ ॥ वहांपर प्रहसितेश्वरनामक एक प्रसिद्ध लिंग प्रकट होगया, जिसके दर्शन करनेसे लोगोंको पद पदपर आनन्द मिलताहै ॥ २२ ॥ अनन्तर भगवान्

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२६७

महेश्वर विस्मयान्वित होकर मनही मन कहने लगे कि, ऐसे तपस्वियोंको तो बारंबार नमस्कारहै ॥ २३ ॥ ये द्विजलोग जहां तपस्या करने बैठते हैं, किंवा जहांपर अपना आश्रम बनालेतेहैं, अथवा जहांपर प्रतिष्ठाभी पालेते हैं उसी (स्थान) से डाह करने लग जाते हैं—

दोहा—जहां तपस्या करतहैं, जहँ आश्रम करिलीन ।
लहहिं प्रतिष्ठा यत्र द्विज, तहँ अमर्षि परवीन ॥ २४ ॥

ये सब तापस जब अपने अभीष्ट फलको कुछभी नहीं पाते तो तपश्श्रीके नाश करने वाले क्रोधहीसे जीततेहैं ॥ २५ ॥ पर, तो भी अपने कल्याणकी वृद्धि चाहनेवालेके ये तपस्वी लोग सर्वथा माननीयही हैं, ये सब चाहे क्रोधी हों अथवा अक्रोधी हों पर तपस्वियोंके लिए कौन चिन्ता है ? ॥ २६ ॥ भगवान् महादेव जबलों मनहीमन यह सोच रहेथे तबलों दुर्वासाके क्रोधानलसे आकाशमंडल भरगया ॥ २७ ॥ उस क्रोधाग्निसे जो धूमावली उठी, वह आजतक आकाश-मंडलमें व्याप्त होकर उसे बहुतही नीलवर्ण कररहीहै ॥ २८ ॥ तदनंतर (उस धूमाव-लीको देखकर महादेवके) गणलोग प्रलयवेलाके समुद्र जलकी नांई क्षुब्ध होने लगे और परस्पर यह कहते हुए कि, "ओह ! यह क्या ? यह क्या ?" ॥ २९ ॥ चारों-ओरसे गर्जते और तर्जतेहुए हाथोंमें शस्त्र ले लेकर शिवपुरीके इधर उधर दौडने लगे ॥ ३० ॥ फिर तो महादेवके वे सब पारिषदलोग इस प्रकारसे ललकारतेहुए कि, क्या यम, क्या काल, क्या मृत्यु, क्या अंतक, क्या विधाता, अथवा समस्त देवगण (किंवा विष्णुही क्यों न हों) हम लोगोंके क्रुद्ध होजानेपर कौन ठहर सकता है ॥ ३१ ॥ हम लोग (चाहें) तो अग्निको पानीकी नाईं पीडालें, अथवा समस्त पर्वतोंको चकचूर कर (धूरमें) उडादेवें, किंवा सातों समुद्रोंको अभी (सुखवाकर) मरुस्थली बनादेवें ॥ ३२ ॥ अथवा पातालको ऊपर उठालावें और स्वर्गको नीचे करदेवें, किंवा आकाशको एकही ग्रास करडालें ॥ ३३ ॥ अथवा इस ब्रह्मांडरूप भांडको क्षणमात्रमें फोरडालें, किंवा काल और मृत्युको (पकडकर) ताड़ (के फल) की नाईं एक दूसरेसे टकरादेवें ॥ ३४ ॥ अथवा, जहांपर केवल मरनेहीसे सब जन्तु-ओंकी मुक्ति होजातीहै, एकमात्र उस वाराणसीपुरीको छोडकर समस्त भुवनमंडलको जलादेवें ॥ ३५ ॥ यह धूआंका पहाड और इतनी बडी ज्वालामाला कहांसे उठ रही है ? ऐसा कौनहै जो मदसे मोहित होकर भगवान् मृत्युंजय रुद्रको नहा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जानता ? ॥ ३६ ॥ इस भाँतिसे महाभयकेभी भयंकर होकर वे सब एक गगनस्पर्शी घेरा बनाने लगे ॥ ३७ ॥ और उस प्रलयानलको पत्थरकी नाईं बहुतही टुकडे टुकडे करके, नन्दी, नन्दिषेण, सोमनन्दी, महोदर ॥ ३८ ॥ महाहनु, महाग्रीव, महाकाल, जितांतक, मृत्युप्रकंपन, भीम, घंटाकर्ण, महाबल, ॥ ३९ ॥ क्षोभण द्रावण, जम्भी, पंचास्य, पंचलोचन, द्विशिरा, त्रिशिरा, सोम, पंचहस्त, दशानन, ॥ ४० ॥ चंड, भृंगिरिटि, तुण्डी, प्रचंड, तांडवप्रिय, पिचिंडिल, स्थूलशिरा, स्थूलकेश, गभस्तिमान ॥ ४१ ॥ क्षेमक, क्षेमधन्वा, वीरभद्र, रणप्रिय, चंडपाणि, शूलपाणि, पाशपाणि, कृशोदर, ॥ ४२ ॥ दीर्घग्रीव, पिंगाक्ष, पिंगल, पिंगमूर्द्धज, बहुनेत्र, लंबकर्ण, खर्व, पर्वतविग्रह, ॥ ४३ ॥ गोकर्ण, गजकर्ण, कोकिलाख्य (क्ष) गजानन, मैनैगमेय, विकटास्य, अट्टहासक ॥ ४४ ॥ सीरपाणि, शिवाराव, वैणिक, वेणुवादन, दुराधर्ष, दुस्सह, गर्जन, और रिपुतर्जन ॥ ४५ ॥ प्रभृति शतकोटि दुरासद गणेश्वरोंने काशीमें (उस घेरेसे) वायुकी गतिकाभी रोक कर दिया ॥ ४६ ॥ दुर्वासा ऋषिके क्रोधानलसे व्याकुल तीनों भुवन उस घडी उन वीरोंके क्षुब्ध होनेपर (थरथर) काँपने लगे ॥ ४७ ॥ वह समयभी ऐसा था, कि, काशीमें गणोंकी आज्ञा बिना पाये उन सबोंके तेजसे हतप्रभ होकर सूर्य और चन्द्रमाभी प्रवेश नहीं करने पाते थे ॥ ४८ ॥ (यह देखकर) भगवान् उमापतिने परमक्षुब्ध प्रमथ लोगोंको निवारित करके कहा " यह अनसूया-नन्दन मुनि तो हमाराही अंश है " ॥ ४९ ॥ उधर दुर्वासाके स्थापित लिंगसेभी महातेजोमय कृपानिधि भगवान् शंभु (काशी) पुरीकी रक्षा करतेहुए स्वयं प्रकट हुए ॥ ५० ॥ जिसमें काशीमें मुनिका शाप मोक्षका प्रतिबन्धक न होने पावे बस इसी दयासे भगवान् उनके प्रत्यक्ष हुए ॥ ५१ ॥ और बोले कि, हे महाक्रोधन ! तापस ! मैं प्रसन्नहूं तुम निश्शंक होकर कहो तुमको कौनसा वर दियाजावे ॥ ५२ ॥ हे अगस्त्य ! तब तो शापप्रदानके लिये उद्यत होनेसे दुर्वासा मुनि बडेही लज्जित हुए, और कहने लगे कि, क्रोधांध होनेसे हतबुद्धि होकर मैंने बडाही अपराध किया, अतएव क्रोध (शत्रु) के वशीभूत मुझको बारंबार धिक्कार है, क्योंकि मैं त्रैलोक्यमात्रको अभय देनेवाली काशीहीको शाप देनेके लिये उद्यतचित्त होगया ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ जो लोग सर्वदैव संसारसागरमें डूबे पडे हैं, और जो लोग निरंतर आवागमनके कारण खेदित हो रहे हैं, एवं जिन लोगोंका कण्ठ कर्मपाशमें जकडाहै, उन जीवोंकी मुक्तिका साधन एकमात्र काशीधामही है ॥ ५५ ॥ यह काशीतो समस्त जीवमात्रकी माताहै

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२६९

क्योंकि यही तो महामृतरूप स्तन्यको पिलाती और परमपदपर पहुँचा देती है ॥५६॥ पर माताके साथ काशीकी उपमा कभी नहीं होसकती, क्योंकि माता तो (थोडे दिनों- तक) गर्भमें धारण करती है, पर यह काशी (सर्वदाके लिये) गर्भदुःखसे छुड़ा देती है ॥५७॥ ऐसी काशीको जो दूसरा कोईभी शाप देवेगा, तो उस शापका फल उसीको मिलेगा काशीका कुछ नहीं होसकेगा ॥ ५८ ॥ इस प्रकारसे दुर्वासाका वचन सुनकर भगवान् त्रिलो- चन काशीकी बडाई करनेसे हर्षित होकर बडेही संतुष्ट होगये ॥ ५९ ॥ (और कहने लगे कि) जो बुद्धिमान् काशीकी बडाई गाता एवं उसे हृदयमें धारण करताहै, उसीको कठोर तपस्या अथवा करोडों यज्ञोंके करनेका फल प्राप्त होताहै ॥ ६० ॥ "काशी" ये दोनों अक्षर जिसकी जिह्वाके टोंकेपर वर्तमान रहतेहैं उस बुद्धिमान्को कदापि गर्भमें वास नहीं करना पडता ॥ ६१ ॥ जो कोई प्रातःकाल (उठकर) दो अक्षरोंके "काशी" इस मंत्रको जपताहै, वह दोनों लोकोंको जीतकर अलौकिकप- दको प्राप्त करताहै ॥ ६२ ॥ हे अनसूयानन्दन ! जैसा कि इस घडी काशीकी स्तुति करनेके पुण्यसे तुमको ज्ञान उत्पन्न होगयाहै, वैसा पूर्वमें (कठोर) तपस्या करनेसेभी नहीं हुआथा ॥ ६३ ॥ हे मुने ! दीक्षित होकरभी मेरी पूजा करनेवाला मुझको वैसा प्यारा नहीं है जैसा कि काशीकी स्तुतिमें लालसा रखनेवाला प्रियतरहै, यह बात सर्वथा सत्यहै ॥ ६४ ॥ विविधदान, यज्ञ, और तपस्याके करनेसेभी मुझे वैसा संतोष नहीं होता, जैसा कि काशीकी बडाई करनेसे होताहै ॥ ६५ ॥ जिस सुहृदयने इस आनन्दवनकी स्तुतिकी, वह वेदोक्त सब सूक्तोंसे मेरी स्तुति (को) करचुका ॥ ६६ ॥ हे आनसूयेय ! तापस ! तुम्हारी सभी कामनायें संपन्न होवेंगी, और तुमको वह उत्तम ज्ञान होगा, जो महामोहोंका विनाशक है ॥ ६७ ॥ हे अनघ ! अब तुम औरभी कुछ वरदानकी प्रार्थना करो कि तुमको क्या दिया जाय, (तुम क्रोध करनेके कारण लज्जित मत हो) क्योंकि सज्जनलोग तुम्हारेही ऐसे मुनि- योंकी बडाई गाते हैं ॥ ६८ ॥ इस संसारमें जिसे तपका सामर्थ्य है वही क्रोधभी कर सकताहै, नहीं तो असमर्थ पुरुष क्षीणवृत्तिकी नाईं क्या कर सकताहै ? ॥ ६९ ॥ यह सुनतेही दुर्वासा ऋषि रोमांचित शरीर होकर महादेवकी बडी स्तुति करनेके उप- रांत वरदानकी प्रार्थना करने लगे ॥ ७० ॥ दुर्वासाने कहा हे देवदेव ! जगन्नाथ ! करुणाकर ! शंकर ! महापराधविध्वंसक ! अन्तकान्तक ! स्मररिपो ! ॥ ७१ ॥ मृत्युंजय ! उग्र ! भूतनाथ ! मृडानीवल्लभ ! त्रिलोचन ! नाथ ! यदि आप मुझपर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

प्रसन्नहैं, और यदि मुझे वरदान दिया चाहते हैं तो ॥ ७२ ॥ हे भूजटे ! इसी स्थानपर यह लिंग कामदनामक होवे, और मेरी यह गडही कामकुंडनामसे विख्यात होवे ॥ ७३ ॥ देवदेव कहने लगे—हे परमकोपन ! महातेजस्विमुने ! "एवमस्तु"—यह जो तुम्हारा स्थापित दुर्वासेश्वरनामक लिंगहै॥ ७४ ॥ सो लोगोंकी कामना पूर्ण करनेमें यहांपर वही कामेश्वर संज्ञक होजावे, और जो कोई शनिवारकी त्रयोदशीमें प्रदोषकी वेलामें ॥ ७५ ॥ तुम्हारे बनायेहुए इस कामकुण्डमें स्नान करेगा, और जो बुद्धिमान् नर तुम्हारे स्थापित कामेश्वर लिंगका दर्शन करेगा ॥ ७६ ॥ वह कामजनित दोषोंके कारण यमयातनाको कभी नहीं भोगने पावेगा, अनेकजन्मके संचित बहुतेरे पाप ॥ ७७ ॥ कामकुंडके जलसे स्नान करतेही क्षणमात्रमें बिलाय जायँगे, एवं कामेश्वरके सेवनसे उसकी समस्त कामनायें परिपूर्ण होजावेंगी ॥ ७८ ॥ भगवान् शंभु इस भाँतिसे दुर्वासाको वरोंका दानकर उसी लिंगमें लीन होगये । स्कन्द बोले—उसी लिंगकी आराधनासे दुर्वासाकी समस्त कामनायें पूर्ण हुईं ॥ ७९ ॥ अतएव काशीमें कामाभिलाषी लोगोंको सदैव प्रयत्नपूर्वक कामेश्वरका पूजन करना चाहिए ॥ ८० ॥ और महापातकोंकी शन्तिके लिये कामकुण्डमें स्नान करना चाहिए ! जो पुण्यवान् मेधावी इस कामेश्वराख्यानको पढेगा, अथवा सुनेगा वे दोनोंही निष्पाप होजावेंगे ॥ ८१ ॥

दोहा—करैं कामना सिद्धि सब, कामेश्वर भगवान ।
जैसे दुरवासा लहे, बहुतेरे वरदान ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्धे भाषायां पंचाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८५ ॥

छियासिवां अध्याय ।

विश्वकर्मेश्वरकी कथा ।

पार्वतीने पूछा—हे देवदेव ! काशीपुरीमें जो विश्वकर्मेश्वरनामक परमप्रसिद्ध लिंगहै उसके प्रकट होनेकी कथा कहिए ॥ १ ॥ देवाधिदेवने कहा—हे देवि ! मैं विश्वकर्मेश्वरलिंगकी पातकनाशिनी और मनोहर उत्पत्ति कथाको कहताहूं, तुम श्रवण करो ॥ २ ॥ पूर्वकालमें त्वष्टानामक प्रजापतिके पुत्र, और ब्रह्माके दूसरे शरीर, एवं सब कर्मोंमें अति निपुण विश्वकर्मा हुएथे ॥ ३ ॥ वे यज्ञोपवीत होजानेपर बाल्यावस्थाहीमें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२७१

केवल भिक्षाके द्वारा भोजन करके गुरुकुलमें टिककर गुरुकी सेवा करने लगे ॥४॥ एकबार वर्षाकाल उपस्थित होनेपर उनके गुरुने आज्ञा दी कि, (बेटा!) तुम मेरे लिए एक ऐसी पर्णकुटी बनादो जिसमें मुझे वर्षाका क्लेश न होनेपावे ॥ ५ ॥ और वह कुटिया न तो कभी टूटे और न पुरानी होवे। फिर गुरुपत्नीनेभी कहा कि हे, त्वष्टनन्दन! मेरे शरीरके योग्य एक चोलिया बनादो पर वह बडी अथवा ढीली न होनेपावे, और ऐसा प्रयत्न करो जिसमें वह बिना कपडाके होनेपरभी सुन्दरहो, और वल्कलकीही बने पर सदैव उज्ज्वल रहे ॥६॥७॥ फिर तो गुरुपुत्रनेभी आज्ञा सुनादी कि, मेरे लियेभी ऐसी एक जोडी पादुका (खडाऊं) बनादो, जिसके पहिरनेसे कीचड (धूर) कभी मेरे पैरोंपर नहीं पडने पावे ॥ ८ ॥ पर उसमें चमडेका बंधन न लगे और दौडनेमेंभी वह सुखदेवे, एवं जिसे पहिन कर मैं जलपरभी स्थलहीके समान तेजीके साथ घूम फिर सकूं ॥ ९ ॥ तदनंतर गुरुकन्याभी कहने लगी कि, हे त्वाष्ट्र! मेरे कानोंके योग्य एक जोडा सोनेका करनफूल अपने हाथसे बनादो, ॥ १० ॥ और हाथीदांतके बनेहुए लडकियोंके खेलौनेभी अपने हाथसे रचकर मुझको दो, ॥ ११ ॥ हे सुबुद्धे! गृहस्थीके उपकरण मूसल ओखरी इत्यादिको ऐसा बनादो जो कभी टूट नहीं सके ॥ १२ ॥ और हे सत्तम! कुछ ऐसी बरतनोंही बनादो जिनके माँजनेके बिनाही ऊपरका भाग सदैव उज्वल (साफ) बना रहे ॥ १३ ॥ हे त्वष्टनन्दन! मुझे ऐसी रसोंई करने सिखादो जिसमें मेरी अंगुरियां नहीं जरने पावें और रसोईभी बढिया बनजावे ॥ १४ ॥ और एक लकडीका एकही खम्भेपर ऐसा उत्तमघर बनादो जिसे मैं जहां चाहूं, तहां लेजासकूं ॥ १५ ॥ विश्वकर्माके वयोज्येष्ठ सब सहाध्यायी लोगभी उन्हींके बनाये हुए कामोंकी अभिलाषा रखने लगे ॥ १६ ॥ हे गिरिकिशोरि! उस घडी विश्वकर्मा कुछभी नहीं जानतेथे पर सभीलोगोंसे बना देनेकी प्रतिज्ञा कर वे बडी चिंता और भयसे उद्विग्न हो वनमें चलेगये ॥ १७ ॥ वे सभी लोगोंसे सब कुछ बनादेनेकी प्रतिज्ञा तो कर बैठे पर कुछभी बनाने नहीं जानते थे (इसीसे सोचने लगे) ॥१८॥ "क्या करूं? कहां जाऊ? इस वनमें मुझे कौन बुद्धिकी सहायता देगा? किसकी शरणागत होऊं ॥ १९ ॥ जो मूर्ख गुरू, गुरुपत्नी, और गुरुसन्तानकी बात स्वीकार करके फिर उसे नहीं करता वह अवश्यही नरकभागी होताहै ॥ २० ॥ क्यों कि ब्रह्मचारियोंका एकमात्र गुरुसेवनही धर्म है, तो फिर उनकी बात पूरी किये बिना मेरा निस्तार कैसे होसकता

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

है ? ॥ २१ ॥ गुरुलोगोंकी आज्ञा पालन करनेहीसे समस्त मनोरथ सिद्ध होतेहैं अन्यथा नहीं होसकते, अतएव उनका वचन अवश्यही करना चाहिये ॥ २२ ॥ मैं इस वनमें बैठकर गुरुकी कैसे आज्ञाका पालन करसकूंगा, और यहांपर मुझ निर्बुद्धिका कौन सहायक होसकताहै ? ॥ २३ ॥ गुरुकी बात तो दूर रहनेदो, जो कोई एक छोटे मनुष्यसेभी स्वीकार करके उस कामको नहीं करता, वह अधोगतिको प्राप्त होताहै ॥ २४ ॥ मैं तो सर्वथा अज्ञ और असहाय हूं, फिर इन कर्मोंको कैसे कर सकूंगा, ? हां उन लोगोंके डरसे अंगीकार तो मैंने करलिया पर हे भवितव्यते ! तुमको नमस्कारहै॥ २५॥ जब कि, विश्वकर्मा वनमें यह चिन्ता कररहेथे, उसी घडी उनने देखा कि, एकजन तपस्वी वहांपर चले आरहेहैं ॥ २६ ॥ इसके अनन्तर विश्वकर्माने वनमें आतेहुए उस तपस्वीको देख, प्रणामपुरस्सर कहा कि, (भगवन् !) आपके दर्शन होतेही चिंतानलसे दग्ध मेरा शरीर क्षणही भरमें पालामें डबोये हुएकी नांई शीतल (ठंडी) होगई । मेरे हृदयको बडाही सुख मिल रहाहै । सो आप कौन हैं ? क्या आप तपस्वीका रूपधरकर मेरे पूर्व जन्मके कर्म तो नहीं हो आये हैं ? अथवा दयासागर भगवान् शिव तो नहीं प्रकट हुए हैं ? ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ अच्छा आप जो चाहें सो होवें, आपको नमस्कारहै, अब आप यह उपदेश कीजिए कि, मैं गुरु, गुरुपत्नी और गुरु सन्तानोंके कहेहुए कामको कैसे करसकताहूं ? आप इस निर्जनवनमें मुझे बन्धुरूपसे मिलेहैं तो इस अद्भुतकर्मके लिये मुझे बुद्धिसे सहायता दीजिये ॥ ३० ॥ ३१ ॥ वे करुणामयचित्त तपस्वी ब्रह्मचारी विश्वकर्माके ऐसा कहनेपर उपयुक्त उपदेश देने लगे (क्यों कि) ॥ ३२ ॥ आप्तरूपसे पूँछेजानेपर जो कोई दुर्बुद्धि देताहै, वह (मनुष्य) कल्पान्त पर्यंत घोर नरकमें वास करताहै ॥ ३३ ॥ तपस्वीने कहा—हे ब्रह्मचारिन् ! जो मैं कहताहूं उसे तुम सुनो, तुम्हारा यह कार्य कौन आश्चर्यकर है, विश्वेश्वरहीके अनुग्रहसे ब्रह्माभी सृष्टि रचनेमें निपुण हुएहैं ॥ ३४ ॥ हे त्वाष्ट्र ! यदि तुम काशीमें विश्वेश्वरकी आराधना करसकोगे, तो सत्यही तुम्हारा नाम विश्वकर्मा होगा ॥ ३५॥ काशीमें विश्वेश्वरकी कृपासे कोईभी अभिलाष दुर्लभ नहीं है क्यों कि, वहांपर तो परम दुर्लभ मोक्षभी शरीर त्यागनेवालोंको सुलभ होजाताहै ॥ ३६ ॥ विश्वेश्वरहीकी परमानुकम्पासे ब्रह्माने सृष्टि रचनेका सामर्थ्य और विष्णुने सृष्टिरक्षामें प्रवीणता पाई है ॥ ३७ ॥ हे वत्स ! यदि तुम अपने मनोरथोंको पूर्ण किया चाहते हो, तो निर्वाणलक्ष्मीसे अधिष्ठित काशीपुरीमें चले जाओ ॥ ३८ ॥ वेही भगवान् शंकर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

समस्त मनोवांछाको पूर्ण कर देतेहैं, उपमन्युके थोडासा दूध मांगनेपर उनने समस्त क्षीरसागर उनको देदिया ॥ ३९ ॥ जहांपर वास करनेवालोंको पद पदपर धर्मकी ढेर मिलतीहै, महादेवके उस आनन्दवनमें किसको क्या नहीं मिल सकताहै ? ॥ ४० ॥ जहांपर केवल गंगाके जलका स्पर्श होतेही महापातकावलीका तुरत क्षय होजाताहै, उस काशीका कौन नहीं आश्रय लेता ॥ ४१ ॥ करोडों यज्ञ करनेसेभी वैसी धर्मराशि नहीं मिलसकती, जैसी कि, काशीकी गलियोंमें घूमनेसे पद पदपर आपसे आप प्राप्त होजातीहै करोडों यज्ञ करनेसे जो धर्म नहीं होताहै वही काशीकी गलियोंमें टहलनेहीसे मिलताहै ॥ ४२ ॥ यदि धर्म, अर्थ, काम और मोक्षके पानेकी इच्छा हो तो त्रैलोक्यपावनी काशीपुरीकी यात्रा करो ॥ ४३ ॥ तभी लोगोंकी समस्त कामनाओंका फल मिल जाताहै जब कि, काशीमें सर्वस्वदाता भगवान् विश्वनाथका आश्रयण कर लेवे ॥ ४४ ॥ विश्वकर्मा तापसकी बात सुन प्रसन्न होकर उन्हींसे काशीकी प्राप्तिका उपाय पूछने लगे ॥ ४५ ॥ विश्वकर्मा बोले—हे तापससत्तम ! जिस काशीमें साधकलोगोंको त्रैलोक्यभरके सभी पदार्थ सुलभहैं, महादेवका वह आनंदकानन कहांपर है ? ॥ ४६ ॥ हे मुने ! जहांपर स्वयं आनन्दलक्ष्मी विराजमान रहतीहै, वह आनन्दवन स्वर्गलोक, मर्त्यलोक, अथवा पाताललोकमें कहां है ? ॥ ४७ ॥ जहांपर संसारके पारकरनेवाले भगवान् विश्वेश्वर जीवोंको उस तारकज्ञानका उपदेश दे देतेहैं, जिससे वे सब तन्मय होजातेहैं ॥ ४८ ॥ फिर जिस आनन्दवनमें विचरण करनेवालेको मोक्षलक्ष्मीही सुलभ है, वहांपर दूसरे छोटे छोटे मनोरथोंकी कौनसी बातहै ॥ ४९ ॥ (अच्छातो अब) आप यह बतादेवें कि, मुझे उस काशीमें कौन पहुँचावेगा अथवा मैं कैसे जासकताहूं-यह तपस्वी विश्वकर्माकी इस भक्तिभरी बातको सुनकर ॥ ५० ॥ बोला कि, चलो मैं तुमको वहां लेचलूंगा, क्योंकि, मेरी इच्छाभी वहीं जानेकी है, कारण, यदि दुर्लभ मनुष्यतन पाकरभी काशीका सेवन न होसका तो ॥ ५१ ॥ फिर कहां यह मनुष्यदेह मिलेगा और कहां कर्मबंधननाशिनी श्रेयोभूमी काशी मिलेगी ? यदि काशीकी प्राप्ति नहीं होनेसे यह मनुष्यजन्म वृथा गया तो ॥ ५२ ॥ समस्त आयुष्य और भविष्य (जन्म) सबकुछ वृथाही हुआ, अतएव मैं अत्यंत चंचल इस मनुष्यजन्मको सफल करनेके लिये ॥ ५३ ॥ काशीको जाऊंगा सो तुमभी मायाको छोडकर मेरे साथ चले चलो, इस भाँतिसे विश्वकर्मा उस दयालु तपस्वीके साथ ॥ ५४ ॥ विश्वनाथकी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नगरीमें जा पहुँचे और (वहांके जानेसे) उनके मनकी बडीही शांतिभी हुई तदनंतर विश्वकर्माको काशीमें पहुँचाकर वह तपस्वी न जाने कहां ॥ ५५ ॥ चलागया, हे कुम्भयोने ! तब तो विश्वकर्मानेभी यही समझलिया कि, सब लोगोंके अभीष्टदाता भगवान् विश्वनाथही निस्सन्देह वे तपस्वी थे ॥ ५६ ॥ जिन लोगोंकी चित्तवृत्ति सत्पथपर दृढ रहती है, वे दूरस्थ होनेपरभी उन्हींके निकटमें वर्तमान रहते हैं भगवान् त्र्यक्ष जिसपर कृपाकटाक्ष फेरदेते हैं, उसे बहुत दूर रहनेपरभी स्वयं मार्ग बताकर निकटवर्ती बनालेते हैं यह बात सर्वथा ध्रुव है ॥ ५७ ॥ भगवान् त्रिलोचनकी यह अद्भुत लीलाहै कि, उनका भक्त चाहे जहां रहे, पर उसके लिए कुछभी दुर्लभ नहीं है, क्योंकि कहांतो वनमें चिंतासे व्याकुल चित्त होकर मैं ज्ञानहीन होरहाथा, और कहां उस तपस्वीने सदुपदेश देकर मुझको इस काशीपुरीमें पहुँचा दिया ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ मैंने पूर्वजन्ममें कभी भगवान् शंकरकी आराधना नहीं की क्योंकि शरीरधारी होनेहीसे इस बातका अनुमान निश्चय ज्ञात होजाताहै ॥६०॥ और इस जन्ममें तो अबतक लडकपनहीके कारणसे कुछभी आराधना नहीं होसकी, यह बात प्रत्यक्ष स्पष्टही है, फिर शिवकी यह अनुग्रहबुद्धि मुझपर कैसे हुई ॥ ६१ ॥ जानपडता है कि, मेरी गुरुभक्तिही महादेवके प्रसादका हेतुहै, जिसके कारणसे भगवान् विश्वेश्वरने कृपालु होकर मुझे यहांपर पहुँचादेनेकी दया दिखलाई है ॥ ६२ ॥ अथवा अन्य देवतोंकी नाईं महेश्वरभी कारणको नहीं ढूंढते, केवल कृपाहीके कारण दरिद्रोंपरभी अनुग्रह करते हैं ॥ ६३ ॥ यदि मुझपर उनकी कृपा नहीं होती तो तपस्वीका संग कैसे होता ? स्वयं महादेवही उस रूपसे मुझको यहांपर लिवालाये यह बात ध्रुवहै ॥ ६४ ॥ केवल दान, यज्ञ, तप, और व्रताचरण इत्यादि दिसे, शिवकी प्रसन्नता नहीं होसकती, तब उनकी कृपाही उनकी प्रसन्नताका एकमात्र कारणहै ॥ ६५ ॥ जो कोई साधुसम्मत वेदविहित मार्गको कभी नहीं छोडता तभी विश्वेश्वर उसपर परम दया करतेहैं ॥ ६६ ॥ इस प्रकारसे विश्वेश्वरकी कृपाका समर्थन कर त्वष्टपुत्र विश्वकर्मा पवित्र और स्वस्थचित्तहो, शिवलिंगकी स्थापना करके (उसकी) आराधना करने लगे ॥ ६७ ॥ वे कन्दमूल, और फलभोजी होकर नित्यही वनसे ऋतूद्भव बहुतेरे पुष्पोंके संभारको लाकर स्नानके उपरांत पूजन करने लगे ॥ ६८ ॥ इस रूपसे तीन वर्षतक विश्वकर्माके लिंगाराधनमें दत्तचित्त रहनेपर करुणानिधि शंकर उनके ऊपर प्रसन्न हुए ॥ ६९ ॥ महादेव उसी लिंगसे प्रकट होकर बोले

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२७५

कि, हे त्वष्टनन्दन तुम्हारी ! इस दृढभक्ति तथा गुरुके प्रयोजनार्थ दत्तचित्ततासे मैं बडा प्रसन्नहूं सो, हे बेटा ! तुम वर मांगो, और तुम्हारे गुरु, गुरुपत्नी, और गुरुके दोनों लडकोंने जो कुछ तुमसे कहाहै उसके बनादेनेकी सामर्थ्य तुमको होजावेगी ॥ ७० ॥ ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ हे त्वाष्ट्र ! तुम्हारे इस आश्चर्यमय लिंगके विधिवत् पूजनसे मैं बहुतही संतुष्टहूं, अतएव औरभी जो जो वर देताहूं उनको श्रवण करो ॥ ७३ ॥ सुवर्ण इत्यादि धातु, काष्ठ, पत्थर, मणि, रत्न, पुष्प, वस्त्र ॥ ७४ ॥ कर्पूर आदिक सुगंध, द्रव्य, जल, कंद, मूल, फल, त्वचा, प्रभृति पदार्थ ॥ ७५ ॥ और सब प्रकारके वस्तुओंके बनानेका काम तुम जानसकोगे, जिस जिसकी जहांकहीं मन्दिर अथवा देवालय इत्यादि पर ॥ ७६ ॥ जैसी रुचि होगी उसके संतोषार्थ तुम वैसाही बना देसकोगे विविधभाँतिके भूषणोंकी रचना, रसोंईकी क्रिया ॥ ७७ ॥ सब प्रकारके शिल्पकर्म, और तौर्यत्रिक इत्यादिको तुम दूसरे ब्रह्माकी नाईं बनाने जान जाओगे॥ ७८॥ नानाविधिके यंत्र, अनेक आयुध विधान, जलाशय निर्माण और सुन्दर दुर्गकी रचनायें ॥ ७९ ॥ जैसी तुम बनासकोगे, वैसी और किसीकी बनाई नहीं बनसकेंगी एवं मेरे वरदानके प्रभावसे तुम समस्त कलाओंको स्वयं जान जाओगे ॥ ८० ॥ सब प्रकारकी इन्द्रजाल संबंधिनी विद्या तुम्हारे आधीन रहेंगी, सब कामोंमें कौशल्य और बुद्धिमानोंमें प्रधानता तुम्हींको मिलेगी ॥ ८१ ॥ मेरे इसी वरदानसे तुम सब लोगोंकी मनोवृत्तिको समझ जाओगे, बहुत कहांतक कहें स्वर्ग, पाताल और इस मर्त्यलोकमें जो कुछ ॥ ८२ ॥ लोकोत्तर कर्म है उस सबको तुम आपसे आप जान सकोगे ॥ ८३ ॥ हे अनघ ! समस्त भुवनोंमें विश्वभरके सब कर्मोंके जानलेनेसे तुम्हारा नाम विश्वकर्मा होगा ॥ ८४ ॥ अहो ! लिंगपूजनमें लगे रहनेके कारण तुम्हारे लिए मुझे कुछभी अदेय नहीं है, सो जो वर लेनाहो मुझसे अभी मांगलो ॥ ८५ ॥ जो सन्मतिमान् जन दूसरे किसी स्थानपरभी मेरे लिंगका पूजन करताहै, मैं उसेभी वांछितफल देताहीहूं, फिर जो काशीमें हो तो उसका क्या कहनाहै ॥ ८६ ॥ इस काशीपुरीमें जिसने लिंगकी पूजा अथवा प्रतिष्ठा किंवा स्तुतिही की वह मेरे रूपधारणके लिये मानो दर्पणही होजाताहै ॥ ८७ ॥ अतएव हे सुव्रत ! त्वाष्ट्र ! काशीमें लिंगकी पूजा करनेसे तुम मेरे तीनों नेत्रोंके निर्मल मुकुर (चश्मा) होगयेहो ॥ ८८ ॥ जो मन्दमति नराक जन, मेरी राजधानी काशीपुरीमें मुझे छोडकर दूसरे किसीका पूजन करताहै वह मूढ सदैव मुक्तिसे वर्जित बनारहताहै ॥ ८९ ॥ ब्रह्मा, विष्णु, चन्द्र, और इन्द्र

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

इत्यादि देवगणभी यहांपर मुझसे भिन्न अन्य किसीको नहीं पूजते, अतएव मोक्षार्थी लोगोंको उचितहै कि, इस आनंदवनमें मेरीही पूजा करें ॥ ९० ॥ जैसे तुमने आनंदवनमें आकर मेरी पूजा कीहै वैसेही औरभी कितनेही पुण्यकर्मालोग मेरा पूजन करके मुझको पाचुकेहैं ॥ ९१ ॥ तुम मेरे परम अनुग्रह भाजनहो, इसलिये अत्यंत दुर्लभभी वरदान पासकतेहो, सो जो तुम चाहते हो उसे मिलाही हुआ समझो, और अब बिलम्ब मत करो शीघ्रतासे बोलो ॥ ९२ ॥ विश्वकर्माने कहा—हे शंकर ! मैं अज्ञ होनेपरभी जो इस लिंगको स्थापित कियाहै, सो दूसरे लोगभी इस लिंगकी आराधना करके उत्तम बुद्धिसे संपन्न हुआ करें ॥ ९३ ॥ हे नाथ ! मेरी यह एक औरभी प्रार्थनाहै, जिसे आप अवश्यही देवेंगे, वह यहीहै कि, आप मुझसे अपना मंदिर कब बनवावेंगे ? ॥ ९४ ॥ महादेवने कहा—एवमस्तु, जैसा कि तुमने कहा तुम्हारे स्थापित लिंगके आराधक लोग सद्बुद्धिके भाजन और मोक्षदीक्षित होवेंगे ॥ ९५ ॥ हे तात ! जब ब्रह्माके वरदानसे दिवोदास यहांका राजा होवेगा और बहुत दिनोंतक राज्यभोग करके फिर गणेशकी मायासे बडाही विरक्त चित्त हो विष्णुके उपदेशानुसार चंचल राजलक्ष्मीको त्यागकर मेरी आराधनासे निर्वाणलक्ष्मीको यहींपर प्राप्त होजावेगा, तब उसी घडी तुम मेरे लिये नया प्रासाद बनादेना ॥ ९६ ॥ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ हे विश्वकर्मन् ! अब तुम चलेजाओ, और गुरुकी आज्ञाके पूर्ण करनेका प्रयत्न करो, क्योंकि जो लोग गुरुकी भक्ति करतेहैं, वे निस्सन्देह मेरेही भक्तहैं ॥ ९९ ॥ जो लोग गुरुका अपमान करतेहैं, मैंभी उन सबोंका अपमानही करताहूं, सो तुम (जाकर) शिष्योचित गुरुके आदेशका प्रतिपालन करो ॥ १०० ॥ तदनन्तर वहांसे लौटनेपर मेरे पास आकर पवित्रचित्तसे देवतोंका हिताचरण करतेहुए जबलों मुक्ति नहीं होगी तबलों रहोगे ॥ १ ॥ तुम्हारे स्थापित इस लिंगमें मैं सदा वर्तमान रहकर अभीष्टफल देता रहूंगा और इस लिंगके भक्तोंको मोक्षलक्ष्मीभी समीपहीमें रहेगी ॥ २ ॥ अंगारेश्वरसे उत्तरदिशामें जो लोग इस लिंगकी पूजा करेंगे पद पदपर उनके मनोरथोंकी प्राप्ति होवेगी ॥ ३ ॥ यह कहकर भगवान् शिव अन्तर्धान होगये, और विश्वकर्माभी अपने गुरुके निकट चलेगये, एवं वहांपर उन सब लोगोंके अभिलषित कार्यको संपादन करके अपने घर चले गये ॥ ४ ॥ वहांपर अपने कर्मसे माता और पिताको सन्तुष्टकर उनकी आज्ञा लेकर फिर काशीमें लौट आये ॥ ५ ॥ बुद्धिमान् त्वष्टनन्दन समस्त देवतोंका प्रिय आचरण करतेहुए आजतक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२७७

निज प्रतिष्ठित लिंगकी आराधनामें आसक्त रहकर काशीहीमें विराजमानहैं ॥ ६ ॥ महादेवने कहा—हे गिरीन्द्रकिशोरि ! देवि ! काशीके मुक्ति देनेमें समर्थ जिन लिंगोंको तुमने पूछाथा उनको मैंने तुमसे कहदिया ॥ ७ ॥ ओंकारेश्वर, त्रिलोचन, महादेव, कृत्तिवासेश्वर, रत्नेश्वर, चन्द्रेश्वर, ॥ ८ ॥ केदारेश्वर, धर्मेश्वर, वीरेश्वर, कामेश्वर विश्वकर्मेश्वर, मणिकर्णिकेश्वर ॥ ९ ॥ और मेरेभी पूज्य अविमुक्तेश्वर, एवं विश्ववि-दित, समस्त सौख्यप्रदमन्नामक विश्वेश्वर (येही चौदहो प्रधान लिंगहैं) ॥ ११० ॥ जो कोई अविमुक्तक्षेत्रमें आकर विश्वनाथकी पूजा करलेताहै सैकडों करोड कल्प बीतजानेपर भी उसका पुनर्जन्म नहीं होता ॥ ११ ॥ संयमी संन्यासियोंको एकही स्थानपर एक वर्षभर वास नहीं करना चाहिये, उन सबको चारमास एक स्थानपर रहकर आठमास विचरण करना उचित है ॥ १२ ॥ परन्तु जो लोग काशीमें प्रविष्ट होचुके हों उनको भ्रमण करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है, क्योंकि यहांपर तो मोक्ष निश्चितही है, अतएव काशीको कभी नहीं छोडना चाहिए ॥ १३ ॥ आनन्द-वनको त्यागकर दूसरे किसी तपोवनमें नहीं जाना चाहिए, क्योंकि यहांपर मेरे आश्रयणसे तप, योग, और मोक्ष सबकुछ प्राप्त होजाताहै ॥ १४ ॥ समस्त जन्तुओंपर कृपा करकेही मैंने इस क्षेत्रका निर्माण किया है, इस क्षेत्रमें साधकलोग अवश्यही सिद्ध होजातेहैं ॥ १५ ॥ क्योंकि अतीत हो अथवा वर्तमानहो, एवं ज्ञानकृत हो किंवा अज्ञानकृतहो सभी प्रकारके पाप आनन्दवनके दर्शन होतेही विलाय जातेहैं ॥ १६ ॥ अत्युग्र तपस्या, महादान, कठोरव्रत, यम नियम, अध्यात्म योगाभ्यास, महायज्ञ ॥ १७ ॥ और समस्त उपनिषदोंके साथ वेदान्तशास्त्रके अभ्याससे जो फल होताहै, इस क्षेत्रमें वह अनायासही मिल जाताहै ॥ १८ ॥ जीवोंको तभीतक कर्मसूत्रमें बंधकर (संसारमें) भ्रमण करना पडताहै, जबतक मेरी इस विश्वेश्वरपुरीमें शरीरका त्याग नहीं बनपडता ॥ १९ ॥ हे देवि ! इस काशीमें मैं अपनी लीलाहीसे तिर्यक् योनिवाले जीवोंकोभी अन्तमें जो पद दे देताहूं वहांपर बडे बडे याज्ञिकोंकी पहुँच नहीं होने पाती ॥ १२० ॥ इस मुक्तक्षेत्रमें निवास करनेसे चारोंप्रकारके भूतग्रामको कालानुसार मरनेपर परमगति प्राप्त होजाती है ॥ २१ ॥ अत्यन्त विषयासक्त चित्त और धर्मपराङ्मुख व्यक्तिभी यहांपर कालक्रमसे शरीर त्यागकरनेपर फिर कभी संसारमें प्रवेश नहीं करता ॥ २२ ॥ हे देवि ! माघमासके उषःकालमें तीर्थराज प्रयागमें स्नान करनेसे जो फल होताहै, वाराणसीमें वही फल करोड गुना अधिक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

क्षण क्षणपर मिला करताहै ॥ २३ ॥ इस क्षेत्रकी महिमा वचनके द्वारा नहीं कही जासकती, यहतो तुम्हारी प्रसन्नताके लिए मैंने उद्देश्यमात्र कहदियाहै ॥ २४ ॥ उत्तम जन इन चतुर्दश लिंगोंके आख्यानोंको सुनकर चौदहों भुवनोंमें सर्वोत्तम पूजाको पावेगा ॥ १२५ ॥

दोहा—कथा विश्वकर्मेशकी, यह है परम पुनीत ।
ज्ञात होत बातैं बहुत, ओ गुरुजनकी नीत (रीत) ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्धे भाषायां षडशीतितमोऽध्यायः ॥ ८६ ॥

सत्तासिवां अध्याय ।

दक्षप्रजापतिके यज्ञकी कथा ।

अगस्त्य बोले—हे सर्वज्ञपुत्र ! सर्वार्थकुशल ! प्रभो ! षडानन ! इन सब मुक्तिदायक लिंगोंकी उत्पत्तिकी कथाको सुनकर ॥ १ ॥ अमृतपीनेसे देवतोंकी नाईं मैं अत्यन्तही परितृप्त होगया, (वास्तवमें) यह आनन्दकानन इन सब ओंकारेश्वर प्रभृति लिंगोंके द्वारा ॥ २ ॥ इस लोकमें पापियोंको भी आनन्दही देताहै, और मुझे तो इन सब लिंगोंका विवरण सुननेसे बडाही आनन्द हुआ ॥ ३ ॥ मैं तो (काशी) क्षेत्रका तत्त्व सुनकर जीवन्मुक्तसा होगयाहूं । हे स्कन्द ! वहांके दक्षेश्वर इत्यादि जिन चतुर्दश लिंगोंको आपने कहाहै उनकाभी समस्त माहात्म्य वर्णन कीजिए ॥ ४ ॥ जिन दक्षप्रजापतिने देवतोंकी सभाके बीचमें भगवान् शिवकी निन्दा कीथी, उनने फिर क्यों शिवलिंगकी स्थापना की, यह तो बडी विचित्र बातहै ॥ ५॥ हे सूत ! इस प्रकारसे अगस्त्यका कथन सुनकर मयूरवाहन स्कन्द दक्षेश्वरकी उत्पत्ति कथाको कहने लगे ॥ ६ ॥ स्कन्दने कहा—हे मुने ! मैं कल्मषहारिणी उस कथाको कहताहूं तुम श्रवण करो । दक्षप्रजापति, दधीचि मुनिके धिक्कारनेपर छागवक्त्र होनेसे विरूप मुख होकर प्राप्त श्वित्त करनेके लिये ब्रह्माके पास गये, फिर ब्रह्माके उपदेशसे पुरश्चरण करनेकी इच्छासे काशीपुरीमें समागत हुए, ॥ ७ ॥ ८ ॥ (इसकी जड यह है कि) एकबार देवाधिदेव चन्द्रमौलिकी सेवाके लिए भगवान् विष्णु, ब्रह्माके साथ और इंद्रादिक लोकपाल, विश्वेदेवा, मरुद्गण, आदित्य, वसु, रुद्र, साध्य, विद्याधर, नागगण, महर्षिगण, अप्सरोगण, यक्ष, गंधर्व, सिद्ध और चारण गणके सहित कैलासमें गये, उन लोकेश

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२७९

रोमांचित शरीर होकर भगवान् शंकरकी नानाप्रकारके स्तोत्रोंसे स्तुति की, शिवनेभी उन सब लोगोंका बडा आदर किया, फिर वे लोग उन्हींके मुखकी ओर दृष्टि लगाकर आसनोंपर बैठ गये ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ उन सब लोगोंके बैठ जानेपर भगवान् शिवने विष्णुको हाथसे स्पर्श करके बडे आदरके साथ (उनसे) पूछा कि, ॥ १३ ॥ हे दानववंशदावानल ! श्रीवत्सलांछन ! हरे ! तुम्हारी त्रैलोक्य पालनकी शक्ति तो अकुंठितहै ? ॥ १४ ॥ रणस्थलमें दुष्ट दैत्य और दानवोंका शासन करतेहो ? क्रुद्ध ब्राह्मणोंको तो मेरे समान रुद्ररूप मानतेहो ? ॥ १५ ॥ भूतलमें गायें तो बाधारहित हैं न ? स्त्रियां श्रीसे संपन्न और पतिव्रतमें तत्पर तो रहती हैं न ? ॥ १६ ॥ पृथिवीपर बडी दक्षिणावाले विधियज्ञ तो होते हैं न ? तपस्वियोंकी तपस्यामें तो कोई विघ्न नहीं पडने पाता ? ॥ १७ ॥ द्विजातिगण आनन्दपूर्वक साङ्ग वेदको तो पढसकते हैं न ? और हे केशव ! राजालोग तो तुम्हारे ऐसा अपनी प्रजाओंका पालन करते हैं न ? ॥ १८ ॥ एवं चारों वर्ण और आश्रमके लोग प्रसन्नेन्द्रिय चित्तसे अपने अपने धर्मोंपर निष्ठापूर्वक स्थित तो हैं न ? ॥ १९ ॥ भगवान् धूर्जटीने इस भाँतिसे हृष्टमन वैकुंठनाथसे पूछ (ताछ) कर ब्रह्मासेभी पूछा कि, हे ब्रह्मन् ! ब्रह्मतेजकी तो बढती है न ? ॥ २० ॥ (तुम्हारे) त्रैलोक्यमंडपमें सत्यधर्म तो अस्खलितरूपसे बना है न ? हे विधे ! कहींपर कोईभी तीर्थोंमें रोकटोंक तो नहीं करनेपाता है न ? ॥ २१ ॥ हे इन्द्रादिक देवतागण ! तुम लोग तो कृष्णके भुजदंड (के प्रताप) से पालित होकर अपने अपने नगरोंमें स्वस्थतापूर्वक राज्यशासन करते हो न ? ॥ २२ ॥ भगवान् भूतनाथ योंहींपर उन सब प्रत्येक देवतोंसे आदरपूर्वक पूछकर और उनके आगमनका कारण जान उन लोगोंका मनोरथ परिपूर्ण करके ॥ २३ ॥ विसर्जन (बिदा) करनेके उपरान्त स्वयं अपने सौधमें चलेगये, अनंतर प्रसन्नचित्त देवतोंके अपने अपने स्थान प्रस्थान करनेपर, ॥ २४ ॥ सती देवीके पिता दक्षप्रजापति मार्गहीमें चिंता करनेलगे कि, मुझेभी सब देवतोंके समानही मान मिला कुछ अधिकता नहीं हुई ॥ २५ ॥ (बस इसी शोचमें पडकर) वह मन्दराचलके आघातसे समुद्रकी नाईं बडेही क्षुब्धचित्त होपडे, बडेही क्रोधान्ध होकर वे मनहीमन यह कहनेलगे कि, ॥ २६ ॥ यह शिव तो मेरी बेटी सतीके पाजानेसे बडाही अहंकारी होगया, प्रायः न तो यही किसीका (स्वजन) है, और न कोईभी कहीं इसीका (स्वजन) है ॥ २७ ॥ (नहीं जानते) इसका किस वंशमें जन्म है

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कौनसा गोत्र है ? किस देशका वासी है ? कैसी इसकी प्रकृति है ? कौनसा जीविकोपाय है ? और कैसा आचरण है ? यह तो विष खाता और बैलपर चढकर घूमता रहता है ॥ २८ ॥ प्रायःकरके यह तपस्वियोंमेंभी नहीं समझाजासकता क्योंकि कहां तो तपस्या ? और कहां अस्त्रधारण ? फिर इसकी गिनती गृहस्थोंमेंभी नहीं होसकती क्योंकि सदैव श्मशानहीपर डेरा डाले पडारहता है ॥ २९ ॥ जब कि इसने विवाह करलिया है तो यह ब्रह्मचारीभी नहीं है फिर जब यह ऐश्वर्यके मदसे उन्मत्त होरहाहै तो वानप्रस्थ कैसे होसकता है ? ॥ ३० ॥ वेदके नहीं जाननेसे यह ब्राह्मणभी नहीं है, प्रायः अस्त्र शस्त्रके लियेरहनेसे इसे क्षत्रिय कहनाभी ठीक नहीं है ॥ ३१ ॥ क्योंकि क्षत्रिय होनेसे क्षत (विपद्) से परित्राण करना चाहिए, फिर यह तो प्रलयकर्ताहीहै, तब यदि इसे वैश्य कहें तो इसके सभी व्यवहार दरिद्रोंहीसे होतेहैं ॥ ३२ ॥ गलेमें नागयज्ञोपवीतके धारण करनेसे इसे शूद्रभी नहीं कहाजासकता, इस प्रकारसे तो चारोंही वर्ण और आश्रमोंसे अतीत होनेके कारण नहीं जानपडता कि इसे क्या कहाजाय ॥ ३३ ॥ सब कोई प्रकृतिहीसे चीन्हा जाता है पर यह तो प्रकृतिसे रहित होनेहीके कारण स्थाणु (उकठाकाठ) है, फिर यह पुरुषभी नहीं है क्योंकि इसके अर्धांगमें स्त्री वर्तमानहै ॥ ३४ ॥ और इसे स्त्रीभी नहीं कहसकते क्योंकि इसके मुखपर दाढी मोछें उगीं हैं सर्वत्रही इसका लिंग पूजाजाता है इससे इसे नपुंसकभी नहीं कहते बनता ॥ ३५ ॥ यह लडकाभी नहीं है क्योंकि सब लोकोंमें यही बहुत वर्षोंका पुराना अनादिवृद्ध और उग्र कहलाता है ॥ ३६ ॥ इसीसे इस पुराने बुड्ढेपर युवा होनेकीभी संभावना नहीं की जासकती, फिर जरा और मरणसे रहित होनेके कारण इसे बूढाभी नहीं कहते बनता ॥ ३७ ॥ प्रलयकालमें ब्रह्मा इत्यादि देवतोंकेभी संहार करडालनेपर यह पातकी नहीं होता, फिर क्रुद्ध होकर ब्रह्माका मस्तक काटलेनेसे इसमें तनिकभी पुण्यका लेश नहीं पायाजाता ॥ ३८ ॥ यह तो सदैव हड्डियोंहीका गहना पहिनता और कपडाको त्यागकर नंगाही रहताहै तो फिर इसमें पवित्रता कहां है ? कहांतक कहें, इसकी चेष्टा अथवा चरित्र कुछभी तो नहीं जानाजासकता ॥ ३९ ॥ ओह ! ! इस जटिलकी कैसी बडी और अद्भुत धृष्टता देखपडी जो पूजनीय श्वशुर होनेपरभी मुझे देखकर यह आसनपरसे (तनिकभी) नहीं उठा ॥ ४० ॥ प्रायः जो लोग माता पितासे हीन निर्गुण और अकुलीन होते हैं वे इसी रीतिपर कर्मभ्रष्ट और निरंकुश होजाते हैं ॥ ४१ ॥ वे लोग स्वच्छन्दचारी और असहाय होनेपरभी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२८१

सर्वत्रही अपना अहंकार करते हैं, और परम दरिद्र होनेपरभी अपनेको बडाही ऐश्वर्यशाली समझते हैं ॥ ४२ ॥ विशेषतः जामाता लोगोंका ऐसा स्वभावही होताहै, जो वे सब थोडासाभी ऐश्वर्य पाजानेसे निस्सन्देह बडेही गर्वभाजन (बनकर मदमत्त) होजाते हैं ॥ ४३ ॥ द्विजराजभी बडा गर्विष्ठ होकर (मेरी बेटियोंमें) केवल रोहिणीहीको चाहनेलगा और कृत्तिका इत्यादिपर कुछभी प्रेम नहीं करताथा, इसीसे मैंने उसे शाप देकर क्षयरोगी बनादिया ॥ ४४ ॥ आज जैसे इस त्रिशूलीने अपने घरपर जानेसे मेरा अपमान किया है, वैसेही मैंभी इसके गर्वसर्वस्वको खर्व करडूंगा ॥ ४५ ॥ और सब प्रकारसे इसकीभी मानहानि करूंगा, योंहीं बहुतभाँतिसे मनही मन तर्क वितर्क करके उस दक्षप्रजापतिने ॥ ४६ ॥ अपने घरपर पहुँचतेही इन्द्रादिक देवतोंको बुलाकर कहा कि, "मैं यज्ञ करना चाहता हूं, सो आपलोग यज्ञकी सहायता कीजिए ॥ ४७ ॥ और शीघ्रतापूर्वक यज्ञकी सामग्रियोंको इकट्ठा करादीजिए" तदनंतर दक्षने श्वेतद्वीपमें जाकर भगवान् अच्युत चक्रपाणिको उस महायज्ञका निरीक्षक एवं यज्ञपुरुष बनालिया, समस्त ब्रह्मवादी (वेदाध्यायी) ऋषिलोग उस यज्ञमें उसके ऋत्विक् नियुक्त हुए ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ फिरतो दक्षप्रजापतिका वह महायज्ञ प्रारंभ हुआ, तदनंतर दक्षके उस विशाल यज्ञस्थलमें ब्रह्माने सब देवतोंको तो देखा पर साक्षात् परमेश्वरहीको नहीं देखनेके कारण किसी व्याजसे वे अपने लोकको चलेगये। दधीचि मुनिनेभी समस्त त्रैलोक्यवासियोंको दक्षके यज्ञमें समागत और वस्त्रालंकारसे सम्मानित होतेदेख एवं महादेव और सतीको वहांपर नहीं देखपानेपर दक्षके शुभपरिणाम होनेकी इच्छासे यह कहा। दधीचि कहनेलगे—हे दक्षप्रजापते ! आपतो साक्षात् (वि) धाताकी मूर्तिहीहैं ॥ ५० ॥ ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ निस्संदेह आपके ऐसा सामर्थ्य तो कहींपर किसीकाभी नहीं है, हे महामते ! आपके यहां जैसी यज्ञकी सामग्रियां देखाई पडती हैं, वैसी तो आजकल कहींभी नहीं सुनाई देतीं परन्तु यज्ञ सर्वथा नहीं करना चाहिये, क्योंकि यज्ञके समान कोईभी शत्रु (हानिकारक) नहीं है ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ हां यदि आपके ऐसी संपत्ति पासमें हो तो अवश्यही करना उचित है, आपके यज्ञमें स्वयं अग्निदेव कुंडमें साक्षात् विराजरहेहैं इन्द्रादिक देवतालोगभी साक्षात् वर्तमान हैं ॥ ॥ ५६ ॥ समस्त मंत्रगण साक्षात् मूर्तिधरकर बैठे हैं, ये भगवान् यज्ञपुरुष स्वयं विराजमान हैं, स्वयं देवाचार्य बृहस्पतिहीने आचार्यका आसन ग्रहण किया है

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यह कर्मकांडके परमविज्ञ स्वयं भृगु साक्षात् ब्रह्मा हैं ॥ ५७ ॥ यह पूषा, भग, और सरस्वती देवी आपही यहांपर सुशोभित हैं, और ये सब दिक्पाल लोग आपके आप यज्ञके रक्षणावेक्षणमें लगे हैं॥५८॥ आपने स्वयमेव शतरूपा देवीके सहित इस यज्ञकी उत्तम दीक्षाको ग्रहण किया है, आपके यह जामाता स्वयं धर्म, अपनी दशों पत्नियोंके साथ ॥ ५९ ॥ आपही प्रयत्नपूर्वक सर्व धर्म कर्मको कररहे हैं। ये आपके जामाताओंमें प्रधान परम विद्वान् द्विजराज ओषधीनाथभी अपनी सत्ताईसों भार्याओंके सहित आपका सब कार्य संपादन और औषधियोंको पूरण कररहे हैं ॥ ६० ॥ ६१ ॥ राजसूय यज्ञसे दीक्षित, त्रैलोक्यमात्रकी दक्षिणा देनेवाले, प्रजापतियोंमें सर्वश्रेष्ठ यह मरीचिके पुत्र कश्यप स्वयं अपनी तेरहों भार्याओंके साथ आपका कार्य साधन कररहे हैं ॥ ६२ ॥ स्वयं कामधेनु हवि (घी) देरही है, कल्पवृक्ष समिधा और कुश एवं चमसादिक समस्त दारुपात्र और शकट तथा मंडप इत्यादिको जुटा रहाहै ॥ ६३ ॥ विश्वकर्मा अभ्यागत और ऋत्विक् इत्यादिकोंके लिये अलंकारोंको बनारहे हैं, एवं आठों वसुभी धन और वस्त्र लाकर देरहे हैं ॥ ६४ ॥ (कहांतक कहें जब कि,) यहांपर स्वयं लक्ष्मीही सौभाग्यवती कुलवधुओंका शृंगार (पटार) कररही हैं ॥ ६५ ॥ हे दक्ष! इन सबोंको चारोंओरसे देखनेपर मेरे सुखकी सीमा नहीं रहगई, किन्तु एकही बातका मुझे दुःख होताहै जिसे आप कदाचित् भूलगये हैं ॥ ६६ ॥ जैसे देह अनेक भूषणोंसे भूषित होनेपरभी जीवहीन होनेसे नहीं शोभता, वैसेही ईश्वरके विना यह यज्ञ श्मशानसा दीखता है ॥ ६७ ॥ इस प्रकारसे दधीचि मुनिका वचन सुनकर दक्षप्रजापति घृत पडनेसे अग्निके समान (मारे) क्रोधके बहुतही जाज्वल्यमान होगये ॥ ६८ ॥ दधीचिने स्तुति करनेसे जिसे पूर्वमें बडाही प्रसन्न होते देखाथा उस घडी उसीको मुखसे क्रोधाग्नि वमन करतेहुए देखा ॥ ६९ ॥ फिर तो दक्षप्रजापति (मारे) क्रोधसे समस्त शरीरको थरथर कँपातेहुए मानो उस ब्राह्मणको मारनेके लिए उद्यत होकर यह उत्तर देनेलगे ॥ ७० ॥ दक्षने कहा—हे दधीचे ! तुम ब्राह्मण हो, और मैं भी यज्ञकी दीक्षा लेचुका हूं, इसीसे अवश हूं, नहीं तो तुम देखते कि आज तुम्हारा क्या होजाता ? ॥ ७१ ॥ हे महाजड ! तुझे किसने यहां बुलाया था जो तू यहां चलाआया, और फिर आयाभी तो तुझसे किसने पूछा है जो यह बकबक कररहा है ? ॥ ७२ ॥ जहांपर समस्त मंगलोंकेभी मंगलदाता श्रीमान्

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२८३

भगवान् हरिही स्वयं यज्ञपुरुष बने हैं वह यज्ञ क्या श्मशानके समान है ? ॥ ७३ ॥ जिस यज्ञमें तेंतीस करोड देवतोंके अधिपति और स्वयं शतक्रतु वज्रधर इन्द्र विराजमान हों ॥ ७४ ॥ उस महायज्ञकी तू श्मशानसे उपमा देता है ? । जहांपर स्वयं धर्मराजही धर्माधर्मके एकमात्र विवेचक हों ॥ ७५ ॥ एवं स्वयं धनदही जिसमें धनदाता हों, किंवा जहांपर अग्निदेव साक्षात् वर्तमान रहें उस यज्ञको तू उस अमंगलभूमीसे तुलना करताहै ? ॥ ७६ ॥ जहांपर स्वयं देवाचार्यही आचार्यके आसनपर आसीन हैं उस यज्ञको तू अभिमानवश श्मशान कहता है ?॥ ७७ ॥ जिसमें ये सब वसिष्ठ प्रभृति महर्षिलोग ऋत्विकका कार्य कररहे हैं उस यज्ञको तू परेतभूमिके ऐसा कहता है ॥ ७८ ॥ यह सुनकर ज्ञानियोंमें श्रेष्ठ दधीचि मुनिने फिर कहा कि, (हे दक्ष ! यद्यपि) यह यज्ञपुरुष हरि सब मंगलोंके मंगलदाता हैं॥ ७९॥ तथापि वेदमें विष्णुको शांभवी शक्तिही कहकर निर्देश किया है, आदिदेवके वामांग विष्णु और दक्षिणांग ब्रह्मा कहेजाते हैं ॥ ८० ॥ फिर यह जो सौ अश्वमेधोंके दीक्षित वज्रायुधधारी इन्द्र हैं, इनको (शिवहीके अंशभूत) दुर्वासा मुनिने एक क्षणमात्रमें हतश्री करदिया था ॥ ८१ ॥ फिर इन्होंने उन्हीं भूतनाथकी आराधना करके अपनी अमरावतीपुरी पायी है । जिस धर्मराजको तुम इस यज्ञका रक्षक कहते हो ॥ ८२ ॥ उसका बल तो राजा श्वेतकेतुके बांधनेकी वेलामें सभी लोगोंने समझलिया है । फिर धनद (कुबेर) जो है सो तो त्रिलोचनके मित्रही हैं, और यह अग्निभी उन्हींके नेत्र स्वरूप हैं ॥ ८३ ॥ रहे देवाचार्य बृहस्पति सो तो जब उनकी परमसुन्दरी पत्नी ताराको चन्द्रमाने धर्षण किया था तब रुद्रही उनकेभी पृष्ठपोषक हुए थे ॥ ८४ ॥ तुम्हारे ऋत्विक् वसिष्ठ इत्यादिभी उनको विशिष्टरूपसे जानते हैं कि, एकमात्र रुद्रदेवही सर्वत्र विराजमान हैं दूसरा कोईभी नहीं है ॥ ८५ ॥ इस बातको ये सब दूसरे ऋषिलोगभी जो तुम्हारे गौरवसे इस यज्ञमें लगे हैं भलीभाँतिसे समझते हैं, अस्तु यदि आप अबभी इस ब्राह्मणकी एक हितभरी बात सुनलेवें तो ॥ ८६ ॥ यज्ञोंके फलस्वामी भगवान् विश्वेश्वरको (अवश्य) बुलावें । क्योंकि उनके नहीं रहनेसे इस यज्ञका करना और नहीं करना दोनोंही समान हैं ॥ ८७ ॥ उस विश्वभरके एकमात्र साक्षी महादेवके वर्तमान रहनेसे आपका और इन सबलोगोंका मनोरथ फलीभूत होगा ॥ ८८ ॥ जैसे जडस्वरूप बीज आपसे आप अंकुरित नहीं होसकते, वैसेही समस्त जड कर्म ईश्वरके विना फलीभूत नहीं होते॥ ८९ ॥ जैसे अर्थहीन वचन धर्महीन शरीर, पति-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हीना नारीकी शोभा नहीं होती वैसेही शिवके बिना सब क्रियाभी व्यर्थ होजातीहै ॥९०॥ जैसे गंगासे हीन देश, पुत्रशून्य गृह, और दानरहित संपत्ति होती है तैसेही शिवहीन क्रियायेंभी हैं ॥ ९१ ॥ मंत्रहीन राज्य, वेदशून्य ब्राह्मण और नारीहीन भोगकी जो दशा होती है, शिवसे रहित सब कर्मोंकीभी वही दशा समझनी चाहिए ॥ ॥ ९२ ॥ कुशके विना सन्ध्या, तिलके विना तर्पण, और घृतके बिना हवन जैसे वृथा होताहै, महादेवके विना समस्त कार्यभी वैसेही निष्फल होजाते हैं॥९३॥

कवित्त—अर्थहीन बानी जैसी, पतिहीन नारी जैसी,
दानहीन संपदा रु, भूमि गंगहीनहै ।
धर्महीन देह जैसी, पुत्रहीन गेह जैसो,
मन्त्रिहीन राज जैसो, विप्र वेदहीनहै ।
नारिहीन भोग जैसो, दर्भहीन सन्ध्या जैसी,
तिलहीन तर्पन रु, होम घृतछीनहै ॥
दक्षजू ! सो देखलेहु आज परतक्ष तुम,
शम्भु महाराज विनु वृथा यज्ञ कीनाहै ॥ ९०—९३ ॥

महादेवकी महामायासे विमोहित होकर दक्ष होनेपरभी दक्ष प्रजापतिने दधीचिके कहेहुए उस वचनको किसी प्रकारसे ग्रहण नहीं किया ॥ ९४ ॥ वरन् औरभी क्रुद्ध होकर कहा कि, मेरे यज्ञकी तुझे कौनसी चिंता पडी है ? इस संसारमें यज्ञ इत्यादि जितने कर्म हैं, वे सब यथार्थरीतिसे करनेपर अवश्यही सिद्ध होजाते हैं, और अनुचित प्रकारसे किया जावे तो ईश्वरकाभी कोई काम नहीं सिद्ध होसकता ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ फिर अपनी कार्यासिद्धिके लिये तो सभी कोई ईश्वर है, रहा जो तूने यह कहा कि, " ईश्वर सब कर्मोंका साक्षी है " ॥ ९७ ॥ सो बात ठीक है, पर साक्षी तो अपने पाससे कहींभी अर्थ नहीं देता ॥ ९८ ॥ फिर जो तूने यह कहा कि " कर्म तो सब जडरूप हैं, वे सब ईश्वरके विना फलित नहीं होसकते " सो उस विषयमें मैं एक दृष्टान्त देताहूं (सुन) ॥ ९९ ॥ जैसे सब बीज जड होनेपरभी अपने कालके अनुसार अँखुवाते, फूलते और फलते हैं ॥ १०० ॥ तैसेही ईश्वरके विनाभी कालानुसार सब कर्म आपसे आप सफल होजाते हैं, अतएव उस महामंगल मूर्ति ईश्वरका यहांपर कौन प्रयोजन है ? ॥ १ ॥ दधीचिने कहा—यथार्थ रीतिसे करनेपर यद्यपि कभी कभी कार्य सिद्ध होताहै, पर ईश्वरके प्रतिकूल होनेसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२८५

सिद्ध कार्यभी तुरतही विनष्ट होजाताहै ॥ २ ॥ फिर अयथार्थ रीतिसेभी सम्पादित कर्म ईश्वरेच्छाके बलसे सिद्ध होजाताहै, यदि ऐसा न होता तो ये सब देवतालोग स्वयं समर्थ होनेपरभी उन्हींके आधीन कैसे रहते? ॥ ३ ॥ सामान्य साक्षियोंके समान ईश्वरभी सब लोगोंके सब कर्मोंका साक्षी नहीं होता, क्योंकि वह सन्देहरहित साक्षीही नहीं वरन् फलका प्रतिभू (जामिनदार) भी रहता है ॥ ४ ॥ वह सर्वकर्ता ईश्वर भूमि और जल इत्यादिके स्वरूपसे बीजके भीतर पैठ, स्वयं कालरूप बनकर अँखुओंको उगाता है ॥ ५ ॥ और जो तुमने यह कहा कि, " ईश्वरके विनाही कालानुसार कर्म आपही फलता है " सो सर्वकर्ता भगवान् महेश्वरही वह काल हैं ॥ ६ ॥ और एक बात जो तुमने यह कहा कि, " उस महा-मंगलमूर्ति ईश्वरका यहां कौन प्रयोजन है सो तो बहुतही ठीक है ॥ ७ ॥ क्यों कि जो लोग महान् हैं " किंवा मंगलमूर्ति हैं, अथवा जो लोग ईश्वर कहेजाते हैं उन सबका यहांपर तुम्हारे पासमें कौन प्रयोजन है? ॥ ८ ॥ इस प्रकारसे दधीचिमुनिके उत्तर प्रत्युत्तर करते रहनेसे विभवमदसे मत्त दक्षप्रजापति बडेही क्रुद्ध होगये ॥ ९ ॥ और इधर उधर देखकर पासवर्ती लोगोंसे कहने लगे कि, इस नीच बुद्धि अधम ब्राह्मणको इस उत्तम यज्ञके बीचसे अभी दूर हटाओ यह सुनतेही दधीचिने हँसकर कहा कि, ॥ ११० ॥ ११ ॥ अरे मूढ! तू मुझे क्या दूर-करेगा? वरन् इन सबोंके साथ तूही समस्त मंगलोंसे अवश्य दूर होरहा है ॥ १२ ॥ हे प्रजापते! त्रैलोक्यनायक महेश्वरके क्रोधका दण्ड अकालहीमें तेरे माथेपर गिरा-चाहता है ॥ १३ ॥ दधीचि मुनि यह कहकर उस यज्ञस्थानसे तुरत निकलगये, उनके निकलतेही दुर्वासा, च्यवन, आप (अगस्त्य) ॥ १४ ॥ उत्तंक, उपमन्यु, कपीक, उद्दालक, मांडव्य, वामदेव, गालव, गर्ग, गौतम, ॥ १५ ॥ औरभी जो लोग शिवतत्त्वके ज्ञाता थे, वे सब कोई दक्षके यज्ञसे चलेगये! दधीचि मुनिके चले-जानेपर (फिरसे) यज्ञकार्य आनन्दपूर्वक होनेलगा ॥ १६ ॥ जो ब्राह्मणलोग वहांपर रहगये उन लोगोंको दक्षप्रजापतिने दुगुनी दक्षिणा, और दूसरे लोगोंकोभी बहुत अधिक धनदान किया ॥ १७ ॥ उनने अपने जामाताओंकोभी असीम धन देकर सन्तुष्ट किया, एवं बडेभारी विभवविस्तारसे अपनी समस्त कन्याओंको अलं-कृत किया ॥ १८ ॥ इसी प्रकारसे समस्त ऋषिपत्नी, देवनारी और बहुतेरी पुरांगनाओंकेभी सम्मान करनेमें कोई त्रुटि नहीं की ॥ १९ ॥ दक्षने प्रसन्नचित्त

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ब्राह्मणोंके उच्च वेदध्वनिसे आकाशके शब्दगुणको स्पष्ट करदिखाया ॥ १२० ॥ उनके दीक्षाग्रहण करके आहुति देनेसे अग्निकोभी मंदाग्नि (अजीर्ण-रोग) होगया, और हविके सुगंधहीसे समस्त दिशायें भरउठीं ॥ २१ ॥ स्वाहाकार और वषट्कारके मारे देवतालोगभी तोंदइल होगये उनने पद पदपर सहस्रशः उत्तम अन्नोंकी ढेरके पर्वत घृतकुल्या, मधुकुल्या, दूधका बडाभारी सरोवर, दधिका महाह्रद, वस्त्रोंकी राशियां, और रत्नोंके शिखर बनाडाले उस यज्ञकी समस्तभूमि सोने चान्दीकी करडाली ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ उस यज्ञमें खोजनेपरभी भिक्षुक नहीं मिलते थे, उनके परिचारक लोगभी बडेही हृष्ट और पुष्ट होगये थे ॥ २५ ॥ मंगलगीतकी ध्वनिसे समग्र आकाश भरगया था, एवं अप्सरा, गन्धर्व, और विद्याधरगण बडेही आनंदित हुए और वसुधाभी सातिशय वर्द्धित हुई। इस प्रकारसे जब वह दक्षका महायज्ञ बडे बिभवबिस्तारसे होनेलगा तब नारदमुनि कैलासपर्वतपर गये ॥ २६ ॥ २७ ॥

दोहा—धूमधामसे यज्ञ वह, करनलगे जब दच्छ ।
जात भये नारद तबै, कैलासहिं अति स्वच्छ (करि पच्छ) ॥ १ ॥

इति श्रीस्कंदपुराणे चतुर्थे काशीखंडे उत्तरार्धे भाषायां सप्ताशीतितमोऽध्यायः ॥ ८७ ॥

अट्ठासिवां अध्याय ।

सतीदेवीके देहत्यागकी कथा ।

अगस्त्य बोले—हे षड्वदन ! ब्रह्मपुत्र नारद ऋषिने शिवलोकमें जाकर क्या किया ? उस कौतुकभरी कथाको आप वर्णन करें ॥ १ ॥ स्कन्दने कहा—हे कुम्भज मुने ! महात्मा नारदऋषिने उस घडी शिवलोक कैलासमें जाकर जो किया उसे मैं वर्णन करता हूं, श्रवण करो ॥ २ ॥ उस ऋषिवरने आकाशमार्गसे शिवधाम कैलासमें पहुँच, देखे और महादेवको देखकर प्रणाम किया, तदुपरांत शिवने आदरपूर्वक आसन दिखादिया ॥ ३ ॥ नारदभी उन लोगोंका परम क्रीडन देखतेहुए निर्दिष्ट आसनपर बैठगये। पर जब वे लोग पाँसा खेलतेही रहगये तनिकभी विरत नहीं हुए तब ॥ ४ ॥ नारदसे उत्सुकताके मारे नहीं रहागया अन्ततो गत्वा वे कहने लगे । नारद बोले हे देवदेव ! यह समग्र ब्रह्मांडमंडलही आपका खेलवाड है, आपके ब्रह्मांडरूप चौपडमें ये बारहों मासही तो गोटियोंके धरनेके घर हैं ॥ ५ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२८७

फिर ये सब शुक्ल और कृष्णा तिथियांही जो मासभरमें तीस होती हैं येही गोटियां हैं और दोनों अयनही पाँसे हैं ॥ ६ ॥ एवं सृष्टि और प्रलयनामक हारजीतके दोनों दाँवहैं, देवीकी जीतसे सृष्टि और महादेवके जयसे प्रलय होताहै ॥ ७ ॥ आप लोगोंके खेलका जो समय है, वही सृष्टिका पालन है, इस भाँतिसे यह समस्त ब्रह्मांडमण्डल आपही दोनों जनका खेलवाड है ॥ ८ ॥ न तो देवीही पतिको जीतेंगी, और न प्रभुही शक्तिको जीतेंगे पर मैं कुछ थोडीसी प्रार्थना करनेकी इच्छासे उपस्थित हुआहूं, हे मातः ! आप उसे सुनलेवें ॥ ९ ॥ महादेव सर्वज्ञनाथ होनेपरभी कुछ नहीं समझते, क्योंकि, ये तो मान अपमान दोनोंहीसे बहुत दूर रहाकरते हैं ॥ १० ॥ यद्यपि ये लीलात्मक होनेसे सगुण होजाते हैं पर विचारनेसे परम निर्गुण हैं, कारण यही है ये कर्मोंके करते रहनेपरभी उन कर्मोंसे कभी बाधित नहीं होते ॥ ११ ॥ ये स्वयं उदासीन होनेपरभी सब किसीकी मध्यस्थताको अवलम्बन करतेहैं, इसीसे ये महेश्वर शत्रु और मित्रपर सर्वत्रही समान दृष्टि रखते हैं ॥ १२ ॥ हे देवि ! आप इन भगवान्‌की शक्ति होनेके कारण सभी लोगोंकी परम मान्य भूमि हैं। आपहीने संतान बनकर दक्षकोभी मान दिया हैं ॥ १३ ॥ पर वास्तवमें समस्त जगत्‌की एकमात्र जननी आपही हैं, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है, ब्रह्मा विष्णु और इंद्र इत्यादि सभीलोग आपहीसे उत्पन्न होते हैं ॥ १४ ॥ पर महादेवकी मायासे विमोहित होनेहीसे आप अपनेको नहीं जानसकती हैं, इसी कारणसे मेरा चित्त बहुतही दुःखित रहताहै ॥ १५ ॥ आपके ऐसी औरभी जो पतिव्रता स्त्रियां हैं, वेभी पतिसेवाके चरणोंको छोडकर और दूसरा कुछभी नहीं जानतीं ॥ १६ ॥ अच्छा तो अब इस बातको रहने दीजिए, अब मैं प्रस्तुत विषयको निवेदन करताहूं, आज हरिद्वारके समीपहीमें नीलाचलपर एक अपूर्वघटना देख बडे आश्चर्य और विषादके साथ उत्कण्ठित होकर मैं कुछ कहनेहीके लिये यहांपर आपके पास उपस्थित हुआहूं ॥ १७ ॥ १८ ॥ आश्चर्यका कारण तो यही है कि, त्रैलोक्यभरमें जितने पुरुषमात्र हैं वे सबके सब अपनी अपनी पत्नियोंके सहित दक्षके यज्ञमण्डपमें अलंकृत, संमानित, आनन्दसे प्रसन्न मुख कमल, एवं और सब कामोंको भूलकर दक्षके उसी यज्ञमें लगेहुए दिखाई पडे ॥ १९ ॥ २० ॥ पर विषाद यह हुआ कि, जिससे समस्त जगत् उत्पन्न हुआ, फिर जिससे पालागया, और अन्तमें अवश्यही जिसमें लीन होजावेगा, ॥ २१ ॥ उसी भवभयहारी आपकी युगलमूर्तिका दर्शन वहांपर नहीं मिला, प्रायः आप लोगोंका

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अदर्शनही विषादजनक होताहै ॥ २२ ॥ पर वहां तो आपलोगोंका दर्शन हुआही नहीं, फिर जो हुआ सो कुछ औरही हुआ उसको मैं तो नहीं कहसकता पर हां उसके कहनेवाले वही दक्षही हैं ॥ २३ ॥ उन वचनोंको सुनकर ब्रह्मा तो पहिलेही वहांसे चलदिये, पीछेसे महर्षि दधीचिने उसे बहुतही धिक्कारा ॥ २४ ॥ और देवता और ऋषियोंके देखतेही प्रजापतिको शापभी दिया, मैंनेभी उस निन्दाभरी बातको सुनकर अपने कानोंको ढांप लिया, ॥ २५ ॥ दधीचिके संगसे दुर्वासा इत्यादि कितनेही विप्रगण महादेवकी निन्दा सुनतेही (वहांसे उठकर) चलेगये ॥ २६ ॥ इसके उपरांत हृष्ट पुष्ट लोगोंसे भराहुआ वह यज्ञ फिरसे होनेलगा यह सब मुझसे नहीं देखागया इसीसे मैं वहांसे यहांपर चलाआया ॥ २७ ॥ हे देवि ! वहांपर आपकी भगिनीलोग भी अपने अपने स्वामियोंके साथ जो आदर पारहीं हैं उसे देखकर मुझसे कुछ नहीं कहते बनता॥ २८॥ इन बातोंको सुनकर दक्षकुमारी सती देवी हाथसे पाँसोंको रखकर क्षणभर मनमें सोचती रहीं ॥ २९ ॥ इसके अनंतर दाक्षायणी देवीने कहा कि, मेरे तो महादेवही रक्षक हैं, बस इस बातको मनमें स्थिर करके ॥ ३० ॥ तुरत उठ खडी हुईं, और शंकरको प्रणामकर मस्तकपर अंजलि बांध देवी महादेवसे प्रार्थना करने लगीं ॥ ३१ ॥ देवीने कहा हे अंतकध्वंसक ! त्रिलोचन ! त्रिपुरारे ! आपका जय हो, हे सदाशिव ! आपहीके चरणारविन्द मेरे रक्षक हैं, अतएव मुझे आप आज्ञा दीजिए ॥ ३२ ॥ मैं प्रार्थना करती हूँ आप मुझे निषेध मत करें, मैं पिताके पास जायाचाहती हूं, यह कहकर महादेवके चरणकमलोंपर मस्तक रखदिया ॥ ३३ ॥ फिर तो महादेवने कहा हे भामिनि ! मृडानि ! उठो, हे सौभाग्यसुन्दरि ! भला यहां पर तुमको क्या घटाहुआ है, उसे तो कहो ॥ ३४॥ हे ईश्वरि ! लक्ष्मीको सौभाग्य, ब्रह्माणीको उत्तमकांति और इन्द्राणीको नित्य यौवन तुम्हीने दिया है ॥ ३५ ॥ हे देवि ! इस विशाल ऐश्वर्यके रक्षणमें तुम्हारेही संगसे मैं शक्तिमान् हुआ हूं, फिर अपनी लीलाके अनुसार रूपधारिणी शक्ति तुम्हींको पाकर मैं ॥ ३६ ॥ तुम्हारी लीलाके अनुसार इस संसारकी सृष्टि, पालन और संहार करता हूं, हे वामार्धधारिणि ! देवि ! तुम मुझको क्यों छोडना चाहती हो ॥ ३७ ॥ महादेवके इस वचनको सुनकर सतीदेवीने कहा कि, हे जीवितेश्वर ! मैं आपको छोडकर कहीं नहीं जातीहूं ॥ ३८ ॥ मेरा मन तो आपके चरणोंहीमें निश्चल होकर बैठा रहेगा पर मैंने कभी यज्ञ नहीं देखाहै, इस लिये पिताका यज्ञ देखनेको जायाचाहती

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२८९

हूं ॥ ३९ ॥ दाक्षायणीदेवीकी इस बातपर महादेवने कहा कि, यदि तुमको यज्ञ देखनेकी इच्छा है तो यहींपर यज्ञका उद्योग करदेताहूं ॥ ४० ॥ नहीं तो तुम मेरी शक्तिस्वरूपा हो अतएव दूसरीही यज्ञक्रिया बनाडालो, (जिसमें) दूसराही यज्ञ पुरुष रहे और दूसरेही दूसरे लोकपाल होवें ॥ ४१ ॥ योंही ऋत्विक्का काम करनेके लिये दूसरेही ऋषियोंकोभी अभी उत्पन्न करदो, इस भाँतिसे शिवके कथनको सुनकर भगवतीने फिर कहा कि, ॥ ४२ ॥ हे नाथ ! आज तो मैं पिताका यज्ञोत्सव देखनेके लिये अवश्य जाऊंगी, आप इस विषयमें बाधा न देकर आज्ञा देदीजिए ॥ ॥ ४३ ॥ हे नाथ ! नीचेकी ओर झुँकेहुए चित्त अथवा जलके वेगको कौन फेरदे सकता है ? अतएव आज आप मुझे मत रोकिए ॥ ४४ ॥ यह सुनकर भूतनाथ सर्वज्ञ भगवान्ने फिर कहा कि, हे देवि ! मुझे छोडकर मत जाओ, नहीं तो फिर मुझसे नहीं मिलसकोगी ॥ ४५ ॥ हे प्रिये ! आजका शनैश्चरवार, ज्येष्ठा नक्षत्र और नवमी तिथि तुमको पूर्वदिशामें यात्रा करनेको निषेध कररही है ॥ ४६ ॥ तिस परभी आज व्यतीपातयोग है, आजका वियोग होना अच्छा नहीं है, तुम धनिष्ठानक्षत्रके मध्यमें उत्पन्न हुई हो, इससे आज तुम्हारी पंचमी तारा होगई है ॥ ४७ ॥ सो हे देवि ! तुम मत जाओ, आजके जानेसे फिर मुझे नहीं देखपाओगी, (यह सुनकर) फिर भगवतीने कहा कि, यदि मेरा नाम सती है तो ॥ ४८ ॥ फिर दूसरे शरीरसेभी आपहीकी दासी बनूंगी, तब तो महादेवने फिर कहा (कि यदि ऐसाही है) तो फिर कौन स्त्री अथवा पुरुषके मनोवेगको फेरदेसकता है ? पर हे देवि ! इतना मैं सत्यही कहेदेता हूं कि फिर मुझसे साक्षात्कार नहीं हो सकेगा ॥ ४९ ॥ ५० ॥ हे देवि ! (और एक बात है कि) जो लोग अपने मानमर्यादारूप धनको बनाये रखना चाहते हैं, हे कांते ! विना बुलाये माता पिताके घरपरभी उनको नहीं जानाचाहिए ॥ ५१ ॥ जैसे नदी समुद्रमें जाकर फिर नहीं लौटती, तैसेही आजके जानेसे फिर तुम्हारा लौटना नहीं होवेगा ॥ ५२ ॥ देवीने कहा—(हे भगवन् !) यदि मैं आपके चरणारविन्दोंकी सच्ची अनुरागिनी होऊंगी, तो फिर दूसरे जन्ममेंभी अवश्य आपही मेरे स्वामी होवेंगे ॥ ५३ ॥ यह कहकर सतीदेवी क्रोधके मारे अन्धलोचना होकर वहांसे निकलगई, यात्रार्थीलोगोंको कार्य सिद्धिके लिये जो कुछ करना उचित है वहभी नहीं करसकीं ॥ ५४ ॥ उनने महादेवको प्रणाम अथवा प्रदक्षिणाभी नहीं की, इस कारणसे वह देवी चली तो गई पर फिर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नहीं लौटसकीं ॥ ५५ ॥ आजलों जो लोग महादेवको प्रणाम किंवा प्रदक्षिणा किये विना ही गमन करतेहैं वे सब व्यतीत दिनके समान फिर नहीं लौटते ॥५६॥ वह त्रैलोक्यनाथकी रानी पदचारिणी होनेसे उस पवित्र मार्गकोभी बडा कठोर समझने लगीं ॥ ५७ ॥ तब तो भगवान् शिव सती देवीको पैदलही जातीहुई देखकर चित्तमें बहुत व्यथित हुए, और गणोंको पुकारकर कहने लगे कि, ॥ ५८ ॥ तुम लोग ऐसा विमान लाओ जिसमें मन और पवनकी दोनों पहिया हों, दशसहस्र सिंह लगे हों, रत्नसानुकी ध्वजासे उच्छ्रित हो, ॥ ५९ ॥ महावातहीकी पताका हो, महत्तत्त्वके अक्ष (कमानी) से युक्त हो, नर्मदा अलकनन्दाओंका ईषा डंडा लगारहे ॥ ॥ ६० ॥ सूर्य और चन्द्र छत्र होवें, उत्तम वाराहीशक्ति मगरमुहांके स्थानपर हो, ॥ ६१ ॥ स्वयं गायत्रीही धूरा बने, तक्षक इत्यादि सर्पगण रज्जु हों, प्रणवही सारथि बने, और प्रणवध्वनिहीकी घर्घराहट रहे ॥ ६२ ॥ वेदांग रक्षक (सहीस) हों, एवं वरूथ (टप्) सातों छन्द बनें, इस प्रकार महादेवकी आज्ञानुसार गणलोग तुरत रथको ले आये ॥ ६३ ॥ फिर शिवके पार्षदोंने उस विमानपर सतीदेवीको बैठाकर उन दिव्य तेजोमयी महादेवीके पीछे पीछे गमन किया ॥ ६४ ॥ क्षणमात्रमें वह त्रिलोचनकी महिषी देवी दक्षके यज्ञमण्डपमें जापहुँचीं, और उसे देखतेही आकाशस्थ विमानपरसे बडे वेगके साथ उतरपडीं ॥ ६५ ॥ उस घडी रक्षकलोग चकित होकर उनको देखनेलगे पर वह सूधे यज्ञस्थानमें चलीगईं, (वहांपर) मांगलिक वेष बनाये किरीट पहिने माताको देखकर (आगे बढीं) ॥ ६६ ॥ (तो) नये भूषणोंसे सुसज्जित अपने अपने पतियोंके सहित अपनी सब भगिनियोंकोभी देखा, जो कि आश्चर्य, गर्व, आनन्द और भयके साथ (परस्पर) यह कहरहीं थीं कि ॥ ॥ ६७ ॥ " यह हरवल्लभा विना बुलायेही अकस्मात् विमानके द्वारा क्षणमात्रमें यहां कैसे चली आई " यही सोचतीहुई उनकी ओर ताक रहींथीं ॥ ६८ ॥ पर सतीदेवी उन सबोंसे कुछ बोलें (बतलाये) विना सीधे दक्षके पास चलीगईं तब तो उनके पिता और मातानेभी कहा कि, "तुम्हारे आजानेसे बहुत अच्छा हुआ" ॥ ६९ ॥ तब सतीने कहा कि, हे पितः ! यदि मेरा आना अच्छाहुआ, तो आपने मेरी सहोदराओंके ऐसा मुझेभी क्यों नहीं बुलाया ? ॥ ७० ॥ दक्षने कहा—अयि महाधन्ये ! कन्ये ! तू तो सर्वश्रेष्ठा, और सर्वमंगला है, इसमें तुम्हारा कुछभी दोष नहीं है, सर्वथा मेराही दोष है ॥ ७१ ॥ अपनीही अज्ञतासे मैंने तुमको वैसे पतिको देदिया

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२९१

जिस निरीश्वरको मैंने पहिले ईश्वरही समझरक्खा था ॥ ७२ ॥ मैं यदि उस माया-वीको जानलेता तो फिर तुमको उसके हाथमें क्यों देता ? मैं तो उसके शिवनामहीसे सन्तुष्ट होगया पर उसका अशिवरूप नहीं समझ सका था ॥ ७३ ॥ पितामह ब्रह्माने मुझसे बहुतबार उसे "शंकर" "शम्भु" "पशुपति" और "शिव" कहकर वर्णन किया था ॥ ७४ ॥ "और उन्हींने यहभी कहाथा कि ये श्रीकंठ, महेश, सर्वज्ञ, और वृषध्वज हैं, सो तुम इन्हीं धनुर्धारी महादेवको अपनी कन्याका दान करदो", ॥ ७५ ॥ हे वत्से ! बस मैंने उन ब्रह्माहीकी बातमें पडकर, तुमको उसे देदिया, पर यह नहीं समझसका कि वह विरूपाक्ष, वृषवाहन, विषभोजी ॥ ७६ ॥ श्मशानवासी, त्रिशूली, कपालमाली, सर्पधारी और जलाधारजटावाला है ॥ ७७ ॥ वह तो अपने कपारपर कलंकीको बैठाये, और समस्त शरीरको धूलिसे धूसरित किये रहता है, कभी तो पागलोंसा नंगा रहता कभी कौपीन पहिन लेता ॥ ७८ ॥ कभी चमडा ओढता, और कभी भीख मांगनेसे प्रसन्न होता है, उस तमोगुणी उग्र स्थाणुके भयंकर भूत-लोगही अनुचर हैं ॥ ७९ ॥ वह स्वयं तो रुद्र हैंही पर उसके संगी साथीभी सब रुद्रही हैं, वह महाकालमूर्ति मनुष्यकी हड्डियोंको धारण करता है और उसके जाति और गोत्रका कोई ठिकाना नहीं है ॥ ८० ॥ उसको पूर्णरीतिसे कोईभी नहीं जान-सकता और मैं तो (जानबूझकर) धोखा खागया, हे नयशालिनि तनये ! उसके विषयमें कहांतक कहूं, ॥ ८१ ॥ भस्म और मनुष्यकी खोपडियां तो उसके अलंकार हैं, और सर्पगण उसके भुजबंध हैं, एवं उसकी लंबी जटा बिथरी रहती हैं ॥८२॥ एक टुकडा चन्द्रमाको माथेमें मढकर सदैव डमरू बजानेमें वह व्यग्र बना और नाच-नेके लिए अफनाताहुआ समस्त अमंगल चेष्टाओंसे सुसज्जित रहता है ॥ ८३ ॥ हे भवानि ! भला वह हर इस मंगलमय यज्ञमें बुलानेके योग्य है ? हे सर्वमंगले ! इसी कारणसे मैंने तुमको यहां नहीं बुलाया॥ ८४ ॥तुम्हारे लिए उत्तम वस्त्र और रत्नोंके सुन्दर भूषण इत्यादि मैंने पहिलेहीसे धररक्खेहैं सो तुम आओ उनको देखकर ग्रहण करो ॥ ८५ ॥ इस मंगलकर्ममें जब कि इन्द्रादि समस्त देवतागण मांगलिकवेषसे सुशोभित हैं तो इनके बीचमें उस शूलधारी विरूपाक्षका बुलाना भला क्योंकर योग्य होता ? ॥ ८६ ॥ इस प्रकारसे वह परमसाध्वी सतीदेवी पिताका वचन सुनकर, बहुतही दुःखितचित्तसे कहने लगीं ॥ ८७ ॥ सती बोलीं—हे प्रभो ! आप जो यह सब कह गये इसको मैंने कुछभी नहीं सुना, पर प्रथमही जो दो बातें कानमें पडगई हैं उन्हींके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विषयमें मैं आपसे कहती हूं ॥ ८८ ॥ आपने जो यह कहा कि, " उसको कोई भलीभाँतिसे नहीं जानता, और मैं तो जानते बूझते रहने परभी ठगागया " सो बात बहुत ठीक है, क्योंकि उन सदाशिवको कौन जानसकता है ? ॥ ८९ ॥ और आप तो जैसे पहिले ठगेगये इस घडीभी धोखाही खारहे हैं, जो कि उनसे संबन्धकरके फिर ऐसा असंबद्ध प्रलाप (बेतुकी बकवाद) कररहे हैं ॥ ९० ॥ आपने जैसा कहा है यदि शंकरको वैसाही समझते थे कि उनको कोई नहीं जानता तो फिर मुझे उनको क्यों दान करदिया ? ॥ ९१ ॥ अथवा उनके संबन्धके विषयमें आपकी बुद्धि कोई कारण नहीं है, हे तात ! उसका कारण एकमात्र मेरे (पूर्वजन्मके) पुण्यका गौरवही है ॥ ९२ ॥ इस प्रकारसे बहुत कुछ कहनेके उपरांत वह बोलीं, कि मेरे इस शरीरके उत्पादक आपही हैं, और मैंनेभी इसी शरीरसे पतिकी निन्दा सुनी है ॥ ९३ ॥ सो इसका प्रायश्चित्त यही है कि, यह शरीरही त्यागदिया जावे, क्योंकि श्लाघनीयजन्मवाली उत्तमस्त्रीको तभीतक प्राण रखना चाहिए, जबतक प्राणनाथकी कोई निन्दा नहीं सुनलेवे ॥ ९४ ॥ ऐसा कहकर सती देवीने महादेवस्वरूप और क्रोधसे प्रज्वलित अग्निमें प्राणरोधकी विधिसे अपने शरीररूप समिधाको हवन करदिया ॥

चौपाई—" अस कहि जोग अगिनि तनु जारा ।
भयेउ सकल मख हाहाकारा " (तु० रामायण) ॥ ९५ ॥

तब तो इन्द्रादिक समग्र देवतालोग हतश्री होगये ! अग्नि पहिलेसा आहुति पानेपर प्रज्वलित नहीं होता था ॥ ९६ ॥ मन्त्रगण उसी घडी कुंठित सामर्थ्यवाले होगये, " अहो यह परम अनिष्टतर कहांसे आपहुँचा ॥ ९७ ॥ परस्पर यह कहतेहुए कोई कोई ब्राह्मणलोग चलदेनेकी इच्छा करनेलगे, इसीमें पर्वतोंको हिलादेनेवाली बडी भारी आँधी बहने लगी॥९८॥ जिसने क्षणभरमें उस यज्ञभूमीको छादिया, अकस्मात् बिजुरीके गिरनेसे भूडोल होनेलगा ॥९९॥ आकाशसे लुक गिरनेलगे, पिशाचोंने नाचना आरंभ किया ऊपर गगनमें गिद्धोंके झुंड सूर्यके नीचे भयंकर मंडल बांधकर चारोंओरसे तोपने लगे । वहांपर सियारिने फेंकरने लगीं, मेघलोग रुधिरके बून्दोंसे घोर वृष्टि करनेलगे ॥ १०० ॥ १ ॥ हृदयको हिलादेनेवाला भूमिके ठकरानेका शब्द होने लगा । दिव्य आयुधगण आपसे आप लडने लगे, ॥ २ ॥ हवनकी सामग्रीको सियार और कुक्कुरोंने दूषित करदिया, एवं उस यज्ञमण्डपमें चकोर और कौवा इत्यादि पक्षिगण घूमनेलगे ॥ ३ ॥ वह यज्ञभूमी क्षणमात्रमें श्मशानभूमिके समान होगई, जो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जहां पडा था वह सब वहींपर (पडा) रहगया ॥ ४ ॥ मानो वह सब चित्रलिखित होगया, और सभी वस्तु शोभाहीन होगयीं एवं विष्णु इत्यादि देवगणभी वहांपर सन्नाटेमें आगये ॥ ५ ॥ अपने सब लोगोंके साथ दक्षकाभी मुख कुम्हिलागया, (यहसब देखकर) ब्राह्मणलोग फिरसे यज्ञ आरम्भ करनेका उद्योग करने लगे ॥ १०६ ॥

दोहा—होत अनीश्वर कर्म नहिं, यह जानत सब कोय ।
पै मायाके फाँस परि, होनी होय सो होय ॥ १ ॥

इति श्रीस्कंदपुराणे चतुर्थे काशीखंडे उत्तरार्धे भाषायामष्टाशीतितमोऽध्यायः ॥८८॥

नवासिवां अध्याय ।

दक्षके यज्ञका विध्वंस और दक्षेश्वरकी उत्पत्ति ।

स्कन्द बोले—हे अगस्त्य ! नारदमुनि देवीके पहिलेही वहां पहुँचगये, और वहांके सब वृत्तान्तको महादेवसे कहनेके लिए फिर चलदिये ॥ १ ॥ नारदने महेश्वरको नन्दीके साथ तर्जनी हिलाकर कुछ बातचीत करतेहुए देखकर प्रणाम किया ॥ २ ॥ फिर नन्दीके दियेहुए आसनपर उदासीनभावसे बैठगये और क्षणमात्र कुछ नहीं बोले चाले ॥ ३ ॥ सर्वज्ञ शिवने आकारहीसे उनका वृत्तान्त समझलिया फिर मुनिसे कहा कि " यह मौनावलम्बन क्यों हुआ है ? " ॥ ४ ॥ उत्पन्न होना और मरजाना यह तो शरीरधारियोंकी स्थितिही है, और इसी प्रकारसे दिव्य शरीरेंभी कालानुसार गत होजाती हैं ॥ ५ ॥ जो कुछ दीखपडता है वह सब विनश्वर है, और जो वस्तु अस्वतन्त्र है वह तो विशेषरूपसे नश्वर होताही है, अतएव हे ब्रह्मन् ! इस विषयमें आश्चर्य क्या है ? भला काल किसे नहीं नाश करता (काल काहि नहिं खाय ? तु० रा०) ॥ ६ ॥ जो भावी नहीं है, उसका होनाभी कदापि संभव नहीं है, और जो नहीं होनेवाला है वह कभी होताभी नहीं इसलिए पंडितलोग इस विषयमें मोहित नहीं होते ।

दोहा—जो होनी सो होत है, अनहोनी नहिं होय ।
पंडित मोहित होत नहिं, अस बिचारि मन सोय ॥

(यही बात गीतामें यों कही है)

श्लोक—नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः ।
उभयोरपि दृष्टोन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः ॥ ७ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शम्भु भगवान्का यह कथन सुनकर उस मुनिपुंगवने कहा कि प्रभु जो कहते हैं वह तो ठीकही है ॥ ८ ॥ जो कुछ होनहार था वह तो होचुका इसमें कुछ सन्देह नहीं पर चित्तको मथडालनेवाली एक चिन्ता मुझे बहुतही क्लेश देरही है ॥ ९ ॥ वस्तुतः आपका न तो कुछ घटताही है न बढताही क्योंकि अव्यय और पूर्ण होनेके कारण आपके विषयमें हानि और वृद्धि कहांसे होसकती है ? ॥ १० ॥ अहो ! यह तुच्छ (बिचारा) संसार अनीश्वर होकर कहां जायगा ? क्योंकि आजसे अब कोईभी आपका पूजन नहीं करेगा ॥ ११ ॥ कारण यही कि, प्रजापति दक्षने यज्ञमें आपको नहीं बुलाया, फिर आज उसीके द्वारा आपको अपमानित देखकर देवता ऋषि और मनुष्यलोगभी ॥ १२ ॥ आपका अपमान करनेलगेंगे, तब जो अपमानितहीहुआ उसे ऐश्वर्यका कौन काम है ? संसारमें जो लोग अपमानित होजाते हैं, वे चाहे कालभयको जीतलेवें अथवा ऐश्वर्यसे सम्पन्न रहें पर क्या वे प्रतिष्ठाके पात्र होसकते हैं ? ॥ १३ ॥ जगत्में जो लोग पद पदपर अपमानित होकर अपने अभिमानरूप धनकी रक्षा नहीं करसकते वे बहुतबडी आयुष्य अथवा धनसम्पत्तिको लेकर क्या करेंगे ? ॥ ॥ १४ ॥ अचेतन अथवा अपमानित लोग जीते रहनेपरभी कीर्तन करनेके योग्य नहीं होते, वरन् स्त्रियोंमें अभिमान धनवती वह सतीदेवीही धन्य है ॥ १५ ॥ जिसने आपकी निन्दा सुनतेही अपने जीवनको तृणके समान त्यागदिया । यह सुनतेही भगवान् महाकाल, सम्पूर्णरीतिसे सती देवीका शरीरत्याग समझकर ॥ १६ ॥ (बोले कि) "हे मुने ! क्या सचमुच सती देवीने अपने जीवनको तृणवत् परित्याग करदिया अनंतर महाकालके भयसे नारदमुनिके मौन रहजानेपर ॥ १७ ॥ रुद्रदेव बडे कोपाग्निसे प्रज्वलित होकर घोर रुद्रमूर्ति होगये, तदनंतर उनके कोपानलसे बडा द्युतिशाली ॥ १८ ॥ प्रत्यक्ष पर्वताकार, कालमृत्युप्रकंपन, विशाल भुशुंडीधारी एक पुरुष प्रकट हो महादेवको प्रणाम करके कहने लगा ॥ १९ ॥ हे पितः ! आज्ञा दीजिए कि, आपके उत्तम दासोचित किस कार्यको मैं करूं, यदि आज्ञाहो तो इस ब्रह्माण्डको एकही कवरमें खाडालूं ॥ २० ॥ अथवा एकही चिल्लूमें सातों समुद्रोंको पीजाऊं ? हे नाथ ! यदि आपकी आज्ञा पाऊं तो भूतलको पातालमें वा पातालको भूतलके स्थानपर खेलवाडके साथ उठाकर धरदूं अथवा लोकपालोंके सहित देवराज इन्द्रकी चुन्दी पकड कर यहां धरलाऊं ? ॥ २१ ॥ ॥ २२ ॥ यदि वैकुंठनाथभी उसकी सहायता करनेके लिये आवें तो उनकोभी आपकी आज्ञानुसार कुंठितास्त्र करदूं ? ॥ २३ ॥ फिर ये सब रणदुर्बल तुच्छ दैत्य दानव

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

किस गिनतीमें हैं, यदि उन सबोंमें कोई प्रबल हुआ हो तो उसे मैं अभी मारडालूं ? ॥ २४ ॥ युद्धमें कालकोभी बांधला सकताहूं, किंवा मृत्युकीभी मृत्यु उपस्थित कर दे सकताहूं ? हे महेश्वर ! आपके प्रतापसे जब मैं समरांगणमें क्रुद्ध होजाऊंगा तो चराचरमें कोई भी स्थिर नहीं रहनेपावेगा मेरे लात मारदेनेसे यह भूमंडल ॥ २५ ॥ ॥ २६ ॥ रसातलके सहित केलाके पत्तेसा काँपने लगेगा ? इन भुजदण्डोंके टक्करोंसे मैं समस्त कुलाचलोंको चूरचूर कर दे सकताहूं ॥ २७ ॥ (बहुत कहांतक कहूं,) आप आज्ञा देवें तो मेरे लिए कुछभी असाध्य नहीं है, आपके चरणोंका बल पाकर आज अभीष्टकृत्यको सिद्धही समझिये ॥ २८ ॥ महेश्वर उसकी ऐसी प्रतिज्ञा सुन उसे कार्यसाधक समझ वरन् कृतकृत्यसा विचार कर बडेही हर्षसे कहने लगे ॥ २९ ॥ " हे भद्र ! तुम मेरे समस्तगणोंमें महावीरहो, अतएव तुम वीरभद्रनामसे बडे प्रसिद्ध होओ ॥ ३० ॥ हे शुभोदय ! पुत्र ! तुम शीघ्रही मेरा यह काम करो कि, दक्षके यज्ञका विध्वंस करडालो, और जो लोग उसके सहायक होकर तुम्हारा अपमान करने लगें तुमभी उन सबको तिरस्कृत करदेना, अभी चलेजाओ । " वीरभद्र इस प्रकारसे महादेवकी आज्ञाको माथेपर रखकर ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ उनकी प्रदक्षिणा करके बडे वेगसे चलदिये, तदनंतर शिवने अपने निःश्वासवायुसे उत्पादित सौकरोड दूसरे बडे गणोंको वीरभद्रकी अनुचरताके लिए उत्पन्न करदिया, वे सब गणलोग वीरभद्रको जातेहुए देखकर कोई तो उनके आगे चले ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ कोई पीछे हुए और कोई कोई पासमें चलनेलगे । उन सब सूर्याधिक तेजस्वी गणोंसे आकाश भरगया ॥३५॥ कितनेही गणोंने पर्वतोंकी चोटियां उखाडलीं, कितनोंने पहाडोंको जडसे लेकर चोटियोंतक हिलादिया ॥ ३६ ॥ कोई कोई बडे बडे वृक्षोंहीको उखाड कर लिएहुए यज्ञभूमीमें जा पहुँचे, वहांपर कोई तो यज्ञके खम्भोंको उखाडने लगा, कोई कुण्डोंहीको पाटने लगा, ॥ ३७ ॥ कोई क्रोधोन्मत्त होकर मंडपहीको उजाडने लगा, कोई कोई हाथमें त्रिशूल लेकर वेदियोंहीको खोदने लगा, दूसरे गण हविही खानेलगे अन्यलोग दही और घृतको पीनेलगे ॥ ३८ ॥ कोई कोई पर्वताकार अन्नोंकी ढेरोंहीको छितराने लगे, कोई पायसही चाभनेलगे, कोई दूधही पीनेलगे ॥ ३९ ॥ किसी किसीने पकवानोंको खा खाकर यज्ञके पात्रोंहीको फोडना आरंभ करदिया; किसी किसी भुजदंडशालियोंने स्रुवा और दंड इत्यादिको तोरडाला ॥ ४० ॥ कोई तो शकटोंके टुकडे टुकडे करने लगे, कोई पशुओंको निगलनेलगे, कोई अग्निके समान तेजस्वी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

गण अग्निहीको बुझाने लगे ॥ ४१ ॥ दूसरे स्वयं हर्षके साथ वहांके कपडोंको पहिरने लगे, कोई कोई पहिलेके बनेहुए रत्नोंके पर्वतोंहीको लूटने लगे ॥ ४२ ॥ एकने भगदेवको ताकतेहुए देखकर उसकी आंखहीको निकालालिया, दूसरेने कोपित होकर पूषादेवके दांतोंहीको उखाड दिया ॥ ४३ ॥ किसीने यज्ञदेवको मृगका रूपधर कर भागतेहुए देखलिया, उसने चक्रके द्वारा दूरहीसे उसका शिर काट गिराया ॥ ४४ ॥ एकने सरस्वतीदेवीको जातीहुई देखकर उसे नकटी बनादिया दूसरेने कोपकरके अदितिके दोनों ओठोंको काटलिया ॥ ४५ ॥ अपर किसीगणने अर्यमादेवके दोनों हाथोंको उखाड लिया, एकने बलपूर्वक अग्निदेवकी जीभही निकाल बाहर करदी ॥ ४६ ॥ दूसरे प्रतापी पारिषदने वायुके अंडकोशोंको काटडाला, एकने यमराजको बांधकर पूछा कि, "धर्म क्याहै ? ॥ ४७ ॥ जिस धर्ममें प्रथम महेश्वरकी पूजा नहीं होती वह कौन धर्म है" किसी एकने नैर्ऋतकी चुन्दी पकड बारंबार हिलाकर॥४८॥ कहा कि "तूने अनीश्वर हवि खाया है" यह कहकर लातोंसे मार गिराया। दूसरेने कुबेरका पैर पकडकर ऐसा घुमाया कि ॥ ४९ ॥ वह जो बहुतसी यज्ञकी आहुतियां खागयेथे उसे उगिलवा दिया। लोकपालोंकी एकही पंक्तिमें बैठेहुए ग्यारहों रुद्रोंको प्रमथोंने रुद्रका नाम पडजानेसे (विना कुछ कहे सुने) अवज्ञापूर्वक छोडदिया। दूसरे एक गणने बलपूर्वक वरुणका पेट ऐसा दबाया कि शिवभागहीन दक्षकी दीहुई हविको उनसे वमन कराकर तभी छोडा। महामति इन्द्र मयूरका शरीर धर पर्वतपर उडजाकर छिपेहुए वहांका कौतुक देखने लगे। प्रमथोंने ब्राह्मणोंको प्रणाम करके कहा कि, चले जाओ, चले जाओ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ फिर और सबभी भिक्षुकोंको गणलोगोंने भगादिया, इस प्रकारसे प्रथमही आये हुए प्रमथलोगोंके यज्ञ मथडालनेपर प्रमथसेनावृत वीरभद्र स्वतः वहांपर प्राप्त हुए ॥५४॥ अनन्तर वीरभद्रने पहिलेही उन सब प्रमथलोगोंकी करतूतसे उस यज्ञस्थानको श्मशानभूमिकी नाईं बडी शोचनीय दशाको प्राप्त हुई देखकर यह कहा कि, ॥ ५५ ॥ हे प्रमथगण ! देखो, ईश्वरसे पराङ्मुख दुराचारी लोगोंके प्रारम्भ कियेहुए कर्मोंकी यही अवस्था होतीहै, नहीं तो महेश्वरमें द्वेष कहां है ? ॥ ५६ ॥ जो लोग धर्मकार्यमें प्रवृत्त होनेपरभी सब कर्मोंके एकमात्र साक्षिस्वरूप महादेवसे द्वेष करतेहैं वेही सब इस दशाको प्राप्त होतेहैं ॥ ५७ ॥ प्रमथगण ! वह दुराचारी दक्ष कहांहै ? तथा वे सब यज्ञभोजी देवतागण कहां हैं ? तुमलोग अभी जाओ, और उन सबोंको यहां

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२९७

पकडलाओ ॥ ५८ ॥ इस भाँतिसे वीरभद्रकी आज्ञापाकर प्रमथगण शीघ्रतापूर्वक ज्योंही आगे बढे, त्योंही क्रोधान्वित गदाधर देखपडे ॥५९॥ उनने उन सब महाबली और बडे पराक्रमी प्रमथोंको भारी आँधीके आगे सूखेपत्तोंकी नाईं उधिरादिया ॥ ॥ ६० ॥ इसके उपरान्त विष्णुके भयसे उन सब प्रमथोंके भागजानेपर वीरभद्र प्रलयानलके समान बडेही क्रुद्ध हुए ॥ ६१ ॥ आगे बढतेही उनने विष्णुको देखा जो महाबली दैत्योंके जीतनेवाले, चक्र—गदा—खड्ग—और शार्ङ्गधनुर्धारी चतुर्भुज युक्त अपने असंख्यगणोंसे परिसेवित थे। तब तो वीरभद्रने दैत्यसूदन विष्णुको देखकर उनसे कहा ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ " इस महायज्ञके प्रवर्तक यज्ञपुरुष तुम्हीं हो, और तुम्हीं अपने वीर्यके बलसे त्र्यम्बकके वैरी दक्षके रक्षकहो ॥ ६४ ॥ सो तुम दक्षको लाकर देदो, नहीं तो मेरे साथ युद्धकरो, और जो दक्षकोभी नहीं देना हो तो प्रयत्नपूर्वक उसकी रक्षाही करो ॥ ६५ ॥ प्रायः समस्तशिवभक्तोंके मध्यमें तुम्हीं अग्रगण्य कहेजातेहो, तुम्हींने पूर्वकालमें शिवके सहस्रकमलके पूजनमें एककी न्यूनता होजानेपर अपना नेत्रकमल (निकालकर) चढादिया था ॥ ६६ ॥ उसीपर संतुष्ट होकर शंकरनेभी तुमको वह सुदर्शनचक्र दिया, जिसकी साहायता पाकर तुम संग्राममें दानवाधिपतियोंको भी जीत लेतेहो" ॥६७॥ इस प्रकारसे वीरभद्रके गर्वित वाक्योंको सुनकर विष्णु वीरभद्रके बल समझनेकी इच्छासे उनसे कहने लगे ॥ ६८ ॥ "तुम तो महादेवके पुत्रस्थानापन्न हो, फिर इन सब गणोंके प्रधान नायक हो; तिसपर राजाका आदेश पाकर औरभी बहुत बडे बलवान् होगये हो,—॥ ६९ ॥ अस्तु तुम जो चाहे सो हो, पर मैं तो दक्षकी रक्षा करनेमें दृढबुद्धि होचुकाहूं, अब तुम्हारी सामर्थ्य देखताहूं कि तुम कैसे दक्षको छीन लेजातेहो ॥ ७० ॥ शार्ङ्गधन्वा विष्णुदेवके इस कहनेपर वीरभद्रने प्रमथगणको केवल दृष्टिभंगीहीसे युद्धमें प्रेरित किया ॥ ७१ ॥ फिरतो रणभूमीमें प्रमथगणोंके ललकारनेपर विष्णुके गणलोग मुखमें तिनगा थामकर पशुओंकी दशाको प्राप्त होनेलगे ॥ ७२ ॥ तब तो गरुडध्वज समरांगणमें क्रुद्ध होकर एक एक प्रमथके हृदयमें सहस्र सहस्र बाणोंको मारनेलगे ॥ ७३ ॥ जिससे वे सब प्रमथगण युद्धस्थलमें छातीके फटने और रुधिरके बहचलनेसे वसंतऋतुमें परासके फूलोंकी शोभाको प्राप्त होनेलगे ॥ ७४ ॥ उस घडी प्रमथगण, मदस्रावी मातंगोंकी नाईं, अथवा गेरु इत्यादि धातुओंके रंगसे मिलेहुए पर्वतोंके झरनेकी नाईं शोभायमान होरहेथे ॥ ७५ ॥ तदनंतर गणप्रधान वीरभद्रने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हँसकर वैकुण्ठनायकसे कहा कि हे शार्ङ्गधन्वन् ! मैं तुमको (अच्छीरीतिसे) जानताहूं, तुम समरांगणमें पंडितहो ॥ ७६ ॥ पर तुम दैत्य दानवेन्द्रोंहीके साथ लड़नेवालेहो, स्यात् शिवके पारिषदोंसे कभी नहीं लड़ेहोगे ! यह कहकर वीरभद्रने हाथमें भुशुंडी को उठालिया ॥ ७७ ॥ उधर गदाधरनेभी दैत्येन्द्ररूप पर्वत को धूर करदेनेवाली अपनी गदाको तुरत हाथमें लेलिया, तब तो वीरभद्रने उस भुशुंडीसे गदाधरके ऊपर चोट चलायी ॥ ७८ ॥ वह भुशुंडी विष्णुके अंगमें लगते ही सैकड़ों टुकड़े होगई, गदाधरनेभी प्रतापशाली वीरभद्रको कौमोदकी गदासे ॥ ७९ ॥ बड़े वेगके साथ मारा, पर वीरभद्रको उसकी कुछभी पीड़ा नहीं जान पड़ी, तब फिर वीरभद्रनेभी खट्वांग लेकर गदाधर विष्णुके ॥ ८० ॥ बायें भुजदंडपर ऐसा मारा कि उनकी गदाको भूमिपर गिरादिया, फिरतो मधुसूदननेभी कुपित होकर चक्रके द्वारा वीरभद्रपर आघात किया ॥ ८१ ॥ अनंतर जब वह चक्र चलातो उनको देखतेही शंकरको स्मरण करने लगा, फिर शंकरके स्मरण करतेही वह चक्र वक्र (टेढ़ा) होकर वीरभद्रके कंठमें लगतेही पूर्णरीतिसे सुदर्शन होगया ॥ ८२ ॥ वह गणनायक उस चक्रके गलेमें अटक रहनेसे समरमें वीरलक्ष्मीके द्वारा विजयमाला पहिनायेजानेके ऐसा बहुतही शोभायमान होनेलगा ॥ ८३ ॥ अब विष्णुने अपने सुदर्शनचक्रको उसके कंठका भूषण हुआ देख कुछ चकितसे हो मुसकुराकर नन्दकनामक अपने खड्ग को उठालिया॥ ८४ ॥तब तो वीरभद्रने आकाशस्थ सिद्धलोगोंके देखतेही देखते मधूसूदनके खड्ग युक्त उठेहुए हाथको हुंकारसे स्तंभित करदिया ॥८५॥और बडा उज्ज्वल त्रिशूल लेकर बडे वेगसे उनकी ओर दौडकर ज्योंही चाहा कि विष्णुको मारें त्योंही आकाशवाणीने ॥ ८६ ॥ उन गणनायकको निवारण करदिया कि " ऐसा साहस मत करो " । तत्पश्चात् प्रमथप्रधान वीरभद्र तुरत विष्णुको वहींपर छोड ॥ ८७ ॥ सिंहनाद करतेहुए दक्षके पास जापहुँचे, (और कहने लगे कि,) अरे ईश्वरनिन्दक ! दक्ष ! तुझे धिक्कारहै !! जिसके पास ऐसी संपत्तिहो, देवतालोग जहांपर सहायकहों, और जो स्वयं सब कामोंमें दक्षहो, वह ईश्वरहीन कर्म क्यों करनेलगा ॥ ॥ ८८ ॥ जिस अपवित्र मुखसे तुमने शिवकी निन्दा कीहै, मैं चारोंओरसे थप्पड लगा लगाकर उसी तेरे मुखको चकचूर करूंगा ॥ ८९ ॥ बस इतना कहनेके उपरांत उस वीरने शिवनिन्दक दक्षके मुखको सैकडों थप्पड लगाकर चूरचूर कर (धूरमें) गिरा दिया ॥ ९० ॥ फिर उस महोत्सवमें संमिलित अदिति प्रभृति

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२९९

स्त्रियोंकेभी कर्ण इत्यादि अंग प्रत्यंगोंको तोडदिया ॥ ९१ ॥ उस शिवके प्यारे पार्षदने मारे क्रोधके किसी किसीकी चोंटी उखाडली किसीका हाथ काटदिया, किसीके स्तनोंहीको उडादिया ॥ ९२ ॥ दूसरीकी नाकही निकालदी एवं किसी किसीकी अंगुरियांही पृथक् करदीं ॥ ९३ ॥ उन्होंने रोषान्वित होकर जिन जिन लोगोंने महादेवकी निन्दाकीथी उनकी जीभ काट ली और जिन जिन लोगोंने निन्दा सुनी थी उनके कान दो टुकडे करदिये ॥

" संत शंभु श्रीपति अपवादा । सुनिय जहाँ तहँ असि मरजादा ॥
काटिय तासु जो जीभ बसाई । श्रवन मूँदि न तु चलिय पराई" ॥(तु०रा०)॥९४॥

जिन लोगोंने देवदेवके न होनेपरभी महाहवि लेलियाथा वीरभद्रने उन लोगोंको भी उसी यज्ञके खंभेपर दृढ फाँसी लगाकर नीचे मुँह लटका दिया ॥ ९५ ॥ चन्द्र, अर्क, भृगु, और कश्यप इत्यादिको तो उनने बहुतही अपमानित किया ॥ ९६ ॥ क्योंकि ये सब उसी दुर्बुद्धि दक्षके जामाताथे, और दक्षभी महेश्वरको त्यागकर इन लोगोंको उनकी अपेक्षा अधिक देखतेथे ॥ ९७ ॥ वे सब यज्ञके कुण्ड, वे यूप वे खम्भे, वह मण्डप, वे सब बेदियां, वे पात्र, वे अनेकभाँतिके हव्य ॥ ९८ ॥ वे सब यज्ञकी सामग्रियां, वे यज्ञके प्रवर्तक लोग, वे रक्षपालगण, और वे सब मंत्र—अनायासही सबके सब विनष्ट होगये ॥ ९९ ॥ जैसे परवंचना करनेसे थोडेही समयमें उपार्जित ऐश्वर्य नष्ट होजाताहै, वैसेही दक्ष(यज्ञ)की संपत्तिभी शिवहीन होनेसे विनष्ट होगई॥ १०० ॥ गणोंके सहित वीरभद्र जब उस महायज्ञको इस दशामें पहुँचा चुके तब ब्रह्मा विधिके लोप होजानेका कारण दिखाकर, महादेवको वहां लिवालाये, जहांपर शिवहीन वह यज्ञ उस दशाको प्राप्त हुआथा, अनंतर महादेवके वहां आजानेपर वीरभद्र बहुतही लज्जितहुए ॥ १ ॥ २ ॥ उनने देवदेवको केवल प्रणामही भर किया, पर कुछ कहा नहीं, किन्तु भगवान् स्वयं सब समझगये, फिर ब्रह्माने शिवको प्रसन्न करके कहा कि, ॥ ३ ॥ हे दयामय शंकर ! इस अपराधी दक्षपरभी प्रसाद करना चाहिए, और ये सबलोग जैसे पूर्वमें थे वैसेही फिर करदिये जावें ॥ ४ ॥ जिसमें वैदिक विधि फिरसे प्रचलित होवे, हे शंभो ! वही आज्ञा दीजिए, क्योंकि ईश्वरके सहित रहनेसे तो कर्म सिद्ध होही जाताहै ॥ ५ ॥ पर हे परमेश्वर ! ईश्वरहीन सब क्रियाओंमें ऐसेही कैसे सहस्रों भाँतिके विघ्न समूह हुआ करतेहैं ॥ ६ ॥ यदि विचारकी दृष्टिसे देखा जावे तो यह दीन (बिचारा) दक्ष आपका बडा भारी भक्तहै, क्योंकि यह अनीश्वर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कर्मको करके दूसरे लोगोंके लिए दृष्टांत बनगया ॥ ७ ॥ औरभी जो कोई महेश्व-
रको त्यागकर कुछ कर्म करेगा, उसके कर्मकी सिद्धिभी दक्षहीकी नाईं होगी ॥ ८ ॥
अतएव इस दक्षकी ऐसी दशाको सुनकर अब कोईभी कहींपर शिवके विना किसी
कर्मको नहीं करेगा ॥ ९ ॥ भगवान् महेश्वरने ब्रह्माकी बातसुन, मुसकुराकर वीर-
भद्रको आज्ञा दी कि, इन सबको पूर्वहीसा बनादो ॥ ११० ॥ वीरभद्रनेभी शिवकी
आज्ञानुसार दक्षका मुख छोडकर और सबको पहिलेसा बनादिया ॥ ११ ॥ जो
लोग ईश्वरकी निन्दा करतेहैं, निस्सन्देह गूँगे पशुहैं, अतएव गणाध्यक्ष वीरभद्रने
दक्षको मेषमुख बनादिया ॥ १२ ॥ उधर भगवान् शिवभी गार्हस्थ्य धर्मके नष्ट होजानेसे
पारिषदोंके साथ ब्रह्मासे पूछ (बिदा ले) कर तपस्या करनेके लिये हिमालयपर
वानप्रस्थार्थ चलेगये ॥ १३ ॥ किसी पुरुषको आश्रमहीन होकर थोडाभी समय
व्यर्थ नहीं बिताना चाहिए; अतएव सदैव आश्रमीही होकर रहना भलाहै ॥ १४ ॥
इसी कारणसे सब तपस्याओंके फलदाता स्वयं महेश्वरभी पारिषदोंके सहित (जाकर)
तपस्या करने लगे, तब ब्रह्माने दक्षको यह सिखावन दिया कि ॥ १५ ॥ यदि शिवकी
निन्दासे उत्पन्न अत्यंत दुस्त्यज पापपंकको धोडालनेकी इच्छा हो तो वाराणसीपुरीमें
जाओ ॥ १६ ॥ महापातक पुंजकी विनाशिनी पवित्र काशीपुरीमें पहुँचकर तुम वहां
लिंगकी स्थापनाकरो, इसीसे शिव प्रसन्न होंगे ॥ १७ ॥ महेश्वरके संतुष्ट होनेपर यह
चराचर संसार संतुष्टहो जावेगा, और काशीपुरीको छोड अन्यत्र पर तुम्हारा पाप नहीं
छूटसकता ॥ १८ ॥ आचार्योंने ब्रह्महत्या इत्यादि पापोंका तो प्रायश्चित्त कहाहै,
पर शिव निन्दाका कोई प्रायश्चित्त नहीं होता अतएव इस पापकी मुक्तिभूमी केवल
काशीहीहै ॥ १९ ॥ जिन पुण्यात्माओंने काशीमें शिवलिंगकी प्रतिष्ठाकीहै, वे सब
धर्मोंको करचुके और वे ही लोग पुरुषार्थी हैं ॥ २० ॥ दक्ष ब्रह्माके इस कथनको
सुन तुरत अविमुक्त महाक्षेत्रमें पहुँचकर घोर तपस्या करने लगे ॥ २१ ॥ वे विधि
पूर्वक लिंगकी स्थापनाकर लिंगहीकी आराधनामें तत्पर होगये, और पृथिवीतलमें
लिंगसे भिन्न दूसरा कुछभी नहीं जानते थे ॥ २२ ॥ सुदक्ष दक्ष प्रजापति रात्रि
दिन महेश्वरहीकी स्तुति, पूजा, प्रणाम, ध्यान, और दर्शन करने लगे ॥ २३ ॥
एकाग्रचित्तसे ईश्वरके लिंगका ध्यान करतेहुए दक्षके द्वादश सहस्र वर्ष व्यतीत
होगये ॥ २४ ॥ जबतक सतीदेवी हिमाचलकी पतिव्रता पत्नी मेनाके गर्भसे प्रकट
हो, उमारूपधर, कठोर तपस्याकर महादेवको अपना पति नहीं बनाचुकी ॥ २५ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

३०१

तबतक दक्षभी तपस्यामें दृढ़ रहकर लिंगहीकी पूजाकरते रहे, तिसके उपरांत गिरीन्द्रनन्दिनी स्वामीके साथ काशीमें आकर ॥ २६ ॥ दक्षको एकाग्रचित्तसे शिव लिंगार्चनमें तत्पर देख महादेवसे प्रार्थना करने लगी कि, विभो ! यह प्रजापति तो तपसे क्षीण होगयाहै ॥ २७ ॥ हे दयासिन्धो ! (अब आप) प्रसन्न होकर इसको वरदान कीजिए, पार्वतीके ऐसा कहनेपर भगवान् शंभुने दक्षसे कहा ॥ २८ ॥ हे महाभाग ! वरमांगो, मैं तुमको मनोवांछित (वर) दूंगा, तबतो दक्ष शिवके इस कथनपर उनको वारंवार प्रणामकर ॥ २९ ॥ एवं नानाप्रकारके स्तोत्रोंसे स्तुतिगान करके शंकरको प्रसन्नदेख कहने लगे, हे देवदेवेश ! यदि मुझे वरदेनाहै तो यही दीजिए कि ॥ १३० ॥ आपके चरणयुगलमें मेरी निर्द्वन्द्व भक्ति बनीरहे, और हे नाथ, यहांपर जो मेरास्थापित आपका यह महालिंगहै, इसमें आप सदैव वासकरें ॥ ३१ ॥ हे कृपालो ! देवदेव ! मैंने जो कुछ अपराध कियाहै उसे आप क्षमाकरें, बस यही वरदान दीजे, और दूसरे उत्तम वरोंका कोई प्रयोजन नहींहै ॥ ३२ ॥ यह सुनकर भगवान् महेश्वर बहुतही प्रसन्नहो कहने लगे कि, तुमने जो कुछ कहा, वह वैसेही होगा कभी अन्यथा नहीं होने पावेगा ॥ ३३ ॥ हे प्रजापते ! अब तुमको जो दूसरा वर देताहूं, उसे सुनो, तुम्हारे स्थापित इस लिंगका दक्षेश्वर नाम पडेगा ॥ ३४ ॥ और इसके सेवन करनेसे मैं लोगोंके सहस्रों अपराधोंको निस्सन्देह क्षमा करूंगा इसलिये सब लोगोंको इसकी पूजा करनी चाहिए ॥ ३५ ॥ और तुम इस लिंगके पूजन करनेसे सब लोगोंके माननीय होगे, और दो परार्ध वर्षके अन्तमें मोक्षको प्राप्त होगे ॥ ३६ ॥ यह कहकर देवदेव उसी लिंगमें लीन होगये, और दक्षभी मनोरथ प्राप्त होजानेसे अपने गृहको चले गये ॥ ३७ ॥ स्कन्दने कहा—हे अगस्त्य ! यह तो दक्षेश्वरकी उत्पत्ति मैंने कही, जिसके सुननेसे प्राणी सैकडों अपराधोंसे छूट जाताहै ॥ ३८ ॥ दक्षेश्वरकी उत्पत्तिसे युक्त इस पवित्र आख्यानके श्रवण करनेसे मनुष्य अपराधोंका घर होनेपर भी पापपंकसे लिप्त नहीं होने पाता ॥ १३९ ॥

दोहा—चाल मेषमुख दक्षकी, धरि बजाव जो गाल ।
यहू काल शिव करततेहि, सब प्रकार सो--भाल ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्धे भाषायां नवाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८९ ॥

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Digitized by eGangotri

नब्बेवां अध्याय ।

पार्वतीश्वर लिंगकी कथा ।

अगस्त्य मुनि बोले—हे पार्वती हृदयानन्दन ! इसके पूर्वहीमें जो आपने पाप नाशक पार्वतीश्वर लिंगको कहाथा उसके प्रकट होनेका वृत्तांत कहिए॥ १ ॥ स्कन्दने कहा—अगस्त्यमुने ! श्रवण करो, जब कि हिमाचलकी पतिव्रता पत्नी मेनाने गिरीन्द्र किशोरीसे कहा कि पुत्रि ! इन जामाता महेश्वरका ॥ २ ॥ देश कहां है ? वस्ती किस स्थानमें है ? अथवा इनके बन्धु-बान्धवभी कोईहैं ? यह सब कुछ जानतीहो ? जान पडताहै, इनका घर इत्यादि कहीं नहीं है, और न इनका कोई स्वजनहीहै ॥ ३ ॥ इस प्रकारसे माताका वचन सुनकर गिरींद्रनन्दिनी बहुतही लज्जित हुई, फिर अवसर पाकर पार्वतीने प्रणाम करके महादेवसे निवेदन किया (कि) ॥ ४ ॥ कान्त ! आजतो मैं अवश्यही सासके घर जाऊंगी, क्योंकि यहांका रहना अच्छानहींहै अतएव हे नाथ ! मुझे अब आप अपने घरपर ले चलिए ॥ ५ ॥ तत्त्ववेत्ता भगवान् गिरीश शैलपुत्री देवीकी यह बात सुन, हिमालयको त्यागकर, अपने आनन्दवनमें चले आये ॥ ६ ॥ पार्वतीदेवी परमानन्दके कारण आनन्दवनमें पहुँच, पिताके घरको भूलकर आनंदरूपिणी होगई ॥ ७ ॥ अनंतर एकदिन गौरीने गिरीशसे यह पूछा कि, "इस क्षेत्रमें अविच्छिन्न आनंदसमूह क्योंकर बनारहताहै? इसका कारण बताइये" ॥ ८ ॥ पार्वतीके इस कथनपर पिनाकपाणि शिवने उत्तर दिया कि, हे देवि ! पंचक्रोश परिमाण इस मुक्तिमंदिरक्षेत्रके भीतर ॥ ९ ॥ लिंगसे रहित एक तिलमात्रभी स्थान कहींपर सूना नहीं है, । हे देवि ! अन्यत्र कहींभी एकएक लिंगके चारोंओर एकएक कोसकी भूमी आनन्दका कारण होजातीहै पर इस परमानन्द जनक आनन्दवनमें तो ॥ १० ॥ ॥ ११ ॥ परमानन्दस्वरूप अनेकानेक लिंग विराजमान हैं चौदहों भुवनोंमें जितने ही पुण्यात्मा लोग रहतेहैं ॥ १२ ॥ उन सबने अपने अपने नामसे यहांपर लिंगकी स्थापना करके कृतार्थता प्राप्त कीहै । हे महादेवि ! जिस किसीने यहांपर मेरे लिंगकी प्रतिष्ठा करदीहै ॥ १३ ॥ विशेषज्ञ शेषभी उसके कल्याणकी संख्याको (यथार्थ विधिसे) नहीं जानसकते ॥ १४ ॥ हे गिरीन्द्रजे ! बहुतेरे लिंगोंके वर्तमान रहनेही यह उत्तम क्षेत्र निरंतर परमानन्दका कारण होगयाहै ॥ १५ ॥ यह सुनकर पार्वती देवीने फिर शंकरके चरणोंको प्रणाम करके कहा कि, हे महादेव ! मुझेभी (यहांपर लिंग स्थापनाकी आज्ञा दीजिए ॥ १६ ॥ क्योंकि जो पतिव्रता नारी स्वामीकी आज्ञा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

३०३

होकर कोई मंगलकार्य करतीहै, तो उसके मंगल कार्यकी हानि प्रलयमेंभी कभी नहीं होने पाती ॥ १७ ॥ इस प्रकारसे भगवान् महादेवको प्रसन्नकर, और उनकी आज्ञा पाकर, पार्वतीदेवीने महादेवनामक लिंगके समीपहीमें लिंगकी स्थापनाकी ॥ १८ ॥ उस लिंगके दर्शन करनेसे लोगोंका ब्रह्महत्यादिकभी पातक निस्सन्देह बिलायजाताहै, और फिर देहबंधनभी नहीं होता ॥ १९ ॥ हे मुनिवर ! देवदेवने भक्तोंकी हितकामनासे उस लिंगके संबन्धमें जो वरदान कियाहै, उसेभी श्रवण करलो ॥ २० ॥ जो कोई काशीमें पार्वतीश्वर लिंगकी पूजा करेगा शरीरान्त होनेके उपरान्त वह काशीहीमें लिंग स्वरूप होजावेगा॥ २१ ॥एवं जब वह काशीका लिंग बनजायगा तो मुझहीमें प्रवेश कर जावेगा। चैत्रमासकी शुक्लातृतीयाके दिन पार्वतीशके पूजन करनेसे ॥ २२ ॥ इस लोकमें तो सौभाग्य और परलोकमें उत्तम गति प्राप्त होतीहै। स्त्री हो अथवा पुरुष हो, पार्वतीश्वर लिंगकी आराधना करनेसे ॥ २३ ॥ (उसे) फिर कभी गर्भमें वास नहीं करना पडता, वरन् वह सौभाग्यका भाजन होजाताहै । पार्वतीश्वर लिंगके नामोच्चारण करनेवालोंके ॥ २४ ॥ सहस्रों जन्मकेभी संचित पाप उसी क्षणमें क्षय होजातेहैं जो उत्तमनर पार्वतीश्वरलिंगका माहात्म्यभी सुनलेगा, वह महामति ऐहिक, और पारलौकिक समस्त कामनाओंको प्राप्त करसकेगा ॥ २५ ॥

सोरठा—महिमा अमितअपार, पारवतीश्वर लिंगकी ।
या भव पारावार, उतरिजाय तेहि देखिकै ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्धे भाषायां नवतितमोऽध्यायः ॥ ९० ॥

एक्यानबेंवां अध्याय ।

गंगेश्वरके स्थापित होनेकी कथा ।

स्कन्द बोले—हे अनघ ! मैंने पार्वतीश्वरकी महिमा तुमसे कही, हे मुने ! अब गंगेश्वरके प्रादुर्भावकी कथा सुनो ॥ १ ॥ इस कथाके कहींपरभी श्रवण करनेसे गंगास्नानका फल प्राप्त होताहै, जब कि गंगा उस दिलीपनन्दन भगीरथके साथ इस आनन्दकाननमें चक्रपुष्करिणी तीर्थपर आपहुँची तब शिवके परिग्रहसे क्षेत्रके अतुल प्रभावको समझकर ॥ २ ॥ ३ ॥ एवं काशीमें लिंग प्रतिष्ठाका लोकोत्तर फल स्मरणकर विश्वेश्वरके पूर्वभागमें गंगादेवीने एक उत्तम लिंगकी स्थापनाकी ॥ ४ ॥ काशीपुरीमें उस गंगेश्वरलिंगका दर्शन मिलना बहुतही दुर्लभ है, (पर) जो कोई

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दशहरा तिथिके दिन गंगेश्वरका पूजन करे ॥ ५ ॥ तो उसके सहस्रों जन्मके संचित पाप क्षणमात्रमें क्षय होजातेहैं, किन्तु कलियुगमें गंगेश्वरलिंग प्रायः गुप्तही रहेगा ॥ ६ ॥ पुरुषोंके पुण्यहीके कारण उसका दर्शन प्राप्त होसकताहै, जो कोई पाप दुर्लभ गंगेश्वरलिंगका दर्शन काशीमें पाजाताहै ॥ ७ ॥ वह प्रत्यक्ष मूर्तिधारिणी गंगाका दर्शन पाचुका इसमें कुछभी सन्देह नहीं है, हे मित्रावरुणनन्दन ! सर्व कल्मषहारिणी भगवती भागीरथी कलिकालमें निस्सन्देह बड़ीही दुर्लभ होवेगी, तिसपर जब कलियुग व्याप्त होजायगा तब तो काशीपुरी (में गंगा) औरभी परम दुर्लभ होजावेंगी ॥ ८ ॥ ९ ॥ तदपेक्षा काशीमें गंगेश्वरनामक लिंग तो बहुतही दुर्लभ होगा, क्योंकि उसका दर्शन लोगोंके पापका क्षय करनेहीके लिये होसकताहै ॥ १० ॥ गंगेश्वर लिंगका माहात्म्य सुननेसे मनुष्य (कभी) नरकभागी नहीं होता, और पुण्यकी ढेर उसे प्राप्त होतीहै, एवं अपने चिंतित वस्तुको लाभ करताहै ॥ ११ ॥

दोहा—यद्यपि गंगातीरपै, हैं शिवलिंग विशेष ।
पै काशीमें नहिं कतहुं, गंगेश्वर शिव देख ॥ १ ॥
करत भरथरी योग जहँ, वहि चुनारमें ख्यात ।
गंगेश्वर शिव लिंग है, नहिं अन्यत्र दिखात ॥ २ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्धे भाषायां एकनवतितमोऽध्यायः ॥९१॥

बानवेवां अध्याय ।

नर्मदेश्वरके प्रकट होनेकी कथा ।

स्कन्द कहनेलगे—मुने ! (अब) मैं तुमसे नर्मदेश्वर लिंगका माहात्म्य वर्णन करताहूं, जिसके केवल स्मरण करनेहीसे महापातकोंकाभी क्षय होजाताहै ॥ १ ॥ इस वाराहकल्पके चढनेहीके समय प्रधान मुनियोंने मार्कण्डेय ऋषिसे यह पूछाथा कि, हे मृकण्डनन्दन ! जो सब नदियोंमें श्रेष्ठ हो आप उसे कहें ॥ २ ॥ मार्कण्डेयने कहा मुनिगण ! श्रवण करो; नदियां तो सैकडोंही ऐसी हैं, जो पापहारिणी और पुण्यकारिणी प्रसिद्ध हैं ॥ ३ ॥ उन सब नदियोंसे समुद्रगामिनी नदियां श्रेष्ठ हैं, उन सब नदियोंमें उत्तमनदियां परम श्रेष्ठ समझी जाती हैं ॥ ४ ॥ हे मुनिपुंगवगण ! गंगा, यमुना, नर्मदा, और सरस्वती, ये चारों नदियां समस्त नदियोंमें परम पवित्र हैं ॥ ५ ॥ गंगा ऋग्वेदकी मूर्ति, यमुना यजुर्वेदस्वरूपा, नर्मदा सामवेदस्वरूपिणी, और सरस्वती

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अथर्ववेदकी मूर्ति है यह बात सर्वथा ध्रुव है ॥ ६ ॥ गंगा सब नदियोंकी आदियोनि हैं, और समुद्रकीभी भरदेनेवाली हैं, अतएव संसारमें कोईभी उत्तमनदी गंगाकी समानता नहीं करसकती ॥ ७ ॥ किन्तु हे सत्तम ! पूर्वकालमें नर्मदाने बहुत दिनोंतक तपस्या करके वरदानोन्मुख ब्रह्मासे यह प्रार्थना कीथी ॥ ८ ॥ (कि) प्रभो विधे ! यदि आप प्रसन्न हैं तो मुझे गंगाकी तुल्यता प्रदान कीजिए, तब ब्रह्माने कुछ हँसकर नर्मदासे कहा कि ॥ ९ ॥ यदि कोई महादेवकी समानता पासके तो दूसरी नदीभी गंगाके समान होसकतीहै ॥ १० ॥ यदि कहींपर कोईभी पुरुष पुरुषोत्तमके तुल्य होसके तो अन्य नदीभी गंगाके सदृश होसकतीहै ॥ ११ ॥ यदि इस लोकमें कोईभी नारी गौरीके ऐसी बनसके तो दूसरी नदीभी गंगाकी समानता करसकतीहै ॥ १२ ॥ यदि काशीपुरीके समान कोई दूसरी नगरी कहींपर होजावे, तो संभवहै कि स्वर्गतरंगिणी गंगाकी तुल्यता दूसरी नदीकोभी मिलसके ॥ १३ ॥ नदीश्रेष्ठा नर्मदा विधाताके इस वचनको सुन उनके वरदानको त्यागकर काशीधाममें चलीगई ॥ १४ ॥ काशीमें लिंग प्रतिष्ठाही समस्त पुण्योंसे बढकर श्रेयस्करी क्रिया कहीगईहै, उससे भिन्न दूसरा कर्म कोईभी नहीं बतासकता ॥ १५ ॥ इसके अनंतर उस पवित्र नर्मदानदीने पिलपिलातीर्थपर त्रिलोचनके समीपहीमें विधिपूर्वक लिंगकी प्रतिष्ठा की ॥ १६ ॥ तब तो भगवान् शिव उस शुभात्मिका नदीके ऊपर प्रसन्नहो बोले, हे सुभगे ! वर मांगो, हे अनघे ! जो तुम्हारी रुचिहो वही मांगलो ॥ १७ ॥ सरिद्वरा रेवा (नर्मदा) ने यह सुनकर महेश्वरसे कहा हे देवदेव ! धूर्जटे ! अत्यन्त तुच्छ अन्यवरदानका कौन प्रयोजनहै ? ॥ १८ ॥ हे महेश्वर ! आपके चरणयुगलमें मेरी निर्द्वन्द्व भक्ति बनीरहै, महादेव नर्मदाकी इस उत्तम वाणीको सुन बहुतही सन्तुष्ट हुए ॥ १९ ॥ और कहनेलगे कि, हे सरिद्वरे ! तुमने जो कहा वही होवे, हे पुण्यनिलये ! लो अब मैं (अपनी ओरसे) दूसरा वरदान करताहूं ॥ २० ॥ हे नर्मदे ! तुम्हारे तटमें जितनेही पत्थर होंगे मेरे वरके प्रभावसे वे सब (के सब) लिंगरूप होजावेंगे ॥ २१ ॥ बडी तपस्याओंके द्वारा परमार्थतः परम दुर्लभ औरभी उत्तम वर तुमको देताहूं उसेभी श्रवणकरो ॥ २२ ॥ हे नर्मदे ! गंगा तो (स्नान करनेसे) सद्यः पापको हरलेती हैं, और यमुना एक सप्ताहमें पाप नाशकरतीहैं, एवं तीन दिनमें सरस्वतीभी पापको दूर करती हैं, पर तुम दर्शन करतेमात्र पापको नष्ट करदोगी ॥ २३ ॥ हे दर्शनमात्र-पापहारिणी ! नर्मदे ! एक औरभी वर तुमको देताहूं, तुम्हारे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

स्थापित लिंगका नाम नर्मदेश्वर होगा ॥ २४ ॥ और यह परमपुण्यप्रद लिंग शाश्वत मुक्तिको देगा, जो लोग इस लिंगके भक्त होंगे उनको देखतेही सूर्यनंदन यमराज ॥ २५ ॥ बडे कल्याणकी वृद्धिके लिये प्रयत्नपूर्वक प्रणाम करने लगेंगे । हे देवि! यद्यपि काशीमें पद पदपर अनेक लिंग विद्यमान हैं ॥ २६ ॥ पर नर्मदेश्वर लिंगकी कुछ विचित्रही महिमा होगी । यह कहकर भगवान् शिव उसी लिंगमें लीन होगये ॥ ॥ २७ ॥ नर्मदाभी अद्भुत पवित्रता पाकर बहुतही प्रसन्न हुई, और दर्शनमात्रसे पापहारिणी होकर अपने देशमें चलीगई ॥ २८ ॥ इस प्रकारसे मार्कंडेय मुनिका कथन सुन वे सब मुनीश्वर लोगभी प्रहृष्टचित्त होकर अपना अपना हितसाधन करनेलगे ॥ २९ ॥ स्कंदने कहा—मनुष्य भक्तिपूर्वक नर्मदेश्वरका माहात्म्य सुननेसे पापकंचुकको छोडकर उत्तम ज्ञानको प्राप्त करेगा ॥ ३० ॥

दोहा—धन्य धुनी वह नर्मदा, जेहि दर्शन अघ जाय ।
होत आप शिवलिंग जहँ, नर्मदेश कहवाय ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्धे भाषायां द्विनवतितमोऽध्यायः ॥९२॥

तिरानवेवां अध्याय ।

सतीश्वरकी उत्पत्तिकथा ।

अगस्त्य बोले—हे स्कन्द ! नर्मदेश्वरका कल्मषनाशक माहात्म्य तो मैंने सुना पर अब आप सतीश्वरके प्रकटहोनेकी कथाको कीर्तन कीजिए ॥ १ ॥ स्कन्दने कहा- हे मित्रावरुणसंभूत ! काशीमें जैसे सतीश्वर लिंगका प्रादुर्भाव हुआ उस कथाको मैं कहता हूं, तुम श्रवण करो ॥ २ ॥ हे मुने ! पूर्वकालमें ब्रह्माने कठोर तपस्या कीथी, उससे ब्राह्मणप्रिय, सर्वज्ञनाथ, लोकात्मा भगवान् शिव बहुतही संतुष्ट और वर देनेके लिये उद्यत होकर उनसे कहने लगे कि, "हे लोककर्तः ! वर मांगो" ॥ ३ ॥ ४ ॥ ब्रह्मा बोले—हे देवेश ! यदि आप प्रसन्न होकर वांछित वर देतेहैं, तो आप मेरे पुत्र हों और देवी दक्षकी कन्या होवें ॥ ५ ॥ सर्वस्वदाता महादेव ब्रह्माका यह वर सुन भगवतीके मुखकी ओर ताक कुछ मुसकुराकर चतुराननसे बोले ॥ ६ ॥ हे पितामह ब्रह्मन् ! तुम्हारे लिये क्या अदेय है, अस्तु तुम्हारा वांछित सिद्धहोवे, यह कहकर भगवान् चन्द्रमौलि ब्रह्माके कपालसे (बालकरूपमें) प्रकट होगये ॥ ७ ॥ वह बालक उतान सूतकर रोता हुआ ब्रह्माके मुखकी ओर ताकने लगा, तब ब्रह्माभी उस लड़के

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

३०७

केको रोता हुआ देखकर ॥ ८ ॥ "मुझे पिता पाकरभी तुम क्यों वारंवार रोरहेहो" ऐसा बोले, तब वह बालक ब्रह्माकी बात सुनकर कहने लगा कि ॥ ९ ॥ हे सृष्टि-कर्तः ! मैं नामके लिए रोरहाहूं, हे पितामह ! मेरा नाम रखदीजिए, तब उस मायामय बच्चेका रोनेके कारण रुद्रही नाम धरा गया ॥ १० ॥ अगस्त्यने पूछा—हे षडानन ! महेश्वर बालक होनेपरभी क्यों रोतेरहे ? यदि इसका कारण आप जानतेहों तो मुझे बतलाइये, क्योंकि (इसके सुननेका) मुझे बडाही कौतूहलहै ॥ ११ ॥ स्कन्दने कहा हे कुंभसंभव ! सर्वज्ञका कुमार होनेसे कुछकुछ मैं समझताहूं, अतएव रोनेका कारण कहताहूं, श्रवणकरो ॥ १२ ॥ परमात्मा देवादिदेवके मनमें यह विचार आया कि, अहो ! सत्यलोकके अधिपति, परमेष्ठी, विधाता, चतुराननका कैसा बुद्धिवैभवहै (जो मुझेही अपना पुत्र बनालिया) इसी आनन्दके मारे महादेवके आंखोंसे बाष्पपूर बहनेलगा॥ १३ ॥१४॥ अगस्त्यने फिर पूछा भगवान् शंभुने मनमें विधाताकी कौनसी बुद्धिमत्ता देखी, जिससे बालक होनेपरभी महादेवके(नेत्रोंसे)आनन्दका अश्रुजल बहनेलगाथा ॥ १५॥ हे सर्वज्ञानन्दवर्द्धन प्राज्ञ ! इस विषयको स्पष्टरूपसे कहिये । इसभाँतिसे अगस्त्यका कथन सुन तारकासुरके शत्रु स्कन्दने कहा ॥ १६ ॥ हे कुम्भजमुने ! महादेवने मनहीमन यह सोचा कि, अपत्यके विना पिताको कौन उद्धार करनेमें समर्थ होसकता है ? ॥ १७ ॥ (ब्रह्माका) पहिला तो यही मनोरथ रहा, दूसरा यह कि, स्मरणकर्ताकेभी जन्मदुःखहारक इनके अपत्य बनजाने पर ॥ १८ ॥ क्षणक्षणमें दर्शन, प्रतिक्षण अंगस्पर्श, एकशय्या पर शयन, एकट्ठां की बैठकी, और एकत्र आहार (विहार) प्राप्त होगा ॥ १९ ॥ जो कभी वचन और मनकेभी गोचर नहीं होते वेही जब मेरे पुत्र होजायँगे तो मुझे क्या नहीं मिलसकता है ? ॥ २० ॥ जो कोई इनको हर्षपूर्वक एकबारभी देखलेवे अथवा स्पर्श करलेसके, उसे न तो फिर जन्मही लेना पड़ता न वह आनन्दभोगहीसे वंचित रहजा सकता है ॥ २१ ॥ यदि ये किसी प्रकारसे मेरे घरके खेलौने होजावें, तो निस्सन्देह मैं परम सुखका निधान होजाऊंगा ॥ २२ ॥ उस सर्वज्ञ महेश्वरने विधाताकी इसी इच्छाको जानकर, अपने तीनोंही नेत्रोंको आनन्दाश्रुके जलसे भरदिया ॥ २३ ॥ स्कन्ददेवकी इस वाणीको सुनकर अगस्त्यमुनि बडेही आनंदित हुए, और उनके चरणोंमें प्रणाम करके कहने लगे कि, हे सर्वज्ञानन्दन ! आपकी जय हो ॥ २४ ॥ (आपही धन्य हैं) आपने ब्रह्माका चित्त तो जानही लिया पर महादेवकाभी अभिप्राय भलेही समझलिया, वास्तवमें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

आपने ठीकठीक (दोनों जनके) मनको जानलिया, अतएव चिदात्मास्वरूप आपको नमस्कार है ॥ २५ ॥ भगवान् स्कन्दभी श्रोताका आनन्द देखकर बहुतही संतुष्ट हुए (और बोले) हे अगस्त्य ! तुम परम धन्य हो, सुननेकी यथार्थ रीतिभी तुमही जानतेहो ॥ २६ ॥ तुम्हारे आगे कथा कहनेसे मेरा परिश्रम सार्थक हुआ । इसप्रकारसे बातचीत होजानेपर षडानन फिर अगस्त्यसे कहनेलगे ॥ २७ ॥ इसरीतिसे भगवान्के रुद्रहोनेपर भगवतीभी सतीनामसे दक्षकी कन्या हुई, फिर उससतीदेवीने वरार्थिनीहो काशीधाममें घोर तपस्या करके ॥ २८ ॥ लिंगस्वरूपमें प्रकटहुए महादेवको अपने आगे देखा, लिंगरूपी हरने स्पष्टस्वरमें उनसे कहा कि, हे महादेवि ! अब तपस्या करनेका कोई प्रयोजन नहीं है ॥ २९ ॥ और यह लिंग तुम्हारे नामानुसार सतीश्वरसंज्ञक होवेगा, अयि दक्षसुते ! जैसे तुम्हारा मनोरथ इससे सिद्ध हुआ है॥ ३०॥ वैसेही इसलिंगकी आराधना करनेसे अन्यलोगोकीभी सिद्धि होवेगी । इस लिंगकी आराधना करनेसे कुमारी मनसेभी उन्नत पतिको पावेगी । और कुमार पुरुषकोभी उत्तम पत्नी प्राप्तहोगी, इस सतीश्वरलिंगके पूजन करनेसे जिस जिसकी जो जो कामना होगी उस उसकी निस्सन्देह वही कामना पूर्ण होगी । सतीश्वरकी पूजा करके जो कोई जो मनोरथ करेगा उसका वह मनोरथ तुरत सिद्ध होजावेगा । आजके आठवें दिन तुम्हारे पिता दक्ष प्रजापति ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ मुझे तुम्हारा कन्यादान करदेवेंगे, जिससे तुम्हारा मनोरथ सफल होजावेगा । इस कहनेके उपरांत महादेव वहींपर अन्तर्धान होगये ॥ ३५ ॥ और वह दक्षसुता सती देवीभी सहर्ष अपने घर चलीगई, फिर पिता दक्षनेभी आठवेंही दिन रुद्रदेवको उस कन्याका दान करादिया ॥ ३६ ॥ स्कन्द बोले—हे मुने ! इस रूपसे काशीमें सतीश्वर लिंग प्रकट हुआ, जो केवल स्मरण करनेसेभी सत्त्वगुण देदेताहै ॥ ३७ ॥ रत्नेश्वरके पूर्वभागमें विराजमान उस सतीश्वरलिंगके दर्शन करनेसे मनुष्य उसीघडी पापोंसे मुक्त होजाता और क्रमशः ज्ञानकोभी प्राप्त करताहै ॥ ३८ ॥

दोहा—रत्नेश्वरके पासमें, एक लिंग है जोय ।
वही सतीश्वरनाम है, देत सतोगुन सोय ॥ १ ॥

इति श्रीस्कंदमहापुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्धे भाषायां त्रिनवतितमोऽध्यायः॥९३॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

३०९

चौरानबेवाँ अध्याय।

अमृतेश्वर इत्यादि लिंगोंकी कथा।

स्कन्द बोले—हे महामुने! जिनके नामभी अमृतदायक हैं उन अमृतेश्वर प्रभृति अन्यान्य लिंगोंकाभी मैं वर्णन करताहूं ॥ १ ॥ पूर्वकालमें सनारुनामा एक गृहस्थ मुनि काशीमें रहतेथे, वे नित्यही ब्रह्मयज्ञमें तत्पर और सदैव अतिथि पूजक थे, ॥ २ ॥ वे सर्वदा लिंगकी पूजा करते और कभी तीर्थमें प्रतिग्रह नहीं लेते थे। उस सनारु ऋषिको उपजंघनि नामक एकही पुत्र था ॥ ३ ॥ एकबार उस ऋषिकुमारको वनमें सर्पने काटलिया, तदनन्तर उसके समौरिया साथीलोग उसे अपने आश्रममें उठालाये॥ ४ ॥सनारु विलाप करके उस उपजंघनिको स्वर्गद्वारके समीप महाश्मशानकी भूमिपर उठालेगये ॥ ५ ॥ वहांपर श्रीफल (सरीफा) के आकारका एक लिंग बडे गुप्तरूपसे वर्तमान था, ऋषि उस मृत बालकको उसीके ऊपर रखकर जबतक यह शोचने लगे कि ॥ ६ ॥ सर्पदष्टका संस्कार कैसे होताहै, तब-तक वह उपजंघनि सोये हुएके समान जीता जागता उठ बैठा ॥ ७ ॥ इसके उपरांत वह सनारु ऋषि उस मृत उपजंघनिको प्राणसंपन्न देखकर बहुतही विस्म-यापन्न होगये ॥ ८ ॥ और शोचने लगे कि, यह मेरा पुत्र सर्पके काटनेसे क्षेत्रके बाहरही मरचुकाथा, पर क्योंकर इसमें प्राणका संचार होआया? ॥ ९ ॥ वे यही विचार करतेथे, इतनेमें एक चींटी कहींसे मरेहुए (किसी) एक पिपीलकको वहांपर उठालाई, (बस भूमिका स्पर्श होतेही) वहभी फिरसे जीवित होकर चलागया, तब तो मुनि वहांपर जीवनसूचक कोई पदार्थ समझकर ॥ १० ॥ ११ ॥ ज्योंही अपने कोमल हस्ततलसे उसे खोदनेलगे, त्योंही श्रीफलके समान एक लिंग उनको दिखाईपडा ॥ १२ ॥ फिर तो सनारु मुनिने वहींपर उसका पूजनकर, उस चिरकालीन लिंगका नामभी सार्थक करदिया ॥ १३ ॥ आनन्दवनमें वह लिंग अमृतेश्वर नामक है, उस लिंगके स्पर्श करनेसे अवश्यही अमृतत्त्व प्राप्त होताहै ॥ १४ ॥ अमृतेश्वरकी पूजा इत्यादि कर वह मुनि अपने जीतेहुए पुत्रके साथ जब अपने स्थानपर पहुँचे, तब लोग बडेही आश्चर्यसे देखनेलगे ॥ १५ ॥ हे मुनीश्वर! तबीसे वह अमृतेश्वर लिंग काशी-में लोगोंको बडाही सिद्धिदायक है, किन्तु कलियुगमें वह गुप्तही रहताहै ॥ १६ ॥ अमृतेश्वरके स्पर्शमात्रसे मृतप्राणी फिर जीवित होजातेहैं, पर यदि जीवित व्यक्ति स्पर्श करसके तो उसे अमृतत्व प्राप्त होताहै ॥ १७ ॥ अमृतेश्वरके समान कोईभी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लिंग भूतलपर नहीं है, इसीसे भगवान् शंकरने उसे कलिकालमें बडे प्रयत्नसे गुप्तकर रक्खा है ॥ १८ ॥ जो लोग काशीमें अमृतेश्वरका नामभी लेतेहैं, उनको कभी उपसर्गजनित कोईभी भय नहीं होनेपावेगा ॥ १९ ॥ हे मुनिवर ! मोक्षद्वारके समीपहीमें मोक्षेश्वरके आगे (सामने) करुणेश्वर नामक एक औरभी महालिंग विराजमान है ॥ २० ॥ उस परम करुणामय लिंगके दर्शन करनेसे किसीको कभी अविमुक्त क्षेत्रसे बाहर कहीं नहीं जाना पडता ॥ २१ ॥ मणिकर्णिकामें स्नानकर करुणेश्वरका दर्शन करनेसे क्षेत्रमें उपसर्गजनित भय हर्षके साथ दूर भागजाताहै ॥ २२ ॥ जो कोई सोमवारके दिन एकभक्तव्रती होकर, करनाके पुष्पोंसे भगवान् करुणेश्वरका पूजन करताहै ॥ २३ ॥ उसके ऊपर प्रसन्न होकर करुणासागर करुणेश्वर उसे कभी क्षेत्रसे बाहर नहीं होने देते, अतएव यह व्रत करनेहीके योग्य है ॥ २४ ॥ (पुष्प न मिले तो) करनाके पत्र वा फलोंसे भी करुणेश्वरका पूजन करना चाहिए, यदि किसीको करुणेश्वरकी ठीक पहिचान (पता) न लगे तो ॥ २५ ॥ उसे उचित है कि "देवदेव प्रसन्न हो" यह कहकर करनाके वृक्षहीकी पूजा करे, इस प्रकारसे जो कोई द्विज वर्षभर प्रतिसोमवारको व्रत करता है ॥ २६ ॥ भगवान् करुणेश्वर उसपर प्रसन्न होकर उसकी अभिलाषाको परिपूर्ण करदेते हैं । अतएव काशीमें लोगोंको बडा श्रम उठाकरभी करुणेश्वरका दर्शन करना उचित है ॥ २७ ॥ यह मैंने तुमसे करुणेश्वरकी महत्तर महिमा वर्णन कीहै, इसके सुननेसेभी काशीमें कभी किसी उपसर्गका उपद्रव नहीं होने पावेगा ॥ २८ ॥ मनुष्य काशीधाममें मोक्षद्वारेश्वर और स्वर्गद्वारेश्वर इन दोनों लिंगोंके दर्शन करनेसे मोक्ष और स्वर्गको प्राप्त करताहै ॥ २९ ॥ काशीपुरीमें एक ज्योतीरूपेश्वर नामक लिंग प्रकाशमान है, भक्तलोग उसके पूजन करनेसे ज्योतीरूप होजातेहैं ॥ ३० ॥ चक्रपुष्करिणी (मणिकर्णिका) के तीरपर ज्योतीरूपेश्वरकी अर्चना करनेसे मनुष्य निस्सन्देह ज्योतीरूप होजाताहै ॥ ३१ ॥ जबसे नदियोंकी महारानी स्वर्गतरंगिणी भगवती भागीरथी गंगा वहांपर आईं तबसे बडे आनन्दके साथ प्रतिदिन उस लिंगका पूजन करती हैं ॥ ३२ ॥ पूर्वकालमें जब भगवान् विष्णु वहांपर तपस्या कररहेथे तभी वह तेजोमय लिंग आपसे आप प्रकट हुआथा और इसीके कारणसे यह क्षेत्र सर्वोत्तम हुआहै ॥ ३३ ॥ यदि कोई दूर देशमेंभी रहकर चक्रपुष्करिणीके तीरपर विराजमान उस ज्योतीरूपेश्वर लिंगका ध्यान करे तो उसकी सिद्धि दूर नहीं रहनेपाती ॥ ३४ ॥ जैसे महावीर्यशाली पूर्वोक्त चतुर्दश लिंगहैं, वैसेही कर्मरूप

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

३११

बीजोंके भस्म करदेनेमें दावानलके समान ये आठों लिंगभी हैं ॥ ३५ ॥ ये आठों दक्षेश्वर इत्यादि लिंग, ओंकारेश्वर प्रभृति चतुर्दश लिंगोंके समान हैं, एवं शैलेश्वरादिक चौदहों लिंगभी इन्हींके ऐसे श्रेष्ठ हैं, यही छत्तीसों लिंग क्षेत्रसिद्धिके कारण हैं ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ इन्हीं छत्तीस लिंगोंमें षट्त्रिंशत्तत्वस्वरूप सदाशिव वर्तमान रहकर इस क्षेत्रमें नित्यही तारकब्रह्मका उपदेश करतेहैं ॥ ३८ ॥ काशीक्षेत्रके तत्त्वस्वरूप येही छत्तीस लिंगहैं, इनके भजन करनेसे लोगोंको कभी दुर्गति नहीं भोगनी पडती ॥ ३९ ॥ हे मुने! येही लिंग (क्षेत्रके) रहस्यरूपहैं, यह बात निश्चितहै और इन्हींके प्रभावसे काशीमें मुक्ति सर्वतोभावसे स्थिरहै ॥ ४० ॥ हे महामते! इन्हीं लिंगोंके कारणसे काशी मोक्षक्षेत्र हुई है, युगयुगमें ये सब तथा और औरभी सिद्धलिंग प्रकाशमान होते रहतेहैं ॥ ४१ ॥ यह आनन्दवन भगवान् शंभुका अनादिसिद्ध क्षेत्र है, इससे यहांके निवासी लोग निस्सन्देह मुक्तही हैं ॥ ४२ ॥ इस क्षेत्रमें योगसिद्धि, तपःसिद्धि, व्रतासिद्धि, मंत्रसिद्धि, एवं तीर्थसिद्धि, सभी सुनिश्चितहैं ॥ ४३ ॥ अणिमादिक जो आठ बडीभारी सिद्धियां कहीगई हैं, उन सबकी जन्मभूमि यही महादेवकी आनंदवाटिकाहै ॥ ४४ ॥ यही आनन्दवन मोक्षलक्ष्मीका भवन है, पुण्यप्रभावसे यदि मिलजावे तो संसारभीरु जनको उसे कभी नहीं छोडना चाहिए ॥ ४५ ॥ यही बडाभारी लाभ है, यही बहुत बडी तपस्या है, एवं यही महापुण्य है जो इस (असार) संसारमें काशी मिलजावे ॥ ४६ ॥ जिसने जन्म पाया है, चाहे जहां हो एक दिन उसकी मृत्यु अवश्यही होगी, फिर कर्मके अनुरूप सद् असद् गतिभी भोगनीही पडेगी ॥ ४७ ॥ सुतरां मृत्युको नियत और गतिको कर्मानुसारिणी समझकर, समस्त कर्मबन्धनको काटदेनेवाली काशीकी सेवा अवश्यमेव करनी चाहिये ॥ ४८ ॥ इस क्षणभंगुर मनुष्य जन्मको पाकर जो मूढलोग काशीपुरीको नहीं सेवते वे सब मन्दबुद्धि अवश्यही दैवसे ठगे गये हैं ॥

" जिनकर मन इन सन नहिं राता ।
ते जन वंचित किये विधाता ॥ " (तु०रा०) ॥ ४९ ॥

दुर्लभ मनुष्य जन्म होनेपर यदि परम दुर्लभ काशीपुरीभी प्राप्त होजावे तो, इन दोनोंके संगम होजानेपर फिर मुक्ति कहां जासकती है ? ॥ ५० ॥ भला इस संसारमें वैसी तपस्या अथवा वैसी उत्तम योगक्रिया कहां है ? जिससे मुक्ति मिलजासके पर काशीमें तो उत्तमोत्तम मोक्ष प्राप्त होजाताहै ॥ ५१ ॥ मैं वारंवार (पुकारकर)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

यह सत्य सत्य कहताहूं कि, इस भूमण्डलमें काशीके समान मुक्तिका स्थान दूसरा कोईभी नहीं है ॥ ५२ ॥ जहांपर भगवान् विश्वेश्वर स्वयं मुक्तिका दान करते हैं, और जहांपर मुक्तिहीके लिये भगवती भागीरथी उत्तरवाहिनी होगई हैं उसी आनन्द काननमें मुक्ति मिलती है, और दूसरे किसी स्थानमें तो मुक्तिही नहीं है ॥ ५३ ॥ मुक्तिके दाता केवल एक विश्वेश्वरहीहैं, दूसरा तो कोई हुआही नहीं है, सो वेही जीवोंको काशीमें पहुँचाकर मुक्ति देते हैं, तो फिर अन्यसे मुक्ति क्योंकर मिलसकतीहै?॥५४॥ केवल काशीहीमें तो सायुज्यमुक्ति होतीहै, पर और स्थानोंमें बडा कठोर क्लेश उठानेपर सान्निध्यादिक मुक्तिकी प्राप्ति हो सकती है, किन्तु काशीमें तो अनायासही सायुज्य-मुक्ति पाई जाती है ॥ ५५ ॥ स्कन्दने कहा--हे महाभाग अगस्त्य ! अब मैं भविष्य-कथाको कहताहूं, जिसे कृष्णद्वैपायन वेदव्यास बडी बात कहकर मनमें निश्चय होजानेके पीछे जैसा करेंगे, उसे तुम श्रवण करो ॥ ५६ ॥

दोहा--करत सबै संहार जो, वह विश्वेश्वर एक ।
देत मुक्ति सो काशिमें, राखत आपनि टेक ॥ १ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्धे भाषायां चतुर्नवतितमोऽध्यायः॥९४॥

पंचान्नबेवां अध्याय ।

वेदव्यासका भुजस्तम्भन ।

व्यास बोले—हे महाबुद्धे ! सूत ! सर्वज्ञाता स्कन्दने अगस्त्यसे जो कुछ मेरा भविष्य वर्णन कियाथा उसे मैं तुमसे कहताहूं श्रवणकरो ॥ १ ॥ स्कन्दने कहा—हे मित्रावरुणनन्दन ! महाभाग ! मुने ! अगस्त्य ! पराशरात्मज महर्षिव्यास जिस भाँतिसे मोहको प्राप्त होंगे, उसेभी तुम श्रवण करलो ॥ २ ॥ उस परमबुद्धिमान् व्यासने चारों वेदोंको नानाशाखाओंके भेदसे विभक्त कर, सूतादिको अष्टादश पुराणोंको पढाय ॥ ३ ॥ श्रुति स्मृति और पुराणोंके सारसंग्रहस्वरूप, सब लोगोंके मनको हरण करलेनेवाले, महाभारत (नामक एक अपूर्वग्रंथ) को निर्माण किया ॥४॥ जो कि समस्त पापोंका नाशक, एवं परम शान्तिकारक है और उस महाभारतके श्रवणमात्रसे ब्रह्महत्या दूर भागतीहै ॥ ५ ॥ एकबार वे भूमण्डलमें भ्रमण करतेहुए नैमिषारण्यमें चलेगये, जहांपर उनने अट्ठासी सहस्र शौनक इत्यादि तपोधन मुनीश्वरोंको अवलोकन किया, उस बेला वे लोग भालमें त्रिपुंड्र, गलेमें रुद्राक्षकी माला, एवं सर्वांगमें भस्मको

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

३१३

धारण कियेहुए भक्तिपूर्वक, रुद्रसूक्तका जप, लिंगकी आराधना और शिवनामका भजन करतेथे ॥६॥७॥८॥ एकमात्र भगवान् विश्वेश्वरही मुक्तिदाता हैं, और कोई नहीं है वे लोग इसी बातको चित्तमें निश्चित रखकर वारंवार कहरहे थे ॥ ९ ॥ महामुनि व्यास उनलोगोंको दृढ (कट्टर) शैवदेख, अपनी तर्जनी अंगुलीको उठाकर उच्च-स्वरसे यह बात कहने लगे ॥ १० ॥ समस्त वाग्जाल (शास्त्रों) को बहुत मथन करके एवं वारंवार यथेष्ट निश्चय करनेसे एक यही बात जानीगई है कि, सबके स्वामी भगवान् हरिही सेवनीय हैं ॥ ११ ॥ वेद, पुराण, रामायण, और महाभारतादिके आदि मध्य और अन्तमें सर्वत्र हरिही व्याप्त हैं दूसरा कोई नहीं है ॥ १२ ॥ मैं तो शपथपूर्वक सत्यही सत्य कहताहूं कि, वेदसे बढकर कोई शास्त्र नहीं है, और भगवान् विष्णुसे बढकर कोई देवता नहीं है ॥ १३ ॥ एकमात्र लक्ष्मीश्वरही सर्वस्वके दाता हैं और वही अपवर्गभी देते हैं, अतएव केवल लक्ष्मीनाथही ध्यान करनेके योग्य हैं, दूसरा कोई नहीं है ॥ १४ ॥ इसलोकमें भोग और मोक्षके देनेवाले भगवान् जनार्दनको छोडकर अन्य कोईभी नहीं है, अतएव सुख चाहनेवालोंको उन्हींकी सेवा करनी चाहिए ॥ १५ ॥ जो मन्दमति लोग केशवदेवको छोडकर दूसरेकी सेवा करते हैं, वे सब गर्ज्झिन संसारचक्रमें वारंवार पडते रहते हैं ॥ १६ ॥ केवल हृषीकेशही सबसे परे और अखिल लोकके स्वामी हैं, निरंतर उन्हींकी सेवा करनेवाला (मनुष्य) त्रैलोक्यभरका सेवनीय होता है ॥ १७ ॥ केवल विष्णुही धर्मके दाता हैं, एकमात्र हरिही बहुतेरे अर्थोंको देते हैं, कामनाओंके पूरण करनेवाले अकेले चक्रपाणिही हैं, एवं एक अच्युतही मोक्षप्रद हैं ॥ १८ ॥ जो लोग भगवान् शार्ङ्गधरको त्यागकर अन्य देवतोंकी उपासना करते हैं, साधुलोगोंको उचितहै कि उनसबको वेदहीन ब्राह्मणकी नाईं (सबकर्मोंसे) बाहर करदेवें ॥ १९ ॥ इसप्रकारसे व्यासके वाक्यको सुनकर नैमिषारण्यके निवासी मुनिलोग कंपमान हृदय हो यह बात कहने लगे ॥ २० ॥ ऋषियोंने कहा—हे महामते ! पाराशर्य ! मुने आपने वेदोंका विभाग कियाहै, पुराणोंके तत्वज्ञाता हैं, एवं जिससे चतुर्वर्गका निश्चय होसकता है उस महाभारतके आपही रचयिता हैं, सुतरां आप हम सबलोगोंके पूजनीय हैं ॥ २१ ॥ २२ ॥ हे सत्यवतीनन्दन ! यहांपर आपसे बढकर तत्वज्ञाता कोई नहीं है, पर आपने तर्जनी उठाकर शपथ पूर्वक जो प्रतिज्ञा कीहै ॥ २३ ॥ उसपर यहांके बालकोंका विश्वास नहीं जमता, (हां) आपके प्रतिज्ञात वचनोंपर श्रद्धा तभी होस-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तीहै ॥ २४ ॥ जब आप शिवपुरी काशीमेंभी ऐसेही शपथपूर्वक अपनी प्रतिज्ञा कहसकें ॥ २५ ॥ अतएव हे व्यास ! जहांपर भगवान् विश्वेश्वर स्वयं विराज रहेहैं, एवं जहां युगधर्म नहीं व्यापता, और जिसकी भूमी भूलोकसे पृथक् समझी जातीहै, उसी वाराणसीपुरीमें गमन कीजिए ॥ २६ ॥ इसे सुननेपर व्यासमुनि मनमें कुछ क्रुद्धसे होकर अपने दशसहस्र शिष्योंके साथ तुरतही वहांसे चलदिये ॥ २७ ॥ फिर काशीमें पहुँचकर पंचनद ह्रद (पंचगंगा) में स्नान, एवं श्रीमान् बिन्दुमाधवका पूजन कर पादोदक तीर्थपर चलेगये ॥ २८ ॥ वहांभी स्नानादिके उपरांत आदिकेशवका दर्शन कर पांच दिनके व्यतीत होनेपर वहांसे आगे और पीछे प्रमोदके साथ शंखध्वनि करते हुए वैष्णव लोगोंसे अभिनंदित होकर (यह कहते हुए चले) जय विष्णो ! हृषीकेश ! गोविन्द ! मधुसूदन ! ॥ २९ ॥ ३० ॥ अच्युत ! अनन्त ! वैकुण्ठ ! माधव ! उपेन्द्र ! केशव ! त्रिविक्रम ! गदापाणे ! शार्ङ्गपाणे ! जनार्दन ! ॥ ३१ ॥ श्रीवत्सवक्षः ! श्रीकान्त ! पीताम्बर ! मुरान्तक ! कैटभारे ! बलिध्वंसिन् ! कंसारे ! केशिसूदन ! ॥ ३२ ॥ नारायण ! असुरारिपो ! कृष्ण ! शौरे ! चतुर्भुज ! देवकीनन्दयानन्द ! यशोदानंदवर्द्धन ! ॥ ३३ ॥ पुंडरीकाक्ष ! दैत्यारे ! दामोदर ! बलप्रिय ! बलारातिस्तुत ! हरे ! वासुदेव ! वसुप्रद ! ॥ ३४ ॥ विष्वक्सेन ! महाबाहो ! वनमालिन् ! नरोत्तम ! अधोक्षज ! क्षमाधार ! पद्मनाभ ! जलेशय ! ॥ ३५ ॥ नृसिंह ! यज्ञवाराह ! गोप ! गोपालवल्लभ ! गोपीपते ! गुणातीत ! गरुडध्वज ! गोत्रभृत् ! ॥ ३६ ॥ चाणूरमर्दन ! आद्यन्तरहित ! त्रैलोक्यरक्षण ! आनन्दस्वरूप ! नीलोत्पलद्युते ! कौस्तुभभूषण ! पूतनाधातुशोषण ! आपकी जयहो जयहो, हे जगद्रक्षामणे ! नरकहारक ! आप हम लोगोंकी रक्षा कीजिए, रक्षा कीजिए ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ हे सहस्रशीर्ष पुरुष आपही इंद्रकेभी सुखदाताहैं, एवं भूत और भावी जो कुछ है उसके कर्ता एकमात्र आपही (पुराण) पुरुष हैं ॥ ३९ ॥ इसप्रकार नाममालासे वनमालीकी स्तुति करतेहुए और स्वेच्छानुसार परमहर्षके साथ नृत्य करते करते ॥ ४० ॥ अत्यन्त प्रसन्नसे होकर वेदव्यास विश्वेश्वरके मंदिरपर जापहुँचे, वहां ज्ञानवापीके आगे (सामने) तुलसीकी मालाको कंठमें धारण कियेहुए परमभागवतोंके सहित स्वयं करतालेकर आपही नाचने लगे ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ वे स्वयं बाँसुरी बजाते बजाते श्रुतिधर बनगये इस भाँतिसे नृत्य समाप्त होनेपर सत्यवतीनन्दन व्यास ॥ ४३ ॥ शिष्योंके मध्यमें अपना दहिना

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

३१५

हाथ उठाकर वारंवार उच्चस्वरसे गातेहुए फिर उन्ही श्लोकोंको पढने लगे ॥ ४४ ॥ कि समस्त वाग्जालको मथकर वारंवार यही निश्चय परिज्ञात हुआहै, कि सबके स्वामी हरिही सेवनीयहैं ॥ ४५ ॥ इन सब पूर्वोक्त अपनी प्रतिज्ञाके अवबोधक श्लोकोंको ज्योंही व्यास दहिना हाथ उठाकर कहनेलगे ॥ ४६ ॥ त्योंही नंदीने उनके हाथका स्तम्भन एवं वचनकाभी स्तम्भन करदिया ॥ ४७ ॥ हे मुने ! इसी बीचमें विष्णुनेभी आकर व्याससे कहा हे व्यास ! तुमने यह बडाभारी अपराध किया इसमें कुछ सन्देह नहीं है ॥ ४८ ॥ तुम्हारे इस अपराधसे मुझेभी बडाभारी भय होगया, इस विश्वमण्डलमें एकमात्र विश्वनाथही सबकुछ हैं उनसे भिन्न कोईभी नहीं है ॥ ४९ ॥ उन्हींका प्रसादरूप यह चक्र मुझको मिलाहै, और उन्हींके प्रभावसे मैं लक्ष्मीपति हुआहूं, एवं उन्हीं शम्भुने (कृपा करके) त्रैलोक्यके रक्षा करनेकी सामर्थ्य मुझको दी है ॥ ५० ॥ और उन्हींकी भक्तिसे वरदान पाकर मैं परम ऐश्वर्य-शाली हुआहूं, इसलिये यदि तुम मेरा कल्याण चाहते हो तो अब उन्हीं महादेवकी स्तुति करो ॥ ५१ ॥ और फिर कभी ऐसी बुद्धि मत करना । इसप्रकारसे हरिकी बात सुनकर व्यासने इंगित (इशारे) से कहा कि ॥ ५२ ॥ नन्दिने देखतेही मेरा भुजस्तम्भ करदियाथा, फिर उन्हीके भयसे मेरी वाक्शक्तिभी चली-गई, सो आप मेरे कण्ठस्थलको छूदीजिए ॥ ५३ ॥ जिससे मैं भवानीपति सर्वान्तकभवकी स्तुति करसकूं, तदनंतर भगवान् विष्णु बडे गुप्तरूपसे उनके कंठका स्पर्श करके वहांसे चलेगये ॥ ५४ ॥ तब उदारबुद्धि सत्यवती नन्दन व्यास उसीभाँति भुजस्तंभनहीकी अवस्थामें विश्वेश्वरकी स्तुति करनेलगे ॥ ५५ ॥ व्यासने कहा--एकमात्र भगवान् रुद्रही अद्वितीय हैं क्योंकि वेही एक ब्रह्म हैं, यद्भिन्न इस ब्रह्मांडमें और सब कुछ नहीं है, यदि कहींपर कोई दूसरा होवे तो वह मेरे आगे अपनी शक्तिको प्रकट करे ॥ ५६ ॥ मन्दराचलसे मथेजानेपर क्षीरसमुद्रसे जो ज्वालाकी मालाओंसे भराहुआ बडा भयंकर कालकूट विष उत्पन्न हुआथा, जिसकी ज्वालाओंसे विष्णुभी कृष्ण होगये थे, उसका सहने (पीजाने) वाला भगवान् महेश्वरको छोडकर दूसरा कौन है ? ॥ ५७ ॥ जिसके बाण विष्णु, सारथि ब्रह्मा, और समस्त भूमिही जिसकी रथ बनी थी, एवं वेद लोग जिसके घोडे हुएथे, अथच जिसके एकही बाणके गिरते त्रिपुरके सब ग्राम जलभुनकर भस्म होगये उस महादेवके समान दूसरा कौन है ? ॥ ५८ ॥ केवल फूलोंके बाणसे त्रैलोक्यको

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जीतनेवाला कामदेव अन्य देवतोंके समान जिसे देखतेही स्वयं भस्म होगया, उस कंदर्पविजयी शिवसे भिन्न कौन स्तुति करनेके योग्य होसकता है ? ॥ ५९ ॥ जिसे वेद, ब्रह्मा, विष्णु, मन, और वाणीभी नहीं जानसकती, उस देवादिदेव विश्वनाथको भला मुझसा अल्पबुद्धिजन यथार्थरूपसे क्योंकर जानसकता है ? ॥ ६० ॥ जो स्वयं विश्वाधार होनेपरभी विश्वभरमें सर्वत्रही सबमें सर्वदा विराजमान रहते हैं, जो आपही संसारके कर्ता, पालयिता और संहारक हैं, जिसका आदि कोई नहीं है, पर स्वयं जो सबलोगोंका अकेला आदि है, जिसका अन्त नहीं है, पर जो सभीका अन्तकारक है, उसी महादेवको मैं प्रणाम करताहूं ॥ ६१ ॥ जिसका नाम एकवार उच्चारण करनेसे अश्वमेधयज्ञके समान फल मिलता है, फिर एकबारभी जिसे प्रणाम करनेसे इन्द्रकी संपत्तिभी तुच्छ जंचती है, एवं जिसकी स्तुति करनेसे सत्यलोक प्राप्त होताहै, उसी प्रकारसे उनकी पूजाकरनेपर मोक्ष लक्ष्मीभी दूर नहीं रहजाने पाती ॥ ६२ ॥ श्रीमहेशसे भिन्न दूसरे देवताको मैं नहीं जानता, न भगवान् शम्भुको छोड़कर दूसरे किसी देवताकी स्तुतिही करताहूं, अथवा त्रिलोचनसे भिन्न अन्यदेवको मैं प्रणामभी नहीं करता, यह सर्वथा सत्यसत्य है, इसमें तनिकभी झूठका लेश नहीं है ॥ ६३ ॥ महर्षि वेदव्यास इसी भाँतिसे महादेवकी स्तुति कररहे थे इतनेमें नन्दी महेश्वरकी दृष्टिचेष्टासे उनके भुजस्तंभनको दूरकर मुसकुराते हुए कहने लगे कि "तुमसब ब्राह्मणोंको नमस्कार है" ॥ ६४ ॥ नन्दिकेश्वर बोले—हे व्यास ! तुम्हारे बनाएहुए इस परम पवित्र स्तवका जो बुद्धिमान् पाठ करेगा उसपर भगवान् शंकर प्रसन्न होंगे ॥ ६५ ॥ इस शिवसान्निध्यकारक व्यासाष्टकके प्रातःकाल प्रयत्नपूर्वक पाठ करनेसे समस्त दुःस्वप्नोंकी शान्ति होजावेगी ॥ ६६ ॥ यदि कोई मातृघाती, पितृहन्ता, गोघ्न बालकघ्न, सुरापी और स्वर्णतस्करभी इस स्तुतिका जप करे तो वहभी पाप रहित होजावेगा ॥ ६७ ॥ स्कंदने कहा—तबसे वेदव्यास घंटाकर्ण ह्रदके ऊपरही व्यासेश्वरनामक लिंगकी स्थापना करके बडेभारी शैव होगये ॥ ६८ ॥ वे नित्यही सर्वांगमें भस्म रमाते, रुद्राक्षकी माला पहिनते एवं रुद्रसूक्तको जपतेहुए लिंगपूजनहीमें तत्पर रहनेलगे ॥ ६९ ॥ तभीसे वे मुक्तिदायिनी काशीके तत्त्वको समझकर क्षेत्रसंन्यास लेकर आजतक काशीका परित्याग नहीं करते हैं ॥ ७० ॥ मनुष्य घंटाकर्णके पोखरेमें नहाकर व्यासेश्वरका दर्शन करनेसे चाहे कहींपरभी मरे पर उसे काशीमें मरनेका फल प्राप्त होताहै ॥ ७१ ॥ उत्तमजन काशीपुरीमें व्यासेश्वर लिंगका पूजन करनेसे नतो कभी ज्ञानभ्रष्ट होता, और न पापोंसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

२१७

फेरमें पडताहै ॥ ७२ ॥ जो लोग व्यासेश्वरके भक्त हैं उनको कलिकाल और पाप, एवं क्षेत्रज उपसर्गोंका भय नहीं होनेपाता ॥ ७३ ॥ काशीवासियोंको क्षेत्रसम्बन्धी पापोंके दूरकरनेकी इच्छासे घंटाकर्णमें स्नान करके प्रयत्नपूर्वक व्यासेश्वरका दर्शन करना चाहिये ॥ ७४ ॥

(संस्कृत)—दोहा—विदितकर्णघंटाह्रदे, व्यासेश्वरो विभाति ।
तस्य दर्शनतः स्वयं, क्लेशो विलियं याति ॥ १ ॥

(हिन्दी)—दोहा—आषाढी गुरु पूर्णिमा, मेला तहँपर होय ।
छुटै सर्ग उपसर्ग भय, दरस परस करु जोय ॥ २ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्धे भाषायां पंचनवतितमोऽध्यायः॥९५॥

छानबेवां अध्याय ।

व्यास शाप विमोक्षण ।

अगस्त्यने पूछा—हे स्कन्द ! यदि कृष्णद्वैपायन, शिवभक्ति परायण, क्षेत्रके रहस्यज्ञाता तथाशिवके प्रभाववेत्ता और परमज्ञानी थे तो क्षेत्रसंन्यास लेनेपर सर्वश्रेष्ठा वाराणसीपुरीको क्यों शाप देवेंगे ॥ १ ॥ २ ॥ स्कन्दने कहा—हे महर्षे ! यह तो तुमने बहुतही ठीक पूछा है अच्छा तो मैं उन वेदव्यासका भविष्य चरित्र तुम्हारे पूछनेपर कहताहूं, श्रवण करो ॥ ३ ॥ हे अगस्त्य मुने ! जबसे नन्दीने उनका भुज स्तम्भन किया तबसे व्यास बडे आदरके साथ महेश्वरकी स्तुति गान करनेलगा ॥ ४ ॥ यद्यपि काशीमें अनेक तीर्थ और बहुतेरे लिंग पडे हैं, तथापि विश्वेश्वरका सेवन और मणिकर्णिकाका स्नान करनेही योग्य है ॥ ५ ॥ लिंगोंमें एकमात्र विश्वेश्वर और तीर्थोंमें मणिकर्णिकाही श्रेष्ठ है यही बात कहते हुए वेदव्यास उन दोनोंको बहुतही अधिक मानने लगे॥ ६ ॥ वे प्रतिदिन (मणिकर्णिका) स्नानके उपरांत मुक्तिमंडपमें (बैठ) व्यर्थके वाग्विवादको छोडकर केवल महादेवकी महिमा कहने लगे ॥ ७ ॥ वे महर्षि वेदव्यास शिष्योंके सन्मुख बडेहर्षके साथ नित्यही क्षेत्रकी बडी महिमाका यों बखान करते कि ॥ ८ ॥ इस क्षेत्रमें उत्तम अथवा अधम जो कुछ कर्म किया जाताहै, प्रलयकालमेंभी उसका अन्त नहीं होता इसलिए यहांपर अच्छाही काम करना चाहिए ॥ ९ ॥ जो पुण्यात्मा जन इस क्षेत्रमें सिद्धिको चाहते होवें यावज्जीवन उन बुद्धिमानोंको मणिकर्णिका कभी नहीं छोडनी चाहिए ॥ १० ॥ प्रतिदिन चक्रपुष्करिणी तीर्थमें नहाना और पत्र,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पुष्प, फल, और जलसे सदैव विश्वनाथका पूजन करना योग्यहै ॥ ११ ॥ अपने वर्ण और आश्रमधर्मके अनुसार रहकर प्रतिदिन श्रद्धापूर्वक एकबार क्षेत्रका माहात्म्य सुनना उचितहै ॥ १२ ॥ यहांपर यथाशक्ति गुप्तदान करना चाहिए और विघ्नोंके दूर हटानेकी इच्छा हो तो अन्नोंकाभी दान करे ॥ १३ ॥ यहांपर बुद्धिमान् जनको उचितहै कि सर्वदा परायेका उपकारही करे, और पर्वोंपर स्नान और दान इत्यादि क्रियाओंको विशेषरूपसे करे ॥ १४ ॥ एवं बडेभारी उत्सवके साथ विशेष पूजनभी करना चाहिए, और अधिक यात्रा तथा क्षेत्रके देवतोंका पूजनभी अवश्य करणीयहै ॥ १५ ॥ इस क्षेत्रमें परदार, परद्रव्य, और परायेका अपकार त्यागकर कभी किसीके मर्मकी बात नहीं करनी चाहिए ॥ १६ ॥ कभी किसीका अपवाद नहीं कहना और न किसीसे डाह करना, एवं प्राण जो कंठमेंभी जा रहे तोभी असत्य नहीं बोलना चाहिए ॥ १७ ॥ पर यदि भले वा अनभले किसी प्रकारसे यहांके रहनेवालेकी रक्षाके लिए झूँठभी बोलना पडे तो कोई हानिकी बात नहीं है ॥ १८ ॥ प्रयत्नपूर्वक यहांके प्राणिमात्रकी रक्षा करनीही चाहिए, क्योंकि यदि काशीमें प्रयत्न उठाकर एकभी जन्तु की रक्षा होसके तो निस्सन्देह त्रैलोक्यभरके रक्षणका पुण्य प्राप्त होजाताहै ॥ १९ ॥ जो लोग काशीमें क्षेत्रसंन्यास लेकर बास करते हैं; उन्हीं सबको निस्सन्देह जीवन्मुक्त और रुद्रस्वरूप मानना उचितहै ॥ २० ॥ उन लोगोंके संतुष्ट होनेसे स्वयं भगवान् विश्वेश्वर संतुष्ट होतेहैं, अतएव उन सबको प्रयत्नपूर्वक पूजा और नमस्कार इत्यादिके द्वारा संतुष्ट करना चाहिए ॥ २१ ॥ दूरदेशवासी सज्जन लोगोंकोभी विश्वनाथकी प्रसन्नताके लिए, काशीमें रहनेवाले मनुष्योंका योगक्षेम करना बहुतही उचित है ॥ २२ ॥ काशीवास करनेवालोंको यहांपर इन्द्रियोंका प्रसार और मनकी चंचलताको प्रयत्नपूर्वक दूर हटादेना चाहिए ॥ २३ ॥ बुद्धिमान् जन यहांपर मरण अथवा मोक्षकी अभिलाषा नहीं करे और न अपने शरीरके शोषणहीका उपाय ढूंढे॥२४॥ वरन् व्रत और स्नान इत्यादिकी सिद्धिके लिये शरीरकी स्वस्थता, और महाफलकी समृद्धिके लिये आयुकी दीर्घताहीकी चिन्ता करनी चाहिए ॥ २५ ॥ यहांपर परम कल्याणकी वृद्धिके लिए आत्माकी रक्षाही करनी उचितहै, पर काशीमें कभी आत्माके परित्यागका उपाय मनसे नहीं सोचना चाहिए ॥ २६ ॥ क्योंकि काशीमें जो श्रेयस्कर फल एकदिनमें मिलजाता है, वह दूसरे किसी स्थानमें सैकडों वर्ष बलिदान परभी नहीं प्राप्त होसकता ॥ २७ ॥ अन्यत्र जन्मभर योगाभ्यास करनेसे जो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

३१९

फल मिलता है, वाराणसीमें केवल एकही प्राणायामसे वह प्राप्त होसकताहै ॥ २८ ॥ इस आनंदवनमें मणिकर्णिकाके एक डुबकीसे जो पुण्य होताहै, जन्मभर समस्त तीर्थोंमें स्नान करनेसेभी वह नहीं मिलसकता ॥ २९ ॥ यावत् जीवन समस्त लिंगोंकी आराधना करनेसे जो पुण्य मिलना कठिन है, श्रद्धापूर्वक एकबारभी विश्वेश्वरकी पूजा करनेसे (तुरत) वह मिल जाताहै ॥ ३० ॥ जब सहस्रों जन्मके उपार्जित पुण्य इकट्ठे होते हैं तब उन्हींके परिवर्तनमें विश्वनाथका दर्शन प्राप्त होताहै ॥ ३१ ॥ विधानयुक्त करोडों गोदान करनेसे जो फल होताहै भगवान् विश्वेश्वरके दर्शन मिलजानेसेभी वही फल ज्योंका त्यों लाभ होताहै ॥ ३२ ॥ महर्षियोंने षोडश विध महादानोंसे जो पुण्य कहाहै भगवान् विश्वेश्वरपर पुष्प चढा देनेसेभी वही पुण्य होता है ॥ ३३ ॥ अश्वमेध इत्यादि समस्त यज्ञोंके करनेसे जो फल होताहै, विश्वनाथको पंचामृतसे स्नान करानेकाभी वही फल है ॥ ३४ ॥ सहस्रों राजसूययज्ञसे जो पुण्य मिलता है, एकबार विश्वनाथको बहुमूल्य (उत्तम) नैवेद्य लगानेसे उसका सौगुना फल प्राप्त होताहै ॥ ३५ ॥ जो कोई ध्वजा, छत्र, चामर इत्यादिसे विश्वेश्वरको सुसज्जित करताहै, वह भूमंडलमें एकछत्र राज्यका भोग पाताहै ॥ ३६ ॥ भगवान् विश्वनाथकी महापूजाकी सामग्री जो कोई चढाताहै, उसे इस संसारमें कहींपर किसी संपत्तिका अभाव नहीं होने पाता ॥ ३७ ॥ जो कोई सबक्रतुओंके पुष्पोंसे परिपूर्ण पुष्पवाटिका बनाताहै, उसके घरके आँगनमें कल्पवृक्षोंकी शीतल छाया बनी रहतीहै ॥ ३८ ॥ एवं जो मनुष्य विश्वनाथके दुग्धस्नानके लिए धेनुको अर्पण करता है, उसके पूर्वपुरुष लोग क्षीरार्णवके तटपर निवास करने लगतेहैं ॥ ३९ ॥ विश्वनाथके राजमन्दिरमें जो कोई चूनासे छुहवावे अथवा चित्रकारी लिखवावे, कैलासमें उसका भवन चित्रोंसे विभूषित होजाताहै ॥ ४० ॥ इस काशीपुरीमें ब्राह्मण-संन्यासी तथा शिवयोगियोंको श्रद्धापूर्वक भोजन करावे तो प्रत्येक जनका कोटिगण फल निस्सन्देह प्राप्त होताहै, यहांपर तप, दान स्नान, होम और जपादिके द्वारा भगवान् विश्वेश्वरको संतुष्ट करना चाहिये । अन्यत्र कोटि संख्यक जपकरनेसे जो फल होताहै इस काशीमें केवल अष्टोत्तरशतहीमें मनुष्योंको वह फल मिलजाताहै ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ अन्य स्थानोंमें कोटि आहुति देनेसे जो पुण्य होताहै यहांपर केवल अष्टोत्तरशत आहुतियोंमें वह पुण्य मिलताहै ऐसाही पंडितोंका कथनहै ॥ ४४ ॥ आनंदवनमें विश्वनाथके सन्निहित केवल रुद्रसूक्तहीके पाठकरनेसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

समग्र वेदाध्ययनका पुण्य प्राप्त होताहै ॥ ४५ ॥ परन्तु अक्षरोंका अर्थ समझकर रुद्रसूक्तका पारायणकरनेवालेको जो फल मिलताहै, उसे मैं भी नहीं जानसकता, काशीमें नित्यवास और उत्तरवाहिनी गंगाका सेवन करनाही उचित है ॥ ४६ ॥ विषम विपत्ति पडनेपरभी काशी कभी नहीं छोडनी चाहिए क्यों कि सब आपत्तियोंके निवारक भगवान् विश्वेश्वर (यहांके स्वयं) रक्षक (बने) हैं ॥

" चना चबैनी गंगजल, जो पुरवै करतार ।
काशी कबहुं न छोडिये, विश्वनाथ दरबार " ॥ ४७ ॥(प्राचीन)

काशीमें अनुष्ठित कर्म बडेही फलदायक होते हैं, इसलिए यहांपर स्नान,दान, और जप इत्यादिके द्वारा दिनको सार्थक करना उचितहै ॥ ४८ ॥ यहांपर प्रयत्नपूर्वक कृच्छ्रचान्द्रायण इत्यादि व्रतोंको (तो) अवश्यही करना चाहिए, जिसमें इन्द्रियोंके विकारोंकी कोई बाधा कभी नहीं होवे ॥ ४९ ॥ क्योंकि यहांपर जबकि इन्द्रियां मनुष्यको विकार उत्पन्न करदेतीहैं, तब विघ्नोंके मारे काशीवासकी सिद्धि नहीं होने पाती ॥ ५० ॥ अगस्त्यने कहा—हे स्वामिकार्तिकेय ! व्यासदेव जिन कृच्छ्र चांद्रायण प्रभृति व्रतोंको इन्द्रियोंकी शुद्धिके लिये कहेंगे, आप उनका स्वरूप वर्णन करदीजिए ॥ ५१ ॥ स्कन्दने कहा—हे महाबुद्धे ! मैं आपसे कृच्छ्रचान्द्रायणादि व्रतोंको कहताहूं, मनुष्य जिनके अनुष्ठानसे यहांपर शरीरकी परमशुद्धिको प्राप्त करसकताहै ॥ ५२ ॥ (प्रथम दिन) एकबार भोजन (दूसरेदिन) रात्रिभोजन, (तीसरेदिन) अयाचित भोजन और (चौथेदिन) उपवास करनेसे पादकृच्छ्रनामक व्रत कहाजाता है ॥ ५३ ॥ बड, गुल्लर, कमल, बिल्वपत्र और कुशोदक, इन सबोंको क्रमसे प्रत्येक दिन पान करनेसे पर्णकृच्छ्रव्रत होताहै ॥५४॥ पिण्याक (तिलकी खली) घृत, तक्र, जल और सक्तु इन सबोंमें एक एकको प्रतिदिन खाकर एकएक उपवास बीचबीचमें करते जानेसे सौम्यकृच्छ्र नामक व्रत कहाजाता है ॥ ५५ ॥ तीनदिन प्रातःकाल और तीनदिन सायंकाल एवं तीनदिन अयाचित विधिसे घृत भोजनकरे फिर तीन दिन उपवास करके ॥ ५६ ॥ पूर्ववत् तीन दिन एकएक कबर मात्र भोजनकरे फिर पिछले तीन दिनोंमें उपवासही करे तो यह अतिकृच्छ्र नामक व्रत कहाता है ॥ ५७ ॥ एकीस दिनतक केवल दूधही पीकर रहजावे तो वह कृच्छ्रातिकृच्छ्र व्रत होताहै, द्वादशदिन पर्यंत (लगातार) उपवास करते रहनेसे पराक नामक व्रत

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

होताहै ॥ ५८ ॥ जिन द्विजको प्राजापत्यव्रतका अनुष्ठान करना हो उसे तीनदिन प्रातःकाल, तीनदिन सायंकाल, और तीनदिन अयाचित भोजन करके तीनदिन उपवास करना चाहिये ॥५९॥ गोमूत्र, गोबर, दूध, दही, घृत, और कुशोदक;—इन सबोंको क्रमसे एक एक दिन पीकर फिर एकरात्रिमें उपवास करनेसे कृच्छ्र सान्तपन व्रत कहलाताहै ॥ ६० ॥ पूर्वोक्त सांतपनव्रतके छओ द्रव्योंका सेवन न करके सातों दिन उपवासही करनेसे कृच्छ्र महासांतपन व्रत होताहै ॥ ६१ ॥ ब्राह्मण यदि तप्तकृच्छ्र व्रतको किया चाहे तो प्रतिदिन एकबार स्नान कर सावधानीसे तीनदिन उष्णजल, दुग्ध, घृत, और वायुको पीवे ॥ ६२ ॥ फिर तीनदिन केवल उष्णजल, तीनदिन उष्ण दुग्ध, तीनदिन उष्णघृत, एवं शेष तीनदिनोंमें केवल वायु भक्षण करे ॥ ६३ ॥ इस व्रतमें (चार रुपयेभरका) एक पल पानी और दूध, एवं दो पल घृतका परिमाण है, इस प्रकारसे तप्तकृच्छ्र व्रत कहागया है ॥ ६४ ॥ गोमूत्रके साथ जव खायाजावे तो वहभी शरीर शोधक एकाह्निक कृच्छ्र कहाजाताहै ॥ ६५ ॥ दिनभर दोनों हाथोंको उत्तान कियेहुए केवल वायु भोजन करे और रात्रिभर जलमें बैठकर सबेरा करे तो वहभी प्राजापत्यव्रतके समानही समझाजाताहै ॥ ६६ ॥ त्रिकाल स्नान करके कृष्णपक्षमें एकएक ग्रासको घटाता जावे और शुक्लपक्षमें एकएक ग्रासको बढाता जावे तो वही चान्द्रायणव्रतकी विधि कही जातीहै ॥ ६७ ॥ अथवा शुक्लपक्षमें एकएक ग्रास बढावे, और कृष्णपक्षमें घटावे एवं अमावास्याको कुछभी नहीं खावे तो वहभी चान्द्रायण व्रत होताहै ॥ ६८ ॥ यदि ब्राह्मण समाहित होकर चार कवर प्रातःकाल और चारही कवर सूर्यास्तहोनेपर भोजनकरे तो वह ब्रह्मचारियोंका चान्द्रायणव्रत कहलाताहै ॥ ६९ ॥ संयमपूर्वक ठीक मध्याह्नकालमें आठ कवर हविष्यान्नका भोजन करलेवे तो वह यतिचान्द्रायण कहाताहै ॥ ७० ॥ समाहित होकर, यदि एकमास भरमें किसीरीतिसे दोसौ चालीस कवर हविष्यके भोजन करे, तो वह चन्द्रलोकका अधिकारी अवश्यही होजाताहै ॥ ७१ ॥ शरीरकी शुद्धि जलसे, मनकी शुद्धि सत्यसे मूलात्माकी शुद्धि विद्या और तपस्यासे एवं बुद्धिकी शुद्धि ज्ञानसे होतीहै ॥ ७२ ॥ पर वह ज्ञान लोगोंको यथार्थरीतिसे काशीके सेवन करनेहीसे होसकताहै, क्योंकि काशीहीके सेवनसे विश्वेश्वरकी दयाका उदय होताहै ॥ ७३ ॥ तभी कर्मके निर्मूलन करनेमें समर्थ महोदयकी प्राप्ति होतीहै । अतएव इस काशीपुरीमें प्रयत्न उठाकर स्नान, दान, तप, जप ॥ ७४ ॥ व्रत, पुराण श्रवण, धर्मशास्त्रोक्त मार्ग सेवन, प्रतिदिन प्रति-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

क्षण विश्वनाथके चरणोंका ध्यान ॥ ७५ ॥ त्रिकाल लिंगपूजन, लिंगकी स्थापना साधुओंके संग वार्तालाप, बारंबार "शिवशिव" का कथन ॥ ७६ ॥ अतिथि सत्कार तीर्थवासियोंसे मैत्री, आस्तिक्यबुद्धि, नम्रता, मान और अपमानमें समानबुद्धि,॥७७॥ निष्कामता, अनुद्धत स्वभाव, रागहीनता, अहिंसा, अप्रतिग्रह वृत्ति, दयार्द्रचित्तता, ॥ ७८ ॥ दंभशून्यता, निर्मत्सरता, अप्रार्थित धनागम, अलोभिता, अनालसता, अपरुषता, और अदीनता ॥ ७९ ॥ इत्यादि सत्प्रवृत्तियोंको क्षेत्रवासी होकर अवश्यही करना चाहिए, इस प्रकारसे वे अपने शिष्यलोगोंको प्रतिदिन उपदेश देवेंगे ॥ ८० ॥ व्यासजी नित्यही त्रिकालस्नान, और लिंगपूजनमें तत्पर होकर केवल भिक्षाहीसे भोजनादिका निर्वाह करतेहुए काशीमें वास करने लगेंगे ॥ ८१ ॥ तदनंतर एकबार महादेवने व्यासकी परीक्षा लेनेके लिये पार्वतीदेवीसे कहा कि, हे सुन्दरि ! आज उस परमधार्मिक व्यासको भिक्षार्थ सर्वत्र पर्यटन करनेपरभी कहींसे कुछभी भिक्षा मतपानेदो, भवानीनेभी भवनाशक (भगवान् भवनाथ) भवकी आज्ञाको प्रणामपूर्वक स्वीकार कर घर घरसे उनकी भिक्षाका निषेधकर दिया। इससे वे मुनिवर व्यास भिक्षाके नहीं पानेसे अपने शिष्योंके सहित बडेही खिन्नहुए ॥८२ ॥८३॥ ८४ ॥ और वेलाको बीततीहुई देखकर फिर नगरमें घूमनेलगे, इधर समस्त भिक्षुकोंने घर घरमें भिक्षापाई ॥ ८५ ॥ पर शिष्योंके सहित व्यासमुनिको उस दिन कहींभी भिक्षा नहीं मिली। फिर तो वे अपने शिष्योंके साथ सन्ध्योपासन इत्यादि कर्मको कर ॥ ८६ ॥ रात्रिदिन वैसेही (कोरा) उपवासही करते रहगये । फिर दूसरेदिन व्यासजी माध्याह्निक विधियोंके करनेपर ॥ ८७ ॥ शिष्योंके साथ नगरमें चारोंओर भिक्षा पानेके लिये घूमते रहे, यहांतक कि बारंबार प्रत्येक धनी गृहस्थोंके घरपर फेरा लगाते रहे ॥ ८८ ॥ पर जैसे भाग्यहीन पुरुषको धन नहीं मिलता वैसेही उनको भिक्षा नहीं मिली । तब तो व्यासजी घूमते घूमते थककर यह सोचनेलगे ॥ ८९ ॥ कि क्या कारणहै जो सुप्रसिद्ध होनेपरभी भिक्षा नहीं मिलतीहै, ? फिर अपने सब शिष्योंको बुलाकर पूछने लगे कि ॥ ९० ॥ जान पडताहै, तुम लोगोंकोभी भिक्षा नहीं मिली ? अच्छा तो मेरे कहनेसे दो तीन जन जाकर देखो तो (सही) कि इस नगरमें क्या हुआ जो ॥ ९१ ॥ बहुप्रयास उठानेपर दूसरे दिनभी कुछ भिक्षा नहीं मिली, संभवहै कि, यहांपर कोई बडाभारी अनिष्ट गिरा चाहता है ॥ ९२ ॥ क्या इस विशाल काशीपुरीमें एकबारही क्षणभरमें सर्वत्र अन्नका क्षय होगया ? किंवा समस्त पुरवासी लोग एक साथही राजदण्डमें पडे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

३२३

गये हैं ॥ ९३ ॥ अथवा हमलोगोंसे डाह रखकर किसीके कहनेसे भिक्षा देना रोक-दियाहै, किंवा नगरवासियोंमें कोई ऐसा उपद्रव मच गयाहै जिससे वे लोग अस्वस्थ होगयेहैं ॥ ९४ ॥ इसका ठीक अनुसंधान (पता) लगाकर तुम लोग अभी चले आओ, इस प्रकारसे पूज्यपाद गुरुकी आज्ञा पाकर उस शिष्य मंडलीसे दो तीन जन वहांसे जाकर उस पुरके निवासी लोगोंकी संपत्ति देखआनेपर उनसे कहनेलगे ॥ ९५ ॥ शिष्योंने कहा आराध्यचरण ! आप श्रवण करें, यहांपर न तो कोई उपसर्गही हुआहै, न समस्त नगर एकबार अन्नहीनही होगयाहै ॥ ९६ ॥ भला जहांपर साक्षात् भगवान् विश्वेश्वर विराजमानहैं, जहां स्वयं स्वर्गतरंगिणी गंगा बहरही हैं, और आपसरीखे महर्षिगण वास करतेहैं, वहांपर उपसर्गजनित भय कहांसे होसकताहै ॥ ९७ ॥ इस विश्वनाथकी पुरीमें सामान्य गृहस्थलोगोंकी जैसी संपत्ति है, वैसी तो अलका इत्यादिको कौनकहे (स्वयं) वैकुंठमेंभी नहीं है ॥ ९८ ॥ हे महामुने ! यहांपर शिव निर्माल्य भोजियों (पंडों) के घरमें जितने रत्न पडे हैं, स्वयं रत्नाकर समुद्रमेंभी उतने नहीं होसकते ॥ ९९ ॥ इस नगरके घर घरमें जितनी अन्नोंकी राशियां पडी हैं, उतनी तो कल्पवृक्षनेभी इन्द्रकी पुरीमें कभी नहीं दीं होंगी ॥ १०० ॥ भला जिस नगरीमें स्वयं विशालाक्षी देवी विशाल फलोंको देरही हैं, वहांके निवासियोंमें एक-मनुष्यभी कभी निर्धन होसकता है ? ॥ १ ॥ मोक्षलक्ष्मीके विलास मंदिररूप इस आनन्दवनमें जब कि मुक्तिही सुलभ होगई है तब अन्य कौनसा वस्तु दुर्लभ होसक-ताहै ॥ २ ॥ यहां समस्त स्त्रियां पतिव्रतमें तत्पर होनेसे साक्षात् भवानीकी मूर्ति होकर अपने समस्त उत्तम कर्मोंको शिवार्पण करदेती हैं ॥ ३ ॥ फिर इस काशीमें जितनेही पुरुष हैं वे सबके सब गणाधिपति, अथवा तारकदृष्टि कुमारके समान हैं ॥ ४ ॥ यहांपर जो लोग माथेपर त्रिपुंड्र लगाये रहते हैं वे तो मानो साक्षात् चन्द्रशेखर ही हैं एवं, जो लोग सहस्रों उपसर्गोंसे पीडित होनेपरभी ॥ ५ ॥ काशीको कभी नहीं छोडते वेही सब सर्वज्ञ हैं ! यहां तो बच्चेभी घरघरमें ब्रह्मवादहीका विवाद करते हैं ॥ ६ ॥ यहां गंगास्नानहीसे निष्पाप होकर सभी चतुरानन होगये हैं, और सभी क्षेत्रसंन्यासी मोक्ष-लक्ष्मीके पति बने हैं ॥ ७ ॥ सभी कोई हृषीकेश (गोस्वामी) पुरुषोत्तम, और अच्युतही जानपडते हैं, क्योंकि वे लोग इस क्षेत्रके परिग्राही होचुके हैं ॥ ८ ॥ स्त्रियां हों अथवा पुरुषहों सभीलोग यहांपर त्रिलोचन, चतुर्भुज ॥ ९ ॥ श्रीकंठ, और मृत्युंजय बनगये हैं इसमें कुछभी सन्देह नहीं है । योंही मोक्षलक्ष्मीको अपने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शरीरमें धारण करनेसे सभीकोई अर्द्धनारीश्वर होगये हैं ॥ ११० ॥ इस काशीमें धर्म, अर्थ, काम, और मोक्षकी बडी भारीभारी ढेरें पडी हैं ॥ ११ ॥ यहांपर कलि और काल कोई बाधा नहीं पहुँचा सकते इसी कारणसे काशीमें वासकरनेवालोंको गर्भवासका क्लेश नहीं झेलना पडता ॥ १२ ॥ यहां तो विश्वनाथके शरणार्थियोंको पापोंका कुछ भय रहताही नहीं है । इस नगरीमें साक्षात् विश्वनायकही नादबिन्दु-कलात्मक होकर विराजमान रहते हैं ॥ १३ ॥ इसीसे यहांपर मंत्र स्वरूप प्रणव ध्वनि-रूपी बनारहता है, फिर इसी कारणसे काशीमें चारोंवेद मूर्तिमान् होकर वास करते हैं यह बात सर्वथा निश्चितहै॥ १४ ॥इस स्थानमें साक्षात् वाग्देवी सरस्वती नदीरूप धारकर बहतीहैं, इसीसे यह शास्त्र मंदिर आनन्दवन समस्त धर्मशास्त्रोंका प्रधान स्थान (अड्डा) कहाजाताहै ॥ १५ ॥ जितने देवते स्वर्गमें रहते हैं वे सब यहांपर वर्तमान हैं इसमें कुछ झूठ नहीं है । सदैव रात्रिके समय नागलोग रसातलसे काशीमें आकर अपने फणामणिके दीपोंसे भगवान् विश्वेश्वरकी आरती करतेहैं । कामधेनुओंके साथ सभी समुद्र यहांपर विश्वनाथको सदैव पंचामृतकी धाराओंसे नहवातेहैं । मन्दार, पारि-जात, सन्तान, हरिचन्दन, और कल्पवृक्ष, समस्त वृक्षोंके साथ यहांपर सदैव वास करतेहैं ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ यहांपर समग्रदेवते, अशेष महर्षिगण, समस्त योगीलोग, सभी कोई काशीनाथकी उपासना करतेहैं ॥ १२० ॥ काशी समस्त विद्याओंकी जन्मभूमी, लक्ष्मीका उत्तम निवासस्थान, एवं त्रिगुणात्मिका यह समस्त काशीही मुक्तिक्षेत्र है ॥ २१ ॥ यह सुनतेही महातपस्वी मुनिवर पराशरात्मजने अपने शिष्योंसे यों कहा कि इस श्लोकको फिरसे तो पढो ॥ ॥ २२ ॥ शिष्योंने कहा—

सब विद्याकी खानिहै, है कमलाको गेह ।
त्रयीमयी यह काशिका, प्रकट मुक्तिकी देह ॥ २३ ॥

स्कन्द बोले—हे कुम्भज ! यह सुनतेही व्यास क्रोधसे अन्धलोचन, और क्षुधाग्निसे प्रज्वलित मूर्ति होकर काशीको शापदेनेलगे ॥ २४ ॥ व्यासने कहा—काशीमें तीन पुरुषलों विद्या न होवे, और तीनपुरुषतक धन नहीं रहे, एवं तीन पुरुष पर्यंत मुक्ति न मिले इस प्रकारसे व्यासने काशीको शाप दिया ॥ २५ ॥ कारण यह कि यहांके रहनेवाले विद्वान् लोग विद्याके अहंकारसे, धनी लोग धनके दर्पसे, एवं कृती लोग मुक्तिके गर्वसे (भिक्षुकोंको) भिक्षा नहीं देतेहैं ॥ २६ ॥ यही समझकर व्यासने

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

३२५

उस घडी काशीको शाप दिया, पर क्रोधित होकर शाप देनेपरभी वे मुनि भिक्षाके लिये फिर चले ॥ २७ ॥ आकाशकी ओर ताकतेहुए वे बडी शीघ्रतासे प्रत्येक घरोंमें घूमे, यहांतक कि समस्त नगरीका चक्कर लगा डालनेपरभी कहींसे भिक्षा नहीं पा सके ॥ २८ ॥ अन्ततो गत्वा सूर्यको अस्तोन्मुख होतेहुए देख भिक्षाके पात्रको फेंककर अपने आश्रमकी ओर चले ॥ २९ ॥ इसके उपरान्त जब जानेलगे तब गृहके द्वारपर बैठीहुई साधारण गृहस्थकी स्त्रीका स्वरूप धरकर महादेवी (भगवती अन्नपूर्णा) ने उनसे अतिथि होनेकी प्रार्थना की ॥ १३० ॥ गृहणी बोलीं--भगवन् ! आज तो कहीं कोईभी भिक्षुकही नहीं दीखपडता, और अतिथिको बिना जिमाये मेरे स्वामी कभी भोजनही नहीं करते ॥ ३१ ॥ वे बहुत विलम्बसे वैश्वदेवादिक सब कर्म करके अतिथिका मार्ग जोहरहे हैं, सो आज आप अतिथि होजाइये ॥ ३२ ॥ क्योंकि जो गृहस्थ अतिथिको विना जिमाये आपही खालेताहै, वह अपने पितरोंके सहित केवल पापही भोजन करताहै ॥ ३३ ॥ अतएव आप तुरंत चलकर अतिथि पूजनसे अपने गृहस्थधर्मको सफल करनेकी इच्छा रखनेवाले मेरे स्वामीका मनोरथ पूर्ण कीजिये ॥ ३४ ॥ यह सुनतेही निष्क्रोध और आश्चर्ययुक्त होकर व्यासने उस स्त्रीसे कहा; व्यास बोले—हे भद्रे ! तुम कौन हो ? और यहां कहांसे आगई ? पहिले तो मैंने तुमको कहीं नहीं देखाथा ॥ ३५ ॥ मेरी समझमें तो तुम कोई शुद्धहृदया धर्ममयी मूर्ति हो ? क्योंकि तुम्हारे दर्शनहीसे मेरी समस्त इन्द्रियां बहुतही प्रसन्न होरहीहैं ॥ ३६ ॥ हे सर्वांगसुन्दरि ! तुम अवश्यही सुधाहो, (स्यात्) मन्दराचलके आघातभयसे भीत होकर क्षीरसमुद्रको छोड यहां चलीआई हो ॥ ३७ ॥ किंवा तुम सुधाकर (चन्द्र) की कलाहो, जो अमावास्यामें राहुके भयसे घबडाकर स्त्रीका रूपधर इस काशीमें निश्शंक वास करतीहो ॥ ३८ ॥ अथवा तुम साक्षात् लक्ष्मी हो जो अपने वासालय कमलको रात्रिमें सकुचतेहुए देखकर सर्वदा खिली रहनेवाली काशीपुरीमें निवास करने लगीहो ॥ ३९ ॥ अथवा काशीवासियोंके सर्वदुःखौघकी हरण करनेवाली परमानन्ददात्री तुमहीं दयाकी मूर्ति हो ॥ १४० ॥ नहींतो तुम इस वाराणसी नगरीकी अधिष्ठात्री देवता होगी, अथवा काशीमें जो मुक्ति लक्ष्मी रहतीहैं तुम वहतो नहींहो ॥ ४१ ॥ जो चाण्डाल और वाजपेयी (ब्राह्मण) परभी अन्त समयमें समान दृष्टि रखतीहैं । किंवा मेरा भाग्यही तो नहीं इस स्त्रीका रूपधरकर परिणत हुआहै ॥४२॥ हो न हो तुम भक्तोंको पार उतारनेवाली वह भवानी (अन्न-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पूर्णा) तो नहींहो जिसका माहात्म्य इस क्षेत्रमें गायाजाताहै ॥ ४३ ॥ तुम अवश्यही न तो स्त्रीहो, न असुरीहो, न किन्नरीहो, न विद्याधरीहो, न नागिनहो, न गंधर्वीहो; न यक्षिणीही हो ॥ ४४ ॥ वास्तवमें तुम मेरे मोहकी दूरकरनेवाली इष्टदेवताही हो अस्तु हे सुन्दरि ! तुम जो चाहो सोहो, इस चिन्ताका तो मुझे कोई प्रयोजन नहीं है॥४५॥ पर इसघडी तुम्हारे दर्शनहीसे मैं पराधीन होगयाहूं, मैं जो कुछ तुम आज्ञा दोगी उसे अवश्यही करूंगा ॥ ४६ ॥ हे शुभलोचने ! एक तपस्याके व्ययको छोडकर शेष जो कर्मकरनेकी तुम्हारी अनुमति मिलेगी उसेही मैं करडालूंगा ॥ ४७ ॥ तुम्हारे ऐसी साध्वी स्त्रियोंकी बात साधुओंकी बडाईको कभी नहीं बिगाड सकती, परन्तु हे सुभगे ! तुम कौनहो ? यह बात मुझसे सच सच कहदो ॥ ४८ ॥ अथवा हे निर्मलेक्षणे ! तुम्हारे इस पवित्र शरीरमें असत्यका लेश कहां है ? हे घटोद्भव ! तब तो विश्वजननी व्यासकी इन सब बातोंको सुनकर कहने लगीं कि ॥ ४९ ॥ हे मुने ! यहांहीके एक गृहस्थकी मैं कुटुम्बिनी हूं, और आपको अपने शिष्योंके सहित भिक्षाके लिए जातेहुए नित्यही देखतीहूं ॥ १५० ॥ आप मुझे नहीं जानते पर मैं आपको भलीभाँतिसे पहिचानती हूं, हे तपस्विन् ! बहुत बात करनेका अवसर नहीं है, जबतक सूर्यनारायण अस्त नहीं होजाते ॥ ५१ ॥ उसके भीतरही मेरे स्वामीके आतिथ्यको आप सफल कीजिए, यह सुनकर व्यासऋषिने बडी नम्रताके साथ कहा ॥ ५२ ॥ (व्यास बोले)—हे सुभगे ! मेरा एक नियम है, जहांपर उसका प्रतिपालन होताहै, वहींपर मैं भिक्षा करताहूं नहीं तो नहीं करसकता ॥ ५३ ॥ इस भाँतिसे व्यासका कथन सुनकर भगवतीने कहा कि, हे मतिमन् ! आपका जो कुछ नियम हो उसे आप निःशंक होकर कहिए ॥ ५४ ॥ क्योंकि मेरे स्वामीकी कृपासे यहांपर किसी वस्तुकी न्यूनता नहीं है, यह सुनतेही बडे प्रसन्नचित्तसे व्यास बोले ॥ ५५ ॥ मैं अपने दशसहस्र शिष्योंको अपनेही साथ खिलाताहूं । और सूर्यके रहतेही खालेताहूं, नहीं तो फिर भोजन नहीं करता ॥ ५६ ॥ यह सुनतेही प्रसन्न मुखसे उस स्त्रीने कहा कि, हे मुने ! तो फिर आप विलम्ब क्यों करतेहैं ? अपने सब शिष्योंकोभी बुलालीजिये ॥ ५७ ॥ फिर व्यासने उस स्त्रीसे कहा कि हे साध्वि ! क्या तुम्हारी सिद्धि ऐसी है ? जिससे मेरे सब शिष्योंकी तृप्ति होजावेगी ? ॥ ५८ ॥ इस पर उस स्त्रीने कुछ हँसकर कहा, हे महर्षे ! पतिदेवके अनुग्रहसे मेरे घरमें उतनी सामग्री सदैव सिद्धही रहतीहै ॥ ५९ ॥ जितनेमें समस्त आर्थिजन सब प्रकारसे सन्तुष्ट

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

३२७

होजासकें, हमलोग ऐसी महिला नहीं हैं, जो पतिको सन्देहमें डालदेवें ॥ १६० ॥ कि जब अतिथि घरमें आजावें तब सामग्री सिद्ध करनेलगें। स्वामीके चरणोंकी कृपासे मेरेलिए सबदिशायें भरपूर और सभी मनोरथ परिपूर्ण एवं गृहमें समस्तवस्तु सुसज्जितही रहते हैं। सो आप अभी जाइये और चाहे जितने अन्नार्थियोंको साथ लिवा-लाइये ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ क्योंकि अतिथिप्रिय मेरेपति बहुतही बूढे हैं, वे (अब) बहुत बिलम्ब नहीं सहसकते, इसलिये आप शीघ्रही जाकर उनके आतिथ्य सत्कारके लिए सूर्यास्तके पहिलेही आजाइये। तब तो बडी प्रसन्नतासे अपने सब शिष्योंको चारों ओरसे बुलाकर ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ तुरत लौट आये और उसे अपना मार्ग जोहते देखकर कहनेलगे। हे मातः! (हम) सब लोग आगये अब तुरंत भोजन दो ॥ ॥ ६५ ॥ अब तो सूर्यनारायणभी अस्ताचलपर जायाही चाहतेहैं। ऐसा कहनेके अनन्तर वे सब तपस्वी लोग मंदिरके भीतर चलेगये ॥ ६६ ॥ भीतर पहुँचतेही वहांकी मणियोंके किरणराशिसे सूर्यकी शोभाको पाकर वे सब तपस्विगण ज्योंही आँगनमें पहुँचे ॥ ६७ ॥ त्योंही कोई तो उनलोगोंके पैर धोनेलगे, कोई पूजा करने लगे और कोई समस्त पकवानोंको परोसकर भोजनही करानेके लिए बैठानेलगे ॥ ॥ ६८ ॥ वे सब लोग उन सब उत्तमोत्तम व्यंजनोंको देख, तथा उनके दिव्यसुगन्धोंको सूँघतेही क्षणमात्रमें संतुष्ट होगये ॥ ६९ ॥ फिर उन पकवानोंके भोजन करनेसे तो असीम तृप्तिको प्राप्त हुए। तदनन्तर हाथ मुँह धोकर चन्दन, माला, वस्त्र इत्यादिसे भूषित होनेपर ॥ १७० ॥ सायंकालकी सन्ध्या इत्यादि करके गृहस्वामीके सन्मुख बैठकर बहुतेरे आशीर्वादोंसे अभिवन्दन करतेहुए ज्योंही जानेका उपक्रम करनेलगे ॥ ७१ ॥ त्योंही वृद्ध गृहस्थने गृहिणीकी ओर ताककर उसका दिया, तब उस वृद्धाने पूछा कि, तीर्थमें वास करनेवालोंका मुख्य धर्म क्या है? ॥ ७२ ॥ कि हमलोग उसीके अनुसार इस तीर्थमें बर्ताव करें। धर्मज्ञश्रेष्ठ वेदव्यास गृहिणीके प्रश्नको सुनकर ॥ ७३ ॥ एवं उसके अपूर्व सादर आतिथ्यसत्कारसे संतुष्ट होनेके कारण प्रसन्नतापूर्वक कुछ हँसकर उस परमसर्वज्ञा गृहिणीसे कहनेलगे ॥ ७४ ॥ व्यासने कहा—हे स्वच्छहृदये! मातः! तुमने हमलोगोंको परमोत्तम मिष्टान्न खिलाकर बडा सत्कार कियाहै, हे देवि! जो कुछ कार्य तुम करतीहो वही धर्म है उससे भिन्न कोई दूसरा धर्म नहींहै ॥ ७५ ॥ पतिदेवकी सेवामें तत्पर रहनेसे धर्मका मर्म तुम्हीं समझतीहो, पर यदि सचमुच मुझसे पूंछती ही हो तो जो बनपडेगा मैंभी तुमसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कहताहूं ॥ ७६ ॥ क्योंकि पूछनेपर यदि कुछभी जानता रहे तो उसे कहनाही उचितहै । हे सुभगे ! जिसमें आपके ये बूढेपति सन्तुष्ट रहें वही एकमात्र धर्महै, तद्भिन्न कोई दूसरा धर्म नहींहै । गृहिणीने कहा—हे मुने ! यह तो धर्म निश्चय ठीकहीहै और यथा शक्ति कियाभी जाताहै ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ परन्तु मैं आपसे साधारण धर्मोंको पूछती हूं आप उनको मुझसे कहें ! व्यासबोले—ऐसी बात कहना जिसमें किसीको कुछ क्लेश न हो, दूसरेकी उन्नति देखकर उसपर ईर्ष्या न करना, सर्वदा सबकार्योंको भलीभाँति विचारपूर्वक करना, और अपनेगृहकी उन्नतिका सोचना, (येही साधारण धर्म हैं) ॥ ७९ ॥

दोहा—मधुर वचन नित बोलिए, कभू करिय मत डाह ।
सदा विचारिय काज सब, निजगृह उन्नति चाह ॥

(इसी बीचमें बूढे) गृहस्थ (बाबा) ने कहा—हे विद्वन् ! इन सब धर्मोंमें कौनसा धर्म आपमें है, उसे तो यहां (पर) कह सुनाइये ! ॥ १८० ॥ तबतो व्यासजीको ठकमुर्रीसी लगगई, और कुछभी उत्तर नहीं देसके । अनंतर (वृद्ध) गृहस्थने फिर उस तपोधन (व्यास) से कहा ॥ ८१ ॥ यदि तुम इन्हीं सबको धर्म मानते हो जिनको अभी कहाहै, तबतो शापका उत्तम दान देकर तुमने अपनी दांतताको भलेही (स्पष्टकर) दिखादिया ! ॥ ८२ ॥ दया और धीरताकी पराकाष्ठा तुम्हींमें है, फिर काम और क्रोधको बांधरखना तुम्हाराही कामहै, ॥ ८३ ॥ और उद्वेगरहित बात बोलनेका ढंग तो तुम्हीं जानतेहो, हां, दूसरेकी बढती देखकर प्रसन्न होनेकी (निराली) छटाभी तुम्हींमें दिखाई देतीहै ॥ ८४ ॥ फिर विचार कारिताके तो एकमात्र तुम्हीं कोशागार हो, (रहा) अपने गृहके उदयका चिंतन सो तो मानो आपहीके बांटे पडा है ॥ ८५ ॥ अच्छा, हे विद्वन् ! मेरी एकबातका तो उत्तर कहो कि यदि कोई अभाग्यवश स्वार्थकी सिद्धिके नहीं पानेपर क्रोधकरके शाप देदेवे, तो वह शाप किसपर पडताहै ? ॥ ८६ ॥ व्यासने कहा—जो कोई दुरदृष्टवश अपने कार्यके सिद्ध नहीं होनेसे क्रोधकरके शाप देबैठताहै, वह शाप उस अविवेकी दाताहीपर पडताहै ॥ ८७ ॥ गृहस्थ बोले अहोविप्र ! यदि (बहुत) घूमने फिरनेपरभी आपको भिक्षा नहीं मिली तो भला इसमें बिचारे क्षेत्रवासियोंने आपका क्या अपराध किया ? ॥ ८८ ॥ हे तपोधन ! मेरी बात सुनो, जो कोई मेरी इस राजधानीमें दूसरेकी संपत्तिको नहीं देख सकता वह तो स्वयं शापग्रस्तहै ॥ ८९ ॥ हे कोपनमुने ! शापशून्य ! मेरे इस क्षेत्रमें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

३२९

आजसे तुम मतरहो, क्योंकि यहां वसनेकी तुम्हारी योग्यता नहीं है ? ॥ ९० ॥ तुम अभी इस क्षेत्रसे बाहर चलेजाओ, तुम्हारे ऐसे लोगोंके रहनेयोग्य मोक्षसाधक मेरा यह क्षेत्र (कभी) नहीं होसकता॥९१॥मेरे इस क्षेत्रके निवासियोंसे जो कोई थोडीसीभी दुष्टता करताहै उस अत्याचारके फलसे उसे रुद्रपिशाचही होना पडता है ॥ ९२ ॥ इस वचनके सुनतेही व्यासजीका तालु और ओठ चटकनेलगा, वे बिचारे थरथर काँपतेहुए भगवतीके शरणागत होकर उनके चरणोंके आगे लोटनेलगे ॥ ९३ ॥ और बहुतही रोरोकर यह कहनेलगे कि हे मातः ! मुझ अनाथ और अज्ञान बालकको सनाथ करके रक्षाकरो और बँचालो ॥ ९४ ॥ हे जननि ! हमलोगोंका दुष्ट हृदय बहुतेरे अपराधोंका भवन है, अतएव मुझ शरणागतकी रक्षाकरो मैं आज आपका शरणागत हूं मुझपर दयाकरो ॥ ९५ ॥ हे शिवे ! यद्यपि महादेवके शापको अन्यथा करदेनेकी शक्ति किसीमेंभी नहीं पर मैं आपका शरणागतहूं, अतएव इस दासपर दयाकरके ऐसा करदो ॥ ९६ ॥ जिसमें प्रतिअष्टमी और चतुर्दशीको मैं सदैव इस क्षेत्रमें प्रवेश करसकूं, हे पार्वति ! भगवान् शंकरभी आपकी बात नहीं टालेंगे ॥९७॥ व्यासकी विनती सुनकर करुणामयी अन्नपूर्णा देवीने विश्वनाथ स्वामीके मुखकी ओर ताककर उनकी आज्ञानुसार व्याससे "तथास्तु" कहदिया ॥ ९८ ॥ तदनन्तर वे दोनोंही क्षेत्रके मंगलकारक महादेव और पार्वती अन्तर्धान होगये, और व्यासभी अपनेही अपराधको कहतेहुए क्षेत्रके बाहर निकलगये ॥ ९९ ॥ वे तबसे दृष्टिके दौडहीमें रात्रि दिन क्षेत्रका दर्शन करतेहुए अष्टमी और चतुर्दशी आनेपर क्षेत्रके भीतर सदैव प्रवेश करतेहैं ॥ २०० ॥ लोलार्कसे अग्निकोणमें गंगाके पूर्वतटपर बैठे रहकर वे आजतक (सदैव) काशीके मंदिरराजिकी शोभाको देखते रहतेहैं ॥ १ ॥ स्कन्द बोले—हे कुम्भजमुने ! इस प्रकारसे महर्षिवेदव्यास उस क्षेत्रमें शापदेवेंगे, और उसी कारणसे तुरत आप क्षेत्रसे बाहर होजावेंगे ॥ २ ॥ इसलिये जो कोई अविमुक्तक्षेत्रका भला चाहेगा, उसकाभी सदैव भलाही होगा, इसके विरुद्ध करनेसे विपरीतही फल मिलेगा ॥ ३ ॥ जिसके कर्णकुहरमें यह व्यास—शाप—विमोक्षणनामक पवित्र अध्याय प्रवेश करेगा उसे कभी बडेसे बडे उपसर्गोंका भी भय नहीं होने पावेगा ॥ २०४ ॥

सोरठा—रामनगर एक ठाम, पुरते गंगापारमें ।
तहाँ व्यासको धाम, काशिराजके दुर्गमें ॥ १ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

तँह मेला विख्यात, होत माघके मासभर ।
व्यास दरस हित जात, काशीवासी नारिनर ॥ २ ॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे चतुर्थे काशीखण्डे उत्तरार्धे भाषायां षण्णवतितमोऽध्यायः ॥९६॥

सत्तानवेवाँ अध्याय ।

क्षेत्रके (लिंगरूप) तीर्थोंका वर्णन ।

अगस्त्य बोले—हे शिवनन्दन ! वेदव्यासकी इस भविष्य घटनाके सुननेसे मैं बडाही आश्चर्यान्वित हुआ, हे षडानन ! अब आप आनन्दकाननमें जिन जिन स्थानोंपर जो जो लिंगस्वरूप तीर्थहैं, उनको (भी) मुझसे वर्णन कीजिये ॥ १ ॥ २ ॥ स्कन्दने कहा—हे कुम्भयोने ! भगवतीके पूछनेपर भगवान्ने इस विषयमें जो कहाथा उसे ज्योंका त्यों कहताहूं, श्रवणकरो ॥ ३ ॥ देवीने कहाथा (कि) हे प्रभो ! महेश्वर ! इस काशीधाममें जहां जहांपर जो जो तीर्थहैं, आप उन सबको यथास्थान मुझसे कीर्तन कीजिये ॥ ४ ॥ (तब) देवदेवने उत्तर दिया था कि हे विशालाक्षि ! (तुमने जो पूछा है, उसे मैं कहताहूं) सुनो, हे देवि ! सभी लिंग तीर्थ कहे जाते हैं, और इन्हीं मूर्तियोंहीके संबन्धसे जलाशयभी तीर्थके नामसे कहेगयेहैं॥ ॥ ५ ॥ ब्रह्मा, विष्णु, सूर्य, शिव, और गणेशादिक देवतोंकी तो मूर्तियां होतीहैं, पर शिवका लिंगही प्रसिद्ध है, फिर ये सब जहां रहतेहैं वही तीर्थ कहाताहै ॥ ६ ॥ इस वाराणसीपुरीमें प्रथमतीर्थ तो महादेवही हैं, उनके उत्तरओर सारस्वतपदका देनेवाला एक बडाभारी कूप है ॥ ७ ॥ क्षेत्रके पूर्वोत्तरभागमें अवस्थित उस कूपका दर्शन करनेसे मनुष्य पशुपाशसे मुक्त होजाताहै, उसके पिछवाडे मूर्तिमती वाराणसी देवी विराजमानहैं, ॥ ८ ॥ वह लोगोंसे पूजित होनेपर सुखपूर्वक सदा निवासका दान करतीं हैं । महादेवके पूर्व गोप्रेक्षनामक उत्तम लिंग अवस्थितहै ॥ ९ ॥ उसके दर्शन करनेसे गोदानका संपूर्णफल होताहै, पूर्वकालमें भगवान् शंकरने स्वयं गोलोकसे गायोंको भेजाथा ॥ १० ॥ और वे सब काशीमें आईं अतएव उस लिंगका नाम गोप्रेक्षपडा है गोप्रेक्षके दक्षिणभागमें दधीचीश्वरनामक लिंगहै ॥ ११ ॥ उसके दर्शनसे लोगोंको यज्ञ करनेका फल होताहै । उसकेभी पूर्व मधु कैटभके पूजित अतीव सुशोभितहैं ॥ १२ ॥ प्रयत्नपूर्वक उस लिंगके अवलोकनसे विष्णुलोककी प्राप्ति होतीहै; गोप्रेक्षके पूर्वभागमें विज्वरनामक लिंग है ॥ १३ ॥ उसके पूजन करनेसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

३३१

मनुष्य क्षणभरमें ज्वरसे रहित होजाताहै। उससे भी पूर्व चारों वेदोंके फलदाता वेदेश्वर विराजितहैं ॥ १४ ॥ पूर्वोक्त वेदेश्वरसे उत्तर क्षेत्रज्ञाता आदिकेशवहैं, उनके दर्शनसे त्रैलोक्यमात्रके दर्शनका पुण्य अवश्य होताहै ॥ १५ ॥ उनसे पूर्वकी ओर संगमेश्वर लिंगके दर्शनसे निष्पापता होती है, उसकेभी पूर्व चतुर्मुख ब्रह्माका स्थापित चतुर्मुख ॥ १६ ॥ प्रयागनामक लिंग है, उसकी पूजा करनेसे ब्रह्मलोक प्राप्त होताहै। वहींपर शांतिकरी गौरीभी हैं जो पूजनहीसे शांति करदेती हैं ॥ १७ ॥ वरुणाके पूर्वतटपर कुन्तीश्वरहैं, जो पूजन करनेसे कुलके उज्ज्वल करनेवाले पुत्रोंको (उत्पन्नकर) देतेहैं ॥ १८ ॥ कुन्तीश्वरसे उत्तर कपिलधारानामक एक बडातीर्थहै, वहांपर स्नान करके वृषभध्वजकी अर्चना करनेहीसे ॥ १९ ॥ राजसूय यज्ञ करनेका पूरा पूरा फल मिलजाताहै, और वहांपर श्राद्ध करनेसे तो रौरवादिक नरकोंमें पडेहुए करोडों पितर पितृलोकमें चलेजातेहैं॥ २० ॥ हे मुने ! गोप्रेक्षहीके उत्तरभागमें अनुसूयेश्वर लिंगभी है ॥ २१ ॥ उसके दर्शनसे स्त्रियोंको निस्सन्देह पातिव्रत्यका फल लाभ होताहै। उस लिंगके पूर्वभागमें सिद्धिविनायकका पूजन करना चाहिये ॥ २२ ॥ उनके प्रणामही करनेसे जो कोई जिस सिद्धिको चाहे उसे वही प्राप्त होती है। उन गणेशसे पश्चिमकी ओर हिरण्यकशिपुका स्थापित एक लिंगहै ॥ २३ ॥ और वहींपर एक हिरण्यकूपभीहै, जो हिरण्य और अश्वोंकी सम्पत्तिको देताहै ॥ ॥ २४ ॥ उसके भी पश्चिम सिद्धिप्रद मुंडासुरेश्वरनामक लिंगहै एवं गोप्रेक्षसे नैर्ऋत्यकोणपर अभीष्टदायक वृषभेश्वर लिंगभी (विराजितहै)॥ २५ ॥ हे मुनिनायक ! महादेवके पश्चिम (मेरास्थापित कियाहुआ) स्कन्देश्वरनामक लिंगहै, उस लिंगके पूजन करनेसे लोगोंको मेरे लोकमें वास मिलताहै ॥ २६ ॥ उसके पासहीमें वहींपर शाखेश्वर और विशाखेश्वरनामक तथा नैगमेयेश्वर लिंगभी है, एवं जो नन्दी इत्यादि शिवके गणलोगहैं, ॥ २७ ॥ उन सबके स्थापित सहस्रों और भी लिंग वहांपर शोभितहैं, उन सबके दर्शनसे उहीं उहीं गणोंके लोकोंकी प्राप्ति होतीहै ॥ २८ ॥ नन्दीश्वरके पश्चिम कुबुद्धिनाशक शिलादेश्वरहैं और वहींपर महाबलप्रद शुभमय हिरण्याक्षेश्वरभी हैं ॥ २९ ॥ उससे दक्षिणकी ओर सब सुखोंका देनेवाला अट्टहासंज्ञक लिंगहै, और उसके उत्तर शुभप्रद प्रसन्नवदनेश्वरनामक लिंगहै ॥ ३० ॥ जो भक्त उसका दर्शनकरे वह सदैव प्रसन्नवदनही रहताहै, फिर उसीके उत्तर ओर प्रसन्नोद (क) नामक लोगोंको निर्मलता देनेवाला एक कुण्डहै ॥ ३१ ॥ उक्त

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अट्टहास लिंगके पश्चिम मित्रावरुणनामक महापातकहारी दो लिंग बिराजितहैं, उनके पूजन करनेसे उन्हींके लोकोंमें वास मिलताहै ॥ ३२ ॥ फिर अट्टहासके नैर्ऋत्यकोणपर बृद्धवासिष्ठसंज्ञक लिंगहै, उसकी पूजा करनेसे लोगोंको बडाभारी ज्ञान उत्पन्न होजाताहै ॥ ३३ ॥ वसिष्ठेश्वरके समीपहीमें विष्णुलोकके दाता कृष्णेश्वर और उनके दक्षिण ब्रह्मतेजके बर्द्धक याज्ञवल्क्येश्वरहैं ॥ ३४ ॥ उसके पीछेकी ओर भक्तिवर्धन प्रह्लादेश्वर लिंगहै, जहांपर भगवान् शिव भक्तोंपर अनुग्रह करनेकी इच्छासे स्वयं लीन हुएहैं ॥ ३५ ॥ अतएव प्रह्लादेश्वरसे पूर्व स्वलीननामक लिंग प्रयत्नपूर्वक पूजनहीके योग्यहै, क्योंकि परमानन्दके चाहनेवाले ज्ञाननिष्ठ लोगोंकी जो गति होतीहै, स्वलीनके समीपमें शरीर त्यागनेवालेकोभी सदैव वही गति मिलतीहै ॥ ३६ ॥ स्वलीनलिंगके सन्मुखही वैरोचनेश्वर लिंग स्थितहै, और उसके उत्तरभागमें महाबलवर्धक बलीश्वर लिंगहै ॥ ॥ ३७ ॥ एवं वहींपर पूजकलोगोंको वांछितफल देनेवाला बाणेश्वर लिंगभी विराजमानहै चन्द्रेश्वरसे पूर्वओर एक विद्येश्वरनामक लिंगहै ॥ ३८ ॥ उस लिंगके सेवन करनेसे सब विद्यायें प्रसन्न रहतीहैं, उसके दक्षिणभागमें महासिद्धि विनायक वीरेश्वर लिंगहै ॥ ३९ ॥ वहींपर समस्त दुःखमोचनी विकटादेवीभी हैं, वह स्थान सर्वसिद्धिदायक पंचमुद्रनामक महापीठहै ॥ ४० ॥ वहांपर कैसेही बडे मंत्रोंको जपे, वे बहुतही शीघ्र सिद्ध होजातेहैं, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है, उस स्थानके वायुकोणपर सगरेश्वरनामक लिंग परम पूजनीयहै ॥ ४१ ॥ उसके पूजन करनेसे अश्वमेध यज्ञका पूरापूरा फल प्राप्त होताहै, उससे ईशानकोणपर तिर्यग्योनि निवारक वालीश्वर लिंगहै ॥ ४२ ॥ उसके उत्तरभागमें महापापराशियोंका संहारक सुग्रीवेश्वर लिंग, और वहीं पर ब्रह्मचर्यका फल देनेवाला हनूमदीश्वर लिंगभी शोभितहै ॥ ४३ ॥ उसी स्थानपर महाबुद्धिप्रद जाम्बवती (दी) श्वरभी हैं, तदनंतर गंगाके पश्चिम तटपर (अश्विनी कुमारोंके प्रतिष्ठित) आश्विनेयेश्वरनामक दोनों लिंगोंकी पूजा करनी चाहिये ॥ ४४ ॥ फिर उनके उत्तरभागमें गैयोंके क्षीरसे भराहुआ भद्रह्रदनामक एक कुंडहै, विधिपूर्वक सहस्रकपिला गोदान करनेसे जो फल होता है ॥ ४५ ॥ इस भद्रह्रदमें स्नान करनेसे भी मनुष्य निस्सन्देह उसी फलको पाताहै, जब कभी पूर्वभाद्रपदनक्षत्र युक्त पौर्णमासी होवे ॥ ४६ ॥ तभी वहांका परम पुण्यकाल होताहै, उस घडी उसमें नहालेनेसे अश्वमेधयज्ञका फल मिलजाताहै । उस ह्रदके पश्चिम तीरपर भद्रेश्वरका दर्शन करनेसे ॥ ४७ ॥ मनुष्य निश्चयही गोलोकवासी होताहै, कारण दर्शनहीका पुण्यबल होजा-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

३३३

ताहै। हे मुने ! भद्रेश्वरसे नैर्ऋत्यकोणपर उपशांतशिव बिराजित हैं ॥ ४८ ॥ उस लिंगके स्पर्श करतेही परमशांति आजाती है, एवं उस उपशान्तनामक शिवलिंगके दर्शन करनेसे सैकडों जन्मोंके बटोरे हुये ॥ ४९ ॥ पापपुंजको त्यागकर मंगलराशिको प्राप्त करता है, उसके उत्तरभागमें योनिचक्रका निवारण करनेवाला चक्रेश्वरनामक लिंग है ॥ ५० ॥ जिसके उत्तरकी ओर महापुण्य वर्धक एक चक्रहद भी है, मनुष्य उस चक्रहदमें स्नानकर शुद्धहृदयसे चक्रेश्वरका पूजन करनेसे शिवलोकमें गमनकरता है, उसने नैर्ऋत्य कोणपर प्रयत्न उठाकर शूलेश्वरका दर्शन करना चाहिये ॥ ५१ ॥ ॥ ५२ ॥ हे वरवर्णिनि ! पूर्वकालमें मैंने स्नान करनेके लिये वहींपर अपना त्रिशूल गाडदिया था, जिससे शूलेश्वरके आगे यह बडाभारी पोखरा होगया है ॥ ५३ ॥ उस हदमें नहाकर भगवान् शूलेश्वरका दर्शन करनेसे मनुष्य संसाररूप गह्वरको त्यागकर रुद्रलोकको चलेजाते हैं ॥ ५४ ॥ उसके पूर्वभागमें देवर्षिनारदने घोर तपस्या की थी और एक उत्तम कुंड बनाकर वहींपर शिवलिंगकी भी स्थापना करदी थी ॥ ५५ ॥ जो कोई उस कुंडमें स्नान करके नारदेश्वरका दर्शन करता है, वह महाघोरसंसारसागरके पार उतरजाता है, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है ॥ ५६ ॥ नारदेश्वरसे पूर्वभागमें स्थित अवभ्रातकेश्वरका दर्शन करनेसे (मनुष्य) समस्त पातकोंको दूरभगाकर निर्मलगतिको प्राप्त होताहै ॥ ५७ ॥ उसके आगे ताम्रकुंड है, जिसमें स्नान करलेनेसे फिर कभी गर्भका दुःख नहीं झेलना पडता, उससे वायव्यकोणपर समस्त विघ्नोंके विध्वंसक विघ्नहर्तानामक गणेश हैं ॥ ५८ ॥ एवं विघ्नहरनामक एक कुंडभी वहींपर है, जिसमें नहानेवालेको विघ्नभागी नहीं होना पडता, उसके उत्तरभागमें एक अनारकेश्वरनामक उत्तम लिंग शोभायमान है ॥ ५९ ॥ और नारकनामक एक कुंडभी है, जिसके स्नानसे नरक नहीं भोगना पडता, उसके भी उत्तर वरणा (नदी) के रमणीय तीरपर वरणेश्वर लिंग है ॥ ६० ॥ हे महामुने ! इसीकी आराधनासे अक्षपादनामा एक परम शैवजन इसी स्थूलशरीरसे शाश्वती सिद्धिको प्राप्त होगये थे ॥ ६१ ॥ उसके पश्चिम परमनिर्वाणदाता शैलेश्वर हैं, उनसे दक्षिणकी ओर शाश्वत—सिद्धिप्रद कोटीश्वर लिंग है ॥ ६२ ॥ वहांपर कोटितीर्थनामक हृदमें नहाकर कोटीश्वरका पूजन करनेसे मनुष्य कोटिगोदान करनेका फल पाता है ॥ ६३ ॥ कोटीश्वरसे अग्निकोणपर महाश्मशानका स्तंभ गडा है उस खम्भेमें उमादेवीके सहित महारुद्र सदैव वास करते हैं ॥ ६४ ॥ उस स्तम्भके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विभूषित करनेसे मनुष्य रुद्रपदका भागी होताहै, वहींपर कपालेश्वरके समीपहीमें एक बहुत बडा ॥ ६५ ॥ कपालमोचननामक तीर्थ है, जिसमें स्नान करनेसे अश्वमेधयज्ञका फल मिलताहै, और उसके उत्तर शोभन ऋणमोचन तीर्थ शोभितहै ॥ ६६ ॥ यदि कोई उस तीर्थमें नहालेवे तो ऋणबंधनसे छूट जाताहै, उसी स्थानपर अंगारक तीर्थभी है, जो अंगारहीके समान उज्ज्वल रहताहै, ॥ ६७ ॥ उस अंगारक तीर्थमें स्नान करनेसे फिर गर्भवासी नहीं होना पडता । जो कोई मंगलवारकी चतुर्थीको उस तीर्थमें नहाताहै उसे किसी प्रकारकी व्याधियां अथवा दुःख कभी नहीं सतासकते ॥ ६८ ॥ उसके उत्तरभागमें ज्ञानप्रद विश्वकर्मेश्वर लिंगहै, और उससे दक्षिणकी ओर एक उत्तम महामुंडेश्वरलिंग है ॥ ६९ ॥ एवं शुभोदकनामक स्नान योग्य एक कूपभी है, वहींपर मैंने अपनी सुन्दरमुंडमाला उतारकर रखदी थी॥७०॥ जिससे वहांपर महामुंडा नाम्नी पातकहारिणी एक देवी प्रकट होगई हैं, एवं जिस स्थल पर मैंने अपना खट्वांग रक्खाथा वहांपर खट्वांगेश्वर होगये हैं ॥ ७१ ॥ उस लिंगके दर्शन करनेसे मनुष्य पापरहित होजाताहै, उसके दक्षिणभागमें भुवनेश्वरनामक लिंग और कुंडभी वर्तमानहै ॥ ७२ ॥ उस भुवनेश्वरकुंडमें नहानेसे मनुष्य भुवनेश्वरही होताहै, उसके दक्षिणकी ओर विमलेश्वर लिंग और विमलोदक कुण्डहै, ॥७३॥ उसमेंभी स्नान करके विमलेश्वरका दर्शन करनेसे मनुष्य विमल होजाताहै, वहांपर त्र्यंबकनामक एक शैव सिद्ध होगया था ॥ ७४ ॥ उसने इसी शरीरसे रुद्रलोकको प्राप्त किया था, उसके पश्चिम परमपुण्यप्रद भृगुमुनिका आश्रम है ॥ ७५ ॥ विधिपूर्वक उसका पूजन करनेसे मनुष्य शिवलोकमें चलाजाताहै, उसके दक्षिण महाशुभदायक शुभेश्वरनामक लिंगहै ॥ ७६ ॥ इसी लिंगके प्रतापसे महातपस्वी कपिलऋषिनामक शैव सिद्ध होचुके हैं, वहांपर कपिलेश्वरके पासहीमें एक रमणीय गुहाहै ॥ ७७ ॥ उस गुफामें जो कोई घुसताहै, उसे फिर कभी गर्भमें प्रवेश नहीं करना पडता, वहींपर यज्ञोदक कूपभीहै, जो अश्वमेधयज्ञका फल देताहै ॥ ७८ ॥ यही (कपिलेश्वर) आदि वर्णमयात्मक ओंकारहै, पर मत्स्योदरीके उत्तरतटपर जो नादेश्वरहै, वह तो मैंही हूं ॥ ७९ ॥ नादेश्वरही परमब्रह्म, और परमगति, एवं दुःखमय संसारसे मोचन करदेनेका प्रधान स्थान कहा जाताहै ॥ ८० ॥ जब कभी भगवान् नादेश्वरके दर्शनको भगवती जह्नुनन्दिनी गंगा वहां जातीहैं, तब वह मत्स्योदरी कहीजातीहै, उस घडी वहांका स्नान बडे पुण्यसे मिलताहै ॥ ८१ ॥ हे महा-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

३३५

देवि! जब कपिलेश्वरके पूर्वकी ओर मत्स्योदरी (तीर्थ) में गंगा (की-सोती) आजातीहै, तब वह संगमयोग बहुतही दुर्लभहै ॥ ८२ ॥ कपिलेश्वरसे उत्तर उद्दालकेश्वर लिंगहै, उसके दर्शन करनेहीसे सब किसीको परमसिद्धि लाभ होताहै ॥ ८३ ॥ उसके भी उत्तर सर्वार्थ सिद्धिदायक वाष्कुलीश्वर लिंगहै, और उसके दक्षिण एक कौस्तुभेश्वरसंज्ञक लिंगहै ॥ ८४ ॥ उसकी पूजा करनेसे मनुष्य रत्नसमूहोंसे कभी शून्य नहीं होने पाता, कौस्तुभेश्वरके दक्षिण शंकुकर्णेश्वरहैं॥८५॥ उस लिंगकी आराधनासे आजभी साधक परमज्ञानको प्राप्त करताहै, कपिलेश्वरके समीप जो गुफाहै, उसके द्वारहीपर शुभमय अघोरेश्वरहैं, और उनके उत्तरभागमें अश्वमेध फलप्रद अघोरोद (क) नामा कूप (भी) है। वहींपर गर्गेश्वर और दमनेश्वरनामक दो लिंग और भी विराजमानहैं ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ जहांपर गर्ग और दमनमुनिने इसी शरीरसे सिद्धि पाई थी, इन दोनों लिंगोंकी पूजासे बाँछितकार्य सिद्ध होजाताहै ॥ ८८ ॥ उसके दक्षिणभागमें रुद्रावासनामक महाकुंडहै, वहांपर रुद्रेश्वरके पूजन करनेसे कोटिरुद्रका फल प्राप्त होताहै ॥ ८९ ॥ हे अपर्णे! जब चतु-र्दशी (तिथि) में रुद्र (आर्द्रा) नक्षत्र मिले, तब उस रुद्रकुंडका महाफलदायक सर्वोत्तम पुण्यकाल होताहै ॥ ९० ॥ उस वेला जो कोई रुद्रकुंडमें स्नानकर भगवान् रुद्रेश्वरका दर्शन करताहै, वह चाहे कहींभी मरे पर रुद्रलोकमें चलाही जाताहै ॥ ॥ ९१ ॥ उसके नैर्ऋत्यकोणपर महालयेश्वर लिंगहै, जिसके आगे पितरोंका परम निवासस्थान पितृकूप वर्तमानहै ॥ ९२ ॥ जो मनुष्य वहांपर श्राद्धकरके पिंडोंको उसी कूपमें फेंकदेताहै, वह श्राद्धकर्ता अपने एक्कीस कुलोंके सहित रुद्रलोकका भागी होताहै ॥ ९३ ॥ हे देवि! उसी स्थानपर पश्चिम मुखकी वैतरणी (नाम) बावली है उसमें स्नान करनेसे मनुष्य नरकमें नहीं पडता ॥ ९४ ॥ रुद्रकुंडसे पश्चिम बृह-स्पतीश्वर लिंगहै पुष्यनक्षत्रसे युक्त गुरुवारको उनके दर्शनसे दिव्यवाणी मिलतीहै॥९५॥ रुद्रावासके दक्षिण सर्वोत्तम कामेश्वरलिंगहै, जिसके दक्षिणभागमें एक महा (काम) कूपहै जो स्नानमात्रसे चिंतित कामनाओंको देताहै ॥ ९६ ॥ चैत्रशुक्ल त्रयोदशीको वहांकी यात्रा करनेसे मनोवांछित फल मिलताहै। कामेश्वरसे पूर्वकी ओर नलकूबरलिंगहै ॥९७॥ जिसके आगेही धन धान्यकी समृद्धि करनेवाला पावनकूपहै, उस नलकूबर लिंगके पूर्व सूर्याचन्द्रमसेश्वरनामके दो लिंग एकत्रही विराजमान हैं ॥ ९८ ॥ उन दोनोंकी पूजा करनेसे अज्ञानान्धकार दूर होजाताहै, उनके दक्षिण अध्वकेश्वरनामक लिंगहै, जो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

दर्शनहीसे मोहका नाश करडालताहै ॥ ९९ ॥ वहींपर परम सिद्धिदायक सिद्धीश्वर लिंगभी है, जिसके पासहीमें मंडलेशका पद देनेवाला मंडलेश्वरलिंग विद्यमानहै ॥ ॥ १०० ॥ कामकुण्डके पूर्व सर्व संपत्तिदायक च्यवनेश्वर हैं, और राजसूययज्ञके फलदाता सनकेश्वरभी वहीं हैं ॥ १ ॥ जिसके पिछवाडे योगसिद्धिका करनेवाला सनत्कुमारलिंगहै, और उससे उत्तरकी ओर बडाज्ञानसमर्थक सनन्देश्वरनामक लिंग सुशोभितहै ॥ २ ॥ उसके दक्षिणभागमें आहुतीश्वरलिंगहै जिसके देखनेहीसे होम करनेका फल मिलजाताहै, उससेभी दक्षिण पुण्यजनक पंचशिखेश्वर लिंगहै ॥ ३ ॥ जिसके पश्चिमओर पुण्यवर्धक मार्कंडेय ह्रदहै, मनुष्य उस ह्रदमें स्नानकरके कभी शोकभागी नहीं होनेपाता ॥ ४ ॥ वहांका स्नान और दान अक्षयपुण्यप्रद होजाता है, उसके उत्तर समस्त सिद्धोंसे नमस्कृत कुण्डेश्वरनामक लिंगहै ॥ ५ ॥ हे विप्रवर ! पाशुपत मन्त्रकी दीक्षा लेकर द्वादशवर्षपर्यंत तपोनुष्ठान करनेसे जो फल होताहै, इस कुण्डेश्वरलिंगके दर्शनसेभी वही फल मिलजाताहै, ॥ ६ ॥ मार्कंडेयह्रदसे पूर्व परमपुण्यप्रद भगवान् शांडिल्येश्वर विराजते हैं, उनसे पश्चिम सूर्यग्रहणके समान पापनाशक चंडेश्वर लिंगहै ॥ ७ ॥ कपालेश्वरके दक्षिणओर श्रीकण्ठसंज्ञक एक कुंडहै, उस कुंडमें स्नान करनेसे मनुष्य लक्ष्मीदेवीके प्रभाववश (बडाभारी) दाता होजाताहै॥८॥उसी कुंडके समीपमें महालक्ष्मीश्वर लिंगभी है, उक्त कुंडमें नहाकर महालक्ष्मीका पूजन करनेसे मनुष्य ॥९॥ दिव्यस्त्रियोंके द्वारा चामरसे बीजित होताहै। स्वर्गवासी देवतालोग स्त्रियोंके सहित स्वर्गलोकसे उक्त मत्स्योदरीतीर्थके लिये चलतेहैं तो उसी मार्गसे आतेजातेहैं ॥ ११० ॥ हे मुनिसत्तम ! इसी कारणसे उस स्थानका नाम स्वर्गद्वार प्रसिद्धहै । उस कुण्डके दक्षिणभागमें ब्रह्मपदप्रद एक लिंगहै ॥११॥ उसी स्थलपर गायत्रीश्वर और सावित्रीश्वरनामक दो लिंगोंकी प्रयत्नपूर्वक पूजा करनी चाहिये, फिर मत्स्योदरीके रमणीय तटपर सत्यवतीश्वर लिंगहै ॥ १२ ॥ गायत्रीश्वर सावित्रीश्वरके पूर्व तपःश्रीवर्द्धन लिंगहै, लक्ष्मीश्वरके पूर्व उग्रेश्वरनामक एक महालिंग है ॥ १३ ॥ मनुष्य उस लिंगकी अर्चना करनेसे जातिस्मर्ता होजाताहै, और उसके दक्षिणभागमें उग्रकुंडभी है जो स्नानके लिये कनखल (तीर्थ) सेभी अधिक (फलदायक) है ॥ १४ ॥ उस कुंडके पश्चिम करवीरेश्वर लिंगहै, उसके दर्शनसे लोगोंके सब रोगोंका नाश होजाताहै ॥ १५ ॥ उससे वायव्यकोणपर पापनाशक मरीचिकुंड और मरीचीश्वर लिंगहै । उसके पीछेकी ओर इन्द्रकुंड एवं इन्द्रे-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्वरनामक लिंग वर्तमान हैं ॥ १६ ॥ इन्द्रेश्वरके दक्षिणभागमें कर्कोटकवापीहै, उसमें स्नानकर कर्कोटकेश्वरका दर्शन करनेसे ॥ १७ ॥ मनुष्य निस्सन्देह नागलोगोंका अधिपति होताहै । उसके पीछे ब्रह्महत्याके छुडानेवाले दमिचण्डेश्वर शिवहैं ॥ १८ ॥ जिसके दक्षिण रुद्रलोकमें पहुँचानेवाला एक बडाभारी कुंड विद्यमानहै । उससे पश्चिम अग्नीश्वरनामक प्रसिद्ध लिंगहै ॥ १९ ॥ अग्नीश्वरसे पूर्व अग्निलोकका फलदायक आग्नेयकुंडहै, उसके दक्षिण एक औरभी उत्तम कुण्ड है ॥ ॥ १२० ॥ उसमें नहानेसे मनुष्य अपने पूर्वपुरुषोंके साथ स्वर्गमें वास पाताहै । उससे पूर्व चन्द्रलोककी गति देनेवाला बालचन्द्रेश्वर लिंगहै ॥ २१ ॥ बालचन्द्रेश्वरके चारोंओर कितनेही गणोंके स्थापित अनेक लिंग विराजितहैं, उन सब लिंगोंके दर्शनसे गणाध्यक्षका पद प्राप्त होताहै ॥ २२ ॥ बालचन्द्रके समीपहीमें पितरोंका बडा प्यारा एक कूपभी है, उसमें श्राद्ध करनेसे सात पुरुषोंका उद्धार होजाता है ॥ ॥ २३ ॥ उस कूपसे पूर्व एक विश्वेश्वरनामक पवित्र लिंग है, जिसके पूर्वकी ओर वृद्धकालेश्वर महादेव हैं ॥ २४ ॥ उनके सन्मुखही कालोद (क) नामक कूपहै, जो सब रोगोंको दूर करदेताहै, जो स्त्री अथवा पुरुष उस कूपका जल पीते हैं ॥ २५ ॥ शतकोटि कल्प बीतजानेपरभी उनका परिवर्तन नहीं होने पाता, मनुष्य उसका जल पीकर जन्मबंधनके भयसे निर्मुक्त होजाताहै ॥ २६ ॥ उस कूपपर शैवलोगोंको जो कुछ दान दियाजाता है, हे घटज ! प्रलयकालमेंभी उसका नाश नहीं होसकता ॥ २७ ॥ जो लोग वहांपर टूटे फूटेको बनवा (जीर्णोद्धार करा) देते हैं, वे सब लोग रुद्रलोकमें जाकर सदैव सुखपूर्वक आमोद प्रमोद करते हैं ॥ २८ ॥ (वृद्ध) कालेश्वरसे दक्षिण अपमृत्युनाशक मृत्यवीश (मृत्युंजय) नामक लिंग है, और उस कूपके उत्तरकी ओर दक्षेश्वर लिंगहै ॥ २९ ॥ जिसके समर्चनसे सहस्रोंही अपराध विनष्ट होजाते हैं ॥ १३० ॥ दक्षेश्वरसे पूर्व बडाभारी महाकालेश्वर लिंग है, जो कोई महाकालकुंडमें नहाकर महाकालका पूजन करताहै ॥ ३१ ॥ उसे सचराचर जगत्भरकी पूजाका फल होता है । उससे दक्षिण अन्तकेश्वरके दर्शन करनेसे यमराजका कुछ भय नहीं रहजाता ॥ ३२ ॥ हे मुने ! उस लिंगसेभी दक्षिण हस्तिपालेश्वर लिंग है, उसके पूजनसे हस्तिदानका पुण्यलाभ होताहै ॥ ३३ ॥ वहींपर ऐरावत कुंड और ऐरावतेश्वर लिंगभी है, जिसके पूजनसे मनुष्य धन धान्यसे समृद्धिशाली होता है ॥ ३४ ॥ उसके दक्षिणांशमें कल्याणकर मालतीश्वर लिंगहै,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

और हस्तिपालेश्वरके उत्तर जयप्रद जयन्तेश्वर लिंग है ॥ ३५ ॥ महाकाल कुंडसे उत्तर शुभदायक बन्दीश्वर लिंग है । इसी स्थानपर काशीपुरीका विख्यात पापनाशक बन्दीकुंड है ॥ ३६ ॥ वहांपर स्नान दान और श्राद्ध करनेसे अक्षय फल होताहै, धन्वन्तरीश्वर लिंग और उसी नामका कुंडभी है ॥ ३७ ॥ (पर) इस लिंगका नाम दूसरा है और कुंडका नाम अन्यही (प्रसिद्ध) है, लिंगका नाम तो तुंगेश्वर है, पर कुंड वैद्येश्वर कहाता है ॥ ३८ ॥ उस कुंडमें (धन्वन्तरीने) आरोग्यकर, अमृतस्वरूप, (मृतसंजीवनी इत्यादि) बडीबडी औषधियां डालदीं हैं, (अतएव) उस कुंडमें स्नान तथा उक्त लिंगके दर्शनसे बडे कठोर पापोंके साथ समस्त व्याधियां नष्ट होजातीहैं॥ ३९॥उसके उत्तरभागमें हलीशेश्वर लिंगहै, वहभी सब रोगोंका विनाशकही है, फिर तुंगेश्वरनामक लिंगसे दक्षिण शुभकारक शिवेश्वर लिंगहै॥ १४०॥ उसकेभी दक्षिण जमदग्नीश्वर लिंग है, उसके पश्चिम भैरवेश्वर हैं, जिनके उत्तर ओर उत्तम (भैरव) कूप है ॥४१॥ उसके जलका केवल स्पर्श करनेहीसे समस्त यज्ञोंका फल मिलजाता है, उस कूपके पश्चिम योगसिद्धियोंका दाता सुकेश (सुकेश्वर) लिंग अवस्थित है॥४२॥उससे नैर्ऋत्यकोणमें निर्मलजल (वाला) व्यासकूप है, एवं वहींपर व्यासेश्वर लिंगभी है, मनुष्य उस कूपोदकसे नहानेके उपरांत देवता और पितरोंका तर्पण करनेसे ॥४३॥ मनोवांछित चाहे जिस लोकको अक्षय रूपसे प्राप्त करसकताहै, उस व्यासतीर्थके पश्चिम बहुत बडा घंटाकर्ण ह्रद है (जो कर्णघंटानामसे प्रसिद्धहै) ॥४४॥ घंटाकर्णनामक ह्रदमें स्नानकर व्यासेश्वरका दर्शन करनेसे प्राणी चाहे कहींपर मरे पर उसे काशीहीमें मरनेका फल प्राप्त होता है ॥४५॥ घंटाकर्णसे सटाहीहुआ पंचचूडानामकी अप्सराका एक सरोवरहै, उसमें स्नानकर पंचचूडेश्वरके अवलोकनसे ॥ ४६ ॥ मनुष्य स्वर्गमें जाता और पंचचूडाका बडा प्रिय होता है । उसके दक्षिण सबभाँतिकी जडताका धोडालनेवाला गौरीकूप है ॥ ४७ ॥ और उसी पंचचूडा (सरोवर) के उत्तरकी ओर अशोक नामक तीर्थ है, जिसके उत्तर महापापापहारी मन्दाकिनी (नामक) महातीर्थ है ॥ ४८ ॥ हे मुने ! जो मन्दाकिनी स्वर्गमेंभी परम पवित्र मानीजातीहै, फिर इस मर्त्यलोकमें उसकी कौन बात है ? उसके उत्तर प्रांतमें मध्यमेश्वर शिवहैं, जो (अविमुक्त) क्षेत्रके मध्यभागमें (सुखसे) शयन कररहेहैं ॥ ४९ ॥ चैत्रमासकी अशोकाष्टमीको जो कोई उस स्थानपर जागरण करताहै, वह कभी शोकभागी नहीं होता वरन् सदैव आनन्दस्वरूप बनारहताहै ॥१५०॥ इसी परमपुण्यप्रद मध्यमेश्वर लिंगसे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लेकर एक एक कोस चारोंओर मुक्तिक्षेत्रका प्रमाण (समझागया) है ॥ ५१ ॥ पितरलोग यह बात सदैव कहाकरते हैं कि "हमारे वंशमें ऐसा कोई एक जनभी उत्पन्न होता जो चित्तसंयमपूर्वक मन्दाकिनीके जलमें स्नानकर ब्राह्मण, संन्यासी और शिव भक्तोंको भोजन करादेता" । मनुष्य मन्दाकिनीमें स्नानकर मध्यमेश्वरका दर्शन करनेसे ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ एक्कीस पीढियोंके साथ रुद्रलोकमें बहुत दिनोंतक निवास करताहै । मध्यमेश्वरसे दक्षिण विश्वदेवेश्वरनामक एक पवित्र लिंगहै ॥ ५४ ॥ अकेले उसी लिंगके पूजन करनेसे तेरहों विश्वेदेवोंके पूजन करनेका फल होताहै । उससे पूर्व महावीर पदके दाता वीरभद्रेश्वर हैं ॥ ५५ ॥ उनके दक्षिण भद्रकारिणी भगवती भद्रकाली विराजमानहैं, और वहींपर महामंगलदायक भद्रकालनामक ह्रदभी है ॥ ५६ ॥ जिससे पूर्व परम ज्ञानप्रद आपस्तम्बेश्वर लिंगहै, पर उसके उत्तरकी ओर पुण्यकूप और पिछवाडेही शौनकह्रदहै ॥ ५७ ॥ उस ह्रदके पश्चिम सुबुद्धिवर्धक शौनकेश्वर लिंगभी है, यदि कोई उस ह्रदमें नहाकर शौनकेश्वरका दर्शन करलेवे तो ॥ ५८ ॥ उसे वह दिव्यज्ञान होजाताहै जिससे वह मृत्युको पार करदेसकताहै, उसके दक्षिण जम्बुकेश्वरहैं, जो तिर्यग्योनिके दुःखको छुडादेतेहैं ॥ ५९ ॥ उससे उत्तर गानविद्याका प्रबोधक मतंगेश्वर लिंग है । मतंगेश्वरसे वायव्यकोणपर चारोंओर मुनियोंके स्थापित बहुतेरे सिद्धिप्रद शिवलिंग विराजमान हैं, परब्रह्मरातेश्वर लिंग मतंगेश्वरसे दक्षिण भागमें अवस्थित है ॥ १६० ॥ ॥ ६१ ॥ उसके दर्शनसे कभी अकालमृत्यु नहीं होने पाती । वहींपर पितरोंके प्रतिष्ठित अनेक लिंग हैं, एवं एक प्रसिद्ध आज्यपेश्वर लिंग है, उन सब लिंगोंके सेवनसे पितर लोग बडे सन्तुष्ट होजाते हैं ॥ ६२ ॥ उससेभी दक्षिण एक सिद्धकूप है, जहांपर सहस्रों सिद्धलोग रहते हैं, वायुस्वरूप अथवा सूर्यकिरणमें रहनेवाले बहुतेरे सिद्धोंके स्थापित कियेहुए एक सिद्धेश्वर वहांपर विराजमान हैं, उनके दर्शनहीसे सब सिद्धियां प्राप्त होजाती हैं ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ उसके पश्चिमओर एक सिद्धवापीभी है जो स्नान और पान करनेसे सिद्धिको देती है, फिर उक्त सिद्धकूपके पूर्व व्याघ्रेश्वरनामक लिंग है ॥ ६५ ॥ उसके दर्शनसे व्याघ्र अथवा चोर (डांकू) का कुछ डर नहीं रहने पाता, उससे दक्षिण ज्येष्ठ स्थानमें परमसिद्धिप्रद ज्येष्ठेश्वर लिंग विराजरहा है ॥ ६६ ॥ उसके दक्षिण आनन्दधाम प्रहसितेश्वर लिंग है, जिसके उत्तर भागमें काशीवासके फलदाता निवासेश्वर हैं ॥ ६७ ॥ वहींपर चतुःसमुद्रनामक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कूप है जिसमें स्नान करनेसे समुद्रके स्नानका फल मिलता है । और वहांही पर जेष्ठा देवीभी हैं, जो प्रणाममात्रसे ज्येष्ठता देदेती हैं ॥ ६८ ॥ व्याघ्रेश्वरसे दक्षिण चण्डीश्वरनामक लिंग है, उसके उत्तरांशमें पितरोंको हर्षदायक दण्डखात सरोवर है ॥ ६९ ॥ ग्रहणके अनंतर देवखातनामक पोखरेमें स्नान करनेका बडा माहात्म्य है, वहींपर जैगीषव्यमुनिकी गुहा और जैगीषव्येश्वर लिंगभी सुशोभित है ॥ १७० ॥ वहांपर यदि त्रिरात्र उपवास करे तो निर्मल ज्ञान प्राप्त होता है, उसके पीछेकी ओर महापुण्यदायक देवलेश्वर हैं ॥ ७१ ॥ उससे लगाहुआ पासहीमें शतकालनामक लिंग है हे—कुम्भसम्भव ! भगवान् उमापतिने इस लिंगके प्रकट करनेकेलिये शतवर्ष पर्यंत काशीमें कालयापन किया था ॥ ७२ ॥ उस लिंगके दर्शनसे सौवर्षकी आयु अखंडित (पूरी) होती है, उसके दक्षिण महाजपके फलदाता शातातपेश्वर हैं ॥ ७३ ॥ जिसके पश्चिमकी ओर महाफलके हेतुभूत हेतुकेश्वर हैं, उनके दक्षिण महाज्ञानप्रवर्तक अक्षपादेश्वर हैं ॥ ७४ ॥ उनसे आगे (बढकर) कणादेश्वर हैं, और वहींपर पुण्योदक कूपभी है, उस कणादकूपमें नहाकर कणादेश्वरका पूजन करनेसे ॥ ७५ ॥ कभी धन और धान्यकी न्यूनता नहीं होती । उसके दक्षिण सज्जनोंके भूतिकर्ता भूतीश्वरभी दर्शनहीके योग्य हैं ॥ ७६ ॥ उनसे पश्चिम अघनाशक आषाढीश्वर हैं जिनके पूर्व सब कामोंकी संपत्ति देनेवाले दुर्वासेश्वर विराजितहैं ॥ ७७ ॥ उनके दक्षिण पापभारापहारक भारभूतेश्वर हैं, और पूर्वोक्त व्यासेश्वरके पूर्वांशमें महाज्ञानदायक शंखेश्वर और लिखितेश्वरनामक दो लिंग वर्तमान हैं, काशीमें प्रयत्नपूर्वक उन दोनों लिंगोंका दर्शन करना चाहिए ॥ ७८ ॥ पाशुपत व्रतको पूर्णकरके उद्यापन करनेसे जो पुण्य होता है, एकबार क्षणमात्र विश्वेश्वरके दर्शन सेभी वही फल मिलता है ॥ ७९ ॥ उनके ईशानकोणपर योगज्ञानका प्रवर्तक अवधूतेश्वर लिंग और सर्वकल्मषनाशक अवधूतेश्वर तीर्थभी स्थित है ॥ १८० ॥ जिसके सेवनसे लोगोंका पशुपाश छूटजाता है; वह पशुपतीश्वर लिंग अवधूतेश्वरके पूर्वभागमें प्रकाशमान है ॥ ८१ ॥ उसके दक्षिण अभिलषित वर देनेवाला गोभिलेश्वर लिंग है, जिसके पिछवाडे जीमूतवाहनेश्वरनामक उत्तम लिंग है ॥ ८२ ॥ उस लिंगकी सेवासे मनुष्य विद्याधर होता है, पंचनद (तीर्थ) पर मयूखादित्य हैं और वहींपर गभस्तीश्वरभी हैं ॥ ८३ ॥ उनसे उत्तरकी ओर दधिकल्प ह्रदनामा एक बडाभारी कूप है, उस कूपका स्नान और (गभस्तीश्वरका) दर्शन मिलना,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बहुतही कठिन समस्या है ॥ ८४ ॥ गभस्तीश्वरसे उत्तर दधिकल्पेश्वर लिंग है मनुष्य उस लिंगके दर्शन करनेसे कल्पभर शिवलोकमें वास करता है ॥ ८५ ॥ गभस्तीश्वरसे दक्षिण मंगलालया जो मंगलागौरी हैं, उनके उद्देशसे यदि द्विज दम्पतीको ॥ ८६ ॥ यथाशक्ति विभूषित करके भोजन करायाजावे तो असीम पुण्य होता है, मंगलागौरीकी एक प्रदक्षिणा करनेसे समस्त पृथिवीकी प्रदक्षिणाका फल प्राप्त होता है ॥ ८७ ॥ मंगलागौरीके पासहीमें मुखप्रेक्षेश्वरके उत्तर सर्वसिद्धि करी वदनप्रेक्षणानामकी देवी सुशोभित हैं ॥ ८८ ॥ मुखप्रेक्षेश्वरके उत्तरही ओर तष्टीश्वर और वृत्तेश्वरनामक दो लिंगहैं, उनके दर्शनसे ससुवर्ण भूमिदान करनेका फल होता है ॥ ८९ ॥ उनकेभी उत्तर शुभदर्शना चर्चिका देवी हैं, जिनके आगे (बढतेही) शांतिकर रेवतेश्वरनामक लिंग अवस्थितहैं ॥ १९० ॥ उसके आगे महाशुभप्रद पंचनदेश्वर लिंग है, और वहींपर मंगलागौरीके पश्चिम मंगलोदकनामा एक बडाभारी कूप है ॥ ९१ ॥ और उसी ओर उपमन्युका स्थापित एक महा लिंग है। उसके पीछे व्याघ्रका भय हरनेवाला व्याघ्रपादेश्वर लिंग हैं ॥ ९२ ॥ गभस्तीश्वरसे नैर्ऋत्यकोणपर अघसमूहके नाशक शशांकेश्वर वर्तमान है, जिनके पश्चिमभागमें दिव्यगतिके दाता चैत्ररथेश्वर स्थित हैं ॥ ९३ ॥ रेवतेश्वरके पश्चिम महापातकहारी जैमिनीश्वर हैं, हे ऋषिसत्तम ! वहांपर अनेक ऋषियोंके स्थापित लिंग हैं ॥ ९४ ॥ जैमिनीश्वरसे वायव्यकोणपर रावणेश्वर लिंग है, उसके दर्शनसे लोगोंको राक्षसोंका कुछभी भय नहीं होनेपाता ॥ ९५ ॥ उसके दक्षिण वराहेश्वर हैं, जिनके दक्षिणभागमें मांडव्येश हैं, उनके दक्षिण प्रचण्डेश्वर हैं, फिर उनके दक्षिण योगेश्वर हैं ॥ ९६ ॥ उनकेभी दक्षिण धातेश्वर हैं, उनकेभी आगे बढतेही सोमेश्वर लिंग मिलता है, जिसके नैर्ऋत्यकोणमें सज्जनोंको कनक देनेवाला कनकेश्वर लिंग है ॥ ९७ ॥ फिर उसके उत्तर हर्षकारक पाँचोंपांडवोंके स्थापित पांच लिंग हैं, जिनके आगे संवर्तेश्वर और पश्चिमकी ओर श्वेतेश्वरलिंग है ॥ ९८ ॥ एवं पिछवाडेही कालसे अभय करदेनेवाला कलशेश्वर लिंग है, जो कि श्वेतकेतुके कालफाँसमें पडजानेपर अमृतके घडेसे निकला था ॥९९॥ उसकेभी उत्तर अघनाशक चित्रगुप्तेश्वर लिंग है, जिसके पीछे महाफलदायक दृढेश्वर विद्यमान हैं ॥ २०० ॥ कलशेश्वरके दक्षिण ग्रहेश्वरनामक एक उत्तम लिंग है, उसके दर्शनसे सब ग्रहोंकी बाधाका शमन होजाता है ॥१॥ चित्रगुप्तेश्वरके पश्चाद्भागमें जो यदृच्छे-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्वरलिंग है, वहभी बडाही फलप्रद है, फिर ग्रहेश्वरके दक्षिण उतथ्यवामदेवेश्वर लिंगहै ॥ २ ॥ जिसके दक्षिण कंबलाश्वतरेश्वरनामक शुभप्रद दो लिंग विराजमान हैं, और वहींपर नलकूबरका पूजित एक निर्मल लिंगभी अवस्थित है ॥ ३ ॥ उसके दक्षिण मणिकर्णिकेश्वर हैं, जिनसे उत्तरदिशामें पलितेश्वर और जराहरेश्वर लिंग है; और उसके पीछेकी ओर पापनाशन लिंगभी है ॥४॥ उसके पश्चिम निर्जरेश्वर हैं, जिनसे नैर्ऋत्यकोणपर पितामहेश्वर हैं, और वहींपर पितामहस्रोतीनामक तीर्थभी है, जहांपर श्राद्ध करनेसे बडा फल होता है ॥५॥ उससे दक्षिण वरुणेश्वर हैं, जिनके दक्षिणभागमें बाणेश्वर विराजमान हैं, फिर पितामहस्रोतिकापर सिद्धिकारक कूश्माण्डेश्वर लिंग है ॥ ६ ॥ जिसके पूर्वभागमें राक्षसेश्वर और दक्षिण ओर गंगेश्वर हैं, पर उत्तरप्रान्तमें तो बहुतसे निम्नगेश्वर वर्तमान हैं ॥७॥ वहींपर वैवस्वतेश्वरभी हैं, जिनके दर्शनसे यमलोकमें नहीं जानापडता, उसके पीछे अदितीश्वर और आगेकी ओर चक्रेश्वर हैं ॥ ८ ॥ उनके आगे बढतेही देखतेमात्र विश्वास उपजानेवाले कालकेश्वर हैं; वहां पर उनकी छाया दिखाई देती है, उनके दर्शनसे प्राणी निष्पाप होजाता है ॥ ९ ॥ उनके आगे तारकेश्वर हैं, जिनके सन्मुखही स्वर्णभारदेश्वर विराजित हैं, उनसे उत्तर मरुत्तेश्वर हैं, जिनके आगे शक्रेश्वर हैं ॥ २१० ॥ उनसे दक्षिण रम्भेश्वर, और (वहींपर) शशीश्वरभी हैं । जिनके उत्तरकी ओर सभी लोकपालोंके स्थापित अनेक लिंग वर्तमान हैं, ॥ ११ ॥ और वहींपर नाग, गंधर्व, यक्ष, किन्नर, अप्सरा, देवता और ऋषिगणके प्रतिष्ठित बहुतेरे सिद्धिकर लिंग सुशोभित हैं ॥ १२ ॥ शक्रेश्वरके दक्षिण महापापापहारी फाल्गुनेश्वर हैं, जिनके दक्षिणभागमें परम शुभकर्ता महापाशुपतेश्वर स्थित हैं ॥ १३ ॥ उनके पश्चिम समुद्रेश्वर, और उत्तरमें ईशानेश्वर, एवं पूर्वकी ओर सर्वसिद्धिप्रद लांगलीश्वर लिंग है १४ ॥ हे देवि ! जो लोग राग द्वेषको छोडकर (उस लिंगका) पूजन करते हैं वे सिद्धिको प्राप्त होते हैं, उन लोगोंको मोक्ष मिलता है, अतएव उनको मनुष्य नहीं कहना चाहिए ॥ १५ ॥ इसी लांगलीश्वरपर मधुपिंग और श्वेतकेतुनामके दो तपस्वियोंने इसी शरीरसे परमसिद्धिको लाभ किया था ॥ १६ ॥ वहींपर नकुलीश्वर और कपिलेश्वरभी हैं, मेरे व्रतधारियोंको ये दोनोंही (लिंग) परम रहस्यरूप हैं ॥ १७ ॥ उनके पासहीमें मेरे प्रीतिवर्द्धक प्रीतिकेश्वर हैं, हे देवि ! वहांपर एक उपवास करनेसेभी सैंकडोंवर्ष व्रत करनेका उत्तम फल प्राप्त होता है ॥ १८ ॥ जो कोई मेरे शिवरात्र इत्यादि पर्वपर व्रतमें रह-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कर प्रीतिकेश्वरके समीप एकभी जागरण करता है, वह अवश्यमेव मेरा गण होजाता है ॥ १९ ॥ उस लिंगके दक्षिणभागमें एक शुभोदका बावलीभी है, उसका जल पीनेसे लोगोंको पुनर्जन्मका दुःख नहीं भोगनापडता ॥ २२० ॥ उस बावलीके पश्चिमभागमें दण्डपाणि, पूर्व—तारकेश्वर, दक्षिण—कालेश्वर, और उत्तरमें नन्दिकेश्वर सदैव रक्षा करते रहते हैं ॥ २१ ॥ उसका जल यदि श्रद्धापूर्वक पीयाजावे तो पीनेवालेके हृदयारविन्दमें ये पूर्वोक्त तीनोंही लिंग वास करते हैं, (जैसेही हो) उस बावलीके जल पीनेवाले उत्तम जन सर्वथा कृतार्थ होजाते हैं ॥ २२ ॥ अविमुक्तेश्वरसे सटेहुए मोक्षबुद्धिके दाता मोक्षेश्वर पूजनीय हैं, उनके उत्तर दयाधाम करुणेश्वरकी पूजा करनी चाहिए ॥ २३ ॥ उनके पूर्व स्वर्णाक्षेश्वर लिंग है, जिसके उत्तर ज्ञानदेश्वर हैं, और वहींपर बडी सौभाग्य संपत्तिके लिए सौभाग्य गौरीकाभी पूजन करना उचित है ॥ २४ ॥ विश्वेश्वरके दक्षिणभागमें क्षेत्रके क्षेमकर्ता निकुम्भेश्वरको प्रयत्नपूर्वक पूजना चाहिए, जिनके पीछेकी ओर सर्वविघ्नविदारक विघ्न (वि) नायक विराजते हैं, विशेषरूपसे चतुर्थीके दिन उनकी अर्चना करनी चाहिए, फिर निकुंभेश्वरसे अग्निकोणपर सुसिद्धिप्रद विरूपाक्षेश्वर लिंग परमपूजनीय है ॥ २५ ॥ ॥ २६ ॥ उसके दक्षिण शुक्रेश्वर हैं जो पुत्र पौत्रादिकी वृद्धि करते हैं, उनके उत्तरभागमें देवयानीश्वरनामक एक महालिंग अवस्थित है ॥ २७ ॥ शुक्रेश्वरके अग्रभागमें पूजनीय कचेश्वर हैं वहींपर शुक्रकूपभी है जिसके जलके छूनेहीसे अश्वमेधयज्ञका फल प्राप्त होता है ॥ २८ ॥ शुक्रेश्वरके पश्चिम अपने भक्तोंके सदैव पार उतारनेवाले शुभप्रद भवानी—शंकरको प्रणाम करना चाहिए ॥ २९ ॥ शुक्रेश्वरसे पूर्वदिशामें स्थित अलकेश्वर और मदालसेश्वरका पूजन करना उचित है, उनके पूर्व सर्वविघ्नविध्वंसक ॥ २३० ॥ तथा समस्त सिद्धियोंके दाता गणेश्वर विराजरहेहैं हे मुने ! लंकेश्वरको मारकर रघुनाथके स्थापित उस (रघुनाथेश्वर) लिंगके स्पर्श करनेसे ब्रह्मघाती मनुष्यभी तुरतही शुद्ध होजाता है । फिर वहींपर महापुण्यप्रद त्रिपुरान्तकेश्वरनामक एक औरभी लिंग है ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ उसके पश्चिम शुभमय दत्तात्रेयेश्वर हैं, जिनके दक्षिण हरिकेशेश्वर हैं तदनंतर गोकर्णेश्वर लिंग है ॥ ३३ ॥ जिसके आगे (गोकर्ण) सरोवर है, जो पापोंका नाशक है, उसके पीछे ध्रुवेश्वर हैं, जिनके आगे पितरोंका परमप्रीतिकर ध्रुवकुण्ड है ३४ ॥ फिर उसके उत्तर पिशाचताके दूरकरनेवाले पिशाचेश्वर हैं, जिनके दक्षिण पितृकुंड है और वहींपर पित्रीश्वर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

लिंगभी विराजित है ॥ ३५ ॥ वहांपर श्राद्ध करनेवालोंके पितरलोग बहुतही संतुष्ट होते हैं, ध्रुवेश्वरके आगे तारेश्वर हैं, जो वैद्यनाथ कहेजाते हैं ॥ ३६ ॥ उनसे नैर्ऋत्यकोणपर परमवंशवृद्धिकर मनुका स्थापित लिंग है, और जो वैद्यनाथके सामनेही शिवलिंग है वह तो प्रियव्रतेश्वर हैं ॥ ३७ ॥ जिनके दक्षिण मुचुकुन्देश्वर और पासहीमें गौतमेश्वर हैं, फिर पश्चिमकी ओर भद्रेश्वर हैं, जिनके दक्षिण ऋष्यशृङ्गेश्वरहैं ॥ ३८ ॥ उनके आगेही ब्रह्मेश्वर हैं, और ईशानकोणपर पर्जन्येश्वर वर्तमानहैं, उनके पूर्व नहुषेश्वर हैं, और उनके आगे विशालाक्षी देवीहैं ॥ ३९ ॥ वहींपर क्षेत्रमें वास देनेवाला विशालाक्षीश्वर लिंगभी है, जिसके दक्षिण ज्वरनाशक जरासंधेश्वरहैं ॥ २४० ॥ उसके आगे हिरण्यप्रद हिरण्याक्षेश्वर लिंग है, उसकेभी पश्चिम गयाधीश्वर हैं, जिनके पश्चिम भगीरथेश्वर हैं ॥ ४१ ॥ हे अगस्त्यमुने ! उसके आगे ब्रह्मेश्वरसे पश्चिम दिलीपेश्वर हैं, वहांपर एक कुण्डभी है जो नहानेवालेके इष्ट फलको देताहै ॥४२॥ वहींपर विश्वावसुका स्थापित लिंगभीहै, जिसके पूर्व मुण्डेश्वर हैं उनके दक्षिण विधीश्वरहैं, जिनके दक्षिण वाजिमेधेश्वर लिंगहै॥४३॥दशाश्वमेधपर स्नान करके उस लिंगका दर्शन करनेसे मनुष्य दश अश्वमेध करनेका फलभागी होताहै ॥ ४४ ॥ उसके उत्तर भागमें मातृतीर्थ है, जो स्नान करनेवालेके जन्मभयको दूर भगादेता है, वहांपर स्त्री हो अथवा पुरुष हो जो कोई नहाता है ॥४५॥ वह मातृकाओंके प्रसादसे ईप्सितफलको पाता है । तुम्हारे अगस्त्य कुण्डके दक्षिण प्रसिद्ध पुष्पदन्तेश्वर हैं ॥ ४६ ॥ उनसे अग्निकोणपर देवता और ऋषिगणके स्थापित बहुतेरे लिंग विराजमान हैं, उक्त पुष्पदन्तेश्वरसे दक्षिण परम सिद्धिप्रद सिद्धीश्वर हैं ॥ ४७ ॥ यदि कोई उनकी पंचोपचारसे पूजा करे तो उसे वे स्वप्नमें परमसिद्धिको जतादेते हैं । हरिश्चन्द्रेश्वरके सेवनसे लोगोंको राज्यका लाभ होता है ॥ ४८ ॥ उनके पश्चिम नैर्ऋतेश्वर हैं, जिनके दक्षिण अंगिरसेश्वर हैं, फिर उनके दक्षिण क्षेमेश्वर, और उनसेभी दक्षिण चित्राङ्गेश्वर लिंग अवस्थित है ॥ ४९ ॥ उसके दक्षिण (प्रसिद्ध) केदारेश्वर लिंग है, जो लोगोंको महादेवका अनुचर बनादेता है, केदारेश्वरसे दक्षिणापथमें चंद्रवंशीय और सूर्यवंशीय राजाओंके ॥ २५० ॥ स्थापित कियेहुए सैकडों सहस्रों लिंग विद्यमान हैं । लोलार्कसे दक्षिण अर्कविनायक हैं, जो पूजन करनेसे सब किसीकी आशाओंको परिपूर्ण करदेते हैं ॥ ५१ ॥ उनके पश्चिम महाफलप्रद करंधमेश्वर लिंग है, उसके पश्चिम (दुर्गाकुंडपर) महादुर्गा विराजतीहैं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जो भक्तोंकी दुर्गतिको दूर भगादेती हैं ॥ ५२ ॥ उनके दक्षिण शुष्का (असी) नदीके पूजित शुष्केश्वर हैं उनसे पश्चिम जनकेश्वर हैं, जिनके उत्तर शंकुकर्णेश्वर हैं ॥ ५३ ॥ उनके पूर्व समग्र सिद्धियोंका दाता महासिद्धीश्वर लिंग है, जो मनुष्य सिद्धकुंडमें नहाकर महासिद्धीश्वरका दर्शन करता है ॥ ५४ ॥ वह समस्त सिद्धियोंके पार होजाता है शंकुकर्णेश्वरके वायव्यकोणपर वायव्येश्वरनामक लिंगहै ॥ ५५ ॥ उसके आगे विभांडेश्वर हैं, जिनके उत्तरभागमें कहोलेश्वर लिंगहै, वहांपर द्वारेश्वर लिंग और द्वारेश्वरी देवी विराजमान हैं ॥ ५६ ॥ उनकी आराधना करनेसे आनन्दवनकी वाससिद्धि होती है, हे मुने! उस स्थानपर आयुध लेकर विविधरूपधारी गणलोग काशीपुरीकी रक्षा करते रहते हैं ॥ ५७ ॥ वहींपर हरिदीश्वर, और कात्यायनेश्वर लिंगभी है, जिसके पासहीमें जांगलेश्वर, और पिछेकी ओर मुकुटेश्वर लिंग वर्तमान है ॥ ५८ ॥ जो कोई सर्वयात्रा फलप्रद निर्मल मुकुटकुण्डमें स्नान कर भगवान् मुकुटेश्वरका दर्शन करताहै ॥ ५९ ॥ उसे समस्त लिंगोंकी यात्राका फल मिलजाताहै, वह भूमीही योगाभ्यास अथवा तपस्याकी परम सिद्धिदात्री है ॥ २६० ॥ क्योंकि (हे मुने!) वहांपर सिद्धिहीके लिये सैकडों वरञ् सहस्रों लिंग सुशोभित हैं। परन्तु हे देवि! वारा णसीमें एक उत्तर दिशाही मुझे बडी प्यारी है ॥ ६१ ॥ उसमेंभी पंचायतन (अर्थात् ओंकारेश्वरका स्थान) तो बहुतही प्रसन्न पडगया है वहांपर तो मैं सृष्टि स्थिति और प्रलयकालमेंभी सदैव बैठाही रहता हूं ॥ ६२ ॥ हे प्रिये! जो कोई इस मर्मको जानजाताहै वह फिर पापोंमें कभी लिप्त नहीं होसकता, यह मैं सर्वथा सत्य कहता हूं ॥ ६३ ॥ जो कोई मेरे लोकमें पहुँचाचाहे उसे तुरत वहांहीपर चलाजाना चाहिए। हे मुनिवर! मैंने तुमसे संक्षेपहीसे इन लिंगोंको कहदिया है ॥ ६४ ॥ इनमें बहुतेरे लिंग भक्तिके मारे दोदो, तीनतीन स्थापित किये गये हैं, किन्तु उनका वर्णन मैं नहीं करसका पर श्रद्धापूर्वक उन सबकाभी पूजन सर्वथा करनाही चाहिए ॥६५॥ इन सब (पूर्वोक्त) लिंग, कुंड, कूप और बावली इत्यादिपर बुद्धिमान् लोगोंको सदैव श्रद्धा करनी चाहिए ॥ ६६ ॥ इन सबके दर्शन और स्नानसे उत्तरोत्तर अधिक फल होताहै, काशीके लिंग, कूप, सरोवर, ॥ ६७ ॥ वापी, और देवमूर्तियोंकी संख्या कौन करसकता है? (क्योंकि) अन्यत्रके देवतोंभी आनन्दकाननके तृण बहुत अच्छे हैं, कारण यही है कि इनको फिर जन्मलेना

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

नहीं पडेगा । अगणित लिंगमयी काशीही समस्त तीर्थोंकी जन्मभूमी है ॥ ६८ ॥ ॥ ६९ ॥ यह दर्शनसे स्वर्ग और अन्तसेवनसे मोक्ष देदेती है, हे देवि ! तुम तो अपनी तपस्याके बलसे मेरी प्रियतमा हुई हो ॥ २७० ॥ पर यह काशी स्वभावहीसे मेरे सुख और विश्रामकी भूमी है, जो लोग काशीका नामभी लेतेहैं, अथवा उसका अनुमोदन करते हैं ॥ ७१ ॥ हे देवि ! वेही लोग शाख, विशाख, नन्दी, स्कन्द और गणेशके समान हैं, और वेही भक्तगण मेरे (सच्चे) सेवक हैं ॥ ७२ ॥ काशीवासीही मोक्षके अधिकारी हैं, (क्योंकि) कठोर तपस्या, बडेसे बडे व्रत ॥ ७३ ॥ एवं बहुतेरे महादानोंके करनेवालोंहीको काशीमें वास मिलता है । जो लोग आनन्दवनमें वास करते हैं, उनको समस्त तीर्थोंमें स्नान, समग्र यज्ञोंकी दीक्षा ॥ ७४ ॥ और सब धर्मोंके परिपूर्ण करनेका सौभाग्य प्राप्त होता है । सुर, असुर, नाग और नर जो लोग अन्त अवस्थामेंभी काशीमें वास नहीं करते उन सबको भूमिका भारही समझना चाहिए । अन्यत्रके वैदिक ब्राह्मणसेभी काशीस्थ चाण्डालही श्रेष्ठहैं, क्योंकि चाण्डाल तो भवसागरके पार होजाता है, पर ब्राह्मण उससेभी अधोगतिमें पडा सडा करता है ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ सर्वथा वही मनुष्य सर्वज्ञ अथवा दूरदर्शी होसकता है, जो काशीमें मट्टीका शरीर त्यागकर सुधामय दिव्यस्वरूप होजाता है ॥ ७७ ॥ मनुष्य समस्त तीर्थोंके रहस्यसे भरेहुए इस पवित्र अध्यायके सुननेसे अवश्यही काशीदर्शनका पुण्य प्राप्त करता है ॥ ७८ ॥ प्रतिदिन प्रातःकाल इस अध्यायके पाठ करनेसे उक्त समस्त तीर्थोंके दर्शनका फल होताहै इसमें कुछभी अन्यथा नहीं है ॥ ७९ ॥ जो बुद्धिमान् जन नित्यही इस समग्र लिंगात्मक अध्यायको जपता है, उसे क्या यम, क्या यमदूत, अथवा पापोंहीका कुछ भय नहीं रहने पाता ॥ २८० ॥ जो सुकृती पुरुष पवित्रतापूर्वक मन लगाकर इस अध्यायका पाठ करताहै, उसे ब्रह्मयज्ञका फल मिलताहै ॥ ८१ ॥ जो कोई इस अध्यायका पारायण करजावे उसे समस्त कुण्डोंमें स्नान, समग्र वापियोंके जलपान, और सब लिंगोंके दर्शनका फल प्राप्त होताहै ॥ ८२ ॥ बहुतेरे छोटे फल देनेवाले अन्यान्य स्तोत्रोंसे कौन फल है ? मुझसे प्रेम रखनेवालोंको इसी महाफलदायक अध्यायका जप करना उचित है ॥ ८३ ॥ इस अध्यायके केवल एकहीबार पढडालनेसे जो फल होता है, इस संसारमें बहुतेरे महादानोंके करनेपरभी वह फल पायाजाता है कि नहीं ? इसमें सन्देहही है ॥ ८४ ॥ समस्त तीर्थोंमें

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

स्नानकर, समग्र लिंगोंके दर्शन करनेसे जो फल होता है, इसके पाठ करनेमेंभी अवश्य वही फल प्राप्त होता है ॥ ८५ ॥ हे मुने ! यही उग्र तपस्या और बड़ाभारी जप है, जो इस काशी लिंगावलीनामक अध्यायका अध्ययन बनपड़े ॥ ८६ ॥ मेरे विरोधी (शिवद्रोही) नास्तिक और वेदनिन्दक व्यक्तिको यह परम जप्य अध्याय कभी नहीं देना चाहिए ॥ ८७ ॥ ब्रह्महत्या, अगम्यागमन, अभक्ष्यभक्षण, गुरुदारा-भिचार, सुवर्णस्तेय, माता और पिताकी हत्या, गोहत्या, बालघात, इत्यादि, मन, वचन, कर्मके द्वारा ज्ञानसे अथवा अज्ञानतासे कियेहुए, पातक—उपपातक, महापातक आदि सब इस अध्यायके पाठ करनेसे विलायजाते हैं, मेरी आज्ञानुसार इसमें कुछ भी सन्देह नहीं करना चाहिए पुत्र, पौत्र, धन, धान्य, कलत्र, क्षेत्र ॥ ८८ ॥ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ सुख, स्वर्ग और मोक्ष इत्यादि सब कुछ मनोवांछित वस्तुको इस अध्यायके पाठसे विज्ञजन प्राप्त करसकता है यह बात सर्वथा निश्चित है ॥ ९२ ॥ जिस समय भगवान् शिव जगदम्बासे येही बातें कररहे थे उसी घड़ी नन्दीने आकर प्रणाम किया, और वे यह निवेदन करनेलगे (कि) ॥ ९३ ॥ (नाथ !) विशाल राज—मंदिरका निर्माण समाप्त होचुका, और रथभी सुसज्जित है, एवं ब्रह्मा इत्यादि समस्त देवतालोगभी एकट्ठे होगये हैं ॥ ९४ ॥ स्वयं भगवान् पुण्डरीकाक्षभी गरुडपर चढ़ेहुए अपने अनुचरवर्गके साथ, मुनीश्वरोंको आगे करके द्वारपर खड़े होकर आपके चलनेकी प्रतीक्षा कररहे हैं ॥ ९५ ॥ चौदहों भुवनके समस्त सुव्रतलोग प्रावेशिक महोत्सवका समाचार सुन आज यहांपर आकर बटुरेहुएहैं ॥ ९६ ॥ स्कन्दने कहा—नन्दीकी इस बातको सुनतेही भगवान् शंकर पार्वती देवीके सहित दिव्य रथपर चढ़कर त्रिविष्टप (त्रिलोचन) नामक स्थानसे चलपड़े ॥ २९७ ॥

दोहा—गुप्त, लुप्त, औ प्रकट हैं, लिंग तीर्थ बहुतेक ।
करि प्रयत्न ढूंढ़े मिलै, एहि लगि धरिये टेक ॥ १ ॥

सवैया—जहँ पूरव कुंड अनेक रहे, तहँ पै अब लोगनकी वसती, ।
जब बावलि कूप हेराय चले, तब, लिंगनकी कहँलों गनती ॥
अब ढूँढहु पै मिलते नहिं ये सब तीरथ हैं जिनकी भनती ।
अजहूँ कितनेहि प्रसिद्ध लखात जथारुचि दर्शनकी विनती ॥ २ ॥

इति श्रीस्कंदपुराणे चतुर्थे काशीखंडे उत्तरार्धे भाषायां सप्तनवतितमोऽध्यायः ॥ ९७ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अट्ठानबेवाँ अध्याय ।

मुक्तिमंडपमें प्रवेश ।

व्यासदेवने कहा—हे महाभाग सूत ! भगवान् कार्तिकेयने अगस्त्य मुनिके पूछने पर महादेवके महामहोत्सवको वर्णन किया था उसे श्रवण करो ॥ १ ॥ स्कन्दने कहा—हे महाप्राज्ञ ! अगस्त्य ! त्रैलोक्यभरमें आनन्द उपजानेवाली एवं महापातक-नाशिनी विश्वेश्वरके प्रवेशकी कथाको श्रवण करो ॥ २ ॥ चैत्र मासकी शुक्ला त्रयोदशीको दमन पर्वपर भगवान् शंकर मन्दराचलसे बारासीपुरीमें आकर इधर उधर विचरण करने लगे ॥ ३ ॥ तदनंतर जब मोक्षलक्ष्मी विलासनामक राजप्रासाद बन-गया तब कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा, बुधवार, अनुराधा नक्षत्र, सप्तमराशिस्थ चन्द्र और अन्य समस्त ग्रहोंके उच्चराशियोंपर अवस्थित होनेपर भगवान् विश्वेश्वर त्रिलोचन पीठसे अन्तर्गृहमें प्रविष्ट हुए ॥ ४ ॥ ५ ॥ उस बेला बाजे बजनेलगे, समस्त दिशायें सोहावनी लगतीं थीं, ब्राह्मणलोगोंकी वेदध्वनिके आगे दूसरी कोईभी बातही नहीं सुनाई पड़ती थी॥६॥यहांतक कोलाहल होने लगा कि भूर्लोकके प्रतिध्व-निसे भुवर्लोकके मध्यका मार्ग भरगया, (कहांलों कहें) शंकरके प्रासादप्रवेशके महो-त्सवमें सभीलोग प्रमुदित होगये थे ॥ ७ ॥ गन्धर्वगण मंगलगीतोंको गानेलगे, अप्स-रालोग नृत्य करनेलगीं, सिद्ध चारण मनोहर स्तुति करने लगे, और देवतोंके तो हर्षका ठिकानाही नहीं रहगया॥८॥उस घड़ी चारोंओरसे सुगन्धित वायु बहने लगे, घनमंडली पुष्पोंकी वृष्टि करनेलगीं, सबी लोग मंगलवेषसे सुसज्जित और मांगलिक वार्तालापमें तत्पर होगये थे ॥ ९ ॥ क्या स्थावर क्या जंगम सभी जीवजन्तु आन-न्दमय बनगये थे। (उस समय) देव, दानव, गन्धर्व, नाग ॥ १० ॥ विद्याधर, साध्य, किन्नर, नर, एवं समस्त स्त्री पुरुषोंपर निर्विघ्नरूपसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों ही पदार्थ पद पदपर झलक रहे थे । हे मुने ! उस घड़ी धूप (बत्ती) के धूमोंसे जो गगनमंडल रंग उठा॥ ११॥१२॥ सो किसी प्रकारसे आजतक नीलिमाको नहीं छोडता । एवं आरती करनेके लिए जो दीपक बालेगये ॥ १३ ॥ उन्हींकी ज्योतियां आजतक आकाशमें ताराओंके छलसे चमकरही हैं । प्रत्येक अटारियोंके ऊपर नाना प्रकारकी विचित्र पताकायें फहरा रहींथीं ॥ १४ ॥ प्रति शिवालयोंमें रमणीय ध्वजायें उड़रहीं थीं । कहींपर गवैयालोग बैठकर गीतोंको अलाप रहेथे, कहींपर नच नियां लोग नाचरहे थे ॥ १५ ॥ कहीं कहींपर चतुर्विध बाजे (रोशन चौकी आदि)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

बजाये जाते थे, प्रत्येक मार्गोंमें चन्दनरसके छिडकावसे भूमि बिच्छिलहल होरही थी ॥ १६ ॥ प्रत्येक गृहोंके आँगनोंमें हरे, श्वेत, काले, नीले, पीले इत्यादि बहुतेरे प्रकारके उत्तम रंगोंकी सजावटें चमक रहीं थीं ॥ १७ ॥ गृहोंकी डेवढ़ियोंके सामने रत्नकी जड़ाऊ भूमियोंके भाग झलक रहे थे, एवं चूनाकी छुहाइयोंसे अटारियोंका नाम तभीसे सौध पड़गया ॥ १८ ॥ हे घटोद्भव ! उस घड़ी जितनेही अचेतन वस्तुहैं वे सब सचेतनकी नाईं जनाई पडते थे और संसारमें जो जो मंगल कहेजाते हैं ॥ १९ ॥ मानों उन सबोंका वही जन्मदिन नियत हुआ था । इस प्रकारके महा समारोहके साथ भगवान् विश्वेश्वरने आकर मुक्तिमंडपमें प्रवेश किया ॥ २० ॥ इसके अनंतर भगवान् महेश्वर कुमारवृन्दोंसे वेष्टित होकर भगवती भवानी देवीके साथ उत्कृष्ट सिंहासन पर जा विराजे तब स्वयं चतुरानन ब्रह्मदेव महर्षि मंडलके सहित उनका अभिषेक करनेलगे ॥ २१ ॥ फिर तो देवगण, नागगण, समुद्रगण, गिरीन्द्रगण, एवं और सब पवित्र बुद्धिके लोग, असंख्यरत्न, बहुतेरे वस्त्र, विचित्रमाला और अपूर्व सुगंधी द्रव्योंके द्वारा बडे हर्षसे महेश्वरकी पूजा करने लगे, हे कुम्भज ! उसी घडी मातृकाओंनेभी भगवान्की (मंगल) आरती उतारी ॥ २२ ॥ २३ ॥ इसके उपरांत समस्त सुरवृन्द वन्दित भगवान् विश्वनाथ प्रथम सब मुनीन्द्रोंको उनके हृदयस्थित चिराभिलाषोंसे संतुष्टकर, ब्रह्मासे कुछ बतियाय फिर विष्णुसे सादर कहने लगे ॥ २४ ॥ आओ इधर बैठो, क्योंकि मेरी समस्त प्रभुताके हेतु तो तुम्हीं हो, दूर रहनेपरभी तुम मेरे निकटहीमें वर्तमान हो, और तुमसे बढकर दूसरा कोईभी मेरा कार्यकर्ता नहीं है ॥ ॥ २५ ॥ तुम्हींने राजा दिवोदासको ऐसा उत्तम उपदेश दिया कि वह नृपाल परम सिद्धिको प्राप्त होगया और मेराभी समस्त अभिलषित सिद्ध हुआ ॥ २६ ॥ हे विष्णो ! तुम मनमाने वरदान मांगो, क्योंकि यहांपर तुम्हारे लिए कुछभी अदेय नहीं है, यह जो मैं इस आनन्दकाननमें पहुँचसका, इसके मुख्य कारण तुम और यह गणेशहैं ॥ २७ ॥ (हे हरे !) त्रैलोक्यमात्रमें जैसी मुक्तिदायिनी, ब्रह्मरसायनकी खानि, परम सौख्यकी भूमि यह वाराणसीपुरी मेरी प्यारी है, वैसा दूसरा कुछभी नहीं है ॥ २८ ॥ भगवान् विश्वेश्वरकी इन बातोंको सुनकर विष्णुदेवने बरदानोन्मुख शंकरसे कहा, कि हे पिनाकपाणे ! यदि आप मुझपर प्रसन्न हैं, तो यही वर दीजिए कि मैं कभी आपके चरणारविन्दसे दूर न होने पाऊं ॥ २९ ॥ मधुसूदनकी बात सुनतेही परम संतुष्ट होकर भगवान् त्रिपुरारिने कहा, हे मुरारे ! तुम सदैव इस मोक्षलक्ष्मी विलासमें मेरे

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

पासही रहाकरो ॥ ३० ॥ हे चक्रपाणे ! जो कोई मेरा अनन्य भक्त होनेपरभी प्रथम तुम्हारी आराधना किये विना मेरी पूजा करेगा उसके मनोरथकी सिद्धि कभी मुझसे नहीं होसकेगी ॥ ३१ ॥ इस मुक्तिमंडपमें चाहे कहींपर रहनापडे पर यहां जो सौख्य मुझको होता है, वह निर्मल कैलासपर्वतपर अथवा दृढभक्ति निजसेवकके हृदयमेंभी नहीं मिलता ॥ ३२ ॥ जो कोई स्थिरचित्त वृत्ति होकर निमेष भरभी मेरे इस दक्षिणमंडपमें बैठजाते हैं, वे गाढभक्तिसे पूर्ण अनन्य चित्तलोग फिर कभी गर्भदशाके उपासक नहीं होने पाते ॥ ३३ ॥ समस्त तीर्थोंके मुकुटमणि चक्रपुष्करिणी तीर्थमें स्नानकर जो लोग संयतचित्तसे इस मुक्तिमंडपमें प्रवेश करते हैं, वे निष्पाप तो होईजाते हैं पर अन्तमें मेरे पारिषद बनादिये जाते हैं ॥ ३४ ॥ जो लोग इस मुक्तिमंडपमें क्षणमात्रभी बैठकर मेरा स्मरण, यथाशक्ति कुछ धनका दान, एवं पवित्र कथाओंका श्रवण करतेहैं, उनको करोड़ों गोदानका पुण्य मिलताहै ॥ ३५॥ हे उपेन्द्र ! जो लोग मणिकर्णिकामें स्नानकर क्षणभरभी इस मुक्तिमंडपमें मेरा स्मरण करते हैं उनको समस्त कठोर तपस्याओंके करने और अशेष तीर्थस्थानोंमें नहानेका संपूर्णफल लाभहोता है ॥ ३६ ॥ हे नारायण ! यद्यपि इस काशीमें पद पदपर तीर्थ पड़ेहुए हैं पर उन सबोंके साथ भला कभी मणिकर्णिकाकी तुलना होसकती है ? योंही यहांपर बहुतसे उत्तम मंडपके रहते भी यह मुक्तिमंडपही सबसे श्रेष्ठ है ॥ ३७ ॥ हे विष्णो ! भविष्य द्वापरयुगमें इस मुक्तिमंडपका नाम लोकमें कुक्कुटमंडपके नामसे प्रसिद्ध होवेगा ॥ ३८ ॥ विष्णुने पूछा (कि)—हे प्रभो भालनेत्र ! जैसी कि आप कहरहे हैं वैसी इस मुक्तिमंडपकी प्रसिद्धि क्योंकर होगी ? आप उसे वर्णन करें ॥ ३९ ॥ देवदेवने कहा—हे चतुर्भुज ! यहांपर होनेवाले द्वापरयुगमें एक महानन्द नामक ब्राह्मणहोवेगा, वह ऋग्वेदपाठी सदाचार तत्पर, तीर्थ प्रतिग्रहसे पराङ्मुख ॥ ४० ॥ दम्भ रहित, सरलचित्त, एवं सदैव अतिथियोंका सेवक होगा । फिर वह जवान होतेही अपने पिताके मरजाने पर ॥ ४१ ॥ कामदेवके चोखे बाणोंसे बिध कर कुमार्गमें उतारू होनेलगेगा, वह किसीसे मैत्री बढ़ाकर उसकी स्त्रीको उठाय लावेगा ॥ ४२ ॥ (फिर) उस कुलटाके जालमें फँसकर कामातुरतासे अपेयपान और अभोज्य वस्तुओंके भोजनमें प्रवृत्त होचलेगा ॥ ४३ ॥ (इस प्रकारके कुत्सित आचारोंसे अपनी संपत्तिको नाश करके) वह मूढात्मा धनी वैष्णवोंको देखते ही वैष्णवोंका वेषधर शैवलोगोंकी निन्दा ॥ ४४ ॥ और दानशील शैवोंके समाजमें पहुँच स्वयं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

परम पाशुपत बनकर वैष्णव लोगोंकी निन्दा करनेमें अगुवा बन जावेगा ॥ ४५ ॥ इस भाँतिके पाखण्ड धर्म रचनेमें निपुण होकर, यद्यपि स्नान संध्या इत्यादिको नहीं करेगा, पर लंबातिलक विशालमाला और टटकी धोईहुई बढ़िया धोती धारण कर॥ ४६॥ (बहुत भारी) चुन्दी झुलता हुआ सब किसीसे अधमदान लेनेमें पहिलेही अपना हाथ बढावेगा तब उस कुमार्गीको दो संतान उत्पन्न होंगे ॥ ४७ ॥ जब उसकी यह चाल पक्की होजावेगी तब कोई धनी पुरुष तीर्थयात्रा करनेके लिये पर्वतदेशसे यहां आवेगा ॥ ॥ ४८ ॥ वह धनी यात्री मणिकर्णिका पर नहाकर यह कहेगा कि, "मैं जातिका उत्तम चाण्डालहूं और धनीभीहूं सो मेरी इच्छा कुछ दान करनेकी है ॥ ४९ ॥ क्या यहां कोई ऐसा दानलेनेवाला है जिसे मैं अपना धन संकल्प करदेसकूं" । उस चाण्डालकी बात सुनकर कोई एक मनुष्य अंगुरीसे ॥ ५० ॥ यह बात बतादेवेगा कि "यह जो बैठाहुआ ध्यानकी मुद्राकरके जप कररहा है यही तेरा दान लेवेगा दूसरा कोई नहीं लेसकता" ॥ ५१ ॥ इस पर वह चाण्डाल सदानन्दके पासजाय दण्डवत्प्रणाम करके उससे यह कहने लगेगा ॥ ५२ ॥ "हे महाब्राह्मण ! मेरे पास कुछ धन है, उसे आप अनुग्रह करके स्वीकार करलेवें, और मेरी तीर्थयात्राको सफल करके मेरा उद्धार करदेवें"॥ ५३॥ तब तो वह अपनी सुमिरिनीको कानपर रख और ध्यान छोडकर हाथके संकेतसे पूछेगा, कि तुम्हारे पास कितना धनहै ? ॥ ५४ ॥ फिर तो वह चाण्डाल उसके संकेतको समझकर बडी प्रसन्नतापूर्वक कहेगा कि, "जितना धन पानेसे आप संतुष्ट होंगे मैं उतनाहीं आपको देसकता हूं, इसमें कोई अन्तर(फर्क) नहीं पडने पावेगा" ॥ ५५ ॥ (बस फिर क्या) उसके मुँहसे इतना सुनतेही शठ महानन्द अपनी मौनमुद्राको त्यागकर बडे आनन्दके साथ कहने लगेगा कि, यद्यपि मुझे प्रतिग्रह लेनेकी तनिकभी इच्छा नहीं है ॥ ५६ ॥ (पर तुम्हारी प्रार्थनाके संकोचसे) तुमपर अनुग्रह करके मैं तुम्हारा दानलेनेके लिये प्रस्तुत हूं, परन्तु हे उत्तमोत्तम ! यदि तुम मेरा कहना मानोगे तब मैं दान लेसकताहूं ॥ ५७ ॥ तुम्हारेपास जितना धनहै, उसमें (से) कुछ थोडासाभी दूसरे किसीको न देकर सब हमीको दोगे तब तो (दान) लेसकताहूं, नहीं तो मैं न लूंगा ॥ ५८ ॥ (तब वह) चाण्डाल कहेगा हे विप्र ! मैं जो कुछ धन विश्वेश्वरकी प्रसन्नताके लिये लायाहूं, वह सब आपहीको संकल्प करूंगा, क्योंकि मेरे विश्वनाथ तो आपही हैं ॥ ५९ ॥ हे द्विजोत्तम ! इस विश्वनाथकी राजधानीमें जो लोग रहते हैं वे चाहे, नीचसे नीच हों, अथवा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ऊँचसे ऊँचहों, पर वे सबके सब विश्वेश्वरहीके अंशस्वरूपहैं ॥ ६० ॥ जो लोग परायेका उद्धार करनेवाले हैं, और दूसरोंकी इच्छाको पूर्ण कर देते हैं, एवं जिनका स्वभावही परके उपकार करनेकाहै, वेही लोग विश्वनाथके अंशहैं ॥

चौपाई—पर उद्धार करै जो कोई । जो पर इच्छा पूरक होई ॥
पर उपकार सदा जेहि भावै । सो विश्वेश्वर अंश कहावै ॥ ६१ ॥

सदानन्द इस प्रकारसे उसके विनीत वचनको सुनकर परम प्रसन्नतापूर्वक उस पर्वतवासी अन्त्यजसे कहेगा ॥ ६२ ॥ तो फिर आओ कुशलो झटपट संकल्प करदो, (क्योंकि) ("तुरंतदान महा कल्यान" ।) इसपर वह उदार पर्वतवासी "बहुत अच्छा" कहकर तुरत "विश्वनाथ प्रसन्नहों" कहताहुआ धनको संकल्प करदेगा और अपने देशको चलाजावेगा । और वह महानन्द दूसरे ब्राह्मणोंके धिक्कारनेपरभी यहींपर रहने लगेगा ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ पर जब वह बाहर निकलेगा तब बहुतेरे लोग निन्दाकरतेहुए उसे यह कहेंगे कि "चाण्डालका दान लेनेसे यह चाण्डालब्राह्मण होगयाहै ॥ ६५ ॥ सब लोगोंने इसे छोडदियाहै, यह तो चाण्डाल स्वरूपही है" हे हरे ! इस प्रकारसे लोग उसके पीछे पीछे थूथूकरतेहुए घूमने लगेंगे ॥ ॥ ६६ ॥ तब वह काकसे डरतेहुए उलकी नाईं पुरवासियोंके डरसे कभी घरसे बाहर नहीं निकलेगा और उसका शिर लज्जाके मारे सदैव नीचेहीको झुँकारहेगा ॥ ६७ ॥ अनंतर वह अपनी उपपत्नीसे संमति करके बाराणसीपुरीको छोडकर (गयाकी ओर) कीकटदेशमें जाने लगेगा ॥ ६८ ॥ पर मार्गहीमें उसे सुवर्णादिकसे पूर्ण देखकर बहुतेरे गोसाइयोंके बीचमें रहने परभी ठगलोग घेरलेवेंगे ॥ ६९ ॥ फिर महानन्दको उसके कुटुम्बके साथ पकड़कर वे सब डांकू घोरगज्झिन जंगलके भीतर ले जाकर उसका सब धन लूटलेनेपर परस्पर यह विचार करेंगे ॥ ७० ॥ और कहेंगे कि यह माल तो बहुत अधिकहै, पर इस धनीके जीतेजी इसका बचालेना सहज काम नहीं है अतएव इस यात्रीको परिचारकोंके सहित मारडालना चाहिये ॥ ॥ ७१ ॥ वे सब लुटेरे यही स्थिर करके उससे कहेंगे कि "हे पथिक ! जो तुम्हारी इच्छाहो उसे स्मरण करलो, क्योंकि हमलोग निस्सन्देह सकुटुम्ब तुमको मारडालेंगे" ॥ ७२ ॥ इसपर वह ब्राह्मण अपने मनही मन कहने लगेगा "कि, हाय ! मैंने जिनके लिये उस चाण्डालसे बहुत अधिक धन दान लिया ॥ ७३ ॥ वे सब कुटुम्बके लोग मारे गये, और दानका लेनाभी वृथा होगया, फिर मेराभी जीवन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

विनष्ट हुआ और काशीपुरीका वासभी छूटगया ॥ ७४ ॥ हाय ! मेरीही दुर्बुद्धिसे एकसाथ सब कुछ बिगडगया, हाय ! उसी नीच दानलेनेके कारणसे मुझे काशीमें मृत्युभी नहीं मिलसकी " ॥ ७५ ॥ अन्तसमयमें कुटुम्बके तथा काशीके स्मरणसे वह ब्राह्मण लुटेरोंके हाथसे मारेजानेपरभी कीकटदेशमें कुक्कुट होवेगा ॥ ७६ ॥ और उसकी स्त्री कुक्कुटी एवं दोनों लड़के भी कुक्कुटही के बच्चे होंगे, पर अन्तमें काशीके स्मरण पड़जानेहीसे उन सबोंको जातिका स्मरण बनारहेगा ॥ ७७ ॥ इस प्रकारसे बहुतदिन बीतजाने पर (उसके संगी यात्री) गोसाँई लोग उसी मार्गसे आवेंगे जहां वे चारों कुक्कुट होकर घूमते रहेंगे ॥ ७८ ॥ वे लोग परस्पर ऊँची बोलीमें वाराणासीके विषयमें बातचीत करते जावेंगे, तब वे सब कुक्कुट उन लोगोंके मुखसे काशीकी कथा सुनकर ॥ ७९ ॥ पूर्वजन्मकी जातिके स्मरण रहनेसे उन्हींलोगोंके साथसाथ वहांसे चलदेवेंगे, इसके पीछे वे सब कृपाशील कार्पटिकलोग मार्गमें उन सबोंको कुछ चावल इत्यादि फेंकते देतेहुए काशीक्षेत्रतक लिवालावेंगे। फिर वे चारों कुक्कट काशी क्षेत्रमें पहुँचकर ॥ ८० ॥ ८१ ॥ इस परम पवित्र मुक्तिमंडपके चारोंओर विच रण करने लगेंगे । तदनंतर वे सब (कुक्कुट) जिताहार, नियमशील, काम क्रोध परा ङ्मुख, ॥ ८२ ॥ प्रसन्नवदन, मेरीहीकथाके इच्छुक, लोभमोहसे रहित, गंगास्नान से आर्द्र और निर्मल केश, ॥ ८३ ॥ मदीय नामोच्चारणमें तत्पर, मेरी कथाके श्रवणमें लीन मद्गत चित्तवृत्ति, ऐसे क्षेत्रवासी मेरे भक्तोंको देखेंगे ॥ ८४ ॥ इसके उपरान्त वे लोगभी "ये सब कुक्कुट पूर्वजन्महीके संस्कारसे ऐसे सत्पथावलम्बीहैं" ऐसा परस्पर विचार करके उन चारोंको बहुत मानने लगेंगे फिर वे चारों कुक्कुट क्रमशःआहार घटाते घटाते यहींपर अपने प्राणोंको छोड़देवेंगे ॥ ८५ ॥ हे विष्णो ! वे सब सब लोगोंके सामने (देखते ही देखते) मेरी दयाके कारण विमानपर चढ़कर तुरत मेरे लोक कैलासमें पहुँच ॥ ८६ ॥ बहुत दिनोंतक सर्वोत्तम दिव्य भोगोंका उपभोगकर फिर यहींपर परम ज्ञानी होकर शाश्वती मुक्तिको प्राप्त करेंगे ॥ ८७ ॥ तब द्वापरयुगके लोग उसी दिनसे इस मुक्तिमंडपको कुक्कुटमंडपके नामसे चारोंओर प्रसिद्ध करदेवेंगे॥ ८८॥ जो लोग इन चारों कुक्कुटोंके चरित्रको इस मुक्तिमंडपमें आकर स्मरणकरेंगे, उन सबका भी बड़ा कल्याण होगा ॥ ८९॥ भगवान् महेश्वर विष्णुदेवसे जब इस भविष्यकथाको कहरहेथे उसी घड़ी वहांपर घंटोंके बजनेका बड़ाभारी शब्द सुनाई पड़ने लगा॥ ९०॥ तब देवदेव उमापतिने नन्दीको बुलाकर उनसे यह कहा कि, हे नन्दिन् ! देखतो

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

ण करतेही क्षणमात्रमें जन्मभरके संचित सब पातकोंका क्षय होजाताहै ॥ २२ ॥ और इस लिंगके स्मरण करनेसे तो मेरे कथनानुसार दो जन्मके उपार्जित पाप अवश्यही तुरंत नष्ट होजातेहैं इसमें कुछभी सन्देह नहीं है ॥ २३ ॥ इस लिंगके उद्देश्य से जिस क्षणमें घरसे बाहर निकले त्योंही तीन जन्मके बटोरेहुए पापभी विलायजाते हैं ॥ २४ ॥ हे अमरगण ! फिर जो इस लिंगका दर्शन करताहै उसे तो मेरीही दयासे सैकडों अश्वमेधयज्ञोंका फल अवश्य होताहै ॥ २५ ॥ हे सुरसमूह ! मेरे इस स्वयंभू विश्वेश्वर लिंगके केवल स्पर्श करनेहीसे सहस्रों राजसूययज्ञ करनेका फल लाभ होताहै ॥ २६ ॥ भक्तिभावसे इस लिंगपर एक चिल्लू जल डारकर एक भी पुष्प चढाया जावे तो सैकडों सुवर्ण पुष्पोंके प्रदान करनेका पुण्य होजाताहै ॥ २७ ॥ इस लिंगराजकी साधारण पूजाभी यदि भक्तिपूर्वक कीजावे तो सहस्रों सुवर्णकमलके पूजन सा फल मिलताहै ॥ २८ ॥ और पंचामृत इत्यादिसे यदि इस लिंगकी महती पूजा करे तब तो धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष—चारोंही पुरुषार्थ करतलगत होजातेहैं ॥ २९ ॥ हे अमरवृन्द ! मेरे इस लिंगको वस्त्रके छानेहुए शुद्ध जलसे स्नान करावे तो लाखों अश्वमेधयज्ञ करनेका पुण्य प्राप्त होताहै ॥ ३० ॥ जो कोई भक्तिपूर्वक सुगंध—चन्दनके रसोंसे इस लिंगको लिप्तकरताहै उसे सुरांगनायें सुगंधित यक्ष कर्दमसे लेपन करती हैं ॥ ३१ ॥ सौरभमय धूपदान करनेसे दिव्यगंधोंका आश्रय हो जाताहै, एवं घृतका दीपक बालनेसे ज्योतीरूप होकर विमानपर चढ़ गमन करना पडताहै॥ ३२॥ और भक्तिभावसे यदि एकबारभी कपूरकी बत्तीसे आरतीकरे तो वह कर्पूर गौर देहकी शोभासे पूर्ण होकर भाललोचन होजाता है ॥ ३३ ॥ (इस लिंगपर) साधारण नैवेद्यका भोग लगानेसे एक एक कणमें एक एक युगभर बडा भोगकरता हुआ वह बुद्धिमान् जन कैलासपर्वतपर वास करताहै ॥ ३४ ॥ और जो कोई विश्वेश्वरके ऊपर घृत और शक्करके सहित उत्तम पकवान चढाताहै वह देवता, पितर और मनुष्यके सहित त्रैलोक्यभरको तृप्त कर देता है ॥ ३५ ॥ जो कि मुखवास, दर्पण, सुन्दरचामर, चन्दवा, और सुखद पलंग समर्पण करता है, उसे सुकृतका बहुत बडा फल मिलता है ॥ ३६ ॥ क्योंकि समुद्रके रत्नोंकी गिनती तो किसी प्रकारसे कीभी जा सकतीहै, पर मुखवास इत्यादिके समर्पणकी संख्या इस लोकमें कौन करनेवालाहै ? ॥ ३७ ॥ जो कोई भक्तिके साथ मेरे मन्दिरमें पूजाकी उपकरणसामग्री, घंटा और गडुआ इत्यादि समर्पण करता है वह

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(अंतमें) यहांपर मेरे समीपहीमें वास पाताहै ॥ ३८ ॥ जो कि मेरे लिये गाना, बजाना, और नाचना इन तीनोंमें एकभी करता है, उसके आगे रात दिन ये तौर्यत्रिक संगठित बने रहते हैं ॥ ३९ ॥ मेरे इस मन्दिरमें जो कोई चित्रकारी इत्यादि कर्मोंको कराताहै, वह मेरे सामने बैठकर विचित्र महाभोगोंको भोगताहै ॥ ४० ॥ विज्ञजन जन्मभरके मध्यमें एकबारभी विश्वेश्वरको प्रणाम करे तो वह त्रैलोक्यमात्रसे वन्दितचरण होकर वसुधापति होता है ॥ ४१ ॥ जो कोई विश्वनाथका दर्शन करनेके उपरांत कहीं अन्य स्थानमेंभी जाकर मरजाता है, वह फिर दूसरे जन्ममें निस्सन्देह मोक्षको पाता है ॥ ४२ ॥ जिसकी जिह्वाके अग्रभागपर विश्वनाथका नाम, कानोंमें विश्वेश्वरकी कथा, और चित्तमें विश्वेशका ध्यान बना रहता है, उसका पुनर्जन्म कहां है ? ॥ ४३ ॥ मेरे इस विश्वनाथनामक लिंगका दर्शन करके जो उसकी प्रशंसा करताहै, वह महापुण्य—बलाश्रित होकर मेरे पारिषदोंमें गिना जाता है ॥ ४४ ॥ जो सुकृतीपुरुष त्रिकाल "विश्वनाथ, विश्वेश, विश्वेश्वर !" ऐसा जपता है, वह मेरे चित्तमें सदैव जागरूक बना रहता है ॥ ४५ ॥ हे देवगण ! यह महालिंग मेराभी सदैव परमपूज्यहै, अतएव देवता ऋषि और मनुष्योंको सब प्रयत्नसे पूजना उचित है ॥ ४६ ॥ जिन लोगोंने नतो विश्वेश्वरका दर्शन किया, न विश्वनाथका स्मरणही किया, उन लोगोंको यमराजके दूतगण देखते रहतेहैं, और उनको गर्भका दुःख बारंबार स्मरणही करना पडताहै ॥ ४७ ॥ जिसने इस लिंगको प्रणाम करदिया वह सुरासुर सबसे प्रणाम कियागया, जिसके एक प्रणामके आगे दिक्पालक पदभी छोटाहै क्योंकि दिक्पतिके पदसे गिरनाही पडताहै पर महादेवके प्रणामका कभी पात नहीं होसकता ॥ ४८ ॥ अशेष देवगण और महर्षिमण्डल सुन रक्खें, मैं परोपकारहीके लिये यह बहुत ठीक कह रहाहूं, भूलोक, भुवर्लोक, स्वर्गलोक, महर्लोक और जनलोकके भीतर कहींपरभी विश्वेश्वरके समान कोईभी लिंग नहींहै ॥ ४९ ॥ हे सुरसमूह ! (यहींतक नहीं) तपलोक, सत्यलोक, वैकुंठ, कैलास और (सातों) रसातलोंमेंभी किसी स्थानमें विश्वेश्वरके तुल्य लिंग और मणिकर्णिकाके सदृश तीर्थ दूसरा नहींहै ॥ ५० ॥ विश्वनाथके समान लिंग, मणिकर्णिकाके तुल्य तीर्थ, और मेरे शुभमय आनन्दवनके सदृश तपोवन दूसरा कहीं भी नहींहै ॥ ५१ ॥ यद्यपि समस्त वाराणासीपुरी तीर्थमयीहीहै, और उसका नामतो तीर्थोंकाभी तीर्थ है, तथापि इसमें यह महापवित्रा मणिकर्णिका तो मेरे सौख्यहीकी भूमीहै

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

॥ ५२ ॥ मेरे इस राजप्रासादसे कुछ ईशानकोणपर अर्थात् पूर्व और उत्तर दिशाके बीच वाम भागमें तीनसौ हाथ और दक्षिणभागमें दोसौ हाथ ॥ ५३ ॥ एवं (उत्तर और पश्चिमके मध्यमें) पांचसौ हाथ गंगाके भीतरतक मणिकर्णिकाकी सीमाहै, यह भूमी त्रैलोक्यभरमें सारस्वरूप एवं परमात्माका आधारस्थानहै, अतएव इसके सेवक लोग मेरे हृदयमें सुखसे सोते रहतेहैं ॥ ५४ ॥ मेरे इस आनन्दवनमें यह जो सुधा धाम मदीय लिंग है यह समस्तस्थानोंका परमधाम है और यह भक्तोंपर कृपावश होकर सातों पातालोंको भेदकर स्वयमेव समुत्थित हुआहै ॥ ५५ ॥ जो लोग इस लिंगको कृत्रिमबुद्धिसे (बनौआ कहकर) अथवा हेतुवादोंसे (कि यह तो स्थापित ही किया गया होगा) भजेंगे उन लोगोंके लिए यही दण्ड निरूपित है कि, उनको गर्भवाससे कभीभी छुट्टी नहीं होती यह बात ध्रुवहै ॥ ५६ ॥ मेरे भक्तलोगोंको उचितहै कि, सदैव इस लिंगके लिये अपने प्रिय पदार्थोंको समर्पण करें, क्योंकि यहां के कियेहुए पापोंकी नाईं उन वस्तुओंका कभी इस लोक और परलोकमेंभी नाश नहीं होने पाता ॥ ५७ ॥ जो लोग दूरदेशान्तरस्थ होनेपर मेरे यहांके इस लिंगकी आराधना विशेषबुद्धिसे करते हैं मोक्ष लक्ष्मी मेरे ही दियेहुए उत्तम वस्तुओंके सहित उन सज्जनोंको यहां वसादेती है ॥ ५८ ॥ हे विष्णो ! हे सृष्टिकर्तः ! हे देवगण ! एवं हे ऋषिवृन्द ! सब लोग अच्छे प्रकारसे सुन रक्खो, यह लिंग सत्पुरुषोंका परमसिद्धिदायकहै, और मुझमें और मेरे इस लिंगमें कुछभी भेद नहीं है ॥ ५९ ॥ समस्त सिद्धियोंके साधन स्वरूप मेरे इस लिंगपर जो अपने सत्कर्मोंके द्वारा उपार्जित धनको चढादेतेहैं, उनको मैं उसके बदलेमें समस्त सौख्योंका अतिमात्र साधक निर्भय निर्वाणपदका दान करताहूं ॥ ६० ॥ मैं हाथ उठाकर बारंबार कह रहाहूं, कि त्रैलोक्यभरमें येही तीनों सारवस्तुहैं (अर्थात्) विश्वेश्वरका लिंग, मणिकर्णिकाका जल और काशीपुरी और येही तीनों सत्यहैं ॥ ६१ ॥ महादेव इस कथनके उपरांत शक्तिके सहित उस लिंगकी बडी पूजा करके उसीमें लीन होगये तब समस्त देवतालोग जय जय कहतेहुए प्रणाम करके अपने अपने धामको चले गये ॥ ६२ ॥ स्कन्दने कहा हे महामते ! मित्रावरुणनन्दन ! तुमभी काशीके वियोगसे विधुरहो, इसलिये मैंने तुमसे अपनी बुद्धिके अनुसार उस अविमुक्तक्षेत्रका थोडासा पापनाशक माहात्म्य वर्णन करदिया । तुमभी थोडेही दिनोंमें उस सर्वोत्तमा काशीपुरीको प्राप्त करोगे ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ अब तो ये भगवान् भास्करभी अस्ता-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

चलके शिखरपर पहुँचगये, तुम्हारे और मेरेभी वाचंयम (मौन) होनेका समय होगया ॥ ६५ ॥ व्यासने कहा हे सूत ! यह सुन, लोपामुद्राके सहित अगस्त्य मुनि, उमानन्दन भगवान् स्कन्दको वारंवार प्रणाम करके संध्योपासनके लिये वहांसे चले गये ॥ ६६ ॥ और विश्वनाथके क्षेत्रका गूढरहस्य जानलेनेसे निश्चित चित्त होकर वे महर्षि अगस्त्य उन्हींकी आराधनामें तत्पर रहनेलगे ॥ ६७ ॥ हे सूत ! इस संसारमें भला ऐसा कौनहै जो सैकडों वर्षोंमेंभी आनन्दकाननकी महिमा गानेमें समर्थ होसकताहै ?॥ ६८ ॥ परमात्मा महादेवने जैसा (जगदम्बा) पार्वतीदेवीसे कहाथा महात्मा स्कन्दनेभी वैसेही अगस्त्य ऋषिसे वर्णन किया ॥ ६९ ॥ हे सत्तम ! उसीके अनुसार मैंनेभी तुम्हारे और शुक इत्यादिके आगे कहसुनाया, अब औरभी जो कुछ पूछना चाहतेहो उसे पूछसकतेहो, मैं कहनेको प्रस्तुतहूं ॥ ७० ॥ समस्त अभिलषित वस्तुओंके देनेवाले, सब कल्मषोंके नाशक इस पवित्र अध्यायके श्रवण करनेसे मनुष्य बडाही सुकृती होताहै ॥ ७१ ॥

दोहा—विश्वनाथ सम लिंग नहिं, नगर न काशि समान ।
मनिकनिकासों तीर्थ नाहिं, जगमें कतहुं महान ॥ १ ॥
मानुष तन वह धन्यहै, विश्वनाथ जो देख ।
जन्मलिये कर विश्वमें, एक यही फल लेख ॥ २ ॥

इति श्रीस्कंदपुराणे चतुर्थे काशीखंडे उत्तरार्धे भाषायामेकोनशततमोऽध्यायः ॥ ९९ ॥

सवां अध्याय ।

अनुक्रमणिका ।

सूत बोले—हे महात्मन् ! मैं इस स्कन्दपुराणान्तर्गत सर्वोत्तम काशीखण्डको सुनकर बहुतही संतुष्ट हुआ, और इसे अपने हृदयमें रखभी चुकाहूं ॥ १ ॥ हे पराशरात्मज ! अब आप इस ग्रंथकी यथापूर्व अनुक्रमणिका, एवं अनुपम माहात्म्यभी कह दीजिए (जिसमें इसकी सम्पूर्णता होजावे) ॥ २ ॥ व्यासने कहा—हे धर्मात्मन् ! जातुकर्णीतनय ! सूत ! अब मैं सब किसीके पापापनोदन एवं पुण्यवर्द्धनके लिए अनुक्रमणिका अध्याय और इस काशीखण्डका माहात्म्य वर्णन करताहूं सावधान होकर श्रवण करो, और इसे शुक एवं वैशंपायन प्रभृति लडकेभी सुन रक्खें ॥ ३ ॥ ४ ॥ इसके प्रथम अध्यायमें विंध्यपर्वत और नारदमुनिका

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

संवाद कहा गयाहै; फिर क्रमसे सत्यलोक प्रभाव, अगस्त्यके आश्रममें देवतोंका आगमन पतिव्रताका चरित्र, अगस्त्य मुनिका प्रस्थान ॥ ५ ॥ ६ ॥ तीर्थकी प्रशंसा, सप्तपुरियोंका वर्णन, संयमनीपुरीका रूपवर्णन, सूर्यलोकका विवरण ॥ ७ ॥ शिव शर्माकी इन्द्रलोक और अग्निलोकमें प्राप्ति, अग्निकी उत्पत्ति, निर्ऋति और वरुणके जन्मकी कथा, ॥ ८ ॥ गंधवती और अलकापुरियोंका वृत्तान्त, शिवशर्माकी चन्द्र लोक यात्रा, ॥ ९ ॥ नक्षत्रलोककी कथा, शुक्रकी उत्पत्ति, मंगल, बृहस्पति, और शनिके लोकोंका वर्णन ॥ १० ॥ सप्तर्षिमंडलका विवरण, ध्रुवकी तपस्या ध्रुवकी अधिकार प्राप्ति, ध्रुवलोकमें स्थिति ॥ ११ ॥ शिवशर्माका सत्यलोक दर्शन, चतुर्भुजका अभिषेक, शिवशर्माका निर्वाणलाभ ॥ १२ ॥ स्कन्द और अगस्त्यका संवाद, मणिकर्णिकाकी उत्पत्तिकथा, गंगामाहात्म्य, दशहरास्तोत्र, ॥ १३ ॥ गंगाका प्रभाव वर्णन, गंगासहस्रनाम, वाराणसीकी प्रशंसा, कालभैरवका आविर्भाव ॥ १४ ॥ दण्डपाणिकी उत्पत्ति, ज्ञानवापीके प्रकट होनेकी कथा; कलावतीका उपाख्यान, सदाचार निरूपण ॥ १५ ॥ ब्रह्मचारीका प्रकरण, स्त्रीलक्षण, कर्तव्य और अकर्तव्योंका कथन, अविमुक्तेश्वरका वर्णन ॥ १६ ॥ गृहस्थाश्रमधर्म योगनिरूपण, कालज्ञान (के उपाय) राजा दिवोदासका वर्णन ॥ १७ ॥ काशीवर्णन, योगिनीगणकी कथा, लोलार्ककी कथा, उत्तरार्ककका वर्णन ॥ १८ ॥ साम्बादित्यका माहात्म्य, द्रुपदादित्य (और मयूखादित्य) की कथा, गरुडोपाख्यान, अरुणार्क इत्यादिका वर्णन ॥ १९ ॥ दशाश्वमेधतीर्थकी महिमा, मन्दराचलसे गणोंका आगमन, पिशाचमोचनकी कथा, गणेशका प्रेषण ॥ २० ॥ गणेशकी मायाका वर्णन, ढुंढिराजका प्रादुर्भाव, विष्णुमायाका विस्तार, दिवोदासका विसर्जन ॥ २१ ॥ पंचनदकी उत्पत्ति, बिन्दुमाधवका आविर्भाव, वैष्णवतीर्थोंका माहात्म्य कीर्तन ॥ २२ ॥ वृषभध्वज शूलपाणिकी मन्दराचलसे काशीकी यात्रा, महादेवका ज्येष्ठस्थानमें जैगीषव्य मुनिसे संवाद ॥ २३ ॥ पापनाशक क्षेत्र रहस्य कथन, कन्दुकेश्वर और व्याघ्रेश्वरकी उत्पत्ति कथा, ॥ २४ ॥ शैलेश्वरका वर्णन रत्नेश्वरका दर्शन, कृत्तिवासेश्वरकी समुत्पत्ति, (अडसठ) आयतनोंमें समागम ॥ २५ ॥ (काशीमें) देवतालोगोंका अधिष्ठान, दुर्गासुरके पराक्रमका वर्णन, दुर्गादेवीका विजय ओंकारेश्वरका वर्णन ॥ २६ ॥ ओंकारेश्वरकी महिमाका कीर्तन, त्रिलोचनकी उत्पत्ति, त्रिलोचनका माहात्म्य, केदारेश्वरका उपाख्यान ॥ २७ ॥ धर्मेश्वर—माहात्म्य, पक्षियोंकी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

कथा, विश्वभुजागौरीका आख्यान, दुर्दमकी कथा ॥ २८ ॥ वीरेश्वरका उपाख्यान, वीरेश्वरकी महिमा, गंगाके तीर्थों (घाटों) सहित कामेश्वरका माहात्म्य ॥ २९ ॥ विश्वकर्मेश्वरकी कथा, दक्षके यज्ञका समुद्भव, सतीका देहत्याग, दक्षेश्वरकी उत्पत्ति ॥ ३० ॥ पार्वतीश्वरके महिमाका कीर्तन, गंगेश्वरका माहात्म्य, नर्मदेश्वरकी उत्पत्ति ॥ ३१ ॥ सतीश्वरकी कथा, अमृतेश्वर इत्यादिका वर्णन, व्यासका भुजस्तंभन, व्यासका शापविमोक्षण ॥ ३२ ॥ क्षेत्रके समस्ततीर्थोंका वर्णन, मुक्तिमंडपकी कथा, विश्वेश्वरका आविर्भाव, और यात्राओंकी परिक्रमा ॥ ३३ ॥ येही शतसंख्यक उपाख्यान (इस ग्रंथमें) क्रमसे कहे गये हैं, इस अनुक्रमणिकाके श्रवण करलेनेसे समस्त काशीखण्डके सुननेका फल प्राप्त होताहै, और इसी अनुक्रमणिकाके अध्यायमें यात्रा परिक्रमभी वर्णित है ॥ ३४ ॥ सूतने कहा—हे सर्वोत्तम ! सत्यवतीनन्दन ! अब आप सिद्धिप्रार्थी लोगोंके हितार्थ यात्राओंका परिक्रम वर्णन कीजिए ॥ ३५ ॥ व्यासदेव बोले—हे महाप्राज्ञ ! लोमहर्षण यात्रिक लोगोंको प्रथम जैसे हर्षके साथ यात्रा करनी चाहिए उसे मैं तुमसे कहताहूं, श्रवण करो ॥ ३६ ॥ यात्री पहिले मणिकर्णिकाके कुंडमें वस्त्रके सहित स्नान कर, देवता--पितरोंके तर्पण करनेपर ब्राह्मण तथा अर्थीलोगोंको संतुष्ट करे ॥ ३७ ॥ फिर सूर्यदेव, द्रौपदी, विष्णु, दण्डपाणि, और महेश्वरको नमस्कार करता हुआ ढुंढिराज गणेशके दर्शनको जावे ॥ ३८ ॥ वहांसे ज्ञानवापीपर जाकर उसका जलस्पर्श करे, फिर नन्दिकेश्वर, तारकेश्वर, और महाकालेश्वरकी पूजा करनेके उपरांत ॥ ३९ ॥ दंडपाणि (दंडपाणीश्वर) का पूजन समाप्त करे, इस यात्राका नाम पंचतीर्थी है ॥ ४० ॥ महाफलाभिलाषी लोगोंको प्रतिदिन इस पंचतीर्थी यात्राको करना उचितहै, इसके उपरांत सर्वार्थसिद्धिप्रदा विश्वेश्वरकी यात्रा करनी चाहिए ॥ ४१ ॥ कृष्णपक्षकी प्रतिपदासे आरंभ कर चतुर्दशी पर्यन्त चौदह दिनोंमें विधिपूर्वक पूर्वोक्त चतुर्दश आयतनोंकी यात्रा बड़े प्रयत्नसे करनी चाहिए ॥ ४२ ॥ अथवा क्षेत्रकी सिद्धि चाहनेवाले प्रत्येक चतुर्दशीहीको उन उन तीर्थोंमें स्नान एवं उन उन लिंगोंका पूजन करे ॥ ४३ ॥ जो यात्री मौन होकर यात्रा करताहै उसीको यात्राका फल मिलताहै, प्रथम मत्स्योदरीतीर्थमें स्नानादिक क्रियाओंको कर ओंकारेश्वरका दर्शन करे ॥ ४४ ॥ फिर त्रिलोचन, महादेव, कृतिवासेश्वर, रत्नेश्वर, चन्द्रेश्वर, केदारेश्वर ॥ ४५ ॥ धर्मेश्वर, वीरेश्वर, कामेश्वर, विश्वकर्मेश्वर, मणिकर्णिकेश्वर ॥ ४६ ॥ और अविमुक्तेश्वरका (जाकर) दर्शन करता हुआ विश्वेश्वरकी

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(आकर) पूजा करे । क्षेत्रवासीको प्रयत्नपूर्वक यही यात्रा करनी चाहिये ॥ ४७ ॥ जो कोई क्षेत्रमें रहनेपरभी इस यात्राको नहीं करता उसपर क्षेत्रसे उच्चाटन कर देने-वाले अनेक विघ्न उपस्थित होतेहैं॥ ४८॥प्रत्येक अष्टमीको विशेष कर विघ्नोंहीकी शांतिके लिये दूसरी अष्टायतनकीभी यात्राकर्तव्यहै मनुष्यपहिले दक्षेश्वरका दर्शन कर फिर क्रमशः पार्वतीश्वर, पशुपतीश्वर, गंगेश्वर, नर्मदेश्वर गभस्तीश्वर, सतीश्वर और तारकेश्वरका दर्शन करे ॥ ४९ ॥ ५० ॥ बड़े बड़े पापोंकी शांतिके लिए इन सब (आठों) लिंगोंका दर्शन करना चाहिए । फिर और भी सदैव योगक्षेम करनेवाली शुभप्रदा एक दूसरीही यात्राहै ॥ ५१ ॥ जिसे क्षेत्रवासियोंको समस्त विघ्नोंके विनाशनार्थ अव-श्यही करना चाहिए, पहिले वरुणानदीमें नहाकर शौलेश्वरका दर्शन करे, ॥ ५२ ॥ फिर वरुणा (और गंगाके) संगमपर स्नान कर संगमेश्वरका दर्शन करना चाहिए, योंही स्वलीन तीर्थमें अवगाहन कर स्वलीनेश्वरका दर्शन आवश्यकहै ॥ ५३ ॥ तब मन्दाकिनी तीर्थमें नहा (धो) कर मध्यमेश्वरका दर्शन करे, फिर हिरण्यगर्भ तीर्थमें स्नान और हिरण्यगर्भेश्वरका दर्शन करना चाहिए ॥ ५४ ॥ तदनंतर मणिकर्णि-कामें स्नानकर ईशानेश्वरका दर्शन करे, फिर गोप्रेक्षकूपके जलसे मार्जन कर गोप्रेक्षे-श्वरका अवलोकन करे ॥ ५५ ॥ इसके उपरांत कापिलेय ह्रदमें नहाकर वृषभध्व-जका दर्शन करना चाहिए, फिर उपशांतकूपपर उदकक्रियाको कर उपशांत शिवका दर्शन करे ॥ ५६ ॥ योंही पंचचूड़ाह्रदमें अवगाहन कर ज्येष्ठस्थानकी अर्चना करे, फिर चतुःसमुद्रकूपमें स्नानकर चतुस्समुद्रेश्वरकी पूजा करे, ॥ ५७ ॥ उनके सन्मुख जो बावलीहै उसके जलका स्पर्श कर, शुक्र कूपमें जलकृत्य करनेके उपरांत शुके-श्वरका दर्शन करे ॥ ५८ ॥ तदनंतर दण्डखाततीर्थमें अवगाहन तथा व्याघ्रेश्वरका पूजन करे, तब शौनकेश्वर कुंडमें स्नानकर जम्बुकेश्वरनामक महालिंगकी पूजा करे । मनुष्य (इस प्रकारसे) इस यात्राके करनेसे फिर कभी दुःखसागर संसारमें जन्म नहीं ग्रहण करता ॥ ५९ ॥ ६० ॥ कृष्णपक्षकी प्रतिपदासे आरम्भ कर चतुर्दशी पर्यन्त इसी क्रमके अनुसार इन आयतनोंकी यात्रा करनी चाहिए ॥ ६१ ॥ इस यात्राके करनेसे मनुष्य फिर कभी जन्मभागी नहीं होने पाता । ऐसीही एकादश आय-तनोंकी एक दूसरीही यात्राभी (सर्वथा) करनेहीके योग्यहै ॥ ६२ ॥ आग्नीध्रकुंडमें स्नान कर क्रमसे आग्नीध्रेश्वर, उर्वशीश्वर, नकुलीश्वर ॥ ६३ ॥ आषाढीश्वर, भारभू-तेश्वर, लांगलीश्वर, त्रिपुरान्तकेश्वर, ॥ ६४ ॥ मनःप्रकामेश्वर, प्रीतिकेश्वर, मदाल-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

सेश्वर, एवं तिलपर्णेश्वर ॥ ६५ ॥ इन एकादश लिंगोंकी यात्रा प्रयत्नपूर्वक करनी चाहिए; (क्योंकि) इस यात्राके करनेसे मनुष्य रुद्रपदको प्राप्त होताहै ॥ ६६ ॥ अब मैं अनुपम गौरी यात्राका वर्णन करताहूं, शुक्लपक्षकी तृतीया तिथिको इस यात्राके करनेसे परमसमृद्धि प्राप्त होतीहै ॥ ६७ ॥ मनुष्य गोप्रेक्ष तीर्थमें स्नान कर प्रथम मुखनिर्मालिकादेवीके दर्शनको जावे, फिर ज्येष्ठावापीमें स्नानादि कृत्य कर ज्येष्ठा गौरीका पूजन करे ॥ ६८ ॥ तदनंतर ज्ञानवापीमें उदकक्रियाओंको सम्पादन कर सौभाग्य गौरीकी अर्चना करनी चाहिए, फिर वहींपर स्नानादिके अनंतर शृंगार गौरीकी पूजा उचितहै ॥ ६९ ॥ पश्चात् विशाल गंगामें स्नान कर विशालाक्षीके दर्शनको जावे, फिर ललिता तीर्थ (घाट) में स्नान कर ललितादेवीका पूजन करे ॥ ७० ॥ योंही भवानीतीर्थमें स्नानादि कर भवानी (अन्नपूर्णा) का पूजन करे, फिर बिन्दुतीर्थमें अवगाहन कर मंगला गौरीकी पूजा करनी चाहिए ॥ ७१ ॥ तदनंतर स्थिरलक्ष्मीकी समृद्धिके लिये महालक्ष्मीकी यात्रा करे, जो कोई मुक्तिकी जन्मभूमि काशीक्षेत्रमें इस यात्राको करताहै ॥ ७२ ॥ वह इस लोक तथा परलोकमेंभी कहींपर दुःखभागी नहीं होनेपाता । इसी प्रकारसे यहांपर प्रति चतुर्थीको सदैव गणेशकीभी यात्रा करनी चाहिए ॥ ७३ ॥ और गणेशकी प्रसन्नताके उद्देश्यसे ब्राह्मण लोगोंको लड्डू देना चाहिए । फिर प्रत्येक मंगलवारको पातकनाशिनी भैरवकी यात्रा करनी उचितहै ॥७४॥ समस्त विघ्नोंकी शांतिके लिए रविवार, भानुषष्ठी एवं भानुसप्तमीको सूर्यनारायणकी यात्रा करनी चाहिए ॥ ७५ ॥ अष्टमी अथवा नवमीको चण्डिका (दुर्गा) की शुभ यात्रा अवश्य कर्तव्यहै, (यथासंभव) प्रतिदिन अन्तर्गृहकी यात्राभी करनी आवश्यकहै ॥ ७६ ॥ प्रथमतः प्रातःकाल स्नानकर पंचविनायकोंके नमस्कार करनेके उपरांत मुक्तिमंडपमें बैठकर विश्वेश्वरको प्रणाम करे ॥७७॥ फिर "मैं समस्त पापोंकी शान्तिके लिये अन्तर्गृहकी यात्रा करूंगा" इस प्रकारसे संकल्प कर मणिकर्णिकापर जावे॥७८॥ वहां मौनावलंबनपूर्वक स्नानकर फिर मणिकर्णिकेश्वरका पूजन करे, तदनंतर दोनों कंबलाश्वतरेश्वरोंको तथा वासुकीश्वरको प्रणाम करे॥७९॥ तत्पश्चात् पर्वतेश्वर, गंगाकेशव, ललितादेवी, एवं जरासंधेश्वरका दर्शन करे ॥८०॥ फिर सोमनाथ, और (आदि) वाराहसे होताहुआ ब्रह्मेश्वर और अगस्तीश्वरको प्रणाम करे ॥८१॥ कश्यपेश्वरको नमस्कार, फिर हरिकेशवन, वैद्यनाथ, और ध्रुवेश्वरका दर्शन कर॥८२॥ गोकर्णेश्वरका पूजन करता हुआ हाटकेश्वरपर पहुँच अस्थिक्षेप तडाग

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

(हडहा—वेनिया) पर कीकेसेश्वरके दर्शनके उपरांत ॥ ८३ ॥ भारभूतेश्वर, चित्रगुप्तेश्वर, और चित्रघंटादेवीको प्रणामकर पशुपतीश्वर ॥ ८४ ॥ पितामहेश्वर, कलशेश्वर चन्द्रेश्वर, वीरेश्वर, विद्येश्वर, अश्वीश्वर, ॥ ८५ ॥ नागेश्वर, हरिश्चन्द्रेश्वर, एवं सर्व विघ्नविनाशक चिन्तामणिविनायक और सेनाविनायकका दर्शन करना चाहिए ॥ ८६ ॥ फिर वशिष्ठ और वामदेव मूर्तिरूपधर कर काशीमें बड़े बड़े विघ्नोंको दूर भगा देतेहैं, प्रयत्नपूर्वक उनका दर्शन करना उचितहै ॥ ८७ ॥ ततःपर सीमाविनायक और करुणेश्वरकी ओरसे होताहुआ त्रिसन्ध्येश्वर, विशालाक्षीदेवी, धर्मेश्वर, विश्वभुजागौरी, आशाविनायक, वृद्धादित्य ॥ ८८ ॥ चतुर्वक्त्रेश्वर, ब्राह्मीश्वर, मनःप्रकामेश्वर, ईशानेश्वर, ॥ ८९ ॥ चण्किादेवी, चण्डीश्वर, और भवानी-शंकरका दर्शन कर, ढुण्ढिराज गणेशको प्रणाम करनेके उपरांत राजराजेश्वरका पूजन करे ॥ ९० ॥ तदनंतर लांगलीश्वर, नकुलीश्वर, परान्नेश्वर, परद्रव्येश्वर ॥ ९१ ॥ प्रतिग्रहेश्वर, निश्कलंकेश्वर मार्कण्डेयेश्वर, अप्सरेश्वर, ॥९२॥ एवं गंगेश्वर इत्यादिका दर्शन पूजन करनेके पश्चात् ज्ञानवापीमें स्नान करे । फिर नन्दिकेश्वर, तारकेश्वर, महाकालेश्वर ॥ ९३ ॥ दण्डपाणि, महेश्वर, मोक्षेश्वर, वीरभद्रेश्वर, अविमुक्तेश्वर, ॥ ९४ ॥ एवं पंचविनायकोंको प्रणाम करताहुआ विश्वनाथमें जावे तब मौनव्रतको त्यागकर (हाथजोड़) यह मंत्र कहे ॥ ९५ ॥ यथासंभव मेरी की हुई इस अन्तर्गृह यात्राके द्वारा चाहे वह न्यूनहो अथवा अतिरिक्त होगई हो भगवान् विश्वेश्वर मुझपर प्रसन्न होवें ॥ ९६ ॥ इस प्रार्थनारूप मंत्रको कह क्षणमात्र मुक्तिमंडपमें विश्राम करने उपरांत पापरहित पुण्यवान् यात्री नर अपने भवनको चला जावे ॥ ९७ ॥ इसी भांति हरिवासर प्राप्त होनेपर महापुण्यकी समृद्धिके लिये प्रयत्नपूर्वक समस्त विष्णुतीर्थोंकी यात्रा करनी चाहिए ॥ ९८ ॥ भाद्रपद मासकी पूर्णिमाको कुलस्तंभ (लाट भैरव) का पूजन करना चाहिए क्योंकि उसके पूजनसे रुद्रपिशाचत्वका दुःख नहीं झेलना पड़ता ॥ ९९ ॥ तीर्थवासीलोगोंको श्रद्धापूर्वक इन सब यात्राओंको करना चाहिए, एवं पर्वोंपर तो विशेषरूपसे सब स्थानोंकी यात्रा अवश्यही करनी उचित है॥ १०० ॥पुण्यशाली जन यात्राके विना कभी दिनको निष्फल नहीं जाने देवें, पर दो यात्रायें तो प्रयत्नपूर्वक प्रतिदिन अवश्यही करने योग्यहैं ॥ १॥ प्रथम तो गंगाका स्नान और द्वितीय विश्वनाथका दर्शन, (ये दोनों यात्रायें नित्यकर्म हैं) । जिस किसीका काशीमें रहनेपरभी विना यात्रा किये दिन व्यर्थही बीत-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

जाताहै ॥ २ ॥ उसी दिन उसके समस्तपितरलोग निराश होजाते हैं, एवं (उसी दिन) वह मनुष्य कालरूपी सर्पसे डँसा और मृत्युका लक्ष्य होजाताहै ॥ ३ ॥ सचमुचही जिस दिन भगवान् विश्वेश्वरका दर्शन नहीं मिलसका उसदिन देही लूटागया (इसमें कुछ सन्देह नहीं है) । जो कोई मणिकर्णिकामें स्नान और विश्वेश्वरका दर्शन करसका, वह समस्त तीर्थोंमें स्नान एवं सब प्रकारकी यात्राओंको करचुका यह बात सर्वथा सत्यहै, इसी लिये नित्यप्रति मणिकर्णिका स्नान और विश्वेश्वरका दर्शन अवश्यमेव करना चाहिए ॥ ४ ॥ ५ ॥ व्यासने कहा—हे सूत ! स्कन्दपुराणोक्त इस उत्तम काशीमाहात्म्यके श्रवण करनेसे मनुष्य सहस्रों पापोंके करनेपरभी कभी नरकगामी नहीं होने पाता ॥६॥ समग्र तीर्थोंमें स्नान करनेसे जो पुण्योपार्जन होताहै, एकमात्र इस काशीखण्डके श्रवण करनेहीसे सो सब प्राप्त होजाताहै, हे सूत ! इसमें कुछभी सन्देह नहीं है ॥ ७ ॥ केवल इस ग्रंथके सुननेहीसे सब प्रकारके दान और अनेक विध यज्ञोंके अनुष्ठान (करने) का पुण्य लोगोंको मिल जासकताहै ॥ ८ ॥ घोर तपस्याओंके आचरणसे जो महत्फल प्राप्त होताहै, इस (काशी) खंडके श्रवण करनेसेभी निस्सन्देह वही पुण्य मिलताहै ॥ ९ ॥ इसी काशीखण्डके सुननेसे सांगोपांग चारों वेदोंके अध्ययन करनेका फल लोगोंको मिल जासकताहै ॥ ११० ॥ गयातीर्थमें पिंडदान और इस काशीखंडके श्रवण, दोनोंहीसे लोगोंके पूर्वज पितृ—पुरुषोंकी एकसी तृप्ति होतीहै ॥ ११ ॥ जो लोग स्थिरबुद्धि होकर समस्त मंगलोंके स्थान इस काशीखण्डको सुनतेहैं, उनको सब पुराणोंके श्रवण करनेका फल मिलजाताहै ॥१२॥ जो परमपुण्यशील जन स्थिरचित्त होकर इस अनुपम काशी—माहात्म्यको श्रवण करतेहैं, वे लोग समस्त धर्मोंके श्रवणका फल पाजातेहैं ॥ १३ ॥ हे द्विजगण ! इस काशीखंडका श्रद्धापूर्वक पाठ क[illegible] अथवा सुनना, यही सर्वोत्तम देव—पूजन कहा गयाहै ॥ १४ ॥ इस काशीखण्डके एकभी उपाख्यानके सुनलेनेसे समस्त धर्मशास्त्रोंके श्रवण करनेका फल अवश्य होजाताहै ॥ १५ ॥ यही काशीखण्ड परमधर्मोंका एकमात्र उत्पादक, बडेसे बड़े अर्थोंका प्रतिपादक, एवं समस्त कामनाओंकी प्राप्तिका कारण समझा गयाहै ॥ १६ ॥ इसके सुननेसे (त्रिवर्गही नहीं वरन्) मुक्तिभी दूर नहीं रहजाती, और इस उत्तम (काशी) खण्डके सुननेपर लोगोंके पुरुषेभी बहुतही सन्तुष्ट होजातेहैं ॥ १७ ॥ ब्रह्मा, विष्णु, महादेव इत्यादि समस्त देवगण, और सनक सनन्दन प्रभृति महर्षिगण एवं अन्य मुनिलोग परम

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

हर्षित और प्रसन्न होतेहैं ॥ १८ ॥ (कहांतक कहें) वाराणसीपुरीकी इस महिमाके श्रवण करनेसे (अंडज--पिंडज इत्यादि) चतुर्विध भूतग्राम (जीवमात्र) का संतोष निश्चयही होताहै ॥ १९ ॥ जो विद्वान् जन इस काशीखण्डको समग्र, अथवा आधा किंवा पादमात्र वा पादार्द्धही अथच केवल एकही उपाख्यानभर सुनादेवे ॥ ॥ २० ॥ उसे इष्टदेवताके समान प्रयत्नपूर्वक प्रणाम करना, और पूजना चाहिए, एवं विश्वेश्वरकी प्रसन्नताके लिए उसे सदैव आदरपूर्वक दान देना चाहिए ॥ २१ ॥ क्योंकि उस (वाचक) के सन्तुष्ट होनेहीसे स्वयं भगवान् विश्वेश्वर संतुष्ट होजातेहैं इसमें कुछभी सन्देह नहीं है । जहांकहीं परमानन्दके आश्रयस्वरूप इस काशीखंडका पाठ होताहै ॥ २२ ॥ वहांपर किसी प्रकारके अमंगल होनेकी कुछभी संभावना नहीं रहती, जो पुण्यात्मा विद्वान् इस (काशीखंड) को सुने, किंवा जो सुनावे ॥ २३ ॥ अथवा जो पढ़े, वे सबके सब रुद्रस्वरूप होजातेहैं । जो कोई इस रमणीय पुस्तकको लिखवाकर ब्राह्मणको समर्पण करताहै ॥ २४ ॥ उसे समस्त पुराणोंके दान करनेका फल प्राप्त होताहै इसमें कुछभी अन्यथा नहींहै । इस ग्रंथमें जितने उपाख्यान, जितने श्लोक ॥ २५ ॥ जितने पद, जितने अक्षर, जितनी मात्रायें, जितनी पदोंकी पंक्तियाँहैं ॥ २६ ॥ एवं रम्य पुस्तकके वेष्टनमें जितनेही तानेबानेके सूत लगेहैं, और चित्रबनेहैं ॥ २७ ॥ उतनेही सहस्र युग पर्य्यन्त पुस्तकका दाता स्वर्गलोकमें पूजित होताहै । जो कोई इस सर्वोत्तम (काशी) खण्डको द्वादश बार श्रवण करताहै ॥ २८ ॥ महादेवके अनुग्रहसे उसकी ब्रह्महत्याभी शीघ्रही दूर होजातीहै । पुत्रहीन जनभी यथाविधि स्नानकर श्रद्धापूर्वक यदि इसे सुने तो ॥ २९ ॥ उसेभी शंकराज्ञाके प्रभावसे पुत्ररत्न प्राप्त होवे । हे सूत ! बहुत कहांतक कहें, जिसका जिसका जो जो मनोरथ होवे, उसका उसका वह वह मनोरथ इसके श्रवण करनेसे सदैव (पूर्णतया) प्राप्त होजाताहै । यदि कोई दूरदेशमें रहकरभी इस अनुपम काशीखंडको श्रवण करे तो ॥ १३० ॥ ३१ ॥ शिवकी आज्ञासे वह भी काशीवासकरनेके पुण्यका पात्र होजावे । इसके सुननेसे शुद्ध हृदय लोगोंको सर्वत्र बिजयलाभ होताहै एवं सर्वत्रही (सदैव) सौभाग्य बढ़ता रहता है ॥ ३२ ॥ जिस परम निर्मल चित्त, पुण्यशील जनपर भगवान् विश्वेश्वर प्रसन्न होतेहैं, इस ग्रंथके सुननेमें उसीको बुद्धि उत्पन्न होतीहै ॥ ३३ ॥ समस्त

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

मंगलोंकी सिद्धिके लिये अपने घरमें सब मंगलोंके मध्यमें सर्वोत्तम परममंगलमय इस काशीखंडके लिखित पुस्तकका पूजन करना चाहिए ॥ १३४ ॥

दोहा—काशीखंड पुनीत यह, करत सुमंगल वृद्धि ।
पढ़त सुनत समुझत हिये, देत ज्ञानकी सिद्धि ॥ १ ॥

काशीश्वर ! त्वत्कृपयैव काशी--खण्डानुवादो रचितो मयैषः ।
समर्प्यते स्वीकुरु नाथ ! मत्वा, स्वसेवकोपायनरूपमेनम् ॥ २ ॥

इति श्रीस्कंदपुराणे चतुर्थे काशीखंडे उत्तरार्धे भाषायां प्रत्यध्यायानुक्रमणिका कथनंनाम शततमोऽध्यायः ॥ १०० ॥

॥ श्रीकाशीखण्डोत्तरार्ध सम्पूर्ण ॥

समाप्तोऽयंग्रन्थः ।

पुस्तकमिलनेकाठिकाना—

खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्—यन्त्रालय—बंबई.

SRI JAGADGURU VISHWARADHYA
JNANA SIMHASAN JNANAMANDIR
LIBRARY
Jangamawadi Math, Varanasi
Acc. No. .....1598.....

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

क्रय्यपुस्तकें-(भाषापुराणग्रंथाः ।)

की. रु. आ.

शुकसागर-मध्यम अक्षर लालाशालिग्रामजीकृत सर्वालंकारों समेत ग्लेज कागज ८-०

" तथा उपरोक्त विषयों सहित रफ कागज ७-०

शुकसागर-उपरोक्त समस्त० छोटा अक्षर ग्लेज छपताहै ५-०

" " तथा रफ कागज ४-०

शिवपुराण-भाषा वार्त्तिक पं० ज्वालाप्रसादमिश्रकृत जिल्दबँधा शिवभक्तोंको-अवश्य लेना चाहिये छपता है... ....

शिव महापुराण संदेह भेदिका-भाषा .... ०-१॥

मार्कंडेयपुराण-भाषा जिल्दबँधा ३-०

वामनपुराण-भाषा जिल्दबँधा ३-०

देवीभागवत-भाषा जिल्दबँधा देवीभक्तोंको अवश्य लेना चाहिये ... ६-०

आनंदाम्बुनिधि-भाषा भागवत छन्दबद्ध महाराजारघुराजसिंहजी कृत ... ग्लेज .... ७) १।) तथा रफ ... ६-०

भागवतसार-भाषा भागवतकी संक्षिप्त सरल कथा.... .... १-०

पुराणोंकी संरक्षा-पुराणोंका संपूर्ण वृत्तांत लिखा गया है... .... ०-२

अष्टादशपुराणदर्पण-पं० ज्वालाप्रसादमिश्रद्वारा निर्मित अर्थात् अठारहों पुराणोंका दर्पणकी समान वर्णन इसमें वेदसे पुराण विषयका वर्णन सब पुराणोंके अध्याय और उनकी कथा पुराणोंपर विचार तथा शंका समाधान सहित लिखी है सबको पास रखना चाहिये २-०

आदिपुराण भाषावार्तिक-केवल हिन्दीरसिकोंके लिये समस्त आदिपुराण सरल सुथरी देवनागरीभाषामें अनुवाद किया गया है। भारतवर्षके सभी हिन्दी रसिक नरनारी इससे भगवत्कथा रसका आस्वाद स्वयं कर सकते हैं। लिखीपढी कुलवधू इसको पढ अपनी अनपढ भगिनियोंको पुराणके, हिन्दूधर्मके तथा भगवद्भक्तिके अपूर्व विषय समझा सकती हैं। ... १-४

संपूर्णपुस्तकोंका "बडासूचीपत्र" अलग है मंगालीजिये.

खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस, खेतवाडी-बंबई.

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

श्रीशौ वन्दे।

काशीखण्ड-भाषा अशुद्धियोंकी-

सूचना।

प्रिय पाठक महाशय गण !

"गच्छतः स्खलनं क्वापि, भवत्येव विपश्चितः।
हसन्ति दुर्जनास्तत्र, हाहा कुर्वन्ति सज्जनाः॥"

यद्यपि इस भाषा काशीखंडमें अनेक अशुद्धियां भाव और भाषाकी भी अवश्य हुई होंगी। क्योंकि भ्रम पडजाना मनुष्योंकी बुद्धिका प्रधान धर्म है तो उन भूलचूकोंके लिये आप लोगोंसे क्षमाप्रार्थी हूं। इसके उपरान्त अपने लिखेहुए ग्रंथका "प्रूफ" स्वयं नहीं देखनेसे अनेक बातोंमें गडबड होही जातीहै, उसी दोषके अनुसार इस ग्रंथमें भी जहां तहां भूलें होगई हैं; और फिर जब अक्षरोंका जंगलही लगाया जावेगा तो उसमें कुछ न कुछ अशुद्ध अथवा त्रुटियोंका होजाना कोई असंभव बात नहीं है, क्योंकि सबी पढने लिखने वालोंसे भ्रमका मर्म छिपा नहीं है।

अतएव पाठक महानुभावोंसे सविनय निवेदन है कि, कृपापूर्वक थोडासा सुधारकर पढनेका प्रारंभ अवश्यही स्वीकार करलेवें।

एक और भी प्रार्थना है कि हिन्दीभाषाके पद्योंमें "ए" कार तथा "ओ" कार इत्यादि मात्रायें भी यथास्थान ह्रस्वही मानी जातीहैं, आजकल मात्रा उलटकर लगानेकी भी प्रथा निकलीहै, पर इसके पद्योंमें सीधी ही मात्रायें लगीहैं, इससे उनको दीर्घ नहीं मानना चाहिए, वरन ह्रस्व उच्चारणसे काम चलना आवश्यक है।

इसके अतिरिक्त इस **सूचना**में अत्यावश्यक अशुद्धियोंका उल्लेख कियागयाहै, पर मात्रा अथवा अनुस्वारादिककी अशुद्धियां पाठकोंके लिये छोडदी गई हैं. क्योंकि उन सबके लिखनेसे यह **सूचना** बहुत बडी होजाती। पर हिन्दी भाषामें प्रायः मात्रा अथवा अनुस्वारहीके फेरफारसे पुँल्लिंग शब्दका स्त्रीलिंग अथवा एकवचनका बहुवचन होजाताहै, इसलिये इन साधारण अशुद्धियों पर विशेष आक्षेप करना उचित नहीं जानपडता, जो हो; पाठकगण स्वयं विचारलेवें।

कोष्ठ ( ) " " इत्यादि चिह्न भी कहीं कहीं स्थानभ्रष्ट होकर जहां लगना चाहिये वहां नहीं हैं, वरन अन्यत्र लगगयेहैं; जो व्यर्थ अथवा भ्रामक जानपडतेहैं- इन सब उक्तदोषोंका आवश्यक अनुसार यथासंभव सुधार कियागयाहै। पर फिर भी बहुतेरी बातें पाठकोंहीकी समझ पर रखकर छोडदी गई हैं। इत्यलं विज्ञेषु।

निवेदक-

विनीत-अनुवादक.

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

काशीखण्ड भाषा-शुद्धिपत्र।

(पूर्वार्द्ध)

अध्याय	श्लोक	अशुद्ध	शुद्ध
,,	,,	पूवार्द्ध	पूर्वार्द्ध
मंगलाचरण	३	नथौ	नाथौ
१म.	१३	कछकुछ	कुछकुछ
,,	,,	ालये	लिये
,,	६०	भमिपर	भूमिपर
,,	८४	जिसके	जिसकी
२य.	५	पूण	पूर्ण
,,	,,	लगताह	लगताहै
,,	१०	पुरीरूपी	पुरीरूपा
,,	१६	सूय	सूर्य
,,	१७	बलवान् है जो.	बलवान् है॥१७॥जो
,,	१८	आधे॥१७॥,	आधे निमेष
,,	२०	मूदेहुए	मूँदेहुए
,,	२१	रहनेस	रहनेसे
,,	४७	चाहिय	चाहिये
,,	५४	तर्पण भोजन,	तर्पण (भोजन)
,,	५८	मेर	मेरे
,,	८७	गओंके	गौओंके
,,	९८	पुराण	पुराणज्ञ
३य. ,,	४८ सवैयामें	करसी	करसो
,,	५०	आर	और
,,	६५	वैसाही	वैसीही
,,	७५	पक्षी और मृग और,	पक्षी, और मृग
,,	८१	बात	बीत
,,	,,	जीवका	जीविका

३य. अध्यायका अंतिम श्लोक नहीं छपाहै, नीचे देखिये.

अध्याय	श्लोक	अशुद्ध	शुद्ध
४र्थ.	५	विराजमान	विराजमान है
,,	१०	काय	कार्य
,,	१५	आर	और
,,	२१	सुखस	सुखसे
,,	२७	विद्वष	विद्वेष
,,	३१	एकधरम	एकै धरम (इस उद्धृत चौपाई के अनंतर ३० का अंक चाहिए)
,,	३२	,,	यहां भी चौपाईके पीछे ३१का अंक चाहिये, जो पूर्वही है
,,	४७	,,	उद्धृत चौपाई और दोहाके अनंतर(तु०रा०) चाहिये जो मध्यमें पडगयाहै।
,,	८८	जव	जव (जौ)
,,	१०९	आर	और
५म.	२९	अविमुक्तसमान,	अविमुक्तके समान
,,	४७	नहीं	न
,,	६०	सादश	सदृश
,,	६९	उनकाकाशी विरहसे,	काशीविरहसे
,,	७४	(आगस्त्यके)	(अगस्त्यके)
,,	७७	सपत्नीके प्रति (सवत)	सपत्नी(सवत)के प्रति
६ष्ठ.	३४	झूर,	क्रूर,
,,	५२	पुण्यवान्को	पुण्यवान्का
७म.	७	,,	यहां भी उद्धृत चौपाईके अंतमें श्लोकका अंक चाहिए

१ तीसरे अध्यायके अंतका श्लोक—

मुनेरगस्त्यस्य सुरैरवेक्ष्यं प्रतापमेकं पर-तापहीनम्॥ एवं प्रभावं पर-भावभव्यं तदाश्रमोऽमानि सदाश्रम (य) श्रीः॥१॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अध्याय	श्लोक	अशुद्ध	शुद्ध
,,	१२	रसोंसमैंन	रसोंसे मैंने
,,	५४	कहांहै	कहाहै
,,	६९	वाराणशी	वाराणसी
,,	८२	काशिका	काशी का
,,	१३५	चतुर्भूज	चतुर्भुज
८म.	४३	अधकर्ममें	अधकर्ममें
,,	५३	कौन लोक	कौन लोग
,,	५६	लिऐ	लिये
,,	६३	थूँकसे	थूँक दो
,,	१०१	शारंगपाणे!	शार्ङ्गपाणे !
९म.	५	निकली उत्पन्न,	निकली (उत्पन्न)
,,	,,	यह	येही
,,	१६	वही	वेही
,,	५०	वेदोंमेंसे	वेदोंमें(से)
,,	इति श्री-	स्सूयलाकवणनं.	स्सूर्यलोकवर्णनं
१०म.	४५	नर्मदा वेदाध्य,	वेदाध्य
,,	६१	छहों	छवों[1]
,,	७७	शुचिष्मतीप्रति.	शुचिष्मतीके प्रति
,,	९१	मारभूतेश्वर	भारभूतेश्वर
,,	१२२	। वभूतिसे	विभूतिसे
,,	१२९	भेजताहूं	भजताहूं
११श.	३	पंस्त्व	पुँस्त्व
,,	,,	क्रिया	किया
,,	६३	कौने	कोंने
,,	६६	(पुरी)	(पूरी)
,,	११०	रहे प्रोत	रहे
,,	११७	तिसका	जिसका
,,	१२६	पुरुषोंसे	पुष्पोंसे
१२श,	२८	मृगयाअहेर(शिकार),	मृगया(अहेर, शिकार)
,,	३१	करताहै	करनीहै
,,	५०	लखरांव(लगातेहैं)	(लखरांव लगातेहैं)
,,	५३	(जैसे वह मिश्री	(जैसे–मिश्री)
,,	६९	अन्तरीय	अन्तरीप
,,	७६।७७	शिवका	शिवकी
१३श.	१७	वहीसे	उसीसे
,,	३९	तत्तर	तत्पर
,,	,,	नानक	नामक
,,	४८	(चरित्र चालचलन)	चरित्र(चालचलन)
,,	५०	(ववस)(समझरक्खों)	(वस समझ रक्खों)
,,	५२।५३	सोमायजी दीक्षि-ता॥ की,	सोमयाजी दीक्षि-तकी
,,	५७	तुह्मोर	तुम्हारे
,,	८६	दशवाला	देशवाला
,,	१३२	कहतहं	कहतेहैं
,,	१३७	उसकेदेनेके	उसकादेनेके
,,	१४३।४४	देखा ताकना चाहा	देखा (ताकना-चाहा)
१४श.	११।१२	हुयें	हुए
,,	१३	अह्लादित	आह्लादित
,,	,,	दिनहींमें	दिनहींमें देखा
,,	४५	तपस्वीयों	तपस्वियों
,,	४९	नक्त	नक्तव्रत
,,	७५	नमरण	नरगण
१५श.	२	ओ(वाहर)	और
,,	१०	करती	की
,,	३४	हुई दृष्टि-की	हुई दृष्टिकी
१६वां	२	(फूंसीकधुआं)	(भूंसीका धुआं)
,,	४	जिनका	जिसका
,,	५	किअनंतर	अनंतर
,,	,,	देवताशुक्रकी	शुक्रदेवताकी
,,	६	होता	होती
,,	११	प्रथम	प्रमथ
,,	१३	शुश्रषा	शुश्रूषा
,,	१४	तुहुंड	हुतुंड

[1] दूसरे स्थानोंपर भी "छवो" के "छवो" समझलेना चाहिये ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शुद्धिपत्र ।

अध्याय	श्लोक	अशुद्ध	शुद्ध
,,	१७	जो तुष धूमपा-न करसहस्रवर्ष पर्यंत	सहस्रवर्षपर्यंत तुषका धूमपान कर जो
,,	२४	जपने जपने लगे.	जपने लगे
,,	२५	विस्मृतहुआ	विस्मृतहुए
,,	२८	प्रथमा-	प्रमथा-
,,	८५	कानो	करना
,,	९५	चित्तर्क	चित्तकी
,,	९६	निर्मला	निर्मल
,,	११९	हेविश्वेश्वर	हेविद्येश्वर
२०वां	६२	कालकी	काकली
,,	७२	(कस्सीकीअ.ग)	(करसीकीआग)
,,	७५	ध्यानसे	ध्यानमें
,,	७६	भतावली	भूतावली
,,	७७	नाराबणने	नारायणने
२१वां	५४	मनोरथाके	मनोरथोंको
२२वां	५९	काम(ना)ओंका.	काम(नाओं)का
,,	१०१	हेविप्र! लोग.	हेविप्र! जो लोग
२४वां	४९	कहा	कहीं
,,	५०	किससे	किसने
,,	५५	चन्द्रमा	चन्द्रमासा
,,	८८	नरगीमें	नगरीमें
,, दोहा	१०	जिमि	इमि
,,		इति—शर्मापरमलाभ.	शर्मपरमपदलाभ
२६वां	१९	किसकी	किसीकी
,,	४७	एकसी	एकही
,,	५१	कालपयत	कालपर्यंत
२७वां	४८	प्राप्त	प्राप्त होताहै
,,	९९	गंगाजलको	गंगाजलके
२८वां	३९।४०	—जोलहिन—	(जोलाहिन) को
,,	५२	निर्गगन	निर्गमन
,,	६१	खानिसे	खानिके
२९वां	६	तीर्थभी	तीर्थभी हैं

अध्याय	श्लोक	अशुद्ध	शुद्ध
,,	९	करनेकी	करनेके
,,	२१	अक्षुशक्ति	अक्षुण्णशक्ति
,,	४१	ऋतुश्रेष्ठा	क्रतुश्रेष्ठा
,,	,,	ऋतुफला	क्रतुफला
,,	४३	कमलावती	कलावती
,,	११६	निश्वेशी	विश्वेशी
३०वां	६५	वहवनियां	०
,,	७१	विश्वेस्वरको	विश्वेश्वरके
३१वां	२१	ऋतुने	क्रतुने
,,	५४	नाम्री	नाम्नी
,,	,,	पुरीसे	पुरी
,,	१०३	चलदिया	चलदिये
,,	१०४	बृषभध्वज,	वृषभध्वजकी
३२वां	१	हरिकशकी	हरिकेशकी
,,	,,	काजिये	कीजिये
,,	३५	कर्ता हैं	कर्ता हुएहैं
,,	४१	दहधारियोंके,	देहधारियोंके
,,	५८	पय	पेय
,,	९५	लबुटोंकी	लकुटोंकी
३३वां	१०४	पतिव्रतावलंबन,	व्रतावलंबन
,,	११४	(कोहुआ-चालाट),	(कोल्हुआ-व्रलाट)
,,	१२३	स्वर्लीनेश्वर	स्वर्लीनेश्वर
,,	१५०	जो नारद,	जो नाद
,,	१७१	पीरेश्वर	वीरेश्वर
३४वां	४	विष्णुभक्तान्	०
,,	२२	मणिकर्णिक-र्णिकाका,	मर्णिकर्णिकाका
,,	४८	झुलनेलगी	झलनेलगी
३५वां	२१	लोगोंमेंमी	लोगोंमेंभी
,,	५३	साता	दाता
,,	१२५	वच और काय,	वचन और कायके
,,	२३७	संध्याको	संध्याकी
३६वां	१५	शक्त	अशक्त

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अध्याय	श्लोक	अशुद्ध	शुद्ध
३६	८४	मख्य	मुख्य
,,	८५	(वेचारा)	(वेचारी)
,,	,,	लेता	लेती
३७वां	५	कला	कुल्हा
,,	६	कधां	कंधा
,,	२५	सुकडा	सुकठा
,,	२९	(सुकडा)	सुकठा
,,	५८	सुकडे	सुकठे
,,	५९	और	ओर
,,	१२३	,,	,,
,,	१२६	तिलक तिल,	तिलक (तिल)
,,	दोहा	ग्न	गुन
३८वां	३२	चाहि	चाहिए
,,	५०	डाँपकर	ढाँपकर
,,	५६	(थूँका)	(थूँक)
,,	७०	पखपडा	खपडा
३९वां	१३	करने	करनेसे
,,	दोहा	सके	सकै
४०वां	९	गौकापेंदुस	गौका पेडुँस
,,	३७	(उनको)	उनके
,,	१३४	०	यह दोहा ३३वें श्लोकका है इस पर ३४का अंक अशुद्धहै, यहां से अध्यायकेअंततकप्रत्येक श्लोकांकमें एक संख्या अधिक है.
,,	१६५	वरु	वह
४१वां	३८	वशीमूत	वशीभूत
,,	१२१	अवास्थत (ठेकाणे)	अवस्थित (ठिकाने)
,,	१८७	पजनकी	पूजनकी
४२वां.	१२	पिछडंड	पिछउँड
,,	दोहा १०	भुक्ति	मुक्ति
४३वां	८	पाठन	पालन

अध्याय	श्लोक	अशुद्ध	शुद्ध
,,	७०।७१	मात्रकालमी,	मात्रभीकाल
४४वां	४७दोहा	मणिकर्णिकापर,	मनिकनिकापर
,,	दोहा १०	महाराज	महराज
४५वां	२५	मूख मूर्ख	
४६वां	५९	शिरोदेशभागहै.	शिरोदेश(भाग)है
,,	,,	(तीर्थअसिके)	तीर्थअसिके
४७वां	९	कुली	कुलीन
४८वां	२८	॥१॥	०
४९वां	१	ऋषि	ऋषि
,,	६९	देहिको	देहीका
५०वां	२२	उसघडी	उसघडी
,,	२४दोहा	थोरेहि	थोरहि
,,	,,	होइ	है
,,	३८	(उसकेपीठहीपर)	(उसकीपीठही)
,,	६५	करतेहं	करतेहैं
,,	११०	देदे	देदो
,,	१२७	अधिपत्य,	आधिपत्य
,,	१४६	और इनका,	उनके

इति. काशीखण्ड भाषा–पूर्वार्द्ध

काशीखण्ड भाषा–उत्तरार्द्ध

(टाइटलपेज)

,,	,,	जिसको	अनुवादकके नामसेनीचे रहनाचाहिये
,,	,,	कराय	०
५१वां	३२	यदिचेत्	यदि(चेत्)
,,	दोहा १	घटे	घटै
५२वां	५१	सर्वदेव	सर्व्वदैव
५४वां	१३	सुकटे	सुकठे
,,	१४	रोवाँ	रोवें
,,	१५	उमडीथी,	उमडीथी
,,	६८	(बारसी),	(बोरसी)से
५५वां	४३	विश्वनाथ स्वयं(जिसका)	(विश्वनाथ) स्वयं जिसका
५६वां	१३	यज्ञकारक,	क्षयकारक

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शुद्धिपत्र ।

अध्याय	श्लोक	अशुद्ध	शुद्ध
,,	१६	देखाथा-मानो	देखाथा सो तो मानो
,,	२८	ठोंढूंढनेवाले, ढूँढनेवाले	
५७वां.	९	धमधाम	धूमधाम
,,	९६	उद्दण्डमण्ड	उद्दण्डमुण्ड
,,	दोहा २.	प्रणवों	प्रनवौं
,,	,,	काशीमाहि	काशीमाँहि
५८वां.	४८	श्रद्धादिक	श्राद्धादिक
,,	७३	सभगरूप	सुभगरूप
,,	१३५	विघ्नेश्वर	विघ्नेश्वर
५९वां.	५	हुईहै	हईहै
,,	१७	अधिको	अघको
,,	५६	कैसी	कैसे
,,	५९	यह	ये
,,	७२	वगंसे	सर्वांगसे
६०वां.	५१	देश	उपदेश
,,	५३	हयाँ	यहाँ
,,	८५	दत्यादि	इत्यादि
,,	८९	अति॥८९॥ कृच्छ्र.	अतिकृच्छ्र
,,	९०	॥ ९० ॥,	॥ ८९ ॥ ९० ॥
,,	१२७	विश्वेश्वरसे फरते	विश्वेश्वरसे वैर करते
,,	१३०	॥ ३० ॥	॥ १३० ॥
६१वां.	३८	संयम	संयमी
,,	१३१	मोक्षकांक्षी	मोक्षाकांक्षी
,,	१३६	भवानी और शंकरका	भवानी—शंकरका
,,	१३७सवैया.	हेअनपूरन !	हेअनपूरनि !
,,	२०५	(नौक)पासके	(नौका)पासके
,,	२३९	जिसको	जिसके
,,	,,	होराहाहै	होरहाहै
,,	२४२	सुदशन	सुदर्शन
,,	५अंतमें	सुमिरत	बरवा—सुमिरत
६२वां	६५	पंणके	तर्पणके
,,	७२	अगलेही	अगलही
,,	९०	पहिया अधिष्ठात्री	पहियाकी अधिष्ठात्री
,,	१००	वर्गसाथी	वर्ग(साथी)
,,	१०१	तोंदले	तोंदैले
,,	११५	विश्वम्भर	त्रिश्वभर
६३वां.	१	उसेआपमुझको,	उसकोआपमुझसे
,,	१७	निससेश्वर	निवासेश्वर
,,	३३	वर	वरन
,,	६३	दूसरेका	दूसरेको
,,	८१	छहमासके	छमासके
,,	इति	कन्द	स्कन्द
६४वां	२८	स्वरूपको-वहभी	स्वरूपकोभी
,,	३९	हुईहै	हईहैं
,,	१०९दोहा—	काशीमें	काशिमें
,,	,,	केहिकेमनहिं-सोहाय	किहिकेमनहिं सुहाय
६५वां	१२	और	०
,,	१४	नैधुवेश्वर	नैधुवेश्वर
,,	६९	ढचला	बढचला
६६वां	७५	सुधासप्र	सुधासम
,,	८३	शिलासे	शिलायें
,,	११८	ऽ ।लोक	इसलोक
,,	१२१	बढिया	बढियाँ
६७वां	७७	भरी(दुविधा-की)भरी-	भरी(दुविधाकी)
,,	९५	विशालनेत्री,	विशालनेत्रा
,,	९८	मुक्तभोगाकी,	भुक्तभोगाकी
,,	१०१	शंखरत्नचूड,	(शंख)रत्नचूड
,,	१३३।३४	दौरात्म्यके	दौरात्म्यको
,,	२१७	उपवास	उपवासी
६८वां	६५	हमुने !	हेमुने !

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अध्याय	श्लोक	अशुद्ध	शुद्ध
६९वां	१९।२०	पुष्करसे-महातीर्थ	पुष्कर महातीर्थसे
,,	१३७	बडीभारी	बडाभारी
,,	१४९	हाटकेश्वर नामफ	हाटकेश्वरनामक
,,	१६८	करके	भरके
,,	१७२	पर्श	स्पर्श
,,	१७५	नंदिका	नंदीका
७०वां	१६	सौभाग्य-शाली	सौभाग्यशालिनी
,,	४५	सिद्धिवि-नागकसे	सिद्धविनायकसे
,,	८६	यह	वह
,,	दोहा १	मोर	मोरि
७१वां	१६-दोहा	उजियार	उँजियार
,,	२५	आह्वाके	आह्वानके
,,	२७	होनेलगीं	होनेलगें
,,	२८	यदिचेत्	यदि(चेत्)
,,	६२	तेजस्वती	तेजस्विनी
,,	६४	चलरहीथी	बलरहीथी
,,	१११	तेजावणको,	तेजबाणको
७२वां	३८	(दुष्टोंके दल नाथ)	(दुष्टोंकेदलनार्थ)
,,	दोहा २.	मँहि	माँहि
७३वां	५०	कबी	कभी
,,	११५	(उनञ्चासों)	(उनचासों)
,,	१२०	वेदगोचरमूर्ति,	वेदकीगोचरमूर्ति
,,	१२७	या सिद्धिके	योगसिद्धिके
,,	१४५	आनंदअश्रुजल	आनंदकेअश्रुजल
७४वां	३५	महामो !	महामते !
,,	६६	खुदुकतीं	फुदकतीं
,,	९६।९७	तपस्वियों ',	तपस्वियोंके
,,	,,	परीहुई	भरीहुई

अध्याय	श्लोक	अशुद्ध	शुद्ध
,,	दोहा २.	विनशायो	विनसायो
७६वां.	११०	वाराणासी	वाराणसी
७७वां	४७	व र्तमानहैं	वर्तमानहैं
७९वां.	८९	इकट्ठ	इकट्ठा
,,	९७	त्रिलोचनसदैव,	त्रिलोचनलिंगमें सदैव
,,	दोहा १.	निर्मलस्थान	निर्मलज्ञान
८१वां.	६१	झुलने	झलने
,,	७१	तदनंतर ब्राह्मणोंको,	तदनंतर वह ब्राह्मणोंको
८२वां	९९	कृतत्राणा	कृतत्राण
,,	,,	पुकार	पुकारकर
,,	१२३	अपने	आपने
,,	दोहा १.	सिद्धि	सिद्ध
८३वां.	५३।५४	राजमित्रजित्	राजा अमित्रजित्
,,	८९	आरभी	औरभी
,,	१२५	(स्कन्दने)कहा,	(स्कन्दनेकहा)
८५वां	९।१०	निरसंग	निस्संग
,,	,,	कालसेंभ	कालतेभी
,,	४४	गजकण	गजकर्ण
,,	,,	मैंनैगमेय	मैं, नैगमेय,
,,	८१	शान्तिके	शान्तिके
८६वां.	२३	गुरुकीकैसे	कैसेगुरुकी
,,	२७	मेरा	मेरी
,,	१२१	मुक्तक्षेत्रमें	मुक्तिक्षेत्रमें
८७वां	२४	स्थानप्रस्थान,	स्थानको प्रस्थान
,,	२५	मुझेभी	मुझेभी
,,	९०-९३ कवित्त	गंगहीनहै वेदहीनहै घृतछीनहै	गंगहीनाहै वेदहीनाहै घृतछीनाहै
,,	३ पदमें-	रु	औ
८८वां	६	शुक्ल	शुक्ला
,,	,,	मासभरेमें	मासभरमें
,,	२५	और देवताऔर,	देवताऔर
,,	६०	ईषाडंडा	ईषा(डंडा)

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

शुद्धिपत्र ।

अध्याय	श्लोक	अशुद्ध	शुद्ध
,,	६२	सारथि	सारथी
९५वां	२७	इसे	इसके
,,	५३	नंदिने	नंदीने
,,	दोहा १	विलियं	विलयं
९६वां	४	महेस्वरकी	महेश्वरका
,,	,,	करनेलगा	करनेलगे
,,	४०	विश्वानाथ	विश्वनाथ
,,	४१	कोटिगण	कोटिगुण
,,	५९	जिन	जिस
,,	९४	दियाहै	दियेहैं
,,	१६५	तुरत	(व्यासजी) तुरत
,,	२०१	व	वे
९७वां	२८	उहीं उहीं	उन्ही उन्ही
,,	३९	विनायक	विधायक
,,	५१	उसने	उनसे

अध्याय	श्लोक	अशुद्ध	शुद्ध
,,	५३	यह	वह
,,	११३	गायत्रीश्वर	गायत्रीश्वर और
९८वां	८०	फेंकतेदेते	फेंकते(देते)
,,	८७	भागोंका	भोगोंका
९९वां	३१	लोपन	लेपन
,,	४८	दिक्पालक	दिक्पालका
१००वां	५२	शौलेश्वर	शैलेश्वर
,,	९२	निश्कलंकेश्वर,	निष्कलंकेश्वर

ग्रंथकी समाप्तिपर अनुवादकका नाम रहना बहुत आवश्यक है.

इति।

नारायणपतिश्शर्म्मा, काशीखण्डेऽनुवादिते । अशुद्धिसूचनामेनामलिखच्छुद्धिहेतवे ॥ १ ॥

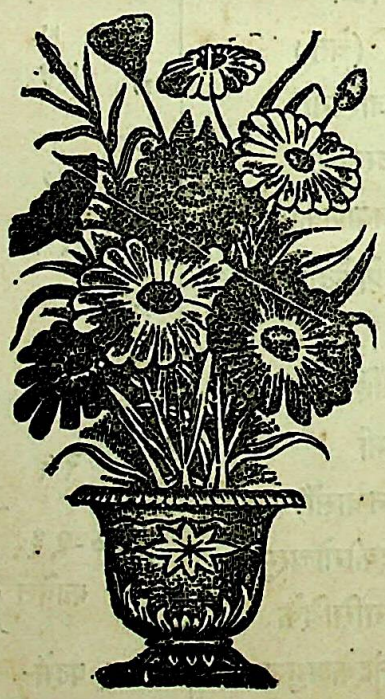

SRI JAGADGURU VISHWARADHYA
JNANA SIMHASAN JNANAMANDIR
LIBRARY.
Jangamwadi Math, VARANASI.
Acc No. 1598

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri